॥ श्रीः ॥

श्रीशिवशिवासंवादोपनि[illegible]

# मेरुतन्त्रम् ।

औदीच्योपाध्याय पण्डित-रघुनाथशास्त्रिद्वारा संशोध्य
टिप्पण्यादिभिः परिष्कृतम् ।

तदेतत्

खेमराज-श्रीकृष्णदासश्रेष्ठिना

मुम्बय्यां

[illegible]

[illegible] प्रकाशितम् ।

[illegible] शके १८३०



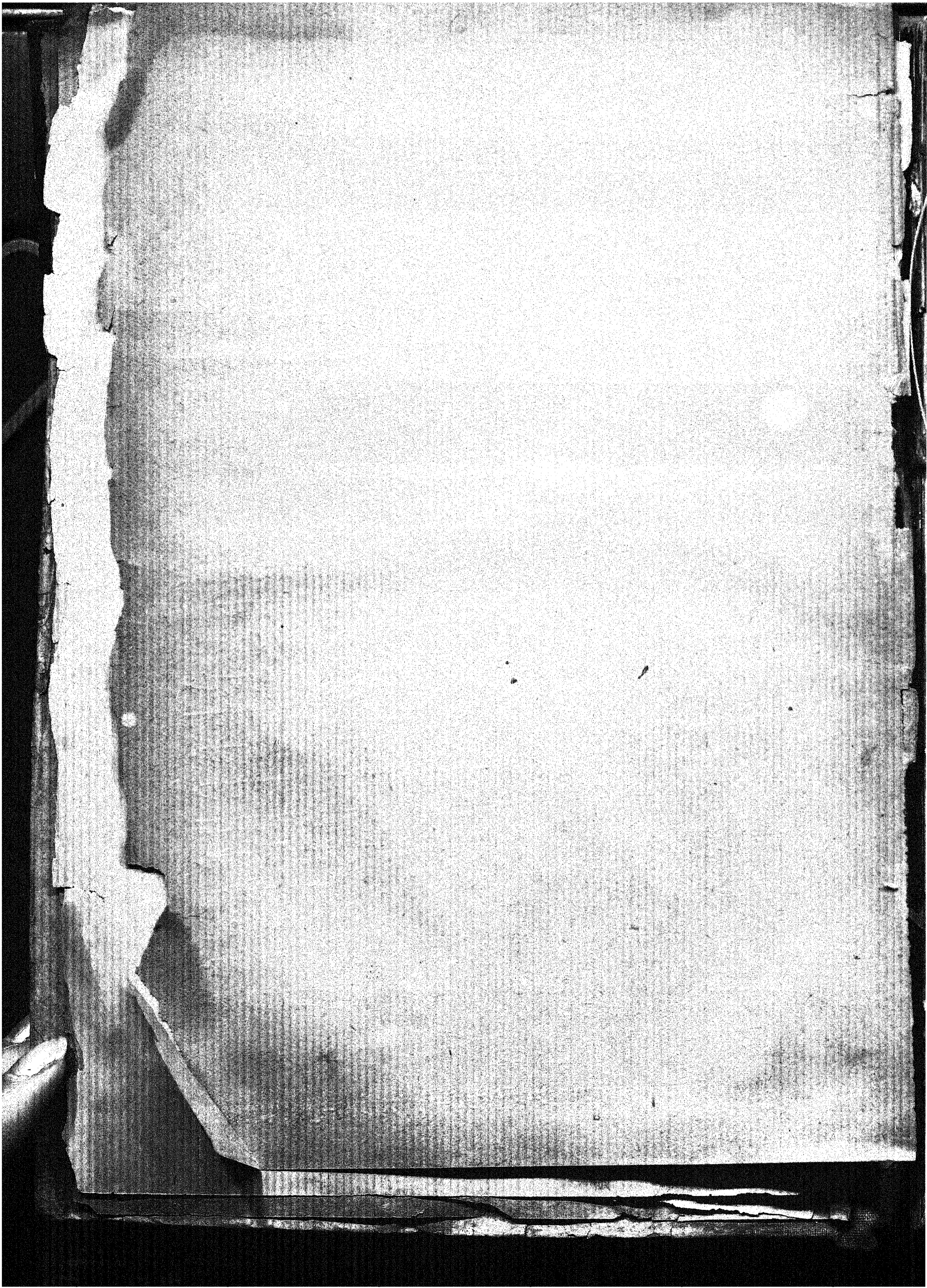
# भूमिका ।

विदितमेवैतन्निखिलनिगमागमाद्यगाधपाथोधिनिर्मन्थनोत्थितसारसद्रत्नशोभायमानकण्ठकोविदक-
ण्ठीरवमहाशयानां स्वयशोधवलिमधवलिताखिलदिङ्मण्डलानाम्, यत्किल परमकारुणिकः परमे-
श्वरः संसारापाराकूपारादुत्थितकर्मसमीरणेरिततरंगेतस्ततश्चाल्यमानानुबोभूयमानानेकदुःखपरंपराणां
सकलमानवानां हिताय साङ्गवेददर्शनायुर्वेदाद्युपवेदपुराणादींस्तत्तदृषिद्वाराऽऽविर्भावयामासेति । तत्र स-
त्स्वपि बहुष्वन्येषु पारलौकिकैहलौकिकफलसाधकेषु दुर्लभवैदिकविधिसामग्रीकाणां स्वकार्यसिद्धिमभी-
प्सतामल्पायुषां जनानां न तथेतरदाशुकार्यसिद्धिकारकं यथेदं परमकारुणिकेनान्वर्थाभिधानेन
जगदंबयोमया पृष्टेन भगवता श्रीशंकरेण प्रतिपादितं सर्वोत्तमं मन्त्रशास्त्रम् । उक्तंच—

"विष्णुर्वरिष्ठो देवानां ह्रदानामुदधिस्तथा । नदीनाञ्च यथा गंगा पर्वतानां हिमालयः ॥ अश्वत्थः
सर्ववृक्षाणां राज्ञामिंद्रो यथा वरः ।देवीनाञ्च यथा दुर्गा वर्णानां ब्राह्मणो यथा॥तथा समस्तशास्त्राणां तन्त्र-
शास्त्रमनुत्तमम् । सर्वकामप्रदं पुण्यं तंत्रं वै वेदसंमितम् ॥ कीर्तनं देवदेवस्य हरस्य मतमेव च । पावनं
श्रद्दधानानामिहलोके परत्र च ॥" तत्र च यामलोड्डीशभूतडामरादीनि 'चतुःषष्टिश्च तंत्राणि यामलादीनि
पार्वति, इति महाविश्वसारतंत्रोक्तेश्चतुःषष्टिसंख्याकानि सन्ति । तत्रच मध्येमेदिनि मेरुरिवेदं मेरुतंत्रं
पञ्चत्रिंशत्प्रकाशात्मकं सर्वतोप्याधिकं प्रकाशते । अत्रच शिवविष्णुगणेशादित्यगौर्यादीनां गंगायमुनादि-
सरितामन्येषामपि मंत्रयंत्रन्यासध्यानपीठशक्तितत्तदावरणार्चनादिविधयो वैदिकमंत्रविधयश्च स्पष्टतया
प्रतिपादिताः संति । तदेतन्निखिलजनानां सौलभ्याय श्रीमत्पंडितरघुनाथशर्मशास्त्रिद्वारा त्रिचतुराद-
र्शपुस्तकैः संशोध्य मया स्वकीये "श्रीवेंकटेश्वर" स्टीम्मुद्रणालये शोभनसीसकाक्षरैः स्वच्छमसृणपुष्ट-
पत्रेषु संमुद्र्य प्रकाश्यते । तदत्र सन्तुतरां परःसहस्रा धन्यवादाः श्रीमच्छिवाभ्याम् याभ्यां च परोपका
रपराभ्यां स्वसंवादरूपेणावनावेतन्मेरुतंत्रं विश्वजनीनमाविर्भावितमिति । तदनुयैर्महानुभावैर्नेपालनिवा-
सिपण्डितहरिहराचार्यदीक्षितैः पुस्तकप्रदानेनैतन्मुद्रणे साहाय्यं व्यधायि तेभ्योपि परःशताः ससंमदं सन्तु
धन्यवादाः । तदनु च यैरपि परमोदाराशयैः स्वदेशोन्नतिचणैः सुप्रसिद्धैः श्रीमन्महावीरप्रसादद्विवेदिभिः
पुस्तकप्रदानेनानल्पमुपकृता वयम् तेभ्यश्चसान्तस्तोषमनेकशो धन्यवादाः ।अन्येभ्योपि पुस्तकादिप्रदान-
कृतोपकृतिमहाशयेभ्यो बहुशस्सन्तु इति । तदेतद्ग्रंथग्रहणावलोकनकर्मानुष्ठानादिभिः समनुगृह्णंतु महोदय-
मनीषिणो [illegible]मिति भूयोऽभ्यर्थयते—

**श्रीकृष्णदासात्मजः—क्षेमराजः**

**"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्-यंत्रालयाध्यक्ष—मुंबईस्थः ।**



॥ श्रीः ॥

# ॥ अथ मेरुतंत्रस्थितविषयानुक्रमणिका प्रारभ्यते ॥


| पृष्ठांकाः | विषयाः | श्लोकांकाः |
|---|---|---|
| | **प्रकाशः १** | |
| १ | मंगलाचरणम् ... ... | १ |
| " | जलंधरविजितदेवानां हितं कथं भविष्यतीति देवानां शिवसमीपे गमनम् ... .... ... | २ |
| " | समाधिविसर्जनोत्तरं त्वया किं ध्यायते इति शिवं प्रति गौरीप्रश्नः | ४ |
| २ | महाकालवशात्सर्वे विलयं यांति ततः स एव मया ध्यात इति शिव कथनम् ... .... ... | १४ |
| " | कोऽसौ महाकालः मुक्तिः कतिधा सा कथं लभ्यते इत्यादिदेवता प्रश्नः ... ... ... | १६ |
| " | तत्प्रश्नोत्तरदानाय महाकालप्रणीत मेरुतंत्रारंभकरणम् ... ... | २६ |
| ३ | उपासनाया वामदक्षिणभेदकथनम् | ३९ |
| ४ | वाममार्गस्य कौलादिपंचभेदाः | ५९ |
| " | दक्षमार्गस्थितवैदिक्याद्युपासना भेदः ... ... ... | ६२ |
| " | गुरुशिष्यविचारः ... ... | ६७ |
| ६ | वामदक्षिणमार्गयोः संक्षेपतःपद्या० | १०४ |
| | **प्रकाशः २** | |
| ७ | तंत्रमार्गिणां बहूनां सिद्धिलाभोऽपि न भवति कुतो मोक्ष इति तद्विषये गौरीप्रश्नः... ... | १ |
| " | देहसंस्काराभावात् सिद्धिर्न भवति ततो देहस्य शुद्ध्यर्थं षोडशसंस्कारकथनम् ... ... | ४ |
| १४ | मंत्राणां षोडशसंस्काराः ... | १४६ |
| | **प्रकाशः ३** | |
| २० | वामदक्षिणमार्गे कथं दीक्षाग्रहणमिति देवीप्रश्नः .... ... ... | १ |
| " | दीक्षाविधौ कुंडमंडपादिविचारः | ५ |
| ३४ | स्वप्नपरीक्षाविधिः ... ... | २७२ |
| ३८ | सर्वतोभद्रचक्रविधिः .... | ३५४ |
| ४१ | वारुणमंडलकथनम ... ... | ३८५ |
| ४२ | देवतापूजनम् ... ... | ४१० |
| ५२ | पूर्णाभिषेकविधिः ... ... | ५९९ |
| | **प्रकाशः ४** | |
| ५३ | मंत्राणां सात्त्विकादिभेदत्रैविध्यम् | ७ |
| ५४ | तंत्रमार्गानुसारेणाष्टादशकुंडसंस्काराः | २२ |
| ५६ | अग्निस्थापनविधिः ... ... | ५४ |
| ५८ | कुंडमध्येऽष्टदलपूजापीठम् ... | ८९ |
| ६१ | तांत्रिकहोमविचारः ... | १२० |
| | **प्रकाशः ५** | |
| ६३ | आह्निकविचारः ... ... | ५ |
| ६५ | स्नानविधिः.... ... ... | ५६ |
| ६८ | तिलकधारणम् ... ... | ९४ |
| ६९ | तांत्रिकी संध्या ... .... | ११५ |
| ७० | शिवगायत्री ... ... | १२७ |
| ७४ | पूजाद्रव्यस्थापनक्रमः .... | २०४ |
| ७७ | प्राणप्रतिष्ठामंत्रः ... ... | २४८ |
| ८२ | अंतर्मातृकान्यासः ... ... | ३१२ |
| ८३ | बहिर्मातृकान्यासः ... ... | ३१२ |
| १०१ | पूजार्हशालिग्रामशिलाः ... | ५८९ |
| १०८ | पूजाविधिः ... ... ... | ७०४ |
| १२० | सामान्यतः पूजात्रैविध्यम् ... | ९१३ |

पृष्ठांकाः विषयाः श्लोकांकाः

### प्रकाशः ६

१२१ पुरश्चरणव्याख्या ... ... १
" पुरश्चरणपूर्वकृत्यम्... ... १४
१३५ जपस्थानानि ... .... २४७
१३७ जपार्हमालाविचारः ... २९०
" मालास्थितरुद्राक्षादीनां फलम् २९६
१५२ भूर्जादिषु लिखित्वा मंत्रधारणम् ५६७
१५३ शाबरमंत्राणां पुरश्चरणविधिः ५७७
" तांत्रिकमंत्रदीक्षाग्रहणविधिः ५८४
" जपस्यैव सिद्धिमोक्षसाधकत्व० ५८८

### प्रकाशः ७

१५५ निषिद्धाचारकथनम् ... ५
१५७ अवश्यकर्तव्यानि ... ... ३१
१५८ दमनकोत्सवपूजादि ... ५४
१६१ शान्त्यादिकाम्यकर्माणि ... १२२
१६३ सिद्धिस्थिरीकरणोद्यमः ... १९९

### प्रकाशः ८

१६७ दैवतप्रीतिकरमुद्रालक्षणानि ३

### प्रकाशः ९

१७५ पार्थिवशिवलिङ्गपूजनम् ... ७
१७९ काम्ये तंडुलपिष्टादिना शिवलिंगं विधाय तत्पूजनम् ... ... ६९
१८५ शिवस्तोत्रजपादिकथनम् ... १६७
१८६ लिंगार्चनोद्यापनविधिः ... १९०

### प्रकाशः १०

१८७ कालमहेशप्रणीतपञ्चाम्नायेषु ऊर्ध्वाम्नायकथनम् ... ... १४
१८९ वाममार्गिणां धर्मनिरूपणम् ५६
१९१ मद्यपाननिषेधः .. ... ७७
१९४ वामाचारमते पात्रलक्षणम् १३७
१९७ कौलिधर्मोत्पत्तिस्थानम् ... १९७
१९८ वासिनां पूजाप्रकारः ... २२८

पृष्ठांकाः विषयाः श्लोकांकाः

१९९ मंडलपूजाप्रकारः ... ... २३५
२०२ बटुपूजनबलिदानविचारः ... २८९
२०८ चक्रपूजापशुबलिदानविधी... ४००
२१४ नवरात्रव्रतविधिः ... ... ५०१
२१७ कुलाचारमार्गशास्त्रार्थनिर्णयः ५५५
२२० सर्वमार्गेषु गुरोर्महत्त्वम् ... ६२४
२२३ पूर्णाभिषेकविधिनिरूपणम् ६७७
२३१ पीठसंभवरहस्यकथनम् ... ८०१
२३७ परमाद्भुतान्यरहस्यकथनम् ९१८

### प्रकाशः ११

२३८ कलियुगान्ते त्रिशद्वेदमंत्रावस्थितितत्साधनार्थं प्राजापत्यादिचतुर्दश व्रतनिरूपणम् ... ... ९
२४० गायत्रीमंत्रविधानम् ... ४७
२४३ मृत्युंजयमंत्रविधानम् ... ९६
२४५ धनेशमंत्रविधिः ... ... १३०
२५२ अतिदुर्गामंत्रविधानम् ... २४१
२५७ त्रिशक्तिमंत्रसाधनविधिः ... ३३२
२७१ सविधानं श्रीसूक्तम् ... ५५८
२७९ विष्णुपूजाविधिः ... ... ६८३
२८१ गृहस्थानां जीवन्मुक्तिसाधनम् ७२५

### प्रकाशः १२

२८४ शतरुद्रीयस्तोत्रम् ... .... ४
२९२ शतरुद्रीयस्तोत्रेणाभिषेके फलानि १३४
३०८ देवीसूक्तकथनम् ... ... ३९६
३०९ विष्णुगणपत्योःसूक्ते ... ४०६

### प्रकाशः १३

३१२ नीचोच्चस्थानगतग्रहाणां सुखदुःखदत्वकथनम् ... ... ... १
" भास्करमंत्रकथनम्... ... ८
३१५ चंद्रमंत्रकथनम् ... .... ५६
३१६ भौमसंत्रकथनम् ... ...१३१
३२१ बुधमंत्रकथनम् ... ... १७८

| पृष्ठांकाः | विषयाः | श्लोकांकाः |
|---|---|---|
| ३२३ | बृहस्पतिमंत्रकथनम् | २०८ |
| ३२४ | शुक्रमंत्रकथनम् | २३७ |
| ३२६ | शनिमंत्रकथनम् | २५९ |
| ३२७ | राहुमंत्रकथनम् | २८३ |
| ३२८ | केतुमंत्रकथनम् | ३१६ |
| ३३० | ग्रहपूजनफलम् | ३४१ |
| | **प्रकाशः १४** | |
| ३३० | मंत्रत्यागविधिः | ५ |
| ३३१ | महाविद्याप्रत्यंगिराकथनम् | ३१ |
| ३४० | देवत्यागविधिः | २०० |
| | **प्रकाशः १५** | |
| ३४१ | गायत्र्यादियंत्रोद्धारधारणादीनां निरूपणम् | १ |
| | **प्रकाशः १६** | |
| ३६३ | विघ्नहरविघ्नराजमंत्रविधिः | ९ |
| ३६५ | लक्ष्मीगणपतिविधानम् | ५५ |
| ३६८ | शक्तिगणपमंत्रकथनम् | ९५ |
| ३७१ | हरिद्रागणपतिमंत्रविधानम् | १५६ |
| | **प्रकाशः १७** | |
| ३७२ | ऊर्ध्वाम्नायोक्तगणपतिमंत्रः | १ |
| ३७३ | गणेशपूजायंत्रम् | २५ |
| ३७४ | गणेशमंत्रकल्पाः | ४५ |
| ३७९ | गणेशतर्पणम् | १३० |
| ३८५ | काममंत्रनिरूपणम् | २४९ |
| ३९१ | प्राणाग्निहोत्रकथनम् | ३६७ |
| ३९४ | वाग्वादिनीमंत्रकथनम् | ४२० |
| ४०७ | दुर्गादेव्या बीजरूपमंत्रनिरूपणम् | ६६३ |
| ४०८ | गणेशोपासितलक्ष्मीमंत्रकथनम् | ६७८ |
| ४१२ | नित्यक्लिन्नामंत्रनिरूपणम् | ७३५ |
| ४१४ | गणेशसेवितमहाकृत्यामंत्रः | ७७८ |
| ४१६ | सर्वोपद्रवनाशनायोपयुक्ता महाशान्तिः | ८१२ |
| | **प्रकाशः १८** | |
| ४१८ | विरिविघ्नेशगणपतिमंत्रः | १ |
| ४२० | शक्तिविनायकमंत्रकथनम् | ५२ |
| ४२१ | भुवनेश्वरीशक्तिमंत्रोपासना | ६९ |
| ४२७ | वक्रतुंडमंत्रजपोपासनादि | १८२ |
| ४३० | वक्रतुंडगायत्रीकथनम् | २३४ |
| | **प्रकाशः १९** | |
| ४३० | पश्चिमाम्नायोक्तगणेशमंत्राः | १ |
| ४४१ | अष्टसीमाविनायकमंत्राः | १८९ |
| ४४३ | कूष्मांडविनायकसाधनम् | २३० |
| ४४७ | पञ्चास्यगजाननमंत्रविधिः | २९८ |
| ४४९ | विघ्नराजमंत्रः | ३३० |
| ४५० | मोदकप्रियगणेशमंत्रः | ३६० |
| ४५५ | चित्रकन्यासाधनम् | ४३५ |
| ४५६ | स्थूलदन्ताद्यष्टविनायकमंत्राः | ४६१ |
| ४५८ | एकविंशतिगणेशमंत्राः | ४९३ |
| ४५९ | राजमातंगीसाधनम् | ५०४ |
| | **प्रकाशः २०** | |
| ४७५ | उत्तराम्नायोक्तगणेशमंत्रः | १ |
| ४७६ | उच्छिष्टगणेशमंत्राः | १९ |
| ४७८ | वामदक्षिणमार्गनिर्णयः | ६५ |
| | **प्रकाशः २१** | |
| ४८५ | दक्षिणाम्नायोक्तभास्करमंत्रः | १ |
| ४८८ | भास्करमंत्रान्तरकथनम् | ४४ |
| | **प्रकाशः २२** | |
| ४९३ | चंद्रबीजजपादिविधिः | ७ |
| ४९४ | भौमबीजमंत्रजपादिविधिः | ३४ |
| ४९८ | बुधबीजमंत्रविधानम् | २०७ |
| ४९९ | गुरुबीजमंत्रजपादिविधिः | ११३ |
| ” | शुक्रबीजमंत्रविधानम् | १२० |
| ५०० | शनैश्चरबीजमंत्रविधानम् | १२९ |
| ” | राहुबीजमंत्रजपादिविधिः | १३४ |

पृष्ठांकाः विषयाः श्लोकांकाः


५०० केतुबीजमंत्रजपादिविधिः ... १३८
५०१ सूर्यमातृपिंगलासाधनम् ... १४८
५०२ चन्द्रमातुर्मंगलायाः साधनम् १६४
" भौममातृभ्रामरीसाधनम् ... १७५
५०३ बुधमातृभद्रिकासाधनम् ... १७९
" धान्याख्यगुरुमातृसाधनम्... १८३
" सिद्धाख्यशुक्रमातृकासाधनम् १८७
" उल्काख्यशनिमातृसाधनम्... १९०
५०४ संकटाख्यराहुमातृसाधनम् १९४
विकटाख्यकेतुमातृसाधनम् १९८


## प्रकाशः २३


५०४ ब्रह्मशक्तिमंत्रोपासनादिविधिः ३
५०५ चिन्तामणिसरस्वतीसाधनम् १२
५०६ ज्ञानसरस्वतीसाधनम् .... २३
५०८ वामाघटसरस्वतीसाधनम्... ५८
" अन्तरिक्षसरस्वतीसाधनम्... ६५
" महासरस्वतीसाधनम् ... ६७
५१२ त्रिकूटाख्यसरस्वतीसाधनम् १२६
५१३ विष्णुवागीश्वरीमंत्रः ... १४८
५१४ मुख्यवागीश्वरीमंत्रः ... १५१
" पद्मावतीमंत्रः ... ... १५९
५१५ बालामंत्राणां निरूपणम् ... १८२
५१८ अन्नपूर्णेश्वरीमंत्रः ... २२६
५२० गौरीमंत्राः ... ... ... २७१
५२३ वज्रेश्वरीमहामंत्रनिरूपणम् ३१४
५२५ त्वरितादेवीमंत्रसाधनम् ... ३५६
५२९ कौमारीविधिकथनम् ... ४३३
५३० वैष्णवीमंत्रविधिकथनम् ... ४४९
५३२ त्रैलोक्यविजयामंत्रविधिः ... ४८९
५३८ स्वप्नवाराहीमंत्रविधिः ... ५७३
५३९ बगलामुखीसाधनविधिः ... ५९८
५४७ छिन्नमस्तादेवतासाधनविधिः ६४०
५४९ तारामंत्रसाधनविधिः ... ७००
५५४ महातारामंत्र[illegible]धनम् ... ८४७
५६० धूमावतीमंत्रसाधनम् ... ९५७
५६६ प्रत्यंगिरामालामंत्रः ... १६०
५६७ चामुण्डायामहामंत्रकथनम् १०७०
५७२ शतचण्डीविधाननिरूपणम् ११६१
५८० सप्तविंशाक्षरलक्ष्मीमंत्रसाधनविधिः ... ... ... १३०१
५८३ ज्येष्ठालक्ष्मीमंत्रविधानम्... १३४७
" सिद्धलक्ष्मीमहामनुविधिः १३५९


## प्रकाशः २४


५८६ इन्द्रमंत्रकथनम् .... ... २
" वह्निमंत्रकथनम् ... .. १२
५८९ यममंत्रकथनम् .... ... ६६
५९० चित्रगुप्तमंत्रकथनम्... ... ७३
" नैर्ऋतमंत्रकथनम् ... ... ७९
५९१ आसुरीमंत्रविधिकथनम् ... ९१
५९२ वरुणदैवतमंत्रकथनम् ... ११४
५९३ मणिकर्णीमहामंत्रकथनम् ... १२१
" गंगाया मंत्रपंचककथनम् ... १३३
५९४ रेवामंत्रनिरूपणम् .... ... १४९
५९५ महाकृत्यामहामनुनिरूपणम् १६७
५९९ ब्रह्मणो मंत्रसाधनविधिः ... २२९


## प्रकाशः २५


६०० गणेशदीपविधिकथनम् ... २
६०१ बगलादीपविधिकथनम् ... १५
६०१ बटुकदीपविधिकथनम् ... २३
६०२ दीपमंत्रदीपयंत्रादिनिरूपणम् ४१
६०३ कार्याकार्यविनिर्णये विशेषतो दीपचिह्नानि ... ... ... ६६
६०४ शिवदीपविधिकथनम् ... ८०
" रोगहरभानुदीपविधिः ... ८५
" विष्णुदीपविधिः ... ... ८९


## प्रकाशः २६


६०५ मत्स्यावतारमंत्रविधिः ... २

| पृष्ठांका: | विषया: | श्लोकांका: |
|---|---|---|
| ६०६ | कूर्ममंत्रविधिनिरूपणम् ... | २३ |
| ६०७ | वराहमंत्रविधिकथनम् ... | ४४ |
| ६११ | नारसिंहमंत्रविधिः .... ... | ११२ |
| ६२३ | वामनमंत्राणां विधिः ... | ३३३ |
| ६२६ | परशुराममंत्रविधिः ... | ३९० |
| ६२८ | श्रीराममंत्रविधिः ... ... | ४३४ |
| ६३८ | श्रीकृष्णमंत्राणां विधिः ... | ६२७ |
| ६७५ | बौद्धमहामंत्रविधिः ... | १३१४ |
| ६७६ | कल्किमहामंत्रविधिः ... | १३२९ |

प्रकाशः २७

| पृष्ठांका: | विषया: | श्लोकांका: |
|---|---|---|
| ६७७ | केशवमूर्तिमंत्रकथनम् ... | ३ |
| " | नारायणमंत्रविधानकथनम् | १२ |
| ६८२ | माधवमंत्रविधानम्... ... | २०५ |
| ७८३ | गोविंदमंत्रकथनम्... ... | ११५ |
| " | विष्णुमंत्रकथनम् ... ... | १२७ |
| ६८४ | मधुसूदनमंत्रकथनम् ... | १३६ |
| " | त्रिविक्रममंत्रकथनम् ... | १४५ |
| ६८५ | वामनमंत्रकथनम् ... ... | १५४ |
| " | श्रीधरमंत्रकथनम् ... ... | १६२ |
| ६८६ | हृषीकेशमंत्रकथनम् | १७६ |
| ६८७ | दामोदरमंत्रकथनम् ... | १८८ |
| " | संकर्षणमंत्रकथनम् ... | १९६ |
| ६८[illegible] | वासुदेवमंत्रकथनम्... ... | २०६ |
| ६८९ | प्रद्युम्नमंत्रकथनम् ... | २३६ |
| ३९० | अनिरुद्धमंत्रकथनम् | २४५ |
| ६९४ | श्रीपुरुषोत्तममंत्रकथनम् ... | ३२२ |
| " | अधोक्षजमंत्रकथनम् | ३२९ |
| ६९५ | नृसिंहमंत्रकथनम् ... ... | ३४७ |
| ६९६ | जनार्दनमंत्रकथनम् ... | ३५२ |
| " | उपेन्द्रमंत्रकथनम् ... ... | ३५६ |
| " | हरिमंत्रकथनम् .. ... | ३५९ |
| ६९७ | कृष्णमंत्रकथनम् ... ... | ३७० |

प्रकाशः २८

| पृष्ठांका: | विषया: | श्लोकांका: |
|---|---|---|
| " | विष्णुप्रीतिकरमंत्रकथनम् ... | ३ |
| ६९८ | हयग्रीवमंत्रकथनम्... ... | १० |
| ७०० | विष्णुमंत्रनिरूपणम् ... | ५३ |
| ७०१ | गरुडमंत्रकथनम् ... ... | ८० |

प्रकाशः २९

| पृष्ठांका: | विषया: | श्लोकांका: |
|---|---|---|
| ७०३ | सुदर्शनचक्रमंत्रकथनम् ... | ४ |
| ७०७ | जयप्रदशंखमंत्रकथनम् ... | ७७ |
| ७०८ | खड्गमंत्रकथनम् ... ... | ८१ |
| " | धनुर्मंत्रकथनम् ... ... | ८४ |
| " | गदाकौमोदकीमंत्रकथनम् ... | ८६ |
| " | मुशलमंत्रनिरूपणम् ... | ९० |
| ७०९ | पाशमंत्रकथनम् ... ... | ९८ |
| " | छत्रमंत्रकथनम् ... ... | १०१ |
| " | चामरमंत्रकथनम् ... ... | १०५ |
| " | ध्वजमंत्रकथनम् ... ... | १०९ |
| " | पताकामंत्रकथनम् ... ... | ११३ |
| ७१० | शूलमंत्रकथनम् ... ... | ११५ |
| " | कटारमंत्रकथनम् ... ... | १२२ |
| " | दंडगायत्रीमंत्रकथनम् .... | १३० |

प्रकाशः ३०

| पृष्ठांका: | विषया: | श्लोकांका: |
|---|---|---|
| ७११ | कुलजाख्यविष्णुशक्तिमंत्रः... | १० |
| ७१२ | गोपालसुंदरीमंत्रविधिः ... | १८ |
| ७१७ | कृष्णप्रियैकजटामंत्रविधिः ... | १११ |
| " | एकवीराख्यकृष्णशक्तिमंत्रः | ११५ |
| ७१८ | कृष्णशक्तिमंत्रविधिः ... | १२८ |

प्रकाशः ३१

| पृष्ठांका: | विषया: | श्लोकांका: |
|---|---|---|
| ७१९ | षडक्षरशिवमंत्रविधिकथनम् | ३ |
| ७२८ | दक्षिणामूर्तिमंत्रविधिकथनम् | १६९ |
| ७३२ | शरभावतारहरमंत्रकथनम् | २४६ |
| ७३३ | अघोरास्त्रमंत्रविधिकथनम्... | २६५ |
| ७३४ | पाशुपतास्त्रमंत्रविधिकथनम् | २८४ |
| ७३५ | विषनाशननीलकंठमंत्रकथनम् | ३०२ |
| ७४२ | दक्षिणामूर्तिनिर्वाणमंत्रकथनम् | ४१३ |
| ७४५ | मृतसंजीवनीमंत्रकथनम् ... | ४७२ |
| ७४६ | दशाक्षररुद्रमंत्रकथनम् .... | ४८८ |

| पृष्ठांकाः | विषयाः | श्लोकांकाः |
|---|---|---|
| | **प्रकाशः ३२** | |
| ७४७ | बटुकमंत्रविधिकथनम् ... | १५ |
| ७५३ | भस्मसाधनकथनम् ... | ११८ |
| " | अभिषेकविधिनिरूपणम् ... | १२५ |
| ७५४ | गजोष्ट्रवाजिनां रोगादिशान्तिः | १३९ |
| " | नानाभैरवसाधननिरूपणम् | १५० |
| ७५८ | क्षेत्रपालमंत्रनिरूपणम् ... | २२४ |
| ७५९ | विषहरवह्निमंत्रकथनम् ... | २४२ |
| ७६० | चण्डमंत्रकथनम् ... ... | २४९ |
| ७६१ | कार्तिकेयमंत्रकथनम् ... | २७८ |
| ७६२ | लघुश्यामामंत्रकथनम् | २९८ |
| ७६४ | पञ्चकामेश्वरीमंत्राः | ३३७ |
| ७६५ | रुद्रशीर्षनिवासिनीमंत्रः | ४५० |
| ७६७ | वाङ्मतीमंत्रकथनम् ... | ३८७ |
| ७६८ | मणिकर्णिकामंत्रकथनम् ... | ४०१ |
| | **प्रकाशः ३३** | |
| ७६९ | यंत्रसिद्धिविधानकथनम् ... | १ |
| ७७० | हेरम्बयंत्रकथनम् ... ... | ३१ |
| ७७२ | स्तंभनयंत्रकथनम् ... ... | ५७ |
| ७७४ | आकर्षणकरहरिद्रागणपतियंत्रम् | ९५ |
| ७७५ | वश्यार्थं यंत्रसाधनम् ... | ११६ |
| ७७७ | उच्चाटनयंत्रकथनम्... ... | १५७ |
| ७७८ | विद्वेषणयंत्रकथनम् ... | १६९ |
| ७७९ | मारणयंत्रकथनम् ... ... | १८० |
| ७८० | मातृकायंत्रसाधनम्... ... | १९८ |
| ७८१ | त्रिपुरभैरवीयंत्रकथनम् ... | २३३ |
| ७८२ | पञ्चबाणेश्वरीयंत्रमंत्रकथनम् | २४९ |
| " | राजमातंगीयंत्रकथनम् ... | २५४ |
| ७८३ | भुवनेश्वरीयंत्रकथनम् ... | २७० |
| ७८४ | लक्ष्मीप्रदलक्ष्मीयंत्रकथनम् | २८२ |
| ७८५ | त्वरितायंत्रकथनम्... .... | ३०३ |
| ७८७ | बगलायंत्रकथनम् ... ... | ३४१ |
| ७८८ | वाराहीयंत्रकथनम्... ... | ३५३ |
| ७८९ | स्वप्नवाराहीयंत्रकथनम् ... | ३६४ |
| ७९० | कुरुकुल्यायंत्रकथनम् ... | ३९१ |
| ७९१ | वाराहयंत्रकथनम् ... ... | ४०४ |
| ७९२ | पृथिवीयंत्रकथनम् ... ... | ४२२ |
| " | नारसिंहयंत्रकथनम् ... | ४२८ |
| ७९४ | वामनयंत्रकथनम् ... ... | ४६६ |
| ७९५ | रामचंद्रयंत्रकथनम्... ... | ४७१ |
| ७९६ | श्रीकृष्णगोपालयंत्रकथनम्... | ५०६ |
| ७९८ | हनूमद्यंत्रकथनम् ... ... | ५२५ |
| " | दक्षिणामूर्तियंत्रकथनम् ... | ५४६ |
| ७९९ | मृत्युंजयाभिधयंत्रकथनम् ... | ५५३ |
| | बटुकभैरवयंत्रकथनम् ... | ५५९ |
| | **प्रकाशः ३४** | |
| ८०० | हनुमन्मालामंत्रकथनम् ... | ३ |
| ८०४ | चन्द्रोपासितहनूमन्मंत्रकथनम् | ९१ |
| ८०६ | गुरूपासितहनुमन्मंत्रकथनम् | ११८ |
| ८०७ | पञ्चकूटात्मकहनूमन्मंत्रकथनम् | १५५ |
| ८०९ | प्लीहादिनिवारणहनूमन्मंत्रः | १८१ |
| | **प्रकाशः ३५** | |
| ८१० | कार्तवीर्यार्जुनमंत्रकथनम् ... | २ |
| ८११ | दक्षिणमार्गेण कार्तवीर्ययंत्रस्यकाम्यपूजनविधिः .... | ३५ |
| ८१२ | वाममार्गिणां पूजनीयन्त्रयंत्रकथनम् | ४५ |
| ८१३ | कार्तवीर्यमूलध्यानकथनम् ... | ७५ |
| ८१५ | कार्तवीर्यगायत्रीकथनम् ... | १०९ |
| ८१७ | कार्तवीर्यप्रियकरदीपादिविधिः | १५३ |
| ८१८ | कार्तवीर्यदीपाधारयंत्रकथनम् | २६१ |
| ८१९ | दीपप्रबोधनसमये शुभाशुभविचारः ... ... | १९० |
| ८२१ | ग्रंथसमापनम् ... ... | २१६ |


इतिश्रीमेरुतंत्रस्थितविषयानुक्रमणिका समाप्तिं गता ।



॥ ॐ ॥

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीगौरीशंकराभ्यां नमः ॥

# अथ मेरुतन्त्रं प्रारभ्यते ।

यथाऽसत्सदिवाभाति न च भाति कदापि सत् ॥ यस्मिञ्ज्ञाते न सा भाति तस्यै तस्मै नमोनमः ॥ १ ॥ जलन्धरेण विजिते सुरासुरनरेऽखिले ॥ सूक्ष्मरूपेण ते सर्वे महेशं शरणं गताः ॥ २ ॥ दिव्यान्यब्दसहस्राणि समाधिस्थं विलोक्य तम् ॥ प्रार्थिता चार्चिता तैस्तु वामदक्षिणमार्गिभिः ॥ ३ ॥ अम्बा तदा बोधयुता नत्वा तं समव्यजिज्ञपत् ॥ ध्यायन्ति विधिहर्य्याद्यास्त्वां त्वं ध्यायसि कं पुनः ॥ ४ ॥ मां वदन्ति परां शक्तिं त्वां वदन्ति परं शिवम् ॥ आवयोरपि किं ध्येयं तत्त्वं मे कृपया वद ॥ ५ ॥ इति श्रुत्वा वचस्तस्याः स्मित्वा किञ्चिन्महेश्वरः ॥ [illegible] विधीन्द्रादीन्वाक्यमेतदुवाच ह ॥ ६ ॥ सदाशिव उवाच ॥ नराणां परमं वृद्धेरायुस्सौख्यं शतं समाः ॥ तदब्दं देवयोनीनां दिनमायुश्च तच्छतम् ॥ ७ ॥ वृद्धयते परमं तस्य मानं कलियुगस्य तत् ॥ धर्म्मार्धं सार्धं सम्पूर्णं धर्म्मशास्त्र प्रमाणतः ॥ ८ ॥ इदन्तु शैविविहितमैन्द्रायुर्मानवम्परम् ॥ कतिप्रमाणमब्दं तु समयः कायपूरकः ॥ ९ ॥ चतुर्दशेन्द्रसं-

स्थैव ब्रह्मणो दिनमुच्यते ॥ या ध्यायते महामाया मया तच्छ्वासनिर्गमः॥ १०॥ प्रपञ्चो ब्रह्मदिवसः कुम्भको रात्रिरस्य तु ॥ एवं तस्या घटिकया वर्षमेकं विधेस्स्मृतम् ॥ ११ ॥ घटीशतमितं तस्या ब्रह्मा जीवति कीटवत् ॥ पक्षमेकं सतीरूपं शुक्लं कृष्णं तु पार्वती ॥१२॥ ऋतुमात्रं हरिर्जीवेद्वर्षमात्रमहं शिवः॥ एवं सा शतवर्षा वै महाकालस्य गेहिनी ॥ १३ ॥ सर्पकञ्चुकवद्देहं त्यक्त्वात्यक्त्वा पुनर्युवा ॥ महाकालस्सदा तिष्ठेत्स मया विषयीकृतः ॥ १४ ॥ एवं श्रुत्वा वचस्तस्य देवी ब्रह्मा हरिः सुराः ॥ अहंकारस्य विलयं कृत्वा भीता नताः पुनः ॥ १५ ॥ देवा ऊचुः ॥ त्राहित्राहि महादेव शरणागतवत्सल ॥ साहंकारा वयं सर्वे ईश्वरा इतिवादिनः ॥ १६ ॥ निर्जिता अपि-निर्लज्जा जलन्धरवधैषिणः ॥ मशकाश्च वयन्देव न च त्वं मशकायसे ॥१७॥ यस्याग्रे सोपि यस्त्वञ्च पादार्धांशेन नो समः ॥ महाकालः कथञ्ज्ञेयः कथयस्व सदाशिव ॥ १८ ॥ मुक्तयः कतिधा देव श्रेष्ठा का किञ्च साधनम् ॥ वदास्माकं यदि कृपा देव्यां विष्णौ सुरेषु च ॥१९॥ ईश्वर उवाच ॥ ज्ञायते तत्प्रभावेण सकलं वेदवाक्यतः ॥ पुनर्मोदयते वृद्धिन्तस्य मायाकृतञ्जगत् ॥ ॥ २० ॥ मया कृतानि तन्त्राणि सङ्ख्ययाष्टोत्तरं शतम् ॥ येनयेन प्रार्थितोहं देवी सम्प्रार्थिता मया ॥ २१ ॥ देवीभिः प्रमथैर्देवैस्तत्तन्मोक्षश्चतुर्विधः ॥ येन मार्गेण भवति स स मार्गः प्रकाशितः ॥ २२ ॥ तस्माद्देवेशि ते देवा अहङ्कारेण मोहिताः ॥ अन्यान्देवान्विनिन्दन्ति षट्कर्म्मनिरतास्सदा ॥ २३ ॥ कलिना हतसौभाग्या भक्ष्ये पाने च मैथुने ॥ जायन्ते निरतास्तेन निर्धनाः प्रेतरूपिणः ॥ २४ ॥ दृश्यन्ते तु तथा देवा भवद्भिस्सम्यगीरितम् ॥ वेदसारं धर्म्मसारं तन्त्राणां हृदयं परम् ॥ २५ ॥ महाकालेन यत्प्रोक्तम्पञ्चमीमुक्तिसाधनम् ॥ सर्वेषाम्मेरुतां यातन्तत्तन्त्रं मेरुसाञ्ज्ञितम् ॥ २६ ॥ शृण्वन्तु तद् दृश्यमानम्मनोह्लादकरञ्च यत् ॥ पृच्छया निजसन्देहान्दूरीकुर्व्वन्त्वशङ्किताः ॥ २७ ॥ यथा तोयञ्जलनिधेर्गृहीत्वाब्दाः स्वधारया ॥ वर्षन्ति क्षत्रवायुस्तं बिन्दुरूपं करोति च ॥ २८ ॥ तद्वन्महाकालवान्महामाया प्रकर्षति ॥ कर्म्मभिश्चैव सम्भिन्नास्ते देवाः कोटिशोभवन् ॥ २९ ॥ यथा नैक-

ब्यगुणतो बिन्दवो यान्ति चोदताम् ॥ तथैवोपासनामार्गगुणा यान्ति च देवताम् ॥ ३० ॥ यथा सरिद्भ्यो गर्त्ताम्भः पतितं ह्रदतां व्रजेत् ॥ स च दूरतलः स्याद्वै तद्वद्देवोऽपि मोहितः ॥ ३१ ॥ पुनर्नरः पुनस्तिर्यक् शेषं यद्वज्जलाशयः ॥ पुनः सूर्यकरे न्यस्तः पुनर्वृष्टिः पुनर्जलम् ॥ ३२ ॥ तद्वद्दुष्कर्मणा जीवो नानायोनिषु जीर्यते ॥ यथा जलौघः सन्मार्गात्तटिनीतो महानदीम् ॥ ३३ ॥ प्रविष्टस्तोयधिम्पश्चादपुनर्भवतां व्रजेत् ॥ वाडवोदरसंवेशात्तद्वज्जीवोऽपि देवताम् ॥ ३४ ॥ विष्णुतां शिवतांल्लब्ध्वा महाकालोभिजायते ॥ समुद्रादाहृतः कश्चिद्दैवात्त्यक्तस्तु तत्र तु ॥ ३५ ॥ यथा समुद्रो भवति तद्वद्ब्रह्मसुता अपि ॥ ब्रह्मज्ञानाद्विनिर्मुक्ता हित्वा चोपासनाक्रमम् ॥ ३६ ॥ श्रीदेव्युवाच ॥ वामदक्षिणभेदेन पञ्चपञ्चक्रमेण च ॥ उपासना वामदक्षा तत्रतत्र प्रशस्तिका ॥ ॥ ३७ ॥ तत्र भोगक्रिया मोक्षक्रिया युग्मक्रियापि च ॥ लभ्यते देवता का च सर्वाभ्यस्तूत्तमोत्तमा ॥ ३८ ॥ शिव उवाच ॥ देवासुरैः पुरा कल्पे मथ्यमाने महोदधौ ॥ तत्र श्यामा समुत्पन्ना सुरा कलशधारिणी ॥ ३९ ॥ गौराङ्ग्यरुणचैला च भास्वद्धरितकञ्चुका ॥ श्वेतोत्तरच्छदा देवी त्रैलोक्यस्यापि मोहिनी ॥ ४० ॥ दृष्ट्वा तान्दानवास्सर्वे शुक्राचार्य्यवरात्सुरान् ॥ जित्वा ताञ्जगृहुस्तस्याः कलशाच्च पपुः सुराम् ॥ ४१ ॥ देवान्पलायितान्दृष्ट्वा शक्तयस्तत्र संस्थिताः ॥ पपुस्ता अपि तां पुण्यां सुरां दैवतमातरम् ॥ ४२ ॥ वरानपि बहून्दद्युः सुरायास्सुरमातरः ॥ अनयास्मान्तर्प्पयन्ति शेषं गृह्णन्ति ये नराः ॥ तेऽस्मद्रूपा न सन्देहो भुक्तिमुक्त्येकभाजनम् ॥ ४३ ॥ सुरा गङ्गा सुरा सिन्धुः सुरा देवी सरस्वती ॥ सुरा गोदावरी रेवा सुरैव परमम्पदम् ॥ ४४ ॥ सुरान्निन्दन्ति ये मूढास्ते मूढा जन्मजन्मनि ॥ गन्धर्वैः स्तूयमानास्ताश्शक्तयस्ते च दानवाः ॥ ४५ ॥ पुनर्ममन्थुर्जलधिं बलहीनैस्सुरैस्सह ॥ धन्वन्तरिस्समायातस्सुधाकलशहस्तवान् ॥ ४६ ॥ सुरामत्तास्तु ते प्रोचुः किमिदं पुरुषाहृतम् ॥ उवाच मधुरं विष्णुस्सान्त्वयंश्च प्रतारयन् ॥ ४७ ॥ पूर्वदेवास्सन्तु यूयम्मद्यस्यास्य च पानतः ॥ अग्रे यदिदमुत्पन्नं पीयूषन्तत्प्रकीर्तितम् ॥ अग्रेण्येतत्तु देवार्थे निस्सारम्पुरुषाहृतम् ॥ ४८ ॥ ततो हरिर्मोहिनीरूपधारी वामेन तां

पाययेत्पूर्वदेवान् ॥ शक्तीस्सर्वास्त्वरुणान्भैरवादीनेतन्मन्त्रानुद्धरेदघ्यवर्षन् ॥ ॥ ४९ ॥ दक्षेण देवानमृतं पाययंस्ते तत्तन्मन्त्राः पूर्वदेवानबाधन् ॥ हाहा भूतं समरे तत्समस्तं शुक्राचार्य्यो ज्ञातवांस्ततसमग्रम् ॥ ५० ॥ ततस्स क्रोधतास्राक्षो जलं कृत्वा करेऽशपत् ॥ धिग्धिग्ज्ञानं सुरारीणामनया सुरया हृतम् ॥ ५१ ॥ तस्मादिमां ये पिबन्ति सर्वे पातकिनस्तु ते ॥ प्रयान्तु निरयं घोरं तिष्ठन्त्विह पिशाचवत् ॥५२॥ श्रुत्वा तं दारुणं शापं प्रजज्वाल तदा सुरा ॥ निर्दहन्तीव लोकांस्त्रीन्प्राकम्पन्त सुरासुराः ॥ ५३ ॥ ततो मया स्तुता देवी बीजगर्भैस्स्तवोत्तमैः॥पादयोः पातितः शुक्रः पुत्रोऽयन्तेभियोज्यताम् ॥५४॥ मायया रमया वाचा सम्बुध्यन्ता त्रिवर्षकाः ॥ शुक्रशापं विमोचय पुनस्तद्वर्णकान्तिका ॥ ५५ ॥ यस्या उपासना तस्या बीजेन पुटितो मनुः ॥ षोडशार्णस्तवाख्यातो मन्त्रिताष्टोत्तरं शतम् ॥ ५६ ॥ निश्शापं कुरुते साध्यं भुक्तिमुक्त्येकभाजनम् ॥ इति दीक्षाक्रमो येषां वंशे देवि समागतः ॥ ५७ ॥ स कौलो दुर्लभो देवि दाता भोक्ता च पावकः ॥ यन्मिन्मार्गे प्रधानोऽयं स तु वामपथः स्मृतः ॥ ५८ ॥ मद्यं मांसं च मत्स्याश्च मुद्रा मैथुनमेव च ॥ कुलमार्गप्रविष्टेन सदा सेव्यं सुहर्षिणा ॥ ५९ ॥ कौलिकोङ्गुष्ठताम्प्राप्तो वामस्स्यात्तर्ज्जनीसमः ॥ चीनक्रमो मध्यमस्स्यात्सिद्धान्ती योऽवरो भवेत् ॥ ६० ॥ कनिष्ठः शाबरो मार्ग इति वामस्तु पञ्चधा ॥ यैः पीतममृतं ते ते सोमपा बलदर्पिताः ॥ ६१ ॥ लक्ष्म्या सह समुद्भूताः शतयत्नाश्च सोमपाः ॥ तेषामुपासना प्रोक्ता दक्षमार्गेण सा द्विजैः ॥ ६२ ॥ कर्तव्या वैदिकी श्रेष्ठा स्मार्ती स्यान्मध्यमोत्तमा ॥ पौराणी मध्यमा ख्याता तान्त्रिकी त्ववरा स्मृता ॥६३॥ देशी च कालीजातीया कनिष्ठा स्यादुपासना ॥ वाममार्गो यदा दक्षं प्रविशेत्तत्सुरैस्स तु ॥ ६४ ॥ विघ्नेन पीड्यते चापि न सिद्धिमधिगच्छति ॥ दक्षमार्गो यदा वामं प्रविशेत्तत्सुरास्तदा ॥ ६५ ॥ लोकद्वयाद्यापयन्ति तं ग्रसन्ति च वामिनम् ॥ तस्मात्स्वकुलमार्गं तु ज्ञात्वा कुर्य्यादुपासनाम् ॥६६॥ भक्तिश्रद्धान्वितौ शिष्यगुरू सम्पूर्णलक्षणौ॥सर्वोऽपि मार्गस्तत्कालं भुक्तिमुक्तिप्रदायकः॥ ॥ ६७ ॥ धनार्थिनस्तु गुरवः शिष्याः सिद्ध्यर्थिनः कलौ ॥ तस्मान्न चोभ-

योऽसिद्धिर्देवतानां विडंबनम् ॥ ६८ ॥ द्विजानामनुपेतानां स्वकर्म्माध्ययनादिषु ॥ यथाधिकारो नास्तीह स्याच्चोपनयनादिषु ॥ ६९ ॥ तथा चादीक्षितानां च मनुदेवार्च्चनादिषु ॥ नाधिकारोऽस्त्यतः कुर्य्यादात्मानं मन्त्रसंस्कृतम्॥ ॥ ७० ॥ दीयते ज्ञानविज्ञानं क्षीयन्ते पापराशयः ॥ तेन दीक्षा इति प्रोक्ता प्राप्ता चेत्सुगुरोर्मुखात्॥ ७१ ॥ असद्गुरुः स्वयंनष्टः कथं तारयते परम् ॥ विंशद्विश्वोपकगुणैर्युक्तो यः स गुरुर्भवेत् ॥ ७२ ॥ योऽत्युत्कृष्टो यथोक्ताङ्गः शुद्धवेषो मनोहरः ॥ सर्वाङ्गमार्गतत्त्वज्ञः सर्वमन्त्रविधानवित् ॥ ७३ ॥ इङ्गिताकारचेष्टाविदूरतः कृतदुर्जनः ॥ अन्तर्मुखोऽबहिर्दृष्टिस्सर्वज्ञो देशकालवित् ॥ ॥ ७४ ॥ आज्ञासिद्धो दयायुक्तः शान्तो वेदाङ्गवेदवित् ॥ नित्ये नैमित्तिके काम्ये रतः कर्म्मण्यनिन्दिते ॥ ७५ ॥ अलोलुपोऽहिंसकश्च पक्षपाती गुरुर्मतः॥ अनीदृशगुरोर्मन्त्रो मरणायासदुःखकृत् ॥ ७६ ॥ विप्र एवेदृशः कार्य्यो गुरुर्नो चेत्तदेदृशः ॥ क्षत्रविट्छूद्रजातीयः प्रतिलोमं न दीक्षयेत् ॥ ७७ ॥ दक्षमार्गे तु निर्वीर्य्यः पितुर्मातामहस्य च ॥ सोदरस्य गृहस्थस्य वाममार्गेतिवीर्य्यवान् ॥ ७८ ॥ परीक्षेत गुरुः शिष्यं विद्वद्भिर्लक्षणैर्युतम् ॥ द्वादशाब्दं तदर्धं वा तदर्धं वाथ दीक्षयेत् ॥ ७९ ॥ गुरुवाक्यप्रमाणज्ञं गुरुशुश्रूषणे रतम् ॥ लज्जाभिमानगर्वादिवर्जितं कुलनायकम् ॥ ८० ॥ निरपेक्षं गुरुद्रव्ये तत्प्रसादाभिकाङ्क्षिणम् ॥ जपध्यानाभिनिरतं मोक्षमार्गाभिगामिनम् ॥ ८१ ॥ समाधिसाधनोपेतं शुद्धदेहं च धार्म्मिकम् ॥ दृढव्रतं सदाचारं श्रद्धाभक्तिसमन्वितम् ॥ ८२ ॥ दीनसत्यमितस्निग्धभाषिणं साधुसम्मतम् ॥ अनुकूलप्रियायुक्तं धीरं सर्वोपकारकम् ॥ ८३ ॥ सदैव सुमुखं कुर्य्याच्छिष्यं दैवततुष्टये ॥ दत्त्वादीक्षां तु लोभाद्यैर्देवताशापमाप्नुयात् ॥ ८४ ॥ परशिष्ये चेष्टवंशे धूर्त्ते पण्डितमानिनि ॥ स्त्रीद्विष्टे सामये त्रस्ते व्यङ्गे दीक्षा तु निष्फला ॥ ८५ ॥ न वेदः प्रणवं त्यक्त्वा मन्त्रो वेदसमुत्थितः ॥ तस्माद्वेदपरो मन्त्रो वेदाङ्गश्चागमः स्मृतः ॥ ८६ ॥ वश्याकर्षादिकं कर्म्म दृष्टादृष्टफलप्रदम् ॥ वेदेन साध्यते सर्वं ग्रहयज्ञादिकं किल ॥ ८७ ॥ न वेदेन विना यज्ञा न वेदा यज्ञवर्ज्जिता ॥ तस्माद्वेदपरो मन्त्रो नावेदो मन्त्र ईरितः ॥ ८८ ॥ न मन्त्रे चाधिकारोऽस्ति

शूद्राणां नियमात्परः ॥ यावन्त्यर्णानि मन्त्राणां शूद्राय प्रतिपादयेत् ॥ ॥ ८९ ॥ तावन्त्यो ब्रह्महत्यास्स्युस्तस्मात्संस्कारयेच्च तम् ॥ स्वाहोंकारेण रहितं दद्यात्पश्चाच्च तान्त्रिकम् ॥ ९० ॥ स्वागमोक्तेन मार्गेण स्त्रीशूद्रैरपि पूजनम् ॥ कर्त्तव्यं संस्कृतैस्तैश्च स्वागमोक्तेन वर्त्मना ॥ ९१ ॥ विधवायाः सुतादेशात्कन्यायाः पितुराज्ञया ॥ भर्त्रैव दीक्ष्यते भार्य्या यतोऽसौ सर्वदा गुरुः ॥ ९२ ॥ तथापि पूज्यो देवस्य बुद्ध्याऽसौ सर्वसाधनैः ॥ शैवो वा वैष्णवो वापि स्त्रीशूद्राणां नमोन्तकः॥९३॥ नाममन्त्र इति ज्ञात्वा चाण्डालानपि दीक्षयेत् ॥ ९४ ॥ ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्याः शूद्राः पौलस्त्यजातयः॥ पञ्चधा मनवः ख्याताः प्रदेयाश्चानुलोमतः ॥ ९५ ॥ माया बीजं ब्राह्मणः स्याच्छीबीजं क्षत्रियः स्मृतः ॥ कामबीजं भवेद्वैश्यो वाग्भवं शूद्र ईरितः ॥ ॥ ९६ ॥ चतुर्बीजपरित्यक्तो मनुः पौलस्त्यसञ्ज्ञकः ॥ हीनवर्णाय नोदद्यान्मन्त्रं त्वधिकवर्णकम् ॥ ९७ ॥ आनुष्टुभाश्च ये शक्तिमन्त्रा नीलसरस्वती ॥ कल्पोक्ता वैदिकी विप्रैर्देया विन्ध्यनिवासिनी ॥ ९८ ॥ ब्राह्मणैः क्षत्रियैश्चापि देया पाशुपताभिधा ॥ सौदर्शनी नारासिंही कार्तवीर्य्यस्य नान्यतः ॥ ९९ ॥ वर्णत्रयेपि दातव्यं दक्षिणामूर्त्यघोरकम् ॥१००॥ अष्टाक्षरं हयग्रीवमुमामाहेश्वरं तथा ॥ लक्ष्मीनारायणं वासुदेवताक्षं वराहकम् १०१ अग्निः सूर्य्यवृणेर्यस्तु ताराद्याश्चारुणेश्वराः ॥ सर्ववर्णेषु दातव्याः कालिका श्यामला तथा ॥ १०२ ॥ छिन्नमस्ता च मातङ्गी बगला चोग्रतारिका ॥ योगिनी यक्षपत्नीनां त्रैपुरा बटुकादयः ॥ १०३ ॥ शावराश्च पुलस्त्यानि न जप्याद्विजजन्मनि ॥ उपासना त्रिधा प्रोक्ता श्रेष्ठा तत्र तु सात्त्विकी॥१०४॥ तस्यां तु मानसी पूजा पौजे मुख्यतमा स्मृता ॥ राजसो दक्षिणो मार्गः प्रतिमायां च पूजनम् ॥ १०५ ॥ वाक्योपचारैः सकलैस्तदाद्यन्ताद्विशिष्यते ॥ तामसोपासनं प्रोक्तं पीठादौ बलिदानतः ॥ १०६ ॥ वाममार्गस्ततश्चाद्यवर्णं हित्वा प्रशस्यते ॥ एषा पद्या तु सम्प्रोक्ता वामदक्षिणयोः परा ॥ १०७ ॥ गोपिता सर्वतन्त्रेषु किमन्यच्छ्रोतुमिच्छथ ॥ १०८ ॥

इति श्रीमहामायामहाकालानुमते मेरुतन्त्रे शिवप्रणीतव्यवस्थाप्रकाशः प्रथमः॥१॥

श्रीदेव्युवाच ॥ शतशोत्र जना देव तन्त्रमार्गे व्यवस्थिताः ॥ सिद्धिर्न दृश्यते क्वापि किम्परत्र भविष्यति ॥ १ ॥ यदि कर्म्म प्रधानं च देवताराधनेन किम् ॥ देवताराधनं सत्यं साधका दुःखिताः कथम् ॥ २ ॥ एतन्मे संशयं छिन्धि किं चक्रैश्चापि मान्त्रिकैः ॥ संस्काराश्च कथं कार्य्यास्तान्त्रिकाणां वदस्व तत ॥ ३ ॥ ईश्वर उवाच ॥ गर्भे कर्म्मत्रयं कुर्य्याज्जायमाने तथा दश ॥ ततः कर्म्मत्रयं चेति संस्काराः षोडश स्मृताः ॥ ४ ॥ द्विजातीनां तथा मन्त्रे कुर्य्यात्कर्म्मत्रयं गुरुः ॥ दश शिष्यांस्ततः कुर्य्यात्सिद्धे मन्त्रे पुनस्त्रयम् ॥ ५ ॥ षडेव जन्मसंस्काराः प्रोक्ताः स्त्रीशूद्रयोरपि ॥ तथैव मन्त्रसंस्काराः षडेव परिकीर्त्तिताः ॥ ॥ ६ ॥ चाण्डालादिषु चत्वारो मन्त्रे प्रोक्तास्त एव हि ॥ त्रयो यवनकल्पोक्तास्तन्मन्त्रेष्वपि ते त्रयः ॥ ७ ॥ वामदक्षिणभेदेन तेषां कर्त्तव्यतां शृणु ॥ आज्यस्थाने सुरां वामे होमाद्यर्थं प्रकल्पयेत् ॥ ८ ॥ पाकादिषु च मांसं स्याच्छैलादौ नियमाः स्मृताः ॥ मैथुनं ब्रह्मचर्य्यं च मुद्रास्तत्कर्म्मिकास्तथा ॥ ९ ॥ गर्भाधानं स्वकल्पोक्तवर्त्मना प्रथमं भवेत् ॥ दाक्षिणानामथो वामे द्वितीयाङ्कं समाचरेत् ॥ १० ॥ सन्तर्प्पयेदङ्गदेवं मन्त्रैर्योनिं च तीर्थतः ॥ अस्या अङ्गदेवताया मन्त्रन्यासं समाचरेत् ॥ ११ ॥ सर्वान्न्यासान्स्वस्य देहे भावयेत्तां च भैरवीम् ॥ स्वयं च भैरवो भूत्वा रतिकर्म्म समाचरेत् ॥ १२ ॥ सुखासनस्थो भगगं ध्वजं कृत्वा जपेदमुम् ॥ मन्त्रं पञ्चसहस्रं च यथेष्टं लभते सुतम् ॥ १३ ॥ लक्ष्मी प्राणेश्वरी चेति मम पाहि नवाक्षरः ॥ तस्यास्सोमस्तस्य सूर्यो गर्भस्तिष्ठेद्धरातले ॥ १४ ॥ अथ द्वितीयसंस्कारः कार्य्यः पुंसवनाभिधः ॥ तृतीये मासि कुर्वीत अथ पुंसवनं बुधः ॥ १५ ॥ वेदोक्तप्रोक्तदिवसे स्वकल्पोक्तेन वर्त्मना ॥ तत्र वैदिकमुख्यस्य होमस्थाने स्वदेवताः ॥ १६ ॥ जुहुयात्कारणेनैव चतुराहुतिसंख्यया ॥ तदावरणदेवानां पुरुषाणां द्वयंद्वयम् ॥ १७ ॥ एका स्त्रीणां वाममार्गे शेषं पूर्ववदीरितम् ॥ सतीर्थं सपशुं दद्यान्निशायां भैरवं बलिम् ॥ १८ ॥ अथो तृतीयसंस्कारः सीमन्ताख्यः प्रकीर्तितः ॥ चतुर्थषष्ठाष्टमेषु मास्सु सन्मध्यमाधमः ॥ १९ ॥ ज्योतिश्शास्त्रोक्तदिवसे स्वकल्पोक्तेन वर्त्मना ॥ वामी तु देवतामन्त्रं सीमन्ते सुरुचा लिखेत् ॥ २० ॥ न्यासं कुर्य्यात्तद-

ङ्गेषु तन्मन्त्रं रोगहारिणम् ॥ ततो न गच्छेत्तां भार्य्यां देवताशापभीतितः ॥ ॥ २१ ॥ कामेन वाथ मोहेन दुष्काले वा विधानतः ॥ अन्यायेन कृतः संगः सीमन्तस्तदधोवहः ॥ २२ ॥ अथ तुर्यन्तु संस्कारं कुर्य्यात्स्त्रीशूद्रयोरपि ॥ जातकर्म्माभिधं विप्रः स्वकल्पोक्तेन वर्त्मना ॥२३॥ कन्या जन्मनि विप्राणां शूद्रस्य सुतजन्मनि ॥ तूष्णीमेव क्रियां कुर्य्याद्विष्णुस्मरणपूर्वकम् ॥ २४ ॥ वाममार्गी न कुर्वीत मेधाजननसंस्कृतिम् ॥ किन्तु स्वर्णस्य लेखन्या विलिखेत्करणाग्रया ॥ २५ ॥ तालुदेशे मूलबीजं रसनायां तथा मनुम् ॥ देवतां तर्प्पयेत्पश्चादन्यत्कर्म्म तु दक्षवत् ॥ २६ ॥ अथ पञ्चमसंस्कारो नामकर्म्माह्विको ध्रुवम् ॥ सर्वेषामेवमुद्दिष्टः सूतकान्ते शुभे दिने ॥ २७ ॥ स्वकल्पोक्तविधानेन नामकर्म्म समाचरेत् ॥ तन्त्रेषु यानि चोक्तानि मात्राचक्राणि षोडश ॥ २८ ॥ विचार्य्य तानि कुर्व्वीत नाम यत्सफलं भवेत् ॥ न कृतं चेदत्र नाम तादृशश्चेद् गुरुस्तदा ॥ २९ ॥ पूर्णाभिषेके कुर्व्वीत तत्सबीजं निरूप्यते ॥ यस्मादक्षगुणैः सिद्धिर्विप्राणां सम्प्रजायते ॥३०॥ ताराचक्रं प्रवक्ष्यामि बालानां मन्त्रसिद्धये ॥ अ आ हये इर्यमे च ई उ ऊ वह्निभे तथा ॥ ॥ ३१ ॥ ऋ ॠ ऌ ॡ च रोहिण्यां ए मृगे शिवभे च ऐ ॥ ओ औ पुनर्वसौ पुष्ये ककारः सर्प्पभे खगौ ॥ ३२ ॥ पैत्रे घङौ भगर्क्षे च आर्य्यमर्क्षे छजौ मतौ ॥ हस्ते झञौ टठौ त्वाष्ट्रे स्वात्यां डो द्वीशभे ढणौ ॥ ३३ ॥ तथदा अनुराधायां ज्येष्ठायां धोऽथ मूलभे ॥ नपफाः पूर्वाषाढायां बकारो भस्तु वैश्वभे ॥ ३४ ॥ मः कर्णेथ धनिष्ठायां यरौ लः शततारके ॥ वशौ तु पूर्वभाद्रायां षसहाः स्युरुपान्तिमे ॥ ३५॥ ळं क्षं अं अश्च रेवत्यां गण्या मन्त्राक्षरर्क्षतः ॥ साध्यनामादिवर्णर्क्षैस्त्रिरावृत्त्या फलानि तु ॥ ३६ ॥ स्थाननाशः सतां संगो बहुमैत्री मृतेः समम् ॥ आधिं वा व्याधिमाप्नोति साधकः कार्य्यसिद्धये ॥ ३७ ॥ बहुभिः शत्रुताक्षेपो विपत्तिः सम्पदात्ययः ॥ एतत्तु ताराचक्रस्य फलं ज्ञात्वाचरेदिदम् ॥ ३८ ॥ तारोक्तमातृकाभिर्भे ज्ञात्वा साधकसाध्ययोः ॥ स्त्रीपुंसोर्वा व्यस्तयोश्च गणचक्रं विचारयेत् ॥ ३९ ॥ स्थिराणि विप्रघोग्राणि रौद्रं नरगणः स्मृतः ॥ हर्य्यन्त्यमित्रादित्येन्दुवाय्विज्यकर-

घोटकाः ॥४०॥ देवाः शेषा राक्षसाः स्युः साध्यसाधकयोः फलम् ॥ नृदेवयोः फलं शीघ्रं व्यस्तयोः कष्टतः फलम् ॥ ४१ ॥ नृदैत्ययोर्मनुग्राह्यव्यस्तयोर्मरणं भवेत् ॥ देवदानवयोर्युद्धं व्यस्तयोर्निष्फलम्भवेत् ॥ ४२ ॥ ग्रहोपग्रहमन्त्रेषु शशिचक्रं विचारयेत् ॥ वेदा रामास्त्रयो युग्मं युग्मं युग्मं वदन्ति षट् ॥ ॥ ४३ ॥ षड्वर्गाश्च ततः षट्सु नामवर्णस्थलान्मनोः ॥ भवेद्यत्रादिगो वर्णः फलं तत्र भवेदिदम् ॥ ४४ ॥ इष्टो दासः पोषकश्च रोगकृत्पुत्रदः शुभः ॥ स्त्रीसौख्यकृद्घातकारी भाग्यदः कार्यसिद्धिकृत् ॥ ४५ ॥ लाभकृद्व्ययकृच्चेति प्रोक्ता यन्त्रेषु मातृकाः ॥ स्त्रीशूद्रप्रतिलोमानां नाममन्त्रैरुपासना ॥ ४६ ॥ पूर्वोक्ता राशयो ज्ञेया मीनाद्याश्च द्विजादयः ॥ वर्णोत्तमो मनुर्ग्राह्यो वैदिकोऽत्र विशेषतः ॥ ४७ ॥ वक्ष्येऽथ कौलिके मार्गे सिद्धिकृत्पाञ्चभौतिकम् ॥ वाय्वग्निभूजलाकाशपञ्चतत्त्वानि विन्यसेत् ॥ ४८ ॥ द्वौद्वौ स्वरौ तले लेख्यौ यकाराद्यास्ततः पुनः ॥ कादिकाश्चापि षड्वर्गाः शषसा हश्च क्षस्तथा ॥ ४९॥ पुनः पुनर्नाम लेख्यं मन्त्राक्षरसमो मनुः ॥ तस्मात्पुनर्मनुर्लेख्यो युगपत्स्यात्समापनम्॥५०॥ यावत्तावल्लिखित्वाथ वर्णतत्त्वं विचारयेत् ॥ स्थाप्यं रूपं त्वेकतत्त्वे मित्रतत्त्वे च तद्दलम् ॥५१॥ उदासीने पादमेकं तद्योगः पञ्चभाजितः ॥ इष्टं स्यादथ कष्टं तु शत्रौ रूपं समे दलम् ॥५२॥ पादो मित्रे तु तद्वत्तु तत्कष्टं स्यात्कलात्मकम् ॥५३॥ इष्टेधिकेऽल्पकष्टे तु मन्त्रसाधनमाचरेत् ॥ कुर्वन्ति भूतवेतालाः पिशाचाश्चान्यथा मनुम् ॥ ५४ ॥ महीसलिलयोर्मैत्रमनलानिलयोरपि ॥ सामान्यमग्निभूम्योस्तु सलिलानिलयोस्तथा ॥ ५५ ॥ शात्रवं वैपरीत्येन चक्रं स्यात्पाञ्चभौतिकम् ॥ सिद्धादिचक्रं वक्ष्येऽहं यज्ज्ञात्वा नाम कारयेत् ॥ ५६ ॥ दक्षिणोपासनामार्गे स्वमन्त्रं स्वस्य देवताम् ॥ द्वादशारे तथा चक्रे कूटषण्ढविवर्जितान् ॥ ५७ ॥ आदिक्षान्ताल्लिँखेद्वर्णान्पूर्वतो यावदीश्वरम् ॥ स्वनामाक्षरमारभ्य ज्ञेयो मन्त्राक्षरावधिः ॥ ५८ ॥ सिद्धः साध्यः सुसिद्धोऽरिर्विज्ञेयश्च पुनःपुनः ॥ सिद्धः सिध्यति कालेन साध्यः सिद्ध्यति वा न वा ॥ ५९ ॥ सुसिद्धग्रहणादेव रिपुमूलं निकृन्तति ॥ अथ वक्ष्ये महाविद्यासाधने सिद्धिमातृकाम् ॥ ६० ॥ मूलक्रमेण ज्ञेयानि तत्र कोष्ठानि षोडश॥

क्रमादेतेषु कोष्ठेषु मातृकार्णान्सुविन्यसेत् ॥ ६१ ॥ कुत्रीष्वङ्कमहीन्द्वब्धिसू-
र्य्यदिक्षण्नृपा वृषाः ॥ पञ्चाङ्गतिथिविश्वे च कोष्ठास्तत्र प्रकीर्तिताः ॥ ६२ ॥
आदौ ज्ञेयाश्चतुष्केषु सिद्धाद्या विदिशासु च ॥ तत्तत्स्थानात्तकोष्ठान्तु पूर्वा-
ङ्गुल्या गुरूक्तितः ॥ ६३ ॥ सिद्धः सिद्धो जपात्सिद्ध्येत्सिद्धसाध्यो द्विसङ्गु-
णात् ॥ सिद्धः सुसिद्धसम्प्राप्तः सिद्धारिर्हन्ति गोत्रजान् ॥ ६४ ॥ साध्यसि-
द्धोऽतिसंक्लेशात्साध्यसाध्योऽतिदुःखकृत् ॥ साध्यः सुसिद्धो भजनात्साध्यारिः
स्वाश्रयं हरेत् ॥ ६५ ॥ सुसिद्धसिद्धोऽर्धजपाद्बहुरूपाच्च तत्परः ॥ अतिद्रुतं
द्विः सुसिद्धः सुसिद्धारिः कुलापहः ॥ ६६ ॥ आरिसिद्धस्सुतं हन्यादरिसा-
ध्यस्तु कन्यकाम् । आरिः सुसिद्धः पत्नीघ्नोऽथार्य्यरिः साधकापहः ॥ ६७ ॥
अत्र प्रसिद्धं नाम स्यात्प्रयुक्तो येन जागृयात् ॥ यस्तु बीजात्मको मन्त्रस्तत्र
षड्कुलमातृकाः ॥ ६८ ॥ विज्ञेयास्तत्र पद्मं तु रचयेत्षड्कुलं शुभम् ॥ तत्र
न्यसेन्मातृकार्णान्कूटषण्ढविवर्ज्जितान् ॥ ६९ ॥ स्वनामाद्यक्षरं यत्र तदारभ्य
विचारयेत् ॥ सम्पद्दारिद्र्यधैर्य्याणि बन्धुविग्रहसंशयौ ॥ ७० ॥ सर्वनाशः क्रमादेव
नामाद्यर्णैश्च कोष्ठतः ॥ कथं मन्त्रस्य सिद्धिस्स्यादेतदर्थमहं ब्रुवे ॥ ७१ ॥ धन-
र्णमातृकां खेषुषट्त्रीन्द्वब्ध्यङ्गषड्कृताः ॥ वक्ष्येऽत्र तु यथा लेख्या अङ्का एकादश
स्वराः ॥ ७२ ॥ तत्तले काच्च ढाद्दाच्च लेख्या वर्णा हरोन्मिताः ॥ तदधोद्विकु
सप्ताब्धिखत्रिसप्तेषुसागराः ॥ ७३ ॥ षट्पञ्च साधकस्याङ्का मन्त्राङ्काः पूर्व-
मीरिताः ॥ स्वरव्यञ्जनभिन्नानां मन्त्रार्णानां पृथक्पृथक् ॥ ७४ ॥ अङ्क-
योगस्तथा कार्य्यः साधकस्य तु नामतः ॥ भागशेषावुभौ स्थाप्यौ यावन्नामाङ्कता
मनोः ॥ ७५ ॥ अधिका स्यात्साधकस्य देयं मन्त्रस्स साधितः ॥ तावत्स-
ङ्ख्यान्समायोगानसाध्यानपि साधयेत् ॥ ७६ ॥ हीनांश्च ग्रहयोगेन तथा
ऋक्षोपपत्तितः ॥ पुरश्चर्य्यां पुनः कुर्य्यान्मन्त्रसन्दीप्तये पुनः ॥ ७७ ॥
ऋणी तु साधको ज्ञेयः साधकाङ्को यदाधिकः ॥ यावत्स्यादधिकस्तावत्सङ्ख्या
ङ्कानि यदा चरेत् ॥ ७८ ॥ पुरश्चरणसञ्ज्ञानि तदास्य समता भवेत् ॥ पुरश्चर्य्यां
पुनः कृत्वा तदा स्यात्कार्य्यसाधकः ॥ ७९ ॥ एकस्मिन्साधिते कार्य्ये
पुनर्याति स कुण्ठताम् ॥ तावज्जपं पुनः कृत्वा चैककार्य्यक्षमो भवेत् ॥ तत्त्व-

मत्र प्रकटितं सर्वतंत्रेषु गोपितम् ॥ ८० ॥ योधयोर्विजयार्थं तु प्रसङ्गान्मल्लमातृकाम् ॥ वक्ष्यामि तस्याश्चक्रे तु रचयेदेवमेव हि ॥८१॥ पञ्चपञ्चाग्निरामाग्निरसर्तूग्रमुखानि खम् ॥ भूश्चाथ पञ्च सल्लेख्यास्तदधः षण्ढवर्जिताः ॥ ८२ ॥ एकादशस्वराश्चान्त्यहीना लेख्याश्च तत्तले ॥ कचटाद्याँल्लिखेद्वर्णान् ङञणाक्षरवर्जितान् ॥ ८३ ॥ नामाक्षराङ्कयोगस्तु द्वयोर्योगावशेषितः ॥ तुल्यतायां द्वयोर्योगः कार्य्यश्चाष्टावशेषितः ॥ ८४ ॥ स्वैर्वेदर्तुशरागाग्निभूशेषेष्वग्रतो जयी ॥ समयोरुभयोरत्र मन्त्रं यन्त्रं विना कलिः ॥ ८५॥ चौरमात्राम्प्रवक्ष्यामि विज्ञेयाधानचौरयोः ॥ षड्वेदत्रीषुसप्ताब्धिनगद्विरसखंधराः ॥ ८६ ॥ ऊर्द्ध्वाङ्काः पूर्ववच्छेषमङ्कयोगोष्टशेषितः ॥ हीनस्य हानिराधिक्ये जयो गोप्यमिदं भराः ॥ ८७ ॥ राजमात्रां प्रवक्ष्यामि भूपयोर्विजयप्रदाम् ॥ वर्गाष्टकाङ्का वह्नीषुषड्वेदाङ्केन्दुवह्नयः ॥ ८८ ॥ द्वयोश्च भाजयेद्वर्णान्सप्ततष्टेऽधिके जयः ॥ तुल्यशेषे वर्गबलाद्वर्गैक्यप्राणवीर्य्यतः ॥ ८९ ॥ मातृकां कलहां वक्ष्ये कलहे विजयप्रदाम् ॥ वह्नीन्दुवेदयुग्मेन्दुरङ्काः पञ्च स्वराँल्लिखेत् ॥ ९० ॥ कादीनां तदधो नामवर्णसंख्या द्वयोस्तु या ॥ पञ्चभक्तेऽधिके शेषे जयो हीने पराजयः ॥ ९१ ॥ कामे रणे वा स्त्रीपुंसोर्जयदां मातृकां शृणु ॥ भूषट्पञ्चाग्निवेदाग्निद्विभूखेषु शराः कृताः ॥ ९२ ॥ त्रिद्विभूस्तदधो वर्णाँल्लिखेत्कादीन्पुरेरितान् ॥ संगृह्य नामवर्णाङ्कान्मात्राभेदक्रमोदितान् ॥ ९३ ॥ सप्ततष्टेऽधिके शेषे जयो हीने पराजयः ॥ समशेषे विवेकस्तु कुर्य्यात्प्राणाच्च वर्गतः ॥ ९४॥ सेनापतिजयार्थन्तु मात्रां शृण्वन्तु देवताः॥रसाग्निलोचनयुगा नागषड्गोऽब्धिवह्नयः॥९५॥खं भूश्च तदधो लेख्याः स्वरा अत्र पुरेरिताः॥आद्यास्तदङ्कयोगोत्र हीनेऽष्टाङ्केऽधिके जयः॥९६॥कादिहांताँल्लिखेद्वर्णान् ङञषण्ढविवर्जितान् ॥ रसाग्निवेदयुग्माङ्गषट्कृताग्नीन्दुशून्यभूः ॥९७॥ विलिख्याङ्कानधो दूतगदिनोरङ्कसम्मितिः ॥ तष्टाष्टभिश्चेदधिका गदिनो जीवितम्भवेत् ॥ ९८ ॥ साम्ये पूर्ववदित्युक्ता एताः षोडश मातृकाः ॥ विद्यादेतद् गुरुमुखान्नामकर्म्म समाचरेत् ॥ ९९ ॥ अन्नप्राशनसंस्कारः षष्ठः सर्वजनीनकः[1] ॥ स्वकल्पोक्तवि-

---

१ सर्वजनाय हितः ।

धानेन शूद्रादीनाममन्त्रकः ॥ १०० ॥ पितरस्तत्र संयुक्ता वाममार्गे तु भैरवाः ॥ अष्ट देवाश्च चक्रस्य पूजान्तेष्ववशेषितम् ॥ १०१ ॥ सतीर्थे सपलं दद्यान्मूलमन्त्रमुदीरयन् ॥ एवं कृतविधानस्य शुद्धिपत्तिर्न जायते ॥१०२॥ अथ सप्तमसंस्कारं चौडाख्यं शृणु पार्वति ॥ सर्वेषामेवमुद्दिष्टं बाल्यपातकनाशनम् ॥ १०३ ॥ बौद्धानां यवनानां च शिखात्र स्थाप्यते न च ॥ स्त्रीणामपि च कर्त्तव्यं सौभाग्यारोग्यवृद्धये ॥ १०४ ॥ वामे चडा तु कर्त्तव्या मन्त्रबीजसमाः कचाः ॥ तीर्थे क्षिप्त्वा खनेद् भूमौ विशेषो वामिनामिति ॥ ॥ १०५ ॥ अथाष्टमं तु संस्कारं मौञ्जीबन्धमहं ब्रुवे ॥ गुरोः समीपे नयनं तच्चोपनयनं स्मृतम् ॥ १०६ ॥ स्वकल्पोक्तविधानेन तत्कुर्य्याद्ब्रह्मवर्चसम् ॥ वामाचारैर्द्विजैः पूर्वं कर्तव्यं कुलदीक्षणम् ॥१०७॥ पश्चाद्दीक्षा तु सावित्र्या व्यत्यासात्पतितो भवेत् ॥ दीक्षा तु लघुदैवत्या प्राक्पश्चान्महतस्तथा ॥ ॥ १०८ ॥ बृहद्दैवतमन्त्रे तु सिद्धे क्षुद्राः स्वयं वशाः ॥ तेषां ग्रात्वा मन्त्रदीक्षा पुरश्चर्य्यां समारभेत्॥१०९॥ प्रयोगांश्चापि कुर्व्वीत न चेष्टस्य कदाचन ॥ सच्छिष्यं वा सुपुत्रं वा विनेष्टं दापयेन्न च ॥११०॥ लोभाद्भयाद्वा यो दद्यादन्यस्मै सिद्धमन्त्रकम् ॥ शिष्यस्य जायते सिद्धिर्गुरोः शापः प्रजायते ॥ ॥ १११ ॥ यस्या यस्या देवतायाः प्रसक्तिर्यत्रयत्र च ॥ तत्तन्मार्गे प्रसक्ता सा स्वविद्या राजवद्भवेत्॥११२॥तन्त्राण्यष्टोत्तरशतं मया प्रोक्तानि पार्वति ॥ येनयेन तु यत्पृष्टं तस्याधिक्यं तु वर्णितम् ॥११३॥निष्पक्षपातं वक्ष्यामि मेरुतन्त्रे यथार्थतः ॥ सर्वेभ्यो वैदिकं श्रेष्ठं ततश्च स्मार्तमुत्तमम्॥११४॥ततस्तन्त्रं तु तत्रापि संहिता अर्णवास्ततः॥यामलास्तत्संगमाच्च मन्त्रीशानी च ताण्डवम्॥ ॥ ११५ ॥ इन्द्रजालं कक्षपुटी बौद्धं जैनं च शाबरम् ॥ क्रमादपचितं ज्ञेयं यथायोग्येन मुख्यता ॥ ११६ ॥ नीचे ह्युपास्ये पातः स्यान्नीच उच्चात्पतेद्ध्रुवम् ॥ ज्ञानं दद्याच्च सर्वस्मै स्वाचारात्कर्म्म कुर्वते ॥ ११७ ॥ संस्कारं दशमं विद्यात्प्राजापत्यव्रताभिधम् ॥ स्वकल्पोक्तेन मार्गेण वैदिकस्तान्त्रिकः पुनः ॥ ११८ ॥ एतद्व्रतस्य संस्कारे गाणपत्यो मनुः स्मृतः ॥ वक्रतुण्डा-

दिका दक्षे उच्छिष्टायास्तु वामके ॥ ११९ ॥ संस्कारं दशमं सौम्यं व्रतं वैदिकमाचरेत् ॥ स्वकल्पोक्तेन मार्गेण तत्स्थाने तान्त्रिकः पुनः ॥ १२० ॥ गृह्णीयाद्भैरवं मन्त्रं बटुकाख्यस्य वामके ॥ कालभैरवभेदस्य यस्य कस्यापि दक्षिणे ॥ १२१ ॥ पुरश्चर्य्योपासकानां नाशको भैरवो यतः ॥ दरिद्रैः साधकैर्ग्राह्यः स्वर्णाकर्षणभैरवः ॥ १२२ ॥ एकादशं तु संस्कारमाग्नेयाख्यं व्रतं द्विजः ॥ कुर्य्याद्गृह्योक्तमार्गेण तस्मिन्स्थाने तु तान्त्रिकः ॥ १२३ ॥ गृह्णीयादंगदेवानां मन्त्रानादौ गुरोर्मुखात् ॥ पूजादिमन्त्रांस्तच्छिक्षां तद्द्रव्यनियमांस्तथा ॥ १२४ ॥ द्वादशं चापि संस्कारं वैश्वदेवव्रताभिधम् ॥ तस्मिन् स्थाने भवेद्दीक्षा स्वेष्टमन्त्रे तु तान्त्रिके ॥ १२५ ॥ त्रयोदशं तु संस्कारं गोदानाख्यं प्रकीर्तितम् ॥ तत्स्थाने तान्त्रिकः कुर्य्यात्सर्वपापविमोक्षणम् ॥ १२६ ॥ सत्स्थले तु समासीन आदर्शे वा घटोदकम् ॥ संस्थाप्याग्रे सत्यवाचा ततः सम्प्रार्थयेदिति ॥ १२७ ॥ पुरश्चरणकामोऽहं पापं क्षपितुमुद्यतः ॥ आपराह्णं जपं कुर्वे देवताः सन्तु साक्षिणः ॥ १२८ ॥ पृथिव्यप्तेजआकाशवायुसूर्येन्दुभानि च ॥ यावच्छरीरे पापानि तिष्ठन्ति मम देवताः ॥ १२९ ॥ तावच्च प्रतिबिम्बो मे मलिनो भातु पातकैः ॥ शान्ते पारदमध्ये च यथा सन्दृश्यतां तथा ॥ १३० ॥ शुद्धः सच्चिन्मयो भूत्वा चिन्तयन्पापपूरुषम् ॥ दक्षकुक्षिस्थितं कृष्णमङ्गुष्ठपरिमाणकम् ॥ १३१ ॥ विप्रहत्याशिरोयुक्तं कनकस्तेयबाहुकम् ॥ मदिरापानहृदयं गुरुतल्पकटीयुतम् ॥ १३२ ॥ पापसँय्योगपद्द्वन्द्वमुपपातकरोमकम् ॥ दद्रूचर्म्मधरं दुष्टमधोवक्त्रं सुदुस्सहम् ॥ १३३ ॥ एवं सञ्चिन्तयित्वाथ जपं कुर्वन्विचिन्तयेत् ॥ क्षीयमाणं पापनरं जपान्ते प्रेक्षयेत्पुनः ॥ १३४ ॥ आदर्शादि यदा स्वच्छं सर्वच्छाया प्रदृश्यते ॥ तदा तु निर्गतं पापं पुरश्चरणयोग्यता ॥ १३५ ॥ चतुर्दशस्तु संस्कारः समावर्त्तनमुच्यते ॥ तस्य स्थाने पुरश्चर्य्या कर्तव्या तान्त्रिकैर्जनैः ॥ १३६ ॥ आदौ सङ्क्षेपपूजां तु दिने कृत्वा तु कौलिकः ॥ आसायं तु जपं कुर्य्याच्चक्रपूजां तथा निशि ॥ ॥ १३७ ॥ शक्तिभिः सहितः पञ्चमकारादिसमन्वितः ॥ एवं सिद्धिमवाप्नोति नान्यथा जपकोटिभिः ॥ १३८ ॥ विवाहः पञ्चदशमः सर्वेषां संविधीयते ॥

विधवाया विवाहन्तु पिप्पलेनैव कारयेत् ॥ १३९ ॥ सर्वपापविनिर्मुक्ता सा तु विष्णुपदं व्रजेत् ॥ अब्राह्मणी च चेत्कुर्य्यादन्यमेकं तथा पतिम् ॥ १४० ॥ षोडशः पितृमेधाख्यः स्वगृह्योक्तेन वर्त्मना ॥ वैदिकस्तान्त्रिकस्तत्र देवस्थाने स्वदेवताम् ॥ १४१ ॥ स्थापयित्वाचरेच्छ्राद्धं ब्राह्मणा मृतपन्थिनः ॥ अथवा यजमानस्य मार्गस्थस्तदभावतः ॥ १४२ ॥ आमश्राद्धं प्रकुर्व्वीत वामी तु पलपैतृकम् ॥ शक्तियुक्ता द्विजाः कौलमार्गाश्चक्रार्चने मताः ॥ १४३ ॥ वर्ज्जयेत्तुलसीन्तत्र भृङ्गराजेन पूजयेत् ॥ पाकः कौलिकवस्तूनां पिण्डाश्च रुधिरोक्षिताः ॥ १४४ ॥ एतैः षोडशसंस्कारैः संस्कृतः साधकोत्तमः ॥ जीवन्मुक्तस्तदा ज्ञेयः सामर्थ्ये देवतासमः ॥ १४५ ॥ अथ षोडश वक्ष्येहं संस्कारान्मन्त्रसंस्थितान् ॥ शापैर्मन्त्रा विमुच्यन्ते यान्कृत्वा देवनिर्मितैः ॥ ॥ १४६ ॥ अथादौ सर्वमन्त्राणां जागृतिः प्रोच्यते मया ॥ गुरुणा सा प्रकर्तव्या शिष्यस्य सिद्धिहेतवे ॥ १४७ ॥ तारा[1]ग्निर्बीजं[2] विजपेद्यस्मिन्नाग्नेय-कस्स तु ॥ अन्यः सौम्यः स्वापकाल इडायामाग्निरूपिणः ॥ १४८ ॥ सौम्यस्य पिङ्गलायां स्यात्तयोरन्यत्र जागृतिः ॥ प्रबोधकाले सञ्जतो जागृतो जायते मनुः ॥ १४९ ॥ अथवा सम्पुटीकृत्य लान्तानाद्यान्साबिन्दुकान् ॥ पुनश्च सविसर्गास्तां-स्त्रिकालं केवलं जपेत् ॥ १५० ॥ एवं जतो यदीष्टश्च प्रबुद्धः शीघ्रसिद्धिदः ॥ अथ शाबरमन्त्राणां जागृतिं शृणु पार्वति ॥ १५१ ॥ कांस्यभाजनमानीय शुद्धं भस्मादिभिः कृतम् ॥ प्रजपेद्रविरात्रौ तु यामेयामे शताष्टकम् ॥ १५२ ॥ स्वादिर्या ताडयेद्यष्ट्या कांस्यपात्रं वदेदिति ॥ जागृतो भव मन्त्र त्वं भाषयाथ तुरीयके ॥ १५३ ॥ यामे दद्याद्बलिं कांस्ये मण्डजं भैरवस्य तु ॥ कुक्कुटं चान्यदेवेषु स्फोटयेन्नारिकेलकम् ॥ १५४ ॥ सुरया सुधया पूर्वदेवा देवा विमो-हिताः ॥ यदा तदा तु भगवान्प्रोवाच मधुसूदनः ॥ १५५ ॥ कः पूज्यो भवतां मध्ये कः श्रेष्ठस्तन्निगद्यताम् ॥ उन्मत्तास्तु तदा देवाः श्रेष्ठोहमिति चा-ब्रुवन् ॥ १५६ ॥ किञ्चित्स्मित्वा तु भगवान्मोहयन्नात्ममायया ॥ इत्य-वोचद्यस्य वाक्यं शापे चानुग्रहे क्षमम् ॥ १५७ ॥ स एव देवश्रेष्ठोत्र पूर्वो

१ प्रणवम् २ रम्—इदमग्निबीजम् ।

वाप्यपरोथ वा ॥ इति श्रुत्वा वचो विष्णोः शेपुश्चैव परस्परम् ॥ १५८ ॥ मन्त्ररूपाण्यतो देवि संस्कारैः शापमोक्षणम् ॥ विना तु शापमोक्षेण कः सिद्धिं प्राप्नुयाज्जनः ॥ १५९ ॥ श्रीदेव्युवाच ॥ शापः केन कथं दत्तः शप्ते जप्ते च किं फलम् ॥ निश्शापत्वं कथं तेषु सिद्धिः स्यादिति मे वद ॥ १६० ॥ ईश्वर उवाच ॥ आदिमध्यावसानेषु वायुर्यस्य व्यवस्थितः ॥ चतुराद्यश्चैकबीजो निधायैकत्र सङ्गमः ॥ १६१ ॥ केनापि च समाक्रान्तो जप्तो मन्त्रश्च येन वै ॥ कार्त्तिकेयस्य शापात्तु च्छिद्यन्तेऽस्य मनोरथाः ॥ ॥ १६२ ॥ आदौ मध्येऽवसाने वा भूबीजयुगलं भवेत् ॥ आदौ यद्वा द्विधा वह्नी त्रिधा मध्यं ततो द्विधा ॥ १६३ ॥ रुद्धौ शुक्रस्य शापेन भुक्तिमुक्तिविवर्जितौ ॥ जातौ मन्त्रौ वामदक्षमार्गयोरपि विश्रुतौ ॥ १६४ ॥ ह्रीं सौंप्रेंश्रींष्वेकतमं यत्र बीजं न दृश्यते ॥ हुङ्कारो वा स मन्त्रस्तु शक्तिहीनः कृतः सुरैः ॥ १६५ ॥ एतादृशश्च सञ्जतः सामर्थ्यं हन्ति मन्त्रिणः ॥ शक्तिहीनस्य वामस्य मरणन्नात्र संशयः ॥ १६६ ॥ नादौ ह्लीं न च मध्ये क्लीं क्रोऽन्ते वा न प्रदृश्यते ॥ असौ पराङ्मुखो मन्त्रो जातः सूर्यस्य शापतः ॥ ॥ १६७ ॥ पराङ्मुखं भजन्मन्त्रं देवता स्यात्पराङ्मुखी ॥ दैवात्कार्य्येपि संसिद्धिर्लोकः स्याच्च पराङ्मुखः ॥ १६८ ॥ आदावन्ते तथा मध्ये हं वा सं वा न दृश्यते ॥ बधिरास्ते कृता मन्त्रा देवाचार्येण शापिताः ॥ १६९ ॥ जप्ते तु बधिरे मन्त्रे विस्मृतिस्तस्य जायते ॥ जायते बधिरो नूनं महाकालेन भाषितम् ॥ १७० ॥ सूर्य्यबीजं हकारः स्याच्चन्द्रबीजं तु सः स्मृतः ॥ रेफोऽग्निबीजमुद्दिष्टमेतन्नेत्रत्रयं मम ॥ १७१ ॥ पञ्चाक्षरे यत्र मन्त्रे यत्रैकोपि च नास्ति चेत् ॥ मम शापान्नेत्रहीनो दुःखशोकामयप्रदः ॥ १७२॥ नादौ मध्ये न चान्ते वा ह्लौं वा हंस वाथ ह्रौं ॥ ऍं वा श्रूं वाथवा हूं वा नमो वा ह्रीं मनुः स तु ॥ १७३ ॥ शापेन कीलितो मन्त्रो देवराजेन पार्वति ॥ जप्तस्तु कीलितो मन्त्रो न सिद्धिमधिगच्छति ॥ १७४ ॥ मध्य एको रकारो वा फडान्ते लद्वयं यदि ॥ फड्द्वयं वा लत्रयं वा न

---

१ यँ इदं वायुबीजम् । २ लँइदं भूमिबीजम् ।

चेत्संस्तम्भितो मनुः ॥ १७५ ॥ शापेन नो भैरवस्य सिद्धिर्भवति शोभना ॥ कदापि नैव दुःखं च प्रायशो बहुलं भवेत् ॥ १७६ ॥ आदौ तु यस्य मन्त्रस्य क्रमात्सप्ताक्षराणि चेत् ॥ रेफेण वा यकारेण सँय्युक्तानि मनुस्स तु ॥ १७७ ॥ वाय्वग्निशापसंदग्धः साधकं परितापयेत् ॥ तस्मात्संस्कारयेद्देवि सिद्धये साधकोत्तमः ॥ १७८ ॥ द्वाभ्यां त्रिभिरथो षड्भिरष्टभिर्वा प्रदृश्यते ॥ यदक्षरैरन्तरितः फट्कारः स निगद्यते ॥ १७९ ॥ नारसिंहस्य शापेन त्रस्तः सन्त्रासयेत्सदा ॥ स्वमादौ साधको नैव सिद्धः सन्दृश्यते क्वचित् ॥ १८० ॥ ॐ वा हं वा सकारो वा नाभौ भीतो मनुः स तु ॥ ब्रह्मशापाद्धीनसिद्धिर्भवेदत्यन्तकष्टदः ॥ १८१ ॥ आदिमध्यावसानेषु मिलित्वा मश्चतुष्टयम् ॥ स मन्त्रो मलिनो मायाशापान्मालिन्यकारकः ॥ १८२ ॥ हुंचादौ मन्त्रमध्ये वा वान्ते फड्युगलम्भवेत् ॥ तिरस्कृतो रुद्रशापात्साध्यं कुर्य्यात्तिरस्कृतम् ॥ १८३ ॥ आदौ तारद्वयं चान्ते वषड्वात्र वरानने ॥ कुटुम्बकलहं कुर्य्याद्बालाशापेन भेदितः ॥ १८४ ॥ हकारेण सकारेण रहितस्त्र्यक्षरस्तु यः ॥ सुषुप्तः सिंहशापेन प्रोक्तोभीष्टफलापहः॥१८५॥ अष्टादशाक्षरो योत्र पञ्चफट्कारपूर्वकः ॥ चामुण्डाशापतो जातो मदोन्मत्तो न शोभनः ॥ १८६ ॥ मध्ये चेत्पञ्च फट्काराः कालिकाशापतः स तु ॥ मूर्च्छितो मूर्च्छितं कुर्य्याद्वामिनं तु विशेषतः ॥ १८७ ॥ एवं मन्त्रे च फट्काराः पञ्चान्ते स तु रम्भया ॥ हतवीर्य्यस्तु शापेन कृतः क्षीणत्वकारकः ॥ ॥ १८८ ॥ चत्वारो यत्र फट्कारा आदिमध्यावसानिकाः॥ अष्टादशाक्षरो हीनो हानिर्भैरवशापतः ॥१८९॥ एकोनविंशद्वर्णश्चेत्क्रींकोमोङ्कारसँय्युतः ॥ प्रध्वस्तः कामशापेन ध्वंसयेत्कामकारणात् ॥ १९० ॥ सप्तवर्णो मनुर्बालः कुमारोष्टाक्षरः स्मृतः ॥ षोडशार्णस्तु तरुणः प्रौढो व्योमाब्धिवर्णकः ॥ १९१ ॥ त्रिंशत्कलाः शतं वेदकाष्ठावर्णास्तु यत्र च ॥ सक्तद्धि एते कालेन शप्ता दुःखानि कुर्वते ॥ १९२ ॥ नवार्ण ओङ्कारयुतश्चामुण्डाशापतो मनुः ॥ निर्बीज इति संशप्तो नित्यं नैराश्यकारकः ॥ ॥ १९३ ॥ निस्त्रिंशः साधकं छिन्द्यान्निस्त्रिंशेन न संशयः ॥ अन्ते नमो



वा स्वाहा वा नास्ति वा यस्य मध्यमः ॥१९४॥ वषड्वौषट् हुम्फड्वा प्रोक्तो नैवास्त्यसौ मनुः ॥ सेवां कुर्वँल्लभेद्देशनाशं वर्षत्रयादितः ॥ १९५ ॥ आदिमध्यावसानेषु फट्कारा: सन्ति यस्य तु ॥ कौमार्य्यास्तु स शापेन सिद्धिहीनो न सिद्धिकृत् ॥ १९६ ॥ दशाक्षरस्तु यो मन्त्रः स गणेशस्य शापतः ॥ मन्दो जपस्तु मूर्खत्वं कुर्य्याज्जन्मनिजन्मनि ॥ १९७ ॥ आदौ व्यञ्जनसंय्योग एक एव स्वरो भवेत् ॥ तत्कूटं कूटतो हानिर्मातंग्याः शापतः स्मृता ॥ १९८ ॥ द्विवर्णः सत्त्वहीनः स्यादाश्विनेयस्य शापतः ॥ नाशयेत्साधकबलं राज्ञः सेनां विनाशयेत् ॥ १९९ ॥ चतुर्वर्णः केकरस्तु जातः सर्प्पारिशापतः ॥ जपित्वा केकरं मन्त्रं चक्षुषा नैव पश्यति ॥ ॥ २०० ॥ षडक्षरा बीजहीना जाता रावणशापतः ॥ तज्जपाद्वंशवृद्धिर्न चान्यथा स्त्रीसुखं नहि ॥ २०१ ॥ सार्धत्रिसप्तसूर्याणां धूमावत्याः स शापतः ॥ तज्जपे व्याकुलं चित्तं जायते साधकस्य तु ॥ २०२ ॥ विंशत्तथैकविंशच्च त्रिंशद्वर्णस्तु तारया ॥ शप्त आलिङ्गितेनायं जपात्सत्वरतो मृतिः ॥ २०३ ॥ द्वाविंशत्यक्षरो मन्त्रः सरस्वत्यास्तु शापतः ॥ मोहितः साधकं कुर्य्यात्पानादिव्यसनाकुलम् ॥२०४॥ मन्त्रो वराननेयस्तु चतुर्विंशतिवर्णकः ॥ क्षुधार्त्तो राजमातङ्ग्याः शापाद्दारिद्र्यकारकः ॥२०५॥ त्रयोविंशाक्षरो रुद्रवर्णः कौलिकशापतः ॥ मन्त्रो हृतस्तु तेनैव मन्दता जायते नृणाम् ॥ २०६ ॥ षड्विंशदेकोनत्रिंशात्रिंशत्षाड्विंशदक्षरः ॥ पूष्णः शापादंगहीनः कामनापूरको नहि ॥ २०७ ॥ अष्टाविंशदेकत्रिंशद्वर्णो नन्दीशशापतः ॥ अतिक्रूरः साध्यनाशं कृत्वा नश्येच्च साधकः ॥ २०८ ॥ अष्टत्रिंशाक्षरो मन्त्रो मातृकाणां च शापतः ॥ अतिक्रुद्धस्तज्जपेन स्वकृते स्वस्य संक्षयः ॥ २०९ ॥ चत्वारिंशत्समारभ्य त्रिषष्टियावदक्षरम् ॥ सव्रीडामातृकाशापात्सव्रीडास्तस्य साधकाः ॥ २१० ॥ पञ्चषष्ट्यक्षरा येस्युर्मन्त्रास्ते शान्तमानसाः ॥ कामशापेन तज्जापादुद्योगस्य फलं नहि ॥ धात्रीधृतिद्विधृत्यङ्काङ्कांकयुग्मद्विगोकराः॥शतत्रयं यत्र वर्णाः शापिताश्छिन्नमस्तया ॥ २११ ॥ यूयं भवन्तु निःस्नेहाः साधकानां भयावहाः ॥ निष्कामैर्या

जिभिर्जप्ता संसारस्नेहनाशनाः ॥ २१२ ॥ चतुश्शतान्यथारभ्य यावद्वर्ण-सहस्रकम् ॥ अतिवृद्धा यज्ञशापात्पौष्टिकादिषु वर्जिताः ॥ २१३ ॥ सहस्रार्णाधिका मन्त्रा दण्डनेतुस्तु शापतः ॥ दण्डकाख्याः पीडिताश्च तज्जपात्कष्टमाप्नुयात् ॥ २१४ ॥ द्विसहस्राधिका मन्त्रा भार्गवस्य तु शापतः ॥ खण्डीकृतास्सतधा ते सिद्धिखण्डकराः स्मृताः ॥ २१५ ॥ अन्यच्छृण्वन्तु भो देवा मुनीनां जपतां यदा ॥ सिद्धिर्न जाता तु तदा दत्तः शापः सुदारुणः ॥२१६॥ आश्वासनं देवतानां जातं सिद्धेरकारणात् ॥ उपदेशे गुरुः कुर्य्यात्तस्मात्तन्मन्त्रशोधनम् ॥ २१७ ॥ तत्प्रकारं प्रवक्ष्यामि शृण्वन्तु सकलाः सुराः ॥ गुरुः सिद्धासनस्थश्च[1] गुदमेढ्रान्तरं दृढम् ॥ २१८ ॥ वामेन पार्ष्णिनापीडय तस्योपरि तु विन्यसेत् ॥ पादं तु दक्षिणं गुल्फग्रन्थ्योरन्योन्यमर्दनम् ॥ २१९ ॥ यथा स्यात्तत्प्रकर्त्तव्यं ततो दक्षिणपार्ष्णिना ॥ लिंगमूलं विनिष्पीडय स्थिरकाय उपाविशेत् ॥ २२० ॥ गुदमाकुञ्च्य पवनमपानाख्यं तदा गुरुः ॥ उत्थापयेत्ततः प्राणान्वायुं सम्यङ्निरोधयन् ॥ २२१ ॥ अपानप्राणयोः कुर्य्यात्संहतिं चैकदृङ्मनाः ॥ मूलाधारे चित्स्वरूपे कुण्डल्यां परमात्मनि ॥२२२॥ जातदोषं स्वस्य मन्त्रं चिन्तयेत्तत्र सद्गुरुः ॥ तस्य मन्त्रस्याक्षराणि क्रमादेकैकशस्ततः ॥ २२३ ॥ सुषुम्णायास्तु मार्गेण मूलाधारे प्रवेशयेत् ॥ स्वाधिष्ठाने ततश्चक्रे मणिपूरे त्वनाहते ॥ २२४ ॥ विशुद्ध आज्ञाचक्रे च भित्त्वाभित्त्वा प्रवेशयेत्॥ एवं नीत्वा ब्रह्मरन्ध्रं सोमस्य मण्डलामृतात्॥ ॥ २२५ ॥ संसिक्तान्मन्त्रवर्णांस्तु सुधीः सम्यग्विभावयेत् ॥ ततस्तन्मन्त्रमृष्यादिन्यासपूर्वं जपेत्ततः ॥ २२६ ॥ अष्टोत्तरसहस्रं तु तेन शुद्धो भवेन्मनुः ॥ उक्तशापाद्विनिर्मुक्तं पश्चादुपदिशेच्च तम् ॥ २२७ ॥ आशीर्वादफलं स्तोकं पूर्वपापादिजं फलम् ॥ वाचिकानां तु शापानां नाशायर्थमथोच्यते ॥२२८॥ श्रीपर्ण्यां वा चन्दनस्य पीठे चूतादिकस्य वा ॥ कस्तूरीकुंकुमाद्यैश्च विलि-

---

१ तल्लक्षणं शिवसंहितायाम् । योनिं सम्पीडय यत्नेन पादमूलेन साधकः ॥ मेढ्रोपरि पादमूलं विन्यसेद्योगवित्सदा ॥ ऊर्ध्वं निरीक्ष्य भ्रूमध्यं निश्चलः सँय्यतेन्द्रियः ॥ विशेषोऽवक्रकायश्च रहस्युद्वेगवर्जितः ॥ एतत्सिद्धासनं ज्ञेयं सिद्धानां सिद्धिदायकम् ॥

खेत्पाश्वभौतिकम् ॥ २२९ ॥ चक्रमावाहयेत्तत्र मातृकाख्यां सरस्वतीम् ॥ यथोक्तविधिना पूजां कृत्वा चाष्टोत्तरं शतम् ॥ २३० ॥ जपित्वा मातृकां तस्या मध्यात्स्वाभीष्टमन्त्रकम् ॥ स्वरव्यञ्जनबिन्दूंश्च सर्गयोग्याक्षराणि च ॥ २३१ ॥ पृथक्पृथगथोद्धृत्य चैकीकृत्य गुरुक्तितः ॥ गृहीतं जनयेन्मन्त्रं प्रोक्तं सञ्जननं त्विदम् ॥२३२॥ आद्यन्ते प्रणवं कृत्वा प्रणवान्तारितं जपेत् ॥ अष्टोत्तरशतं मन्त्रवर्णानेतत्तु जीवनम् ॥ २३३ ॥ रोचनाकुङ्कुमाभ्यां तु भूर्ज्जपत्रे लिखेन्मनुम् ॥ प्रत्यक्षरं शतावृत्या ताडयेच्चन्दनाम्भसा ॥ २३४ ॥ समुच्चरन्वायुबीजमेतत्ताडनमुच्यते ॥ कुण्ठिताः शाबरा मन्त्रास्ताडिताः सिद्धिकारकाः ॥ २३५ ॥ पूर्वोक्तपीठे सँल्लिख्य तन्मन्त्राक्षरसङ्ख्यया ॥ आदाय करवीरस्य पुष्पाण्यथ समुच्चरेत् ॥ २३६ ॥ प्रत्यक्षरं च तैः पुष्पैः शतवारं हनेदिति ॥ उच्चरन्वह्निबीजं च बोधनं त्वेतदुच्यते ॥ २३७ ॥ प्राग्वत्पीठे च तैर्द्रव्यैः पद्ममष्टदलं लिखेत् ॥ तत्कर्णिकायां मालत्या लिखेत्कलिकयैकया ॥ २३८ ॥ एकैकार्णन्तु मन्त्रस्य तन्मन्त्राक्षरसङ्ख्यया ॥ बोधिद्रुपल्लवांश्चैव गृहीत्वा मन्त्रमुच्चरेत् ॥ २३९ ॥ अभिषिञ्चाम्यमुं मन्त्रं नम इत्यभिषेचयेत् ॥ नानासुगन्धिनोपेतपल्लवैर्यावदक्षरम् ॥ २४० ॥ एकमष्टोत्तरशत माभिषेकस्त्वयं मतः ॥ अभिषेको मन्त्रशुद्धिं कुर्यान्नृणां यथा जलम् ॥२४१॥ ज्योतिर्मन्त्रश्चिन्तनीयो मूलाधारोऽग्निमण्डले ॥ संस्कर्तव्यं मनोस्तस्य दाग्ध्यमेवं विभावयेत् ॥२४२॥ आननाख्यः साहजिक आगन्तुः कार्म्मणः स्मृतः ॥ योगाख्यो मायिकः प्रोक्तस्तन्मन्त्रे तु मलत्रयम् ॥ २४३ ॥ ज्योतिर्मन्त्रेण निर्दग्धमेकमेकं विचिन्तयेत् ॥ एवं तु विमलो जातः स्वमन्त्र इति चिन्तयेत् ॥ २४४ ॥ ज्योतिर्मन्त्रस्तु वेदादिर्हौमिति द्व्यक्षरो मतः ॥ विमलीकरणं त्वेतत्प्रयोगं चापि कारयेत् ॥ २४५ ॥ प्राग्वत्पीठे कुंकुमादिद्रव्यैर्मन्त्रं विलेखयेत् ॥ ताम्रादिपात्रे कर्पूरवासितेन जलेन च ॥ २४६ ॥ शुद्धेनापूर्य्य विलिखेन्मन्त्रेणाष्टोत्तरं शतम् ॥ अभिमन्त्र्य जलं तेन मन्त्रेण कुशबिन्दुभिः ॥ २४७ ॥ प्रत्यक्षरं प्रोक्षयेत्त्रिरेतदाप्यायनं स्मृतम् ॥ पुरश्चर्य्याक्लेशि-

१ ॐकारो वेदादिरुच्यते ।

तानां समावर्त्तनवत्त्विदम् ॥ २४८ ॥ कस्तूर्य्याद्यैस्ताम्रपात्रे मध्ये मन्त्रं विलेखयेत् ॥ पात्रान्तरे च कर्पूरगुटिकावासितं जलम् ॥ २४९ ॥ गृहीत्वा चार्घ्यपात्रेण पठन्मन्त्रमिमं मनुम् ॥ तर्प्पयामि नमोन्तेन तर्प्पयेदिति तर्प्पणम् ॥ २५० ॥ ॐह्रींश्रींपूर्वकं मन्त्रं जपेदष्टोत्तरं शतम् ॥ जपेदेतद्दीपनं स्यात्सर्वमन्त्रेष्वपीष्यते ॥ २५१ ॥ जप्यमानस्य मन्त्रस्य गोपनं स्वप्रकाशनम् ॥ संस्कारा दश सम्प्रोक्ताः सर्वतन्त्रेषु गोपिताः ॥ २५२ ॥ एवमेकादश प्रोक्ताः संस्कारा दश पञ्च च ॥ प्रतिमन्त्रं वक्ष्यमाणा जपो होमश्च तर्प्पणम् ॥ २५३ ॥ मार्ज्जनं भोजनं चापि द्विजानामिति षोडश ॥ प्रोक्ता मन्त्रस्य संस्काराः किमन्यच्छ्रोतुमिच्छसि ॥ २५४ ॥

इति श्रीमहामायामहाकालानुमते मेरुतन्त्रे शिवप्रणीते
संस्कारप्रकाशो द्वितीयः ॥ २ ॥

---

श्रीदेव्युवाच ॥ वाममार्गे कथं दीक्षा दक्षिणे च कथं भवेत् ॥ किं तत्रावश्यकं कर्म्म चेति मे निर्णयं वद ॥ १ ॥ ईश्वर उवाच ॥ शृणु देवि प्रवक्ष्यामि सर्वतन्त्रेषु गोपितम् ॥ दीक्षाविधिं पञ्चविधं तत्राज्ञामुत्तमोत्तमम् ॥ २ ॥ उत्तमं महदाद्यानां सामान्यानां तु मध्यमम् ॥ ब्राह्मणानामल्पमुक्तं यतीनामपि चाल्पकम् ॥ ३ ॥ तस्मादादौ प्रवक्ष्यामि तुभ्यं यच्चोत्तमोत्तमम् ॥ यस्मिञ्ज्ञाते चोत्तमादिभेदानां विषयो भवेत् ॥ ४ ॥ तत्रादौ मण्डपं कुर्य्यादुत्तमोत्तमकर्म्मणि ॥ स्थलादर्काङ्गुलोच्छ्रायं मण्डपस्थलमीरितम् ॥ ५ ॥ भूमिस्तु खननाच्छोध्या स्वेष्टकुण्डादितस्त्वधः ॥ अस्थिकीटतुषाङ्गारमलहीनं शुभावहम् ॥ ६ ॥ अन्यथा तां मृदं त्यक्त्वा पूरयेच्छुभया मृदा ॥ ग्रामाद्बहिःस्थया तत्र विप्राद्यैश्च स्ववर्णया ॥ ७ ॥ तत्र तां सुसमां कृत्वा विस्तीर्णे भाजने जलम् ॥ अष्टाशेन सुरेख्या तत्पूरयित्वा प्रचालयेत् ॥ ८ ॥ तत्पात्रं यत्र लेख्यायां जलमूर्द्ध्वं समागतम् ॥ तत्पूरयेद्वा यत्रोनं निम्नयेत्तत्स्थलं बुधः ॥ ९ ॥ एवं समीकृतायां तु भूमौ दिक्साधनं चरेत् ॥ सूत्रकर्कटकीलानि गृहीत्वा वै निशान्तरे ॥ १० ॥ आद्यन्तरन्ध्रसम्युक्ता नलिका ध्रुववेधिका ॥ याम्योत्तराशा तन्मध्ये केन्द्राद्वृत्तं समालिखेत् ॥ ११ ॥ लेखां ततो वृत्तमध्ये

तेन कर्कटकेन तु ।। धनुष्कुर्यात्ततश्चापं धनुष्कुर्य्यात्ततः पुनः ।। १२ ।। एवं चापानि षट् तत्र पद्मं भवति षड्दलम् ॥ सौम्ये याम्ये त्रयं कृत्वा दलानां मध्यदेशतः ॥ १३ ॥ दीर्घा रेखा कृता सा तु भवेत्पूर्वापरा त्रिधा ॥ याम्यपश्चिमयोस्सौम्यपूर्वयोरुपारिस्थयोः ॥१४॥ चापयोरर्द्धगं सूत्रमीशानी राक्षसी भवेत् ॥ अन्ययोश्चापयोरेवमाग्नेयी वायवी भवेत् ॥ १५ ॥ विदिक्संस्थानि सूत्राणि समान्येव हि वृत्ततः ॥ यथेष्टं बहिरानीय निखनेत्तत्र कीलकान् ॥ १६ ॥ बद्धं चतुर्णां कीलानां मस्तके दृढसूत्रकम् ॥ समकर्णं दिगन्तं तच्छुद्धं स्याच्चतुरस्रकम् ॥ १७ ॥ गणेशं पूजयित्वादौ पुण्याहं वाचयेत्सुधीः ॥ ततः पञ्चाननादैश्च मण्डपं रचयेच्छुभम् ॥ १८ ॥ मण्डपं कुलदीक्षायां कुर्य्याद्विंशतिहस्तकम् ॥ मद्यमांसपुरन्ध्रीणां समावेशो यथा भवेत् ॥ १९ ॥ मण्डपोऽष्टादशकरः सिद्धान्ते वाममार्गके ॥ अल्पत्वात्तत्र कुण्डानामधिकेपि सपञ्चके ॥ २० ॥ वैदिके बहुसामग्र्यां नवकुण्डे तु षोडश ॥ कुण्डाल्पतायां सामग्र्यामल्पायां वेदहस्तकः ॥ २१ ॥ दक्षिणे बहुसामग्र्यां सूर्य्यहस्तस्तु मण्डपः ॥ अल्पायां दशहस्तः स्यान्नवहस्तः सदा विशाम् ॥ २२ ॥ शूद्राणां सप्तहस्तस्स्यात्सङ्कराणां च पञ्च च ॥ प्रोक्तं मानं मण्डपानां सर्वतन्त्रेषु गोपितम् ॥ ॥२३॥ प्रोक्ता नानाविधा हस्तास्तन्निर्णयमथो शृणु ॥ यस्मिन्देशे च काले च समुत्पन्ना यथा यवाः ॥२४॥ तेषामष्टोदराणां स्यादङ्गुलं तद्द्विजन्मनाम्॥ सप्तोदरैस्तु शूद्राणां सङ्करादौ तथा रसैः॥ २५॥ अवैदिकस्य विप्रादेरेतत्सङ्ख्यार्द्धशालिभिः ॥ यत्र कर्ता स्वयं तत्र मानमेतदतोन्यथा॥ २६॥ आचार्य्यदक्षिणकरे मध्यमाङ्गुलिमध्यगम् ॥ पर्वणोरन्तरन्दीर्घमात्राङ्गुलमुदाहृतम् ॥ २७ ॥ उच्छ्रायः प्रतिमायाश्च प्रासादादेश्च निर्मितः ॥ वेदिकापीठशिबिकारथाद्येतत्प्रमाणतः ॥२८॥ विनाङ्गुष्ठेन शेषाभिर्मुष्टिरङ्गुलिभिः कृतः ॥ चतुर्द्धा विभजेदेको भागो मुष्ट्यङ्गुलं तु तत् ॥ २९ ॥ होमाङ्गानि स्रुवादीनि कुण्डस्थण्डिलवेदिकाः ॥ यज्ञोपवीतमुञ्जादि कुर्य्यान्मुष्ट्यङ्गुलेन तु ॥ ३० ॥ यं कश्चित्पौरुषायामं विभज्य दशधा पुनः ॥ एकं द्वादशभागन्तु कृत्वा तेष्वे-

कमङ्गुलम् ॥ ३१ ॥ देहलब्धाङ्गुलं नाम जानीयात्तस्य तत्पुनः ॥ एभि-
श्चतुर्विंशतिभिर्हस्तः स्यादङ्गुलैः पुनः ॥३२॥ अनेन प्रतिमाङ्गानां मान-
मुन्मानमेव च ॥ नराणां चापि नारीणां कुर्य्याद्गोप्यं प्रकाशितम् ॥ ३३ ॥
चतुर्दशकरं कोटिहोमे सम्पत्तिसंयुते ॥ अन्यथा द्वादशकरं लक्षहोमेषु
दिक्करम् ॥ ३४ ॥ मण्डपं नवधा कृत्वा मध्ये भागेऽस्य वेदिका ॥
स्तम्भास्तु वेदिकाकोणे मण्डपार्धोच्छ्रिता बहिः ॥ ३५ ॥ पञ्चमांशं न्यसेद्
भूमौ पुष्टताऽऽशांशसूत्रतः ॥ मस्तके कलशाकारं तद्दशांशेन कारयेत् ॥
॥ ३६ ॥ स्वायामोच्चा भवेद्वेदी नवकोष्ठोत्थसन्धिषु ॥ मण्डपस्य तृतीयांशदी-
र्घान्स्तम्भान्सुविन्यसेत् ॥ ३७ ॥ द्वादशैवं तु पञ्चांशभूमौ कूटं दशांशतः ॥
मध्यस्तम्भस्थितं कूटं मृदङ्गाभं प्रकल्पयेत् ॥ ३८ ॥ बाह्यस्तम्भार्धतो देया
वलयो द्वादशैव हि ॥ दक्षदीक्षाविधौ पद्मनिभं कूटं तु कारयेत् ॥ ३९ ॥
त्रिधारं वामदीक्षायां शङ्खाभं वैष्णवे मुखे ॥ चतुरस्रा चतुष्कोणा वेदी सर्व-
फलप्रदा ॥ ४० ॥ तथाङ्गादिप्रतिष्ठायां पद्मिनी पद्मसन्निभा ॥ राज्ञां
स्यात्सर्वतोभद्रा चतुर्भद्राभिषेचने ॥ ४१ ॥ विवाहे श्रीधरा वेदी विंशत्य-
स्रसमन्विता ॥ वाममार्गेण दीक्षायां गुप्ता त्र्यस्रा तु वेदिका ॥ ४२ ॥
स्तम्भानामुपरि स्थाप्यान्यव्रणानि सर्जूंषि च ॥ एकजातीनि पत्राणि बद्ध्वा
स्तम्भगले न्यसेत् ॥ ४३ ॥ नारिकेलदलैर्वंशैश्छादयेत्तत्समन्ततः ॥
झञ्झामारुतवृष्ट्यादिभयं न स्याद्यथा तथा ॥ ४४ ॥ पूर्वोक्तसंसाधितदिक्षु
कुर्य्याद्द्वाराणि चत्वारि तु मण्डपस्य ॥ पञ्चांशमाना खलु देहली स्याद्द्वि-
धोच्छ्रिते तत्र कपाटशाखे ॥ ४५ ॥ वाममार्गे द्वारमिदं दक्षिणे श्रेष्ठमण्डपे ॥
कुर्य्याद्देहलिकां रम्यां साष्टाङ्गुलकरद्वयाम् ॥ ४६ ॥ मध्यमे मण्डपे कुर्य्या-
त्सार्द्धाङ्गुलकरद्वयम् ॥ ४७ ॥ हीने करद्वयं तस्य चोच्चता द्विगुणा मता ॥
पूर्वद्वाराद्बहिर्हस्तमात्रं त्यक्त्वा तु वेश्मतः ॥ ४८ ॥ श्रेष्ठे मध्ये कनिष्ठे तु सप्त-
षट्पञ्चहस्तकम् ॥ उच्छ्रितं फलकं कुर्य्याद्विस्तृतं तद्गुणाङ्गुलम् ॥ ४९ ॥
तथा पञ्चाङ्गुलं स्थूलं विषमं चतुरस्रकम् ॥ वितस्त्या चोन्नतशिखं द्वारस्यो-
भयपार्श्वयोः ॥ ५० ॥ स्थापयेत्फलकौ द्वौ तु श्रेष्ठे मध्ये कनिष्ठिके ॥

मण्डपे तौ दीर्घतायां क्रमात्सार्द्धकरद्वयम् ।। ५१ ।। सपादद्वितयं युग्महस्तं पश्चाङ्कं भुवि ॥ निखनेदग्निमीडेति गायत्र्या पार्श्वयोर्द्वयोः ॥ ५२ ॥ तत्स-जातीयकाष्ठेन तावद्विस्तारगर्भकम् ।। चतुरस्रं तु विषमं द्वयोरुपरि कीलयेत् ५३ ॥ दर्भमालाञ्च बध्नीयात्पूर्वद्वारे विधिस्त्वयम् ॥ एवं तु दक्षिणे द्वारे तद्द्वारं प्लक्षकाष्ठ-जम् ॥ ५४ ॥ इषेत्त्वेति न्यसेन्मालां बन्धयेत्पूर्ववत्ततः ॥ औदुम्बरमयं कु-र्यात्पश्चिमद्वारतस्त्विदम् ॥ ५५ ॥ अग्न आयाहि मन्त्रेण प्लक्षजं वैदिके मखे ।। प्राग्वदेवं प्रकुर्वीत वटवृक्षमयं तथा ।। ५६ ॥ शन्नो देवीति मन्त्रेण सौम्यादिग्द्वारतो न्यसेत् ।। तेषामुपरि तिर्य्यक्स्थकाष्ठानां मध्यतो बिलम् ॥ ५७ ॥ कृत्वा तोरणजातीयकाष्ठेन रचयेच्छुभम् ॥ श्रेष्ठमध्यजघन्येषु शैवयागे त्रिशूलकम् ॥ ५८ ॥ विश्वेशाङ्गाङ्गुलं दीर्घं तच्चतुर्थांशविस्तृतम् ॥ वैष्णवे द्वादशांशेन शङ्खचक्रगदाम्बुजम् ।। ५९ ॥ प्रागादिक्रमयोगेन न्यसेत्सौरोपि वैष्णवः ।। ऋजु वै मध्यमं शृङ्गं किञ्चिद्वक्रन्तु पार्श्वयोः ॥ ६० ॥ एवं शूलो गणपतिः शिवायाः शिववन्मताः ॥ ततस्तु मण्डप-स्याग्रे भूम्यूर्द्ध्वं दशहस्तकः ॥६१॥ भूमौ करद्वये वंशः स्वच्छवस्त्रावगुण्ठितः ॥ विस्तृतश्चैकहस्तेन दीर्घः पञ्चकरैर्ध्वजः ॥६२॥ मन्त्रदेवं लिखेत्तत्र सायुधञ्च सवाहनम् ॥ घण्टाचामरसंयुक्तं देवतावर्णवर्णकम् ॥६३॥ स्थापयित्वा ध्वजं पश्चाद्दशदिक्षु प्रकल्पयेत् ॥ दिगीशानां पताकाश्च ध्वजस्यार्धप्रमाणतः ॥६४॥ तत्र वेदोक्तमन्त्रेण तत्तद्वर्णाश्च तद्दिशि ॥ त्रातारमिंद्रमिति च पीतवर्णा हरेर्दिशि ॥६५॥ आग्नेय्यां पिङ्गला त्वन्नोअग्नेर्वरुणमन्त्रतः ॥ सुगन्नः पन्थामनुना कृष्णवर्णा यमे स्मृता ॥६६॥ असुन्वन्तेतिमनुना नैर्ऋत्यां धूम्रवर्णिका ॥ तत्त्वायामि ब्रह्मणेति वारुण्यां सितवर्णिका ॥६७॥ आनोनियुद्भिरिति च वायव्यां हरिता भवेत् ॥ वयं सोमव्रतइति सौम्यायां चन्द्रवर्णिका ॥ ६८ ॥ तमी-शानमितीशान्यामतिश्वेता पताकिका ॥ ईशानपूर्वयोर्मध्ये शेषं रक्तपता-किनम् ॥ ६९ ॥ तोयनैर्ऋत्ययोर्मध्ये विधिं रक्तपताकिनम् ॥ वाममार्गे वेदमन्त्रो वज्रपातसमस्स्मृतः ॥ ७० ॥ ब्राह्मणानां वाममार्गो नरकायैव जायते ॥ मन्त्राभावे नाममन्त्रान्प्रणवाद्यान्हृदन्तकान् ॥ ७१ ॥

पठेद्दक्षिणमार्गे तु वामे प्रणववर्ज्जितान् ॥ मण्डपोपरि बध्नीयादतिश्वेतं वितानकम् ॥ ७२ ॥ अलंकुर्यात्पुष्पमालादिभिरेवं तु वेष्टयेत् ॥ आम्राश्वत्थदलोत्पन्नयुक्तया दीर्घमालया ॥७३॥ स्तम्भान्दुकूलैस्संवेष्ट्य मध्ये कुर्य्याच्च वेदिकाम् ॥ इष्टिकाभिरपक्वाभिर्हस्तविस्तृतपिण्डिकाम् ॥ ७४॥ मण्डपायामरुद्रांशनवसप्तेषुरामकैः ॥ अंशैः समुन्नतां वापि तारतम्यं विलोक्य च ॥७५॥ सामग्र्यादेः समावेशो यथा स्यादिति मण्डपः ॥ अयुताहुतिहोमस्तु विधेयः स्थण्डिलोपरि ॥ ७६ ॥ एकहस्तमितं कुण्डं दशलक्षावधि स्मृतम् ॥ लक्षाणां दशकेनैकं हस्तंहस्तं विवर्द्धयेत् ॥ ७७ ॥ दशहस्तकोटिहोमे वेदिकानामितीरितम् ॥ मद्यमांसादिहोमस्तु कुण्डएव विधीयते ॥७८॥ पञ्चाशत्प्रमिते होमे प्रकोष्ठं कृतमुष्टिकम् ॥ कुण्डस्य मानं भवति शतेऽरत्निसमं भवेत् ॥ ७९ ॥ सहस्रे हस्तमात्रं स्याद्विहस्तमयुते मतम् ॥ चतुर्हस्तमितं लक्षे षट्करं दशलक्षके ॥८०॥ कोटिहोमे चाष्टहस्तं कुण्डं वामे विधीयते ॥ एककुण्डविधाने तु चतुरस्रं विधीयते ॥ ८१ ॥ ब्राह्मणानां विशेषेण स्तम्भने चापि पूर्वगम् ॥ नवकुण्डविधाने तु वह्निभागे भगाकृति ॥ ८२ ॥ भोगार्थं चापि पुत्रार्थं वामिनां चतुरस्रवत् ॥ अर्धचन्द्रनिभं याम्ये वैश्यानां सर्वकर्म्माणि ॥ ८३ ॥ अन्येषां मारणे प्रोक्तं चतुष्कुण्डेष्वपीष्यते॥ त्रिकोणकुण्डं नैर्ऋत्ये रिपुघातकरं स्मृतम् ॥ ८४ ॥ विद्वेषकारकं चैतच्छद्राणाञ्च विशिष्यते ॥ वृत्तं मुख्यं क्षत्रियाणां सर्वेषां शाक्तकर्म्माणि ॥ ८५ ॥ पश्चिमायां तु तत्कार्य्यं बौद्धादीनां च सिद्धिदम् ॥ षट्कोणमुच्चाट्यति तच्छेदेषु च विशिष्यते ॥ ८६ ॥ वायव्यां कारयेत्तच्च सङ्कराणां विशिष्यते ॥ उदीच्यां पौष्टिके कुण्डं वृत्तिदं तुष्टिदं तथा ॥ ८७ ॥ सर्वप्रयोगेष्वनया परप्रीतिकरं स्मृतम् ॥ अष्टकोणं मुक्तिकरमैशान्यां तद्विधीयते ॥ ८८ ॥ कारागृहात्तथा रोगाच्चिन्तादेर्मोक्षमाप्नुयात् ॥ अष्टकुण्डीविधाने तु क्रमोऽयं नवकुण्डके ॥ ॥ ८९ ॥ नवमं चतुरस्रं स्यात्पूर्वेशानदिगन्तरे ॥ विधाने पञ्च कुण्डीनामीशाने पञ्चमं भवेत् ॥ ९० ॥ समकुण्डविधाने तु न खातो वेदिके बहिः ॥ अन्यदेकं पञ्चकोणमभिचारविनाशनम् ॥ ९१ ॥ तथान्यत्सप्तकोणञ्च कुण्डं

भूतनिकर्त्तनम् ॥ अथादौ चतुरस्रस्य कुण्डस्य विधिरुच्यते ॥ ९२ ॥ नाभियोनिसमायुक्तं श्रेष्ठं कुण्डं त्रिमेखलम् ॥ द्विमेखलं तु शूद्राणां संकराणां कुमेखलम् ॥ ९३ ॥ यावान्कुण्डस्य विस्तारः खननं तावदेव हि ॥ यावत्कुण्डमिहेष्टं स्यात्तावद्दिक्साधने कृते ॥९४॥ चतुरस्रं समं कुर्य्यात्समकर्णश्च शिल्पवित् ॥ एकहस्तस्य यत्कर्णो भुजा तस्य करद्वयी ॥९५॥ द्विहस्तस्य तु कर्णस्य त्रिहस्ता भुजसम्मितिः ॥ चतुर्हस्तादिकेप्येवं कुण्डः सर्वत्र भूसमः ॥९६॥ जिनभागसमास्तस्य बहिः कार्य्यास्तु मेखलाः॥द्वादशाङ्गुलविस्तारा चोत्सेधा चतुरङ्गुला ॥ ९७ ॥ तदूर्ध्वमपरादीर्घाष्टांगुलाष्टाङ्गुलोच्चका ॥ चतुर्भिरङ्गुलैर्दीर्घा तावदुच्चा तदर्धतः ॥९८॥ दैर्घ्यात्सूर्याङ्गुला योनिस्त्र्यंशोना विस्तरेण तु ॥ एकाङ्गुलोच्छ्रिता सा तु प्रविष्टाभ्यन्तरे तथा ॥९९॥ कुम्भद्वयसमायुक्ता चाश्वत्थदलवन्मता ॥ अङ्गुष्ठमेखलायुक्ता मध्ये बाह्ये धृतिः क्षमा ॥ १०० ॥ योन्यास्तु पश्चिमे भागे मेखलात्रितयाद्बहिः ॥ चतुरस्रं भवेत्पीठं कुण्डमष्टांशविस्तृतम् ॥ १०१ ॥ तावद्दीर्घं तथोच्चं च नालं तन्मध्यतो भवेत् ॥ योनिमध्ये तु तद्वृत्तं कुण्डषष्ठांशमानतः ॥१०२॥ प्रागग्नियाम्यकुण्डानां प्रोक्ता योनिरुदङ्मुखी॥ शेषा पूर्वमुखा योनिः कुण्डयोनिश्च वर्ज्जयेत् ॥ १०३ ॥ कुण्डमध्यस्थकेन्द्रात्तु कुर्य्यात्कर्कटकेन तु ॥ प्रसारितेन व्यासार्कभागतुल्येन तत्परम् ॥ १०४ ॥ षष्ठांशेन तु वृत्तं स्यात्पूर्ववृत्तं तु कार्णिका ॥ कार्णिकाग्रे बाह्यवृत्ताभ्यन्तरेऽष्टदलानि तु ॥१०५॥ एवं षडङ्गुलोच्चा स्यान्नाभिर्वेदास्रमीरितम् ॥ इष्टस्य चतुरस्रस्य जिनांशो भाग उच्यते ॥ १०६ ॥ सपादैः पञ्चभिर्भागैर्मध्यसूत्रं विवर्धयेत् ॥ प्राच्यामथ प्रकुर्य्याच्च चतुर्धा चतुरस्रकम् ॥ १०७ ॥ मध्यतो भ्रामयेत्कर्कटकं पश्चिमसंस्थयोः ॥ अर्धचापाकृतिं रुद्रबहिर्दिक्षु तदग्रतः वह्न्यन्तं पातयेत्सूत्रं द्वयोरपि तदा भवेत् ॥ १०८ ॥ अश्वत्थपत्रसंकाशं योनिकुंडमुदङ्मुखे ॥ प्राग्मानाश्चात्र बोद्धव्या योनिरूपाः सुमेखलाः ॥ चतुरस्रीकृतं क्षेत्रं दशधा विभजेद्बुधः ॥ १०९ ॥ एकमेकं त्यजेदंशमध ऊर्ध्वं च तन्त्रवित् ॥ ज्यासूत्रं पातयेदग्रे तन्मानाद् भ्रामयेत्ततः ॥ अर्धचंद्रनिभं कुण्डं रमणीयमिदं

भवेत् ॥ ११० ॥ अत्र तद्याम्यपृष्ठं स्यादेवं तन्मारणाय वै ॥ सौम्यपृष्ठं ततो न्यत्र योनिः पश्चिमदिग्मता ॥ १११ ॥ अग्रे प्राक् त्रिभुजं कार्य्यं लम्बा- स्तुल्यास्त्रयोपि च ॥ सान्तरं सर्वतन्त्रेषु प्रोक्तमत्र निरन्तरम् ॥ ११२॥ एक हस्ते तु हस्ताया भुजाभूद्वादशोच्चया ॥ द्विहस्तादौ त्रयः पञ्च त्रिहस्तेत्यर्क- भूमयः ॥ ११३ ॥ चतुर्हस्ते त्रयं चन्द्रः पञ्चहस्ते त्रिगोचराः ॥ षड्स्ते त्र्यब्दरामाश्च नगे त्रिकृतिसागराः ॥ ११४ ॥ अष्टहस्ते कृतागक्ष्मादेवी- विश्वामयाग्नयः ॥ वेदाग्निधृतियुग्मानि दशहस्तभुजा स्मृता ॥ ११६ ॥ व्यासार्धे चतुरस्रस्य स्वस्याष्टादशभागयुक् ॥ तावत्कर्कटकाद् वृत्तं वृत्तकुण्डमिहोच्यते ॥ ११६ ॥ रचयेच्चतुरस्रस्य व्यासार्धं नृपभागयुक् ॥ तावत्कर्कटकेनापि कुर्य्याद् वृत्तं मनोहरम् ॥ ११७ ॥ तेन कर्कटमानेन चिह्नषट्कश्च पूर्ववत् ॥ कृत्वा तत्रिभुजां दत्त्वा कुडमेवं षडस्रवत् ॥ ११८ ॥ इष्टस्य चतुरस्रस्य चतुर्विंशांशकल्पना ॥ कृत्वा तन्मध्यतः सूर्य्यभागं कर्कटकेन तु ॥११९॥ वृत्तं कुर्य्यात्पुनः सूर्य्यातिथिभागैर्द्वितीयकम् ॥ दिग्विदिगन्तराले च सूत्राण्यष्टौ प्रपातयेत् ॥ १२० ॥ ततोन्तर्वृत्तरेखाया ईशसूत्राग्रसूत्रतः ॥ रेखां नये- द्वाह्यवृत्तपूर्वसूत्रस्य मूर्द्धनि ॥ १२१ ॥ ततो दक्षिणरेखायामन्तर्वृत्तस्य मूर्द्धनि ॥ तमानयेद्दलं तस्मादेवमष्टदलानि तु ॥ १२२ ॥ अंशव्यासार्ध- केनापि यद्वृत्तं सा तु कर्णिका ॥ ततः षडङ्गव्यासार्धवृत्तं तत्केशराणि च ॥ १२३ ॥ व्यासषष्ठांशमानोच्चा कर्णिका केशराणि च ॥ गुरूक्तयुक्त्या निखनेद्यथा पद्माकृतिर्भवेत् ॥ १२४ ॥ पद्माकृतिम्प्रकुर्वीत कण्ठं मेखलया सह ॥ कार्य्यं तथा वालुकाभिश्चतुरस्रसमं यथा ॥१२५॥ अथेष्टचतुरस्रस्य व्यासः स द्वादशांशयुक् ॥ तेनैव भ्रामयेद् वृत्तं चिह्नान्यत्र दिगष्टके॥ १२६॥ क्रमान्न्यसेत्तदुपरि भुजां दद्यात्समामिति ॥ अष्टास्रं जायते कुण्डं तद्वत्कण्ठश्च मेखलाः ॥ १२७ ॥ इष्टस्य चतुरस्रस्य व्यासार्धं स्वनगांशयुक् ॥ तद्व्यासा- र्धेन वृत्तं स्यात्तत्र चिह्नानि पञ्च तु ॥ १२८ ॥ समभागेन देयानि तेषु सूत्राणि दापयेत ॥ ज्यारूपाणि धनुर्लोपात्कुण्डं पञ्चास्रकं भवेत् ॥ १२९ ॥ इष्टस्य चतुरस्रस्य व्यासार्धः पञ्चमांशयुक् ॥ भ्रामयेत्तत्र वृत्तं तु सप्तधा सकलं तु

तत् ॥ १३० ॥ ख्यातान्यन्यानि कुण्डानि तान्त्रिकस्मार्तकर्म्मणि ॥ अनाभिकानि कुण्डानि वियोनीति श्रुतीरितम् ॥ १३१ ॥ आचर्य्यकुण्डं नवमं चतुरस्त्रन्तु वैदिकम् ॥ अष्टाशक्तौ तु चत्वारि दिक्षु कुण्डानि तान्त्रिके ॥ १३२ ॥ तदशक्तावेकमेव चतुरस्रं प्रकल्पयेत् ॥ शक्त्या उपासने वामपथ्यकं योनिकुण्डकम्॥ १३३॥ अनेकदोषदं कुण्डं मानं हि चाधिकं यदि ॥ तस्मात्सम्यक्परीक्ष्येदं कर्त्तव्यं शुभमिच्छता ॥ १३४ ॥ खाताधिके भवेद्रोगी हीने धेनुधनक्षयः ॥ वक्रकुण्डे तु सन्तापो मरणं छिन्नमेखले ॥ १३५ ॥ मेखलारहिते शोकोऽथाधिके वित्तसंक्षयः ॥ भार्य्याविनाशकं कुण्डं प्रोक्तं योन्या विना कृतम् ॥१३६॥ अपत्यध्वंसनं प्रोक्तं कुण्डं यत्कण्ठवर्जितम् ॥ शृङ्गाररहितं यच्च कुण्डं जर्जरमेखलम् ॥ १३७ ॥ यजमानविनाशाय प्रोद्घातः स्फुटिते भवेत् ॥ सूत्राधिके सुहृद्द्वेषः सूत्रहीने दरिद्रता ॥ १३८ ॥ अनाले जठरे रोगश्छिद्रे कुण्डे तु वाच्यता ॥ यथोक्तकुण्डेप्युत्पातादेवं जाते फलं त्विदम् ॥१३९॥ षड्गुणाब्धिवह्निनेत्रमितास्स्युः पञ्च मेखलाः ॥ धर्म्मभेदे जातिभेदे चाचार्य्ययजमानयोः ॥ १४० ॥ षष्ठांशेनाष्टमांशेन मेखलाद्वितयं मतम् ॥ कौलिके वाममार्गे च बौद्धे जैने च शाबरे ॥१४१॥ एवं कृते मण्डपे तु वास्तुपूजां समारभेत् ॥ नूतने तु गृहे कुर्य्यादन्यथोपद्रवो महान्॥ १४२॥ स्मार्त्ती च तान्त्रिकी पूजा द्विविधा सा निगद्यते ॥ वास्तुनामा पुरा कश्चिद्बभूव त्वसुरोत्तमः ॥ १४३ ॥ त्रैलोक्यं निर्जितं तेन त्रिपञ्चाशच्च देवताः ॥ ये रणे सम्मुखे यातास्तेन तेतिनिपीडिताः ॥ १४४ ॥ पुनःपुनर्जिता युद्धे स एवासीत्प्रजापतिः॥ दिव्यवर्षसहस्रान्ते देवाः शरणमागताः १४५॥ विष्णोर्मम च पार्वत्या दैत्येन्द्रेणापि तच्छ्रुतम् ॥ योद्धुकामः सोऽभ्यधावन्नारदेन प्रचोदितः ॥ १४६ ॥ कृतं युद्धं तेन सार्द्धमस्माभिर्वर्षपञ्चकम् ॥ ततो दैत्यो मदोत्सिक्तो विष्णुमायाविमोहितः ॥ १४७ ॥ उवाच वचनं तुष्टो व्रियतांव्रियतामिति॥ १४८॥ नेन्द्रेण च कुबेरेण मम तोषकरं कृतम् ॥ ससैन्येनापि तद्युद्धं त्वया तु जटिलेन हि ॥ १४९ ॥ कृतं विष्णुसहायेन पार्वत्यर्धाङ्गधारिणा ॥ तेनाहं तुष्टिमापन्नस्त्रैलोक्यपरमेश्वरः ॥ १५० ॥

अदेयं नास्ति मे किञ्चिद्याचयन्तु त्रयोपि च॥इत्याकर्ण्य वचस्तस्य शिवयोर्भ्रू-प्रचोदितः ॥ १५१ ॥ हरिः प्राह महाधन्यो दैत्येन्द्र त्वं ममोक्तितः ॥ सत्यं त्रिवारं कुरुष्व तदा वाच्यो वरो मया ॥ शिवेनापि च पार्वत्या देव एवापरो न हि ॥ १५२ ॥ त्रिरुवाच तथा दैत्यस्तदा विष्णुर्व्यजिज्ञपत ॥ यथा ते त्वरितो मृत्युः स उपायः प्रदर्श्यताम् ॥ विष्णोश्छलमिति ज्ञात्वा दैत्येन्द्र-स्तमभाषत ॥ १५३ ॥ अवश्यमेव गन्तव्यं सर्वैः कालमुखे हरे ॥ तथापि स्वप्रतिज्ञार्थं यो गच्छति स जीवति ॥ १५४ ॥ परं त्वेको न मे वंशो येन मत्सेवनं कृतम् ॥ तस्य मार्गं दर्शयित्वा देहोयं विनिपात्यताम् ॥ ॥ १५५ ॥ काले तस्मिंश्च भो देवा वागुवाचाशरीरिणी ॥ दैत्यन्द्रै कुरु मा शोकं भुवो जन्म तवाभवत ॥ १५६ ॥ तत्रैव त्वं लयं याहि त्वत्तो पार्थ वरं शृणु ॥ ये वर्णाः स्वस्य भोगार्थं करिष्यन्ति नवं गृहम् ॥ ॥ १५७ ॥ तत्र त्वदुत्सवमृते नानादुःखैरुपद्रुताः ॥ कालकर्ण्यादिका दास्यो विनायकमुखाश्च ते ॥ १५८ ॥ सेवकाः पीडयिष्यन्ति चेत्याज्ञा पारमेश्वरी ॥ इत्याकर्ण्य वचस्सोपि गर्तं कृत्वा महाबिलम् ॥ १५९ ॥ प्रविवेश ततो देवैर्मृत्पाषाणैः प्रपूरितम् ॥ तेन ये निर्जिता देवाः पुनरुद्गमश-ङ्कया ॥ १६० ॥ तस्योर्ध्वन्तु त्रिपञ्चाशन्निवासं चक्रुरुग्रताः ॥ तस्मादव-श्यं ते पूज्या गृहवाससुखेच्छया ॥ १६१ ॥ शृण्वन्तु तद्विधिन्देवा वाम-दक्षिणमार्गतः ॥ पाषाणे प्रतिमायां वा कुर्य्याद्वास्तोष्पते तथा ॥ १६२ ॥ प्रतिजानीति मन्त्रेण तस्यावाहनपूजनम् ॥ नाममन्त्रेण चान्येषां पूजां कृत्वा प्रपूरयेत् ॥ १६३ ॥ नैर्ऋत्यकोणे गेहस्य चतुरस्राकृतिं शुभाम् ॥ कृत्वा समतलां भूमिं वितस्त्युच्चां च वेदिकाम् ॥ १६४ ॥ विस्तारायामतो हस्त-मात्रां तत्र लिखेद् बुधः ॥ एकाशीतिपदं चक्रं वेदिक्यस्तत्र देवताः ॥ १६५ ॥ मध्यकोष्ठेषु नवसु त्वादौ ब्रह्माणमर्चयेत् ॥ आपवत्सन्तदीशाने प्रागर्य्यमणं त्रिकोष्ठके ॥ १६६ ॥ आग्नेये सवितारं च विवस्वन्तमपां त्रिषु ॥ इन्द्रं नैर्ऋत्यदिग्भागे मित्रं पश्चिमगं त्रिषु ॥ १६७ ॥ वायव्ये राजयक्ष्माण सुमेरुं चोत्तरे त्रये ॥ वेदकोष्ठेषु चैशान्यामीशं कोणाच्च दवताः ॥ १६८ ॥

शिखी पर्ज्जन्य आपश्च दितिः प्रोक्ताष्टयोर्द्वयोः ॥ क्रमादेते पञ्च देवा ज्ञातव्याः सव्यमार्गतः ॥ १६९ ॥ जयन्तेन्द्रौ सूर्य्यसत्यवृषा आग्नेयकोणके ॥ अंतरिक्षं तथा वातः पूषा सावित्र एव च ॥ १७० ॥ चतुष्क ईशतो देवास्ततो दक्षिणपञ्चके ॥ युग्मे क्रमाच्च वितथो गृहरक्षयमौ तथा॥ १७१ ॥ गंधर्वा भृङ्गराजश्च नैर्ऋतीस्थं चतुष्कके॥ईशानीतो जयमृगौ पितृदौवारिकौ तथा ॥ १७२ ॥ततः पश्चाद्दिके पञ्च सुग्रीवः पुष्पदंतकः ॥ वरुणासुरशेषाश्च वायव्ये ईशतस्त्वहिः ॥ १७३ ॥ रुद्रश्च पापयक्षाश्च रोगश्चोत्तरपञ्चसु ॥ मुख्यो भल्लाटसोमौ च भुजङ्गश्चादितिस्तथा ॥ १७४ ॥ देवा एते पञ्चचत्वारिंशदर्च्याश्च भक्तितः॥ अथ तान्त्रिकमार्गे तु चतुष्षष्टिपदे तथा॥ १७५॥ कोणयोः सूत्रयुगलं मध्ये ब्रह्माणमर्चयेत् ॥ चतुष्कोष्ठेषु तत्पूर्वोत्तत्र कोष्ठे द्विकेद्विके ॥ १७६ ॥ आर्य्यकं च विवस्वंतं मित्रमन्यं महीधरम् ॥ सावित्रः सविता शक्र इन्द्रजिद्रुद्रतज्जयौ ॥ १७७ ॥ आपवत्सुरकौ वेति शैव्याः कोणार्धकोष्ठयोः ॥ शर्वं गुहं चार्य्यमणं जम्भकं पिलिपिञ्छकम् ॥१७८॥ चरकीं च विदारीं च पूतनां पूर्वतो यजेत् ॥ ईशानश्चाथ पर्जन्यो जयन्तः शक्रभास्करौ ॥ १७९ ॥ सत्यो वृषोऽन्तकश्चैव पूर्वाशाकोष्ठगाः क्रमात् ॥ अग्निः पूषा च वितथो यमोथ गृहरक्षकः ॥ १८० ॥ गन्धर्वा भृङ्गराजश्च मृगा दक्षिणदिग्गताः ॥ निर्ऋतिश्चाथ दौवारिकश्च सुग्रीवकस्तथा ॥१८१॥ वरुणः पुष्पदन्तश्च सुरशेषाख्यरोगकाः ॥ पश्चादथोत्तरे वायुर्नागमुख्यास्ततः परम् ॥ १८२ ॥ सोमभल्लाटार्गलाख्या अदितिर्दितिरुत्तरे ॥ ब्रह्मस्थानं रक्तवर्णं दिशः पीतैर्विदिक्सितैः ॥ १८३ ॥ ततो दिशस्तु हरितैर्विदिशः कृष्णवर्णकैः ॥ अरुणः परिधिः कार्यः सुन्दरं मण्डलं भवेत्॥ १८४॥ व्रीहिमुद्गयवैः क्षौद्रघृतदुग्धप्लुतैः क्रमात् ॥ अष्टोत्तरशतंचाष्टोत्तरविंशतिमेव च ॥१८५ ॥ प्रत्येकं तैर्हुनेद्द्रव्यैरर्चयेच्च यथाविधि ॥ बलिं च तेषां कुर्वीत पायसैर्व्यञ्जनान्वितैः ॥ १८६ ॥ एवं सिंहगते भानौ पूर्णायां प्रतिवत्सरम् ॥ स्वगेहे वास्तुपूजां च मण्डपेषु समाचरेत् ॥ नाकालमरणं व्याधिर्भूतप्रेतादिभीर्न च ॥१८७॥ न सर्पपीडा नान्योन्यकलहाद्यशुभानि च ॥ पुत्र-

पौत्रधनारोग्यपशुदासीसमृद्धिभाक्॥ अरोगी विजयी ख्यातश्चिरंजीवति तद्गृहे॥ ॥ १८८ ॥ राजवेश्मसु सर्वत्र तथा च महिषीगृहे ॥ सचिवामात्यसेनानी- भवनेषु पुरे तथा ॥ विदध्यात्प्रतिवर्षं तु प्रोक्तसिद्ध्यै सुदेशिकः ॥१८९॥ न चेदुक्तान्यथारूपं फलैः क्लेशश्च सम्भवेत् ॥ भैरवक्षेत्रपालानां योगिनीनां विशेषतः ॥ १९० ॥ वामाचारैर्बलिः कार्य्यो महिषैर्वापि कुक्कुटैः ॥ आराधितास्तु वामेन जायन्तेतिबुभुक्षिताः ॥ १९१ ॥ देवता बलिमिच्छंति तद्धीनं घ्नन्ति साधकम् ॥ मद्यमांसप्रमत्तास्ते शाक्तेन प्रचोदिताः ॥१९२॥ कदाचिच्छुभमिच्छन्ति तस्मात्सद्भिर्न वामतः ॥ क्रियतेऽभ्यर्चनं तासां प्रातस्तु निकटे यतः ॥ १९३ ॥ शुभं भवति वा नो वा यथा शास्त्रे तथा जने॥ यावन्न मद्यमांसाशी जनस्तावदलोलुपः ॥ भुंक्ते तस्मिंस्तन्मनाः स्यात्क्व जपः क्व च देवताः ॥ १९४ ॥ मद्यमांसादिकत्यागात्तस्य वातिनिषेवणात् ॥ दृश्यते तुल्यरूपो यः स सिद्धोऽन्यस्तु पातकी ॥ १९५ ॥ एवं परीक्ष्य कर्तव्या सिद्धानामपि सङ्गतिः ॥ अत्र किं बहुनोक्तेन सर्वनाशस्तु वामतः ॥ १९६ ॥ इति सञ्चिन्त्य भो देवाः स्वधर्म्मः श्रेयसे भवेत् ॥ वास्तु- शान्तिं विधायैवं सदसज्ज्ञानहेतवे ॥ १९७ ॥ सप्तभिर्नवभिर्वापि दिनैर्दी- क्षादिनात्पुरा ॥ बीजारोपणकर्म्मेदं कर्तव्यं सर्वकामदम् ॥ १९८ ॥ मण्ड- पोत्तरदिग्भागे सुसंवृत्तान्तरे परे ॥ भवने मण्डपं कुर्य्याद्दक्षः प्राग्वरुणायनम् ॥ १९९ ॥ याम्योदीच्यायतं वामदीक्षायां सम्प्रशस्यते ॥ गोमयेनोपलि- प्तायां भूमौ दक्षेऽथ वामके ॥ २०० ॥ सतैलतण्डुलैनैव सतैलविजयाद्रवैः ॥ तत्र रेखाः पञ्चकरा दीर्घाः कार्य्याश्च पञ्च च ॥२०१॥ वितस्त्यन्तरिता रुद्र- रेखाः कार्य्यास्तथायताः॥ चत्वारिंशत्कोष्ठकास्स्युश्चतुर्विंशतिकोष्ठकैः॥२०२॥ वाय्वङ्गैस्तत्र वीथी स्यात्पूरयेद्रक्तचूर्णकैः ॥ पश्चात्कोष्ठचतुष्कं यद्ब्रह्मस्थानं तदीरितम् ॥ २०३ ॥ आग्नेयकोष्ठमारभ्य ईशानान्तं प्रपूरयेत्॥ पीतै रक्तैश्च कृष्णैश्च रजोभिस्सृष्टिमार्गतः ॥ २०४ ॥ कोष्ठद्वयं ततो वीथी रक्तेनैव प्रपूरयेत् ॥ विष्णुस्थानं तदग्रे तु ज्ञेयं कोष्ठचतुष्टयम् ॥२०५॥ प्राग्वद्रजोभि-

रापूर्व्यं तदग्रेऽपि च वीथिकाः ॥ कार्य्या डमरुकाकाराश्चतस्रो विष्णुदेवताः॥ ॥ २०६ ॥ दूर्वाग्रपल्लवाश्वत्थदलोपेताश्च वेष्टिताः ॥ सूत्रेण विष्णुस्थानस्य चतुष्कोष्ठे निवेशयेत् ॥ २०७ ॥ वैरिञ्च्यः पञ्च मुख्यास्ताः काष्ठजाः षोडशांगुलैः ॥ आयामोच्छ्रायदीर्घाख्यैर्युक्ताः पश्चान्निवेशयेत् ॥२०८॥ ब्रह्मस्थाने पल्लवादिसूत्रैः प्राग्वच्च योजिताः ॥ शैवाः शरावाश्चत्वारो भान्वङ्गुलसमुच्छ्रयाः ॥ २०९ ॥ प्रक्षाल्य सूत्रैः संवेष्ट्य प्राग्वदग्न्यादिषु न्यसेत् ॥ शालिपुञ्जेषु गन्धादिदर्भकूर्चासनेषु च ॥ २१० ॥ पूरयेत्तानि पात्राणि वालुकामृत्करीषकैः ॥ शंखस्वनेन नादैश्च पञ्चभिर्ब्राह्मणाशिषा ॥ २११ ॥ ततः स्वर्णादिके पात्रे दश बीजानि वापयेत् ॥ वंबीजं प्रजपेन्मंत्री दुग्धेन क्षालयेत्पुनः ॥२१२॥ तानि प्रियंगुश्यामाकतिलसर्षपशालयः ॥ मुद्गाढक्यस्तुनिष्पावा खल्वा माषाः प्रकीर्तिताः ॥ २१३ ॥ ब्रह्मपात्रे तु विकिरेत्प्रथमं वैष्णवे ततः ॥ ततः शैवे पञ्चवाद्यब्रह्मघोषपुरस्सरम् ॥ २१४ ॥ हरिद्राद्यैश्च संसिच्य वस्त्रैराच्छादयेत्ततः ॥ संध्ययोरुयोश्चैव रात्रौ चापि बलिं हरेत् ॥ २१५ ॥ गुरूपदिष्टमार्गेण सम्यक्पात्रत्रयाग्रतः ॥ नवाहं तु बलिं दद्यात्तत्तदुद्दिश्य दैवतम् ॥ २१६ ॥ शाल्योदनं तिला लाजाः सक्तवः प्रथमे दिने ॥ हरिद्राचूर्णसंयुक्तो भूतेभ्योऽयं बलिर्मतः ॥ २१७ ॥ एवं द्वितीयदिवसे पितृभ्यस्तिलमण्डलैः॥तृतीये सक्तवो लाजा यक्षेभ्यो दधिसंयुताः ॥ २१८ ॥ नागेभ्यः सक्तवस्तुर्य्ये नारिकेलजलप्लुताः ॥ दद्यात्पद्माक्षतबलिं पंचमे ब्रह्मणे मुदा ॥२१९॥ षष्ठे शिवाय चापूपयुक्तं भक्तं प्रशस्यते॥तत्रौदनं सप्तमेऽह्नि विष्णवे विनिवेदयेत्॥२२०॥ ब्रह्मस्थाने तु वेतालो मेषस्तस्य बलिः सुराः ॥ विष्णुस्थाने भैरवी स्यादजस्तस्या बलिर्मतः ॥ २२१ ॥ भैरवस्तु शिवस्थाने महिषं बलिमिच्छति ॥ गौडी माध्वी च पैष्टी च सुरास्तत्र क्रमान्मताः ॥ २२२ ॥ मत्स्यमांसं मद्ययुक्तं भूतेभ्यो बलिरिष्यते ॥ पितृभ्यः शशमांसं च यक्षेभ्यः कुक्कुटं मधु ॥ २२३ ॥ भेकोन्दुरबलिर्नागान्वाममार्गबलिस्त्वयम् ॥ एवं गतेषु नवसु दिनेषु च विलोकयेत् ॥ २२४ ॥ सम्यक्त्स्योद्गमो जातः किं नष्टं मध्यमं च किम् ॥ सम्यगभ्युद्गमे सिद्धिः कुण्ठिते

विघ्नमानुयात् ॥ २२५ ॥ कीटभुक्तेनास्य फलं स्फुटिते सर्वनाशनम् ॥ सिद्धिः प्रियङ्गुभिर्ज्ञेया श्यामाकैःस्त्रीसुखं भवेत् ॥२२६॥ तिलैः पूज्यजनोल्लासः सर्षपैर्नाभिचारके॥ शालिभिः सर्वसम्मानो मुद्गैर्देवकृपा भवेत्॥२२७॥ चतुष्पादास्तथाढक्यां निष्पावैः क्षेत्रमन्दिरे ॥ खल्वैः सत्कर्मसिद्धिः स्यान्माषैः शान्ती रणे भवेत् ॥ २२८ ॥ सर्वैस्समुद्गतैर्वामे सिद्धिः पातस्ततोन्यथा ॥ चैत्रादीक्षाफलं दुःखं प्रतिष्ठारत्नसिद्धये ॥ २२९ ॥ हीनता मरणं बन्धुनाशो दुःखं ततः क्रमात् ॥ आनन्दो वृद्धिदुःखेथाक्षेपा निन्दा इति क्रमात् ॥ २३० ॥ दारिद्र्यं सर्वज्ञानं च शुभोत्कृष्टत्वसौख्यता ॥ ज्ञानं मेधाविनाशश्च स्वर्णाप्तिर्ज्ञानवर्द्धनम् ॥ २३१ ॥ समृद्धिसिद्धिः श्रेष्ठत्वं मलमासक्षयं त्यजेत् ॥ मनस्तापः श्रियः सौख्यं सौख्यं मन्त्रस्य सिद्धयः ॥ ॥ २३२ ॥ क्षुद्रदैवतसंसिद्धिः शीघ्रं सिद्धिः शुभा मतिः ॥ देवमैत्री सर्वहानिः कलहश्च महाभयम् ॥ २३३ ॥ सम्पद्रोगो जपात्सिद्धिः सन्तापस्ताप ईशिता॥ सर्वसिद्धिः फलं भानां क्रमादक्षे थ वामके ॥ २३४ ॥ तिथेः फलं बुद्धिनाशः क्रमाज्ज्ञेयाः सुसिद्धयः ॥ अगौरीमान्त्रिका भ्रष्टा विगणेशाश्च दुःखिताः॥ ॥ २३५ ॥ सिद्ध्यन्ति मन्त्राः सर्वेपि न सिद्ध्यन्ति कदाचन ॥ समृद्धिर्दुःखसिद्धिश्च मूर्खता गुरुनाशनम् ॥ २३६ ॥ जडतारिष्टनाशश्च सर्वं पूर्णं भवेत्फलम् ॥ शुक्ला श्रेष्ठा नैव कृष्णा शुभ्रा शुभतरा हरेः ॥ २३७ ॥ सिद्धिः स्यात्सर्वमन्त्राणां प्रोक्तं चैव महाभयम् ॥ सिद्धिर्धातुर्विशेषेण पुत्रहानिः पितृमृते ॥ २३८ ॥ क्रमाद्वारफलं बुद्धिर्जडता मरणं तथा ॥ नियोगहीनता पुत्रा धनाप्तिर्मृत्युरीरिता ॥ २३९ ॥ विष्कुम्भादिकयोगानां नामतुल्यं फलं भवेत् ॥ आनन्दादिकयोगानां सर्वत्राविकलं फलम् ॥२४०॥ विष्टिं विहाय करणे चरेत्सिद्धिर्द्रुतं भवेत् ॥ सर्वसिद्धिर्विष्टिपुच्छे स्थिरे तु स्थिरता भवेत् ॥ ॥ २४१ ॥ अथ लग्नफलं देवा धनं धान्यं समृद्धयः ॥ राज्यं वा देवतासिद्धिर्हानिर्मेधाविनाशनम् ॥ २४२ ॥ रत्नादिलक्ष्मीलाभश्च धनं धान्यं च सिद्धयः ॥ पूर्णसिद्धिः प्रतापश्च हानिर्विज्ञाननाशनम् ॥ २४३ ॥ पूर्वप्राप्तिर्मन्त्रसिद्धिः पशवो विपुलं धनम् ॥ सदा दुःखं तथा हानिर्वामिनां मिथुनं

शुभम् ॥ २४४ ॥ वामिनां यवनानां च विरुद्धं बहुधा शुभम् ॥ त्रिषडाय-गताः पापाः शुभाः केन्द्रत्रिकोणगाः ॥ २४५ ॥ रन्ध्रे मृत्युप्रदाः सर्वे व्यये खेटे रिपौ च रुक् ॥ मन्त्रश्चन्द्रबले ग्राह्योऽन्यथा स्यादघसम्भवः ॥ २४६ ॥ ताराबलानुरूपेण देवतायाः कृपा भवेत् ॥ धर्म्मदो राज्यदः सिद्धिप्रदो मध्योस्ति नाशकृत् ॥ २४७ ॥ प्रातःसङ्गवमध्याह्नापराह्णं साय-मेव च ॥ चन्द्रग्रहे तु दारिद्र्यं सौरे सर्वसमृद्धयः ॥ २४८ ॥ गुरावशुभदृष्टे च सिद्धक्षेत्रे सुशोभने ॥ आगच्छति गुरुर्दैवाद्यदा दीक्षा तदा भवेत् ॥ दीक्षा-दिनात्पूर्वदिने प्रातःकृत्यं निवर्त्य च ॥ २४९ ॥ समलंकृत्य देहं स्वं स्वगृहे पूजनं चरेत् ॥ गणेशस्य विधानेन पुण्याहं वाचयेत्ततः ॥ २५० ॥ नान्दी-मुखांस्तर्प्पयित्वा पञ्चवाद्यपुरःसरम् ॥ यथोक्तकृतसम्भारो गच्छेद् गुरुगृहं प्रति ॥ आचार्य्यर्त्विग्वरणसम्भारो दशधा मतः ॥ २५१ ॥ श्रीपर्णीवृक्ष-पीठानि हस्तमानानि मानतः ॥ अष्टाङ्गुलसमुच्छ्रायसहितानि समानि च ॥ २५२ ॥ सप्तविंशतिदर्भाणां वेण्यग्रे ग्रन्थिभूषिताः ॥ विष्टराः सर्वयज्ञेषु लक्षणं परिकीर्तितम् ॥ २५३ ॥ सुखोष्णोदकसम्भूताः पाद्यार्थे ताम्रगण्डकाः ॥ शङ्खा अर्घ्यप्रदानाय गन्धपुष्पजलान्विताः ॥ सुताम्रस्य कमण्डल्व आचा मोदकपूरिताः ॥ २५४ ॥ ते द्विधा मधुपर्कार्थे कांस्या दध्यादिपूरिताः ॥ महदर्घ्याणि वस्त्राणि मुद्रिकाद्यं सुभूषणम् ॥ मधूकपत्रच्छत्राणि सोष्णीषाणि समाचरेत् ॥ २५५ ॥ पादुकाश्चाहरेत्तत्र वर्म्माभरणभूषिताः ॥ कृत्वैतत्फ-लमाप्नोति महायज्ञार्हणोपमम् ॥ २५६ ॥ अन्येभ्यो मधुपर्केण विप्रेभ्यः पूजनं स्मृतम् ॥ भक्त्या तद्द्विगुणं दद्यादाचार्य्याय सुभक्तिमान् ॥ २५७ ॥ अन्यैर्द्विजैः समं यत्र देशिकस्य प्रपूजनम् ॥ तस्मिन्यज्ञफलं स्वल्पमनावृष्टौ यथा क्षितेः ॥ २५८ ॥ एवं गुरुगृहं गत्वा प्रणम्य गुरुपादुके ॥ दत्त्वा वरणसामग्रीं सङ्कल्प्य वृणुयाद्गुरुम् ॥ २५९ ॥ उच्चार्य्यमुक्तमन्त्रस्य ग्रहणाय द्विजोत्तम ॥ गुरुत्वे नेति सम्भाष्य त्वामहं च ततो वृणे ॥ २६० ॥ इत्युक्त्वा वृणुयाच्छिष्यो वृतोस्मीति ततो गुरुः ॥ यथोचितं गुरो कर्म्म कुरुष्वेति वदेच्छिशुः ॥ २६१ ॥ करवाणीति चा-चार्य्यो गुरोरेवाज्ञया ततः ॥ ब्राह्मणान्वृणुयादष्टौ वेदवेदाङ्गपारगान् ॥ २६२ ॥

तद्देवतोपासकांश्च ऋत्विक्केनाथवा यदा ॥ चत्वारि कुण्डानि तदा चत्वार ऋत्विजो मताः ॥ २६३ ॥ ततः शिष्येण सहितो यायाद्यागगृहं गुरुः ॥ उपविश्य च तद्द्वारे परीक्षामारभेत्ततः ॥ २६४ ॥ शिष्याय मूलमन्त्रं प्रदद्याद्दन्तधावनम् ॥ दन्तान्विशोध्य पुरतः स्थण्डिले हस्तमात्रके ॥ २६५ ॥ चतस्रोऽभ्यानयेत्तत्तु परीक्षेत ततो गुरुः ॥ तदग्रं यद्दिशासंस्थं तत्रेदं पूर्वतः फलम् ॥ २६६ ॥ भूतिर्हृदयसन्तापो बन्धुनाशस्तथा मतिः ॥ शोकश्च व्यग्रता सौख्यं ज्ञानलाभः क्रमात्फलम् ॥ २६७ ॥ अमङ्गलस्थानयानप्रायश्चित्तं समाचरेत् ॥ अष्टाधिकं सहस्रं वा शतं विंशतिरेव वा ॥ २६८ ॥ अस्त्रसम्पुटितेनैषां नाम्ना स्वाहान्वितेन च ॥ दोषाञ्जहिजहीत्येवं पदं चैव नमोऽन्तकम् ॥ २६९ ॥ केवलाज्येन जुहुयाद्दुःस्वप्ने चैवमेव हि ॥ दन्तकाष्ठं पुनर्देयं पुनर्दुष्टं च चेत्फलम् ॥ २७० ॥ तृतीयमपि दुष्टं चेन्न ग्राह्या सा तु देवता ॥ वाममार्गे सकृदपि गुरुं शिष्यो विनाशयेत् ॥ २७१ ॥ ततः स्वप्नपरीक्षां च कुर्यात्तद्विधिरुच्यते ॥ वैदिकानां दक्षिणानां वैष्णवानां च वामिनाम् ॥ २७२ ॥ यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवमावृत्य मन्त्रान्प्रयतस्त्रिदेवान् ॥ हविष्यभुग्दक्षिणपार्श्वशायी स्वप्नं परीक्षेत यथोपदेशम् ॥ २७३ ॥ भगवन्देवदेवेश शूलभृद् वृषवाहन ॥ इष्टानिष्टे समाचक्ष्व स्वप्ने सुप्तस्य यत्फलम् ॥ २७४ ॥ एवं सुप्ते कुशाकीर्णे चैकभुग्यतमानसः ॥ निशान्ते पश्यति स्वप्नं शुभं वा यदि वाशुभम्॥ २७५॥ ॐ[१] हत्सकललोकाय विष्णवे प्रभविष्णवे॥ विश्वेशाविश्वरूपाय स्वप्नाधिपतये नमः ॥ २७६ ॥ स्वप्नमानय मन्त्रोऽयमुपवासी जितेन्द्रियः ॥ दर्भशय्यागतो रात्रौ स्वप्नं पश्येद्यथा तथा ॥ २७७ ॥ भुक्त्वा शयीत शयने सुशुद्धे वसुधातले ॥ अर्धरात्रे समुत्थाय पादशौचं विधाय च ॥ २७८ ॥ आचम्य देवं सम्पूज्य तं संस्मृत्य स्वपञ्चके[२] ॥ शिवदैवतयोरैक्यं भावयेत्तु जपेदिदम् ॥ २७९ ॥ नमोऽजाय त्रिनेत्राय पिङ्गलाय महात्मने ॥ वामाय विश्वरूपाय स्वप्नाधिपतये नमः ॥ २८० ॥ स्वप्ने कथय मे

---

१ नमः ॥ अर्थात् ॥ ॐनमः सकललोकाय विष्णवे प्रभविष्णवे विश्वेशाविश्वरूपाय स्वप्नाधिपतये नमः स्वप्नमानयेतीमं पठेत् । २ स्वमस्तके—इत्यर्थः ।

नित्यं सर्वकार्य्यमशेषतः ॥ क्रियासिद्धिं विधास्यामि त्वत्प्रसादान्महेश्वर ॥ ॥ २८१ ॥ दीक्षितो दीक्षितानां च यथास्वप्ने प्रजायते ॥ शृण्वन्तु देवा भोः सर्वे सावधानास्तु तद्विधिम् ॥ २८२ ॥ पार्थिवेश्वरपूजान्ते रविवर्णं जपेन्मनुम् ॥ जुहुयात्तद्दशांशेन बिल्वपत्रैर्घृतप्लुतैः ॥ २८३ ॥ तर्प्पणं मार्जनं कृत्वा कुर्याद्ब्राह्मणभोजनम् ॥ सिद्धस्तस्य भवेन्मन्त्रः स्वप्ने वक्ति हृदि स्थितम्॥ २८४ ॥तारो हलिद्वयं शूलपाणये द्विठ ईरितः॥स्वप्नमानय मन्त्रोयं द्वादशाक्षर ईरितः ॥ २८५ ॥ स्वप्ने तु प्रथमे यामे वत्सरे तत्फलं भवेत् ॥ षड्भिर्मासैर्द्वियामे तु त्रिभिर्मासैस्त्रियामके ॥ २८६ ॥ चतुर्थे मासमात्रेण प्रातःकाले तु सत्वरम् ॥ स्वप्ने निद्रा फलघ्नी स्यात्स्वप्नो वाच्यो न चान्यथा ॥ ॥ २८७ ॥ चिन्ता दृष्टा तदीयं यत्तत्फलं नैव विद्यते ॥ वाताधिक्याद्भवे-त्स्वप्नस्सहसोड्डानपूर्वकः ॥ २८८ ॥ पित्तात्तेजोग्निपीतादि रक्तं क्रोधादिकं तथा ॥ श्लेष्मणः श्वेतशीतादि शयनाद्यं बलासनम् ॥ २८९ ॥ वातैः प्रात-स्त्वङ्गमर्दः पित्तैर्दाहस्तु नेत्रयोः ॥ कफात्प्रवेपते नित्यं हृद्द्वे द्वन्द्वे त्रयं त्रिषु ॥ २९० ॥ सिद्धं वा स्वगुरुं देवं प्रसन्नां च कुमारिकाम् ॥ गङ्गां भागी-रथीं भानुं लिङ्गिनं लिङ्गमैश्वरम् ॥ २९१ ॥ बालं छत्रं रथं दीपं प्रासादं कमलं नदीम् ॥ कुञ्जरं वृषभं माल्यं समुद्रं फलितद्रुमम् ॥ २९२ ॥ पर्वतं प्रज्वलद्वह्निमाममांसं सुरासवम्॥ग्रहान् भानि विधुं सूर्य्यं रत्नान्याभरणानि च ॥२९३॥सिंहासनं विमानं च ध्वजं वाद्याभिषेचनम् ॥ श्वेतचन्दनवस्त्राणि शालयः कुङ्कुमं मधु॥२९४॥राजा सिद्धार्थकं नार्यो नवभाण्डं च पायसम्॥ अश्वं फलानि सिद्धान्नं दधि बालं विलासिनम् ॥ २९५ ॥ दुग्धं वाद्यानि चाषं च मयूरं नकुलं मृगम् ॥ बद्धमेकपरं पुष्पं सद्वाक्यं चक्षुरञ्जनम् ॥२९६॥ पूर्णकुम्भं दर्प्पणं च मीनं मद्यं च भोजनम् ॥ शवं रोदनहीनं च पुण्ड्राणि च पताकिका ॥२९७॥ भारद्वाजनृपाणां च वेदशब्दं च गायनम् ॥ कशां मा-ङ्गल्यगीतानि चाङ्कुशं युद्धदं प्रियम् ॥२९८॥ स्वप्ने दृष्ट्वा तु चैतानि साधकः सिद्धिमाप्नुयात॥व्याध्याद्यार्त्तो नास्ति दुःखं सामान्यः सुखमाप्नुयात् ॥२९९॥ यदा कर्म्मसु काम्येषु स्त्रियं स्वप्नेषु पश्यति ॥ कामयन्तीं नदीं सिन्धुं द्विजं

श्वेताम्बरं तथा ॥ ३०० ॥ भास्करोदयनं चैव ग्रहणं चन्द्रसूर्य्ययोः ॥ हर्म्यप्रासादनागाश्ववृषशैलाभिरोहणम् ॥ ३०१ ॥ भोजनं दधिभक्तस्य पक्वमांसस्य भक्षणम् ॥ कृमिविष्ठानुलेपश्च रुधिरेणाभिषेचनम् ॥ ३०२ ॥ ताम्बूलभक्षणं मद्यपानं दध्यभिवन्दनम्॥ प्रचन्द्रकिरणं स्वप्ने कार्य्यसिद्धेः सुलक्षणम् ॥ ३०३ ॥ कृष्णाम्बरधरा नारी कृष्णगन्धानुलेपना ॥ उपगूहति यं स्वप्ने सा रात्रिस्तस्य पश्चिमा ॥ ३०४ ॥ एवन्तु रक्तया व्याधिः शोकोऽरुणसमानया॥ नीलया कलहो हत्या पीतया करदो भवेत् ॥ ३०५ ॥ श्वेताम्बरधरा नारी श्वेतमाल्यानुलेपना ॥ उपगूहति यं स्वप्ने तस्य श्रीः सर्वतोमुखी ॥ ३०६ ॥ अशने शयने पाने शरीरे वाहने गृहे ॥ ज्वलमाने विबुध्येत तस्य श्रीः सर्वतोमुखी ॥ ३०७ ॥ सितोरगस्य दंशश्चेज्जायते दक्षिणे करे ॥ दशाहात्स भवेद्भोगी रोगी रोगाद्विमुच्यते ॥ ३०८ ॥ निगडैर्बहुपाशैश्च बध्यते वा युतो भवेत् ॥ प्रतिष्ठा वर्धते तस्य दुग्धपानधनात्ययः ॥ ३०९ ॥ सुरां रक्तम्पिबन्विद्यां लभेद्विप्रो धनं परम्॥ दध्नि दृष्टे भवेत्प्रीतिर्गोधूमैश्च धनागमः॥ ३१०॥ सिद्ध्या विद्यागमं विद्याल्लाभः सिद्धार्थकैस्तथा ॥ दधिलाभो ददेदर्थान्घृतलाभाद् ध्रुवञ्जयः ॥ ३११ ॥ घृताशनाद्धनक्लेशो जयस्तु दधिभक्षणात् ॥ लिङ्गानामर्चनन्दृष्ट्वा व्यवहारोऽत्र जायते ॥ ३१२ ॥ यस्तु मध्ये तडागादेर्भुञ्जीत घृतपायसम् ॥ निष्कम्पे पुष्करे पत्रे तं विद्यात्पृथिवीपतिम् ॥ ३१३ ॥ देवता लिङ्गिनो गावः पितरो ब्राह्मणो नृपः ॥ यद्वदन्ति नरं स्वप्ने तत्तथैव भविष्यति ॥ ३१४ ॥ अन्त्रैः संवेष्टयेद्यस्तु ग्रामं वा नगरन्तथा ॥ ग्रामे मण्डलराज्यं स्यान्नगरे पार्थिवो भवेत् ॥ ३१५ ॥ चन्द्रताराग्रहणं परिमार्गणमेव च ॥ भूम्यम्बुधीनां ग्रसनं शत्रूणां वा वधक्रिया ॥ ३१६ ॥ जयो विवादे द्यूते च शत्रूणाञ्च तथा जयः ॥ वडवामहिषीसिंहीगोहस्तिन्यादिदोहनम् ॥ ३१७ ॥ प्रसादो गुरुविप्रेषु देवसिद्धादिकाच्छुभम् ॥ स्नानं राज्याभिषेकश्च स्वशिरश्छेदनं मृतिः ॥ ३१८ ॥ तीर्थोदकानान्तरणन्तथा विषमलङ्घनम् ॥ गोहस्तिवडवासूतिर्[1]वह्निलाभस्तथैव च॥परस्त्र्यालिङ्गनं तस्या लाभो

---

१ हयीप्रसूतिः ।

रोदनमेव च ॥३१९॥ विष्ठालेपः कुन्दजातीबकुलानाञ्च दर्शनम् ॥ रणद्यूत-विमर्द्देषु जयो निगडबन्धनम् ॥ ३२० ॥ पशुमर्त्यमृगाणाञ्च लब्धिरध्यासन-न्तथा ॥ शिखि[1]लाभः श्वेतवस्त्रं पुष्पचन्दनधारणम् ॥ ३२१ ॥ मणितार[2]सु-वर्णादिपात्रे भोजनकन्तथा ॥ पश्येत्तदा साधकस्य ज्ञेया सिद्धिरितस्ततः३२२॥ कार्य्यार्त्तानां कार्य्यसिद्धिरितरेषां धनागमः॥ वन्ध्याचर्म्मतुषाग्न्यादिलवणाङ्गा-रमिन्धनम् ॥ ३२३ ॥ विट्क्लीबोन्मत्ततैलादिजटिलादिवसौषधम् ॥ रोगी नृणान्तु संन्यासी नग्नस्त्यक्तः क्षुधातुरः ॥ ३२४ ॥ विमुक्तकेशः पतितोभ्य-क्तासृक्शरविक्षतः ॥ भार्जारयुद्धं कार्प्पासो गर्भिणी च रजस्वला ॥३२५॥ गुडस्तक्रञ्च काषायी पंक एरण्डका गृहे ॥ वज्रादिकस्य स्खलनं सुरा पशुमल-न्तथा ॥ अन्धः कुब्जो दुर्वचनो बधिरः खञ्जकुब्जकौ ॥ ३२६ ॥ वमनं च घटो रिक्तो रजको मलिनाम्बरः ॥ एतैर्दृष्टैर्न कार्य्यं स्याद्रोगी मृत्युमवाप्नुयात् ॥३२७॥अशोकं करवीरञ्च पलाशञ्चापि पुष्पितम् ॥ स्वप्नेपि सलिलन्दृष्ट्वा नरः शोकमवाप्नुयात् ॥ ३२८ ॥ रूपान्तरे प्रवेशश्च दक्षिणाशागतिस्तथा ॥ पंके निमज्जनं स्नानं पुत्रभार्य्याविनाशनम् ॥ ३२९ ॥ गोहस्तिद्विजविप्रादौ दृष्टे कृष्णे च शोभनम् ॥ रक्तगन्धाम्बरः स्रग्वी कृष्णो वा दक्षिणामुखः ॥ ॥ ३३० ॥ खरोष्ट्रमहिषारूढस्त्रिमासं न स जीवति ॥ स्वप्ने वापि मठे गेहे द्वारं यस्य पिधीयते॥ ३३१॥ न चोत्तिष्ठति यत्तस्य मासान्तं किल जीवितम् ॥ वांतिमूत्रपुरीषञ्च सन्तानजननं च्युतिः ॥ शुक्रस्य यस्य च स्वप्ने तस्यायुर्दशमासकम् ॥ ३३२ ॥ बाध्यते विकृतैः कृष्णैः पुरुषैरुद्य-तायुधैः ॥ पाषाणैस्ताडयते वापि तस्य मृत्युर्न संशयः ॥३३३॥ महिषो-ष्ट्रखरारूढस्तैलाभ्यक्तश्च मुण्डितः ॥ दक्षिणाशाम्प्रस्थितो यस्तस्य मृत्युर्न संशयः ॥ ३३४ ॥ पश्येत्प्रासादपतनं ग्रहस्य शशिसूर्य्ययोः ॥ पर्वतानाञ्च वृक्षाणामधिकाराच्च्युतिर्भवेत् ॥३३५॥ हानिश्चैव स्वगात्राणां व्याधितोभि-भवस्तथा ॥ गृहसम्मार्ज्जनं लेपो गोमयेन मृदापि वा ॥ ३३६ ॥ तीर्त्वा नदीं समायातस्तीरेऽन्यद्वसनन्धृतम् ॥ रोगी रोगाद्विमुच्येत हानिः स्वस्थस्य

---

१ मयूरलाभः ॥ २ रजतम् ॥

जायते ॥ ३३७ ॥ पुन्नामानो मृगगणाः पोतकी सूकरी तथा ॥ पिङ्गला छुच्छुंका पल्ली वामाङ्गे कोकिलाः शिवाः॥ ३३८ ॥ स्त्रीनामानो मृगगणाः श्रीकण्ठो वानरो रुरुः ॥ छिकरः प्रियको भासो दक्षे काकर्क्षकुक्कुराः ॥ ॥३३९॥ दृष्टाश्चेद्रोगिणो रोगनाशः साधकसिद्धये॥ स्वस्थस्य धनलाभादि बहुव्यापारशोभनम् ॥ ३४० ॥ त्रिरात्रोपोषितो भूत्वा हविष्याशी पुरोहितः॥ सक्षीराणां घृताक्तानां समिधां चां शतं हुनेत् ॥ ३४१ ॥ पालाशानान्तु गायत्र्या शूद्रः स्नात्वा हविष्यभुक् ॥ दीपन्दद्याद्विप्रगेहे विष्णोर्गेहे शिवालये ॥ ३४२ ॥ एवन्दृष्ट्वा शुभं स्वप्नं गृह्णीयान्मनुमन्यथा ॥ गृहीते हानिरेव स्याच्चान्यदेवं विचिन्तयेत् ॥ ३४३ ॥ एवं विचार्य्य सततं गुरुपूजां समारभेत् ॥ विधायाचमनन्तत्र सामान्यार्घ्यं विधाय च ॥ ३४४ ॥ अर्घ्योदकेन सम्प्रोक्ष्य द्वारपूजां समाचरेत् ॥ ततश्च देशिको विघ्नान्दिव्यानास्फोटनेन च ॥ ३४५ ॥ अन्तरिक्षगतानन्तर्मन्त्रैरुत्सारयेत्क्रमात् ॥ पार्थिवान्पार्ष्णिघातैश्च त्रिभिरुत्सारयेत्ततः ॥ ३४६ ॥ अङ्गं सङ्कोच्य किञ्चित्तु शाखां वामगतां स्पृशेत् ॥ उत्सारयेत विघ्नानां दद्न्मार्गं तु दक्षिणे॥ ३४७॥ पादेन दक्षिणेनाथ प्रविशेद्योगमण्डपम् ॥ वाममार्गेऽथवा शाक्ते वामपादपुरःसरम् ॥ ३४८ ॥ ब्रह्माणं वास्त्वधीशञ्च नैर्ऋत्यां दिशि पूजयेत्॥ अर्घ्याम्बुना च गव्येन यागस्थाने सुसेचयेत् ॥ ३४९ ॥ वीक्षणाद्यैस्ततः शुद्धिं चतुर्धा वा समाचरेत् ॥ संवीक्ष्य मूलमनुना त्वस्त्रेण प्रोक्षयेत्ततः ॥ ३५० ॥ कुर्य्यात्ताडनमस्त्रेण कवचेनावसेचयेत् ॥ श्रीखण्डागुरुमन्त्रैश्च धूपितेस्त्रेण सप्तधा ॥ ॥ ३५१ ॥ जयाचन्दनसिद्धार्थदूर्वाभस्माक्षतान्कुशान् ॥ सलाजान्विकिरेन्मन्त्री प्रत्यूहघ्नान्हि मण्डपे ॥ ३५२ ॥ मार्ज्जयेदस्त्रमन्त्रेण तान्मन्त्री दर्भमुष्टिना ॥ आसनाय तु वर्धन्या ईशाने स्थापयेच्च तान् ॥ ३५३ ॥ पुण्याहं वाचयित्वाथ विप्रान्सन्तोष्य यत्नतः ॥ वेदिकायां लिखेत्पश्चात्सर्वतोभद्रमण्डलम् ॥ ३५४ ॥ शृणु तस्य विधिं श्रौते स्मार्ते यद्भद्रमिष्यते ॥ धृतिवर्गसमाः कार्य्याः कोष्ठकाश्चतुरस्रकाः ॥ ३५५ ॥ खण्डेन्दुस्त्रिपदैः कोणे श्वेतवर्णेन पूरयेत् ॥ कोणस्थैः पञ्चभिः कोष्ठैः शृङ्खला कृष्णवर्णिका ॥ ३५६ ॥

१पक्षिविशेषः २ वेश्या ३ छच्छुंदरी ४ नलिकण्ठः ५ मृगविशेषः ६ हरिणभेदः ।

श्रृङ्खलोभयतो नीला वल्ली शङ्करकोष्ठका ॥ श्रृङ्खलोभयतो भद्रमरुणं नवभिः पदैः ॥ ३५७ ॥ वापी जिनपदा श्वेता पीतान्तःपरिधिर्भवेत् ॥ मध्ये षोडशपद्मं तु रुचिरं वेष्टयेद्बहिः ॥ ३५८ ॥ श्वेतारुणासितैरेवं सर्वतोभद्रमण्डलम् ॥ अथान्यत्सम्प्रवक्ष्यामि कुर्यात्तान्त्रिककर्मणि ॥ ३५९ ॥ नृपवर्गसमाः कार्याः कोष्ठकाश्चतुरस्रकाः ॥ मध्ये षड्वर्गकोष्ठानि मार्जयेत्तत्र संलिखेत् ॥ ३६० ॥ आयामद्वादशांशं च बहिस्त्यक्त्वाथ मध्यतः ॥ ततो वृत्तत्रयं मध्ये समं कुर्याद्यथाविधि ॥ ३६१ ॥ कर्णिकामध्यवृत्तेन द्वितीयेन तु केशरान् ॥ अन्तवृत्तेन पत्राणि पत्राग्रं त्यक्तभागतः ॥ ३६२ ॥ किञ्जल्काग्रेषु संस्थाप्य पार्श्वतस्त्वर्धचन्द्रकान् ॥ तदग्रे तु त्रिभिः कोष्ठैः पादान्कोणेषु विन्यसेत् ॥ ३६३ ॥ शेषाणि पीतगात्राणि परतः पङ्क्तियुग्मकम् ॥ वीथीं कुर्यान्मार्जयित्वा चतुर्दिक्षु च मध्यतः ॥ ३६४ ॥

## सर्वतोभद्रचक्रम् ।

| त. | त. | मु. | म. | म. | म. | म. | म. | त. | त. | म. | म. | म. | म. | म. | मु. | त. | त. |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| त. | ति. | मु. | मु. | म. | म. | म. | त. | त. | त. | त. | म. | म. | म. | मु. | मु. | ति. | त. |
| मु. | मु. | ति. | म. | मु. | म. | त. | त. | त. | त. | त. | त. | म. | मु. | मु. | ति. | मु. | मु. |
| म. | मु. | मु. | ति. | मु. | मु. | त. | त. | त. | त. | त. | त. | मु. | मु. | ति. | मु. | मु. | म. |
| म. | म. | मु. | मु. | ति. | मु. | मु. | त. | त. | त. | त. | मु. | मु. | ति. | मु. | मु. | म. | म. |
| म. | म. | म. | मु. | म. | ति. | मु. | मु. | त. | त. | मु. | मु. | ति. | मु. | मु. | म. | म. | म. |
| म. | म. | त. | त. | मु. | मु. | च. | च. | च. | च. | च. | च. | मु. | मु. | त. | त. | म. | म. |
| म. | त. | त. | त. | त. | मु. | च. | त. | त. | त. | त. | च. | मु. | त. | त. | त. | त. | म. |
| त. | त. | त. | त. | त. | त. | च. | त. | त. | त. | त. | च. | त. | त. | त. | त. | त. | त. |
| त. | त. | त. | त. | त. | त. | च. | त. | त. | त. | त. | च. | त. | त. | त. | च. | त. | त. |
| म. | त. | त. | त. | त. | मु. | च. | त. | त. | त. | त. | च. | मु. | त. | त. | च. | त. | म. |
| म. | म. | त. | त. | मु. | मु. | च. | च. | च. | च. | च. | च. | मु. | मु. | त. | ति. | म. | म. |
| म. | म. | म. | मु. | मु. | ति. | मु. | मु. | त. | त. | मु. | मु. | ति. | मु. | मु. | म. | म. | म. |
| म. | म. | मु. | मु. | ति. | मु. | मु. | त. | त. | त. | त. | मु. | मु. | ति. | मु. | मु. | म. | म. |
| म. | मु. | मु. | ति. | मु. | मु. | त. | त. | त. | त. | त. | त. | मु. | मु. | ति. | मु. | मु. | म. |
| मु. | मु. | ति. | मु. | मु. | म. | त. | त. | त. | त. | त. | त. | म. | मु. | मु. | ति. | मु. | मु. |
| त. | ति. | ह. | ह. | र. | र. | र. | त. | त. | त. | त. | म. | म. | म. | मु. | मु. | ति. | त. |
| त. | त. | मु. | म. | म. | म. | म. | म. | त. | त. | म. | म. | म. | म. | म. | मु. | त. | त. |

१ श्वेतकृष्णारुणहरितपीतवर्णेषु तण्डुलतिलमसूरमुद्गचणकानामाद्यक्षरैः कोष्ठगतैस्तत्तद्धान्यैः कोष्ठपूरणं ज्ञेयम् ॥

क्रमादाभ्यां चतुर्भिश्च कोष्ठैर्द्वारचतुष्टयम् ॥ कोष्ठत्रयेण चैकेन प्रत्येकं द्वार-पार्श्वयोः ॥ ३६५ ॥ शोभा भवन्त्वतः कोष्ठैरेकतस्त्रिभिरेव च ॥ उपशो-भास्ततः कोष्ठैः षड्भिः कोशानि कल्पयेत् ॥ ३६६ ॥ शुक्लं तण्डुलचूर्णं स्यादुत्सेधायामतस्तथा ॥ अङ्गुलेन समाः कार्य्याः सीमरेखा दलानि च ॥ ॥ ३६७ ॥ पीठगात्राणि च द्वारे चतुष्कं तेन पूजयेत् ॥ अविप्रैः पूरणी-यानि रक्तेनैव दलान्यपि ॥ ३६८ ॥ कुसुम्भचूर्णमारक्तं पूरणीयास्तु तेन तु ॥ द्वारशोभाः पीतपादाः सर्ववर्णैर्विनिश्चयात्॥ ३६९ ॥पीतं हरिद्राचूर्णं स्यात्पीठगर्भे च कर्णिका ॥ उपशोभाश्च विप्रेण पीतगर्भाश्च कृष्णतः॥ ३७० ॥ बिल्वपत्रस्य चूर्णोत्थो हरितस्तेन पूरयेत्॥पत्रमूलफलाकारामण्डिता हृदयङ्गमाः ॥ ३७१ ॥ वीथी चतुष्कमध्ये तु कल्पवल्लीः प्रपूरयेत् ॥ सन्धींश्च कल्पवल्लीश्च पीतरक्तेन केशरान् ॥ ३७२ ॥ नानावर्णरजोभिस्तान्पूरयेत्कुशलो गुरुः ॥ कृष्णवर्णेन कोणानि बही रेखात्रयं ततः ॥ ३७३ ॥ शुक्लारुणाख्यकृष्णैस्तु रजोभिर्भूषयेत्क्रमात् ॥ सर्वतन्त्रेष्विदं प्रोक्तं सर्वतोभद्रमण्डलम् ॥ ३७४ ॥ वक्ष्येथ देवयोनीनां सर्वतोभद्रमण्डलम् ॥ मार्गेथ दक्षिणे तत्र कोष्ठकारविव-र्गकाः ॥ ३७५ ॥ प्राग्वदेव तु तन्मध्ये पद्मं षड्भिः पदैः शुभम् ॥ एक पंक्त्या भवेत्पीठं द्वारशोभास्तु पूर्ववत् ॥ ३७६ ॥ षड्भिः कोष्ठैस्तु कोशानि रञ्जितव्यं च पूर्ववत् ॥ पीठपादाः परिधयः पद्माद्यं पूर्ववन्मतम् ॥ ३७७ ॥ वाममार्गे मण्डलं स्यात्कोष्ठैरष्टकवर्गकैः ॥ चतुर्भिः पङ्कजं मध्ये तद्बाह्ये वीथिका तु वा ॥ ३७८ ॥ कल्पवल्ली समायुक्ता तत्पद्मं सर्वदैव हि ॥ दिक् चतुष्के तु पद्मानि चतुर्भिः कोष्ठकैश्चरेत् ॥ ३७९ ॥ विदिशासु चतुर्भिस्स्युश्च-तुष्का वेदसंख्यकाः ॥ चतुष्कपद्मवीथीनां मध्ये स्वस्तिकसन्निभम् ॥ ३८० ॥ जायते तच्चतुष्कोष्ठैर्विदिशासु चतुर्ष्वपि ॥ रजोभिः शुक्लहारिद्ररक्तनीलैः प्रपूरयेत् ॥ ३८१ ॥ स्वस्तिकानीशतश्चान्यत्पूर्ववत्परिकीर्तितम् ॥ उदितं मण्डलं ह्येतन्नवनागं सुशोभनम् ॥ ३८२ ॥ एतदेवोक्तमार्गेण मध्यद्वारं विदि-क्त्यजम् ॥ एककोष्ठचतुष्कायं पञ्चपद्मं प्रवक्ष्यते ॥ ३८३ ॥ पद्मं प्राग्वाकृतं द्वारं स्वस्तिवच्च चतुष्ककाः॥वर्णैः पूर्व्या वीथिका तु पीठे तु सुरयोनिषु ॥ ३८४ ॥

अथ मन्त्रप्रतिष्ठार्थं वक्ष्ये वारुणमण्डलम् ॥ चतुरस्रं चतुष्षष्टिकोष्ठकं यो निवेशयेत् ॥ ३८५ ॥ अन्त्यजान्तिमयातासु दिक्षुकोष्ठानि मार्ज्जयेत् ॥ मध्यस्थचतुरस्राणि द्वास्स्थाख्यानि तु पूर्वतः ॥ ३८६ ॥ पीतैः श्यामैश्च तान् हरिद्रजोभिः परिपूरयेत् ॥ कोणकोष्ठं विहायैकं पञ्च ते पादसञ्ज्ञिताः ॥ ३८७ ॥ पीता स्यात्पाण्डुरा रक्ता पीतैः कृष्णैश्च पूरयेत् ॥ आग्नेयीतः कोणकोष्ठान्यारक्तहरितासितैः ॥ ३८८ ॥ पूरयेदथ तस्यार्धं वितानं बन्धयेद्यथा ॥ श्वेतवर्णेन चत्वारि मध्ये वृत्तानि कारयेत् ॥ ३८९ ॥ षड्ङ्गीशादिव्यासार्धवृत्तमाद्यन्तु पीठतः ॥ तत्पीतं कर्णिकाकारं सितरेखावृतं ततः ॥ ३९० ॥ द्वितीयं द्विगुणव्यासरूपकेशरसंयुतम् ॥ पीतरक्तश्वेतवर्ण-मूलमध्याग्रकेसरम् ॥ ३९१ ॥ द्विसप्तत्यंशिकां श्वेतां तस्याग्रे कुरुते सिताम् ॥ तृतीयं तु तृतीयांशतुल्यव्यासं च वर्त्तुलम् ॥ ३९२ ॥ श्वेतमष्ट-दलं तत्र रक्ताग्रं तद्दलैस्तले ॥ श्वेतं बहिः कृष्णवर्णं प्राग्वद्रेखां सितां कुरु ॥ ॥ ३९३ ॥ तद्बहिर्वृत्तसंलग्नान्षोडशास्रान्प्रकल्पयेत् ॥ श्यामपीतारुणश्वेतै-स्तदन्तस्तूपबाह्यतः ॥ ३९४ ॥ सितपीतारुणश्यामहरिताः पञ्च रेखिकाः ॥ कार्य्याः सुरुचिराः पीठस्यान्तरेवं प्रपूरयेत् ॥ वज्रं शक्तिं दण्डखड्गपाशाङ्-कुशगदा लिखेत् ॥ ३९५॥ पूर्वतस्तु तथैशान्यां शूलं चक्राम्बुजान्वितम् ॥ वेदिकायामासनन्तु प्राङ्मुखं संविशेदथ ॥ बद्धपद्मासनो मौनी ऋजुकायो जितेन्द्रियः ॥ ३९६ ॥ देशिकेन्द्रस्तु संस्थाप्य पूजोपस्क-रणानि तु ॥ दक्षिणे वामभागे तु स्थापयेत्कलशं शुभम् ॥३९७॥ सुगन्धि जलसंपूर्णं हस्तप्रक्षालनायच ॥ पश्चात्पात्रं निधायाथ दीपान्प्रज्वालयेच्छुभान् ॥ ३९८ ॥ व्यजनं मुकुरं छत्रं चामरं दिक्षु मन्त्रवित् ॥ संस्कुर्य्यात्तानि सर्वाणि वक्ष्यमाणविधानतः ॥ ३९९ ॥ करशुद्धिं विधायाथ ब्रूयात्तारत्रय-न्तथा ॥ शरमन्त्रेण दिग्बन्धं कुर्य्यान्मंत्री समाहितः ॥ ४०० ॥ महतस्तु समुत्पन्नं वक्ष्ये यत्तद्धि सर्वतः ॥ भूतशुद्धिन्ततः कृत्वा प्राणस्थापनमाचरेत् ॥ ४०१ ॥ न्यासादिकन्ततः कुर्य्याद्देशिको यतमानसः ॥ ऋषिं न्यसेत्ततो

१ तारः प्रणवः शरो हुं फट्तेन ॐ ॐ ॐ हुंफट् इति पठित्वा दिग्बन्धं कुर्यात् ॥

मूर्ध्नि च्छन्दो वक्त्रगतं न्यसेत् ॥ ४०२ ॥ देवतां हृदये न्यस्य मूलमन्त्रस्य देशिकः ॥ षडङ्गं विन्यसेन्मन्त्री पंचाङ्गं वा यथाविधि ॥४०३॥ यस्य मन्त्रस्य पंचाङ्गं नेत्रं तस्य विधीयते ॥ अङ्गैर्विहीनस्य मनोरङ्गं तेनैव कल्पयेत् ॥४०४॥ ततो मन्त्रोक्तमार्गेण न्यासानन्यान्समाचरेत् ॥ शरीरे स्वस्य मन्त्रज्ञो योगपीठं प्रकल्पयेत् ॥ ४०५ ॥ देहात्मके ततः पीठे ध्यायेन्मन्त्रस्य देवताम् ॥ दर्शयित्वा ततो मुद्राः स्थापयेदर्घ्यमुत्तमम् ॥ ४०६ ॥ जलप्रपूरितां दक्षे प्रोक्षणीं स्थापयेत्ततः ॥ तत्राल्पमल्पं शङ्खाम्बु तत्तद्देवरतो न्यसेत् ॥ ॥ ४०७ ॥ पाद्यमाचमनीयञ्च मधुपर्कञ्च मन्त्रवित् ॥ ततो मूलाम्बुना मन्त्री प्रोक्षण्यद्भिः समाहितः ॥ ४०८ ॥ स्वात्मानं मण्डलञ्चान्यत्पूजोपकरणादिकम् ॥ प्रोक्षयेद्गन्धपुष्पाद्यैर्देशे स्वे देशिकोत्तमः ॥ ४०९ ॥ योगपीठं समभ्यर्च्य न्यासमार्गेण मन्त्रवित् ॥ पीठान्तञ्च ततस्तत्र पूजयेदिष्टदेवताम् ॥ ४१० ॥ देवतात्मा ततः पञ्च कुर्य्याच्च सुमनोञ्जलीन् ॥ शीर्षे हृदि तथाधारे चरणे सर्वगात्रके ॥ ४११ ॥ पूजयेच्च निवेद्येन विहितैश्चन्दनादिभिः ॥ सर्वोपचारैस्तश्चेष्टं गुर्व्वादिष्टेन वर्त्मना ॥ ४१२ ॥ समापयेदिदं सर्वं प्रोक्षण्यद्भिः समाचरेत् ॥ पानीयम्प्रोक्षणीसंस्थं त्यक्त्वा संसिच्य पूर्ववत् ॥ ४१३ ॥ उपचारैश्चन्दनाद्यैर्मण्डलम्पूजयेद् गुरुः ॥ पूरयेत्कर्णिकां पूर्वं शालिभिस्तण्डुलैस्ततः ॥ ४१४ ॥ दर्भान्न्यसेदुपर्य्येषां साक्षात्तं पूर्वकन्ततः ॥ छिन्नमूलाः कुशा दीर्घाः सप्तविंशतिसङ्ख्यकाः ॥ ४१५ ॥ ब्रह्मग्रन्थियुतास्त्वग्रदेशे कूर्चं इहोच्यते ॥ यजेदाधारशक्त्यादिपीठमन्त्रावसानकम् ॥ ४१६॥ स्वर्णादिरचितन्तत्र कलशं छिद्रवर्ज्जितम् ॥ त्रिगुणात्मकसूत्रेण वेष्टितं सर्वतो बहिः ॥ ४१७ ॥ चन्दनागुरुकर्पूरैर्मध्ये सम्यक् प्रपूरितम् ॥ ध्रुवं जपं विना चात्र स्थापयेद्देशिकोत्तमः ॥ ४१८ ॥ नवरत्नानि निक्षिप्य कुम्भे कूर्चमथोपरि ॥ दूर्वाचन्दनसंयुक्तं विन्यसेद्दक्षिणान्वितम् ॥ ॥ ४१९ ॥ पुष्पं नीलञ्च वैडूर्य्यं विद्रुमं मौक्तिकन्तथा ॥ मूलमन्त्रञ्जपन्ते चिन्तयन्नैक्यमात्मनः॥ ४२० ॥ घटस्य पीठाभेदं च चिन्तयेत्साधकोत्तमः ॥ पञ्चाशदोषधीक्वाथैः पूरयेत्तदनन्तरम् ॥ ४२१ ॥ एकेन सहिता-

स्ताश्च वर्णौषध्यश्च ता इमाः ॥ चन्दनश्चापि रक्ताख्यं चन्दनश्चागुरुस्तथा ॥ ४२२ ॥ कर्पूरोशीरकुष्ठानि वालकञ्चापि केशरम् ॥ कङ्कोलकं जातिफलं जटामांसी मुरा तथा ॥४२३॥ ग्रन्थिकं रोचना जातिपत्रं पिप्पलबिल्वकौ ॥ पृष्ठिपर्णी चित्रकञ्च मुद्गपर्णी कुशाः पुनः ॥ ४२४ ॥ कट्फलं चापि गुञ्जा स्यादुदुम्बरककाश्मरी ॥ पद्मकोषा शङ्खपुष्पी मयूरस्य शिखा तथा ॥ ४२५ ॥ प्लक्षोग्निमन्थश्च तथा शालपर्णी कुशाः पुनः ॥ पाषाणभेदकः कृष्णा शशिपुष्पी च रोहिणी ॥ ४२६ ॥ स्योना च्छिन्नरुहा चैव पाटली मुखकर्णिका ॥ तुलसी शिखरी इन्द्रवल्ली भृङ्गीमिरानृपाः॥ ॥ ४२७ ॥ ततो राजितपातालमूली चापि कृताञ्जलिः ॥ दूर्वा श्रीदेवकन्याख्याभागथो भद्रमुस्तकम् ॥ ४२८ ॥ लवङ्गसहिताश्चैताः पञ्चाशत्सङ्ख्यका इति ॥ दुग्धवृक्षत्वचां क्वाथैर्ब्रह्मभूरुक्तगुग्द्रवैः ॥ ४२९ ॥ गन्धपङ्कप्रसूनादिवासितैर्वा शुभैर्जलैः ॥ क्वाथादितोयैरापूर्य्य शङ्खन्तस्मिन्विलोडयेत् ॥ ४३० ॥ गन्धाष्टकं तस्यतस्य देवस्याथ प्रकीर्तितम् ॥ चन्दनागुरुकर्पूररोचनाकुङ्कुमं मदः ॥ ४३१ ॥ रक्तचन्दनजं वारि गाणपत्यमुदाहृतम् ॥ ह्रीवेरश्चन्दनङ्कुष्ठमगुरुः कुङ्कुमं मुरा ॥ ॥ सिह्लकश्च जटामांसी वैष्णवं तदुदीरितम् ॥४३२॥ चन्दनागुरुकर्पूरचौरकुङ्कुमरोचनाः ॥ जटामांसी कपियुता शाक्तं गन्धाष्टकं विदुः ॥ ४३३ ॥ जलकाश्मीरकुष्ठैश्च रक्तचन्दनचन्दनैः ॥ तगरागुरुकर्पूरैः शाम्भवं चाष्टगन्धकम् ॥ ४३४ ॥ जलकाश्मीरकुष्ठैस्तु रक्तचन्दनचन्दनैः॥तगरागुरुकर्पूरैः सौरं गन्धाष्टकं विदुः ॥ ॥४३५॥ गोरोचना च कांस्यञ्च कर्पूरागुरुकुङ्कुमैः ॥ चन्दनेन मदाभ्याञ्च वारिदेन च पत्रजम् ॥४३६॥ गन्धाष्टकस्य संयोगात्सामर्थ्याद्देशिकस्य च ॥ सशक्तिकजलं कुम्भे भवेदेवं विदुर्बुधाः ॥ ४३७ ॥ आदौ कृशानुसम्बान्धिकला दश समर्चयेत् ॥ धूम्रार्चिरुष्मा ज्वलिनी ज्वालिनी विस्फुलिङ्गिनी ॥ सुश्रीः सुरूपा कपिला हव्यकव्यवहे उभे ॥ ४३८ ॥ कलाद्वादशकं सौरम्पूजयेत्तदनन्तरम् ॥ तपिनी तापिनी धूम्रा मरीचिर्ज्वालिनी रुचिः ॥ ४३९ ॥ सुषुम्णा भोगदा विश्वा बोधिनी धारिणी क्षमा ॥ कलाषोडशकञ्चान्द्रं यजे-

त्पश्चाद् गुरूत्तमः ॥ ३४० ॥ अमृता मानदा पुष्टा पुष्टिस्तुष्टी रतिर्धृतिः ॥ शशिनी चन्द्रिका कान्तिर्ज्योत्स्ना श्रीःप्रीतिरंगदा ॥ ४४१ ॥ पूर्णा पूर्णामृता कान्तिर्दीपिनाश्वरजाः कलाः ॥ वेदादिभेदे सञ्जाताः कलाः पञ्चाशबिन्दुयुक् ॥ ४४२ ॥ सन्निधाप्य प्रतिष्ठाप्याभ्यर्चयेत्क्रमशस्तु ताः ॥ निवृत्तिः प्रतिष्ठा विद्या शान्तिर्क्रद्धिश्च दीपिका ॥ ४४३ ॥ रेचिका मोचिका पारा सूक्ष्मासूक्ष्मामृता तथा॥ज्ञानामृताप्यायनी च व्यापिनी व्योमरूपिका ॥ ४४४ ॥ अनन्ता सृष्टिर्क्रद्धिश्च स्मृतिर्मेधा च कान्तिका ॥ लक्ष्मीर्द्युतिः स्थिराच्छिन्तिस्सिद्धिर्जरा च पालिनी ॥ ४४५ ॥ क्षान्तीश्वर्य्यौ रतिः कामा वरदाह्लादिनी तथा॥दीर्घा तीक्ष्णा च रौद्री च भया निद्रा च तन्द्रिका॥ ४४६॥ क्षुत्क्रोधिनी क्रियोत्कारी मृत्युः पीता सितारुणा ॥ असिता च तथानन्ता मध्येमध्ये प्रपूजयेत् ॥ ४४७ ॥ हंसः शुचिषदित्यादि प्रतद्विष्णुस्तवेति च ॥ त्र्यम्बकं चैव गायत्रीं विष्णोर्योनिं तथैव च ॥ ४४८ ॥ तारस्य पंचभेदोत्थ कलानां पूजने सुधीः ॥ कलादशकमावाह्य सृष्टयाद्यं सन्निधाप्य च ॥ ४४९॥ हंसः शुचिषदित्यादि ऋचं सञ्जप्य पूजयेत् ॥ प्राणसंस्थापनं कृत्वा कलानां पूजयेच्च ताः ॥ ४५० ॥ एवं जरायास्तीक्ष्णायाः पीताद्याश्च विधानवित् ॥ निवृत्त्याद्याश्चापि यजेदुक्तयुक्त्या विचक्षणः ॥४५१॥ अकारोकारकौ प्रोक्तौ-मकारो बिन्दुनादकौ ॥ शक्तिः शान्तिस्त्विमे सप्त ध्रुवं भेदाः प्रकीर्त्तिताः ॥४५२ ॥ अन्तिमौ द्वाविमौ भेदौ पृथगेव समीरितौ ॥ अथ त्वश्वत्थपनसचूतानां पल्लवान्दृढम् ॥ ४५३॥ बन्धयेदिन्द्रवारुण्या लतयास्ये घटस्य च॥ कल्पवृक्षधिया तं च भावयेत्कलशोपरि ॥ ४५४ ॥ पात्रं तण्डुलसम्पूर्णं नारिकेलफलान्वितम् ॥ कल्पवृक्षफलं ह्येतत्स्थापयेदनया धिया ॥ ४५५ ॥ पट्टवस्त्रयुगेनाथ वेष्टयेत्कलशं ततः॥एतत्प्रधानकुम्भस्य स्थापनं परिकीर्त्तितम् ॥ ४५६ ॥ अथ पूर्वादिकाष्ठासु तोरणानां समीपतः ॥ यथेच्छया मण्डलानि कुर्य्यादष्टदलानि च ॥ ४५७ ॥ तदूर्ध्वं शालिपुञ्जं तु प्रतिद्वारं समाचरेत् ॥ तदूर्ध्वं पूर्णकलशं तत्र चैतान्प्रपूजयेत् ॥४५८॥ प्राग्बुधं च वरां दक्षे पश्चाद्वाक्पतिमुत्तरे ॥ विघ्नेशमथ चाग्नेय्यां दिक्षु कुम्भांस्तु विन्यसेत्॥ ४५९॥

अमूर्तं दुर्जयं सिद्धार्थकं मङ्गलमर्चयेत् ॥ पुना रुद्रादिकाष्ठासुक्रमादुद्रादिकान्यजेत् ॥ ४६० ॥ लोकपालान्मण्डलेषु कुम्भोपरि तथैव च ॥ ऐरावतं पुण्डरीकं वामनं कुमुदाञ्जनौ ॥ ४६१ ॥ पुष्पदन्तं सार्वभौमं सुप्रतीकं तदग्रतः ॥ ततो गुरुः स्ववेद्यां तु गत्वा स्वस्यासने विशेत् ॥ ॥४६२॥ सञ्चिन्त्य मूलमन्त्रेण मूर्तिं तस्मिन्गुरूत्तमः ॥ तस्यां मूर्त्तौ समावाह्य पूजयेदिष्टदेवताम् ॥ ४६३ ॥ स्मृत्वा मूलमनुं मन्त्री मातृकासु यथा ततः ॥ निर्गमय्य च चैतन्यं नासिकाग्रविनिर्गतम् ॥ ४६४ ॥ अञ्जलौ मातृकापद्मं महापुष्पान्विते गुरुः ॥ मस्तकान्तं समुत्थाप्य तस्यामावाहयेत्ततः ॥ ४६५ ॥ संस्थापनं सान्निधानं सान्निरोधं ततश्चरेत् ॥ सम्मुखकिरणं चापि शकलीकरणं ततः ॥ ४६६ ॥ ततोवगुण्ठनं कार्य्यममृतीकरणं ततः ॥ परमीकरणं कुर्य्यात्क्रमशस्तस्य मुद्रिकाः ॥ ४६७ ॥ विदध्याच्च क्रमात्तत्तदुपचारान्प्रकल्पयेत् ॥ आसनादिप्रसूनान्तानुपचारान्प्रकल्प्य च ॥ ४६८ ॥ ततो मन्त्रविधानेषु प्रोक्ताङ्गावरणान्यपि ॥ सर्वान्ते लोकपालानां[1] तदस्त्राणां च पूजनम् ॥ ४६९ ॥ विधाय पूजामेवं हि धूप दीपनिवेद्यकैः॥ कृते निवेद्ये च ततो मण्डलम्परितः क्रमात् ॥ ४७० ॥ प्रवालांकुरपत्राणि स्थापनीयानि मन्त्रिणा ॥ वेदिकाया दक्षभागे कृत्वा स्थाण्डिलमुत्तमम् ॥ ४७१ ॥ संस्थाप्य वह्निं संस्कृत्य वैश्वदेवं समारभेत् ॥ यथाविधि ततस्तत्र गन्धाद्यैर्देवतां यजेत् ॥ ४७२ ॥ तत्र प्रणवपूर्वाभिर्हुत्वा व्याहृतिभिः क्रमात् ॥ जुहुयान्मूलमन्त्रेण पायसेन घृतेन च ॥ ४७३ ॥ पञ्चविंशतिभिः पश्चाद्धुत्वा व्याहृतिभिः[2] क्रमात् ॥ सम्पूज्य तां चन्दनाद्यैः पीठमूर्त्तौ निधापयेत् ॥ ४७४ ॥ अग्निं विसृज्य इष्टेन पायसेन बलिं हरेत् ॥ पार्षदेभ्यश्चन्दनादिपुष्पाक्षतसमन्वितम् ॥४७५॥ तत उत्थाप्य नैवेद्यं तत्स्थलं शोधयेत्सुधीः ॥ पुनर्यजेच्चोपचारैः पञ्चभिर्दर्शयेत्ततः ॥ ४७६ ॥ दर्पणं व्यजनं

---

१ लोकपाला इन्द्राग्नियमनिर्ऋतिवरुणवायुकुबेरेशानानन्तब्रह्माणः एतेषां क्रमतोऽस्त्राणि वज्रशक्तिदण्डखड्गपाशांकुशगदात्रिशूलचक्रपद्मानि यथा॥ वं वज्रायनमः इत्यादि ।

२ ॐॐस्वाहा ॐभूःस्वाहा ॐभुवः स्वाहा ॐस्वःस्वाहा ॐभूर्भुवस्स्वःस्वाहा अयं व्याहृतिहोमः।

दिव्यया ॥ ५१५ ॥ तच्चैतन्यं स्थितं स्वास्मिंस्तस्मिंस्तच्चैव योजयेत् ॥ हुनेन्महाव्याहृतिभिस्ततो देशिकसत्तमः ॥ ५१६ ॥ अंगप्रवृत्त्या वृत्तीनां हुनेद्भूयो घृतेन वै ॥ ब्रह्मार्पणाख्यमन्त्रेण सर्वकर्म्मच्छिदे सुधीः ॥५१७॥ जुहुयादाहुतीरष्टौ केवलाज्येन मन्त्रवित् ॥ हुत्वा पूर्णाहुतिं मन्त्री स्तुत्वा मूलाणुना ततः ॥ ५१८ ॥ अग्निं सम्प्रार्थ्याग्निसाङ्गमन्त्रेणैकाहुतिं हुनेत् ॥ सर्पिषा स्रुवमापूर्य्य पुष्पञ्चोपर्य्यधोमुखम् ॥ स्रुवोपरि स्रुवन्दत्त्वा पुष्पन्तत्र प्रपातयेत् ॥ ५१९ ॥ सव्योत्तरकराभ्यां च सम्पुटाभ्याञ्च शङ्खवत् ॥ होमन्तु मांसमाषाभ्यां तीर्थाह्वाभ्यां च पूर्णताम् ॥ ५२० ॥ कुर्य्यात्स्वाहान्तमूलेन फलान्येन तु वैदिकः ॥ दक्षपादम्पुरस्कृत्य दक्षः पूर्णाहुतिञ्चरेत् ॥ ५२१ ॥ शक्तिहोमे वाममार्गी वामपादञ्च सर्वतः ॥ पुनः सम्पूज्य गन्धाद्यैर्मूलमन्त्रेण मन्त्रवित् ॥ ५२२ ॥ कुण्डादुद्वास्य चाचार्य्यो देवतां कलशे न्यसेत् ॥ साङ्गां सावरणां तत्र पूजयेच्च यथाविधि ॥ ५२३ ॥ सप्त व्याहृत्यग्निजिह्वाङ्गमूर्तीनामथैक्यकम् ॥ दुग्धेन परिषिच्याग्निं प्रार्थयीत ततो गुरुः ॥ ५२४ ॥ भोभो वह्ने महाशक्ते सर्वकामप्रदायक ॥ कर्म्मान्तरेपि सम्प्राप्ते सान्निध्यं कुरु सादरम् ॥ ५२५ ॥ इति मन्त्रेण सम्प्रार्थ्य चाग्निमुद्वासयेदपि ॥ ततो ब्रह्माणमुद्वास्य ब्राह्मणाय प्रपादयेत् ॥ ५२६ ॥ द्वात्रिंशत्पलमात्रेण निर्मितं ताम्रपात्रकम् ॥ तण्डुलैस्तत्समापूर्य्य सहिरण्यं सदक्षिणम् ॥ ५२७ ॥ दद्याद्विप्राय तत्तुष्ट्यै पूर्णपात्रमितीरितम् ॥ ततः परिस्तरानग्नौ परिधीन्निक्षिपेन्न तु ॥ ५२८ ॥ नित्ये नैमित्तिके तांस्तु क्षिपेद्देशिकसत्तमः ॥ वस्त्रेण नेत्रमन्त्रेण शिष्यनेत्रं निबध्यते ॥ ५२९ ॥ कुण्डाद्धस्तं समाधाय नयेन्मण्डलसन्निधौ ॥ सुमनोभिः प्रपूर्यास्य ह्यञ्जलीन्क्षेपयेद्धरे ॥ ५३० ॥ मूलमन्त्रोच्चारपूर्वं देवताप्रीतये गुरुः ॥ नेत्रबन्धमपास्योपवेशयेत्कुशसंस्तरे ॥ ५३१ ॥ ततश्च पाठयेच्छिष्यं मन्त्रमेनं गुरूत्तमः ॥ गुरुभक्तियुतो ब्रूयाच्छिष्यः श्लोकञ्च तत्र वै ॥ ५३२ ॥ अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जनशलाकया ॥ चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥ ५३३ ॥ अन्ते पूजाविधानेन स हरेज्जनयेच्च तम् ॥ शिष्यो

इत्तस्य मन्त्रस्य न्यासान्देहे परिन्यसेत्॥ ५३४ ॥पञ्चोपचारैरभ्यर्च्य कलशे स्वेष्टदेवताम् ॥ तन्त्रोक्तवर्त्मना तत्र सकलाकृतिमाचरेत् ॥ ५३५ ॥ अथो-पवेशयेच्छिष्यं भूषितं मण्डलान्तरे ॥ कुम्भास्यस्थसुरद्रूंश्च मूर्द्धन्यस्य शिशो-र्गुरुः ॥ ५३६ ॥ अथ पञ्चनिनादैश्च विप्राशीर्वचनैस्सह ॥ सुस्थितं नियता-त्मानं सिञ्चेत्कलशपुष्पकैः ॥ ५३७॥ येन प्रकारेण सुरा योजिताश्च सुधा-मयैः ॥ तोयैरक्षरसंयुक्तैर्घटैस्तेनैव वर्त्मना ॥५३८ ॥ अथ शिष्यश्चाभिषिञ्चे-दाशु तं सम्प्रदायये ॥ गृहीत्वाभ्यर्चितं पूर्वं करकं मन्त्ररूपिणम् ॥५३९ ॥ तत्तोयैरभिषिञ्चेत्तं सुशिष्यं देशिकोत्तमः॥जलेन शिष्टेन शिशुं गुरुराचामयेत्ततः ॥ ५४० ॥ तद्देवतास्वरूपञ्च विदध्यात्सकलीकृतम् ॥ वाससी विमले रम्ये परिधायाज्ञया गुरोः॥५४१॥आचम्य निकटे तस्या गच्छेत्सम्यङ्मनुं ततः ॥ दक्षकर्णे वदेद्विद्वान्विप्रस्योङ्कारपूर्वकम् ॥५४२॥ अन्येषान्तु वदेदेवमेव मन्त्रं विचक्षणः ॥ स्वयं ज्योतिर्मयीं विद्याङ्गच्छन्तीं भावयेद् गुरुः ॥ ५४३ ॥ आगताम्भावयेच्छिष्यो देवोस्मीति विशेषतः ॥ अष्टोत्तरशतं शिष्यः प्रजपेद् गुरुणोदितम् ॥ ५४४ ॥ अष्टाविंशतिवारं वा चाष्टकृत्वोथ वा जपेत् ॥ गुरु-देवात्ममन्त्राणामैक्यं शिष्यो विभावयेत् ॥ ५४५ ॥ प्रणामं गुरवे कुर्य्यात्सा धको भक्तिमान्मुहुः ॥ साष्टाङ्गश्चाथ पञ्चाङ्गः पूजाकर्म्मसु सम्मतः॥५४६॥ हस्ताभ्याञ्चैव जानुभ्यां प्रणामो वक्षसा तथा ॥ मूर्ध्ना दृष्ट्या तथा चैव चित्ते-नाष्टाङ्ग ईरितः ॥ ५४७ ॥ हस्तजानुशिरोवाक्यदृष्ट्यः पञ्चाङ्ग ईरितः ॥ आचार्य्याज्ञां सदा कुर्य्यात्ततः शिष्यो विचार्य्य च ॥ ५४८॥ अलङ्कारांश्च वासांसि दद्यादृत्विग्भ्य आदरात्॥ईश्वरार्पणबुद्ध्या च द्विजाशीर्भिश्च नन्दितः ॥ ५४९ ॥ प्रदद्याद्गुरवे शिष्यः स्वधनार्धं तदर्धकम् ॥ दशांशं वा प्रदद्याच्च वित्तशाठ्यविवर्ज्जितः॥५५०॥गोभूहिरण्यविपिनगृहक्षेत्रादिकं पुनः॥अक्लेशाद न्नवस्त्रादि दद्याद्वित्तानुसारतः ॥५५१॥ प्रकारान्तरमालम्ब्य गुरुं यत्नेन तोष-येत् ॥ तदधीनमना नित्यं तच्चिन्तनपरायणः ॥ ५५२ ॥ तत्पादाब्ज भूषो भवेत्साधकसत्तमः ॥ ततो नानाविधैर्भक्ष्यैर्लेह्यैश्चोष्यैस्तथापरैः ॥५५३॥ ब्राह्मणान्भोजयेत्सम्यक् प्रदद्याद्भूरिदक्षिणाम् ॥ एवं क्रियामयी दीक्षा सम्प-

द्वात्री निरूपिता ॥५५४॥ राज्ञां धनाढ्यवैश्यानां विप्राणां व्यवसायिनाम् ॥ अयन्दीक्षाक्रमः प्रोक्तो भोगयुक् सिद्धिमिच्छताम् ॥ ५५५ ॥ अथ वर्णमयीं दीक्षां शृण्वनुज्ञानदायिनीम् ॥ यत्प्रकृत्यात्मतत्त्वञ्च वर्णानां समुदीरितम् ॥ ॥ ५५६ ॥ तादृक्तत्त्वं शरीरस्य प्रोक्तमेवास्ति देशिकैः ॥ ततस्तनौ शिशोर्न्यस्येद्वर्णान्देशिकसत्तमः॥५५७॥ संहरेद्वैपरीत्येन वर्णान्स्वस्थानसंस्थितान् ॥ देशिकेन्द्रः स्वसामर्थ्याद्वापयेद्देवतात्मताम् ॥ ५५८ ॥ देवतात्मा भवेच्छिष्यस्तदा संलीनतत्त्वतः॥ अथ वक्ष्ये कलादीक्षामणिमाद्यष्टसिद्धिदाम्॥५५९॥ वेदे पञ्चकला दीक्षा दक्षेष्टत्रिकला मता ॥ कुपञ्चाशत्कला वामे सिद्धमन्त्रगुरोस्तु सा ॥ ५६० ॥ ग्राह्या द्रुतं सिद्धिकर्त्री विपरीता विपर्य्ययात् ॥ कला निवृत्तिप्रमुखा भूतानां पञ्च चेरिताः ॥ ५६१ ॥ शिष्यकाये भूतमये वेधयेत्ताः क्रमात्सुधीः॥पादादिजानुपर्य्यन्तं निवृत्तिस्संस्थिता कला ॥ ५६२ ॥ जान्वोः सकाशादानाभि प्रतिष्ठाख्या कला स्मृता ॥ नाभितः कण्ठपर्य्यन्तं विद्याख्या संस्थिता कला ॥ ५६३ ॥ कण्ठतो ह्याललाटन्तु शान्त्याख्या संस्थिता कला ॥ भालाच्छिरोवधि प्रोक्ता शान्त्यतीता कला तथा॥५६४॥संहृतिक्रमतो विद्वान्वेधयेत्स्थानतोन्यतः॥स्थाने स्वीयाज्ञयाचैव दीक्षा पञ्चकला स्मृता ॥ ५६५ ॥ अष्टात्रिंशत्कला दीक्षा युक्तिं शृण्वन्तु देवताः ॥ क्रमेण कादिका वर्णा यत्र द्वादश संस्थिताः ॥ ५६६ ॥ विलोमा भादिका यत्र तत्र स्थानद्वये कलाः ॥ भावनीयास्तु सूर्य्यस्य षोडशाशु विधोस्तथा ॥ ५६७ ॥ यकारादिस्थले वह्नेर्भावनीयाः कला दश ॥ ततो वर्णकलानान्तु वर्णस्थानाच्च संहृतिः ॥ ५६८ ॥ पुनश्च जनयेच्छिष्यः कलादीक्षाविधिस्त्वयम्॥कौलिके वाममार्गे चावेददीक्षा फलप्रदा ॥ ५६९॥ अन्यास्ता दक्षिणे मार्गेऽन्यथा तु पातितो भवेत् ॥ दीक्षां वेदमयीं वक्ष्ये यां लब्ध्वा सुखदाञ्जनः ॥ ५७० ॥ तत्काल एव संसारे जीवन्मुक्तोभिजायते ॥ मूलाधारे तु शिष्यस्य ध्यायेत्कञ्जं चतुर्दलम् ॥ ५७१ ॥ तस्य मध्ये त्रिकोणन्तु तन्मध्ये चापि कुण्डलीम् ॥ त्रिरावर्णमयीं देवीं विद्युत्पुञ्जस्वरूपिणीम् ॥ ५७२ ॥ महादेवमयीं साक्षाज्ज्ञानमात्रेण रूपिणीम् ॥ अणोरणीयसीं देवीं चक्रषट्कप्रभेदिनीम् ॥५७३॥

सुषुम्णावर्त्मना दिव्यां यान्तीं शिवगृहम्प्रति ॥ सान्तवादिदलस्थार्णान्पद्मस्थाने समाहरेत् ॥५७४॥ षड्दले कमले तन्तु लान्तबाद्यर्णयुग्दले ॥ स्वाधिष्ठाने गुरुस्सम्यग्योजयित्वा तु वेधयेत् ॥ ५७५ ॥ तदर्णानानयेद्बिन्दौ बिन्दुन्तन्नाभिपङ्कजे ॥ फान्तडाद्यर्णसंयुक्ते दिग्दले वेधयेत्स्वयम् ॥ ५७६ ॥ वर्णास्तान्योजयेद्रुद्रे रुद्रं तं हृत्सरोरुहे ॥ ठान्तकाद्यर्णपत्राब्जे वेधयेदीश्वरे स्वयम् ॥ ५७७ ॥ वर्णास्तानाहरेत्तस्मिन्कण्ठपद्मे च तं तथा ॥ कलादलमये पद्मे स्वरान्संयोज्य यत्नतः ॥ ५७८ ॥ सदाशिवेथ संयोज्य तं तु भ्रूमध्यपद्मके ॥ द्विदले लक्षसंयुक्ते वेधयित्वा तु देशिकः ॥ ५७९ ॥ शक्त्या सहैवमात्मानं नयेत्परशिवावधि ॥ देशिकाज्ञावशः शिष्यो दग्धाज्ञानस्तदा क्षितौ ॥५८०॥ पतेदवाप्तविज्ञानः सर्वज्ञो जायते ततः ॥ सदाशिवः स्वयंभूयात्सत्यमेव न संशयः ॥ ५८१ ॥ इयं ज्ञानप्रदा प्रोक्ता दीक्षा वेदात्मिका शिवा ॥ गुरुः स्वयं गुरुं ध्यायेत् स्वहस्ते शिवरूपिणम् ॥ ५८२ ॥ मूलविद्यां षडङ्गं च मातृकादिमनुं जपेत् ॥ शिष्यस्य मस्तके दत्त्वा कृपया दक्षिणं करम् ॥ ५८३ ॥ पश्चादुपदिशेत् प्रोक्ता स्पर्शदीक्षातिसिद्धिदा ॥ सदाशिवे तु चिद्रूपे गुरुश्चित्तं निधापयेत् ॥ ५८४ ॥ मन्त्रान्समस्तांस्तज्जातान्स्वयं ध्यायेत्तदात्मकः ॥ जातो गुरोस्तु कृपया केवलोहं सदाशिवः ॥ ५८५ ॥ इति ध्यायन्नुपदिशेद्वाग्दीक्षा त्वियमीरिता ॥ निमील्य नयने ध्यात्वा परमात्मनि देवताम् ॥ ५८६ ॥ तद्दर्शनानन्दपूर्णनेत्राभ्यां दर्शयेद् गुरुः ॥ शिष्यं प्रसन्नचित्तः सन्पश्चादुपदिशेदिति ॥५८७॥ मन्त्रसिद्धस्य सिद्ध्यै स्याद्दग्दीक्षेयं फलप्रदा॥ गुरोरालोकमात्रेण भाषणात्स्पर्शनादपि ॥ ५८८ ॥ सद्यः सञ्जायते ज्ञानं सा दीक्षा शाम्भवी स्मृता॥ भुक्तिमुक्तिप्रसिध्यर्थम्परीक्ष्य विधिवद् ग[illegible] ॥५८९॥ पश्चादुपदिशेन्मन्त्रमन्यथा निष्फलो भवेत् ॥ अन्यायेन च य[illegible]द्गृह्णात्य-

---

लिंगदेशे षड्दलं कमलं तत्स्वाधिष्ठानं नाम तद्दलेषु ( बं भं मं यं रं लं ) पुनर्नाभौ दशदलं कमलमस्ति तत्र ( डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं ) हृदये द्वादश दलं कमलं तद्दलेषु ( कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं) पुनः कण्ठे षोडशदलं कमलं तद्दलेषु अँ आँ इँ ईँ उं ऊं ऋं ॠं लृँ लॄँ एंऐं ओं औं अंअः पुनर्भ्रुवोर्मध्ये द्विदलंकमलमास्ति तद्दलयोर्लक्षं क्रमेण न्यस्यौ ।

न्यायतश्च यः ॥ ५९० ॥ ददतो गृह्णतो वापि कुलशापो भविष्यति ॥ गुरु-
शिष्यावुभौ मोहादपरीक्ष्य परस्परम् ॥ ५९१ ॥ उपदेशं ददद्गृह्णन्त्रानुयातां
पिशाचताम् ॥ अशास्त्रीयोपदेशन्तु यो गृह्णाति ददाति यः ॥ ५९२ ॥
भुञ्जाते तावुभौ घोरान्नरकानेकविंशतिम् ॥ असंस्कृत्योपदेशं तु यः करोति
विमूढधीः ॥ ५९३ ॥ विनश्यन्ति च तन्मन्त्राः सैकते शालिबीजवत् ॥
अनर्हे मन्त्रविज्ञानं न तिष्ठति कदाचन ॥ ५९४ ॥ तस्मात्परीक्ष्य कर्त्तव्यं
चान्यथा निष्फलं भवेत्॥ सच्छिष्यायातिभक्ताय विज्ञानमुपदिश्यते॥५९५॥
तत्प्राप्नोति ब्रवीमि त्वाङ्गोक्षीरान्ते यथा घृतम् ॥ धनेच्छाभयलोभाद्यैरयोग्यं
यदि दीक्षयेत ॥ ५९६ ॥ देवताशापमाप्नोति कृतञ्च विकृतं भवेत् ॥ एवं
दत्त्वा गुरुर्दीक्षां कुर्य्यात्पूर्णाभिषेचनम् ॥ ५९७ ॥ विनयेनाभिषेकेण
साधकः पूर्णबोधताम् ॥ आचार्य्यत्वं च नाप्नोति सद्गतिञ्च सनीहिताम्
॥ ५९८ ॥ तस्माद् गुरुः प्रियं शिष्यं बोधयित्वाभिषेचयेत् ॥ विरच्य विपु-
लांश्चक्रान्मण्डपेतिमनोहरे॥५९९॥ क्षारतोयभृतं कुम्भं स्थापयेच्चक्रमध्यतः॥
अन्येषु कलशांस्तत्र वस्त्रहेमसमन्वितान्॥६००॥ दलेषु विविधाः स्थाप्यास्तत्र
वै चेष्टदेवताम् ॥ अभ्यर्च्य मध्ये चान्तेषु साङ्गावरणदेवताः॥६०१॥स्पृशंश्च
मध्ये कलशमाचार्य्यः प्रपठेदिति॥ साङ्गांश्च चतुरो वेदांस्ततस्तेन जलेन तु
॥ ६०२ ॥ अभिषिञ्चेद्गुरुः शिष्यमिति पूर्णाभिषेचनम् ॥ देवेभ्यः सर्वत-
न्त्राणि तन्त्रेभ्यो मुनयस्तथा ॥ ६०३ ॥ यतो जातास्ततः शिष्यः सर्व-
तन्त्रैकभाजनम् ॥ भवेदाचार्यनामा च कुर्य्यान्नामान्तरं गुरुः ॥ ६०४ ॥
एतादृशस्य यो दीक्षां गृह्णीयात्स तु सिद्धिभाक् ॥ सर्वमन्त्रप्रधानेषु समर्थः स
तु जायते ॥ ६०५ ॥ सर्वे देवा वशास्तस्य वेदे पन्थास्तु सात्त्विकः ॥ एष
एव विधिस्तस्य मार्गः स्याद्दक्षिणाभिधः ॥ ६०६ ॥ विशेषस्तत्र तोयानि
तीर्थानामाहरेत्सुधीः ॥ गङ्गाया यमुनायाश्च सरस्वत्या महोदधेः ॥ ६०७ ॥
सिन्धुगोदावरीरेवाकावेरीभ्यः पृथूदकात् ॥ महेन्द्रजायाः सरयूचर्म्मण्वत्योश्च
पुष्करात्॥६०८॥महानद्या वेदिकायाः क्षिप्रावेत्रवतीजलम्॥ कुरुक्षेत्रस्यगण्ड-
क्याः पूर्णाया मानसस्य च॥६०९॥घटे दत्त्वा जपेन्मन्त्रान्नानातन्त्रगतानपि॥

अभिषिक्तस्तु तैस्तोयैः सिद्धो वै मानवोत्र तु ॥ ६१० ॥ प्रयोगार्थन्तथा-न्यस्य दानार्थमथ वामके ॥ मध्ये तीर्थघटं स्थाप्य शेषास्तोयघटा मताः ॥ ॥ ६११ ॥ ये य आवाहिता देवा गुरुणा तु शुभे घटे ॥ तेते कुर्व्वन्तु सान्निध्यं मन्त्ररूपाश्च तन्मुखे ॥ ६१२ ॥ स्वयं सिद्धो हि कस्मैचिन्मूर्द्धानं नैव नामयेत् ॥ यदर्थं नामितो मूर्द्धा तस्य मृत्युर्न संशयः ॥ ६१३ ॥ वाममार्गे गुरुर्यस्य चेदृक्सिद्धो भवेद्यदा ॥ शिष्यश्च निरहङ्कारः सदा देव-तत्परः ॥ ६१४ ॥ देवतार्थं यस्य नात्र त्रयाभोगे मनो न च ॥ स एव सिद्धो वामे स्यादन्यो निरयभाजनम् ॥ ६१५ ॥ दारिद्रो दुःखितो मूर्खं इहलोके परत्र च ॥ क्रियादीक्षाविधिं कुर्य्याद्यथाशक्त्या गुरूक्तितः ॥ ६१६ ॥ एतत्तत्त्वं समाख्यातं किमन्यच्छ्रोतुमिच्छथ ॥ ६१७ ॥

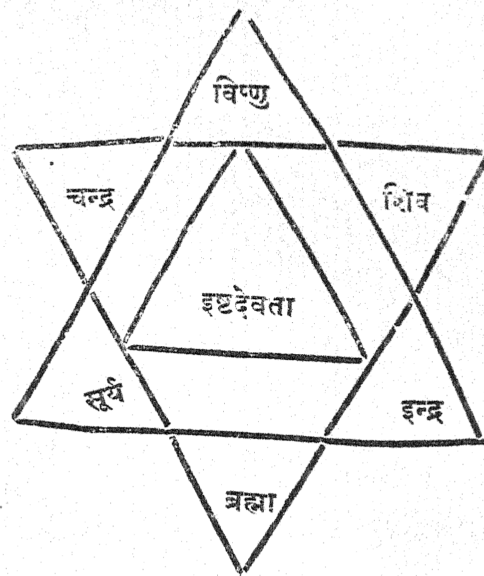
इति श्रीमहामायामहाकालानुमते मेरुतन्त्रे शिवप्रणीते
दीक्षाप्रकाशस्तृतीयः ॥ ३ ॥

---

संज्ञया प्रार्थिता देवी मुनिभिः श्रोतुकामिभिः ॥ तदिष्टसिद्धये तत्र देवं सैवं व्यजिज्ञपत् ॥१॥ देव्युवाच ॥ श्रौतस्मार्तरता एते पृच्छन्ति मुनयः शिव ॥ एतेषां संशयं छिन्धि त्वदृतेन्यः पुमान्न हि ॥२॥ ईश्वर उवाच ॥ पृच्छन्तु ऋषयस्तावद्देवा अपि मनोगतम् ॥ यावत्कालः समायाति जलन्धरवधस्य तु ॥ ३ ॥ मुनय ऊचुः ॥ अग्निः क्व कच देवाश्च हूयन्तेग्नौ सुराः कथम् ॥ तत्प्राप्नुवन्ति तद्भेदा भिन्नाः कस्माद्वदस्व नः ॥ ४ ॥ ईश्वर उवाच ॥ न स्वर्गे न च तीर्थेषु नौषधीषु न भेषु च ॥ ऋषयो देवताः सन्ति मन्त्रा एव तु दे-वताः ॥ ५॥ साधकानां फलं दातुं तत्तद्रूपं धृतं सुरैः ॥ मुख्यं स्वरूपं तेषां तु मन्त्रा एव न चेतरत् ॥ ६ ॥ संस्कृताः सात्त्विका मन्त्राः परत्रेह च शर्म्मदाः ॥ जन्मान्तरे भवेयुश्च बीजरूपा न संशयः ॥ ७ ॥ तत्रापि वैदिका मन्त्राः सुवर्णाः परिकीर्तिताः ॥ न दुर्गतिमवाप्नोति तेषां संसेवनान्नरः ॥ ॥ ८ ॥ द्विजत्वं प्राप्य ये लोके सेवन्ते तान्त्रिकान्मनून् ॥ त्यक्त्वा सुवर्णं दुर्बुद्ध्या ग्राम्यवत्तारचारिणः ॥ ९ ॥ ताररूपास्तारकत्वान्मनवस्तान्त्रिका

अपि ॥ फलप्रदा इहामुत्र न सद्बीजा भवान्तरे ॥ १० ॥ किञ्चिद्राजससत्त्वा ये यातनान्ते पुनस्तु ते ॥ भवन्ति फलदा यद्वद्वटोदुम्बरपिप्पलाः ॥ ॥ ११ ॥ तामसाः प्राकृता मन्त्रा इह लोके महाफलाः ॥ न परत्र यथा द्राक्षाखर्ज्जूरपनसादयः ॥ १२ ॥ तन्मन्त्रैर्यद्धुतं वह्नौ कीदृग्दहति पावकः ॥ ग्रहश्चिनोति तच्छ्रेयो यथा नाड्योऽन्नजं रसम् ॥ १३ ॥ निर्दोषा तु यदा नाडी वहेदन्नरसं लघु ॥ देवयोग्यो ग्रहस्तद्वच्छ्रेयस्संवहते सुरः ॥ १४ ॥ सूर्य्यभात्त्रिषु भेष्वर्कनाड्यां श्रेयोभिवर्द्धते ॥ पोषयेद्दैविकान्मन्त्रानितरान्हन्ति वामवत् ॥ १५ ॥ ततस्त्रिभेषु सौरस्य नाडी बुद्धिविलासकृत् ॥ तस्मात्त्रिषु सितस्यापि वामानामपि पुष्टिदा ॥ १६ ॥ ततस्त्रिभेषु सौरस्य कुर्य्यान्मन्त्रे तु संशयम् ॥ चन्द्रस्य सर्वमन्त्राणां पुष्टिकृच्च ततस्त्रिषु ॥ १७ ॥ ततस्त्रिष्वारनाडी स्यात्फलानान्तु विनाशकृत् ॥ तस्मात्त्रिषु गुरोर्नाडी सत्वरं मन्त्रसिद्धिदा ॥ १८ ॥ राहुनाडी त्रिषु ततो न सत्यैह्यकरे नरे ॥ त्रिष्वतः केतुनाडी तु सद्भूते मन्त्रदेवकृत् ॥ १९ ॥ तिथिवासरसंयोगे गुणशेषे हुताशनः ॥ कौ स्वर्गे कुतले तन्त्रे प्रत्यक्षाग्निस्वरूपकम् ॥ २० ॥ मारयेत्साधकं स्वर्गे हरते भूतले धनम् ॥ प्रत्यक्षाग्निः फलं धत्ते भूमौ वै विश्वरूपकः ॥ २१ ॥ वह्नेस्तु स्थापनं कुर्य्याद्वैदिकः कल्पमार्गतः ॥ तान्त्रिकः कुण्डसंस्कारानष्टादश समाचरेत् ॥ २२ ॥ मूलमन्त्रेण सम्पश्येत्प्रोक्षयेदस्त्रमन्त्रतः ॥ कुशैस्सन्ताडयेत्कुण्डमस्त्रमन्त्रं पठंस्त्रिधा ॥ २३ ॥ ततः कवचमन्त्रेण कुण्डस्याभ्युक्षणं मतम् ॥ अस्त्रमन्त्रेण खननं कुण्डस्याङ्गुलमात्रतः ॥२४॥ अङ्गुष्ठानामिकाभ्यां तां मृदमस्त्रेण चोद्धरेत् ॥ पुनः शुद्धमृदा तं च पूरयेद्धृदयाणुना ॥ २५ ॥ समीकुर्य्यात्ततोऽस्त्रेण सेचयेत्कवचेन तु ॥ काष्ठादिना कुट्टयेत्तन्मन्त्रेण स्यात्तथा दृढम् ॥ २६ ॥ कुशैस्सम्मार्ज्जयेत्कुण्डं ततस्तु कवचाणुना ॥ विलेपनं गोमयाद्यैः कवचेनैव कारयेत् ॥ २७ ॥ कवचे नाभिसूर्य्येन्दुकलाः कुण्डे विचिन्तयेत् ॥ त्रिसूत्रीकृतसूत्रेण वेष्टयेत्प्रतिमेखलम् ॥ २८ ॥ त्रिवारं वर्म्ममन्त्रेण कुण्डपूजां समा-

चरेत् ॥ तारश्चामुककुण्डाय आसनाय नमस्त्विति ॥ २९॥ एषोर्घ्यं इत्यागृहैश्च सकलं पूजनं चरेत् ॥ नाभेश्च मेखलानां च कुर्य्यादेवं प्रपूजनम् ॥ ॥ ३० ॥ सञ्चिन्तयेत्ततोऽस्त्रेण तत्कुण्डं वज्रवद् दृढम् ॥ वह्नेर्ज्वालानिरासाय हृन्मन्त्रेण कुशैस्ततः ॥ ३१ ॥ कुण्डस्य तु चतुर्दिक्षु कुर्य्यान्मार्गचतुष्टयम्॥ अच्छिन्नाग्रैः कुशैरस्त्रमन्त्रितैः कुण्डभित्तिषु ॥ ३२ ॥ भूतप्रेतादिदुष्टानामस्त्रादीनां समाचरेत् ॥ उच्चानन इमे प्रोक्ताः संस्कारा धृतिसम्मिताः ॥ ॥ ३३ ॥ भवेदनेन विधिना कुण्डस्याप्यक्षपाटनम् ॥ वामहोमे तु संस्कारा आद्याश्चत्वार एव हि ॥ ३४॥ त्र्यस्रात्र्यस्रा भवेद्रेखा प्रागुदक् च हृदाणुना ॥ स्मृताश्च प्राङ्मुखाग्राणां देवा विष्ण्वीशवासवाः ॥ ३५ ॥ उदङ्मुखाग्ररेखाणां ब्रह्मसूर्य्येन्दवः क्रमात्!! विलिखेद्दर्भकाण्डेन वाममार्गेस्त्रमन्त्रतः ॥ ३६॥ त्रिकोणे परिषट्कोणंत्रिकोणद्वितयस्य तु ॥ विष्ण्वीशवासवादीनां षण्णां तत्र तु पूजनम् ॥ ३७ ॥ वाममार्गे त्विष्टदेव्यास्त्रिकोणे पूजनं भवेत् ॥ सम्प्रोक्ष्य प्रणवेनाथ योगपीठं समर्चयेत् ॥ ३८ ॥ तद्विधिं सम्प्रवक्ष्यामि मण्डलं चिन्तयेत्तले ॥ कालाग्निरुद्रं तस्योर्ध्वं शक्तियुक्तं विचिन्तयेत् ॥ ३९ ॥ तदूर्ध्वं चिन्तयेत्कूर्म्मं तस्य पृष्ठे वसुन्धराम् ॥ श्वेतद्वीपं तत्र चिन्त्यं सुधासिन्धुसुवेष्टितम् ॥ ४० ॥ मन्दारान्पारिजातांश्च सन्तानान्हरिचन्दनान् ॥ कल्पवृक्षांश्च तत्रैव चिंतयेत्पूजयेदपि ॥ ४१ ॥ एतादृशगृहे चिन्त्यं रम्यं मणिमयं गृहम् ॥ स्वर्णपीठन्तु तन्मध्ये तस्य पादान्विचिन्तयेत् ॥ ४२ ॥ पुरुषार्थास्तु धर्म्मादीन्धर्मो ज्ञानं विरागता ॥ ऐश्वर्य्यमपि चाङ्गानि पीठस्योक्तानि तत्र तु ॥ ४३ ॥ मध्ये विचिंतयेत्पद्ममानन्दमयकन्दकम् ॥ संविन्नालं च तस्योक्ता विकारमयकेसराः ॥ ४४ ॥ प्रकृत्यात्मकपत्राणि पञ्चाशद्वर्णकर्णिका ॥ सूर्य्यस्येन्दोः पावकस्य मण्डलत्रितयं ततः ॥ ४५ ॥ ततः पूर्वादिकाष्ठासु सत्त्वं रजस्तमस्ततः ॥ अन्तरात्मयुतश्चात्मा परमात्मा ततः परम् ॥ ४६ ॥ मायातत्त्वेथ ज्ञानात्मा कलातत्त्वे प्रतिष्ठितः ॥ विद्या-




तत्त्वं परं तत्त्वं योगपीठमितीरितम् ॥ ४७ ॥ स्वाग्रादिप्रादक्षिण्येन तत्पद्म केसरेषु तु ॥ मध्यांतं पूजयेद्देता जयाञ्च विजयां तथा ॥ ४८ ॥ अजिताख्यां चापराञ्च जितां नित्यां विलासिनीम् ॥ दोग्ध्रीमघोराञ्च तथा मङ्गलामथ तत्र तु ॥ ४९ ॥ ह्रींसर्वशक्तिकमलासनाय नम उच्यते ॥ दत्त्वा पुष्पांजलिं कुण्डे पूजयेद्भुवनेश्वरीम् ॥ ५० ॥ आवाहनादिपरमीकरणांतञ्च पूजयेत् ॥ कामोन्मत्तां शिवां तत्र देवीमृतुमतीं तथा ॥ ५१ ॥ गाणेशशैवशाक्तेषु ध्याये-त्सम्पूजयेदिति ॥ वैष्णवे च तथा सौरे लक्ष्मीमृतुमतीं स्मरेत् ॥ ५२ ॥ नारायणस्य संयोगाज्जातमग्निं विचिंतयेत् ॥ आरण्यं विप्रगेहाद्वा दद्यादग्निं कुमारिका ॥ ५३ ॥ सुवासिनी वामहस्तात्कृतशौचा समाहरेत् ॥ पात्रांतरे चापिहिते ताम्रपात्रादिके शुभे ॥ ५४ ॥ अग्निप्रणयनं कुर्य्याच्छरावेणथा नूतने ॥ दद्यादस्त्रेण पात्रेग्निं कवचेन विधाय च ॥ ५५ ॥ जीर्णे शरावे कापाले भिन्नपात्रे तथोल्मुके ॥ नाग्निप्रणयनं कुर्य्याद्व्याधिहानिभयावहम् ॥ ॥ ५६ ॥ क्रव्यादांशञ्च नैर्ऋत्ये त्यजेदस्त्रेण वह्नितः ॥ देवांशं मूलमन्त्रेण स्थापये-द्यतः सुधीः ॥ ५७ ॥ पश्चात्तमग्निं संस्कारैः संस्कुर्य्याद्वीक्षणा-दिभिः ॥ प्रदीपकलिकाकारं तेज आवाहयेत्ततः ॥ ५८ ॥ ऐक्यं चाथ

स्वेष्टदेववह्निभ्यां पार्थिवस्य च ॥ स्मृत्वाग्निबीजन्तेनाथ चैतन्यं योजये ततः ॥ ५९ ॥ ओङ्कारेणाभिमन्त्र्याथ धेनुमुद्रामृतीकृतम् ॥ संरक्ष्य च शरेणाथ कवचेनावगुण्ठयेत् ॥ ६० ॥ ततः सम्पूज्य कुण्डस्य भ्रामयेत्रिः प्रदक्षिणम् ॥ प्रणवेन ततः स्वस्य संमुखं स्वीयकुण्डले ॥ ६१ ॥ देव्या योनौ तत्र जानन्स्पृष्टभूमिश्च देशिकः ॥ शिवबीजमिति ज्ञात्वा निक्षिपेदाशुशुक्षणिम् ॥ ६२ ॥ देवदेव्योराचमनं मैथुनान्ते धिया चरेत् ॥ चिंत्पिङ्गल हनहन पचपच दहदह ॥ ६३ ॥ सर्वं ज्ञापय स्वाहेति तारादिर्जिनवर्णकः ॥ अमुं मनुं प्रभाष्यैव कृशानुं ज्वालयेत्ततः ॥ ६४ ॥ अग्निं प्रज्वलितं वन्दे जातवेदं हुताशनम् ॥ सुवर्णवर्णममलं समिद्धं सर्वतोमुखम् ॥ ६५ ॥ अनेन ज्वलितं मन्त्रेणोपतिष्ठेद्धुताशनम् ॥ मुखेनव धमेदग्निम्मुखादेष व्यजायत ॥ ॥ ६६ ॥ कुशैः पलाशादिपर्णैर्नापवित्रेण केनचित् ॥ ततः सुविन्यसेज्जिह्वा देहे मन्त्रैर्विभावसोः ॥ ६७ ॥ भाललिङ्गोरुमूर्द्धास्यनासानेत्रेषु च क्रमात् ॥ सर्वाङ्गेषु च जिह्वास्ता वक्ष्यन्ते त्रिविधात्मिकाः ॥ ६८ ॥ हिरण्या कनका रक्ता कृष्णा चैव तु सुप्रभा ॥ बहुरूपा चातिरक्ता जिह्वाः सप्तेति सात्त्विकाः ॥ ६९ ॥ अनलादिसबिन्द्वन्तयादिसान्ताक्षरान्विताः ॥ मन्त्री प्रविन्यसेद्भूयो वह्नेरङ्गानि वै क्रमात् ॥ ७० ॥ सहस्रार्चिस्स्वस्तिपूर्ण उत्तिष्ठपुरुषस्तथा ॥ धूमव्यापी सप्तजिह्वो धनुर्धर इतीरिताः ॥ ७१ ॥ न्यसेत्प्रदक्षिणे देहे वह्निमूर्त्यष्टकं क्रमात् ॥ मूर्द्धास्यपार्श्वकट्यंघ्रिकटिपार्श्वांसकेषु च ॥ ७२ ॥ प्रणवादिनमोन्तास्तु अग्नेयपदपूर्वकाः ॥ जातवेदास्सप्तजिह्वो हव्यवाहस्तृतीयकः ॥ ७३ ॥ अश्वोदरजवैश्वानराख्यकोमारतेजसः ॥ विश्वमुखो देवमुखो मूर्त्तयोष्टौ प्रकीर्त्तिताः ॥ ७४ ॥ प्रदक्षिणक्रमेणैव सञ्चिन्त्य च ततो जलैः ॥ मेखलोपरिसंशुद्धैः पुनर्दर्भचतुष्टयैः ॥ ७५ ॥ प्रागग्रैरुदग-

---

१ चित्पिङ्गल हनहन पचपच दहदह सर्वं ज्ञापय स्वाहा अयं चतुर्विंशत्यक्षरोऽग्निमन्त्रः । नालमेखलयोरित्यपि पाठः ।

ग्रैश्च हित्वा पूर्वाः परिस्तरेत् ॥ एकमेखलके कुण्डे मेखलाधः परिस्तरेत ॥ ॥ ७६ ॥ द्विमेखले द्वितीयायां मध्यमायां त्रिमेखले ॥ स्थण्डिले सिकतानां तु बाह्यभूमौ परिस्तरेत् ॥ ७७ ॥ आत्ममेखलयोर्मध्ये परिधिस्थापनस्य च ॥ रन्ध्रं कुर्य्यात्तथा विद्वान्मध्यमामेखलोपरि ॥ ७८ ॥ पलाशकाश्मरी बिल्वविकङ्कतसमुद्भवान् ॥ एकवृक्षोद्भवानार्द्रान्परिधीन्बाहुमात्रकान् ॥ ॥ ७९ ॥ प्राणानायम्य विधिवत्परिस्तार्य्य कुशान्तरैः ॥ स्वगृह्योक्तविधानेन वायुदेशाच्च पूर्वतः ॥ ८० ॥ स्रुक्स्रुवौ च प्रणीता च प्रोक्षणीपात्रयुग्मकम् ॥ आज्यस्थालीञ्च परिधींस्तथैव कुशमुष्टयः ॥ ८१ ॥ अधोमुखानि पात्राणि होमद्रव्यं बलिं तथा ॥ गन्धपुष्पाक्षतादीनि सर्वाण्यासादयेत्ततः ॥ ८२ ॥ तान्यभ्युक्ष्य पवित्रेण चासनानि विधाय च ॥ प्रोक्षणीपात्रयुगलं परिपूर्य्य शुभाम्बुना ॥ ८३ ॥ दत्त्वा तत्र पवित्रांश्च परिपूर्य्य निधापयेत् ॥ दिश्युत्तरस्यां तत्पात्रं प्रणीतेत्युच्यते बुधैः ॥ ८४ ॥ ततः किञ्चित्प्रणीताम्बु प्रोक्षण्याधाय तज्जलैः ॥ यज्ञसाधनसम्भारान् प्रोक्षयेन्मूलमन्त्रतः ॥ ८५ ॥ वृणुयाद्ब्राह्मणं शाक्तं देवतामन्त्रदीक्षितम् ॥ कुण्डस्य दक्षिणे भागे वेशयेत्तं कुशासने ॥ ८६ ॥ अमुकामुकगोत्रोहममुकामुकगोत्रिणम् ॥ दीक्षाङ्गभूतहोमेस्मिन्ब्राह्मणं त्वां वृणे त्विति ॥ ८७ ॥ वस्त्रालङ्कारादिकेन वृत्वा तं परिपूजयेत् ॥ कुर्य्यात्कुशबटुं चापि लभ्यते ब्राह्मणो न चेत् ॥ ८८ ॥ कुण्डमध्ये तु षट्कोणे वर्णितं स्वर्णकर्णिकम् ॥ नानाकेशरसंयुक्तं चतुर्द्वारसमावृतम् ॥ ८९ ॥ चिन्तयेदष्टदलकं चतुरस्रतयावृतम् ॥ पूजापीठन्तु तद्वह्नेस्तत्र मण्डलकादिना ॥ ९० ॥ ज्ञानात्मानं योगपीठं सम्पूज्याष्टदलेषु च ॥ प्रादक्षिण्येन मध्यान्तं पीतां श्वेतां तथारुणाम् ॥ ९१ ॥ कृष्णां धूम्रां च तीव्रां च पूजयेद्विस्फुलिङ्गिनीम् ॥ रुचिरां ज्वालिनीञ्चेति सर्वपीठम्प्रपूजयेत् ॥ ९२ ॥ सर्वशक्तिकमलासनाय हृद्द्वादशाक्षरः ॥ समस्तपीठपूजायां वह्निमन्त्र उदाहृतः ॥ ॥ ९३ ॥ ततो हुताशनन्ध्यायेद्वरस्वास्तिकशक्तितः ॥ अभयेन च संयुक्तै-

भुजैः सम्यग्विराजितम् ॥ ९४ ॥ सिन्दूरवर्णं पद्मस्थं स्वर्णालङ्कारभूषितम् ॥ त्रिनेत्रञ्च जटामौलिम्पीतवस्त्रारुणस्रजम् ॥ ९५ ॥ ध्यात्वैवं मनुनानेन पूज-

---

चक्रे त्रिकोणं वह्नियन्त्रं लिखितमस्ति पुनरग्निपूजासमये न्यासानपि कुर्य्यात् स यथा । ॐ सहस्रार्चिषे अङ्गुष्ठाभ्यां नमः ॥ ॐस्वस्तिपूर्णाय तर्जनीभ्यां नमः ॥ ॐउत्तिष्ठपुरुषाय मध्यमाभ्यां नमः ॥ ॐधूमव्यापिने अनामिकाभ्यां नमः ॥ ॐसप्तजिह्वाय कनिष्ठिकाभ्यां नमः ॥ ॐ धनुर्धराय करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः ॥ इति करन्यासः ॥ ॐसहस्रार्चिषे हृदयाय नमः ॥ ॐ स्वस्तिपूर्णाय शिरसे स्वाहा ॥ ॐ उत्तिष्ठपुरुषाय शिखायै वषट् ॥ ॐ धूमव्यापिने कवचाय हुम् ॥ ॐ धनुर्धराय अस्त्राय फट् ॥ इति हृदयादिन्यासः ॥ एतन्न्यासद्वयकरणान्ते यन्त्रपूजनम् ॥

**बं ब्रह्मणे नमः पं पद्माय नमः ।**

इं इन्द्राय नमः
वं वज्राय नमः

ॐ वैश्वानर जातवेद इहावह लोहिताक्ष सर्वकर्माणि साधयस्वा ॥ हिं हिरण्यायै नमः
ज्वां ज्वालिन्यै नमः

**अं अनन्ताय नमः चं चक्राय नमः ॥**

येदुपचारकैः ॥ वैश्वानर जातवेद इहावह लोहिताक्ष ॥ ९६ ॥ सर्वकर्म्माणि साधय स्वाहान्तः प्रणवादितः ॥ सप्तविंशत्यक्षरोयं मन्त्रः स्याद्वह्निपूजने ॥ ॥ ९७ ॥ ततः षट्कोणमध्ये च जिह्वाध्यानं च पूजनम् ॥ जिह्वाज्वालारुचः सर्वा वराभयकरास्तथा ॥ ९८ ॥ ऐश्यां हिरण्या स्वर्णाभा शान्तिपौष्टिककर्म्मणि ॥ वैडूर्य्यवर्णा कनका प्राच्यां स्तम्भनकार्य्यवृत् ॥ ॥ ९९ ॥ विद्वेषे तरुणादित्यनिभा रक्ताग्निकोणके ॥ कृष्णाञ्जनचयप्रख्या नैर्ऋत्यां मारणक्षमा ॥ १०० ॥ सुप्रभा पद्मरागाभा वारुण्यां धनदायिका ॥ अतिरक्ता जयाभासा वश्ये वायुदिशङ्गता ॥ १०१ ॥ बहुरूपा तु षट्कोणमध्ये षड्वर्णसंयुता ॥ अनेककार्य्यसंसिद्धिर्नाशकर्त्री च सा मता ॥ १०२॥ यथाकार्य्यं तथा जिह्वा दृश्यते चेत्स्वदिग्गता ॥ज्वालारूपा तथा सिद्धिर्विपरीते विपर्य्ययः ॥ १०३ ॥ प्रभा दीप्तिः प्रकाशा च मरीचिस्तापिनी तथा॥कराला लेलिहा चेति जिह्वा वैष्णवकर्म्मणि ॥ १०४ ॥ ईशप्राग्वह्निनैर्ऋत्यपश्चाद्वायव्यमध्यतः ॥संस्थिताः सकला जिह्वा वरदाभयसत्कराः ॥१०५॥ एवं पूजां विधायाशु देवाग्रे चापि दिक्षु च ॥ पूजयेच्च षडङ्गानि पत्रेष्वावृत्तिदेवताः ॥ १०६ ॥ इन्द्रादीन्सायुधान्पश्चात्सम्पूर्णाग्निं पुनर्यजेत् ॥ ततश्चाधोमुखौ कृत्वास्रुक्स्रुवौ च प्रतापयेत् ॥ १०७ ॥ कुशाग्रैस्तु तयोरग्रं मध्यं मध्यैश्च-मार्ज्जयेत् ॥ मले मूलैस्त्रिधा चैव मार्ज्जयित्वा प्रतापयेत् ॥ १०८ ॥ धृत्वा तौ वामहस्तेन प्रोक्षयेत्प्रोक्षणीजलैः ॥ दक्षिणेन कराग्रेण पुनः सन्तापयेच्चतौ ॥ १०९ ॥ कुशान् क्षिप्त्वा ततो वह्नौ स्वदक्षे तु कुशास्तरे ॥ संस्थाप्य स्रुक्[illegible] पश्चाद्धृतसंस्कारमाचरेत् ॥ ११० ॥ समादाय घृतस्थालीं मन्त्रेण से[illegible] ततः ॥ घृतं तत्र समापूर्य्य वीक्षणादिसुसंस्कृतम् ॥ १११ ॥ वायव्ये बाह्यतोङ्गारान्कृत्वा तेषु हृदा न्यसेत् ॥ तापनं तु समुद्दिष्टं कुशद्वयमत क्षिपेत् ॥ ११२ ॥ अभिद्योतनमेतत्स्यादुद्योतनमथोच्यते ॥ कुशं प्रज्वलितं चोह्य दर्शयेत्तं हृदा क्षिपेत् ॥ ११३ ॥ वह्नावुद्वास्य च घृतमङ्गाराग्निषु निक्षिपेत् ॥ अपसंस्पृश्य मन्त्रज्ञः कुर्य्यादुत्प्लवनं ततः ॥ ११४ ॥ अस्त्रमन्त्रं जपेन्मंत्री कुशौ प्रादेशमात्रकौ ॥ अङ्गुष्ठानामिकाभ्यां च गृहीत्वा घृतमुत्प्लु-वेत् ॥ ११५ ॥ ततो दृढं कुशाभ्यान्तु स्वाभिमुख्येन सम्प्लवेत्॥ घृतं तत्स्या-

सम्प्लवनं षट् संस्कारा इतीरिताः॥ ११६॥उत्तमं गोघृतं प्रोक्तं मध्यमं महिषी-भवम् ॥ अधमं छागलीजातं निषिद्धं त्वेडकादिजम् ॥ ११७ ॥ क्रीतं यदापणे चाज्यं स्वादु चेद्धव्यवच्च तत् ॥ कुशद्वयं घृते न्यस्य ततः प्रादेशसम्मितम् ॥ ११८ ॥ ग्रन्थिं कृत्वा कुशाग्रौ द्वौ शुक्लकृष्णौ विचिन्तयेत् ॥ पक्षौ वाम इडां दक्षे पिङ्गलां मध्यतस्ततः ॥ ११९ ॥ सुषुम्णां संस्मरेन्मन्त्री ततो होमं समाचरेत् ॥ दक्षभागात्स्रुवेणाज्यं प्रगृह्णीयाद्धृदाणुना ॥ १२० ॥ दक्षे नेत्रे हुताशस्याग्नये स्वाहेति होमयेत् ॥ गृहीत्वाज्यं वामभागात्तद्वद्वामेऽग्निलोचने ॥ १२१ ॥ हुनेत्सोमाय स्वाहेति त्यागः सर्वत्रतो मम ॥ हृन्मंत्रेण गृहीत्वाज्यं मध्यतो मध्यलोचने ॥१२२॥ हुनेत्तस्याग्नीषोमाभ्यां स्वाहेति च तृतीयिकाम् ॥ दक्षभागात्पुनस्त्वाज्यं हृन्मंत्रेण समाहरेत् ॥ १२३ ॥ अग्निवक्त्रेऽग्नये स्विष्टकृते स्वाहेति होमयेत् ॥ सताराभिर्व्याहृतिभिराज्येन जुहुयात्पुनः ॥ १२४ ॥ जुहुयादग्निमंत्रेण त्रिवारं देशिकोत्तमः ॥ गर्भाधानादिकां वह्नेस्समुद्वाहावसानिकाः ॥ १२५ ॥ शुभे कर्म्मणि कर्त्तव्या आज्याहुत्यष्टकैः प्रियाः ॥ प्रणवं पूर्वमुच्चार्य्य कर्म्मनाम समुच्चरेत् ॥ १२६ ॥ सम्पादयामि स्वाहेति सर्वकर्म्मस्वयं विधिः ॥ गर्भाधानं पुंसवनं सीमंतं जातकर्म्म च ॥ १२७ ॥ निष्कासनञ्च कथितं प्राशनञ्च तथा बुधैः॥चौलोपनयनं वह्नेर्महानामव्रतं तथा॥१२८॥महाव्रतञ्चोपनिषद्व्रतङ्गोदानमेव च ॥ समावर्त्तसमुद्वाहौ शाक्ते वाग्भवपूर्वकाः॥ १२९ ॥ ततश्च वह्नेः पितरौ देवदेव्यादिकौ तथा ॥ पूजयित्वा विसृज्याथ मूलाग्रेषु घृतप्लुताः ॥ १३० ॥ समिधोऽष्टौ क्षिपेत्पञ्च वह्नावथ च पूर्ववत् ॥ सबीजस्वस्वनाम्ना वै चैकैकामाहुतिं हुनेत् ॥ १३१ ॥ ततश्चाङ्गानि जुहुयाद्वह्नेर्मूर्त्यष्टकं तथा ॥१३२॥ इन्द्रादिलोकपालांश्च आयुधानि ततः परम् ॥ पूर्वो-

१ ॐ सहस्रार्चिषे, स्वाहा ॐ स्वस्तिपूर्णाय स्वाहा, ॐ उत्तिष्ठपुरुषाय स्वाहा, ॐ धूमव्यापिने स्वाहा, ॐ सप्तजिह्वाय स्वाहा, ॐ धनुर्धराय स्वाहा, ॐ अग्नये जातवेदसे स्वाहा, ॐ अग्नये सप्तजिह्वाय स्वाहा, ॐ अग्नये हव्यवाहाय स्वाहा, ॐ अग्नये अश्वोदरजाय स्वाहा, ॐ अग्नये वैश्वानराय स्वाहा, ॐ अग्नये कौमारतेजसे स्वाहा, ॐ अग्नये विश्वमुखाय स्वाहा, ॐ अग्नये देवमुखाय स्वाहा ॥ २ इन्द्रादीनां तदायुधानां च चक्रभूपुरे मन्त्रा लिखिताः ॥

केनाग्निमन्त्रेण वौषडन्तेन वै ततः ॥ १३३ ॥ ताराद्यैर्दशभिर्भेदैः पूर्वपूर्वस-मन्वितैः ॥ मनुना गाणपत्येन हुनेत्पूर्वं दशाहुतीः ॥ १३४ ॥ जुहुयाच्च चतुर्वारं समस्तेनैव तेन तु ॥ संपूज्य देवतापीठं वह्नौ सम्यक् ततो गुरुः ॥ ॥ १३५ ॥ अग्निरूपधरां तत्र पूजयेदिष्टदेवताम् ॥ आज्येन चाग्निमनुना पञ्चविंशतिसङ्ख्यकम् ॥ १३६ ॥ हुनेन्मन्त्री चाग्निमुखे वक्त्रैकीकरणं त्वि-दम् ॥ आत्माग्निदेवतानां च चिन्तयन्नैक्यमात्मवित् ॥ १३७ ॥ एकाद-शाथ मूलेन हुनेदाज्येन चाहुतीः ॥ नाडीसन्धानमेतद्धि प्रोक्तं देशिकसत्तमैः ॥ १३८ ॥ अङ्गप्रभृत्यावृत्तीनामेकैकामाहुतिं हुनेत् ॥ पूर्वादिदिक्षु सर्वासु-कुण्डेषु च यथाविधि ॥ १३९ ॥ गुरुर्वह्निं प्रविहरेत्संस्कृतं तूक्तवर्त्मना ॥ सर्वर्त्विजश्चन्दनाद्यैस्सम्पूज्य प्रोक्तदेवताम् ॥ १४० ॥ सर्वावरणसंयुक्तां मू-लेन जुहुयुस्ततः ॥ पञ्चविंशतिधा सर्पिस्संयुतेन प्रियान्धसा ॥ १४१ ॥ स्रुवेणाज्यं समित्पाण्या स्रुचा शेषं करेण तु ॥ तत्र दिव्येन होतव्यं तीर्थेनार्षेण वा तथा ॥ १४२ ॥ यो नार्चिषि जुहोत्यग्नौ व्यङ्गाग्नौ-चैव मानवः ॥ मन्दाग्न्यामयसंयुक्तो दरिद्रश्चापि जायते ॥ १४३ ॥ दद्याद्बलिं गन्धपुष्पधूपपूर्वकमादरात् ॥ नक्षत्राणां च वाराणां राशीनां च पृथक् पृथक् ॥ १४४ ॥ देवताभ्यः पदं प्रोक्त्वा दिवा नक्तं वदेत्ततः ॥ वारेभ्यश्चाथ सर्वेभ्यो भूतेभ्यश्च नमो वदेत्॥ १४५॥इत्येष तान्त्रिको होमविधिः प्रोक्तो मया सुराः ॥ पृच्छन्त्वन्यद् गूढमपि वक्ष्यामि शरणागतान् ॥१४६॥

इति श्रीमहामायामहाकालानुमते मेरुतन्त्रे शिवप्रणीते होमविधि प्रकाशश्चतुर्थः ॥ ४ ॥

---

१ ॐ ॐ स्वाहा १ ॐ श्रींस्वाहा २ ॐ श्रींह्रीं स्वाहा ३ ॐ श्रींह्रींक्रीं स्वाहा ४ ॐ श्रींह्रीं क्रीं ग्लौं स्वाहा ५ ॐ श्रींह्रींक्रींग्लौंगं स्वाहा ६ ॐ श्रींह्रींक्रींग्लौंगंगणपतये स्वाहा ७ ॐ श्रींह्रीं क्रींग्लौंगं गणपतयेवरवरद स्वाहा ८ ॐ श्रींह्रींक्रींग्लौंगंगणपतये वरवरद सर्वजनं मे वशं स्वाहा ९ ॐ श्रींह्रींक्रींग्लौंगं गणपतये वरवरद सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा १० ॥ २ पुनः समस्तेन गणेशम-न्त्रेण चतुरो वाराञ्जुहुयात् ॥ ३ अग्नौ देवपीठभावनया देवतामग्निरूपं विज्ञाय मानसीं पूजां विद-धीत ॥ ४ पूर्वमुक्तोऽग्निमन्त्रः ॐ विश्वानर जातवेद इहावहेत्यादि ॥

श्रीदेव्युवाच ॥ धनिनां मध्यमानां च दरिद्राणां हासिनाम्॥परदेशस्थितानां च कारागेहादिवासिनाम् ॥ १ ॥ कायादौ व्याहतानां च युक्तानां सतकादिभिः ॥ कार्य्याङ्गवस्त्वभावे वा वामिकानां कृपानिधे ॥ २ ॥ षडाम्नायरहस्येन कथं नित्याह्निकं भवेत् ॥ लोकलज्जावतां चापि दिनचर्य्यां वद प्रभो ॥३॥ ईश्वर उवाच ॥ महाकालेन यत्प्रोक्तं यन्महामायया श्रुतम् ॥ रहस्यातिरहस्यं यत्सर्वतन्त्रेषु गोपितम् ॥ ४ ॥ आम्नायानां रहस्यं यदाह्निकं प्रोच्यते मया ॥ शृण्वन्तु सर्वे भो देवाः साधकानां प्रसिद्धिदम् ॥ ५ ॥ तत्र नित्यं त्रिधा प्रोक्तं गुणत्रयविभेदतः ॥ अधिकारिविभेदेन तदपि त्रिविधं भवेत् ॥ ६ ॥ शुद्धं मिश्रं च गलितं तत्तथत्र फलप्रदम् ॥ अकृते प्रत्यवायो न गलिते सफलञ्जनैः ॥ ७ ॥ अहङ्कारविहीनं चेन्मानसज्ज्ञानपूर्वकम् ॥ स्वस्थचित्तेन यतिना कृतं तच्छुद्धमिष्यते ॥ ८ ॥ तादृशं चेद् गृहस्थेन निर्द्रव्येण च वा कृतम् ॥ रुग्णेन पथिकेनापि कारागृहगतेन वा ॥ ९ ॥ भक्तितो वापि तन्मिश्रं बाह्यपूजाधिकारतः ॥ शीतादिभीत्या वा वित्तसंक्षयादन्यकार्य्यतः ॥ १० ॥ स्त्र्यादेर्नियोगाद्गलितं गृहिणो मानसम्मतम् ॥ बाह्यपूजादिकं यच्च एकान्ते नियमेन च ॥ ११ ॥ भक्त्या कृतं गृहस्थेन तच्छुद्धं राजसम्मतम् ॥ पूजार्थं यद्याचयित्वा श्रद्धाभक्तिं विधाय च ॥ १२ ॥ लोकभीत्या देवभीत्या यत्तदायासमिश्रितम् ॥ प्रतारणार्थं लोकानां याचितं देवनामतः ॥ १३ ॥ द्रव्यं कृतं तदुद्देशो गलितं तत्तु राजसम् ॥ वाममार्गं समाश्रित्य कौलं धर्म्मं विचार्य्य च ॥ १४ ॥ अन्यधर्म्मस्य चाद्वेषात्कृतं शुद्धं तु तामसम् ॥ कृतं यत्कामतः कर्म्म चैहिकं पारलौकिकम् ॥ १५ ॥ वाममार्गं समाश्रित्य मिश्रितं तत्तु तामसम् ॥ जिह्वालोभेन यत्पानं भक्षणं कामतो रतम् ॥ १६ ॥ अथवा मारणाद्यर्थं गलितं तत्तु तामसम् ॥ शुद्धसत्त्वेन मोक्षः स्यात्स्वर्गः स्यान्मिश्रसत्त्वतः ॥ १७ ॥ सिद्धिर्गलितसत्त्वात्स्यादाहिकी च मनुष्यता ॥ स्वर्गः स्याद्राजसाच्छुद्धात्कामः स्यान्मिश्रराजसात् ॥ ॥ १८ ॥ गलिताद्राजसात्तिर्य्यग्योनावपि सुखं भवेत् ॥सात्त्विकात्तामसाद्देवयोनित्वं प्राप्नुयान्नरः ॥ १९ ॥ मिश्रतामसतो दुःखी नारकी चान्यतामसात्॥

कर्म पञ्चविधं प्रोक्तं पञ्चधा मुक्तिदायकम् ॥ २० ॥ प्रसर्पणमुपादानमि- ज्याध्यायस्तथा युतिः ॥ सम्मार्ज्जनोपलेपादिसंस्कारा देवमन्दिरे ॥ २१ ॥ भक्तार्ज्जवं सर्प्पणं स्यादेवमारोग्यकारकम् ॥ पूजासाधनसामग्र्या मेलनं भक्तसेवनम् ॥ २२ ॥ तत्प्रीतिः स्यादुपादानं देवतारूपदायकम् ॥ पीठपूर्वा- ङ्गपूर्वैश्च षोडशाद्युपचारकैः ॥ २३ ॥ मूर्त्तौ यन्त्रेथवा पूजा सेज्या स्यादि- ष्टकारिका ॥ तच्छास्त्राध्ययनं सम्यक्कृत्वा मन्त्रार्थभाजनम् ॥ २४ ॥ कृत्वा जपन्तु वाध्यायो देवसायुज्यकारकः ॥ गुरुदेवात्मकालानां सम्यगैक्यविभाव- नम् ॥ २५ ॥ संयोगो लिङ्गदेहस्य नाशकः कालयागकृत् ॥ निशायां पश्चिमे यामे स्मरेदिष्टां च देवताम् ॥ २६ ॥ उत्थाय दक्षिणाङ्गेन वामपादं न्यसेद्भुवि ॥ ततो गृहाद्बहिर्गत्वा कृत्वावश्यकमादरात् ॥ २७ ॥ रात्रिवासः परित्यज्य वाससी परिवीयं[१] च ॥ आचम्य शुद्धदेहः स्याद्देवतायोगमन्दिरे ॥ ॥ २८ ॥ निर्माल्यमपकृष्याथ दद्यात्पुष्पाञ्जलिन्तथा ॥ अर्घ्यपात्रे निवेद्याथ दद्याद्वै दन्तधावनम् ॥ २९ ॥ मुखप्रक्षालनं कृत्वा दद्यादाचमनीयकम् ॥ करस्य प्रोंछनायाथ दद्याद्वासोऽमलं शुभम् ॥ ३० ॥ ततस्तु मस्तके चिंत्यं सहस्रदलपद्मकम् ॥ कर्पूराभं स्मरेत्तत्र श्रीगुरुं निजरूपिणम् ॥ ३१ ॥ सुप्रसन्नं लसद्भूषामण्डितं श्वेतचंदनम् ॥ वराभयज्ञानमुद्रापुस्तकैर्व्यावृतैः करैः ॥ ३२ ॥ युक्तं श्वेताम्बरं शान्तं श्वेतपुष्पविभूषितम् ॥ वामाङ्कगतया शक्त्यालिङ्गितं रक्तवर्णया ॥ ३३ ॥ रक्तवस्त्राभरणया रक्तचन्दनमालया ॥ वामलीलाकमलयालिङ्गंत्या दक्षिणेन च ॥ ३४ ॥ ध्यायेदन्तर्मुखं शाक्तं योगिनं शिवरूपिणम् ॥ तत्पादपद्मयुगलच्युतपीयूषधारया ॥ ३५ ॥ अभिषिक्तं स्वस्य देहमेवं शिष्यो विचिन्तयेत् ॥ अर्चयेद्गन्धपुष्पाद्यैर्बाह्यस्थै- र्मानसैस्तु वा ॥ ३६ ॥ नामभिस्तस्य विविधैस्संसिद्धैर्गुरुकीर्त्तनैः ॥ प्रण- म्येत्थं हृन्मनुना भावयेत्तल्लयं हृदि ॥ ३७ ॥ ततस्तु मूलाधारादि ब्रह्मरंध्रान्तमुद्यताम् ॥ तेजोदण्डं सुषुम्णांतं सहस्रबिससन्निभम् ॥ ३८ ॥ तदा- त्मकं मूलमन्त्रं ध्यात्वा तत्तेजसावृतम् ॥ स्वशरीरं विचिंत्याथ प्राणायामत्र-

१ परिधाय चेत्यपि पाठः ।

यं चरेत् ॥ ३९ ॥ मूलमन्त्रेण मन्त्रस्य ऋष्यादिन्यासमाचरेत् ॥ अंगन्यासं विधायाऽथ हृदि देवं विचिन्तयेत् ॥ ४० ॥ त्रैलोक्यचैतन्यमयादिदेव श्रीशंकर त्वच्चरणाज्ञया च ॥ प्रातः समुत्थाय तव प्रियार्थं संसारयात्रामनुवर्त्तयिष्ये ॥ ॥ ४१ ॥ संसारयात्रामनुवर्त्तमानं त्वदाज्ञया शंकर देवदेव ॥ स्पर्द्धातिरस्कारकलिप्रमादभयानि मां माऽभि भवन्तु नाथ ॥ ४२ ॥ इति सम्प्रार्थ्य देवेशमाज्ञामादाय तस्य तु ॥ प्रार्थयित्वा धरां श्वासयुक्तं पादं निधापयेत् ॥ ४३ ॥ समुद्रमेखले देवि पर्वतस्तनमण्डले ॥ विष्णुपत्नि नमस्तुभ्यं पादस्पर्शं क्षमस्वमे ॥ ४४ ॥ ततो गृहाद् बहिर्याम्यां नैर्ऋतीं वा दिशं व्रजेत् ॥ पदेपदे स्मरे-द्[1]स्त्रन्दूरे यायाद् द्विजालयात् ॥ ४५ ॥ अतीत्य बाणमात्रन्तु भुवं ग्रामाद्विलोक्य च ॥ ॥ कीटयोषादिरहितं शौचस्थानमिदम्पठेत् ॥ ४६ ॥ उत्तिष्ठन्त्वृषयो देवा गन्धर्वा यक्षराक्षसाः ॥ परितस्त्यज्यतां स्थानं विण्मूत्रोत्सर्ज्जनाय मे ॥ ४७ ॥ ॥ अनेन मनुना लोष्टानृणैरुद्धास्य देवताः ॥ कुर्य्यान्मलच्युतिं तत्र वाससा कं[2] प्रविश्य च ॥ ४८ ॥ तां दिशां च न पश्येत्तु शौचमुद्धृत्य वारिभिः ॥ एका लिङ्गे गुदे सप्त दश वामकरे तथा ॥ ४९ ॥ उभयोस्सप्त दातव्यास्तिस्रोऽङ्घ्र्[3]योश्चापि मृत्तिकाः ॥ मूत्रोत्सर्गे वामहस्ते लिङ्गे पञ्चैव मृत्तिकाः ॥ तिस्रः करद्वये चैका पादयोरथवा चरेत् ॥ ५० ॥ गन्धलेपक्षयकरं मनोग्लानिहरं परम् ॥ कुर्य्याद्द्वादश गण्डूषान्[4]पुरीषोत्सर्ज्जनान्तरे ॥ ५१ ॥ प्रक्षाल्याग्रे तु चरणावाचमेत्त्रिस्ततः परम् ॥ आम्रन्य[5]ग्रोधखादिरकरञ्ज[6]ककुभादिजम् ॥ ५२ ॥ कनीन्यग्रसमस्थूलं प्रमितं द्वादशाङ्गुलैः ॥ दन्तधावनकाष्ठं तु प्रोक्तं तन्त्रविचक्षणैः ॥ ५३ ॥ क्लीं[7]मुक्ता कामदेवाय सर्वजनप्रियाय च [illegible] नमोन्तस्तिथिवर्णोयं मन्त्रो दन्तविशोधने ॥ ५४ ॥ प्रक्षाल्य दन्त[illegible] च मूर्द्धदेशे पुरस्त्यजेत् ॥ वक्तुं मूलानुनो नित्यं लक्षयेत्सिद्धिहेतवे ॥ ॥ ५५ ॥ अथ पूजाहोमकर्म्मसिद्धये स्नानमुच्यते ॥ शङ्कुनास्त्रा[8]भिजप्तेन शुचिस्थानात्तु मृत्तिकाम् ॥ गृहीत्वास्त्रेण संसिच्य यायाज्जलनिकेतनम्

१ फट् इति मन्त्रम् । २ जलम् । ३ चरणयोः । ४ विष्ठात्यागे । ५ वटः । ६ अर्जुनवृक्षः । ७ क्लीं कामदेवाय सर्वप्रियाय नमः । ८ फट् ।

॥ ५६ ॥ तत्रादौ जलकूलं स्यात्क्षालयेदस्त्रवारिणा ॥ मृद्गं कृत्वा तटं तत्र चैकभागे विचक्षणः ॥५७॥ निधाय गोमयं दर्भास्तिलांश्चाप्यभिमन्त्रितान् ॥ मृत्तिकागोमयाभ्यांश्च कटचन्तं स्नानमाचरेत् ॥ ५८ ॥ बहिरुद्धृत्य तोयेन मलस्नानं ततः परम् ॥ विधाय वैदिकस्नानं तदङ्गं तर्प्पणं तथा ॥ ५९ ॥ ततस्तान्त्रिकस्नानस्य विधिरस्त्रेण मृत्तिकाम् ॥ समादायास्त्रमन्त्रेण मन्त्रयित्वा तृणादिकम् ॥ ६० ॥ शिखामन्त्रेणापहृत्य त्रिमूलेनाभिमन्त्रयेत् ॥ मूर्द्धादि-पादपर्य्यन्तं विलिप्य प्रणमेज्जलम् ॥ ६१ ॥ आधाराः सर्वभूतानां विष्णोर-तुलतेजसः ॥ तद्रूपाश्च ततो जातास्ता आपः प्रणमाम्यहम् ॥ ६२ ॥ सम्मु-खीकरणीं मुद्रां बद्ध्वा प्राणान्नियम्य च ॥ निमज्य तूष्णीमुत्थाय नाभिमात्रे जले नरः ॥ ६३ ॥ तान्त्रिकस्नानसङ्कल्पं मासोल्लेखादिपूर्वकम् ॥ कृत्वा यं मूलमन्त्रेण प्राणायामत्रयं चरेत् ॥ ६४ ॥ विन्यस्य च षडङ्गानि कल्पयेत्ती-र्थमग्रतः ॥ चतुरस्त्रे हस्तमात्रे तज्जले परिकल्पिते ॥ ६५ ॥ ब्रह्माण्डोदरती-र्थानि करैः स्पृष्टानि ते रवे ॥ तेन सत्येन देवेश तीर्थं देहि दिवाकर ॥६६॥ इति सूर्य्यं प्रार्थयित्वा क्रोमित्यङ्कुशमुद्रया ॥ भित्वार्कमण्डलं तस्मात्तीर्थान्या-वाहयेदिह ॥६७॥ गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति॥नर्मदे सिन्धुकावेरि जलेऽस्मिन्सन्निधिं कुरु॥६८॥एवमुक्त्वा तु तीर्थानि तस्मिंस्तोये नियोजयेत् ॥ मूलमन्त्रेणाथ तीर्थशक्तिं तत्र समाह्वयेत् ॥ अर्कस्य मण्डलं ध्यात्वा तन्मन्त्रेण च पूजयेत् ॥ ६९ ॥ सर्वानन्दमयीमशेषदुरितध्वंसां मृगाङ्कप्रभां त्र्यक्षामूर्ध्व-करद्वयेन दधतीं पाशं शृणिं वामतः ॥ अन्तश्चामृतपूर्णहस्तकलशां मुक्ताक्षमा-लावतीं गङ्गासिन्धुसरिद्वरादिसहितां श्रीतीर्थशक्तिं भजे ॥ ७० ॥ अथ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः सर्वानन्दमये पदम् ॥ तीर्थशक्तिं तथा हिलियुगलं वह्निगे-हिनी ॥ ७१ ॥ द्वाविंशत्यक्षरः प्रोक्तस्तीर्थशक्तेर्महामनुः ॥ तज्जलं गाङ्गम-न्त्रेण मन्त्रयेदष्टवारकम् ॥ ७२ ॥ तांरो नमो भगवति ब्रूयादम्ब ततोऽम्बिके॥

१ वषण्मन्त्रेण । २ अङ्कुशः । ३ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः सर्वानन्दमये तीर्थशक्ते हिलि हिलि स्वाहा । ४ ॐ नमो भगवति अम्बे अम्बिके अम्बालिके महामालिनि एह्येहि भगवति अशेषती-र्थालवाले ह्रींश्रींशिवजटाधिरूढे गंगे गंगाम्बिके स्वाहा ।

अम्बालिके महामालिन्येह्येहि भगवत्यथ॥ ७३ ॥ अशेषतीर्थालवाले मायाश्रीबी-
जमुच्चरेत्॥ शिवजटाधिरूढेच गङ्गे गङ्गाम्बिके द्विठः॥ ७४ ॥ गङ्गामन्त्रोयमाख्या-
तस्त्रिपञ्चाशद्भिरक्षरैः भुवनेश्याः समालोड्यामृतीकृत्य सुधाणुना ॥ ७५ ॥
कवचेनावगुण्ठ्याथ संरक्ष्यास्त्रेण मन्त्रवित् ॥ मूलेन देवतां तत्र साङ्गां सावर-
णान्तथा॥ ७६ ॥ समावाह्य जले ध्यात्वा तत्पादद्वयनिर्गतम्॥ ध्यात्वा तीर्थं स्मरे-
न्मूलमन्त्रंस्नायाज्जले त्रिशः॥ ७७॥ हृदि देवं स्मरेत्पश्चात्सिञ्चेत्कं कुम्भमुद्रया॥
त्रिभिर्लोकैर्मूलमन्त्रैस्तारकं बीजपूर्वकैः ॥ ७८ ॥ सिसृक्षोर्निखिलं विश्वं मुहुः
शुक्रं प्रजायते ॥ मातरः सर्वभूतानामापो देव्यः पुनन्तु माम् ॥ ७९ ॥
अलक्ष्मीर्मलरूपा या सर्वभूतेषु संस्थिता ॥ क्षालयन्तु निजस्पर्शादापो देव्यः
पुनन्तु माम् ॥ ८० ॥ यन्मे केशेषु दौर्भाग्यं सीमन्ते यच्च मूर्द्धनि ॥ ललाटे
कर्णयोरक्ष्णोरापस्तद् घ्नन्तु वो नमः ॥ ८१ ॥ नमःस्वाहान्तमूलेन त्रिराचम-
नमाचरेत् ॥ त्रिधा देवं च सन्तर्प्य तोयमध्यात्तटं व्रजेत् ॥ ८२ ॥ धौतव-
स्त्रयुगं धृत्वा प्रक्षाल्य च करौ तथा ॥ मृदाद्भिस्तत आचम्य देवस्नानविधि-
स्स्मृतः ॥ ८३ ॥ मन्त्रस्नानं प्रकर्तव्यं शीतयोर्देशकालयोः ॥ तोयाभावे गते
दुर्गे कायास्वास्थ्ये च वार्द्धके ॥ ८४ ॥ प्रक्षाल्य पादावाचम्य प्रोद्धृतेन
तु वारिणा ॥ स्थानं दश दिशः प्राग्वत्संशोध्योपाविशेत्ततः ॥ ८५ ॥ जलं
हस्ततले न्यस्य कुम्भन्यासांस्ततश्चरेत् ॥ मातृकादींस्तथा मूलमन्त्रन्यासान-
शेषतः ॥ ८६ ॥ न्यासान्ते संस्पृशेत्तोयं मन्त्रस्नानमिदं वरम्॥ केवलादुदक-
स्नानात्संस्कारपरिवर्जितात् ॥ ८७ ॥ सुस्थितं पुण्डरीकाक्षं मन्त्रमूर्तिम्प्रभुं
स्मरेत् ॥ तत्पादोदकजां धारां निपतन्तीं स्वमूर्द्धनि ॥ ८८ ॥ चिन्तयेत्सू-
क्ष्मरन्ध्रेण प्रविशन्तीं स्वकान्तनुम् ॥ तस्मात्संक्षालयेत्सर्वमेतद्देहगतं मलम् ॥
॥ ८९ ॥ तत्क्षणाद्विरजा मन्त्री जायते स्फटिकोपमः॥ इदं स्नानवरं मन्त्र-
स्नानादष्टगुणं मतम् ॥ ९० ॥ सदा शुद्धमना यस्तु स शुद्धः सर्वकर्म्मसु ॥
अथ मानसिकस्नानं मनसा मूलमन्त्रतः ॥ ९१ ॥ प्राणानायम्य कुर्वीत

१ ॐ वं भूर्भुवः स्वः इत्यादि मन्त्रैःह्रीं मन्त्रेण सुधाणुना वंबीजेन ॥ २ पाणिभ्यां कलशाकार-
निर्माणं कुंभमुद्रोच्यते ॥

दृष्टतीर्थेषु भावतः ॥ यद्वा शिवात्मकैर्मन्त्रैः कृत्वा तीर्थं शिवात्मकम् ॥ ९२ ॥ मार्ज्जनं संहितामन्त्रैः शिवस्नानमितीरितम् ॥ स्नानपूर्वाः क्रियाः शुद्धाः सर्वाः सिद्धिं प्रयान्ति च ॥ ९३ ॥ तस्मात्स्नानं पुरा कुर्य्याद्दिव्यैकं देहशक्तितः ॥ ततस्तु तिलकं कुर्य्याज्जातेर्वा दैवतस्य च ॥ ९४ ॥ यथाच्छुभफलं तीर्थमृद्भिर्वा भक्तिभावतः ॥ ब्राह्मणस्योर्ध्वपुण्ड्रं स्यात्क्षत्रियस्य त्रिपुण्ड्रकम् ॥ ॥ ९५ ॥ अर्धचन्द्रन्तु वैश्यस्य शूद्राणां वर्त्तुलाकृति ॥ ऊर्ध्वपुण्ड्रं मृदा कुर्य्यात्त्रिपुण्ड्रं चैव भस्मना ॥ ९६ ॥ केशरेण च कस्तूर्य्या शेषं शीतं यथारुचि ॥ वैष्णवस्योर्ध्वपुण्ड्रं स्यात्त्रिपुण्ड्रं शिवसेवने ॥ ९७ ॥ अर्धचन्द्रं गणेशस्य देवीभक्तस्य वर्त्तुलम् ॥ नारायणपरो यस्तु चन्द्रं तस्य त्रिशूलकम् ॥ ॥ ९८ ॥ भाले विभूतिमान्योऽसौ ब्रह्मविष्णुशिवात्मकः ॥ भूतिदा तु विभूतिः स्याद्विधिना विधृता यदि ॥ ९९ ॥ यथाकथञ्चिद्विधृता भस्मसारकुरुते जनम् ॥ शिवाग्नेर्भस्म सङ्ग्राह्यमग्नीषोमो द्भवन्तु वा ॥१००॥ वैवाह्याग्न्युद्भवं वापि पक्वं शुचि सुगन्धि च ॥ कपिलायाः शकृद्वस्त्रगृहीतं गगने पतत ॥ ॥ १०१ ॥ न क्लिन्नं नापि कथितं न दुर्गन्धि न वोषितम् ॥ उपर्य्यधः परित्यज्य गृह्णीयात्पतितं हृदा ॥ पिण्डीकृत्य शिवाग्नौ तु तत्क्षिपेन्मूलमन्त्रतः ॥ १०२ ॥ अपक्वमपि पक्वं च सन्त्यज्य भासितं सितम् ॥ आदाय वाससाऽऽलोड्य भस्माधारे विनिःक्षिपेत् ॥ १०३ ॥ भस्मसङ्ग्रहणं कुर्य्याद्देवेनुद्वासने सति ॥ उद्वासने कृते यस्माच्चण्डभस्म प्रजायते ॥ १०४ यद्वा द्विजातिभस्मेत्थं संघेनानीय गोमयम् ॥ वामेन पात्रे संयोज्याघोरमन्त्रेण निर्दहेत् ॥ ॥ १०५ ॥ पुरुषेण समुद्धृत्य ईशानेन विशोधयेत् ॥ इत्थन्तु संस्कृतं भस्म

---

१ नमोमन्त्रेण ॥ २ ॐ सद्योजातं प्रपद्यामि सद्योजाताय वै नमः भवेभवेनातिभवे भवस्व मां भवोद्भवाय नमः ॥ ३ ॐवामदेवाय नमो ज्येष्ठाय नमः श्रेष्ठाय नमो रुद्राय नमः कालाय नमः कालविकरणाय नमो बलविकरणाय नमो बलाय नमो बलप्रमथनाय नमो नमस्सर्वभूतदमनाय नमो मनोन्मथनाय नमः॥ ४ ॐ अघोरेभ्योथघोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः सर्वतस्सर्वसर्वेभ्यो नमस्तेस्तु रुद्ररूपेभ्यः॥ ५ ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि तन्नो रुद्रः प्रचोदयात् ॥ ६ ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानाम्॥ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणोधिपतिर्ब्रह्मा शिवो मे अस्तु सदाशिवोम्॥

अग्निरित्यादिमन्त्रतः॥ १०६॥यातेरुद्रेति यजुषा मन्त्रयेदुद्रसञ्ज्ञया॥प्रणवाद्यै-श्चतुर्थीहृदन्तैर्नामभिरंशकैः १०७॥पञ्चवर्णाद्यक्षराद्यैर्मालांशैर्हरहृद्युतैः॥त्रिपुण्ड्र-धारणं कुर्य्यान्मूर्ध्नि पञ्चाक्षरेण तु ॥ १०८ ॥ एभिश्च नामभिर्धार्यं पुनर्भ-स्म द्विजातिभिः ॥ ब्रह्मा ललाटे विज्ञेयो हृदये हव्यवाहनः ॥ १०९ ॥ नाभौ स्कन्दो गले पूषा रुद्रा दक्षिणबाहुके ॥ आदित्यो बाहुमध्ये च शशी च मणिबन्धने ॥ ११० ॥ वामदेवो वामबाहौ बाहुमध्ये प्रभञ्जनः ॥ मणि-बन्धे च वसवः पृष्ठदेशे हरिः स्मृतः ॥ १११ ॥ शम्भुः ककुदि सम्प्रोक्तः परमात्मा शिवः स्मृतः॥ कस्तूर्य्यादिकसंयुक्तं भस्म स्यात्तत्तु धारयेत्॥ ११२॥ अद्भिर्जैर्मूलमन्त्रेण शिवपञ्चाक्षरेण वा ॥ त्रिपुण्ड्रं कारयेद्भाले ब्रह्मविष्णुशिवा-त्मकम् ॥ ११३ ॥ मध्याङ्गुलिभिरादाय तिसृभिर्मूलमन्त्रितम् ॥ अनामाम-ध्यमाङ्गुष्ठैरथवास्यात्रिपुण्ड्रकम् ॥ ११४॥वक्ष्येथ तान्त्रिकीं सन्ध्यां मूलेनाच-मनत्रयम् ॥ शिखां बद्ध्वा तु मूलेन प्राणायामत्रयं चरेत् ॥ ११५ ॥ अङ्गानि विन्यसेद्देहे करन्यासपुरस्सरम् ॥ अमृतीकृत्य पुरतो जलं वै धेनुमुद्रया ॥अभि मन्त्र्य च मूलेन सप्तवारन्ततः परम् ॥ ११६ ॥ अंकारादिक्षकारा-न्तैर्मातृकार्णैस्सबिन्दुभिः ॥ प्रत्यर्णं प्रोक्षयेन्मूर्ध्नि कुशैर्मूलेन च त्रिधा ॥ ११७ ॥ देवं ध्यात्वा च मनुना ज्ञानमण्डलसंस्थितम् ॥ आदाय तोयमा-मन्त्रैर्बीजैर्भूतात्मकैस्तथा ॥ ११८ ॥ लं वं रं हं इति च तन्मन्त्रैः सप्तधा जलम् ॥ मन्त्रयित्वा पुनः सप्तवारं मूलेन मन्त्रयेत् ॥ ११९ ॥ तज्जलं वामहस्तेन धार्य्यं तत्प्लुतबिन्दुभिः॥ दक्षहस्तेन सम्प्रोक्ष्य कम्पठेन्मूलमन्त्रकम् ॥ १२० ॥ हस्तव्यत्यासतो वामाचारी सेचनमाचरेत् ॥ नासामाश्रित्य

---

१ ॐ अग्निरिति भस्म, ॐ जलमिति भस्म, २ ॐ स्थलमिति भस्म, ३ ॐ वायुरिति भस्म, ४ ॐ व्योमेति भस्म, ५ ॐ सर्वं ह वाइदं भस्म ६ ॥ २ ॐ या ते रुद्रशिवा तनूरघोरां पापकाशिनी । तया नस्तन्वा शन्तमया गिरिशन्ताभिचाकशीहि ॥ ३ ॐ भवाय नमः, ॐ शर्वाय नमः, ॐ पशुपतये नमः, ॐ उग्राय नमः, ॐ महादेवाय नमः ॐ भीमाय नमः, ॐ ईशानाय नमः, ४ ॐ नमः शिवाय इत्यादिमन्त्रैः ॥ ५ अँआँ इँईँ उँऊँ ऋँॠँ ऌँॡँएँऐँ ओँऔँ अंअः कंखं गंघंङं चंछंजंझंञं टंठंडंढंणं तंथं दंधंनं पंफंबंभंमं यंरंलंवं शंषंसंहं ळंक्षमिति मातृकार्णाः ॥ ६ कं जलम् ।

शिष्टेन तेजोरूपेण तेन तु ॥ १२१ ॥ प्रविश्यान्तर्गतो देवो मलं संशोध्य निर्गतः ॥ दक्षनासापुटेनैतत्स्मृत्वा दक्षिणहस्तकम् ॥ १२२ ॥ वामभागे वज्रशिलां ध्यात्वास्त्रेण च तान्क्षिपेत् ॥ प्रक्षाल्य हस्तावाचम्य मूलमन्त्रेण मन्त्रवित् ॥ १२३ ॥ गायत्र्या वाथ मूलेन दद्यादर्घ्यत्रयन्ततः ॥ रविमण्डल-संस्थाय स्वेष्टदेवाय तर्प्पयेत् ॥ १२४ ॥ जलेन मूलमन्त्रेण ह्यमुकं तर्प्पयामि च ॥ उक्त्वा त्रिधा तर्प्पणीयं वामकैः कारणेन तु ॥ १२५ ॥ इष्टदेवस्य गायत्रीमष्टाविंशतिसङ्ख्यकाम् ॥ जपेदभावे ब्राह्मीं तु वैदिकं मतमाश्रितः ॥ १२६ ॥ तान्त्रिकः शिवगायत्रीं जपेत्साथ निरूप्यते ॥ ॐ तन्महेशाय विद्महे वाग्विशुद्धाय धीमहि ॥ तन्नः शिवः प्रचोदयात् ॥ १२७ ॥ ततः शुद्धमना मौनी मूलमष्टोत्तरं शतम् ॥ जपित्वा चार्प्पयेदेवं स्तुत्वा नत्वेष्टदेवताम् ॥ १२८ ॥ सूर्य्यमण्डलतो देवं विन्यसेद्धृदये स्वके ॥ ततो गुरूंश्च प्रणमेदिति सन्ध्या तु तान्त्रिकी ॥ १२९ ॥ त्रिकालमेवं कर्त्तव्या सन्ध्यालोपात्फलं नहि ॥ दैवतो यदि लोपश्च तदा मूलं शतं जपेत् ॥ १३० ॥ प्रायश्चित्तार्थं तं कृत्वा कुर्वीत समयागताम् ॥ वैदिकं तर्प्पणं कृत्वा ततस्तान्त्रिकमाचरेत् ॥ १३१ ॥ प्राणायाममयं कृत्वा मूलेन न्यासमाचरेत् ॥ ऋष्यादित्रितयस्याथ पुरतो धेनुमुद्रया ॥ १३२ ॥ वं जपन्नमृतीकृत्य जलं तत्र सचक्रकम् ॥ साङ्गावरणकं देवं ध्यात्वा मूलं समुच्चरेत् ॥ १३३ ॥ अमुकं तर्प्पयामीति चोक्त्वा चाष्टोत्तरं शतम् ॥ तदर्धमथवा विंशत्यष्टयुक्तमुखाब्जके ॥ १३४ ॥ देवस्यामृतबुद्ध्या तत्तीर्थतोयैः प्रतर्प्पयेत् ॥ तदावरणदेवांश्च तद्वदेकैकवारकम् ॥ १३५ ॥ सन्तर्प्य देवं स्वहृदि तीर्थे सूर्य्यं विसर्जयेत् ॥ गुरुं दिगीशांश्च खगान्नत्वा भाण्डं करे दधत् ॥ १३६ ॥ एकान्तं निर्जनं यायान्मनोज्ञं दोषवर्जितम् ॥ दिगन्तरं न वीक्षेत यावत्प्राप्नोति वै गृहम् ॥ १३७ ॥ प्रदक्षिणं यज्ञवाटं कृत्वा पादौ च हस्तकौ ॥ प्रक्षाल्याचम्य पूजाया गृहद्वारान्तरे स्थितः ॥ १३८ ॥ गेहे च द्वारदेशस्थः प्रणम्य मनसा गुरुम् ॥ प्रणमेदिष्टदेवं स्वं दिक्पालानपि चेतसा ॥ १३९ ॥ यत्पूर्वमु-

१ तं मूलमन्त्रं संध्याकरणप्रायश्चित्ताय जपेत् ।

र्जितं पापं तद्दिनेऽन्यदिनेपि वा ॥ तत्पापस्यापनोदार्थं मन्त्रद्वयमुदीरयेत् ॥१४०॥ हे देव प्राकृतं चित्तं पापाक्रांतमिदम्मनः ॥ तन्निस्सारय चित्तान्मे पापं फट् हुं च ते नमः ॥ १४१ ॥ सूर्य्यः सोमो यमः कालो महाभूतानि पञ्च च ॥ एते शुभाशुभस्येह कर्म्मणो नृषु साक्षिकाः॥ १४२॥ हुंफडिति बूयात्क्रोधदृष्ट्या पश्येच्च पार्श्वयोः ॥ एवंकृते प्रथमतः पापोत्सादनकर्म्मणि॥ १४३॥ यत्स्याद्दृढतरं पापं तद् दूरे चात्र तिष्ठतु॥अतीते पूजनं स्थानं स्वं प्रयातु पुनश्चतत ॥१४४॥यत्स्यादल्पतरं पापं तन्नाशमुपगच्छतु ॥पूजां त्यक्त्वास्य पापास्यकामभिष्टं क्षणाद्भवेत ॥ १४५ ॥ ततः प्रक्षाल्य पादौ च हस्तावाचम्य यत्नतः॥ दद्यादर्घ्यं दिनेशाय तत्प्रकार इहोच्यते ॥ १४६ ॥ गोमयेनोपलिप्तायां भूमौ कृत्वा तु मण्डलम् ॥ सिन्दूरेण ततः पश्चादुपविश्य निजासने ॥१४७॥ प्राङ्मुखः प्रणमेदिष्टदेवतां भक्तितत्परः ॥ प्राणायामत्रयं कृत्वा सूर्य्यमन्त्रेण मन्त्रवित् ॥ १४८ ॥ ह्रीं ह्रीं स इतिसूर्य्यस्य त्र्यक्षरो मन्त्र ईरितः ॥ विन्यस्य च तथेन्द्रादीन्ध्यात्वा सूर्य्यमनन्यधीः ॥ १४९ ॥ पद्मद्वयाभयवरान्दधतं कराब्जैर्माणिक्यमौलिमरुणाङ्गरुचिं त्रिनेत्रम् ॥ रक्ताम्बुजासनमशेषगुणैकसिन्धुं भानुं समस्तजगतामधिपं भजामि ॥ १५० ॥ तत्कल्पोक्तविधानेन पूजयेदुपचारकैः ॥ पुरतो मण्डलं कृत्वा जलेन चतुरस्रकम् ॥ ॥ १५१ ॥ निधाय तत्र साधारं सजलं ताम्रपात्रकम ॥ गन्धपुष्पाक्षतान्दर्भदूर्वासर्षपसंयुतान् ॥ १५२ ॥ सतिलान्युक्तपुष्पाणि यवांश्चापि प्रविन्यसेत् ॥ सूर्य्यं मन्त्रेण तत्पात्रं स्पृशन्नष्टोत्तरं शतम् ॥ १५३॥ अभिमन्त्र्य च तत्पात्रं समुत्थाय करद्वयात् ॥ मूर्द्धान्तं सूर्य्यमन्त्रेण दद्यादर्घ्यं विचक्षणः ॥ १५४ ॥ ह्रीं[1] ह्रीं सः सग्रहराशिनक्षत्रपदमुच्चरेत् ॥ ततश्चयोगकरणे परिवृत्तासनेति च ॥ १५५ ॥ संस्थितः श्रीसूर्य्यायैष तेर्घ्यः स्वाहा मनुस्स्मृतः ॥ चतुस्त्रिंशदक्षरोयं सूर्य्यस्यार्घ्यनिवेदने ॥ १५६ ॥ जपेत्तत्तु यथाशक्ति सूर्य्यमन्त्रमनन्यधीः ॥ तदर्घ्यावृतं सूर्य्यं ध्यायेद्देशिकसत्तमः ॥ ॥ १५७ ॥ स्तुत्वा प्रणम्य विसृजेन्मण्डलात्तं दिवाकरम् ॥ तत उत्थाय

---

१ ह्रीं ह्रीं सः सग्रहराशिनक्षत्रयोगकरणपरिवृत्तासनसंस्थितश्रीसूर्य्यायैष तेर्घ्यः स्वाहा ।

विधिवद्द्वारपूजां समाचरेत् ॥ १५८ ॥ द्वारमर्घ्याम्बुना प्रोक्ष्य तन्मध्ये विघ्नपं यजेत् ॥ तद्दक्षिणे महालक्ष्मीं वामे चापि सरस्वतीम् ॥ १५९ ॥ द्वारश्रियं च तन्मध्ये शाखयोर्दक्षिणान्ययोः ॥ ऊर्ध्वभागोत्तरं यावत्पञ्चपञ्च-विभागके ॥ १६० ॥ नाम्नश्चाद्याक्षरं बिन्दुनामयुक्तं च ङेन्तकम् ॥ समुच्चार्य्य हृदन्तं च देवानेतान्प्रपूजयेत् ॥ १६१ ॥ गणपतिं क्षेत्रपालं ततश्च वसुधारया ॥ युक्तं शङ्खनिधिं दक्षे वामे वसुमतीयुतम् ॥ १६२ ॥ पूजयित्वा पद्मनिधिं तदधो दक्षवामतः ॥ मायाशक्तिं च हृच्छक्तिं गङ्गां च यमुनां तथा ॥ १६३ ॥ धातारं च विधातारं दं देहल्यै नमोनमः ॥ आदौ तु पश्चिमद्वारपूजा चेयम्प्रकाशिता ॥ १६४ ॥ नन्दी चापि महाकालो द्वारयोर्दक्षवामयोः ॥ सम्पूज्यैवमुदग्द्वारं प्राग्याम्ये च प्रपूजयेत् ॥ १६५ ॥ द्वारपालौ क्रमात्तेषु गणेशवृषभावपि ॥ भृङ्गिरीटी तथा स्कन्द उमाचण्डेश्वरौ तथा ॥ १६६ ॥ विष्णोर्नन्दः सुनन्दश्च चण्डश्चापि प्रचण्डकः ॥ बलश्च प्रबलश्चैव भद्रश्चापि सुभद्रकः ॥ १६७ ॥ वक्रतुण्डश्चैकदंतो महोदरगजाननौ ॥ लम्बोदरश्च विकटो गाणेशा द्वारपालकाः ॥ १६८ ॥ विघ्नराजो धूम्रवर्णः क्रमात्पश्चिमद्वारतः॥ देव्याश्चैव तु योगिन्योष्टावेता द्वारपालिकाः ॥ ॥ १६९ ॥ ब्राह्मी माहेश्वरी चैव कौमारी वैष्णवी तथा ॥ वाराही च तथेन्द्राणी चामुण्डा च श्रिया सह ॥ १७० ॥ अथ वक्ष्ये द्वारदेवध्यानं तन्त्रेषु गोपितम् ॥ देवद्वारं द्वारदेवाः स्वयमुद्घाटयन्ति यत् ॥ १७१ ॥ पाशा-ङ्कुशफलाम्भोजपर्णपाणिञ्च तुन्दिलम् ॥ वीरं विघ्नेश्वरं वन्दे गजवक्त्रं त्रिलो-चनम् ॥ १७२ ॥ पद्मद्वयवराभीतिलसत्पाणिचतुष्टयाम् ॥ निर्दग्धहेमगौ-राङ्गीं महालक्ष्मीं त्रिलोचनाम् ॥ १७३ ॥ अक्षस्रक्पुस्तकाभीतिवरहस्तां त्रिलोचनाम् ॥ श्वेतपद्मासनां शुक्लां श्वेतवस्त्रां सरस्वतीम् ॥ १७४ ॥ कपा-

---

१ नाम्नः प्रथमाक्षरेषु सानुस्वारेषु चतुर्थ्यंतेषु नमोन्तेषु तत्तद्देवतापूजामन्त्रः स्यात् यथा गंगणपतये नमः ॥ क्षें क्षेत्रपालाय नमः ॥ वसुंधरासंयुताय शंशङ्खनिधये नमः ॥ वसुमत्यासंयुताय पं पद्मनि-धये नमः ॥ मां मायाशक्त्यै नमः ॥ ह्वं हृच्छक्त्यै नमः ॥ गं गङ्गायै नमः ॥ यं यमुनायै नमः ॥ धां धात्रे नमः॥ विं विधात्रे नमः । २ वक्रतुंडादयः षड्गणेशद्वारपास्तेषां नामानि मूले स्पष्टानि

लशूलविलसत्करपाणं कृष्णविग्रहम् ॥ त्र्यक्षं तीक्ष्णं भावयामि क्षेत्रेऽस्मिन्क्षेत्रनायकम् ॥ १७५ ॥ वसुन्धरान्दक्षभुजेनालिङ्ग्य तु सुभाण्डिनम् ॥ वामे शङ्खधरं मुक्तानिभं शङ्खनिधिम्भजे १७६ ॥ आलिङ्गन्तं वसुमतीं ललाटे पद्मचिह्नितम् ॥ भजे पद्मनिधिं नित्यं वामेनोत्पलधारिणम् ॥१७७॥ वराङ्कुशाभीतिपाशहस्तां संसारमूलिकाम् ॥ त्रिनेत्रां श्यामवर्णान्तां श्यामां मायामहं भजे ॥ १७८॥ पाशाङ्कुशवराभीतिं दधानामरुणप्रभाम् ॥ ग्राहारूढामहं वन्दे गङ्गां सर्वसारिद्वराम् ॥ १७९ ॥ कृष्णकच्छपमारूढां कण्ठे नीलोत्पलस्रजम् ॥ वराभयकरां वन्दे कालिन्दीं कालविग्रहाम् ॥ १८० ॥ कर्त्तारं जगतां वन्दे शङ्खचक्रगदाम्बुजम् ॥ बिभ्राणं गरुडारूढं धातारं कृष्णविग्रहम् ॥ १८१ ॥ रक्तं रक्तारविन्दाक्षं वराभयकमण्डलुम् ॥ हंसारूढं विधातारं वन्दे त्र्यक्षसमन्वितम् ॥ १८२ ॥ सिंहारूढां श्यामवर्णां खड्गखेटकधारिणीम् ॥ अधःस्थां देहलिं वन्दे पश्चिमास्यां सुदक्षिणाम् ॥ १८३ ॥ पश्चिमद्वारमासाद्य तालत्रितयपूर्वकम् ॥ द्वारमुद्घाट्य चास्त्रेण मन्त्रितान्सर्षपाक्षतान् ॥ १८४ ॥ पुष्पयुक्तांस्तु विकिरेन्मण्डपाभ्यन्तरे बुधः ॥ नाराचमुद्रया[1] सम्यगस्त्रमन्त्रेण देशिकः ॥ १८५ ॥ अपक्रामन्तु भूतानि पिशाचाः सर्वतोदिशम् ॥ याश्चात्रनिवसन्त्यन्यदेवता भुवि संस्थिताः ॥१८६॥ अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता भूमिसंस्थिताः ॥ ये भूता विघ्नकर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया ॥१८७॥श्लोकयोरन्ततश्चास्त्रं पठन्नाराचमुद्रया ॥ जह्यात्तान्मण्डपस्यान्तस्ततो विघ्नांस्तु निर्गतान् ॥ १८८ ॥ स्ववामाङ्गस्य सङ्कोचान्मार्गन्दत्त्वापसारयेत् ॥ अस्त्रमन्त्रं स्मरन्वामपार्ष्णिघातत्रयेण च ॥ १८९ ॥ भौमानुत्सादयेत्तालत्रितयेनान्तरिक्षगान् ॥ तिर्य्यग्दृष्टयवलोकेन दिव्यान्विघ्नान्निवारयेत् ॥ १९० ॥ दक्षपादम्पुरस्कृत्य प्रविशेद्देवमन्दिरम् ॥ शाक्तस्तु वामपादेन द्वारमाच्छाद्य वाससा ॥ १९१ ॥ पञ्चगव्यार्घ्यतोयाभ्यां प्रोक्षयन्मण्डपान्तरम् ॥ सम्मार्जनोपलेपाद्यैर्दर्पणोदरवत्कृतम् ॥ ॥ १९२ ॥ विमलं धूपदीपादिपुष्पदामाभिशोभितम्[2] ॥ पञ्चवर्णरजश्चित्रं

---

१ वाणमुद्रया ॥ वाणमुद्रा दक्षमुष्टेस्तर्जन्या दीर्घया भवेत् ॥ २ प्रसूनमालाभिराजितम् ॥

स्थानशुद्धिरियं मता ॥ १९३ ॥ नैर्ऋत्यामर्चयेद्वास्तुपुरुषं चन्दनादिभिः॥ तत्रैव वास्त्वधीशं च ब्रह्मणे नम इत्यपि ॥ १९४ ॥ रक्तवर्णं रक्तवर्णशक्तिद्वादशसंयुतम् ॥ पूजयित्वा दीपनाथं भैरवं प्रार्थयेदिति ॥ १९५ ॥ अतितीक्ष्ण महाकाय कल्पान्तदहनोपम ॥ भैरवाय नमस्तुभ्यमनुज्ञां दातुमर्हसि ॥ ॥ १९६ ॥ ॐफडिति च मन्त्रेण पूजावेदीं ततो विशेत् ॥ संस्कुर्य्यादासनस्थानं चतुर्भिर्वीक्षणादिभिः ॥ १९७ ॥ संस्कारे तत्र सम्पूज्या वेद्यंताः पीठदेवताः ॥ आधारशक्तिमारभ्य स्वासनं तत्र विन्यसेत् ॥ १९८ ॥ पूजासनमथात्मीयं चैलाजिनकुशोत्तरम् ॥ तत्रोपविश्य विधिवत्स्मरेद्विष्णुं गुरुं तथा ॥ १९९ ॥ मेरुपृष्ठ ऋषिः प्रोक्तः सावित्रीछिन्द ईरितम् ॥ पृथिवी देवता प्रोक्ता विनियोगो निजासने ॥ २०० ॥ पृथ्वि त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुना धृता ॥ त्वं च धारय मां देवि पवित्रं कुरु चासनम्॥ २०१॥ आसनस्य चतुष्कोणे गणेशं च सरस्वतीम् ॥ दुर्गां क्षेत्रपतिश्चापि वह्न्यादिषु[1] समर्चयेत् ॥ २०२ ॥ उदङ्मुखः प्राङ्मुखो वा स्वस्तिकासनमास्थितः[2] ॥ पद्मासनगतो[3] वापि ऋजुकायो मनस्स्थिरः ॥ २०३ ॥ स्थापयेद्दक्षिणे भागे पूजाद्रव्याणि चात्मनः॥ सुवासिताम्बुसम्पूर्णं सव्ये कुम्भं सुशोभनम्॥ २०४॥ प्रक्षालनाय करयोः पात्रे पृष्ठे निवेशयेत् ॥ घृतादिज्वलितान्दीपान्स्थापयेत्परितः शुभान् ॥ २०५ ॥ दर्पणं चामरं छत्रं तालवृंतश्च पादुके ॥ यथायथन्तु संस्थाप्य संस्कुर्य्यात्तानि चात्मवान् ॥ २०६ ॥ पुष्पनैवेद्यगन्धादीन् ह्रीं हूं फडिति मन्त्रतः ॥ नाराचमुद्रया दृष्ट्वा समयांश्च विलोकयन् ॥ २०७ ॥ दृष्टं वाचात्मविज्ञातं सम्यक् पुष्पादिदूषणम् ॥ अस्पृश्यस्पर्शनं वापि यदन्यार्जितञ्च वा ॥ २०८ ॥ तथा निर्माल्यसंस्पृष्टं कीटाद्यारोहणञ्च यत् ॥ तत्पूर्वन्नाशमायाति नैवेद्याद्यवलोकनात ॥ २०९ ॥ ततो रमिति मन्त्रेण

---

१ आग्नेये गं गणेशाय नमः, नैर्ऋत्यकोणे, सं सरस्वत्यै नमः, वायव्ये, दुं दुर्गायैनमः, ईशाने, क्षं क्षेत्रपतये नमः । २ जानूर्वोरन्तरे सम्यग्धृत्वा पादतले उभे । समकायं सुखासीनं स्वास्तिकं तम्प्रचक्षते । ३ वामोरूपरि दक्षिणं हि चरणं संस्थाप्य वामं तथा दक्षोरूपरि पश्चिमेन विधिना धृत्वा कराभ्यां दृढम् ॥ अंगुष्ठं हृदये निधाय चिबुकं नासाग्रमालोकयेदेतद्व्याधिकलापनाशनकरं पद्मासनं चोच्यते ।

शिखां दीपस्य संस्पृशेत् ॥ स तु स्याच्छुभदो दीपो निष्क्रव्यादः सुखप्रदः ॥ ॥ २१० ॥ पतङ्गकीटकेशादिदाहात्क्रव्यादसञ्ज्ञितः ॥ वसामज्जादिसम्भूतैर्घृताद्यैरुपयोजितम् ॥ २११ ॥ अज्ञानरूपं तत्सर्वं दोषं स्पर्शाद्विनश्यति ॥ क्षौंबीजमुच्चरेन्मन्त्री देवतीर्थेन[1] संस्पृशेत् ॥ २१२ ॥ पानीयं घटमध्यस्थं दृष्ट्वा सम्यक् च साधकः ॥ वामेन पाणिना धृत्वा वामपार्श्वस्थितं घटम् ॥ २१३ ॥ पात्राधारे न्यसेन्न्यूनं यदत्राज्ञानतो भवेत् ॥ जलाशयशवस्पर्शाज्जलं स्थाने च सङ्गतम् ॥ २१४ ॥ इत्यादि दूषणं नश्येत्तत्प्रियं देवपूजने ॥ ततः कृताञ्जलिः पूतो वामदक्षिणपार्श्वयोः ॥ २१५ ॥ गुरुं गणपतिं नत्वा पुरतः स्वेष्टदेवताम् ॥ सुगन्धपुष्पाण्यादाय चन्दनाक्तानि मन्त्रवित् ॥ २१६ ॥ ह्रौं मन्त्रेणाथ करयोरस्त्रमन्त्रेण मर्दयेत् ॥ तत्पुष्पं वामहस्तेन समादाय च मस्तकम् ॥ २१७ ॥ भ्रामयेत्परितस्तारं[2] जपन्नाघ्राय तत्पुनः ॥ ह्रौंॐ[3] पूर्वम्पठेच्छ्लोकमिमं साधकसत्तमः ॥ २१८ ॥ सर्वत्र विलयं यान्तु ये मां हिंसन्ति हिंसकाः ॥ मृत्युरोगभयक्लेशाः पतन्तु रिपुमस्तके ॥ २१९ ॥ अस्त्रमन्त्रेण[4] नाराचमुद्रयेशदिशि त्यजेत् ॥ करशुद्धिं ततोऽस्त्रेण कुर्य्यात्तालत्रयं ततः ॥ ॥ २२० ॥ ऊर्ध्वोर्ध्वमस्त्रमन्त्रेण दिग्बन्धमपि तेन च ॥ तेन सम्पतितं तेजो वह्निप्राकारमुद्रया[5] ॥ २२१ ॥ रक्षेदात्मनि शूलेन प्राणायामत्रयं चरेत् ॥ भूतशुद्धिं ततः कुर्य्यात्तत्प्रकारमथ ब्रुवे ॥ २२२ ॥ पादतो जानुपर्य्यन्तं चतुरस्रं सचक्रकम् ॥ लंयुतं पीतवर्णं च भूस्थानं ब्रह्मदैवतम् ॥ २२३ ॥ अधिष्ठितं निवृत्त्याख्यकलया स्थानमुच्यते ॥ समुत्पत्तेस्तु जीवानामेवं रूपं

---

१ अंगुल्यग्रे तीर्थं दैवं स्वल्पांगुल्योर्मूले कायम । मध्येंगुष्ठांगुल्योः पैत्रं मूले ह्यंगुष्ठस्य ब्राह्मम् । बाणमुद्रा दक्षमुष्टेस्तर्जन्या दीर्घया भवेत् ॥ २ तत्पूर्वमस्तकोपरि परितो भ्रामयन् ॥ ३ ॐमन्त्रं जपन् ॥ ४ ह्रौं ॐ सर्वत्र विलयं यान्तु इति श्लोकं पठेत् फट्मन्त्रेण बाणमुद्रां विधाय तत्पुष्पमीशानकोणे क्षिपेत् ५ वह्निप्रकारमुद्रा तु त्रिशूलाग्रावुभौ करौ । व्यत्यस्तावभितो वह्नेर्नयेदस्त्राह्वयापि च ॥ द्विपाण्योस्तिर्यक्कुलीकृत्थाय व्यत्यासेन भ्रामणाद्वह्निप्राकारमुद्रा भवति ॥ अस्या एवास्त्रमुद्रानाम ॥ त्रिशूलाख्या भवेन्मुद्रा अंगुष्ठेन कनिष्ठिकाम् । बद्ध्वा प्रसादयेच्छेषमंगुलीनां त्रयं तदा ॥ अंगुष्ठाभ्यां कनिष्ठांगुल्यौ परिपीड्य शेषांगुलीस्तिस्रः प्रसारयेत्तस्मात्रिशूलमुद्रा भवति ॥

विचिन्तयेत् ॥२२४॥ जान्वोरानाभिपर्य्यन्तमपां स्थानं मितप्रभम् ॥ अर्धचन्द्रनिभं शृङ्गद्वयं तत्पद्मलाञ्छितम् ॥ २२५ ॥ षट्कोणं विन्दुभिः षड्भिर्युतं वंबीजसंयुतम् ॥ प्रतिष्ठाकलया युक्तं ध्यायेत्तद्विष्णुदैवतम् ॥ २२६ ॥ नाभ्यादिकण्ठपर्य्यन्तमारक्तं रुद्रदैवतम् ॥ रंबीजयुक्तं कलया युतं विद्याख्यया तथा ॥ २२७ ॥ दीप्तिमत्स्वस्तिकोपेतं त्रिकोणाकारतां गतम् ॥ महाप्रलयवत्स्थानं वह्नितत्त्वं विचिन्तयेत् ॥ २२८ ॥ कण्ठाद्भ्रूमध्यपर्य्यन्तं षट्कोणाकारतां गतम् ॥ षड्विन्दुलाञ्छितं वृत्तं वेष्टितं कृष्णवर्णकम् ॥ २२९ ॥ वायुस्थानं शान्तिकलाधिष्ठितं शिवदैवतम् ॥ यंबीजरूपं ध्यात्वेत्थं प्राणरूपं विचिन्तयेत् ॥ ॥ २३० ॥ भ्रूमध्याद्ब्रह्मरन्ध्रान्तमाकाशस्थानमुच्यते ॥ वृत्ताकारन्धूम्रवर्णं महोच्चध्वजलाञ्छितम् ॥२३१॥ शान्त्यतीताख्यकलयाधिष्ठितं शिवदैवतम् ॥ हंबीजयुक्तं ध्यात्वेत्थं देहे भूतानि विन्यसेत् ॥ २३२ ॥ धर्म्मकन्दसमुद्भूतं ज्ञाननालसुशोभितम् ॥ कृत्वा तत्कर्णिकासंस्थं प्रदीपकलिकानिभम् ॥ २३३ ॥ सुषुम्णावर्त्मना जीवं परमात्मनि योजयेत् ॥ योगयुक्तेन विधिना सोहंमन्त्रेण साधकः ॥ २३४ ॥ तेनैव सर्वभूतानि विलीनानि विचिन्तयेत् ॥ शरीरे वामकुक्षौ तु चिन्तयेत्पापपूरुषम् ॥ २३५ ॥ वामकुक्षिस्थितं पापपूरुषं कज्जलप्रभम् ॥ ब्रह्महत्याशिरस्कन्धं स्वर्णस्तेयभुजद्वयम् ॥ २३६ ॥ सुरापानहृदायुक्तं गुरुतल्पकटिद्वयम् ॥ तत्संसर्गपदद्वन्द्वमङ्गप्रत्यङ्गपातकम् ॥ २३७ ॥ उपपातकरोमाणं रक्तश्मश्रुविलोचनम् ॥ खड्गचर्म्मधरं क्रूरं रुष्टं पापं विचिन्तयेत् ॥ २३८ ॥ तथा संशोषयेदेनं पूरकादिक्रमेण वै ॥ विधाय प्राणसंरोधं वायुबीजेन वायुना ॥ ॥ २३९ ॥ मूलाधारोत्थितेनैव वह्निना निर्दहेच्च तत् ॥ एवं सन्दह्य पापिनो द्वात्रिंशन्मात्रया ततः ॥ २४० ॥ भस्मना सहितं मन्त्री रेचयेदिडया पुनः ॥ वामनाड्यां चन्द्रबीजं कुन्देन्दुयुतसुप्रभम् ॥ २४१ ॥ भालेन्दुराजे संयोज्य ततः षोडशमात्रया ॥ सुषुम्णया चतुष्षष्टिमात्रया तोयबीजकम् ॥ २४२ ॥ ध्यात्वामृतमयीं सृष्टिं पञ्चाशद्वर्णरूपिणीम् ॥ तया देहं विचिन्त्यैवं मनसा पिङ्गलाध्वना ॥ २४३ ॥ द्वात्रिंशन्मात्रया मन्त्री लंबीजेन दृढं नयेत् ॥

सञ्जाते सकले देहे देवतोपासनक्षमे ॥ २४४ आत्मलीनानि तत्त्वानि स्वस्थानं प्रापयेत्ततः ॥ आत्मानं हृदयाम्भोजादानयेत्परमात्मनः ॥ २४५॥ हंसमन्त्रेण विधिवत्तेजोरूपं कलेवरम् ॥ देवताराधने योग्यमुत्पन्नमिति भावयेत् ॥ २४६ ॥ भूतशुद्धिविहीनेन कृता पूजाभिचारवत् ॥ विपरीतफलं दद्याद-भक्त्या पूजनं यथा ॥ २४७ ॥ भूतशुद्धिं विधायेत्थं प्राणस्थापनमाचरेत् ॥ प्राणप्रतिष्ठामन्त्रस्य मुनयोजेशपद्मजाः ॥ २४८ ॥ ऋग्यजुस्सामच्छन्दांसि प्राणशक्तिस्तु देवता ॥ ऋषींञ्छिरसि वक्त्रे तुच्छन्दांसि हृदि देवताम्

---

१ ॐ अस्य श्रीप्राणप्रतिष्ठामन्त्रस्य ब्रह्मविष्णुमहेश्वरा ऋषयः ऋग्यजुस्सामानिच्छन्दांसि चैतन्यरूपा प्राणशक्तिर्देवता प्राणस्थापने विनियोगः ॥ ब्रह्मविष्णुमहेश्वरेभ्यः ऋषिभ्यो नमः शिरसि, ऋग्यजुस्सामच्छन्दोभ्यो नमो मुखे, प्राणशक्त्यै देवतायै नमो हृदि ॥ २९० ॥ आं बीजाय नमो गुह्ये, ह्रीं शक्तये नमः पादयोः क्रों कीलकाय नमः सर्वाङ्गे ॥ २९१ ॥ अथ हृदयादिन्यासः ॥ आं ह्रीं क्रों अं कं खं गं घं ङं आकाशवायुवह्निजलपृथिव्यात्मने आं हृदयाय नमः ॥ ओं आं ह्रीं क्रों इं चं छं जं झं ञं शब्दस्पर्शरूपरसगन्धात्मने ईं शिरसे स्वाहा ॥ ओं आं ह्रीं क्रों उं टं ठं डं ढं णं श्रोत्रत्वक्चक्षुर्जिह्वाघ्राणात्मने ऊं शिखायै वषट् ॥ ओं आं ह्रीं क्रों एं तं थं दं धं नं वाक् पाणिपादपायूपस्थात्मने ऐं कवचाय हुम् ॥ ओं आं ह्रीं क्रों ओं पं फं बं भं मं वक्तव्यादानगमनविसर्गानन्दात्मने औं नेत्रत्रयाय वौषट् ॥ ओं आं ह्रीं क्रों अं यं रं लं वं शं षं सं हं क्षं मनोबुद्ध्यहङ्कारचित्तात्मने अः अस्त्राय फट् ॥ अथ करन्यासः ॥ ओं आं ह्रीं क्रों अं कं खं गं घं ङं आकाशवायुवह्निजलात्मने आं अंगुष्ठाभ्यां नमः ॥ ओं आं ह्रीं क्रों इं चं छं जं झं ञं शब्दस्पर्शरूपरसगन्धात्मने आं तर्ज्जनीभ्यां स्वाहा ॥ ओं आं ह्रीं क्रों उं टं ठं डं ढं णं श्रोत्रत्वक्चक्षुर्जिह्वाघ्राणात्मने ऊं मध्यमाभ्यां वषट् ॥ ओं आं ह्रीं क्रों एं तं थं दं धं नं वाक्पाणिपादपायूपस्थात्मने ऐं अनामिकाभ्यां हुम् ॥ ओं आं ह्रीं क्रों ओं पं फं बं भं मं वक्तव्यादानगमनविसर्गानन्दात्मने औं कनिष्ठिकाभ्यां वौषट् ॥ ओं आं ह्रीं क्रों अं यं रं लं वं शं षं सं हं क्षं मनोबुद्ध्यहङ्कारचित्तात्मने अः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट् ॥ ॥ २९७ ॥ आं नमो नाभेरारभ्य पादान्तम् ॥ ह्रीं नमो नाभितः हृदयपर्य्यन्तम् ॥ क्रों नमो हृदयान्मस्तकान्तम् ॥ २९८ ॥ अधुनाङ्गन्यासविधिरन्यतो गृहीत्वोच्यते ॥ यथा ॥ यं त्वगात्मने नमो हृदि, रं असृगात्मने नमो दक्षिणांसे, लं मांसात्मने नमः ककुदि ॥ वं मेदआत्मने नमो वामस्कन्धे, शं अस्थ्यात्मने नमो हृदयाद्दक्षिणभुजाग्रान्तम् ॥ षं मज्जात्मने नमो हृदयाद्वामभुजाग्रान्तम् ॥ सं शुक्रात्मने नमो हृदयाद्दक्षिणपादाग्रान्तम् ॥ हौं ओजआत्मने नमो हृदयाद्वामपादाग्रान्तम् ॥ हं प्राणात्मने नमो हृदयान्नाभ्यन्तम् ॥ संजीवात्मने नमो हृदयान्मस्तकान्तम् ॥ इत्थमुक्तन्यासान्विधाय हृत्कमलस्य अष्टदलेषु कर्णिकायां च पूर्वादिक्रमेण लं, रं, हं, षं, वं, सं, शं छं क्षं इमान्वर्णान्विन्यस्य तदनन्तरं ध्यानं विदधीत ॥

॥ २४९ ॥ आम्बीजाय नमो गुह्ये पादे ह्रीं शक्तये नमः ॥ नाभौ नमः क्रों कीलाय नियोगोऽसुस्थितावित ॥ २५० ॥ ॐ आंह्रींक्रोंअङ्कवर्गं सानुस्वारं नमो हृदि ॥ पञ्चतत्त्वं समुच्चार्य्य दीर्घाकारं तथैव च ॥ २५१ ॥ इञ्चवर्गञ्च शब्दादिशिरसे वह्निगेहिनी ॥ तानि बीजानि उं ताट्टक्टवर्गं श्रोत्रकादि च ॥ २५२ ॥ प्रोक्ता तदात्मनेत्रैव शिखायै च वषड्वदेत् ॥ तानि बीजानि एं तुं च वागादीनि तदात्मने ॥ २५३ ॥ ऐमुक्त्वा कवचायेति हुं वदेत्तदनन्तरम् ॥ चतुर्बीजं च पूर्वोक्तमों पवर्गं च तादृशम् ॥ २५४ ॥ वाण्याद्यात्मन औंनेत्राय वौषट् च तथा वदेत् ॥ चतुर्बीजं च अन्ताद्द्यवर्गं मनआदि च ॥ ॥ २५५ ॥ तदात्मने स्वरश्चान्त्योऽस्त्राय फट् चेति संवदेत ॥ अङ्गुष्ठादौ हस्ततलान्ते न्यसेदेवमेव हि ॥ २५६ ॥ नाभ्यधश्चापि कण्ठाधो मूर्द्धाद्येथ तदन्तकम् ॥ आं ह्रीं क्रों क्रमतो न्यस्य हृत्पद्माष्टदलेषु च ॥ २५७ ॥ पूर्वतः क्रमतो वर्णान् कर्णिकायां हदन्तकान् ॥ लं रं हं षं यं च वं च सं शं क्षं इति वर्गतः ॥ २५८ ॥ दिक्षु न्यसेत्ततो ध्यायेत्प्राणशक्तिं हृदि स्थिताम् ॥ तस्या ध्यानं यदत्रैव तद्ब्रवीमि शृणु प्रिये ॥ २५९ ॥ रक्ताब्धिपोतारुणपद्मसंस्थां पाशाङ्कुशेष्वासवरासिबाणान् ॥ शूलं कपालं दधतीं कराब्जै रक्तां त्रिनेत्राम्प्रणमामि देवीम् ॥ २६० ॥ इति प्राणशक्तिध्यानम् ॥ हस्तं निधाय हृदये प्राग्बीजं यादिकाष्टकम् ॥ हंसः सोहं मम प्राणा वदेदिह द्विरुक्तितः

१ आंक्रींक्रोंयंरंलंवंशंषंहं हंसः सोहं मम प्राणा इह प्राणा मम जीव इह स्थितः मम वाङ्मनश्चक्षुः श्रोत्रं घ्राणः प्राणा इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा ओम् । त्रिभिर्मूलोक्तश्लोकैरयं मन्त्र उद्धृतो भवति परन्तु मन्त्रमहोदध्युक्तःप्राणप्रतिष्ठामन्त्रोऽस्माच्छ्रेष्ठतरोऽस्तीति ज्ञेयम् । यथा पाशं माया शृणि प्रोच्य यादीन्सप्तेन्दुसंयुतान् । तारान्वितं नभस्सप्तवर्णमन्त्रं ततो जपन् ॥ मम प्राणा इह प्राणा मम जीव इह स्थितः । मम सर्वेन्द्रियाण्युक्त्वा मम वाङ्म न ईरयेत् ॥ चक्षुः श्रोत्रं घ्राणपदं प्राणा इह समीर्य्य च ॥ आगत्य सुखमुच्चार्य्य चिरं तिष्ठन्त्विदं पठेत् ॥ वह्निजायां च सप्तार्णम्मन्त्रमेतं पुनर्वदेत् । प्राणप्रतिष्ठामन्त्रोयं स्मृतः प्राणनिधापने । सबिन्दवो मेरुहंसाकाशाः सर्गी भृगुः पुनः । मायेतितारुद्धोयं मन्त्रः सप्ताक्षरो मतः । एवं प्राणान्प्रतिष्ठाप्य मातृकान्यासमाचरेत् । एतेभ्यः श्लोकेभ्यः उद्धृतः यथा—आंह्रींक्रोंयंरंलंवंशंषंसंहोंओंक्षंसंहंसः ह्रीं ओं सोहं मम प्राणा इह प्राणा मम जीव इह स्थितः । मम सर्वेंद्रियाणि वाङ्मनश्चक्षुः श्रोत्रं घ्राणं प्राणा इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा ओंक्षं संहंसः ह्रीं ओम् ।

॥ २६२ ॥ उक्त्वा तथैव च पुनर्मम जीव इह स्थितः ॥ पुनस्तदुक्त्वाऽमम तु वाङ्मनश्चक्षुरुच्चरेत्॥२६३॥श्रोत्रं घ्राणः प्राण इहागत्य सुखं चिरन्ततः॥ तिष्ठन्तु वह्निजायान्तमुक्त्वा तारं ततो जपेत् ॥ २६४ ॥ वपुर्ज्योतिर्म्मयं ध्यायेदिति स्यात्प्राणसंस्थितिः ॥ प्राणायामत्रयं कृत्वा मातृकान्यासमाचरेत् ॥ २६५ ॥ प्राणायामास्त्रिधा प्रोक्तास्तान्त्रवैदिकयौक्तिकाः ॥ संसिद्धिः पापनाशाय योगसिद्धिः फलं क्रमात् ॥ २६६ ॥ मातृकाख्यश्च मन्त्राख्यस्तान्त्रिको द्विविधो मतः ॥ मातृकाख्यो जपस्यादौ जपस्यान्ते कृतो यदि ॥ २६७ ॥ वर्णव्यत्यासादिदोषानशेषान्हन्ति तं शृणु ॥ वामया पूरयेद्वायुं स्वरैः कादैश्च कुम्भके ॥ २६८ ॥ रेचयेद्यादिभिर्दक्षनासायां मातृकादिभिः यावच्छक्तोनियम्यासुं मनसैव मनुं जपेत् ॥ २६९ ॥ कनिष्ठानामिकाङ्गुष्ठैर्नासां धृत्वा तु मान्त्रिकः ॥ प्राणायाममत्रयं प्रोक्तं यदन्यन्मनसा कृतम् ॥ २७० ॥ जपपूजादिकं तस्य दोषमेष व्यपोहति ॥ गायत्रीं शिरसा सार्द्धं सप्तव्याहृतिपूर्विकाम् ॥ २७१ ॥ प्रतिप्रणवसंयुक्तां त्रिर्जपेत्स इहोत्तमः ॥ मध्यमूलाद्यावदग्रमङ्गुष्ठेन निपीड्यते ॥२७२ ॥ मात्रा सा प्रोच्यते सद्भिर्योगेभीष्टं प्रयच्छति ॥ जानुप्रदक्षिणीं कुर्य्याद्यावत्कालेन हस्तकः ॥ २७३ ॥ तावत्कालमिता मात्रा स्वनिश्वाससमापि च ॥ जघन्यो रविमात्रः स्याज्जिनमात्रस्तु मध्यमः ॥ २७४ ॥ श्रेष्ठः षड्वर्गमात्रः स्याद्योगत्रयसुसाधकः ॥ केवले कुम्भके सिद्धे सिद्धिस्स्याद्राजयोगजा ॥२७५ ॥ वीर्य्यस्तम्भश्च बह्वायुर्वलीपलितनाशनम्॥पूरके कुम्भके सिद्धे क्रियायोगस्य सिद्धयः ॥ २७६ ॥ पूर्वोक्तान च न शीतोष्णबाधाक्षुत्तृड्भवापि च ॥ पूरकः कुम्भको रेचो यदा तुल्यः प्रजायते॥ २७७ ॥ हठयोगस्तदा सिद्धो ह्यणिमाद्यष्टसिद्धये ॥ ईषत्फलं जघन्ये तु मध्यं मध्ये परेखिलम् ॥ २७८ ॥ निरन्तराब्दत्रितयाभ्यासात्सर्वं भवेत्फलम्॥ प्राणायामविधिः प्रोक्तो मया तुभ्यं

---

१ शेषःनाशयेति ॥

वरानने ॥२७९॥ ऋषिर्गुरुत्वाच्छिरसि वर्णत्वाच्छन्द आनने ॥ चिन्तना-देवतायास्तु हृदये धारणं मतम् ॥ २८० ॥ ऋगताविति धातुस्तु ऋवर्णः प्रापको मतः ॥ षिः षणार्थस्तु विज्ञानमतस्तत्प्रापकस्तु सः ॥ २८१ ॥ छदिर्धातुरितीच्छायामत्र यस्मात्प्रवर्तते ॥ मुखमिच्छाप्रदं छन्दो मन्त्रार्थ-च्छादनात्तु वा ॥ २८२ ॥ क्रीडार्थको दिविर्धातुः सम्पूर्णं देवतापदम् ॥ साधकेष्टं ददातीति देवता परिकीर्त्तिता ॥ २८३ ॥ रक्षमाणो यदात्मीय हृदयेस्ति चिदात्मकः ॥ तस्मात्तं च नमस्कुर्य्यान्मुख्याङ्गुष्ठेन संस्पृशेत् ॥ ॥ २८४ ॥ स्वाहया क्रियते सम्यग्विष्टपाहरणं यतः ॥ अनामातर्ज्जनीभ्यां सा चाङ्गुष्ठाभ्यामिहेष्यते ॥ २८५ ॥ शिखा वषट्पदं यच्च शिखयात्मतनु-ग्रहः ॥ यस्मात्तस्माद्वषडिति क्रियतेंगुलिमध्यया ॥ २८६ ॥ ग्रहणार्थः कवचधातुर्हुंहस्तेन गृह्यते ॥ शरीरतस्तु कवचं तर्ज्जन्या-नामयाऽपि तत् ॥ २८७ ॥ यथार्थज्ञानकृद्वौषट् तन्नेत्राभ्यां प्रजा-यते ॥ तस्मात्तदुक्तं तत्र वौषट् तर्ज्जन्याद्यैस्तु तत्स्मृतम् ॥ ॥ २८८ ॥ एकाक्षत्वात्कुबेरादिदेवेष्वेकं तमुच्चरेत् ॥ त्र्यान्तं विष्ण्वादिके रुद्रादौ तु नेत्रत्रयात्मकम् ॥ ॥ २८९ ॥ आध्यात्मिकादिरूपं यत्साधकस्य विनी-यते॥ अविद्याजातमस्त्रं तत्फट् कराभ्यां प्रपंच्यते॥ २९०॥ प्राणायामं मातृकायाः कृत्वा न्यासान्समाचरेत्॥ ते चैकविंशतिः प्रोक्ताः कामनाभेदतोपि च॥ २९१॥ अधिकारिविभेदेन नित्यत्वेनापि केनचित् ॥ देवताभेदतो वापि तद्रहस्यान्निरू-प्यते॥ २९२॥ पुरुषे दैवते नित्या केवलं स्वरमातृका॥ यन्न्यासादुपचर्य्याद्या धर्माः सिद्धान्तिसाधके ॥ २९३ ॥ ऋषिर्ब्रह्मा देवता तु मातृकाख्या सरस्वती ॥ हलो बीजानि गायत्री छन्दः शक्तिः स्वरास्स्मृताः ॥ २९४ ॥

---

१ ॐ अस्य श्रीमातृकान्यासस्य ब्रह्मा ऋषिर्गायत्री छन्दः मातृकाख्या सरस्वती देवता हलो बीजानि स्वराः शक्तयः अव्यक्तं कीलकम्, अभीष्टसिद्धये विनियोगः । ब्रह्मर्षये नमः शिरसि, गायत्रीछन्दसे नमो मुखे, मातृकासरस्वत्यै देवतायै नमो हृदि, हल्भ्यो बीजेभ्यो नमो गुह्ये, स्वरेभ्यः शक्तिभ्यो नमः पादयोः । अव्यक्ताय कीलकाय नमो नाभौ ॥

अव्यक्तं कलिमुद्दिष्टं नियोगोभीष्टसिद्धये ॥ दक्षे[1] करतले तस्य पृष्ठे च करभे तथा ॥ २९५ ॥ अंगुष्ठादिष्वथो वामे विपर्य्यासेन विन्यसेत् ॥ बिन्दुयुक्ता-न्क्रमेणैव स्वरान्न्यासोऽयमादिमः ॥ २९६ ॥ अयं[2] चेन्न्यासतो वामः संहारन्यास उच्यते ॥ पापशत्रुक्षयाद्यर्थं क्रमेणादौ समाचरेत् ॥ २९७ ॥ सविसर्गैः स्वरैर्यस्तु केवलं न्यासवत्कृतः ॥ सृष्टिन्यासः प्रयोगादौ कर्त्तव्यस्तस्य सिद्धये ॥ २९८ ॥ वामात्करतलात्तत्तु कनिष्ठांतं तु विन्यसेत् ॥ अष्टौ स्वराँल्लकारादींस्तथा दक्षतलादपि ॥ २९९ ॥ अकाराद्यान्बिन्दुसर्गयु-क्तान्न्यासोयमीरितः ॥ स्थित्यादौ मुनिदेवादिप्राग्वत्कायस्थितावयम् ॥ ॥ ३०० ॥ ककारादिणकारान्तान्[3]वर्णान्पञ्च दशैव हि ॥ अङ्गुष्ठादिक-निष्ठान्तं दक्षहस्तस्य पर्व ॥ ३०१ ॥ न्यसेद्बिन्दुयुतान्सर्वान्वामेप्येवं तु

---

१ दक्षिणहस्तस्य करतलकरपृष्ठयोः पुनः करभ अर्थान्मणिबन्धात्कनिष्ठिकामूलपर्यन्तं हस्त-बहिर्भागः पुनरंगुष्ठाद्यंगुलीषु अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं, एता अष्टमातृकाः पुनः वामहस्तस्य कनिष्ठा-नामिकामध्यमातर्जन्यंगुष्ठकरभकरतलेषु न्यसेत् ॥ लृं ॡं एं ऐं ओं औं अं अः, एता अष्टमातृकाः क्रमतो न्यसेत् ॥ अं नमो दक्षिणहस्तस्य करतले, आं नमो दक्षिणकरपृष्ठे, इं नमो दक्षिणकरभे, ईं नमो दक्षिणांगुष्ठे, उं नमो दक्षिणतर्जन्याम्, ऊं नमो दक्षिणमध्यमांगुल्याम्, ऋं नमो दक्षिणानामि-कायाम्, ॠं नमो दक्षिणकनिष्ठिकांगुल्याम्, लृं नमो वामहस्तस्य कनिष्ठिकांगुल्याम्, ॡं नमो वामा-नामिकायाम्, एं नमो वाममध्यमायाम्, ऐं नमो वामतर्जन्याम्, ओं नमो वामांगुष्ठे, औं नमो वाम-करभे, अं नमो वामकरपृष्ठे, अः नमो वामकरतले ॥ इति स्थितिन्यासः । २ पुनः एतस्येवविप-र्यये न्यासस्य करणं संहारन्यासं ब्रुवते । पुनर्यः स्थितिन्यासस्यैव क्रममातृकासु विसर्गं मेलयित्वान्यासः क्रियते स सृष्टिन्यासःप्रोच्यते ॥ यथा-अः नमो दक्षिणकरतले, आः नमो दक्षिणकरपृष्ठे, इः नमो दक्षिणकरभे एतद्रीत्या ज्ञेयम् । ३ ककाराण्णपर्यन्तं पञ्चदशाक्षराणि दक्षिणहस्तपञ्चदशपर्वसु पुनः तकाराच्छकारपर्यंतं तान्येवाक्षराणि वामपाणिपर्वसु न्यसेत् ॥ यथा- कं नमः दक्षांगुष्ठमूले, खं नमः अंगुष्ठमध्ये, गं नमः अंगुष्ठाग्रे, घं नमः तर्जनीमूले, ङं नमः तर्जनीमध्ये, चं नमः तर्जन्यग्रे, छं नमः मध्यमामूले, जं नमः मध्यमामध्ये झं नमः मध्यमाग्रे, ञं नमः अनामिकामूले, टं नमः अनामि-कामध्ये, ठं नमः अनामिकाग्रे, डं नमः कनिष्ठामूले, ढं नमः कनिष्ठामध्ये, णं नमः कनिष्ठाग्रे, ॥ इत्थमेव वामपाणिपर्वसु ताद्यक्षराणि न्यसेत् ॥ यथा-तं नमः वामांगुष्ठमूले, थं नमः वामांगुष्ठमध्ये, द नमः वामांगुष्ठाग्रे, इत्यादि न्यासं विधाय ॥

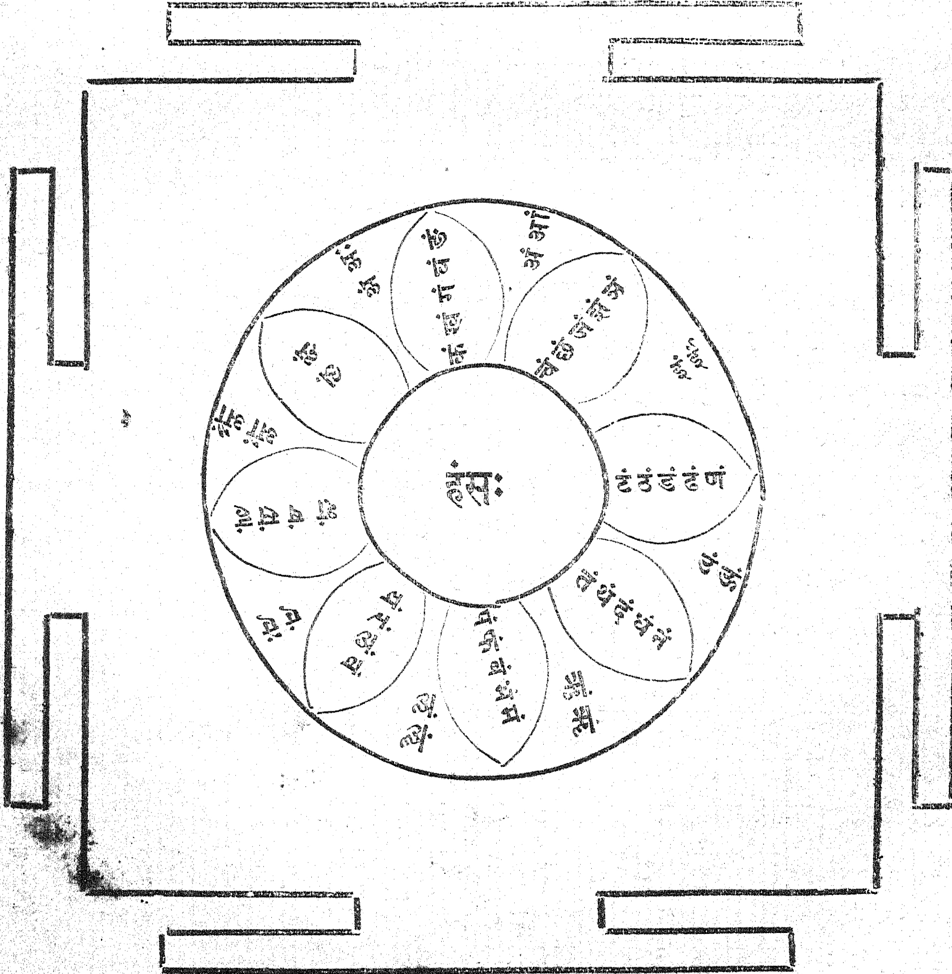
तादिकान् ॥ अङ्गुष्ठादिकनिष्ठान्तं हस्तयुग्मेपि विन्यसेत् ॥ ३०२ ॥ युगपत्पादिकान्वर्णान्ब्रूयात्तश्च नमोन्तकान् ॥ तत्तत्स्थाने करं दत्त्वा करशुद्धिकरस्त्वयम् ॥ ३०३ ॥ अंआंमध्ये कवर्गः स्यादिंईंमध्ये चवर्गकः ॥ उंऊंमध्ये टवर्गस्तु एंऐंमध्ये तवर्गकः ॥ ३०४ ॥ ओंऔंमध्ये पवर्गः स्यादं अः मध्ये तु यादिकाः ॥ एभिः सबिन्दुकैरङ्गुल्यादिन्यासो हृदादिकः ॥ ३०५ ॥ कर्त्तव्योऽस्यापि ऋष्यादिविनियोगस्य सिद्धये ॥ षडङ्गशुद्ध्यै क्रोधादिजातपापनिवृत्तये ॥ ३०६ ॥ तालत्रयेण दिग्बन्धं प्रकुर्य्यादस्त्रमन्त्रतः ॥ ततो ध्यायेत्पद्मवर्णं श्वेतं शिरसि संस्थितम् ॥ ३०७ ॥ कर्णिकाया निजं मन्त्रं संस्मरेत्केशराष्टके ॥ स्वरयुग्मं तथा पत्रेष्वपि सप्तसु कादिकान् ॥ ३०८ ॥ सप्तवर्गानष्टमेऽत्र लंक्षमेवं विचिन्तयेत् ॥ एवं चिन्तयतो रोगो ह्यपमृत्युर्विनश्यति ॥ ३०९ ॥ अथान्तर्मातृकान्यासं वक्ष्येऽन्तःसिद्धिकारकम् ॥ यं कृत्वा योगिनां

---

१ पुनः षं सं हं लं क्षं नमो दक्षहस्ते, षं सं हं लं क्षं नमो वामहस्ते । २ यथा— अं कं खं गं घं ङं आं अंगुष्ठाभ्यां नमः, इं चं छं जं झं ञं ईं तर्जनीभ्यां नमः, उं टं ठं डं ढं णं ऊं मध्यमाभ्यां नमः, एं तं थं दं धं नं ऐं अनामिकाभ्यां नमः, ओं पं फं बं भं मं औं कनिष्ठिकाभ्यां नमः अं यं रं लं वं शं षं सं हं लं क्षं अः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः ॥ इत्थमेव हृदयादिन्यासानामपि करणमुचितम् । ३ जैसे यथा अस्य श्रीमातृकान्यासस्य ब्रह्मा ऋषिर्गायत्री छन्दः मातृकाख्या सरस्वती देवता हलो बीजानि इत्यादि सर्वं प्रथममेव लिखितं तद्वीस्यैव न्यासः क्रियेत । ४ पुनरेतन्न्यासष्यादिस्मरणप्रथमं कृत्वान्यन्यासकरणं योग्यम् । शिरसि अष्टदलकमलस्य ध्यानं विधाय तत्कर्णिकामध्ये यत्फलं भवति तत्र (हंसः) पुनः केशरादर्वागर्थादिकदलादुत्तरं यद्द्वितीयमस्ति तयोर्द्वयोर्मध्ये द्विद्विस्वराणां पुनः सप्तमदले कादिसप्तवर्गाणां त्वष्टमे दले (लंक्षं) अस्य मन्त्रस्य ध्यानं क्रियेत । अस्य चक्रं लिख्यते ॥ ५ पुनर्यन्मूले अथान्तर्मातृकान्यासं वक्ष्येऽन्तःसिद्धिकारकम् ॥ इदमुक्तं परन्तु एतन्मातृकान्यासप्रकारो न प्रकटीकृतः । तद्विधिस्तन्त्रान्तरादाहृत्य लिख्यते ॥ अं इं उं ऋं ऌं एं ऐं ओं औं नमः इति कण्ठदेशस्थे धूम्राभे षोडशदले विशुद्धचक्रे ॥ कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं नमः इति हृदयस्थे प्रवालवर्णे द्वादशदले अनागतचक्रे ॥ डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं नमः इति नाभ्युपरिस्थे नीलवर्णे-दशमदले मणिपूरकचक्रे ॥ बं भं मं यं रं लं नमः इति नाभ्यधोभागस्थे विद्युद्वर्णे षड्दले स्वाधिष्ठानचक्रे ॥ वं शं षं सं नमः इति सुवर्णाभे चतुर्थदले मूलाधारचक्रे ॥ हं क्षं नमः इति भ्रूमध्यदेशस्थे चन्द्राभे द्विदले आज्ञाचक्रे ॥ सहस्रारे हिमानिभे सर्ववर्णविभूषिते ॥ अकखादित्रिरेखासु आलक्षत्रयभूषिते ॥ परबिन्दुभ्यो नमः ॥

चित्तं पातके न प्रवर्त्तते ॥ ३१० ॥ मूलाधारे ध्वनिं श्रुत्वा प्रबुद्धा शक्तिकुण्डली ॥ क्वचित्पावकसङ्काशा सूक्ष्मतेजस्स्वरूपिणी ॥ ३११ ॥ बहिर्न्यासमथो वक्ष्ये पूर्वोक्तब्रह्मरन्ध्रके ॥ वर्णारविन्दे सन्ध्यायेन्मातृकाख्य-सरस्वतीम् ॥ ३१२ ॥ पञ्चाशद्वर्णभेदैर्निजसुवदनदोःपादयुक्कुक्षिवक्षोदेशां भास्वत्कपर्दाकलितशशिकलामिन्दुकुन्दावदाताम् ॥ अक्षस्रक्कुम्भचिन्तालिखि-तवरकरां त्रीक्षणां पद्मसंस्थामक्षाकल्पामतुच्छस्तनजघनभरां भारतीं

गुणशतनागसंख्याकश्लोकाद्रामशतदशसंख्यापूरकपर्यंतमेतच्चक्रवर्णान् । मूलादि-ब्रह्मरंध्रांतं बिंदुं चिदात्मकं ध्यात्वा तत्स्रुतसुधासारैर्मातृकां तर्पयेत् । तन्त्रान्तरेषु हंसःइत्येतन्मनुस्थाने हसौं लिखेत् ॥ भूपूरे पूर्वोक्तदि-क्पालानां चायुधानां पूजा । एवं विभाव्यम् ॥



तां नमामि ॥ ३१३ ॥ ललाटे मुखवृत्तेक्षिश्रवोनासासु गण्डयोः ॥

---

१ त्रिशतभूतपरिच्छेदपूरकश्लोकात्त्रिशताष्टादशश्लोकपर्यन्तम्मातृकान्यासविधिर्मूलमनो वर्त्तते । यथा—अं ललाटे, आं नमो मुखे, इं नमो दक्षनेत्रे, ईं नमो वामनेत्रे, उं नमो दक्षकर्णे, ऊं नमो वामकर्णे, ऋं नमो दक्षनासायाम्, ॠं नमो वामनासायाम्, लृं नमो दक्षकपोले, लॄं नमो वामकपोले, एं नमः ओष्ठे, ऐं नमः अधरे, ओं नमः ऊर्ध्वदन्तपङ्क्तौ औंनमः अधोदन्तपङ्क्तौ, अं नमः मूर्ध्नि, अः नमो मुखे, अं पुनः अः एतद्द्वयमातृकान्यासस्थानमत्र ग्रन्थे शिरः मुखञ्च कथितम् । परन्तु वीरचूडामण्यादिष्वन्यतन्त्रेषु अः नमो जिह्वाग्रे एवं न्यासदर्शनं तदप्युचितम् । कं नमो दक्षिणबाहुमूले, खं नमः कर्पूरे, गं नमो मणिबन्धे, घं नमः अंगुलिमूले, ङं नमः अंगुल्यग्रे, चं नमो वामबाहुमूले, छं नमः कर्पूरे, जं नमः मणिबन्धे, झं नमः अंगुलिमूले, ञं नमः अंगुल्यग्रे, टं नमः दक्षपादमूले, ठं नमः जानुनि, डं नमो गुल्फे, ढं नमो दक्षपादांगुलिमूले, णं नमः अंगुल्यग्रे, तं नमः वामपादमूले, थं नमः जानुनि, दं नमः गुल्फे, धं नमः वामपादांगुलिमूले, नं नमः वामपादांगुल्यग्रे, पं नमः दक्षपार्श्वे, फं नमः वामपार्श्वे, बं नमः पृष्ठे, भं नमो नाभौ, मं नमो जठरे, यं त्वगात्मने नमो हृदये रं असृगात्मने नमः दक्षांसे, लं मांसात्मने नमः ककुदि, वं मेद आत्मने नमः वामांसे, शं अस्थ्यात्मने नमः हृदयादक्षभुजाग्रान्तम्, षं मज्जात्मने नमो हृदयाद्वामभुजाग्रान्तम् सं शुक्रात्मने नमः हृदयाद्दक्षिणपादाग्रान्तम्॥ हं आत्मने नमः हृदयाद्वामपादाग्रान्तम् ॥ ळं अन्तरात्मने नमः हृदयान्मस्तकान्तम्, पुनः अन्यत्र ग्रन्थान्तरे दृश्यते ळं नमः हृदयादुदरपर्य्यन्तम्, इति सृष्टिक्रममातृकान्यासः॥ क्षं परमात्मने नमः हृदयान्मुखपर्य्यन्तम् ॥ एभिरेव मातृकावर्णैर्विन्दुरहितैस्सविसर्गैर्मातृकान्यास उक्तस्थानेषु जायते । यथा—अः नमः ललाटे, आः नमः मुखे, इः नमः, दक्षनेत्रे ईः नमः वामनेत्रे इत्यादि ॥ पुनर्विन्दुप्रयुक्तोयमेव न्यासो विपरीतः संहारन्यासः प्रचक्ष्यते । अयं क्षकारमारभ्याकारपर्यन्तं पूर्णो भवति यथा—क्षं परमात्मने नमः हृदयान्मुखपर्य्यन्तम्, ळं अन्तरात्मने नमः हृदयादुदरपर्य्यन्तम्, हं आत्मने नमः हृदादिवामपादपर्य्यन्तम्, सं शुक्रात्मने नमः हृदादिदक्षपादपर्य्यन्तम्, षं मज्जात्मने नमः हृदयाद्वामबाहुपर्य्यन्तम्, शं अस्थ्यात्मने नमः हृदयादक्षबाहुपर्य्यन्तम्, वं मेदात्मने नमः वामस्कन्धे, लं मांसात्मने नमः ककुदि, रं असृगात्मने नमः दक्षांसे, यं त्वगात्मने नमः हृदये, मं नमः उदरे, भं नमो नाभौ, बं नमः पृष्ठे, फं नमो वामपादे, पं नमः दक्षपादे, नं नमः वामपादांगुल्यग्रे, धं नमः वामपादांगुलिमूले, दं नमः वामपादगुल्फे, थं नमः वामपादजानुनि, तं नमः वामपादमूले, णं नमः दक्षपादांगुल्यग्रे, ढं नमः दक्षपादांगुलिमूले, डंनमः दक्षपादगुल्फे, ठं नमः दक्षपादजानुनि, टं नमः दक्षपादमूले, ञं नमो वामकरांगुल्यग्रे,झं नमो वामकरांगुलिमूले, जं नमः वामकरमणिबन्धे, छं नमः वामबाहुकूर्परे, चं नमः वामबाहुमूले, ङं नमो दक्षकरांगुल्यग्रे, घं नमः दक्षकरांगुलिमूले, गं नमः दक्षकरमणिबन्धे, खं नमः दक्षबाहुकूर्परे, कं नमः दक्षबाहुमूले, अः नमः मुखे, अं नमः मूर्ध्नि, औं नमः अधोदन्तपंक्तौ, ओं नमः ऊर्ध्वदन्तपंक्तौ, ऐं नमः अधरे, एं नमः ऊर्ध्वोष्ठे, लॄं नमः वामकपोले,लृं नमः दक्षकपोले, ॠं नमः वामना-

ओष्ठयोर्दन्त पङ्क्त्योश्च मूर्ध्नि वक्त्रे न्यसेत्स्वरान् ॥ ३१४ ॥ बाहुसन्धिषु साग्रेषु कचवर्गौ न्यसेत्सुधीः ॥ टतवर्गौ पदोदस्त द्वत्पार्श्वयोः पृष्ठदेशतः ॥ ३१५ ॥ नाभौ कुक्षौ पवर्गं च हृदं सककुततः ॥ न्यस्य यादि चतुर्वर्णाञ्छादिषट्कं ततो न्यसेत् ॥ ३१६ ॥ हृदादिकरयोरंध्र्योर्जठरे वदने तथा ॥ न्यासस्त्वयं वर्णमात्राहीनपाठप्रपूरकः ॥ ॥ ३१७ ॥ क्षमारभ्य अकारान्तो न्यासश्चेत्क्रियते तदा ॥ संहारन्यासनामासौ बिन्दुन्यास इतीरितः ॥ ३१८ ॥ वाममार्गे प्रवृत्तानां शक्तिसेवनकारिणाम् ॥ अन्तर्न्यासात्परं बिन्दुन्यासे स्याच्छुक्रधारणम् ॥ ३१९ ॥ यावत्क्लिन्ना भवेच्छक्तिस्तावद्भोगो विधीयते॥ वामदक्षिणमार्गेण देवताध्यानमुच्यते ॥ ३२० ॥ अक्षस्रजं हरिणपोतमुदग्रटङ्कं विद्यां करैरविरतं दधतीं त्रिनेत्राम्॥ अर्धेन्दुमौलिमरुणामरविन्दवासां वर्णेश्वरीं प्रणमत स्तनभारनम्राम् ॥३२१॥ शाक्तो मनोरथः पूर्णो विसर्गन्यासमाचरेत्॥ततो बिन्दुः पतेत्तस्मादतो बिन्दु-

---

सापुटे, ऊं नमः वामकर्णे, उं नमः दक्षकर्णे ईं नमः वाम नेत्रे. इं नमः दक्षनेत्रे. आं नमः मुखवृत्ते. अं नमः ललाटे. इति संहारमातृकान्यासः ॥ पुनर्डकारमारभ्य ठकारपर्यन्तं स्थितिमातृकान्यासो विधातुमुचितः । तथाहि डं नमः दक्षपादगुल्फे, ढं नमः दक्षपादांगुलिमूले, णं नमः दक्षपादांगुल्यग्रे. तं नमः वामपादमूले. थं नमः जानुनि. दं नमः गुल्फे. धं नमः वामपादांगुलिमूले. नं नमः वामपादांगुल्यग्रे. पं नमः दक्षपार्श्वे, फं नमः वामपार्श्वे. बं नमः पृष्ठे, भं नमः नाभौ. मं नमः जठरे, यं त्वगात्मने नमः हृदि. रं असृगात्मने नमः दक्षांसे लं मांसात्मने नमः ककुदि वं मेदात्मने नमः वामांसे, शं अस्थ्यात्मने नमः हृदयाद्दक्षिणबाहुपर्य्यन्तम् षं मज्जात्मने नमः हृदयाद्वामबाहुपर्य्यन्तम् ॥ सं शुक्रात्मने नमः हृदयाद्दक्षिणपादपर्य्यन्तम् हं आत्मने नमः हृदयाद्वामपादपर्य्यन्तम् ळं अन्तरात्मने नमः हृदयादुदरपर्य्यन्तम् क्षं परमात्मने नमः हृदयान्मुखपर्य्यन्तम् अं नमः शिरसि, आं नमः मुखवृत्ते इं नमः दक्षनेत्रे ईं नमः वामनेत्रे उं नमः दक्षकर्णे ऋं नमः दक्षनासापुटे ॠं नमः वामनासापुटेः ऌं नमः दक्षकपोले ॡं नमः वामकपोले एं नमः ऊर्ध्वोष्ठे. ऐं नमः अधरोष्टे ओं नमः ऊर्ध्वदन्तपंक्तौ, औं नमः अधोदन्तपंक्तौ, अं नमः मूर्ध्नि अः नमः मुखे कं नमः दक्षबाहुमूले, खं नमः कूर्परे, गं नमः मणिबन्धे, घं नमः अंगुलिमूले, ङं नमः अंगुल्यग्रे, चं नमः वामबाहुमूले, छं नमः कूर्य्यरे, जं नमः मणिबन्धे, झं नमः अंगुल्यग्रे, टं नमः दक्षपादमूले, ठं नमः दक्षपादजानुनि इति स्थितिन्यासः ॥ सृष्टिस्थितिन्यासौ सेन्दुभिर्वा साविसर्गैर्मातृकावर्णैर्जायेते संहारन्यासस्तु केवलं बिन्दुयुङ्मातृकावर्णैर्भवतीति ज्ञेयम् ।

विसर्गकौ ॥ ३२२ ॥ न्यासौ प्रोक्तौ यदा शाक्तवामिनः कौलिकस्य वा ॥ शाक्तैस्तृप्तिं विना सर्वं न्यासेनापि विमुच्यते ॥ ३२३ ॥ तदासौ निरयं याति यावच्चन्द्रदिवाकरौ॥ इह लोकेऽप्ययंशस्स्याद्विहीनो ब्रह्मतेजसा॥ ३२४॥ भोगमोक्षधिया वामे पतितुं ये समुद्यताः ॥ विना मन्त्रं सर्प्पमणिं ते ग्रहीतुं समुद्यताः ॥ ३२५ ॥ विसर्गमातृकान्यासो भवेत्केवलमातृवत् ॥ विशेषस्तु विसर्गान्तो वर्णोच्चारो भवेदिति ॥ ३२६ ॥ बिन्दुसर्गयुताण्डादि ठान्तान्वर्णान्स्थितौ न्यसेत् ॥ पूर्वोक्ता एव मन्त्राद्याः षडंगध्यानमुच्यते ॥ ३२७ ॥ सिन्दूरकान्तिममिताभरणान्त्रिनेत्रां विद्याक्षसूत्रमृगपोतवरान्दधानाम् ॥ पार्श्वस्थितां भगवतीमपि काञ्चनाभा ध्यायेत्कराब्जधृतपुस्तकवर्णमालाम् ॥ ३२८॥ न्यासाः कार्य्यास्तु वटुभिस्स्थितिसंहारसृष्टयः ॥ संहारसृष्टिस्थितयो न्यस्यन्ते गृहसेविभिः ॥ ३२९ ॥ वानप्रस्थाश्च यतयो सृष्टिस्थितिलयान्त्रमात् ॥ ३३० ॥ न्यासान्कुर्य्युरिति प्रोक्तो मातृकान्यासविस्तरः ॥ वक्ष्ये कलामातृकाया न्यासं तस्य ऋषिः स्मृतः ॥ ३३१ ॥ प्रजापतिश्च गायत्री छन्दः स्यादत्र देवता ॥ सरस्वती मातृकाख्या नियोगोभीष्टसिद्धये ॥ ॥ ३३२ ॥ तारैः[1] षडंगं कुर्वीत ह्रस्वदीर्घान्तरस्थितैः ॥ ध्यानं कलामातृकाया न्यासे वक्ष्ये शृणु प्रिये ॥ ३३३ ॥ हस्तैः पद्मं रथांगं गुणमथ हरिणं पुस्तकं वर्णमालां टंकं शुभ्रं कपालं स्रवदमृतलसद्धेमकुम्भं वहन्तीम् ॥ मुक्ताविद्युत्पयोदस्फटिकमणिजपाबन्धुरैः पञ्चवक्त्रैस्त्र्यक्षैर्वक्षोजनम्रां सकलशशिनिभां शारदां तां नमामि ॥ ३३४ ॥ ध्यात्वैवं तारपूर्वान्तामकाराद्यां च मातृकाम् ॥ बिन्दुयुक्तां ङेन्तकलानामाढ्यां नमसान्विताम् ॥ ३३५ ॥ पूर्वोक्तशुद्धमात्राणां न्यासस्थानेषु विन्यसेत् ॥ निवृत्तिश्च प्रतिष्ठा च विद्या-

---

१ अं ॐ आं अंगुष्ठाभ्यां नमः, इं ॐ ईं तर्जनीभ्यां नमः, उं ॐ ऊं मध्यमाभ्यां नमः, एं ॐ ऐं अनामिकाभ्यां नमः ओं ॐ औं कनिष्ठिकाभ्यां नमः, अं ओं अः करतलकरपृष्ठाभ्यां नम इति करन्यासः एवं हृदयादिन्यासः उक्तरीत्या हृदयादिन्यासः करणीयः २ ॐकार ॐकारबिन्दुभ्यां चाकारादिमातृकार्णैः सहितनिवृत्त्यादिकलानां चतुर्थ्यन्तानां नामान्ते नमः पदं संयोज्य सूर्वोक्तललाटादिस्थानेषु न्यासो विधेयः। यथा ॐ अं निवृत्त्यै नमः ललाटे, ॐ आं प्रतिष्ठायै नमः मुखवृत्ते, ॐ इं विद्यायै नमः दक्षनेत्रे, ॐ ईं शान्त्यै नमः वामनेत्रे, ॐ उं ऋद्धिकायै नमः दक्षकर्णे, ॐ ऊं दीपिकायै नमः वामकर्णे ॥ इत्यादि ।

शांतिस्तथर्द्धिका ॥ ३३६ ॥ दीपिका रेचिका चापि मोचिका चापराभि-धा ॥ सूक्ष्मा सूक्ष्मामृता ज्ञानामृता चाप्यायिनी ततः ॥३३७॥ व्यापिनी व्योमरूपा चानन्ता सृष्टिः समृद्धिका ॥ स्मृतिर्मेधा ततः कान्तिर्द्युति-र्लक्ष्मीः स्थिरा स्थितिः ॥ ३३८ ॥ सिद्धिर्जरा पालिनी च क्षान्तिरीश्व-रिका रतिः ॥ कामिका वरदा चान्या ह्लादिनी प्रीतिसंयुता ॥ ३३९ ॥ दीर्घा तीक्ष्णा तथा रौद्री माया निद्रा च तन्द्रिका ॥ क्षुधा स्यात्क्रोधिनी पश्चात्क्रियोत्कारी समृत्युका ॥ ३४० ॥ पीता श्वेताऽरुणा पश्चादसिता नतयाऽन्विता ॥ उक्ता कलामातृकेयं स्थानेऽकारादिके न्यसेत् ॥ ३४१ ॥ तत्र नादात्मनो जाताः स्वरजास्तु सदाशिवात्॥ अक्षमालाम्पुस्तकं च पाशश्चा-पिकपालकम्॥ ३४२॥ हस्तैर्दधत्यो ध्येयास्ताः पीतगन्धानुलेपनाः ॥ विष्णो-रुकारात्सञ्जाताः कचवर्गकला दश ॥ ३४३ ॥ पद्महस्तास्तथा रक्ता अक्ष-मालाधरा वराः ॥ विष्णोरुकारात्सञ्जाताष्टतवर्गकला दश ॥ ३४४ ॥ श्यामा अभयशङ्खाब्जवरहस्तास्समीरिताः ॥ मकारा रुद्रतो जाताः पयवर्गकला नव ॥ ३४५ ॥ शरच्चन्द्रनिभा हस्तैरभयं शूलमेव च ॥ कपालं च वरन्ध्येया दधत्य इति साधकैः ॥ ३४६ ॥ शकारादिकपञ्चानामीश्वरो बिन्दुतो भवेत् ॥ अभयं हरिणं टङ्कं वरं च करपल्लवैः ॥ ३४७ ॥ दधत्यो रक्तवर्णाश्च ध्येया न्यासे कलात्मके ॥ केशवादिमातृकायाः साध्यो नारायणो मुनिः ॥ ३४८ ॥ अमृताद्या तु गायत्रीच्छन्दोलक्ष्मीर्हरिः सुरः ॥ ह्रिरुक्तैः शक्तिश्रीकामैः षड-ङ्गानि समाचरेत् ॥ ३४९ ॥ शङ्खचक्रगदापद्मकुम्भादर्शाब्जपुस्तकम् ॥ बिभ्रतं मेघचपलावर्णं लक्ष्मीहरिं भजे ॥३५०॥ शक्तयस्तु प्रियांकेषु निषण्णाः सस्मिताननाः ॥ एवं ध्यात्वा न्यसेच्छँक्तिश्रीकामपुटिताक्षराम् ॥ ३५१ ॥

---

१ मया इति पाठान्तरम्। २ ह्रीं हृदयाय नमः श्रीं शिरसे स्वाहा क्लीं शिखायै वषट् ह्रीं कवचाय हुम् श्रीं नेत्राभ्यां वाषैट् क्लीं अस्त्राय फट् । ३ ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अं क्लीं श्रीं ह्रीं केशवकीर्तिभ्यां नमः ललाटे ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं आं क्लीं श्रीं ह्रीं नारायणकान्तिभ्यां नमः मुखवृत्ते ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं इं क्लीं श्रीं ह्रीं माधवतुष्टिभ्यां नमः दक्षनेत्रे ॐ ह्रीं श्रीं ईं क्लीं श्रीं ह्रीं गोविन्दपुष्टिभ्यां नमः वामनेत्रे ।

तारादिहृदयान्ताश्च केशवाद्याश्च शक्तयः॥ ङ्यान्ता नमोन्ता उच्चार्य्याः स्थानेऽकारादिके न्यसेत् ॥ ३५२ ॥ कलामात्रा तु शाक्तानां नित्योयं विष्णुसेवने॥ केशवः कीर्तिसंयुक्तः कान्तिर्नारायणान्विता ॥ ३५३ ॥ माधवस्तुष्टिसंयुक्तो गोविन्दः पुष्टिसंयुतः ॥ विष्णुश्च धृतिसंयुक्तः शान्तियुङ्मधुसूदनः ॥ ३५४॥ त्रिविक्रमः क्रियायुक्तो वामनो दययान्वितः ॥ श्रीधरो मेधया युक्तो हृषीकेशश्च हर्षया॥ ३५५॥पद्मनाभयुता श्रद्धा लज्जा दामोदरान्विता ॥ वासुदेवश्च लक्ष्मी युङ्म धुसूऽनसरस्वती ॥ ३५६ ॥ प्रद्युम्नः प्रीतिसंयुक्तोऽनिरुद्धो रतिसंयुतः ॥ चक्री जया गदी दुर्गा शार्ङ्गी तु प्रभयान्वितः ॥ ३५७ ॥ खड्गी तु समया युक्तः शङ्खी चण्डासमन्वितः ॥ हली वाणीसमायुक्तो मुशली च विलासिनी ॥ ३५८ ॥ शूली विजयया युक्तः पाशी विरजयान्वितः ॥ अंकुशी विश्वया युक्तो मुकुन्दो विनयान्वितः ॥ ३५९ ॥ नन्दजः सुनदायुक्तो नन्दी सत्यासमन्वितः ॥ नर ऋद्ध्या नरकजित्समद्ध्या शुद्धियुग्घरिः ॥ ॥ ३६० ॥ कृष्णो बुद्ध्या भूत्या सत्यो मत्या युक् सात्वतस्स्मृतः ॥ भूधरः क्लेदिनीयुक्तो विश्वमूर्तिश्च क्लिन्नया ॥ ३६१ ॥ वैकुण्ठो वसुधायुक्तो वसुदापुरुषोत्तमौ ॥ बली तु परया युक्तो बलानुजपरायणे ॥ ३६२ ॥ बालसूक्ष्मे वृषघ्नस्तु सन्ध्यायुक्प्रज्ञया वृषः ॥ हंसः प्रभासमायुक्तो वराहो निशयान्वितः ॥ ३६३ ॥ विमलो मेधया युक्तो नृसिंहो विद्युतान्वितः ॥ केशवाद्या मातृकोक्ता यादियोगश्च पूर्ववत् ॥ ३६४ ॥ वक्ष्येथ शिवभक्तानां श्रीकण्ठादिकमातृकाम् ॥ मुनिः स्याद्दक्षिणामूर्तिर्गायत्रं छन्द ईरितम् ॥ ३६५ ॥ अर्धाद्रिजो हरो देवो नियोगः सर्वसिद्धये ॥ हलो बीजानि गुह्ये तु स्वराञ्छक्तीः पदोर्न्यसेत् ॥ ३६६ ॥ ह्रस्वदीर्घान्तरे कृत्वा प्राग्वद्वर्गान्हसौं तथा ॥ षड्दीर्घसंयुतं कृत्वा षडङ्गानि न्यसेत्तनौ ॥ ३६७ ॥ बन्धूककाञ्चननिभं रुधिराक्षमालाः पाशांकुशौ च वरदं निजबाहुदण्डैः ॥ बिभ्राणमिन्दुशकलाभरणं त्रिनेत्रमर्धाम्बिकेशमनिशं[1] वपुराश्रयामः ॥ ३६८ ॥ हसौं

१ विनोदया इति पाठान्तरम् ॥

ते मातृकामुक्ता देवान्ते च समुच्चरेत् ॥ ङेन्तफेन्तकतच्छक्तिं नमोन्ता मातृकास्थले ॥ ३६९ ॥ त्वगसृङ्मांसमेदोस्थिमज्जशुक्राण्यसून्वदेत् ॥ शक्तिं क्रोधन्तथात्मानं ङेन्तं यादिदशस्वपि ॥ ३७० ॥ श्रीकण्ठपूर्णोदर्य्यौ चानन्तो विरजयान्वितः ॥ सूक्ष्मेशः शाल्मली युक्तो लोलाक्षी युक् त्रिमूर्तिकः ॥ ॥ ३७१ ॥ अमरेशो वर्त्तुलाक्ष्या वर्षीशो दीर्घघोणया ॥ भारभूतिर्दीर्घमुख्या तिथीशो गोमुखीयुतः ॥ ३७२ ॥ स्थाण्वीशो दीर्घजिह्वायुग्हरः कुण्डोदरीयुतः ॥ झिण्टीशश्चोर्ध्वकेशी च भौतिको विकृतास्यया ॥ ॥ ३७३ ॥ सद्यो ज्वालामुखी चानुग्रहश्चोल्कामुखीयुतः ॥ अक्रूरः श्रीमुखी महासेनो विद्यामुखीयुतः ॥ ३७४ ॥ क्रोधनश्च महाकाल्या चण्डेशश्च सरस्वती ॥ पञ्चान्तकः सर्वसिद्धिगौरीयुक्तः प्रकीर्तितः ॥ ३७५ ॥ शिवोत्तमेशो विन्यस्यो युक्तस्त्रैलोक्यविद्यया ॥ एकरुद्रो मन्त्रशक्त्या कूर्मेशश्चाष्टशक्तियुक् ॥ ३७६ ॥ एकनेत्रो भूतमात्रायुक्तः स्याच्चतुराननः ॥ लम्बोदर्य्या युतः प्रोक्तस्त्वजेशो द्राविणीयुतः ॥ ३७७ ॥ सर्वेशो नागरीयुक्तः सोमेशः खेचरीयुतः ॥ लांगलीशश्च मञ्जर्य्या दारुकेशश्च रूपिणी ॥ ३७८ ॥ वारिण्या चार्धनारीशो ह्युमाकान्तः पुनर्युतः ॥ काकोदर्य्या तथाषाढी पूतनायुक्त ईरितः ॥ ३७९ ॥ चण्डीशो भद्रकालीयुगत्रीशो योगिनीयुतः ॥ मीनेशः शङ्खिनीयुक्तो मेषेशस्तर्जनीयुतः ॥ ३८० ॥ लोहितः कालरात्र्या च शिखीशः कुब्जिनीयुतः ॥ छगलण्डः कपर्दिन्या द्विदण्डीशश्च वज्रया ॥ ॥ ३८१ ॥ महाकालो जयायुक्तो बालीशः सुमुखेश्वरी ॥ भुजङ्गो रेचनीयुक्तः पिनाकी माधवीयुतः ॥ ३८२ ॥ खड्गीशो वारुणीयुक्तो बकेशो वायवीयुतः ॥ श्वेतो रक्षोविदारिण्या भृगुः सहजया युतः ॥ ३८३ ॥ नकुलीशश्च लक्ष्मीयुक् शिवेशो व्यापिनीयुतः ॥ संवर्त्तको महामायायुक्त एतास्तु मातृकाः ॥ ३८४ ॥ श्रीकण्ठाख्यादिमहेशान्तं पदं ङेन्तं प्रयोजयेत् ॥ सर्वे रुद्राः स्मृता रक्ता धृतशूलकपालकाः ॥ ३८५ ॥ शक्तयो रुद्रपीठस्थाः सिन्दूरारुणविग्रहाः ॥ रक्तोत्पलकपालाभ्यामलंकृतकराम्बुजाः ॥ ३८६ ॥ येनोपास्या महाविद्या दश तस्याधिकारिता ॥ भुवनेशी बीजपूर्वमातृकान्य-

सने सुराः ॥ ३८७ ॥ ऋषिः शक्तिस्तु गायत्री छन्दस्स्यान्मातृकामयी ॥ भुवनेशी देवताथ नियोगोभीष्टसिद्धये ॥ ३८८ ह्रस्वदीर्घान्तरगतैः षड्भिर्दीर्घ संयुतैः ॥ प्राग्वद्धरे षडङ्गं स्यादंगुष्ठादि तथैव च ॥ ३८९ ॥ उद्यत्कोटि-दिवाकरप्रतिनिभोत्तुङ्गोरुपीनस्तनी बद्धार्धेन्दुकिरीटहाररशनामञ्जीरसंशोभिता ॥ बिभ्राणा करपङ्कजैर्जपवटीं पाशांकुशौ पुस्तकं दिश्यान्नो जगदीश्वरी त्रिनयना पद्मे निषण्णा सुखम् ॥ ३९० ॥ लज्जाबीजं पूर्वमुक्त्वा मातृकान्यास एव हि ॥ भुवनेशी मातृकाणां न्यासो नार्पत्यसाधने ॥ ३९१ ॥ श्रीबीजपूर्वकः कार्य्यो लक्ष्मीकामैर्गृहस्थितैः ॥ ऋषिर्भृगुश्च गायत्रीछन्दो मातृस्वरूपिणी ॥ ३९२ ॥ लक्ष्मीस्तु देवता प्रोक्ता हरस्थाने शरौ कुरु ॥ न्यासार्थं तु षडङ्गादि शेषं श्रीबीजपूर्वकम् ॥३९३॥ विद्युद्दामसमप्रभां हिमगिरिप्रख्यैश्चतुर्भिर्भुजैः शुण्डादण्डसमुद्धृतामृतघटैरासिच्यमानामिमाम् ॥ बिभ्राणां करपङ्कजैर्जपवटीं पद्मद्वयं पुस्तकं भास्वद्रत्नसमुज्ज्वलां कुचनतां ध्यायेज्जगत्स्वामिनीम् ॥३९४ ॥ कामिनीमात्रसिद्ध्यर्थं कामबीजादिपूर्वकम् ॥ कुर्य्याच्च मातृकान्यासं मुनिः सम्मोहनः स्मृतः ॥ ३९५ ॥ गायत्रीच्छन्द उद्दिष्टं देवता मातृकामयी ॥ सम्मोहनी महादेवी पूर्वयुक्त्या षडङ्गकम् ॥ ३९६ ॥ बालार्ककोटिरुचिरां स्फटिकाक्षमालां कोदण्डमिक्षुजनितं स्मर, पञ्चबाणान् ॥ विद्यां च हस्तकमलैर्दधतीं त्रिनेत्रां ध्यायेत्समस्तजननीं नवचन्द्रचूडाम् ॥ ३९७ ॥ शक्तिश्रीकामबीजानां मातृकान्यासतो नृणाम् ॥ शत्रुत्वाद्या मन्त्रदोषा नश्यन्ति बहुवर्णिताः ॥ ३९८ ॥ महासम्मोहन ऋषिर्गायत्रीछन्द ईरितम् ॥ सम्मोहनीनाम देवी न्यासः प्राङ्मातृकासमः ॥९९॥ ध्यायेयमक्षवलयेक्षुशरासपाशपद्मद्वयांकुशवरान्नव पुस्तकं च ॥ आबिभ्रतीं नवभजैररुणां कुचार्त्तां सम्मोहनीं त्रिनयनां नवचन्द्रचूडाम् ॥ ४०० ॥ सर्वविघ्ननिरासार्थमवश्यं न्यासमाचरेत्॥ गणेशमातृकायास्तु मुनिर्गणक ईरितः ४०१ ॥ निवृद्गायत्रिकाछन्दो देवः शक्तिविनायकः॥ स्मृत्या दीर्घाद्यया चाङ्गं कृत्वा ध्यायेद्गजाननम् ॥ ४०२ ॥ शूलांकुशवराभीतिपाणिं रक्ताब्जहस्तया ॥ प्रियया लिङ्गितं रक्तं त्रिनेत्रं गणपं भजे ॥ ४०३ ॥ विघ्नेशो ह्रीसमायुक्तो विघ्न

राजः श्रियायुतः ॥ विनायकः पुष्टियुतः शान्तियुक्तः शिवोत्तमः ॥ ४०४॥ विघ्नकृत्स्वास्तिसंयुक्तो विघ्नहर्ता सरस्वती ॥ गणस्तु स्वाहया युक्त एकदन्तः सुमेधया ॥ ४०५ ॥ द्विदन्तः कान्तिसंयुक्तो गजवक्त्रश्च कामिनी ॥ निरञ्जनो मोहिनीयुक्कपर्दी तु नटीयुतः ॥ ४०६ ॥ दीर्घजिह्वः पार्वतीयुक्छंकुकर्णश्च ज्वालिनी ॥ वृषध्वजो नन्दयायुक्सुयशोगणनायकौ ॥ ४०७॥ गजेन्द्रः कामरूपिण्या शूर्प्पकर्णस्तथोमया ॥ त्रिलोचनस्तेजोवत्या लम्बोदरस्तु सत्यया ॥ ४०८ ॥ महानन्दश्च विघ्नेश्या चतुर्मूर्तिः स्वरूपया ॥ सदाशिवः कामदायुगामोदो मदजिह्वया ॥ ४०९ ॥ दुर्मुखो भूतिसंयुक्तः सुमुखो भौतिकायुतः ॥ प्रमोदः सितया युक्त एकपादो रमायुतः ॥४१०॥ द्विजिह्वो महिषीयुक्तः शूरश्चापि तु जम्भिनी ॥ वीरो विकर्णया युक्तःषण्मुखो भ्रुकुटीयुतः ॥ ४११ ॥ वरदो लज्जया वामदेवः स्याद्दीर्घघोणया ॥ धनुर्धरो वक्रतुण्डो द्विरदो यामिनीयुतः ॥ ४१२ ॥ सिर्नीशो रात्रिसंयुक्तः कामान्धो ग्रामणीयुतः ॥ मत्तः शशिप्रभायुक्तो विमत्तो लोललोचनः ॥ ४१३ ॥ मत्तवाहनचञ्चलो जटी दीप्तिसमन्वितः ॥ मुण्डी सुभगया युक्तः खड्गी दुर्भगया तथा ॥ ४१४ ॥ वरेण्यश्च शिवायुक्तो भगायुग्वृषकेतनः ॥ भक्तप्रियश्च भगिनी गणेशो भोगिनीयुतः ॥ ४१५ ॥ मेघनादस्सुभगया व्यापी स्यात्कालरात्रियुक् ॥ गणेश्वरः कालिकेति प्रोक्ता विघ्नेशमातृका ॥ ४१६ ॥ त्वगादियोगो यादीनां पूर्ववत्परिकीर्तितः ॥ प्रपञ्चयागन्यासोयं वक्ष्यते भुक्तिमुक्तिदः ॥४१७॥ महागणेशमन्त्रेण प्राणायामत्रयं चरेत् ॥ ऋषिः प्रपञ्चयागस्य गणकश्छन्द ईरितम् ॥ ४१८ ॥ गायत्री तु निवृत्पूर्वा महागणपतिः सुरः ॥ शीर्षादिषु न्यसेत्तांश्च गंबीजं चापि गुह्यके ॥ ४१९ ॥ स्वाहाशक्तिं पादयोस्तु नियोगोभीष्टसिद्धये ॥ ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गमिति पूर्वषड्दीर्घयुग्मकम् ॥ ४२० ॥ उच्चार्य्य कुर्य्यादङ्गो-

१ सुरेशा इति पाठान्तरम् । २ ॐ गां हृदयाय नमः, श्रीं गीं शिरसे स्वाहा, ह्रीं गूं शिखायै वषट्, क्लीं गैं कवचाय हुम्, ग्लौं गौं नेत्रत्रयाय वौषट्, गंगः अस्त्राय । फट् एवमङ्गन्यासादिन्यासानपि विदध्यात् ॥

नि तथांगुष्ठादिषु न्यसेत् ॥ तलद्वयं तथास्त्रेण कृत्वा दिग्बन्धमाचरेत ॥ ४२१ ॥ तर्जन्यङ्गुष्ठशब्देन दशदिक्ष्वथ चिन्तयेत ॥ ततो ध्यानं प्रकुर्वीत गणपस्येष्टसिद्धये ॥ ४२२ ॥ हस्तीन्द्राननमिन्दुचूडमरुणच्छायं त्रिनेत्रं रसादाश्लिष्टं प्रियया सपद्मकरया स्वाङ्कस्थया सन्तम् ॥ बीजापूरगदाधरं त्रिशिरयुक्चक्राब्जपाशोत्पलब्रीह्यग्रस्वविषाणरत्नकलशान्हस्तैर्वहन्तं भजे ४२३ महागणपतेर्मन्त्रमष्टवारं जपेत्ततः ॥ गमित्येकाक्षरं बीजं गणकोऽस्य मुनिर्मतः ॥ ४२४ ॥ देवो विघ्नेश्वरश्छन्दो निवृद्गायत्रिकाभिधा ॥ प्रपञ्चाख्यस्य यागस्य साङ्गतासिद्धिहेतवे ॥ ४२५ ॥ चतुश्चत्वारिंशत्सङ्ख्यजपार्थं विनियोजनम् ॥ अथ षड्दीर्घयुक्तेन कुर्य्यादङ्गानि गेन तु ॥ ४२६ ॥ गदापाशाङ्कुशकरं त्र्यक्षं च तुन्दिलं वरम् ॥ सिन्दूराभं चन्द्रमौलिं सर्पभूषं गलन्मदम् ॥४२७॥ एकवारं जपेत्पश्चाद्गणानान्त्वेति वैदिकम् ॥ गणेशमालामन्त्रस्य मुनिस्तु गणकः स्मृतः ॥ छन्दो मितं गणपतिर्देवता परिकीर्त्तितः ॥४२८॥ ह्रींक्रों तारो नमः सर्वं ङेन्तं विद्याधिपं ततः ॥ सर्वार्थसिद्धिदायेति सर्वदुःखप्रशेति च ॥ ४२९ ॥ ततो मनाय एह्येहि भगवन् वादयेति च ॥ स्तम्भयेतिद्वयं ह्रीं गं गां नमो वह्निगेहिनी ॥ ४३० ॥ क्रोंह्रीमित्थं पञ्चपञ्चाशद्वर्णो मन्त्र उच्यते ॥ जपेदिमं चतुर्वारं मुन्यादिसहितंन्यसेत् ॥ ४३१ ॥ न्यासपूर्वंत्रिवारं तु मातृकाध्यानपूर्वकम् ॥ स्वरादिसप्तवर्गैस्तु ग्रहान्सप्त प्रविन्यसेत् ॥४३२॥ मुखे बाह्वोः पादयोश्च जठरे हृदये क्रमात् ॥ तारो माया च हंसश्च सोहं स्वाहेति वै पुनः ॥ ४३३ ॥ प्रपञ्चयागमन्त्रोयमष्टार्णः समुदीरितः ॥ प्रपञ्चयागमन्त्रस्य मुनिर्ब्रह्मा समीरितः ॥ ४३४ ॥ परमाद्या समाख्याता गायत्री छन्द उत्तमम्॥ महः परं समाख्यातं देवताचिन्मयात्मिकम् ॥४३५॥ त्रयन्तेऽबाधितं नित्यं सर्वव्यापि निरञ्जनम् ॥ विलोमगैः पञ्चवर्णैः प्रपञ्चमनुसंस्थितैः ॥ ४३६ ॥ ह्रस्वदीर्घान्तस्थकादिवर्गैः पूर्वसमन्वितैः ॥ तारमायादिकैरेतैर्युक्तैर्हारिहराक्षरैः ॥ ४३७॥ षडङ्गानि प्रकुर्वीत जातियुक्तानि देशिकः ॥ वेदादिपञ्चमनुभिः परिचीयमानं मानं निरस्यं मुनिभि-

जगदेकमूलम् ॥ सच्चित्समस्तगमनश्वरमच्युतं तत्तेजः परं भजत पूर्णकृपाम्बुराशि ॥ ४३८ ॥ वेदादिमाययोरन्ते क्षकारान्तान्सबिन्दुकान् ॥ पृथगुच्चार्य्य हंसोहं स्वाहेति च वदन्हृदि ॥४३९ ॥ विभावयेदिमान्वर्णानात्मवह्नौ जुहोम्यहम् ॥ एवं हुत्वा क्षकारान्तानकारान्तान्पुनर्हुनेत् ॥ ४४० ॥ सविसर्गान्क्षकारान्तान्विन्यसेन्मातृकास्थले ॥ एवं प्रपञ्चयागाख्यमातृकान्यास ईरितः ॥ ४४१ ॥ एकविंशन्ततो योगपीठाख्यं न्यासमाचरेत् ॥ तत्पूर्वमुक्तं च ततः स्वेष्टमन्त्रस्य संचरेत् ॥ ४४२ ॥ तत्तत्कल्पोदितान्पश्चात्तत्तन्मुद्राः प्रदर्शयेत् ॥ आगमोक्तेन मार्गेण न्यासान्नित्यं करोति यः ॥ ॥ ४४३ ॥ देवताभावमाप्नोति मन्त्रसिद्धिः प्रजायते ॥ यो न्यासकवचच्छन्नो मन्त्रजापपरायणः ॥ ४४४ ॥ दृष्ट्वा विघ्नाः पलायन्ते सिंहं दृष्ट्वा यथा गजाः ॥ अकृत्वा न्यासजालं यो मूढात्मा कुरुते जपम् ॥ ४४५ ॥ विघ्नैस्स बाध्यते नूनं व्याघ्रैर्मृगशिशुर्यथा ॥ न्यासानां प्रचरत्वेन फलानामपि भूरिता ॥ ४४६ ॥ उक्तन्यासो न हि त्याज्यः कामतस्त्वधिकं चरेत् ॥ ॐ क्लीमिति तु बीजाभ्यां मुद्राया बन्धनं चरेत ॥ दर्शयेन्मूलमन्त्रेण हसौं बीजेन संन्यसेत् ॥ ४४७ ॥ ध्यानं कुर्य्यात्ततो मन्त्री तत्तत्कल्पोक्तवर्त्मना ॥ तदपि द्विविधं प्रोक्तं सगुणं निर्गुणं तथा ॥ ४४८ ॥ आत्मनो हृदयाम्भोजे कर्णिकाकेशरोज्ज्वले॥ प्रफुल्ले सोमसूर्य्याग्निमण्डले न विराजिते ॥ ॥ ४४९ ॥ स्वस्येष्टदेवतां तत्र यजेदागमबोधिताम् ॥ एवं यद्वेदनं तद्धि सगुणं ध्यानमीरितम् ॥ ४५० ॥ यज्जीवब्रह्मणोरैक्यं सोहं स्यामिति वेदनम् ॥ तदेवं निर्गुणं ध्यानमिति वेदविदो विदुः ॥ ४५१ ॥ अथान्तर्यजनं वक्ष्ये यथावदवधारय ॥ वामनाडीं समाकृष्य किञ्चिदाकुञ्चयेद्गुदम् ॥ रेचयेत्समंमार्गेण जिह्वा तालुगतां चरेत् ॥ ४५२ ॥ शक्तिं शिवे परे युक्त्वा

---

१ ॐ ह्रीं अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं ऌं ॡं एं ऐं ओं औं अं अः कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं बं भं मं यं रं लं वं शं षं सं हं ळं क्षं हंसः सोहं स्वाहा ॥

किञ्चिदाकुञ्चयेदधः ॥ कृत्वेत्थं तु यजेत्पीठे न्यासमार्गेण मन्त्रवित् ॥ ॥ ४५३ ॥ तस्मिन्पीठे स्थितामिष्टदेवतां मूर्तिविग्रहाम् ॥ ध्यात्वा यजेच्चन्दनाद्यैर्मानसैर्भोजनान्तकैः ॥ ४५४ ॥ भोजनावसरे त्वन्तर्वैश्वदेवं समाचरेत् ॥ मूलाधारे स्मरेत्कुण्डं कुण्डल्यग्निसमुज्ज्वलम् ॥ ४५५ ॥ आत्मान्तरात्मपरमज्ञानात्मचतुरस्रके ॥ धर्म्माधर्म्मान्विते त्र्यस्रे मूलमन्त्रपुरःसरम् ॥ ॥ ४५६ ॥ अहं जुहोमि स्वाहेति प्रत्येकं जुहुयात्ततः ॥ अहन्ताऽसत्यपैशुन्यकामक्रोधादिकं हविः॥४५७॥ मन एव स्रुवः प्रोक्तास्सुषुम्णादि गुदीरिता ॥ तदन्ते तन्मयो भूत्वा जपेदष्टोत्तरं शतम् ॥४५८॥ मूलं तत्सर्वसम्पत्त्यै देवतायै निवेदयेत् ॥ ततः प्रणम्य च गुरुं पूजाचक्रं समुद्धरेत् ॥ ४५९ ॥ सुवर्णरचिते पीठे भूपाला वशवर्त्तिनः॥रजतालंकृतं यन्त्रं सर्वैश्वर्य्यप्रदं मतम् ॥ ४६० ॥ यन्त्रन्तु स्फाटिकं स्वच्छं मनोभिलषितं ददेत् ॥ माणिक्यरचितं चेदं राज्यदं भुक्तिमुक्तिदम् ॥ ४६१ ॥ कृतं मरकतैर्यन्त्रं सर्वशत्रुविनाशनम् ॥ लोहत्रयोद्भवं यन्त्रं सर्वसिद्धिकरं मतम् ॥ ४६२ ॥ श्रीखण्डं शक्तिदं ज्ञेयं पौष्टिकं रक्तचन्दनम् ॥ श्रीपर्णीपीठमुद्दिष्टं पूजार्थं धनराज्यदम् ॥ ४६३ ॥ बैल्वके बहुलासम्पद्भूर्जपत्रे चतुष्पदाः ॥ गण्डकीभवपाषाणे भुक्तिमुक्तिरदूरतः ॥ ४६४ ॥ भूमौ सिन्दूररजसा रचितं सर्वकामदम् ॥ सीसकांस्यकृतं यन्त्रं सम्पत्तिं सन्ततिं हरेत् ॥ ४६५ ॥ फलकायां परे भित्तौ स्थापयेन्न कदाचन ॥ स्थापितं यदि मोहेन नाशयेत्तस्य तत्कुलम् ॥ ४६६ ॥ अरत्न्यंगुलविस्तारं प्राक्प्रत्यग्दक्षिणोत्तरे ॥ पलप्रमाणं कर्त्तव्यमर्चापीठं मनोहरम् ॥४६७॥ पूर्वाधोर्ध्वं प्रकुर्वीत चतुरस्रं समन्ततः ॥ तस्मिन्पीठे तु निर्माणं पूजाचक्रस्य कारयेत् ॥ ४६८ ॥ माणिक्यादिकपीठेषु मानं न्यूनं न दोषयेत् ॥ श्रीपर्णीचन्दनादीनामधिकं चेन्न दोषकृत् ॥ ४६९ ॥ अग्रे शुभग्रहौघेष्वनुकूलगुणवत्सु च ॥ नवार्चां कारयेदेषां सति तिथ्यादिकेक्षणे ॥४७०॥ क्षौद्राज्यदुग्धैः प्रथमं नारि-

केराम्भसा ततः ॥ अभिषिच्याथ तोयेन कथितेन वरौषधैः॥४७१॥ आवाह्याभ्यर्च्य तल्लग्ने चक्रे संस्थाप्य पूजयेत् ॥ गन्धपुष्पैर्नवैर्धूपैर्दीपनैवेद्यदर्पणौ ॥ ४७२ ॥ त्रिरात्रं पूजयेद्देवि त्रिसन्ध्यं च ततो निशि ॥ मकारैः पञ्चभिर्युक्ताश्चरेयुर्वामिनोर्चनम् ॥ ४७३ ॥ निशायां शक्तिपूजां च द्वितीयायां च कौलिकः ॥ एवं दिनत्रयं कृत्वा ततो नित्यक्रमं भजेत् ॥ ४७४ ॥ एवं देवीप्रतिष्ठायां क्रमस्सान्निध्यकारकः ॥ स्त्रीशूद्राणां वामिनां च कौलिकानामयं विधिः ॥ ४७५ ॥ महापापं न कुर्वन्ति पशुवद्वेदमार्गतः ॥ आख्यानदैश्च रघुभिः सन्ध्यावन्दननाशितैः ॥ ४७६ ॥ पातकैस्ते न लिप्यन्ते तस्मात्तेऽपशवः स्मृताः ॥ वामिनोपासितं यन्त्रं तेषां दृष्टिपथं गतम् ॥ ४७७ ॥ तद्देवताक्षोभकरं विक्षिप्तः साधको भवेत्॥ दक्षिणोपासितं यन्त्रं सूर्य्याग्निसमतेजसम् ॥ ४७८ ॥ पापिनो नैव पश्यन्ति यथोलूकास्तमोदृशः ॥ यथा नृभिर्दिनकरोदयः सर्वैरिहेष्यते ॥४७९॥ दक्षसंस्थापितं यन्त्रं तथा पुण्यात्मनां मतम् ॥ सर्वेषामेव भूतानां तुल्यदुःखसुखावुभौ ॥ ॥ ४८० ॥ वामदक्षिणमार्गौ तु तद्वन्मार्गौ दिवौकसाम् ॥ प्राधान्यं तु पुरन्ध्रीणां वामांगे दक्षिणांगके ॥ ४८१ ॥ पुंसां तथैव मार्गोपि कार्य्याकार्य्यविभेदतः ॥ कुण्डाश्च गोलका जातिविच्युता ये द्विजादयः ॥४८२॥ असंस्कृताश्च ये विप्रास्ते व्रात्याः परिकीर्तिताः ॥ ब्राह्मण्यहानिकृत्तेषां मद्यं मांसं च मैथुनम् ॥ ४८३ ॥ अब्राह्मणा वाममार्गे प्रवृत्तास्तैस्तु सेवितम् ॥ कौलेन वाथ वामेन सिद्ध्यत्येव न संशयः ॥ ४८४ ॥ सिद्धिः संजायतेन्येषां नरकायैव केवलम् ॥ आदौ वेदोदितैर्मन्त्रैर्विप्रोऽग्न्युत्तारणं चरेत् ॥

---

१ पापानामेवाख्यानदत्वं यतः पापकरणादेव जनुर्भवति जनुषा जीवानां नामकरणं तत आख्यानदानि इति पापविशेषणम्॥ २ लोकाल्लोकान्तरं जीवानां प्रापकत्वादेव तेषां रघुत्वम् ३ अमृते जारजः कुण्डो मृते भर्तरि गोलकः ॥ ४ नीचानां पतितानां च वाममार्गे प्रवृत्तिर्भवति । मद्यमांसादिसेवनं कुर्वन्तोपि देवानां पूजाजपादिकरणाद्वहुभिर्दिनैर्निजकर्म्माणि भुक्त्वा पुनर्मुक्ता भवन्ति तेषां वेदानधिकारित्वाद्दक्षिणमार्गद्वारा शीघ्रमेव संसारान्मुक्ता जायन्ते ॥

॥ ४८५ ॥ अग्निः सप्तिं वाजमिति सनर्चं सूक्तमुच्यते ॥ मुनिस्त्रिष्टुप्छन्द उक्तं देवताग्निः प्रकीर्तितः ॥ ४८६ ॥ अग्निशब्देन सहितं सूक्तमेतच्छतं जपेत् ॥ अभिषिञ्चेद्गन्धतोयैस्ततः सम्पूर्णसूक्तकैः ॥ ४८७ ॥ अभिषिञ्चेच्छतावृत्त्याग्न्युत्तारणमिदं स्मृतम् ॥ क्षालयेद्धातुजं यन्त्रं मृदा चाद्भिस्तु नित्यशः ॥ ४८८ ॥ पिष्टान्तकाद्यैः काष्ठस्य मण्यादेः केवलं जलात् ॥ एवं प्रक्षालितं यन्त्रं मण्डयेच्चन्दनादिना ॥ ४८९ ॥ पुरतः स्थापयेत्पीठे दद्यात्पुष्पाञ्जलिं ततः ॥ मूलमन्त्रेणाथ तेषां स्वस्य देवांगतश्चरेत्॥ ४९०॥ वृत्तेन वेष्टितं सम्यक् त्रिकोणं चन्दनाम्भसा ॥ तद्बहिश्चतुरस्रं च विदध्यान्मत्स्यमुद्रया॥ ४९१॥सम्पूज्य गन्धैर्देवाग्रमण्डलाय नमोणुना॥अंगानि चतुरग्न्यादिकोणेषु पुरतस्तस्था४९२॥पश्चात्तु समभ्युक्ष्य शङ्खाधारं प्रविन्यसेत्॥ उक्ता शङ्खादि चाधारं मण्डले स्थापयेत्त्वथ ॥४९३॥ मं रं धर्म्मप्रदेत्युक्त्वा वदेद्दशकलात्मकम्॥ङेंतं वह्निमण्डलं च देवनाम च कीर्त्तयेत्॥ ४९४॥ततोर्घ्यपात्राधाराय नमः शङ्खं स्वमंत्रतः ॥ प्रक्षाल्यामुकदेवार्घ्यपात्रं संस्थापयाम्यहम् ॥ ४९५ ॥ एवमुक्त्वा तदाधारे संस्थाप्यैनं च तत्र हि ॥ अं सूर्य्यमण्डलं प्रोच्य ङेंतं देवस्य नाम तु ॥ अर्घ्यपात्राय च नमो मनुनानेन पूजयेत् ॥ ४९६ ॥ तत्पात्रमपि तत्रैव भावयेद्भूमिमण्डलम् ॥ षट्कोणं तत्र चाङ्गानि पूजयेत्पूर्ववत्ततः ॥ ४९७॥ कला द्वादश सूर्य्यस्य प्रोक्तास्तत्र प्रदक्षिणम् ॥ ततः सुधामयैस्तोयैर्मूलांते मातृकां जपेत् ॥ ४९८ ॥ विलोमां पूरयेत्तस्मि-

---

१ अथाग्निसूक्तम् ॥ अग्निः सप्तिंवा जंभरं ददात्यग्निर्वीरंश्रुत्यं कर्म्मानिष्ठाम् ॥ अग्नी रोदसी विचरत्समजन्नाग्निर्नारीं वीरकुक्षिं पुरन्धिम् ॥ १ ॥ अग्ने रेभमसः सदिस्तु भद्राग्निर्मही रोदसी आविवेश ॥ अग्निरेकं चोदयत्समत्स्वग्निर्वृत्राणि दयते पुरूणि ॥ २ ॥ अग्निर्हत्यंजरतः कर्णमावाग्निरद्भ्यो निरदहज्जरूथम् ॥ अग्निरत्रिं धर्म्मं उरुष्यदन्तराग्निर्नृमेधं प्रजया सृजत्वम् ॥ ३ ॥ अग्निर्दाद्द्रविणं वीरपेशा अग्निर्ऋषिं यः सहस्रासनोति ॥ अग्निर्दिवि हव्यमाततानाग्नेर्धामानि बिभृतापुरुत्रा ॥४॥ अग्निमुक्थैर्ऋषयो विह्वयन्तेग्निं नरो यामनिबाधतासः अग्निर्वयोअन्तारिक्षे पतन्तोग्निः सहस्रा परियाति गोनाम् ॥ ५ ॥ अग्नि विश ईलते मानुषीर्या अग्निं मनुषो नहुषो विजाताः ॥ अग्निर्गान्धर्वीं पथ्यामृतस्याग्नेर्गव्यूतिर्घृत आग्निषत्ता ॥ ६ ॥ अग्नये ब्रह्म ऋभवस्ततक्षुराग्निं महा तवोचामासुवृक्तिम् ॥ अग्ने प्रावजारितारं थविष्ठाग्ने महि द्रविणमायजस्व ॥ ७ ॥ वाम दक्षिपाणिपृष्ठदशे वामपाणितलं न्यसेत् ॥ अंगुष्ठौ चालयेत्सम्यङ्मुद्रेयं मत्स्यरूपिणीति मँ. पुचतुरस्रांविदध्यात् ।



न्पूजको मनुनामुना ॥ ॐ सोमसण्डलायेति षोडशेति कलात्मने ॥ ४९९ ॥ अमुकार्घ्यामृतायेति नमः शङ्खप्रपूरणे ॥ गंधपुष्पाक्षतयवकुशाग्रतिलसर्षपाः ॥ ५०० ॥ दूर्वा इत्यर्घ्यपात्रस्य प्रोक्तं द्रव्याष्टकं सुराः ॥ ततोयं गन्धपुष्पाद्यैः पूजयित्वा समर्च्चयेत् ॥ ५०१ ॥ कलाषोडशकं चाङ्गं पश्चात्सर्वकलासु च ॥ प्राणप्रतिष्ठां कुर्वीत पूजान्ते साधकस्ततः ॥ ५०२ ॥ प्राग्वत्तीर्थं समावाह्य मूलमन्त्रेण तत्र तु ॥ संयोज्य मूलमन्त्रेण पुष्पं न्यस्य शराणुना ॥ ५०३ ॥ प्रदर्श्य गालिनीं मुद्रां मुद्रया धेनुसञ्ज्ञया ॥ अमृतीकृत्य विधिवत्स्वधाबीजेन साधकः ॥ ५०४ ॥ ध्यात्वेष्टदेवतां तत्र सकलीकरणं चरेत् ॥ अङ्गन्यासेन चास्त्रेण कल्पयेच्च दिशो दश ॥ ५०५ ॥ तत्र मन्त्रेण संवीक्ष्य मुद्रया शङ्खसञ्ज्ञया ॥ अवष्टभ्य ततो दीप्य मुद्रया योनिरूपया ॥ ५०६ ॥ गन्धपुष्पादिभिस्तत्र पूजयेदिष्टदेवताम् ॥ षडङ्गानि च सम्पूज्य मन्त्रयेन्मूलमन्त्रतः ॥ ५०७ ॥ अष्टकृत्वस्ततश्चार्घ्यं दापयेन्मत्स्यमुद्रया ॥ तच्छङ्खस्थं जलं किञ्चित्कुम्भतोये विनिक्षिपेत् ॥ ५०८ ॥ अर्घ्यस्योत्तरदिग्भागे पाद्यमाचमनीयकम् ॥ मधुपर्कं च संस्थाप्य त्रिकोणेषु यथाक्रमम् ॥ ५०९ ॥ एकैकपात्रं मूलेन ह्यष्टकृत्वोऽभिमन्त्रयेत् ॥ मधुपर्कस्तु सक्षौद्रो दधि तत्र न लभ्यते ॥ ५१० ॥ दधि दुग्धं गुडक्षौद्रे घृतप्रतिनिधिर्नहि ॥ परमं तत्पदं देवि मधुसञ्ज्ञं यदुच्यते ॥ ५११ ॥ तदाप्यायनं यत्कर्म्म तत्प्रोक्तं मधुपर्ककम् ॥ कांस्यस्य वाथ रौप्यस्य शैवः शङ्खवरो हरौ ॥ ५१२ ॥ महाशङ्खो वाममार्गे स्फाटिको ग्रहनायके ॥ दक्षिणे प्रोक्षणीपात्रमाधायाद्भिः प्रपूरयेत् ॥ ५१३ ॥ किञ्चिदर्घ्याम्बु संगृह्य प्रोक्षण्यम्भसि योजयेत् ॥ पुनराचमनीयार्थं पात्रं संस्थापयेत्ततः ॥ ५१४ ॥ पाद्यं श्यामाकदूर्वाब्जविष्णुक्रान्ताभिरुच्यते ॥ जातीलवङ्गकङ्कोलैर्मतमाचमनीयकम् ॥ ॥ ५१५ ॥ कुशपुष्पयवव्रीहिबहुमूलतमालकम् ॥ पातयेत्प्रोक्षणीपात्रे ललितं प्रणवेन च ॥ ५१६ ॥ शुद्धाभिरद्भिर्विहितं पुनराचमनीयकम् ॥ द्रव्याभावे

---

१ उशीरम् । २ चन्दनम् ।

प्रदातव्याः क्षालितास्तण्डुलाः शुभाः ॥ ५१७ ॥ अथार्घ्यादिकपात्राणां फलं वक्ष्ये शुभाशुभम् ॥ सर्वकामप्रदं स्वार्णं रौप्यमायुःसुतप्रदम् ॥ ५१८ ॥ सौभाग्यं ताम्रपात्रेण धर्म्मवृद्धिस्तु मृन्मये ॥ नारिकेले देवतुष्टिर्भवेत्पात्रे तथैव च ॥ ५१९ ॥ लक्ष्मीप्राप्तिर्बिल्वपात्रे ब्राह्मण्यं ब्रह्मवृक्षजे ॥ मारणोच्चाटने लौहं स्तम्भे पाषाणजं भवेत् ॥ ५२० ॥ मन्त्रस्याराधने काष्ठं वाममार्गे तु तौम्बिकम् ॥ रत्नादीनां तु पात्राणि शुभलेखाङ्कितानि च ॥ ५२१ ॥ अर्घ्यनैवेद्यपूजार्थेऽञ्जलिदाने प्रपूजयेत्॥ पात्राणामादरः कार्य्यः पात्राण्येवोत्तमानि च ॥ ५२२ ॥ बलिहोमक्रियाद्यं च विनापात्रं न सिद्ध्यति ॥ षट्त्रिंशदंगुलं पात्रमुत्तमं परिकीर्त्तितम् ॥५२३॥ मध्यमं तत्त्रिभागोनं कनिष्ठं द्वादशांगुलम् ॥ वस्वंगुलविहीनं च न पात्रं कारयेत्क्वचित् ॥ ५२४ ॥ नाभीविवररूपाणिपुंण्डरीकाकृतीनि च ॥ शङ्खनीलोत्पलाभानि पात्राणि परिकल्पयेत् ॥ ५२५ ॥ श्वेतादीन्यतिशस्तानि विप्रादीनां क्रमेण च ॥ सेचयेत्प्रोक्षणीपात्रतोयैर्मूलं समुच्चरेत् ॥ ५२६ ॥ आत्मानं यागवस्तूनि पूजाद्रव्यादिमण्डलम् ॥ दर्शयेद्धेनुमुद्रां च द्रव्यशुद्धिरियं मता ॥ ५२७ ॥ योगपीठे न्यासदेवांस्तत्तत्स्थानेषु पूजयेत् ॥ मणिपीठे भावनया ततः पूज्या स्वदेवता ॥ ५२८ ॥ आत्मानं देवतारूपं ध्यायेन्मूलेन पञ्च तु ॥ पुष्पस्याञ्जलयो देया मस्तके हृदये गुदे ॥ ५२९ ॥ पादयोः सर्वगात्रे च पूजयेच्चन्दनादिभिः ॥ चतुर्भिरुपचारैश्च नैवेद्यं विनिवेदयेत् ॥ ५३० ॥ गुरूपदिष्टविधिना शेषमन्यत्समापयेत्॥ प्रोक्षण्यद्भिः प्रयुञ्जीत सर्वमेतत्समाहितः ॥ ५३१ ॥ ततश्चार्घ्यकरं कार्य्यं यज्ञकार्य्यमथोच्यते ॥ मूलाधारे चतुष्कोणमग्निकुण्डं विचिन्तयेत् ॥५३२॥ तत्राग्निं कुण्डलीरूपं ध्यायेन्मूलं समुच्चरन् ॥ धर्म्माधर्म्महविर्दीप्त आत्माग्नौ मनसा तु वै ॥ ५३३ ॥ सुषुम्णावर्त्मना नित्यमष्टावृत्तीर्जुहोम्यहम् ॥ पुण्यं जुहोमि स्वाहेति श्लोकान्ते प्रोच्चरेत्पुनः ॥ ५३४ ॥ पुनर्मूलं पुनः श्लोकः पुनः पापं जुहोमि च ॥ कृत्याकृत्येति सङ्कल्पो विकल्पो धर्म एव च॥५३५॥

१ पलाशे । २ अष्टाङ्गुलहीनम् । ३ श्वेतकमलाकाराणि । ५ अन्योन्याभिमुखाश्लिष्टा कनिष्ठानामिका पुनः । तथा च तर्जनी मध्या धेनुमुद्रा प्रकीर्तिता । ,

उक्त्वा पृथक् च स्वाहान्तं पुनः श्लोकमिमं पठेत् ॥ प्रकाशामर्शहस्ताभ्यामवलम्ब्योन्मनीषु च ॥ ५३६ ॥ धर्म्माधर्म्मकलास्नेहपूर्णे वह्नौ जुहोम्यहम् ॥ स्वाहान्तेनाहुतिं दत्त्वा प्राणायामनिरोधतः ॥ ५३७ ॥ निरस्तनिखिलोपाधिमात्मानं चिन्मयं स्मरेत् ॥ प्राणायामत्रयं कृत्वा ऋष्यादिन्यासमाचरेत् ॥ ॥ ५३८ ॥ पूजापीठं विनिर्माय पूजयेत्पीठदेवताः ॥ गुरुपाङ्क्तिरुदक्पूज्या महागणपतिस्त्ववाक् ॥ ५३९ ॥ पूजयेदनलादीनि देवस्याधस्तु सप्त च ॥ मण्डूकश्चापि तस्योर्ध्वं रुद्रः कालानलस्तथा ॥ ५४० ॥ मूलप्रकृतिमाधारशक्तिं कूर्म्मं तथान्तकम् ॥ वराहं तस्य दंष्ट्राग्रे पृथिवीमर्चयेत्पुनः ॥५४१॥ तस्यां सुधार्णवं तस्मिन्दीपञ्च नवरत्नकम् ॥ स्वर्णशैलं च तन्मध्ये तदूर्ध्वं नन्दनं वनम् ॥ ५४२ ॥ तन्मध्ये कल्पवृक्षांश्च तन्मध्ये रत्नभूमिकाम् ॥ स्वर्णप्राकारमस्यान्ते तन्मध्ये रत्नमण्डपम् ॥ ५४३ ॥ तस्यान्तः स्वर्णवेदी च रत्नसिंहासनं पुनः ॥ वेदीमध्ये भावनीयं पूजयेच्चन्दनादिना ॥ ५४४ ॥ पूजाचक्राधारपीठं सिंहासनमिति स्मरेत् ॥ तत्पादेषु यजेत्सम्यगाग्नेयादिशिवान्तकम् ॥ ५४५ ॥ धर्म्मं वृषतनुं चित्रं ज्ञानं कृष्णं च सिंहवत् ॥ वैराग्यं भूतवत्पीतमैश्वर्य्यं कृष्णहस्तिवत् ॥ ५४६ ॥ अधर्मादींश्चित्रवर्णान्पीठस्याधः समर्चयेत् ॥ मायाविद्ये च तन्मध्येऽनन्तं तत्त्वाकृतिं यजेत् ॥ ५४७ ॥ तस्य मूर्ध्नि यजेत्पद्ममष्टप्रकृतिपत्रकम् ॥ आनन्दकन्दकं संविन्नालं विकारकेशरम् ॥ ५४८ ॥ मातृकाकर्णिकोपेतं तत्पत्रेषु क्रमाद्यजेत् ॥ सिद्ध्यष्टकं चाणिमाद्यं तन्नामानि ब्रवीम्यहम् ॥ ५४९ ॥ अणिमा महिमा चैव गरिमा लघिमा तथा ॥ प्राप्तिः प्राकाम्यमीशित्वं वशित्वं चाष्टसिद्धयः ॥ ५५० ॥ अधोधः कर्णिकायास्तु सूर्य्यस्सोमस्तथानलः ॥ गुणान्सत्त्वादिकांस्तत्र तद्वदग्रे त्रयं यजेत् ॥ ५५१ ॥ ब्रह्मविष्णुमहेशांश्च ततो दिक्षु च मध्यतः ॥ ज्ञानं माया कला विद्या परपूर्वं च तत्त्वकम् ॥ ॥ ५५२ ॥ केशरेषु तथा मध्ये पूर्वादिषु यथाक्रमम् ॥ तत्तन्मन्त्रोक्तपीठस्य नव शक्तीः प्रपूजयेत् ॥ ५५३ ॥ पीठमन्त्रेण गन्धाद्यैः पीठं समन्ततोर्चयेत् ॥ चतुर्थीनमसा युक्तैः स्वस्वदैवतनामभिः ॥५५४॥ मध्ये पुष्पाञ्जलिं दद्यात्पी-

ठमन्त्रेण साधकः ॥ मूलमन्त्रं समुच्चार्य्य षष्ठ्यन्तं पीठनाम च ॥ ५५५ ॥ मूर्तिं च कल्पयामीति मूर्तिमध्ये विनिक्षिपेत् ॥ पुनर्मूलं समुच्चार्य्य देवनाम ततः परम् ॥ ५५६ ॥ मूर्तिं च पूजयामीति तां पुष्पेण समर्च्चयेत् ॥ एकपीठेन्य-पूजां च विना यन्त्रं करोति यः ॥ ५५७ ॥ देवताशापमाप्नोति रौरवं नरकं व्रजेत् ॥ तन्त्रेण पूजयेद्यन्त्रं देवताशापमाप्नुयात् ॥ ५५८ ॥ आवाह्य देवता-मेकामर्च्चयेच्चान्यदेवताम् ॥ अन्ययन्त्रेन्यपूजा वा देवता शापकारिणी ॥ ॥ ५५९ ॥ पूजनं बहुमूर्तीनामेकपीठे भवेद्यदि ॥ पृथक्चन्दनपुष्पाणि धूपदीपादि मन्त्रतः ॥ ५६० ॥ खण्डिते स्फुटिते दग्धे भ्रष्टे मानविवर्जिते ॥ व्यङ्गेनर्हपशुस्पृष्टे पतिते दुष्टभूमिषु ॥ ५६१ ॥ अन्यमन्त्रार्चिते चैव पतित-स्पर्शदूषिते ॥ देशेष्वेतेषु नो कुर्य्युः सन्निधानं दिवौकसः ॥ २६२ ॥ गणे-शसूर्य्यविष्णवीशदेवीनां पूजनं क्रमात् ॥ दशस्थानानि देवानां पूजने कल्पि-तानि च ॥ ५६३ ॥ सान्निध्यं सर्वदेवानामवश्यं मन्त्रतो भवेत् ॥ मन्त्रस्तु जीववत्प्रोक्तः प्रतिमाद्यं शरीरवत् ॥ ५६४ ॥ सिद्धायामपि सामग्र्यां विना मन्त्रं फलं न हि ॥ शिवलिङ्गे मणौ यन्त्रे शालग्रामे घटे रवौ ॥ ५६५ ॥ स्थण्डिलेग्नौ मूर्ध्नि हृदि स्थानेष्वेतेषु पूजयेत् ॥ भूमौ चैव कृता पूजा पुत्रायुर्धननाशिनी ॥ ५६६ ॥ दशांगुलप्रमाणा वा तिथ्यंगुलमिता पुनः ॥ अभ्यर्च्चा प्रथमा विष्णोर्गृहेषु गृहमेधिभिः ॥५६७॥ पञ्चसूत्रसमायुक्तं शिव-लिङ्गं समर्चयेत् ॥ गृहस्थानां भुक्तिमुक्तिधनारोग्यप्रदं तु तत् ॥ ५६८ ॥ लिङ्गमस्तकविस्तारोपचितावथ दीर्घतः॥लिङ्गस्य लिङ्गशालक्या जलाहार्य्या-स्तथैव च ॥ ५६९ ॥ लिङ्गपीठस्य पञ्चानां समता पञ्चसूत्रिका ॥ शालग्राम-समुत्पत्तिं शृण्वन्तु परमाद्भुताम् ॥ ५७० ॥ गण्डक्या प्राक् तपस्तप्तं भवन्तु मम देवताः ॥ सर्वे पुत्राः सुखं दातुं जनानामिति ते सुराः ॥ ५७१ ॥ तस्यास्तु तपसा हृष्टा ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः ॥ वरं दातुं समुद्युक्ता वव्रे सापि स्वपुत्रताम् ॥ अशक्तास्तं वरं दातुं तदा शप्तास्तया क्रुधा॥ ५७२ ॥ प्रतारणं मम सुराः कृतं यस्मात्पुनः पुनः ॥ कीटयोनिं प्रपद्यध्वं क्रुद्धास्तेप्यशपंश्च ताम् ॥ ५७३ ॥ अविचार्य्य वयं शप्तास्त्वया यत्तपसोद्धते ॥ तेन कर्मविपा-

केन त्वं वै कृष्णा नदी भव ॥५७४॥ अन्योन्यशापं श्रुत्वेत्थं महान्कोलाहलोभवत् ॥ प्रकम्पिताः सुरा याता ब्रह्माणं ते व्यजिज्ञपन् ॥ ५७५ ॥ ब्रह्मंस्त्राहि महाशापादन्योन्यपतितान्क्रुधा ॥ इति देववचः श्रुत्वा ब्रह्मा शङ्करमब्रवीत् ॥ ५७६ ॥ शिवः प्रोवाच धातारमहं संहारकारकः ॥ त्वं सृष्टिकर्ता विष्णुस्तु पालको बुद्धिमत्तरः ॥ ५७७ ॥ स प्रष्टव्यो यथासंख्यमुभयोः शम्भवेदिति ॥ तत्र माहेश्वरं श्रुत्वा वचनं विष्णुरब्रवीत् ॥ ५७८ ॥ शृणु ब्रह्मन्महादेव शृणु देवि गजानन ॥ मद्गणौ ब्राह्मणौ ग्राहमातङ्गौ शापतो यदा ॥ ५७९ ॥ भविष्यतस्तयोर्मोक्षं करिष्यामि कलेवरम् ॥ शीर्णं भविष्यति यदा तन्मेदोमज्जसम्भवाः ॥ ५८० ॥ पाषाणान्तर्गताः कीटा वज्राख्याः प्रभविष्यथ॥अद्यैव गण्डकी पुण्या गङ्गातुल्या महानदी ॥५८१॥ गण्डक्यां गिरिराजस्य दक्षिणे दशयोजनम् ॥ विस्तीर्णं तन्मनुक्षेत्रम्पुण्यं क्षेत्रं महीतले ॥ ५८२ ॥ चक्रतीर्थमिदं ख्यातं त्रिषु लोकेषु विश्रुतम् ॥ शालग्रामशिला यत्र यत्र द्वारवती शिला ॥ ५८३ ॥ उभयोः सङ्गमो यत्र मुक्तिस्तत्र न संशयः ॥ सर्वदेवप्रीतिकरा भुक्तिमुक्तिप्रदायिनी ॥ ॥ ५८४ ॥ नद्यां तस्यान्तु पाषाणा ये तदन्तर्गताः सुराः ॥ पार्थिवांशं विना सर्वे वज्रकीटा भवन्त्विति ॥ ५८५ ॥ अनेनैव तु गण्डक्याः पुत्रत्वं भवतामपि ॥ प्रीताः सुरा न मूर्तेश्च न वृक्षस्यापि पूजनात् ॥ ५८६ ॥ सन्तोषो जायते तेषां गण्डक्यश्मार्चनाद्यथा ॥ इति विष्णुवचः श्रुत्वा ब्रह्मा वचनमब्रवीत् ॥ ५८७ ॥ कीदृक्पूज्या शिला विष्णो किंस्वित्कस्य च वल्लभा ॥ किं फलं कोधिकारी च केन मार्गेण तद्वद ॥ ५८८ ॥ इति ब्रह्मवचः श्रुत्वा विष्णुर्वचनमब्रवीत्॥स्वीयवर्णशिला पूज्या ब्राह्मणाद्यैः सुखाप्तये ॥ ५८९ ॥ स्निग्धा शिला मन्त्रसिद्धिं रूक्षाऽसिद्धिं करोति न ॥ पाण्डुरा पापशमनी मलिना पापधीकरा ॥ ५९० ॥ पीता पुत्रफलं दद्यादाम्रवर्णा सुतान्हरेत् ॥ नीला सन्दिशते लक्ष्मीं धूम्राभा हरते मतिम् ॥ ॥ ५९१ ॥ रोगप्रदा रक्तवर्णा सिन्दूराभा महाकलिम् ॥ दारिद्र्यकारिणी-वक्रा समा सर्वार्थसाधिका ॥ ५९२ ॥ स्थूला निहन्ति चैवायुः सूक्ष्मा

स्वल्पमतिं हरेत् ॥ पूजाफलं लाञ्छितया निष्फलं लाञ्छनं विना ॥५९३॥ कपिला चित्तवैकल्यं नेत्ररोगश्च कर्बुरा ॥ लग्ना भङ्गकलिं दद्याद्बहुचक्रा प्रधानताम् ॥ ५९४ ॥ लक्षणान्तरहीना चेदचक्रा विविधापदम् ॥ विकृतावर्त्तनाभिश्च विनान्नं कुरुते बहु ॥ ५९५ ॥ वंशच्छेदो गृहस्थानां नारसिंह्यां प्रजायते ॥ रेखावर्त्ता दुःखदात्री यथा सूक्ष्मा तथामृतम् ॥ ५९६ ॥ यथा स्निग्धा तथा लक्ष्मीस्तद्विभेदानतः शृणु ॥ लक्ष्मीहरिः स विज्ञेयो यत्र पद्मं सचक्रकम् ॥ ५९७ ॥ केवला वनमाला वा गृहस्थानामभीष्टदः ॥ वासुदेवः स विज्ञेयो यद्द्वारे चक्रयुग्मकम् ॥ ५९८ ॥ निरन्तरं समं चापि स श्वेतः पापनाशनः ॥ संकर्षणः स विज्ञेयः प्राक्पश्चाच्चक्रयुग्मकम् ॥ ५९९ ॥ संलग्नं पूर्वभागस्थं महद्रत्नसुशोभनम् ॥ प्रद्युम्ने सूक्ष्मचक्रं स्याच्छिद्रं दीर्घं विचिन्तयेत् ॥६००॥ शुषिरान्तर्बहुच्छिद्रं पीतमिष्टप्रदायकम् ॥ अनिरुद्धस्तु नीलाभो वर्तुलश्चातिशोभनः ॥ ६०१ ॥ रेखाद्वयं तु तद्द्वारि पृष्ठं पद्मेन लाञ्छितम् ॥ केशवः स तु विज्ञेय एकं वा द्वयमेव च ॥६०२॥ प्राग्वा-पश्चाच्च चक्रं स्याच्चतुष्कोणस्स भाग्यकृत् ॥ नारायणः श्यामवर्णो नाभौ चक्रं तथोन्नतम् ॥ ६०३ ॥ दीर्घरेखासमायुक्तं दक्षिणे सुकरं पृथु ॥ हरिरूपा शिला सा स्याद्यस्या ऊर्ध्वं मुखं भवेत् ॥ ६०४ ॥ हारिवद्दृश्यते द्वारं भुक्तिमुक्तिप्रदा तु सा ॥ परमेष्ठी स विज्ञेयः पद्मचक्रान्वितस्तु यः ॥ ६०५ ॥ बिल्वाकृतिश्च शुक्लाभः पृष्ठे च शुषिरं महत् ॥ विष्णुस्तु कृष्णवर्णः स्यात्स्थूलचक्रे शुभानने ॥ ६०६ ॥ द्वारोपरि तथा रेखा दृश्यते मध्यदेशतः ॥ नरसिंहस्तु कपिलः पृथग्वक्त्रो बृहन्मुखः ॥ ६०७ ॥ त्रयो वा पञ्च वा तत्र बिन्दवो गृहिणां न सन् ॥ कपिलो नरसिंहस्तु गुडलाक्षानिभो भवेत् ॥ ६०८ ॥ स्थूलचक्रद्वयं मध्ये द्वारे रेखा सुशोभना ॥ महानृसिंहो विज्ञेयः पूर्वोक्तैर्लक्षणैर्युतः ॥ ६०९ ॥ रेखाश्च केशराकारा मुखं दीर्घं भयानकम् ॥ लक्ष्मीनृसिंहो विज्ञेयश्चतुश्चक्रस्सबिन्दुकः ॥ ६१० ॥ पूर्वोक्तलक्षणैर्युक्तो वनमालाविराजितः ॥ वराहोसौ शक्तिलिङ्गचक्रे च विषमे तथा ॥ ६११ ॥ इन्द्रनीलनिभःस्थूलस्त्रिरेखालाञ्छितो भवेत् ॥ पृथ्वी वराहनाम्नी सा या वराहा-

कृतिः शिला ॥ ६१२ ॥ अभुग्ना नैव रेखैका गतराज्यप्रदायिका ॥ मत्स्याख्या सा शिला ज्ञेया बिन्दुत्रयविभूषिता ॥ ६१३ ॥ कांस्योद्भवा स्वर्णनिभा दीर्घा सा भुक्तिमुक्तिदा ॥ कूर्म्माख्या तु शिला पृष्ठे वर्तुला चोन्नता भवेत् ॥६१४॥ हरितं वर्णमाधत्ते कौस्तुभेन च चिह्निता॥ शिला कूर्म्मस्य विज्ञेया कूर्म्माकारा तु या भवेत् ॥६१५॥ चक्राङ्किता तथा वृत्ता पूजिता सा पदप्रदा॥हयग्रीवोंकुशाकारा रेखा चक्रसमीपगा॥६१६॥बहुबिन्दु-समायुक्तं पृष्ठं नीरदनीलकम्॥ज्ञेयः सौम्यो हयग्रीवो हयग्रीवसमा शिला६१७ दीर्घया रेखया युक्ता रेखा वा तादृशी भवेत् ॥६१८॥ हयशीर्षः स विज्ञेयो मुखं यस्य हयाकृति ॥ पद्माकृति भवेद्वापि साक्षमालं शिरस्तथा ॥६१९॥ वैकुण्ठस्तिलवर्णाभश्चक्रमेकन्तथा ध्वजः ॥ द्वारोपरि तथा रेखा पूजकाय सुशोभनः ॥ ६२० ॥ श्रीधरस्तु तथा देवश्चिह्नितो वनमालया ॥ कदम्ब-कुसुमाकारो रेखापञ्चकभूषितः ॥ ६२१ ॥ ॥ वामनः स तु विज्ञेयो योति-ह्रस्वश्च वर्तुलः॥ अतसीकुसुमप्रख्यो बिन्दुनोपरि शोभितः॥ ६२२ ॥ दधि-वामननामा च ऊर्ध्वाधश्चक्रसंयुतः ॥ महाद्युतिश्च ह्रस्वश्च सुभिक्षक्षेमदायकः ॥ ६२३ ॥ सुदुर्शनस्तथा देवश्श्यामवर्णो महाद्युतिः ॥ वामपार्श्वे तथाचक्रं रेखैकैव तु दक्षिणे ॥ ६२४ ॥ सहस्रार्ज्जुननामासौ नानारेखामयो भवेत् ॥ बकाकारा यत्र पंक्तिः स नष्टद्रव्यदायकः ॥ ६२५ ॥ स्थूलो दामोदरो यस्य मध्ये चक्रं प्रतिष्ठितम् ॥ दूर्वाभो द्वारसङ्कीर्णपीतरेखो धनप्रदः ॥ ॥ ६२६ ॥ राधादामोदरो ज्ञेय ऊर्ध्वाधश्चक्रसंयुतम् ॥ नातिदीर्घ-मुखं मध्ये लम्बरेखः स भोगदः ॥ ६२७ ॥ दामोदरः स विज्ञेयो यश्चक्रद्व-यलाञ्छितः ॥ सूक्ष्मं भवेच्च विवरं पूजितस्सुखदस्सदा ॥ ६२८ ॥ अनन्तो बहुवर्णः स्यान्नागभोगेन चिह्नितः॥ अनेकचक्रसम्भिन्नः सर्वकामफल-प्रदः ॥ ६२९ ॥ पुरुषोत्तमनामासौ यस्य दिक्षु विदिक्षु च ॥ ऊर्द्ध्वान्या-स्यानि दृश्यन्ते पुरुषार्थफलप्रदः ॥ ६३० ॥ योगेश्वरः स विज्ञेयो लिङ्गं यस्य शिरोगतम् ॥ ब्रह्महत्यादिपापानां नाशको योगसिद्धिदः ॥ ६३१ ॥ पद्मनाभस्तथा रक्तः पङ्कजच्छत्रसंयुतः ॥ तुलस्या पूजयित्वा तं दरिद्रोपीश्वरो

भवेत् ॥ ६३२ ॥ रश्मिज्वालो हिरण्याक्षश्चन्द्राभः स्फटिकोपमः ॥ अथ वा जायते नानास्वर्णरेखाभिरन्वितः ॥ ६३३ ॥ गरुडः स विभुर्ज्ञेयो मध्ये पक्षद्वयान्विते ॥ सुदीर्घा दृश्यते रेखा स सर्वविषनाशकः ॥ ६३४ ॥ जनार्दनः स विज्ञेयः केवलानि स्फुटानि च ॥ यस्योदरे तु चक्राणि चत्वारि पितृतृप्तिकृत् ॥ ६३५ ॥ लक्ष्मीनारायणो ज्ञेयो वनमालाङ्कितोदरः ॥ सूक्ष्मद्वारश्चतुश्चक्रो भुक्तिमुक्तिप्रदायकः ॥ ६३६ ॥ हृषीकेशः स विज्ञेयो योर्धचन्द्राकृतिर्भवेत् ॥ तमभ्यर्च्यानुयात्स्वर्गं विषयांश्च समीहितान् ॥६३७॥ लक्ष्मीनरहरिर्ज्ञेयः कृष्णवर्णः सबिन्दुकः ॥ वामपार्श्वे समे चक्रे गृहस्थाभीष्टदायकः ॥ ६३८ ॥ त्रिविक्रमः स विज्ञेयः श्यामवर्णो महाद्युतिः ॥ वामपार्श्वे चक्रयुग्ममेकरेखा तु दक्षिणे ॥ ६३९ ॥ कृष्णो ज्ञेयः शिला कृष्णा सचक्रो वा विचक्रकः ॥ प्रदक्षिणावर्तकृतो वनमालाविभूषितः ॥ ॥ ६४० ॥ चतुर्मुखः स विज्ञेयो द्वे चक्रे मध्यदेशतः ॥ चतस्रः पार्श्वगा रेखा वेदशास्त्रागमप्रदः ॥ ६४१ ॥ विष्णोर्भेदा इमे प्रोक्ता अत्रैवावाहयेद्धरिम् ॥ विसर्जयेच्च पूजान्ते प्रतिष्ठां नात्र कारयेत् ॥ ६४२ ॥ शालग्रामाः समाः पूज्याः समेषु द्वितयं न हि ॥ असमा नैव पूज्यन्ते सर्वकामफलार्थिभिः ॥ ६४३ ॥ शिला द्वादश यो नित्यं भक्त्या सम्पूजयेन्नरः ॥ दिनेदिने धर्म्मवृद्धिः पापनाशो भवेदिह ॥ ६४४ ॥ शिवनामा स विज्ञेयो यो लिङ्गाकारताङ्कतः ॥ स्वयन्तु लिङ्गाकृतिमान्मन्त्रसिद्धिविधायकः ॥ ६४५ ॥ त्र्यम्बकः स तु विज्ञेयो यो बिन्दुत्रयभूषितः ॥ शूलाकारा तथा रेखा गतायुष्कप्रदायकः ॥ ६४६ ॥ धूर्जटिस्स तु विज्ञेयो यत्र रेखा जटासमाः ॥ तिस्रो यत्र प्रदृश्यन्ते सोचितो ज्ञानदायकः ॥ ६४७ ॥ शम्भुस्तु पाण्डुरो ज्ञेयो बिन्दुः कृष्णस्तु मस्तके ॥ बिल्वप्रमाणस्तेजस्वी पूजितः शिवशङ्करः ॥ ६४८ ॥ ईश्वरस्स तु विज्ञेयो रक्तो बिन्दुस्तु मस्तके ॥ एकचक्रो द्विचक्रो वा ह्यन्तरेऽधश्च गोपदम् ॥ ६४९ ॥ मृत्युञ्जयस्स विज्ञेयो ह्यपमृत्युविनाशकः ॥ अधश्चक्रं तदूर्ध्वञ्च श्वेता रेखा त्रिशूलभाक् ॥ ६५० ॥ चन्द्रशेखरनामासावर्धचन्द्रोस्ति मस्तके ॥ मध्ये चक्रद्वयं तस्य सेवनाद्रोगनाशनम् ॥

॥ ६५१ ॥ चन्द्रः स एव विज्ञेयः कपिलो मूर्ध्नि लक्षितः ॥ चक्रमध्ये भवेद्रेखा मारयेद्रिपुसन्ततिम् ॥ ६५२ ॥ शालग्रामानथो वक्ष्ये शाक्तान्कीटसमुद्भवान् ॥ येषां पूजनतो देवी भवानी सुप्रसीदति ॥ ६५३ ॥ श्रीविद्या सा तले चक्रमूर्ध्नि छत्रं प्रदृश्यते ॥ बाह्ये घण्टाङ्किता मूर्द्धा स्निग्धा सेव्याखिलैस्तदा ॥ ६५४ ॥ महाकाली तु सा ज्ञेया योक्तचिह्नसमन्विता ॥ द्विच्छिद्राद्यास्सर्वशिलास्त्रिकोणेनाङ्कितास्तु याः ॥ ६५५ ॥ यदायुधाकृतिश्चान्तर्देवीं तत्र विनिर्दिशेत् ॥ देवीशिला सचक्रा या दक्षमार्गेण तां यजेत ॥ ६५६ ॥ सार्चिता वाममार्गेण लोकद्वयसुखावहा ॥ या चक्ररहिता देवी शिला तां वामतोर्चयेत् ॥ ६५७ ॥ स्पर्शः कार्य्यो न विप्राणां तस्या या क्षोभकृद्भवेत् ॥ सौरी शिला दुर्लभैव प्रायः कलियुगे सुराः ॥ ६५८ ॥ स्फटिकाभा भवेत्सा तु घर्मे मुक्ता विमुञ्चति ॥ सूर्य्यस्योर्ध्वस्थितं वह्निं साभिषिक्ता प्रवर्षणम् ॥ ६५९ ॥ कुरुते शपथे मिथ्याकृते स्यात्कुष्ठकारिका ॥ इत्यादिलक्षणैर्युक्ता शिला सूर्य्यस्य सम्मता ॥ ६६० ॥ गणेशः स तु विज्ञेयो यस्तु शुण्डाङ्कितो भवेत् ॥ शुण्डाकारा शिला वापि गजाननसमापि वा ॥ ॥ ६६१ ॥ यस्या मध्ये महच्चक्रं सूक्ष्मचक्रं च यद्दिशि ॥ सा शिला तस्य दिक्पस्य सेव्या तद्दिशि राज्यदा ॥ ६६२ ॥ अर्धचन्द्राकृतिर्यत्र दृश्यते शकलद्वयम् ॥ सा तु चन्द्रशिला त्र्यस्त्रयुक्ता भौमशिला मता ॥ ६६३ ॥ बाणाकारेण चिह्नेन ज्ञेया बुधशिला सुराः॥दीर्घेण चतुरस्रेण युक्ता गुरुशिला मता॥६६४॥पञ्चकोणा तु शुक्रस्य चापाकारा शनेर्मता॥शूर्पाकारा तु राहोः स्यात्केतोस्तु ध्वजरूपिणी ॥६६५॥प्राप्ते कलियुगे घोरे वामाचारविमिश्रिते॥ भक्ष्याभक्ष्यविचारादिरहिते म्लेच्छसंकुले ॥६६६॥ कामक्रोधादिभिर्व्याप्ते जने स्त्रीभिर्विनिर्जिते॥क्व शिष्यः क्व गुरुर्मन्त्रः क्व जपः क्व च सिद्धयः॥६६७॥ अयुताब्दे कलेर्याते त्यजेद्विष्णुशिला महीम् ॥ तदर्धञ्जाह्नवीतोयं तदर्धन्देवताशिला ॥ ६६८ ॥ जप एव कलौ श्रेयाञ्छालग्रामार्चनं तथा ॥ सूर्य्यार्घ्यदानसमये दानं विभवतः परम् ॥ ६६९ ॥ आवाहनादिकं कार्य्यं मूर्त्यादौ त्रिविधं तु तत् ॥ आदावावाहनं कार्य्यं त्रिर्जपेन्मूलमन्त्रकम् ॥

॥ ६७० ॥ स्वाल्लोकात्सूक्ष्मरूपेण देव आगत्य मूर्तिषु ॥ स्थित एवं भावयित्वा सुषुम्णावर्त्मना सुधीः ॥ ६७१ ॥ आनीय तेजः स्वस्थानान्नासिकारन्ध्रनिर्गतम् ॥ करपुष्पाञ्जलौ स्थाप्य तद्दद्याद्देवमूर्द्धनि ॥ ६७२ ॥ देवस्य तेजस्तन्मूर्त्तौ [1]आवाहन्याख्यमुद्रया ॥ स्थापयेदुच्चरेन्मूलमेतदावाहनं मतम् ॥ ६७३ ॥ विभोर्निवेशनं यन्त्रं स्थापनं कथितं बुधैः ॥ ततः संस्थापनं कुर्य्यादिह तिष्ठेति तिष्ठ च ॥ ६७४ ॥ मूलान्ते देवतानाम तस्यान्ते च पठेदिति ॥ [2]स्थापनीयमुद्रां च दर्शयित्वा विभावयेत् ॥ ६७५ ॥ या तु स्थिरा देवतेति पश्चात्सम्प्रार्थयेदिति ॥ देवेश भक्तिसुलभ सर्वावरणसंयुत ॥ ६७६ ॥ यावत्त्वां पूजयिष्यामि तावत्त्वं सुस्थितो भव ॥ एवं सम्प्रार्थ्य देवेशं सान्निधापनमाचरेत् ॥ ६७७ ॥ मूलमन्त्रं समुच्चार्य्य सम्बुध्येत्तां च देवताम् ॥ इह त्वं सन्निधेहीति द्विरुक्त्वा स्वस्य सन्निधौ॥६७८॥ स्थितं देवं तोषयेच्च [3]सन्निधापनमुद्रया ॥ देवतायास्ततः कुर्य्यान्मूलमुच्चार्य्यसन्निधिम् ॥ ६७९ ॥ सम्बुध्य तां वदेत्पश्चात्सन्निरुद्धो भवेति च ॥ द्विरुच्चरेत्कृपापूर्णां भक्तिभावनिरोधिताम् ॥ ६८० ॥ प्रतिमायां स्थिरं यातां देवतामिति चिन्तयेत ॥ देवतां सम्मुखी कुर्य्यान्मूलमुच्चार्य्य देशिकः ॥६८१॥ सम्बुध्य तां वदेत्पश्चात्सम्मुखो भव इत्यपि ॥ ध्यायेत्स्वसम्मुखं देवं सुप्रसन्नाननाम्बुजम् ॥ ६८२ ॥ सम्मुखी करणीं मुद्रां दर्शयेदिति तत्स्मृतम् ॥ देवावगुण्ठनं कार्य्यं मूलमुच्चार्य्य मन्त्रवित् ॥ ६८३ सम्बुध्य तामवगुण्ठितो भवेदिति प्रदर्शयेत् ॥ अवगुण्ठनमुद्राञ्च दर्शयेच्चिन्तयेदिति ॥६८४॥ भक्त्या-

---

१ सम्यक् सम्पूरिता पुष्पैः कराभ्यां कलिताञ्जलिः ॥ आवाहनी समाख्याता मुद्रा देशिकसत्तमैः । २ अधोमुखीकृता सैव प्रोक्ता स्थापनकर्म्मणि । ३ आश्लिष्टमुष्टियुगला प्रोन्नतांगुष्ठयुग्मका॥सान्निधाने समुद्दिष्टा मुद्रेयं तन्त्रवेदिभिः। ४ अंगुष्ठगर्भिणी सैव सान्निरोधे समीरिता ॥ देवतांगे षडंगानां न्यासः स्यात्सकलीकृता । ५ सव्यहस्तकृता मुष्टिर्दीर्घाधोमुखतर्ज्जनी ॥ अवगुण्ठनमुद्रेयमाभितां भ्रामितो मता ॥ अन्योन्याभिमुखाश्लिष्टा कनिष्ठानामिकापुनः ॥ तथा च तर्जनीमध्या धेनुमुद्रा प्रकीर्तिता ॥ अमृतीकरणं कुर्य्यात्तया देशिकसत्तमः ॥ अन्योन्यग्रथितांगुष्ठप्रसारितकरांगुलिः महामुद्रेयमुदिता परमीकरणे बुधैः ॥ सम्मुखीकरणीमुद्रा सा ज्ञेया मुष्टियुग्मकम् ॥ देवता स्थाप्यते यस्यामंगुष्ठद्वयमुक्तकम् ।

सम्मोहितं देवं विस्मयोत्फुल्ललोचनम् ॥ सकलीकरणं चैव देवस्य हृदयादिषु ॥ ६८५ ॥ षडङ्गमन्त्रान्विन्यस्य मूलमुच्चार्य्य देवताम् ॥ सम्बुध्य तां च सकलीकृतो भव वदेत्ततः ॥ ६८६ ॥ ध्यायेदङ्गानि देवे तु प्रतिष्ठाप्याङ्गदेवताः ॥ यस्माद्भिन्नस्वभावानां यदभिन्नं प्रयोजनम् ॥ ६८७ ॥ अङ्गानामङ्गिना सार्द्धं सकलीकरणाद्भवेत् ॥ अमृतीकरणं वक्ष्ये पीठे संस्थाप्य देवताम् ॥ ६८८ ॥ बद्ध्वा सम्यग्धेनुमुद्रां देवमूर्ध्नि प्रवर्षणम् ॥ जायते चामृतश्चैति ध्यायन्नर्घ्योदकेन च ॥ ६८९ ॥ त्रिः सिञ्चेन्मूलमन्त्रेण दीपिनीमन्त्रमन्त्रितम् ॥ अकारादिक्षकारान्तमातृकाभिस्त्रिधा पुनः ॥ ६९० ॥ वाग्भवं वदयुग्मं च वाग्वादिनि च वाग्भवम् ॥ क्लींक्लिन्ने क्लेदिनि क्लेदय महाक्षोभमित्यापि[१]- ॥ ६९१ ॥ कुरु युग्मं कामबीजमों मोक्षं कुरु युग्मकम् ॥ प्रासादश्च पुनः प्रासादः सप्तत्रिंशदक्षरः ॥ ६९२॥ दीपिनीमनुराख्यातो देवताया हि वृद्धिकृत् ॥ मूलं सम्बोधनान्तं च देवनामामृतीकृतः ॥ भवेति च वदेदित्थममृतीकरणं त्विदम् ॥ ६९३ ॥ परमीकरणं वक्ष्ये महामुद्रां च बन्धयेत् ॥ उच्चार्य्य मूलं देवं च पूर्ववत्परमीकृतिः ॥ कृतो भवेति च प्रोच्य ध्यायेद्देवस्य मस्तके परमामृतवृद्धिं च देवस्य हृदयं स्पृशन् ॥ ६९४ ॥ कुर्य्यात्प्राणप्रतिष्ठां च मम स्थाने वदेत्तथा ॥ देवतानामशेषं च सर्वं प्राग्वत्तदेव हि ॥६९५॥ तत्तद्दैवतकल्पोक्तास्ततो मुद्राः प्रदर्शयेत् ॥ मुदं स्वं पूरयन्त्यद्धा देहद्वारेण चात्मनः॥६९६॥या अर्प्पयन्त्ययत्नेन मुद्रास्ताः शक्तयो मताः ॥ मोदयन्ति ग्रहादिभ्यःपापौघं द्रावयन्ति च॥६९७॥मोदनं द्रावणं यस्मादतो मुद्राः प्रकीर्तिताः॥ततः सम्पूजयेद्देवं शक्त्यालभ्योपचारकैः॥६९८॥तत्रादौ पूजनं कार्य्यं षोडशैरुपचारकैः ॥ आसनं स्वागतं चार्घ्यं पाद्यमाचमनीयकम् ॥ ६९९ ॥ मधुपर्कमाचमनं स्नानं वस्त्रमलंकृतिम् ॥ गन्धपुष्पाणि धूपं च दीपनैवेद्यवन्दनम् ॥ ७०० ॥ प्रयोजयेदर्चनायामुपचारान्हि षोडश ॥ दशोपचारा मध्या

---

१ ऐं वद वद वाग्वादिनि ऐं क्लीं क्लिन्ने क्लेदिनि क्लेदय महाक्षोभं कुरु कुरु क्लीं ॐ मोक्षं कुरु कुरु ह्रौं ह्रौं ॥ इति दीपिनीमन्त्रः॥ २ मूलमन्त्रपूर्वकसम्बोधनान्तदेवनाम अर्थात् हे अमुकदेव ! अमृतीकृतो भव एतयारीत्या परमी करणम् । ३ पूर्वोक्त प्राणप्रतिष्ठामन्त्रेण प्राणप्रतिष्ठान्भवाति परन्तु मम स्थाने अमुकदेवस्य इदं पदं योजयेत् ॥

स्यात्सा गृहस्थैर्विधीयते ॥ ७०१ ॥ अर्घ्यं पाद्यं तथाचामो मधुपर्कस्तथाचमः ॥ गन्धादयो निवेद्यान्ताः उपचारा दश स्मृताः ॥ ७०२ ॥ गन्धादयो निवेद्यान्ताः पूजा पञ्चोपचारिका ॥ अगृहस्थैर्गृहस्थैर्वा कर्त्तव्या कार्य्यतत्परैः ॥ ७०३ ॥ आदौ कुर्य्याद्देशिकस्तु वेदमन्त्रेण पूजनम् ॥ ततश्च तान्त्रिकैर्मन्त्रैर्वामी शूद्रश्च तन्त्रतः ॥ ७०४ ॥ ॐअंहंहमिदमिदं गृहाण ठद्वयम् ॥ योऽयः सर्वोपचारेषु मन्त्रः पञ्चदशाक्षरः ॥ ७०५ ॥ पठेद्वा वैदिकस्यान्ते तत्र तन्त्रं तु वैदिकः ॥ सर्वत्र वह्निजायायाः स्थाने शूद्रो नमः पठेत् ॥ ७०६ ॥ देवस्य वामभागे तु दद्यान्मूलेन चासनम् ॥ पौष्पं दारुमयं वास्त्रं चार्म्मं कौशं च तैजसम् ॥ ७०७ ॥ पौष्पं पुष्पादिरचितं कुशदूर्वादिसंयुतम्॥ नानावर्णसुगन्धं च कोमलं सर्वकामदम् ॥७०८॥ यस्य यानि निषिद्धानि पुष्पाण्युक्तानि तैः कृतम् ॥ केवलैरासनं हन्ति साधकस्य मनोरथान् ॥ ७०९ ॥ यज्ञदारुसमुद्भूतं वैल्वं वा चन्दनोद्भवम्॥ गम्भार्य्या वा समाख्यातं श्रीपर्णस्येप्सितप्रदम् ॥ ७१० ॥ सकण्टकक्षीरयुततालशालविवर्जितम् ॥ चैत्ये श्मशाने सम्भूतं वर्जयेच्च बिभीतकम् ॥७११॥ रोमजं वाल्कलं कौशजातं कर्पाससम्भवम् ॥ वस्त्रं चतुर्विधं श्रेष्ठं पूर्वपूर्वमुदाहृतम् ॥ ७१२ ॥ सिंहव्याघ्रतरक्षूणां छागस्य महिषस्य च ॥ गजानां तुरगाणां च कृष्णसारस्य चर्मणः॥७१३॥आसनं निर्मितं श्रेष्ठं निषिद्धं खारकौक्कुरम् ॥ शृगालस्य वृकस्यापि गोः शशस्य: कपेस्तथा ॥ ७१४ ॥ कुशः काशः शरो ग्रन्थिर्यवो दूर्वाश्च बल्वजाः ॥ वीरणं च नडो गुन्द्रः पूर्वाभावे परः परः ॥ योगपीठस्य सदृशमेतेषामासनं स्मृतम् ॥ पूर्वपूर्वं श्रेष्ठतमं कौशं दशविधं स्मृतम् ॥ ७१५ ॥ सुवर्णतारताम्राणां सर्वेगानां परम्परम्॥ हीनं निषिद्धं लोहं तु कांस्यं सैसं च पैत्तलम् ॥ ७१६ ॥ साङ्गं सावरणं देवं पूजार्थमिह चागतम् ॥ इति ध्यात्वा तु मूलान्ते स्वागतं परिकीर्त्तयेत् ॥ ७१७ ॥ ततोऽर्घ्यं मूर्ध्नि दद्याच्च कालोस्य त्रिविधो मतः ॥ आगताय

१ ॐ अं हं हं इदमिदमिदं गृहाण स्वाहा । २ रजतम् । ३ वंगः प्रसिद्ध एव ।

तथार्चायां स्नातुमासनगाय च ॥ ७१८ ॥ पूजान्ते गन्तुकामाय देवायार्घ्यं प्रदापयेत् ॥ अर्घ्यद्रव्ययुतैस्तोयैरुपचारमनुं पठन् ॥ ७१९ ॥ आगते स्नानकाले च नैवेद्योपक्रमेपि च ॥ त्रिविधः पाद्यकालः स्यात्पाद्यं स्यात्पादयावनम् ॥ ७२० ॥ पाद्ये च मधुपर्के च स्नाने वस्त्रोपवीतयोः ॥ भोजने चाचमः शुद्धतोयैः षोढा प्रकीर्तितः ॥ ७२१ ॥ क्षौद्रं कृत्वा कांस्यपात्रे दद्याद्देवमुखाम्बुजे ॥ दिवसे दधिसंयुक्तमुपचारमनुं पठन् ॥ ७२२ ॥ जातीफललवङ्गैलाचन्द्रकङ्कोलचूर्णयुक् ॥ पुनराचमनीयार्थं तोयं देवमुखेऽर्पयेत् ॥ ७२३ ॥ सुगन्धतैलैरभ्यज्य सुगन्धामलकादिभिः ॥ उद्वर्त्तनं विधायाथ स्नापयेदुष्णवारिणा ॥ ७२४ ॥ गन्धोदकैश्च मूलेन यथाशक्त्यभिषेचयेत् ॥ दुग्धदध्याज्यमधुभिः खण्डेन च पृथक्पृथक् ॥ ७२५ ॥ नारिकेलोदकेनापि तथा तालफलाम्बुना ॥ गन्धद्रव्यैश्च बहुभिस्तथा गन्धोदकेन च ॥ ७२६ ॥ ऐक्षवेणोदकेनापि सकर्पूरादिगन्धिना ॥ शुद्धोदकैश्च मूलेन यथाशक्त्यभिषेचयेत् ॥ ७२७ ॥ कदलीपनसाश्वत्थरसेनापि सुगन्धिना ॥ शतं सहस्रमयुतं शक्त्यावाथाभिषेचयेत् ॥७२८॥ शङ्खं सम्पूज्य तेनैव स्नापयेत्तमनन्यधीः॥ सर्वेषां प्रीतिदः शङ्खो न सूर्य्यस्य कदाचन७२९॥ पञ्चामृतैस्तीर्थतोयैरभिषिक्तः शिवो मुदम्॥लभते नाथ शंखोदैस्ततः शुद्धोदकेन च ॥ ७३० ॥ स्नानं पुरुषसूक्तेन कार्य्यं मूलेन वा नृभिः ॥ प्रदेयं विष्णवे मुख्यं पीतं कौशेयमम्बरम् ॥ ७३१ ॥ शिवाय च सरस्वत्यै पार्श्वनाथाय शुभ्रकम्॥ रक्तं शक्त्यर्कविघ्नानां भौमसौगतयोरपि॥७३२॥कृष्णं भैरवकाल्यादेराद्यादेर्नीलमम्बरम् ॥ अच्छिद्रं मलहीनं च सदशनन्यधारितम् ॥७३३॥ कार्पासजं वा कौशेयं राङ्कवं वा विशिष्यते ॥ तैलादिदूषिताद्रोगः सच्छिद्राद्व्रात्यता भवेत् ॥ ७३४ ॥ परकीयाच्च दारिद्र्यं जीर्णादायुःक्षयो भवेत् ॥ दग्धाद्विपद्भवेदास्यं दत्ते गात्रावलम्बिते ॥ ७३५ ॥ सूचीविद्धात्स्फोटकादि

---

१ कर्पूरम् । २ अभ्यंगः । ३ वृतम् । ४ इक्षुरसः । ५ दशसहस्राणि । ६ पुरुषसूक्तमूलमन्त्रस्त्रानमन्त्रैः । ७ शुक्लम् । ८ देवी । ९ गणेशः । १० बुद्धः । ११ संस्कारहीनो वा संकरः ।

मलिनात्कान्तिहीनता ॥ उग्रकेशे पुत्रनाशः पूजनादौ प्रयोजिते ॥ ७३६ ॥ तानि नानाविधानि स्युर्मुकुटादिप्रभेदतः स्त्रीपुम्प्रभेदतश्चापि विज्ञेयानि विचक्षणैः ॥ ७३७ ॥ चूर्णं घृष्टं धूमसारः सम्मर्दः प्राणिसम्भवः ॥ गन्धः पञ्चविधो ज्ञेयो मोददः स्वर्गवासिनाम् ॥ ७३८ ॥ प्रशस्तगन्धयुक्तानां पत्रचूर्णानि यानि च ॥ तानि गन्धाह्वयानि स्युश्चूर्णाद्यः प्रथमः स्मृतः ॥ ॥ ७३९ ॥ घृष्टो मलयजो गन्धस्सरलो देवदारु च ॥ कृष्णागुरुः कदम्बश्च द्वितीयोयं प्रकीर्तितः ॥ ७४० ॥ शतपत्रीरसे मग्नाच्चन्दनागुरुकादिकात् ॥ पिप्पलीयन्त्रतः काचकुप्यां सिद्धस्तृतीयकः ॥ ७४१ ॥ कृष्णागुरुश्चन्दनदेवदारु कालीयकं बालकभद्रमुस्तम् ॥ शिलारसः कुन्दरकोलकं च सेवन्ति काकं तुरगाभिधानम् ॥ ७४२ ॥ मृत्कर्प्पटैः संयुतकाचकुप्यां दत्त्वा मुखे लोहमलोहसूत्रैः ॥ निष्कासितो धूमरसस्तु तस्य सौगन्धिकैः काचकठोरकेयः ॥ ७४३ ॥ महामोदनामा सुरामोदकारी तथा भूतयक्षोरगातङ्ककारी ॥ ज्वरारोचकच्छर्दिशङ्कापहारी ललाटे स्थितो दृष्टिदोषापहारी॥७४४॥ यथाभागमनेके तु सुगन्धागन्धवारिभिः ॥ मर्दितास्स चतुर्थस्तु सम्मर्द इति कीर्त्यते ॥ ७४५ ॥ कस्तूरिका चैकभागा द्वौ भागौ मुस्तकस्य च ॥ तदर्धैलाजटामांसी त्वक्कुष्ठं च शिलारसः ॥ ७४६ ॥ चतुर्भागं बालकं च घृतभृष्टा तथा नखी ॥ सुगन्धकोकिला लोहबाणो राजवचा तथा ॥ ७४७ ॥ अष्टौ भागाः केशरस्य मुरायाश्चैव षोडश ॥ कृष्णागुरुश्च कालीयं तद्भागाष्टकमुच्यते ॥ ७४८ ॥ तथा सेवन्तिकाकस्य भागानेकत्र मर्दयेत् ॥ कामोदनामा सम्मर्दो देवताराजतोषकृत् ॥ ॥ ७४९ ॥ कास्तूरिकश्चौतुमदः प्राणजात इतीर्य्यते ॥ पञ्चमोयं सुगन्धस्तु देवदानवतोषकृत् ॥ ७५० ॥ पुष्पं पञ्चविधं प्रोक्तं परं चापरमेवच ॥ उत्तमं मध्यमं हीनन्तेषां वक्ष्यामि लक्षणम् ॥ ७५१ ॥ परं सुवर्णपुष्पं स्यात्तत्सदा योग्यमेव हि ॥ अभ्यङ्गपूर्वकं देयमर्चनार्हं सदा भवेत् ॥

---

१ देवदारुभेदः २ शतावरी । ३ पीतचन्दनम्ः । ४ हीबेरम् काला गुरुवा । ५ शतमूली । ६ वारिवाह ।७ सेवन्ती । ८ अश्वकर्णः । ९ अश्वगन्धः । १०तत्तन्नाम्नैव प्रसिद्धम् ।

अपरं राजतं पुष्पं ताम्रजं च प्रकीर्तितम् ॥ ७५२ ॥ सदायोग्यश्चेदमपि त्रिवर्षं चैकवर्षकम् ॥ तुलसीकेतकी पद्मं करवीर[1]श्च[2] मालती ॥ ७५३ ॥ पञ्चैतान्युत्तमान्याहुर्मध्यमानि तथा दश ॥ मल्लिका[3] कुन्दमन्दारबकुला[4]र्जुनकिंशुकाः[5] ॥ ७५४ ॥ पारिजातमशोकं च बिल्वं चम्पकमेव च ॥ एतद्भिन्नं सुवर्णं च सुगन्धहतमुच्यते ॥ ७५५ ॥ तत्तन्मन्त्रविधानेषु विहितानि समर्चयेत् ॥ नार्पयेद्भूमिपतितं कोष्णकं[6] क्रमिभक्षितम् ॥ ७५६ ॥ अंगलग्नं समाघ्रातं म्लानं पर्य्युषितं[7] तथा ॥ उग्रगन्धमगन्धं च मध्याह्नस्नानतस्तथा ॥ ७५७ ॥ पत्रं वा यदि वा पुष्पं फलं नेष्टमधोमुखम् ॥ दुःखदन्तु समाख्यातं यथोतपन्नं तथार्पणम् ॥ ७५८ ॥ चित्रपूजासु सर्वासु न विरुद्धस्य दूषणम् ॥ अधोमुखार्पणं नेष्टं पुष्पाञ्जलिविधौ न तत् ॥ ७५९ ॥ न पर्य्युषितदोषोस्ति तुलसीबिल्वचम्पके ॥ जलजे बकुलेगस्त्ये मालाकार[8]गृहेषु च ॥ ७६० ॥ केतकीकुटजै[9]र्नेशं नार्चयेदक्षतैर्हरिम् ॥ न दूर्वया यजेद्दुर्गां बिल्वपत्रैर्दिवाकरम् ॥ ७६१ ॥ लम्बोदरन्तुलस्या च एतद्धीनैः समर्चयेत् ॥ नार्कपुष्पैर्यजेद्देवीमादित्यं तगरेण च ॥ ७६२ ॥ गणेशाय च सूर्य्याय रक्तपुष्पमतिप्रियम् ॥ पुष्पाभावे प्रवालैर्वा तदभावे च कोरकैः[10] ॥ ७६३ ॥ तदभावे फलैः पत्रैस्तदभावे तृणैः कुशैः ॥ कपित्थं दाडिमं कोलं[11] जम्बूश्चि[12]श्चामलं[13] चाम्रकम्[14] ॥ ७६४ ॥ मातलुगं[15] च जम्बीरं[16] पनसं[17] श्रेष्ठमुच्यते ॥ अथ पुष्पोपचारान्ते कुर्य्यादावरणार्चनम् ॥ ७६५ ॥ मन्त्रसम्पुटितैर्वर्णैर्मातृकायाः सबिन्दुकैः ॥ क्रमेण गन्धपुष्पाद्यैर्देवस्यांगं समर्चयेत् ॥ ७६६ ॥ लयाङ्गत्वेन मातृणां स्थानाङ्गेषु ततः परम् ॥ आदावावरणं पूज्यं तदन्ते देवतां यजेत् ॥ ७६७ ॥ एवमभ्यर्च्य सर्वास्ता यथोक्ता वृत्तिदेवताः ॥ केशरेष्वग्निकोणादौ हृदयादीनि पूजयेत् ॥ ७६८ ॥ नेत्रं मध्ये दिशास्वस्त्रं ध्यातव्या-

---

१ करवीरंप्रसिद्धमेव । २ जाती वा मालती प्रसिद्धैव । ३ बेला प्रसिद्धैव । ४ मौलसिरीति भाषायाम् । ५ पलासः । ६ तप्तम् । ७ पूर्वदिवससञ्चितम् । ८ मालाकारागारे । ९ कुरैयेतिभाषायाम् १० मुकुलम् । ११ बेरफलम् । १२ चिञ्चिनी । १३ धात्री । १४ रसालः । १५ जम्बीरभेदश्चकोतरेति भाषायाम् । १६ जम्बीरम् । १७ कण्टकिफलम् ।

श्चाङ्गदेवताः ॥ तुषारस्फटिकश्यामनीलकृष्णारुणार्चिषः ॥ ७६९ ॥ वर-
दाभयदारिण्यः प्रधानतनवः स्त्रियः॥ अग्नीशासुरवायव्यमध्यदिक्षु क्रमात् स्थिताः
॥ ७७० ॥ देवस्य पुरतः प्राची ज्ञेयावरणपूजने ॥ तदादिपरिवाराणां प्राद-
क्षिण्येन पूजनम् ॥ ७७१ ॥ अङ्गमन्त्रास्तु पूजायामोमन्ताश्चान्ताहुतौ तथा ॥
स्वाहान्ता अथ देवस्याभिमुखं तास्समास्थिताः॥ ७७२ ॥ ततो यजेल्लोकपा-
लान्स्वस्वदिक्षु व्यवस्थितान् ॥ आयुधानि तदग्रे च तेषां ध्यानमथोच्यते ॥
॥ ७७३ ॥ इन्द्रं सुराधिपं पीठमैरावतगतं विभुम् ॥ सहस्रनेत्रं द्विभुजं पीठ-
वज्रधरं भजे ॥ ७७४ ॥ अग्निं तेजोधिपं रक्तं श्वेतशक्तिकरं प्रभुम् ॥ सभू-
षणं मेषवाहं देवरं कान्तलोचनम् ॥ ७७५ ॥ यमं प्रेताधिपं कृष्णं महिषो
परिसंस्थितम् ॥ कालदण्डकरं क्रूरं वृतं दूतैर्भयानकैः ॥ ७७६ ॥ रक्षो-
धिपं च निर्ऋतिं शवासनसमास्थितम् ॥ धूम्राभं खड्गहस्तञ्च पिङ्गलश्मश्रु-
कूर्चकम् ॥ ७७७ ॥ मकरे संस्थितं विद्युन्निभं पाशकराम्बुजम् ॥
शुभ्राङ्गं तुन्दिलं वन्दे वरुणं यादसां पतिम् ॥ ७७८ ॥ वायुं प्राणप्रियं
धूम्रं रक्तांकुशकरं परम् ॥ वानप्रस्थसमारूढं धावन्तं वेगतो भजे ॥ ७७९॥
यक्षाधिपं कुबेरं च शुक्लं शुक्लगदाधरम् ॥ नारसिंहासनारूढं पानपात्रयुतं
भजे ॥ ७८० विद्याधिपं नीलशूलधरं वृषभवाहनम् ॥ त्रिनेत्रं भालचन्द्रं
च जटाजूटधरं सितम् ॥ ७८१ ॥ गौरं नागाधिपं मूर्ध्नि फणामण्डलभू-
षितम्॥ पीनोत्तुङ्गं चक्रधरमनन्तं विश्वलं भजे॥७८२॥लोकाधिपं विधातारं
रक्तं पद्मकरं शुभम्॥ हंसारूढं वेदपाठं कुर्व्वन्तं तमहं भजे ॥७८३॥ पुनर्मूलं
समुच्चार्य्य साङ्गायै सपरीतिच ॥ वारायै च नामदेव्याश्चतुर्थ्यन्तमुदीरयेत् ॥
॥ ७८४ ॥ नम इत्यर्चयेद्गन्धपुष्पाद्यैस्साधकाग्रिधा ॥ धूपपात्रं ततोऽस्त्रेण
लक्षयेत्पूजयेत्ततः ॥ ७८५ ॥ हृदाणुनाथ चास्त्रेण घण्टां सम्पूज्य वादयेत् ॥
धूपो देयो गणेशस्य प्रियः प्रोक्तस्तु गुग्गुलुः ॥ ७८६ ॥ सर्जं देव्या महे-

---

१ मध्ये पूज्यदेवता तिष्ठति तस्याः स्वस्य चान्तराले पूर्वा दिक्प्रदेष्टव्या । २ ओमन्तोऽन्तावय-वोयेषाम् ३ लोकपालानां पूजायाः पश्चान्मूलमन्त्रमुच्चार्य्य साङ्गायै सपरिवारायै देव्यै नमः एतन्मन्त्रेन पूजाविधेया । ४ नमोमन्त्रेणः । ५ धूप इति प्रसिद्धः ।

शस्य निर्यासो देवदारुजः ॥ विष्णोः कृष्णागुरुः सिह्लं[1] भास्करस्य प्रियं मतम् ॥ ७८७ ॥ शक्तेर्दशांगं वक्ष्यामि शैलेयं मलयोद्भवम्[2] ॥ नखं कुष्ठं सर्ज्जरसमेकैकांशं प्रकल्पयेत् ॥ ७८८ ॥ शिलारसागुरुजटामांसीभागद्वयं मतम् ॥ षण्माक्षिकं[3] सिता चाष्टौ धूपोयं शक्तिमोहनः ॥ ७८९ ॥ हरीतकीसर्ज्जरसमुरामांस्यः कुभागिकाः ॥ लाक्षा त्रिभागा चत्वारो भागाः शैलजमुस्तयोः ॥ ७९० ॥ पञ्चभागं नखं प्रोक्तं षड्भागं कुष्ठमुच्यते ॥ द्वादशांशोगुरुः केशविघ्नोविष्णुदशाङ्गकः ॥ ७९१ ॥ मधु मुस्ता घृतं गन्धो गुग्गुल्वगुरुशैलजम् ॥ सरलं सिह्लसिद्धार्थैः शेषदेवदशाङ्गकः ॥ ७९२ ॥ वामेन तु तथा धूपमग्रे वा न तु दक्षिणे ॥ न धूपं वितरेद्भूमौ नासने न पटे तथा ॥ ७९३ ॥ यथा तथाधारगतं कृत्वा तं विनिवेदयेत् ॥ मेदोमज्जायुतो नेष्टो विष्णवे दारुसम्भवः ॥ ७९४ ॥ पूजयित्वा स्वमन्त्रेण घण्टावादनपूर्वकम् ॥ दीपं दद्यात्तु विभवैर्नानावाद्यपुरस्सरम् ॥ ७९५ ॥ तारो[6] जयध्वनिपदं मन्त्रमानेग्निगेहिनी ॥ एकादशाक्षरो मन्त्रो घण्टायास्सर्वसिद्धिदः ॥ ७९६ ॥ आवाहनार्घ्यधूपेषु पुष्पे नैवेद्यदीपयोः ॥ घण्टानादं प्रकुर्वीत विशेषाद्धूपदीपयोः ॥ ७९७ ॥ पूजाकालं विनान्यत्र कुर्यात्तस्या न वादनम् ॥ नानया च विना पूजां कारयेत्सिद्धिलालसः ॥ ७९८ ॥ गोसर्पिषा वा तैलेन वर्त्या च लघुगर्भया ॥ उच्चैः प्रदर्शयेद्दीपं न च मेदादिना क्वचित् ॥ ७९९ ॥ न मिश्रीकृत्य दद्यात्तु दीपं स्नेहाद्घृतादिकान् ॥ दत्त्वा मिश्रीकृतस्नेहात्तामिस्रं नरकं व्रजेत् ॥ ८०० ॥ पारावत[7]भ्रमाकारं भ्रामयेच्च प्रदर्शयेत् ॥ देवस्य सर्वावयवाञ्श्लोकमेकं ततः पठेत् ॥ ८०१ ॥ सुप्रकाशो महादीपः सर्वत्र तिमिरापहः ॥ सबाह्याभ्यन्तरं ज्योतिर्दीपोयं प्रतिगृह्यताम् ॥ ८०२ ॥ दक्षिणे सार्षपं तैलं तिलतैलस्य वामतः ॥ सितावर्तिर्दक्षिणतो वामतो रक्तवर्तिका ॥ ८०३ ॥ पात्रेषु दीपो दातव्यो न तु भूमौ कदाचन ॥ कृत्वा तु पृथिवीभागे दीपमुत्सृजते नरः ॥ स तापपापं नरकं प्राप्नोति च शतं समाः ॥ ८०४ ॥ नैव निर्वापयेद्दीपं लक्ष्मीनाशकरो यतः ॥ पाद्य-

---

१ मनःशिला २ चन्दनम् ३ षद्भागंमाक्षिकम् ४ एकभागाः ५ सर्द्वपः ६ ॐ जयध्वनि मन्त्रमाने स्वाहा ७ कपोतभ्रमणवद्दीपभ्रमणम् ॥

आचमनीयं च दत्त्वा नैवेद्यमर्पयेत् ॥ ८०५ ॥ निधाय स्वर्णकं पात्रं साधारं मण्डले त्विह॥ संस्थाप्य चतुरस्रं च संस्कुर्य्याच्छास्त्रमार्गतः ॥८०६॥ अस्त्र-मन्त्रेण सम्प्रोक्ष्य चक्रमुद्राभिरक्षितम् ॥ स्पर्शदृष्ट्यादिदोषांश्च वायुबीजेन शोषयेत् ॥ ८०७ ॥ स्पृशन्दक्षकराग्रेण वह्निबीजेन निर्दहेत् ॥ वंबीजेना-मृतीकृत्य मूलमन्त्रेण तत्पुनः ॥ ८०८ ॥ स्पृशेत्कराभ्यां विधिवदष्टवारा-भिमन्त्रितम् ॥ धेनुमुद्रां प्रदर्श्याथ गन्धपुष्पैः समर्चयेत् ॥ ८०९ ॥ देव-मभ्यर्च्य कुर्य्याच्च पुष्पाञ्जलिमनन्यधीः ॥ हेमपात्रस्थितं दिव्यं परमान्नं सुसं-स्कृतम् ॥ ८१० ॥ पञ्चधा षड्रसोपेतं गृहाण मम सिद्धये ॥ मूलमन्त्रं समुच्चार्य्य स्वाहान्तं जलमर्प्पयेत् ॥ ८११ ॥ कराभ्यां संस्पृशन्पात्रं नैवेद्या-न्ते नमो वदेत् ॥ देवस्य दक्षिणे हस्ते जलं दत्त्वा पठेदिदम् ॥ ८१२ ॥ अमृतोपस्तरणमसि स्वाहेति अंवाक्षरः ॥ दर्शयेद्दक्षहस्तेन विकचोत्पलसन्नि-भाम् ॥ ८१३ ॥ दर्शयित्वा ग्रासमुद्रां पञ्च प्राणाहुतीश्चरेत् ॥ कनिष्ठा-नामिकांगुष्ठयोगः प्राणस्य मुद्रिका ॥ ८१४ ॥ तया ग्रासं गृहीत्वा प्राणाय स्वाहेति संवदेत् ॥ तर्जनीमध्यमांगुष्ठयोगेपानपदं वदेत् ॥ ङेन्तं स्वाहान्तमथ च व्यानाय च ततो वदेत् ॥ ८१५ ॥ स्वाहान्तमध्यमानामांगुष्ठयोगेन निर्व-पेत् ॥ हित्वा कनिष्ठां सर्वाभिरुदानायाग्निगेहिनी ॥ ८१६ ॥ सर्वाभिस्तु समानाय स्वाहोक्त्वा ग्रासमर्पयेत् ॥ ततः स्वर्णादिजे पात्रे सुतोयं धेनुमुद्रया॥ ॥ ८१७ ॥ अमृतीकृत्य देवाय देयं मन्त्रमिमं पठेत् ॥ नमस्ते देवदेवेश सर्व-तृप्तिकरं परम् ॥ अन्नं निवेदितं शुद्धं प्रकृतिस्थं सुशीतलम् ॥ ८१८ ॥ परमानन्दसम्पूर्णो गृहाण जलमुत्तमम् ॥ उक्त्वैवं देवतावामे जलपात्रं निवेश-येत् ॥ ८१९ ॥ त्रिभिर्वर्णैः प्रदातव्यं देवार्थं पाकभोजनम् ॥ घृतपक्वं दुग्ध-सिद्धं साधितं केवलाग्निना ॥ ८२० ॥ युक्तमैक्षवपङ्केन तच्छूद्रस्य प्रश-स्यते ॥ ततः पुष्पाञ्जलिं दद्यादस्त्रमन्त्रेण बन्धनम् ॥ ८२१ ॥ दिशां कृत्वा-

---

१ हस्तौ तु सम्मुखौ कृत्वा संलग्नौ सुप्रसारितौ ॥ कनिष्ठांगुष्ठकौ लग्नौ मुद्रैषा चक्रसञ्ज्ञिता ॥ पाणिद्वयं निबध्य कनिष्ठांगुष्ठयोः अनामिकाकनिष्ठिकयोः प्रवेशेन चक्रमुद्रा भवति२ यमिति मन्त्रेण-३ रमिति मन्त्रेण । ४ पुनरष्टौ वारान्मूलमन्त्रं पठित्वा अभिमन्त्रितं पात्रं हस्ताभ्यां स्पृशेत् ।५ एका-दशाक्षरो मन्त्रः । ६ विकसितकमलाकृतिदाक्षिणहस्ताङ्गुलिभिन्नकरणेन ग्रासमुद्रा भवति ॥

जवनिकां[1] देवस्य परितो न्यसेत् ॥ अमृतात्मकनैवेद्यं नम इत्युच्चरेत्पुनः ॥ ॥ ८२२ ॥ धेनुमुद्रां प्रदर्श्याथ भुञ्जानां देवतां स्मरेत् ॥ अष्टोत्तरशतं जप्त्वा मूलमन्त्रं ददेज्जलम् ॥ ८२३ ॥ नैवेद्यान्ते त्वाचमनं दत्त्वा होमविधिं चरेत् ॥ पूर्ववत्संस्कृते वह्नौ देवमावाह्य मन्त्रवित् ॥ ८२४ ॥ सम्पूज्य मूलमनुना पञ्चविंशतिमाहुतीः ॥ हुनेदाज्येन हविषा तिलैर्वा पायसैः शुभैः ॥ ८२५ ॥ तण्डुलैस्तिलमिश्रैर्वा केवलैर्वापि पुष्पकैः ॥ अङ्गावरणदेवानामेकैकामाहुतिं हुनेत् ॥ ८२६ ॥ उद्वास्य देवं वह्निं च पूजास्थानं व्रजेत्ततः ॥ उपविश्यासने मन्त्रैर्दद्याद्भूतबलिं ततः ॥ ८२७ ॥ ईशाने मण्डलं कृत्वा साधारं तत्र निक्षिपेत् ॥ अन्नं व्यञ्जनतोयाढ्यं पात्रं पुष्पादिपूरितम् ॥ तत्र भूतानि सम्पूज्य ततस्तेभ्यो बलिं हरेत् ॥८२८॥ ये रौद्रा रौद्रकर्म्माणो रौद्रस्थाननिवासिनः ॥ योगिन्योप्यग्निरूपाश्च गणानामधिपाश्चये ॥ ८२९ ॥ भूचराः खेचराश्चैव ये तिष्ठन्त्यन्तरिक्षगाः ॥ सर्वतः प्रीतमनसो भूता गृह्णन्त्विमं बलिम् ॥ ८३० ॥ वामहस्तेन तत्पात्रे जलधारां समर्प्पयेत् ॥ पुष्पाञ्जलिं समादाय भूतानि प्रार्थयेदिति ॥ ८३१ ॥ भूतानि यानीह वसन्ति भूमौ बलिं गृहीत्वा विधिवत्प्रयुक्तम् ॥ सन्तोषमासाद्य व्रजन्तु सर्वे समन्ततोन्यत्र नमोस्तु तेभ्यः ॥८३२॥ दत्त्वा पुष्पाञ्जलिं नत्वा विहरन्तु यथासुखम् ॥ भूतादीनि च नाराचमुद्रया विसृजेत्ततः ॥ ॥ ८३३ ॥ देवं तृप्तमिति ध्यात्वा नैवेद्यं गतसारकम् ॥ सञ्चिन्त्य रक्षोदिग्भागे पात्रं तत्स्थापयेत्ततः ॥ ८३४ ॥ गोमयाद्भिस्तदस्त्रेण नैवेद्यं स्थापयेत्ततः ॥ देवोच्छिष्टं गृहीत्वा तु निर्माल्यभोजिने नमः ॥८३५॥ ऐशान्यां तु विनिक्षिप्य हस्तं प्रक्षालयेत्ततः ॥ पुनराचमनं दद्यात्करोद्वर्त्तनमेव च ॥ ८३६ ॥ शुद्धमाचमनं दत्त्वा सुगन्धैर्गन्धयेत्करौ ॥ ततो दद्याच्च ताम्बूलं विष्णवे द्वादशाङ्गकम्॥८३७॥खादिरैलालवङ्गेन्दुचूर्णपर्णतमालकम्॥ जातीफलं च जावित्रीकस्तूरीकेशरैर्युतम् ॥८३८॥ पौगं फलमथ प्रोक्तं दशाङ्गं

---

१ तिरस्कारिणी ॥

भास्करस्य तु ॥ मृगनाभितमालाभ्यां हीनं विघ्नेश्वरस्य तु ॥८३९॥ पञ्चाङ्गं चूर्णखदिरपर्णपूगफलेन्दुकम् ॥ शैवं देव्या जातिकोशयुतं तच्च महेशितुः ॥ ॥ ८४० ॥ ततश्च मुकुटादीनि दद्याद्भूषणकानि च ॥ दर्शयेच्च तथादर्शं कल्पयेच्छत्रचामरे ॥ ८४१ ॥ शिरस्यारोप्य देवस्य दूर्वाक्षतपवित्रकम् ॥ आरात्रिकं ततः कुर्य्याद्धर्म्मकामार्थसिद्धये ॥ ८४२ ॥ सौवर्णे राजते कांस्ये लोकनेत्रमनोहरे ॥ कुंकुमेन लिखेत्पद्ममष्टपत्रं सुशोभनम् ॥ ८४३ ॥ कर्णिकायां महादीपं तत्पत्रेष्वष्टदीपकान् ॥ यवगोधूमरचिताञ्छर्करादुग्धसंयुतान् वलयाञ्चितशोभाभिः शोभितान्घृतपूरितान् ॥ ८४४ ॥ अभिमन्त्र्य ततो मन्त्री रत्नेश्वर्य्या नवार्णतः ॥ श्रीं ह्रीं ग्लूं स्तूं त्वथ प्राग्वत्ततः श्रीं ह्रीमिति क्रमात् ॥ ८४५ ॥ रत्नेश्वर्य्यास्समुद्दिष्टस्ततो मूलेन तां यजेत् ॥ ततस्तत्पात्रमुद्धृत्य मस्तकान्तं पुनःपुनः ॥ ८४६ ॥ नववारं भ्रामयेच्च चक्रमुद्रां प्रदर्शयेत् ॥ देवं प्रणम्य च ततः प्राणायामत्रयं चरेत् ॥ ८४७ ॥ मूलमन्त्रेणाथ पूर्वं न्यासपूर्वान्समाचरेत् ॥ अष्टोत्तरसहस्रं तु नव द्वे त्रिशतं तु वा ॥ ८४८ ॥ अष्टोत्तरशतं चापि जपेन्मूलमतन्द्रितः ॥ समाप्ते तु जपे मालां निदध्यान्मस्तकोपरि ॥ अर्घ्यपात्राज्जलं चैव गृहीत्वेदं पठेत्पुनः ॥ ८४९ ॥ गुह्यातिगुह्यगोप्ता त्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम् ॥ सिद्धिर्भवतु मे देव त्वत्प्रसादाज्जगत्पते ॥ ८५० ॥ देवस्य दक्षिणेहस्ते तोयं दत्त्वा समर्पयेत् ॥ जपश्च जपमाला च स्थाप्या रहसि वेष्टिता ॥ ततस्तु गीतस्तुतिभिर्घण्टावादनपूर्वकम् ॥ ८५१ ॥ ब्राह्मणो वेदमन्त्राद्यैः क्षत्रियः संहितादिभिः ॥ पौराणिकाद्यैर्वैश्यस्तु शूद्रस्तु प्राकृतादिभिः ॥ ८५२ ॥ वामिनस्तूपचारान्ते कुर्य्युर्मद्येन तर्प्पणम् ॥ तेषामनित्यो होमस्तु नित्यं तर्प्पणसेवनम् ॥ ८५३ ॥ कौलिकैः शक्तिसहितैस्तदुच्छिष्टञ्च सेव्येत् ॥ मोहाद्वा कामतः शूद्रः पुराणं वा स्मृतिं पठेत् ॥ संहितां नरक याति पितृभिस्सह पापकृत् ॥ ८५४ ॥ यः शूद्रो बुद्धिपूर्वन्तु शृणुयाच्छ्रावयेद्द्विजान् ॥ वेदांस्तौ दुःखितावस्मिन्भवेन्यत्र च नारकौ ॥ ८५५ ॥ अधि-

---

१ श्रीं ह्रीं ग्लूं स्तूं श्रीं ह्रीं ग्लूं स्तूं ह्रीं ॥ इति नवाक्षरः रत्नेश्वरीमन्त्रः ॥

कारमदायस्तु धनस्य मदतोपि वा ॥ शूद्रस्तु शृणुयाद्वेदं स निर्वंशस्तु निर्धनः ॥ ८५६ ॥ अज्ञानाच्चेच्छुतो वेदः श्रावितो वा द्विजन्मना ॥ प्राजापत्यत्रयं कृत्वा तौ संशुद्धौ भविष्यतः ॥ ८५७ ॥ ततोर्घ्यपात्रमादाय मूलमुच्चार्य्य मन्त्रतः ॥ साधु वासाधु वा कर्म्म यद्यदाचरितं मया ॥ तत्सर्वं भगवन्देव गृहाणाराधनं वरम् ॥ ८५८ ॥इत्यर्घ्योदकमुत्सृज्य किञ्चिद्देवस्य दक्षिणे ॥ करे समर्प्पयेद्विद्वान्कृतमाराधनं ततः ॥ भक्त्या प्रणम्य देवेशं श्लोकैरेभिः समर्प्पयेत् ॥ ८५९ ॥ यद्दत्तं भक्तिमात्रेण पत्रं पुष्पं फलं जलम् ॥ निवेदितं च नैवेद्यं तद्गृहाणानुकम्पया ॥८६०॥ आवाहनं न जानामि न जानामि विसर्ज्जनम् ॥ पूजां चैव न जानामि त्वं गतिः परमेश्वर ॥ ८६१ ॥ कर्मणा मनसा वाचा त्वत्तो नान्या गतिर्मम ॥ अन्तश्चारेण भूतानां द्रष्टा त्वं परमेश्वर ॥ ८६२ ॥ नाथ योनिसहस्रेषु येषुयेषु व्रजाम्यहम् ॥ तेषुतेष्वचला भक्तिरच्युतास्तु सदा त्वयि ॥ ८६३ ॥ देवो दाता च भोक्ता च देवस्सर्वमिदं जगत् ॥ देवो जयति सर्वत्र यो देवः सोहमेव हि ॥ ८६४ ॥ ततोर्घ्यपात्रतोयेन कुर्य्यादाराधनार्प्पणम् ॥ ब्रह्मार्प्पणस्य मनुना कुर्य्याद्ब्रह्मार्प्पणं ततः ॥ ८६५ ॥ तारस्तत्सत्पूर्वमिति प्राणबुद्धीति संवदेत् ॥ देहधर्म्माधिकारेति जाग्रत्स्वप्नसुषुप्त्यवस्थासूक्त्वा मनसा वाचा कर्म्मणाभ्यन्तरा ततः ॥ ८६६ ॥यच्छब्दश्चोदरेणेति शिष्ण्वा यच्च स्मृतं च यत् ॥ उक्तं यच्च कृतं तच्च सर्वं ब्रह्मार्प्पणं भवेत् ॥ ८६७ ॥ भूस्स्वाहेति च मन्त्रोयं षट्षष्टयर्णः समीरितः ॥ उद्वासयेत्ततो देवं परिवारगणैस्सह ॥ ॥८६८॥इति पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा प्रणम्य परिभावयेत्॥ देवस्याग्रे विलीनं तु रश्मिवृन्दमशेषतः ॥ ८६९ ॥ तेजोरूपं शिवं ध्यात्वा क्षमस्वेति पुनः पुनः॥ क्षमयारोपयेत्स्वीये हृदम्भोजे तु देवताम् ॥८७०॥ गच्छगच्छ सुरश्रेष्ठ स्वस्थानं परमेश्वर ॥ यत्ते ब्रह्मादयो देवा न विदुः परमं पदम् ॥ ८७१ ॥ विसृ-

---

ॐतत्सत्प्राणबुद्धिदेहधर्म्माधिकारजाग्रत्स्वप्नसुषुप्त्यवस्थासु मनसा वाचा कर्म्मणाभ्यन्तरा यच्चोदरेण शिष्ण्वा यच्च स्मृतं यदुक्तं यच्च कृतं तत्सर्वं ब्रह्मार्प्पणं भवेत् भूस्स्वाहा ।

ज्यानेन मन्त्रेण ततः पूरकवायुना ॥ ध्यायेच्च मन्त्रेणानेन ध्यात्वा तां स्थापयेद्धृदि॥८७२॥ तिष्ठतिष्ठ परस्थाने स्वस्थाने परमेश्वर ॥ यत्र ब्रह्मादयः सर्वे सुरास्तिष्ठन्ति मे हृदि ॥८७३ ॥ इति संस्थाप्य सम्पूज्य स्वात्मानं तन्मयं स्मरेत् ॥ ऐशान्यां मण्डलं कुर्य्याद्वारि पद्मविवर्ज्जितम् ॥ ८७४ ॥ निर्माल्यं मोक्तुं पूजार्थं पञ्चायतनपूजने ॥ कर्त्तव्यानि तु पञ्चैव ईशानाद्यं समर्च्चयेत् ॥८७५॥ लम्बोदरो गणेशस्य तेजश्चन्द्रो विवस्वतः ॥ विष्वक्सेनो हरेः प्रोक्त ईश्वरी च महेशितुः ॥ ८७६ ॥ चण्डेश्वरो भवान्याश्च मन्त्रैरेतादृशं चरेत् ॥ लेह्यचोष्यान्नपानादि निर्माल्यं प्रविलेपनम् ॥ ८७७ ॥ निर्माल्यभोजिने तुभ्यं ददामि श्रीशिवाज्ञया ॥ इति नैवेद्यशेषं तु दत्त्वा नत्वा विसर्ज्जयेत्॥८७८॥ अथ ह्रीं ह्रीं सः बीजैस्तु सहितैर्नमसा पुनः ॥ मन्त्रेण भास्करायार्च्चामच्छिद्रार्थं निवेदयेत् ॥ ८७९॥ नमो विवस्वते तुभ्यं भास्वते विष्णुतेजसे॥जगत्सवित्रे शुचये सवित्रे कर्मदायिने८८०॥ततः कृताञ्जलिश्चित्तं स्थिरीकृत्य पठेदिति॥यन्नच्छिद्रं तपश्छिद्रं यच्छिद्रं पूजने मम ॥सर्वं तदच्छिद्रमस्तु भास्करस्य प्रसादतः॥८८१॥अर्घ्यतोयेन च ततो गन्धपूजावशेषितम् ॥ आलोड्य किञ्चिन्मूलेन मन्त्रयेदष्टधा पुनः ॥८८२॥ प्रोक्षयेत्तेन तोयेन तत्स्थानं मूलमन्त्रतः ॥ निर्माल्यं मस्तके धार्य्यं मूलमन्त्रेण मन्त्रिणा॥ ॥ ८८३ ॥ प्राश्य पादोदकं पश्चान्नैवेद्यं विभजेत्ततः ॥ तद्भक्तेभ्यः स्वयं भुक्त्वा तन्मयो हि वसेत्सुखम्॥८८४॥ शैवस्तु शिवनिर्माल्यप्रसादस्याधिकारवान् ॥ अन्यो निरयमाप्नोति न दोषः पञ्चसङ्क्रमे ॥८८५॥ स्वयं तु लिङ्ग तीर्थं वा प्रसादं वापि भक्तितः ॥कृत्वा शैवा ह्यशैवा वा मुच्यन्ते पापराशितः ॥ ८८६ ॥ शूद्रसंस्थापितं लिंगं पूजयेद्वा नमेत्तदा ॥ तत्सम्बन्धिप्रसादादि गृह्णन्निरयमाप्नुयात् ॥८८७॥ प्रातरुत्थाय गुर्वादि स्मृत्वासम्यक्समाचरेत् ॥ स्नानं सन्ध्यां तर्प्पणं च वैदिकं तान्त्रिकं तथा॥८८८॥आगत्य च गृहे पश्चात्प्राणायामत्रयं चरेत् ॥ कुर्य्याच्च मातृकान्यासं तथा छन्दर्षिदैवतम्॥८८९॥

तन्मन्त्रस्य करांगाख्यं न्यासं कृत्वा तथा स्थितिम् ॥ मन्त्रस्नानं देवतायाः पूजां पञ्चोपचारिकाम्॥ ८९० ॥वैश्वदेवान्तरे तत्र दद्यादाहुतिपञ्चकम् ॥ मूलेन होमयेत्तत्र जपेच्चाष्टोत्तरं शतम् ॥८९१॥ वैदिकीकाकबल्यन्ता पूजा चोच्छिष्टभोजनम् ॥ ततः सम्प्रार्थयेद्देवं सायं सन्ध्यां समाचरेत् ॥ ८९२ ॥ देवागारे दीप्यमाने प्रोक्तः संक्षेप आह्निकः ॥ अथापराह्निकं वक्ष्ये तत्स्थानदशके भवेत् ॥ ८९३ ॥ मार्गे प्रवासे दुर्गे च रोगमातौ महाभये ॥ कारागृहेऽशुभे स्थाने सर्पव्याघ्रादिजे भये॥८९४॥ परचक्रागमे[1] कुर्य्यात्करायन्तु यथातथा॥ तत्र स्नानादिकं चिन्त्यं कृत्वा मानसपूजनम् ॥८९५॥ मनसा हृदये तच्च ध्यात्वा योगाख्यपीठकम्॥ तत्रैव पृथिवीमध्ये पूजा देवस्य चाचरेत्॥८९६॥ यथापुष्पादिभिः पूजा बहिर्देशे विधीयते ॥ तथा हृद्यपि कर्त्तव्या सर्वाशाप्रतिपत्तये॥८९७॥मनसा च चरेद्धोममेतद्विपदि चाह्निकम् ॥ अथातश्चाह्निकं वक्ष्ये नित्यं स्वास्थ्याधिकस्य तत्॥८९८॥यदि लङ्घनपर्य्यन्ते व्याधिरात्मनि दृश्यते॥ तदा पूजा न कर्तव्या स्थण्डिले प्रतिमासु च ॥ ८९९ ॥ न स्नानं दन्तकाष्ठं वा कुर्य्याद्धोममथापि वा ॥ रविमण्डलमालोक्य प्रतिमामथ वा पुनः ॥ ९०० ॥ मूलमन्त्रं सकृज्जप्त्वा पुष्पं साक्षतमुत्सृजेत् ॥ क्रान्तो व्याधिभिरत्युग्रैर्जरया चेन्द्रियैस्तथा ॥ निजसामयिकैर्वापि स्वकर्त्तव्यं समापयेत् ॥ ९०१ ॥ रुग्निवृत्तस्ततस्स्नात्वा पूजयित्वाग्निदेवताः ॥ गुरून्विप्रांस्तदग्रे च वाक्यमेतदुदीरयेत् ॥ ९०२ ॥ एतावत्कालविच्छिन्ना पूजा युष्मत्प्रसादतः ॥ न दोषोस्त्विति सम्प्रार्थ्य पुनः पूर्ववदाचरेत्॥९०३॥ यस्तु रोगवशाद्दोषो यतस्तत्क्षालनं चरेत् ॥ जपेन चाथ ध्यानेन होमेन दानतोपि वा ॥९०४॥ अथ सूतकिनां नित्यं वैदिकन्तु श्रुतीरितम् ॥ कृत्वा तान्त्रिकपूजादि मनसैव समाचरेत् ॥९०५॥ कामनार्थप्रयोगश्चेत्तदा पूर्ववदाचरेत् ॥ मृतगेहं परित्यज्य वामाचारे न सूतकम् ॥९०६॥ स्पृहां हित्वा ज्ञानपूर्वं कुलतो धर्ममार्गतः ॥ यथा लभेद्ध्यानधर्म्मं भक्त्या वामे करोति यः ॥ शास्त्रतत्त्वं देवतत्त्वं नो वेत्ति स तु गुह्यकः ॥९०७॥ ज्ञानं वामेन भजते सुखार्थी तत्र जायते ॥ क्षुत्तृड्भ्यामर्दितः प्रेतस्तस्माद्धर्म्मं विचारयेत् ॥९०८॥ पूजोदकेन

१ स्वदेशे अन्यदेशीयराज्ञां सेनागमःपरचक्रागम उच्यते ॥

कर्तव्या तद्यन्त्रं नैव विद्यते॥तदा सम्पूजयेद्देवं भावनाकुसुमादिभिः॥१०९॥ भक्तिः श्रद्धा भावना च पूजानां जीव उच्यते ॥ जडानामाह्निकं वक्ष्ये तथा संक्षेपकर्म्मणि ॥ ११० ॥ रत्नमण्डपधर्म्मादिचतुष्कमरुणाम्बुजम् ॥ मूलमूर्त्तिषडङ्गानि तेषां पूजाभिधीयते ॥ १११ ॥ सर्वेषामपि वस्तूनामलाभे भाव नैव हि ॥ निर्मलेनोदकेनैव पूजयेत्स्थिरमानसः ॥ ११२ ॥ सामान्यत स्त्रिधा पूजा चोत्तमाधममध्यतः ॥ अधिकारिनिमित्ताभ्यां भिद्यते शतधा पुनः ॥ ११३ ॥ या सोपकरणा पूजा क्रियमाणोत्तमा मता ॥ यथालब्धैर्विनिष्पाद्या द्रव्यैः पूजा तु मध्यमा ॥ ११४ ॥ पत्रपुष्पाम्बुनिष्पाद्या पूजा साधमसञ्ज्ञिका ॥ विहिताखिलवेदोक्तैर्ब्रह्मर्षिभिरकल्मषैः ॥ ११५ ॥ क्रियमाणा[२] तु या पूजा सात्विकी सा विमुक्तिदा ॥ राजर्षिभिस्तपोनिष्ठैर्भगवत्तत्त्ववेदिभिः ॥ ११६ ॥ या पूजा क्रियते सम्यग्राजसी सा सुखप्रदा ॥ स्त्रीबालवृद्धमुख्याद्यैर्भक्तैरक्षुण्णमानसैः ॥ ११७ ॥ या पूजा क्रियते नित्यं तामसी सा प्रकीर्तिता ॥ वेदे कर्त्तुं तु नो शक्तास्तन्त्राणि तु युगेयुगे ॥ ११८ ॥ कल्यंशसम्भवैर्विप्रैर्नाम्ना कीर्त्तितानि तु ॥ कलिना प्रेरिता विप्रास्तत्तन्त्रपथगामिनः ॥ ११९ ॥ कामलोभादिभिर्ग्रस्ता ब्राह्मण्यरहिता नराः ॥ म्लेच्छास्ते तु भविष्यन्ति क्षीणपुण्याश्च रौरवे ॥ १२० ॥ पतिष्यन्तीति विज्ञाय न वै वैदिकमुत्सृजेत् ॥ उल्लासै रहितं गोपं पटलैर्विष्णुगोपनम् ॥ १२१ ॥ अध्यायैर्ये कृता ग्रन्थास्स्वाध्यायास्ते द्विजन्मनाम् ॥ यमुद्दिश्य कृतं तन्त्रं तस्य तत्र प्रधानता ॥ १२२ ॥ मेरुतन्त्रे तु यत्प्रोक्तं तत्स्थिरं नान्यथा भवेत् ॥ इति देवाः समाख्यातो युष्मत्प्रश्नविनिर्णयः ॥ १२३ ॥ यद्विचार्य्य कृतं कर्म्म न दुःखाय प्रवर्त्तते ॥ अतो वेदोदितं कर्म्म कार्य्यं निःश्रेयसाय वै ॥ १२४ ॥

इति श्रीमहामायामहाकालानुमते मेरुतन्त्रे शिवप्रणीत आह्निकप्रकाशः पञ्चमः ॥५॥

१ पूजायां यद्यद्वस्तु न लभ्येत तद्दाने भावना मनस्येव कर्त्तव्या । २ कामक्रोधादिकलिदोषैर्दुष्टाऽजितेन्द्रियपुंसां वैदिकधर्मानधिकारं विज्ञाय पूर्वाचार्यैस्तन्त्राणिरचितानि तत्र ये वैदिका धर्मास्ते सर्वे सेव्याः पुनः ये बलिवाममार्गादयो वेदविरुद्धास्ते केवलं केनाप्युपायेन मूर्खशूद्रादीनां देवभक्तौ प्रवृत्तये उक्ताः तन्त्राचार्य्याणामाशयमभिज्ञाय ये तानेव वेदाविरुद्धधर्मान् मुख्यान्मत्वा कुर्वते कारयन्ति च ते ब्रह्मतेजसो भ्रष्टा भूत्वा निरये पतन्ति ॥

श्रीदेव्युवाच ॥ पुरश्चरणशब्दस्य ब्रूह्यर्थं च विधिं प्रभो ॥ वैदिकाद्यास्सर्वे मन्त्रा न सिद्ध्यन्ति च यं विना ॥ १ ॥ ईश्वर उवाच ॥ रहस्यं सर्वमन्त्राणां कथयामि तवाग्रतः ॥ कैल्यर्थं सर्वतन्त्रेषु यः सारः स तु गोपितः ॥ २ ॥ धर्म्मार्थकाममोक्षाणां साधको मन्त्र उच्यते ॥ तत्सिद्धये पुरा यच्च चर्य्यते तत्प्रकीर्त्तितम् ॥ ३ ॥ पुरश्चरणकर्म्माख्यं वेदादौ शाबरान्तके ॥ मन्त्रो यस्तु तथा स स्यात्तत्प्रकारं ब्रवीम्यहम् ॥ ४ ॥ जपो होमस्तर्प्पणं च मार्ज्जनं विप्रभोजनम् ॥ पञ्चाङ्गकस्वरूपं तदाहुः केचन तत्र तु ॥५॥ चतुरङ्गास्त्वथ त्र्यङ्गा द्व्यङ्गा एकाङ्गिनोपि च ॥ मन्त्रास्तिष्ठन्ति वेदेषु तथा तन्त्रे च शाबरे ॥ ६ ॥ केचित्षडङ्गा मन्त्राः स्युस्तदङ्गान्ज्ञापयामि वै ॥ अघमर्षेण सूर्य्यार्घेण जपेन प्रणामकैः ॥ ७ ॥ देवार्च्चया पञ्चभिश्च एवं पञ्चाङ्गकाः स्मृताः॥ हुतिर्यागस्तथा चार्चा कर्म्मतश्चक्रपूजनात् ॥८॥ ध्वजलिङ्गसमायोगाज्जपाच्च बलिदानतः॥महा बलिप्रदानाच्च भवत्येकादशाङ्गकः ॥९॥ षोडशाङ्गे कौलिकानां गणानामधिकारिता ॥ सर्वपापक्षयं कुर्य्यादथ वा सिद्धिबन्धकृत् ॥ १० ॥ यावत्पापं तस्य नाशं कृत्वा कुर्य्यात्पुरस्कृतिम् ॥ यथा प्रोक्तेन मार्गेण तस्य सिद्धिरदूरतः ॥ ११ ॥ सर्वपापक्षयस्तत्र भवेद्वैदिकवर्त्मनाम् ॥ तान्त्रिकाणां कौलिकानां वामिनां नाधिकारिता ॥ १२ ॥ तस्मिन्कर्म्मणि तेषान्तु नाधिकारोस्ति वैदिके ॥ ऋक्शाखाध्यायिभिः कार्य्यो गणको योथ तद्विधिः॥ १३॥ स्नातः कृतक्रियः पत्नीसहितो दर्भसंस्तरः ॥ प्राणानायम्य सङ्कल्प्य पूजयित्वा गणेश्वरम् ॥ १४ ॥ स्वगृह्योक्तविधानेन संस्थाप्याग्निं च संश्रयेत् ॥ आज्यं विलिप्य तद्धव्यं द्विराघोंनयते ततः ॥ १५ ॥ अग्ने नयेति सूक्तेन षडर्चेन हुनेत् पुनः ॥ प्रतिमन्त्रं वदेत्त्यागेग्नये चेदं न वै मम ॥ ॥ १६ ॥ इत्यथात्र ऋचो वक्ष्ये माभूच्छाखाविपर्य्ययः ॥ १७ ॥ ॐ अग्ने नय सुपथा राये अस्मान्विश्वानि देव वयुनानि विद्वान् ॥ युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठान्ते नमउक्तिं विधेम ॥१८॥ प्र वः शुक्राय भानवे

---

१ कल्यावुत्पन्नजनानां भुक्तिमुक्तिप्रयोजनम् । २ स्वगृह्यसूत्रेषु कीर्त्तितविधानेन । ३ अग्ने नय इत्यादि एकमेकं पठित्वा स्वाहा देया । अग्ने अग्नये चेदं न वै मम इदं वचनं स्वाहान्ते पठेत् ।

भरध्वं हव्यं मतिं चाग्नये सुयुतम् ॥ यो दैव्यानि मानुषा जनुष्यन्तर्विश्वानि विद्मना जिगाति ॥ १९ ॥ अच्छा गिरो मतयो देवयन्तीरग्निं यन्ति द्रविणं भिक्षमाणाः ॥ सुसंदृशं सुप्रतीकं स्वं च हव्यवाहमरतिं मानुषाणाम् ॥ २० ॥ अग्ने त्वमस्मद्युयोध्यमीवा अनग्नि त्रा अभ्यमन्वकृष्टीः ॥ पुनरस्मभ्यं सुविताय देवा यक्षा विश्वेभिरमरेभिर्यजत्रा ॥ २१ ॥ अग्ने त्वं पारया नव्यो अस्मान्स्वस्तिभिरति दुर्गाणि विश्वा ॥ पूश्च पृथ्वी बहुला न उर्वी भवा तोकाय तनयाय शंयोः ॥ २२ ॥ प्रकारवो मनना वच्यमाना देवद्रीचीं नयथ देवयन्तः ॥ दक्षिणावाड्वाजिनिप्राचोतिहविर्भरन्त्यग्नये घृताची ॥ २३ ॥ पुनरष्टादशर्चेन पौरुषेण ततो हुनेत् ॥ जगद्बीजाय पुरुषाय न ममेति सन्त्यजेत् ॥ ॥ २४ ॥ [१]अवैष्णवो वैष्णवस्तु नारायणाय न मम ॥ देवदेवीप्रियं सूक्तं तदिदानीं निगद्यते ॥ २५ ॥ ॐ सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् ॥ स भूमिं विश्वतो वृत्वात्यतिष्ठद्दशांगुलम् ॥ २६ ॥ पुरुष एवेदं सर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यम् ॥ उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति ॥ २७ ॥ एतावानस्य महिमातो ज्यायांश्च पूरुषः ॥ पादोस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि ॥ २८ ॥ त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुषः पादोस्येहाभवत्पुनः ॥ ततो विष्वङ्व्यक्रामत्साशनानशने अभि ॥ २९ ॥ तस्माद्विराडजायत विराजो अधिपूरुषः ॥ स जातो अत्यरिच्यत पश्चाद्भूमिमथो पुरः ॥ ३० ॥ यत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत ॥ वसन्तो अस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्मः शरद्धविः ॥ ३१ ॥ सप्तास्यासन्परिधयस्त्रिःसप्तसमिधः कृताः ॥ देवा यद्यज्ञं तन्वाना अबध्नन्पुरुषं पशुम् ॥ ३२ ॥ तं यज्ञं बर्हिषि प्रौक्षन्पुरुषं जातमग्रतः ॥ तेन देवा अयजन्त साध्या ऋषयश्च ये ॥ ३३ ॥ तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः सम्भृतं पृषदाज्यम् ॥ पशूंस्तांश्चक्रे वायव्यानारण्यान्ग्राम्यांश्च ये ॥ ३४ ॥ तस्माद्यज्ञात्सर्वहुत ऋचः सामानि जज्ञिरे ॥ छन्दांसि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत ॥ ॥ ३५ ॥ तस्मादश्वा अजायन्त ये केचोभयादतः ॥ गावो ह जज्ञिरे तस्मा

---

१ अवैष्णवः प्रत्येकमन्त्रान्ते स्वाहादानसमये जगद्बीजाय चेदं न वै मम अस्य वचनस्य वैष्णवस्तु नारायणाय चेदं न वै मम अस्योच्चारणं कुर्वीत ।

त्तस्माज्जाता अजावयः ॥ ३६ ॥ यत्पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन् ॥ मुखं किमस्य कौ बाहू का ऊरू पादा उच्येते ॥ ३७ ॥ ब्राह्मणोस्य मुखमासीद्बाहू राजन्यः कृतः ॥ ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत ॥ ३८ ॥ चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षोस्सूर्य्यो अजायत ॥ मुखादिन्द्रश्चाग्निश्च प्राणाद्वायुरजायत ॥ ३९ ॥ नाभ्या आसीदन्तरिक्षं शीर्ष्णो द्यौः समवर्त्तत ॥ पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकानकल्पयन् ॥४०॥ वेदाहमेतं पुरुषं महान्तमादित्यवर्णं तमसस्तु पारे ॥ सर्वाणि रूपाणि विचित्य धीरा नामानि कृत्वाभिवदन्यदास्ते ॥ ४१ ॥ धाता पुरस्ताद्यदुदाजहार शक्रः प्रविद्वान्प्रदिशश्चतस्रः ॥ तमेवं विद्वानमृत इह भवति नान्यः पन्था अयनाय विद्यते ॥ ४२ ॥ यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्म्माणि प्रथमान्यासन् ॥ ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः ॥४३॥ अग्नेर्मन्वेति सूक्तेन द्वाविंशत्यृचकेन तु ॥ हुनेत्तत्र त्रिषु त्यागस्त्वं[1]-ग्नये न ममेति च ॥ ४४ ॥ तुर्य्ये[2] चेन्द्राय न मम त्यागः पञ्चमषष्ठयोः[3] ॥ मित्रावरुणाभ्यामिति सप्तमाष्टमयोस्तथा[4] ॥ ४५ ॥ वायुसूर्य्याभ्यामिति नवमे दशमे तथा ॥ अश्विभ्यां च मरुद्भ्यस्तु द्वादशैकादशे भवेत् ॥ ४६ ॥ विश्वेभ्यो देवेभ्य इति त्रयोदशचतुर्दशे ॥ अनुमत्यै हव्यवाहाग्नये च तिथि सङ्ख्यके ॥ ४७ ॥ अनुमत्यै षोडशे स्यात्तु ततः सप्तदशे भवेत् ॥ वैश्वानरायाग्नये च तथैवाष्टादशेपि च ॥ ४८ ॥ द्यावापृथिवीभ्यामिति विंशत्येकोनविंशयोः ॥ शेषयोरग्नये चेति ऋचस्ताः शृणु साम्प्रतम् ॥ ४९ ॥ अग्नेर्मन्वेति प्रथमस्य प्रचेतसोयं पाञ्चजन्यं बहवः ॥ सामिन्धते विश्वस्यां विशि प्रविविशि वास्समीमहे स नो मुञ्चत्वँहसः ॥५०॥ यस्येदं प्राणनिमिषद्यदेजति यस्य जातं जनमानं च केवलम् ॥ स्तौम्याग्निं नाथितो जोहवीमि स नो मुञ्चत्वँहसः ॥ ५१ ॥ इन्द्रस्य मन्ये प्रथमस्य प्रचेतसो वृत्रघ्नः स्तोमा

१ अग्नये चेदं न मम एतन्मन्त्रेण स्वाहा देवैतद्रीत्यैव अल्पनामसु वाक्यं विरचय्य संयुज्य जुहुयात्।
२ चतुर्थे ( इन्द्राय चेदं न मम )। ३ पञ्चमषष्ठयोः ( इन्द्रावरुणाभ्यां न मम )। ४ सप्तमाष्टमयोः ( वायुसूर्य्याभ्यां न मम अग्रेनयैव रीत्या ।

उपमामुपागुः ॥ यो दाशुषः सुकृतो हवमुपगन्ता स नो मुञ्चत्वँहंसः ॥ ॥५२॥यः संग्रामं नयति संवशी युधे यः पुष्टानि सँसृजति त्रयाणि॥ स्तौमीन्द्रं नाथितो जोहवीमि स नो मुञ्चत्वँहंसः ॥ ५३ ॥ मन्वेवां मित्रावरुणा तस्यवित्तँ सत्यौजसाहँहणायन्नुदेते ॥ त्याराजानँ सरथे पाथं उग्रतौ नो मुञ्चतमागसः ॥ ५४ ॥ यो वाँरथः सजरश्मिः सत्यधर्म्मा मिथश्चरत्वाँ समुपयाति दूषयन् ॥ स्तौमि मित्रावरुणौ नाथितौ जोहवीमि तौ नो मुञ्चतमागसः ॥ ५५ ॥ वायोस्सवितुर्वितथानि मन्महे यावात्मन्वद्विभृतो यौ च रक्षतः ॥ यौ विश्वस्य परिभूबभूवतुस्तौनो मुञ्चतमागसः ॥ ५६ ॥ उपश्रेष्ठा न आशिषो देवयोर्धर्मे अस्थिरन्॥स्तौमि वायुँ सवितारं नाथितो जोहवीमि तौ नो मुञ्चतमागसः ॥५७॥रथीतमौ रथीनामह्व ऊतये शुभङ्गमिष्टौ सुयमेभिरश्वैः ॥ ययोर्वान्देवौ देवेष्वनिशितमोजस्तौ नो मुञ्चतमागसः ॥ ५८ ॥ यदयातं वहतुँ सूर्य्यायास्त्रिचक्रेण सँसदमिच्छमानौ ॥ स्तौमि विश्वान्देवान्नाथितो जोहवीमि तौ नो मुञ्चतमागसः ॥ ५९ ॥ मरुतां मन्वे अधि नो ब्रुवन्तु प्रेमां वाचं विश्वामवन्तु विश्वे ॥ आसून्हवे सुयमानूतये ते नो मुञ्चन्त्वेनसः ॥ ६० ॥ तिग्मायुधव्रीडितँ सहस्वद्दिव्यः सर्व्वः पृतनासु विष्णुः ॥ स्तौमि देवान्मरुतो नाथितो जोहवीमि ते नो मुञ्चंत्वेनसः ॥ ६१ ॥ देवानां मन्वे अधि नो ब्रुवन्तु प्रेमां वाचं विश्वामवन्तु विश्वे ॥ आसून्हवे सुरामानूतये ते नो मुञ्चंत्वेनसः ॥ ६२ ॥ यदिदं माभिशोचति पौरुषेयेण दैव्येन स्तौमि ॥ विश्वान्देवान्नाथितो जोहवीमि ते नो मुञ्चंत्वेनसः ॥ ६३ ॥ अनुनोद्यानुमति र्यज्ञं देवेषु मन्यताम् ॥ अग्निश्च हव्यवाहनो भवतां दाशुषे मयः ॥ ६४ ॥ अन्विदनुमते त्वमन्यासैशं च नः कृधि ॥ क्रत्वे दक्षाय नो हिनु प्रण आयूंषि तारिषः॥६५॥वैश्वानरो न ऊतं ये प्रयातु परावतः ॥ अग्निर्नः सुष्टुतेतीरुप ॥ ॥ ६६ ॥ पृष्टो दिवि पृष्टो अग्निः पृथिव्या पृष्टो विश्वा ओषधीराविवेश ॥ वैश्वानरः सहसा पृष्टो अग्निः स नो दिवा सरिषः पातु नक्तम् ॥ ६७ ॥ ये अप्रथेता अमितेभिरोजोभिर्ये प्रतिष्ठे अभवतां वसूनाम् ॥ स्तौमि द्यावापृथिवी नाथितो जोहवीमि ते नो मुञ्चतमंहसः ॥ ६८ ॥ उर्वीरोदसी वरिवः

कृणोत्तं क्षेत्रस्य पत्नी अश्विनो ब्रूयात्तं स्तौमि ॥ द्यावापृथिवीं नाथितो जोहवीमि ते नो मुञ्चतमंहसः ॥ ६९ ॥ यत्ते वयं पुरुषत्रा यविष्ठा विद्वांसश्चकृमाकच्चनागः ॥ कृधास्वस्मानदितेरनागाव्येनाँसि शिश्रथो विष्वगग्ने॥ ७० ॥ यथाहताद्वसवो गौर्य्यैंचित्पदिषितामसुञ्चतायजत्राः ॥ एवोष्वस्मन्मुञ्चतामंहः प्रतार्य्यग्ने प्रतरं न आयुः ॥ ७१ ॥ यावामिन्द्रावरुणेति चतुर्भिः सूक्तकैस्ततः ॥ इन्द्रावरुणाभ्यामिति त्यागः सर्वत्र नान्यथा ॥ ७२ ॥ यावामित्रावरुणा यतव्या तनूस्तये ममाँहसो मुञ्चतम् ॥ ७३ ॥ यावामिन्द्रावरुणा सहस्या तनूस्तये ममाँहसो मुञ्चतम् ॥ ७४ ॥ यावामिन्द्रावरुणा रक्षस्या तनूस्तये ममाँहसो मुञ्चतम् ॥ ७५ ॥ यावामिन्द्रावरुणा तेजस्या तनूस्तये ममाँहसोमुञ्चतम् ॥ ७६ ॥ यो वामिन्द्रावरुणेति ततोष्टभिश्च होमयेत् ॥ इन्द्रावरुणाभ्यामिति त्यागः सर्व्वत्र नान्यथा ॥ ७७ ॥ यो वामिन्द्रावरुणावग्नौ स्नामस्तं वामेतेनावयजे ॥ ७८ ॥ यो वामिन्द्रावरुणाद्विपात्सु पशुषु स्नामस्तं वामेतेनावयजे ॥ ७९ ॥ यो वामिन्द्रावरुणौषधीषु स्नामस्तं वामेतेनावयजे ॥ ८० ॥ यो वामिन्द्रावरुणा वनस्पतिषु स्नामस्तं वामेतेनावयजे ॥ पावमानानुवाको यः ख्यातः सप्तदशर्चकः ॥ त्रिषष्टिवाक्यैस्तत्राद्या ऋक्त्रिवाक्यात्र शाक्तकैः ॥ ८१ ॥ पावमानीभ्यो मम त्यागो वाच्यस्त्वशाक्तकैः ॥ ८२ ॥ पावमान्यै अथो शैवैः पावमानाय नान्यथा ॥ ८३ ॥ पवमानः सो अद्य पवित्रेण विचर्षणिः ॥ यः पोता स पुनातु मा ॥ ८४ ॥ द्वितीयापि त्रिवाक्यादेव जनेभ्यो मरुद्भ्यश्च ॥ विश्वेभ्यश्च तथा युञ्ज्यान्न मम त्याग ईरितः ॥ ८५ ॥ पुनन्तु मां देवजनाः पुनन्तु मनसा धियः ॥ पुनन्तु विश्वा भूतानि जातवेदः पुनीहि माम् ॥ ॥ ८६ ॥ तृतीयापि चतुर्वाक्या अग्नये जातवेदसे ॥ इदं न मम इत्युक्त्वा त्यागः सोपि प्रकाश्यते ॥ ८७ ॥ जातवेदः पवित्रवत्पवित्रेण पुनीहि मा ॥ शुक्रेण देवदीव्यदग्ने क्रत्वाक्रतूँरनु ॥ ८८ ॥ चतुर्थी तु त्रिवाक्या अग्नये न ममेति च ॥ त्रिवाक्या पञ्चमी त्यागः सवित्रे च उभे यथा ॥ ८९ ॥

सूक्तकैः सूक्तप्रोक्तमन्त्रैः।

यत्ते पवित्रमर्चिष्यग्ने विततमन्तरा ॥ ब्रह्म तेन पुनीहि नः ॥ ९० ॥ उभाभ्यां देव सवितः पवित्रेण सवेन च ॥ मां पुनीहि विश्वतः ॥ ॥ ९१ ॥ ऋचा षष्ठीचतुर्वाक्या त्यागश्चास्या निरूप्यते ॥ वैश्वदेव्यै इति वदेन्न ममेति च सा यथा ॥ ९२ ॥ वैश्वदेवी पुनन्ती देव्यागाद्यस्यामि मा बह्व्यस्तन्वो वीतपृष्ठाः ॥ तया मदंतः सधमादेषु वयँस्याम पतयो रयीणाम् ॥ ९३ ॥ वैश्वानराय वाताय इषिराय मयोभुवे ॥ द्यावापृथिवीभ्यां चेति सप्तम्यां त्याग इष्यते ॥ ९४ ॥ वैश्वानरो रश्मिभिर्मा पुनातु वातः प्राणेनेषिरो मयोभूः ॥ द्यावापृथिवी पयसा पयोभिः शतावरी यज्ञिये मा पुनीताम् ॥ ९५ ॥ सप्तमी तु चतुर्वाक्या त्रिवाक्या चाष्टमी मता ॥ सवित्रेऽग्नये न मम त्यागोऽष्टम्यां च सायथा ॥ ९६ ॥ बृहद्भिः सवितुस्त्रिभिर्वर्षिष्ठैर्देवमन्मभिः ॥ अग्ने दक्षैः पुनीहि मा ॥ ९७ ॥अतः परं चतुर्वाक्या दिव्याय ब्रह्मणे त्यजेत् ॥ नवम्यां पावमानीभ्यो दशम्यादिषु ता यथा ॥ ॥ ९८ ॥ येन देवा अपुनन्त येनापो दिव्यंकशः ॥ तेन दिव्यं ब्रह्मणा इदं ब्रह्म पुनीहि मा ॥ ९९ ॥ यः पावमानीरध्येत्यृषिभिः सम्भृतꣳरसम् ॥ सर्वं सपूतमश्नाति स्वदितं मातरिश्वना ॥ १०० ॥ पावमानीर्यो अध्येत्यृषिभिः सम्भृतं रसम् ॥ तस्मै सरस्वती दुहे क्षीरं सर्पिर्मधूदकम् ॥ १०१ ॥ पावमानीः स्वस्त्ययनीः सुदुघा हि पयस्वतीः ॥ ऋषिभिः सम्भृतो रसो ब्राह्मणेष्वमृतꣳहितम् ॥ १०२ ॥ पावमानीर्दिशन्तु न इमं लोकमथो अमुम् ॥ कामान्समर्द्धयन्तु नो देवैर्देवीः समाहिताः ॥ १०३ ॥ पावमानीः स्वस्त्ययनीः सुदुघा हि घृतश्चुतः ॥ ऋषिभिः सम्भृतो रसो ब्राह्मणेष्वमृतं हितम् ॥ १०४ ॥ येन देवाः पवित्रेण आत्मानं पुनते सदा ॥ तेन सहस्रधारेण पावमान्यः पुनन्तु माम् ॥ १०५ ॥ प्राग्वत्त्यागस्तु षोडश्यां विशेषः श्रोत्रियस्य तु ॥ प्राजापत्याय पवित्राय चेति षोडशीं शृणु ॥१०६॥ प्राजापत्यं पवित्रं शतोद्यामं हिरण्मयम् ॥ तेन ब्रह्मविदो वयं पूतं ब्रह्म पुनीमहे ॥ १०७ ॥ सुनीत्या सहितेन्द्राय स्वस्त्या सहितसोमाय ॥ समीच्या सहिता येति वरुणाय ततो वदेत् ॥ १०८ ॥ प्रमृणाभिः सहिताय यमाय राज्ञ ईर-

येत ॥ ऊर्ज्जयन्त्या सहिताय जातवेदस इत्यपि ॥१०९॥ न ममेति वदेत्स-
प्तदश्यास्त्यागेथ यैर्नरैः ॥ मार्जनं कृतमेताभिस्तैः स्नातं जाह्नवीजले॥११०॥
इन्द्रः सुनीत्या सह मा पुनातु सोमः स्वस्त्या वरुणः समीच्या ॥ यमो राजा
प्रमृणाभिः पुनातु मा जातवेदा मोर्ज्जयन्त्या पुनातु ॥१११॥ यद्देवा देवहेडनं
विंशत्यर्चेन होमयेत् ॥ त्यागः प्रथमके तत्र आदित्येभ्यश्च नान्यथा ॥ यद्देवा
देवहेडनं देवासश्चकृमा वयम् ॥ आदित्यास्तस्मान्मा मुञ्चततँस्यर्तेन मामुतः
॥ ११२ ॥ अग्नये गार्हपत्याय न ममेति द्वितीयके ॥ द्यावापृथिवीभ्यां सर-
स्वत्यै चेति यथा ऋचि ॥ ११३ ॥ देवा जीवनकाम्या यद्वाचानृतमूदिम ॥
अग्निर्मा तस्मादेनसो गार्हपत्यः प्रमुञ्चतु दुरिता यानि चकृम करोतु मामनेहसम्
॥ ११४ ॥ ऋतेन द्यावापृथिवी ऋतेन त्वꣳसरस्वति ॥ कृतान्नः पाह्येनसो
यत्किञ्चानृतमूदिम ॥ ११५ ॥ जातवेदसे न मम चतुर्थे त्वथ पञ्चमे ॥ अग्नये
गार्हपत्याय त्यागस्तद्वत्कृतो यथा ॥ ११६ ॥ सजातशꣳसादुतजामिशꣳसा
ज्याय सःशꣳसादुत वा कनीयसः॥अनाज्ञातं देवकृतं यदेनस्तस्मात्त्वमस्माञ्जात
वेदोमुमुग्धि॥११७॥ यद्वाचा यन्मनसा यद्बाहुभ्यामूरुभ्यामष्ठीवद्भ्याꣳशिश्नैर्य
दनृतञ्चकृम वयम् ॥ अग्निर्मा तस्मादेनसोगार्हपत्यः प्रमुञ्चतु दुरिता यानि चकृम
करोतु मामनेनसम् ॥ ११८ ॥ राष्ट्रभृतेभरसेभ्यः षष्ठे त्यागोष्टसप्तमे ॥ अग्नये
गार्हपत्याय नवमे चाग्नये वदेत् ॥ ११९ ॥ यद्धस्ताभ्यां चकर किल्बिषाण्य
क्षाणां वग्नुमुपजिघ्नमानः ॥ दूरेपश्या च राष्ट्रभृच्च तान्यभरसावनुदत्तामृणानि॥
॥१२०॥ अदीव्यन्नृणं यदहं चकार यद्वा दास्यन्सञ्जगाराजनेभ्यः॥अग्निर्मा-
तस्मादेनसो गार्हपत्यः प्रमुञ्चतु दुरितायानिचकृम करोतु माननेहसम् ॥१२१॥
यन्मयि माता गर्भे सत्येनश्चकार यत्पिता ॥ अग्निर्मा तस्मादेनसो गार्हपत्यः
प्रमुञ्चतु दुरिता यानि चकृम करोतु मामनेनसम् ॥१२२॥ यदापिपेष मातरं
पितरं पुत्रः प्रमुदितो धयन् ॥ अहिंसितौ पितरौ मया तत्तदग्ने अनृणो भवामि
॥ १२३ ॥ अग्नये गार्हपत्याय दशमैकादशे वदेत् ॥ द्वादशे त्वग्नयेथाग्नेग्नये

---

१ तृतीयर्चि द्यावापृथिवीभ्यां सरस्वत्यै न मम वाक्यमुच्चरेत् ॥

गार्हपत्याय च ॥ १२४ ॥ यदन्तरिक्षं पृथिवीमुत द्यां यन्मातरं पितरं वाजिहिं-सिम् ॥ अग्निर्मा तस्मादेनसो गार्हपत्यः प्रमुञ्चतु दुरिता यानि चकृम करोतु माम नेनसम् ॥ १२५ ॥ यदाशसा निशसः यत्पराशसा यदेनश्चकृमा नूतनं यत्पु राणम् ॥ अग्निर्मातस्मादेनसो गार्हपत्यः प्रमुञ्चतु दुरिता यानि चकृम करोतु माम नेनसम् ॥ १२६ ॥ अतिक्रामामि दुरितं यदेनो जहामि रिप्रं परमे सधस्थे ॥ यत्र यन्ति सुकृतो नापि दुष्कृतस्तमारोहामि सुकृतान्नु लोकन्निते ॥ १२७ ॥ देवा अमृजतैतदेनस्त्रित एतन्मनुष्येषु मामृजे ॥ ततो मा यदि किञ्चिदानशे-ग्निर्मा तस्मादेनसो गार्हपत्यः प्रमुञ्चतु दुरिता यानि चकृम करोतु माम-नेनसम् ॥ १२८ ॥ चतुर्दशे तिथौ[1] त्वद्वयो वरुणाय ततो द्वयोः ॥ अष्टा-दशे चोनविंशे त्वग्नीवरुणाभ्यामिति ॥ १२९ ॥ दिवि जाता अप्सु जाता या जाता ओषधीभ्यः ॥ अथो या अग्निजा आपस्ता नः शुधन्तु शुन्धनीः ॥ ॥ १३० ॥ यदापोनक्तंदुरितं चराम यद्वा दिवा नूतनं यत्पुराणम् ॥ हिरण्य-वर्णास्तत उत्पुनीत नः ॥ १३१ ॥ इमम्मे वरुण श्रुधीहवमद्याचमृळय ॥ त्वाम-वस्युराचके ॥ १३२ ॥ तत्त्वायामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदाशास्ते यजमानो हविर्भिः ॥ अहेडमानो वरुणेहबोध्युरुशँसमा न आयुः प्रमोषीः ॥ १३३ ॥ त्वन्नो अग्ने वरुणस्य विद्वान्देवस्य हेडो अवयासिसीष्ठाः ॥ यजिष्ठो वह्नितमः शोशुचानो विश्वा द्वेषाँसि प्रमुमुग्ध्यस्मत् ॥ १३४ ॥ स त्वन्नो अग्नेवमो भवोतीनेंदिष्ठो अस्या उषसो व्युष्टौ ॥ अवयक्ष्व नो वरुणँ रराणो वीहि-मृडीकँसुहवो न एधि ॥ १३५ ॥ अग्नये चाथ विंशे तु सूक्तं वैश्वानरं ततः ॥ अग्नये वैश्वानरायाष्टर्चान्त्यागोयमीरितः ॥ १३६ ॥ त्वमग्ने अया स्ययासन्मनसा हितः ॥ अयासन्हव्यमूहिषे या नो धेहि भेषजम् ॥ १३७ ॥ वैश्वानरो न ऊतयेवयातुपरावतः ॥ अग्निर्नः सुष्टुतीरुप ॥ १३८ ॥ ऋता-वानं वैश्वानरमृतस्य ज्योतिषस्पतिम् ॥ अजस्रं धर्ममीमहे ॥ १३९ ॥ वैश्वानरस्यदँसनाभ्यो बृहदरिणादेकः स्वपश्यया कविः ॥ उभा पितरा

---

१ तिथौ पञ्चदशे अर्थात् चतुर्दशे पञ्चदशे ( अद्वयश्चेदं न वै मम ) इदं वाक्यमस्ति ।

महयन्नजायताग्निर्द्यावापृथिवी भूरिरेतसा ॥ १४० ॥ पृष्टो दिवि पृष्टो अग्निः पृथिव्यां पृष्टो विश्वा ओषधीराविवेश ॥ वैश्वानरः सहसा पृष्टो अग्निः समो नो दिवासरिपः पातु नक्तम् ॥ १४१ ॥ जातो यदग्ने भुवना व्यख्यः पशुं न गोपाइर्यः परिज्या ॥ वैश्वानर ब्रह्मणे विन्दगातुं यूयं यात स्वस्तिभिः सदा नः ॥ १४२ ॥ त्वमग्ने शोचिषा शोशुचान आरोदसी अपृणा जायमानः ॥ त्वं देवानभिशस्तेरमुचो वैश्वानर जातवेदो महित्वा ॥ १४३ ॥ अस्माकमग्ने मघवत्सुधारयानामिक्षत्रमजर७ंसुवीर्यम् ॥ वयञ्जयेम शतिन७ं सहस्रिणं वैश्वानरवाजमग्ने तवोतिभिः ॥ १४४ ॥ वैश्वानरस्य सुमनौस्यामनौस्यामराजाहिकंभुवनानामभिः श्रीः ॥ इतो जातो विश्वमिदं विचष्टे वैश्वानरो यतते सूर्याय ॥ १४५ ॥ ततः स्विष्टकृतं कृत्वा परिधीन्पर्य्यगृह्य च ॥ पूर्णं कलशमादाय नैर्ऋत्यान्तु चतुष्पथे ॥ १४६ ॥ पादप्रक्षालनं कृत्वाथाचम्य प्राङ्मुखस्तथा ॥ पत्नीभिः सह वीक्षेतच्छायां तस्मिञ्च्छुभाशुभाम् ॥ ॥ १४७ ॥ सिंहे मे मन्युरस्यां प्रेमेनुवाकं जपेत्ततः ॥ सुमित्रिया न आप ओषधयः सन्त्विति क्षिपेत् ॥ १४८ ॥ भूम्यां किञ्चिज्जलं पश्चादुत्तिष्ठेत्कलशान्वितः ॥ दुर्मित्रियास्तस्मै[१] सन्तु पृष्ठतः कलशं क्षिपेत् ॥ १४९ ॥ यस्यामस्य दिशि द्वेष्यो भवेत्तत्रैव निःक्षिपेत् ॥ पश्चादप उपस्पृश्य स्वगृहं प्रविशेत्ततः ॥ १५० ॥ त्रिसन्ध्यमेवं सप्ताहं कुर्य्याद्रूपं निरीक्षयेत् ॥ यदा पश्येत्तोयमध्ये छायामच्छान्तदा भवेत् ॥ १५१ ॥ यजमानः सुपूतोयमन्यथा पुनराचरेत् ॥ तत आशीर्वचोगृह्याद्ब्राह्मणान्भोजयेत्ततः ॥ १५२ ॥ यावत्कर्म्म प्रकुर्वीत तावन्मौनं समाचरेत् ॥ सकृदेव समश्नीयाद्धविष्यं ब्रह्मचर्य्यभाक् ॥ १५३ ॥ जितेन्द्रियो भूमिशायी पूर्वजन्मार्जितादघात् ॥ मन्त्रसिद्धेर्विघ्नकर्तुर्मुक्तो भवति नान्यथा ॥ १५४ ॥ अज्ञानाच्च प्रमादाद्वा जन्मन्यस्मिंश्च यत्कृतम् ॥ पातकं तस्य नाशार्थं कूष्माण्डीभिस्तु होमयेत ॥ १५५ ॥ वैदिके यस्य निस्नाताः पितरोज्ञानदोषतः ॥ पतित्वा कौलिके मार्गे दारिद्र्यादिभिरर्दितः ॥ १५६ ॥ मनसा उपतप्तश्चेन्नित्यं सर्वसुखाप्तये ॥

---

१ दुर्मित्रियास्तस्मै सन्तु योस्मान्द्वेष्टि यञ्च वयं द्विष्मः ।

लोकद्वयप्रतिष्ठार्थं सोपि गुप्तं समाचरेत् ॥ १५७ ॥ स्वर्णचौर्य्ये सुरापाने गोवधे ब्रह्मघातने ॥ गुरुतल्पगमे वर्षं व्रतमेतत्समाचरेत् ॥ १५८ ॥ चौर्य्ये च भ्रूणहत्यायामयोनौ वीर्य्यसेचने ॥ विश्वासघातने न्यासहरणे त्वयुतं चरेत् ॥१५९॥ इष्टाप्तौ ग्रहे घोरे ग्रहणे चन्द्रसूर्य्ययोः ॥ जले शिवालये दानं गृहीत्वायुतमेककम् ॥१६०॥ कूटसाक्ष्ये वार्द्धुषिके वृत्तिहारे करग्रहे ॥ देवविप्राधिकारे चापदन्ते लक्षमाचरेत् ॥ १६१ ॥ संस्कारभोजने वेश्यागमने पशुघातने ॥ देवाद्यर्थाशने लक्षं त्रिसन्ध्यालोपने त्वहः ॥ १६२ ॥ केशश्मश्रून्वापयित्वा स्नात्वा पुण्ये जलाशये ॥ आज्यभागानन्तरं च कूष्माण्डीभिस्तु होमयेत् ॥ १६३ ॥ सावित्रीं च जपेन्नित्यं पवित्राणि च शक्तितः ॥ ब्राह्मणो दुग्धपायी स्यात्क्षत्रियस्तु यवागुलेट् ॥ १६४ ॥ आमिक्षां भक्षयेद्वैश्यो यदा शक्तो भवेत्तदा ॥ ओदनं सक्तवो धाना घृतं वापि समाश्रयेत् ॥ ॥ १६५ ॥ एतद्भिन्नं न भोक्तव्यं ब्रह्मचर्य्यादिपूर्ववत् ॥ होमस्तु गोघृतेनैव तदभावे तु माहिषम् ॥ १६६ ॥ प्रथमा मन्त्रिका तत्र यद्देवा देवहेडनम् ॥ देवेभ्य आदित्येभ्यश्च त्यागस्तत्र समीरितः ॥ १६७ ॥ विश्वेभ्यो देवेभ्य इति द्वितीयायाश्च सोच्यते ॥ प्राग्वत्त्यागस्तृतीयाया ऋग्भिन्ना सा च कथ्यते ॥ १६८ ॥ यद्देवा देवहेडनं देवासश्चकृमा वयम् ॥ आदित्यास्तस्मान्मा मुञ्चतर्तस्यर्त्तेन मामुतः ॥ १६९ ॥ देवा जीवनकाम्या यद्वाचानृतमूदिम ॥ तस्मान्न इह मुञ्चत विश्वेदेवाः सजोषसः ॥ १७० ॥ ऋतेन द्यावापृथिवी ऋतेन त्वꣳसरस्वति ॥ कृतान्नः पाह्येनसो यत्किञ्चानृतमूदिम ॥ १७१ ॥

---

१ गर्भमारणायाम् । २ निःक्षेपे । ३ मिथ्यासाक्ष्ये । ४ कुसीदे । ५ देवार्थसंचितद्रव्यभक्षणे । ६ सव्याहृतिर्वा तत्सवितुरिति गायत्रीं । पुनन्तु मां देवजनाः पुनन्तु मनसाधियः ॥ पुनन्तु विश्वा भूतानि जातवेदः पुनीहि माम् ॥ इत्यादिपवित्रमन्त्राः । ७ यवागूः षड्गुणे तोये संसिद्धाघनसिक्थका । पृथग्द्रवैस्तु विरलैः संयुक्ता ज्वरिणे हिता ॥८ तप्तक्षीरे दधिप्रक्षेपेण आमिक्षा भवति ॥ ९ प्रथमं यद्देवा इति मन्त्रेण जुहुयात् । ततः परम् । देवेभ्य आदितेभ्य इति पठेत् पुनरन्यैव रीत्या अग्रे पठितमन्त्रेषु देवानां नाम्ना वचनं योजनीयम् ॥ १० द्वितीयमन्त्रे विश्वेभ्यो देवेभ्यः इति ॥ ११ तृतीये द्यावापृथिवीभ्यां सरस्वत्यै च इदं न वै ममेति वाक्यस्य सर्वत्र योजना ॥

इन्द्राग्निमित्रावरुणसोमधातृबृहस्पतिभ्यस्त्यागस्तु ॥ चतुर्थी या अधुना सा ऋगुच्यते ॥ ॥ १७२ ॥ इन्द्राग्नी मित्रावरुणौ सोमो धाता बृहस्पतिः ॥ तेनो मुञ्चन्त्वेनसो यत्किञ्चानृतमूदिम ॥ १७३ ॥ सजातसॐसादिति पूर्वोक्ता पञ्चमी मता ॥ यद्वाचा यन्मनसा षष्ठी पूर्वमुदीरिता ॥ १७४ ॥ ज्योतिषे न मम त्यागः सप्तम्यां सा च कथ्यते ॥ अग्नये न मम त्यागस्तथाष्टम्याथ सोच्यते ॥ १७५ ॥ येन त्रितो अर्णवाभिर्बभूव येन सूर्यं तमसन्निर्मुमोच ॥ येनेन्द्रो विश्वा अजहादरातींस्तेनाहं ज्योतिषां ज्योतिरानशा न आक्षि ॥ १७६ ॥ यत्कुसीदमप्रतीतं मयेह येन यमस्य निधिना चरामि ॥ एतत्तदग्ने अनृणो भवामि जीवन्नेव प्रति तत्ते दधामि ॥ १७७ ॥ यन्मयि मातेति पूर्वोक्ता प्राग्वत्सा नवमाहुतिः ॥ यदापियेष मातरं प्राक्प्रोक्ता दशमाहुतिः ॥ १७८ ॥ यदन्तरिक्षं पृथिवी प्राक्प्रोक्तैकादशाहुतिः ॥ यदाशसानिशसाप्राक्प्रोक्तात्र द्वादशाहुतिः ॥ १७९ ॥ तदग्ने तु ऋचस्तिस्र एवं पञ्चदशाहुतीः ॥ यदापो नक्तमिति पूर्वोक्ताषोडशी भवेत् ॥ १८० ॥ अद्भ्यो हिरण्यवर्णाभ्यस्तस्यां त्यागो भिधीयते ॥ इमम्मे वरुणेत्यादि पञ्चर्चः पूर्वमीरिताः ॥ १८१ ॥ सत्यागास्तेनैकविंशदाहुतयःसमीरिताः॥इन्द्राग्निभ्यां च द्वाविंशे त्यागः सा ऋगथोच्यते ॥ १८२ ॥ उग्रंपश्ये राष्ट्रभृत्किल्बिषाणि यदक्षवृत्तमनुदत्तमेतत् ॥ तेन ऋणानृणव इत्समानो यमस्य लोके अधिरज्जुराय ॥ १८३ ॥ अदीव्यं नृणं यदहमित्याद्याः षट् च पूर्ववत् ॥ ततो द्वयोरिह त्यागो वरुणाय न वै मम ॥ १८४ ॥ अवते हेलो वरुण नमो भिस्वयज्ञेभिरीमहे हविर्भिः ॥ क्षयं नस्मभ्यमसुरप्रचेतो राजन्नेताँ सिशिश्रथःकृतानि ॥ १८५ ॥ उदुत्तमं वरुणपाशमस्मद बाधमं विमध्यमं श्रथाय ॥ अथावयमादित्यव्रते तवानागसो अदितये स्याम ॥ ॥ १८६ ॥ एकत्रिंशे शंकुशुकौ विकुशुकौ च निर्ऋथेः निःस्वनेभ्यस्त्याग

१ सजातसँसादत जामिशँसा ज्यायसः शँसादत वा कनीयसः ॥ आनाअनाज्ञातं देवकृतं यदेनस्तस्मात्वमस्माज्जातवेदो मुग्धि जातवेदसे चेदं न वै मम ।

उक्तः सा ऋचा प्रोच्यते धुना॥ शंकुशुको विकुशुको निर्ऋथो यश्च निःस्वनः ते येस्मयक्ष्मनागसो दूराद्दूरमचीचतम् ॥ १८७ ॥ ततो द्वयोरग्नये च त्वष्ट्रे त्यागस्तदग्निमे ॥ आयुष्मतेऽग्नये त्यागः पञ्चत्रिंशत्तमे मतः॥ १८८॥ निर्यक्ष्म मचीच ते कृत्या निर्ऋतिश्च ॥ तेन योस्मतसमृच्छाते तस्मै प्रसुवामसि ॥ १८९ ॥ दुःशꣳ सानुशꣳ साभ्यां घणेनानुघणेन च ॥ तेनात्योरस्मत्समृच्छाते तस्मै सुप्रसवामसि ॥ १९० ॥ संवर्चसा यशसा सन्तनूभिरगन्महि मनसा शꣳशिवेन ॥ त्वष्टा नो अत्र विदधातु रायो नु मार्ष्टतन्वो यद्विलिष्टम् ॥ १९१ ॥ आयुष्टे विश्वतो दधदयमग्निर्वरेण्यः ॥ पुनस्ते प्राण आयाति परा यक्ष्मꣳ सुवामि ते ॥ १९२ ॥ आयुर्दायाग्नये त्यागः षट्त्रिंशेथ तदग्निमे ॥ १९३ ॥ अग्नये वरुणायादित्यै विश्वेभ्यो देवेभ्यश्च ॥ १९४ ॥ आयुर्दा अग्नये हविषो जुषाणो घृतप्रतीको घृतयोनिरेधि ॥ घृतं पीत्वा मधु चारुगव्यं पितेव पुत्रमभिरक्षतादिमम् ॥ १९५ ॥ इममग्न आयुषे वर्चसे कृधि तिग्ममोजो वरुण सꣳ शि शाधि ॥ माते मातेवास्मा आदिते शर्म्म यच्छ विश्वे देवा जरदष्टिर्यथासत ॥ १९६ ॥ अग्नये पवमानाय त्यागोष्टत्रिंशतत्त्विषु ॥ ततो द्वयोर्जातवेदसेग्नये त्याग उच्यते ॥ १९७ ॥ अग्न आयूꣳषि पवस आसुवोर्ज्जमिषं च नः ॥ आरे बाधस्वदुच्छनाम् ॥ १९८ ॥ अग्ने पवस्व स्वपा अस्मै वर्चः सुवीर्य्यं ॥ दधत्योषꣳ रयिं मयि ॥ १९९ ॥ अग्न ऋषिः पवमानः पाञ्चजन्यः पुरोहितः ॥ तमीमहे महागयम् ॥ २०० ॥ अग्ने जातान् प्रणुदानः सपत्नान्प्रत्यजाताञ्जातवेदो नुदस्व ॥ अस्मेदीदिह सुमना अहेडं शर्मंतेस्यामत्रिवरूथ उद्भौ ॥ २०१ ॥ सुवीर्य्यंसहसा जातान्प्रणुदानः सपत्नान्प्रत्यजाताञ्जातवेदो नुदस्व ॥ अधिनो ब्रूहि सुमनस्यामानो वयꣳ स्याम प्रणुदानः सपत्नान् ॥ २०२ ॥ अग्नये वृत्रघ्नायेति त्रिचत्वारिंशके पुनः ॥ अग्नये इति तस्मात्तु उषसे निमुचे भवेत् ॥ २०३ ॥ अग्नेयो नोभितो जनो वृको वारा जिघाꣳसति ॥ तां त्वं वृत्रहञ्जहि वस्वस्मभ्यमाभर ॥ २०४ ॥ अग्ने यो नो भिदा समानो यश्च निष्टयः॥तं वयं समिधं कृत्वा तुभ्यमग्ने प्दिध्मसि ॥

॥२०५॥ यो नः शपादशपतो यश्च न शपतः शपात्॥ उषाश्च तस्मै निम्रुक् च सर्वंपापꣳसमूहताम् ॥ २०६ ॥ षद् चत्वारिंशके त्यागो देवेभ्यश्च तदग्निमे ॥ जातवेदसेऽग्नये च ततस्त्यागोऽग्नये भवेत् ॥२०७॥ यो नः सपत्नो यो रणोमर्तोभिदासति देवाः ॥ इध्मस्येव प्रक्षायतो मातस्योच्छेषि किञ्चन ॥ ॥ २०८ ॥ यो मां द्वेष्टि जातवेदो यं चाहं द्वेष्मि यश्च माम् ॥ सर्वाꣳस्तानग्ने सन्दह याꣳश्चाहं द्वेष्मि ये च माम् ॥ २०९ ॥ यो अस्मभ्यमरातीयाद्यश्च नो द्वेषते जनः॥ निन्दाद्यो अस्मान्दिप्साच्च सर्वाꣳस्तान्मष्मषाकुरु ॥ २१० ॥ श्रोत्रियाय ब्राह्मणे चाग्नये पञ्चाशके मतः ॥ तदग्निमेपि च तथान्तिमे वैश्वानराय च ॥ २११ ॥ सꣳशितं मे ब्रह्म सꣳशितं वीर्य्यंबलम् ॥ सꣳशितं क्षत्रं मे जिष्णु यस्याहमस्मि पुरोहितः ॥ २१२ ॥ उदेषां बाहू अतिरमुद्वर्चो अथो बलम् ॥ क्षिणोमि ब्रह्मणामित्रानुन्नयामि स्वां अहम् ॥ २१३ ॥ पुनर्मनः पुनरायुर्म अगात्पुनश्चक्षुः पुनःश्रोत्रं म अगात्पुनः ॥ प्राणः पुनराकूतं म आगात्पुनश्चित्तं पुनराधीतं म अगात् ॥ २१४ ॥ वैश्वानरो मे दब्धस्तनूपा अवबाधतां दुरितानि विश्वा ॥ २१५ ॥ एवं हुत्वा ततस्तिष्ठेत्समित्पाणिरुदङ्मुखः॥ अग्नेर्दक्षिणतो वह्निं स्तुवीत द्वादशर्चभिः ॥ २१६॥ वैश्वानराय प्रतिवेदयामो यदीनृणꣳसङ्गरो देवतासु ॥ स एतान्पाशान्प्रमुञ्चन्वेद स नो मुञ्चतु दुरितादवद्यात् ॥ २१७ ॥ वैश्वानरः पवयान्नः पवित्रैर्यत्सङ्गरमभिधावाम्याशाम् ॥ अनाजानन्मनसा याचमानो यदत्रैनो अव तत्सुवामि ॥२१८॥ अमी ये सुभगे दिवि वृत्तौ नाम तारकी प्रेहामृतस्य यच्छतामेतद्बद्धकमोचनम् ॥ ॥ २१९ ॥ विजिहीर्ष्व लोकान्कृधि बन्धान्मुञ्चासिबद्धकम् ॥ योनेरिव प्रच्युतो गर्भः सर्वान्पथो अनुष्व ॥ २२० ॥ स प्रजानन्प्रतिगृणीत विद्वान्प्रजापतिः प्रथमजा ऋतस्य ॥ अस्माभिर्दत्तं जरसः परस्तादच्छिन्नं तन्तुमनुसञ्चरेत् ॥ २२१ ॥ न तं तन्तुमन्वेके अनुसञ्चरन्ति येषां दत्तं पित्र्यमायनवत् ॥ अबन्ध्वेके ददतः प्रयच्छद्दातुं चेच्छक्नुवाꣳसस्वर्ग एषाम् ॥ २२२ ॥ आरभेथामनुसꣳरभेथाꣳसमानं पन्थामवथो घृतेन ॥ यद्वां पूर्तं परिविष्टं

यदग्नौ तस्मै गोत्रा येह जायापरीक्षꣳरभेथाः ॥ २२३ ॥ यदन्तरिक्षं पृथिवीमुत द्यां यन्मातरं पितरं वाव जिहिꣳसिम ॥ अग्निर्मा तस्मादेनसो गार्हपत्यः प्रमुञ्चतु दुरिता यानि चकृम करोतु मामनेहसम् ॥ २२४ ॥ भूमिर्मातादितिर्नो जनित्रं भ्रातान्तरिक्षमभिशस्तरा नः ॥ द्यौर्नः पिता पितृयाच्छम्भवासि जामिति त्वा मा विवित्सि लोकात् ॥ २२५ ॥ यत्र सुहार्दः सुकृतो मदन्ते विहाय रोगं तन्वा स्वया ॥ अश्लोणाङ्गैरह्रुताः स्वर्गे तत्र पश्येम पितरं च पुत्रम् ॥ २२६ ॥ यदन्नमद्म्यनृते देवा दास्यन्नदास्यन्नुत वा करिष्यन् ॥ यद्देवानां चक्षुष्यागो अस्ति यदेव किञ्च प्रतिजग्राहमग्निर्मा तस्मादनृणं कृणोतु ॥ २२७ ॥ यदन्नमपि बहुधा विरूपवासो हिरण्यमुत गामजामवियद्देवानां चक्षुष्यागो अस्ति यदेव किञ्च प्रतिजग्राहमग्निर्मा तस्मादनृणं कृणोतु ॥ २२८ ॥ एवमग्निमुपस्थाय करस्थां समिधं हुनेत् ॥ वक्ष्यमाणेन मन्त्रेण त्यागो वैश्वानराय च ॥ २२९ ॥ यन्मयः मनसा वाचा कृतमेनः कदाचन ॥ सर्वस्मात्तस्मान्मेलितो मोग्धि त्वꣳहि वेत्थ यथातथꣳस्वाहा ॥ २३० ॥ जपादिहोमं च ततः कुर्य्यादेतन्निरूपितम् ॥ इह जन्मकृताघानां प्रायश्चित्तं निवारणम् ॥ २३१ ॥ इदमुक्तं द्विजातीनां शूद्राणामथ चोच्यते ॥ मार्गशीर्षे सिताष्टम्यां कृतनित्यक्रियः शुचिः ॥ २३२ ॥ एकभक्तं हविष्येण नवम्यामेवमाचरेत् ॥ अयाचितं दशम्यां च एकादश्यामुपोषणम् ॥ २३३ ॥ द्वादश्यां वपनं कृत्वा पूजयेद्विप्रदेवताः ॥ नमो नारायणायेति स्वेष्टबीजादिकं मनुम् ॥ २३४ ॥ अष्टाक्षरं गुरुमुखाद्गृहीत्वा जपमाचरेत् ॥ अष्टलक्षं द्विजोच्छिष्टभोजी तत्सेवने रतः ॥ २३५ ॥ आमध्याह्नं जपं कुर्य्याद्भूशायी ब्रह्मचर्य्यकृत ॥ निष्पापो जायते पूर्णे जपे नो चेत्पुनश्चरेत् ॥ २३६ ॥ निष्पापचिह्नं वक्ष्येत्र तथा पूर्वोक्तहोमयोः ॥ होमाद्यारम्भदिवसे मृन्मयं निर्व्रणं दृढम् ॥ २३७ ॥ आनयेच्छुद्धकलशं स्थापयेन्निर्मले स्थले ॥ तास्मिंस्तीर्थादिजं तोयं निःक्षिपेत्कलशोन्मितम् ॥ २३८ ॥ शृङ्गलद्वीपगोमूत्रं काचपात्रे निधापयेत् ॥ पलमात्रं द्वयोश्चैव कुर्य्याद्धरिहरार्चनम् ॥ २३९ ॥ परीक्षादिवसे पूजां कृत्वा तत्प्रार्थयेज्जलम् ॥ आपो

नारायणः साक्षादप्सु सर्वं प्रतिष्ठितम् ॥ २४० ॥ तेन सत्येन मत्पापं ज्ञानं सत्यं ममास्तु ते ॥ इति तोयं संप्रार्थ्य दद्यात्पुष्पाञ्जलिं ततः॥ २४१ ॥ पश्येत्स्वस्य शरीरस्यच्छायां तोये तथा रसे ॥ यथा रसे तथा तोये दृष्टा चेत्पातकं गतम् ॥ २४२ ॥ म्लाना तोये यदाच्छाया तदा पापं गतं न हि ॥ प्रायश्चित्तं ततः कुर्य्याद्यदिच्छायातिनिर्मला ॥ २४३ ॥ नष्टपापो भवेदेवं पुरश्चरणसिद्धिभाक् ॥ यः कश्चिद्वैदिको मन्त्रो जपश्चेदर्बुदाक्षरम् ॥ ॥ २४४ ॥ एकजन्मकृतं पापं नाशयेन्नाममन्त्रकः ॥ विष्णोर्मम गणेशस्य रवेस्तव तदर्धकम् ॥२४५॥ हन्ति पापं तान्त्रिकस्तु तदर्धं प्राकृतो दलम् ॥ अपदंशस्तदर्धं चेत्येतत्सर्वत्र गोपितम् ॥ २४६ ॥ जपस्थानानि वक्ष्यामि कृत्रिमाकृत्रिमाणि च ॥ गुप्तानि सर्वतन्त्रेषु देवतानां पृथक्पृथक् ॥ ॥२४७॥महागणपतिक्षेत्रं मापुरं नर्मदा तटे ॥ महाश्मशानं मापूरं गणेशमनुसिद्धिदम् ॥ २४८ ॥ प्रभासं च कुरुक्षेत्रं पुष्करं भृगुपर्वतम् ॥ यमुनायास्तटं काश्यां दिनेशमनुसिद्धिदम् ॥ २४९ ॥ अयोध्या मथुरा माया काशी बदरिकाश्रमः ॥ गया च गण्डकीतीरं द्वारका विष्णुसिद्धिदा ॥ ॥ २५० ॥ केदारस्त्र्यम्बकं काशी काञ्च्यवन्त्यौ वनानि च ॥ गङ्गातीरं वैद्यनाथं रामेशः शिवसिद्धिकृत् ॥ २५१ ॥ ज्वालामुखी प्रयागश्च कामिनी मालिकापदम् ॥ सरस्वत्यास्तथातीरं शाक्तमन्त्रस्य सिद्धिकृत् ॥ ॥ २५२ ॥ तीरञ्च कमलेश्वर्य्यामेकलो यक्षपर्वतः ॥ अङ्गवङ्गकालिङ्गाश्च क्षुद्रदैवतसिद्धिदाः ॥ २५३ ॥ कामरूपञ्च तत्स्थानं हिंगुला विन्ध्यवासिनी ॥ जालन्धरं पूर्णगिरिर्वाममार्गस्य सिद्धिदाः ॥ २५४ ॥ तीरं पद्माकराणां च कदलीक्ष्वर्कवाटिकाः ॥ विद्रुमाकुलितो देशो गणेशस्यातिवल्लभः ॥ २५५ ॥ पद्माकरं तदारण्यं करवीरार्कवाटिकाः॥गोधूमदूर्वाक्षेत्राणि शिला भानुमतः प्रिया ॥२५६॥ तुलस्यश्वत्थधात्रीक्षुशालग्रामादिसन्निधौ॥ गोष्ठे श्रोत्रिययुग्ग्रामे हरेर्मुद्वैदिकान्तिके ॥ २५७ ॥ पश्चिमाभिमुखे लिङ्गे नन्दिवर्ज्जे शिवालये ॥ शिवतीरे वटस्यारात्सङ्गमे विपिने ह्रदे ॥ २५८ ॥ कदलीचूतसुमने सेवन्तीचर्च्चरीवने ॥ ग्रन्थाख्यातनदीतीरे शक्तेः प्रीतिश्च

निर्जने ॥ २५९ ॥ पल्वेलाग्रे निम्बकोलशाखोटमधुकाकुले ॥ वल्मीके शुष्कनद्यां च मोदन्ते क्षुद्रदेवताः ॥२६०॥ पितृगृहे श्मशाने च त्रिपथे च चतुष्पथे ॥ शून्यालये शवाकीर्णे स्थाने तुष्यन्ति वामकाः ॥ २६१ ॥ गृहे गोष्ठे तथोद्याने तथा पर्वतमस्तके ॥ नद्यां तत्सङ्गमे देवालये स्याद्वै-दिकोधिकः ॥ २६२ ॥ यस्मिन्देशे न गोहत्या नापि ब्रह्मवधो भवेत् ॥ न श्रावयन्ति शूद्राश्च सिद्धिस्तत्र तु वैदिकी ॥ २६३ ॥ म्लेच्छाः पाख-ण्डिनो धूर्त्ता राजानः सचिवादयः ॥ युवत्यश्च न वर्तन्ते तत्र सिद्धिरदूरतः ॥२६४॥जीर्णदेवालयोद्यानगृहवृक्षनदीषु च॥नदीकूलाद्रिकूलेषु भूछिद्रादिषु नो वसेत् ॥२६५॥ एवमाचार्य्यमतिमान्कुर्य्याद्भूमिपरिग्रहम्॥पृथ्वीं वराहं सम्पूज्य भूसुतस्य बलेन च ॥ २६६ ॥ ब्रूयादमुकमन्त्रस्य पुरश्चरणसिद्धये ॥ मयेयं गृह्यते भूमिर्मन्त्रोयं सिद्ध्यतामिति ॥ २६७ ॥ न्यग्रोधदुग्धसस्यस्थ-वृक्षान्यतरवृक्षजान् ॥ वितस्तिप्रमितान्वृत्तान्गृह्णीयात्कीलकान्दश ॥२६८॥ अष्टौ निखातयेदष्टदिशास्वीशानपूर्वयोः ॥ मध्ये निखन्योनवम ऊर्ध्वबुद्ध्या तथाप्यधः ॥ पश्चान्नैर्ऋत्ययोर्मध्ये यन्त्रमन्त्रेण कीलयेत् ॥ २६९ ॥ पूजा तथास्त्रमन्त्रेण तेष्वस्त्रं च प्रपूजयेत् ॥ क्षेत्रे च कीलिते मन्त्री न विघ्नैः परि-भूयते ॥ २७० ॥ दिक्पालेभ्यो माषभक्तबलिं दिक्षु प्रकल्पयेत् ॥ क्षेत्रमध्ये क्षेत्रपालं पूजयेच्च गणेश्वरम् ॥ २७१ ॥ तृतीयं वास्तुपुरुषन्तेभ्यो दद्याद्बलि त्रयम् ॥ क्षेत्रमध्ये समाश्रित्य कूर्म्मचक्रं विचारयेत् ॥ २७२ ॥ कूर्म्मच-क्रानभिज्ञस्य महाविघ्नोभिजायते ॥ परदेशग्रामगृहभेदात्कूर्म्मश्चतुर्विधः ॥ ॥ २७३ ॥ वृत्तद्वयं प्रकुर्वीत नवकोष्ठकभेदितम् ॥ कवर्गाद्याः सप्त लेख्याः पूर्वाशादिषु लक्षकौ ॥२७४॥ ऐशान्यां विलिखेन्मध्यवृत्ते कोष्ठे द्वयंद्वयम् ॥ स्वराश्च पूर्वतो लेख्याः श्रीबीजं मध्यकोष्ठके ॥ २७५ ॥ प्राङ्मुखः परकूर्म्मस्तु सर्वदैव प्रजायते ॥ देशानामग्रिमो वर्णो यस्यां दिशि व्यवस्थितः ॥ २७६ ॥ देशकूर्म्ममुखं तस्यां दिशि स्याद्ग्रामकूर्म्मके ॥ मुखद्वयं तु विज्ञेयं स्वराद्व्यञ्जनतस्तथा ॥ २७७ ॥ गृहकूर्मस्य वदनं यद्दिग्द्वारं गृहं

१ पल्वकोल्वसर इत्यमरः ॥

भवेत् ॥ मुखस्य पार्श्वयोः पाणी कुक्षी पादौ ततस्ततः ॥ २७८ ॥ पुच्छमेकमथो मध्ये पृष्ठमेकं षडङ्गवान् ॥ महारित्वे जीवनाशो वैरे स्याद्धननाशनम् ॥ २७९ ॥ किञ्चिद्वैरे सुखाल्पत्वं तदिदानीं निगद्यते ॥ अगौ ऋच्छौ लपौ जाहौ पषौ एनौ इरौ उलौ ॥ २८० ॥ फधौ भरौ यसौ चेति महारी परिकीर्तितौ ॥ जछौ ओटू यडौ गादौ जटौ राखौ बुधौ रलौ ॥ २८१ ॥ वैरन्तु पञ्चमे वर्गे तत्किञ्चित्करयोर्भवेत् ॥ चटयोः पचयोश्चापि तरयो रलयोरपि ॥ २८२ ॥ एकवर्गे परा प्रीतिः स्वं वर्गं द्विगुणं कुरु ॥ स्थानवर्गयुतं तष्टमष्टभिश्चापि उच्यते ॥२८३॥ स्थानवर्गो द्विगुणितः स्ववर्गाढ्योऽष्टशेषितः॥ स्थानाय उभयोःकार्य्यमधिकं यस्य शेषकम्॥ २८४॥यावत्स्थितं सोऽर्थदःस्यात्सा धकोऽर्थप्रदो न सत् ॥ मुखे सर्वार्थसिद्धिः स्यात्करयो रल्पसिद्धयः॥ कटौ न किञ्चिद्दासत्वं पादयोः पुच्छतो मृतिः ॥२८५॥ कुरुक्षेत्रे प्रयागे च गंगासागरसंगमे ॥ महाकाले च काश्यां च कूर्म्मस्थानं न चिन्तयेत् ॥ २८६ ॥ क्षेत्रसाधकमन्त्राणामेकमेवाद्यमक्षरम् ॥ यदि स्यात्स ध्रुवं मन्त्रः सर्वसिद्धिफलप्रदः ॥ २८७ ॥ अमृतो वृषभः शैलराजो वासुकिरेव च ॥ अर्थकृच्छ क्तिकृत्पूर्वकाष्ठादौ बलिनार्चयेत ॥ २८८ ॥ पद्मयोनिं महाशङ्खं छायाख्यं चापि मध्यमे ॥ कूर्म्मपृष्ठे गृहं कृत्वा गृहस्थो जपमाचरेत् ॥ २८९ ॥ अथ मालां प्रवक्ष्यामि द्विविधा सा स्थिरा चरा ॥ स्थिरा तु स्थिरचित्तानां चञ्चला चलचेतसाम् ॥ २९० ॥ अकारादिक्षकारान्तैर्बिन्दुवन्मातृकाक्षरैः ॥ अनुलोमविलोमस्थैः क्लृप्तया वर्णमालया ॥ प्रत्येकमन्त्रयुग्मन्त्रा जप्तव्याः सर्वसिद्धिदाः ॥ २९१ ॥ ऋगाद्या अपि किञ्चान्यैः प्रोक्ता च स्थिरमालिका ॥ अकारादिक्षकारान्ता प्रोक्ता चाक्षरमालिका ॥ जपे चाष्टोत्तरशतं पुनर्वर्णस्य योजनम् ॥२९२॥ चराथ कथ्यते मालाभिचारे तिथिसङ्ख्यकैः ॥ मुक्त्यर्थं पञ्चविंशत्या भसङ्ख्यैः सर्वदा जपेत् ॥ २९३ ॥ त्रिंशद्भिर्धर्म्मवृद्धिः स्याच्चतुष्पञ्चाशतेप्सितम् ॥ शतात्साम्यं तथाष्टाधिशतात्सकलसिद्धयः ॥२९४॥ समस्तसिद्ध्यै रुद्राक्षा मणयो धनदा मताः ॥ गर्तस्वामिकरः शङ्खो भोगकृत्स्फटिको मतः ॥ २९५ ॥ पुत्रप्रदाः पुत्रजीवाः पद्माक्षाः पुष्टिवर्द्धनाः ॥

---

१ गतद्रव्यलाभकृत् ॥

विद्रुमोत्था वश्यकरा मौक्तिका मुक्तिदा मताः ॥ २९६ ॥ पापापहाः कुशशुण्यास्स्वर्णजाः कामदायकाः ॥ कामवृद्धिस्तारजातैरिन्द्राक्षैः स्वागतम्पदम् च ॥ २९७ ॥ स्त्रीवश्यार्थे च हारिद्रा दार्व्या पुरुषवश्यकृत् ॥ ज्वरहन्त्री गृंतु लाक्षायाः शंखस्य पितृतृप्तिकृत् ॥ २९८ ॥ अर्कजोच्चाटने कार्य्या श्रीफलैर्ज्ञानसाधने ॥ पद्मकाष्ठोद्भवा तुष्टौ देवदारूद्भवा निरुक् ॥ २९९ ॥ कृष्णकाष्ठसमुद्भूतैस्तामसं कर्म सिध्यति ॥ गजदन्तस्य सर्वार्थे मोहने ताम्रजा मता ॥ ३०० ॥ मारणे चायसी प्रोक्ता धनार्थे श्वेतपद्मजा ॥ विषान्तरे चन्दनोत्था शक्तिकृच्छ्वेतकाष्ठजा ॥ ३०१ ॥ रक्तचन्दनबीजोत्था यक्षिण्यादिकसाधने ॥ ३०२ ॥ भूतस्तम्भे निम्बजाता जनस्तम्भे शमीभवा ॥ महानिम्बेन डाकिन्या भूनिम्बैः स्तम्भनं रुजाम् ॥ ३०३ ॥ इन्द्रवृक्षाहणस्तम्भोऽभिचारो वानरास्थितः ॥ ऋक्षास्थितो वन्यसिद्धिः शार्दूलात्तस्य देवताः ॥ ३०४ ॥ नरास्थ्ना राक्षसा वश्या वीरा वश्या हयास्थिभिः ॥ रासभास्थ्ना क्षुद्रसिद्धिर्मान्यता तु गजास्थिभिः ॥ ३०५ ॥ मृत्तिकाभूष्टमणिजा माला शाबरसिद्धिकृत् ॥ कुशग्रन्थ्या जपेद्विप्रः सुवर्णमणिभिर्नृपः ॥ ॥ ३०६ ॥ पुत्रजीवैर्जपेद्वैश्यः पद्माक्षैः सर्व एव हि ॥ रुद्राक्षस्फटिकेन्द्राक्षमध्ये किञ्चिन्न दापयेत् ॥ ३०७ ॥ मध्ये दत्त्वा जपं कुर्वन्काममोक्षौ विनाशयेत् ॥ चतुर्थ्यां प्रोतयेन्मालां गणनाथस्य मन्त्रकैः ॥ ३०८ ॥ मध्याह्नेऽर्कस्य सप्तम्यां रवौ वा तस्य मन्त्रकैः ॥ द्वादश्यां वैष्णवी माला प्रोतव्या विष्णुमन्त्रतः ॥ ३०९ ॥ त्रयोदश्यां तु सन्ध्यायां तन्मन्त्रैः शिवमालिका ॥ अष्टम्यां वा चतुर्दश्यां नवम्यां भूमिनन्दने ॥ ३१० ॥ शक्तीनामपि कर्तव्या शुक्ररात्रौ [illegible] विधि ॥ ग्रन्थिता पट्टसूत्रेण देव्याः प्रीत्यै तु मालिका ॥ [illegible] ॥ ३११ ॥ कार्य्या सा वैष्णवी माला पट्टसूत्रैरथापि वा ॥ ऊर्णाभिर्वा [illegible]लैर्वा शैवी कार्पाससूत्रकैः ॥ ३१२ ॥ प्रायशः सर्वदेवानां सूत्रोत्पत्तिं [illegible] शृणु ॥ सूत्रं द्विजेन्द्रपुण्यस्त्रीनिर्मितं ग्रन्थिवर्जितम् ॥ ३१३ ॥

---

१ श्लोकप्पसर [illegible]षितवस्तुसिद्धिः ॥ २ बकैनेति भाषायाम् ॥ ३ तिक्तकः ॥

त्रिगुणं त्रिगुणीकृत्य ग्राह्यं प्रक्षाल्य यत्नतः ॥ ३१४ ॥ एकवक्त्रैर्द्विवक्त्रैश्च चतुर्वक्त्रैश्च पञ्चभिः ॥ षड्वक्त्रैर्वाथ कर्तव्या मिथो मिश्रांस्तु वर्ज्जयेत् ॥ ३१५ ॥ मुखं मुखेन संयोज्य पृष्ठं पृष्ठेन योजयेत् ॥ रुद्राक्षस्योन्नतं प्रोक्तं मुखं पृष्ठं तु निम्नकम् ॥ ३१६ ॥ धात्रीफलसमः श्रेष्ठो मध्यो बदरसन्निभः ॥ अधमश्चणकाभः स्यात्ततो हीनो विपत्तिकृत् ॥ ३१७ ॥ एको मेरुस्तत्र देयः सर्वत्रस्थोऽल्पयुक् च यः ॥ आद्यं स्थूलं ततस्तस्मान्न्यूनं न्यूनतरं ततः ॥ ३१८ ॥ सर्पाकारं प्रकुर्वीत ब्रह्मग्रन्थिमार्णं प्रति ॥ अथ वा ग्रन्थिरहितां दृढचक्रसमन्विताम् ॥ ३१९ ॥ त्रिरावृत्त्याथ मध्येन चार्धावृत्त्या तु देशतः ॥ ग्रन्थिः प्रदक्षिणावर्त्तः स ब्रह्मग्रन्थिरुच्यते ॥ ३२० ॥ एकभक्तं विधायादौ साधको ग्रन्थयेत्स्वयम् ॥ कृतनित्यक्रियः शुद्ध उक्तेष्वक्षेष्वतन्द्रितः ॥ ३२१ ॥ श्वेता रक्ता सुवर्णाभा कृष्णा चैव द्विजादितः ॥ एतेषु ब्राह्मणश्रेष्ठो जपमालाकृते भृशम् ॥ ३२२ ॥ अलाभे तु द्विजातीनामपि वा स्वस्वजातयः ॥ कलौ तु दुर्लभो विप्रो यथा विप्राः स्वधर्म्मगाः ॥ ३२३ ॥ अतिस्थूलोऽतिसूक्ष्मश्च स्फुटितो भंगुरो लघुः ॥ भिन्नः पुराधृतो जीर्णो रुद्राक्षो न शुभः स्मृतः ॥ ३२४ ॥ अन्योन्यघर्षणादेव जपहानिर्भवेद्ध्रुवम् ॥ मध्यतो ग्रन्थयः कार्य्या नात्र मुक्तादि विन्यसेत् ॥ ३२५ ॥ एकवक्त्रः शिवस्तस्य माला तु जपतो हरेत् ॥ ब्रह्महत्यादिपापानि तथा भक्तादिकेष्टदः ॥ ३२६ ॥ उमाशङ्करनामाख्यो द्विमुखोऽयं व्यपोहति ॥ गोहत्यादिकपापानि गृहस्थाश्रमसौख्यदः ॥ ३२७ ॥ त्रिमुखस्त्वग्निरूपः स्यात्स्त्रीहत्यादिकपापहा ॥ धर्म्मार्थकामाः सिद्ध्यन्ति धारणात्तज्जपादपि ॥ ॥ ३२८ ॥ चतुर्मुखो भवेद्ब्रह्मा गुरुहत्यादिनाशकः ॥ स्फुरन्ति सकला विद्या वाक्सिद्धिश्चापि जायते ॥ ३२९ ॥ पञ्चवक्त्रः शिवः साक्षात्सर्वपापापहारकः ॥ शैवगाणेशशाक्तानां द्रुतसिद्धिस्तु तज्जपात् ॥ ३३० ॥ कार्त्तिकेयस्तु षड्वक्त्रः स्खलितव्रतपापहा ॥ विधितो दक्षिणे बाहौ धारणात्समरे जयः ॥ ॥ ३३१ ॥ सप्तवक्त्रो महानागोऽनन्तोनामाथ तज्जपात् ॥ अनन्ताः सिद्धयः सर्पविषमृत्युर्न जायते ॥ ३३२ ॥ अष्टवक्त्रो गणेशः स्यात्सर्वविघ्ननिवारकः ॥ नश्यन्ति तज्जपात्सर्वे कामक्रोधादिशत्रवः ॥ ३३३ ॥ नववक्त्रो भैरवः स्याद्वाममार्गस्थदेवताः ॥ जपादेव प्रसीदन्ति वामबाहौ स्थितोग्रहा ॥ ३ ... णात् ॥

जनार्दनो दशमुखो जपान्नश्यन्ति धारणात् ॥ पिशाचग्रहवेतालब्रह्मराक्षसपन्नगाः ॥ ३३५ ॥ एकादशमुखः साक्षाद्रुद्र एवास्य धारणात् ॥ जपाच्च हयमेधादियज्ञानां फलभाग्भवेत् ॥ ३३६ ॥ द्वादशास्यो भास्करः स्याद्धारणात्तज्जपादपि ॥ तेजस्वी च प्रतापी च गोमेधफलभाग्भवेत् ॥ ३३७ ॥ त्रयोदशमुखः साक्षाद्विश्वदेवात्मकः स्मृतः ॥ श्राद्धकाले धृतो दद्यात्पितॄणामक्षयाङ्गतिम् ॥ ३३८ ॥ चतुर्दशमुखैर्जप्तं तदानन्त्याय जायते ॥ पूज्यते देवमनुजैरक्षयां लभते गतिम् ॥ ३३९ ॥ अथ मालाकृतिं वक्ष्ये क्षालयेत्पञ्चगव्यकैः ॥ दुग्धं काञ्चनवर्णायाः श्वेतायाश्चैव गोमयम् ॥ ३४० ॥ गोमूत्रं ताम्रवर्णाया नीलायाश्च भवेद्दधि ॥ घृतन्तु कृष्णवर्णाया एवं पञ्चामृतेपि च ॥ ॥ ३४१ ॥ गवां वर्णास्तु सुलभाः सन्ति देशेषु कुत्र च ॥ तत्र वर्णविभागेन पञ्चगव्यानि चाहरेत् ॥ ३४२ ॥ वर्णालाभे न दोषोस्ति मात्राहीनन्तु वर्ज्जयेत् ॥ गोशकृद्द्विगुणं मूत्रं सर्पिर्दद्याच्चतुर्गुणम् ॥ ३४३ ॥ क्षीरमष्टगुणं प्रोक्तं पञ्चगव्यं तथा दधि ॥ [1]गायत्र्यादाय गोमूत्रं [2]गन्धद्वारेति गोमयम् ॥ ३४४ ॥ [3]आप्यायस्वेति च क्षीरं दधि [4]काव्णेति वै दधि ॥ [5]तेजोसि शुक्रमित्याज्यं [6]देवस्य त्वा कुशोदकम् ॥ ३४५ ॥ क्षालयेत्पञ्चगव्याद्यैः [7]सद्योजातादिमन्त्रतः ॥ चन्दनागुरुगन्धाद्यैर्[8]वामदेवेन घर्षयेत् ॥ ३४६ ॥ धूपयेद[9]घोरेण चासितागुरुगुग्गुलैः ॥ [10]तत्पुरुषाख्यमन्त्रेण लेपयेच्चन्दनादिभिः ॥ ३४७ ॥ [11]ईशानः

---

१ ॐ तत्सवितुर्वरेण्यम्भर्गो देवस्य धीमहि । धियो यो नः प्रचोदयात् ॥ २ गन्धद्वारान्दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम् । ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम् ।३ आप्यायस्व समेतु ते विश्वतःसोमवृष्ण्यम् ॥ भवा वाजस्य सङ्गथे । ४ दधिक्राव्णो अकारिषञ्जिष्णोरश्वस्य वाजिनः । सुरभि नो मुखाकरत्प्रण आयूँषि तारिषत् । ५ तेजोसि शुक्रमस्यमृतमस्यायुर्मे पाहि । ६ देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेश्विनोर्बाहुभ्याम्पूष्णो हस्ताभ्याम् । अश्विनोर्भैषज्येन तेजसे ब्रह्मवर्चसायाभिषिञ्चामि सरस्वत्यै भैषज्येन वीर्यायान्नाद्यायाभिषिञ्चामीन्द्रस्येन्द्रियेण बलाय श्रियै यशसेभिषिञ्चामि । ७ सद्योजातं प्रपद्यामि सद्योजाताय वै नमोनमः। भवेभवे नातिभवे भवस्व मां भवोद्भवाय नमः।८वामदेवाय नमो ज्येष्ठाय नमः श्रेष्ठाय नमो रुद्राय नमः कालाय नमः कलविकरणाय नमो बलविकरणाय नमो बलाय नमो बलप्रमथनाय नमः सर्वभूतदमनाय नमो मनोन्मनाय नमः । ९ अघोरेभ्योथ घोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः । सर्वेभ्यः सर्वशर्वेभ्यो नमस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः । १० तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि । तन्नो रुद्रः प्रचोदयात् ।११ ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानां ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणोधिपतिर्ब्रह्मा शिवो मे अस्तु सदाशिवोम् ॥

सर्वमिति च प्रत्येकं मन्त्रयेच्छतम् ॥ तेनैव मन्त्रयेन्मेरुमघोरेण च मन्त्रयेत् ॥ ३४८ ॥ अथान्यमालासंस्कारं वक्ष्येश्वत्थस्य पत्रकैः ॥ पद्माकारेण नवभिः स्थापिते तत्र विन्यसेत् ॥ ३४९ ॥ मणीन्सूत्रं च गन्धोदैः क्षालयित्वाथ मन्त्रयेत् ॥ ॐ ह्रींपूर्वैर्मातृकार्णैः क्रमादेकैकशो मणिम् ॥ ३५० ॥ सूत्रं च तत्र विन्यस्य पूजयित्वा हुनेत्ततः ॥ तिलाद्यैः केवलाज्यैर्वा सद्योजातादिभिः पृथक् ॥ ३५१ ॥ पञ्चमन्त्रैः शतं चाष्टावष्टाविंशतिमेव वा ॥ होमाभावे जपः प्रोक्तः प्रोतयेन्मालिकां ततः ॥ ३५२ ॥ गोपुच्छसदृशी कार्य्या एकाग्रा वा समेरुका॥आवाहनादिमुद्राणामष्टकं दर्शयेत्ततः॥सद्योजातादिभिर्मन्त्रैः पूर्ववत्क्षालनादिकम् ॥ ३५३ ॥ कौलिकादौ विशेषोयं सुरया मणितर्प्पणम्॥ शिरोमाला तु षट्त्रिंशद्द्वात्रिंशत्कण्ठमालिका ॥ ३५४ ॥ कूर्परे षोडश प्रोक्ता द्वात्रिंशन्मणिबन्धयोः ॥ अष्टोत्तरशतैर्युक्तमुपवीतं विधीयते॥ ३५५ ॥ तदर्धमुरसो माला शिखायामेक उच्यते ॥ कर्णयोश्चापि षट्सङ्ख्या धारणक्रम ईरितः ॥ ३५६ ॥ सङ्ख्याहीनं न कर्त्तव्यमधिकं नैव दुष्यति ॥ रुद्राक्षं धारयन्नेवं देहान्ते स शिवो भवेत् ॥ ३५७ ॥ बहुलं लभते पुण्यं भाग्यवानिह जायते ॥ स्नाने दाने जपे होमे वैश्वदेवे सुरार्चने ॥ ३५८ ॥ प्रायश्चित्ते तथा श्राद्धे दीक्षाकाले विशेषतः ॥ रुद्राक्षधारी भूत्वा च यत्किञ्चित्कर्म वैदिकम् ॥ ३५९ ॥ यो विप्रः सततं कुर्यात्तत्कर्म सफलं भवेत् ॥ कण्ठे शिरसि हस्ते च कर्णयोरुपवीतके ॥ ३६० ॥ रुद्राक्षधारणादेव रुद्रो भवति मानवः ॥ खादन्मांसं पिबन्मद्यं सङ्गच्छन्नन्त्यजादिषु ॥ ३६१ ॥ सद्यो भवति पूतात्मा रुद्राक्षं मूर्ध्नि धारयन् ॥ देवान्पुष्णन्ति ये देवाः पशवस्तेत्र वैदिकाः ॥ ३६२ ॥ तान्घातयन्ति ये कौले तेषां शास्तास्त्ययं यमः ॥ तेषां संरक्षणार्थाय नान्यो रुद्राक्षतो भुवि ॥ ३६३ ॥ रुद्राक्षाः सर्वदेवानां मन्त्रसिद्धिविधायकाः ॥ रुद्राक्षं कण्ठमाश्रित्य शूकरो म्रियते यदि ॥ ॥ ३६४ ॥ सोपि रुद्रमवाप्नोति किं पुनर्मानुषादयः ॥ उच्छिष्टो वा विकर्म्मस्थो युक्तो वा सर्वपातकैः ॥ मुच्यते सर्वपापेभ्यो नरो रुद्राक्षधारणात् ॥

॥ ३६५ ॥ रुद्राक्षमालिकां कण्ठे धारयेद्भक्तिवर्ज्जितः ॥ पापकर्म्मापि यो नित्यं रुद्रलोके महीयते ॥ ३६६ ॥ अरुद्राक्षधरो भूत्वा यत्किञ्चित्कर्म्म वैदिकम् ॥ कुर्य्याद्विप्रोपि यो मौढ्यान्नासावाप्नोति तत्फलम् ॥ ३६७ ॥ शूद्रार्थं योषितामर्थे मालासंस्कार उच्यते ॥ गणेशसूर्य्यविष्ण्वीशदुर्गाः सम्पूज्य भक्तितः ॥ ३६८ ॥ मालां तामथ तां मालां क्रोम्बीजेनाभिमन्त्रि-देत्म्॥ अष्टोत्तरशतं पञ्चगव्ये तां स्थापयेत्र्यहम्॥ ३६९॥ चतुर्थे तु समृद्धृत्य क्षालयेदस्त्रमन्त्रतः॥हन्मन्त्रेण ग्रन्थयित्वा स्थण्डिले तां निधापयेत्॥ ३७०॥ तत्र प्रक्षालितां मालां स्थापयेद्धेमपात्रके॥पञ्चामृतेन संस्नाप्य शीतलेन जलेन च ॥ ३७१ ॥ चन्दनेन सुगन्धेन कस्तूरीकुंकुमादिभिः ॥ अभिषेकं ततः कुर्य्याद्धसौंमन्त्रेण साधकः ॥ ३७२॥ नवग्रहान्पूजयित्वा दिक्पालांश्चापि पूजयेत् ॥ ३७३ ॥ तिलेन घृतयुक्तेन शक्तितो होमयेत्ततः ॥ स्वर्णन्तु दक्षिणां दद्याद्गुरवे मणिसङ्ख्यकम् ॥ ३७४॥ तन्मन्त्रजापिनो विप्रान्भोजयेद्वापि वैदिकान् ॥ अभावे स्वर्णपत्रस्य ग्राह्यमश्वत्थपत्रकम् ॥ ३७५ ॥ मालासंस्कार इत्युक्तो जपः स्यात्सिद्धिदायकः॥ कीकसादिकमालानां कौलिकानाञ्च वामिनाम् ॥ ३७६ ॥ सिद्धयै वक्ष्यामि संस्कारं सर्वतन्त्रेषु गोपितम् ॥ शिल्पिनं पूजयेदादौ वस्त्रगन्धानुलेपनैः ॥ ३७७ ॥ संहृष्टः कारयेन्मालां मन्त्रपूतं पिबेन्मधु ॥ पञ्चाशन्मणिभिः कार्य्या ऋतुमत्या भगे क्षिपेत् ॥ ३७८ ॥ निशामेकां समुद्धृत्य तन्मणीन्क्षालयेत्ततः॥ शुद्धोदैर्मूलमन्त्रेणाभिषिञ्चेद्विजयारसैः ॥ ३७९ ॥ प्रक्षाल्य धूपयेत्पश्चात्प्रोतयेदिष्टसूत्रकैः ॥ सूत्रं स्वेष्टजपे नीलं कृष्णं मारणकर्म्मणि ॥ ३८० ॥ मोहने हारितं स्तम्भे धूमाभं द्विषितालभम् ॥ शान्तौ पुष्टौ सितं द्वेषे रक्तमुच्चाटने भवेत् ॥ वश्ये पीतं कषायन्तु विक्षेपकरणे मतम् ॥ ३८१॥ चक्रपूजां ततः कृत्वा त्वष्टोत्तरसहस्रकम्॥ हुनेन्मद्यपलाभ्यां च मूलमन्त्रेण साधकः ॥ ३८२ ॥ ततो बलिं यथान्यायं महिषादेः प्रदापयेत् ॥ शिल्पिनः साधकांश्चापि भोजयेन्मणिसङ्ख्यकान् ॥ ॥ ३८३ ॥ एवं सम्मार्जितां मालां गुरवे तां प्रदर्शयेत् ॥ येन मन्त्रेण या माला कृता तन्तु जपेत्तया॥ ३८४॥अन्यमन्त्रजपाच्छापो देवतायाः प्रजायते॥

दृढं सूत्रं नियुञ्जीत जपेत्तु स्थगितो यथा ॥ ३८५ ॥ जीर्णे सूत्रे पुनः सूत्रं ग्रन्थयित्वा शतं जपेत् ॥ तर्जन्या न स्पृशेत्सूत्रं कम्पयेन्नैव धूनयेत् ॥ ३८६॥ न स्पृशेद्वामहस्तेन करस्रस्तन्न कारयेत् ॥ अक्षाणां चालनेंगुष्ठश्चान्यमक्षंन संस्पृशेत्॥ ३८७॥ जपकाले तदा विद्वान्मन्त्रं नैव विलङ्घयेत् ॥ परिवर्त्तनकाले तु सङ्घट्टं नैव कारयेत्॥ ३८८॥ कलिः खटखटाशब्दे दोलने च चलन्मृतिः॥ चलिते चैव विद्वेषः स्फुटिते व्याधिसम्भवः ॥ ३८९ ॥ हस्तच्युते महाविघ्नः सूत्रच्छेदे विनाशनम्॥ अथ वांगुलिमालाभिर्जपं कुर्य्यात्तदुच्यते ॥ ३९० ॥ अनामामध्यमारभ्य कनिष्ठानुक्रमेण तु ॥ मध्यमा मूलपर्य्यन्ता करमाला प्रकीर्तिता ॥ ३९१॥ मध्यमानामिकामध्यपर्वयुग्मं प्रकल्पयेत् ॥ मेरुं चानामिकामूलात्कनिष्ठानुक्रमेण च ॥ ३९२॥ तर्ज्जन्यग्रादितो मध्यामूलान्तं दशसङ्ख्यकाः ॥ अथ वा कल्पयेन्मेरुं मध्यानामादिपर्वकम् ॥ ३९३ ॥ अनामामध्यमे तत्र तर्ज्जनीमूलकावपि ॥ जपसङ्ख्याजपः प्रोक्तस्तथायन्त्रिविधोमतः ॥ ३९४ ॥ तत्रादौ त्रिविधः प्रोक्तः पूर्वोक्तोऽयं जपो मया ॥ अंगुल्याख्यो जपः प्रोक्तो मतोन्यो न ममैव च ॥ ३९५ ॥ अंगुलीगतलेखाभिर्जपो लेखाजपो भवेत् ॥ अंगुलीं न वियुञ्जीत जपकाले कदाचन ॥ ३९६ ॥ अंगुलीनां वियोगेन च्छिद्रेषु स्रवते जपः ॥ नोल्लङ्घयेच्च गुणवान्किञ्चित्सङ्कोचयेत्तलम्॥ ३९७॥ न[1] दर्शयेत्करं नोचेत्फलं गृह्णन्ति राक्षसाः ॥ त्यजेद्विंशद्विकर्म्माणि सिद्धिविघ्नकराणि च ॥ ३९८ ॥ कुर्य्याद्विंशतिकर्म्माणि जपसिद्धिकराणि च ॥ लोभं क्रोधं च मात्सर्य्यं कामं द्वेषञ्च ताडनम् ॥ ३९९ ॥ दम्भमुच्चाटनाभ्यङ्गौ प्रियं मिथ्यावचस्तथा ॥ गीतं वाद्यं मधु च्छायां विभीतककरञ्जयोः॥ ॥ ४०० ॥ मांसं प्रातग्रहं माल्यं ताम्बूलं पापिभाषणम् ॥ एतानि वर्ज्जयेद्विद्वान्कर्तव्यान्यथ मे शृणु ॥ ४०१ ॥ मन्त्रो निरोधो मन्त्रार्थचिन्तनं नित्यकर्म्म च ॥ नैमित्तिकं श्रौतमौने परसङ्गस्य वर्ज्जनम् ॥ ४०२॥ भूमिशय्या त्रिषवणस्नानं प्रात्यहिकार्चनम् ॥ नित्यदानं गुरोः पादपूजाहारनिमन्त्रणे ॥ ४०३ ॥ स्नानञ्च पञ्चगव्येन पवित्रकरधारणम् ॥ त्रिसन्ध्यं वन्दनं

---

१ जपकाले करेण न दर्शयेद्यदि दर्शयेत् तर्हि राक्षसास्तत्फलमाददति ॥

पञ्चयज्ञास्तर्पणमेव च ॥ ४०४ ॥ यथोक्तवस्त्रधरणं प्रायश्चित्तमथोच्यते ॥ सकृदुच्चरिते शब्दे प्रणवं समुदीरयेत् ॥४०५॥ प्रोक्ते पामरशब्देपि प्राणायामं सकृच्चरेत् ॥ बहुप्रलापे चावश्यं न्यस्याङ्गानि ततो जपेत् ॥ ४०६ ॥ क्षुतेप्येवं तथास्पृश्यस्थानानां स्पर्शनेपि च ॥ मौनत्यागे जपेन्मन्त्रं वैष्णवं वा स्मरेद्धरिम् ॥४०७॥ पतितान्त्यजसन्दर्शे तेजोवन्तं निरीक्षयेत् ॥ सूर्य्योग्निश्चन्द्रमाः खेटा मुनयो भानि तारकाः ॥ ४०८ ॥ विद्वांसो ब्राह्मणाश्चेति तेजोहीनास्ततः परे ॥ क्षुतेधोवायुगमने पतितादिकभाषणे ॥४०९॥ त्यक्त्वा जपं तथाचम्य प्राणायामं षडङ्गकम् ॥ कृत्वा पश्चाज्जपेन्मन्त्रमम्भोऽलाभे हरिं स्मरेत् ॥ ४१० ॥ मार्जारं कुक्कुटं क्रौञ्चं श्वानं गृध्रं खगं कपिम् ॥ दृष्ट्वाचम्य चरेत्कर्म स्पृष्ट्वा स्नानं विधीयते ॥ ४११ ॥ दैवादसत्यभाषी चेत्स रौद्रं पौरुषं जपेत् ॥ बहुवस्त्रैकवस्त्रो वा मुक्तकेशो गलावृतः ॥ ४१२ ॥ उष्णीषी कञ्चुकी नग्नः शिरसि प्रावृतोपि वा ॥ चिन्ताद्याकुलचित्तो वा क्रुद्धो वान्तः क्षुधान्वितः ॥४१३॥ जङ्घानिगूढपादो वा यानशय्यागतस्तथा ॥ शयानो वा धौतपादः पश्चाद्वा दक्षिणामुखः ॥४१४॥ म्लानवस्त्रोर्ध्ववस्त्रश्च तथा द्विगुणवस्त्रकः॥च्युतवस्त्रो रक्तवस्त्रःस्निग्धवस्त्रो द्विकच्छकः ॥४१५॥ बहिष्कच्छोनुत्तरीयो विकच्छश्चैककच्छकः ॥ कौपीनी प्रौढपादश्च तथैव स्यूतवस्त्रवान् ॥ ॥ ४१६ ॥ जपेशक्तः प्रमादाच्च राक्षसैर्हृततेफलम् ॥ तत्कारणं परित्यज्य तज्जपं पुनरा चरेत् ॥४१७॥ स्वभार्य्यायां प्रमादेन स्खलितश्चेत्तदोषसि ॥ स्नात्वार्द्रवासा मौनेन दशकुम्भमितैर्जलैः ॥ ४१८ ॥ श्रोत्रियस्य गृहे दद्यात्परनार्य्यां सहस्रकम् ॥ जपः स्यादक्षरावृत्तिः स त्रेधा परिकीर्त्तितः ॥ ४१९ ॥ हीनो वाग्जः कायिकस्तु मध्यः श्रेष्ठस्तु मानसः ॥ य उच्चनीचैः स्वरितैः शब्दैः स्पष्टपदाक्षरैः ॥ ४२० ॥ मन्त्र उच्चार्य्यते हीनोऽसौ जपो वाचिकः स्मृतः ॥ शनैरुच्चारयेन्मन्त्रमीषदोष्ठौ प्रचारयेत् ॥ ४२१ ॥ कस्यचिच्छ्रवणायोग्यः कायिकः स तु मध्यमः ॥ बुद्ध्या यदाक्षरश्रेणीं यथास्थानेषु चोच्चरेत् ॥ ४२२ ॥ अर्थस्मरणपूर्वन्तु स श्रेष्ठो मानसो जपः ॥

१ षिवु तन्तुसंताने ॥

षट्कर्मकृद्वाचिकः स्यात्कायिकः सर्वसिद्धिकृत् ॥ ४२३ ॥ मानसः साधये-न्मोक्षं ततोन्यः क्षुद्रकर्मकृत् ॥ जपेन देवता नित्यं स्तूयमाना प्रसीदति ॥ ४२४ ॥ जपात्सिद्धिर्जपात्सिद्धिर्जपात्सिद्धिरदूरतः ॥ यथा धनेन सन्तुष्टो जायते क्षुल्लको नरः ॥ ४२५ ॥ तथैव बलिदानेन पूजया क्षुद्रदेवताः ॥ यथा महागुणैर्वश्यो जायते गुणवान्प्रभुः ॥ ४२६ ॥ तथाहं त्वं च[1] विष्णवर्कौ जपा देव फलप्रदाः ॥ आसनन्तु द्विधा प्रोक्तं नित्यकामिकभेदतः ॥ ४२७ ॥ कुशाजिनोत्तरैर्युक्तं चतुरंगुलमूर्ध्वतः ॥ चतुरस्रं द्विहस्तञ्च सुन्दरं मृदु निर्म-लम् ॥४२८॥ इदं सुखासनं नित्यं जपसिद्धिविधायकम् ॥ अथ काम्यानि वक्ष्यन्ते ज्ञानसिद्ध्यायिहाजिनम् ॥ ४२९ ॥ सर्व्वसिद्ध्यै व्याघ्रचर्म्म [2]त्वाविकं रोगनाशनम् ॥ कौशेयं पौष्टिकं प्रोक्तं वेत्रजं श्रीविवर्द्धनम् ॥ ॥ ४३० ॥ श्वेते तु कम्बले धर्म्मसिद्धिरुक्तेर्थसिद्धयः ॥ पीते कामो द्विजा[3]न्येषां मोक्षदः कृष्णकम्बलः ॥ ४३१ ॥ दुःखमुक्त्यै रञ्जितस्तु नीलरङ्गो न शोभनः ॥ त्यजेन्निषिद्धं मतिमांस्त्वनिषिद्धेषु संविशेत् ॥ ४३२ ॥ निषिद्धान्यथ वक्ष्यन्ते शोकः स्याद्दारुकासने ॥ वंशासने दरिद्रः स्याद्वस्त्रे स्थानविनाशनम् ॥ ४३३ ॥ पाषाणे च तथोच्चाटो ज्वरः स्यान्मृ[4]ण्मयासने ॥ ४३४ ॥ क्षित्यासने भवेत्पीडा पल्लवे चित्त-विभ्रमः ॥ तृणासने भवेत्पीडा निषिद्धं त्विष्टकासनम् ॥ ४३५ ॥ चित्त-क्षोभो गृहस्थस्य कृष्णसाराजिने भवेत् ॥ बटुर्वनस्थः संन्यासी स्नातकः सिद्धिमाप्नुयात् ॥ ४३६ ॥ शुभे मुहूर्त्ते नक्षत्रे तिथौ स्नात्वा यथाविधि ॥ विप्रान्सन्तर्प्य यत्नेन भोजनाच्छादनादिभिः ॥ ४३७ ॥ भूवित्तवस्त्रभूषाद्यैः सन्तोष्य गुरुमात्मनः ॥ आरभेच्च जपं पश्चात्तदनुज्ञापुरस्सरम् ॥ ४३८ ॥ जपस्थाने ततः कुर्य्यात्त्रिकोणं वर्तुलं बहिः ॥ तद्बहिश्चतुरस्रं च तत्र क्षेत्रे

---

१ अत्र चकारोनुक्तसमुच्चयार्थस्तेन गणेशो बोध्यः ॥ २ मेषोर्णावासः ॥ ३ द्विजत्त्वं त्रयाणां तदितरत्वं शूद्रे तदुक्तं मनौ—"ब्राह्मणक्षत्रियविशस्त्रयो वर्णा द्विजातयः ॥ चतुर्थ एकजा-तिस्तु शूद्रो नास्ति तु पञ्चमः" इति॥ ४ मृण्मयशब्देन सामान्यस्य। पाषाणेष्टकयोः पृथगुपादानात्॥

समर्चयेत् ॥ ४३९ ॥ इहागच्छेत्यादिवाक्यैस्त्रिकोणादग्रतः पुनः ॥ अन्नोदकादिसम्पूर्णं बलिपात्रं निधापयेत् ॥४४०॥ वामिभिर्माहिषो देयः कौलिकैर्बर्करस्तथा ॥ अविः सिद्धान्तिभिस्तत्र निवेद्यो मनुना सुराः ॥ ४४१ ॥ ऐंह्येहि विद्रषीत्युक्त्वा पुरुषं जययुग्मकम् ॥ नर्त्तयद्वितयं पश्चाद्विघ्नविघ्न महेति च ॥ ४४२ ॥ भैरवपदपूर्वन्तु क्षेत्रेशमिति चोच्चरेत् ॥ क्षेत्रपालबलिं गृह्णगृह्णस्वाहेति वै वदेत् ॥ ४४३ ॥ त्रिचत्वारिंशदर्णोयं क्षेत्रपालबले मनुः ॥ तस्मै सपरिवाराय बलिं दद्यान्न भक्षयेत् ॥ ४४४ ॥ आरभेत पुरश्चर्य्यां दीक्षोक्तदिवसे शुभे ॥ प्रणम्यादौ गुरून्विप्रान्गणेशं परिपूज्य च ॥ ॥ ४४५ ॥ पुण्याहवाचनं कृत्वा कुशहस्तो वदेदिति ॥ सूर्य्यः सोमो यमः कालः सन्ध्ये भूतान्यहः क्षपा ॥ ४४६ ॥ पवनो दिक्पतिर्भूमिराकाशं खेचरामराः ॥ ब्रह्मशासनमास्थाय कल्पध्वमिह सन्निधिम् ॥ ४४७ ॥ पठित्वेदं ताम्रपात्रे कृत्वा कुशतिलाक्षतान् ॥ उदङ्मुखस्तु सङ्कल्पं कुर्य्यात्संवत्सरादिकान् ॥ ४४८ ॥ कामनान्तानुच्चरेच्च तत्र विंशतिसंख्यकान् ॥ संवत्सरमृतुं मासं पक्षं पञ्चाङ्गमेव च ॥ ४४९ ॥ नवग्रहस्थितिं घस्रभागमुहूर्त्तके त्विति ॥ स्वदेशभेदानुच्चार्य्य कामनासहितान्वदेत् ॥ ४५० ॥ द्वीपेमुके मुके खण्डे गोत्रं प्रवरमुच्चरेत् ॥ स्वनाम जातिनामान्तं पुनः शर्म च वर्म्म च ॥ ४५१ ॥ गुप्तो दासोथामुकस्य मन्त्रस्य सिद्धिकामकः ॥ करिष्येहं पुरश्चर्य्यामेतत्सङ्ख्यजपात्मिकाम् ॥ ४५२ ॥ अथवैयद्दिनैरेतैरसति प्रतिबाधके ॥ करिष्य इति सङ्कल्पं मनसैव प्रकल्पयेत् ॥ ४५३ ॥ वदेद्वाचाभिलाषं च कर्म्मणा चोपपादयन् ॥ गुरुं गणपतिं दुर्गां मह्यं नत्वा च पूजनम् ॥४५४॥ कृत्वा स्वमूलमन्त्रेण प्राणायामत्रयं चरेत् ॥ कृत्वा ऋष्यादिविन्यासमङ्गन्यासं तथैव च ॥ ४५५ ॥ ध्यायेच्च हृदये देवं पात्रे संस्थाप्य मालिकाम् ॥ अर्घ्योदकेन सम्प्रोक्ष्य ततस्तां प्रार्थयेदिति ॥ ४५६ ॥ ॐ मालेमाले माहामाये सर्वशक्तिस्वरूपिणि ॥ चतुर्वर्गस्त्वयि न्यस्तस्तस्मान्मे

---

१ एह्येहि विद्रषीपुरुष जयजय नर्त्तय नर्तय विघ्नविघ्न महाभैरव क्षेत्रेश क्षेत्रपाल बलिं गृह्णगृह्ण स्वाहा ।

सिद्धिदा भव ॥ ४५७ ॥ पूजयित्वा ततो मालां गृह्णीयाद्दक्षिणे करे ॥ बीजं गणपतेः पूर्वमुच्चार्य्य तदनन्तरम् ॥४५८॥ अविघ्नं कुरु माले त्वं गृह्णीयात्तदनन्तरम् ॥ हस्तेथ दक्षिणे पश्चाच्चिन्तयेन्मनसा शिवम् ॥ ५५९ ॥ चिन्तयेच्च गुरुं मूर्ध्नि यथावर्णादिकं भवेत् ॥ मन्त्रं ध्यायेत्कण्ठमध्ये पीतवर्णं हिरण्मयम् ॥४६०॥ महामायां च हृदये स्वात्मानं गुरुपादयोः ॥ आज्ञाचक्रे ततः पश्चाद्गुरोर्मन्त्रस्य चात्मनः ॥ ४६१ ॥ देव्याश्चाप्येकतां नीत्वा सुषुम्णावर्त्मना ततः॥गुरुस्वरूपमेकं तं षट्चक्रं प्रति लङ्घयेत॥४६२॥षट्चक्रेपि महामायां क्षणं ध्यात्वा प्रयत्नतः ॥लम्बयेन्मूलमन्त्रेण चादिषोडशचक्रकम्॥४६३॥ आदिषोडशचक्रे तां साधकानन्ददायिनीम् ॥ चिन्तयेत्साधको देवीं जातकर्म्मसमारभेत् ॥ ४६४ ॥ भ्रुवोरुपरि नाडीनां तिसृणां प्रान्त उच्यते ॥ तत्प्रान्तं त्रिपथस्थानं षट्कोणं चतुरंगुलम् ॥ ४६५ ॥ चक्रं च कुलयोगज्ञैराज्ञाचक्रमितीरितम् ॥ कण्ठे त्रयाणां नाडीना वेष्टनं विद्यते नृणाम् ॥ ४६६ ॥ सुषुम्णेडापिङ्गलानां षट्कोणं तत्षडंगुलम् ॥तत्त्वचक्रमिति प्रोक्तं शुक्लं कण्ठस्य मध्यगम् ॥ ४६७ ॥ त्रयाणामपि देवानां हृदये चैकता भवेत् ॥ तत्स्थाने षोडशारं स्यात्सप्तांगुलप्रमाणतः ॥ ४६८ ॥ तत्पूर्वमुक्तयोगानामादिषोडशचक्रगम्॥ ध्येयानामथ मन्त्राणां चिन्तितस्य जपस्य च ॥४६९॥ यस्मादाद्यं तु हृदयं तस्मादादिर्निगद्यते ॥ तत्र प्रणव उत्पन्नः पूर्वमादिस्तुतस्य तु॥४७०॥ निस्सेतुकं यथा तोयं क्षणान्निम्नं प्रसर्पति ॥ मन्त्रस्तथैव निस्सेतुः क्षणात्क्षरति यज्वनाम् ॥ ४७१ ॥ तस्मात्सर्वप्रयत्नेषु चतुर्वर्णादिजातयः॥ पार्श्वयोः सेतुमादाय जपकर्म्म समारभन् ॥ ४७२ ॥ मन्त्राणां प्रणवः सेतुर्द्विजानां परिकीर्तितः ॥ चतुर्दशस्वरोन्येषां चन्द्रानुस्वारसंयुतः ॥ ॥४७३॥ एवं विचिन्त्य मध्याया मध्ये भागे तु मालिकाम् ॥ अस्पृशंस्तर्ज्जनीं मालामंगुष्ठाग्रेण चालयेन्न ॥ ४७४ ॥ पूर्वं मन्त्रं जपन्यस्तु संस्पृशेदपरं मणिम् ॥ अंगुष्ठेन भवेत्तस्य स जपो निष्फलः सदा ॥ ४७५ ॥

---

१ गमिति बीजम् ॥ २ अत्र मन्त्रे ॐमामिति पूर्वं पठेत् ॥ छन्दो भङ्गभयादिह तदनुक्तिः ॥
३ मध्यमाङ्गुलेर्मध्यपर्वणि।

मालां स्वहृदयासन्नां धृत्वा दक्षिणपाणिना ॥ मालामन्त्रस्तु ह्रीं सिद्ध्यै नमः सम्प्रार्थयेदिति ॥ ४७६ ॥ त्वं माले सर्वदेवानां प्रीतिदा शुभदा भव ॥ शिवं कुरुष्व मे भद्रे यशो वीर्यं च वर्धय ॥ ४७७ ॥ इह प्रार्थनपूजायां प्रोक्तोयं मालिकामनुः ॥ पञ्चाक्षरस्ततो देवं स्वेष्टं सम्प्रार्थयेदिति ॥४७८॥ गुह्यातिगुह्यगोप्ता त्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम् ॥ सिद्धिर्भवतु मे देव त्वत्प्रसादा- ज्जगत्पते ॥ ४७९ ॥ मूलमन्त्रं समुच्चार्य देवहस्ते निवेदयेत् ॥ तं जपं चार्घ्यतोयेन मध्याह्नसमये त्विदम् ॥ ४८० ॥ तदर्थं पूर्ववत्स्नात्वा विशेषेण विधानवित् ॥ न्यासावसानमखिलं कर्म्म कुर्य्यात्पुरोदितम् ॥ ४८१ ॥ पूजाग्निहोमपर्य्यन्तं ततश्च जपमारभेत् ॥ यावद्दिनावसानं तु भूयः स्नात्वा ततो द्विजः ॥ ४८२ ॥ उपास्य पूर्ववत्सन्ध्यां देवं सम्पूजये- त्पुनः ॥ विसृज्य भोजनं कुर्य्यात्सततं तारकोदये ॥ ४८३ ॥ सत्कन्द- फलमूलाशी सद्भिक्षाशी हविष्यभुक् ॥ पयोव्रती भवेच्छ्रेष्ठस्तेषां लक्षणमुच्यते ॥४८४॥ आयुष्करं पद्ममूलं पिण्डारककसेरुकम् ॥ रक्तहस्तशिंखमधुशालुकं श्रेष्ठमुच्यते॥४८५॥द्राक्षाम्रजम्बूपनसं कपित्थं खर्ज्जूरिकादाडिमनारिकेरम्॥ परूषकं क्षीरिणिकाकदल्योः फलं तु धात्र्याश्च भवेत्पवित्रम् ॥ ४८६ ॥ पत्रमूलं त्वचामूलं विमूलं पंचमी जटी ॥ अकवाकुः कुवाकुश्च मूले पावि- त्र्यकारकम् ॥ ४८७ ॥ वैदिकाचारयुक्तानां शुचीनां श्रीमतां सताम् ॥ सत्कुलस्थानजातानां भिक्षाशी चाग्रजन्मनाम् ॥ ४८८ ॥ चरुमूलफलक्षीर- दधिभिक्षान्नसक्तवः ॥ एतत्सप्तविधं भिक्षालब्धं भक्ष्यं व्रतास्थितैः ॥ ४८९ ॥ हविष्याणि तु पंचाशच्छ्रेताः स्विन्ना हिमोद्भवाः ॥ तण्डुलाः षष्टिनीवारशालि- जास्त्रिविधा मताः ॥ ४९० ॥ मुद्गा यवास्तिलाः कृष्णाः कुल्माषास्त्रिपुटा अपि ॥ कङ्गवश्च मकुष्ठाश्च यावन्नालकणशिका ॥ ४९१ ॥ कालकंशो ववास्तूकं करम्बुर्हिलमोचिका ॥ चक्रवती चक्रमर्दः पलङ्कः शतपुष्पिका ॥ ॥ ४९२ ॥ मूलं हेमन्तजं श्वेतं राजिकां माषजं तिलम् ॥ मृणालमुसली वोण्टा शतमूली विदारिका ॥ ४९३ ॥ सर्वे पिण्डालवश्चैव पद्मो वारवु षा- तथा ॥ आयुष्करः कञ्च्युकश्च शृङ्गाटककसेरुकौ ॥ ४९४ ॥ सामुद्रं

सैन्धवं चैव दध्याज्यं गोजमाहिषम् ॥ दुग्धं ससारं मधुरं पयोन्यत्त्वल्पवीज-
कम् ॥४९५॥पनसाम्रामलं चिंचा विफाणितगुडैक्षवम् ॥ हविष्यं भेषजं सर्वं
हित्वा मीनान्सुरां पलम्॥४९६॥श्रेष्ठं गवां दुग्धमुक्तं मध्यमं सुरभीभवम् ॥
अधमं माहिषं चान्यद्व्रतस्थानां निषिध्यते ॥४९७॥ त्यजन्निषिद्धमन्नाद्यं मध्यो
सौ शास्त्रतश्च यः ॥ निषिद्धं देशकुलतः प्रशस्तं सोत्तमः स्मृतः॥४९८॥निषि-
द्धान्यथ कथ्यन्ते सप्तविंशामितानि तु ॥ श्वेतमुद्गा मसूराश्च कोद्रवाश्चणकास्त्रिधा
॥ ४९९॥ माषाश्च भूमिलवणं यत्र जातं रसान्तरम् ॥ क्षौद्रं क्षारं पलाण्डुश्च
गृञ्जनं काचभोजनम् ॥ ५०० ॥ मांसं च स्विन्नलवणं रामठं चैव नाल-
कम् ॥ अन्नं पर्य्युषितं तैलं ताम्बूलं क्षुद्रधान्यकम् ॥ ५०१ ॥ पटोलं चापि
वृन्ताकं मूलकं च कलिङ्गकम् ॥ दग्धान्नं च द्विपक्वं च गुडान्नं तालजं फलम् ॥
॥ ५०२ ॥ देवा विशेषं शृण्वन्तु वर्णाश्रमविभेदतः ॥ तिलतैलं मन्त्रपूतं
पावनं देवदुर्ल्लभम् ॥५०३॥ मर्दयित्वा गृहस्थेन स्नानं कार्य्यं तु सर्वदा ॥
द्विजैस्तु भोजनं कार्य्यमुपस्तीर्य्याविधार्य्य च ॥ ५०४ ॥ पावयेद्वैदिकैर्मन्त्रैः
प्रोक्षणादिककर्म्मणा ॥ पुनर्मूलेन सम्मन्त्र्य भुञ्जीयाद्धृदयाणुना ॥
॥ ५०५ ॥ मूलाभिमन्त्रितं तोयं भोजने तृषि सम्पिबेत् ॥ पलाशपत्रे
भुञ्जीत त्वन्यत्पत्रं विवर्जितम् ॥ ५०६ ॥ तदभावे कदल्यां वा मधूके
सर्ज्जेकेपि च ॥ भुक्त्वा शयीत शयने सुशुद्धे वसुधातले ॥ ५०७ ॥ अहता-
स्तरणास्तीर्णे सन्दर्भेणायने शुचौ ॥ मन्त्रिते मूलमन्त्रेण जितक्रोधो जितेन्द्रियः
॥ ५०८ ॥ अभीष्टदेवतां ध्यायन्प्राक्शिरस्को निशि स्वपेत् ॥ अर्धरात्रे
समुत्थाय पादशौचं विधाय च ॥५०९॥ आचम्य देवं सम्पूज्य शीघ्रं संस्पृश्य
पूर्ववत् ॥ जपं कुर्य्याद्यथाशक्ति त्वर्पयेच्च तथेश्वरे॥५१०॥स्वपेत्ततस्तु यो दृष्टः
स्वप्नं तं गुरवे वदेत् ॥ जपश्चायं वनस्थानां प्रोक्तो वै ब्रह्मवादिनाम् ॥५११॥
देशाद्युपद्रवत्रासात्स्वैरं यावत्समापनम् ॥ कर्त्तव्यं चेदयं कालः प्रोक्तो-
त्यावश्यकेपि च ॥ ५१२ ॥ आमध्याह्नं जपः श्रेष्ठो मध्यमप्रहरत्रयम् ॥
सार्धयामत्रयं हीनोऽवश्यके प्रोक्तलक्षणः ॥ ५१३ ॥ पञ्चधा तु विधिः
प्रोक्तो जपसम्पूर्णकारकः ॥ आद्यः कल्पः प्रतिदिनमामध्याह्नं जपं चरेत् ॥

॥ ५१४ ॥ तद्दशांशेन कल्पोक्तद्रव्यैर्होमं प्रकल्पयेत् ॥ तर्प्पणं मार्जनं कृत्वा तथा ब्राह्मणभोजनम् ॥ ५१५ ॥ तस्य दशांशतश्चायं प्रथमः कल्प ईरितः ॥ अयं द्वितीयः कल्पस्तु लक्षमेकं जपं चरेत् ॥ ५१६ ॥ होमादिकं तस्य कृत्वाग्निमलक्षं समारभेत् ॥ अयं तृतीयः कल्पस्तु सम्पूर्णं जपमाचरेत् ॥ ५१७ ॥ पूर्णे होमे तर्प्पणादि पूर्वमेवाचरेदिति ॥ चतुर्थस्तु तथा कल्पो दरिद्रैर्द्विगुणो जपः ॥ ५१८ ॥ होमाद्यभावे कर्त्तव्यस्त्र्यादिनिम्नो नृपादिकैः ॥ पञ्चमस्तु तथा कल्पो यस्य देवस्य यत्प्रियम् ॥ ५१९ ॥ तदेव द्विगुणं कार्य्यं शीघ्रं दैवततुष्टये ॥ जपप्रियास्सर्वदेव्यो वाममार्गे बलिप्रियाः ॥ ५२० ॥ होमप्रियो महादेवो भास्करस्तर्प्पणप्रियः ॥ मार्ज्जनं तु गणेशस्य विष्णोर्ब्राह्मणभोजनम् ॥ ५२१ ॥ प्रायश्चित्तं तु न कृतं तदा शुद्धो भवेद् द्विजः ॥ पुरश्चर्य्याचतुष्केण त्रिद्व्याद्यैः क्षत्रियादयः ॥ ५२२ ॥ अथवान्यप्रकारेण पुरश्चरणमुच्यते ॥ गृहणेऽर्कस्य चेन्दोर्वा शुचिः पूर्वमुपोषितः ॥ ५२३ ॥ नद्यां समुद्रगामिन्यां नाभिमात्रे जले स्थितः ॥ स्पर्शादिमुक्तिपर्य्यन्तं जपेन्मंत्रं समाहितः ॥ ५२४ ॥ तावत्कालं जपेदित्थं ततो होमादिकं चरेत् ॥ ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चात्पुरश्चर्य्यासमन्त्विदम् ॥ ५२५ ॥ प्रायश्चित्तं प्रयोगस्य प्रत्यवायस्य नाशनम् ॥ येषां जपे च होमेच सङ्ख्या तन्त्रेषु नोदिता ॥ ॥ ५२६ ॥ तत्र चेयं पुरश्चर्य्या सर्वतन्त्रेषु गोपिता ॥ वाममार्गीय मन्त्राणामेवमेवान्यदुच्यते ॥ ५२७ ॥ कृष्णाष्टमीं समारभ्य यावत्कृष्णचतुर्दशी ॥ देवं ध्यात्वा जपेन्मन्त्रमयुतानां चतुष्टयम् ॥ ५२८ ॥ दशांशं होमयेत्पश्चात्तर्प्पयेदभिषेचयेत् ॥ असिद्धत्वाद्गुरोर्देवाः शिष्यसिद्धिर्न जायते ॥ ५२९ ॥ तदोपायं प्रकुर्य्याद्यत्तद्गोप्यमधुनोच्यते ॥ अनुलोमविलोमेन बिन्दुमन्मातृकाक्षरैः ॥ ५३० ॥ जपेत्सम्पुटितं मन्त्रं प्रत्यहं शतसंख्यया ॥ एकमासं ततो होमादिकात्सिद्धो भवेन्मनुः ॥ ५३१ ॥ पुरश्चर्य्योक्तमखिलमाह्निकं च समाचरेत् ॥ एवं वैदिकमन्त्रस्य सिद्धयेत्र च सस्वराः ॥ ५३२ ॥ वर्णा देया बिन्दुयुक्ताः क्रमतश्चोत्क्रमेण च ॥ ह्रस्वदीर्घप्लुतैर्भेदैरइउऋ त्रिधा मताः

१ कार्य इति शेषः ॥

॥ ५३३ ॥ ह्रस्वः प्लुतो लृद्विविध एचापि द्विविधो मतः ॥ दीर्घप्लुतविभेदेन ह्यनुस्वारविसर्गकैः ॥ ५३४ ॥ चतुर्विंशतिराख्याताः स्वरा एवं ञमैः स ह ॥ चत्वारः कादिका वर्णा जिह्वामूलीययुक्च कः ॥ ५३५ ॥ एवं कवर्गो दशधा चाद्याः पञ्चदश स्मृताः ॥ उपध्मानीयसंयुक्तः पकारस्तेन तत्र षट् ॥ ५३६ ॥ याद्यष्टावपि सम्प्रोक्ता यज्ञे वेदे तु मातृकाः ॥ ळक्षौ द्वावधिकौ ऋक्षु[1] क्षोधिकोऽथर्वणि[2] स्मृतः ॥ ५३७ ॥ जपश्चाष्टोत्तरशतं प्रत्यहं मासमात्रकम् ॥ अनध्यायान्वर्जयित्वा चत्वारिंशद्दिनं तथा ॥ ५३८ ॥ होमादिसकलं प्राप्य नित्यमेव प्रकल्पयेत् ॥ क्षुद्रदैवतमन्त्रं तु भूतलिप्या पुटीकुरु ॥ ५३९ ॥ क्रमोत्क्रमाच्छतावृत्तिं कुर्य्यात्सिद्धिस्तु मासतः ॥ अचो[3] हयवरला आद्यन्तिमद्विचतुर्थकम् ॥ ५४० ॥ तृतीयं च क्रमेणैव वर्गाणामक्षरं पठेत् ॥ ऊष्मत्रयं ततश्चैवं द्विचत्वारिंशदक्षरैः ॥ ५४१ ॥ इत्युग्रदैवते जाप्य स्त्वष्टोत्तरसहस्रकः ॥ त्रिकालं गन्धपुष्पाद्यैर्निशीथे परतः पुनः ॥ ५४२ ॥ षण्मासं कौलिकाद्यैश्चेदार्चिता सुप्रसीदति ॥ अयोग्यैर्गुरुतो लब्धाचार्य्यादिस्थानमाश्रितैः ॥५४३॥ उद्दशाद्वा पुरश्चर्य्या कर्त्तव्येत्युच्यते न हि ॥ राज्ञां भाग्यवतो वापि सुकुमारस्य वा यथा ॥ ५४४ ॥ सिद्धिर्भवेत्तथा वक्ष्ये वर्णौषधिपुरस्क्रियाम् ॥ सप्तधा सा परिज्ञेया वर्णमासैस्तु सिद्धिदा ॥ ५४५॥ मन्त्रवर्णौषधीकाष्ठैरचयेद्गुटिकाः शुभाः ॥ वर्णक्रमेण ताः प्रोक्ता अनुलोमविलोमतः ॥ ५४६ ॥ मूलादिभ्यश्च बहुशः कर्त्तव्या मणयो यथा ॥ सर्प्पद्वयाकृतिर्माला भवेन्नित्यं ततो जपेत् ॥ ५४७ ॥ मालाया मणिसङ्ख्याकः प्रथमोयं जपः स्मृतः ॥ सर्वे समाना मणयः प्रोतव्याः सार्णसूत्रकैः ॥ ॥ ५४८ ॥ कण्ठे धार्य्या कण्ठमाला नित्यमेष द्वितीयकः ॥ तथैव राजते सूत्रे ये ह्यताः पारिपूजयेत् ॥ ५४९॥ तद्देवकल्पमार्गेण प्रक्रमोयं तृतीयकः ॥ वर्णौषधीनां क्वाथेन नित्यं स्नानं चतुर्थकः ॥ ५५० ॥ वर्णौषधिजलादिभ्यो गोघृतेन तु पञ्चमः ॥ तच्चूर्णो द्वर्त्तनंकुर्य्यादेष षष्ठः प्रकीर्तितः ॥ ५५१ ॥

---

१ ऋग्वेदेषु । २ अथर्वणि । ३ अं इं उं ऋं लृं एं ऐं ओं औं हं यं वं रं लं कं ङं खं घं गं चं ञं छं झं जं टं णं ठं ढं डं तं नं थं धं दं पं मं फं भं बं शं षं सं ।

तद्भस्मधारणं नित्यं कुर्य्यादिति तु सत्तमः ॥ अलब्देपाङ्कुरोद्वेषात्स्त्रीद्वेषाच्चेन्न[1] जायते ॥ ५५२ ॥ शापतो वा कीलितत्वात्तत्रोपायाष्टकं भवेत् ॥ सन्तापाप्यायने द्रावो बोधनं च वशीकृतिः ॥ ५५३ ॥ पीडनं पोषशोषौ च दहनं तत्क्रियोच्यते ॥ भूर्ज्जपत्रं समानीय पद्ममष्टदलं लिखेत् ॥ ५५४ ॥ अष्टगन्धेन देवस्य रोचनाचन्दनेन वा ॥ साधकस्य तु नामार्णैर्मन्त्रं सन्दर्भितं लिखेत् ॥ ५५५ ॥ यावद्द्वयोः समाप्तिः स्यात्तस्य चाद्यन्तयोर्लिखेत् ॥ तारादिकं साधकस्य नामाथाष्टदलेषु च ॥ ५५६ ॥ द्वौद्वौ लेख्यौ स्वरौ तत्र सम्यग्ध्यायन्[2]सुधात्मकम् ॥ तत्संवेष्ट्य मृदा सम्यग्वेष्टयेद्ब्राह्मणादिकः ॥ ॥ ५५७ ॥ शुक्लादिवर्णया पश्चात्सद्वस्त्रेण च वेष्टयेत् ॥ क्षिपेत्त्रिमधुरे तत्तु मृण्मये लघुभाजने ॥ ५५८ ॥ क्षीरपूर्णे नवे कुम्भे तत्क्षिपेल्लघुभाजनम् ॥ अग्निसंस्थापनं कृत्वा सन्निधौ तस्य तं घटम् ॥ ५५९ ॥ संस्थापयेत्त्रिमधुरै-र्मूलमन्त्रेण होमयेत् ॥ अष्टाधिकसहस्रं तु सम्यक्तं कलशं क्षिपेत् ॥ ॥ ५६० ॥ होमं समाप्य तं कुम्भं निःक्षिप्य च जलाशये ॥ स्वगुरुं ब्राह्मणांश्चान्नैस्तोषयेद्दक्षिणादिभिः ॥ ५६१ ॥ सन्तापाप्यायनं चैतदुक्तं सिद्धिर्न चेद्भवेत् ॥ द्रावणं तु तदा कुर्य्यात्तत्प्रकार इहोच्यते ॥ ५६२ ॥ वंबीजेन ग्रन्थयित्वा भूर्जपत्रे लिखेन्मनुम् ॥ उशीररोचनाभ्याञ्च शिलाकर्पूरकुंकुमैः ॥ ५६३ ॥ क्षीराज्यमधुतोयानां मध्ये तं लिखितं क्षिपेत् ॥ पूजनाच्च जपाद्धोमाद्द्रावितः फलदो भवेत् ॥ ५६४ ॥ द्रावितोपि न सिद्धश्चेद्बोधनं तस्य कारयेत् ॥ वाग्भवेन[3] च बीजेन सम्पुटीकृत्य तं जपेत् ॥ ५६५ ॥ एवं बुद्धो भवेत्सिद्धो नोचेत्कुर्य्याद्वशीकृतिम् ॥ कुचन्दनं महादारु हरिद्रा च मनःशिला ॥ ५६६ ॥ एतैस्तु लिखितो मन्त्रो भूर्जपत्रे सुशोभने ॥ कण्ठे धृतो भवेद्वश्यो नो चेत्कुर्य्यात्प्रपीडनम् ॥ ५६७ ॥ अनुदात्तस्वरेणाद्यमुदात्तेन द्वितीयकम् ॥ तृतीयमनुदात्तेन पठेत्तुर्य्यमुदात्ततः ॥ ॥ ५६८ ॥ एवं पदानि सर्वाणि पठेन्मन्त्रस्य साधकः ॥ अनुदात्तपदोच्चारे देवं ध्यायेदधःस्थितम् ॥ ५६९ ॥ ऊर्ध्वंस्थितमुदात्तस्योच्चारेष्टाधिसहस्रकम् ॥ जपे

१ सिद्धिरिति शेषः । २ वंबीजम् । ३ ऐँबीजेन ।

न्मन्त्रं ततो भूर्ज्जे भानुदुग्धेन लेखयेत् ॥ ५७० ॥ मन्त्रं तमाक्रमेद्वामपादेनाथ च होमयेत् ॥ अष्टोत्तरशतं मन्त्रः पीडितः स प्रसीदति ॥ ५७१ ॥ न सिद्धश्चेत्तदा पोष्यः प्रोच्यते तत्क्रियाधुना ॥ सोम्बीजपुटितं मन्त्रं लिखेद्भूर्ज्जस्य पत्रके ॥ ५७२ ॥ रोचनाकुंकुमाभ्याञ्च धारयेद्दधिदुग्धयोः ॥ इदं पोषणमित्युक्तमथ शोषणमुच्यते ॥ ५७३ ॥ यज्ञस्य भस्मनालेख्य वायुबीजविदर्भितम् ॥ भूर्ज्जपत्रे स्वेष्टमन्त्रं तत्कण्ठे धारयेदिति ॥ ५७४ ॥ एतच्छोषणमित्युक्तं दहनं प्रोच्यतेऽधुना ॥ पृथक्पृथक्च मन्त्राणां चतुर्दिक्षु समावृतान् ॥ ५७५ ॥ रंबीजेन पलाशस्य बीजतैलेन संलिखेत् ॥ भूर्ज्जपत्रेथ तद्धार्य्यं कण्ठे दाहक्रिया त्वियम् ॥ ५७६ ॥ अथ शाबरमन्त्राणां पुरश्चरणमुच्यते ॥ कामरूपाख्यदेशे तु कामाक्षा यत्र देवता ॥ ५७७ ॥ कामशैलोऽस्ति यत्रासौ कामपीठस्स उच्यते ॥ तत्र संलेख्य मन्त्रं हि वंशोपरि यथाक्रमम् ॥ ५७८ ॥ गुरुणा वाचनीयः स स्वयं पश्चात्पठेन्मनुम् ॥ गुरोरभावे तस्यैव मूले शैलस्य पर्वणि ॥ ५७९ ॥लिखित्वा प्रपठेन्मन्त्रं कामपीठं गुरुर्मतः ॥ अथ वा योगिनीशैले दक्षिणस्यां दिशि ध्रुवम् ॥ ५८० ॥ योगाम्बा यत्र देवी सा लिखित्वात्र पठेन्मनुम् ॥ ज्वालामुखीसमीपे वा हिंगुलाजसमीपतः ॥ ५८१ ॥ लिखित्वा प्रपठेन्मन्त्रं नान्यथैव प्रसिद्ध्यति ॥ मुख्यतः श्रीसमीपे तु कामपीठे मनोर्ग्रहः ॥ ५८२ ॥ अथवा सर्वदेशेषु मन्त्रग्रहणमुच्यते ॥ तालपत्रे लिखेन्मन्त्रं पूर्णकुम्भे निधापयेत् ॥ ५८३॥ भास्करन्तु गुरुन्ध्यात्वा वाचयेन्निर्गुरू रविः ॥ अथ तान्त्रिकमन्त्राणां दीक्षां शृणु गुरुं विना॥५८४॥ शुक्लपक्षे त्रयोदश्यां चन्द्रताराबलान्विते ॥ गत्वा च दाक्षिणामूर्त्तेः सन्निधौ पूजयेच्च तम् ॥ ५८५ ॥ कलशस्थापनं कृत्वा तदग्रे तु परिक्षिपेत् ॥ तालपत्रे लिखित्वाथ मन्त्रं देवं च पूजयेत् ॥ ५८६ ॥ देवो गुरुरिति ध्यात्वा मन्त्रं व्यक्तं तु वाचयेत् ॥ अष्टोत्तरशतं चैव मन्त्रग्रहणमुच्यते ॥ ५८७ ॥ एतत्तत्वं समाख्यातं गोप्यं मातरि जारवत् ॥ गुरौ लोभादयो दोषास्तस्मादुद्विजते जनः॥अतः शास्त्रं गुरुं कृत्वा दक्षिणामूर्तितो मनुः ॥ ५८८ ॥ एवं सिद्धे मनौ देवि मोक्षमार्गनिबन्धकाः ॥ तपःक्षयकरा-

श्चैव जायन्ते नैकसिद्धयः ॥ ५८९ ॥ स्वल्पसिद्धौ निमग्नश्चेन्न जायन्ते णिमादयः ॥ अणिमादिषु मग्नश्चेन्मोक्षवार्तातिदुर्लभा ॥ ५९० ॥ अल्पं तपः क्षणान्नश्येन्मध्यमं चापि गर्वतः ॥ सिद्धिद्वारमिदं तस्य मया लक्षणमुच्यते ॥ ५९१ ॥ स्वप्ने वाक्षिसमक्षं वा आश्चर्य्यमतिहर्षदम् ॥ अकास्माद्यदि जायेत न ख्यातव्यं गुरुं विना ॥ ५९२ ॥ प्रकाशनीयं न क्वापि ऐहिकीं सिद्धिमिच्छता ॥ प्रकाशयति यो मोहादौत्सुक्यान्मन्त्रजं सुखम् ॥ निकटस्थाश्च तास्तस्य सिद्धयो यान्ति दूरतः ॥ ५९३ ॥ आभवन्ति च दुःखानि शोकाश्च विविधा अपि ॥ अल्पाशनं स्वल्पनिद्रा सदा चित्तप्रसन्नता ॥ ५९४ ॥ प्रकाशयुक्शरीरं च वाक्यं सत्यं प्रजायते ॥ मन्त्राराधनशक्तस्य प्रथमं वत्सरत्रयम् ॥ ५९५ ॥ जायन्ते बहवो विघ्ना नियमत्यागहेतवः ॥ नोद्विग्नं साधको याति कर्म्मणा मनसा यदि ॥ ५९६ ॥ततो वर्षत्रयादूर्ध्वं राजानश्च महीभृतः ॥ प्रार्थयन्तेनुरोधेन गर्विता अपि मानिनः ॥ ५९७ ॥ प्रसादः क्रियतां नाथ ममोद्धरणकारणम् ॥ प्रज्वलन्तं प्रपश्यन्ति तेजसा विभवेन च ॥ ५९८ ॥ अतस्ते मुनिशार्दूलं विस्तरं वक्तुमक्षमाः ॥ नवमाद्वत्सरादूर्ध्वं स्वयं सिद्ध्यति मन्त्रराट् ॥ ५९९ ॥ वाङ्मनोरथसंसिद्धो दाता भोक्ता ह्ययाचकः ॥ अथ वक्ष्ये दरिद्रस्य मन्त्रसिद्धिर्यथा भवेत ॥ ६०० ॥ होमकर्म्मण्यशक्तस्य विप्रस्य द्विगुणो जपः ॥ इतरेषान्तु वर्णानां त्रिगुणादिर्विधीयते ॥ ६०१ ॥ होमाद्द्विगुणजाप्येन सम्पूर्णं तर्प्पणं भवेत् ॥ अकृते मार्ज्जने प्रोक्तस्तर्प्पणाद्द्विगुणो जपः ॥ ६०२ ॥ प्रत्याम्नायो ब्रह्मभोज्ये न कुत्रापि श्रुतौ श्रुतः ॥ सर्वथा भोजयेद्विप्रान्कृतसाङ्गत्वसिद्धये ॥ ६०३ ॥ विप्राराधनमात्रेण व्यङ्गं साङ्गं प्रजायते ॥ यानि यानि च कर्म्माणि हीयन्ते द्विजभोजनैः ॥ निरर्थकानि तानि स्युर्बीजान्यूषरगानि च॥ ६०४॥ गुरुं सन्तोषयेत्पश्चाद्गोहिरण्याम्बरादिभिः ॥ गुरौ तुष्टे हि सन्तुष्टो मन्त्रः सिद्ध्यति मन्त्रिणः॥ ६०५॥ यदृच्छया श्रुतो मन्त्रश्छद्मनापि बलेनवा॥ परेरितोवा गाथावा तज्जपो नैव चार्थकृत्॥ ६०६॥ पुस्तके लिखितान्मन्त्रानालोक्य प्रजपन्ति ये॥ ब्रह्महत्यासमं तेषां पातकं परिकीर्तितम्॥ ६०७॥

अनेककोटिं मन्त्राणां चिन्तयन्नाकुलः कविः ॥ मन्त्रो गुरुमुखात्प्राप्त एकः स्यात्सर्वसिद्धिदः ॥६०८॥ कुलप्राप्तः कुलाचारो मानितः सर्वसाधकैः ॥ सिद्धिलक्षणसम्पूर्णः प्राणिमात्रस्य यस्समः ॥ ६०९ ॥ मित्रं न शत्रवो यस्य सर्वमार्गप्रदर्शकः ॥ स एव तु गुरुः कार्य्यो नान्यो वामे कदाचन ॥६१०॥ इह लोके परत्रापि कौलः पतति चान्यथा ॥ सिद्धेरभावे दक्षे तु पापहानिः प्रजायते ॥६११॥ सेवनान्मचतुष्कस्य[1] वामे तु निरयः पुरः ॥ इत्थं प्रोक्ता पुरश्चर्य्या किमन्यच्छ्रोतुमिच्छथ ॥ ६१२ ॥

इति श्रीमहामायामहाकालानुमते मेरुतन्त्रे शिवप्रणीते पुरश्चर्य्याप्रकाशः षष्ठः॥६॥

---

श्रीदेव्युवाच ॥ अस्मिन्घोरे कलियुगे स्वल्पसिद्ध्यातिदर्पिताः ॥ भविष्यन्ति जनास्तेषां स्थिरा सिद्धिः कथं भवेत् ॥ १ ॥ अग्रे वंशादिवृद्धिश्च वंशे देवकृपा तथा ॥ मोक्षः कथं साधकस्य तथा वद कृपानिधे ॥ २ ॥ ईश्वर उवाच ॥ अहङ्कारपरित्यागात्काम्यकर्म्मविवर्ज्जनात् ॥ स्वधर्म्माचरणात्सर्वमनायासेन जायते ॥३॥ एतत्कर्त्तुमशक्तश्चेन्निषिद्धं तु परित्यजेत् ॥ विहितं कर्म्म कुर्वीत सिद्धिः स्यात्पुत्रपौत्रिकी ॥ ४ ॥ तत्रादौ कथयिष्यामि निषिद्धानि शृणु प्रिये ॥ देवस्थाने गुरुस्थाने श्मशाने च चतुष्पथे ॥ पादुकासनविण्मूत्रमैथुनादि विवर्ज्जयेत् ॥५॥ प्रमत्तामन्त्यजां कन्यां पुष्पितांपतितस्तनीम् ॥ विरूपां मुक्तकेशीं च कामार्त्तां च न निन्दयेत् ॥ ६ ॥ कन्यायोनिं पशुक्रीडां दिग्वस्त्रां प्रकटस्तनीम् ॥ नालोकयेत्परद्रव्यं परदारांश्च वर्ज्जयेत् ॥ ७ ॥ धान्यगोगुरुदेवाग्निकोशपुस्तकसम्मुखम् ॥ नैव प्रसारयेत्पादौ न चैतानि विलङ्घयेत् ॥ ८ ॥ आलस्यमदसम्मोहशापपैशुन्यविग्रहान्॥असूयामात्मसम्मानं परनिन्दां च वर्ज्जयेत् ॥९॥ लिङ्गिनं व्रतिनं विप्रं वेदवेदाङ्गसंहिताः ॥ पुराणागमशास्त्राणि मनसापि न दूषयेत् ॥ १० ॥ युगं मुसलमश्मानं दाम चुल्लीमुलूखलम्॥शूर्प्पं सम्मार्जनीं दण्डं ध्वजं वै तुर्य्यमायुधम्॥ ॥११॥ कलशं चामरं छत्रं दर्प्पणं भूषणं तथा ॥ भोगयोग्यानि चान्यानि

---

१ चतुर्मकारादिसेवनात् ॥

यागद्रव्याणि यानि च॥ १२॥ महास्थानेषु वस्तूनि यानि वा देवतालये॥ दिव्योक्तानि च वस्तूनि भूताविष्टानि यानि वै॥ लङ्घयेज्जातु नैतानि न चैतानि पदा स्पृशेत॥ १३॥ या गोष्ठी लोकविद्विष्टा या च स्वैरविसर्प्पिणी॥ परहिंसात्मिका या च न तामवतरेत्क्वचित् ॥ १४॥ प्रतिग्रहान्न गृह्णीयादात्मभोगविधित्सया॥ देवतातिथिपूजार्थं दानतोप्यर्ज्जयेद्धनम् ॥ १५ ॥ बिभीतककरञ्जार्कस्नुही-छायां न संश्रयेत् ॥ स्तम्भदीपमनुष्याणामन्येषां प्राणिनां तथा ॥ १६ ॥ नखाग्रकेशनिर्धूतस्नानवस्त्रपटोदकम्॥ एतत्स्पर्शं त्यजेद्दूरं खरश्वाजरजस्तथा॥ ॥ १७ ॥ लिङ्गस्थानं च निर्माल्यं नद्यां नैव च लङ्घयेत् ॥ नद्यां प्रवाहयेत्सर्वं दद्याद्वा शिवदीक्षिते ॥ १८ ॥ न लङ्घयेद्गुरोराज्ञामुत्तरं न वदेत्तथा॥ अप्रियं च तथा काले कामं क्रोधं विशेषतः॥ १९॥ नाप्रच्छन्नमुखो ब्रूयाद्गुरोरग्रे कदाचन ॥ अद्वैतं देवपूजां च गुरोरग्रे परित्यजेत् ॥ २० ॥ पादुकायोग-पट्टादिगुरुचिह्नानि साधकः ॥ न लङ्घयेत्स्पृशेन्नैव तत्समक्षं न धारयेत ॥ ॥ २१ ॥ पर्य्यङ्कशयनं तद्वत्तथा पादप्रसर्प्पणम् ॥ अङ्गभङ्गं च लीलां च न कुर्य्याद्गुरुसन्निधौ ॥२२॥ छायां न लङ्घयेत्तस्य गच्छेन्न पुरतो गुरोः ॥ न कुर्वीत गुरोरग्रे प्रभावं स्वस्य शिष्यकः ॥ २३ ॥ अहङ्कारं न कुर्वीत नोल्बणं धारयेद्वपुः ॥ प्रगुरोः सन्निधौ नैव स्वगुरुं प्रणमेद्बुधः ॥ २४ ॥ नमस्काराय चोद्युक्तं गुरुर्दृष्ट्वा निवारयेत् ॥ न नियोगं गुरोर्दद्यात्त्वमित्यादि न वा वदेत् ॥ २५ ॥ श्रीनाथदेवस्वामीति बोधने भाषणे वदेत् ॥ जातायामापदि क्वापि शपथं गुरुसञ्ज्ञितम् ॥२६॥ न कुर्य्याच्छिवसञ्ज्ञं वा प्रमादेन क्रियेत चेत् ॥ तदर्थं निर्वहेद्यत्नादन्ते पूजाजपाहुतीः ॥ २७ ॥ अनिर्वहंस्तु कार्य्यं तद्यदर्थं शपथः कृतः॥ प्रायश्चित्तं मनोः कुर्य्यान्मूलस्यैव सहस्रकम् ॥ ॥ २८ ॥ लोकोद्वेगकरी या च या च मर्मनिकृन्तिनी ॥ स्थित्युद्वेगकरी या च तां गिरं नैव भाषयेत् ॥ २९ ॥ अरण्यमुज्ज्वलमपि मनसापि समीप्सितम् ॥ लोकविद्वेषणं वेषं न गृह्णीयात्कदाचन ॥ ३० ॥ तन्त्रोक्ता-

---

यत्नत इति पाठान्तरम् ॥

न्यसमाचारानैहिकामुष्मिकांश्च तान् ॥ आचरन्नादराच्छान्तिं दीक्षितः सोधिगच्छति ॥ ३१ ॥ सामान्यसिद्धौ रक्षार्थं परेषां न कदाचन ॥ प्रयोक्तव्यः स्वस्य मन्त्रो महापद्यपि साधकैः ॥ ३२ ॥ गुरोरुद्भूतवाक्येन भयात्स्वार्थेन वा पुनः ॥ कृपया परया कुर्य्याद्दिनाथेषु दयां सदा ॥ ३३ ॥ यत्रयत्र पुरीष्वेव मात्सर्य्यं श्रूयते गुरोः ॥ तत्रत्र न वस्तव्यं प्रयायात्संस्मरन्हृदि ॥ ॥ ३४ ॥ विष्णोः शिवस्य शाक्तस्य वेदस्यार्कगणेशयोः ॥ भवान्या यत्र निन्दा तु तस्मिन्स्थाने न वै वसेत् ॥ ३५ ॥ कर्म्मणा मनसा वाचा नहीच्छेत्परदारकान् ॥ वक्तव्यं च वचः सत्यं सौशील्यं समतां धृतिम् ॥ ३६ ॥ शान्तिं दयामवस्थां च दिव्यां शान्तिं च सर्वदा ॥ गमनागमने कुर्य्यात्प्रणम्य गुरुपादुके ॥ ३७ ॥ पश्चात्पादेन निर्गच्छेत्प्रणम्य च गुरोर्गृहात् ॥ मलयुक्तादिरहितः केशश्मश्रुविलुञ्चनात् ॥ ३८ ॥ सोमसूर्य्योत्तरस्थां चगवाश्वत्थादिमध्यगाम् ॥ भावयेद्देवतां विष्णुं गुरुविप्रशरीरगाम् ॥ ३९ ॥ सेवेत मातापितरौ विष्णुं तद्वत्प्रियातिथिम् ॥ ज्ञेयो विश्वाश्रयो विष्णुरात्मा ज्ञेयश्च विष्णुवत् ॥ ४० ॥ स्वानुष्ठाने तु यत्कर्म्म सर्वं सर्वस्य गोपयेत् ॥ मन्त्रगुप्तिश्च कर्त्तव्या सततं मन्त्रसिद्धये ॥ ४१ ॥ गुरोर्नाम न गृह्णीयाद्देदावश्यके त्विति ॥ ॐश्रीपूर्वं गुरोर्नाम देवनाम तदुत्तरम् ॥ ४२ ॥ पादशब्दसमेतं तु कृत्वा मूर्ध्न्यञ्जलिं पुनः ॥ नमोऽन्तं च वदेन्नाम तिथ्यर्णं च हरेर्मम ॥ ४३ ॥ नित्यं नैमित्तिकं काम्यं सापेक्षं पूर्वपूर्वतः ॥ अन्यथा भजनं देवि करोत्यापत्परंपराम् ॥ ४४ ॥ प्रत्यहं क्रियते पूजा सा तु नित्या प्रकीर्त्तिता ॥ नैमित्तिकापि तत्संख्या पञ्चतुल्या परे दिने॥ ४५ ॥अभावेपि कदाचित्स्यान्नित्ये नैमित्तिका त्वियम् ॥ शुद्धा नैमित्तिका पूजा प्रोक्ता विंशतिभेदिका ॥ ४६ ॥ पर्वाणि च महायोगा व्यतीपातः सवैधृतिः ॥ मन्वादयो युगाद्याश्च यदङ्गं देवताभवम् ॥ ४७ ॥ पुष्यश्च रविवारश्च त्रिगुरूणां स्वकीयकम् ॥ जन्माहश्चापि दीक्षाया दिवसं नवरात्रकम् ॥ ४८ ॥ गन्डान्तान्यथ पूजाया आवश्यकदिनं शृणु ॥ विशेषेण कृता पूजा यस्मिन्भवति निष्कला ॥ ४९ ॥ दशिकागमने चैव वीरस्वजनदर्शने ॥ चन्द्रसूर्य्योपरागे च लाभे होमे महो-

त्सवे ॥ ५० ॥ पीठे पीठगमे पुण्ये तीर्थदैवतदर्शने ॥ रोगेष्वापत्सु दोषेषु दुस्सङ्गे दुर्निमित्तके ॥ ५१ ॥ यथा कालो यथा श्रद्धा यथा द्रव्यं यथोचितम् ॥ यथाबलं यथा देशस्तथा पूजां समाचरेत् ॥ ५२ ॥ नैमित्तिकार्चने कालाः प्रातर्मध्याह्नसम्भवाः ॥ प्रदोषे चापि विघ्नेशरविविष्ण्वीशशक्तयः ॥ ॥ ५३ ॥ दमनेन च यो देवं वर्षमध्ये न पूजयेत् ॥ तस्य वर्षकृतापूजाफलं गृह्णाति कामराट् ॥ ५४ ॥ चैत्रादयस्त्रयो मासाः प्रशस्ताः पूर्वपूर्वतः ॥ अष्टमी नवमी पौर्णमास्यमा च चतुर्दशी ॥ ५५ ॥ एतन्मध्ये तु कस्मिंश्चित्प्राग्दिने तु प्रदोषके॥ कृतनित्यक्रियश्शुद्धो युक्तः सामयिकैर्जनैः ॥५६॥ दमनस्य समीपन्तु गत्वासन उपाविशेत् ॥ प्राणायामत्रयं कृत्वा ऋष्यादीन्विन्यसेत्ततः ॥ ५७ ॥ कामभस्मसमुद्भूत रविपोष्य जलोद्भव ॥ ऋषिगन्धर्वदेवादिमोहनाय नमोस्तु ते ॥ ५८ ॥ सांवत्सरिकपूजायाः परिपूर्णत्वसिद्धये ॥ दमन त्वं समायाहि क्षमस्व च नमोस्तु ते ॥ ५९ ॥ शिवप्रसादसम्भूत ह्यत्र सन्निहितो भव॥शिवकार्य्यं समुत्थेय नेतव्योसि शिवाज्ञया॥६०॥ एवं दमनमामन्त्र्य कामदेवं तथा रतिम् ॥ प्रीतिं च पूजयेत्तत्र तत्तन्मन्त्रेण साधकः ॥ ६१ ॥ तारः क्लीं कामदेवाय नमश्चेति नवाक्षरः ॥ श्रींश्रींश्रींक्रोमिति प्रोच्य रत्यै हृच्चाष्टवर्णकः॥६२॥ रतिस्थाने प्रीतिपदादयमप्यष्टवर्णकः॥ ततः स्वगृहमागच्छेद्द्वितीये दिवसे पुनः ॥ ६३ ॥ कृतनित्यक्रियस्स्वेष्टैर्युक्तो दमनमाव्रजेत् ॥ उत्पाटयेच्छेदयेद्वा स्वमूलेनास्त्रमन्त्रतः ॥ ६४ ॥ गृहमानीय तोयेन मन्त्रेणानेन सेचयेत् ॥ ॐ अघोरे ऐं च ॐ च घोरे ह्रीमिति कीर्त्तयेत् ॥ ६५ ॥ घोरघोरतरे श्रीं च सर्वतः सर्वसर्वेभ्यः ॥ नमस्ते रुद्ररूपेभ्यो ह्रींश्रीमिति मनुः स्मृतः ॥ ६६ ॥ चतुस्त्रिंशदक्षरात्मा दमने तं निधापयेत् ॥ पूजास्थाने च पीठादौ नवांशांस्तस्य कारयेत् ॥ ६७ ॥ कृत्वा चाष्टदलं पद्मं तत्र भागान्प्रविन्यसेत् ॥ चन्दनागुरुकर्पूरचन्दनैर्लेपयेच्च तान् ॥ ६८ ॥ आनन्देशीबीजवर्णैर्बिन्दुपद्भिर्नमोन्तकैः ॥ पृथक्पूज्यं तु

---

१ ॐक्लींकामदेवाय नमः ॥ २ श्रीं श्रीं श्रीं क्रों रत्यै नमः ॥

तद्बीजं जपन्निह क्षमापयेत् ॥६९॥ पूजास्थाने प्रकुर्वीत सर्वतोभद्रमण्डलम् ॥ तस्याष्टदिक्षु संस्थाप्या घटाः स्वर्णादिनिर्मिताः ॥ ७० ॥ मध्ये वा कुम्भमेवैकमशक्तः स्थापयेत्ततः ॥ तत्र स्वासनपूजादियोगपीठान्तमर्चयेत् ॥ ॥ ७१ ॥ तस्य दक्षिणदिग्भागे सिन्दूरेणाष्टपत्रकम् ॥ पद्मं कुर्याद्वृत्तयुग्मवेष्टितं भूपुरेण च ॥ ७२ ॥ पञ्चवर्णरजोभिश्च कर्णिकायामशोककम् ॥ लिखित्वा प्रार्थयित्वा तं पूजयेच्चन्दनादिभिः ॥ ७३ ॥ अशोकाय नमस्तुभ्यं कामस्त्रीशोकनाशक ॥ शोकार्त्तिं हर मे नित्यमानन्दं जनयस्व मे ॥ ७४ ॥ तस्य दक्षिणतस्तादृङ्मण्डले पूजयेत्ततः ॥ वरखड्गधरं कालं पञ्चरङ्गैर्विचित्रितम् ॥ ७५ ॥ त्रुट्यादिप्रलयान्तो यः कालरूपो महाबलः ॥ कलयत्यपि विश्वं यस्तस्मै कालात्मने नमः ॥ ७६ ॥ अशोकस्य ततोधस्तात्त्रिकोणे मण्डल शुभे ॥ मण्डूकादिज्ञानात्मान्तां पीठपूजां समाचरेत् ॥ ७७ ॥ तद्बाह्येष्टदले प्रोक्तं शक्त्यष्टकसमर्चनम् ॥ सौभाग्यां च तथा हृद्यां वृषां चापि धृतिं रतिम् ॥ ७८ ॥ प्रीतिं वासन्तिकीं निर्वाणाख्यां मध्ये तु कामुकाम् ॥ आवाह्य कामदेवं च तद्गायत्र्या तदुत्तरम् ॥ ७९ ॥ कामदेवाय विद्महे पुष्पबाणाय धीमहि ॥ तन्नोनङ्गः प्रचोदयात् ॥ ८० ॥ कृत्वा प्राणप्रतिष्ठान्तं ततो मुद्राः प्रदर्शयेत् ॥ पाशांकुशधनुर्बाणाभिधा ध्यायेत्ततः परम् ॥ ८१ ॥ रक्ताम्बरं रक्तवर्णं रक्तगन्धानुलेपनम् ॥ रक्तमाल्यं च तरुणं वामदक्षिणयोर्युतम् ॥ ८२ ॥ रत्या प्रीत्येक्षुकोदण्डपुष्पबाणमधः करे ॥ ऊर्ध्वे पाशस्ततः पूज्यं पूर्वोक्तमनुभिस्त्रयम् ॥ ८३ ॥ रक्तवस्त्रपरीधाना सर्वाभरणभषिताम् ॥ पद्मद्वयकरां गौरवर्णां ध्यायेद्रतिं शुभाम् ॥ ८४ ॥ श्यामवर्णां रक्तवस्त्रां सर्वाभरणभूषिताम् ॥ ताम्बूलास्यां भजेत्प्रीतिं घटपुष्पलसत्कराम् ॥ ८५ ॥ अग्रे तु कामदेवस्य वसन्तं परिपूजयेत् ॥ सुधाकुम्भं वामहस्ते दक्षिणे कुसुमाकरम् ॥ ८६ ॥ कदम्बवनमध्यस्थं रक्तमाल्यांशुकावृतम् ॥ ध्यायेद्वसन्तं गौराङ्गं सुरूपं लोकमोहनम् ॥ ८७ ॥ वंवसन्ताय हृदयं तस्य सप्ताक्षरो मनुः ॥ पूजाद्यर्थं ततोग्नीशरक्षोवायव्यमध्यतः ॥ ८८ ॥ चतुर्दिक्षु वषड्दीर्घयुगनङ्गस्य बीजकम् ॥ पठित्वा हृदयादीनि षडङ्गानि प्रपूजयेत् ॥ ८९ ॥ तदग्राष्टदले

देवमुखतस्तु प्रदक्षिणम् ॥ कामं भस्मशरीरं चानङ्गमन्मथमेव च ॥ ९० ॥ वसन्तस्य सखायं च स्मरामीक्षुधनुर्धरम् ॥ पुष्पबाणं तदग्रे तु लोकपानायुधानि च ॥ ९१ ॥ ततस्तु कामगायत्र्या यथासंख्यं जपं चरेत् ॥ वसन्तं कामदेवं च श्लोकाभ्यां प्रार्थयेदिति ॥ ९२ ॥ वसन्ताय नमस्तुभ्यं वृक्षगुल्मलताप्रिय ॥ सहस्रसुखसंवाह कामरूप नमोस्तु ते ॥ ९३ ॥ नमोस्तु पुष्पबाणाय जगदानन्दकारिणे ॥ मन्मथाय जगन्नेत्रे रतिप्रीतिप्रियाय च ॥९४ ॥ कामदेवं प्रणम्याथ मूलन्यासं समाचरेत् ॥ अवाहयेन्मध्यकुम्भे देवं साङ्गं च पूजयेत् ॥ ९५ ॥ आवाहितोसि देवेश सद्यः काले मया विभो ॥ कर्त्तव्यं तु यथालाभं पूर्णं पर्व त्वदाज्ञया ॥ ९६ ॥ इति सावरणं देवं दमनैः पूजयेत्ततः ॥ धूपदीपादिकं कृत्वा नित्यहोमं समाचरेत् ॥ ९७ ॥ द्रव्यैस्तु देवकल्पोक्तैर्होमस्तु त्रिगुणो जपात् ॥ पूजाशेषं समाप्याथ प्रार्थयेद्देवतामिति ॥ ९८ ॥ सर्वरूप जगन्नाथ वाञ्छितार्थफलप्रद ॥ हृत्स्थान्पूरय मे देव कामान्कामेश्वरेश्वर ॥ ९९ ॥ एवं सम्प्रार्थ्य देवेशं विसृज्य च गुरुं ततः॥द्रव्याद्यैस्तोषयेद्विप्रान्भोजयेदिति तद्विधिः॥ १००॥ पवित्रनामनागाय वरो दत्तस्तु शम्भुना ॥ पवित्रारोपणं यैस्तु न कृतं तत्फलं तव॥ १०१॥कुर्य्यान्मिथुनसंक्रान्तेस्तुलासंक्रमणावधि ॥ आषाढ उत्तमो मासः श्रावणो मध्यमो भवेत् ॥ १०२ ॥ हीनो भाद्रपदः पक्षः श्वेतः सन्मध्यमोसितः॥ अष्टम्यां च चतुर्थ्यां च चतुर्दश्यां पवित्रकम् ॥ ॥ १०३॥नवम्यामपि कर्त्तव्यं कृतादिषु यथाक्रमम्॥सौवर्णं राजतं ताम्रं कलौ कार्पासकं शुभम् ॥ १०४॥ पट्टजं तु गृहस्थानां वनस्थानां तु वाल्कलम् ॥ पद्मजातं सौगतानां शूद्राणां क्षौममिष्यते ॥ १०५॥ बटूनां दर्भसञ्जातं वैश्यानां तु शणोद्भवम् ॥ मुञ्जजातं व्रतस्थानामाविकं समरैषिणाम् ॥ १०६॥ सरस्तु नवसूत्राणां त्वष्टोत्तरशतैः सरैः ॥ पवित्रं परमं प्रोक्तं तदर्धं मध्यमं स्मृतम् ॥ १०७ ॥ कनिष्ठं सप्तविंशत्या तावदंगुलदीर्घकम् ॥ पूजावरणदेवानां तुल्यानि रचयेद्बुधः ॥ १०८ ॥ षट्त्रिंशांगुलयः श्रेष्ठ चतुर्विंशच्च मध्यमे ॥ द्वादशैव कनिष्ठे स्युरथान्यच्च पवित्रकम् ॥ १०९ ॥ स्कन्धाच्च नाभिपर्य्यन्तं दशग्रन्थिसमन्वितम् ॥ क्रमज्ञानाञ्च शिष्याणां पवित्रं तदुदाहृतम् ॥ ११०॥

अन्येषां स्वेच्छया कुर्य्यात्तनुग्रन्थियुतानि च ॥ ग्रन्थीनां वेष्टनं श्रेष्ठं षड्विंशद्भिश्च तन्तुभिः ॥ १११ ॥ चतुर्विंशतिभिर्मध्यमधमं भानुभिः स्मृतम्॥ग्रन्थयो वर्म्ममन्त्रेण कर्त्तव्याः प्राग्दिने ततः ॥ ११२ ॥ रात्रौ सामयिकैः सार्धं पवित्राणि समानयेत् ॥ पूजास्थानेथ सिन्दूरकुंकुमारक्तचन्दनैः ॥ ११३ ॥ कस्तूरीविधुलाक्षाभिर्गैरिकाद्यैर्विचित्रयेत ॥ ग्रन्थिस्थानेषु संस्थाप्य पीठे तन्नवतन्तुषु ॥ ११४ ॥ देवतानवकम्पूज्यमोंकारश्चन्द्रमास्तथा ॥ वह्निर्ब्रह्मा नागगुरू रविश्चापि शिवाशिवौ ॥११५॥ सर्वे देवाश्चापि पूज्याः शिरोमन्त्रेण मन्त्रयेत् ॥ अभ्युक्षयेच्च हृन्मन्त्रेणास्त्रमन्त्रेण रोधयेत् ॥ ॥ ११६ ॥ तेषां दशग्रन्थिषु च सम्पूज्या दशशक्तयः ॥ क्रिया च पौरुषी वीरा गायत्री चापराजिता ॥ ११७ ॥ विजया च जया मुक्तिः सदाशिवमनोन्मनी ॥ पवित्रेषु ततः पूज्यं मूलमन्त्रैः षडङ्गकम् ॥ ११८ ॥ घटे च विन्यसेदाद्यं पवित्रं च महत्तथा ॥ कृत्वा न्यासादिकं तत्र प्राग्वत्पूजां प्रकल्पयेत् ॥ ११९ ॥ कुम्भे देवं समावाह्य यजेदावरणैः सह ॥ देवस्य मूलमन्त्रेण पवित्रस्य समर्पणम् ॥ १२० ॥ देवतेभ्यः पवित्राणि दीनानाथांश्च तर्पयेत् ॥ दत्त्वा च भूयसीं पश्चात्स्वयम्भुञ्जीत वाग्यतः ॥१२१॥ अतिस्पष्टोत्र सम्प्रोक्तः पवित्रारोपणे विधिः ॥ काम्यकर्म्माणि वक्ष्यामि तत्रादौ शान्तिरुच्यते ॥ १२२ ॥ शान्तिर्नाम मनुष्याणां रोगकृत्यादिनाशनम् ॥ विभज्य षोढाहोरात्रं पञ्चमेंशे तु शान्तिकम् ॥ १२३ ॥ हेमन्ते च प्रकर्त्तव्यं नासाधश्च यदा चलेत् ॥ वायुस्तदा त्वपस्तत्त्वं तस्मिञ्छान्तिकमाचरेत् ॥ १२४ ॥ श्वेतवर्णेन निर्माय चतुरस्रं तु मण्डलम्॥पूजयेच्चन्दनाद्यैर्वबीजेन शत्रुशान्तिके ॥१२५॥उत्तराभिमुखो भूत्वा शान्तिकन्तु समाचरेत्॥शान्तिकादौ रतिःपूज्या पद्ममुद्रां च दर्शयेत् ॥१२६॥बद्ध्वा पद्मासनं स्थेयं नमोन्तः शान्तिके मनुः ॥

१ द्वादशसंख्याभिः ॥ २ कर्पूरः ॥ ३ स्वाहेति मंत्रेण । ४ पद्ममुद्रा करतले त्वंगुष्ठौ मिलितौ यदा । हस्तौ तु सम्मुखौ कुर्य्यात्संहता उन्नतांगली: ॥ ५ पद्मासनलक्षणं प्रथममुक्तम् ॥ वामजानुनि दक्षिणपदं दक्षिणजानुनि वामपदं निदध्यादिति ॥

शान्तौ कुशांसनं शस्तं होमयेन्मृगमुद्रया ॥१२७॥ मुक्त्वा कनिष्ठिकां यत्र हूयते सा मृगी भवेत् ॥ त्रिपूत्तरासु पूर्वासु शान्तिकं स्याद्विजन्मसु ॥१२८॥ अथ वश्यं प्रवक्ष्यामि स्वायत्तीकरणं तु तत् ॥ देवरक्षोराजलोकसर्प्पस्त्री-हयहस्तिनाम् ॥१२९॥ प्रथमेंशे वश्यकर्म्म वसन्ते च प्रसिध्यति ॥ नासोर्ध्वे वहते वायुरग्नितत्त्वं वहेत्तदा ॥ १३० ॥ वश्यं कर्म्म त्रिकोणेन रंवीजेनाग्नि-पूजनम् ॥ रक्तवर्णेन निर्माय वश्यम्पूर्वमुखश्चरेत् ॥ १३१ ॥ वाणीं सम्पूज-येद्वश्ये पाशमुद्राम्प्रदर्शयेत् ॥ स्वस्तिकासनमारुह्य स्वाहान्तं मन्त्रमुच्चरेत् ॥ ॥ १३२ ॥ छागलं चर्म्म वश्ये स्याद्धोमयेन्मृगमुद्रया ॥ रक्तद्रव्यैरत्र होमो ध्यानमारक्तकं मतम् ॥१३३॥ मृगान्त्यचित्रामित्रर्क्षविशाखाकृत्तिकासु तु ॥ अथ स्तम्भम्प्रवक्ष्यामि तदुद्योगनिवारणम् ॥१३४॥ शिशिरे स्तम्भनम्प्रोक्तं षष्ठाङ्के तु दिनस्य तत् ॥ अम्भरपां च सैन्यस्य क्रुद्धस्य विषदं ...णः ॥ १३५॥ तर्प्पणार्थं मेषरक्तमिश्रितन्तोयपाश्वहेत् ॥ जानुभ्यामवनीं गत्वा स्तम्भनस्य क्रियां चरेत् ॥ १३६ ॥ जारबौद्धरुजां स्तम्भो धर्म्मः प्रेतादिरक्षसाम् ॥ नासादण्डेन संलग्नो वायुश्चेद्भूदयो भवेत् ॥१३७॥ स्तम्भकर्म्म तदा कुर्य्या-ल्लंबीजेन वसुन्धराम् ॥ अष्टकोणयुते पीते मण्डले तां समर्च्चयेत् ॥ १३८ ॥ प्राङ्मुखः स्तम्भनं कुर्य्याद्ब्रमान्तत्र प्रपूजयेत् ॥ विकटासनगो देव्यै गदामुद्रां प्रदर्शयेत् ॥ १३९ ॥ स्तम्भने वषडन्तश्च होमे मन्त्रः प्रकीर्तितः ॥ गज-चर्म्मासनं स्तम्भे गदामुद्राहुतौ तथा ॥ १४० ॥ पीतद्रव्यैश्चात्र होमः पीतवस्त्रादिधृक्स्वयम् ॥ स्तम्भने भरणी चित्रा रोहिणी चोत्तरात्रयम् ॥ ॥ १४१ ॥ अथ विद्वेषणं वक्ष्ये प्रीतिनाशस्तु तु द्वयोः ॥ ग्रीष्मे विद्वेषणं घस्रस्यांशके तु द्वितीयके ॥ १४२ ॥ नासायां मध्यगे वायौ खोदये द्वेषणं

---

१ शान्तिकर्मणि गोचर्मासनं ग्रन्थान्तराज्ज्ञेयम् । पुना रतिपूजनं तन्त्रविधेयम् । २ दिवस-प्रथमभागे ॥ ३ तर्जनीमध्यमे वामे मूर्द्धमुख्यौ विधाय च ॥ दक्षिणे द्वे अधो मुख्यौ सुमुख्यौ च परस्परम् ॥ पाशमुद्रा भवेदेषा मिथः सम्पीडने तयोः । ४ ग्रन्थान्तरे खड्गचर्म ॥ ५ जानुजङ्घा-न्तराले च भुजयुग्मं प्रकल्पयेत् । विकटासनमेतत्स्यान्मुनिभिः परिभाषितम् ॥ ६ गदा तु सरलौ हस्तौ त्वन्योन्यग्रन्थितांगुली । अंगुष्ठौ मध्यमे भूयः संलग्ने सुप्रसारिते ॥ ७ आकाशतत्त्वोदये ॥

मतम् ॥ वर्त्तुले धूम्रवर्णे तु मण्डले खं समर्चयेत् ॥ १४३ ॥ हंबीजेनाथ विद्वेषं नैर्ऋत्याभिमुखश्चरेत् ॥ पूज्या धूमावती द्वेषे मुद्रा तु मुसला भवेत् ॥ ॥ १४४ ॥ होममन्त्रः फडन्तोत्र विशेत्कुक्कुटकासने ॥ विद्वेषे जाम्बुक-श्चर्म लोहासनमथापि वा ॥ १४५ ॥ धूम्रवर्णैश्च होतव्यं तादृग्वस्त्रादि साधकैः ॥ आर्द्राचतुष्टयं मूलं ज्येष्ठा विद्वेषणे मता ॥ १४६ ॥ उच्चाटन-मथो वक्ष्ये तदरीणां प्रवासनम् ॥ प्रावृडुच्चाटने शस्ता तृतीयांशे दिनस्य तत्॥ ॥ १४७ ॥ तिर्य्यग्गते समीरे तु वायुर्वहति तत्र तु ॥ शत्रोरुच्चाटनं कुर्य्याद्यं बीजेन तमर्चयेत् ॥१४८॥ षट्कोणं मण्डलं वायोः कृष्णं षड्बिन्दुलाञ्छि-तम् ॥ मृगचर्म्मादिकं तत्र वायव्यस्य च कर्म्मणि ॥ १४९ ॥ दुर्गां सम्पू-जयेन्मुद्रामेशानिन्तु प्रदर्शयेत् ॥ वज्रासनसमारूढः फडन्तश्चाहुतौ मनुः ॥ ॥ १५० ॥ धूम्रमुच्चाटने ध्यानं कृष्णद्रव्यैस्तथा हुनेत् ॥ उच्चाटनं तथा कर्म्म क्षिप्रभेषु प्रशस्यते ॥१५१॥ मारणं प्राणहरणं शत्रूणामीरितं तु तत् ॥ मारणे वर्ज्जयेद्विप्रानन्यांश्चापि सुधार्मिकान् ॥ १५२ ॥ स्त्रीबालव्यतिरि-क्तेषु राजवैरिषु योजयेत् ॥ स्वरोषतो वा लोकाना रक्षार्थं तु तदा हरेत् ॥ ॥ १५३ ॥ न तु लोभाद्भयान्मन्त्री कुर्य्याच्चैव तु मारणम् ॥ प्रायश्चित्तं च कर्तव्यं देवि तद्दोषशान्तये ॥ १५४ ॥ अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं जहुयात्तावदेव हि ॥ सघृतैः पायसैः कृष्णतिलैर्वा घृतसंयुतैः ॥ १५५ ॥ आत्मरक्षा प्रक-र्तव्या कर्म्मकाले सदा बुधैः ॥ अह्लश्चतुर्थः षष्ठोंशः शरन्मारणकर्म्मणि ॥ ॥ १५६ ॥ वश्यवन्मारणे कार्य्यं पूजाद्यं वह्निमण्डले ॥ दक्षिणाभि-मुखः कुर्य्याद्भद्रकालीं समर्चयेत् ॥ १५७ ॥ दर्शयेत्खड्गमुद्राञ्च

---

१ ज्येष्ठा देवी॥ २ मुसलाख्या भवेन्मुद्रा वामस्योपरि दक्षिणम् ।हस्तयोर्मुष्टियुगलं कुर्य्यात्सा विघ्नना-शिनी॥ ३ कृत्वोत्कटासनं पूर्वं समपादद्वयं ततः । अन्तर्जानुकरद्वन्द्वं कुक्कुटासनमीरितम्॥ ४ वायुतत्त्वम्॥ ५ कनिष्ठांगुष्ठयुङ्मुद्रा त्रिकोणा त्वशानिर्मिता । ६ ऊर्वोः पादौ क्रमान्न्यस्य जान्वोः प्रत्यङ्मुखांगुली । करौ निदध्यादाख्यातं वज्रासनमनुत्तमम् । ७ हस्ताश्विनीपुष्याभिजित्सु । ८ वेति शेषः । १०ऊर्ध्वस्य वामहस्तस्य तर्जन्याद्यंगुलित्रयम्।प्रसार्य्य योजयेदन्ये मिथोंगुष्ठकनिष्ठिके।खड्गमुद्रेयमुदिता सर्वशत्रुनिकृन्तनी ।

विशेद्भद्रासने[1] हुनेत॥हुंकारान्तेन मन्त्रेण माहिषं वाथ लोहजम्॥ १५८॥आसनं शूकरीमुद्रा करसङ्कोचतो भवेत् ॥ ध्यानं कुर्य्यात्कृष्णवर्णं कृष्णद्रव्यैश्च पूजनम् ॥ १५९ ॥ उग्रे[2]तीक्ष्णो[3]डुषु स्वस्य चन्द्रताराबलादिके ॥ शत्रोश्चैव बलाभावे चैकपादोपरि स्थितः ॥ १६० ॥ उष्णोदकं समरिचं तर्प्पणार्थन्तु मारणे ॥ तिष्ठन्कुर्य्यान्मारणं वा भूमौ पादं निवेशयेत् ॥ १६१ ॥ वामपादनिविष्टः स चरेत्तत्र तु तर्प्पणम् ॥ प्रकीर्णान्यथ वक्ष्यन्ते त्व-भिचाराश्च तत्र च ॥१६२॥ दक्षिणाभिमुखः कुर्य्यान्मेषीचर्म्मणि संस्थितः॥ लोहासनगतो वापि शूकर्य्या मुद्रया हुनेत् ॥ १६३ ॥ धनसिद्धिकरं कर्म्म पश्चिमाभिमुखश्चरेत्॥मृगान्त्यचित्रामैत्रेषु देवध्यानन्तु राजसम्॥ १६४॥ गोचर्म्मणासनं मोहे स्वाहान्तं मन्त्रमुच्चरेत् ॥ हरिद्रामिश्रितन्तोयं तर्प्पणाथ प्रयोजयेत् ॥ १६५ ॥ स्वाती च रोहिणी तत्र श्रेष्ठा चापि सुखासनम् ॥ अथ सर्वाणि कर्म्माणि रौद्रभे तु प्रसाधयेत् ॥ १६६ ॥ नानाविधेषु कार्येषु व्याघ्रचर्म्म समीरितम् ॥ सर्वरक्षमिभाकारं ध्यायेन्निश्चलमानसः ॥ १६७ ॥ पीयूषवर्षसंयुक्तं पूर्णचन्द्रसमप्रभम् ॥ ध्यायेदेवंविधं वापि सर्वकार्येषु साधकः ॥ १६८ ॥ आयुष्करस्तु श्रवणे ध्यायेद्देवं च राजसम् ॥ अपमृत्युजये प्रोक्तं पूर्वा चैवोत्तरात्रयम् ॥ १६९ ॥ वषडन्तो होममन्त्रो ध्यायेद्राजसदैवतम् ॥ आकर्षणं वह्निकोणसम्मुखस्तु समाचरेत् ॥ १७० ॥ वश्योक्तमखिलं ज्ञेयमा-कर्षे कार्य्यसिद्धये ॥ सर्वज्ञानप्रसिद्ध्यर्थमीशानाभिमुखो भवेत् ॥ १७१ ॥ सर्वविज्ञानकार्येषु श्वेतकम्बलमासनम् ॥ पुष्ट्यादिसाधने मन्त्रो वौषट्पल्लवसं-युतः ॥ १७२ ॥ हंसी स्यात्तर्जनीमुक्ता मुद्रा होमस्तु पौष्टिके ॥ यथोक्त-देवताध्यानं कुर्य्यात्पौष्टिककर्म्मणि ॥ १७३ ॥ सर्वत्र भयनाशाय वष-डन्तो हुतौ मनुः ॥ महासुखसमायुक्तध्यानं वै निर्भयम्भवेत् ॥ १७४ ॥

---

१ सीविन्याः पार्श्वयोर्न्यस्य गुल्फयुग्मं सुनिश्चलम् । वृषणाधः पादपार्ष्णी पाणिभ्यां परिबन्धयेत् । गुदलिंगयोर्मध्ये या नाडी सीविनीत्युच्यते तत्र गुल्फौ निधाय वृषणयोरधः प्रपदे कृत्वा हस्ताभ्यां प्रपद-बन्धनं भद्रासनम् । २ पूर्वाफाल्गुनीपूर्वाषाढापूर्वाभाद्रपदाभरणीमघा उग्राः । ३ आर्द्राश्लेषामूल-ज्येष्ठास्तीक्ष्णाः ।

मन्त्रभञ्जनकार्येषु वषडन्तो हुतौ मनुः ॥ खण्डने तु फडन्तः स्याद्धोमो ध्या-नन्तु तामसम् ॥ १७५ ॥ सौख्यायोदङ्मुखः कुर्याज्जपञ्च रुरुचर्मणि ॥ कल्पान्ताग्निसमं युद्धे ध्यायेद्देवं च तामसम् ॥ १७६ ॥ अथ वक्ष्यामि काम्यादौ सम्पूज्या याश्च देवताः ॥ नित्यं समर्चयेद्विघ्नं वारेशांश्च तिथीश्व-रम् ॥ १७७ ॥ नक्षत्रेशास्ततः पूज्यास्तत्तत्कर्म्माधिदेवताः ॥ ततोर्चयेदि ष्टदेवन्ततो होमं समाचरेत् ॥ १७८ ॥ क्रमाद्वारेश्वरौ सूर्यशिवौ सोमा-म्बिके तथा ॥ गुहाङ्गारौ ज्ञविष्णू च चतुर्वक्त्रबृहस्पती ॥ १७९ ॥ शु-क्रेन्द्रौ शनिकालौ च सूर्यादौ पूज्यदेवताः । प्रोक्ता वारेश्वरा देवि तिथी-शांस्त्वमथो शृणु ॥ १८० ॥ ब्रह्मा विधाता विष्णुश्च यमः शीतकरो गुहः ॥ इन्द्रश्च वसवो नागा धर्म्मः शिवदिवाकरौ ॥ १८१ ॥ कन्दर्पश्च कलिर्विश्वेदेवाश्च पितरस्तथा ॥ आश्विनेयौ यमो वह्निर्ब्रह्मा चन्द्रः शिवोऽ दितिः ॥ १८२ ॥ गुरुः सर्प्पाश्च पितरो भगोर्यमदिवाकरौ ॥ त्वष्टा वायु-रथेन्द्राग्नी मित्रश्चैव सुरेश्वरः ॥ १८३ ॥ निर्ऋतिश्च जलं विश्वेदेवाश्चापि विधिर्हरिः ॥ वसवो वरुणोऽजैकपादहिर्बुध्न्यपूषकौ ॥ १८४ ॥ नक्षत्रेशा इमे साभिजित्का अष्टौ च विंशतिः ॥ प्रणवादिचतुर्थ्यन्ता नमसा च सम-न्विताः ॥ १८५ ॥ एतेषां नाममन्त्रास्तु ग्राह्याः पूजादिसाधने ॥ १८६ ॥ सिद्धमन्त्रः प्रकुर्वीत काम्यकर्म्माणि नान्यथा ॥ कृतानि विपरीतानि कृत्वा निरयमाप्नुयात् ॥ १८७ ॥ गुरुभक्तः शुचिः स्नातः काम्यकर्म्मविधान-वित् ॥ आत्मनश्च परस्यापि काम्यकर्म्माणि चाचरेत् ॥ १८८ ॥ षट्-कर्म्माणि परार्थञ्च कुर्य्यान्मन्त्रविदुत्तमः ॥ एतेषामेव कुर्वीत नान्येषान्तु कदाचन ॥ १८९ ॥ राज्ञो वा राजपुत्रस्य धनाढ्यस्येतरस्य वा । आस्ति-कस्यापि भक्तस्य न्यायार्जितधनस्य च॥ १९० ॥कृतज्ञस्य वदान्यस्य गुरुदेवार्च-कस्य च॥सुशीलस्य सुभक्तस्य कार्य्यं कुर्य्याच्च देशिकः॥ १९१ ॥राजा कार यितान्यो वा प्रणिपत्य च साधकम् ॥ वृणुयात्कर्मकर्तारं दीक्षोक्तविधिना

---

१ ॐ ब्रह्मणे नमः ॐ विधात्रे नमः इत्यादि ।

ततः ॥ १९२ ॥ साधकः प्रयतो भूयाद्द्विजः सन्तोषवाञ्छुचिः ॥ जितेन्द्रियो जितक्रोधो मानक्षोभविवर्जितः ॥ १९३ ॥ नित्ये नैमित्तिके रक्तः कुर्य्यात्कामानने-कधा ॥ क्रूरकर्म्म यथोक्तन्तु कृत्वाभ्यङ्गं समाचरेत् ॥ १९४ ॥ स्नात्वा सावरणा साङ्गां पूजयेदिष्टदेवताम् ॥ अष्टोत्तरसहस्रञ्च रक्षार्थं प्रजपेन्मनुम् ॥ १९५ ॥ मां रक्षरक्षेत्युक्त्वा च नत्वा देवं समुत्सृजेत् ॥ अन्यैः सुहृद्भिः सुस्निग्धैरात्मरक्षान्तु कारयेत् ॥ १९६ ॥ मृत्युञ्जयादिभिर्मन्त्रैः सूर्य्यसेवार्घ्यदानकैः ॥ जपहो-मार्चनाद्यैश्च ब्राह्मणाराधनादिभिः ॥ १९७ ॥ प्रयोगकरणं सम्यग्गुरुतः शा-स्त्रतस्तथा ॥ ज्ञात्वा प्रयोगान्कुर्वीत ह्यन्यथा दुःखमाप्नुयात् ॥ १९८ ॥ ततः कारयिता राजा तोषयेत्साधकन्धनैः ॥ प्रणिपत्य मुहुश्चापि यथा स्यात्तु-ष्टिमांस्तथा ॥ १९९ ॥ सिद्धमन्त्रस्य सिद्ध्यन्ति षट् कर्म्माणि न संशयः ॥ नैव सिद्ध्यन्त्यसिद्धस्य देवताशापमाप्नुयात् ॥ २०० ॥ काम्यप्रयोगका-राणां परलोको न विद्यते ॥ प्रयोगसिद्धिरेवैषां फलमन्यन्न विद्यते ॥ २०१ ॥ होमतर्प्पणमन्त्राद्यैर्नानाध्यानविशेषकैः ॥ आत्मनश्च परस्यापि षट् कर्म्माणि सुसाधयेत् ॥ २०२ ॥ एकलक्षं जपेन्मन्त्री ध्यानविन्यासयोगतः ॥ प्रयोगदोषशान्त्यर्थमात्मरक्षार्थमेव च ॥ २०३ ॥ न चेन्न फलमाप्नोति देवता-शापमाप्नुयात् ॥ अग्निप्रभाधूमवर्णध्वनिगन्धशिखाकृति ॥ दूतचेष्टादिकं सर्वं कथ-येत शुभाशुभम् ॥ २०४ ॥ मन्त्रयित्वानुसन्धानं देहावेशादिलक्षणम् ॥ गुरुभक्तिः सदा कार्य्या कर्म्मकाले विशेषतः ॥ २०५ ॥ ऐहिकामुष्मिका-नान्तु गुरुरेव परायणम् ॥ मारणोच्चाटनादीनि क्षुद्राणां वाममार्गिणाम् ॥ ॥ २०६ ॥ क्षुद्रदेवास्साधयन्ति सुखं दातुं न ते क्षमाः ॥ परनिष्ठापराणान्तु वामिनां परमा गतिः ॥ २०७ ॥ यावदिष्टं तावदेव प्रतिष्ठा च धनादिकम् ॥ दाक्षिणात्या न कुर्वन्ति कदाचिदिह निन्दितम् ॥ २०८ ॥ तेषां प्रभावसंसिद्धिः परलोकश्च शाश्वतः ॥ ये नराः कुलसंशुद्धाः कल्पोक्तेनैव संस्कृताः ॥ २०९ ॥ ते चेन्निपतिता वामे पातकं किमतः परम् ॥ इयं प्रोक्तोत्तरा चर्या किमन्य च्छ्रोतुमिच्छसि ॥ २१० ॥

इति श्रीमहामायामहाकालानुमते मेरुतन्त्रे शिवप्रणीते सिद्धिस्थिरीकरण-प्रकाशः सप्तमः ॥ ७ ॥

श्रीदेव्युवाच ॥ मुद्राणां लक्षणं ब्रूहि यास्तुल्या वामदक्षिणे ॥ सर्वदेवप्रिया याश्च पूजासाफल्यदायिकाः ॥ १ ॥ श्रीशिव उवाच ॥ वक्ष्येथ नाम पूर्वाणि मुद्राणां लक्षणानि तु ॥ नित्यं यः कुरुते सर्वा देवास्स्युस्तस्य सौख्यदाः ॥ २॥ अंकुशाख्या भवेन्मुद्रा पृष्ठेनामा कनिष्ठया ॥ अंगुष्ठे तर्जनी वक्रा सरला चापि मध्यमा ॥ ३ ॥ सा कण्ठमुद्रा हस्ताभ्यां सर्वकण्ठो निबध्यते ॥ यत्रैकमुष्टिरंगुष्ठो दक्षो वामं समाश्रितः ॥ ४ ॥ वह्निप्राकारमुद्रा तु त्रिशूलाग्रावुभौ करौ ॥ व्यत्यस्तावभितो वह्नेर्नयेदस्राह्वयापि च ॥ ५ ॥ अंगुलीन्यासमुद्रास्तु पञ्चांगुल्यः स्पृशेत्क्रमात् ॥ अंगुष्ठेन चतस्रस्तु तर्ज्जन्यां-गुष्ठमेव च ॥ ६ ॥ हृदयाख्या भवेन्मुद्रांगुष्ठवर्ज्याः प्रसारिताः ॥ चतस्रों-गुलयो व्यस्ता हृदये तस्य मन्त्रतः ॥ ७ ॥ शिरोमुद्रा तु सा ज्ञेया तलं पार्श्वे प्रसारितम् ॥ चतस्रोंगुलयश्चापि प्रसार्य्य शिरसा धृताः ॥ ८ ॥ शिखा-मुद्रा तु सा ज्ञेया मुष्टिं चांगुष्ठपल्लवम् ॥ बद्ध्वा तेन शिखां स्पृष्ट्वा शिखामन्त्रे-ण साधकैः ॥ ९ ॥ कवचाख्या त्वियं मुद्रा ह्यंगुल्यः कृतनालिकाः ॥ स्क-न्धादानाभिपर्य्यन्तं पाण्योस्तु प्रक्रमो भवेत् ॥ १० ॥ त्रिनेत्रमुद्रा ख्यातेयं तर्ज्जनीदक्षनेत्रगा ॥ भाले मध्या त्वनामा तु वामे त्र्यक्षदिवौकसाम् ॥११॥ द्विनेत्रमुद्रा ख्यातेयं तर्ज्जनीदक्षनेत्रगा ॥ मध्यमावामनेत्रे च सूर्य्यविष्ण्वा-दिभेदयोः ॥ १२ ॥ अष्टमुद्राः समाख्याताः सर्वारिष्टनिवारिणीः ॥ अंगुष्ठ-तर्जन्यग्राभ्यां हस्तयोरभिशाब्दिताः ॥ १३ ॥ नित्ये नैमित्तिके चैता अङ्गषट्क-स्य मुद्रिकाः ॥ अथ काम्येषु वक्ष्यामि षण्मुद्राणान्तु लक्षणम् ॥१४॥ अंगु-ष्ठयोः पार्श्वयोगस्तर्जन्यौ सरले युते॥ मध्यमेऽन्योन्यकरयोः पृष्ठलग्ने परे तथा ॥ १५ ॥ अन्योन्यान्तर्गते कैश्चिद्दुवे च करपृष्ठतः ॥ एषा नमस्कारमुद्रा ललितायाः प्रकीर्तिता ॥ १६ ॥ तर्ज्जन्यौ सरले कृत्वा शेषांगुल्यो नखै-र्युताः ॥ कनिष्ठामध्यपर्वस्थावंगुष्ठौ क्षोभिणी मता ॥ १७ ॥ सरले तर्जनीमध्ये कनिष्ठानामिके युते॥अग्रयोश्च कनिष्ठास्थावंगुष्ठौ द्राविणी भवेत् ॥ ॥ १८॥ कनिष्ठामध्यमांगुष्ठौ तर्जन्यौ विनतेर्धतः ॥ मध्यमे सरले शेषा मुख-

१ प्रथमार्थे द्वितीया ।

मुक्तानुकर्षिणी ॥ १९ ॥ हन्मुद्रा स्यादियं काम्ये तथा शैवागमेषु च ॥ कृतमुष्टिपदौ हस्तौ कृत्वांगुष्ठौ हृदि न्यसेत् ॥ २० ॥ शिरोमुद्रा ललाटाग्रे कृतौ मुष्टियुतौ करौ ॥ कुर्य्यादूर्ध्वप्रसक्ताग्रे तर्जन्यौ ज्येष्ठया युते ॥ २१ ॥ शिखामुद्रा करौ मुक्तौ कृतमुष्टियुताकृती ॥ ज्येष्ठांगुल्यौ प्रसक्ताग्रे कनिष्ठे तूर्ध्वतः स्थिते ॥ २२ ॥ कवचाख्या प्रसक्ताख्यावंगुष्ठौ च त्रिकोणवत ॥ तर्जन्यावानयेन्मूर्ध्नि मुखे पार्श्वे करे हृदि ॥ २३ ॥ नेत्रमुद्रा तु सरला मध्या तर्जन्यनामिके ॥ धनुषाभे संयुताग्रे अंगुष्ठककनिष्ठिके ॥ २४॥ अस्त्रमुद्रा करद्वन्द्वस्फोटे चापि तदुत्तरम् ॥ तर्जन्या शब्दयेत्ताभ्यां ज्येष्ठाग्रवलिताग्रया ॥२५॥ गालिनी तु कनिष्ठांगुष्ठौ युतावितरेतरम् ॥ करयोस्तर्जनीमध्यानामायुक्ता न वक्रिताः ॥ २६ ॥ धनुर्मुद्रा कनिष्ठानामिके चान्योन्यहस्तयोः ॥ तर्जनीमध्यमे चापि दक्षस्कन्धे प्रदर्शयेत् ॥ २७ ॥ शङ्खमुद्रा तु वामाख्यमंगुष्ठं दक्षमुष्टिगम् ॥ वामांगुल्यग्रदक्षांगुष्ठस्य योगे प्रजायते ॥ २८ ॥ योनिमुद्रान्योन्यकरकनिष्ठातर्जनीयुतिः ॥ न्यस्ते तले तु शेषांगुल्यावंगुष्ठावनामिके ॥ २९ ॥ मत्स्यमुद्राधोमुखन्तु वामहस्तं तदूर्ध्वतः ॥ तादृशं दक्षिणं न्यस्यांगुष्ठकौ चालयेदिति ॥ ३० ॥ आवाहनी तु मुद्रा स्यात्कराभ्यामञ्जलिं चरेत् ॥ अनामयोर्मूलपर्वण्यंगुष्ठौ निक्षिपेत्तदा ॥ ३१ ॥ स्थापनी सा तु मुद्रा स्यादेषावाहनमुद्रिका ॥ अधोमुखीकृता सा चेत्सर्वसंस्थापने क्षमा ॥ ॥ ३२ ॥ सम्मुखीकरणी मुद्रा सा ज्ञेया मुष्टियुग्मकम् ॥ देवानां स्थापने या स्यादंगुष्ठद्वयमुक्तकम् ॥ ३३ ॥ सकलीकरणीमुद्रा सा प्रोक्ता यः षडङ्गके ॥ देवानां क्रियते न्यासो ह्यङ्गानामङ्गिने सकृत् ॥ ३४ ॥ अवगुण्ठनमुद्रा तु दीर्घाधोमुखतर्जनी ॥ मुष्टिबद्धस्य हस्तस्य सव्यस्य भ्रामयेच्च ताम् ॥ ॥ ३५ ॥ महामुद्रा समुद्दिष्टा परमीकरणे तु या ॥ अन्योन्यग्रथितांगुष्ठप्रसारितकरांगुली ॥ ३६ ॥ सन्निधापनमुद्रा स्याद्योगो मुष्टिद्वयस्य तु ॥ सम्यक्कृतावुभौ जातौ त्वंगुष्ठावुच्छ्रितौ यदि ॥ ३७ ॥ संरोधिनी तु सा मुद्रा मुष्ट्योरन्तःप्रवेशितौ ॥ द्वावंगुष्ठौ मुष्टियोगो निश्छिद्रश्च भवेद्यदि ॥ ३८ ॥ दन्तमुद्रा गणेशस्य वल्लभा दक्षहस्तजा ॥ उत्तानोर्ध्वमुखी मध्यसरलाबद्धमुष्टिका ॥ ३९ ॥

पाशाह्वया तु वामस्य तर्जन्यां दक्षतर्जनीम् ॥ क्षिप्त्वा बद्ध्वा मुष्टियुगं तर्जन्यंगुष्ठयोर्युतिः ॥ ४० ॥ अन्योन्यान्तर्गता लग्नाः करांगुल्यस्त्वधोमुखाः ॥ अंगुष्ठौ चोत्थितौ लग्नौ मुद्रा वशकरी मता ॥ ४१ ॥ कनिष्ठाग्रे तु चान्योन्यं सम्प्रसारितहस्तयोः ॥ मध्यमाभ्यां दृढं बद्ध्वानामिकाग्रे तु योजयेत् ॥ ४२ ॥ तर्ज्जन्यौ नामिकाग्रे तु अर्पयेन्मध्यमोपरि ॥ अन्योन्यांगुष्ठकौ लग्नौ मुद्रा चोन्मादिनी मता ॥ ४३ ॥ मध्यमाभ्यां दृढं बद्ध्वा कनिष्ठांगुलयः पराः ॥ संयोज्यानामिकामुख्यौ सरलौ स्यान्महांकुशा ॥ ४४ ॥ विघ्नमुद्रा दीर्घरूपा मध्यमाधोमुखी यदा ॥ तर्ज्जनी मध्यमासन्धिनिर्गतांगुष्ठमुष्टिका ॥ ॥ ४५ ॥ परशोश्च भवेन्मुद्रा तिर्य्यक् संयोज्य चांगुलीः ॥ प्रसृतासंयुता हस्ता तलं हस्ततलान्वितम् ॥४६॥ लड्डुकाख्या भवेन्मुद्रा ऊर्ध्वास्यं दक्षिणं करम् ॥ अंगुल्यो विरला नम्रा निम्नं करतलं तथा ॥ ४७ ॥ बीजपूरणया वाममुष्टावुत्तानके सति ॥ दन्ताद्याः पञ्च गणेशस्यांकुशमुद्रा च सप्तमी ॥ ४८॥ वराख्या सा तु मुद्रा स्यादतिसन्निहितांगुलिम् ॥ उत्तानं दक्षिणं हस्तं कृत्वाधो नामयेच्छनैः ॥ ४९ ॥ अभयस्य तु मुद्रैषा कथिता चाभयप्रदा ॥ पराङ्मुखं वामहस्तं बद्धांगुष्ठकनिष्ठिकम् ॥ ५० ॥ दक्षहस्तस्य मध्या च तर्जनी प्रसृते युते ॥ चर्म्ममुद्रा वामहस्तन्तिर्य्यक्च सम्प्रसार्य्य हि ॥ आकुञ्चितगतिं कुर्य्यादियं शक्तिप्रिया मता ॥ ५१ ॥ धनुर्मुद्रा वाममध्याग्रं तर्ज्जन्यग्रयोजितम् ॥ वामस्कन्धे कनिष्ठाग्रे दक्षिणांगुष्ठपीडितम् ॥ ५२ ॥ मुसलाख्या भवेन्मुद्रा वामस्योपरि दक्षिणम् ॥ हस्तयोर्मुष्टियुगलं कुर्य्याद्विघ्नविनाशनम ॥ ५३ ॥ दुर्गामुद्रा तु करयोर्मुष्टिं कृत्वा नियोजयेत् ॥ वामस्योपरि दक्षञ्च शिरसि स्थापयेदिति ॥ ५४ ॥ बाणमुद्रा दक्षमुष्टेस्तर्जन्या दीर्घया भवेत् ॥ अष्टौ वराद्याः पाशश्चांकुशः शक्तेर्दश स्मृताः ॥ ५५ ॥ चक्रमुद्रा करतले विपरीते विधाय च ॥ अंगुष्ठौ वेशयेच्चैव कनिष्ठानामिकान्तरे ॥ ५६॥ गदा तु सरलौ हस्तावन्योन्यग्रन्थितांगुली ॥ अंगुल्यौ मध्यमे भूयः सश्लिष्टे सुप्रसारिते ॥ ५७ ॥ पद्ममुद्रा करतले त्वंगुष्ठौ मिलितौ यदा ॥ हस्ता तु

---

१ अकारलोपः ।

सम्मुखौ कुर्य्यात्संहता उन्नतांगुली ॥ ५८ ॥ वेणुमुद्रा वामदक्षकनिष्ठांगुष्ठयोगतः ॥ वामांगुष्ठोदरे शेषा वक्राचोर्ध्वं कनिष्ठिका ॥ ५९ ॥ श्रीवत्सं मध्यमानामेंगुष्ठबद्धौ करौ युतौ ॥ कनिष्ठयोर्मूलगते तर्जन्यौ भवतो यदि ॥ ॥ ६० ॥ कौस्तुभा मध्यमानामांगुष्ठाश्चोर्ध्वमुखा युताः ॥ कनिष्ठातर्ज्जनीग्रन्थिः स्थाप्यौ तिर्यङ्मुखौ करौ ॥ ६१ ॥ वनमालाह्वया मुद्रा तर्जन्यंगुष्ठमुष्टिका ॥ करद्वयेन मालावत्स्पृशेदाकण्ठपादकम् ॥ ६२ ॥ ज्ञानमुद्रा हृदि न्यस्तौ तर्ज्जन्यंगुष्ठकौ युतौ ॥ वामहस्ताम्बुजं वा तु यदि मूर्द्धनि विन्यसेत् ॥ ६३ ॥ विश्वाख्या दक्षिणांगुष्ठवेष्टितं वाममुच्छ्रितम् ॥ अन्योन्यहस्तांगुलयस्तन्निष्ठाः स्थापयेद्धृदि ॥ ६४ ॥ प्रकोष्ठं वेष्टयित्वा च मणिबन्धौ च कूर्प्परौ ॥ सम्यक्संयोज्य मध्ये च तर्ज्जनीभ्यां सुवेष्टयेत् ॥ ६५ ॥ योगं मध्यमयोः कृत्वा द्वावंगुष्ठौ परांगुली ॥ अन्योन्यान्तर्गते दक्षकर्णान्ते खेचरी मता ॥ ६६ ॥ आद्यपर्वणि चान्योन्यं सम्यग्योज्य कनिष्ठिके ॥ अनामिके च तदधो मध्यपर्वणि योजयेत् ॥ ६७ ॥ तासामूर्ध्वमनामे च नखाग्रे संनियोजयेत् ॥ सान्तरौ करभौ कृत्वा तर्जन्यंगुष्ठयोर्युतिः ॥ ६८ ॥ एषा तु वरयोन्याख्या मुद्रा बीजाह्वया मता ॥ बीजविद्यां विना सर्वं वृथा पूजाजपादिकम् ॥ ६९ ॥ मुद्रा गरुडस्य हस्तकौ विपरीतौ ग्रथिते कनिष्ठिके ॥ तर्जन्यपि संयुता मिथः पदतुल्ये उभयांगुली वरे ॥ ७० ॥ नृसिंहमुद्रा चिबुकाधरौ तु जान्वोस्तु मध्येथ करौ कुलज्ञौ ॥ चेत्कम्पते व्यात्तमुखस्य जिह्वा संलेलिहाना नयने तु भीमे ॥ ७१ ॥ मुद्रा नरहरेः सर्वा अंगुल्यश्चेदधोमुखाः ॥ अंगुष्ठाभ्यां च करयोराक्रमेत कनिष्ठिके ॥ ७२ ॥ वाराही दक्षमुत्तानं न्युब्जं वामं तदूर्ध्वतः ॥ अंगुल्यग्राणि संयोज्याधस्तात्सन्नमयेदिति ॥ ७३ ॥ हयग्रीवा वामहस्ते तुल्यांगुल्यस्त्वधोमुखाः ॥ रुद्ध्वा मध्यमया मध्यां नामयेदिति सा भवेत् ॥ ७४ ॥ कामाख्या संपुटौ हस्तौ मध्यमे पृष्ठगे यदा ॥ तर्जन्यौ मध्यमासंस्थमंगुष्ठयुगलं यदि ॥ ७५ ॥ त्रैलोक्यमोहिनी मुद्रा मूर्ध्नि सांगुष्ठमुष्टिकैः ॥ चक्राद्याश्च धनुर्बाणपर्य्यन्ताश्च हरेरिमाः ॥ ७६ ॥ विधुमुद्रा करौ पद्मनिभौ श्लिष्टे च मध्यमे ॥ अंगुल्यौ धारयेत्त-

स्मिंश्चन्द्राग्रे सम्प्रदर्शयेत् ॥ ७७ ॥ सौरमुद्रा वामहस्तमधश्चोत्तानमूर्द्धतः ॥ कमलाकृतिमुद्रा स्यादुभे स्तो भास्करप्रिये ॥ ७८ ॥ लिङ्गमुद्रा दक्षिणाख्यं वामांगुष्ठेन वेष्टयेत् ॥ वामांगुल्यौ दक्षिणाभिर्वेष्टयेत्सा शिवप्रिया ॥ ॥ ७९ ॥ त्रिशूलाख्या भवेन्मुद्रा अंगुष्ठेन कनिष्ठिकाम् ॥ बद्ध्वा प्रसारयेच्छेषमंगुलीनां त्रयं तदा ॥ ८० ॥ मालामुद्रांगुष्ठतर्जन्यग्रं तु ग्रन्थयेद्दृढम् ॥ प्रसारयेदंगुलीनां त्रयं जपसुसिद्धये॥८१॥मृगमुद्रा तर्जनी च कनिष्ठा चोच्छ्रिताग्रका ॥ अनामिकागुष्ठमध्याग्राणि तिर्य्यग्युतानि च ॥ ८२ ॥ खट्वाङ्गमुद्रा षडङ्का शिवस्यातिप्रिया भवेत् ॥ पञ्चांगुल्यो दक्षिणाश्चेन्मिलिता ऊर्ध्वमुच्छ्रिताः ॥ ८३ ॥ कपालिनी भवेन्मुद्रा वामांसे वामहस्तकम् ॥ स्थापयित्वा पात्रवच्च कुर्य्यात्सा भैरवप्रिया ॥ ८४ ॥ डमरुः शिथिलां मुष्टिं कृत्वा मध्यां समुन्नताम् ॥ प्रचालयेत्कर्णपार्श्वे दशैताः शूलिनो मताः ॥ ॥ ८५ ॥ आसनाख्या पद्ममुद्रा सूपविष्टः सुखासने ॥ स्वस्वजानुस्थितौ हस्तौ कलिकाभावधोमुखौ ॥ ८६ ॥ कुशलाख्या भवेन्मुद्रा करावुन्नामितौ यदि ॥ आन्दोलितौ फणाकारौ स्वस्वदिग्भागसंस्थितौ ॥ ८७ ॥ वाममुष्टिं दृढं बद्ध्वा तर्जनीं सम्प्रसारयेत् ॥ आनयेद्वामकर्णे तां मुद्रा सौभाग्यदायिनी ॥ ८८ ॥ अंगुष्ठगुम्फितां मुष्टिं बध्नीयाद्दक्षपाणिना ॥ रिपुजिह्वाग्रहाख्येयं मुद्रिका शत्रुनाशिनी ॥ ८९ ॥ स्वागताख्या भवेन्मुद्रा वितस्त्यन्तरगौ करौ ॥ उत्तानावूरुदेशस्यासन्नौ नम्रस्तथा पुमान् ॥ ॥ ९० ॥ अर्घ्यमुद्रा तु सा ज्ञेया दृढो निश्छिद्र एव च ॥ अञ्जलिस्तु यदा बद्धौ मुष्टी कर्णवदाश्रितौ ॥ ९१ ॥ पाद्यमुद्रा त्वर्घ्यमुद्रासमायन्तु विशेषकः ॥ अंगुष्ठतर्ज्जनीयोगः कर्त्तव्यो हस्तयोर्द्वयोः ॥ ९२ ॥ मुद्राचमनसञ्ज्ञा तु निम्ने करतले युताः ॥ हीनाः कनिष्ठजास्तिस्रोंऽगुष्ठाग्रं तर्ज्जनीयुतम् ॥ ॥ ९३ ॥ मधुपर्कस्य मुद्रा स्यादियं चाधोमुखी यदि ॥ अनामिकांगुष्ठयोश्चेदग्रयोगः प्रजायते ॥ ९४ ॥ स्नानमुद्रा दक्षहस्तमुष्टिः स्याच्चेदधोमुखी ॥ कनिष्ठयापि युक्तासास्नानेनन्तफलप्रदा ॥ ९५ ॥ वस्त्रमुद्रा दक्षहस्तं कृत्वोत्तानाञ्च मध्यमाम् ॥ अंगुष्ठेन स्पृशेदेषा दाने वस्त्रस्य धारणे ॥ ९६ ॥ आभू-

षणस्य मुद्रा स्यादियं चाधोमुखी यदि॥अनामिकांगुष्ठयोश्चेदग्रयोगः प्रजायते ॥ ९७ ॥ स्नानमुद्रा समाख्याता कनिष्ठांगुष्ठयोगतः ॥ उपवीतस्य करणादि-के स्खलितधारणे ॥ ९८ ॥ गन्धस्य मुद्रा विज्ञेयाधोत्तानं हस्तमाचरेत् ॥ श्रेष्ठाग्रेण कनिष्ठाग्रे स्पृशेत्स्याद्गन्धधारणे ॥ ९९ ॥ पुष्पाख्या च भवेन्मुद्रा हस्तं चाधोमुखं कुरु ॥ तर्ज्जन्यग्रे तथांगुष्ठाग्रं संयोज्येति पूजने ॥ १०० ॥ धूपमुद्रा तु देवादिधूपने सम्प्रसारिता ॥ अंगुष्ठाग्रेण तर्ज्जन्याः स्पृशेदग्रं च पूर्ववत् ॥ १०१ ॥ दीपमुद्रा प्रोच्यतेथ दीपे सर्वप्रियङ्करा ॥ ज्येष्ठाग्रेण स्पृशेदग्रं मध्यमायाश्च पूर्ववत ॥ १०२ ॥ नैवेद्यमुद्रा देवानां पूर्ववत्परि-कीर्तिता ॥ विशेषोनामिकाग्रन्तु ज्येष्ठाग्रेणं तु योजयेत ॥ १०३ ॥ ग्रास-मुद्रा सव्यहस्तं प्रफुल्लकमलाकृतिम् ॥ दर्शयेत्पञ्चवायूनामुच्यन्ते पञ्चमुद्रिकाः ॥ १०४ ॥ प्राणमुद्रामथो वक्ष्ये भोजनादौ प्रदर्शयेत् ॥ कनिष्ठानामिके सम्यगंगुष्ठाग्रेण योजयेत् ॥ १०५ ॥ मुद्रापानस्य विज्ञेया तर्ज्जनीमध्ययो-र्युतौ ॥ एतद्दर्शनतो वायुरोधाद्योगी विमुच्यते ॥ १०६ ॥ व्यानमुद्रा तु सा ज्ञेया मध्यमानामिके युते ॥ समस्तदेहगो वायुर्दृष्ट्वा तां सुप्रसीदति ॥ ॥ १०७ ॥ उदानवायोर्मुद्रा स्यादंगुष्ठेन समन्विता ॥ तर्जनीमध्यमाना-मास्सर्वरोगापनोदिनी ॥ १०८ ॥ समानवायोर्मुद्रा स्याद्यदा पञ्चांगुली-युतिः ॥ प्रणवादिचतुर्थ्यन्ता नमोऽन्तानाममन्त्रकाः ॥ १०९ ॥ कनिष्ठांगुष्ठसंयोगे सरलं चांगुलीत्रयम् ॥ महायोन्यभिधा मुद्रा सुन्द-र्य्यानन्ददायिनी ॥ ११० ॥ करौ संवलितौ कृत्वा चान्योन्या-सक्तकांगुली ॥ अन्तर्वलितमुत्थाप्य तर्जन्यौ सरले कृते ॥ १११ ॥ कुर्य्यान्नमस्कृतिम्पश्चाच्छक्त्युत्थापनमुद्रिका ॥ आनीता शक्तिरनया स्व-स्थाने वरदा व्रजेत् ॥ ११२ ॥ सप्तजिह्वाख्यमुद्रा तु प्रसृतांगुलिकौ करौ ॥ कनिष्ठांगुष्ठयुगलं मणिबन्धौ च संयुतौ ॥ ११३ ॥ मुद्रा भूतबलेः प्रोक्ता सर्वांगुलिसमागमः ॥ अन्तश्च शुषिरे हस्ते काकतुण्डनिभे मुखे ॥ ११४ ॥ नाराचाग्रे वामहस्तं पृष्ठे दक्षं समानयेत् ॥ शनैः शनैश्च सरले तर्जन्यो मु-द्रिताः पराः ॥ ११५ ॥ संहाराख्याधोमुखो वामहस्तो दक्षस्योर्द्ध्वे ग्रन्थि-

तागुल्य एवम् ॥ पर्यस्तौ बद्धौ करौ स्याद्विसर्गे बल्यादीनां देवता तुष्टिकर्त्री ॥ ११६ ॥ अशनिर्नाम सा मुद्रा ऊर्ध्वास्या वामतर्जनी ॥ अधोवक्त्रा परा तत्र संयुक्तारिविनाशिनी ॥ ११७ ॥ विधुमुद्रांगुलीभिश्चेन्मुद्रा बद्धा तु मुष्टिका ॥ तर्जन्यंगुष्ठसंयोगः पूर्णकर्मणि योजयेत् ॥ ११८ ॥ कालकर्णी भवेन्मुष्ट्योरंगुष्ठावुन्नतौ यदा ॥ पार्श्वयोश्चापि संलग्नौ द्वावेवाभिमुखौ तदा ॥ ११९ ॥ मुद्रा विस्मयसञ्ज्ञा स्याद्विस्मयावेशकारिणी ॥ दक्षिणानिविडा मुष्टिर्नासिकार्पिततर्जनी ॥ १२० ॥ नादमुद्रा तु तर्जन्या मुष्टावंगुष्ठको यदि ॥ निबद्धो यमिनां सेव्या ब्रह्माभिव्यक्तिकारिणी ॥ १२१ ॥ प्रार्थनाख्या भवेन्मुद्रा हस्तौ कुर्य्याद्धृदि स्वके ॥ प्रसृतांगुलिकौ दृश्यौ मिथः श्लिष्टौ च सम्मुखौ ॥ १२२ ॥ लक्ष्मीमुद्रा परा ह्येषा सर्वसम्पत्प्रदायिनी ॥ हस्तौ तु संयुतौ कृत्वा प्रसृतांगुलिकौ तथा ॥ १२३ ॥ अन्नाख्यमुद्रिका हस्तौ नाभिदेशे प्रसार्य्य च ॥ अधोमुखं स्पृशेत्तस्य तर्जनीभ्यां तदान्नदा ॥ १२४ ॥ दंष्ट्रामुद्रा चक्रमुद्रामादौ कृत्वा प्रपीडयेत् ॥ मध्यमे तर्जनीभ्यान्तु सर्वपातकनाशिनी ॥ १२५ ॥ भवेत्पृष्ठकमुद्रा च दक्षहस्तः प्रसारितः ॥ नाभ्यग्रे चान्तरिक्षे च स्थापितश्च निरीक्षितः ॥ १२६ ॥ गजकर्णाख्यमुद्रा तु हस्तयोः पृष्ठमेलनम् ॥ कृत्वा चोर्ध्वमुखौ हस्तौ ग्रन्थिरंगुष्ठयोर्भवेत् ॥ १२७ ॥ वस्त्रस्फालनमुद्रा तु कनिष्ठा वामतर्जनी ॥ मध्यमानामयोरग्रे मूले पृष्ठे च तद्द्वयम् ॥ १२८ ॥ वापीमुद्रा दक्षहस्तानामाधें वामजे ततः ॥ ज्येष्ठा कनिष्ठा दक्षा स्यात्तयोरूर्ध्वन्तु वामजे ॥ १२९ ॥ शकटाख्या भवेन्मुद्रा तर्जनीभ्यामनामिके ॥ अन्योन्यमध्ययोः पृष्ठान्मध्यापरिनिपीडिते ॥ १३० ॥ गायत्र्या अथ वक्ष्यन्ते चतुर्विंशतिमुद्रिकाः ॥ जपादौ दर्शयेत्तासां देवताश्च तथा फलम् ॥ १३१ ॥ सुमुखे संहतौ हस्तावुक्तावाकुञ्चितांगुली ॥ प्रह्लादिनी तत्र शक्तिः सुमुखानन्ददायिनी ॥ १३२ ॥ सम्पुटं पद्मकोशाभौ करावन्योन्यसंहतौ ॥ तस्य शक्तिर्नित्यविश्वा विश्वस्यातिप्रियङ्करा ॥ १३३ ॥ विततं संहतौ हस्तावुक्तं चानायतांगुली ॥ हृदया नाम तच्छक्तिः सर्वेषां हृदयंगमा ॥ १३४ ॥ विस्तीर्णं संहतौ पाणी मिथो मुक्तां-

गुलीद्वयम् ॥ शक्तिस्तु विमला तस्याः प्रभावादमलो भवेत् ॥ १३५ ॥ द्विमुखाख्या हस्तयोस्तु सम्मुखं सक्तयोर्द्वयोः ॥ कनिष्ठयोरेव योगः शक्तिस्तस्यास्सदाभिधा ॥ १३६ ॥ त्रिमुखाख्या हस्तयुग्मे सुसक्तेनामिकाद्वयम् ॥ संयुक्तं शेषमंगुल्यो भिन्नाः शक्तिः प्रभावती ॥ १३७ ॥ चतुर्मुखं हस्तयुग्मं संसक्तं मध्यमायुतिः ॥ शेषांगुल्यस्तु सम्भिन्ना लीला शक्तिप्रकीर्त्तिता ॥ १३८ ॥ मुद्रा पञ्चमुखी तद्वत्तर्जन्योर्यत्र संयुतिः ॥ अपरांगुलयो भिन्नाः शक्तिः शान्तिश्च शान्तिकृत् ॥ १३९ ॥ भवेत्षण्मुखमुद्रासा सम्पूर्णांगुलियोजनम् ॥ कनिष्ठाद्वितयं हित्वा शक्तिर्दुर्गा प्रकीर्तिता ॥ ॥ १४० ॥ अधोमुखं नाम मुद्रा न्युब्जौ हस्तौ त्वधोमुखौ ॥ आकुञ्चिताग्रौ संयुक्तौ शक्तिरस्याः सरस्वती ॥ १४१ ॥ व्यापकाञ्जलिकं नाम मुद्रा हस्तौ तु तादृशौ ॥ विशेषोत्र तु चोत्तानौ विश्वरूपास्ति देवता ॥ ॥ १४२ ॥ शकटं नाम मुद्रा सा बद्धाग्रांगुलिकौ करौ ॥ अधोमुखौ बद्धमुष्टी विशाख्या शक्तिरत्र तु ॥ १४३ ॥ यमपाशं बद्धमुष्ट्योः करयोर्ग्रथिते यदा ॥ तर्जन्यौ तत्र संलग्नौ वामा लोपात्र देवता ॥ १४४ ॥ ग्रन्थिताख्यान्योन्यसन्धिलग्नाश्चागुलयो यदि ॥ उत्तानौ चोच्छ्रितांगुष्ठौ वामा शक्तिः समीरिता ॥ १४५ ॥ सम्मुखोन्मुखमुद्रा तु सम्बद्धाधोंगुलीकरौ ॥ दक्षिणोधोमुखो वाम ऊर्ध्वमाप्यायिनी भवेत्॥ १४६॥ विलम्बं नाम मुद्रा सा चोत्तानोन्नतिकोटिकौ॥ यस्यां करौ तु विमला तस्याः शक्तिः प्रकीर्तिता ॥ १४७॥ मुष्टिकन्तु यदा मुष्टी भवतोन्योन्यसंयुते॥ उत्तानौ तु करौ तत्र शक्तिः प्रोक्ता तमोमयी ॥ १४८॥ मत्स्यस्तु सम्मुखी भूते युक्तानामाकनिष्ठिके ॥ अंगुल्यश्चोर्ध्वयुक्ताग्राः शेषाः शक्तिर्हिरणमयी॥ १४९॥ कूर्म्मस्त्वधोमुखो वामो ग्रस्तो दक्षेण पृष्ठके॥ समाक्रान्तस्तु तच्छक्तिः सूक्ष्मा सूक्ष्मार्थसाधिका॥ १५०॥ वाराही दक्षिणस्योर्ध्वं वाममुत्तानकङ्करम् ॥ स्थापयित्वाधोमुखं तन्नामयेद्विश्वयोनिका ॥ १५१॥ सिंहाक्रान्तं नाम मुद्रात्वंगुल्यः पल्लवीकृताः ॥ देव्यग्रे दर्शयेच्छक्तिर्गदारूपा प्रकीर्त्यते ॥ १५२ ॥ न जातु दर्शयेन्मुद्रां महाजनसमागमे ॥ क्षुभ्यन्ति देवतास्तस्य विफलन्तु कृतं भवेत् ॥ १५३ ॥ यथा बालस्याभि-

नयं दृष्ट्वा हृष्यन्ति मातरः ॥ तथा भक्तकृता मुद्रा दृष्ट्वा हृष्यन्ति देवताः ॥ १५४ ॥ उत्तराम्नायसम्प्रोक्ता देवास्तुष्यन्ति पञ्चमैः ॥ छिन्नः पदार्थ एकश्चेत्साधकन्ते शपन्ति च ॥ १५५ ॥ पश्चिमाम्नायदेवानां सुरापानं कृताकृतम् ॥ मद्यचतुष्टयमिच्छन्ति तं विना प्रशपन्ति च ॥ १५६ ॥ पूर्वाम्नायोक्तदेवानां तन्मांसञ्च कृताकृतम् ॥ आवश्यकमत्र पञ्च तं विना प्रशपन्ति च ॥ १५७ ॥ दक्षिणाम्नायदेवानां निषिद्धं मद्यचतुष्टयम् ॥ मेनैकेन विना तेपि प्रशपन्ति च साधकम् ॥ १५८ ॥ तस्मान्मुद्राः शिक्षणीयाः सम्प्रदायानुसारतः ॥ सर्वत्र मोक्षं लभते मुद्राविन्नात्र संशयः ॥ १५९ ॥ इति ते सर्वमाख्यातं सर्वतन्त्रेषु गोपितम् ॥ मुद्राणां परमं तत्त्वं किमन्यच्छ्रोतुमिच्छसि ॥ १६० ॥

इति श्रीमहामायामहाकालानुमते मेरुतन्त्रे शिवप्रणीते
मुद्रालक्षणप्रकाशोऽष्टमः ॥ ८ ॥

---

श्रीदेव्युवाच ॥ प्रयोगात्परलोकेन परार्थी नेह सौख्यकृत् ॥ सिद्ध्यर्थी च कलौ शिष्यो धनार्थी गुरुरेव च ॥ १ ॥ पूजार्थिनस्तथा देवा विषयार्थि तथा मनः ॥ दूरेऽस्माद्दैहिकी सिद्धिः पारकीया कथं भवेत् ॥ २ ॥ तस्मात्कश्चिदुपायश्चेत्पुरश्चर्यादिकं विना ॥ परत्रेह च सिद्धिः स्याद्विना निन्दां वदस्व तत् ॥ ३ ॥ ईश्वर उवाच ॥ आयान्ति यान्ति न पुनर्मन्यन्ते सर्वजन्तुभिः ॥ ते मदंशकृता ग्रन्था आगमाख्याः प्रसारिताः ॥ ४ ॥ कलेः सहस्राब्दितयं सार्द्धं देवा यदा गतम् ॥ सर्वदेवगणैस्त्यक्तं तदा तु पृथिवीतलम् ॥ ५ ॥ वेदो नारायणः साक्षात्संस्थास्यत्ययुतावधि ॥ आगमैर्भासिते देशे सोप्यगम्यो भविष्यति ॥ ६ ॥ उद्धाराय च साधूनां महाकालाज्ञया मया ॥ कथितं चिरजीविभ्यः पार्थिवं लिङ्गपूजनम् ॥ ७ ॥ तद्विधिं संप्रवक्ष्यामि देवाः शृण्वन्तु सादरम् ॥ इहलोके परत्रापि सिद्धिः करतले स्थिता ॥ ८ ॥ तत्र पार्थिवलिङ्गानां पूजने स्यादयं विधिः स्नात्वा नित्यं विधायादौ गच्छेच्छुद्धां भुवं सुधीः ॥ ९ ॥ स्थानाष्टके स्थिता या मृत्साच सर्वार्थसिद्धिदा ॥ शमीगर्भाश्वत्थमूले नदीकूले च निर्जने

॥ १० ॥ पर्वताग्रे च तीर्थे च गोष्ठे वा तुलसीवने ॥ वटाधस्तात्तत्र भूमिं मन्त्रयेत्प्रार्थयेदिति ॥ ११ ॥ ह्रीं पृथिव्यै नम इति मन्त्रः प्रोक्तः षडक्षरः॥ अनेन पूजयित्वा तु धरणीं प्रार्थयेदिति ॥ १२ ॥ सर्वाधारा धरा त्वं हि पाहि मां मृत्तिकामिमाम् ॥ ग्रहीष्यामि प्रसन्ना त्वं लिङ्गार्थं भव मे सदा ॥ ॥ १३ ॥ ततो मृदमुपादाय सम्यङ्किःशर्करां चरेत् ॥ पात्रे निदध्यात्संशुद्धे प्रत्यहं पूजनाय ताम् ॥ १४ ॥ सद्दिने सद्गुरोर्वाथ सूर्य्याद्वा देवतान्तरात् ॥ गृह्णीयात्तत्पूजायास्तथा गुहगणेशयोः ॥ १५ ॥ मृत्तिकाहरणे तारो हराय नम इत्ययम् ॥ तारो महेश्वरायेति नमः संघट्टनं भवेत् ॥ १६ ॥ तारो ङेंतः शूलपाणिर्नमः प्रस्थापने भवेत् ॥ वस्त्राद्याच्छादिते पीठे ॐ पिनाकधृते नमः ॥ १७ ॥ स्थापयेदिति मन्त्रेण शिवाकान्तं शिवप्रदम् ॥ कामनायास्तु भेदेन तत्र ध्यायेच्छिवं प्रभुम् ॥ १८ ॥ ॐ पशुपतये नमः स्नापयेदिति मन्त्रतः ॥ ॐ शिवाय नम इति पूज्यः पञ्चोपचारकैः ॥ ॥ १९ ॥ ॐ महादेवाय नमो मन्त्रेणेति विसर्ज्जयेत् ॥ ह्रीं गं ग्लौं गणतये ग्लौं गं ह्रीं च भवाक्षरः ॥ २० ॥ ऐं हुं क्षं क्लीं कुमाराय नमोन्तः स्याद्दशाक्षरः ॥ इमान्मनून् गृहीत्वा तु जपेदष्टसहस्रकम् ॥ २१ ॥ दत्त्वा धूपं हृदि ध्यात्वा गुरुं तन्मन्त्रसिद्धये ॥ अथार्चनं शुभे घस्रे प्रारभेतेष्टसिद्धये कृतनित्यक्रियः शुद्धः प्रदायार्घ्यं विवस्वते ॥ २२ ॥ मृदमादाय तोयञ्च वंबीजेनाभिमन्त्रयेत् ॥ आसिच्य पिण्डयेत्स्वेष्टमानं पात्रे निधापयेत् ॥२३॥ ततः कालमनुस्मृत्य कामनामपि हृद्गताम् ॥ लिङ्गानि पार्थिवानीह पूजयेमुकसंख्यया ॥२४॥ सङ्कल्प्यैवं मृदः पिंडादादायाल्पां मृदं सुधीः ॥ गणेश्वरस्य मन्त्रेण कुर्याद्द्वारगणेश्वरम् ॥ २५ ॥ फलाभयलसत्पाणिं तुन्दिलं चोन्दुरुस्थितम् ॥ निर्माय स्थापयेत्पीठे ततो विप्रस्समाचरेत् ॥ २६ ॥ न्यासं रुद्रस्य विधिवत्सम्पुटीकरणान्वितम् ॥ अविप्राणाञ्छृणु न्यासं गोप्यं पार्थिवपूजने॥ २७॥अस्य श्रीपार्थिवाख्यस्य विद्या चिन्तामणेर्मनोः॥ निग्रहानु-

१ ॐ ब्रह्मणे ऋषये नमः शिरसि, ॐ गायत्रीछन्दसे नमो मुखे, ॐ कामदुघायै देवतायै नमो हृदये, ॐ ह्रींह्रौं बीजाय नमो गुह्ये, ॐ ह्रीं शक्तये नमः पादयोः, ॐ नमः कीलकाय नमो नाभौ

नुग्रहकर्त्ता ब्रह्मा निगदितो मुनिः॥२८॥ देवता स्यात्कामदुघा गायत्री छन्द ईरितम्॥ॐ ह्रीं ह्रौं बीजं ह्रीं शक्तिर्नमः कीलकमुच्यते॥२९॥अभीप्सितार्थ-सिद्ध्यर्थे नियोगो लिङ्गपूजने॥ॐ ह्रीं ह्रौं बीजपूर्वास्तु न्यासे मन्त्रान्प्रविन्यसेत् ॥३०॥शिवायेति परं चान्ते ततोङ्गादि समुच्चरेत्।।[1]सर्वज्ञाय प्रथमतः सर्वतृप्ताय चोत्तरम् ॥ ३१ ॥ नित्यमलुप्तशक्तये सर्वज्ञानशक्तये च ॥ नित्यानन्दशक्तये चानन्तशक्तिशिवाय च ॥ ३२ ॥ कृत्वा चांगुलिविन्यासं विन्यसेद्धृदयादिषु ॥ केवलः श्रोत्रियस्तत्र [2]सद्योजातेन मृत्तिकाम् ॥ ३३ ॥ गृहीत्वा वामदेवेन जलं दत्त्वा विमर्दयेत् ॥ लिङ्गं कुर्य्यादघोरेणार्चयेत्तत्पुरुषेण च ॥ ॥ ३४ ॥ संस्थाप्य रुद्रसूक्तेन ईशानेन विसर्ज्जयेत् ॥ आदौ कृत्वा गणेशानं पीठमध्ये निवेशयेत् ॥ ३५ ॥ पश्चाल्लिङ्गानि कुर्वीत यथेष्टानि समानि च ॥ अंगुष्ठमानादधिकं वितस्त्यवधिसुन्दरम् ॥ ३६ ॥ पार्थिवं रचयेल्लिङ्गं न न्यूनं नाधिकं क्वचित् ॥ पक्वजम्बूफलाकारं सर्वकामसमृद्धिदम् ॥ ॥ ३७ ॥ अतिपुष्टे तु दारिद्र्यं चिपिटे रोगसम्भवः ॥ मानाधिके वियोगः स्यात्स्वल्पे सिद्धिर्न जायते ॥ ३८ ॥ द्विखण्डे तु भवेन्मृत्युर्वियोनौ न सुखं भवेत् ॥ अवशिष्टमृदा कुर्य्यात्कुमारन्तस्य मन्त्रतः ॥ ३९ ॥ स्थापयेल्लिङ्गपर्य्यन्ते स्वमन्त्रेणार्च्चयेच्च तम् ॥ अर्च्चयन्पार्थिवं लिङ्गं यथोक्तफलभाग्भवेत् ॥ ४० ॥ तारो ह्रौं [3]ह्रीं जूं सः इति पञ्चबीजादिकैस्तु तैः ॥ तान्त्रिको मासमन्त्रैस्तु फलार्थी शिवमर्चयेत् ॥ ४१ ॥ प्रासादबीजपूर्वैस्तु वाममार्गी समर्चयेत् ॥ पराप्रासादबीजाद्यैः पूजयेत्कौलिकैस्तु तैः ॥ ४२ ॥ आवाहनस्य समये ईदृशं शिवमागतम् ॥ लिङ्गे प्रतिष्ठितं ध्यायेत्कामनाभेदनात्तु तत् ॥ ४३ ॥ भवेन्नानाविधं ध्यानं योनिं कामं प्रपूजयेत् ॥ तत्र

---

१ ॐ ह्रींह्रौमिति बीजत्रयं मन्त्रन्यासेभ्यः पूर्वं संयोज्यम् ॐ शिवाय सर्वज्ञाय अंगुष्ठाभ्यां नमः, ॐ शिवाय सर्वतृप्ताय तर्जनीभ्यां नमः, ॐ शिवाय नित्यमलुप्तशक्तये मध्यमाभ्यां नमः, ॐ शिवाय सर्वज्ञानशक्तये अनामिकाभ्यां नमः, ॐ शिवाय नित्यानन्दशक्तये कनिष्ठिकाभ्यां नमः, ॐ शिवायानन्तशक्तिशिवाय करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः पुनरेतैरेव मन्त्रैर्हृदयादिन्यासान् कुर्वीत । २ सद्योजातादयः पञ्च मन्त्रा बहुस्थलेषु गदिता अतोत्र नोक्ताः । ३ ह्रौं ।

ध्यानमिदं ज्ञेयं नोक्तं वा यत्र तत्र च ॥ ४४ ॥ अथात्मानं शिवात्मानं पञ्चास्यं चिन्तयेद्बुधः ॥ त्रिलोचनं चतुर्बाहुं सर्वाभरणभूषितम् ॥ ४५ ॥ नीलग्रीवं शशाङ्काङ्कं शुद्धस्फटिकसन्निभम् ॥ व्याघ्रचर्म्मोत्तरीयं च नागयज्ञोपवीतकम् ॥ ४६ ॥ कमण्डलुधरं देवमक्षमालान्वितं प्रभुम् ॥ वरदाभयहस्तं च नमज्जनवरप्रदम् ॥४७॥ वृषपृष्ठसमारूढमुमादेहार्धधारिणम् ॥ जटिलं कपिलं दन्तनखाभिद्योतकारिणम् ॥ ४८ ॥ अमृतेनाप्लुतं दिव्यं दिव्यभोगसमन्वितम् ॥ दिग्देवतासमायुक्तं सुरासुरनमस्कृतम् ॥ ४९ ॥ नित्यं च शाश्वतं शुद्धं ध्रुवमक्षरमव्ययम् ॥ सर्वव्यापिनमीशानं रुद्रं वै विश्वरूपिणम् ॥ ॥ ५० ॥ एवं ध्यात्वा द्विजः सम्यक् ततो यजनमारभेत् ॥ आराधितो मनुष्यैस्त्वं सिद्धैर्देवासुरादिभिः ॥ ५१ ॥ आराधयामि भक्त्या त्वां मां गृहाण महेश्वर ॥ स्वामिन्सर्वजगन्नाथ यावत्पूजावसानकम् ॥ ५२ ॥ तावत्त्वं प्रीतिभावेन लिङ्गेस्मिन्सन्निधो भव ॥ इति सम्प्रार्थ्य देवेशं पार्थिवं पूजयेत्ततः ॥ ५३ ॥ एकैकं पूजयेल्लिङ्गमेकैकं च विसर्ज्जयेत् ॥ अन्ते पूज्यः कार्त्तिकेयः प्रोक्ता पूजेयमुत्तमा ॥ ५४ ॥ सर्वेषामेव लिङ्गानां शीघ्रमेकत्र पूजनात् ॥ प्रोक्ता पूजा विधिज्ञैः सा पूजेयं मध्यमा तदा ॥ ५५ ॥ प्रत्येकमाचरेद्ध्यानमन्धं पुष्पं पृथक्पृथक् ॥ धूपदीपनिवेद्यादि यथांशेन निवेदयेत् ॥ ५६ ॥ प्रागादिवामावर्तेन दिक्ष्वष्टौ परिपूजयेत् ॥ [1]शर्वं भवं रुद्रमुग्रं भीमं पशुपतिं तथा ॥ ५७ ॥ महादेवं तथेशानं क्रमात्क्षित्यादिमूर्तकान् ॥ क्षित्यप्तेजोनिलाकाशयजमानेन्दुभास्कराः ॥ ५८ ॥ क्षित्यादयः स्युः शर्वाद्यास्तत इन्द्रादिकान् यजेत् ॥ धूपदीपनिवेद्यादिनमस्कारप्रदक्षिणैः ॥ ५९ ॥ ततो जपं प्रकुर्वीत [2]ॐ हौं ह्रीं हूं समुच्चरेत् ॥ ॐ नमश्च शिवो ऽन्तः प्रसन्नायेदमुच्चरेत् ॥ ॥ ६० ॥ पारिजाताय स्वाहेति एकविंशतिवर्णकः ॥ पूजान्तेष्टोत्तर-

---

१ ॐ शर्वाय क्षितिमूर्तये नमः पूर्वे, ॐ भवाय जलमूर्तये नमः ईशानकोणे, ॐ रुद्रायाग्निमूर्तये नमः उत्तरे, ॐ उग्राय वायुमूर्तये नमः वायव्यकोणे, ॐ भीमायाकाशमूर्तये नमः पश्चिमे, ॐ पशुपतये यजमानमूर्त्तयेनमः नैर्ऋत्यकोणे, ॐ महादेवायेन्दुमूर्त्तये नमः दक्षिणे, ॐ ईशानाय सूर्य्यमूर्त्तये नमः आग्नेयकोणे, एवमष्टदिक्षु । २ ॐ हौंह्रींहूं ॐ नमः शिवाय प्रसन्नाय पारि

शतं जपेन्मन्त्रमनन्यधीः ॥ ६१ ॥ बिल्वं वा बिल्वपत्रं वा घृताक्तं सतिलं हुनेत् ॥ एकादशाहुतीः पश्चात्प्रणमेद्दण्डवत्क्षितौ ॥ ६२ ॥ प्रणवादिचतुर्थ्यन्तानन्तदेवनमोन्वितैः[1] ॥ षष्ठीयुक्तं च तन्नाम पत्नीं ङेन्तां नमोन्विताम्[2] ॥ ६३ ॥ पुनश्च तर्पणं कार्य्यं तादृशैरेव नामभिः ॥ द्वितीयान्तैस्तर्प्पयामि बिल्वपत्रैर्जलाक्षतैः ॥ ६४ ॥ भवः शर्वस्तथेशानस्तुर्य्यः पशुपतिर्मतः ॥ रुद्रोग्रभीमर्महतस्त्वष्टौ[3] ते परिकीर्तिताः ॥ ६५ ॥ दम्पती भोजयेन्नित्यं पार्वतीशमनीषया ॥ शैवं वा भोजयेदेकमभावे वेदवित्तमम् ॥ ॥ ६६ ॥ एवमर्चयतः पुंसः पार्थिवं लिङ्गमुत्तमम् ॥ मासमात्रेण सिद्धिस्स्यान्नात्र कार्य्या विचारणा ॥ ६७ ॥ अकृत्वा पार्थिवं लिङ्गं योन्यदेवं प्रपूजयेत् ॥ वृथा भवति सा पूजा स्नानदानादिकाः क्रियाः ॥ ६८ ॥ काम्यकर्म्मण्ययं कार्य्यो विधिः शृणु विशेषकम् ॥ तण्डुलोद्भवपिष्टेन विद्यार्थी[4] तु सहस्रकम् ॥ ६९ ॥ द्वयोः पूजनमेकत्र मासमेकं करोति चेत् ॥ अवश्यं लभते विद्यां ध्यानमस्य निरूप्यते ॥ ७० ॥ अनेनैव विधानेन पूजयेन्नवनीतजम् ॥ भवेद्विया च सपदि चतुर्दिक्षु तथा यशः ॥७१॥ वन्दे महेशं सुरसिद्धसेव्यं विद्याप्रदं पुस्तकदत्तदृष्टिम् ॥ भक्तैर्जनैः पूजितपादपद्मं ध्याये सद कामप्रदं प्रभुं तम् ॥ ७२ ॥ इत्थं श्वेतागुरोर्लिङ्गं पूजितं बुद्धिवृद्धिकृत् ॥ एवं कृष्णागुरोर्लिंगं पूजितं धारणाप्रदम् ॥ ७३ ॥ चणकोद्भवपिष्टस्य प्राग्वल्लिंगं तु बुद्धिकृत् ॥ प्राग्वद्व्रीहिमयं लिंगं कृत्वा हन्यात्स्खलद्गिरम् ॥ ७४ ॥ विद्याकामैश्चिन्तनीयः परशुं हरिणं वरम् ॥ ज्ञानमुद्रां दधद्धस्तैर्वटमूलमुपाश्रितः ॥ ७५ ॥ योर्चयेत्प्रत्यहं पञ्चशतान्येकं पृथक्पृथक् ॥ पार्थिवानि तु लिंगानि मासात्सा सर्वतोमुखी ॥ ७६ ॥ दक्षाङ्कस्थं गजपतिमुखं प्रामृजन्दक्षदोष्णा वामोरुस्थागपतितनयाङ्के गुहं चापरेण ॥ इष्टाभीती परिकरयुगे धारयन्निन्दुकान्तिरव्यादस्मांस्त्रिभुवननतो नीलकण्ठस्त्रिनेत्रः ॥ ७७ ॥ पुंसोर्विरुद्धयोस्सन्धौ कुर्यादयुतसङ्ख्यया ॥ नदीतीरद्वयानीतमृदा तानि च

---

१ ॐ अनन्तदेवाय नमः ॥ २ ॐ अनन्तदेवस्य पत्न्यै नमः॥ ३ महान्तः ॥ ४ पूजेति शेषः॥

पूजयेत् ॥ ७८ ॥ तत्र ध्येयो हरिहरः शङ्खपद्मादिशूलभृत् ॥ इन्द्रनील-शरच्चन्द्रनिभो भूषणपूगवान् ॥ ७९ ॥ दम्पत्योरभिधानार्थमर्धनारीश्वरः स्मृतः ॥ पीयूषपूर्णकलशं दधत्पाशांकुशावपि ॥ ८० ॥ पुत्रार्थी सार्धसाहस्रं कुर्य्यात्तण्डुलपिष्टजम् ॥ पार्थिवान्यथ वा कुर्य्यादर्धलक्षमितानि तु ॥ ८१ ॥ दक्षाङ्कस्थमिति ध्यानं पूजनं च पृथक्पृथक् ॥ दधिभक्तस्तु नैवेद्ये पैष्टेनात्र यथेच्छया ॥ ८२ ॥ आढकीपिष्टसम्भूतं कान्तार्थी शतपञ्चकम् ॥ पार्थिवान्यथवा कुर्य्यादर्द्धलक्षमितानि तु ॥ पृथग्द्वयं द्वयं पूज्यं ध्यानमत्र निरूप्यते ॥ ॥ ८३ ॥ कर्पूरगौरं करुणावतारं संसारसारं भुजगेन्द्रहारम् ॥ सदा रमन्तं हृदयारविन्दे भवं भवानीसहितं नमामि ॥ ८४ ॥ मारणार्थं सप्तशतं लिंगं केशास्थिसम्भवम् ॥ अथ वा लोहलिंगानि तुषजान्यथ वापि च ॥ ८५ ॥ सहस्रमिक्षुदण्डस्य लिंगान्युच्चाटने यजेत् ॥ श्मशानमृत्तिकायास्तु विद्वेषे युतमाचरेत् ॥ ८६ ॥ पूजयेत्कार्य्यवशतो लक्षावधिसहस्रतः ॥ उच्चाटे मारणे द्वेषे ध्यातव्यः पुनरीदृशः ॥ ८७ ॥ कालीहस्ताम्बुजालम्बः शूलप्रोतद्विपच्चयः[1] ॥ मुण्डमालालसत्कण्ठो राववित्रासिताखिलः ॥ ८८ ॥ विना ज्ञानेन मोक्षस्तु नराणां परिजायते ॥ तदा तु कोटिलिंगानि पूजयेद्ध्यानमुच्यते ॥ ८९ ॥ यो योगमायापहृतं च पुंसां ज्ञानं विधत्तेऽखिलवस्तुनिष्ठम् ॥ तं विश्वनाथं कलिकिल्बिषघ्नं ध्याये शिवालिङ्गितमष्टदेहम् ॥ ९० ॥ भोगार्थी लक्षमेकन्तु कुर्य्यात्पुष्पमयानि[2] तु ॥ दिव्यान्भोगानवाप्नोति ध्यानमत्र निरूप्यते ॥ ९१ ॥ वन्दे महेशं सुरसिद्धसेवितं कल्पद्रुमारण्यगतं प्रसन्नम् ॥ पर्य्यङ्कगं शैलसुतासमेतं देवाङ्गनागीतसुनृत्यतुष्टम् ॥ ९२ ॥ निर्विघ्नकाशीवासार्थं लोकद्वयजिगीषया ॥ लिङ्गान्ययुतसङ्ख्यानि धात्रीफलभवानि तु ॥ ९३ ॥ सहस्रमात्रं पित्तल्या यो लिङ्गानि प्रपूजयेत् ॥ यथेष्टं लभते भूमिं त्रिसन्ध्यं त्वेकमेव वा ॥ ९४ ॥ सहस्रत्रितयं रूपकामो गोरोचनोद्भवम् ॥ तावत्संख्यं कान्तिकामः काश्मीरीसंभवं यजेत् ॥ ९५ ॥ मधुपुष्पोद्भवं[3] लिंगं वसन्ते शतमर्चयेत् ॥ प्रत्यहं जायते कामी स्त्रियां तु ध्यानमत्र तु ॥ ९६ ॥

---

१ वैरिसमूहः ॥ २ कुसुमसम्भूतम् ॥ ३ मत्तमधुकुसुमोद्भवम् ॥

ध्याये नित्यं महेशं रजतगिरिनिभं चारुचन्द्रावतंसं रत्नाकल्पोज्ज्वलांगं परशुमृग-
वराभीतिहस्तं प्रसन्नम् ॥ पद्मासीनं समन्तात्स्तुतममरगणैर्व्याघ्रकृत्तिं वसानं
विश्वाद्यं विश्ववन्द्यं निखिलभयहरं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रम् ॥ ९७ ॥ तीर्थार्थी
द्विसहस्राणि सम्यग्लिङ्गानि पूजयेत् ॥ पृथक्पृथग्बिल्वदलैस्तत्र ध्यानमु-
दीर्य्यते ॥ ९८ ॥ विजितमदनदर्प्पः सर्प्पराजोपवीती धवलवृषभगामी
यामिनीनाथमूर्द्धा ॥ विधिहरितपनाद्यैः पूजितः पूजनीयो दिशतु गिरि-
सुताया वल्लभो नो विभूतीः ॥ ९९ ॥ यक्षकर्दमजं[1] लिङ्गं सहस्रं प्रीति-
वर्धनम् ॥ सहस्रपञ्चकं कुर्य्याद्गुडजं प्रीतिवृद्धये ॥ १०० ॥ लक्षन्तु
गुडलिङ्गानां पूजनात्पार्थिवो भवेत् ॥ स्त्री सहस्रं पूजयित्वा भर्तुः प्रियतरा
भवेत् ॥ १०१ ॥ नवनीतस्य लिङ्गानि सम्पूज्येष्टमवाप्नुयात् ॥ भस्मनो
गोमयस्यापि वालुकायास्तथा फलम् ॥ १०२ ॥ त्रिसहस्रं सुहृत्कामी
मासिमासि समर्चयेत् ॥ वर्षैकं निश्चलमना जगन्मित्रं स जायते
॥ १०३ ॥ प्रत्यहं यस्त्वष्टशतं मासमात्रं समर्चयेत् ॥ सशास्त्राभ्यसना-
देव गुरुतोप्यधिको भवेत् ॥ १०४ ॥ प्रातर्गोमयलिङ्गानि नित्यं यस्त्रीणि
पूजयेत् ॥ बृहतीबिल्वजैः पत्रैर्नैवेद्यं गुडमर्प्पयेत् ॥ १०५ ॥ एवं
मासत्रयं कुर्वन्ननल्पं लभते धनम् ॥ एकादशैव लिङ्गानि गोमयस्यैव यो
यजेत् ॥ १०६ ॥ प्रातर्मध्याह्नयोः सायं निशीथे प्रतिवासरम् ॥ स
सर्वाः सम्पदो यायात्षण्मासानेवमाचरेत् ॥ १०७ ॥ यत्र कुत्रापि मोहार्थं
चौराणां वापि शुल्किनाम् ॥ दुर्भूपानामष्टशतं त्रिपक्षं नित्यमर्चयेत्॥ १०८॥
यो यजेत्पिचुमन्दोत्थैः[2] पत्रैर्गोमयजं शिवम् ॥ क्रुद्धं महेश्वरं ध्यायेत्स
पराजयते रिपून् ॥ १०९ ॥ हरिद्रापिष्टजं लिङ्गसहस्रं यः प्रपूजयेत् ॥
स्तम्भयेत्स सहस्राणां पञ्चकेन महीपतिम् ॥ ११० ॥ नित्यं पञ्चशतं
कुर्य्यान्मासं निगडमोचनम् ॥ दुर्गनिर्मुक्तिकामस्तु कुर्य्यात्पञ्चसहस्र-
कम् ॥ १११ ॥ कारागृहादिमुक्त्यर्थमयुतं कारयेत्सुधीः ॥ महादुर्गनि-

---

१ कुंकुमागुरुकस्तूरीकर्पूरं चन्दनं तथा । महासुगन्धमित्युक्तो नामतो यक्षकर्दमः ॥ इति धन्व-
न्तरिः । २ निम्बदलोत्थैः ॥

बद्धस्तु षण्मासान्मोक्षमाप्नुयात् ॥ ११२ ॥ पूजयायुतलिङ्गानां महाराजभयं हरेत् ॥ प्रत्यहं वा पञ्चशतं पूजयेच्च त्रिपक्षकम् ॥ ११३ ॥ शतद्वयं प्रत्यहं यो मासमेकं समर्चयेत् ॥ तस्य चौरभयं नास्ति सुखेनायाति देशतः ॥ ११४ ॥ डाकिन्यादिभये सतसहस्रं वाथ नित्यशः ॥ षण्मासं पञ्चशतकं योर्चयेत्तु तदन्तकः ॥ ११५ ॥ सहस्रपञ्चकं मासि योर्चयेद्वर्षपञ्चकम् ॥ पूर्वजन्मार्जिताद्वापि दारिद्र्यात्परिमुच्यते ॥ ११६ ॥ एकादश यजेन्नित्यं शालिपिष्टमयानि च ॥ लिङ्गानि मासमात्रेण सकलं कल्मषं दहेत् ॥ ११७ ॥ यः कृष्णैश्च तिलैस्सम्यग्लिङ्गं कृत्वार्चयेन्नरः ॥ वर्षत्रयं तस्य सर्वपापनाशः प्रजायते ॥ ११८ ॥ शिशिरे सर्वपुष्पोत्थं लिङ्गं योर्चति चेन्नरः ॥ निष्पापः स्यात्त्रिवर्षं वा पूजयेत्स्फाटिकं तथा ॥ ॥ ११९ ॥ बालवैधव्ययोगस्य नाशार्थमयुतत्रयम् ॥ लिङ्गानामयुतेनैव कन्यका सत्पतिं लभेत् ॥ १२० ॥ यस्त्वेकादशलिङ्गानि रजतोत्थानि पूजयेत् ॥ प्रत्यहं तं सर्वगुणा जायन्ते समुपस्थिताः ॥ १२१ ॥ लिङ्गान्ययुतसङ्ख्यानि तिलपिष्टस्य योर्चयेत् ॥ प्रत्यहं वा रुद्रसङ्ख्यं वर्षाद्ग्राम पतिर्भवेत् ॥ १२२ ॥ ब्रह्मस्वपरिहारार्थं सौवर्णं लिङ्गमर्चयेत् ॥ त्रिसन्ध्यं नक्तभोजी च रुद्रसूक्तपरायणः ॥ १२३ ॥ लवणोद्भवलिङ्गानि योयुतं च पृथक्पृथक् ॥ पूजयेत्तस्य सौभाग्यं निर्धनस्यापि वर्धते ॥ १२४ ॥ यस्त्वन्नस्य शिवं कृत्वा ऋतुमेकं प्रपूजयेत् ॥ शतमेकं प्रत्यहं चेदन्नं क्षेत्रे भवेद्बहु ॥ १२५ ॥ अयुतं शर्करालिङ्गं वर्षाकालेथ वा पुनः ॥ धत्तूरकुसुमोत्थानि लिङ्गान्येकादशार्चयेत् ॥ १२६॥ यवपिष्टोद्भवान्येव लिङ्गानि लवणस्य वा ॥ कृत्वा चायुतसङ्ख्यानि वशीकुर्य्याज्जगत्त्रयम् ॥ १२७ ॥ पृथक्छतत्रयं यस्तु गोमयोत्थानि पूजयेत् ॥ क्षुद्ररोगविनाशः स्यात्षमासाच्च महागदाः॥ १२८ ॥ फलं न जायते दृष्ट्वा यस्य कस्यापि कर्म्मणः॥ फललिङ्गानि पूज्यानि तेन चायुतसङ्ख्यया ॥ १२९ ॥ दूर्वायाश्च गुडूच्या

१ नश्येयुरिति शेषः ॥

वायुतं लिङ्गानि योर्चयेत् ॥ तस्याल्पमृत्युनाशः स्यात्तथा नीवारपिष्टजात् ॥ ॥ १३० ॥ इन्द्रनीलस्य यो लिङ्गं मासषट्कं प्रपूजयेत् ॥ अथ वा ताम्रजं लिङ्गं तस्य सिद्ध्यति पौष्टिकम् ॥ १३१ ॥ स्फाटिकस्य तु यल्लिङ्गं स योगेश्वर उच्यते ॥ लक्षस्य पूजनात्तस्य बहुस्वामित्वमाप्नुयात् ॥ १३२ ॥ पितृगेहादिमोक्षार्थमथ वा पितृमुक्तये ॥ रजतस्य यदा लिङ्गमयुतं परिपूजयेत् ॥ १३३ ॥ अयुतं स्वर्णलिङ्गस्य जनं प्रकरोति यः ॥ स सत्यलोकमाप्नोति सङ्कल्पेनात्र संशयः ॥ १३४ ॥ नागस्य[1] त्रपुषश्चायुष्कामः कांस्यस्य चार्चयेत् ॥ देहसौगन्ध्यलाभाय गन्धकोत्थं समर्चयेत् ॥ १३५ ॥ आद्यकर्षणजं काष्ठजातमेकन्तु निर्धनः ॥ सहस्रं पूजयेद्यस्तु दारिद्र्यात्प्रतिमुच्यते ॥ १३६ ॥ कर्पूरजं शक्तिकामो गोर्थी गोधूमपिष्टजम् ॥ मुद्गपिष्टान्मुदे नित्यं लिङ्गं पूज्यं त्रयं द्विजैः ॥ १३७ ॥ कस्तूरीसम्भवं नित्यं सह गन्धकामुकः ॥ माषपिष्टमयं लिङ्गं नित्यपिष्टान्नसिद्धिदम् ॥ १३८ ॥ यव धान्यमयं लिङ्गं यमलोकनिवारणम् ॥ प्रियंगुपिष्टजं लिङ्गं प्रियदं सर्वदेहिनाम् ॥ १३९ ॥ यः करोति तिलैः श्वेतैः श्वेतद्वीपमहीपतिः ॥ यस्य यच्च प्रियं तस्य लिङ्गं कृत्वा तदाप्नुयात् ॥ १४० ॥ ग्रीष्मे तु मल्लिकापुष्पसम्भवानि सहस्रतः ॥ अयुतं पूजयेद्यस्तु तस्य स्याद्दिगुणाकृतिः ॥ १४१ ॥ नीलोत्पलमयं लिङ्गं कृत्वा शरदि मानवः॥ यस्य कस्यापि कार्य्यस्य सिद्धिं प्राप्नोत्यसंशयः ॥ १४२ ॥ हेमन्ते जातिकुसुमैर्लिङ्गं कृत्वा मनोहरम् ॥ भक्त्या समर्च्य मतिमाञ्छिवेन सह मोदते ॥ १४३ ॥ कोमलेषु तु लिङ्गेषु पार्थिवं श्रेष्ठमुच्यते ॥ कठिनेषु तु पाषाणं पाषाणात्स्फाटिकं परम् ॥ ॥ १४४ ॥ स्फाटिकात्पद्मरागं च काश्मीरं पद्मरागतः ॥ काश्मीरात्पुष्परागोत्थमिंद्रनीलोद्भवं ततः ॥ १४५ ॥ इंद्रनीलात्तु गोमेदं गोमेदाद्विद्रुमोद्भवम् ॥ विद्रुमान्मौक्तिकं श्रेष्ठं तस्माच्छ्रेष्ठं तु राजतम्॥ १४६ ॥ हैरण्यं राजताच्छ्रेष्ठं हैरण्याद्धीरकं वरम् ॥ हीरकात्पारदं श्रेष्ठं बाणलिङ्गं ततः परम् ॥ १४७ ॥

---

१ सीसकस्य ॥

नर्म्मदाजलमध्यस्थं बाणलिङ्गमिति स्मृतम् ॥ बाणासुरार्चितं लिङ्गं बाणलिङ्गमितीरितम् ॥ १४८ ॥ बाणलिङ्गे स्वयम्भूते चन्द्रकान्ते हृदि स्थिते॥ चान्द्रायणसमं ज्ञेयं शम्भोर्नैवेद्यभक्षणम् ॥ १४९ ॥ ग्राह्याग्राह्यविभागोयं बाणलिङ्गे न विद्यते ॥ तदार्पितं जलं चान्नं ग्राह्यं प्रासादसञ्ज्ञया॥ १५०॥ शिवनाममयं लिङ्गं सदा पूज्यं महर्षिभिः ॥ यतश्च सर्वलिङ्गेभ्यस्ताद्धि पज्यतमं मतम् ॥ १५१ ॥ चतुरंगुलमुच्छ्रायं रम्यं वेदिकया युतम् ॥ उत्तमं लिङ्गमाख्यातं पञ्चसूत्रैः सुसाधितम् ॥ १५२ ॥ तदर्धमधमं प्रोक्तं तदर्धमवरं स्मृतम् ॥ तस्मान्न्यूनं पूजनीयं न कदापि न सत्फलम् ॥ १५३ ॥ रुद्राक्षं शिवलिङ्गं च स्थूलंस्थूलं प्रशस्यते ॥ शालग्रामो नार्मदश्च सूक्ष्मः सूक्ष्मो विशिष्यते ॥१५४॥ ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यः शूद्रो वाप्यनुलोमजः ॥ पूजयेत्सततं लिङ्गं तत्तन्मंत्रेण सादरम् ॥ १५५ ॥ विप्राणां वैदिकेनैव मन्त्रेणाराधनं वरम्॥तन्त्रोक्तं दीक्षितानां च तन्त्रोक्तेन विधानतः॥स्मृतमाराधनं शम्भोर्नचावैदिकवर्त्मना ॥ १५६ ॥ दधीचिगौतमादीनां शापनिर्दग्धचेतसाम् ॥ न जायेत तथा श्रद्धा पूते वैदिककर्म्मणि ॥१५७॥ यो वैदिकमनादृत्य स्मार्तकर्म्म तथैव च ॥ अन्यत्समाचरेन्मर्त्यो न स कर्म्मफलं लभेत् ॥ बहवः सिद्धिमेष्यन्ति कलौ पार्थिवलिङ्गतः ॥ १५८ ॥ कृते रत्नमयं लिङ्गं त्रेतायां हेमसम्भवम् ॥ द्वापरे पारदं श्रेष्ठं पार्थिवं तु कलौ युगे ॥ १५९ ॥ यथालब्धोपचारैश्च भक्तिश्रद्धासमन्वितः ॥ पूजयेत्पार्थिवं लिङ्गं शास्त्रोक्तविधिना नरः ॥ १६० ॥ पञ्चसूत्रविचारं च पार्थिवे न विचारयेत् ॥ यथाकथंचिद्विधिना रमणीयं प्रकल्पयेत् ॥ १६१ ॥ द्विखण्डं तु प्रकुर्वाणो नैव पूजाफलं लभेत् ॥ रत्नहेमधरासूतपिष्टस्फटिकसम्भवम् ॥ ॥ १६२ ॥ एकखण्डम्भवेल्लिङ्गमितरे च चराचरे ॥ कुर्य्यात्तदेकखण्डं तु द्विखण्डं तु स्थिरं स्मृतम् ॥ १६३ ॥ विप्राणां मृत्तिका श्वेता क्षत्रियाणां तथारुणा ॥ विशा पीता च शूद्राणां कृष्णा वा लभ्यते यथा ॥ १६४ ॥ भवाय भवनाशाय महादेवाय धीमहि ॥ उग्राय चोग्रनाशाय शर्वाय शशिमौलिने ॥ १६५ ॥ विलोमानां पूजनार्थं मन्त्रोयं परिकीर्तितः ॥ ततः

पूजासमाप्तौ तु दद्यात्पुष्पाञ्जलित्रयम् ॥ १६६ ॥ जपं पञ्चाक्षरस्यापि कुर्य्या-
दष्टोत्तरं शतम् ॥ वक्ष्यमाणां स्तुतिं पश्चात्पठेद्देवस्य तुष्टये ॥ १६७ ॥
नमो[१]ङ्कारस्वरूपाय नमोक्षरवपुर्धृते ॥ नमो नादात्मने तुभ्यं नमो बिन्दुकला-
त्मने ॥ १६८ ॥ अलिङ्गलिङ्गरूपाय रूपातीताय वै नमः ॥ त्वं माता सर्व-
लोकानां त्वमेव जगतः पिता ॥ १६९ ॥ त्वं त्राता त्वं सुहृन्मित्रं त्वं प्रियः
शिवरूपधृक् ॥ त्वं गुरुस्त्वं गतिः साक्षी त्वं पिता त्वं पितामहः ॥ १७०॥
नमस्ते भगवन्रुद्र भास्करामिततेजसे ॥ नमो भवाय देवाय धर्म्मरूपहिताय
च ॥ १७१ ॥ शिवाय क्षितिपालाय सदासुरभिदे नमः ॥ पशूनां पतये
चैव पावकामिततेजसे ॥ १७२ ॥ भीमाय व्योमरूपाय शब्दमात्राय ते
नमः ॥ महादेवाय सोमाय अमृताय नमोस्तु ते ॥ १७३ ॥ उग्राय यजमा-
नाय नमस्ते कर्म्मयोगिने॥ ओङ्काराय नमस्तुभ्यं धर्म्मगोवाहनाय च॥ १७४॥
पार्थिवस्य च लिङ्गस्य यन्मया पूजनं कृतम् ॥ अनेन भगवान्रुद्रो वाञ्छि-
तार्थं प्रयच्छतु ॥ १७५ ॥ इति स्तुत्वा जपं कृत्वा प्रणिपत्य विसर्जयेत्॥
अथैकादशलिङ्गानां विधानमभिधीयते ॥ १७६ ॥ एकं लिङ्गं प्रतिदिनं
षोडशैरुपचारकैः ॥ पूजयेद्द्रोणपुष्पैर्घृतमेव समर्पयेत् ॥ १७७ ॥ एवं
शतदिनं सर्वऋणान्मुक्तिः प्रजायते ॥ लिङ्गद्वयं प्रतिदिनं षोडशैरुपचारकैः ॥
पुष्पाणि मल्लिकायास्तु नैवेद्यार्थं गुडस्स्मृतः ॥ १७८ ॥ दिनानां त्रिशतं
कुर्य्यादयुतं पुत्रमाप्नुयात् ॥ दिनं प्रति त्रयं कृत्वा षोडशैरुपचारकैः॥ १७९॥
करञ्जपुष्पैः कर्पूरं नैवेद्यं सम्प्रदर्शयेत् ॥ दिनानां पञ्चशतकं कन्या भवति
शोभना ॥ १८० ॥ चतुष्टयं प्रतिदिनं षोडशैरुपचारकैः ॥ पूजयेद्यवनैवेद्यं
पुष्पाणि चम्पकस्य तु ॥ १८१ ॥ दिनं पञ्चशतं कृत्वा विवाहो जायते
ध्रुवम् ॥ षट्षड्बकुलपुष्पैश्च नैवेद्यं क्षौद्रमेव च ॥ १८२ ॥ महतः कलहा-
न्मुक्तिर्दिनानां स्याच्छतत्रयात् ॥ सप्त प्रतिदिनं पुष्पैः शतपत्रैः प्रपूजयेत्
॥ १८३ ॥ दध्योदनं च नैवेद्यं दिनपञ्चशतैर्युतम् ॥ उद्दिष्टं मनसि यत्तीर्थं
तद्भवेद्देवतापि च ॥ १८४ ॥ यस्तु प्रतिदिनं चाष्टबिल्वपत्रैः समर्चयेत् ॥

---

१ यस्य लोपश्शाकल्येति लोपेपि पूर्वत्रेति नासिद्धत्वं छान्दसत्वात्तेनोमाङोरिति पररूपम् ।

नैवेद्यं तत्र लड्डूका उपचाराश्च षोडश ॥१८५॥ शतत्रयदिनं कृत्वा महाविद्यागमो भवेत् ॥ नवप्रतिदिनं कृत्वा नैवेद्यं पञ्चमासकम् ॥ १८६ ॥ बन्धूपुष्पैश्च पूजा स्याद्दणमुक्तो धनी भवेत् ॥ दश प्रतिदिनं वर्षमेकं काञ्चनपुष्पकैः॥ १८७॥ नैवेद्यार्थमपूपास्स्युर्दूरदेशागमो भवेत्॥ एकादश प्रतिदिनं नैवेद्यं पञ्चखाद्यकम् ॥ १८८ ॥ पुष्पाणि करवीरस्य काञ्चनं रजतादिकम् ॥ मुक्ताफलप्रवालादि यदिष्टं प्राप्नुयाच्च तत् ॥ १८९ ॥ उद्यापनविधिं वक्ष्ये समाप्तौ तत्समाचरेत् ॥ लिङ्गार्चने च सम्पूर्णे सञ्जाते च मनोरथे ॥१९०॥ कुर्य्याल्लिङ्गं तु सौवर्णं रौप्यं ताम्रमथापि वा ॥ वित्तशाठ्यं न कुर्वीत तत्प्रमाणेन निर्मितम् ॥ १९१ ॥ महाशैवाख्ययोगोयमार्द्रा सोमश्चतुर्दशी ॥द्वयोर्योगे शैवयोग एकस्मिंस्तु दिनं शिवम् ॥ १९२ ॥ महायोगेनन्तफलं बहुलं शैवयोगके ॥ यथोक्तं शिवयोगे तु फलं प्राप्नोति मानवः ॥ १९३ ॥ उपोष्य प्रथमे चाह्नि सम्पूज्य परमेश्वरम् ॥ आचार्य्यं ब्राह्मणांश्चापि होमार्थं वृणुयात्ततः ॥ १९४ ॥ गणेशमम्बां संपूज्य शिवं संस्थाप्य पूजयेत् ॥ प्राणप्रतिष्ठापूर्वन्तु वह्निस्थापनमाचरेत् ॥ १९५ ॥ आचार्य्यमृत्विजश्चापि वरयेद्दक्षिणादिना ॥ यत्सङ्ख्याकं यजेल्लिङ्गं तन्मितं होममाचरेत् ॥१९६॥ आयुष्कामो घृतैस्तत्र धनार्थी वापि पायसैः ॥ तिलाज्याभ्यां चरेद्धोममेतद्भिन्नं यदर्थयेत् ॥ १९७ ॥ रात्रौ जागरणं कुर्य्याद्गीतवाद्यपुरस्सरम् ॥ तर्प्पणं मार्जनं कुर्य्यात्ततो ब्राह्मणभोजनम् ॥ १९८ ॥ बटुकानां कुमारीणां गणं साम्बिकतुष्टये ॥ पुनर्लिङ्गं पूजयित्वा दद्यात्तं गुरवे पुनः ॥ १९९ ॥ वस्त्रालङ्करणाद्यैश्च गुरुं यत्नेन तोषयेत् ॥ दक्षिणां भूयसीं दत्त्वा सुहृद्भिस्सह भोजनम् ॥२००॥ यथा कुर्य्यादिति प्रोक्तं लिङ्गस्योद्यापनम्परम् ॥ विधिः प्रोक्तः पार्थिवानां सर्वकामप्रपूरकः ॥ २०१ ॥ उद्यापनेन सहितः किमन्यच्छ्रोतुमिच्छसि ॥ २०२ ॥

इति श्रीमहामायामहाकालानुमते मेरुतन्त्रे शिवप्रणीते पार्थिवपूजाविधिः वर्णनंनाम नवमः प्रकाशः ॥ ९ ॥

---

१ बन्धुर्बन्धूकपुष्पे स्यादित्यभिधानाद्बन्धुजीवकपुष्पमित्यर्थः ।

श्रीदेव्युवाच ॥ क्वचिद्दक्षं क्वचिद्वामं क्वचित्सौरं च शाम्भवम् ॥ ऊर्ध्वा-म्नायं क्वचिद्दक्षमुत्तरं पश्चिमं क्वचित् ॥ १ ॥ अधआम्नायकं चापि गाण-पत्यं च वैष्णवम् ॥ पारसीकं क्वचिद्बौद्धं पाखण्डं च क्वचित्क्वचित् ॥ २॥ तत्तत्प्रकरणे स्तौषि क्वचिन्निन्दसि तं पुनः ॥ क्वचिन्निर्दैवतं मार्गं वेदान्तं वैदिकं क्वचित् ॥ ३ ॥ द्वीपधर्म्मान्खण्डधर्म्मान्कुलधर्म्मान्क्वचित्क्वचित् ॥ देशधर्म्मान्कालधर्म्माञ्जातिधर्म्मान्क्वचित्क्वचित् ॥ ४ ॥ तन्त्रोत्तममिदं तन्त्रं प्रसन्नश्चेन्ममोपरि ॥ तदा तत्त्वं मम ब्रूहि निःसन्देहां च मां कुरु ॥ ५ ॥ श्रीशिव उवाच ॥ अहो कालस्य माहात्म्यं तन्त्रे तन्त्रे त्वया पुनः ॥ पृच्छ्यते तत्तदाधिक्यं साहङ्कारं ब्रवीमि तत् ॥ ६ ॥ प्रज्ञेयं सात्त्विकी काचिज्जाता कालस्य यत्त्वया ॥ उपकाराय सर्वेषां पृष्टं तत्त्वं ब्रवीमि तत् ॥ ७ ॥ यथा बालस्य पितृगीस्तथा वेदध्वनिर्हिता ॥ कलेर्दशसहस्राणि यदा वर्षाणि यान्ति च ॥ ८ ॥ वेदो नारायणः साक्षात्कालावयवजन्तुभिः ॥ न श्रूयते तदा देवि ज्ञेयः कालः समागतः ॥ ९ ॥ वाग्जृम्भाक्षुतपादादिशब्दा उत्पत्तिनश्वराः ॥ वेदभिन्नानि शास्त्राणि तथा जानन्तु देवताः ॥ १० ॥ यस्य शास्त्रस्य लोकेऽस्मिन्प्रचारो यावदस्ति ह ॥ तावत्तन्मार्गिणां सौख्यं वेद-मार्गोऽय कुण्ठितः ॥ ११ ॥ तस्मात्तन्मार्गकर्तारः शिष्यांस्तत्सम्प्रदायिनः ॥ तानानयन्ति स्वे मार्गे यत्तत्तावत्सुखं भवेत् ॥१२॥ नृणां ज्ञानं यथा षड्भि-रिन्द्रियैरभिजायते ॥ तथा षडङ्गैर्वेदार्थज्ञानं भवति निश्चितम् ॥ १३ ॥ कर्म्मेन्द्रियाणि च नृणां यथा पञ्चमितानि च ॥ तथा कालमहेशस्य पञ्चा-म्नाया मयोदिताः ॥१४॥ ऊर्ध्वाम्नायं समुद्दिष्टं वाचिकं कर्म्म तस्य तत् ॥ तत्र प्रमाणं वेदास्स्युस्तदंशाः स्मृतयस्तथा ॥ १५ ॥ तदङ्गानि पुराणानि गायत्र्याद्याश्च देवताः ॥ ब्रह्मबीजं[1] तथा क्षेत्रं[2] संस्कारा[3]द्ब्राह्मणा मताः ॥ ॥ १६ ॥ ब्राह्मणाचरणं ब्रह्मविद्याभिर्ब्राह्मणो भवेत् ॥ यस्य वश्या वयं यस्य वाचमर्थोऽनुधावति ॥ १७ ॥ एकस्मिल्लँक्षणे हीने वागर्थमनुधा-

---

१ ब्रह्मबीजादुत्पन्नः ॥ २ तन्माता ब्राह्मणी ॥ ३ ब्राह्मणसंस्कारसंस्कृतश्च ॥

वति ॥ द्विहीने लक्षणे देवि स्वाचाराद्ब्राह्मणो भवेत् ॥ १८ ॥ लक्षणत्रयहीनो यस्तन्त्रमार्गेण सिद्ध्यति ॥ चतुर्लक्षणहीनानां मार्गास्स्युः कौलिकादयः ॥ १९ ॥ एतल्लक्षणभिन्नेन यथादेशं यथाकुलम् ॥ यथाजाति यथाकालं कर्तव्यो धर्म्मसंग्रहः ॥ २० ॥ मिथ्यासम्भाषणं स्तेयं सर्वमार्गेषु गर्हितम् ॥ यत्किञ्चिज्जन्म यत्कर्म्म न जपोन तपः क्रियाः ॥ २१ ॥ जीवन्मुक्तः सत्यवक्ता सत्ये सर्वं प्रतिष्ठितम् ॥ अहिंसा परमो धर्म्मः सोपि वाक्कायकर्म्मभिः ॥ २२ ॥ दृढो यत्र न चाचारो न जातिः स च मुक्तवत् ॥ इह लोके सुखं भुक्त्वा यात्यन्ते परमं पदम् ॥ २३ ॥ परसन्तापरहिते तन्निष्ठा यस्य चेतसि ॥ मुक्तं कालेपि जानीहि जीवन्मुक्तं न संशयः ॥ २४ ॥ यदिन्द्रियज्ञानवती सृष्टिर्भवति मैथुनात् ॥ त्यक्तं तन्मनसा येन जीवन्मुक्तः स एव हि ॥ २५ ॥ यथेच्छालाभसन्तुष्टः स्तौति नो न च निन्दति ॥ न मुत्सुखे न दुःखं स्यात्कर्म्मणा स विमुच्यते ॥ २६ ॥ हित्वा विषयसौख्यं च परं सन्तोषमास्थितः ॥ यावद्देहस्य निर्वाहस्तावत्कालं परिक्षिपेत् ॥ २७ ॥ कामक्रोधादिरहितस्तपस्तपति निर्जने ॥ न फलं कामयेत्किञ्चिज्जीवन्मुक्तः स एव हि ॥ २८ ॥ दुर्विज्ञेया दुर्निवारा महाकालस्य गेहिनी ॥ तदंशाराधनात्सैव प्रसन्ना चेद्विमुञ्चति ॥ २९ ॥ सुबुद्धिभिः प्रियैः पुत्रैर्यथा माता प्रतार्य्यते ॥ तथा प्रतार्य्यते चेयं जीवन्मुक्तः स उच्यते ॥ ॥ ३० ॥ कृतं बन्धार्थमनया भक्ष्यं पानं च मैथुनम् ॥ येनैवं विदितं बन्धात्स्वयं मुक्तस्तदा भवेत् ॥ ३१ ॥ देवाः पूजनमिच्छन्ति तस्माद्बद्धाः परिग्रहात् ॥ शुकवद्योप्रतिग्राही जीवन्मुक्तः स कोपि हि ॥ ३२ ॥ शौरं प्रकुर्वतो नित्यं विष्ठाबुद्धिः कलेवरे ॥ देहाभिमानो गलितो जीवन्मुक्तस्स एव हि ॥ ॥ ३३ ॥ एष वै सुगमोपायो नात्र कार्या विचारणा ॥ वेदस्याभ्यासतः सर्वं यो नयेत्स तु मोक्षवान् ॥ ३४ ॥ कोहं किं दृश्यते कर्ता कोस्य याति क्व चेतसि ॥ इति सम्भावयन्नित्यं महाकाले लयं व्रजेत् ॥ ३५ ॥ वामिकैः कौलिकैस्तस्मादज्ञातैश्च गुरुं विना ॥ समस्तैरथवाज्ञातैर्वञ्चितेयं न चेतरैः ॥ ॥ ३६ ॥ बद्धेयो बंधनैस्तस्य त्रोटयेद्बंधनानि च ॥ भावयेद्यो महाकालं जीव-

न्मुक्तस्तदा भवेत् ॥ ३७ ॥ बन्धमोक्षप्रकारास्तु तन्त्रे सङ्कलिता मया ॥ यैर्ज्ञाता गुरुमार्गेण तैर्बन्धोयं विमोचितः ॥ ३८ ॥ कुगुरोर्मुखतो वापि ज्ञानाभासाच्च पुस्तकात् ॥ स्वधर्मं ये परित्यज्य येत्र मग्नास्तु ते हताः ॥ ॥ ३९ ॥ तस्माद्धर्म्मं प्रवक्ष्यामि वामिनामधिकारिणाम् ॥ येषां भोगोपि मोक्षोपि भवेद्येषां च दुर्गतिः ॥ ४० ॥ अवश्यमेव कर्तव्याः शिष्या वामेधिकारिणः ॥ गुरोस्तेन भवेत्तेजः शिष्योपि लभते सुखम् ॥ ४१ ॥ मोहेन चाथ लोभेन दीक्षामनधिकारिणे ॥ यो दद्यात्स दरिद्रः स्याच्छिष्यः स्याद्दुःखभाजनम् ॥ ४२ ॥ पूर्वोक्तलक्षणेष्वेकं यस्मिन्विप्रे न दृश्यते ॥ उपतापं स वै कुर्य्यात्किञ्चिद्ब्राह्मणतां गतः ॥ ४३ ॥ अधिकारो न मे जातः समस्तब्रह्मकर्म्मणाम् ॥ इह लोके परत्रापि कथं लप्स्याम्यहं सुखम् ॥ ४४ ॥ अन्धश्च यः परद्रव्ये परस्त्रीषु नपुंसकः ॥ परापवादे यो मूको नित्यमित्थं विचारयेत् ॥ ४५ ॥ तस्यैव ब्राह्मणस्यात्र ब्राह्मणत्वाधिकारिता ॥ अब्राह्मणास्तु ये केचिन्मांसे मद्ये रता वयम् ॥ ४६ ॥ कथं लभामहे मोक्षमिति चिन्तापरायणाः ॥ पूर्वोक्तलक्षणैर्युक्तास्तेपि शिष्याः प्रकीर्तिताः ॥ ४७ ॥ पञ्चलक्षणसंयुक्तो ब्राह्मणः काल एव सः ॥ अहं ब्रह्मा तथा विष्णुस्तस्याज्ञावशवर्तिनः ॥ ॥ ४८ ॥ स चेद्वामपथं यातः पुनः श्वा चापि जायते ॥ चतुर्लक्षणसम्पन्नो विप्रो ज्ञेयोस्ति मध्यमः ॥ ४९ ॥ ताभ्यां दत्तोऽभाग्यवशात्तान्त्रिकः कोपि चेन्मनुः ॥ सद्यः फलति चाद्यस्य क्रियया चापरस्य तु ॥ ५० ॥ लक्षणत्रययुक्तो यस्तस्य वैदिकतान्त्रिके ॥ यथोक्ताचरणादेव फलदे स्तो न वामके ॥ ५१ ॥ लक्षणद्वयसंयुक्तस्तस्य वामश्च दक्षिणः ॥ मन तुल्यफलौ स्यातां न कदाचन वैदिकः ॥ ५२ ॥ एकलक्षणसंयुक्तो वामस्तस्य फलप्रदः ॥ शूद्रादियवनान्तानां सिद्धिर्वामपथे स्थिता ॥ ५३ ॥ वाममार्गस्थितो विप्रस्तुलसीं न स्पृशेत्क्वचित् ॥ न स्पृशेद्वैष्णवं विप्रं प्रणमेन्न च वैदिकम् ॥ ५४ ॥ हीनो विप्रः क्षत्रियाद्या वाममार्गरता अपि ॥ तद्भक्तत्वाद्भवेतैर्विष्णोः पूता निष्किल्बिषास्तथा ॥ ५५ ॥ वक्ष्येथ प्रकटं धर्म्मं वामगानां सुखावहम् ॥ सत्सङ्गश्च विवेकश्च निश्चलं नयनद्वयम् ॥ ५६ ॥ यस्य नास्तीतरस्सोपि कथं वामे

सुखं लभेत् ॥ सांसारिकसुखासक्तं ब्रह्मज्ञोस्मीति वादिनम् ॥ ५७ ॥ कर्म्म-ब्रह्मोभयाभ्रष्टं त्यजेदुत्पथगं यथा ॥ मद्यं मांसं सुरापानं मत्स्यस्त्रीबान्धवास्तथा ॥ ५८ ॥ अनेके यत्र जायन्ते तत्र वामो गतिप्रदः ॥ स्थित्वा तु दक्षिणे मार्गे गुप्तं भुक्तं पलादिकम् ॥ ५९ ॥ स याति नरकं घोरं विष्ठायां जायते कृमिः ॥ अतो द्विजैः सदा सेव्यो वैदिको धर्मसञ्चयः ॥ ६० ॥ विना बलिं पलं योत्ति विना पूजां सुरां पिबेत् ॥ दूतीयज्ञं विनान्यस्य स्त्रीगो वापि स नारकी ॥६१॥ अबुद्ध्वा समयाचारं कुलधर्म्मं चरेद्यदि ॥ स गुरुश्चैव शिष्यश्च योगिनीनां भवेत्पशुः ॥ ६२ ॥ वाममार्गमजानन्योधिकारी मोक्षमिच्छति॥ पारावारमपारं स बाहुभ्यां तर्तुमिच्छति ॥ ६३ ॥ सर्वकर्म्मविहीना ये वर्णा-श्रमविवर्जिताः ॥ कौले वा वाममार्गे ते भुक्तिमुक्त्योश्च भाजनम् ॥ ६४ ॥ निन्दन्तु बान्धवास्सर्वे त्यजन्तु तु सुतादयः ॥ जना हसन्तु मां दृष्ट्वा राजानो दण्डयन्तु वा ॥ ६५ ॥ रोगदारिद्र्यदुःखाद्यैः पीडितोप्यनिशं त्वहम् ॥ लक्ष्मीस्तिष्ठतु वा यातु न मुञ्चामि पथस्त्विमान् ॥ ६६ ॥ एवं यस्य दृढा भक्तिस्स वामे सिद्धिमाप्नुयात् ॥ नार्थलोभान्न च क्रोधान्न द्वेषान्न च मत्सरात् ॥ ६७ ॥ न कामान्न भयाद्वापि मार्गं प्राप्तं परित्यजेत् ॥ प्रत्यहं नार्चयेद्देवीं मार्गेस्मिन्विघ्नमाप्नुयात् ॥ ६८ ॥ गुरुकारुण्यपूतो हि देहनिर्धूतकल्मषः॥ कुल[1]-पूजारतो यस्तु सोयं कौलो न चेतरः॥६९॥परोक्षे कोनुजानीते कस्य किञ्च भविष्यति॥ यद्वा प्रत्यक्षफलदन्तदेवोत्तमदर्शनम् ॥ ७० ॥ गुरूपदेशरहिता म-हान्त इति केचन ॥ मोहयन्ति जनान्केचित्स्वयं पूर्वविमोहिताः ॥ ७१ ॥ पेयं मद्यं पलं खाद्यं समालोक्यं प्रियामुखम् ॥ इत्येवाचरणं प्रोक्तं पामराः प्रवदन्ति च ॥ ७२ ॥ मद्यपानेन मुनयो यदि सिद्धिं लभन्ति चेत् ॥ मद्यपा-नरताः सर्वे किं सिद्धा न भवन्त्विमे ॥७३॥मांसभक्षणमात्रेण यदि पुण्या ग-तिर्भवेत् ॥ क्रव्यादानां तदा मोक्षो मांसादन्यन्न भुञ्जते ॥ ७४ ॥ स्त्रीसम्भो-गेन भो देवा यदि मुक्तिः प्रजायते ॥ तदा सर्वेपि मुक्तास्स्युः कस्य जन्म

[1] कौलधर्मम् ।

भविष्यति ॥ ७५ ॥ कृपाणधारागमनं व्याघ्रकर्णावलम्बनम् ॥ भुजङ्गाव- रणं नूनं शक्यं वै कुलवर्त्मतः ॥ ७६ ॥ वृथापानं तु देवेशि सुरापानमि- होच्यते ॥ तन्महापातकं ज्ञेयं वेदादिषु निरूपितम् ॥ ७७ ॥ अनाघ्रेयमना- लोक्यमवश्यं चाप्यपेयकम् ॥ मद्यं मांसं पशूनां तु कौलिकानां महत्फलम् ॥ ॥ ७८ ॥ अमेध्यानि द्विजातीनां मद्यान्येकादशैव व हि ॥ द्वादशं तु सुरामद्यं सर्वेषामुत्तमं स्मृतम् ॥ ७९ ॥ तस्माद्विप्रो हि राजन्यो वैश्यश्च न सुरा पिबेत् ॥ सुरादर्शनमात्रेण कुर्य्यात्सूर्य्यावलोकनम् ॥ ८० ॥ तस्य संसर्गमा- त्रेण प्राणायामत्रयं चरेत् ॥ आजानुभ्यां भवेत्स्नानं नाभ्यामुपवसेदहः ॥ ॥ ८१ ॥ ऊर्ध्वं नाभेस्त्रिरात्रं तु मद्यस्य स्पर्शने विधिः ॥ सुरापाने कृते वह्नि- ज्वलद्दण्डं प्रवेशयेत् ॥ ८२ ॥ मुखे तेन विनिर्दग्धे तच्छुद्धिं समवाप्नुयात् ॥ अभिघातेन यो हन्यादात्मार्थं प्राणिनः प्रिये॥८३॥ निवसेन्नरके घोरे दिनानि पशुरोमभिः॥सम्मितानि दुराचारस्तिर्य्यग्योनिषु जायते ॥ ८४ ॥ अनुमन्ता विभक्ता च निहन्ता क्रयविक्रयी ॥ संस्कर्ता चोपभोक्ता च खादत्यष्टौ च ते समाः॥८५॥ धनेनाक्रीय तं हन्ति खादिता चोपभोगकः॥घातको वधबन्धा- द्यैरित्येकस्त्रिविधो मतः ॥ ८६ ॥ तृणं चाप्यविधानेन छेदयेन्न कदाचन ॥ विधिवद्वां द्विजं वापि हत्वा पापैर्न लिप्यते ॥ ८७ ॥ सर्वेभ्यः कौलिकः श्रेष्ठ ऊर्ध्वाम्नायी च वामगः ॥ अधिकारी भक्तियुक्तो यो भवेद्गुरुसेवकः ॥ ॥ ८८ ॥ संहारः पश्चिमाम्नाये उत्तरेनुग्रहो भवेत् ॥ मन्त्रयोगं विदुः पूर्वं भक्तियोगं तु दक्षिणम् ॥८९॥ पश्चिमं कर्म्मयोगं तु ज्ञानयोगं तथोत्तरम् ॥ मातृकान्याससंस्थाने वामे कौलिकवर्त्मनि ॥ ९० ॥ प्रपञ्चयोगनामानं न्यासं कुर्य्यात्स उच्यते ॥ श्रीप्रपञ्चे द्वीपमाये कमलाजलधी तथा ॥ ९१ ॥ गिरिविष्णुवल्लभे च पट्टनं पद्मधारिणी ॥ समुद्रतनयापीठे क्षेत्रयुग्लोकमातृका ॥ ९२ ॥ वनं कमलवासिन्यपीन्दिरा चाश्रमस्तथा ॥ मागुहौ तु रमागुल्फौ पद्माचरणकौ तथा ॥९३॥ नारायणप्रियोद्भिज्जौ द्विलक्ष्मीः स्वेदजान्विता॥

---

१ मद्यस्य।

अण्डजाश्च महालक्ष्मीस्तु जरायुजलक्ष्मिका ॥ ९४ ॥ स्वरस्थाने षोडशैव युग्मानि स्पर्शकेष्वथ ॥ आर्य्यालवौ त्रुट्यमे च चण्डिका च कलान्विता ॥ ॥ ९५ ॥ काष्ठादुर्गे निमेषाख्यशिवे श्वासो ह्यपर्णिका ॥ अम्बिकाघटिके चैव मुहूर्तश्च सतीयुतः ॥ ९६ ॥ ईश्वरीप्रहरौ चैव शाङ्करी दिवसान्विता ॥ ईशानी चापि सन्ध्या च पार्वती रात्रिसंयुता ॥ ९७ ॥ सर्वमङ्गलया युक्तां स्थितिं न्यस्येत्ततः परम् ॥ दाक्षायण्या तथा वारं हैमवत्यायुतं न्यसेत् ॥ ॥ ९८ ॥ नक्षत्रं च महामायायुक्तं योगं न्यसेत्ततः ॥ माहेश्वर्य्या च करणं मृडान्या पक्षमेव च ॥ ९९ ॥ रुद्राणी माससंयुक्ता शर्वाणी राशिसंयुता ॥ अथर्त्तुपरमेश्वर्य्यौ काली चायनसंयुता ॥ १०० ॥ कात्यायनी वत्सरयुग्गौरी युगसमन्विता ॥ भवानीप्रलयौ चाथ यादिस्थानेषु विन्यसेत् ॥ १०१ ॥ पञ्चभूतयुता ब्राह्मी पञ्चतन्मात्रसंयुता ॥ वागीश्वरी ततो वाणी पञ्चकर्म्मेन्द्रियान्विता ॥ १०२ ॥ सुज्ञानेन्द्रियसावित्री सानिला च सरस्वती ॥ गायत्री गुणयुक्ता च वागन्तःकरणान्विता ॥ १०३ ॥ अवस्थायुक् शारदा च धातुयुक्ता च भारती ॥ दोषयुक्ता प्रिया चेति व्यापकं विद्यया न्यसेत् ॥ १०४ ॥ त्रितारमूलविद्यान्ते मातृकाक्षरतः परम् ॥ वदेत्प्रपञ्चरूपायै श्रियै नम इति क्रमात् ॥ १०५ ॥ प्रपञ्चादिभिराढ्यान्त्यवर्णयुक्तिं तु योजयेत् ॥ मातृकान्याससंप्रोक्तस्थानेषु तदनन्तरम् ॥ १०६ ॥ त्रितारमूलकस्यैव प्रपञ्चस्य[1] स्वरूपतः ॥ आर्य्यां पराम्बादेव्यै च नमोक्त्या व्यापकं न्यसेत् ॥ १०७ ॥ प्रपञ्चन्यास एवं स्याद्भुवनन्यास उच्यते ॥ त्रितारमूलमन्त्रान्ते विभागेनाक्षराणि च ॥ १०८ ॥ सानुस्वाराणि चोच्चार्य्य भूतलादिकनाम च ॥ लोकानीह शतान्ते तु कोटि गुह्यपदं वदेत् ॥ १०९ ॥ योगिनीमूलदेव्यास्तु नामाथाधारशक्ति च ॥ देव्यै नम इति प्रोच्य प्रोक्ताङ्गेषु प्रविन्यसेत् ॥ ११० ॥ अक्षराणां विभागस्तु अकारादित्रयं त्रयम् ॥ अर्धेन्दुयुक् ततः स्थाने स्थानयुग्मे द्वयं द्वयम् ॥ १११ ॥ कादिकास्सप्तवर्गाश्च लक्षं चापि चतुर्दश ॥ अथ नामानि लोकानामतलं वितल तथा ॥ ११२ ॥ सुतलाख्यं महातलं तलातलरसातले ॥

१ सन्धिरार्षः ।

पातालं भूर्भुवः स्वश्च महर्जनस्तपस्तथा ॥ ११३ ॥ सत्यं चेत्यथ गुह्या-
दिस्थाने यत्र तदुच्यते॥ गुह्यान्तरं द्वितीयेथ चातिगुह्यमचिन्त्यकम्॥११४॥
महागुह्यं स्वतन्त्रं च परमं गुह्यमग्रतः ॥ ॐकारं योगिनीस्थाने रहस्यं ज्ञा
नमग्रतः ॥११५॥ रहस्यं च क्रियामुक्ताथाष्टमे विनियुज्यते ॥ रहस्यं
डाकिनीं चाथ महारहस्यहाकिनी ॥ ११६ ॥ महागुरं काकिनीं च गुप्तत-
रं च शाकिनी ॥ गुप्तं श्रीहाकिनीं पश्चान्महाकायं च याकिनीम् ॥ ११७ ॥
न्यसेद्वामी क्रमान्न्यस्यौ गुल्फौ जघनजानुनी ॥ ऊरुगुल्फौ च मलाधारं
स्वाधिष्ठाननाभिकम् ॥ ११८॥ हृदंसकण्ठभालानि ब्रह्मरन्ध्रमिति क्रमात् ॥
त्रितारमूलमन्त्रान्ते चतुर्दश तु वं वदेत् ॥ ११९॥ अधिपायै पराम्बायै देव्य
हृद्व्यापकं न्यसेत् ॥ मूर्तिन्यासं प्रवक्ष्यामि तत्रादौ प्रणवत्रयम् ॥१२०॥
मूलमन्त्रं समुच्चार्य्य न्यासं कुर्य्यात्तदुच्यते ॥ चतुर्थीनमसा युक्तान्प्रोक्ता-
ङ्गेषु प्रविन्यसेत् ॥ १२१ ॥ मानादौ श्रिया चान्ते मस्तके केशवाक्षये ॥
मुखे नारायणौष्ठे च दक्षस्कन्धे च माधवः ॥ १२२ ॥ ईशान्या सहितो
वामे गोविन्दश्चोग्रयान्वितः॥ विष्णूर्ध्वनयने दक्षपार्श्वे तु मधुसूदनः॥१२३॥
ऋद्धिश्च वामपार्श्वेऽथ दक्षकट्यां त्रिविक्रमः ॥ रुक्मिणीयुग्वामकट्यां
कान्तियुक्तस्तु वामनः ॥ १२४ ॥ दक्षोरौ श्रीधरोद्धारौ वामे दोषाकर-
स्थितौ ॥ एकनासाहृषीकेशो दक्षजानुनि विन्यसेत् ॥ १२५ ॥ एकारिणी
पद्मनाभौ वामे चौघवती भवेत् ॥ दामोदरोथ दक्षायां जङ्घायां वासुदेव-
युक् ॥ १२६ ॥ अर्कमानाथ वामायां जङ्घायामञ्जनप्रभा ॥ सङ्कर्षणयुता
दक्षपादे प्रद्युम्नसंयुता ॥ १२७ ॥ अस्थिमाला वामपादे ह्यनिरुद्धो धरा-
युतः ॥ एते षोडश विन्यस्याः सानुस्वारादिपूर्वकाः ॥ १२८ ॥ विष्णुभक्ति-
युतानान्तु न्यासोयं परिकीर्तितः ॥ शैवन्यासे दक्षपादे करमद्राभवौ मतौ ॥
॥ १२९ ॥ वामे खगबलाशर्वौ गतिदा च फलप्रदः ॥ ऋद्धियुग्दक्षईशानौ
जगत्स्थानसमन्वितः ॥ १३० ॥ क्रमान्न्यसेत्तथा चैव तत्पुरुषोडुवल्लभौ ॥

१ वृद्धिरार्षी ।

अघोरा ज्ञाननादी च ततष्टङ्को धरायुतः ॥ १३१ ॥ वामदेवोथ सद्याख्या जष्टङ्कधरदामिनी ॥ ब्राह्मोत्राथ भवेन्न्यासः पादे ब्रह्मा च पक्षिणी॥ १३२॥ प्रजापती रञ्जनी च जङ्घयोरथ जानुनोः ॥ वेधालक्ष्म्यौ चोरुगे च स्रष्टारं हरिताननाम् ॥ १३३ ॥ ललाटे ललितां न्यस्येत्तथैव चतुराननम् ॥ क्षमां हिरण्यगर्भं च ब्रह्मरन्ध्रे प्रविन्यसेत् ॥ १३४ ॥ त्रितारमूलमन्त्रान्ते श्रीत्रिमूर्तिपदं वदेत् ॥ आर्य्यापराम्बादेव्यै च नमसा व्यापकं चरेत् ॥ १३५ ॥ एवं न्यासविधिं कृत्वा कुर्य्याद्यश्च जपादिकम् ॥ भूतप्रेतजनाद्यैश्च स जपी नैव बाध्यते ॥ १३६ ॥ वामाचारिमते वच्मि पात्रादेरथ लक्षणम् ॥ आधारेण विना अंशा न च तृप्यन्ति मातरः ॥ १३७ ॥ चतुष्पदं च त्रिपदं षट्पदं वर्त्तुल तथा ॥ विप्रादीनां च वर्णानां पात्रलक्षणमुच्यते ॥ १३८ ॥ नारिकेलस्वर्णतारकाचशुक्तिशिलोद्भवम् ॥ शङ्खसद्दारुकूर्म्मादिकपालालाबुमन्मयम् ॥ १३९ ॥ उत्तमं मध्यमं हीनं विप्रादीनां प्रकीर्तितम् ॥ नातिस्थूलं नातिसूक्ष्मं छिन्नं भिन्नं विवर्ज्जयेत् ॥ १४० ॥ ताम्रकांस्यादिभिर्लोहैः पात्रं नैव तु कारयेत् ॥ ब्रह्मसिद्धिः सुवर्णे स्याद्दुःखान्तस्तारपात्रतः ॥ १४१ ॥ शान्तिः शिलायाःस्तम्भस्तु मृन्मये नारिकेलजे ॥ वश्याद्यं कूर्म्मजे ज्ञानं शुक्तिर्मुक्तिप्रदायिनी ॥ १४२ ॥ पुण्यवृक्षजपात्रं तु पापघ्नं मृत्त वृत्तिकृत् ॥ कपाले वीरसंसिद्धिरलाबौ योगसिद्धयः ॥ १४३ ॥ अम्भसां द्वादशप्रस्थं चतुःप्रस्थं तु तण्डुलाः ॥ प्रस्थार्धं तण्डुलं पक्त्वा तावन्मात्रांस्तु सुन्दरान् ॥ १४४ ॥ शीतादिरहिते स्थाने दिवसद्वयमास्यते ॥ पश्चादग्नौ समारोप्य जम्बालसदृशं पचेत् ॥ १४५ ॥ पादप्रस्थांस्तण्डुलांश्च तन्मात्रान्सुन्दरान्क्षिपेत् ॥ पुनर्दिनद्वयं स्थाप्य पुनरेवं प्रकल्पयेत् ॥ १४६ ॥ अर्कं तस्य समादाय तण्डुले सुविनिःक्षिपेत् ॥ पुनरेवं त्रिधा कुर्य्यात्तण्डुलीया सुरा स्मृता ॥ १४७ ॥ अयमेव भवेत्सोमः सोमयागफलप्रदः॥ द्वितीयागे भवेद्योगे सोमपानं तु तत्स्मृतम् ॥ १४८ ॥ या गतिः सोमयज्ञेन कौलिकानामननेसाम् ॥ भोगः स्वर्गश्च भवति विना कष्टेन वामिनाम् ॥ १४९ ॥ एवं तु यवपिष्टोत्थो यवसोम इति स्मृतः ॥ यवतण्डुलयोगेन शक्तिसोमो निगद्यते ॥ १५० ॥

स्विन्नकुट्टितगोधूमाः समं विश्वेन संयुताः ॥ स्थापिता द्वादशाहं तु वारुण्या परिवारिताः ॥ १५१ ॥ तन्मद्यं सूर्य्यसञ्ज्ञं स्याद्योगिनीमदवर्धनम् ॥ पीतं तच्चक्रपूजान्ते वाजपेयफलप्रदम् ॥ १५२ ॥ इदमेव त्रिधा युक्तं दलं मद्यं च साधितम् ॥ अग्निर्भवेत्तस्य पानादग्निदानफलं लभेत् ॥ १५३ ॥ अग्निर्यदा सप्तदिनं वारुणीयन्त्रगः कृतः ॥ पचेदनलनामासौ महापातकनाशनः ॥ १५४ ॥ दशप्रस्थो गुडः प्रोक्तस्तावद्वब्बूलजास्त्वचः ॥ जम्बूत्वग्धातकीपुष्पं तदर्धं नारिकेलजम् ॥ १५५ ॥ कुसुमं च तदर्धं स्यात्तदर्धा च हरीतकी ॥ तावद्विभीतकं प्रोक्तं चतुर्थांशं कटुत्रयम् ॥ १५६ ॥ तावच्च चित्रकं तस्माद्गुडो द्वादशभागकः ॥ करेण भ्रामयेत्सम्यगनुलोमविलोमतः ॥ १५७ ॥ अष्टोत्तरशतावृत्त्या त्रिसन्ध्यं प्रतिवासरम् ॥ द्वादशाहेन पाकः स्याद्वारुणीयन्त्रगं पचेत् ॥ १५८ ॥ एषा गौडीति विख्याता महामदकरी मता ॥ शिवेन निर्मिता पूर्वं स्वयं पीता तु भैरवैः ॥ १५९ ॥ द्विगुणं मकरन्दस्य वारि संयोजयेद्गुडे ॥ षोडशाहेन पाकस्स्याच्छेषमन्यत्पुरोक्तवत् ॥ १६० ॥ सर्वदेवप्रिया चेयं वशीकरणमुत्तमम् ॥ देवानां शक्तयो वश्या मानुषीणान्तु का कथा ॥ १६१ ॥ हरीतकी चित्रकं च मरिचं धातकी तथा ॥ मधूकपुष्पं क्षौद्रं च भागैकेन विवर्धितम् ॥ १६२ ॥ अशीतिगुडसंमिश्रं शेषमन्यत्तु पूर्ववत् ॥ इदं मनोहरं मद्यं योगिनीपानमुत्तमम् ॥ १६३ ॥ माध्यभावं प्रवक्ष्यामि बिन्दुसंसाधकं सुराः ॥ माहिषं दधि संग्राह्यं चतुःशतगुणो गुडः ॥ १६४ ॥ मोचाफलस्य पक्वस्य मर्दितस्य रसस्तथा ॥ ग्राह्यो दधिचतुर्थांशस्तत्सम्मर्द्य घटे क्षिपेत् ॥ १६५ ॥ इदं सुरातोऽप्यधिकं ब्राह्मणानां प्रशस्यते ॥ गौडी माध्वी तथा पैष्टी त्रिविधा तु सुरा स्मृता ॥ १६६ ॥ शूद्राणामुचिता चेयं न स्यात्क्षत्रियवैश्ययोः ॥ ब्रह्मानन्दसुरा यैस्तु विप्रैः पीता तु कौलिकैः ॥ १६७ ॥ न चोन्मादकरी तेषां सुरा बुद्धिविवर्द्धिनी ॥ कथिता ब्रह्मचिंतैवं नित्यमेवं मतं सताम् ॥ १६८ ॥ ब्राह्मणस्य सुरा मद्यवासना प्रभवेद्यदि ॥ चाण्डालवद्बहिष्कार्य्यो

१ शुण्ठ्या ।

नासौ वामी न कौलिकः ॥ १६९ ॥ वामिनां कौलिकानान्तु मुखे तिष्ठन्ति देवताः ॥ नयन्ति ते तु तद्गन्धं स तु वन्द्यो भवेद्द्विजः ॥१७०॥ देवता यस्य न मुखे साक्षाच्चण्डाल एव सः ॥ सर्वसिद्धिकरी पैष्टी गौडी भोगप्रदायिनी ॥ ॥ १७१ ॥ माध्वी मुक्तिकरी ज्ञेया द्राक्षी राज्यकरी मता ॥ विद्याप्रदैक्षवी प्रोक्ता खार्ज्जूरी रिपुनाशिनी॥ १७२ ॥ तालजा स्तम्भने शस्ता पनसाख्या शुभप्रदा ॥ नारिकेलोद्भवा श्रीदा निम्बजा रोगनाशिनी ॥ १७३ ॥ मधूकजा ज्ञानकरी मैरेया पापनाशिनी ॥ यत्सानन्दं रुचिकरं सामोदं च मनोहरम् ॥ ॥ १७४ ॥ मद्यं तदुत्तमं देवीदेवताप्रीतिकारकम् ॥ मद्यं मांसं च विजयामष्ट गन्धैर्विमिश्रयेत् ॥ सम्मर्द्य वटिकाः प्राग्वज्जले देयास्ततोर्चयेत् ॥ १७५ ॥ धत्तूरबीजं विजया जातीपत्रं फलं तथा ॥ अकारकरभो वत्सवृक्षस्य च तु वल्कलम् ॥१७६॥ मद्यं च भागवृद्ध्यांशं मर्दयित्वा वटीकृतम्॥अयं बिन्दुश्चा-ष्टगन्धाभिधानो देवताप्रियः ॥ १७७ ॥ गुडमिश्रेण तक्रेण तथा च मधुभो-जिना ॥ पूजां विप्रगणः कुर्य्यादितत्कर्म्म न लोपयेत्॥ १७८ ॥ प्रमादाद्यदि लोपेत देवताशापमाप्नुयात् ॥ विजयाया द्रवैर्वाथाभावे तर्पणमाचरेत्॥१७९॥ यथाहिफेनभुक् चापि तं विना व्याकुलो भवेत् ॥ तथा कौलिकवामानां मन्त्रदेवाः श्रमातुराः ॥ १८० ॥ विना मद्येन मांसेन साधकं पीडयन्ति हि॥ ताभ्यां भोगं च भक्तेभ्यो मन्त्रा यच्छन्ति तं विना ॥१८१॥ निष्फला एव जायन्ते भ्रमयन्ति च साधकम् ॥ तस्मात्पतान्ति नो वामे क्षुद्रा अपि विचा-रतः ॥ १८२ ॥ मांसन्तु त्रिविधं प्रोक्तं खभूजलचरोद्भवम् ॥ यथासम्भव मेकैकं तर्प्पणाय प्रयोजयेत् ॥ १८३ ॥ हन्यान्मंत्रेण चानेन ह्यभिमन्त्र्य पशुन्तथा ॥ गन्धपुष्पाक्षतैः पूजा चान्यथा नरकं व्रजेत् ॥ १८४ ॥ शिवा कृतमिदं पिण्डमतस्त्वं शिवताङ्गतः ॥ उद्बुध्यस्व पशोत्वं हि नाशिवस्त्वं शिवो ह्यसि ॥ १८५ ॥ ब्रह्मा स्यात्सलिले विष्णुर्गन्धे रुद्रश्च तद्भवे ॥ परमात्मा तदानन्दे तस्मात्सेव्यमिदं प्रिये ॥ १८६ ॥ मांसाभावे तु लशुन-मार्द्रकं नागरन्तु वा ॥ पलाण्डुं वाथ वटका मसूराणान्तथैव च ॥ १८७ ॥ मत्स्यमांसविहीनेन मद्येनापि च तर्प्पयेत् ॥ न कुर्य्यान्मांसमत्स्याभ्यां विना

द्रव्येण पूजनम् ॥ १८८ ॥ पिशितन्तिलमान्त्रतु तिलार्धमपि बिन्दुना ॥ नराणां देवताभावोन्यथा प्रेतविभावनम् ॥ १८९ ॥ ब्राह्मणैः कौलिकैः पेयं सर्वक्षत्रै रणागमे ॥ वैश्यैर्गोलम्भने पेयं शूद्रैः क्षीरतिकर्म्मणि ॥१९०॥ देवान्पितॄन्समभ्यर्च्य शक्तिशास्त्रोक्तवर्त्मना॥गुरुं स्मरन्पिबेन्मद्यं खादेन्मांसं न दोषभाक् ॥ १९१ ॥ ब्रह्मध्यानस्य स्थैर्य्यार्थे देवतातृप्तिहेतवे ॥ सेवेत मधुमांसानि तृष्णये चेत्स पातकी ॥ १९२ ॥ मत्स्यमांसवसादीनां पदार्थानां निषेवणात् ॥ यागकालं विनान्यत्र स महापातकी भवेत् ॥ १९३॥ यथा क्रतुषु विप्राणां सोमपानं न दूषितम्॥मद्यपानं च कौलानां पूजान्ते न विगर्हितम्॥ १९४॥ श्रीगुरोः कुलशास्त्रेभ्यः सम्यग्विज्ञाय वामिना ॥ पञ्चमुद्रा निषव्यन्ते चान्यथा पतितो भवेत् ॥१९५॥ आवृत्तिं गुरुभक्तिं च तथा देवादिपूजनम् ॥ वीरोत्सवं विना पानाद्देवताशापमाप्नुयात् ॥ १९६ ॥ दक्षयज्ञे यदा देवि त्वया त्यक्तं कलेवरम् ॥ अहं गृहीत्वा तत्स्कन्धे चितां वेष्टुं समुद्यतः ॥ १९७॥ वडवाग्नेः प्रवेशार्थं यत्रयत्राभवत्स तु ॥ तत्रतत्रापि शक्रेण तूर्णं निर्वापितो जलैः॥ १९८॥ एवं पर्य्यटतो वर्षे प्रस्वेदो मे महानभूत् ॥ तद्बिन्दुपातनिर्दग्धा धरणीयं तदाभवत ॥ १९९ ॥ तदा सम्प्रार्थितो विष्णुर्धरणीरक्षणाय च ॥ स एव लघुभिर्बाणैस्त्वदङ्गानि समाच्छिनत् ॥ २०० ॥चतुराशीतिखण्डानि कृत्वासौ पातयेद्भुवि ॥ वातेन पीडितश्चाहं यातो धर्म्मोखिलस्तदा ॥ २०१ ॥ विष्णुश्च प्रकटीभूय पादयोः पतितो मम ॥ उत्थाप्य च परिष्वक्तस्तव शोकश्च विस्मृतः ॥ २०२ ॥ तावद्ब्रह्मादयो देवा नारदाद्या महर्षयः ॥ सन्तुष्टुवुस्तदा वाक्यं विष्णुः प्रोवाच पार्वति ॥ २०३ ॥ ज्ञानदोसि महेश त्वं कथं मोहमुपागतः ॥ सत्याः शरीरेण सह प्रवेष्टुं हव्यवाहने ॥ २०४ ॥ अनुगच्छेत्पतिं नारी न पुमांस्तां च गच्छति ॥ इति शास्त्रमनादृत्य कथं देव विमोहितः ॥२०५॥ एवं वदति देवेशे ब्राह्मणा मां हरिं तथा ॥ प्रोचुः श्लेषगिरोऽङ्गैस्तु सत्याश्चेदं धरातलम् ॥ २०६ ॥ स्थले स्थले शवस्पर्शाद्ब्रह्मकर्म्मविवर्ज्जितम् ॥ तस्या धरायाः संशुद्धिं विप्राणां वापि शुद्धताम् ॥ २०७ ॥ ब्राह्मवाक्यस्य सत्यत्वं यथा भवति तत्कुरु॥ ततो ध्यात्वा मया प्रोक्तं सम्मतीकृत्य विष्णुना ॥ २०८॥

यत्र वेदक्रिया ह्यस्ता तत्र तन्त्रं प्रवर्त्यताम् ॥ ये विप्राः शापनिर्दग्धाः शब्दब्रह्मविवर्जिताः ॥ २०९ ॥ तेषां तु कुलधर्म्मोयं भुक्तिमुक्त्योस्तु साधनम् ॥ ये विप्राः पीठसञ्जाताः शापनिर्दग्धविप्रताः ॥ २१० ॥ तेषां कुलेधिकारोयं मार्गस्यास्य प्रजायते ॥ तत्कुले एव पूज्यत्वात्कौलीनपथ उच्यते ॥ २११ ॥ वाममार्गस्ततो न्यूनस्तेषां यौ क्षत्रवैश्यकौ ॥ यजमानौ तयोस्तत्राधिकारः समुदाहृतः ॥ २१२ ॥ सिद्धान्तीयस्ततो न्यूनस्तत्र शूद्राधिकारता ॥ ये पारम्पर्य्यमज्ञात्वा कौलधर्म्मे विशन्ति ते ॥ २१३ ॥ निःस्वाः सन्ततिहीनाश्च रोगिणो नात्र संशयः॥ कौलज्ञाने ह्यसिद्धो यः फलं वै भोक्तुमिच्छति॥२१४॥ स महापातकी देवि सर्वकर्म्मबहिष्कृतः ॥ समयाचारहीनस्य स्वैरवृत्तेर्दुरात्मनः ॥ २१५ ॥ न सिद्धयः कुलं नश्येत्तत्संसर्गं न कारयेत् ॥ यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्तते कामचारतः ॥ २१६ ॥ स सिद्धिमिह नाप्नोति परत्र च पराङ्गतिम् ॥ लोके भवति निन्द्यश्च वेदे चैव तथैव सः ॥ २१७ ॥ कुलद्रव्याणि सेवेत योन्यदर्शनमाश्रितः ॥ तदङ्गरोमसङ्ख्यातभूतयोनिषु जायते ॥ २१८ ॥ मद्येन स्फालितात्मा यो न किञ्चिदपि वेत्ति चेत् ॥ न ध्यानं न तपश्चर्य्या न धर्म्मो न च सत्क्रिया ॥ २१९ ॥ न दैवं न गुरुर्नात्मा विचारो यदि कौलिके ॥ केवलं विषयासक्तः पतत्येव न संशयः ॥ २२० ॥ लिङ्गत्रयविशेषज्ञः षडाधारविभेदकः ॥ पीठस्थानानि चागत्य महायज्ञवनं श्रयेत् ॥ २२१ ॥ आमूलाधारमाब्रह्मरन्ध्रं गत्वा पुनःपुनः ॥ चिच्चन्द्रकुण्डलीशक्तिमुद्रया स्यात्सुखाशयः॥२२२॥ व्योमपङ्कजनिस्पन्दसुधापानरतो भवेत्॥ मधुपानमिदं प्रोक्तमितरे मद्यपायिनः॥२२३॥पुण्यापुण्ये उभे छित्त्वा ज्ञानखड्गेन योगवित् ॥ परे लयेत्सदा चित्तं पलाशी स निगद्यते ॥ २२४ ॥ मनसा स्वेन्द्रियगणान्नियम्यात्मनि योजयेत्॥ मत्स्याशी स जनः प्रोक्तः शेषा धीवरवृत्तयः ॥ २२५ ॥ अप्रबुद्धा तु या शक्तिः प्रबुद्धा कौलिकस्य च ॥ शक्तिं तां सेवयेद्यस्तु स भवेच्छक्तिसेवकः ॥ २२६ ॥ इत्येवं पञ्चमुद्राणां गुप्तं तत्त्वं मयोदितम्॥ज्ञात्वा गुरुमुखात्सम्यक् सेवते स च मुच्यते॥२२७॥अथ पूजाप्रकारस्तु कथ्यते वामिदुर्लभः ॥ आत्मस्थानमनुद्रव्यदेवशुद्धिम्प्रकल्पयेत्॥२२८॥

स्नानं सन्ध्या भूतशुद्धिः प्राणायामः प्रतिष्ठितिः ॥ प्राणानां मातृकान्यासादिकैः स्यादात्मशोधनम् ॥ २२९ ॥ सम्मार्ज्जनानुलेपाद्यैर्दर्पणोदरवत्कृतम् ॥ वितान धूपदीपाद्यैः स्थानशुद्धिरियं मता ॥ २३० ॥ ग्रथित्वा मातृकावर्णैर्मूलमन्त्राक्षराणि च ॥ क्रमोत्क्रमत्रिरावृत्तिर्मन्त्रशुद्धिरियम्मता ॥ २३१ ॥ पूजाद्रव्याणि सम्प्रोक्ष्य मूलास्त्रेण विधानवित् ॥ दर्शयेद्धेनुमुद्रां च द्रव्यशुद्धिरियम्मता ॥ २३२ ॥ पीठे देवं प्रतिष्ठाप्य सकलीकृत्य प्रोक्षयेत् ॥ अर्घ्योदकेन मूलेन दीपदानं प्रदर्शयेत् ॥ २३३ ॥ देवे शुद्धिं विधायेत्थं पश्चाद्यजनमाचरेत् ॥ सा पूजा फलदा ज्ञेया त्वन्यथा निष्फला भवेत् ॥ २३४ ॥ मण्डलेन विना पूजा-विफला परिकीर्त्तिता ॥ तस्मान्मन्त्रेण विधिवल्लिखित्वा तत्र पूजयेत् ॥ २३५ ॥ अखण्डमण्डलाकारं विश्वं व्याप्य व्यवस्थितम् ॥ त्रैलोक्य मण्डितं येन मण्डलं तत्सदाशिवम् ॥ २३६ ॥ उद्यानं चतुरस्रं स्यात्कामरूपं तु वर्त्तुलम् ॥ जलन्धरं चार्धचन्द्रं पूर्णं पूर्णगिरिर्मतः ॥ २३७ ॥ अभ्यर्च्य मण्डलं पश्चादाधारं स्थापयेत्क्रमात् ॥ शांखमर्घ्यं भोगपूजाबलिपात्राणि पञ्च च ॥ २३८ ॥ स्वदक्षिणादिवामान्तं स्थाप्याभ्यर्च्यासवेन च ॥ सम्पूर्य्य मन्त्रपूतेन कुलेश्वरि विधानवित् ॥ २३९ ॥ तत्र माषप्रमाणं तु मद्यं मांसं च निक्षिपेत् ॥ नष्टैः पर्य्युषितोच्छिष्टैर्दुर्गन्धैर्गन्धवर्जितैः ॥ २४० ॥ हेतुभिः परपात्रस्थैस्तर्पणं निष्फलं भवेत् ॥ स्वादिष्ठैश्च मदोत्सिक्तैर्द्रव्यैरमृतसन्निभैः ॥ २४१ ॥ मनोहरैश्च देवीनां तर्प्पणं सफलं भवेत् ॥ असंस्कृता सुरा पापा कलहव्याधिदुःखदा ॥ २४२ ॥ आयुःश्रीकीर्तिसौभाग्यधर्म्मविद्याविनाशिनी ॥ तस्मात्संस्कृत्य विधिवत्कुलद्रव्यं ततोर्चयेत् ॥ २४३ ॥ सुसंस्कृता सुरा रोगदुःखापदपहारिणी ॥ आयुःश्रीकीर्त्तिसौभाग्यधर्म्मविद्याविवर्धिनी ॥ २४४ ॥ [1]अन्यथा नरकं याति दाता भोक्ता न संशयः ॥ विना द्रव्याधिवासेन न स्मरेन्न जपेत्तथा ॥ २४५ ॥ ये स्मरन्ति महामूढास्तेषां दुःखं पदेपदे ॥ नाशयेन विना मन्त्रो न मन्त्रेण विनाशयः ॥ २४६ ॥ वीक्षणस्पर्शनध्यानमन्त्रमुद्राविशोधनैः ॥ द्रव्यं तर्प्पणयोग्यं स्याद्देवताप्रीतिकारकम् ॥ २४७ ॥

---

१ द्रव्याण्यसंस्कृत्य ।

आवाहयेदग्निसूर्य्यचन्द्रार्णप्रणवोद्भवाः ॥ चतुर्णवतिसंख्याश्च कला आवाह्य पूजयेत् ॥२४८॥ तत्रेष्टदेवता ध्यायञ्च्छ्लोकार्थं प्रविचारयेत् ॥ श्लोकानेतान्पठेत्पश्चात्तान्ब्रवीमि शृणु प्रिये ॥ २४९ ॥ अखण्डैकरसानन्दकरे परसुधात्मनि ॥ स्वच्छन्दस्फुरणाकारे निधेह्यमृतरूपिणि ॥ २५० ॥ अकुलस्थामृताकारे शुद्धिज्ञानकरे परे ॥ अमृतत्वं निधेह्यस्मिन्वस्तुनि क्लिन्नरूपिणि ॥ २५१ ॥ तद्रूपिणि करस्पर्शं कृत्वा भूतस्वरूपिणि ॥ भूत्वामृतापराकारे मयि विस्फुरणं कुरु ॥२५२॥ ॐक्लींह्रौंजूं स इत्युक्त्वा अमृते अमृतोद्भवे ॥ अमृतेश्वरि अमृतवर्षिणीतिपदं वदेत् ॥ २५३ ॥ अमृतं स्रावययुगं स्वाहान्तो द्रव्यशुद्धये ॥ अमृतेशीमनुः प्रोक्तः पञ्चत्रिंशद्भिरक्षरैः ॥ २५४॥ त्रिधा निमन्त्र्य प्रागुक्तं दीपनीमन्त्रतस्त्रिधा ॥ संस्पृश्यार्च्चनपात्रन्तु पूजयेद्धेनुमुद्रया ॥ २५५ ॥ ब्रह्माण्डखण्डसम्भूतागमशेषरसं भृतम् ॥ आयुरिदं महामखपीयूषरसमावह ॥ २५६ ॥ शुद्धद्रव्येण तेनापि गन्धपुष्पाक्षतैरपि ॥ न्यासोक्तसर्वमन्त्रैश्च स्वात्मानं प्लावयेत्तथा ॥ २५७ ॥ मूर्ध्नि श्रीगुरुपंक्ति च मूलाधारे च पादुकाम् ॥ दिव्यौघं तर्प्पयेदादौ आदिनाथः सदाशिवः ॥ २५८ ॥ ईश्वरो रुद्रविष्णू च ब्रह्मा पत्नीयुतास्त्विमे ॥ भवन्ति द्वादश ततः सिद्धौघास्तान्प्रतर्प्पयेत् ॥ २५९ ॥ सनकाद्याश्च चत्वारः सुजातश्चारुभूषितः ॥ सनत्कुमारो व्यासश्च वामदेवः शुकस्तथा ॥२६० ॥ दत्तात्रेयो रैवतको द्वादशैव तु मानवान् ॥ तर्प्पयेत्षण्नृसिंहं च महेशं भास्करं तथा ॥ ३६१ ॥ महेन्द्रं माधवं विष्णुं नामान्ते तु प्रयोजयेत् ॥ महाशिवं च सिद्धौघे मानवौघे सदाशिवम् ॥ २६२ ॥ शिवं तु परमं दिव्यं पीठपूजां ततश्चरेत् ॥ तत आवाहयेद्देवीं मन्त्राभ्यां पूजयेत्तथा॥२६३॥महापद्मवनान्तस्थे कारणानन्दविग्रहे॥सर्वभूतहिते मातरयैहि परमेश्वरि ॥२६४॥देवेशि भक्तिसुलभेसर्वाभरणसंयुते॥यावत्त्वां पूजयामीह तावत्त्वं सुस्थिरा भव२६५ ध्यात्वा मुद्राः प्रदर्श्याथ गन्धपुष्पाक्षतादिभिः ॥ चिन्मयस्याप्रमेयस्य निर्गु-

१ ह्रींअग्निसूर्य्यचन्द्ररूपवर्णप्रणवोद्भवाभ्यश्चतुर्णवतिकलाभ्योनमः । इति पूजामन्त्रः ॥ २ ॐक्लीं ह्रौंजूंसः अमृते अमृतोद्भवे अमृतेश्वरि अमृतवर्षिणि अमृतं स्रावयस्रावय स्वाहा ।

णस्याशरीरिणः ॥ २६६ ॥ साधकानां हितार्थाय ब्रह्मणो रूपकल्पना ॥
लिङ्गस्थण्डिलवह्न्यप्सु फलके मूर्ध्नि मण्डले ॥ २६७ ॥ मूर्त्तौ कुड्ये च
हृदये पूजा दशसु कीर्तिता ॥ अरूपं रूपिणं कृत्वा कर्म्मकाण्डे रता जनाः ॥
॥ २६८ ॥ गवां सर्वाङ्गजं क्षीरं स्रवेत्स्तनमुखाद्यथा ॥ तथा सर्वगतो देवः
प्रतिमादौ विराजते ॥ २६९ ॥ आदिरूप्याच्च सर्वस्य पूजायाश्च विशेषतः॥
साधकस्य च विश्वासात्सान्निध्यं देवता लभेत् ॥ २७० ॥ गवां सर्वशरी-
रस्थं न करोत्यात्मपोषणम् ॥ सुकर्म्मरचितं चाज्यं पुनस्तदपि पोषयेत् ॥
॥ २७१ ॥ एवं सर्वशरीरस्थः सर्पिर्वत्परमेश्वरः ॥ उपासनां विना देवो न
ददाति फलं नृणाम् ॥२७२॥ संकलीकृत्य तत्प्राणांस्तदीयानीन्द्रियाणि च ॥
प्रतिष्ठाप्यार्च्चयेद्देवि अन्यथा निष्फलं मतम् ॥ २७३॥ मन्त्रहीनं क्रियाहीनं
यन्त्रहीनं च यद्भवेत् ॥ लं क्षं साधयते सर्वं हीनमंगं यथा तथा ॥ २७४॥
देवस्य मन्त्ररूपस्य यन्त्रव्याप्तिमजानताम् ॥ कृतार्च्चनादिकं सर्वं व्यथ भवति
शाम्भवि ॥ २७५ ॥ वामे कौले यन्त्रपीठे मूर्त्तिस्थाने च दक्षिणे ॥
वैदिके तु स्वयं जातं पूजितं सुखदायकम् ॥ २७६ ॥ अनादि वैदिकं यस्मा-
त्स्वयम्भूस्तत्र देवता ॥ गम्यत्वान्नश्वरत्वाच्च तादृक् तान्त्रिकपूजनम् ॥२७७॥
कामक्रोधादिदोषोत्थसर्वदुःखनियन्त्रणात् ॥ यन्त्रमित्याहुरेतस्मिन्देवस्तु परि-
पूजितः ॥ २७८ ॥ दक्षिणावर्त्ततो लेख्यं यन्त्रं दक्षिणपूजने ॥ वामक्र-
मेण कौलादौ गुप्तमेतत्प्रकाशितम् ॥ २७९ ॥ षोडशैरुपचारैस्तु सांगं साव-
रणं यजेत् ॥ महान्षोढा दिनान्सर्वान् गन्धपुष्पाक्षतादिभिः ॥२८०॥ प्रण-
वादिनमोन्तेन तत्तन्नाम्ना समर्च्चयेत् ॥ अथागमोक्तमार्गेण तर्पयेद्दधिबिन्दुभिः
॥ २८१ ॥ अंगुष्ठानामिकाभ्यां तु नखैर्निःशब्दमुत्क्षिपन् ॥ अपात्रस्येद-
मष्टौ च तर्प्पयेद्देवतामुखम् ॥ २८२ ॥ सकृत्तर्प्पणमुत्सृज्य जप्त्वा मूलं
च पादुकाम् ॥ अन्तःशक्तिमनुस्मृत्य तर्प्पयेद्देहदेवताम् ॥ २८३ ॥
अंगुष्ठो भैरवस्थानं चण्डिकायास्त्वनामिका ॥ तस्मात्ताभ्यां तर्प्पणीयं यन्त्रं
तत्तु तयोः प्रियम् ॥ २८४ ॥ अंगुष्ठमध्यमाभ्यां च वश्यकर्म्मणि तर्पयेत्॥
तर्जन्यंगुष्ठयोगेन तर्प्पयेदाभिचारिके ॥ २८५ ॥ कनिष्ठांगुष्ठयोगेन स्तम्भ-

कर्म्मणि तर्पयेत् ॥ एवं सन्तर्प्य देवादीन्गुरुपङ्क्तिं प्रपूजयेत् ॥ २८६ ॥ कराभ्यां चेन्मुद्रां समधु नृकपालं च दधतीं सृतस्वर्णप्रख्यामरुणकुसुमालेपवसनाम् ॥ कृपापूर्णापांगैररुणनयनामम्बरकचामुपेतां सिद्धौघैर्यजति गुरुपङ्क्तिं कृतमतिः ॥ २८७ ॥ एवं सम्पूज्य धूपं च दीपं नैवेद्यमेव च ॥ कदल्यादिफलान्येवं ताम्बूलं च समर्प्पयेत् ॥ २८८ ॥ अवश्यमादौ वामादौ कुर्य्याद्बटुकपूजनम् ॥ मार्गेऽस्मिन्बटुको मुख्यः सुरायन्तेन निर्मितम् ॥ २८९ ॥ विना तं तु न गृह्णीत देवस्तस्मात्तदर्चनम् ॥ अपूज्य बटुकं यस्तु महादेवं प्रपूजयेत् ॥ २९० ॥ तस्य पूजाफलं नास्ति बटुकश्च प्रकुप्यति ॥ सगणं पूजयेत्तस्माद्गन्धपुष्पासवामिषैः ॥ २९१ ॥ तत्तन्मन्त्रैर्विधानेन देवता प्रीतिमाप्नुयात् ॥ ततो बलिं क्षेत्रपत्ये दद्यादस्य मनुं शृणु ॥ २९२ ॥ तारद्वयं ततो देवीपुत्रोक्त्वा बटुकेति च ॥ नाथेति कपिलजटाभारभासुरपिंगल ॥ २९३ ॥ त्रिनेत्राग्निज्वालामुख इमं पूजाबलिं वदेत् ॥ गृह्णगृह्ण हुं फट् स्वाहा षट् चत्वारिंशदर्णकः ॥ २९४ ॥ मन्त्रमेवं समुच्चार्य्य ततः श्लोकं पठेदिमम् ॥ बलिदानेन सन्तुष्टो बटुकः सर्व्वसिद्धिदः ॥ २९५ ॥ शान्तिं करोतु मे नित्यं भूतवेतालसेवितः ॥ तारत्रयं सर्वपूर्वभ्यसन्तांश्च वदेत्क्रमात् ॥ ॥ २९६ ॥ योगिनी डाकिनी शाकिनी त्रैलोक्यनिवासिनी ॥ नमश्चैव इमं पूजाबलिं गृह्णीत इत्यपि ॥ २९७ ॥ हुं फट् चैव तथा प्रोच्य चान्ते स्वाहापदं वदेत् ॥ चतुश्चत्वारिंशदर्णो मन्त्रोयं परिकीर्तितः ॥ २९८ ॥ या काचिद्योगिनी रौद्रा सौम्या घोरतरा परा ॥ खेचरी भूचरी व्योमचरीप्रीता सदास्तु मे ॥ २९९ ॥ तार[3]त्रयं वदेत्सर्वभूतेभ्यः सर्वमेव च ॥ पश्चाद्भूतपतिभ्यो हृदन्तः सप्तदशाक्षरः ॥ ३०० ॥ भूता ये विविधाकारा दिव्यभौमान्तरिक्षगाः ॥ पातालतलसंस्थाश्च शिवयोगेन भाविताः ॥ ३०१ ॥ ध्रुवाद्यास्स-

---

१ ॐ ॐ देवीपुत्रबटुकनाथकपिलजटाभारभासुर पिंगलत्रिनेत्राग्निज्वाला मुख इमं पूजाबलिं गृह्णगृह्ण हुं फट्स्वाहा ॥ २ ॐ ॐ ॐ सर्वयोगिनीभ्यः सर्वडाकिनीभ्यः सर्वशाकिनीभ्यस्त्रैलोक्यनिवासिनीभ्यो नमः इमं पूजाबलिं गृह्णीत हुं फट् स्वाहा ॥ ३ ॐ ॐ ॐ सर्वभूतेभ्यः सर्वभूतपतिभ्यो नमः ॥

त्यसन्धाश्च इन्द्राद्याश्च व्यवस्थिताः ॥ तृप्यन्तु प्रीतमनसो भूता गृह्णन्त्विमं बलिम् ॥ ३०२ ॥ तारत्रयं तथैह्येहि देवीपुत्र बटोधुना ॥ अथोच्छिष्टहारिणे हं हूं हं हूं वारद्वयं वदेत् ॥ ३०३ ॥ क्षेत्रपालेति शर्वेति विघ्नान्नाशय युग्मकम् ॥ सर्वोपचारसहितमिमं पूजाबलिं वदेत् ॥ ३०४ ॥ गृह्ण गृह्ण हुं फट् स्वाहा चतुष्षष्ट्यक्षरो मनुः ॥ क्षेत्रपालस्य सम्प्रोक्तः सर्वसिद्धिविधायकः ॥३०५॥वसामि तस्य क्षेत्रेस्मिन्क्षेत्रपालस्य किङ्करः ॥ प्रीतोयं बलिदानेन सर्वरक्षां करोतु मे ॥३०६॥ ॐकारत्रितयं हुं श्रींहसौं च ह्रीं ह्रीं वदेत्ततः ॥ हुंयुगान्ते भैरवाधिष्ठितायाक्षो वदेदिति ॥ ३०७ ॥ भ्यानन्दहृदयान्मन्त्रसिद्धये वतरद्वयम् ॥ क्षेत्रपाल महाक्षेत्रपालाय वौषड् हुमिति ॥ ३०८ ॥ अयमेकोनपञ्चाशदक्षरश्च मनुस्स्मृतः ॥ श्रेष्ठस्य क्षेत्रपालस्य महाप्रीतिकरः परः ॥ ३०९ ॥ तारत्रयं वदेत्पश्चादमुकक्षेत्रपालाय ॥ राजराजेश्वर इमां पूजाबलिमतः परम् ॥ ३१० ॥ गृह्णयुग्मं द्विठान्तोयं मन्त्रः प्रोक्तो खिलेष्टदः ॥ राजराजेश्वराख्यस्य दैवतस्य समर्चने ॥ ३११ ॥ अनेन बलिदानेन बटुवर्गसमन्वितः ॥ राजराजेश्वरो देवो मे प्रसीदतु सर्वदा ॥ ३१२ ॥ बटुकाय बलिं पश्चादुत्तरे योगिनीबलिम् ॥ पूर्वे भूतबलिं दद्यात्क्षेत्रपालाय दक्षिणे ॥३१३॥ राजराजेश्वरं मध्ये पूजयित्वाहरेद्बलिम् ॥ अंगुष्ठानामिकाभ्यान्तु बटुकस्य भवेद्बलिः ॥ ३१४ ॥ तर्जनीमध्यमानामांगुष्ठैः स्याद्योगिनीबलिः ॥ अंगुलीभिश्च सर्वाभिर्दद्याद्भूतबलिं द्विजः ॥३१५॥ अंगुष्ठतर्ज्जनीभ्यां तु क्षेत्रपालबलिर्भवेत॥अंगुष्ठमध्यमाभ्यां तु राजराजेश्वरस्य च॥३१६॥ बटुकादीन्समर्च्यैवं कुलदीपान्प्रदर्शयेत् ॥ देवभक्तः सुपिष्टेन कुर्याद्वेदांगुलोन्नतान् ॥ ३१७ ॥ दीपान्डमरुकाकारांस्त्रिकोणानतिशोभनान्॥कर्षाज्यग्राहिणः कुर्य्यान्नव सप्ताथ पञ्च च ॥ ३१८ ॥ अन्तस्तेजोबहिस्तेज एकीकृत्यामितप्रभान् ॥ त्रिधा देव्युपरि भ्राम्य कुलदीपं निवेदयेत् ॥ ३१९ ॥ समस्तच-

---

१ॐ ॐ ॐ एह्येहि देवीपुत्रबटुकनाथोच्छिष्टहारिन् हं हूं हं हूं हं हूं हं हूं क्षेत्रपालसर्वविघ्नान्नाशयनाशयसर्वोपचारसहितामिमं पूजाबलिंगृह्णगृह्ण हुंफटस्वाहा २ ॐ ॐ ॐ हुं श्रींहसौं ह्रींह्रीं हुं हुं भैरवाधिष्ठितायाक्षोभ्यानन्दहृदयान्मन्त्रसिद्धयेऽवतरावतरक्षेत्रपालमहाक्षेत्रपालायवषैट्हुम् ।

चक्रैश्चक्रेश्वरीयुते देवि नवात्मिके ॥ आरात्रिकमिदं देवि गृहाण मम सिद्धये ॥ ३२० ॥ कुलदीपान्प्रदर्श्याथ शक्तिपूजां समाचरेत् ॥ गुरुपादरजोजोषी श्रद्धाभक्तिसमन्वितः॥ ३२१ ॥स्वशक्तिं वीरशक्तिं च दीक्षितां गुरुरूपिणीम् ॥ पाययित्वा पिबेन्मद्यं चेति शास्त्रस्य निश्चयः ॥ ३२२ ॥ अनिवेद्य तु यः शक्त्यै कुलद्रव्यं निषेवते ॥ पूजनं निष्फलं तस्य देवता न प्रसीदति॥ ३२३॥ चाण्डाली चर्मकारी च मातङ्गी पुल्कसी तथा ॥ श्वपची खटकी चैव कैवर्त्ती विश्वयोनिका ॥ ३२४ ॥ कुलाष्टकमिदं प्रोक्तमकुलाष्टकमुच्यते ॥ कुडुकी सौत्रिकी चापि शस्त्रीजीवा तु रञ्जकी ॥३२५ ॥ गायकी रजकी शिल्पी कौशिकी च तथाष्टमी ॥ स्त्रियो मन्त्रसमायुक्ताः समयाचारपालिकाः ॥ ३२६ ॥ कुर्य्यात्सद्यस्तु संस्कारं मन्त्रैश्चैव पृथक् पृथक्॥पूजयेत्कुलमार्गस्थस्तत्र शक्तिमनुस्मरन् ॥ ३२७ ॥ कुमारी वा व्रतस्था वा योगमुद्राधरापि वा ॥ पूजाकाले स्वतः प्राप्ता सा पूज्या सहसा बुधैः ॥ ३२८ ॥ उक्तजात्यङ्गनाभावे चतुर्वर्णाङ्गनां यजेत्॥सुरूपा तरुणी शान्तानुकूला मुदिता शुचिः ॥ ३२९ ॥ रोगहीना भक्तियुक्ता मूढशास्त्रोपजीविनी ॥ अलोलुपा सुशीला च स्मितास्या प्रियवादिनी ॥ ३३० ॥ गुरुदैवतभक्ता तु सुचित्ता कौलिकप्रिया ॥ विमत्सरा विशेषज्ञा देवताराधनोत्सुका ॥ ३३१ ॥ दुर्गन्धा दुःखिता मूर्खा वृद्धोन्मत्ता रहस्यभित् ॥ कुतर्का कुत्सिता स्तब्धा निर्लज्जा कलहप्रिया ॥३३२॥ विरूपोन्मार्गगा दुष्टा पंग्वन्धा विकृतानना ॥ ईदृशीं मन्त्रयुक्तां हि स्त्रियं योगी विवर्ज्जयेत् ॥ ३३३ ॥ ततोर्चनादिकं सर्वं मन्त्रोदकपुरःसरम् ॥ इतः पूर्वादिमनुना मन्त्री देव्यै समर्प्पयेत् ॥ ३३४ ॥ शेषं दक्षिणवत्कुर्य्यात्तदुच्छिष्टादिकं पुनः ॥ शेषं कामं ततो देयं शेषिकायै स कथ्यते ॥ ३३५ ॥ ऐंह्रुच्छिष्टचाण्डालिनि मातङ्गि पदं वदेत् ॥ सर्ववशङ्करि स्वाहा चैकविंशतिवर्णकः ॥ ३३६ ॥ मन्त्रेणानेन निर्माल्यं शेषिकायै समर्प्पयेत् ॥ देवीमुच्छिष्टमातङ्गीं ध्यायेल्लोकैकमोहिनीम् ॥ ३३७ ॥

---

१ ऐंनमः उच्छिष्टचाण्डालिनि मातङ्गि सर्ववशङ्करि स्वाहा । इति मन्त्रः ।

वीणावाद्यविनोदगीतनिरतां नीलांशुकोल्लासिनीं बिम्बोष्ठीं नवयावकाढ्यचरणा-
माकर्णकेशांशुकाम्॥ हृद्यांगां सितशंखकुण्डलधरां माणिक्यभूषोज्ज्वलां मातङ्गीं
प्रणतोस्मि सुस्मितमुखीं देवीं शुकश्यामलाम् ॥ ३३८ ॥ ततः श्रीगुरुरूपाय
साक्षात्परशिवाय च ॥ कराभ्यां पात्रमुद्धृत्य सद्वितीयं समर्प्पयेत् ॥ ३३९ ॥
सुसम्प्रदायसंयुक्तैर्वीरैश्च सह पूजयेत् ॥ अन्योन्यं चिह्नितं कृत्वा पिबेत्तदनु-
ज्ञया ॥ ३४० ॥ सव्यतोद्धृत्य पात्रं तु मुद्रां कृत्वापसव्यतः ॥ यथाविधि
द्वितीयेन गृह्णीयान्मन्त्रमुच्चरेत् ॥ ३४१ ॥ इदं पवित्रममृतं पिबामि भवभे-
षजम् ॥ मद्यपानसमुच्छेदे कारणं भैरवोदितम् ॥ ३४२ ॥ चित्तस्वातन्त्र्यरता-
त्वात्तस्यानन्दमयत्वतः॥तन्मयत्वाच्च भावानां भावाश्चान्तरिता रसे॥३४३॥
स्वस्वातन्त्र्यविकाशाय सुरसस्तेन पीयते ॥ तस्मादिमां सुरां देवीं पूर्णकामः
पिबाम्यहम् ॥३४४॥ मन्त्रेणानेन भो देवा मूलमन्त्रेण मन्त्रवित् ॥ अना-
कुलमनाः कुर्य्यान्मधुपानं शनैः शनैः ॥ ३४५ ॥ पिशितं माषमात्रं तु मद्यं
चुलुकसम्मितम् ॥ स्वीकार्य्यमादौ गुरुणा शिष्येभ्यः शेषदो भवेत् ॥
॥ ३४६ ॥ आदाय गुरुणा दत्तां सद्वितीयां सुरां पिबेत् ॥ श्रीगुरुज्ये-
ष्ठपूज्यानां पुरतश्चोपविश्य च ॥ ३४७ ॥ न कदाचित्पिबेन्मद्यं निर्मन्त्रं
न पिबेत्तथा ॥ विना मन्त्रं पिबेन्मद्यं स सुरापो निगद्यते ॥ ३४८ ॥
स्वात्ममूलत्रिकोणस्थे कोटिसूर्य्यसमप्रभे ॥ कुण्डल्याकृतिचिद्रूपे हुनेद्द्रव्यं
समन्त्रकम् ॥ ३४९ ॥ अनन्तपात्रभरितमिदं तत्परमामृतम् ॥ पराहन्तामये
वह्नौ होमस्वीकारलक्षणम् ॥ ३५० ॥ गुरुं दैवतमन्त्राणामैक्यं सञ्चिन्तये-
द्धिया ॥ यावदुल्लासपर्य्यन्तमुपदेशैः पिबेन्मधु ॥ ३५१ ॥ भोजनान्ते विषं
मद्यं मद्यान्ते भोजनं विषम् ॥ अमृतं तद्विजानीयाद्वदनेन समं पिबेत् ॥
॥ ३५२ ॥ चर्वणेन युतं मद्यममृतं कथितं सदा ॥ चर्वणेन विना पानं
केवलं विषभक्षणम् ॥ ३५३ ॥ पानं तु त्रिविधं प्रोक्तं दिव्यवीरपशुक्रमैः ॥
दिव्यं देव्यग्रतः पानं वीरं मुद्रासने कृतम्॥३५४॥स्वेच्छया पशुवत्पीतं पशु-
पानमितीरितम् ॥ वक्ष्येथ कौलिकाचारं लोकद्वयफलप्रदम्॥३५५॥ पात्रमे-
लापकं कर्म्म प्रोच्यते सख्यकारकम् ॥ तत्राता न पिता मित्रं पात्रमेलापकात्पृ-

तम्॥ ३५६ ॥अदीक्षितैरनाचारैरमंत्रज्ञैरदैवतैः॥दूषकैः समये नष्टैः प्रपंचपथधारिभिः ॥ ३५७ ॥ ब्रह्मतेजोमुखे पात्रमेलनं नैव कारयेत् ॥ त्वत्पूजानिरतैः शान्तैः परद्रव्यपराङ्मुखैः ॥३५८॥ कुलोपदेशकुशलैः कुलमार्गप्रवर्त्तकैः ॥ स्त्रीप्रियैः स्त्रीस्तुतैर्धन्यैः सुन्दरैर्मृदुवादिभिः ॥ ३५९ ॥ कुलमार्गोतिगुप्तैश्च विद्यावद्भिः सुरूपकैः ॥ प्रयोगसिद्धैर्द्रव्याढ्यैर्भाग्यवद्भिश्च कामुकैः ॥ ३६० ॥ ब्रह्ममुक्तै राजमान्यैर्मिलितैर्दैवयोगतः ॥ कुर्य्यात्पात्रस्य मेलं च सौख्यवृद्धिर्द्वयोर्भवेत् ॥ ३६१ ॥ एकपात्रं न कुर्वीत यदि साक्षात्कुलेश्वरः ॥ मन्त्राः पराङ्मुखा यान्ति विघ्नाश्चैव पदेपदे ॥ ३६२ ॥ न दद्याद्वैरवायापि स्वपात्रं स्थितिहेतुकम् ॥ यदि दद्याच्च मोहेन देवताशापमाप्नुयात् ॥ ३६३ ॥ आसनं भोजनं पात्रमन्यच्च शयनादिकम्॥अनभिज्ञैरनर्हैश्च संकरं नैव कारयेत्॥ ३६४॥ आम्नायभेदेन वा कुर्य्यात्कौलिकैः पात्रमेलनम् ॥ पूर्वदक्षिणयोरैक्यमुदक्पश्चिमयोस्तथा ॥ ३६५ ॥ योगिभिर्योगिनीभिश्च प्रदत्तं पूर्णपात्रकम् ॥ समन्त्रपादुकामूलमन्त्रजप्तं पिबेत्ततः ॥ ३६६ ॥ क्वचिद्यदृच्छया प्राप्तं मद्यपात्रं तु भक्तितः ॥ आदाय पूर्ववज्जप्त्वा पिबेत्तच्च गुरुं स्मरेत् ॥३६७॥ गुरुशक्तियुतानां च गुरुज्येष्ठकनिष्ठयोः॥स्वज्येष्ठस्यापि चोच्छिष्टं खादेन्नान्यस्य कर्हिचित् ॥ ३६८ ॥ ज्येष्ठैः कनीयसे योज्यं न पुनर्ग्राहयेत्ततः ॥ शक्त्युच्छिष्टं पिबेन्मद्यं वीरोच्छिष्टं तु चर्वणम् ॥ ३६९ ॥ आत्मोच्छिष्टं न दातव्यं परकीयं न भक्षयेत् ॥ उच्छिष्टं[3] भक्षयेत्स्त्रीणां नान्यः स्वोच्छिष्टमर्प्पयेत् ॥ ॥ ३७० ॥ स्वस्य मेलापकस्यापि स्थापयेत्तत्र मण्डलम् ॥ पात्रं ततोर्च्चयेद्देवीं तर्प्पणादि समाचरेत् ॥ ३७१ ॥ उत्थाप्यान्योन्यपात्रे च दद्यादन्योन्यहस्तयोः ॥ द्वयोरैक्यं स्मरेद्ध्यन्योन्यमिति पात्रमेलनम् ॥ ३७२ ॥ चक्रपूजां प्रवक्ष्यामि सर्वतन्त्रेषु गोपिताम् ॥ अभीष्टसिद्धिदां नातः परं किञ्चिच्च विद्यते ॥ ३७३ ॥ सर्वेषामेव देवानां प्रिया प्रोक्तेप्सितप्रदा ॥ वैदिकैरपि कर्त्तव्याभीष्टसिद्ध्यै पुरो[4]हितम् ॥ ३७४ ॥ कृत्वा तु कौलिकं देवि पूर्णाः

---

१ प्रपञ्चत्रयधारिभिः पा० । २ आलोप आर्षः । ३ स्त्रीणांमुच्छिष्टं भुञ्जीतात्मनश्च स्त्रीभ्यो न दद्यात् । ४ पुरा ऊहितम् इतिच्छेदः ।

स्युस्तन्मनोरथाः ॥ लक्ष्मीः कोलासुरं हत्वाशेषात्तद्रुधिरं पपौ ॥ ३७५ ॥ पानमत्ता तदा विप्रैर्यथेच्छं हसिता तु सा॥ ब्रह्मणा विष्णुना वापि मयापि प्रष्टुमिच्छता ॥ ३७६ ॥ तदा बुद्ध्वा महालक्ष्मीर्भूमावन्तर्हिताभवत् ॥ निःश्रीकं सकलं जातं मुमूर्षुरिव दृश्यते ॥ ३७७ ॥ धर्म्मो न चलते क्वापि न च तुष्यन्ति देवताः ॥ एवं वर्षशते जाते ब्रह्माणं शरणं गताः ॥ ३७८ ॥ ब्रह्मापि तत्र निःश्रीको दरिद्र इव दृश्यते ॥ प्रोक्तवन्तस्तु मुनयो विधे विश्रीकता कुतः ॥ ३७९ ॥ तदा विप्रकृतं हास्यं ब्रह्मणा बोधितं प्रिये ॥ ब्राह्मं तेजो महदिदं विष्णुस्तूष्णीमुपस्थितः ॥ ३८० ॥ युष्मत्पक्षावरोधेन हसिता श्रीः शिवेन च ॥ तेनेयं कुपिता जाता गता तस्माद्रसातलम्॥ ३८१ ॥ सर्वे श्रियोज्झिता विप्रा लोके निःश्रीकता ततः ॥ तस्माद्विष्णुः शिवोहं च यूयं शक्रपुरोगमाः ॥ ३८२ ॥ नागाश्च पितरः सिद्धा दिक्पालाः यक्षराक्षसाः ॥ आराधयन्तु तां देवीं स्तुवन्तु च महास्तवैः॥ ३८३ ॥ ततः सम्मिलिताः सर्वे गताः श्रीशैलपर्वतम् ॥ किञ्चिच्छोभां श्रियो दृष्ट्वा चक्रुराराधनं ततः ॥ ३८४ ॥ वैदिकैस्तान्त्रिकैर्मार्गैर्नानास्तोत्रैः प्रतुष्टुवुः ॥ एवं वर्षत्रयादूर्ध्वं प्रत्यक्षा श्रीर्व्यजायत ॥ ॥ ३८५ ॥ अपश्यच्च कृपादृष्ट्या सहासं वाक्यमब्रवीत् ॥ किमर्थं हासितं विप्रैर्देवैश्चाकुलितं कुतः॥ ३८६ ॥ उपासना पुनः कस्माद्दुर्दशायाः कृता पुनः ॥ ततः सा तु मया प्रोक्ता सर्वं विश्वं त्वया ततम् ॥ ३८७ ॥ त्वत्सामर्थ्यं न जानन्ति हसन्ति त्वां च कर्म्मणा ॥ एतद्बुद्ध्वा मया हास्यं कृतं हृदयसाक्षिणि ॥ ३८८ ॥ प्रभावस्तु तवाज्ञातः सर्वैर्विप्रैः सुरासुरैः ॥ अतः परं प्रसीदेशे लोकयात्रां च निर्वह ॥ ३८९ ॥ इति श्रुत्वा मम वचस्तदा प्रोक्तं श्रिया किल ॥ इयं सुरा मे भगिनी तत्प्रधानन्तु पूजनम् ॥ ३९० ॥ ये करिष्यन्ति देवस्य स देवो मोदमेष्यति ॥ यथा मायाप्रपञ्चोयं वृथा भवति मां विना ॥ ३९१ ॥ समस्ताश्च तथा पूजाश्चक्रपूजां विना वृथा ॥ इह लोके भोगवाञ्छा देवतात्वं परत्र चेत् ॥ ३९२ ॥ अपेक्षितं तदा कार्य्यं मन्त्रैर्वै चक्रपूजनम् ॥ सर्वदेवप्रियं गोप्यं तद्विधिं कथयाम्यथ ॥ ३९३ ॥ समस्तचक्र पजा सा अष्टधा परिकीर्तिता ॥ सहस्रोत्पातिते कार्ये कार्ये वा पूर्णताङ्गते ॥

॥३९४॥ देवतोत्साहदिवसे कौलिकस्यागमेपि वा ॥ उमामाहेश्वरे योगे योगे वा शक्तिसङ्गमे ॥ ३९५ ॥ बलिराज्ये कामदिने चक्रपूजाविहर्पदा॥ प्रदोषे वाभिजिति वा निशीथे वाष्टमीयुते ॥ ३९६ ॥ नवम्यां चन्द्रवेयोग उमामाहेश्वराभिधः॥भौमाष्टम्यां चतुर्दश्यां योगोयं शक्तिसङ्गमः॥ ३९७॥आश्विनस्यासिते पक्षे त्रयोदश्यादिपञ्च च ॥ बलिराज्यमिदं प्रोक्तं यथेच्छाकाङ्नाय तु ॥ ३९८ ॥ तत्कामादिनमित्याहुस्सोमवारे त्रयोदशी ॥ पूर्वस्मिन्दिवसे स्नात्वा देवीमभ्यर्च्य कामनाम् ॥ ३९९ ॥ कृत्वा सङ्कल्पयेच्चक्रपूजां दद्याद्बलिं पशोः ॥ तद्विधिं सम्प्रवक्ष्यामि चानुकल्पं प्रकल्पयेत् ॥ ४०० ॥ बलिस्तु त्रिविधः प्रोक्तस्तान्त्रिकः स्मार्त एव च ॥ वैदिकश्चेति तत्रादौ तान्त्रिकोष्टविधः स्मृतः ॥ ४०१ ॥ नरश्च महिषः कोलश्छागोऽविः सारसस्तथा ॥ कपोतः कुक्कुटश्चेति सामान्यं पूर्वपूर्वतः ॥ ४०२ ॥ श्रेष्ठस्तत्र कलौ देवी महापीठे नरो बलिः ॥ कर्तव्यः साधकेन्द्रेण सद्यो याति च सुन्दरः॥४०३॥ धातुबद्धः कृष्णकूर्चोऽक्षेत्रादिरनुलोमजः ॥ मूल्याद्गृहीतो वापीष्टो दैवतः स्वयमागतः ॥४०४॥ वर्षं षण्मासमथ वा यथेच्छाचारपालितः ॥ स भवेद्बलियोग्यश्च नान्यश्चौरादिकाहृतः ॥ ४०५ ॥ महिषः पञ्चमादूर्ध्वं दशाब्दस्ता द्वनोद्भवः ॥ ग्रामजोपि महाक्रूरो निरुकृष्णैकवर्णकः ॥ ४०६ ॥ आरक्ताक्षश्चोर्ध्वशृङ्गो दीर्घपुच्छस्तु मांसलः॥ एकवर्णो देवताया वर्णरूपो गदोज्झितः ॥ ४०७ ॥ साण्डः सशृङ्गो यूथेशो गन्धिमानौषधादिभिः ॥ विगन्धीकृत्य बलये योग्यः सर्वोत्तमस्त्वयम् ॥ ४०८ ॥ सर्वेषामेव वर्णानां देवतानां तथैव च ॥ अधिकारः प्रीतिदश्च यज्ञेष्वेष विशिष्यते ॥ ४०९ ॥ मेषः सशृङ्गस्त्वजवच्छृङ्गहीनोपि कुत्रचित् ॥ अङ्गहीनो विहीनाण्डो बालो वृद्धो न शस्यते ॥ ४१० ॥ वर्षद्वयोर्ध्वं च गृहे पालितो बलवत्तरः ॥ मांसभारात्तथानेन समो वै सारसो वरः ॥ ४११ ॥ नीलकण्ठच्छविः कण्ठे कपोतः पुष्टकन्धरः ॥ वर्षादूर्ध्वं गृहे पुष्टो बल्यर्थं योग्य उच्यते ॥ ४१२ ॥ सर्वेषामग्रतो रौति यः प्रातर्बहुवर्णकः ॥ मांसलस्त्वेकवर्णो वा ताम्रचूडो विशिष्यते ॥ ४१३ ॥ नरो द्विजैर्न हन्तव्यो विप्रेण महिषस्तथा ॥ शूकरैः समतां नीताः कुकुटा बल-

योखिलैः ॥ ४१४ ॥ कूष्माण्डं नारिकेलञ्च श्रीफलं चेक्षुमेव च ॥ वस्त्रसंवेष्टितं कृत्वा छेदयेच्छुरिकादिभिः ॥ ४१५ ॥ एष स्मार्तो बलिः प्रोक्तः धर्म्मशास्त्रानुगामिभिः ॥ पूर्वपूर्वत्रापि चोक्तो विशिष्टो देवतोषकः ॥ ४१६ ॥ यस्य यत्राधिका भक्तिस्तेन तुष्यति देवता ॥ नियमैश्च यमैर्युक्तः सकलैर्मूर्तिरात्मनः ॥ ४१७ ॥ वैदिकं तु बलिं दद्यादोदनं स्विन्नमाषवत् ॥ सरोचनमतिक्रूरदैवते वटकान्वितम् ॥ ४१८ ॥ बलिं सम्पूज्य विधिवद्गन्धपुष्पाक्षतादिभिः ॥ तारं कालियुगं यज्ञेश्वरि लोहपदं वदेत् ॥ ४१९ ॥ दण्डायै नम इत्येष मन्त्रः षोडशवर्णकः ॥ अष्टोत्तरशतं जप्त्वा तत उत्थाय साधकः ॥ ॥ ४२० ॥ देवीरूपं पशुं ध्यात्वा पुष्पं तस्मिन्विनिक्षिपेत् ॥ मन्त्रितं मूलमन्त्रेण सपुष्पाक्षतचन्दनम् ॥ ४२१ ॥ यदा स चालयेद्गात्रं गृहीतस्तु तदेच्छया ॥ यावन्न चालयेद्गात्रं पशुस्तावन्न हन्यते ॥ ४२२ ॥ उत्तराभिमुखो भूत्वा बलिं पूर्वमुखं तथा ॥ निरीक्ष्य साधकः पश्चादिमं मन्त्रमुदीरयेत् ॥ ४२३ ॥ पशुस्त्वं बलिरूपेण मम भाग्यादुपस्थितः ॥ प्रणमामि ततः सर्वरूपिणं बलिरूपिणम् ॥ ४२४ ॥ चण्डिकाप्रीतिदानेन दातुरापद्विनाशनम् ॥ चामुण्डाबलिरूपार्थं बले तुभ्यं नमोस्तु ते ॥ ४२५ ॥ यज्ञार्थं पशवः सृष्टाः स्वयमेव स्वयम्भुवा ॥ अतस्त्वां घातयाम्यद्य तस्माद्यज्ञे वधोवधः ॥ ४२६ ॥ ॐ श्रीं ह्रीं श्रीमिति मन्त्रेण बलिं मत्स्वरूपिणम् ॥ चिन्तयित्वा न्यसेत्पुष्पं कुम्भकेनास्य मस्तके ॥ ४२७ ॥ असे च त्वं चण्डिकायाः सुरलोकप्रसाधकः ॥ ह्रीं ह्रीं खड्गेति मन्त्रेण तं खड्गं परिपूजयेत ॥ ॥ ४२८ ॥ मां हूं फडिति मन्त्रं तु जपन्सञ्छेदयेद्बलिम् ॥ एकेनैव प्रहारेण च्छिन्नो दैवततुष्टये ॥ ४२९ ॥ प्रहारे पतिते शब्दः क्रियते यदि नापदि ॥ वर्षस्याभ्यन्तरेवश्यं राज्यनाशः प्रजायते ॥ ४३० ॥ एवं दत्त्वा बलिं सम्यङ्नित्यकर्म्म विधाय च ॥ तृतीये प्रहरे रामा नराश्चोर्ध्वं निमन्त्रयेत ॥ ४३१ ॥ अमुष्याः प्रीतये देव्या मन्मनोरथसिद्धये ॥ चक्रपूजोत्सवार्थं त्वं श्वो मयामन्त्रितो ह्यसि ॥ ४३२ ॥ अष्टाधिका निमंत्र्यास्तु

स्त्रियो न्यूनास्तु मत्कृते ॥ स्त्रीभ्यश्च पुरुषा न्यूना अधिकास्ते तु हानिदाः ॥ ४३३ ॥ सर्वकौलव्रतस्थाः स्युर्दक्षिणाम्नायवर्जिताः ॥ भवन्ति दीक्षानिरता निमंत्र्याश्चक्रपूजने ॥ ४३४ ॥ तस्यां रात्रौ तु सम्पूज्य देवं स्वयमतन्द्रितः ॥ कुलशब्दं द्विधा प्रोच्य कुलजेति पिशाचिनी ॥ ४३५ ॥ त्रयोदशार्णं स्वाहान्तमष्टोत्तरसहस्रकम् ॥ जपेन्निशि ततः पश्येच्चक्रविघ्नं तथा शुभम् ॥ ४३६ ॥ विघ्ने दृष्टे न कर्त्तव्यं कार्यं वा शान्तिपूर्वकम् ॥ शान्तिर्गणेश्वरो होमो ग्रहाणां भैरवस्य च ॥ ४३७ ॥ ततो बहिर्बलिन्दद्यादिमं मन्त्रमुदीरयेत् ॥ ॐ नमश्च त्रिरुच्चार्य अमुकक्षेत्रपालक ॥ ४३८ ॥ एह्येहि भगवन्पूजां गृह्ण युग्मं बलिं तथा ॥ भक्षयुग्मं चक्रविघ्नकरांस्तम्भययुग्मकम् ॥ ४३९ ॥ हुं फट् स्वाहा सप्तचतुर्वर्णो मन्त्रः प्रकीर्त्तितः ॥ दिनस्य कृत्यं निर्वर्त्य सायं चक्रं प्रपूजयेत् ॥ ४४० ॥ अर्वाक्चक्रं स्वविद्यायास्तन्मध्ये स्थापयेद्घटम् ॥ मद्यपूर्णे तत्र देवीमावाह्यार्चनमाचरेत् ॥ ४४१ ॥ नानाविधानि मांसानि ह्यनेका मत्स्यजातयः ॥ चतुर्विधानि भक्ष्याणि योजयेत्सोपदंशकैः ॥ ४४२ ॥ साङ्गां सावरणां सम्यक्पूजयित्वा सुरीं बुधाः ॥ शक्तयश्च तथा वीराः पूज्याः पुष्पाक्षतादिभिः ॥ ४४३ ॥ पूजागृहस्यान्तरतस्त्रिकोणे भूगृहान्तरे ॥ उच्छिष्टभैरवं चोग्रगन्धपुष्पादिभिर्यजेत् ॥ ॥ ४४४ ॥ उच्छिष्टदोषो भविता चक्रपूजामहोत्सवे ॥ तद्दोषपरिहारार्थं भैरवं पूजयाम्यहम् ॥ ४४५ ॥ तारत्रयं तथोच्छिष्टभैरवेहि द्वयं तथा ॥ बलिं गृह्णयुगं हुं फट् स्वाहा द्वात्रिंशदक्षरः ॥ ४४६ ॥ अनेन बलिदानं तु पूजान्तेस्य प्रकल्पयेत् ॥ पूजागारं समागत्य गणमेवक्रसंस्थितान् ॥ ४४७ ॥ गुरुः पात्रं समादाय मद्यामृतयुतं करे ॥ परिषिञ्चेत्सामयिकानर्थशान्तिस्तवं पठेत् ॥ ४४८ ॥ जपन्ति देव्यो हरपादपंकजं प्रसन्नवामामृतमोक्षदायकम् ॥ अनन्तसिद्धान्तमतिप्रबोधकं नमामि सान्तुष्टिकयोगिनीगणम् ॥ ४४९ ॥

---

१ कुलकुलकुलजे पिशाचिनि स्वाहा ॥ २ ॐ ॐ ॐ नमः अमुकक्षेत्रपालक एह्येहि भगवन्पूजां गृह्णगृह्ण बलिं भक्षभक्ष चक्रविघ्नकरांस्तम्भयस्तम्भय हुं फट् स्वाहा ॥

योगिनीचक्रमध्यस्थं मातृमण्डलवेष्टितम् ॥ नमामि शिरसा नाथं भैरवं भैरवीप्रियम् ॥ ४५० ॥ अनादिघोरसंसारध्वान्तविध्वंसकारिणे ॥ नमः श्रीनाथवैद्याय कुलौषधिविधायिने ॥ ४५१ ॥ आपदो दुरितं रोगाः समयाचारलङ्घनात् ॥ ये सर्वे ते विनश्यन्तु दिव्यचक्रस्य मेलनात् ॥ ४५२ ॥ आयुरारोग्यमैश्वर्य्यं कीर्तिर्लाभः शुभं जयः ॥ कान्तिर्मनोरथश्चास्तु पान्तु सर्वाश्च देवताः ॥ ४५३ ॥ सम्पूजकानां प्रतिपालकानां यमीन्द्रयोगीन्द्रतपोधनानाम् ॥ विश्वस्य राष्ट्रस्य परस्य राज्ञः करोतु शान्तिम्भगवान्कुलेशः ॥ ॥ ४५४ ॥ नन्दन्तु साधककुलान्यपि दर्शकाये सृष्ट्या जना अथ गुरुक्रमहान्वया ये ॥ नन्दन्तु सर्वकुलकौलरताःपरा ये त्वन्ये विशेषपदभेदकशाम्भवा ये ॥ ४५५ ॥ नन्दन्तु सिद्धगुरवस्तदनुक्रमौघा ज्येष्ठानुजास्समयिनो बटुकाः कुमार्यः ॥ षड्योगिनीप्रवरवीरकुले प्रसूता नन्दन्तु भूमिपतिगोद्विजसाधुलोकाः ॥ ४५६ ॥ नन्दन्तु नीतिनिपुणा निरवद्यनिष्ठा निर्मत्सरा निरुपमा निरुपद्रवाश्च ॥ नित्यं निरञ्जनरता गुरवो नितान्तशान्ता गुणान्तमनसो हतशोकशङ्काः ॥ ४५७ ॥ नन्दन्तु योगनिरताः कुलयोगयुक्ता आचार्यसामयिकसाधकपुत्रकाश्च ॥ गावो द्विजा युवतयो यतयः कुमार्यो नन्दन्तु भावनिरता गुरुभक्तियुक्ताः ॥ ४५८ ॥ नन्दन्तु साधककुलान्यभिमानिष्ठाः शापाः पतन्तु समये द्विषि योगिनीनाम् ॥ सा शाम्भवी स्फुरतु कापि समाप्यवस्था यस्यां गुरोश्चरणपङ्कजमेव लभ्यम्४५९॥ याश्चक्रक्रमभूमिका वसतयो नाडीषु यास्संस्थिता याः कायद्रुमरोमकूपनिलया यास्संस्थिता धातुषु ॥ उच्छ्वासोच्छ्वसितहत्तरङ्गनिलया निःश्वासवासाश्च यास्ता देव्यो रिपुपक्षभक्षणपरास्तृप्यन्तु कौलार्चिताः ॥ ४६० ॥ या देव्यः कुलसम्भवाः क्षितिगता या देवतास्तोयगा या नित्यं प्रथितप्रभाः शिखिगता या मातरः स्वाश्रयाः ॥ या व्योमामृतमण्डलामृतमया याः सर्वगाः सर्वदा तास्सर्वाः कुलमार्गपालनपराः शांतिं प्रयच्छन्तु मे ॥ ४६१ ॥ ऊर्ध्वे ब्रह्माण्डके वा पुरि गगनतले भूतले निष्कले वा पाताले वानले वा सलिलपवनयोर्यत्र तत्र

---

१ कुत्रेति पाठान्तरम् ।

स्थिता वा ॥ क्षेत्रे पीठोपपीठादिषु च कृतपदा धूपदीपादिमांसैः प्रीता देव्यः सदा नः कृतबलिविधयः पान्तु वीरेन्द्रवन्द्याः ॥ ४६२ ॥ ब्रह्मश्रीशेषदुर्गा गुहबटुकगणा भैरवाः क्षेत्रपाला वेतालादित्यरुद्रा ग्रहवसुमुनयः सिद्धयो गुह्यकाद्याः ॥ भूता गन्धर्वविद्याधरऋषिपितरः किन्नरा यक्षनागा योगीशाश्चारणाद्याः पुरुषमुनिसुराश्चक्रगाः पान्तु सर्वे ॥ ४६३ ॥ देहस्थाखिलदेवता गजमुखाः क्षेत्राधिपा भैरवा योगिन्यो बटुकाश्च यक्षपितरो भूताः पिशाचा ग्रहाः ॥ अन्ये भूचरदिक्चराश्च खचरा वेतालकाश्चेटकास्तृप्ताः स्युः कुलपुत्रकस्य पिबतः पानम्मदीयं वरम् ॥ ४६४ ॥ सत्यं वै गुरुदेवदेवपितरो वेदागमा योगिनी प्रीताश्चेत्परदेवता यदि भवेद्वेदाः प्रमाणं हि चेत ॥ शाक्तेयम्परिदर्शनं भवति चेदाज्ञाप्य मोधास्ति चेत्सत्यं वापि च कौलिको यदि तदा स्यान्मे जयः सर्वदा ॥ ४६५ ॥ तृप्यन्तु साधकास्सर्वे समुद्राः सगणाधिपाः ॥ योगिन्यः क्षेत्रपालाश्च मम देहे व्यवस्थिताः ॥ ४६६ ॥ शिवाद्यनिलपर्य्यन्तम्ब्रह्मादिस्तम्बसंयुतम् ॥ कालाग्न्यादिशिवान्तञ्च पानयज्ञेन तृप्यताम् ॥ ॥ ४६७ ॥ तत्पात्रन्तु समुत्थाप्य समुद्रास्य गुरुस्ततः ॥ दद्याच्छिष्याय कुम्भस्थं योगिनीभ्यः पृथक्पृथक् ॥ ४६८ ॥ पात्रे तथैव वीरेभ्यश्चेतरेभ्यः स्वयं पिबेत ॥ स्त्रीणामन्यतमं स्थानं पुंसामन्यतमं पृथक् ॥ ४६९ ॥ अथ वा मिथुनं कृत्वा क्रमात्समुपवेशयेत॥ पङ्क्त्याकारेण वा सम्यक्चक्राकारेण वापुनः ॥४७०॥ शिवशक्तिधिया सर्वांश्चक्रमध्ये समर्चयेत् ॥ तत्र मन्त्रेषु वीरेषु कार्य्याकार्य्यं न विद्यते ॥४७१॥ तत्र यद्यत्कृतं कर्म्म शुभं वा यदि वाशुभम॥ तत्सर्वं देवताप्रीत्यै जायते नात्र संशयः ॥ ४७२ ॥ जल्पो जपफलं तन्द्रा समाधिरभिधीयते ॥ विक्रिया पूजनं प्रोक्तं छर्दितं भैरवो बलिः ॥ ॥४७३॥ मुक्तिस्स्याच्छक्तिसंयोगः स्तोत्रं तत्कालभाषणम् ॥ न्यासोऽवयवसंस्पर्शो भोजनं हवनक्रिया ॥ ४७४ ॥ ध्यानं तु वीक्षणं प्रोक्तं शयनं चन्दनं भवेत ॥ तदुल्लासकृतानां च या चेष्टा सा च सत्क्रिया ॥ ४७५ ॥ कार्य्याकार्य्यविचारन्तु यः करोति स पातकी ॥एतच्चक्रगता देवि विज्ञेयाः परयोगिनः ॥ ४७६ ॥ येनाप्नुवन्ति मनुजाः साक्षाद्भैरवरूपताम् ॥ संमोदं

कोपशमनं पतनं गायनं तथा ॥ ४७७॥ वेणुवीणादिवाद्यं च कवितारचना-
दिकम् ॥ रोदनं भाषणं चैव समुत्थानं विजृम्भणम् ॥ ४७८ ॥ गमनं
विक्रिया देवि योग इत्यभिधीयते ॥ विकृतिं मनसो हित्वा यदोल्लासः प्रवर्तते
॥ ४७९ ॥ तदा तु देवताभावं भजन्ते योगिपुङ्गवाः ॥ कौलिकान्भैरवावे-
शान्यो विनिन्दति मूढधीः ॥ ४८० ॥ तं नाशयन्त्यसन्देहाद्योगिन्यो नात्र
संशयः ॥ यद्यद्भक्तिसमावेशादद्भुतं कौलिके जने ॥ ४८१ ॥ तत्तद्भवत्यस-
न्दिग्धं शुभं वा यदि वाशुभम् ॥ देवतासक्तमनसः शुद्धा देवि सदा हि ते
॥ ४८२ ॥ तारो नमो भगवति मद्यमांसविहारिणि ॥ रतिप्रिये चक्रदेवि
वद कौलिकवल्लभे ॥ ४८३॥ सत्यं मनोगतं मेयेत्युक्त्वा मद्यं पलान्वितम् ॥
प्रदद्याच्च कौलिकेभ्यस्तन्मन्त्रान्प्रब्रुवन्ति ते ॥ ४८४ ॥ तत्र कश्चिदकौल-
श्चेन्न सा स्फुरति भारती ॥ न निन्देन्न हसेत्कुप्येच्चक्रे मधुमदाकुलान् ॥
॥ ४८५ ॥ एतच्चक्रगतां वार्तां बहिर्नैव प्रकाशयेत् ॥ तेभ्यो द्रोहं न कुर्वीत-
नाहितं च समाचरेत् ॥ ४८६ ॥ रक्ष्यां संरक्षयेत्तां वै गोपयेच्च प्रयत्नतः॥
चक्रे मदाकुलान्दृष्ट्वा चिन्तयेद्देवताधिया ॥ ४८७ ॥ न निन्देन्न हसे-
द्भक्त्या स गच्छेद्योगिनीपदम्॥ प्रवृत्ते भैरवीचक्रे सर्वे वर्णा द्विजातयः ॥४८८॥
निवृत्ते भैरवीचक्रे सर्वे वर्णाः पृथक्पृथक् ॥ एवं चक्रस्य माहात्म्यं देवीपूजो-
पयोगतः ॥४८९॥ स्त्रियोथ पुरुषः षण्ढश्चाण्डालो वा द्विजोत्तमः ॥ चक्रमध्ये
न भेदोस्ति सर्वे देवसमाः स्मृताः ॥ ४९० ॥ चक्रमध्यगताः सर्वे पुरुषाः
शिवरूपिणः ॥ स्त्रियः सर्वाश्च पार्वत्यस्तस्माद्भेदं न कारयेत् ॥४९१॥ मद्यकु-
म्भसहस्रैस्तु मांसभारशतैरपि ॥ न तुष्यति महामाया भगलिङ्गामृतं विना
॥ ४९२ ॥ कामुको न स्त्रियं गच्छेदनिच्छन्तीमदीक्षिताम् ॥ सद्यः संस्का-
रसंशुद्धां विहितत्वाद्व्रजेत्स्त्रियम् ॥ ४९३ ॥ सहस्रचक्रपूजातो राज्यभ्रष्टो
नृपो भवेत् ॥ पञ्चाशद्भिश्च पुत्राप्तिर्नीरोगो दशभिर्भवेत् ॥ ४९४ ॥ यस्य
चक्रस्य पूजायां रतिः स्खलति योगतः ॥ अवश्यं सार्वभौमोसौ वर्षमध्ये
भविष्यति ॥ ४९५ ॥ यथेप्सितश्रियाप्राप्त्यै पञ्चधा पूजनं चरेत् ॥ सप्तभिः
स्याद्धनप्राप्तिश्चक्रपूजा विधिस्त्वयम् ॥ ४९६ ॥ भगिनीं वा सुतां भार्यां

यो दद्यात्कुलयोगिने ॥ मधुमत्ताय चक्रे वाचके वा पुण्यभाक्स तु ॥४९७॥ उत्तमा नित्यपूजा स्यान्मध्यमं पर्वपूजनम् ॥ मासपूजाधमा प्रोक्ता मासादूर्ध्वन्तु निष्फला ॥ ४९८ ॥ मासेथ वाधिमासे वा षण्मासे वत्सरेपि वा ॥ श्री-गुरुं पूजयेद्भक्त्या प्राप्तौ तत्स्त्रीसुतादिकान् ॥ तदभावे तत्कुलीनं तच्छिष्यं चान्ययोगिनम् ॥ सन्तोषयेत्कुलद्रव्यैश्चक्रपूजापुरःसरम् ॥ ४९९ ॥ रोगे-ष्वापत्सु दोषेषु दुःसङ्गे दुर्निमित्तके ॥ पूजयेद्योगिनीवृन्दं देवि तद्दोपशान्तये ॥५००॥ वक्ष्येथ नवरात्रस्य विधिं सर्वेष्टदायकम् ॥ आश्विनस्य सिते पक्षे प्रतिपद्येकवार्षिकीम् ॥ ५०१ ॥ द्विवर्षीणां द्वितीयायामेवमग्रे प्रवर्धयेत् ॥ नवम्यां नववर्षां च सुरूपा व्यङ्गवर्जिता ॥ ५०२ ॥ शुद्धा बाला च ललिता मालिनी च वसुन्धरा ॥ सरस्वती रमा गौरी दुर्गा च नव कीर्तिताः ॥ ५०३ ॥ प्रातर्निमन्त्रितां भक्त्या देवतार्चां समाप्य च ॥ अभ्यङ्गस्नान-शुद्धां तां पूजायतनमानयेत्॥५०४॥ देवतासन्निधौ बालामुपवेश्य समर्चयेत्॥ गन्धपुष्पाक्षतैर्धूपदीपैश्च कुलदीपकैः ॥ ५०५ ॥ भक्ष्यभोज्यान्नपानाद्यैः क्षीराज्यमधुमांसकैः ॥ कदलीनारिकेरादिफलैस्तां परितोषयेत् ॥ ५०६ ॥ सशक्तिकः स्वयं देवि यौवनोल्लाससंयुतः ॥ यथाशक्ति जपेदेकोत्तरवृद्ध्या स्वकं मनुम् ॥ ५०७ ॥ बालामलंकृतां पश्चाच्चिन्तयेत् स्वेष्टदेवताम् ॥ ततस्तां देवताबुद्ध्या नमस्कृत्य विसर्जयेत् ॥ ५०८ ॥ त्रितारार्द्यैर्नमोन्तैश्च देवतापदपश्चिमैः ॥ नामभिः सचतुर्थ्यन्तैः पूजयेत्ताः पृथक्पृथक् ॥ ५०९॥ बटुकं पञ्चवर्षं च नववर्षं गणेश्वरम् ॥ क्रमादन्ते तथादौ च गन्धाद्यैः परि-पूजयेत् ॥ ५१० ॥ नवरात्रकृतां पूजां ततो देव्यै समर्पयेत् ॥ ताम्बूलं दक्षिणां दत्त्वा कुमारीं तां विसर्ज्जयेत् ५११ ॥ एवं नवकुमारीणां पूजनं प्रतिवत्सरम् ॥ यः करोति सुखी चात्र मृतो देवो भवेत्स तु ॥ ५१२ ॥ अथ वा यौवनारूढाः प्रमदा नव सुन्दरीः ॥ मनोज्ञाः पूजयेद्भक्त्या नवमातृषु मन्त्रवित् ॥ ५१३ ॥ हृल्लेखामंगनां रक्तां महोच्छुष्मां करालिकाम् ॥ इच्छाज्ञानां क्रियां दुर्गां बटुकं च गणेश्वरम् ॥ ५१४ ॥ पूर्ववत्पूज्य मद्याद्यैः पदार्थैः परितोषयेत् ॥ सर्वैश्वर्य्यसमृद्धात्मा स भवेदावयोः प्रियः ॥ ५१५ ॥

भृगुवारे तु वारेन्द्रे कान्तामारूढयौवनाम् ॥ सर्वलक्षणसम्पन्नामनुकूलां मनो-हराम् ॥ ५१६ ॥ कुलाकुलांगनां वापि निमन्त्र्याहूय पुष्पिणीम् ॥ अभ्य-ङ्गस्नानशुद्धाङ्गीमासने चोपवेशयेत् ॥ ५१७ ॥ गन्धपुष्पैरलंकारैरलंकृत्य-विधानतः ॥ आत्मानं गन्धपुष्पाद्यैरलंकुर्य्याच्च साधकः ॥ ५१८ ॥ आवाह्य देवतां तस्यां यजेन्मासक्रमेण च ॥ कृत्वा कर्म्मार्चनं धूपं दीपांश्च कुलदीप-कान् ॥ ५१९ ॥ प्रदर्श्य देवताबुद्ध्या पदार्थैः षड्रसान्वितैः॥मांसादिभक्ष्य-भोज्याद्यैस्तोषयेदतिभक्तितः ॥ ५२० ॥ प्रौढान्तूल्लाससहितां पश्येच्च प्रजपे-न्मनुम् ॥ यौवनोल्लाससहितः स्वयं तद्ध्यानतत्परः ॥ ५२१ ॥ निर्विकारेण चित्तेन अष्टोत्तरसहस्रकम् ॥ जपादिकं समर्प्याथ तया सह निशां नयेत् ॥ ॥ ५२२ ॥ कृत्वेदं भृगुवारेषु ब्रह्मस्वात्परिमुच्यते ॥ दारिद्र्यस्य तु नाशः स्यात्पञ्चभिर्भृगुवासरैः ॥ ५२३ ॥ सन्ततिश्चाक्षता तस्य सम्पत्तिर्भृगुसप्तभिः नवभिर्भृगुवारैस्तु देवसायुज्यमाप्नुयात् ॥ ५२४ ॥ वक्ष्येऽथ सर्वकामानां साधनं मिथुनार्चनम् ॥ संक्रान्तौ विषुवत्यां वायने वा तत्समाचरेत्॥५२५॥ गौरीशिवौ रमाविष्णू वाणीसरसिजासनौ॥शचीन्द्रौ रोहिणीचन्द्रौ स्वाहाग्नी च तथैव च॥५२६॥भद्रकाली वीरभद्रौ भैरवीभैरवावपि॥ मिथुनानि नवाभ्यर्च्य पूर्वोक्तेनैव वर्त्मना॥५२७॥त्रितारादिनमोन्तेन तत्तन्नाम्ना विधानवित्॥संपूज्य गन्धपुष्पाद्यैर्मद्याद्यैः परितोषयेत् ॥ ५२८ ॥ प्रौढान्तोल्लासयुक्तानि कुर्वीत मिथुनानि च ॥ एवं कृते न सन्देहस्तुष्टाः स्युर्नव देवताः ॥ ५२९ ॥ वर्षेवर्षेतु यः कुर्य्यान्न स दुःखमवाप्नुयात् ॥ पुत्रार्थं नववारन्तु धनार्थं प्रातिमासकम् ॥ ५३० ॥ अयने विषुवे चैव कारागृहविमु-क्तये ॥ नपुंसकस्य पुंस्त्वार्थमष्टवारान्समाचरेत् ॥ ५३१ ॥ अथ कौलिकमार्गाणां देवता सापि वक्ष्यते ॥ पापनाशे सुखोत्पत्तिस्तद्वर्षे-पक्षपूजनम् ॥ ५३२ ॥ माघशुक्लप्रतिपदि दिवा चाहारवर्जितः ॥ स्नात्वा शुक्लाम्बरधरः सायं सन्ध्यामुपास्य च ॥ ५३३ ॥ सूर्य्यार्चनं तु मार्गेण

---

१ ॐ ॐ ॐ गौर्य्यै नमः ॐ ॐ ॐ शिवाय नमः ॐ ॐ ॐ रमायै नमः ॐ ॐ ॐ विष्णवे नमः ॐ ॐ ॐ वाण्यै नमः ॐ ॐ ॐ ब्रह्मणे नमः ।

सर्वद्रव्यसमन्वितः ॥ चन्द्रास्तमानपर्यन्तं जपेन्मन्त्रमनन्यधीः ॥ ५३४ ॥ एवं प्रतिदिनं शुक्लचतुर्दश्यां समर्चयेत् ॥ पूर्णमास्यां यथाशक्ति पूजयेच्छक्ति-कौलिकान् ॥ ५३५ ॥ यौवनोल्लाससहितश्चन्द्रस्थां देवतां स्मरेत् ॥ एवं शुक्लार्चनं कृत्वा रात्रिपापैः प्रमुच्यते ॥ ५३६ ॥ शुक्लपक्षार्चनं यद्वत्तद्व-त्पक्षे सितेतरे ॥ यः करोति विधानेन सर्वान्कामान्समश्नुते ॥ ५३७ ॥ अथ वैशाखमासस्य शुक्लप्रतिपदीश्वरी ॥ ब्राह्मे मुहूर्ते चोत्थाय स्नानं सन्ध्या-मुपास्य च ॥५३८॥ मनोज्ञे रहसि स्थाने पूर्वाशाभिमुखः स्थितः ॥आत्मानं गन्धपुष्पाद्यैरलंकृत्य च वर्त्तयेत् ॥५३९॥ सन्ध्यायमुद्गते सूर्यमण्डले त्विष्ट-देवताम् ॥ ध्यात्वा सावरणां सर्वैरुपचारैः प्रपूजयेत् ॥ ५४० ॥ चक्रपूजां ततः कृत्वा कुलदीपान्प्रदर्शयेत् ॥ शिवाय गुरुरूपाय मत्स्यमांसादिभक्ष्यकम् ॥ ५४१ ॥ देव्यै निवेद्य तच्छेषं पिबेच्छक्त्या युतः स्वयम् ॥ यौवनोल्लास-सहितो निर्विकल्पेन चेतसा ॥ ५४२ ॥ ध्यायेत्तां मण्डले देवीमष्टोत्तरसहस्र-कम् ॥ जप्त्वा समर्प्य तां पूजां देवताश्च समुद्वसेत् ॥ ५४३ ॥ एवं शुक्लप्र-तिपदं समारभ्य दिनेदिने ॥ कुर्याज्जपार्चनं कृष्णचतुर्दश्यां च सुस्थिरः ॥ ॥ ५४४ ॥ अमावास्यादिने पूज्यास्त्र्याद्याविषमकौलिकाः ॥ युग्मीभू-तास्तदाघस्त्रकृतं पापं व्यपोहति ॥ ५४५ ॥ एवं मध्याह्नवेलायामर्चयित्वा प्रतापवान् ॥ सायाह्ने तु समभ्यर्च्य कीर्तिर्याति दिगन्तरम् ॥५४६॥ संध्य-योरर्चयेद्यस्तु तस्य श्रीः सर्वतोमुखी ॥ पूजयेद्यस्त्रिसन्ध्यासु योगिन्यस्तस्य वश्यगाः ॥ ५४७ ॥ श्रीकण्ठादीनि पञ्चाशन्मिथुनानि समर्चयेत् ॥ पूर्वोक्तेन विधानेन धनलोभविवर्जितः ॥ ५४८ ॥ प्रौढान्तोल्लासयुक्तानि मिथुनान्यत्र कारयेत् ॥ सन्तुष्टाय प्रयच्छन्ति साधकायेप्सितं फलम् ॥ ५४९ ॥ केशा-वादिगणेशादिकामपीठादिकानि च ॥ श्रीकण्ठादिवदभ्यर्च्य तत्तल्लोके महीयते ॥ ५५० ॥ खभूमिदिग्जलगिरिव्योमसर्वचरास्तु याः ॥ सहस्रकोटियोगिन्य-स्तावन्तो भैरवा अपि ॥ ५५१ ॥ नियुक्ताः सर्व एवैते कुलसंरक्षणाय च॥

---

१ तस्येति शेषः ।

दिवसेषु विशेषेषु सर्वे मुदितमानसाः ॥ ५५२ ॥ साधकान्नैव पीड्यन्ति स्वस्वपूजानुलिप्सया ॥ अपूजितास्तु विघ्नन्ति प्रसीदन्ति हि पूजिताः ॥ ॥ ५५३ ॥ गुरुभक्तान्सदाचारान्गुप्तधर्म्मानवन्ति च ॥ भक्तिहीनान्दुराचारान्नाशयन्ति प्रकाशकान् ॥ ५५४ ॥ अथ वक्ष्ये कुलाचारमार्गशास्त्रार्थनिर्णयम् ॥ कौलिकानां कुले जातो ज्येष्ठो यदि न दीक्षितः ॥ ५५५ ॥ कनिष्ठो दीक्षितश्चेत्स्यात्स कुर्य्यात्कुलपूजनम् ॥ पूजान्ते शेषमादाय ज्येष्ठे वस्तु निवेदयेत् ॥ ५५६ ॥ तस्योच्छिष्टन्तु गृह्णीयात्कनिष्ठ इति निर्णयः ॥ पूजामध्ये गुरौ ज्येष्ठे पूज्ये वापि समागते ॥ ५५७ ॥ नत्वा ब्रूयात्स्थितिं शेषमाचरेत्तदनुज्ञया ॥ नित्यार्चनं दिवा कुर्य्याद्रात्रौ नैमित्तिकार्चनम् ॥ ॥ ५५८ ॥ काम्यार्चनं प्रोक्तकाले बहवो यत्र सङ्गताः ॥ नत्वा स्वस्वगुरून्मन्त्रं स्वस्वमार्गेण तर्प्पयेत् ॥ ५५९ ॥ विनासनं विना स्नानं गन्धपुष्पाक्षतान्विना ॥ विना मद्यं विना मांसं कुलपूजां न कारयेत् ॥ ५६० ॥ न कुर्य्यात्प्रलपन्वापि विना मन्त्रेण पूजनम् ॥ शक्त्या विना तथा पानमेकहस्तेन नार्चयेत् ॥५६१॥ न पिबेदेकहस्तेन चक्रे निष्ठीवनं चरेत् ॥ प्रणम्य प्रविशेच्चक्रं विनिर्गच्छेत्प्रणम्य च ॥ ५६२ ॥ श्रीचक्रे नासने तिष्ठेन्न च वीरासने क्वचित्॥ श्रीचक्रमेकतः कुर्य्यादेकपात्रे च नार्चयेत् ॥ ५६३ ॥ श्रीचक्रदर्शनन्नॄणां नेत्रयोः पापहारकम् ॥ तन्नास्ति चेद्व्रणद्वन्द्वं कौलिकस्याक्षियुग्मकम् ॥ ५६४ ॥ अनाचारान्सदाचारांश्चक्रस्थाञ्छक्तिकौलिकान् ॥ शिवगौरीधिया सर्वान्भावयेन्नावमानयेत् ॥ ५६५ ॥ कुलाचार्य्यगृहं गत्वा भक्त्या पापविशुद्धये ॥ याचयेदमृतं चान्नं तदभावे जलं पिबेत् ॥ ५६६ ॥ कुलाचार्य्येण चेच्छक्त्या दत्तं पात्रं तु भक्तितः ॥ नमस्कृत्य प्रगृह्णीयादन्यथा नरकं व्रजेत् ॥ ५६७ ॥ उष्णीषी कञ्चुकी नग्नो मुक्तकेशश्च भुक्तवान् ॥ अस्नातो नातिभक्तश्च विवादे च पराङ्मुखः ॥ ५६८ ॥ नेदं यस्य कुले जातं यश्च संस्कारवान्द्विजः ॥ वेदाध्यायी कुलद्रव्यसेवनान्निर्धनो भवेत् ॥

१ दैवादिकृत्यमाषम ।

॥ ५६९ ॥ योगामृतस्य निष्ठीवान्मद्यभाण्डपरिक्रमात् ॥ ऊर्ध्वं गलेन पानाच्च देवताशापमानुयात् ॥ ५७० ॥ एकासने निविष्टा ये भुञ्जानाश्चैकभाजने॥ एकपात्रे पिबन्तो ये ते यान्ति निरयं ध्रुवम् ॥ ५७१ ॥ ये सेवन्ते कुलद्रव्यमेकग्रामे स्थिते गुरौ ॥ तत्कुलजे च तत्पुत्रे स्वज्येष्ठे कुलदेशिके ॥ ॥५७२॥ विनानुज्ञां स पापात्मा रौरवं निरयं व्रजेत् ॥उच्छिष्टो न स्पृशेच्चक्रं कुलद्रव्यं तथा गुरुम् ॥ ५७३ ॥ बहिःप्रक्षाल्य च जलैः कुलद्रव्याणि दापयेत ॥ मद्यभाण्डं समुद्धृत्य न पात्रं परिपूजयेत् ॥ ५७४ ॥ भोगपात्रं सुराकुम्भं निक्षिपेन्न कदाचन ॥ चक्रमध्ये शुचिधिया करास्यक्षालनादिकम् ॥ ५७५ ॥ यः करोति च मूढात्मा स भवेदापदां पदम् ॥ निष्ठीवनं मलं मूत्रमधोवायुविसर्जनम् ॥ ५७६ ॥ श्रीचक्रमध्ये यः कुर्य्यात्स भवेद्योगिनीपशुः ॥ चक्रमध्ये घटे भिन्ने पात्रे वा स्खलिते तथा ॥ ५७७ ॥ दीपनाशे राष्ट्रपीडा गच्छेद्वै चक्रपूजनम् ॥ परिहासं प्रलापं च विडम्बम्बहुभाषणम् ॥ ५७८ ॥ औदासिन्यं भयं क्रोधं चक्रमध्ये विवर्जयेत् ॥ पात्रहस्तश्चक्रमध्ये न नमेत्पूर्णपात्रकम् ॥ ५७९ ॥ चिरं न स्थापयेद्धस्ते नालभेत्पात्रपाणिकः ॥ पादाभ्यां न स्पृशेत्पात्रं न च भिन्द्यात्कदाचन ॥५८०॥ नैकहस्तेन दातव्यं न बिन्दुम्पातयेदधः ॥ पात्रं न चालयेत्स्थानान्न मुद्रावर्जितं पिबेत् ॥ ५८१ ॥ जल्पन्नापि पिबेन्मद्यं न कुर्य्यात्पात्रसंकरम् ॥ पात्रस्यांशद्वयं मद्यपूर्णं त्र्यंशन्तु रिक्तकम् ॥ ५८२ ॥ नान्योन्यं ताडयेत्पात्रं न पात्रं ताडयेदधः ॥ साधारं नोद्धरेत्पात्रमनाधारे न निक्षिपेत् ॥ ५८३ ॥ रिक्तं पात्रं न कुर्वीत न पात्रं लङ्घयेत्तथा ॥ प्रक्षाल्य गोमये पात्रं नमोन्ते विप्रमीक्षयेत् ॥ ५८४ ॥ कथनं धर्म्मशास्त्रस्य ह्यकुलस्त्रीनिषेवणम् ॥ श्रोत्रियाणां च संगस्तु करणं श्रौतकर्म्मणाम् ॥ ५८५ ॥ कामार्थायुर्यशोलाभज्ञानसौख्यादिनाशकम् ॥ तस्मात्कौलपथे गच्छन्न कुर्वीत कदाचन ॥ ॥ ५८६ ॥ श्रीचक्रस्थकुलद्रव्यं दद्याद्यो वाऽकुले जने ॥ स महापातकी ज्ञेयो रौरवं नरकं व्रजेत ॥ ५८७ ॥ रिपुणापि न कर्तव्यो वाग्वादश्चक्रमध्यतः ॥ पितृमातृसमं पश्येत्तेनोक्तं परुषं सहेत् ॥ ५८८ ॥ श्री-

गुरुं कुलशास्त्राणि पूज्यस्थानानि यानि च ॥ भक्त्या श्रीपूर्वकं विद्वान्प्रणम्य परिकीर्तयेत ॥ ५८९ ॥ पारंपर्य्यं समास्थाय मन्त्राचारादिकं पुनः ॥ सर्वं गुरुमुखाल्लब्धं सफलं स्यान्न चान्यथा ॥ ५९० ॥ श्री शास्त्रं पूजयेन्नित्यं पशुगेहे न निक्षिपेत् ॥ स्वदारवन्निषेवेत कुलशास्त्राणि तान्त्रिकः ॥ ५९१ ॥ पशुशास्त्राणि सर्वाणि वर्जयेत्परदारवत् ॥ संस्कारार्थं छिन्नभिन्नान्व्यस्तवर्णांश्च वैदिकान् ॥ ५९२ ॥ मन्त्रान्पठेत्सम्प्रदायात्तैः स्यादत्र व्यवस्थितिः ॥ धर्म्मशास्त्रविरुद्धो य आचारः स तु कौलिकः ॥ ५९३ ॥ चक्रे नाकारयेदेता देवीवत्ताः प्रपूजयेत् ॥ गमनं नैव कुर्वीत कृत्वा निरयमानुयात् ॥ ५९४ ॥ मातरं गुरुपत्नीं च भगिनीं भगिनीसुताम् ॥ भ्रातृजायां वीरभार्य्यां कुमारीं व्रतधारिणीम् ॥ ५९५ ॥ व्यङ्गाङ्गीं विकृताङ्गीं च क्षुब्धां प्रीतां समाहृताम् ॥ स्नुषां सकृत्कामगता वृद्धां नैवामनोहराम् ॥ ५९६ ॥ मनोहरा यौवनस्थां सुवेशां चारुहासिनीम् ॥ ॥ रक्तान्तनयनां श्यामां पूजयेत्कौलिकाङ्गनाम् ॥ ५९७ ॥ अकस्माच्च न सेवेत बलेन कुलयोगिनीम् ॥ चक्रमध्ये स्वयं क्षुब्धां वा स्वतः प्रार्थिनीं यभेत् ॥ ५९८ ॥ आममांसं सुराकुम्भं मत्तेभं सिद्धदर्शनम् ॥ सहकारमशोकं च क्रीडालुब्धाः कुमारिकाः ॥ ५९९ ॥ एकवृक्षं श्मशानं च समूहं योषितामपि ॥ नारीं च रक्तवसनां दृष्ट्वा वन्देत भक्तितः ॥ ६०० ॥ गुरुशक्तिसुतज्येष्ठं कनिष्ठं कुलदेशिकान् ॥ कुलदर्शनशास्त्राणि कुलद्रव्याणि कौलिकान् ॥ ६०१ ॥ प्रेरकान्सूचकांश्चापि वाचकान्दर्शकांस्तथा ॥ शिक्षकान्बोधकान्योगियोगिनीसिद्धपूरुषान् ॥ ६०२ ॥ कन्यां कुमारिकां नग्नामुन्मत्ता नापि योषितः ॥ न निन्देन्न जुगुप्सेत न हसेन्नापमानयेत् ॥ ६०३ ॥ नाप्रियं नानृतं ब्रूयात्कस्यापि कुलयोगिनः ॥ कुरूपेत्यतिकृष्णेति न वदेत्कुलयोषितम् ॥ ६०४ ॥ परीक्षयेन्न भक्तानां वीराणां च कृताकृते ॥ न पश्येत्पतितां नग्नामुन्मत्तां प्रकटस्तनीम् ॥ ६०५ ॥ न दिवा सेवयेन्नारीं तद्योनिं न निरीक्षयेत् ॥ स्त्रियं शतापराधां वा पुष्पेणापि न ताडयेत् ॥ ६०६ ॥ दोषान्न गणयेत्स्त्रीणां गुणानेव प्रकाशयेत् ॥ तिष्ठन्ति कुलयोगिन्यः कुलवृ-

क्षेषु सर्वदा ॥६०७॥ तत्पत्रेषु न भोक्तव्यमर्कपत्रे विशेषतः ॥ न स्वप्यात्कुलवृक्षाधो न चोपद्रवमाचरेत् ॥६०८॥ दृष्ट्वा भक्त्या नमस्कुर्यान्नच्छेदयेत्र कदाचन॥ श्लेष्मान्तककरञ्जाक्षनिम्बाश्वत्थकदम्बकाः ॥६०९॥ बिल्वो वटोदुम्बरौ च चिञ्चा चेति दश स्मृताः ॥ प्रायश्चित्तं भृगोः प्रोक्तं सन्न्यासं व्रतधारणम् ॥ ॥६१०॥तीर्थयात्रादिगमनं कौलिकस्तु विवर्जयेत् ॥ एकाक्षरप्रदातारं यो गुरुं चावमन्यते ॥६११॥ स श्वयोनिशतं गत्वा चाण्डालत्वमवाप्नुयात् ॥ एकस्य हननात्क्षेमं बहूनां चेच्छुभा गतिः ॥६१२॥ अन्तः कौलं बहिः शैवं जनमध्ये तु वैष्णवम् ॥ कौलं तु गोपयेद्देवि नारिकेलफलाम्बुवत् ॥६१३॥ गुरुं प्रकाशयेद्धीमान्मन्त्रं यत्नेन गोपयेत्॥अप्रकाशप्रकाशाभ्यां क्षीयन्ते सम्पदायुषः ॥६१४॥सर्वाचारपरिभ्रष्टः कुलाचारं समाश्रयेत्॥कुलाचारपरिभ्रष्टो रौरवं नरकं व्रजेत् ॥ ६१५ ॥ वामाचारं न कथयेदकुलीनाय सद्गुरुः ॥ आचारात्पतिते शिष्ये पातकी स गुरुर्भवेत् ॥ ६१६ ॥ इष्टः कश्चित्कौलिकस्य महोपद्रवमास्थितः ॥ तस्य दुःखापहाराय कुर्य्यादिष्टाष्टपूजनम् ॥ ६१७ ॥ एकस्मिन्दिवसे वाष्टदिनं वा षोडशाहकम् ॥ [1]दिनताहं वा चतुष्षष्टिदिनं कार्यं गुरुत्वतः ॥६१८॥ कारयेद्वा स्वयं कुर्याद्वित्तशाठ्यविवर्जितः ॥ तत्रोपोष्य विशुद्धात्मा कृत्वा न्यासान्पुरोदितान् ॥ ६१९ ॥ प्रसुप्ते जीवलोके तु मुदितात्मा महामनाः ॥ ब्राह्मी माहेश्वरी चैव कौमारी वैष्णवी तथा ॥६२०॥ वाराही च तथेन्द्राणी चामुण्डा महती रमा ॥ एता एव समाख्याता मया ते चाष्टमातरः ॥ ६२१ ॥ असिताङ्गो गुरुश्चण्डः क्रोधोन्मत्तकपालिनः ॥ भीषणश्चाथ संहार एतेष्टौ भैरवा मताः ॥ ६२२ ॥ आचम्य मिथुनेष्टौ तान्परमैः पूर्ववद्यजेत् ॥ प्रौढान्तोल्लासपर्यन्तं कार्यं सिद्ध्यत्यसंशयम् ॥ ॥ ६२३ ॥ कृता चेद्देवतोषाय पुरश्चर्याविशिष्यते ॥ गुरुभक्तिविहीनस्य तपोविद्याव्रतं कुलम् ॥ ६२४ ॥ व्यर्थं सर्वं शवस्येव नानालङ्कारभूषणम् ॥ तस्माद्गुरुः सदा सेव्यो मनोवाक्कायकर्म्मभिः ॥ ६२५ ॥ गुरौ मनुष्यबुद्धिं च

---

१ द्वात्रिंशद्दिनानि।

मन्त्रे वाक्षरशेमुषीम् ॥ प्रतिमासु शिलाबुद्धिं कुर्वाणो नरकं व्रजेत् ॥ कुलागमत्वमार्गोयं गुरुणा सम्प्रदर्शितः ॥२२६॥ सम्यगाचरितश्चेत्स्याद्भुक्तिमुक्त्योस्तु साधनम् ॥६२७॥ विप्रोपि गुणयुक्तोपि न भक्तश्चेन्न शस्यते ॥ म्लेच्छोपि गुणहीनोपि भक्तिमाञ्छिष्य उच्यते ॥ ६२८ ॥ गुरोर्हितं हि कर्तव्यं वाङ्मनःकायकर्म्मभिः ॥ अहिताचरणाच्छिष्यो विष्ठायां जायते कृमिः ॥६२९॥ गुरुत्यागाद्भवेन्मृत्युर्मन्त्रत्यागाद्दरिद्रता ॥ गुरुमन्त्रपरित्यागाद्रौरवं नरकं व्रजेत्॥ ॥ ६३० ॥ गुरूक्तं परुषं वाक्यमाशिषं चिन्तयेद्धृदि ॥ नमेत्सन्ताडितो वापि प्रसादमिति संस्मरेत् ॥ ६३१ ॥ भोगभोज्यानि वस्तूनि गुरवे सर्वमर्पयेत् ॥ तच्छेषमिति सञ्चिन्त्य ग्राह्यं तस्याज्ञया मुदा ॥ ६३२ ॥ ऋणादानं तथा दानं वस्तूनां क्रयविक्रये ॥ न कुर्याद्गुरुभिः सार्द्धं नोद्वहेत्तत्कुलोद्भवाम् ॥ ६३३ ॥ समासोक्तं रहस्यार्थं नवदेयस्य कस्यचित् ॥ यदि ब्रूयात्स उभयच्युत एव न संशयः॥६३४॥सर्वस्वमपि यो दद्याद्गुरौ भक्तिविवर्जितः ॥ शिष्यो न फलमाप्नोति भक्तिरेव हि कारणम् ॥ ६३५ ॥ यस्मिन्द्रव्ये गुरोरस्ति स्पृहा नानुभवेच्च तत् ॥ अवश्यं यदि वापि स्यादनुभूयात्तदाज्ञया ॥ ६३६ ॥ अत्यल्पं हि गुरोर्द्रव्यमदत्तं स्वीकरोति यः ॥ तिरश्चां योनिमापन्नः क्रव्यादैः स भक्ष्यते ॥ ६३७ ॥ आज्ञाभङ्गोऽर्थहरणं गुरोर्विप्रियवर्त्तनम् ॥ गुरुद्रोहमिमं प्राहुर्यः कुर्य्यात्स तु पातकी॥गुरुमित्रसुहृद्दासदास्यादीन्नावमानयेत् ॥ ६३८ ॥ न निन्देदन्यसमयान्वेदशास्त्रागमादिकान् ॥ पादुकासनं च वस्त्रं वाहनं चामरादिकम् ॥ दृष्ट्वा गुरुं नमस्कुर्य्यान्नानाभोगाय कामयेत् ॥ ६३९ ॥ सदसद्यद्गुरुर्ब्रूयात्तत्कार्यमवशश्चरेत् ॥ निग्रहेनुग्रहे वापि गुरुः सर्वस्य कारणम् ॥ ६४० ॥ निर्गतं यद्गुरोर्वक्त्रात्सर्वं शास्त्रं तदुच्यते ॥ गुरुकार्ये स्वयं शक्तो नापरं प्रेषयेत्कचित् ॥ ६४१ ॥ बहुकृत्यं परैः कुर्य्यात्सहितोप्यतिभक्तिमान् ॥ तिष्ठञ्जाग्रत्स्वपन्स्वादन्नपिबंश्चिन्तयेद्गुरुम् ॥ ६४२ ॥ गुर्वाज्ञामेव कुर्वीत तद्गतेनान्तरात्मना ॥ अभिमानो न कर्त्तव्यो जातिविद्याधनादिभिः ॥ ६४३ ॥ तत्पापं समवाप्नोति गुर्वग्रेऽनृतभाषणात् ॥ गोब्राह्मणवधं कृत्वा न यत्पापमवाप्नुयात् ॥ ६४४ ॥ गुरोः

सिंहासनं देयं ज्येष्ठानामुत्तमासनम् ॥ विध्यासनं कनिष्ठानामितरेषां समासनम्॥ ॥ ६४५ ॥ जातिविद्याधनाढ्यो वा दूराद्दृष्ट्वा गुरुं मुदा ॥ दण्डप्रणामं कृत्वैकं त्रिः प्रदक्षिणमाचरेत् ॥ ६४६ ॥ गुरुतो गुरुयोगे तु वन्देत्तत्र स्वकं गुरुम् ॥ ततो वन्देद्गुरुं सोपि ततः शिष्यः प्रवादयेत् ॥ ६४७ ॥ गुरोः प्रणामत्रितयं ज्येष्ठानामेक एव च ॥ पूज्यानामञ्जलिस्तद्वदन्येषां बाह्यवन्दनम् ॥ ६४८ ॥ देवान्गुरून्कुलाचार्याञ्ज्येष्ठान्वृद्धांस्तपोधनान् ॥ विद्याधिकान्स्वकर्म्मस्थाञ्छ्रोत्रियान्प्रणमेत्सदा ॥ ६४९ ॥ स्त्रीदिष्टं गुरुशतं च पाखण्डं पतितं शठम् ॥ विकर्म्मिणं कृतघ्नं चानाश्रमस्थं नमेन्न च ॥६५०॥ भुङ्क्ते निवेद्य गुरवे यस्त्वेकग्रामसंस्थितः ॥ तेन भुक्तममेध्यं स्यान्मृतो जायेत सूकरः ॥ ६५१ ॥ एकग्रामे स्थितः शिष्यस्त्रिसन्ध्यं प्रणमेद्गुरुम् ॥ क्रोशमात्रस्थितो भक्त्या गुरुं प्रतिदिनं नमेत् ॥ ६५२ ॥ अर्धयोजनतः शिष्यः प्रणमेत्पञ्चपर्वसु ॥ एकयोजनमारभ्य योजनद्वादशावधि ॥ ६५३ ॥ दूरदेशे स्थितः शिष्यो भक्त्या तत्सन्निधिं गतः ॥ तत्तद्योजनसंख्याकमासेषु प्रणमेद्गुरुम् ॥ ६५४॥ अति दूरस्थितं शिष्यो यदेच्छा स्यात्तदा व्रजेत् ॥ रिक्तहस्तो न पश्येच्च राजानन्देवतां गुरुम् ॥ ६५५ ॥ फलपुष्पांबरार्थादीन्यथाशक्ति समर्प्पयेत् ॥ एवं यो नार्चयेद्विप्रो ब्रह्मराक्षसतां व्रजेत् ॥६५६॥ गुरुशक्तिश्च तत्पुत्रा ज्येष्ठभ्राता गुरोः समाः॥आत्मवच्च कनिष्ठानां पुत्रवत्परिपालकः ॥ ६५७ ॥ स्वविद्यानुष्ठानतपोधर्म्माणामप्रकाशकः ॥ वर्णाश्रमज्ञानतपोधर्म्माणां च प्रकाशकः ॥६५८॥ षट्कर्म्मसु सुसिद्धो यो दाता भोक्ता न याचकः॥ स एव कौलिकाचार्य्यस्त्वन्यः कुलविडम्बकः॥६५९॥ पिण्डं पदं तथा रूपं रूपातीतं निरञ्जनम्॥यस्तु सम्यग्विजानाति स गुरुश्चोद्धरेत्परम् ॥ ६६० ॥ पाशस्तम्भं वेददीक्षां पशुग्रहणमेव च ॥ त्रिविधं योविजानाति स गुरुः कथितः प्रिये ॥ ६६१ ॥ पशुपाशपशूनाञ्च रहस्यार्थविधानवित्॥यो जानाति वरारोहे स गुरुः परिकीर्तितः॥६६२॥घृणा शंकाभयं लज्जा जुगुप्सा चेति पञ्चमी ॥ कुलं शीलं तथा शक्तिरष्टौ पाशाः प्रकीर्तिताः ॥ ६६३ ॥ पाशबद्धः पशुः प्रोक्तः पाशमुक्तो महेश्वरः ॥

तस्मात्पाशहरो योत्र स गुरुर्नान्य उच्यते ॥ ६६४ ॥ मूलादिब्रह्मरन्ध्रान्तं सप्ताम्भोजदलेषु यः ॥ जीवचालफलं वेत्ति स गुरुर्नापरः प्रिये ॥ ६६५ ॥ संसारभयभीतस्य शिष्यस्य गुरुरादरात् ॥ व्रतोपवासनियमैर्भियो हन्ता गुरुर्मतः ॥६६६॥ यः क्षणेनात्मसामर्थ्यं स्वशिष्याय ददाति हि॥ क्रियाया आदिरहितं स गुरुर्दुर्लभः कलौ ॥ ६६७ ॥ गुरोर्यस्यैव सम्पर्कात्परानन्दोभिजायते ॥ गुरुं तमेव वृणुयान्नापरं मतिमान्नरः ॥ ६६८ ॥ शङ्कया भिक्षितं सर्वं त्रैलोक्यं सचराचरम् ॥ सा शङ्का भक्षिता येन स गुरुर्दुर्लभः क्षितौ ॥ ६६९ ॥ मधुलुब्ध यथा भृंगः पुष्पात्पुष्पान्तरं व्रजेत् ॥ ज्ञानलुब्धस्तथा शिष्यो गुरोर्गुर्वन्तरं व्रजेत् ॥ ६७० ॥ गुरुः शिष्याधिकारार्थं विरक्तोपि शिवाज्ञया ॥ कञ्चित्कालं प्रतीक्ष्यैव पश्चाच्छिष्ये समर्पयेत् ॥ ॥ ६७१ ॥ सम्प्रदायमविच्छिन्नं कौलं कर्य्यान्न कुत्रचित् ॥ यावच्च सम्प्रदायोस्ति तावत्स्याद्योगिनीपदम् ॥ ६७२ ॥ गुरुशिष्यावुभौ मोहादपरीक्ष्य परस्परम् ॥ उपदेशं ददद्गृह्णन्यानुयातां पिशाचताम् ॥ ६७३ ॥ असंस्कृत्योपदेशं तु यः करोति स मूढधीः ॥ विनश्यत्येव तन्मन्त्रः सैकते शालिबीजवत् ॥ ६७४ ॥ धनेच्छाभयलोभाद्यैरयोग्यं यदि दीक्षयेत् ॥ देवताशापमाप्नोति कृतं च निष्फलं भवेत् ॥ ६७५ ॥ कुलद्रव्यैः समभ्यर्च्य कुलचक्रं विधानतः ॥ शिष्याय दर्शयेत्सम्यग्दीक्षैषा कौलिकी मता ॥ ॥ ६७६ ॥ मधुद्रव्यं मुखे पूर्वं पञ्चगव्यामृतान्वितम् ॥ अभिषिञ्चेत्प्रियं शिष्यं गण्डूषाख्येयमीरिता ॥ ६७७ ॥ सजीवमीनयुक्तेन सुरया पूरितेन च ॥ पञ्चामृतैः सुसम्पूर्णशङ्खेन कलशेन वा ॥ ६७८ ॥ अभिषेकं ततः कर्य्यात्कुलवृक्षोत्थपल्लवैः ॥ अयं पूर्णाभिषेकोत्र कुलमार्गे प्रकीर्तितः ॥ ॥ ६७९ ॥ पूर्णाभिषेकहीनाश्चेन्म्रियन्ते यदि कौलिकाः ॥ प्राप्नुवन्ति पिशाचत्वं यावदाभूतसम्प्लवम् ॥ ६८० ॥ उपपातकलक्षाणि महापातककोटयः ॥ क्षणाद्दहति दीक्षेयं विधिना गुरुणा कृता ॥ ६८१ ॥ रसेन्द्रेण यथाविद्धमयः सौवर्णतां व्रजेत् ॥ दीक्षाविद्धस्तथा ह्यात्मा शिवत्वं लभते द्रुतम् ॥

१ ल्यबार्षः ॥ २ पारदेन ॥

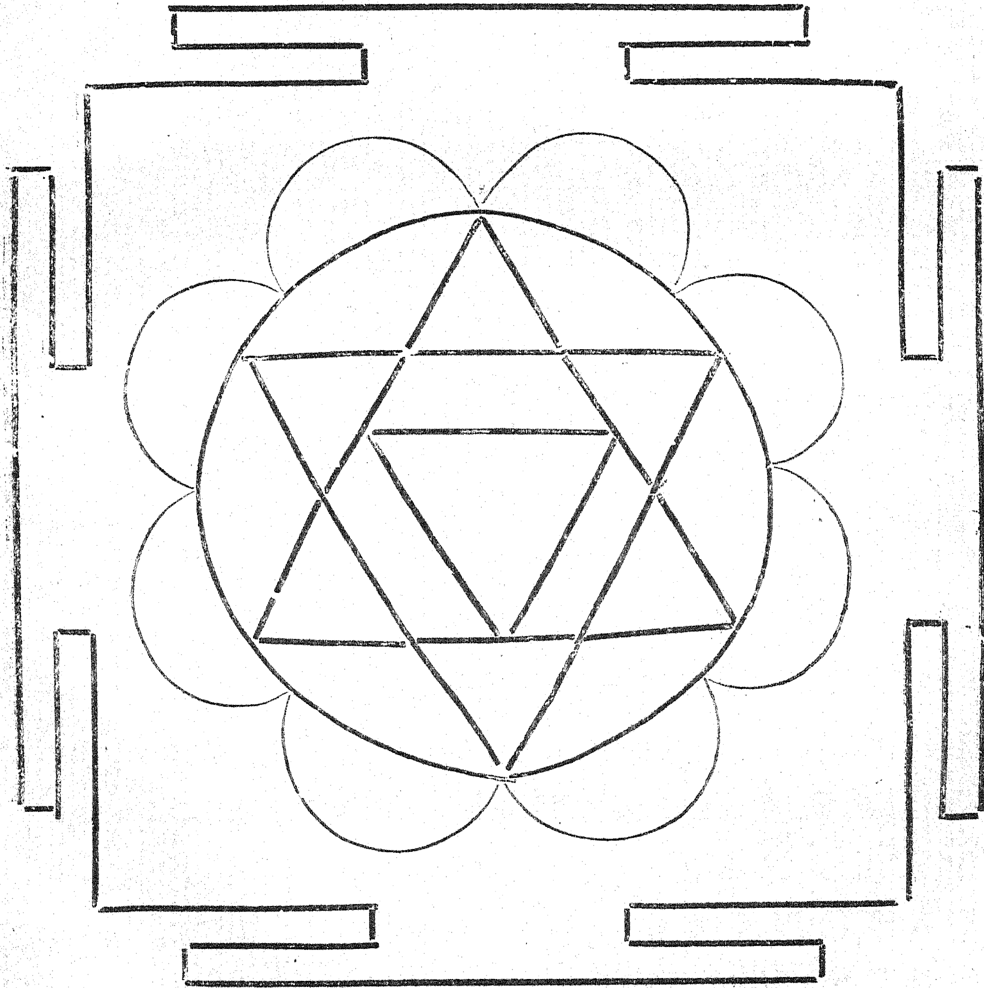
॥६८२॥ दीक्षाग्निदग्धकर्म्मासौ मायाविच्छिन्नबन्धनः ॥ यातः परां ज्ञान-काष्ठां निर्विण्णः स शिवो भवेत्॥६८३॥गतं शूद्रस्य शूद्रत्वं गता विप्रस्य विप्रता ॥ दीक्षासंस्कारसम्पन्ने जातिभेदो न विद्यते ॥ ६८४ ॥ दार्वश्मं लोहमृद्रत्नजातिलिङ्गं प्रतिष्ठितम् ॥ यथोच्यते महादेवस्तथा वर्णास्तु दीक्षिताः ॥ ६८५ ॥ अन्त्यजो दीक्षितः पूर्वं द्विजः पश्चाच्च दीक्षितः ॥ तदा ज्येष्ठोऽन्त्यजः प्रोक्तः कुलशास्त्रविनिश्चये ॥ ६८६ ॥ गुरुशक्तिसुतानां च यो भवेत्पूर्वदीक्षितः ॥ गुरुवत्तेन ते पूज्या नावमान्याः कदाचन ॥ ॥ ६८७ ॥ कौलिके वाममार्गे च वेधदीक्षा फलप्रदा ॥ अन्यास्ता दक्षिणे मार्गेन्यथा तु पतितो भवेत् ॥ ६८८ ॥ दीक्षापूर्वं गुरोः सिद्धं पारम्पर्य-क्रमागतम् ॥ योग्यं योग्येन यल्लब्धं तच्च सिद्धयत्यसंशयम् ॥ ६८९ ॥ मासमात्रं जपेन्मत्रं भूतलिप्या तु सम्पुटम् ॥ क्रमोत्क्रमात्सहस्रन्तु तस्य सिद्धो भवेन्मनुः ॥ ६९० ॥ मण्डलं पूजयेन्मन्त्री मातृकाक्षरसंयुतम् ॥ अनुलोमविलोमाभ्यां षण्मासात्सिद्धयते मनुः ॥ ६९१ ॥ त्रितत्त्वाक्षरपूर्वं तु मातृकाक्षरपूर्वकम् ॥ क्रमोत्क्रमाच्छतं जप्त्वा मासात्सिद्धो भवेन्मनुः॥६९२॥ मातृकाजपमात्रेण मन्त्राणां कोटिकोटयः ॥ जपिताः स्युर्न सन्देहस्तत्त्वं सर्वं तदुद्भवम् ॥ ६९३ ॥ जातसूतकमादौ स्यादन्ते च मृतसूतकम् ॥ न पुरश्चरणं यस्य स मन्त्रो नैव सिद्धयति ॥ ६९४ ॥ यस्यान्नपानपुष्टाङ्गः कुरुते धर्म्मसञ्चयम् ॥ अन्नदातुः फलं चार्धं कर्तुश्चार्धं न संशयः ॥६९५॥ सुगन्धपुष्पाभरणगन्धादिभिरलंकृतः ॥ तस्य हस्तगता सिद्धिर्नान्यथा जन्म-कोटिभिः ॥ ६९६ ॥ तन्निष्ठस्तद्गतप्राणस्तच्चित्तस्तत्परायणः ॥ तत्परार्थानु-सन्धानं कुर्वन्मन्त्रं शनैर्जपेत्॥६९७॥ जपाच्छ्रान्तः पुनर्ध्यायेद्ध्यानाच्छ्रान्तः पुनर्जपेत् ॥ जपध्यानादियुक्तस्य क्षिप्रं मन्त्रः प्रसिद्धयति ॥ ६९८ ॥ अथ मन्त्री प्रयोगार्थं शुद्धहन्नियमान्वितः ॥ शापप्रसाददं मन्त्रं तत्त्वलक्षमितं जपेत् ॥ ६९९ ॥ मधुरत्रयसंयुक्तैः सतिलैः शालितण्डुलैः॥ दशांशं जुहुया-त्पश्चात्संस्कृते हव्यवाहने ॥ ७०० ॥ गन्धपुष्पाक्षताकल्पनववस्त्रादिभिः

१ प्रस्थः ।

पुनः ॥ भक्ष्यभोज्यान्नपानाद्यैः कुलद्रव्यैर्मनोहरैः ॥ तोषयेद्योगिनीचक्रं यथाविधि सविस्तरम् ॥ ७०१ ॥ एवं न्यासं जपं ध्यानं सहोमार्चनतर्पणम् ॥ कृत्वा प्रयोगान्कुर्वीत तस्य सिद्धिर्न संशयः ॥ ७०२ ॥ प्रयोगान्ते चक्रपूजां विधिनैव समाचरेत् ॥ एकलक्षं जपेन्मन्त्रं ध्यानन्याससमन्वितम् ॥७०३॥ प्रयोगदोषशान्त्यर्थमात्मनोर्थार्थमेव च ॥ स्वरवर्णपदद्वित्वबिन्दुचैतन्यसूचकम् ॥ ॥ ७०४ ॥ ह्रस्वदीर्घप्लुताद्यांश्च ज्ञात्वा कर्म्माणि साधयेत् ॥ मूलं प्रासादबीजं तु तरुणादित्यसुप्रभम् ॥ ७०५ ॥ उत्तमाङ्गे पराबीजं चन्द्रायुतसमप्रभम् ॥ परस्परकरस्पर्शमिलितानन्दनिर्भरैः ॥ ७०६ ॥ मूलादिब्रह्मरन्ध्रान्तमनवच्छिन्नदीप्तिभिः ॥ परामृतरसासक्तैः सिक्तमापादमस्तकम् ॥ आत्मानं भावयेन्नित्यं स प्रयोगैर्न बाध्यते ॥ ७०७ ॥ अथ लोकोपकाराय वक्ष्ये ध्यानजपादिकम् ॥स्वस्य रोगादिके जाते शान्तिर्येनाभिजायते ॥७०८॥ स्थित्वा मृद्वासने ध्यायेद्गुरुवन्दनपूर्वकम् ॥ मस्तकान्तं च सम्पूर्णचन्द्रमण्डलमध्यकम् ॥ ७०९ ॥श्रीप्रासादपराबीजं षोडशस्वरसंयुतम् ॥ मुक्तास्फटिककर्पूरकुन्देन्दुधवलं शुभम् ॥ ७१० ॥ सचन्द्रबीजसञ्जातसुधाप्लावितविग्रहम्॥ आत्मानं भावयेदेवं परस्यात्मानमेव वा ॥ ७११ ॥ श्रीप्रासादपरामन्त्रमष्टोत्तरसहस्रकम् ॥ तरुणोल्लाससहितो मण्डलं पूजयेद्यदा ॥ ७१२ ॥ अपमृत्युमहारोगजरामरणजं भयम् ॥ ग्रहापस्मारवेतालभूतोन्मादादिसम्भवम् तस्य नो जायते देवाः कदाचिदिति निश्चयः ॥ ७१३ ॥ जराविव्याधिरहितः पुत्रपौत्रादिसंयुतः ॥ जीवेद्वर्षशतं साग्रं पूजितः सर्वमानवैः ॥७१४॥ ज्वरोन्मादादिरोगेषु जपेच्छिरसि चिन्तयन्॥मूले वा ब्रह्मणो ग्रन्थौ तत्तत्स्थाने विचिन्तयेत ॥७१५॥ पूर्ववत्तां महारोगे सर्वाङ्गव्यापिनीं स्मरेत् ॥ तत्क्षणाच्छान्तिमायान्ति सर्वरोगा न संशयः ॥ ७१६ ॥ दशेन्द्रियेषु यो ध्यायेल्लभेदिन्द्रियसौष्ठवम् ॥ सदा सञ्चिंतयेन्मूर्ध्नि स भवेदजरामरः ॥ ७१७ ॥ हृत्पद्मकर्णिकामध्ये सूर्य्यमण्डलसंस्थितम् ॥ पराप्रासादबीजं तत्तरुणादित्यसन्निभम् ॥ ७१८ ॥ जपाबन्धूकसिन्दूरपद्मरागाम्बुजप्रभम् ॥ एवं विंशतिभिः स्पर्शाक्षरैः संवीतमन्त्रतः ॥ ७१९ ॥ तत्प्रभापटलच्छायारत्नीकृतजगत्त्रयम् ॥

आत्मानं संस्मरेदित्थं यौवनोल्लाससंयुतः ७२० ॥ अष्टोत्तरसहस्रं तु मण्डलं प्रजपेत्सदा ॥ देवदानवगन्धर्वसिद्धचारणगुह्यकान् ॥ ७२१ ॥ विद्याधरान्मुनीन्यक्षान्नागानप्सरसः स्त्रियः ॥ सिंहव्याघ्रोरगैणादीनन्यान्दुष्टमृगानपि ॥ वशीकरोत्यसन्देहः किम्पुनर्मानवादिकान् ॥ ७२२ ॥ स ईहैश्वर्य्यमाप्नोति स्वर्गभोगादिकं तथा ॥ यस्य मूर्ध्नि स्मरञ्जप्यात्स वश्यो जायतेऽचिरम् ॥ ॥ ७२३ ॥ मूलाधारसरोजान्तर्वह्निमण्डलमध्यगम् ॥ पराप्रासादबीजं तत्कल्पाग्निसदृशं स्मरेत् ॥ ७२४ ॥ प्रतिलोमैस्तु संवीतं दशभिर्व्यापकाक्षरैः ॥ स्वयं कालानलसमः सर्वभूतभयंकरः ॥ ७२५ ॥ दक्षिणैशान्यभिमुखो यौवनोल्लाससंयुतः ॥ मन्त्रन्तु मण्डलं जप्यादष्टोत्तरसहस्रकम् ॥ ७२६ ॥ अनिष्टकारिणः क्रूरान्वृथा विद्वेषकारिणः ॥ भूतोग्रग्रहवेतालपिशाचान्ब्रह्मराक्षसान् ॥ ७२७ ॥ तद्वह्निमध्यपतितानग्निदग्धांश्च चिन्तयेत् ॥ क्षणेन नाशमायान्ति शलभा इव सर्वतः ॥ यस्य मूर्ध्नि स्मरेद्बीजं स मृत्युमधिगच्छति ॥ ७२८ ॥ खदिरश्वेतमन्दारामृताभानुसमिद्वरैः ॥ पनसोदुम्बराश्वत्थप्लक्षापामार्गजैश्च वा ॥ ७२९ ॥ नन्द्यावर्तसिताम्भोजहयारिकुसुमैश्च वा ॥ एकेन वार्धश्लोकोक्तैस्तिलतण्डुलसंयुतैः ॥ ७३० ॥ मधुरत्रययुक्तैर्वा भक्ष्यैर्वा पायसैरपि ॥ सहस्रादयुतान्तं च यथाकार्य्यं तथाचरेत् ॥ ७३१ ॥ पूर्वोक्तस्य जपस्यात्र सिद्धये सात्त्विकस्य तु ॥ शान्तिकं पौष्टिकं सन्धिरुपकारश्च सात्त्विके ॥ ॥ ७३२ ॥ कदम्बाशोकबकुलपुन्नागाम्रमधूकजैः ॥ चम्पकद्वयपालाशपाटलश्रीकपित्थजैः ॥ ७३३ ॥ मालतीमल्लिकाजातिबन्धूकारुणपङ्कजैः ॥ कुमार्य्यरुणमन्दारजातीकुंदजपादिभिः ॥ ७३४ ॥ सनारिकेलकदलीद्राक्षेक्षुपृथुकैरपि ॥ चन्दनागुरुकर्पूररोचनाकुंकुमादिभिः ॥ ७३५ ॥ युक्तैरन्यैः शुभद्रव्यैः शमीपत्रफलाम्बुना ॥ पृथक्श्लोकार्धसम्प्रोक्तैः प्राग्वद्धोमस्तु राजसे ॥ ७३६ ॥ कुर्य्यात्कार्य्यस्य वशतः सहस्राद्ययुतान्तकम् ॥ स्तम्भो वश्यं मोहनं च कौतुकं राजसं मतम् ॥ ७३७ ॥ निम्बाक्षभास्करोन्मत्तकरवीरविषदण्डिभिः ॥ कुटजैः कृष्णवर्णैश्च ह्यग्निकुन्दर्क्षवृक्षकैः ॥ ७३८ ॥ गृहधूमचिताङ्गारविषोपविषसंयुतैः ॥ उन्मत्तरससम्पिष्टैश्चिताभस्मान्वितैस्तथा ॥

मध्यपादरजोभिश्च शत्रोः प्रतिकृतिं चरेत् ॥ ७३९ ॥ यद्वा तन्मनसः क्षेत्रवृक्षकाष्ठभवामपि ॥ सम्यक्प्रतिष्ठितप्राणां कुण्डस्योपरि लम्बयेत् ॥ ७४० ॥ खनेन्मृत्प्रतिमाम्मन्त्री कुण्डस्याधो यथाविधि ॥ मलीमसेन मनसात्युग्रदृष्टिरमर्षणः ॥ ७४१ ॥ चित्रमाले विषतरूद्भवकाष्ठसमेधिते ॥ जुहुयात्तामसं कर्म्म सिद्ध्यत्यत्र न संशयः॥[१]मारणोच्चाटनद्वेषं तामसं स्यात्पिशाचता॥७४२॥ राजीलवणहोमेन स्त्रीणामाकर्षणं भवेत् ॥ आत्मरक्षां पुरस्कृत्य पश्चात्कर्म्माणि साधयेत् ॥ ७४३ ॥ लिखेत्त्रिकोणं षट्कोणमष्टारं च महीपुरम् ॥



१ मारणं चोच्चाटनं द्वेषश्चेति समाहारद्वन्द्वः ।

मूलमन्त्रं लिखेन्मध्ये साध्यनामसमन्वितम् ॥ ७४४ ॥ षडङ्गानि च षट्कोणे स्वरान्वै केशरेषु च ॥ वर्गान्पत्रेषु भूगेहे चतुष्कोणेषु मन्त्रकम् ॥ ॥ ७४५ ॥ पञ्चवर्णरजोभिश्च लिखेद्दृष्टिमनोहरम् ॥ एकत्रिषड्वसुचतुष्कलशान्स्थापयेत्क्रमात्॥ ७४६ ॥ मध्यादिचतुरस्रान्तं द्वाविंशतिघटान्क्रमात्॥ अथ वाष्टादश दश सप्त वा चतुरेककम् ॥ ७४७ ॥ अस्थिरत्नं शिरातंत्रं मृन्मांसं रुधिरं जलम् ॥ चर्म्म वस्त्रं शिखा कूर्चं नारिकेरफलं शिरः॥ ७४८॥ मन्त्रप्राणसमायुक्तां यजेत्कलशदेवताम् ॥ सा च त्रिमूर्तिरंशादिमातरो भैरवान्विताः ॥ ७४९ ॥ विदिक्षु गुरुविघ्नेशदुर्गाक्षेत्रपतीनपि ॥ कलशेषु समभ्यर्च्य विधिवन्मंत्रवित्तमः ॥ ७५० ॥ अभिषिञ्चेत्प्रियं शिष्यं सर्वपापप्रशांतये ॥ आयुःश्रीकांतिसौभाग्यविद्यारोग्यादिकं भवेत् ॥ ७५१ ॥ राजाभिषिक्तो लभते चतुःसागरगां महीम्॥ आकिंचनोऽभिषिक्तस्तु महदैश्वर्यमाप्नुयात् ॥ ७५२ ॥ वंध्याभिषिक्ता लभते पुत्रं सर्वगुणान्वितम् ॥ भूतापमृत्युरोगाद्या विनश्यन्ति न संशयः ॥ ७५३ ॥ त्रिलोहे वापि भूर्जे वा लिखित्वा यंत्रमुत्तमम् ॥ विधृतं पूजितं देवि सर्वरक्षाकरं भवेत् ॥ ७५४ ॥ अकुलं शिव इत्युक्तः कुलं शक्तिः प्रकीर्तिता ॥ कुलाकुलानुसन्धाननिपुणाः कौलिकाः प्रिये ॥ ७५५ ॥ आदित्वात्सर्वमार्गाणां मनोल्लासप्रवर्त्तनात् ॥ यज्ञादिसर्वहेतुत्वादाम्नाय इति कीर्तितः ॥ ७५६ ॥ इति कौलिकमार्गस्य प्रपञ्चोयं प्रदर्शितः ॥ वेदधर्म्मविहीना ये तेत्र धर्म्माधिकारिणः ॥ ७५७ ॥ इन्द्रियाणामधृष्यत्वात्कामलोभादिसम्भवात् ॥ प्रायः कलौ कौलिकोयं पन्था नरकहेतवे ॥ ७५८ ॥ धर्मनाशः कौलिकेन रसेनार्थविनाशनम् ॥ कामनाशः फिरङ्गेन मोक्षनाशो जनेर्ष्यया ॥ भविष्यति कलौ देवा दम्भः पापं गृहेगृहे ॥ ७५९ ॥ पुरुषेण विना किञ्चित्प्रकृत्या क्रियते न हि ॥ तथा शक्तिं विना देवो न किञ्चित्कर्तुमर्हति ॥ ७६० ॥ विना शक्तिं फलं देवो दातुं नैव क्षमो ह्यतः ॥तस्मात्पुंशक्तिसंयोगं कृत्वा मन्त्रं प्रसाधयेत् ॥७६१॥

---

१ गुण आर्षः । २ अत्र यथेत्यध्याहार्यम् ।

कौलिके वाममार्गे च पुमान्देवो न सिद्धयति ॥ आत्मानं तु शिवं ध्यायेद्देवता शक्तिरूपिणीम् ॥ ७६२ ॥ क्रीडेत्पञ्चमकारैश्च सुप्रीता तस्य देवता ॥ दक्ष-मार्गे मातृबुद्धिः स्त्रीबुद्धिः कौलिके पथि ॥ ७६३ ॥ यस्य जाता दृढतरा तस्य तुष्टा तु देवता ॥ एतद्रहस्यमाख्यातं गोप्यं मातारि जारवत् ॥ ७६४॥ अन्यद्गुह्यतमं वक्ष्ये सर्वतन्त्रेषु गोपितम् ॥ यथा दद्याद्देवतैव मन्त्रं तत्सब्रवी-म्यहम् ॥ ७६५ ॥ वर्णानाम्नायपठितान्विद्धि चन्द्रादिवाचकान् ॥ युक्ता-न्स्वरचतुष्केणाथोत्तरोत्तरसङ्ख्यकान् ॥ ७६६ ॥ पूर्वदैवतसङ्केतो मयायं समु-दीरितः ॥ अनामाद्याश्चात्रवर्णा ग्राह्याश्चाङ्कयुतौ तथा ॥ ७६७ ॥ अङ्कास्तु दक्षिणाम्नाये त्वनामाद्यर्णवर्ज्जिताः ॥ द्वौद्वावेकः पुनर्द्वौ च वर्गौ सङ्केतवा-चकौ ॥ ७६८ ॥ आम्नायक्रमतो वर्णा मन्त्रादिक्रमतस्तथा ॥ अचः स्व-रास्तत्क्रमेण पश्चिमोत्तरदेवयोः ॥ ७६९ ॥ चतुराम्नायसङ्केताद्वर्णैर्वर्गैक्ययो-जनम् ॥ ऊर्ध्वाम्नाये प्रकर्तव्यं वैदिकेन तु किञ्चन ॥ ७७० ॥ येन क्रमेण यद्देशे ये वर्णाः परिकीर्तिताः ॥ तेन क्रमेण ते ग्राह्या वर्णा एकादिसङ्ख्यकाः ॥ ७७१ ॥ मन्त्रवर्णाङ्कसंयोगः स्वनामाङ्केन संयुतः ॥ तस्य मूलं यदायाति तदा स्वप्नः प्रजायते ॥ ७७२ ॥ मूलाभावे देवताया नामाङ्कान्योजयेत्पुनः॥ ग्राह्यं मूलं नैव यदा पीठेनामाङ्कयोजनम् ॥ ७७३ ॥ पुनर्मूलं नैति यदा तदा स्वप्नो न जायते ॥ गुरोरपि गृहीतश्चेत्स मन्त्रो नाशको भवेत् ॥७७४॥ याम्योत्तरं प्रागपरं मूलाङ्कसमकोष्ठकान् ॥ लिखित्वैकादिकाँल्लिखेद्वर्णान्स्यादङ्ग-णना यथा ॥ ७७५॥ सर्वतः समसङ्ख्याकांस्तद्युक्तिरधुनोच्यते ॥ पश्चिमः-प्रथमो लेख्य उदङ्मध्ये तथान्तिकम् ॥ ७७६ ॥ अश्वगत्या द्वितीयः स्या-न्मन्त्रिगत्या ततः परम् ॥ आदिगन्तं लिखेत्पश्चादश्वगत्यैव पूर्ववत् ॥ ॥ ७७७ ॥ मन्त्रिगत्याथ तद्रोधे नृपस्य गमनं भवेत् ॥ पुनर्मन्त्रिगतिं कुर्य्यात्प्राग्वदश्वगतिं पुनः ॥७७८॥ एवं पुनःपुनः कार्य्यं गुरुदर्शितवर्त्मना ॥ अङ्कानां जायते पूर्त्तिः सर्वतः संमता क्रमात् ॥ ७७९ ॥ चतुर्णां वर्गको-ष्ठेषु लिखेन्मन्त्रान्समानिति ॥ एतन्मध्यं प्रकल्प्याथ माहेश्यामन्तिमं न्यसेत्॥

१ अङ्कयोगे । २ भौवादिकत्वमस्यार्षम् ।

॥ ७८० ॥ उपान्तिमं तथाग्नेय्या नैर्ऋत्यां प्रथमं न्यसेत् ॥ वायव्यां तु द्वितीयं स्यात्ततः सङ्ख्या यथा भवेत् ॥ ७८१ ॥ पूर्णास्तथैव सन्धार्य्याः काष्ठायामम्बिकैकैकाः ॥ तत्प्रतिस्पर्द्धिनः स्थाप्यास्तत्स्पर्धिन्यां तथा दिशि ॥ ७८२ ॥ एवं तु समपत्राणां परिपूर्तिः प्रकीर्तिता ॥ भाज्यभाजकपत्राणामथ वा लेखयेत्क्रमम् ॥ ७८३ ॥ प्रज्ञायते विनाचार्य्यं यथा दिव्यं विनाखिलम् ॥ आदित्यवासरे स्नात्वा प्राक्सूर्य्योदयतस्ततः ॥ ७८४ ॥ सूर्य्योदये तदर्घ्याणि दत्त्वा नत्वा गृहं विशेत् ॥ स्वतो नीचं तु नेक्षेत शब्दं नैव प्रयोजयेत् ॥ ७८५ ॥ सुमुहूर्तेऽखिलं यन्त्रं भूर्जे वा ताम्रपत्रके ॥ तत्तद्देवाष्टगन्धेन दले वा मण्डले लिखेत् ॥ ७८६ ॥ आदौ गणेशं सम्पूज्य ततः खेटांश्च दिक्पतीन् ॥ एकान्ते च लिखेद्यन्त्रं तद्दिने मौनमाचरेत् ॥ ॥ ७८७ ॥ न पश्येन्निन्दितं द्रव्यं ब्रह्मचारी हविष्यभुक् ॥ यन्त्रोर्ध्वे विलिखेन्मन्त्रं तदुदग्वाथ ठद्वयम् ॥ ७८८ ॥ ङेन्ते साध्यतले दक्षे ठद्वयं विलिखेदिति ॥ कौसुम्भे पीतवसने चक्रं कृष्णे सिते तथा ॥ ७८९ ॥ नीले प्रादेशमात्रे तु प्रासाद्याम्नायदैवतम् ॥ यन्त्रं संवेष्टयेत्तत्र स्नेहः कुडवसम्भवः ॥ ७९० ॥ तिलतैलं महिष्याज्यमेतस्याः खाखसं तथा ॥ गोघृतं च वसा चेति पूर्वादिष्वेव कल्पयेत् ॥७९१॥ अक्षतैर्विलिखेद्भूमौ पद्ममष्टदलं तथा ॥ कर्णिकायामुत्तरतोऽथ विघ्नगणपं यजेत् ॥ ७९२ ॥ इष्टदेवं तथा मध्ये क्षेत्रपालं च दक्षिणे ॥ अष्टौ दिगीशान्पत्रेषु पूजयित्वा विसर्जयेत्॥७९३॥ ततः पश्चात्कर्णिकायां स्थापयेद्दीपिकां शुभाम् ॥ तत्र दीपं प्रतिष्ठाप्य ज्वालयेत्पूजयेत्ततः॥७९४॥सावधानः स्वपेत्तत्र ह्याम्नायामरदिक्छिराः॥तस्मिन्नहनि निष्पापः प्राप्नुयाद्देवतागणम्॥७९५॥तन्मन्त्रं येन रूपेण देवता सम्प्रयच्छति॥ तद्रूपं च गुरोर्ध्यायेत्तज्जातीयांश्च मानयेत्॥७९६॥ आद्येऽर्के मध्यपापोऽथ द्वितीये बहुपातकी ॥ तृतीयेऽर्के मर्त्यगणो निष्पापः प्राप्नुयान्मनुम्॥७९७॥मध्यपापश्चतुर्थे तु पञ्चमे बहुपातकी॥सप्तमे राक्षसोऽपापो मध्यः षष्ठे स पापकः ॥७९८॥ अवश्यमेव प्राप्नोति मन्त्रं सप्तमभास्करे ॥ एतद्गुह्यतमं प्रोक्तं सर्वतन्त्रेषु गोपि-

१ अस्य भौवादिकत्वमार्षम् ।

तम् ॥ ७९९ ॥ म्लेच्छायापि प्रदातव्यं स्वधर्मे तत्पराय च ॥ विप्रायापि न दातव्यं स्वधर्म्मत्यागिने सुराः ॥ लोभात्कामात्प्रदद्याद्यस्स लोकद्वयतश्च्युतः ॥ ८०० ॥ अथ गुह्यतमं वक्ष्ये रहस्यं पीठसम्भवम् ॥ यज्ज्ञात्वा साधकाः सर्वे सिद्धिं यान्ति न चान्यथा ॥ ८०१ ॥ पीठानि चैकपञ्चाशत्पञ्चाम्नाय-स्थदेवताः ॥ तत्र तिष्ठन्ति भो देवास्त्रयस्त्रिंशन्मितानि च ॥ ८०२ ॥ उपपी-ठानि यत्प्रोक्ताः षष्ठाम्नाये तु देवताः ॥ तत्तेषां तु समुद्दिष्टं तत्राथ हृदयोर्ध्वतः ॥ ८०३ ॥ तेङ्गपाते यत्र जातस्तत्र तिष्ठन्ति वैदिकाः ॥ तथा दक्षिणमा-र्गश्च सिद्ध्येन्यत्र वामकः ॥ ८०४ ॥ अकारः कामरूपाख्यमादिपीठं तदु-च्यते ॥ यस्मिन्पीठे मया देवि कुलमार्गः प्रवर्तितः ॥ ८०५ ॥ तत्र ते पतिता योनिस्तां दृष्ट्वा तत्प्रियं कृतम् ॥ कुलशास्त्रं तु कौलानां ज्ञानिनां मुक्तिदाय-कम् ॥ ८०६ ॥ पञ्चमानां द्रुतं सिद्धिरन्येषां नैव जायते ॥ तद्द्रष्टुं ह्यणिमा दीनां सिद्धिकामैश्च गम्यताम् ॥ ८०७ ॥ श्रीविद्यायास्तु तन्मूलं मासिमासि-क्षरेद्रजः ॥ कुलसिद्धस्य लोपे तु रजस्तम्भः प्रजायते ॥ ८०८ ॥ अस्यो-पपीठद्वितयं समन्तात्तव सूचनात् ॥ वंशाख्यं लोमतो जातं सिद्धिः शाबरचे-रकी ॥ ८०९ ॥ आकारः काशिकापीठस्त्वद्दत्तो भेदतां गतः ॥ प्रलयेपि न नाशोस्य यत्प्रोक्तस्स महेश्वरः ॥ ८१० ॥ न पापं यत्र पुण्यं न देहत्यागात्परं पदम् ॥ द्वयमेव फलं तत्र मुक्तिस्तस्योपपीठके ॥ ८११ ॥ यातना भैरवी याया तत्र पीठे पदेपदे ॥ मया न शक्यते पातुं तत्र ते स्तनकुम्भतः ॥ निः-सृतं धारयोर्युग्मं सासिश्च वरुणाभवत् ॥ ८१२ ॥ काश्यां बहिर्योजनैकं देव भूमिरिति स्मृता ॥ तत्र चाराधिता मन्त्रास्तत्कालं फलदायकाः ॥ ८१३ ॥ यथास्थानं चतुर्दिक्षु तत्र ह्याम्नायदेवताः ॥ तिष्ठन्ति देवास्तत्सिद्धिः पुरश्चरण-मात्रतः ॥ ८१४ ॥ गङ्गायाः परपारीणः काशीभागो पवित्रतः ॥ व्यासशा-पेन तज्जातं गर्दभक्षेत्रमद्भुतम् ॥ ८१५ ॥ तत्कालं तत्र संसिद्धिस्तत्राम्नायस्य जायते ॥ उपपीठमसेस्तीरे सारनाथस्तु दक्षिणः ॥ तत्र दक्षिणमार्गस्य मन्त्राः सिद्धिप्रदायकाः ॥ ८१६ ॥ वरुणायाः सौम्यभागे सारनाथस्तथोत्तरः ॥ तच्चो पपीठं वामस्य मार्गस्यातीव सिद्धिकृत् ॥ ८१७ ॥ नेपालं तु इकारस्स्याद्गुह्यं

तत्र तु पार्वति ॥ तस्माद्वामस्य मार्गस्य मूलस्थानं तदुच्यते ॥ ८१८ ॥ षट्पञ्चाशल्लक्षमिता भैरव्यो भैरवास्तथा॥शक्तीनां च सहस्रे द्वे पीठानां च शतत्रयम् ॥८१९॥ चतुर्दश श्मशानानि तत्र सन्निहितानि च ॥ दक्षमार्गे सिद्धिदानि पीठान्यष्टौ च तत्र तु ॥ ८२० ॥ सिद्धिर्वैदिकमन्त्राणां तत्र पीठचतुष्टये ॥ तन्मलं यत्र पतितं जातं तदुपपीठकम् ॥ ८२१ ॥ नेपालात्पूर्वदेशे तत्किरातैरुपवेष्टितम् ॥ त्रिंशत्तत्र सहस्राणि देवयोनीनि सन्ति हि ॥ ८२२॥ ईकारस्य समुत्पत्तिस्थानं स्याद्गौड्पर्वतम् ॥ पतितं वामनेत्रं ते महत्पीठं तदुच्यते ॥ ८२३ ॥ यस्य कस्यापि मन्त्रस्य जपात्सिद्धिः प्रजायते ॥ वामाचारात्तत्र देवा देवतादर्शनं भवेत् ॥ ८२४ ॥ उकारस्य समुत्पत्तिस्थानं काश्मीरमीरितम् ॥ कर्णो निपतितो वामस्तस्मात्पीठोत्तमं तु तत्॥८२५॥ यस्य कस्यापि देवस्य तं तं मन्त्रं जपेन्नरः ॥ विद्यानां पारदर्शी स्यात्तत्त्वज्ञानी भवेत्तथा ॥ ॥ ८२६ ॥ वैदिकाद्वा कौलिकाद्वा स्मार्ताद्वा दक्षमार्गतः ॥ च्युतानां तत्र देवेशि प्रायश्चित्तकराणि च ॥ ८२७ ॥ मया कृतानि तीर्थानि सद्यः प्रत्ययदान्यपि ॥ करिष्याम्यतिगुप्तानि कलौ म्लेच्छावृतानि च ॥ ८२८ ॥ ऊकारस्य समुत्पतिस्थानं स्यात्कान्यकुब्जकम् ॥ तत्र ते दक्षकर्णस्तु पतितोतीवशोभनः ॥ ८२९ ॥ गङ्गायमुनयोर्मध्ये तदन्तर्वेदिसञ्ज्ञितम् ॥ तत्क्षेत्रं सोमपानां हि निवासायोपकल्पितम् ॥८३०॥तत्र ब्रह्मादयो देवाः स्वस्वतीर्थानि चक्रिरे ॥ तत्र वैदिकमन्त्राणां सिद्धिर्देवाः पदेपदे ॥ ८३१ ॥ तस्य देवि मलाज्जातं यमुनातटमास्थितम् ॥ इन्द्रप्रस्थं नाम लोके प्रसिद्धमुपपीठकम् ॥ ॥ ८३२ ॥ ब्रह्मणा विस्मृता वेदा यत्पीठस्य प्रभावतः ॥ पुनर्लब्धास्ततो जातं तीर्थं निगमबोधकम् ॥ ८३३ ॥ तत्र काली तपस्तेपे तोषयिष्यन्ति ये च माम् ॥ पञ्चमैस्तदयुक्ता वा तद्भवेयद्वरेच्छया ॥ ८३४ ॥ सा तु तत्र वरं प्राप्य महाकालाज्जगत्तदा॥ पञ्चमे प्रेरयामास सिद्धिं च प्रकटा ददौ॥८३५॥ ऋकारोभूत्पूर्णगिरौ पतिता तत्र नासिका ॥ अतो योगस्य संसिद्धिस्तत्र पूर्णा प्रजायते ॥ तत्र प्रत्यक्षतां यांति मन्त्राधिष्ठानदेवताः ॥८३६॥ ॠकारस्य समुत्पत्तिस्थानं स्यादर्बुदाचलः ॥ वामस्ततो निपतितस्त्वत एव च वल्लभः ॥८३७॥

शक्तिस्तत्राम्बिका नाम स्वस्वाचारप्रिया सदा ॥ पुरश्चर्य्या यदैकापि भोग-काले प्रजायते ॥ तस्मिन्पीठे भवेन्मुक्तिस्सहस्रभगसङ्गमात् ॥ ८३८ ॥ दिव्यस्त्रीणां तु तत्स्थानं तेवतारस्य पार्वति ॥ प्रतिज्ञा महती जाता तया देव्या मया सह ॥ ८३९ ॥ निर्वाहयेन्मम क्षेत्रे ब्रह्मचर्य्यन्तु यः पुमान् ॥ द्वाद-शाब्दन्तु मद्भर्ता स एवैको भविष्यति ॥ ८४० ॥ बौद्धोपि स्खलितस्तत्र त्रिदिनोनैकवत्सरे ॥ निर्वाहस्तत्र वामस्य दक्षे विघ्ना भवन्ति हि ॥ ८४१ ॥ लृकारस्य समुत्पत्तिर्यत्र चाम्रातकेश्वरः ॥ दक्षो गण्डो निपतितस्तत्पीठे मह-दद्भुतम् ॥ ८४२ ॥ धनदाद्यास्तत्र यक्षा यक्षिण्यो धनदादिकाः ॥ वसन्ति तत्र जपतस्तेषां सिद्धिः प्रजायते ॥ ८४३ ॥ लृकारस्य समुत्पत्तिरेकाम्रे तु पुराभवत् ॥ नखास्ते गलितास्तत्र तत्तं विद्याधरैर्बहु ॥ ८४४ ॥ विद्यार्थि-नान्तु तत्पीठमिष्टविद्याविधायकम् ॥ अश्रुतो बुध्यते ग्रन्थस्तत्र सारस्वताज्ज-पात् ॥ ८४५ ॥ एकारजन्म त्रिस्रोते पातिता त्रिवली तव ॥ त्रिवाते वसनं जातं प्राक्पश्चाद्दक्षिणेपतत् ॥ ८४६ ॥ त्रीणि तान्युपपीठानि गृह-स्थस्तत्र सिद्ध्यति ॥ द्विजश्च नेतरो वर्णो मनवः पौष्टिके स्थिताः ॥८४७ ॥ ऐकारोभूत्कामकोटे नाभिस्तत्र तु तेपतत् ॥ तत्र सर्वेपि सिद्ध्यन्ति काम-मन्त्रा न संशयः ॥ ८४८ ॥ कामनीं त्वां समाराध्य च्छाछिकातीरसङ्ग-ताम् ॥ षोडशस्त्रीसहस्राणां भोगे सामर्थ्यवान्भवेत् ॥ ८४९ ॥ चतुर्दिक्षू-पपीठानि तत्र जातानि पार्वति ॥ स्थानमप्सरसां तत्र ये मन्त्राः स्त्रीप्रसङ्गिकाः ॥ ८५० ॥ सर्वे ते तत्र सिद्ध्यति क्षिप्रमेव न संशयः ॥ दर्शनेनापि लभते सिद्धिमिष्टां मनोरमाम् ॥ ८५१ ॥ ओकारोभूच्च कैलासे हिमाचलनगो-दरे ॥ अंगुल्यः पतितास्तत्र पर्वभिर्लिङ्गताङ्गताः ॥ ८५२ ॥ करमालिकया तत्र यंयं मन्त्रं जपेद्द्विजः ॥ पुरश्चरणमात्रेण तुष्टा भवति देवता ॥ ८५३ ॥ औकारस्य समुत्पत्तिर्भृगुपीठेऽभवत्पुरा ॥ तत्र ते पतिता दन्तास्तत्पीठं महद-द्भुतम् ॥ ८५४ ॥ समस्ता वैदिका मन्त्राः कल्पोक्ताश्च स्वरूपतः ॥ तत्र

---

१ अदन्तत्वमार्षम् ॥

तिष्ठन्ति सेवातस्सद्यः सिद्धा भवन्ति हि ॥ ८५५ ॥ अन्तु केदारसम्भूतं दक्षं करतलं तव ॥ पतितं तत्र पीठे तु सिद्धयः करसंस्थिताः ॥ ८५६ ॥ तस्य दक्षे चोपपीठमगस्त्याश्रमसञ्ज्ञितम् ॥ कङ्कणं पतितं तत्र सर्वसिद्धिविधायकम् ॥ ८५७ ॥ तत्पश्चान्मुद्रिकायास्ते जातं तत्पीठमद्भुतम् ॥ इन्द्राक्षी नाम यत्तत्र सेन्द्रेणोपासिता पुरा ॥ ८५८ ॥ तत्पश्चाद्रेवतीतीरे पतिता वलयस्तव ॥ पतितोपि विमुच्येत राजराजेश्वरीति च ॥ ८५९ ॥ वामाचारेण तत्रापि सिद्धिस्तूर्णं प्रजायते ॥ जपादेव तु यक्षिण्यास्तत्र स्युर्दृष्टिगोचराः ॥ ८६० ॥ अःकारोभूच्चन्द्रपुरे पतितो वामगण्डकः ॥ तत्र सर्वेपि मनवस्सिद्ध्यन्त्यत्र न संशयः ॥ ८६१ ॥ श्रीपीठे तु ककारो भून्मस्तकं पतितं तव ॥ प्रायस्तत्र सपापानां गमनं दुर्लभं कलौ ॥ ८६२ ॥ समस्ताः शक्तयो यत्र रमन्ते निशि चेच्छया ॥ अप्रमत्तं न बाधन्ते विधर्म्मं भक्षयन्ति च ॥ ८६३ ॥ कर्णाभरणमतो जातमुपपीठं तु पूर्वतः ॥ ब्राह्मी तत्र स्थिता शक्तिर्ब्रह्मविद्याप्रकाशिका ॥ ८६४ ॥ कर्णार्धाभरणाद्वह्निकोणेभूदुपपीठकम् ॥ माहेश्वरी तत्र शक्तिर्मुखशुद्धकरा मता ॥ ८६५ ॥ पत्रवल्यस्तु तद्दक्षे पतितास्ते तदाभवत् ॥ उपपीठं तत्र शक्तिः कौमारी जयकारिणी ॥ ८६६ ॥ कण्ठमाला तु नैर्ऋत्यां पतिता चोपपीठकम्॥ वैष्णव्यावास्थितं जातमिन्द्रजाले सुसिद्धिदम् ॥ ८६७ ॥ नासा मुक्ता तु तत्पश्चात्पतिता चोपपीठकम् ॥ वाराह्यधिष्ठितं जातं शत्रुमर्दनकारकम् ॥ ८६८ ॥ मस्तकाभरणं वायौ पतितं चोपपीठकम् ॥ चामुण्डाधिष्ठितं जातं क्षुद्रदैवतसिद्धिदम् ॥ ८६९ ॥ केशाभरणतस्तेभूदैशान्यामुपपीठकम् ॥ अधिष्ठितं महालक्ष्म्या सूक्तानां तत्र सिद्धिये ॥ ८७० ॥ खकारोभूत्तथोङ्कारे क्षेत्रे चामरकण्टके ॥ त्वद्बाहुपतनात्पीठो नर्मदाधिष्ठितोऽभवत् ॥ ८७१ ॥ तत्र सर्वैर्मुनिवरैः प्रणतैः समुपासकैः ॥ कृतं महत्तपो जाता जीवन्मुक्ता महर्षयः ॥ ८७२ ॥ तदुत्तरे चोपपीठं कञ्चुकीपतनादभूत् ॥ ज्योतिष्मत्या निवासोसौ ज्योतिर्मन्त्रप्रकाशतः ॥ ८७३ ॥ वक्षो निपतितं यत्र जातं पीठं महाद्भुतम् ॥ विख्यातो ज्वालया तत्र वह्निना च तपः कृतम् ॥ ८७४ ॥ स देव-

मुखतां प्राप्तः स्थितस्तस्योपपीठके ॥ ज्वालामुखीति विख्यातं स वह्निर्देवता-
मुखम् ॥ ८७५ ॥ पुरश्चर्योक्तद्रव्यस्य पुरश्चरणसंख्यया ॥ तत्र होमः प्रक-
र्तव्यो मन्त्रसिद्धिः प्रजायते ॥ ८७६ ॥ गोरक्षेण तु तत्रैव प्राप्तं सिद्धय-
ष्टकं पुरा ॥ दर्शनादेव तन्नॄणां सर्वसिद्धिविधायकम् ॥ ८७७ ॥ मालवं तु
घकारस्य वामस्कन्धोत्र संस्थितः ॥ उपासितं तु गन्धर्वैरागज्ञानक-
सञ्ज्ञितम् ॥ ८७८ ॥ कुलान्तके ङकारोभूत्कक्षो निपतितस्तव ॥
द्वेषोच्चाटनमृत्यूनां प्रयोगास्तत्र सिद्धिदाः ॥ ८७९ ॥ कोट्टके च चकारो-
भूद्वामकक्षः प्रतिष्ठितः ॥ लब्धा तु राक्षसैस्तत्र सिद्धिर्देवजयाभिधा ॥८८०॥
छकारस्य समुत्पत्तिर्गोकर्णे परिकीर्तिता॥जठरं पतितं यत्र तच्च पीठं महाद्भुतम्
॥ ८८१ ॥ मातुरेश्वरसञ्ज्ञो यो जकारस्तत्र ते बलिः ॥ प्रथमा पतिता
पीठं शिवमन्त्रप्रकाशकम् ॥ ८८२ ॥ अट्टहासं झकारस्य स्थानं तत्र परा
बलिः॥ पतिता तद्गणेशस्य मन्त्रासिद्धिकरं मतम्॥८८३॥विरजस्तु जकारस्य
स्थानं तत्र परा बलिः ॥ समस्तविष्णुमन्त्राणां तत्र सिद्धिरदूरतः ॥ ८८४ ॥
तस्योत्पत्ती राजगृहे बस्तिपातस्तु तत्र ते ॥ तदधस्तात्क्षुद्रघण्टा पतिता चोप-
पीठकम् ॥ ८८५ ॥ तद्घण्टिकाभिधं प्रोक्तमिन्द्रजालं प्रसिद्ध्यति ॥ उप-
वेदार्थनिष्पत्तिर्भवेद्राजगृहे तथा ॥ ८८६ ॥ महापथे ठकारोभून्नितम्बः
पतितस्तव ॥ जातिदुष्टैर्द्विजैस्तत्र स्वशरीरं समर्पितम् ॥ ८८७ ॥ प्राप्य
जन्मान्तरं तैस्तु वेदमार्गप्रलुम्पकाः ॥ अघोराद्याः कलौ मार्गाश्चालिता देह-
सौख्यदाः ॥ ८८८ ॥ डकारोऽभूत्कोल्लागिरौऽजघनं पतितं तव ॥ समस्त-
वनदेवानां तत्र सिद्धिरदूरतः ॥ ८८९ ॥ एलापुरे ढकारोभूद्दक्षोरुः पति-
तस्तव ॥ ८९० ॥ कालेश्वरे णकारोभूद्वामोरुः पतितस्तव ॥ मृत्युञ्जयायु-
ष्करणमन्त्राः सिद्ध्यन्ति तत्र तु ॥ ८९१ ॥ जयन्ती तु तकारस्य स्थानं
जानु निपातितम् ॥ तत्र दक्षो जपात्सिद्ध्येद्धनुर्वेदो न संशयः ॥ ८९२ ॥
उज्जयिन्यां थकारोभूद्वामं जानु तु तत्र ते ॥ सिद्ध्यै कवचमन्त्राणामवन्तीति
निगद्यते ॥ ८९३ ॥ दस्योत्पत्तिस्तु योगिन्यां तत्र जङ्घा निपातिता

१ पतितमिति शेषः

कौलिका वामका मन्त्रास्तत्र सिद्ध्यन्ति नेतरे ॥ ८९४ ॥ थकारोभूत्क्षीरिकायां वामजङ्घा तु तत्र ते ॥ तत्र वैतालिका मन्त्राः सिद्धिं यान्ति च शाबराः ॥ ८९५ ॥ हस्तिनापुर उत्पत्तिर्नकारस्य प्रकीर्त्यते ॥ दक्षस्ते पतितो गुल्फो नूपुरश्चैव तत्र हि ॥ ८९६ ॥ उपपीठन्तु तज्जातं यत्ख्यातं नूपुरार्णवम् ॥ पीठोपपीठयोस्तत्र मन्त्राः सिद्ध्यन्ति भास्कराः ॥८९७॥ उड्डीशाख्यं पकारस्य पीठं तत्र तु वामकः ॥ गुल्फो निपतितस्तत्र कृतसाधकसिद्धिदम् ॥ ॥ ८९८ ॥ उड्डीशाख्यं महातन्त्रं सिद्धम्भवति तत्र तु ॥ नूपुरः पतितो यत्र डामरश्चोपपीठकम् ॥८९९॥ प्रयागस्तु फकारस्य स्थानं देहरसोत्र तु ॥ यत्रैव पतितस्तत्र दृश्यते श्वेतमृत्तिका ॥ ९०० ॥ गङ्गायमुनयोर्मध्ये पारावारे तथैव च ॥ एवं स्थानेषु तेस्थीनि पतितानि द्विजोत्तमैः ॥९०१॥ कृतानि तानि भूम्यन्तस्तत्र पीठानि जज्ञिरे ॥ गङ्गायाः प्राक् च बगलाद्युपपीठं महाद्भुतम् ॥ ९०२ ॥ उत्तरेस्यास्तु चामुण्डाद्युपपीठं महाद्भुतम् ॥ गङ्गायमुनयोर्मध्ये राजराजेश्वरीश्वरम् ॥ ९०३ ॥ यमुनादक्षिणे कूले भुवनेशी समाश्रिता ॥ प्रयागोतस्तीर्थराजः पीठराजश्च कथ्यते ॥ ९०४ ॥ षष्ठीशस्तु बकारस्य स्थानं पृष्णिस्तु तत्र ते ॥ दक्षिणः पतितो देवि पादुकासिद्धिरत्र तु ॥ ॥ ९०५ ॥ मायापुरे वामपार्ष्णिः पतितो भस्थलन्तु तत ॥ देवदानवगन्धर्वमायाः सिद्ध्यन्ति तत्र तु ॥ ९०६ ॥ मलयाख्ये मकारोभूत्पीठेऽसृग्यत्र तेपतत ॥ रक्ताम्बरादिबौद्धानां मन्त्रसिद्धिस्थलन्तु तत ॥ ९०७ ॥ श्रीशैले तु यकारोभूत्तत्र पित्तं तवाम्बिके ॥ सर्वमन्त्रास्तत्र सिद्धा वैष्णवास्तु विशेषतः ॥९०८॥ रस्थानन्तु हिमागस्य मेरुनामकशृंगकम् ॥ त्वन्मेदः पतितं सिद्धेत्स्वर्णाकर्षणभैरवः ॥ ९०९ ॥ लकारस्य समुत्पत्तिर्गिरिपीठे तु यत्र ते ॥ जिह्वाग्रं पतितन्तत्र जपाद्वाक्सिद्ध्यति ध्रुवम् ॥९१०॥ माहेन्द्रस्तु वकारस्य स्थानं मज्जापतत्तव ॥ सर्वेषां शक्तिमन्त्राणां सिद्धिस्तत्र न संशयः ॥९११॥ वामनन्तु शकारस्य स्थानमङ्गुष्ठतोभवत् ॥ जपात्तत्र तु मुख्यत्वं मन्त्रिषु प्राप्नुयादपि ॥ ९१२ ॥ हिरण्यपुरसम्भूतः षकारो वामतोभवम् ॥ अंगुष्ठादेव तत्पीठो वाममार्गेधिकोभवत् ॥ ९१३ ॥ पीठे चापि महालक्ष्म्याः सका-

रोभूद्बुचिस्तव ॥ शरीरात्पतिता तत्र सर्वसिद्धिः प्रजायते ॥ ११४ ॥ हकारश्चात्रिस्थानेभूद्धमनी तत्र तेपतत् ॥ दृग्गोचरास्तु यावन्त्यः सिद्धयस्तत्र संस्थिताः ॥ ११५ ॥ छायापीठे लकारोभूद्दृष्टा छाया मया तव ॥ सतीवेषं तु लब्ध्वाभूच्छायापीठमतस्तु तत ॥ ११६ ॥ छत्रपीठे समुत्पन्नः क्षकारः केशपाशकः ॥ यत्र ते पतितो देवि तत्र सिद्धिरदूरतः ॥ ११७ ॥ एतद्देवि मया प्रोक्तं रहस्यं पीठसम्भवम् ॥ अथान्यत्सम्प्रवक्ष्यामि रहस्यं परमाद्भुतम् ॥ ११८ ॥ कलौ लुब्धास्तु गुरवः शिष्याः सिद्ध्यभिलाषिणः॥ तस्मान्न सिद्धिः कुत्रापि नाश एव दिनेदिने ॥ ११९ ॥ वक्ष्यामि सिद्धये तस्मात्सर्वतन्त्रेषु गोपितम् ॥ सुभक्ताय सुशिष्याय देयं नान्यत्र कुत्रचित् १२० तारमायारमाकामबीजपूर्वं तु रामकम् ॥ विप्राद्यैश्च चतुर्थ्यन्तं नमोन्तं प्रजपेदिति ॥ १२१ ॥ वृद्धाद्विप्राद्ग्राह्यमेतदेकदा तन्तु तोषयेत् ॥ सिद्धोयं मन्त्र उद्दिष्टो गोप्यं मातरि जारवत् ॥ १२२ ॥ षडङ्गन्यासमाद्येन बीजेन रचयेत्पुनः ॥ पूर्वोक्तमातृकाणां तु न्यासमादौ समाचरेत् ॥ १२३ ॥ गजानने देवयोनौ गणेशस्य च मातृकाः ॥ शाक्तके लघुमात्राणां श्रीकण्ठाद्याः शिवादिषु ॥ १२४ ॥ केशवाद्या विष्णुसूर्य्यग्रहादौ परिकीर्तिताः ॥ पीठन्यासस्तु सर्वत्र कर्त्तव्यो देहशुद्धये ॥ १२५ ॥ पूजादिकन्तु प्राग्वत्स्यात्पुरश्चर्य्या तथैव हि ॥ षट्कर्म्माणि तु तत्स्तोत्रं भक्तस्थाने स्वयं भवेत् ॥ १२६ ॥ नाश्यस्थाने तथा शत्रुं स्वस्थाने देवतां स्मरेत् ॥ सर्वे प्रयोगाः सिद्ध्यन्ति मोक्षमन्ते लभेतसः ॥ १२७ ॥ नैव त्याज्यस्स्वस्य धर्म्मः पोष्यवर्गान्प्रपूजयेत् ॥ अप्रियं नैव कुर्वीत मातरम्पिरं तथा ॥ १२८ ॥ देववत्सेवयेदेतद्रहस्यं सम्प्रकाशितम् ॥ मन्त्रप्रदः सदा दुःखी मन्त्रग्राही च निर्धनः ॥ ६२९ ॥ भविष्यति कलौ

---

१ ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं रामाय नमः, अयं मन्त्रश्चातुर्वर्ण्येन जपितः शीघ्रसिद्धिदः अथवा ॐ रामाय नमः ब्राह्मणेन ह्रीं रामाय नमः, क्षत्रियेण तथा श्रींरामाय नमः, वैश्येन क्लीं रामाय नमः, शूद्रेण जपितव्यः २ । अंकामपीठाय नमः, शिरसि, आं काशिकापीठाय नमः मुखे, इंनेपालपीठाय नमः दक्षनेत्रे, ईं रौद्रपर्वतपीठाय नमः वामनेत्रे उं काश्मीरपीठाय नमः दक्षकर्णे । ऊं कान्यकुब्जकपीठाय नमः वामकर्णे ।

प्रायोऽविवेकाद्गुरुशिष्ययोः ॥ ज्ञात्वा शास्त्रं गुरुं कुर्य्यात्तदा सुखमवाप्नुयात् ॥ १३० ॥ इति दीक्षाविधिः प्रोक्तः कुलाचारसमन्वितः ॥ अर्थवादं विना देवि किमन्याच्छ्रोतुमिच्छसि ॥ १३१ ॥ मेरौ शिवप्रणीतेस्मिन्मेरुणा प्रकटीकृते ॥ मेरुभूते च तन्त्राणां पुरश्चर्यादिनिर्णयः ॥ १३२ ॥

इति श्रीमहामायामहाकालानुमते मेरुतन्त्रे शिवप्रणीते पुरश्चर्या-कौलिकाचारप्रकाशो दशमः ॥ १० ॥

---

श्रीदेव्युवाच ॥ महादेव महाघोरे कलौ केके च वैदिकाः ॥ स्थास्यन्ति मनवः कुत्र कल्पाः के च फलप्रदाः ॥ १ ॥ कियच्च वैदिकं कर्म्म ब्राह्मे पाद्मे च कथ्यते ॥ शाखाः स्थास्यन्ति काश्चैव उपशाखास्तथा च काः ॥ ॥ २ ॥ श्रीमहेश्वर उवाच ॥ वैदिके कर्म्मणि कलौ नराणां धीः सुदुर्लभा॥ यथा नावं विना सिन्धुपारमिच्छन्ति मानवाः ॥ ३ ॥ तेनाज्ञानात्कलौ देवि वामे कौले कृतादराः ॥ अतत्त्वज्ञा विनश्यन्ति ते तु मानुष्यवर्जिताः ॥ ॥ ४ ॥ केचित्त्वद्भक्तियोगेन उपदिष्टाः प्रतारकैः ॥ वैदिकं कर्म्म ते त्यक्त्वा जायन्ते यवनाधिपाः ॥ ५ ॥ कलेर्दशसहस्रेषु विष्णुः स्थास्यति मध्यमम् ॥ देशे स देवो भवति विन्ध्ये हिमवति क्वचित् ॥ ६ ॥ यावत्पूर्णः कलेः सन्धिस्तावत्स्थास्यत्यतः परम् ॥ स्त्रीमांसमद्यनिरते लोके धर्मपराङ्मुखे ॥ ७ ॥ सर्व एव हि ते मन्त्राश्चतुर्वेदेषु संस्थिताः ॥ स्थास्यन्ति पृथिवीमध्ये यावत्पूर्णः कलिर्भवेत् ॥ ८ ॥ सन्ध्यांशे तु कलेः सर्वे त्रिंशन्मन्त्रा भुवि स्थिताः ॥ तदा कल्किस्वरूपस्य विष्णोर्जन्म भविष्यति ॥ ९ ॥ ये तिष्ठन्ति कलौ देवि तत्साधनमहं ब्रुवे ॥ स्वाध्यायाभ्यसनस्यादौ व्रतान्येव चतुर्दश ॥ १० ॥ केशश्मश्रु वापयित्वा शुचिर्गुर्वाज्ञया चरेत् ॥ अथ वा पूर्वविधिना निष्पापः सन्समभ्यसेत् ॥ ११ ॥ तानध्यायान्प्रदोषेषु देवि शिष्यः पुरस्सरम् ॥ शुचिस्थले तथैकान्ते नम्रो गुर्वाज्ञया पठेत् ॥ १२ ॥ त्र्यहं प्रातस्त्र्यहं सायं त्र्यहमद्यादयाचितम् ॥ त्र्यहं परं च नाश्नीयात्प्राजापत्यव्रतं त्विदम् ॥ १३ ॥ एकैकं ग्रासमश्नीयात्र्यहाणि त्रीणि पूर्ववत् ॥ त्र्यहं चोपवसेदन्त्यमतिकृच्छ्रं

व्रतं त्विदम् ॥ १४ ॥ स्नानं सन्ध्यामुपासीत प्रत्यहं विधिपूर्वकम् ॥ उपवासश्च सप्ताहं शिशुसान्तपनं व्रतम् ॥ १५ ॥ प्रतित्र्यहं पिबेदुष्णजलक्षीरघृतानि च ॥ समाहितः सकृत्स्नायी तप्तकृच्छ्रं व्रतं त्विदम् ॥ १६ ॥ गोमूत्रं गोमयं क्षीरं दधि सर्पिः कुशोदकम् ॥ एकरात्रोपवासश्च कृच्छ्रसान्तपनं व्रतम् ॥ १७ ॥ त्र्यहंत्र्यहं तु गोमूत्रादिकं सेव्यं त्र्यहं पुनः ॥ उपवासस्तदा प्रोक्तं महासान्तपनं व्रतम् ॥ १८ ॥ एकैकं ह्रासयेत्पिण्डं कृष्णेऽमायां न भोजनम् ॥ शुक्लेपि वर्धयेच्चापि प्रोक्तं चान्द्रायणं व्रतम् ॥ १९ ॥ पलप्रमाणमन्नं तु ग्रासं शुक्लेपि वर्धयेत् ॥ ह्रसेत्कृष्णे व्रतं चान्द्रायणं स्यादेव मध्यमम् ॥ ॥ २० ॥ चतुरः प्रातरश्नीयाद्विप्रः पिण्डान्कृताह्निकः ॥ चतुरोऽस्तमिते सूर्ये शिशुचान्द्रायणं व्रतम् ॥ २१ ॥ अष्टावष्टौ समश्नीयात्पिण्डान्मध्यगते रवौ ॥ नियतात्मा हविष्यस्य यतिचान्द्रायणं व्रतम् ॥ २२ ॥ स्नानसन्ध्यादिकं कृत्वा द्वादशाहं न भोजनम् ॥ स्थिरचित्तोऽप्रमत्तश्च पराकाख्यमिदं व्रतम् ॥ २३ ॥ पिण्याकमधुतक्राम्बुसक्तूपोषणकं क्रमात् ॥ षड्भिर्दिनैः सौम्यकृच्छ्रनामकं व्रतमुत्तमम् ॥ ॥ २४ ॥ एवं त्रिरात्रमभ्यासादेकैकस्य यथाविधि ॥ तुलापुरुषवत्त्रीणि स्तोमायनमिदं व्रतम् ॥ २५ ॥ त्रींस्त्रीन्पिडान्समश्नीयान्नियतात्मा दृढव्रतः ॥ हविष्यान्नस्य वैभागमृषिचन्द्रायणं व्रतम् ॥ २६ ॥ सप्तसप्तदिने चैवं त्रिदिने गोस्तनं पिबेत् ॥ षड्दिने वायुभक्षश्च स्तोमायनमिदं व्रतम् ॥ २७ ॥ पर्णदूर्वायवस्विर्णबिल्वपत्रकुशोदकैः ॥ प्रत्येकं प्रत्यहं पीतैः पर्णकृच्छ्रव्रतं त्विदम् ॥ २८ ॥ एतैर्व्रतैस्तु शुद्धात्मा गुरुशुश्रूषणे रतः ॥ भिक्षाशीवा हविष्याशी भुञ्जन्मौनं समास्थितः ॥ २९ ॥ प्रतिलोमान्पुष्पवतीं यवनान्बौद्धकौलिकान् ॥ आचारहीनाञ्छूद्रांश्च दृष्ट्वा नैव पठेच्छ्रुतिम् ॥ ३० ॥ रात्रेश्चतुर्थप्रहरे पादप्रक्षालनादिकम् ॥ कृत्वासने समाविश्य ज्ञातं वेदं समुद्धरेत् ॥ ३१ ॥ निन्दां स्तुतिं न कस्यापि कुर्यादनृतभाषणम् ॥ नारीं रूपवतीं दृष्ट्वा ध्यायेद्विष्णुं सनातनम् ॥ ३२ ॥ हरिरोम्पठनादौ च तस्यान्ते च समुच्चरेत् ॥ साष्टाङ्गं तु नमस्कारमादावन्ते गुरोश्चरेत् ॥ ३३ ॥ आद्ये यामे चतुर्थी च गणेशानं सर-

१ पर्णोदुम्बरराजी वेति पाठान्तरम् ।

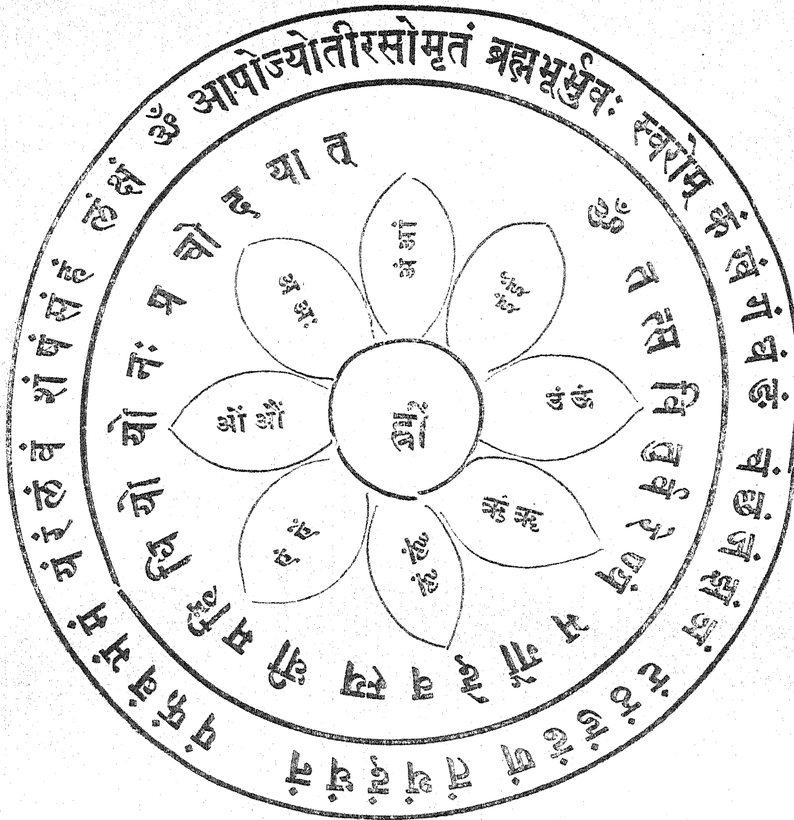
स्वतीम् ॥ प्रयाति रात्रौ यत्तस्मात्पूजनीयो गणाधिपः ॥ ३४ ॥ अह्नश्चतुर्थ-प्रहरे पूजयित्वा विसर्ज्जयेत् ॥ सरस्वतीं तोषयित्वा गणेशं पुनरागताम् ॥ ३५ ॥ मम वक्त्रे स्थितां चेति ध्यात्वा यामे चतुर्थके ॥ पुनः पठेदनध्यायस्तदा पाठं न कारयेत् ॥ ३६ ॥ सार्धयामे प्रतिष्ठा चेत्सप्तमी याति भारती ॥ निकटे कार्त्ति-केयस्य गातुं तस्मात्प्रपूजयेत् ॥ ३७ ॥ सरस्वत्या युतं स्कन्दं तत्प्रभावाच्च धारयेत् ॥ शेषं रात्रौ पुनर्ध्यात्वा स्वागतान्तां पुनः पठेत् ॥ ३८ ॥ त्रयो-दशी चेत्पूर्वार्धे रात्रेः स्पष्टा तदा तु गीः ॥ कैलासं याति नृत्यन्ती प्रदोष-व्रतकारिणी ॥ ३९ ॥ शिवस्याराधनार्थं तु तस्मात्तत्र पठेन्न हि ॥ हठात्पठति तद्यावद्वृथात्वमुपगच्छति ॥ ४० ॥ अस्मिन्प्रदोषसमये तत्पूजाध्यानतत्परः ॥ प्राणायाम्यथ वा मौनी त्यक्त्वाच्छाक्तस्तु सिद्ध्यति ॥ ४१ ॥ सन्ध्यालोपं न कुर्वीत कदाचिदपि कुत्रचित् ॥ प्रातः सन्ध्या सनक्षत्रा ससूर्य्या सायमु-च्यते ॥ ४२ ॥ मुहूर्तपञ्चकादूर्ध्वं विंशत्यर्वाग्यथा यथा ॥ आसन्नोभिजितः कालः श्रेष्ठः श्रेष्ठस्तथा तथा ॥ ४३ ॥ सन्ध्याकालस्य लोपेन मुख्यस्या-ग्निक्रियान्तरम् ॥ प्रायश्चित्तं त्वेकमर्घ्यमधिके सम्प्रदीयते ॥ ४४ ॥ परसन्ध्या कालतोर्वाग्गते काले ततोधिके ॥ अष्टोत्तरशतं तत्र गायत्र्या जप इष्यते ॥ ॥ ४५ ॥ राज्ञा रुद्धो गतो वापि चात्यावश्यककर्म्मणि ॥ प्राणायामत्रयं कृत्वा गायत्र्यष्टोत्तरं शतम् ॥ ४६ ॥ परान्ते भोजनं चैवमनिन्द्यं निष्कृतिः स्मृता ॥ अथ वक्ष्यामि मन्त्राणां गायत्रीं वेदमातरम् ॥ ४७ ॥ यया च सगुणं ब्रह्म गीयते प्रतिपाद्यते ॥ निर्गुणं यां विना मुक्तिर्न कस्यापि प्रजायते ॥ ४८ ॥ महामायास्वरूपं यन्महाकालः स्वयं जपेत् ॥ यत्प्रभावादहं त्वञ्च जातः काल इवापरः ॥ ४९ ॥ गायत्र्या मुनिराख्यातो विश्वामित्रोति ता-पसः ॥ गायत्रीच्छन्द इत्युक्तं देवता सविता स्मृतः ॥ ५० ॥ व्याहृतीः सप्त भूराद्या हृन्मुखांसोरुयुग्मकैः ॥ जठरे चक्रमान्न्यस्य न्यासोयं प्रथमः स्मृतः ॥ ५१ ॥ पादांगुल्यंघ्रिसन्धौ च सन्धौ स्याद्गुल्फपादयोः ॥ गुल्फ-जान्वोस्तथा सन्धौ तथा जानूरुसन्धिषु ॥ ५२ ॥ लिङ्गे नाभौ च हृदये कण्ठे वर्णान्न्यसेत्क्रमात् ॥ करांगुलीमूलसन्धौ मणिबन्धे च कूर्परे ॥ ५३ ॥

भुजमूले मुखे नासिकायाश्चापि कपोलयोः ॥ नेत्रयुग्मे भ्रुवोः शीर्ष्णि चूडाधो वामकर्णके ॥ ५४ ॥ दक्षकर्णे मुखे मस्तके च वर्णान्क्रमान्न्यसेत् ॥ गायत्र्या अक्षरन्यासो द्वितीयः सम्प्रकीर्तितः ॥ ५५ ॥ पदानि दश गायत्र्याः शिरो भ्रूमध्यदृङ्मुखे ॥ कण्ठहृन्नाभिगुल्फेषु जान्वोरंघ्र्योरथ न्यसेत् ॥ ५६ ॥ शिरोदेशे तु गायत्र्याः शिरोन्यासस्तृतीयकः॥ हृदयं ब्रह्मणे प्रोक्तं विष्णवे शिर ईरितम्॥५७॥ शिखा रुद्राय कवचमीश्वराय समीरितम्॥ नेत्रे सदाशिवायोक्त- मस्त्रं सर्वात्मने स्मृतम्॥५८॥ अयं षडङ्गन्यासस्तु चतुर्थः परिकीर्तितः॥ पज्जानु- कटिनाभौ च हृदये कण्ठभालयोः ॥ ५९ ॥ क्रमाद्व्याहृतयो न्यस्याः परब्रह्म च शीर्षके ॥ पुनर्व्याहृतिन्यासोयं पञ्चमः परिकीर्तितः ॥ ६० ॥ तत्सवि- तुर्हृदयाय वरेण्यं शिरसे तथा ॥ भर्गो देवस्य च शिखा कवचं धीमहि स्मृतम् ॥ ६१॥ धियो यो नो नेत्रमुक्तमस्त्रं शेषेण कीर्तितम् ॥ अयं न्यासस्तु षष्ठः स्यात्षडेते पापहारकाः ॥ ६२ ॥ प्राणायामत्रयं कृत्वा ततो ध्यानं समा- चरेत्॥तद्ब्रवीमीह गायत्र्या ध्यानं भक्तमनोरमम् ॥ ६३ ॥ मुक्ताविद्रुमहेमनी- लधवलच्छायैर्मुखैस्त्रीक्षणैर्युक्तामिन्दुकलानिबद्धमुकुटां तत्त्वार्थवर्णात्मिकाम् ॥ गायत्रीं वरदाभयांकुशकशाः शुभ्रं कपालं गुणं शङ्खं चक्रमथारविंदयुगलं हस्तैर्वहन्तीं भजे ॥ ६४ ॥ ततस्तु पूजयेद्देवीमष्टावरणसंयुताम् ॥ आदौ संपूज्य देवेशीं कोणाग्रे पूजयेत्ततः ॥ ६५ ॥ त्रिकोणस्याग्निकोणैस्तु प्राद- क्षिण्येन देवताः ॥ ब्राह्मी माहेश्वरी चैव वैष्णवी प्रथमावृतिः ॥ ६६ ॥ तस्याग्रतस्त्वष्टदिक्षु क्रमादष्टौ प्रपूजयेत् ॥ आदित्यमूषां च रविं प्रज्ञां भानुं प्रभां तथा ॥ भास्करं चापि संध्यां च द्वितीयावरणं त्विदम् ॥६७॥ ततोर्च- येदष्टदलकेशरेष्वङ्गषट्ककम् ॥ गायत्र्याश्च तृतीयोक्तं दलमध्ये यजेदिमाः ॥ ॥ ६८ ॥ प्रह्लादिनीं प्रभां नित्यां बिल्वरुद्रां विलासिनीम् ॥ प्रभावतीं जयां शांतां चतुर्थावरणं त्विदम् ॥ ६९ ॥ ततो यजेद्दलाग्रेषु कांतिं दुर्गां सरस्वतीम् ॥ बिल्वरूपां विशालां च ईशानीं व्यापिनीं क्रमात् ॥ विमलां च क्रमात्प्रोक्तं पञ्चमावरणं त्विदम् ॥७०॥ तदग्रिमे त्वष्टदले एताः पूज्यास्तु शक्तयः॥तमोहारिणिका पूज्या विश्वयोनिर्जयावहा ॥७१॥ पद्मालया परा-

शोभा पद्मरूपा च षष्ठकम्॥भवेदावरणं चाग्रे ब्राह्म्याद्याः सप्त मातरः ॥अष्टमी त्वरुणा प्रोक्ताप्रोक्त मावरणं त्विदम्॥ ७२ ॥ रविः सितः कुजो राहुः शनिश्चंद्रो बुधो गुरुः ॥ अष्टमावरणं चैतच्चतुरस्रादिगष्टके ॥ ७३ ॥ दिक्पालाः सप्तमे प्रोक्तास्तदस्त्राणि तथाष्टमे ॥ एवं सम्पूजयेद्देवीं तस्या मुद्राः प्रदर्शयेत् ॥ ॥ ७४ ॥ व्याहृतित्रयसंयुक्तां गायत्रीं सर्वदा जपेत् ॥ चतुर्विंशतिलक्षाणि पुरश्चरणमुच्यते ॥ ७५ ॥ क्षीरोदनं तिलान्दूर्वां सिद्धौदनसमिद्वराः ॥ पृथग्द्रव्यं सहस्रं तु जुहुयान्मन्त्रसिद्धये ॥ ७६ ॥ तर्प्पणादि ततः कृत्वा गुरुं संतोष्य यत्नतः ॥ प्रयोगानाचरेद्विद्वांस्तदनुज्ञापुरस्सरम् ॥ ७७ ॥ तत्त्वसङ्ख्यासहस्राणि मन्त्री प्रजुहुयात्तिलैः ॥ सर्वपापविनिर्मुक्तो दीर्घमायुस्स विन्दति ॥ ७८ ॥ आयुषे चाज्यहविषा केवलेनाथ सर्पिषा ॥ दूर्वान्वितैस्तिलैर्मंत्री जुहुयात्त्रिसहस्रकम् ॥ ७९ ॥ प्रतिद्रव्यमथो मासषट्कं वै जुहुयाद्द्विजः ॥ अरुणार्कैश्च श्वेतार्कैरयुतं नियतेन्द्रियः ॥ ८० ॥ ब्रह्मश्रिये च जुहुयात्प्रसूनैर्ब्रह्मवृक्षजैः ॥ जपेन्मुमुक्षुर्गायत्रीं तुर्य्यपादेन संयुताम् ॥ ८१ ॥ परोरजसे सावदोमिति तुर्य्यः प्रकीर्तितः ॥ विमलोस्य ऋषिश्छंदो गायत्री देवता स्मृतः[1] ॥ ८२ ॥ परमात्मा प्रथमतः प्रणवन्यासमाचरेत् ॥ सप्तव्याहृतिगायत्रीन्यासाद्यान्पूर्ववच्चरेत् ॥ ८३ ॥ ब्रह्मात्मने तु हृदयं शिरो विष्णवात्मने तथा ॥ ८४ ॥ शिखा रुद्रात्मने चेति कवचं चेश्वरात्मने ॥ सदाशिवात्मने नेत्रमस्त्रं सर्वात्मने इति ॥ ८५ ॥ नातः परतरो मन्त्रो नातः परतरं तपः ॥ तृणायन्ते महाविद्यादयः सर्व्वे यदग्रतः ॥ ८६ ॥ अथ गोप्यं प्रवक्ष्यामि गोप्यं मातरि जारवत् ॥ सर्वेषां वेदमंत्राणां यच्च संसिद्धिकारकम् ॥ ८७ ॥ लोलुपाय कृतघ्नाय नास्तिकाय शठाय च ॥ सगर्वाय गुरुद्वेष्ट्रे प्रोच्यशापमवाप्नुयात् ॥ ८८ ॥ येषां वैदिकमन्त्राणां चलनं कर्म्मसूचितम् ॥ तानादिपादसहितान्गायत्र्यास्तु सदा जपेत् ॥ ८९ ॥ अष्टोत्तरसहस्रन्तु तद्व्रतपालनमन्त्रकान्[2]॥मध्यपादेन संयुक्तानन्तिमेन तु नाशकान्॥९०॥

---

१ परमात्मा देवता स्मृत इत्युत्तरत्रान्वयोस्य ॥ २ मन्त्रा इत्यस्य विशेषणमिदम् ॥



अवश्यं जायते सिद्धिर्गायत्री तेजसा इति ॥ अयं संक्षेपतः प्रोक्तो गायत्र्या गोपितो विधिः ॥ ९१ ॥ पद्ममष्टदलं लेख्यं ह्रींकारं कर्णिकास्थितम् ॥ द्वौद्वौ स्वरौ दिग्विदिशं प्रतिपत्रं समालिखेत् ॥ ९२ ॥ किञ्जल्केषु तदग्रेषु गायत्र्यर्णांस्त्रिशस्त्रिशः ॥ तद्बहिर्वृत्तयुगलान्तराले तु समालिखेत् ॥ ९३ ॥ ककाराद्यांस्तथोमापो ज्योती रसोमृतं ब्रह्म॥ भूर्भुवःस्वरोमिति च यन्त्रं सर्वार्थसिद्धिदम् ॥ ९४ ॥ मृत्योर्भयं तु सर्वेषां सर्वदा सर्वकर्म्मसु ॥ तस्मिञ्जिते तु देवादीन्मोक्षान्तं साधयेज्जनः ॥ ९५ ॥ तदर्थं सम्प्रवक्ष्यामि मन्त्रं मृत्युञ्जयाभिधम् ॥ उपासना तस्य तस्माद्दंशेल्पायुश्च नो भवेत् ॥ ९६ ॥ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवर्धनम् ॥ उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात् ॥९७॥ वशिष्ठोस्य मुनिश्छन्दोनुष्टुब्देवस्तु त्र्यम्बकः ॥ त्रिचतुर्वसुगोपश्चत्रिभि-

---

१ त्र्यम्बकं हृदयाय नमः, यजामहे शिरसे स्वाहा, सुगन्धिं पुष्टिवर्धनं शिखायै वषट्, उर्वारुकमिव बन्धनात् कवचाय हुम्, मृत्योर्मुक्षीय नेत्रत्रयाय वौषट्, मामृतात् अस्त्रायफट् ॥

वेर्णैः षडङ्गकम् ॥ ९८ ॥ पूर्वपश्चिमयाम्येन्दुकोणेषु तदनन्तरम् ॥ कुर्या-न्न्यासं तथाङ्गेषु नाभिहृत्कण्ठकुक्षिषु ॥ ९९ ॥ लिङ्गे पायौ तथा चोर्वोर्मू-लयोश्चोरुमध्ययोः ॥ जान्वोस्ततो जानुवृत्तयुग्मयोः स्तनयोस्तथा ॥ १०० ॥ पार्श्वयोः पादयोः पाण्योर्नसि शीर्षे च विन्यसेत् ॥ प्रत्येकं मनुवर्णांश्च न्यासो-यन्तु द्वितीयकः ॥ १०१ ॥ पदान्येकादशान्येव शिरोभ्रूयुगलाक्षिषु ॥ वक्त्रे गण्डयुगे भूयो हृदये जठरे पुनः ॥ १०२ ॥ गुल्फोरुजानुपादेषु न्यासमेवं समा-चरेत् ॥ एवं न्यासत्रयं कुर्य्यान्मातृकान्यासपूर्वकम् ॥ १०३ ॥ हस्ताभ्यां कलश-द्वयामृतरसैरापूरयन्तं शिरो द्वाभ्यां तौ दधतं मृगाक्षवलयौ द्वाभ्यां वहन्तं परम् ॥ अंकन्यस्तकरद्वयामृतभरं कैलासकान्तं शिवं स्वच्छाम्भोजनिभं सदेन्दु-मुकुटं देवं त्रिनेत्रं भजे ॥ १०४ ॥ पञ्चाक्षरोदिते पीठे पूजयेद्वृषभध्वजम् ॥ मूर्तिं मूलेन संकल्प्य वक्ष्यमाणेन वर्त्मना ॥ १०५ ॥ पूर्वमङ्गानि सम्पूज्य मूर्तिं पश्चात्तु पूजयेत् ॥ पूर्वादिशादक्षिण्येनेशानाय सूर्य्यमूर्तये ॥ १०६ ॥ महादेवाय सोमेति मूर्तयेन्ते समुच्चरेत् ॥ भवाय क्षितिमूर्तये शर्वाय जलमूर्तये ॥ १०७ ॥ रुद्राय चाग्निमूर्तये उग्राय वायुमूर्तये ॥ भीमायाकाशमूर्तये ङेन्तं पशुपातिं तथा ॥ १०८ ॥ यजमानमूर्तयेचेति दलाग्रेषु ततो यजेत् ॥ रमा राका प्रभा ज्योत्स्ना पूर्णेषा पूरणी सुधा ॥ १०९ ॥ तृतीयावरणे चैताश्चतुर्थावरणे त्विमाः ॥ विद्या विश्वा सिता शुक्ला सारा साध्या शिवा निशा ॥ ११० ॥ आर्य्या प्रज्ञा प्रभा मोहा शान्तिः कान्तिर्धृतिर्मतिः ॥ पञ्चमावरणे चैताः षष्ठा-वरणगा अथ ॥ १११ ॥ धरा माया सती पद्मा शान्ता मायो द्वयामला ॥

---

१ त्र्यं नमः पूर्वे, बं पश्चिमे, कं याम्ये, यं उत्तरे, जां आग्नेय्याम्, मं नैर्ऋत्यां, हे वायव्ये, सुं ईशानकोणे, गं नमो नाभौ, धिं हृदये, पुं कण्ठे, ष्टिं कुक्षौ, वं लिंगे, र्द्धं पायौ, नं दक्षोरुमूले, उं वामोरुमूले, र्वां दक्षो-रुमध्ये, रुं वामोरुमध्ये, कं दक्षिणजानुनि, मिं वामजानुनि, वं दक्षजानुवृत्ते, बं वामजानुवृत्ते, न्धं दक्षस्तने, नात् वामस्तने, मृं दक्षपार्श्वे, त्योः वामपार्श्वे, मुं दक्षपादे, क्षीं वामपादे, यं दक्षपाणौ, माँ वामपाणौ मृं नासिकायाम्, तात् शीर्षे २ त्र्यम्बक नमः शिरसि यजामहे भ्रुवोः सुगन्धिमक्ष्णोः पुष्टिवर्धनं मुखे, उर्वारुकं कपोलयोः इव हृदये, बन्धनात् जठरे, मृत्योः ऊर्वोः मुक्षीयजान्वोः मागुल्फयोः मृतात्पादयोः, इति न्यासत्रयम् ।

सप्तमे लोकपालाश्च तदस्त्राणि तथाष्टमे ॥ ११२ ॥ जपेल्लक्षमिमं मन्त्रमेवं ध्यायेज्जितेन्द्रियः ॥ जुहुयाद्दशभिर्द्रव्यैरयुतं घृतसंयुतैः ॥ ११३ ॥ बिल्वं-पलाशं खदिरं वटं च तिलसर्षपौ ॥ पायसं दधि दूर्वां च तथैकेन सहस्रकम् ॥ ॥ ११४ ॥ तर्पयित्वाभिषिच्याथ ब्राह्मणांस्तर्पयेद्गुरुम् ॥ एवं कृते प्रयोगार्हो जायतेयं महामनुः ॥ ११५ ॥ अयुतं जुहुयाद्बिल्वसमिद्भिः सम्पदे सुधीः ॥ जुहुयाद्ब्रह्मवृक्षस्य समिद्भिर्ब्रह्मतेजसे ॥ ११६ खदिरैरयुतं हुत्वा शान्तिं पुष्टिमवाप्नुयात् ॥ समिद्भिर्वटवृक्षस्य जुहुयाच्च यथाविधि ॥ ११७ ॥ धनधान्यसमृद्धस्स्यादयुतेन तु साधकः ॥ तिलैस्तत्सङ्ख्यया हुत्वा सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ ११८ ॥ सिद्धार्थैरयुतं हुत्वा शत्रून्विजयते नृपः ॥ अनेनैव विधानेन न स्यान्मृत्युरकालतः ॥ ११९ ॥ पायसेन कृतो होमो रक्षाश्रीकीर्तिकान्तिदः ॥ गोदुग्धेन च सिद्धान्नं हुत्वा कृत्यां विनाशयेत् ॥ १२० ॥ अयमेव मतो होमः शान्तिश्रीसम्पदावहः ॥ दधिहोमेन संवादं कुर्याद्विद्वेषिणोर्मिथः ॥ १२१ ॥ प्रत्यहं जुहुयान्मन्त्री दूर्वामष्टोत्तरं शतम् ॥ आमयान्निखिलाञ्जित्वा दीर्घमायुरवाप्नुयात् ॥ १२२ ॥ जुहुयाज्जन्मदिवसे पायसान्नैर्घृतान्वितैः ॥ इच्छन्ननिन्दितां लक्ष्मीमारोग्यं विपुलं यशः ॥ १२३ ॥ गव्यदुग्धघृताक्ताभिर्दूर्वाभिर्जुहुयाद्वशी ॥ सविंशति शतं सम्यग्यज्जन्मदिवसे सुधीः ॥ आमयैः सकलैर्मुक्तो जीवेद्वर्षशतं सुखी ॥ १२४ ॥ काश्मरीसमिधः सर्पिःपयोन्नं त्रिशतं पृथक् ॥ जुहुयाद्ब्राह्मणानन्ते भोजयेन्मधुरान्वितम् ॥ ॥ १२५ ॥ प्रीणयेद्बहुधान्याद्यैरात्मनो गुरुमादरात् ॥ अनामयमवाप्नोति दीर्घमायुः श्रिया सह ॥ १२६ ॥ सघृतेन पयोन्नेन हुत्वा पर्वणि-पर्वणि ॥ राज्यश्रियमवाप्नोति षण्मासान्नात्र संशयः ॥ १२७ ॥ लाजैर्विशुद्धैर्जुहुयात्कन्या चैव वराप्तये ॥ क्षीरद्रुमसमिद्धोमाद्ब्राह्मणादीन्वशं नयेत् ॥ ॥ १२८ ॥ स्नात्वा सहस्रं प्रजपेदादित्याभिमुखो मनुम् ॥ आधिव्याधिविनिर्मुक्तो दीर्घमायुरवाप्नुयात ॥ अनेन मनुना सर्वं साधयेदिष्टमात्मनः॥ १२९॥ अथ दारिद्र्यनाशाय वक्ष्ये मन्त्रं धनेशितुः ॥ मेधातिथिर्ऋषिः प्रोक्तो गायत्रं छन्द ईरितम् ॥ १३० ॥ अङ्गन्यासकरन्यासा देवता सदसस्पतिः ॥ जपं

कुर्य्याच्च मासे तु चत्वारिंशत्सहस्रकम् ॥ १३१ ॥ देवताप्रीतये कार्य्यः षण्मासं तु मनोर्जपः॥पुरश्चरणमेतत्स्यात्स्वशक्त्या विप्रभोजनम्॥ १३२॥ अश्वारूढं कुन्तपाणिं कुबेरं चित्रिणीप्रियम् ॥ निधीश्वरं स्वर्णवर्णं वन्दे गन्धर्वनायकम्॥ ॥ १३३ ॥ अथ मन्त्रः ॥ सदस्पतिमद्भुतं प्रेयमिन्द्रस्य काम्यत्सनिं ते धामयाशिषम् ॥ ॥ १३४ ॥ चत्वारिंशत्सहस्रं यः प्रतिमासं जपेन्नरः महाभाण्डारिकः कुर्य्यात्तस्य दारिद्र्यनाशनम् ॥१३५॥ सर्वार्थसाधकं वक्ष्ये संग्रामविजयप्रदम् ॥ जलन्धरवधायाहं यत्स्मरामि शृणुष्व तत् ॥ १३६ ॥ जातवेदसे सुनवाम सोममरातीयतो निदहाति वेदः ॥ स नः पारिषदति दुर्गाणि विश्वा नावेव सिन्धुं दुरितात्यग्निः ॥१३७॥ त्रिष्टुप्छन्दो मुनिश्चास्य मरीचिः कश्यपो मतः ॥ देवता जातवेदोऽग्निः षडङ्गानि समाचरेत्॥ १३८॥ नवागषट्सप्तनागसप्तभिर्मनुवर्णकैः॥ अंगुष्ठयोर्गुल्फयोश्च जङ्घयोर्जानुनोस्तथा ॥ १३९॥ ऊर्व्वोः कट्योर्लिङ्गनाभ्योर्हृदये स्तनयोस्तथा ॥ १४० ॥ पार्श्वयोश्च तथा पृष्ठे स्कन्धयोरन्तरे तयोः॥ बाह्वोश्चैवोपबाह्वोश्च द्वयोः कूर्परयोरपि॥ १४१॥ प्रकोष्ठद्वितये चापि मणिबन्धद्वये तथा ॥ करयोस्तलयोरास्ये नस्यक्ष्णोश्चैव कर्णयोः ॥१४२॥ भ्रुवोश्चैव तु मास्तिक्ये मूर्द्धनीति द्वितियकः । शिखायां

---

१ॐ जातवेदसे सुनवाम अंगुष्ठाभ्यां नमः, सोममरातीयतस्तर्जनीभ्यां नमः, निदहाति वेदः मध्यमाभ्यां नमः, स नः पारिषदति अनामिकाभ्यां नमः, दुर्गाणि विश्वा नावेव कनिष्ठिकाभ्यां नमः, सिन्धुं दुरितात्यग्निः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः ॥ एवं हृदयादिन्यासः ॥ अथाक्षरन्यासः ॥ जा दक्षपादांगुष्ठे, त वामपादांगुष्ठे, वे दक्षगुल्फे, द वामगुल्फे, से दक्षजङ्घायाम्, सु वामजघने, न दक्षजानुनि वा वामजानुनि म दक्षोरौ, सो वामोरौ, म कट्याम्, मलिङ्गे रानाभौ, ती हृदये, य दक्षस्तने, तो वामस्तने, नि दक्षपार्श्वे, द वामपार्श्वे, हा पृष्ठे, ति दक्षस्कन्धे, वे वामस्कन्धे, दः दक्षस्कन्धांतरे, स वामस्कन्धान्तरे, ना दक्षबाहौ, प वामबाहौ, रि दक्षापबाहौ ष वामोपबाहौ, द दक्षकूर्परेति वामकूर्परे, दुर्दक्षप्रकोष्ठे, गा वामप्रकोष्ठे, णि दक्षमणिबन्धे, वि वाममणिबन्धे, श्वादक्षकरतले, न वामकरतले वे मुखे' व नासिकायाम्, सिं दक्षिणनेत्रे, धुं वामनेत्रे. दु दक्षकर्णे, रि वामकर्णे, ता भ्रुवोर्मध्ये, त्यमस्तके ग्निः मूर्द्धनि॥ २अथ पदन्यासः ॐ जातवेदसे शिखायाम् सुनवाम ललाटे; सोमं नेत्रयोः अरातीयतः कर्णयोः, निदहाति ओष्ठे, वेदः अधरे, सः जिह्वायाम् नः कण्ठे, पारिषदति बाह्वोः, दुर्गाणि हृदि विश्वा कुक्षौ, नावा कटौ, इव गुह्ये, सिन्धुं ऊर्व्वोः, दुरिता जान्वोः, अति जंघयोः, अग्निः पादयोः ॥

च ललाटे च नेत्रयोः कर्णयोस्तथा ॥ १४३ ॥ ओष्ठेधरे च जिह्वायां कण्ठे बाह्वोस्तथा हृदि ॥ कुक्षौ कटौ च गुह्ये च ऊर्वोर्जान्वोश्च जङ्घयोः ॥ पादयोश्च पदन्यासः प्रोक्तोयं ध्यानमुच्यते ॥ १४४ ॥ विद्युद्दामसमप्रभां मृगपतिस्कन्धस्थितां भीषणां कन्याभिः करवालखेटविलसद्धस्ताभिरासेविताम् ॥ हस्तैश्चक्रवरासिखेटविशिखां पाशांकुशा[१] तर्जनीं बिभ्राणामनलात्मिकां शशिधरां दुर्गां त्रिनेत्राम्भजे ॥ १४५ ॥ कृत्वा तु सर्वतोभद्रं पूर्वोक्तं मण्डलं शुभम् ॥ तत्कर्णिकायां षट्कोणे मण्डूकाद्यान्समर्चयेत ॥ १४६ ॥ पूर्वोक्तान्परतत्वांस्तान्केशरेषु तदग्रतः ॥ जयाञ्च विजयाम्भद्रां रुद्रां कालीं च पूर्वतः ॥ १४७ ॥ सुमुखीं दुर्मुखीं चन्द्रमुखीं सिंहमुखीं तथा ॥ मध्ये दुर्गां यजेत्पश्चादासनं सिंहमन्त्रतः ॥१४८॥ तारमुक्त्वा वज्रनखदंष्ट्राय च महा ततः॥ सिंहाय हुं फट् ह्रचेति मन्त्रः सप्तदशाक्षरः ॥ १४९ ॥ मूर्तिं मूलेन सङ्कल्प्य तस्यामावाह्य पूजयेत् ॥ केशरेषु षडङ्गानि पूर्वतोष्टदले पुनः ॥ १५० ॥ जातवेदाः सप्तजिह्वो द्वितीयो हव्यवाहनः ॥ ततश्चोदरजं वैश्वानरकौमारतेजसम् ॥१५१॥ विश्वमुखं देवमुखं पीठे कोष्ठचतुष्टये ॥ धरात्मानं जलात्मानं वह्न्यात्मानं निरात्मकम् ॥ १५२ ॥ निवृत्तिश्च प्रतिष्ठा च विद्या शान्तिश्च गौणिका ॥ पूषावाण्यौ ततो वीथी शची तोयात्मिका तथा ॥१५३॥ नित्या दयावती चैव ह्यष्टमीकारिणीमता॥तथैव नवमी नाम्ना प्रोक्ता चैव तिरस्क्रिया ॥१५४॥देवमाता च दमना प्रिया पश्चान्निरूप्यते॥समाराध्या नन्दिनी च शरीरेषुविमर्दिनी॥१५५॥पद्माख्या दण्डिनी तिग्मा दुर्गा गायत्र्यतःपरम्॥निरवद्या विशालाक्षी सौम्या सायं निरूप्यते ॥१५६॥ स्वरोद्वाहा नादिनी च वेदना वह्निगर्भिणी॥सिंहवासा च धूम्रा च दुर्विषहा रिरंसुका॥१५७॥तापहरा त्यक्तदोषानिस्सपत्नेति तद्बहिः॥ लोकपालांस्तदस्त्राणि पूजां प्राग्वत्समापयेत् ॥१५८॥ मन्त्रं वर्णसहस्राणि जपेद्धोमं पृथक्पृथक् ॥ वेदवेदाब्धिसङ्ख्याकं तिलसिद्धार्थचित्रजैः ॥ १५९ ॥ मूलैश्च समिधाभिश्च वटोदुम्बरपैप्पलैः ॥ अर्कप्लक्षोद्भवैश्चापि घृतेन हविषान्नकैः ॥ १६० ॥ सर्वैर्घृताक्तैर्जुहुयात्तिलैश्चान्ते

१ ॐ वज्रनखदंष्ट्राय महासिंहाय हुं फट् नमः इति सिंहपूजनमन्त्रः ॥ २ भागुरिमते टाप् ॥

घृताहुतीः ॥ ततस्सन्तर्प्य सतिलैः कृत्वा चात्माभिषेचनम् ॥१६१॥ समाराध्य धरादेवीं तोषयेद्गुरुमात्मनः ॥ इत्थञ्जपादिभिः सिद्धे मन्त्रेस्मिन्साधकोत्तमः ॥ १६२ ॥ आग्नेयास्त्राधिकारी स्यात्तद्विधानमितीर्य्यते ॥ आग्नेयास्त्रमिति प्रोक्तं विलोमग्रथितो मनुः ॥ १६३ ॥ पूर्वोक्ता एव मुन्याद्याः षडङ्गानि विलोमतः ॥ [1]त्यतारिदुर्गु सिं प्रोच्चार्य्यात्र हृदयं मतम् ॥१६४॥ ववेनाश्वा विणिर्गाद्दु शिरोन्यासः प्रकीर्तितः ॥ [2]एवमग्रेपि जानीहि पूर्वोक्तार्णविलोमतः ॥ १६५ ॥ पूर्वोक्तसङ्ख्यकैर्वर्णैर्वर्णन्यासस्तथैव च ॥ तथैव च पदन्यासो जपः पूजा च पूर्ववत् ॥ १६६ ॥ पञ्चगव्यसुपक्वेन चरुणा-तस्य सिद्धये ॥ चतुस्सहस्रं च शतं चत्वारिंशच्चतुष्टयम् ॥ १६७ ॥ होमयेदर्च्चनं प्राग्वज्जपश्च प्रतिलोमतः ॥ सर्वत्र देशिकः कुर्य्याद्गायत्र्या द्विगुणं जपम् ॥ १६८ ॥ क्रूरकर्म्मणि कुर्वीत प्रतिलोमविधानतः ॥ शान्तिकं पौष्टिकं कर्म्म कर्त्तव्यमनुलोमतः ॥ १६९ ॥ [3]ईयाद्यः पञ्चाक्षरः पादो ज्ञेयो ज्ञानेन्द्रियात्मकः ॥ [4]धुमाद्यः पञ्चवर्णो द्वितीयः कर्म्मेन्द्रियात्मकः ॥ १७० ॥ [5]श्वाद्यस्तृतीयः पञ्चार्णः सर्वभूतमयः स्मृतः ॥ [6]त्याद्यः सप्ताक्षरः पादश्चतुर्थो धातुरूपकः ॥ १७१ ॥ दः पूर्वः पञ्चमः पाद ऊर्म्मिरूपः षडक्षरः ॥ तो वर्णादिः षडर्णोन्त्यः षट्कौशिकमयो मतः ॥ १७२ ॥ सोपूर्वः पञ्चवर्णोन्त्यः शब्दादिमय ईरितः ॥ से वर्णाद्योष्टमो ज्ञेयः पञ्चार्णा वचनादिकः ॥१७३॥ एवं तत्त्वसमायोगार्त्परिक्लृप्तिरुदीरिता ॥ तत्तत्पादाक्षरोत्पन्नास्ताराद्या वह्निदेवताः ॥ १७४ ॥ प्रधानमूर्तिप्रतिमाः स्वस्वकर्म्मेरितप्रभाः ॥ प्रज्वलत्केशवसना भीमदंष्ट्रा भयावहाः ॥ १७५ ॥ देवता इन्द्रियोत्पन्ना ऊर्ध्वहस्तय ई-

१ तिदपरिपनः स शिखायै वषट्, ॥ २ दः वेति[illegible]नि कवचायहुम, तोयती राममसो नेत्रत्रयाय वौषट्, मयानसु सेदवेतजा अस्त्राय फट् ॥ मन्त्रस्य विलोमेन अक्षरैः पादकल्पना क्रियते ॥ ३ श्रोत्रत्वक्जिह्वाघ्राणचक्षूंषि इमानि पञ्च ज्ञानेन्द्रियाणि ॥ ४ वाक्पाणिपादपायूपस्थानीमानि पञ्च कर्मेन्द्रियाणि ॥ ५ पृथ्व्यप्तेजोवाय्वाकाशानि पंचमहाभूतानि ॥ ६ त्वग्रक्तमांसमेदोस्थिमज्जाशुक्राणि सप्त धातवः ॥ एते सप्त धातवः ॥ ७ बुभुक्षा च पिपासा च प्राणस्य मनसस्तथा ॥ शोकमोहौ शरीरस्य जन्ममृत्यू षडूर्मयः ॥ ८ पादाक्लृप्तिरुदीरितेति वा पा० ॥

रिताः ॥ देवता भूतपादोत्थास्तिर्य्यंग्नेत्र्याः[1] प्रकीर्तिताः ॥ १७६ ॥ धातुरूपाक्षरोत्पन्ना उभयात्मदृशो मताः ॥ ऊर्म्मिजा ऊर्ध्ववदनाः कोशोत्थास्तिर्य्यगाननाः ॥ १७७ ॥ अर्थसङ्ख्यासमुत्पन्ना देवता द्विदिगाननाः ॥ एताः सर्वास्स्मृताः क्लीबा इन्द्रियार्थोद्भवास्स्त्रियः ॥ १७८ ॥ याम्यो मन्त्री दहेच्छत्रो राष्ट्रं सगिरिकाननम् ॥ अस्त्रं मनुष्यनक्षत्रे प्रारभेत विचक्षणः ॥ ॥ १७९ ॥ आसुरेषु प्रयुञ्जीयाद्देवतासु शुभं हरेत् ॥ उपक्रमेत नन्दासुरिक्तास्वस्त्रं विसर्जयेत् ॥ ॥ १८० ॥ भद्रास्वाहरणं कुर्य्याज्जपादेः कार्य्यमुत्तमम् ॥ उपक्रमो भौमवारे शनिवारे विसर्जयेत् ॥ १८१ ॥ प्रतिसंहरणं वारे गुरोः शुक्रस्य वा भवेत् ॥ स्थिरेषु राशिष्वारम्भश्चरेषु स्याद्विसर्जनम्॥ ॥ १८२ ॥ अस्त्रसंहरण कुर्य्यादुभयेषु विचक्षणः ॥ कृष्णपक्षे चरेदस्त्रं विसृजेच्छशिना पुनः ॥ १८३ ॥ शुक्लपक्षक्रमादस्त्रं पुनरात्मनि संहरेत् ॥ भानुना मोक्षसंहारौ कुर्य्यात्पक्षद्वये सुधीः ॥ १८४ ॥ पश्चिमाभिमुखो भूत्वा सर्वकर्म्माणि साधयेत् ॥ नक्षत्रवृक्षसकलान्साध्याख्यान्कर्म्मसंयुतान् ॥ ॥१८५॥ राजीतैलेन सतिलान्पृथक्सप्तसहस्रकम् ॥ जुहुयात्संयतो भूत्वा रिपुर्यमपुरं व्रजेत् ॥ १८६ ॥ सप्तरात्रं प्रजुहुयात्सिद्धार्थस्नेहसंयुतैः ॥ आर्द्रवस्त्रो वृष्टिकाले मरीचैर्मनुनामुना॥ १८७॥ निगृह्यते ज्वरेणारिः प्रलयाग्निसमेन सः॥ तालपत्रे समालिख्य शत्रुनाम यथाविधि ॥ १८८॥ आग्नेयास्त्रेण संवेष्ट्य कुण्डमध्ये निखन्यते॥ मारिचैश्च हुते तस्मिञ्ज्वराक्रान्तः स जायते॥ १८९॥ तदादाय क्षिपेत्तोये शीतले स वशो भवेत्॥ सामुद्रसालिलं हिंगुं विषं जीरकलोहिते ॥ १९० ॥ क्वथिते पुत्तलिं कृत्वा नक्षत्रतरुनिर्मिताम् ॥ अधोवक्त्रां विनिक्षिप्य यष्ट्या विषतरूत्थया ॥ १९१ ॥ तच्छिरस्ताडनं कुर्य्याज्जपन्मन्त्रं विलोमतः ॥ सप्ताहान्मरणं याति शत्रुर्ज्वरविमोहितः ॥ १९२ ॥ आदित्यरथनागेन्द्रग्रस्तांघ्रिं तद्विषाततम् ॥ नग्नं तैलेन लिप्ताङ्गं दग्धं भानुमरीचिभिः ॥ १९३ ॥ अधोमुखं निजरिपुं ध्यात्वा क्वथितवारिणा ॥ तर्पयेद्भानुमालोक्य शत्रुर्मृत्युप्रियो भवेत् ॥१९४॥ बिभ्रतीं मुसलं शूलं ध्यायेत्कालघनप्र-

१ तिर्यग्वक्त्राः वेतिपाठः ॥

भाम्॥कार्पासबीजैर्निंबस्य पत्रैर्मेषीघृतप्लुतैः ॥ हुत्वा विद्वेषयेच्छत्रुं नखेनाहत्य देशिकः ॥ १९५ ॥ बिभ्राणां तर्जनीं शूलं ध्यात्वा दुर्गाम्भयङ्कराम् ॥ ॥ १९६ ॥ महिषीघृतसंसिक्तैः पल्लवैर्विषवृक्षजैः ॥ हुत्वा रिपोर्महासेनामुच्चाटयति मन्त्रवित् ॥ १९७ ॥ ध्यात्वा देवीं पुरा प्रोक्तां चरुभिर्मरिचान्वितैः ॥ अजारुधिरसंसिक्तैर्जुहुयाद्दिवसत्रयम् ॥ रिपोरुच्चाटनं कुर्यात्सेनायानात्र संशयः ॥ १९८ ॥ अग्निशूलाकुलां दुर्गां ज्वलन्तीं प्रलयाग्निवत् ॥ ध्यात्वा सर्षपतैलाढ्यैर्बीजैर्धत्तूरसम्भवैः ॥ हुत्वा विमोहयेच्छत्रुं मरिचैर्वा ससर्षपैः ॥ १९९ ॥ कालाञ्जननिभां दुर्गां शूलखड्गकरां स्मरेत् ॥ नक्षत्रवृक्षसम्भूतैर्व्रणवृक्षजसञ्ज्ञकैः ॥ समिद्वरैः प्रजुहुयाज्जयेन्मासेन वैरिणम् ॥ ॥२००॥सिंहारूढां प्रधावन्तीं धावमानं रिपुं प्रति ॥ शरान्कार्मुकनिर्मुक्तान्वह्निज्वालामुखाकुलान् ॥ २०१ ॥ मुञ्चंतीं संस्मरन्दुर्गां तर्पयेदुष्णवारिणा ॥ भानुबिम्बं समालोक्य शत्रोरुच्चाटनं भवेत् ॥ २०२ ॥ अतिदुर्गाममोघर्ष्टिगदाहस्तां विचिन्तयेत् ॥ विद्युद्दामसहस्राभां महिषीघृतसम्प्लुतैः॥ पुरोक्तैर्जुहुयान्निम्बविभीतकसमिद्वरैः ॥ कोद्रवैरथ शत्रोश्च सेनायास्स्तम्भनं भवेत् ॥ ॥ २०३ ॥ इषुजालाङ्कुशाढ्यांगां नित्यं दुर्गामनुस्मरेत् ॥ लवणैर्मधुरैस्साध्यकाष्ठैर्वा ह्येधितेनले ॥ जुहुयान्निशि सप्ताहान्मंत्रविद्वशयेन्नृपान् ॥ २०४ ॥ पाशांकुशधरां रक्तां विश्वदुर्गां विचिन्तयेत् ॥ फलिनीकुसुमैः फलैश्चन्दनाम्भस्समुक्षितैः ॥ जुहुयान्निशि यो मन्त्री तस्य विश्वं वशं भवेत् ॥२०५॥ शरच्चंद्रनिभां देवीं विराजत्परमामृताम् ॥ पाशांकुशकरां ध्यात्वा सिन्धुदुर्गां समिद्वरैः ॥ वेतसैर्मधुरासिक्तैर्जुहुयाद्वृत्तिसिद्धये ॥ २०६ ॥ जपाकुसुमसंकाशामग्निदुर्गां विचिन्तयेत ॥ हुनेल्लवणपुत्तल्या मधुरत्रययुक्तया ॥ आकर्षेद्वाञ्छितां साध्यां मन्त्रविन्नात्र संशयः ॥ २०७ ॥ अतिदुर्गेयमत्याद्या षडंतादिस्समीरिता ॥ दुवर्णांता तथान्याद्या गानि दुर्गा प्रकीर्तिता ॥ २०८ ॥ विश्वाद्या चैव मंत्रेस्मिन्विश्वदुर्गा समीरिता ॥ २०९ ॥ सिन्ध्वाद्या सावकारांता सिंधुदुर्गा निगद्यते ॥ त्यांतामग्न्यादिकामेवमग्निदुर्गां विदुर्बुधाः ॥ २१० ॥ अङ्गणे स्थंडिलं कृत्वा सुगन्धिकुसुमादिभिः ॥ देवीं तत्रार्चये-

१ क्षणात्सेनामुच्चाटयति वा पा० । २ विगलदिति पा० ॥

न्नित्यं प्रागुक्तेनैव वर्त्मना ॥ २११ ॥ आहरेद्रात्रिषु बलिं चरुणा सर्वसिद्धिदम् ॥ कृत्यारोगभयद्रोहभूतानि नाशयेदयम् ॥ २१२ ॥ यथावदग्निमाराध्य गन्धैः पुष्पैर्मनोहरैः ॥ स्थित्वा तस्याग्रतो मंत्री जपेन्मन्त्रमनन्यधीः ॥ जपोयं सर्वसिद्ध्यै स्यान्नात्र कार्या विचारणा ॥२१३ ॥ लवणैर्मधुरासिक्तैर्जुहुयात्पश्चिमामुखः ॥ मन्त्रार्णसंख्यया मंत्री रिपुमात्मवशं नयेत ॥२१४॥ शालीन्प्रक्षाल्य संशोध्य शुद्धान्कुर्वीत तण्डुलान् ॥ निवास्य पञ्चगव्येषु संस्कृते हव्यवाहने ॥२१५॥ पाचयेच्च जपन्मन्त्रमवतार्य पुनः सुधीः ॥ अर्चयित्वा विशदधीः समिद्धेग्नौ यथा पुरा ॥ २१६ ॥ जुहुयाच्चरुणाज्येन तथा चाष्टसहस्रकम् ॥ पत्रे संतापनं कुर्यात्साध्यं तत्प्राशयेद्गुरुः ॥२१७॥ शिष्यं तं पूजयेद्वारि संपातं प्राङ्गणांतरे ॥ कृत्यावेगा विनश्यन्ति सहभूतग्रहामयैः ॥ परैरुत्सादिता कृत्या पुनस्तानेव भक्षयेत् ॥ २१८ ॥ व्रीहिभिर्हविषा क्षीरैः पयोवृक्षसमिद्वरैः ॥ आज्यैर्मधुत्रयोपेतैर्मन्त्रैर्दशशतं पृथक् ॥ जुहुयात्सम्पदां भूमिः साधको भवति ध्रुवम् ॥ २१९ ॥ भास्करे मेषराशिस्थे मंत्रज्ञानगुणे दिने ॥ गत्वा नद्यां जपन्मन्त्रं सततं पुष्कलाम्भसि ॥ ॥ २२० ॥ उद्धृत्यादाय सिकताः संशोध्य परिशोधयेत् ॥ न्यस्य ताः पञ्चगव्येषु संभूते हव्यवाहने ॥ भर्जयेन्मनुना सिद्ध्यै दर्व्या ब्रह्मतरूत्थया ॥ २२१ ॥ सिंहमेषधनुःस्थेर्के कृष्णपक्षेष्टमीतिथौ ॥ विशाखाकृत्तिकामूलहस्तोत्तरमघास्वथ ॥ २२२॥ रोहिण्यां श्रवणे वारे मन्दवाक्पतिदैवते ॥ विहायान्येषु कुर्वीत सिकतास्थापनं सुधीः ॥ २२३ ॥ गृहग्रामादिराष्ट्राणां रक्षार्थं सिकताः शुभाः ॥ प्रस्थाढकघटोन्माना मध्यादिष्ववरेष्विमाः ॥ ॥ २२४ ॥ नवसु प्रक्षिपेज्जप्त्वा तेषु सम्पूजयेत्क्रमात् ॥ मध्यादिदेवीमन्त्राणि कपालान्तानि देशिकः ॥ २२५ ॥ चक्रं शङ्खमसिं खेटं बाणांश्चापं त्रिशूलकम् ॥ कपालं स्वस्वमन्त्रेण सम्पूज्यान्ते बलिं हरेत् ॥२२६॥ नक्षत्रग्रहराशीनां लोकेशानां बलिं हरेत् ॥ विहिता यत्र रक्षा या वर्धन्ते तत्र सम्पदः ॥ २२७ ॥ क्षुद्रग्रहमहारोगभयभूतसरीसृपाः ॥ अमुना विलयं यान्ति विधिना नात्र संशयः ॥ २२८ ॥ सिकातानां विशुद्धानां कुडवाश्चापि

१ चतुर्भिः पलैः कुडव उच्यते ॥

षोडश ॥ पञ्चगव्ययुते पात्रे ब्रह्मवृक्षेण निर्मिते ॥ २२९ ॥ निक्षिपेद्विधिना यत्र तत्र तिष्ठन्ति सम्पदः ॥ दिनेदिने प्रवर्धन्तेऽकालवृष्ट्यादिभिः सह॥२३०॥ महोत्पाता विनश्यन्ति कृत्याद्रोहामयग्रहाः ॥ चरुगव्याश्मनां कुर्य्यात्स्थापनं विधिनामुना ॥ २३१ ॥ गोमूत्रं प्रस्थमात्रं स्याद्गोमयंस्यात्तदर्धकम् ॥ आज्यात्सप्तगुणं क्षीरं गोमूत्रात्त्रिगुणं दधि ॥ २३२ ॥ गोमूत्रेण समं सर्प्पिः सर्वं वा सममुच्यते ॥ गावः स्युः कपिलाः श्वेताः सितधूम्रारुणप्रभाः॥२३३॥ अभावे च सिताः सर्वाः सर्वं वा कपिलोद्भवम् ॥ एकोनपञ्चाशत्कोष्ठे फलके ब्रह्मशाखिनः ॥ २३४ ॥ विहाय कोणकोष्ठानि मध्यकोष्ठे लिखेच्च ह्रीम् ॥ तदूर्ध्वकोष्ठमारभ्य प्रादक्षिण्येन संलिखेत् ॥ २३५ ॥ देवीं तत्र समावाह्य पूजयेदुपचारकैः ॥ कृत्वा होमन्तु सम्पातं निखनेत्तद्यथा पुरा ॥ दद्याद्बलिं यथापूर्वं तस्य पूर्वोदितं फलम् ॥ २३६ ॥ नवकोष्ठान्वितं लेख्यं चतुरस्रं सुशोभनम् ॥ साध्यनामान्वितां मायां मध्यकोष्ठे तु संलिखेत् ॥ २३७ ॥ तदधःकोष्ठमारभ्य प्रादक्षिण्येन संलिखेत् ॥ मूलमन्त्रस्य पूर्वोक्तानष्टौ पादांश्च तद्बहिः ॥ २३८ ॥ वृत्तद्वयान्तराले तु मातृकार्णैः प्रवेष्टयेत् ॥ तद्बहिश्च-तुरस्रं स्याद्धारणामन्त्रमद्भुतम्॥सर्वभूतभयहरं श्रीकीर्त्यायुःप्रदं शुभम्॥२३९॥ आग्नेयास्त्रस्य जानाति विसर्गादानकर्म्मणी ॥ यः पुमान्सगुणैः श्रेष्ठस्तस्याधीनं जगत्त्रयम् ॥ २४० ॥ अतिदुर्गामनुं वक्ष्ये यद्दिनास्त्रमितीर्यते ॥ प्रतिलोम-मिमं मन्त्रं कृत्यास्त्रं परिचक्षते ॥ २४१ ॥ अतिदुर्गाणि विश्वानावेव सिन्धुं दुरितात्यग्निः ॥ जातवेदसे सुनवाम सोममरातीयतो निदहाति वेदः स नः परिषत् ॥ २४२ ॥ अङ्गन्यासस्तु पूर्वोक्तो वर्णन्यास इतीरितः ॥ क्रमेणा-नेन वर्णानाम्पदानां न्यास इष्यते ॥ २४३ ॥ ध्यानं चैव पुरा प्रोक्तं कृत्या-स्त्रस्य विलोमतः ॥ न्यासादिकं तथा ध्यानं मुनिश्छन्दश्च पूर्ववत् ॥२४४॥ पुरश्चर्य्यादिकं सर्वं प्रयोगान्कीर्त्तयाम्यहम् ॥ भानुबिम्बगतं शत्रुं मध्ये वक्रं विषाहतम् ॥ २४५ ॥ मूलादुत्थितया ग्रस्तं कुण्डल्या भावयेत्सुधीः ॥ मूलाधारेपि चेत्सद्यस्तस्य कालं स भावयेत् ॥ दिनद्वयाज्ज्वराक्रान्तो रिपुः

१ षोडशपलैः प्रस्थः ।

प्राणान्विमुञ्चति ॥ २४६ ॥ दिनास्त्रेण प्रविद्धाङ्गं स्वाधिष्ठानगतं रिपुम् ॥ पञ्चवायुसमिद्धेन चाग्निना दग्धविग्रहम् ॥ ध्यायेन्मनुं जपेत्सद्यः स भवेद्यमवल्लभः ॥ २४७॥ मणिपूरगतं शत्रुमग्निना दीप्तविग्रहम्॥ध्यायन्दिनास्त्रं प्रजपेत्स मृत्युवशतां व्रजेत् ॥ २४८ ॥ अनाहितो हतः शत्रुर्निर्दग्धो मन्त्रवह्निना ॥ पाशेन बद्ध्वा शीघ्रं स नीयते यमकिङ्करैः ॥ २४९ ॥ विशुद्धस्थानगो वैरी दिनबाणेन पूरितः ॥ अधोमुखः स्मृतस्तूर्णम्परासुः स्याद्दिनत्रयात् ॥ २५० ॥ आज्ञायां निहितं शत्रुं दहेद्बाणाग्निना धिया ॥ पुत्रमित्रकलत्रादिसहितो मृत्युमाप्नुयात्॥ ॥ २५१ ॥ नाभिमात्रे जले स्थित्वा ध्यायेद्बिम्बं दिनेशितुः ॥ वैरिणं दग्धसर्वाङ्गं मन्त्रमष्टोत्तरं शतम् ॥ जपेत्सप्त दिनादर्वाग्यमलोकं स गच्छति॥ ॥ २५२ ॥ आरवारं समारभ्य सप्ताहं प्रजपेन्मनुम् ॥ सूर्य्योदयं समारभ्य यावदस्तमयो भवेत् ॥ सन्निपातपराविष्टो यमग्रस्तो भवेदरिः ॥ २५३ ॥ स्थित्वा दुर्गालये मन्त्री त्रिरात्रं वर्जिताशनः ॥ दिने वा मन्त्रविद्धाङ्गं वैरिणं प्रविचिन्तयेत् ॥ जपेन्मनुमिमं शत्रुर्ज्वरितो मरणं व्रजेत् ॥ २५४ ॥ दृष्ट्वा-दुर्गां जपेन्मन्त्रमजस्रं स्वरिपुं स्मरन्॥शूलप्रोतशरीरन्तु दिनास्त्रेण प्रपीडितम् ॥ ज्वरेण महताविष्टो जायतेऽसौ यमातिथिः ॥ २५५ ॥ रविमण्डलगं शत्रुं दष्टं तद्रथपन्नगैः ॥ विषाग्निदग्धसर्वाङ्गं ध्यायेदुष्णेन वारिणा ॥ तर्प्पयेद्दिनबाणेन स्यादसौ यमवल्लभः ॥ २५६ ॥ रविबिम्बादागतया ज्वालया ग्रस्तविग्रहम् ॥ रिपुं ध्यात्वा जपेन्मन्त्रं स प्रयाति यमान्तिकम् ॥ २५७ ॥ ग्रहग्रस्ताग्रबिम्बस्थं विद्धं मन्त्रमयैः शरैः ॥ प्रतिपद्घातितं शत्रुं जपेदयुतमन्त्रवित् ॥ रिपुन्नयति शीघ्रं तं यमदूतो यमालयम् ॥ २५८॥ प्रलयानलसंकाशां कालरात्रिमिवापराम् ॥ शूलपाशधरां घोरां सिंहस्कन्धं निषेदुषीम् ॥ २५९ ॥ सवितुर्मण्डलान्तःस्थां रक्तनेत्रत्रयोद्भवैः ॥ विस्फुलिङ्गैर्निर्दहन्तीं रिपुमाकुलविग्रहम् ॥ २६० ॥ स्वेष्टदंष्ट्राधरां नृत्यद्भ्रुकुटीभीषणाननाम् ॥ तर्जयन्तीं निजं शत्रुं तर्जन्या भीमरूपया ॥ २६१ ॥ दंष्ट्रामयूखजालेन द्योतयन्तीं दिगन्तरम् ॥ शूलेन वैरिणो वक्षो दारयन्तीं भयंकराम् ॥ २६२ ॥ जपेद्दिनत्रयं धीमान्मारयेद्रिपुमात्मनः ॥ अस्त्रमन्त्रकृतन्यासः प्रलयाग्निसम-

---

१ मंगलवारम्।

प्रभः ॥ २६३ ॥ रक्तवस्त्रधरां क्रुद्धां रक्तनेत्रत्रयावृताम् ॥ सिंहाधिरूढा धावन्तीं धावमानं रिपुं प्रति ॥ खड्गेन तच्छिरश्छित्त्वा क्षणाद्व्योमस्थलं गताम् ॥ २६४ ॥ ध्यात्वा दुर्गां जपेन्मन्त्रं त्रिदिनं वर्जिताशनः ॥ अनेनैव विधानेन रिपुर्मृत्युप्रियो भवेत् ॥ कर्म्माण्येतानि कुर्वीत दिवसे न तु रात्रिषु ॥ २६५ ॥ तस्माद्दिनाख्यमित्युक्तमथ रात्र्यस्त्रमुच्यते ॥ पश्चिमाभिमुखं न्यस्य सजीवं माहिषं पुरः ॥ २६६ ॥ निखाय तस्य शिरसि कुण्डं कृत्वा त्रिकोणकम् ॥ तस्मिन्समेधिते वह्नौ यथावद्देशिकोत्तमः ॥ २६७ ॥ सत्रिकोणाः मन्त्रवर्णाः साध्यनामसमन्विताः॥भुजरक्तेन संसिक्ताः कारस्करसमिद्वराः ॥ सहस्रं जुहुयाद्ध्यात्वा देवीं सवितृमण्डले ॥ २६८ ॥ प्रलयाग्निसमां घोरां द्वात्रिंशद्भुजशोभिताम् ॥ उद्यदायुधसन्दीप्तां नृत्यन्तीं सिंहमस्तके ॥ २६९ ॥ महादंष्ट्रां महाभीमां ज्वलत्केशां नदन्मुखीम् ॥ रक्तार्द्रमांसवसनां घूर्णितोग्रत्रिलोचनाम् ॥ २७० ॥ अनेन विधिना शत्रुर्महाज्वरनिपीडितः ॥ विमुञ्चति निजं देहं पुत्रमित्रादिभिः सह ॥ २७१ ॥ ऊर्ध्ववक्त्रांस्ततो मन्त्री लम्बयित्वा भुजङ्गमान् ॥ भानुबिम्बगतां दुर्गां सहस्रादित्यसन्निभाम् ॥ २७२ ॥ सहस्रपाणिचरणां सहस्राक्षिशिरोमुखीम् ॥ सहस्रनागबद्धाङ्गीं त्रासयन्तीं जगत्त्रयम् ॥ २७३ ॥ ध्यायन्मन्त्रेण तेनैव तर्प्पयेदुष्णवारिणा ॥ संयतः कालपाशेन वैरी मुञ्चेत्स्वजीवितम् ॥ २७४ ॥ मध्याह्नार्कायुतप्रख्यां नदन्तीं नरसिंहवत् ॥ घोरसिंहासनासीनां महाभीषणदारिणीम् ॥ २७५ ॥ शूलप्रोताहितां ध्यायञ्जपेन्मन्त्रमनन्यधीः ॥ तर्पयेदुष्णतोयेन सर्प्पवक्त्रे दिनत्रयम् ॥ यमस्य भवनं गच्छेदरातिर्नात्र संशयः ॥ २७६ ॥ ऋक्षवृक्षैः प्रतिकातिं प्रतिष्ठितसमीरणाम् ॥ उष्णोदके विनिःक्षिप्य निष्पीड्य विधिना ततः ॥ २७७ ॥ अर्केन्द्वनलसङ्काशां खड्गखेटकधारिणीम् ॥ नयनत्रयसञ्जच्छद्विस्फुलिङ्गशताकुलाम् ॥ २७८ ॥ सिंहस्थां सर्प्पभूषाढ्यां त्रैलोक्यभयदायिनीम् ॥ खड्गकृत्ताहितां ध्यायन्प्रजपेदयुतं मनुम् ॥ विधानेनामुना शत्रुर्युक्तो भवति मृत्युना ॥ २७९ ॥ प्रकल्प्य दुर्गायतने त्रिकोणं कुण्डमुत्तमम् ॥ तत्र संज्वालिते वह्नौ महिषीशकृता कृताम्॥ २८० ॥

पुत्तिलीं सर्जतां रक्तां प्रतिष्ठितसमीरणाम् ॥ छित्त्वा छित्त्वा प्रजहुयादजर-क्तान्वितां निशि ॥ २८१ ॥ ध्यात्वा दुर्गां प्रनृत्यन्तीं महिषोरःस्थलान्तरे ॥ शूलेन महिषस्याङ्गं भिन्दतीं घोरदर्शनाम् ॥ २८२ ॥ अट्टहासैरजस्रोत्थै-र्भीषणां सुरसेविताम् ॥ प्रदीप्तानलसङ्काशां भ्रमन्नेत्रत्रयान्विताम् ॥ २८३ ॥ सदष्टाधरसम्भिन्नां दंष्ट्राभीममुखाम्बुजाम् ॥ खड्गखेटकयुक्ताभिः कन्य-काभिः समावृताम् ॥ २८४ ॥ अनेन विधिना शत्रुः प्रयाति यममन्दिरम्॥ दिनास्त्रमेवं कथितं रात्रौ कृत्यास्त्रमुच्यते ॥ २८५ ॥ आधारादुद्गतां देवीं कुण्डलीं सर्परूपिणीम् ॥ तां ब्रह्मरन्ध्रमार्गेण गतां व्योमस्थलं ततः ॥२८६॥ मुखेन शत्रुमादाय निवृत्तां स्वगृहं प्रति ॥ ज्वलत्कालानलोद्दीप्तां विचिन्त्य प्रजपेन्मनुम् ॥ सप्तभिर्वासरैः शत्रुर्मृत्युमाप्नोति मोहितः ॥ २८७ ॥ अङ्गा-रवारे चित्यग्नौ सर्षपस्नेहलालितम् ॥ सिद्धार्थकुडवं जप्तं जुहुयात्पशुमन्त्रतः ॥ कृत्यास्त्रज्वालया सद्यो रिपुर्यमपुरं व्रजेत् ॥ २८८ ॥ चतुर्दश्यामर्धरात्रे चितास्थीन्यत्र साधकः ॥ व्रणतैलविलिप्तानि चिताग्नौ जुहुयात्ततः ॥ अनेन विधिना शत्रुर्मृत्युमेष्यति कातरः ॥ २८९ ॥ धान्यस्य तु तुषान् पिष्ट्वा शत्रोश्चैव विनिर्मिताम् ॥ प्रतिमां व्रणतैलाक्तां कृतप्राणां हुनेन्निशि ॥ छित्त्वा-छित्त्वाजरकेन सप्ताहान्म्रियते रिपुः ॥ २९० ॥ श्मशानवालुकां स्पृष्ट्वा सा-क्षतां नियुतं जपेत् ॥ विविक्तस्तु तडागादौ जपेन कथितं जलम् ॥ तदीयं पीतमचिरान्निहन्ति सकलाञ्जनान् ॥ २९१ ॥ कृष्णाङ्गारचतुर्दश्यां जपितैः प्रेतभस्मभिः ॥ माहिषाज्येन संयुक्तैस्तन्मन्त्राक्षरसंख्यया ॥ २९२ ॥ नि-र्माय प्रतिमामेतां सम्यग्जप्तसमीरणाम् ॥ चितिकाष्ठेधिते वह्नौ जुहुयाद्दृढ-मानसः ॥ चतुर्दशीत्रयादर्वाक्छत्रुर्मृत्युवशो भवेत् ॥ २९३ ॥ श्मशानभस्म-सिद्धार्थान्पञ्चगव्ये विनिक्षिपेत् ॥ महिषं संस्मरेद्देवीं ज्वालाग्निसदृशप्रभाम् ॥ ॥ २९४ ॥ भर्जयेत्प्रजपन्मन्त्रं विषकाष्ठेधितानले ॥ दुर्गागारे प्रजुहुयादने-नायुतमस्त्रवित् ॥ २९५ ॥ पुनरादायतद्भस्म सेनायां वैरिणः क्षिपेत् ॥ सा सेना बहुधा भिन्ना ज्वरेणापि विमोहिता ॥२९६॥ आयुधानि परित्यज्य युद्धकाले पलायते॥गेहग्रामादिषु क्षिप्तं कुर्य्यादुच्चाटनं द्रुतम्॥ ३९७॥सप्तवारेषु

कुलिके दुर्गावेश्मसु शर्कराः॥सप्तमाहेन्द्रदिग्वर्जं गृहीत्वा प्रजपेन्मनुम्॥ २९८॥ महिषीपञ्चगव्येन महिषं तर्पयेत्पुरा॥ भूयो जपित्वा विकिरे द्गेहे ग्रामपुरे त्विमाः॥ स देशो नश्यति क्षिप्रं दग्धो मन्त्रदवाग्निना ॥ २९९ ॥ ब्रह्मदण्डी मर्कटिका वज्रकण्टकिका त्रयम् ॥ भौमवारस्य कुलिके गृहीत्वा प्रजपेन्मनुम् ॥ सार्धं पुत्रकलत्राद्यैरुत्सादो जायते रिपोः ॥ ३०० ॥ एकत्रैवाखनेन्मन्त्री मण्डलान्तस्स्थलं भवेत् ॥ षड्बिन्दुषट्कपुत्तल्यां निखनेदोदनान्वितम् ॥ ३०१ ॥ स्पृष्ट्वा तां प्रजपेन्मन्त्रं कृष्णाष्टम्यां दिनार्धतः ॥ शत्रुनामसमायुक्तां श्मशाने निखनेदिमाम् ॥ प्रणश्यति रिपुः शीघ्रं सकुटुम्बः सबान्धवः ॥ ३०२ ॥ कपालशकलान्मन्त्री कृत्यास्त्राक्षरसंख्यया ॥ स्पृष्ट्वा तां प्रजपेदस्त्रं प्राणस्थापनपूर्वकम् ॥ ३०३ ॥ कृष्णाङ्गारचतुर्दश्यां श्मशाने निम्बवृक्षजे ॥ जुहुयादजरक्ताक्तां कृत्यास्त्रज्वालया ततः ॥ रिपुर्यमपुरं गच्छेन्महाज्वरविमोहितः ॥ ३०४ ॥ अजरक्तेन सम्पूर्णे कलशे निक्षिपेदहिम् ॥ कपालेन पिधायैनं छादयेद्रक्तवाससा ॥ ३०५ ॥ पूजयेद्रक्तपुष्पाद्यैः स्पृष्ट्वा तं त्वयुतं जपेत् ॥ भौमवारे दिशो मध्ये यथापूर्वं समाहितः ॥ ३०६॥ कारस्करैधिते वह्नौ कृत्यास्त्रेण समेधिते ॥ अयुतं व्रणतैलेन हुत्वान्ते तं घटं पुनः ॥ ३०७ ॥ आमस्तकं समुद्धृत्य त्वभिचाररतः सुधीः ॥ जुहुयाद्विधिना तेन त्रिदिनैर्म्रियते रिपुः ॥ ३०८॥ सुन्दरं महिषीसर्पिः प्रस्थं मन्त्रेण मन्त्रितम् ॥ कुशैराबद्धसर्वाङ्गं स्थापितं प्राणतेजसा ॥ ३०९ ॥ कारस्करैधिते वह्नौ व्रणतैलेन मन्त्रवित् ॥ होमं कृत्वा पुनर्वस्त्रं जुहुयाद्यतमानसः ॥ एकेन दिवसेनारिर्गच्छेद्यमपुरं प्रति॥ ॥ ३१० ॥ त्रिकोणकुण्डनिहिते वह्नौ मन्त्रेण दीपिते ॥ अर्चिते गन्धपुष्पाद्यैरयुतं जुहुयात्सुधीः ॥ ३११ ॥ राजिभक्ततिलैस्तैलैर्नित्यं सप्तदिनं ततः॥ प्रसूतिसमयप्राप्तां महिषीं स्थापितानिलाम् ॥ अर्चितां गन्धपुष्पाद्यैः स्पृशन्मन्त्रं तु तं जपेत् ॥ ३१२ ॥ मस्तकाद्योनिपर्यन्तं जुहुयादेधितेनले ॥ एवंकृते समुत्पन्ना कृत्या दीप्ता हुताशनात्॥ भक्षयेदचिराच्छत्रुमीश्वरेणाभिरक्षितम् ॥ ३१३ ॥ पुनरग्नौ विशत्येषा कर्त्तारमपि काङ्क्षिणी ॥ एवंविधानि कर्म्माणि यः कुर्यान्मन्त्रवित्तमः ॥ स जपेदात्मरक्षार्थं मन्त्रान्मृत्युञ्जयादि-

कान् ॥ ३१४ ॥ अथ त्रिशक्तिमन्त्रस्य साधनार्थं पुरश्चरेत् ॥ जपं महाव्याहृतीनां होमं तर्प्पणमेव च ॥ ॐकारपूर्वकञ्जप्त्वा मन्त्रं त्वयुतसंख्यया ॥ सहस्रं जुहुयादाज्यैस्तर्प्पणादि ततश्चरेत् ॥ ३१५ ॥ एवंकृते सर्वदेवाराधनं स्यात्समर्थता ॥ विनानेन त्रिशक्तेस्तु मन्त्रसिद्धिर्न जायते ॥ ३१६ ॐ भूरग्नये च पृथिव्यै महते च स्वाहा ॥ ॐ भुवो वायवे चान्तरिक्षाय च महते च ॥ ३१७ ॥ ॐ सुवरादित्याय च दिवे च महते च ॥ ॐ भूर्भुवस्सुवश्चन्द्रमसे च नक्षत्रेभ्यश्च दिग्भ्यश्च महते स्वाहा॥ ३१८॥वक्ष्यमाणफलावाप्तिः सामान्या तु सहस्रशः ॥ देशकालानुरूपेण श्रेष्ठा त्वयुतहोमतः ॥ ॥ ३१९ ॥ यथामनोरथस्तादृग्लक्षहोमात्प्रजायते ॥ अथ क्रमेण तद्वक्ष्ये तेजस्वी घृतहोमतः ॥ ३२० ॥ उदुम्बरसमिद्भिस्तु सर्वकर्म्मसमर्थता ॥ पश्वादिकामो जुहुयाद्दुग्धं वाप्यथ वा दधि ॥ ३२१ ॥ समस्तोत्पातशान्त्यर्थमपामार्गस्य तण्डुलान् ॥ अर्कस्य समिधो हुत्वा यथेष्टं कनकं लभेत् ॥ ॥ ३२२ ॥ जात्यास्तु वल्लिकायुग्मं ग्रन्थयित्वा घृतान्वितम् ॥ जुहुयादयुतसङ्ख्याकं सम्पदं स सदा लभेत् ॥ ३२३ ॥ कन्याकामस्तु जुहुयात्तिलतण्डुलमुष्टिभिः ॥ अपामार्गस्य समिधो जुहुयाद्ग्रामकामुकः ॥ ३२४ ॥ वशीकर्त्तुं तु समिधः पलाशाशोकयोर्हुनेत् ॥ आयुष्कामस्तु दूर्वाभिः पुष्पैस्तु धनकामुकः ॥ ३२५ ॥ समिधो व्याधिघातस्य रुधिरेणाजकेन च ॥ संयोज्य जुहुयान्मन्त्री त्वभिचारः प्रसिध्यति ॥ ३२६ ॥ जातानां जायमानानां प्रभोः सर्वत्रकोपनम् ॥ मरणं वा तत्र हुनेत्सर्वव्रीहिभिरादरात् ॥ ३२७ ॥ प्रभूतव्रीहिदूर्वाभिर्होमान्सम्पत्तिर्भवेत् ॥ उल्लूककाकपक्षाभ्यां होमो विद्वेषकारकः ॥ ३२८ ॥ स्वगृहे तु कपिलाघृतहोमं सहस्रकम् ॥ सम्पातस्य घृतं स्थाप्यं वचान्तेनैव लोलयेत् ॥ मन्त्रयित्वा पुत्रवतीं मेधावी चैव जायते॥ ॥ ३२९ ॥ प्रत्यहं मासमात्रं तु स्थित्वा सूर्यस्य सम्मुखम् ॥ अयुतं प्रजपेन्नित्यं गुणिनं लभते सुतम् ॥ ३३० ॥ यद्यदिष्टतमं वस्तु तत्तद्धोमं समाचरेत् ॥ अयुतं घृतसंयुक्तं तस्य प्राप्तिः प्रजायते ॥ होमयोग्यं तु यत्तस्य पुत्रवत्सिद्धिसाधनम् ॥ ३३१ ॥ अथ त्रिशक्तिमन्त्रस्य साधनं कथयाम्यहम् ॥

ब्रह्मविष्णुशिवाः सिद्धा यत्प्रसादाद्धरिस्तथा ॥ ३३२ ॥ गायत्री[1] च तथाग्नेयमन्त्रं त्रैयम्बको मनुः ॥ एतत्त्रयं त्रिशक्त्याख्यो मन्त्रः प्रोक्तः शताक्षरः ॥ ३३३ ॥ उक्तास्त्रयोस्य मुनयश्छन्दांस्यपि च तानि तु ॥ अगोचरं वेदगम्यं परन्तेजोस्य देवता ॥ ३३४ ॥ विश्वै[2]रुद्रै[3]स्तथा कृत्या[4] चाकृत्या[5] ति[6]थिभिर्वनैः ॥ मन्त्रवर्णैः षडङ्गानि प्राङ्न्यासांश्च समाचरेत् ॥ ३३५ ॥ सस्यं मानविवर्जितं श्रुतिगिरामाद्यं जगत्कारणं व्याप्तं स्थावरजङ्गमे मुनिवरैर्ध्यातं निरुद्धेन्द्रियैः ॥ अर्काग्न्युग्रमयं शताक्षरवपुस्तारात्मकं सन्ततं नित्यानन्दगुणालयं परतरं वन्दामहे तन्महः ॥ ३३६ ॥ सौरपीठे यजेत्तत्र षडङ्गैः प्रथमावृतैः ॥ गायत्री शक्तिभिः पश्चात्पूजयेदावृतित्रयम् ॥ ३३७ ॥ पञ्चमावरणं कार्यं वीथीरूपं तु तत्र च ॥ चतुश्चत्वारिंशत्सङ्ख्या जातवाद्यास्तु शक्तयः ॥ ३३८ ॥ आग्नेयास्त्रोदिता ह्येव प्रोक्तं शक्तिचतुष्टयम् ॥ आवृतीना तु संपूजा मृत्युञ्जयोक्तशक्तिभिः ॥ ॥ ३३९ ॥ दिक्पालांश्च तदस्त्राणि दशकैकादशावृतौ ॥ लक्षं जपेद्धुनेत्क्षीरं भक्ताद्यैस्तर्प्पयेत्ततः ॥ ३४० ॥ एवं सिद्धे मनौ मन्त्री भवेद्भास्करसन्निभः ॥ सुधालतो[7]द्भवैः खण्डैर्जुहुयात्क्षीरसंयुतैः ॥ ३४१ ॥ दीर्घमायुरवाप्नोति ह्याधिव्याधिविवर्जितः ॥ दूर्वाभिर्धृतसिक्ताभिस्तदेव फलमाप्नुयात् ॥ ३४२ ॥ मधुरत्रयसंयुक्तैर्जुहुयादरुणाम्बुजैः ॥ महालक्ष्मीमवाप्नोति मासैः षड्भिर्विधानवित् ॥ ३४३ ॥ रक्तोत्पलैस्त्रिमध्वक्तैर्जुहुयात्सर्वसम्पदे ॥ श्रीप्र[8]सूनैः प्रजुहुयाद्रमाया वसतिर्भवेत् ॥ ३४४ ॥ सहस्रं जुहुयान्नित्यं पायसेन तिलैः शुभैः ॥ भानुसङ्ख्यान्द्विजान्नित्यं भोजयेन्मधुरान्वितैः ॥ ३४५ ॥ सर्वपापविनिर्मुक्तः सर्वरोगविवर्जितः ॥ कृत्याद्रोहग्रहान्सर्वाञ्जित्वा दीर्घं स जीवति ॥ ॥ ३४६ ॥ प्रातःस्नानरतो नित्यं जपन्नित्यं शतं शतम् ॥ भानुमालोक-

---

१ गायत्री—तत्सवितुरिति । आग्नेयमन्त्रं जातवेदसे इति त्रैयंबकं—त्र्यम्बकं यजामेति । एतच्छ्रुतित्रयमेलनेन शताक्षरो मन्त्रो जायते । अस्य त्रिशक्तीति नाम गायत्रीमन्त्रस्य जपसमये वरेण्यमिति स्थाने पठनेन मन्त्रस्य शताक्षरत्वपूर्तिः ॥ २ त्रयोदशभिः । ३ एकाधिकदशभिः । ४ द्व्यधिकविंशतिभिः । ५ पञ्चाधिकदशभिः । ६ सप्ताधिकदशभिः । ७ गुडूचीभिः । ८ बिल्वप्रसूनैः ।

येत्सम्यक्स जीवेच्छरदा शतम् ॥ ३४७ ॥ नित्यमष्टोत्तरशतं निःश्रेय-सफलाप्तये गायत्र्याद्यं जपेन्मन्त्रं सर्वपापविमुक्तये ॥ ३४८ ॥ सर्वशत्रु-विनाशाय त्रिष्टुबाद्यं जपेदिमम् ॥ त्र्यम्बकाद्यं प्रजपेदायुरारोग्यवृद्धये ॥ ॥ ३४९ ॥ ॥ अथ त्वरितरुद्रस्य विधानमभिधीयते ॥ न वेदे नागमे चेदङ्मन्त्रस्त्वरितसिद्धिदः ॥ ३५० ॥ यो रुद्रो अग्नौ यो अप्सु य ओष-धीषु ॥ यो रुद्रो विश्वा भुवनाविवेश तस्मै रुद्राय नमो अस्तु ॥ ३५१ ॥ अथर्वणो मुनिः प्रोक्तश्छन्दोनुष्टुबुदाहृतम् ॥ अस्त्यस्य देवता रुद्रः षडङ्गानि न्यसेत्क्रमात् ॥ ३५२ ॥ अत्र न्यासस्तु पञ्चाङ्गः पञ्चत्रीषूग्रगोमितैः ॥ वर्णान्देहादिषु न्यस्यांगुष्ठादौ ध्यानमाचरेत् ॥ ३५३ ॥ चतुर्भुजं त्रिनेत्रं च शुद्धस्फटिकसन्निभम् ॥ अमृतेन च सम्पूर्णौ कलशौ हस्तयोर्द्वयोः ॥ ॥ ३५४ ॥ हस्तद्वयेन योगस्य कृतमुद्रं स्थिरासनम् ॥ सर्वकामफलेशानं शङ्करं करुणानिधिम् ॥ ३५५ ॥ उग्रकर्म्मण्युग्रमूर्तिं ज्वलत्पावकलोचनम् ॥ द्विभुजं नागहस्तं च शूलपाणिं जटाधरम् ॥ ३५६ ॥ अधःशय्यां त्वेकवारं हविष्यान्नस्य भोजनम् ॥ ब्रह्मचर्य्यं सत्यवाणीं पुरश्चर्य्याविधौ चरेत् ॥ ॥ ३५७ ॥ लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं होमैकंसमिधो घृतम् ॥ तर्प्पणं मार्जनं विप्रभोजनं मन्त्रसिद्धये ॥ ३५८ ॥ पूजांपार्थिवलिङ्गस्य प्राग्वन्नित्यं समा-चरेत् ॥ एवं सिद्धे मनौ मन्त्री प्रयोगान्कर्तुमर्हति ॥ ३५९ ॥ अयुतद्वय-होमेन या सिद्धिः सा निगद्यते ॥ औदुम्बरैरन्नकामस्तेजस्कामस्तु खादिरैः ॥ ॥ ३६० ॥ अपामार्गसमिद्धोमाद्भूतबाधा विनश्यति ॥ ग्रहबाधाविनाशाय

---

१ ॐ जातवेदसे इति मन्त्रस्य प्रथमकथनमुचितम् । २ ॐ यो रुद्रो अग्नौ अंगुष्ठाभ्यां नमः, यो अप्सु तर्जनीभ्यां नमः; य ओषधीषु मध्यमाभ्यां नमः; यो रुद्रो विश्वा भुवना विवेश अनामिकाभ्यां नमः, तस्मै रुद्राय नमो अस्तु कनिष्ठिकाभ्यां नमः, एवं हृदयादिन्यासोपि ॥ अथाक्षरन्यासः ॥ ॐ यो नमः शिरसि, रु भाले, द्रो भ्रूमध्ये, अ दक्षनेत्रे, प्सु वामनेत्रे, यः दक्षकर्णे, ॐ वामकर्णे ष नासिकायाम्, धी दक्षकपोले, षु वामकपोले यो मुखे, रु कंठे, द्रो दक्षबाहौ, वि वामबाहौ, श्वा दक्षकरतले, भू वामकरतले व पृष्ठे, ना वक्षःस्थले, वि उदरे, वे नाभौ, श कट्याम्, त दक्षोरौ, स्मै वामोरौ, रु दक्षजानुनि, द्रा वामजानुनि, य दक्षजंघायाम्, न वामजंघायाम्, मो दक्षपादे, अ वामपादे, स्तु सर्वांगे॥ इत्यक्षरन्यासः । ३ पार्थिवपूजायां यत्कामनायै या पूजोक्ता तां तत्र तयैव रीत्या विदधीत ॥

जपेदश्वत्थसन्निधौ ॥ ३६१ ॥ लवणान्वितदध्यक्तास्त्वयत्राश्वाबोधिवृक्षजाः ॥ हूयन्ते समिधः शुष्काः स्वाहान्तं मन्त्रमुच्चरेत् ॥ ३६२ ॥ दशपञ्चाहुतीर्हुत्वा गच्छगच्छेत्युदीरयेत् ॥ यावद्धोमं बलिं दद्यात्पुरुषाहारसंमितम् ॥ एवंकृते तु वा सम्यक्पुरुषं तं स मुञ्चति ॥ ३६३ ॥ जुहुयाच्छतपत्राणि संहृष्टो-भीष्टमाप्नुयात् ॥ लाजहोमेन कन्यार्थी कन्यां प्राप्नोति रूपिणीम् ॥ ३६४ ॥ लाजाश्च चरुणा युक्ताः श्वेतपुष्पाणि वा पुनः॥ हूयन्ते हरिते देशे तस्य विश्वं वशीभवेत् ॥ ३६५॥ वामे तदुन्नतं कार्य्यं स्त्रीवश्यं नतु दक्षिणे ॥ आरिसैन्य-प्रशान्त्यर्थं तिलानाज्येन सम्मितान् ॥ ३६६ ॥ होमस्थाने च संस्थाप्य कुम्भमेकं जलान्वितम् ॥ मन्त्रयित्वाष्टसाहस्रं शरावांस्तत्र विक्षिपेत् ॥ ॥ ३६७ ॥ अभिषेकैश्च तैस्तेषां शाला प्रोक्ष्य प्रदक्षिणम् ॥ ग्रहग्रामा-दिशान्त्यर्थं राज्यस्याप्येवमाचरेत् ॥ ३६८ ॥ वास्तुपूजा प्रकर्तव्या चतुष्षष्टिपदैः शुभैः ॥ ३६९ ॥ ईशानाय बलिः कार्य्यो भूतानां पतये तथा ॥ एवंकृते पशूनान्तु प्रजानां शान्तिमाप्नुयात् ॥ ३७० ॥ उत्पा-तेषु च सर्वेषु निशायां ग्रामबाह्यतः ॥ उपविश्य जपेद्रुद्रं त्वरितं बहुभिःसह ॥ ३७१ ॥ होमः पलाशकाष्ठैस्तु कर्तव्यो घृतसंयुतैः ॥ ईशानाय बलिं कुर्य्यात्तस्यां दिशि तदद्भुतम् ॥ ३७२ ॥ ततो दिशाम्पतेस्तत्र पशूनाम्पतये तथा ॥ वृद्धिकामो जपेल्लक्षं तिलहोमो घृतान्वितः ॥ ३७३ ॥ बलिपूजा च कर्त्तव्या शिवस्य वरुणस्य च ॥ यस्य कस्यापि कार्य्यस्य लभ्यते योग्य-ता यदि ॥ ३७४ ॥ तदा लक्षार्धतो लक्षपर्य्यन्तं त्वरितं जपेत् ॥ सर्वान्का-मानवाप्नोति त्वरितस्य प्रसादतः ॥ ३७५ ॥ श्रीकामः शान्तिकामो वा जपे-ल्लक्षमिदं ततः ॥ श्रीकामो बिल्वसमिधा शान्तिकामः शमीमयैः ॥ ४७६ ॥ जुहुयादाज्यसम्मिश्रैस्तर्पणं मार्जनं तथा ॥ एवं सर्वेषु कार्य्येषु होमः कार्य्य-स्तथा यवैः ॥ ३७७ ॥ जुहुयाल्लक्षमेकन्तु पुत्रार्थी पायसेन च ॥ विद्यार्थी श्रीफलैस्तद्वदायुष्कामस्तु दूर्वया ॥ ३७८ ॥ तिलैरथाज्यसम्मिश्रैस्तेजस्कामो घृतेन वा ॥ व्रीहिभिः पुष्टिकामस्तु तुष्टिकामस्तथा हि तैः ॥ ३७९ ॥

१ काष्ठैरिति शेषः ।

पायसं सर्वकामेषु होतव्यं शर्करान्वितम् ॥ मध्वब्जाज्याम्रपर्णानि तीव्रज्वर-विनाशने ॥ ३८० ॥ सर्वरोगविनाशाय सूर्य्यस्याभिमुखो जपेत् ॥ सहस्रम-युतं लक्षं रोगिणान्तारतम्यतः ॥ ३८१ ॥ जपान्ते तु षडङ्गानां न्यासश्चा-पि पराह्वयम् ॥ पँञ्चत्रिपश्चरुद्रेषु चतुर्वर्णैः षडङ्गकम् ॥ ३८२ ॥ पादयोर्जं-घयोर्जान्वोरूर्वोर्गुह्ये च मेढ्रके ॥क्रमान्नाभौ च जठरे हृदि कण्ठे मुखे नसि ॥ ॥ ३८३ ॥ नेत्रयोश्च भ्रुवोर्मध्ये ललाटे मूर्ध्नि विन्यसेत् ॥ पदानि षो-डश मनोरिति त्वरितरुद्रियम् ॥ ३८४ ॥ ऋचो विधानं वारुण्या यथावद-भिधीयते ॥ अस्या उपासको यत्र तत्रावृष्टिर्न जायते ॥ ३८५ ॥ ध्रुवा-सु त्वासु क्षितिषु क्षियन्तो व्यस्यत्या स वरुणो मुमो नरत् ॥ अवोचन्वाना अदितेरुपस्था यूयं यात स्वस्तिभिः सदा नः ॥ ३८६ ॥ ऋषिर्वशिष्टोनुष्टु-प्चच्छन्दो वरुणदैवतम् ॥ अष्टाङ्गैवसुवस्वद्रिषडर्णैरङ्गकल्पनम् ॥ ३८७ ॥ पादाग्रयोस्तथा पादांगुलिमूलद्वयोरपि ॥ गुल्फयोश्च तथा जान्वोरूर्वोश्च गुदलिङ्गयोः ॥ ३८८ ॥ मूलाधारे तथा नाभौ कुक्षौ पृष्ठे तथा हृदि ॥ वक्षः स्थले गले हस्ताग्रयोरंगुलिमूलयोः ॥३८९ ॥मणिबन्धयुगे चैव कूर्प्प-

---

१ अष्टाष्टषडष्टाष्टसप्तषडक्षरैरंगन्यासः । यथा—ध्रुवासु त्वासु क्षितिषु अंगुष्ठाभ्यां नमः इत्थं पूर्वोक्तरीत्या सर्वन्यासान्कुर्यात् २ अथाक्षरन्यासः कथ्यते यथा—ध्रु दक्षपादाग्रे, वा वामपादाग्रे सु दक्षपादांगुलिमूले, त्वा वामपादांगुलिमूले, सु दक्षगुल्फे, क्षि वामगुल्फे, ति दक्षजानुनि, षु वा-मजानुनि, क्षि दक्षोरौ, यं वामोरौ, तो गुदे व्य लिंगे, स्य मूलाधारे, त्या नाभौ, स दक्षकुक्षौ, व वामकुक्षौ, रु पृष्ठे, णो हृदि, मु बक्षःस्थले, मो गले, न दक्षहस्ताग्रे, रत् वामहस्ताग्रे, अ दक्षहस्तां-गुलिमूले, वो वामहस्तांगुलिमूले च दक्षमणिबन्धे, न्वा वामनाणिबन्धे’ ना दक्षकूर्परे, दि दक्षबाहौ’ तेवामबाहौ रु मुखे प दक्षकपोले, स्था वामकपोले, यू दक्षनासापुटे, यं वामनासापुटे, या दक्षनेत्रे, त वामनेत्रे, स्व दक्षकर्णे, स्ति वामकर्णे, भिः भ्रुवोर्मध्ये, स भाले, द मूर्द्धनि, नः सर्वांगे ॥ इति न्यासः ॥ ॐ यो रुद्रो अग्नौ हृदयाय नमः, यो अप्सु शिरसे स्वाहा, य ओषधीषु शिखायै वषट्, यो रुद्रो विश्वा भुवना विवेश कवचाय हुम्, तस्मै रुद्राय नेत्रत्रयाय वौषट्, नमो अस्तु अस्त्राय फट् ३ पुनरस्यैव मन्त्रस्य षोडशपदैः क्रमान्मूलोक्तस्थानेषु न्यासं कुर्य्यादिति शेषः ॥ यः पादयोः, रुद्रः जंघयोः, अग्नौ जान्वोः, यः ऊर्वोः, अप्सु गुह्ये, यः लिंगे, ओषधीषु नाभौ-यः जठरे, रुद्रः हृदये, विश्वा कण्ठे, भुवना मुखे, विवेश नासिकायाम्, तस्मै नेत्रयोः, रुद्राय भ्रुवोर्मध्ये, नमः ललाटे, अस्तु मूर्ध्नि, इति पदन्यासः ॥

रद्वितये तथा ॥ बाहुमूलद्वये चास्ये कपोलयुगले नसोः ॥३९०॥ नेत्रयोः कर्णयोर्मध्ये भ्रुवोर्भाले च मूर्द्धनि ॥ सर्वाङ्गे च क्रमान्न्यस्य मन्त्राणां न्ध्यानमाचरेत् ॥ ३९१ ॥ चन्द्रप्रभं पङ्कजसन्निषण्णं बाणांकुशाभीतिवरान्दधानम् ॥ मुक्ताविभूषाञ्चितसर्वगात्रं ध्याये प्रसन्नं वरदं विभूत्यै ॥ ३९२ ॥ धर्म्मादिकल्पिते पीठे वरुणं सम्यगर्चयेत् ॥कृत्वाङ्गपूजनं शेषं वासुकिं तक्षकं पुनः ॥ ३९३ ॥ कर्कोटकञ्च पद्मञ्च महापद्मं ततः परम् ॥ शङ्खपालञ्च कुलिकमिन्द्रादीनायुधानि च ॥ ३९४ ॥ लक्षमेकञ्जपेन्मन्त्रं पायसेन दशांशतः ॥ सर्पिस्सिक्तेन जुहुयात्तर्प्पणादि ततश्चरेत् ॥ ३९५ ॥ ऋणमुक्त्यै जपेन्मन्त्रं प्रत्यहं साष्टकं शतम् ॥ जपेनानेन लभते सम्मतामक्षयां श्रियम् ॥३९६॥ सितेक्षुशकलैर्मन्त्री जुहुयाद्घृतसम्प्लुतैः ॥ चतुर्दिनं दशशतं ऋणमुक्त्यै महाश्रिये ॥३९७॥ समिद्भिर्वेतसस्थाभिः क्षीराक्ताभिर्दिनत्रयम् ॥ जुहुयाद्दृष्टिसंसिद्ध्यै मन्त्रविद्विजितेन्द्रियः ॥ ३९८ ॥ अनेन विधिना मन्त्री सूर्य्ये शतभिषाङ्गते ॥ चतुश्शतं घृतयुतं पायसं जुहुयाद्दणी ॥ ऋणनाशाय सम्पत्त्यै वश्यारोग्याभिवृद्धये ॥ भृगुवारे कृतो होमः पायसेन ससर्प्पिषा ॥ महतीं सम्पदं कृत्वा तारयेत्सकलापदः ॥ ३९९ ॥ शालिभिर्घृतसंयुक्तैः शरीरान्तर्हितः सुधीः ॥ त्र्यहं चतुश्शतं हुत्वा स्तम्भयेत्परसैनिकान् ॥ सायं प्रत्यङ्मुखो वह्निमाराध्य प्रजपेन्मनुम् ॥ चतुश्शतं विमुच्येत मन्त्री सर्वैरुपद्रवैः ॥ ४०० ॥ मन्त्री प्रत्यङ्मुखो भूत्वा तर्प्पयेद्विमलैर्जलैः॥ सर्वोपद्रवनाशाय सर्वदाभ्युदयाप्तये ॥ ४०१ ॥ बहुना किमिहोक्तेन मन्त्रेणानेन साधकः ॥ साधयेत्सकलान्कामाञ्जपहोमादितत्परः ॥ ४०२ ॥ अयुतं प्रजपन्बद्धो मुच्यते नात्र संशयः ॥ दिवा रात्रौ जपेनैव सिद्धिः सम्प्रति वर्त्तते ॥ ४०३ ॥ अहोरात्रं स्थितश्चैवमनश्नञ्छुद्धचेष्टितः ॥ अयःपाशाः स्फुटन्त्वस्य दारुपाशा विशेषतः॥ अवैदिकाय नो देयं तान्त्रिकाय कदाचन ॥ ४०४ ॥ वक्ष्ये चान्नपतेर्मन्त्रं न्यासमुन्यादिवर्जितम् ॥ पूजाहीनं जपेनैव नान्नहीनः प्रजायते ॥४०५॥अन्नपतेन्नस्य दो नो देह्यनमीवस्य शुष्मिणः॥ प्रदातारं तारिष ऊर्ज्जं नो धेहि द्विपदे चतुष्पदे ॥ ४०६॥ अनेन जुहुयादन्नं

नित्यमष्टोत्तरं शतम् ॥ अमोघं जायते चान्नं यद्भूतं न च वर्षतः ॥ ४०७॥ सर्वोपस्करसंयुक्तं कुण्डेऽग्निं स्थापयेत्ततः ॥ लक्षमेकं हुनेदन्नं यावज्जन्माक्षयं भवेत् ॥ ४०८ ॥ यदानेन वनङ्कृत्वा स्थालीपाकविधानतः ॥ अग्निश्चो-पसमाधायोदुम्बर्य्या समिधा युतम् ॥ ४०९ ॥ जुहुयात्तस्य क्षेत्रे तु धान्याख्या व्रीहयोऽक्षयाः ॥ भवन्त्यवृष्टाविति च किमाश्चर्य्यं सुवर्षणे ॥ ४१० ॥ अथो लवणमन्त्रस्य विधानमभिधीयते ॥ परिशिष्टपदान्ते तु जुहुयाल्लवणै-स्तथा ॥ ४११ ॥ लवणाम्भसि निष्ठोसि उग्रोसि हृदयं तव ॥ लवणस्य पृथिवी माता लवणस्य वरुणःपिता ॥४१२॥ लवणे हूयमाने तु कुतो निद्रा कुतो रतिः॥ लवणं दहति पचति लवणं छिन्दति भिन्दति॥४१३॥अमुकस्य दह गात्राणि दह मां संदह त्वचम्॥दह त्वगस्थि मज्जानि अस्थिभ्यो मद्विषां दह ॥४१४॥ यदि वसति योजनशते नदीनां वा शतान्तरे ॥ सन्दह्यानय मे शीघ्रमग्निं लवणतेजसा ॥४१५॥ नगरे लोहप्राकारकृष्णसर्पशतार्गले ॥ अत्रैव वशमायान्तु लवणमन्त्रपुरस्कृताः ॥ ४१६ ॥ या ते रात्रिर्महारात्रिः सा ते रात्रिर्महानिशा ॥ अङ्गिरा मुनिराख्यातश्छन्दोनुष्टुबुदाहृतम् ॥ ४१७ ॥ अग्नीरात्रिः पुनर्दुर्गा भद्रकाली च देवता ॥ पञ्चत्रिपञ्चवेदेषु द्व्यक्षरैश्चिटिमन्त्रजैः ॥ ४१८ ॥ षडङ्गानि प्रकुर्वीत स मन्त्रः कथ्यतेधुना ॥ तारं चिटिद्वयं पश्चाच्चाण्डालि तदनन्तरम् ॥४१९॥ महल्यहलि वै ब्रूयादमुकं मे पदन्ततः ॥ वशमानय ठद्वन्द्वश्चतुर्विंशाक्षरो मनुः ॥ ४२० ॥ अग्न्यादिकचतुष्कस्य ध्यानं कुर्य्यात्ततः परम् ॥ तानि ध्यानानि कथ्यन्ते सावधानतया शृणु ॥ ४२१ ॥ नवकुंकुमसन्निभं त्रिनेत्रं रुचिराकल्पशतं भजामि वह्निम् ॥ स्रुवशक्तिवराभयानि दोर्भिर्दधतं रक्तसरोरुहे निषण्णम् ॥ ४२२ ॥ कालाम्बु-वाहद्युतिमिन्दुरक्तां हारावलीशोभिपयोधराढ्याम् ॥ कपालपाशांकुशशूलहस्तां नीलाम्बरां यामवतीं नमामि ॥ ४२३ ॥ कालाम्बुदाभामसिशङ्खशूलखेटा-ढ्यहस्तां तरुणेन्दुचूडाम् ॥ भीमां त्रिनेत्रां जितशत्रुवर्गां स्मरामि दुर्गामरिभङ्ग-दक्षाम् ॥ ४२४ ॥ टङ्कं कपालं डमरुं त्रिशूलं संम्बिभ्रती चन्द्रकलावतंसा॥

१ समन्त्रउच्यते ॐ चिटि चिटि चाण्डालि महल्यहलि अमुकं मेवशमानयस्वाहा इति मन्त्रः

पिङ्गोर्ध्वकेशी सितभीमदंष्ट्रा भूयाद्विभूत्यै मम भद्रकाली ॥ ४२५ ॥ ककूप-ञ्चकं जपेत्सम्यगयुतं तद्दशांशतः॥हविषा घृतसिक्तेनजुहुयादर्चितेऽनले॥ ४२६॥ एवं कृतपुरश्चर्य्यः प्रयोगकुशलो भवेत् ॥ अग्निं यामवतीं ध्यायेद्वश्याकर्षण-कार्य्ययोः ॥ स्मरेद्दुर्गां भद्रकालीं मन्त्री मारणकर्म्मणि ॥ ४२७ ॥ जानु-प्रमाणसलिले स्थित्वा निशि जपेन्मनुम् ॥ अनेन वाञ्छितः साध्यः किंकरो-जायते क्षणात् ॥ ४२८ ॥ नाभिमात्रे जले स्थित्वा जपेन्मन्त्रमनन्यधीः ॥ अष्टोत्तरसहस्रं यस्तस्य साध्यो वशो भवेत् ॥ ४२९ ॥ ककूपंचकं जपे-न्मन्त्री कण्ठमात्राम्भसि स्थितः ॥ सप्तभिर्दिवसैर्भूपान्वशयेद्विधिनामुना ॥ ४३० ॥ संलिख्य तालपत्रे तं साध्यनाम्ना विदर्भितम् ॥ निक्षिप्य क्षीरसं-मिश्रे जले तत्क्वाथयेन्निशि ॥ वश्यो भवति साध्योस्य नात्र कार्य्या विचारणा ॥ ४३१ ॥ तालपत्रे लिखित्वैनं भद्रकालीगृहे खनेत् ॥ वश्याय सर्वजन्तू-नां प्रयोगोयमुदाहृतः ॥४३२॥ तालपत्रे समालिख्य मन्त्रं साध्यविदर्भितम्॥ तापयेत्खादिरे वह्नौ मासे वश्यो भवेन्नरः ॥ ४३३ ॥ त्रिकोणं कुण्डमासाद्य-सम्यक्छास्त्रोक्तलक्षणम् ॥ तस्मिन्होमं प्रकुर्वीत संस्कृते हव्यवाहने॥४३४॥प्र-क्षाल्य दध्ना दुग्धेन संशोध्य लवणं सुधीः॥सुचूर्णितं प्रजुहुयात्सप्ताहाद्वशयेज्जगत्॥ ॥४३५॥ दधिमध्वाज्यसंसिक्तैर्जुहुयात्सैन्धवैस्तथा॥वशयेदखिलान्देवानचिरा-त्किमु पार्थिवान्॥ ४३६॥विशुद्धलवणं प्रस्थं विभक्तं पञ्चधा पृथक् ॥ एकैक-मंशं जुहुयाद्दत्वा पञ्चाहमादरात् ॥ यस्य नाम्ना स वश्यः स्यादनेन विधिनाचि-रात् ॥ ४३७ ॥ शुद्धं लवणमादाय जुहुयान्मधुरान्वितम् ॥ हुतं पञ्चाशदा-हुत्या वश्यं यच्छति वाञ्छितम् ॥ नित्यं शुद्धलवणेन हुत्वा शत्रून्वशं नयेत्॥ ॥ ४३८ ॥ मधुरत्रयसम्मिश्रैर्लवणैः साधुचूर्णितैः ॥ जुहुयाद्वशयेन्नारीं नरान्नरपतीनपि ॥ ४३९ ॥ मन्त्रं कृष्णद्वितीयादि प्रजपेद्यावदष्टमि ॥ पुत्तलीः पञ्च कुर्वीत साङ्गोपाङ्गाः समाः शुभाः ॥ ४४० ॥ एका साध्यद्रु-मेण स्यादन्या पिष्टमयी मता ॥ चक्रिहस्तमृदान्या स्यादन्या तु सिकतामयी ॥ ४४१ ॥ लवणं पोतसम्भूतं चूर्णितं परिशोधितम् ॥ कुडवं प्रोक्षयेत्क्षीर-दध्याज्यमधुभिः क्रमात् ॥ गुडाज्यमधुभिः सम्यङ्मिश्रितेनामुना पुनः ॥

॥ ४४२ ॥ कुर्वीत पुत्तलीं सौम्यां सर्वावयवशोभिताम् ॥ प्राणप्रतिष्ठामन्त्रैश्च प्राणानस्या हृदि क्षिपेत्॥आशु प्राणान्प्रतिष्ठाप्य पूजयेत्कुसुमादिभिः॥ ॥ ४४३ ॥ पश्चात्कृष्णाष्टमीरात्रौ याममात्रे गते सति ॥ विधाय मातृकान्यासं मन्त्रस्य समनन्तरम् ॥ ४४४ ॥ चिटिमन्त्रसमुद्भूतांश्चतुर्विंशतिसंख्यकान्॥ताराद्यान्विन्यसेद्वर्णान्स्थानेष्वेषु समाहितः ॥ ४४५ ॥ मूर्ध्नि भाले दृशोः श्रुत्योर्नासास्यचिबुकेषु च ॥ कण्ठयुक्स्तनयुग्मेषु कुक्ष्योर्नाभौ कटिद्वये ॥ ४४६ ॥ मेढ्रे पायौ प्रविन्यस्य शिष्टं वर्णचतुष्टयम् ॥ ऊरुद्वये जानुयुग्मे जङ्घायुग्मे पदद्वये ॥ ४४७ ॥ एवं विन्यस्य सर्वाङ्गे रक्तमाल्यानुलेपनः ॥ रक्तवस्त्रधरः शुद्धः पुत्तलीं दारुणाकृताम् ॥ ४४८ ॥ अधोमुखीं खनेत्कुण्डे पिष्टजामासनादधः ॥ मृन्मयीं प्रतिमां पादेनाक्रामेच्च तथात्मनः ॥ ४४९ ॥ सैकतीं प्रतिमां चाग्निकुण्डस्योर्ध्वं प्रलम्बयेत् ॥ लवणेन कृतां पश्चात्पुत्तलीं संस्पृशञ्जपेत् ॥ ४५० ॥ ऋक्पञ्चकं यथान्यासमष्टोत्तरसहस्रकम् ॥ संहत्य चिटिमन्त्रार्णान्पुनस्तस्याः स्तनौ न्यसेत्॥४५१॥अंगुष्ठसन्धिप्रपदजङ्घाजानूरुपायुषु ॥ लिङ्गदेशे पुनर्नाभौ जठरे हृदयाम्बुजे ॥ ४५२॥ स्तनद्वये कन्धरायां चिबुके वदने तथा ॥ घ्राणयोः कर्णयोरक्ष्णोर्ललाटे मूर्ध्नि विन्यसेत् ॥ ॥ ४५३ ॥ अग्निमादाय सन्दीप्य साध्यनक्षत्रदारुभिः ॥ तस्मिन्नभ्यर्च्य मन्त्रोक्तदेवतां रूप्यपात्रके ॥ ४५४ ॥ कुशाब्जराजिपुष्पाद्भिर्दत्त्वार्घ्यं प्रणमेत्सुधीः ॥ मन्त्रैरेतैः प्रयोगादावन्ते संयतमानसः ॥ ४५५ ॥ लवणेनाभिम-

---

१ ॐ मूर्ध्नि, चि भाले, टि दक्षनेत्रे, चि वामनेत्रे, टि दक्षकर्णे, चां वामकर्णे, डा दक्षनासायाम्, लि वामनासायाम्, म मुखे, ह चिबुके, ल्य कण्ठे, ह दक्षस्तने, लि वामस्तने अ दक्षकुक्षौ मु वामकुक्षौ, कं नाभौ, पे दक्षकटयाम्, व वामकटयाम्, श लिंगे, सगुदे, न ऊरुद्वये, य जानुयुग्मे, स्वा जंघायुग्मे, हा पदद्वये—इति मन्त्राक्षरन्यासः ॥

२ पुनस्तस्या लवणपुत्तल्या अङ्गेषु अक्षरन्यासं कुर्य्यात् । यथा—ॐ अंगुष्ठद्वये, चि अंगुष्ठसन्धिद्वये, टि प्रपदद्वये, चि जङ्घाद्वये, टि जानुद्वयं, चां ऊरुद्वये, डा गुदे, लि लिङ्गे, म नाभौ, ह जठरे, ल्य हृदये, ह दक्षस्तने लि वामस्तने, अ कन्धरायाम्, मु चिबुके, कं मुखे, मे दक्षनासायाम्, व वामनासायाम्, श दक्षकर्णे, मा वामकर्णे, न दक्षनेत्रे, य वामनेत्रे, स्वा ललाटे, हा मूर्ध्नि ॥

न्याथ निशायां हव्यवाहनम् ॥ निशायां मन्त्रजतेन तृप्तो भव तया सह ॥ ॥ ४५६ ॥ जातवेदो महादेव तप्तजाम्बूनदप्रभ ॥ स्वाहापते विश्वभक्ष्य लवणं दह शत्रुहन् ॥ ४५७ ॥ ईशे शर्वरि शर्वाणि ग्रस्तं मुक्तं त्वया-जगत् ॥ महादेवि नमस्तुभ्यं वरदे कामदा भव ॥४५८॥ तमोमयि महादेवि महादेवमनुव्रते ॥ प्रिया मे पुरुषं हत्वा वशमानय देवि मे ॥ ४५९ ॥ दुर्गे दुर्गादिरहिते दुर्गसंराधनार्गले ॥ चक्रशङ्खधरे देवि दुष्टशत्रुभयङ्करे ॥ ४६० ॥ नमस्ते दह शत्रून्मे वशमानय चण्डिके ॥ शाकम्भारि महादेवि शरणं मे भवानघे ॥ ४६१ ॥ भद्रकालि भवाभीष्टरुद्रासिद्धिप्रदायिनि ॥ सपत्नान्मे जहिजहि शोषय तापयतापय ॥ ४६२ ॥ शूलासिशक्तिवज्राद्यैश्छित्त्वा-नय यमालये ॥ महादेवि महाकालि रक्षास्मानक्षरात्मिके ॥ ॥ ४६३ ॥ साध्यं संस्मृत्य निर्भिद्य पुत्तलीं सप्तधा पुनः ॥ ऋक्पञ्चकं समुच्चार्य्य जुहुया-दोधितेनले ॥ ४६४ ॥ प्रथमो दक्षिणः पादस्तत्[1]करस्तदनन्तरम् ॥ शिरस्तृ-तीयमाख्यातं वामहस्तस्ततः परम् ॥४६५॥ मध्यादूर्ध्वं पञ्चमं स्यादधोंसः षष्ठ ईरितः॥सप्तमो वामपादः स्यादिति भागक्रमःस्मृतः॥४६६॥सप्तसप्त विभागान्वा प्रोक्तेष्वेव यथाविधि॥कृत्वैवमर्चयित्वाग्निं प्रणमेद्दण्डवत्ततः ॥४६७॥ यजमानो धनैर्धान्यैः प्रीणयेद्गुरुमात्मनः ॥ अनेन विधिना मन्त्री वशयेदसुरान्सुरान् ॥ ॥ ४६८ ॥ किंपुनर्मनुजान्भूपानमात्यान्नृपयोषितः ॥ मारणे पूर्वसम्प्रोक्त-पुत्तलीनां चतुष्टयम् ॥ ४६९ ॥ निवेशयेद्यथापूर्वं साधकेन्द्रो विधानवित् ॥ अपरं वक्ष्यमाणेन विधानेन प्रकल्पयेत् ॥ ४७० ॥ बलाह्वया मूलनखी तिलत्र्यूषणरामठैः ॥ विकृतिं वश्यसिद्ध्यर्थं साध्यनामाङ्घ्रिरेणुभिः ॥ ४७१ ॥ महिषीमूत्रसम्पिष्टैः पूर्वोक्तलवणान्वितैः ॥ विधाय पुत्तलीं सम्यक्प्राणस्था-पनमाचरेत् ॥ ४७२ ॥ जपपूजादिकं सर्वं कुर्य्यात्प्रागुक्तवर्त्मना ॥ ततः सवेदिके कुण्डे रात्रौ प्रज्वालितेनले ॥ ४७३ ॥ दुर्गां च भद्रकालीं वा समाराध्य यथाविधि ॥ धारयेन्निशितं शस्त्रं सव्यहस्तेन साधकः ॥ ४७४ ॥ वामपादं समारभ्य दक्षिणांघ्र्यवसानकम् ॥ छित्त्वाछित्त्वा प्रजुहुयान्निरा-

१ दक्षिणकरः ॥

हारो जितेन्द्रियः ॥ ४७५ ॥ कृष्णाष्टमीं समारभ्य यावत्कृष्णचतुर्दशी ॥ अनेनैव विधानेन होमं कुर्याद्विचक्षणः ॥ ४७६ ॥ त्रिसप्ताहप्रयोगेन मारयेद्रिपुमात्मनः ॥ ४७७ ॥ नक्षत्रवृक्षाः कारस्करामलक्यावुदुम्बरः ॥ जम्बूश्च खदिरः कुष्ठो वंशपिप्पलनागराः ॥ ४७८ ॥ रोहितश्च पलाशश्च प्लक्षो वटशिलाभवौ ॥ पार्थो वैकङ्कतश्चापि बकुलः सरलः क्रमात् ॥ ४७९ ॥ सर्जवञ्जुलपनसा अर्कः शमिकदम्बकौ ॥ निम्ब-श्चाम्रो मधूकश्च लोध्रोमन्त्रविधिस्त्विति ॥ ४८० ॥ यश्च त्रिषवणं सन्ध्यां सहस्रजपपूर्विकाम् ॥ करोति तस्य वक्ष्यामि सिद्धये सुगमा ऋचः॥४८१ ॥ तच्छन्दो दैवतमृषिन्यासध्यानादिकं विना ॥ जपेदष्टसहस्रे तु यासु सिद्धि-रदूरतः ॥ ४८२ ॥ सर्वलोकोपकारार्थं कथयाम्यत्र ता ऋचः ॥४८३ ॥ अवपतन्तीरवदंदिव ओषधयस्पारि ॥ यं जीवमश्नवामहै न स रिष्यति पूरुषः॥ ॥ ४८४ ॥ सर्वौषध्यहुतं हुत्वा मिष्टान्नं लभते सदा ॥ भाण्डागारस्य वस्तूनि चतुर्थांशेन होमयेत् ॥ ४८५ ॥ भवन्ति तानि पूर्णानि वर्षमध्ये न संशयः ॥ त्रिवारमेवं यः कुर्य्यादक्षयोस्त्वयुतेन च ॥ ४८६ ॥ समा-हिꣳसीमधु नव दिष्टो मधु वक्ष्यामि मधुमतीं देवेभ्यो वाचमुद्यासꣳशु-श्रूषेण्यां मनुष्येभ्यस्तं मा देवा अवन्तु शोभायै पितरोन्नमदन्तु ॥ ४८७ ॥ महाभिचारजे व्याधावशान्ते चापचारके ॥ अनेन जुहुयाच्चाज्यं सहस्रं तस्य शान्तये ॥ ४८८ नमो अस्तु सर्प्पेभ्यो ये के च पृथिवीमनु ॥ ये अन्तरिक्षे ये दिवि तेभ्यः सर्प्पेभ्यो नमः ॥ ४८९ ॥ सर्पस्थाने तु जुहुयादनेन घृतपायसम् ॥ मासमेकं सहस्रन्तु स्वर्णमुत्पद्यते ततः ॥ ४९० ॥ या इषवो यातुधानानां ये वा वनस्पतीनँनु ॥ ये वा बिलेषु शेरते तेभ्यः सर्प्पेभ्यो नमः ॥ ४९१ ॥ बिलप्रविष्टं सर्प्पन्तु दृष्ट्वा तत्रैव होमयेत ॥ आज्याहुतिसहस्रं तु तेन स्वर्णशतं लभेत् ॥ ४९२ ॥ कृणुष्वपाजः प्र-सितिं न पृथ्वीं याहि राजेवामवां इभेन ॥ त्रिष्वीमनप्रसितिं गृणानो स्तासिविध्य रक्षसस्तपिष्ठैः ॥ ४९३ ॥ प्रत्यङ्गिरऋचमिमा नित्यं यः प्रजपेत्सुधीः ॥ त्रिसन्ध्यं तस्याभिकृतं दुःखं पतति वैरिणि ॥ ४९४ ॥ उद-

श्रेतिष्ठ प्रत्वा तनुष्वन्यामित्राँओषधात्तिग्महेते ॥ यो नो अरातिं समिधा न चक्रे नीचा तं धक्ष्यत सं न शुष्कम् ॥ ४९५ ॥ विषाक्तराजिकारक्तकण्टकाञ्जुहुयाद्रिपोः ॥ गृहीत्वा शत्रुनामास्य ग्रामनाशः प्रजायते ॥ ४९६ ॥ कृतस्य क्रोधनाशार्थमयुतं प्रजपेन्मनुम् ॥ हुनेन्मात्रं सहस्रं तु सर्षपान्पुंवशीकृते ॥ ॥ ४९७ ॥ काण्डात्काण्डात्प्ररोहन्ती परुषः परुषस्परि ॥ एवा नो दूर्वे प्रतनु सहस्रेण शतेन च ॥ ४९८ ॥ या शतेन प्रतनोषि सहस्रेण विरोहसि ॥ तस्यास्ते देवीष्टके विधेम हविषा वयम् ॥ ४९९ ॥ आभ्यां दूर्वाप्रवालानामयुतं जुहुयाद्वशी ॥ ग्रामस्थं मारकं हन्याद्विगुणेन पुरः स्थितम् ॥ ५०० ॥ त्रिगुणे राष्ट्रकं हन्यान्महारोगांश्च षड्गुणैः ॥ नानादेशोद्भवं हन्यान्मारकं लक्षहोमतः ॥ ५०१ ॥ मधुमान्नो वनस्पतिर्मधुमाँअस्तु सूर्य्यः ॥ माध्वीर्गावो भवन्तु नः ॥ ५०२ ॥ उदुम्बरस्य समिधो येन कामेन यो हुनेत् ॥ आज्येनाक्ता अयुतशः प्रयुतावधियुक् ततः ॥ ५०३ ॥ आशुः शिशानो वृषभो न भीमो घनाघनः क्षोभणश्चर्षणीनाम् ॥ संक्रन्दनोनिमिष एकवीरः शतꣳसेना अजयत्साकमिन्द्रः ॥ ५०४ ॥ संक्रन्दनेनानिमिषेण जिष्णुना युत्कारेण दुश्च्यवनेन धृष्णुना ॥ तदिन्द्रेण जयत तत्सहध्वं युधो नरइषुहस्तेन वृष्णा ॥ ५०५ ॥ स इषुहस्तैः सनिषङ्गिभिर्वशी सꣳस्रष्टा स युध इन्द्रोगणेन ॥ सꣳसृष्टजित्सोमपाबाहुशर्ध्युग्रधन्वा प्रतिहिताभिरस्ता ॥ ५०६ ॥ बृहस्पते परिदीयारथेन रक्षोहामित्राँ अपबाधमानः ॥ प्रभञ्जन्सेना प्रमृणो युधाष्ट जयन्नस्माकमेध्यविता रथानाम् ॥ ५०७ ॥ बलविज्ञाय स्थविरः प्रवीरः सहस्वान्वाजी सहमान उग्रः ॥ अभिवीरो अभिसत्त्वासहोजाजैत्रमिन्द्ररथमातिष्ठगोवित् ॥ ५०८ ॥ गोत्रभिदं गोविदं वज्रबाहुं जयन्तमज्मप्रमृणन्तमोजसा ॥ इमꣳस जाता अनुवीरयध्वमिन्द्रꣳसखायोअनुसꣳरभध्वम् ॥ ५०९ ॥ अभिगोत्राणि सहसा गाहमानो दयो वीरः शतमन्युरिन्द्रः ॥ दुश्च्यवनः पृतनाषाढयुध्योस्माकꣳसेना अवतु प्रयुत्सु ॥ ५१० ॥ इन्द्र आसां नेताबृहस्पतिर्दक्षिणा यज्ञः पुर एतु सोमः ॥ देवसेनानामभिभञ्जतीनां जयन्तीनाम्मरुतो यन्त्वग्रम् ॥ ५११ ॥ इन्द्रस्य वृष्णो वरुणस्य राज्ञ आदित्यानां

मरुताᳬशर्ध उग्रम् ॥ महामनसां भुवनच्यवानां घोषो देवानां जयतामुद-स्थात् ॥ ५१२ ॥ उद्धर्षय मघवन्नायुधान्युत्सत्वनां मामकानां मनाᳬसि ॥ उद्वृत्रहन्वाजिनां वाजिनान्युद्रथानां जयतां यन्तु घोषाः ॥ ५१३ ॥ अ-स्माकमिन्द्रः सम्भृतेषु ध्वजेष्वस्माकं या इषवस्ता जयन्तु ॥ अस्माकं वीरा उत्तरे भवन्त्वस्माँ उ देवा अववाहवेषु ॥ ५१४ ॥ अमीषां चित्तं प्रतिलोभ-यन्ती गृहाणाङ्गान्यप्वेपरेहि ॥ अभिप्रेहि निर्दह हृत्सुशोकैरन्धेनामित्रास्तमसा सचन्ताम् ॥ ५१५ ॥ अवसृष्टा परापत शरव्ये ब्रह्मसᳬशिते ॥ गच्छामि-त्रान्प्रपद्यस्व मामीषां कंचनोच्छिषः ॥ ५१६ ॥ प्रेता जयता नर इन्द्रो वः शर्म्म यच्छतु ॥ उग्रा वः सन्तु बाहवोऽनाधृष्या यथासथ ॥ ५१७ ॥ यत्र बाणाः सम्पतन्ति कुमारा विशिखा इव ॥ तन्न इन्द्रो बृहस्पतिरदितिः शर्म्म यच्छतु विश्वा हा शर्म्म यच्छतु ॥ ५१८ ॥ मर्म्माणि ते वर्म्मभिश्छादयामि सोमस्त्वा राजामृतेनाभिवस्ताम् ॥ उरोर्वरीयो वरुणस्ते कृणोतु जयन्तं त्वानुदेवा मदन्तु ॥ ५१९ ॥ अनेन चानुवाकेन आत्मानं चायुधान्यपि ॥ अभिमन्त्र्य रणे यायाद्विजयो जायते ध्रुवम् ॥ ५२० ॥ चौरं व्याघ्रं च महिषं सिंहं सर्प्पं च राक्षसम् ॥ श्रुत्वा तस्मिन्स्थले चिन्त्योनुवाको मनसा द्विजैः ॥ ५२१॥ तत्स्थानं कुशलं गच्छेदथ वा मन्त्रमन्त्रितान् ॥ अक्षतान्वा कुशान्वापि क्षिपेद्रक्षा भवत्वितः॥५२२॥सप्त ते अग्ने समिधः सप्त जिह्वाः सप्त ऋषयः सप्तधामप्रियाणि सप्त होत्रास्सप्तधा त्वा यजन्ति सप्तयोनीरापृणस्व घृतेन स्वाहा ॥ ५२३ ॥ सहस्रतश्च लक्षान्तमनेन च घृताहुतीः॥हुत्वा भवति तेजस्वी हुनेदयुतसङ्ख्यया ॥ ५२४ ॥ औदुम्बर्य्यश्च समिधो घृताक्ताः कनकं लभेत् ॥ सप्त-तोलकपर्यन्तं षण्मासाभ्यन्तरे ध्रुवम् ॥ ५२५ ॥ स नो भुवनस्य प्रजापते यस्य त उपरिगृहा यस्य वेह ॥ अस्मै ब्रह्मणस्मै क्षत्राय महिशर्म्म यच्छ स्वाहा ॥ ५२६ ॥ इदमिन्द्राय स्वाहेति त्यागोत्र जुहुयाद्घृतम् ॥ सह-स्राष्टकमेतेन वास्तुदोषात्प्रमुच्यते ॥ ५२७ ॥ नापमृत्युर्गृहे तस्मिंश्चित्तोद्वेगो न जायते ॥ नाप्नोति सूतिकापीडां भयं नैकाकिनो भवेत् ॥ ५२८ ॥ अग्न आयूंषि पवस आसुवोर्जमिषंच नः ॥ आरे बाधस्वदुच्छुनाम् ॥

अनेनाज्यं सहस्रन्तु हुत्वा शत्रुगृहं व्रजेत् ॥ ५२९ ॥ तेनापवर्जनं सम्यक्प्रीतिपूर्वं च मित्रवत् ॥ हिरण्यपाणिमूतये सवितारमुपह्वये ॥ सचेता-देवतापदम् ॥ ५३० ॥ अनेनायुतसङ्ख्याका औदुम्बर्य्यस्तथा-र्कजाः ॥ सुवर्णवृद्धिसिद्ध्यर्थं घृताक्ताः समिधो हुनेत् ॥ ५३१ ॥ त्राता रमिन्द्रमवितारमिन्द्रॅं हवेहवे सुहवॅं शूरमिन्द्रम् ॥ ह्वयामि शक्रं पुरुहूत-मिन्द्रॅं स्वस्ति नो मघवा धात्विन्द्रः ॥ ५३२ ॥ महीमूष मातरॅं सुव्र-तानामृतस्य पत्नीमवसेहुवेम ॥ तुविक्षत्रामजरन्तीमुरूचीॅं सुशर्म्माणमदिति ॅंसुप्रणीतिम् ॥ ५३३ ॥ एतन्मन्त्रजपेनैव दुस्तरार्थं द्रुतं तरेत् ॥ पोतस्थो वापि नौकास्थो जले यद्वन्न मज्जति ॥ ५३४ ॥ गणानान्त्वा गणपतिं हवा-महे कविं कवीनामुपमश्रवस्तमम् ॥ ज्येष्ठराजं ब्रह्मणां ब्रह्मणस्पतआ नः शृण्वन्नूतिभिः सीद सादनम् ॥ ५३५ ॥ अनेन जुहुयान्मन्त्री यवान्धान्यं तिलांस्तथा ॥ अपामार्गस्य समिध औदुम्बर्य्यस्तथैव च ॥ ५३६ ॥ पृथ-क्पृथक्प्रस्थमात्रं लक्षावधि तथातथा ॥ धनं विवर्धते चाथ होमं कुर्य्याच्चतुष्पथे ॥ ५३७॥ पिचुमन्दोद्भवैः पत्रैः सहसैकं वशीकृतौ ॥ वल्मीकस्य मृदा लिंगं कृत्वा च स्नापयेत्तथा ॥ ५३८ ॥ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्ये-माक्षभिर्यजत्राः ॥ स्थिरैरंगैस्तुष्टुवा ॅंसस्तनूभिर्व्यशेम देवहितं यदायुः ॥ ५३९ ॥ इमां तु प्रजपेल्लक्षद्वयं वा विकलेन्द्रियः ॥ पूर्णेन्द्रियः स भवति षण्ढत्वाच्च विमुच्यते ॥ ५४० ॥ आभित्वा गीर्वाणो गिर इमा भवन्तु विश्वतः ॥ वृद्धायुमनुवृद्धयो जुष्टा भवन्तु जुष्टयः ॥ ५४१ ॥ कण्ठमात्रो-दके स्थित्वा चाहोरात्रमतन्द्रितः ॥ जपेदेनामृचं वृष्टिर्भवेत्कालं विना तदा ॥ ५४२ ॥ यज्जाग्रतोदूरमुदैतिदैवं तदुसुप्तस्य तथैवैति ॥ दूरंगमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥ ५४३ ॥ येन कर्म्माण्यपशो मनीषिणो यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः ॥ यदपूर्व यक्षमन्तः प्रजानां तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥ ५४४ ॥ यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु ॥ यस्मान्न ऋते किञ्चन कर्म्म

१ द्वितीयार्थे प्रथमा ।

क्रियते तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥ ५४५ ॥ येनेदं भूतं भुवनं भविष्यत्परिगृहीतममृतेन सर्वम् ॥ येन यज्ञस्तायते सप्त होता तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥ ५४६ ॥ यस्मिन्नृचः सामयजूंषि यस्मिन्प्रतिष्ठिता रथनाभाविवाराः यस्मिंश्चित्त ँ सर्वमोतं प्रजानां तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु॥५४७॥ सुषारथिरश्वानिव यं मनुष्यान्नेनीयन्तेभीषु भिर्वाजिन इव ॥ हृत्प्रतिष्ठं यदजिरंजविष्ठं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥ ५४८ ॥ अयुतं प्रजपेदेताश्चित्तस्थैर्य्यं प्रजायते ॥ आवाह्य सोमादिवसे पार्थिवं लिंगमुत्तमम् ॥ ५४९ ॥ नित्यकर्म्मान्तरं कुर्य्यादष्टोत्तरशतं कणाः॥ क्रोडीकृत्याक्षताश्चैवं स्थाप्याः स्थानचतुष्टये ॥ ५५० ॥ संकल्पं मनसा कृत्वा पार्थिवं लिंगमर्च्चयेत् ॥ पूजनान्ते ऋचां पाठमेकं कृत्वाक्षतान्न्यसेत् ॥५५१॥ प्रथमे प्रहरे पर्वभागे लिङ्गस्य मूर्द्धनि॥ द्वितीयादिप्रहरके दक्षिणाद्यासु विन्यसेत ॥ ५५२ ॥ एतन्मध्ये जपेद्रात्रौ स्वेष्टं कार्य्यं स पश्यति ॥ यदा न स्यादासायं तु कृत्यं कृत्वा च भक्षयेत् ॥ ॥ ५५३ ॥ त्रयंत्रयं चतुर्दिक्षु तण्डुलानां स्थितिं चरेत ॥ अष्टवार सहस्रन्तु जाप्या एता ऋचः शुभाः ॥ ५५४ ॥ अवश्यमेव भवति स्वप्नः सत्यो न चान्यथा ॥ भूतं वा वर्त्तमानं वा भविष्यदपि दृश्यते ॥ ५५५ ॥ त्वन्नोअग्ने वरुणस्य विद्वान्देवस्य हेडो अवयासिसीष्ठाः ॥ यजिष्ठो वह्नितमः शोशुचानो विश्वा द्वेषा ँसि प्रमुमुग्ध्यस्मत् ॥ ५५६ ॥ सहस्रादि च लक्षान्तमनया जुहुयुर्घृतम् ॥ पुत्रार्थिनः सुपुत्राः स्यु ः पशूंश्चैवैतदर्थिनः ॥ ५५७ ॥ अथ सर्वोत्तमं वक्ष्ये श्रीसूक्तं सविधानकम्॥कलौ दारिद्र्यनाशाय नान्यत्किञ्चिन्नृणां तथ ॥ ५५८ ॥ हिरण्यवर्णां हरिणीं सुवर्णरजतस्रजम् ॥ चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह ॥ ५५९ ॥ तां म आवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम् ॥ यस्यां हिरण्यं विन्देयं गामश्वं पुरुषानहम् ॥ ५६० ॥ अश्वपूर्वां रथमध्यां हस्तिनादप्रबोधिनीम् ॥ श्रियं देवीमुपह्वये श्रीर्मा देवीजुषताम् ॥ ५६१ ॥ कां सोस्मितां हिरण्यप्राकारामार्द्रां ज्वलन्तीं तृप्तां तर्पयन्तीम् ॥ पद्मस्थितां पद्मवर्णां तामिहोपह्वये श्रियम् ॥ ५६२ ॥

---

१ लभन्ते इति शेषः ॥

चन्द्रां प्रभासां तपसा ज्वलन्तीं श्रियं लोकेदेवजुष्टामुदाराम् ॥ तां पद्मनीमीं शरणं प्रपद्ये अलक्ष्मीर्मे नश्यतां त्वा वृणे ॥ ५६३ ॥ आदित्यवर्णे तपसो धिजातो वनस्पतिस्तव वृक्षोथ बिल्वः ॥ तस्य फलानि तपसा नुदन्तु माया-न्तरा याश्च बाह्या अलक्ष्मीः ॥ ५६४ ॥ उपैतु मां देवसखः कीर्तिश्च मणिना सह ॥ प्रादुर्भूतोस्मि राष्ट्रेस्मिन्कीर्तिमृद्धिं ददातु मे ॥ ५६५ ॥ क्षुत्पिपासामला ज्येष्टामलक्ष्मीं नाशयाम्यहम् ॥ अभूतिमसमृद्धिं च सर्वा निर्णुद मे गृहात् ॥ ५६६ ॥ गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषि-णीम् ॥ ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम् ॥ ५६७ ॥ मनसः का-ममाकूतिं वाचः सत्यमशीमहि ॥ पशूनां रुपमन्नस्य मयि श्रीः श्रयतां यशः ॥ ५६८ ॥ कर्दमेन प्रजा भूता मयि सम्भव कर्दम ॥ श्रियं वासय मे कुले मातरं पद्ममालिनीम् ॥ ५६९ ॥ आपः सृजन्तु स्निग्धानि चि-क्लीत वस मेगृहे ॥ निचदेवीं मातरं श्रियं वासय मे ले ॥ ५७० ॥ आर्द्रां पुष्करिणीं पुष्टिं सुवर्णां हेममालिनीम् ॥ सूर्य्यां हिरणमयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह ॥ ५७१ ॥ आर्द्रां पुष्करिणीं यष्टिं पिङ्गलां पद्ममालिनीम् ॥ चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जात वेदो म आवह॥५७२॥तां म आवह जातवेदो लक्ष्मी-मनगामिनीम् ॥ यस्यां हिरण्यं प्रभूतं गावो दास्योऽश्वान्विन्देयं पुरुषानहम् ॥ ॥ ५७३ ॥ हिरण्यवर्णामित्यस्य ऋचो लक्ष्मीर्मुनिर्मतः॥ चतुर्दशानामीशाना-मानन्दः कर्दमस्तथा॥५७४॥चिल्कीत लक्ष्मीतनयाश्चत्वारो मुनयो मताः॥ हिरण्यादितिसृणां चच्छन्दोनुष्टुबुदाहृतम् ॥ ५७५ ॥ कां सोस्मितचों बृहती शशाङ्कादित्यवर्णयोः त्रिष्टुबच्छन्द उपैतु मां देवाद्यष्टकचामपि ॥ ५७६ ॥ छन्दोनुष्टुप्समाख्यातं तां म आवह इत्यृचः ॥ प्रस्तारपंक्तिरुद्दिष्टा देवते श्रीविभावसू ॥ ५७७ ॥ व्यञ्जनानि तु बीजानि स्वराः शक्तय ईरिताः ॥ बिन्दवः कीलकं प्रोक्तं त्वंगुष्ठादिषडङ्गकम् ॥ ५७८ ॥ हिरण्या च तथा

१ हिरण्यायै अंगुष्ठाभ्यां नमः, चन्द्रायै तर्जनीभ्यां नमः, रजतप्रभायै मध्यमाभ्यां नमः, हिरण्यस्रजे अनामिकाभ्यां नमः हिरण्याक्ष्यै कनिष्ठिकाभ्यां नमः, हिरण्यवर्णिकायै करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः, इत्यंगुष्ठादिन्यासः ॥

चन्द्रतृतीया रजतप्रभा ॥ हिरण्यस्रग्घिरण्याक्षी तथा हिरण्यवर्णिका॥५७९॥ एताभिर्ङेनमोन्ताभिः प्रकुर्य्यादङ्गकल्पनम् ॥ मूर्द्धाक्षिकर्णनासास्यगलदोर्हृ-स्तनाभिषु ॥ ५८० ॥ गुदपायूरुयुग्जानुजङ्घापत्सु न्यसेद्वचः ॥ न्यासद्व-यमिदं देवि कुर्य्याद्ध्यानं ततश्चरेत् ॥ ५८१ ॥ अरुणनलिनसंस्था तद्रजःपुञ्जवर्णा करकमलधृतेष्टाभीतियुग्माम्बुजा च ॥ मणिमुकुटविचित्रालंकृताक-ल्पजालैर्भवतु भुवनमाता सन्ततं श्रीः श्रिये नः ॥ ५८२ ॥ षट्कोणं मध्यमा-लिख्य पूज्यास्तत्राङ्गदेवताः ॥ आग्नेयकोणतस्तद्वत्तद्बाह्येष्टदलेष्विमाः ॥ ॥ ५८३ ॥ पद्मासना पद्मवर्णा पद्मस्था पद्मलोचना ॥ तर्पयन्ती च तृप्तिश्च ज्वलन्ती तदनन्तरम् ॥ ५८४ ॥ स्वर्णप्राकारसञ्ज्ञा च ह्रींद्रादीनायुधानि च आवाहनं चासनं स्यादर्घ्यपाद्याचमानि च ॥ ५८५ ॥ मधुपर्काभिषेकौ च वस्त्रालङ्कारचन्दनम् ॥ पुष्पं धूपं दीपभोज्यं प्रोद्वासनमिति क्रमात् ॥ ॥ ५८६ ॥ एतानि मन्त्रवित्कुर्य्यादृक्पञ्चदशकेन हि ॥ ततश्च फलताम्बूले दत्त्वा नीराजयेच्छ्रियम् ॥ ५८७ ॥ ततश्च होमयेदाज्यमेभिः पञ्चदशर्चकैः॥ दत्त्वा देव्यै चाचमनं तां म आवहमन्त्रतः ॥ ५८८ ॥ उद्वासयेत्स्वे हृदये कृताञ्जलिपुटः पठेत् ॥ श्रीसूक्तं नित्यपूजेयं पुरश्चरणमुच्यते ॥ ५८९ ॥ पीरिषश्चेत्रिशो नित्यं सूक्तैस्तैः स्नानकर्म्मणि ॥ आदित्याभिमुखो जप्त्वा-यावत्तावच्च तर्पयेत् ॥५९०॥ शुक्लायां तिथिमारभ्य यावदेकादशी भवेत ॥ तावद्द्वादशसाहस्रं जपेन्निश्चलमानसः ॥५९१॥ ब्रह्मचर्यरतः शुद्धवस्त्रदन्ता-दिकः सुधीः ॥ पद्मैस्त्रिमधुरोपेतैर्घृताक्तेन पयोन्धसा ॥ ५९२ ॥ श्रीसमिद्भिः सर्प्पिषा च प्रत्यहं त्रिशतं हुनेत् ॥ द्वादश्यां द्वादशैवाथ सद्विप्रांश्चापि भोज-येत् ॥ तेन सिद्धो भवेन्मन्त्रो नात्र कार्या विचारणा ॥ ५९३ ॥ कुन्दम-न्दारकुमुदमालतीपद्मकेतकैः ॥ नन्द्यावर्त्ताह्वयं जाती कल्हारं चम्पकं तथा ॥ रक्तोत्पलादिपुष्पाणि लक्ष्म्याश्चातिप्रियाणि च ॥ ५९४ ॥ त्रिवा-रमन्वहं मन्त्री जुहुयाच्च यथाविधि ॥ षण्मासं यः करोत्येवं स स्याल्लक्षपतिः

१ मूर्द्धादिपादपर्यन्तपञ्चदशसु अंगेष्वेवं न्यासं कुर्यात्सोग्रे कथ्यते हिरण्यवर्णामिति मूर्द्धनि, तां आवह इति नेत्रयोः, अश्वपूर्णामिति कर्णयोः एतद्रीत्यान्येपि ज्ञेयाः ॥

स्वयम् ॥ ५९५ ॥ विकसन्मात्र एवाब्जे नवनीतम्प्रविन्यसेत् ॥ मध्ये सकेशरे पत्रे सम्यक्पत्रान्तरे तथा ॥ सुसमिद्धेनले तच्च समुद्धृत्य हुनेत्सुधीः ॥ ५९६ ॥ अभ्यर्च्याष्टोत्तरशतं जपंश्च भृगुवासरे ॥ चत्वारिंशद्भिरस्य स्यान्महालक्ष्मीरचञ्चला ॥५९७॥ तुरीयर्चा च जुहुयाद्घृतेनैकादशाहुतीः॥ एवं कुर्वत एवास्य षण्मासात्स्यान्महेन्दिरा ॥ ५९८ ॥ य इच्छेद्वरदां देवीं श्रियं नित्यं कुले स्थिराम् ॥ स शुचिः प्रियतो भूत्वा जुहुयादाज्यमन्वहम् ॥ ॥ ५९९ ॥ श्रियः पञ्चदशर्चस्तु श्रीकामः सततं जपेत् ॥ आवाहयेच्छ्रियं पद्मे पञ्चभिः कनकैरथवा ॥ ६०० ॥ उपहारानुपहरेद्भक्ष्यं भक्ष्यं पयो दधि ॥ स्थालीपाकं च शालीनां पयसा सम्प्रकल्पयेत् ॥ ६०१ ॥ चन्द्रायणकृतात्मा तु प्रपद्येत यतः श्रियम् ॥ सर्वौषधीभिः फाण्टैश्च स्नात्वाभिपाचितैरपि ॥ ६०२ ॥ उपैतु मां देवसख इति राज्ञोभिषेचने ॥ मनसः काम इत्येषा पशुकामाभिषेचने ॥ ६०३ ॥ कां सोस्मीति च सुस्नायात्प्रजाकामः शुचिव्रतः ॥ अश्वपूर्णामिति स्नायाद्राज्यकामः समाहितः ॥ ६०४ ॥ विहिते चर्म्मणि स्नायाद्ब्राह्मणस्तु यथाविधि ॥ राज्ञश्चर्म्मणि वैयाघ्रे क्षत्रियस्याथ रौरवे ॥ वस्तचर्म्मणि वैश्यस्य होमः कार्य्यस्त्वनन्तरम् ॥ ॥ ६०५ ॥ चन्द्रामिति तु पद्मानि जुहुयात्सर्पिषा द्विजः ॥ आदित्यवर्णेत्यनया बिल्वहोमो विधीयते ॥ ६०६ ॥ बिल्वेन्धनभवाग्निः स्याच्छालींश्च जुहुयाद्द्विजः ॥ दशसाहस्रिको होमः श्रीकामस्य प्रकीर्तितः ॥ हुत्वा तु प्रथमं सम्यगनन्तां विंदते श्रियम् ॥ ६०७ ॥ अयुतं दशकृत्वस्तु हुत्वा सूक्तानि सर्पिषा ॥ अनुक्तामव्यवच्छिन्नां शाश्वतीं विंदते श्रियम् ॥ ॥ ६०८ ॥ अशक्तौ जप एवोक्तो दशसाहस्रिको वरः ॥ जपे तु प्रयुतं सम्यगनन्तां विंदते श्रियम् ॥ ६०९ ॥ अयुतं दशकृत्वस्तु जप्त्वा श्रियमुपाश्नुते ॥ अवश्यं जुहुयान्नित्यं पद्मान्ययुतशोपि च ॥ ६१० ॥ इष्ट्वा श्रियस्तु परमा बिल्वान्सुज्ञो बिभर्ति वै॥बिल्वाशी बिल्वनिलयो जुह्वद्बिल्वानि सर्पिषा॥ एकविंशतिरात्रेण परां सिद्धिं स गच्छति ॥ ६११ ॥ येनयेन च कामेन

१ तस्येति शेषः ॥

जुहोति नियतेन्द्रियः॥पद्मान्यथापि बिल्वानि सस कामः समृद्धयति ॥६१२॥ न जातु कृपणोर्थाय श्रियमावाहयेत्कचित्॥नयेत्किञ्चन कामेन होमः कार्य्यः कथञ्चन ॥ ६१३ ॥ महद्वा प्रार्थमानेन चाज्यकामेन वा पुनः ॥ वान्यत्प्रार्थयता रत्नाद्युक्तैः श्रीरिज्यते ध्रुवम् ॥ ६१४ ॥ प्रधानतर्प्पणान्ते च सन्तर्प्याः शक्तयस्त्विमाः ॥ प्रणवाद्या हृदन्ताश्च श्रीर्लक्ष्मीर्वरदा तथा ॥ विष्णुपत्नी च वसुदा वसुरूपा हिरण्मयी ॥ ६१५ ॥ पद्मा मालिन्यथ रमा प्रोक्ता तु रजतप्रभा ॥ सुवर्णा प्रग्रहा स्वर्णप्राकारा पद्ममालिनी ॥ इन्द्राविश्वप्रियैश्वर्य्यौ भुक्तिश्चापि प्रमुक्तियुक् ॥ ६१६ ॥ विशुद्धर्द्धिः समृद्धिश्च तुष्टिः पुष्टिर्धनाह्वया ॥ भुवनेशी च शुद्धा च भोगिनी भोगदा तथा ॥६१७॥ धात्री विधात्री द्वात्रिंशच्छक्तयः समुदीरिताः ॥ प्रणवादिचतुर्थ्यन्तैर्नमोभिश्चैव तर्प्पयेत्॥६१८॥बलिं भक्ष ममेत्येतैर्नामभिर्बलिमाहरेत् ॥ पूजान्ते प्रत्यहं कार्य्यो नियमश्च निगद्यते ॥ ६१९ ॥ शयीत शुद्धः शय्यायां तरुण्या सह नाथ वा ॥ मलिनो न भवेज्जातु कुत्सितान्नं न भक्षयेत् ॥ ६२० ॥ द्रोणपङ्कजबिल्वानि पद्मं जातु न लङ्घयेत् ॥ यतो लक्ष्मीप्रियाश्चैते कदाचिद्बुद्धिमांस्ततः ॥ ६२१ ॥ सहदेवीमिन्द्रवल्लीं श्रीदेवीं विष्णुवल्लभाम् ॥ कन्यां जम्बूं प्रवालञ्च धारयेन्मूर्ध्नि सर्वदा ॥ ६२२ ॥ स्योना पृथिवि नो भवानृक्षरा निवेशनी ॥ यच्छा नः शर्म्म सप्रथाः अप नः शोशुचदघम् ॥ ६२३॥ इमामृचं प्रतिदिनं यस्तु विप्रः शुचिर्जपेत् ॥ विन्दते महतीं भूमिमसपत्नामकण्टकाम् ॥ ६२४ ॥ तद्विष्णोः परमं पदꣳसदा पश्यन्ति सूरयः ॥ दिवीव चक्षुराततम् ॥ ६२५ ॥ मन्त्रसिद्धौ पराबाधा दोषास्तु प्रतिबन्धकाः ॥ इमामृचं जले जप्त्वा तेषां नाशः प्रजायते ॥ ६२६ ॥ आकृष्णेन रजसा वर्त्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यं च ॥ हिरण्ययेन सविता रथेनादेवो याति भुवनानि पश्यन् ॥ ६२७ ॥ अनया योर्चयेत्सूर्य्यन्त्रिसध्यं विजितेन्द्रियः ॥ ज-

---

१ एवमन्यत्र नामस्वपि ज्ञेयम् ॐकारादिचतुर्थ्यन्तनाम्नामन्ते नमः पदं संयोज्य तृप्यतुपदमुच्चरेत् नमः पदं संयुज्य तृप्यात्विति पदमुच्चारयेत् । यथा ॐ श्रियै नमः श्रीस्तृप्यतु । अनयैव रीत्यान्यनामानि ज्ञेया ।

पेदष्टोत्तरशतं सम्पूर्णायुर्गदोज्झितः ॥ ६२८ ॥ अष्टोत्तरशतं जप्त्वा ध्याय-न्निशि दिवाकरम् ॥ अग्नौ हुत्वानयाचा ज्यं दीर्घमायुरवाप्नुयात् ॥ ६२९ ॥ सद्योजातं प्रपद्यामि सद्योजाताय वै नमः॥भवेभवे नातिभवे भवस्व मां भवोद्भ-वाय नमः ॥ ६३० ॥ वामदेवाय नमो ज्येष्ठाय नमः श्रेष्ठाय नमो रुद्राय नमः कालाय नमः कलविकरणाय नमो बलविकरणाय नमो बलाय नमो बलप्रमथनाय नमः सर्वभूतदमनाय नमो मनोन्मनाय नमः ॥ ६३१ ॥ अघो-रेभ्योथ घोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः ॥ सर्वेभ्यः सर्वशर्वेभ्यो नमस्ते अस्तु रुद्ररू-पेभ्यः ॥६३२॥ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि ॥ तन्नो रुद्रः प्रचो-दयात् ॥ ६३३ ॥ ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानाम् ॥ ब्रह्माधि-पतिर्ब्रह्मणोधिपतिर्ब्रह्म शिवो मे अस्तु सदाशिवोम् ॥ ६३४ ॥ मृत्युञ्जया-न्ता एताः षष्टचो जपेच्च दिनेदिने ॥ स नारीनरगोशान्तिं शङ्करात्प्राप्नुयात्सदा ॥ ६३५ ॥ एतेनैव षडर्चेन जुहुयादाज्यमन्वहम् ॥ वह्निं च कल्पयेद्वीद्र भूत्यर्थं पञ्चपर्वसु ॥ ६३६ ॥ उदुत्यं जातवेदसं देवं वहन्ति केतवः ॥ दृशे विश्वाय सूर्य्यम् ॥ ६३७ ॥ त्रिसन्ध्यमनया सूर्य्यमुपतिष्ठेत योन्वहम् ॥ हृद्रोगनाशनं तस्य परमारोग्यवर्धनम् ॥ ६३८ ॥ त्वं सोमः पितृभिः संविदा-नो नु द्यावापृथिवी आततंथ ॥ यत्ते महे प्रति तं नो जुषस्व शन्न एधि-द्विपदे चतुष्पदे ॥ ६३९ ॥ उपतिष्ठेत्समित्पाणिः शशिनं मानवो निशि ॥ अनया य ऋचा सोमं तस्य दुःखं लयं व्रजेत् ॥ ६४० ॥ उद्यन्तमुपतिष्ठेत पौर्णमास्यां समाहितः ॥ वासांस्यपि स विन्देत चन्द्रस्यैति सलोकताम् ॥ ६४१ ॥ विष्णोर्नु कं वीर्य्याणि प्रवोचं यः पार्थिवानि विममे रजाᳬंसि ॥ यो अस्कभा यदुत्तरᳬंसधस्थं विचक्रमाणस्त्रेधोरुगाया विष्यावोचा ॥६४२॥ विष्णो रराटमसि विष्णोः श्नप्त्रेस्थो विष्णोः स्यूरसि विष्णोर्ध्रुवोऽसि ॥ वैष्ण-वमसि विष्णवे त्वा ॥ ६४३ ॥ विशणोः कर्म्माणि पश्यत यतो व्रतानि पश्य-से ॥ इन्द्रस्य युज्यः सखा ॥ ६४४ ॥ इन्द्राविष्णू नमस्कृत्य एताभिस्तृ-स्राभिर्नरः ॥समित्पाणिः शुचिर्भूत्वा उप्रतिष्ठेत योन्वहम् ॥ ६४५ ॥

१ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवर्धनम् । उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् ॥

धर्म्मं बुद्धिं धनं पुत्रानारोग्यं ब्रह्मवर्चसम् ॥ प्राप्नोति परमं स्थानं ज्योतीरूपं सनातनम् ॥ ६४६ ॥ कृणुष्वपाजः प्रसितिं न पृथ्वीं याहि राजेवामवा इभे न ॥ तृष्वीमनुप्रसितिं द्रुणानोस्तासि विध्यरक्षसस्तपिष्ठैः ॥ ६४७ ॥ तव भ्रमास आशु या पतन्त्यनुस्पृश धृषता शोशुचानः ॥ तपूंष्यग्ने जुह्वापतङ्गा न संदितो विसृजविष्वगुल्काः॥६४८॥प्रतिस्पशो विसृज तूर्णितमो भवायायुर्विशो अस्या अदब्धः॥यो नो दूरे अघस सोयो अन्त्यग्ने माकिष्टे व्यथिराद्धर्षीत॥६४९॥उदग्ने तिष्ठ प्रत्यातनुष्व य मित्राॅं ओषतात्तिग्महेते॥यो नो अरातिॅं सविधा न चक्रे नीचातं धक्ष्यत सन्नशुष्कम् ॥ ६५० ॥ ऊर्ध्वो भव प्रतिविध्या ध्यस्मदाविष्कृणुष्व दैव्यान्यग्ने ॥ अवस्थिरा तनुहि यातुजूनां जामि मजामि प्रमृणीहि ॥ ६५१ ॥ स ते जानाति सुमतिं यविष्ठय-युव ते ब्रह्मणे गातु मैरत् ॥ विश्वान्यस्मै सुदिनानि रायो द्युम्नान्यर्य्यो-विदुरो अभिद्यौत् ॥ ६५२ ॥ सेदा ने अस्तु सुभगः सुदातुर्यस्त्वानिन्येम हविषा य उक्थैः ॥ पिप्रीषति स्व आयुषि दुरोणे विश्वैरस्मै सुदिना सा सदिष्टिः ॥ ६५३ ॥ अर्चामि ते सुमतिं घोष्यर्वाक्संते वा वाता तरतामियं गौः ॥ स्वश्वास्त्वा सुरथामर्जये मास्मे क्षत्राणि धारयेरनुद्यून् ॥ ६५४ ॥ इह त्वा भूर्य्याचरेदुपत्नं दोषा वस्तदीदिवाॅंसमनुद्यून् ॥ क्रीडन्तस्त्वा सुमनसः सते मानिद्युम्नातस्थिवाॅंसो जनानाम् ॥ ६५५ ॥ यस्त्वा स्वश्वः सुहिरण्यो य आ न उपयाति वसुमता रथेन ॥ तस्य त्राता भवसि तस्य सखायस्त आ-दिथ्यामानुषा जुजोषत् ॥ ६५६ ॥ महोरुजामि बन्धुता वचोभिस्तन्मा पितुर्गोतमोदन्वियाय ॥ त्वन्नो अस्य वचसश्चिकिद्धि होतर्यविष्ठसुक्रतोदनूनाः॥ ॥ ६५७ ॥ अस्वप्नजस्तरणयः सुशेवा अतन्द्रासो वृका अकमिष्ठाः ॥ तेपा-यकसंचियंचोनिषद्योग्ने तव नः पान्त्वमूः ॥ ६५८ ॥ ये पापवो माम ते यन्ते अग्ने पश्यन्तो अघं दुरितादरक्षन् ॥ ररक्ष तान्सकृतो विश्ववेदा दिप्सन्त इन्द्रि-यवो ना ह देभुः ॥ ६५९ ॥ त्वया वयॅंसधन्या स्त्वोतास्तव प्रणीत्यश्याम वाजान् ॥ उभाशॅंसासुदयसत्पता ते ॥ ६६० ॥ उष्ट्रया कृणुह्यणुह्यह-याणा अथो ते अग्ने समिधारिधेमप्रतिस्तोम शस्यमानं गृभाय ॥ इहाशसो

रक्षसः पाह्यस्माद्रुहोनिदोमित्रमहो अवद्यात् ॥ ६६१ ॥ रक्षोहणं वाजिनमाजिवर्म्मि मित्रं प्रथिष्ठमुपयामि शर्म्म ॥ शिशानो अग्निः क्रतुभिः समिद्धः स नो दिवा स रिषः पातु नक्तम् ॥ ६६२ ॥ विज्योतिषा बृहता भात्यग्निराविर्विश्वानि कृणुते महित्वा ॥ प्रादेवीर्मायाः सहते दुरेवाःशिशीते शृणे रक्षसे विनिक्षे ॥ ६६३ ॥ उत स्वानासो दिविषं त्वग्नेस्तिग्मायुधा रक्षसे हन्त वा उ ॥ मदैचिदस्य द्रुचरुजन्ति भामानवरन्ते परिवाधो अदेवीः ॥ ६६४ ॥ एतत्सूक्तं जपेद्विप्रो यदा स्याद्दस्युभिर्वृतः ॥ अरातीनां हरेत्प्राणान्भयन्नैवोपजायते ॥ ६६५ ॥ क्षेत्रस्य पतिना वय७७हि तेनेव जयामसि ॥ गामश्वं पोषयित्वा नो मृडातीदृशे ॥ ६६६ ॥ इमामृचं क्षेत्रपतेः प्रत्यहं यो जपेच्छुचिः ॥ पश्यन्सूर्य्यं द्विजो नित्यं विन्दते क्षेत्रमुत्तमम् ॥ ६६७ ॥ वक्ष्ये पुरुषसूक्तस्य विधिं तन्त्रेषु गोपितम् ॥ अनुष्टुबस्य सूक्तस्य त्रिष्टुबन्त्यस्य देवता ॥ ६६८ ॥ पुरुषो यो जगद्बीजमृषिर्नारायणः स्मृतः ॥ स्नात्वा यथोक्तविधिना प्राङ्मुखः शुद्धमानसः ॥ ६६९ प्रथमां विन्यसेद्वामे द्वितीयां दक्षिणे करे ॥ तृतीयां वामपादे तु चतुर्थीं दक्षिणे न्यसेत् ॥ ६७० ॥ वामजानौ पञ्चमीं च षष्ठीं दक्षिणजानुनि ॥ सप्तमीं वामकट्यां वै चाष्टमीं दक्षिणे कटौ ॥ ६७१ ॥ नवमीं नाभिदेशे तु दशमीं हृदये न्यसेत् ॥ एकादशीं कण्ठदेशे द्वादशीं वामबाहुके ॥ ६७२ ॥ त्रयोदशीं दक्षभुजे मुखदेशे चतुर्दशीम् ॥ अक्ष्णोः पञ्चदशीं चैव षोडशीं मूर्ध्नि विन्यसेत् ॥ एवं न्यासविधिं कृत्वा पश्चात्पूजां समाचरेत् ॥ ६७३ ॥ अप्स्वग्नौ हृदये सूर्ये स्थण्डिले प्रतिमासु च ॥ ६७४ ॥ षट्स्वेतेषु हरेः सम्यगर्च्चने योग्यतोच्यते ॥ आपोस्यायतनं यस्मात्तस्मात्तासु सदा हरिः ॥ अग्नौ क्रियावतां विष्णुर्योगिनां हृदये हरिः ॥ ६७५ ॥ पण्डितानां हरिः सूर्य्यः स्थण्डिले भावितात्मनाम् ॥ प्रतिमास्वल्पबुद्धीनां षट्प्रकाराश्च ताः स्मृताः ॥ ६७६ ॥ अकृत्रिमाः कृत्रिमाश्च अचलाश्च तथाचलाः ॥ निर्जीवाश्च सजीवाश्च प्रतिमास्सन्ति वै हरेः ॥ ॥ ६७७ ॥ शृणु देवि क्रमात्तासामहं वक्ष्यामि लक्षणम् ॥ अकृत्रिमा च द्विविधा शालग्रामोतिपावनः ॥ ६७८ ॥ तदभावे द्वारकायाश्चक्रं तद्वच्च पाव-

नम् ॥ कृत्रिमा दशधा प्रोक्ताः श्रेष्ठास्ताः पूर्वपूर्वतः ॥ ६७९ ॥ स्याद्रत्नरचिता चाद्या स्वर्णजा रूप्यजापि च ॥ ताम्रजा पित्तली जाता स्फाटिकी रक्तसीसजा ॥ काष्ठजा मृत्तिकाजावा चित्ररूपेति च क्रमात् ॥ ६८० ॥ अचला क्षेत्ररूपा हि हरिद्वारं यथा गया ॥ देवताभिः कृता यास्तु मूर्त्तयस्ताश्चलाचलाः ॥ ६८१ ॥ जगन्नाथो वेङ्कटेशः पाण्डुराभादयश्च ते ॥ सजीवा ब्राह्मणा गावो निर्जीवः पिप्पलः स्मृतः ॥ ६८२ ॥ मन्त्रन्यासं पुरा कृत्वा स्वदेहे देवतासु च ॥ गायत्र्यक्षरन्यस्ताङ्गः पूजयेद्विष्णुमव्ययम् ॥ ६८३ ॥ [1]आद्ययावाहयेद्देवमृचा तु पुरुषोत्तमम् ॥ द्वितीययासनं दद्यात्पाद्यं दद्यात्तृतीयया ॥ ६८४ ॥ अर्घ्यं चतुर्थ्यां दातव्यं पञ्चम्याचमनीयकम् ॥ षष्ठ्या स्नानं प्रकुर्वीत सप्तम्या वस्त्रमेव च ॥ ६८५ ॥ यज्ञोपवीतमष्टम्या नवम्या चानुलेपनम् ॥ पुष्पं दशम्या दातव्यमेकादश्या तु धूपकम् ॥ ६८६ ॥ द्वादश्या दीपकं दद्यात्त्रयोदश्या निवेदनम् ॥ चतुर्दश्या नमस्कारं पञ्चदश्या प्रदक्षिणम् ॥ ६८७ ॥ स्नाने वस्त्रे च नैवेद्ये दद्यादाचमनीयकम् ॥ दक्षिणान्तु यथा शक्त्या षोडश्या तु समर्प्पणम् ॥ ६८८ ॥ ततः प्रदक्षिणं कुर्य्याज्जपं कुर्य्यात्समाहितः॥यथाशक्ति जपित्वा तु सूक्तं तस्मै निवेदयेत् ॥ ॥ ६८९ ॥ देवस्य दक्षिणे पार्श्वे कुण्डं स्थण्डिलमेव वा ॥ कारयेत्प्रथमेनैव द्वितीयेन तु प्रोक्षणम् ॥ ६९० ॥ तृतीयेनाग्निमादध्याच्चतुर्थेन समिन्धनम् ॥ पञ्चमेनाज्यश्रपणं चरोश्च श्रपणं तथा ॥ ६९१ ॥ षष्ठेनैवाग्निमन्थन्तु कल्पयेत्पद्ममासनम् ॥ चिन्तयेद्देवदेवेशं कालानलसमप्रभम् ॥६९२॥ ततो गन्धं च पुष्पं च धूपदीपौ निवेदयेत् ॥ अनुज्ञाप्य ततः कुर्य्यात्सप्तम्यादि यथाक्रमम् ॥ ६९३ ॥ समिधस्तावतीः पूर्वं जुहुया दवधारितः ॥ ततो घृतेन जुहुयाच्चरुणा च ततः पुनः ॥ ६९४ ॥ एवं हुत्वा ततश्चैनमनुज्ञाप्य यथाक्रमम् ॥ अग्नेर्भगवतस्तस्य समीपे स्तोत्रमुच्चरेत् ॥ ६९५॥ जितन्ते पुण्डरीकाक्ष नमस्ते विश्वभावन ॥ नमस्तेस्तु हृषीकेश महापुरुष पूर्वज ॥

---

१ ॐ सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् इत्यादि षोड्शश्रुतिभिः पुरुषसूक्तं ब्रुवते तासु प्रथमर्चावाहनं द्वितीयर्चासनमित्यादि मूलोक्तक्रमेण भगवतो विष्णोः पूजां विदधाति ।

॥ ६९६ ॥ देवानां दानवानां च सामान्यमधिदैवतम् ॥ सर्वदा चरणद्वन्द्वं व्रजामि शरणं तव ॥ ६९७ ॥ एकस्त्वमसि लोकस्य स्रष्टा संहारकस्तथा॥ अव्यक्तश्चानुमन्ता चागुणो मायासमावृतः ॥ ६९८ ॥ संसारसागरं घोरमनन्तक्लेशभाजनम् ॥ त्वामेव शरणं प्राप्य निस्तरन्ति मनीषिणः ॥६९९॥ न ते रूपं न चाकारो नायुधानि न चास्पदम् ॥ तथापि पुरुषाकारो भक्तानां च प्रकाशसे ॥ ७०० ॥ कस्यचिन्नपरोक्षस्त्वं प्रत्यक्षोपि न कस्यचित् ॥ कस्यचिन्न च साध्योस्ति विना भक्तिं भवान्प्रभो ॥ ७०१ ॥ कार्य्याणां कारणं पूर्वं वचसां वाच्यमुत्तमम् ॥ योगिनां परमा सिद्धिः परमं ते पदं विदुः ॥ ७०२ ॥ अहं भीतोस्मि देवेश संसारेस्मिन्महाभये ॥ पाहि मां पुण्डरीकाक्ष न जानामि परं पदम् ॥७०३॥ कालेष्वपि च सर्वेषु दिक्षु-सर्वासु चाच्युत ॥ शरीरे चागतं चापि वर्त्तते मे महद्भयम् ॥ ७०४ ॥ त्वत्पादकमलादन्यं न मे जन्मान्तरेष्वपि ॥ विज्ञानं यदिदं प्राप्य यदिदं ज्ञानवर्जितम् ॥ ७०५ ॥ जन्मान्तरेपि मे देव मा भूदस्य परिक्षयः ॥ दुर्गतावपि जातस्य त्वद्गतो मे मनोरथः ॥ ७०६ ॥ यदि नाशं न विन्देत ततोस्ति सुकृती सदा ॥ कामयेद्विष्णुपादौ तु सर्वजन्मसु केवलम् ॥ ॥ ७०७ ॥ पुरुषस्य हरेः सूक्तं स्वच्छं धन्यं यशस्करम् ॥ आत्मज्ञानमिदं पुण्यं योगज्ञानमिदं परम् ॥७०८॥ एवं स्तुत्वा हव्यवाहं ततः पश्चाद्विसर्जयेत ॥ अनेनैव च निष्पापो जायते मनुजो यदा ॥ ७०९ ॥ प्राग्वज्ज्ञात्वा पारदे तत्प्रयोगानारभेत च॥शुक्लपक्षे शुभे वारे यदा चैकादशी भवेत् ॥ ॥ ७१० ॥ उपवासस्तु कर्त्तव्यो दम्पतिभ्यां सुरालये ॥ द्वादश्यां पुत्रकामाय चरुं कुर्वीत वैष्णवम् ॥ ॥७११ ॥ ऋग्भिः षोडशभिः सम्यगर्चयित्वा जनार्दनम् ॥ चरुं पुरुषसूक्तेन प्राशयेत्पुत्रकाम्यया ॥ ७१२ ॥ प्राप्नुयाद्वैष्णवं पुत्रमचिरात्सन्ततिक्षमम् ॥ द्वादश द्वादशीः सम्यक्पयसा निर्वपेच्चरुम् ॥ ॥ ७१३ ॥ यो जुहोति स वै याति तद्विष्णोः परमं पदम् ॥ मार्गशीर्षादिमासेषु क्रमात्पूज्यश्च केशवः ॥ ७१४ ॥ नारायणो माधवश्च गोविन्दो विष्णुरेव च ॥ मधुसूदन उत्तस्त्रिविक्रमो वामनस्तथा ॥ श्रीधरश्च हृषीकेशः

१ प्रथमं तं चरुं पुरुषसूक्तेन जुहुयाच्छिष्टं स्त्रियाभक्षयेत ।

पद्मनाभो गदाधरः ॥ ७१५ ॥ पूजयित्वा जपेत्सूक्तं शतमष्टाधिकं ततः ॥ होमश्च पूर्ववत्कुर्य्यात्सर्वान्कामानवाप्नुयात् ॥७१६॥ अपुत्रा मृतपुत्रा वा या च कन्याप्रसूर्भवेत् ॥ तस्या यथा सुपुत्रः स्यात्तमुपायं ब्रवीम्यहम् ॥ ॥ ७१७ ॥ समिधोऽश्वत्थवृक्षस्य प्रत्यृचं जुहुयाच्छतम् ॥ अष्टाधिकं च सघृतमुपतिष्ठेद्धुताशनम् ॥ ७१८ ॥ पुनर्विष्णुं पूजयित्वा घृतहोमं समाचरेत् ॥ अष्टोत्तरशतं कुर्य्यात्प्रत्यहं वाग्यतः शुचिः ॥ ७१९ ॥ सम्पाताज्यं स्थापयित्वा तन्नार्य्याः प्राशनाय च ॥ दद्यात्सा च पातिं विष्णुं नमस्कृत्य प्रभक्षयेत् ॥ ७२० ॥ तर्प्पयेच्च द्विजान्सम्यग्लब्धाशीः प्रविशेद्गृहम् ॥ परं सप्त प्रवर्त्तेनावश्यं गर्भवती भवेत् ॥ ७२१ ॥ अरण्ये निवसेन्नित्यं त्रिकालं स्नानमाचरेत् ॥ जपेदष्टोत्तरशतं सूक्तमेतत्त्रिकालकम् ॥ ७२२ ॥ मासमेकं फलाहारो मासमद्भिश्च तर्प्पयेत् ॥ आदित्यमुपतिष्ठेत मन्त्रेणानेन नित्यशः ॥ आज्यं हुत्वा दशशतं त्रिभिर्वर्षैर्जपेद्दिनम् ॥ ७२३ ॥ तद्भक्तस्तन्मना युक्तो दशवर्षाण्यनन्यभाक् ॥ साक्षात्पश्यति तं देवं नारायणमनामयम्॥७२४॥ अथ वक्ष्ये गृहस्थानां जीवन्मुक्तेस्तु साधनम् ॥ यश्च स्वधर्मनिरतो न्यायवृत्तः शुचिव्रतः ॥ ७२५ ॥ अर्धरात्रे त्यक्तनिद्रः शुद्धो भूत्वा च वाग्यतः ॥ सम्प्रसुप्तेषु लोकेषु योगं युञ्जीत योगवित् ॥ ७२६ ॥ कृत्वासनं समे देशे निर्वाते शब्दवर्जिते ॥ सव्यं पादं दक्षिणस्य जानौ संवेशयेत्ततः ॥ ७२७ ॥ संहृत्य दक्षिणं पादं सव्यं जानुनि यच्छति ॥ बद्धाञ्जलिकरः स्वस्थो योगसम्मीलितेक्षणः ॥ ७२८ ॥ ॐमित्येव स्वहृदये चिंतयेदविशंकितः ॥ तत्रात्मानं समादध्यादिंद्रियाणि मन-

---

१ वामपादं दक्षिणजानुनि पुनर्दक्षिणपादं वामजानुनि विधृत्य स्थित्वर्जु स्वनासिकाग्रे दृष्टिं निधाय ओङ्कारं जपन्मनस्सहितं स पवनमाकृष्योदरं संपूरयेन्तदनन्तरं नाभिचक्रात्पवनं हृदि तत उरसि तस्मात्कण्ठमानीय ततो भ्रुवोरन्तरे कृत्वा ब्रह्मरन्ध्रे नयेत्।शनैश्शनैर्मनसोङ्कारं यावत्प्राणात्रोढुं शक्नुयात्तावज्जपेत् । पुनर्मन्दं प्राणानुत्तार्य वारंवारमुक्तरीत्याभ्यासेनाहतशब्दा दशधा प्रकटा भवन्ति पुनर्यदि सर्वेनोभ्यो बद्धोपि पुरुषो हृदि मनसोङ्कारजपात्परं ब्रह्म प्राप्नोति तर्हि सुकृतिनां तत्प्राप्तेः का चर्चा ।

स्तथा ॥ ७२९ ॥ न विबुध्येत किञ्चान्यं न पश्येच्छृणुयान्न च ॥ प्राणानायम्य चासीनोऽनुद्विग्नश्चिंतयेत्ततः ॥ ७३० ॥ श्वासेनैव समं नाभौ गमयित्वा मनस्तदा ॥ उच्छ्वसेच्चैवमसकृत्तन्मना योगमुन्नयेत ॥ ७३१ ॥ मनो नयेत हृदये पश्येन्नो शृणुयान्न च॥ततो नयेत तच्चेतो हृदयादूर्द्ध्वमेव तु॥७३२॥ समानं जत्रु चास्यं च नासिके नयने भ्रुवौ ॥ भ्रुवोर्मध्ये परं स्थानं तत्र तद्द्वारपद्धतिः ॥ ७३३ ॥ ललाटदेशे संधार्य्य मूर्द्धानं गमयेत्ततः ॥ उच्छ्वसेच्च यथाकालं नाभितश्चोच्छ्वसेत्पुनः ॥ ७३४ ॥ एतत्परं स्थानमुक्तं ब्रह्मणः परमात्मनः ॥ एवं युक्तो महात्मानमात्मानं प्रतिपद्यते ॥७३५॥ यद्येवं सुकृती शुद्धो यदि वा पापकृत्ततः॥ उपलभ्य परं ब्रह्म गतिं ज्ञात्वा भवेच्छुचिः॥७३६॥ सर्वपापानुबद्धश्च हृद्यन्तः प्रयतो जपेत् ॥ अपि जित्वा समं देवं स गच्छेत्परमाङ्गतिम् ॥ ७३७ ॥ धारणा तु पृथक्कार्य्या धर्मेण तेन नित्यशः ॥ आदित्येग्नौ चन्द्रमसि वृक्षाग्रेषु च धारयेत् ॥ पर्वताग्रे समुद्रे वा यत्र वा रमते मनः ॥ ७३८ ॥ न भावं विषयान्प्राप्य धारयेत कथञ्चन ॥ बह्वत्र दुःखं जानीयात्प्रध्वंसे धारणात्मके ॥ ७३९ ॥ धार्मिकाणां कुले शुद्धे योगभ्रष्टोभिजायते ॥ मूर्ध्नि ब्रह्म प्रविंदेतेद्दग्जपस्य प्रभावतः ॥ ७४० ॥ तदा मूर्ध्ना परं ज्योतिर्नक्षत्रपथमुन्नयेत् ॥ योगी योगीश्वरं प्राप्य निर्द्वन्द्वं परमात्परम् ॥ ७४१ ॥ सर्वत्रैवात्मनात्मानं पश्येद्धरिपरायणः ॥ जपेच्चैव स्वरान्स्नातः पवित्रमिदमुत्तमम् ॥ ७४२ ॥ अपि पातकसंयुक्तःकालेन सुकृती भवेत् ॥ ततः परायणो नित्यं सत्यवागनसूयकः ॥ प्रजपंस्तामृचं विप्रः कालेन सुकृती भवेत्॥७४३॥येनयेन च कामेन जपन्ति तामृचं सदा॥ससकामस्समृद्धः स्याच्छ्रद्दधानस्य कुर्वतः॥७४४॥होमं वाप्यथवाजाप्यमुपहारमनुत्तमम्॥कुरुते येन कामेन तत्सिद्धिरुपजायते ॥ ७४५ ॥ ज्ञानगम्यं परं लक्ष्यं प्राप्यं सर्वमवस्थितम् ॥ वाक्यमत्यन्तयत्नेन ब्रह्माभ्येति सनातनम् ॥ ७४६ ॥ सहस्रशीर्षसूक्तं तु सर्वकामफलप्रदम्॥वेदगर्भशरीरेण स वै नारायणः स्मृतः ॥७४७॥ ब्रह्मेन्द्ररुद्रपर्जन्याः सूक्तेस्मिन्सुव्यवस्थिताः॥अत्रस्थं प्रेत्य द्रष्टव्यं जगत्स्थावरजङ्गमम् ॥७४८॥ अनासादयमानोपि भक्तिं न परिहारयेत् ॥ भक्तानुकम्पी

भगवाञ्छ्रूयते पुरुषोत्तमः ॥ ७४९ ॥ पूजार्थे तस्य देवस्य वन्यान्स्वयमुपार्जितान्॥आरण्यकविधानेन निर्वपेत्प्रत्यहं चरुम्॥७५०॥ नारायणाय स्वाहेति मन्त्रेण जुहुयाद्धविः ॥ आसहस्रात्तत्र चक्षुर्दिव्यं होतुर्ददाति सः ॥ ७५१ ॥ यद्वा चरुं सहस्रं तु मन्त्रेणैकेन निर्वपेत् ॥ स हुत्वा स्वेप्सितानां च कामानां लभते फलम् ॥ पुरुषायुष्यसंयुक्तः सिद्धो वा विचरेन्महीम् ॥ सूक्तानि कोटिशः सन्ति परमेतन्महाप्रियम् ॥ सर्वेश्वरो हरिर्येन गीयते भक्तवत्सलः ॥ ७५२ ॥ ध्येयः सदा सवितृमण्डलमध्यवर्ती नारायणः सरसिजासनसन्निविष्टः ॥ केयूरवान्मकरकुण्डलवान्किरीटी हारी हिरण्मयवपुर्धृतशंखचक्रः ॥ ७५३ ॥ एतत्तु यः पठति केवलमेव सूक्तं नारायणस्य चरणावभिवन्द्य वन्द्यौ ॥ पाठेन चाथ परमस्य सनातनस्य स्थानं जरामरणवर्जितमेति विष्णोः ॥ ७५४ ॥ हविषाग्नौ जले पुष्पैर्ध्यानेन हृदये हरिम् ॥ यजन्ति सूरयो नित्यं जाप्येन रविमण्डले॥७५५॥बिल्वपत्रं शमीपत्रं पत्रं भृङ्गारकस्य च ॥ मालतीकुशपत्रं च सद्यस्तुष्टिकरं हरेः ॥ ७५६ ॥ यन्नोपपद्यते किञ्चित्तं ध्यायन्मनसैव तु ॥ सम्पद्यते प्रसादात्तु देवदेवस्य चक्रिणः ॥ ७५७ ॥ पत्रैश्च पुष्पैश्च फलैश्च तोयैर्विक्रीतलब्धैश्च सदैव सद्भिः ॥ भक्त्यैकगम्ये पुरुषे पुराणे मुक्तौ किमर्थं क्रियते न यत्नः ॥७५८॥ इत्येवमुक्तः पुरुषस्य विष्णोरर्चाविधिर्देवि मुदा मुनींद्रैः ॥ मुक्त्यैकमार्गप्रतिबोधनाय न वै मया लौकिककामनार्थम् ॥ ७५९ ॥ या ओषधीः सोमराज्ञीः विष्ठिताः पृथिवीमनु ॥ बृहस्पतिप्रसूतास्ता अस्यै सन्दत्त वीर्य्यम् ॥ ७६० ॥ अवपतंतीरवदन्दिव ओषधयस्परि ॥ यं जीवमश्नवामहै न स रिष्यति पूरुषः ॥ ॥७६१॥याश्चेदमुपशृण्वन्ति याश्च दूरं परा गताः ॥ सर्वाः सङ्गत्य वीरुधोस्यै सन्दत्त वीर्य्यम् ॥७६२॥ मा वोरिषत्खनिता यस्मै चाहं खनामि वः ॥ द्विपाच्चतुष्पादस्माकꣳसर्वमस्त्वनातुरम् ॥ ७६३ ॥ ओषधयः संवदन्त सोमेन सह राज्ञा ॥ यस्मै कृणोति ब्राह्मणस्तꣳ राजन्पारयामसि ॥ ७६४ ॥ पर्वस्वेव जपेन्नित्यं षण्मासानेव यो नरः ॥ वैद्यस्त्वमृतहस्तः स्यादन्यः स्वस्त्ययनं भजेत् ॥ ७६५ ॥ इष्ट्वा शरदि वै रुद्रमोषधीश्च जपेत्सदा ॥ तस्यामया न

जायन्ते तथाजीर्णानि पञ्च वा ॥ ७६६ ॥ कुर्य्यात्तु सप्तरात्रेण सप्तकृत्वःसमाहितः ॥ प्रपद्य ह्योषधीर्विप्रः सूक्तमेतज्जपेत्सदा ॥७६७॥ द्विषत्क्षेत्रादिहायध्वमिति विज्ञापयेच्च ताः ॥ स्वक्षेत्रे वरुणं चेष्ट्वा विन्दते द्विषदोषधीः ॥ ७६८ ॥ बृहस्पते अति यदर्य्यो अर्हाद्युमद्विमाति क्रतुमज्जनेषु ॥ यद्दीदयच्छवसऋतप्रजाततदस्मासु द्रविणं धेहि चित्रम् ॥ ७६९ ॥ वृष्टिकामो यताहारः प्रपद्येत बृहस्पतिम्॥पायसेनोपहारेण होमेन च समन्वितः॥७७०॥ पश्चादिमामृचं विप्रः वृष्टिकामः प्रयोजयेत् ॥ पर्जन्यं च नमस्कृत्य वृष्टिं विन्दति शोभनाम् ॥ ७७१ ॥ कलौ धर्म्मस्य रक्षार्थमृच एताः क्वचित्क्वचित ॥ विप्रेविप्रे देशदेशे थास्यन्त्यन्याश्च वै क्षितौ ॥ ७७२ ॥ एतत्तत्त्वमिह प्रोक्तं सर्वतन्त्रेषु गोपितम् ॥ इतः परं देवि देवाः किं वक्तव्यं तदुच्यताम्॥७७३॥

इति श्रीमहामायामहाकालानुमते मेरुतन्त्रे शिवप्रणीते कलिसंस्थितसविधि मन्त्रकथनं नामैकादशः प्रकाशः ॥ ११ ॥

---

श्रीविष्णुरुवाच॥देवदेव महादेव भक्तानुग्रहकारक॥ कालस्त्वमसि लोकानां महामाया त्वियं परा॥१॥युवयोः के तुष्टिकरा मन्त्राः सूक्तानि तद्वद ॥ येन भुक्तिश्च मुक्तिश्च क्लेशो नैव च नैव च ॥२॥ श्रीशिव उवाच ॥ विष्णो गोप्यं त्वया पृष्टं न वाच्यं तान्त्रिके द्विजे॥तन्त्रे च तामसं रुपं त्वया पृष्टं तु सात्त्विकम् ॥ ३ ॥ भोगमोक्षैकनिलयं चतुर्वेदोत्तमोत्तमम् ॥ मन्त्रस्तोत्रेश्वरं तन्मे जानीहि शतरुद्रियम् ॥ ४ ॥ छन्दांस्यनुष्टुबादीनि ह्यघोरोस्य मुनिर्मतः ॥ देवतास्य भवेद्रुद्र आदित्यः परपूरुषः ॥ ५ ॥ या ते रुद्रशिखा प्रोक्ता त्वस्मिन्महेति मस्तकम् ॥ सहस्राणि ललाटे च भ्रुवोर्मध्ये च हंस ऋक् ॥ ६ ॥ याते रुद्रशिवा तनूरघोरा पापकाशिनी ॥ तया नस्तनुवा शन्तमया गिरिशन्ताभिचाकशीहि ॥ ७ ॥ अस्मिन्महत्यर्णवे अन्तरिक्षे भवा अधि ॥ तेषाꣳसहस्रयोजने वधन्वानि तन्मसि ॥ ८ ॥ सहस्राणि सहस्रशो ये रुद्राअधिभूम्याम् ॥ तेषा ꣳ सहस्रयोजने वधन्वानि तन्मसि ॥ ९ ॥ ह ꣳ सः शुचिषद्वसुरन्तरिक्ष सद्धोता ॥ वेदिषदातिथिर्दुरोणसत् ॥ १० ॥ त्र्यम्बक[१]

[१] त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवर्धनम् । उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात् ।

न्नेत्रयोश्चैव नमः स्तुत्याय कर्णयोः॥ मानस्तोके नासिकायामवतत्य मुखे न्य-
सेत् ॥ ११ ॥ नमः स्तुत्याय च पथ्याय च नमः काट्याय च नीप्याय
च ॥ नमः कुल्याय च सरस्याय च नमो नादेयाय च वैशन्ताय च ॥
॥ १२ ॥ मानस्तोके तनये मा न आयुषि मा नो गोषु मानो अश्वेषुरी-
रिषः ॥ मा नो वीरान्रुद्रभामिनो वधीर्हविष्मन्तः सदमित्त्वा हवामहे ॥१३॥
अवतत्य धनुस्त्व ᳪ सहस्राक्ष शतेषुधे ॥ निशीर्य्य शल्यानां मुखा शिवो नः
सुमना भव ॥ १४ ॥ नीलग्रीवाद्वयं न्यसेत्क्रमात्कण्ठोपकण्ठयोः ॥ नमस्ते
अ या ते हेतिद्वयं बाह्वोः प्रकोष्ठयोः ॥ १५ ॥ नीलग्रीवाः शितिकण्ठाः
शर्वा अधः क्षमाचराः ॥ तेषा ᳪ सहस्रयोजनेवधन्वानि तन्मसि ॥ १६ ॥
नीलाग्रीवाः शितिकण्ठा दिव ᳪ रुद्रा उपाश्रिताः ॥ तेषा ᳪ सहस्रयोजने-
वधन्वानि तन्मसि ॥ १७ ॥ नमस्ते आयुधायानातताय धृष्णवे ॥ उभा-
भ्यामुत ते नमो बाहुभ्यां तव धन्वने ॥ १८ ॥ या ते हेतिर्मीढुष्टम हस्ते
बभूव ते धनुः ॥ तयास्मान्विश्वतस्त्वमयक्ष्मया परिभुज ॥१९॥ ये तीर्थानि
प्रचरन्ति सृकाहस्ता निषङ्गिणः ॥ तेषा ᳪ सहस्रयोजनेवधन्वानि तन्मसि
॥ २० ॥ इमामृचन्तु करयोरंगुष्ठादिषु विन्यसेत् ॥ सद्योजातादिकाः पञ्च
हृदये तु न्यसेदिमाः ॥ २१ ॥ नमोवः किरिकेभ्यो देवाना ᳪ हृदयेभ्यो-
नमो विक्षीयत्केभ्यो नमो विचिन्वत्केभ्यो नम आनिर्हतेभ्यः ॥ २२ ॥ नमो
गणेभ्यः पृष्ठे तु नमो हिरण्यबाहवे ॥ पार्श्वयोर्न्यस्य कुक्ष्योस्तु नमस्तक्षभ्य
इत्यपि ॥ २३ ॥ नमो गणेभ्यो गणपतिभ्यश्च वो नमो नमो व्रातेभ्यो व्रात-
पतिभ्यश्च वो नमः॥नमो गृत्सेभ्यो गृत्सपतिभ्यश्च वो नमो नमो विरूपेभ्यो
विश्वरूपेभ्यश्च वो नमः ॥ २४ ॥ नमो हिरण्यबाहवे सेनान्ये दिशाञ्च
पतये नमो नमो वृक्षेभ्यो हरिकेशेभ्यः पशूनाम्पतये नमः नमः शष्पिञ्जराय
त्विषीमते पृथीनाम्पतये नमो नमो हरिकेशायोपवीतिने पुष्टानाम्पतये नमो
नमो बभ्लुशाय॥२५॥नमस्तक्षभ्यो रथकारेभ्यश्च वो नमो नमः कुलालेभ्यः
कर्म्मारेभ्यश्च वो नमः नमो निषादेभ्यः पुञ्जिष्ठेभ्यश्च वो नमोनमः श्वनिभ्यो
मृगयुभ्यश्च वो नमः ॥ २६ ॥ विज्यन्धनुस्तु जठरे नाभौ हिरण्यगर्भकम् ॥

मिढुष्टमेति कट्याश्च ये भूतानान्तु गुह्यके ॥ २७ ॥ विज्यन्धनुःकपर्द्दिनो वि-
शल्यो बाणवाँ उत ॥ अनेशन्नस्य या इषव आभुरस्य निषङ्गधिः ॥ २८ ॥
हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् ॥ सदाधारपृथिवीं द्या-
मुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ २९ ॥ मीढुष्टम शिवतम शिवो नः
सुमना भव ॥ परमे वृक्ष आयुधन्निधाय कृत्तिं वसान आचर पिनाकम्बिभ्र-
दागहि ॥ ३० ॥ ये भूतानाम्पतयो विशिखासः कपर्द्दिनः ॥ तेषाꣳसहस्रयो-
जनेवधन्वानितन्मसि ॥ ३१ ॥ जातवेदादिकाःपञ्च शिरोयुक्ता अपानके ॥
मा नो महान्तमूर्वोश्च एष ते जानुनोर्न्यसेत् ॥ ३२ ॥ जातवेदसे सुनवाम
सोममरातीयतो निदहाति वेदः ॥ स नः पर्षदतिदुर्गाणि विश्वा नावेवसिन्धु-
न्दुरितात्यग्निः ॥ ३३ ॥ स यो वृषा वृष्ण्येभिः समो कामहो दिवः
पृथिव्याश्च सम्राट् ॥ सतीनसत्वा हव्योभरेषु मरुत्वान्नो भवत्विन्द्र ऊती ॥
॥३४॥ यस्यानातः सूर्य्यस्येव यामो भरेभरे वृत्रहा शुष्मो अस्ति ॥वृषन्तमः
सखिभिः स्वेभिरेवैर्मरुत्वन्नो भवत्विन्द्र ऊती ॥ ३५ ॥ दिवो न यस्य रेतसो
दुघानाः पन्थासो यान्ति शवसा परीताः॥तरद्द्वेषाः ससहिः पौंस्येभिर्मरुत्वान्नो
भवत्विन्द्र ऊती ॥ ३६ ॥ सो अङ्गिरोभिरङ्गिरस्तमो भूद्वृषा वृषभिः
सखा सन् ॥ अग्निभिर्ऋग्मी गातुभिर्ज्येष्ठो मरुत्वान्नो भवत्विन्द्र ऊती
॥ ३७ ॥ मानो महान्तमुत मा नो अर्भकं मा न उक्षन्तमुत मा न उक्षि-
तम् ॥ मा नो वधीः पितरम्मोत मातरं मा नः प्रियास्तन्वो रुद्र रीरिषः॥ ३८॥
एतत्ते रुद्रा वसन्तेन परोमूजवतोतीहि ॥ अवततधन्वा पिनाकावसः कृत्तिवा-
सा अहिꣳसन्नः शिवोतीहि ॥ ३९ ॥ सꣳसृष्टजिज्जङ्घयोश्च विश्वम्भूतञ्च
गुल्फयोः ॥ ये पथां पथिरङ्घ्योः स्यादध्यवोचश्च वर्म्मकम् ॥४०॥ सꣳसृ-
ष्टजित्सोनपा बाहुशर्ध्यूर्ध्वधन्वा प्रतिरताभिरस्ता ॥ बृहस्पते परिदीयारथीनर-
क्षोहा मित्राँ अपबाधमानः ॥ ४१ ॥ विश्वम्भूतम्भुवनं मित्रम्बहुधा जातञ्जा-
यमानञ्च यत् ॥ सर्वो ह्येष रुद्रस्तस्मै रुद्राय नमो अस्तु ॥ ४२ ॥ ये पथा-
म्पथिरक्षय ऐलबृदा आयुर्युधः ॥ तेषाꣳसहस्रयोजनेवधन्वानि तन्मसि॥४३॥

अध्यवोचदधिवक्ता प्रथमो दैव्योभिषक् ॥ अहींश्च सर्वाञ्जम्भयन्सर्वाश्च यातुधान्यो धराचीः परासुव॥४४॥उपवर्म्मनमो विल्मि नमो अस्तु च नेत्रयोः॥ प्रमुञ्च धन्वनश्चेति न्यसेन्नेत्रे तृतीयके ॥४५॥ नमो बिल्मिने च कवचिने च नमो वर्म्मिणे च वरूथिने च॥नमः श्रुताय च श्रुतसेनाय च नमो दुन्दुभ्याय चाहनन्याय च ॥ ४६ ॥ नमोस्तु नीलग्रीवाय सहस्राक्षाय मीढुषे ॥ अथो ये अस्य सत्वानो हन्तेभ्योकरन्नमः ॥ ४७ ॥ प्रमुञ्च धन्वनस्त्वमुभयोरात्न्योर्ज्याम् ॥ याश्च ते हस्त इषवः परा ता भगवो वप ॥४८॥ एवं षड्विंशदङ्गानां न्यासः प्रथम ईरितः ॥ य एतावन्त इति च कुर्याद्दिग्बन्धनन्ततः ॥ ४९ ॥ परातावन्तश्च भूयाꣳसश्च दिशो रुद्रा वितस्थिरे ॥ तेषाꣳसहस्रयोजनेवधन्वानि तन्मसि ॥ ५० ॥ अयन्तु सर्वमन्त्राणाम्पठने त्वधिकारकृत ॥ इमन्न्यासम्प्रकुर्वाणः पावकेपि न नश्यति ॥ ५१॥ तारो[1] नमो भगवते रुद्रायेति दशाक्षरः॥मन्त्रः प्रोक्तोनेन कुर्यान्न्यासान्ते तु नमस्कृतिम् ॥ ५२ ॥ पश्चादस्यैव मन्त्रस्य वर्णन्यासं समाचरेत् ॥ मस्तके[2] नसि भाले च मुखे कण्ठे तथा हृदि ॥ ५३ ॥ दक्षहस्ते वामहस्ते नाभौ पादद्वये तथा ॥ ५४ ॥ सर्वमन्त्राधिकारी स्यान्न्यासेस्मिंस्तु द्वितीयके ॥ अथ न्यासस्तृतीयोपि प्रोच्यतेत्र शृणुष्व तम् ॥ ५५ ॥ पदोर्हृदि मुखे मूर्ध्नि सद्योजातादिका ऋचः ॥ न्यास्या न्यासे तृतीयेस्मिञ्शैवं तेजः समाविशेत् ॥ ५६ । हंसः सोहमिति ब्रूयाद्भावयेच्च तथा धिया ॥ ततोष्टदिक्षु दिक्पालांस्तत्तन्मन्त्रेण विन्यसेत् ॥ ५७ ॥ त्रातारमिन्द्रमवितारमिन्द्रꣳहवेहवे सुहवꣳशूरमिन्द्रम ॥ ह्वयामि शक्रं पुरुहूतमिन्द्रꣳस्वस्ति नो मघवा धात्विन्द्रः ॥ ५८ ॥ त्वन्नो अग्ने वरुणस्य विद्वान्देवस्य हेडोवयासिसीष्ठाः ॥ यजिष्ठो वह्नितमः शोशुचानो विश्वा द्वेषा ꣳसि प्रमुमुग्ध्यस्मत् ॥ ५९ ॥ सुगं नः पन्थामभयं कृणोतु यस्मिन्नक्षत्रे यम एति राजा ॥

---

१ ओम् । २ ॐमस्तके, न नासिकायाम्, मो भाले, भ मुखे, ग कण्ठे, व हृदये, ते दक्षहस्ते रु वामहस्ते, द्रा नाभौ, य पादद्वये ॥ इति मन्त्राक्षरन्यासः ॥

तस्मिन्नेनमभ्यषिञ्चन्त देवास्ते तदस्या चित्र ७ हविषा यजामः ॥ ६० ॥ असुन्वन्तमयजमानमिच्छस्तेन नस्येत्यामन्विहि तस्करस्य ॥ अन्यमस्मादिच्छसात इत्या नमो देवि निर्ऋते तुभ्यमस्तु ॥ ६१ ॥ तत्त्वा यामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदाशास्ते यजमानो हविर्भिः ॥ अहेडमानो वरुणेह बोध्युरुशछं समान आयुः प्रमोषीः ॥ ६२ ॥ आ नो नियुद्भिः शतिनीभिरध्वरछं सहस्रिणीभिरुपयाहि यज्ञम् ॥ वायो अस्मिन्सवने मादयस्व यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥६३॥ वय ७ सोमव्रते तव मनस्तनूषु बिभ्रतः प्रजावन्तः सचेमहि ॥ ६४ ॥ तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिंधियं जिन्वमसेहूमहेवयम् ॥ पूषा नो यथा वेदसामसद्वृधेक्षितापायुरदब्धःस्वस्तये ॥ ६५ ॥ अस्मे रुद्रा मेहना पर्व्वतासो वृत्रहत्येभर हूतौसजोषाः ॥ यः शंसते स्तुवते धायि वज्र इन्द्रज्येष्ठा अस्मा अवन्तु देवाः ॥ ६६ ॥ अनेन च नमस्कुर्य्यादूर्ध्वं चाथो धरातले ॥ धरामन्त्रेण कुर्य्याच्च स एवं पापवर्जितः ॥ स्योना पथिवि नोभवानृक्षरा निवेशनी ॥ यच्छा नः शर्म्म सप्रथः अवनिशोःशुचदस्वम् ॥ ६७ ॥ न्यासवन्त समीक्ष्येह प्रेतचौराद्युपद्रवाः ॥ दीप्यमानमशक्तास्ते पलायन्ते विदूरतः ॥ ६८ ॥ मनोज्योतिर्न्यसेद्धृद्ये ह्यबोध्यग्निस्तथोदरे॥ मूर्धानं हृदये न्यस्य मुखेमर्म्माणि ते तथा ॥ ६९ ॥ मनोज्योतिर्जुषतामाज्यं विच्छिन्नं यज्ञ ७ समिमन्दधातु ॥ या इष्टाउषसो निम्रुचस्ताः सन्दधामि हविषा घृतेन ॥ ७० ॥ अबोध्यग्निः समिधा जनानाम्प्रतिधेनु मिवायती मुषासम् ॥ यह्वा इव प्रवयामुज्जिहानाः प्रभानवः सिषनेनाकमच्छ ॥ ७१ ॥ मूर्द्धानं दिवो अरतिं पृथिव्या वैश्वानरमृतआ जातमग्निम्॥ कवि ७ सम्राजमतिथिं जनानामासन्नापात्रं जनयन्ति देवाः ॥ ७२ ॥ मर्म्माणि ते वर्म्मणाछादयामि सोमस्त्वा राजामृतेनानुवस्ताम् ॥ उरोर्वरीयो वरुणस्ते कृणोतु जयन्तन्त्वा नु देवा मदन्तु ॥ ७३ ॥ जातवेदास्तच्छिरसि न्यामः प्रोक्तश्चतुर्थकः ॥७४॥ जातवेदा यदि वा पावकोसि वैश्वानरो यदि वा वैद्युतोसि ॥ शं प्रजाभ्यो यजमानाय लोकं ऊर्जम्पुष्टिं ददभ्यावकृत्स्वः॥ ७५॥ हृदये शिवसंकल्पं शिरः पुरुषसूक्तकम् ॥ शिखाद्रयः सम्भूत इति वर्म्म प्रतिरथं मतम् ॥ ७६ ॥ अद्रयः

सम्भूतः पृथिव्यै रसाच्च विश्वकर्म्मणः समवर्त्तताग्रे ॥ तस्य त्वष्टा विदधद्रूप-मेति तत्पुरुषस्य विश्वमाजानमग्रे ॥ ७७ ॥ वेदाहमेतं पुरुषं महान्तमादित्य-वर्णं तमसः परस्तात् ॥ तमेव विद्वानमृत इह भवति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय ॥ ७८ ॥ प्रजापतिश्चरति गर्भे अन्तरजायमानो बहुधा विजायते ॥ तस्य धीराः परिजानन्ति योनिं मरीचीनां पदमिच्छन्ति वेधसः ॥ ७९ ॥ यो देवेभ्य आतपति यो देवानां पुरोहितः॥ पूर्वो यो देवेभ्यो जातो नमो रुचाय ब्राह्मये ॥ ८० ॥ रुचं ब्राह्मजनयन्तो देवा अग्रे तदब्रुवन् ॥ यस्त्वेवं ब्राह्मणो विद्यात्तस्य देवा असन्वशे ॥ ८१ ॥ श्रीश्च ते लक्ष्मीश्च पत्न्या वहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रुपमश्विनौ व्यात्तम् ॥ इष्णन्निषाणमुं म इषाण सर्वलोकं म इषाण ॥ ८२ ॥ शतरुद्रियमन्त्रं स्यादथ पञ्चाङ्गमुच्यते ॥ न्यासस्तु पञ्चमः प्रोक्तोयं सर्वाभीष्टसाधकः ॥ ८३ ॥ त्वमग्नेरुद्रो असुरो महो दिवस्त्व ꣳ सर्धो मारुतं यक्ष ईशिषे ॥ त्वं वातैररुणैर्यासि शं गयस्त्वं पूषापि च नः पासि तु त्मना ॥ ८४ ॥ देवा देवेषु श्रयध्वं प्रथमा द्वितीयेषु ॥ श्रयध्वं द्वितीयास्तृतीयेषु श्रयध्वं तृतीयाश्चतुर्थेषु ॥ ८५ ॥ श्रयध्वं चतुर्थाः पञ्चमेषु श्रयध्वं पञ्चमाः षष्ठेषु ॥ श्रयध्वं षष्ठाः सप्तमेषु श्रयध्वं सप्तमा अष्टमेषु ॥ ८६ ॥ श्रयध्वं अष्टमा नवमेषु श्रयध्वं नवमा दशमेषु ॥ श्रयध्वं दशमा एकादशेषु श्रयध्वं एकादशा द्वादशेषु ॥ ८७ ॥ श्रयध्वं द्वादशास्त्रयोदशेषु श्रयध्वं चतुर्दशाः पञ्चदशेषु ॥ श्रयध्वं पंचदशाः षोडशेषु श्रयध्वं षोडशाः सप्तदशेषु॥ ८८॥ श्रयध्वं सप्तदशा अष्टादशेषु श्रयध्वं अष्टदशा एकोनवि ꣳ शेषु॥ श्रयध्वं एकोनवि ꣳ शा वि ꣳ शेषु श्रयध्वं वि ꣳ शा एकवि ꣳ शेषु ॥८९॥ श्रयध्वं एकवि ꣳ शा द्वावि ꣳ शेषु श्रयध्वं द्वावि ꣳ शास्त्रयोवि ꣳ शेषु ॥ श्रयध्वं त्रयोवि ꣳ शाश्चतुर्वि ꣳ शेषु श्रयध्वं चतुर्वि ꣳ शाः पंचवि ꣳ शेषु ॥ ९० ॥ श्रयध्वं पञ्चवि ꣳ शाः षड्वि ꣳ शेषु श्रयध्वं द्वि ꣳ शाः सप्तवि ꣳ शेषु ॥ श्रयध्वं सप्तवि ꣳ शा अष्टावि ꣳ शेषु श्रयध्वं अष्टावि ꣳ शा एकोनत्रि ꣳ शेषु ॥ ९१ ॥ श्रयध्वं एकोनत्रि ꣳ शास्त्रि ꣳ शेषु श्रयध्वं त्रि ꣳ शा एकत्रि ꣳ शेषु ॥ श्रयध्वं एकत्रि ꣳ शा द्वात्रिं ꣳ शेषु श्रयध्वं द्वात्रि ꣳ शास्त्रयस्त्रि ꣳ शे ॥

॥९२॥ अथध्वं देवास्त्रिरेकादशास्त्रिन्नयस्त्रिँशा उत्तरे भवन्तु ॥ उत्तरवर्त्मान उत्तरसत्त्वानः ॥ यत्काम इदं जुहोमि तन्मे समृध्यतां वयँस्याम पतयोरयीणां भूर्भुवःस्वःस्वाहा ॥९३॥ पञ्चाङ्गन्यासमेवन्तु कृत्वाष्टाङ्गं नमेच्छिवम् ॥ जपं निवेद्य रुद्रायोपतिष्ठेत्ततः पुनः ॥ ९४ ॥ हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् ॥ सदाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ ९५ ॥ प्राणतो निमिषतो महित्वैक इन्द्रो राजा जगतो बभूव ॥ यद्वशे अस्य द्विपदश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ ९६ ॥ ब्रह्मजज्ञानम्प्रथमम्पुरस्ताद्विसीमतः सुरुचो वेन आ वः ॥ सबुध्निया उपमा अस्य विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च विवः ॥९७॥ मही द्यौः पृथिवी च न इमं यज्ञं मिमिक्षतां पिपृतां नो भरीमभिः ॥ ९८ ॥ उपश्वासय पृथिवीमुत द्यां पुरुत्रा ते मनुतां विष्ठितं जगत्॥ स दुन्दुभे सजूरिन्द्रेण देवैर्दूराद्दवीयो अपसेध शत्रून् ॥ ९९ ॥ अग्ने नय सुपथा राये अस्मान्विश्वानि देववयुनानि विद्वान् ॥ युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नम उक्तिं विधेम ॥ १०० ॥ या ते अग्ने यज्ञिया तनूस्तयेह्यारोहात्मानम् ॥ अष्टावसूनि कृण्वन्नस्मै नर्या पुरूणि यज्ञो भूत्वा यज्ञमासीद स्वयोने ॥ १०१ ॥ जातवेदा भुव आजायमानो यथा च स्वाहाग्नये घृतवद्भिस्तु हव्यैः ॥ तेभिर्नो अग्ने अमितैरहोभिः शतं पूर्भिरायसीभिर्निपाहि ॥ १०२ ॥ इमं यमप्रस्तरमाहि सीदाङ्गिरोभिः पितृभिः संविदा नः ॥ आत्वा मन्त्राः कविशस्ता वहन्त्वेना राजन्हविषा मादयस्व ॥ १०३ ॥ इत्युपस्थाय देवन्तु देवयोगं समाचरेत् ॥ तिष्ठत्वीशो नासिकायां चंद्रादित्यौ च नेत्रयोः ॥ १०४ ॥ कर्णयोरश्विनौ चापि रुद्रास्तिष्ठन्तु मेढ्रके ॥ तिष्ठन्तु मूर्ध्नि चादित्या महादेवः शिरोगतः ॥ १०५ ॥ शिखाया वासुदेवश्च पिनाकी चापि पृष्ठके ॥ पुरस्तिष्ठतु शैली च पार्श्वयोः शिवशङ्करौ ॥ १०६ ॥ सर्वतश्चापि वायुश्च सर्वतश्च ततो बहिः ॥ अग्निज्वालामालिकाश्च तिष्ठन्तु बहुशो मम ॥ ॥१०७॥ सर्वेष्वङ्गेषु सर्वे च तिष्ठन्तु मम देवताः ॥ तिष्ठंतु मामिति प्रोच्य प्रपञ्चं मनसा हुनेत् ॥ १०८ ॥ अग्निर्मे वाचि श्रितः वाग्घृदये हृदयं

मयि अहममृते अमृतं ब्रह्मणि ॥ १०९ ॥ वायुर्मे प्राणे श्रितः प्राणो हृदये हृदयं मयि अहममृते अमृतं ब्रह्मणि ॥ ११० ॥ सूर्य्यो मे चक्षुषि श्रितः चक्षुर्हृदये हृदयं मयि अहममृते अमृतं ब्रह्मणि ॥ १११ ॥ चन्द्रमा मे मनसि श्रितः मनो हृदये हृदयं मयि अहममृते अमृतं ब्रह्मणि ॥ ११२ ॥ दिशो मे श्रोत्रे श्रिताः श्रोत्रꣳ हृदये हृदयं मयि अहममृते अमृतं ब्रह्मणि ॥ ॥ ११३ ॥ आपो मे रेतसि श्रिताः रेतो हृदये हृदयं मयि अहममृते अमृतं ब्रह्मणि ॥ ११४ ॥ पृथिवी मे शरीरे श्रिता शरीरꣳहृदये हृदयं मयि अहममृते अमृतं ब्रह्मणि ॥ ११५ ॥ ओषधिवनस्पतयो मे लोमसु श्रिताः लोमानि हृदये हृदयं मयि अहममृते अमृतं ब्रह्मणि ॥११६॥ इन्द्रो मे बले श्रितः बलꣳहृदये हृदयं मयि अहममृते अमृतं ब्रह्मणि ॥ ११७ ॥ पर्जन्यो मे मूर्ध्नि श्रितः मूर्द्धा हृदये हृदयं मयि अहममृते अमृतं ब्रह्मणि ॥११८॥ ईशानो मे मन्यौ श्रितः मन्युर्हृदये हृदयं मयि अहममृते अमृतं ब्रह्मणि ॥ ॥ ११९ ॥ आत्मा म आत्मनि श्रितः आत्मा हृदये हृदयं मयि अहममृते अमृतं ब्रह्मणि ॥ १२० ॥ पुनर्म आत्मा पुनरायुरागात् पुनः प्राणः पुनराकूतमागात् ॥ वैश्वानरो रश्मिभिर्वावृधानः अन्तस्तिष्ठत्वमृतस्य गोपाः॥ १२१ ॥ न्यासानेवं विधायाथ ध्यायेदात्मानमीश्वरम् ॥ पार्थिवोक्तप्रकारेण लिङ्गपूजां ततश्चरेत् ॥ १२२ ॥ आराधितो मनुष्यैस्त्वं सिद्धैर्देवासुरादिभिः ॥ आराधयामि भक्त्या त्वां मां गृहाण महेश्वर ॥ १२३ ॥ आ त्वा वहन्तु हरयः सचेतसः श्वेतैरश्वैरहरहः केतुमद्भिः ॥ वाता जलैर्बलवद्भिर्मनोजवैर्मामग्राहि शीघ्रम्मम हव्याय शर्व ॥ १२४ ॥ एतत्ते रुद्रा वसन्तेन परोमूजवतोतीहि ॥ अवततधन्वोपिनाकाव सः कृत्तिवासा अहिꣳ सन्नः शिवोती हि ॥१२५॥ चत्वारि शृङ्गास्त्रयो अस्य पादा द्वे शीर्षे सप्तहस्तासो अस्य ॥ त्रिधा बद्धो वृषभो रोरवीति महो देवो मर्त्यां आविवेश ॥ १२६ ॥ प्रसन्नो भव देवेश सुमुखो भव शङ्कर ॥ शान्तो भवस्व चात्र त्वं मम चाभिमुखो भव ॥ १२७ ॥ स्वामिन्सर्वजगन्नाथ यावत्पूजावसानकम् ॥ तावत्त्वं प्रीतिभावेन लिङ्गेस्मिन्सन्निधो भव ॥ १२८ ॥ अभिषेकं ततः कुर्य्या-

दमृतैः पञ्चभिः क्रमात् ॥ पश्चाच्छुद्धोदकेनाथ ततः पूजनमारभेत् ॥ ॥ १२९ ॥ रौद्रीन्धारान्ततः कुर्य्यात्प्रोच्यते तद्विधानकम् ॥ नमस्ते रुद्रामाविष्णू इत्यध्यायद्वयेन च ॥ १३० ॥ आवर्त्तनमिति प्रोक्तं गङ्गा-स्नानफलप्रदम् ॥ आवर्त्तनाभिषेकं तु यः कुर्य्यात्प्रत्यहं नरः ॥ १३१ ॥ तस्यैव दिनजं पापं दैवजं नाशमाप्नुयात् ॥ सन्ध्यावन्दनतः क्षीणं तच्चेत्प्राग्जन्म-जम्भवेत् ॥ १३२ ॥ एकः पाठो नमस्ते च अनुवाकः परस्य च ॥ एवम्भवाय नस्तस्युः आ नो विष्णुस्तथैककम् ॥ १३३ ॥ इदं रुद्रियमा-ख्यातं रौद्रपापनिकृन्तनम् ॥ अनेन प्रत्यहं यस्तु कुर्य्याल्लिङ्गाभिषेचनम् ॥ ॥ १३४ ॥ जन्मजन्मकृतं पापं वर्षेवर्षे प्रणश्यति ॥ सप्तजन्मकृते पापे नष्टे लक्ष्मीर्विवर्धते ॥ १३५ ॥ वंशश्च स्थिरतामेति यशो याति दिग-न्तरम् ॥ सूते[1] चास्य यथारूपं तथा तोये प्रदृश्यते ॥ १३६ ॥ रुद्री-भिरेकादशभिराद्य रुद्रः प्रकीर्त्तितः ॥ अनेन सिक्तं यैर्लिङ्गन्ते न पश्यन्ति भास्क-रिम् ॥ १३७ ॥ एकादशभिरेतैस्तु महारुद्रः प्रकीर्त्तितः ॥ धनप्रदोऽधनानाञ्च महा-पातकनाशनः ॥ १३८ ॥ अनेन विहितो होमः सोमयागफलप्रदः ॥ यो-नाधिकारी दीक्षायान्तस्य पापक्षयङ्करः ॥ १३९ ॥ एकादशमहारुद्रैर-तिरुद्रः प्रकीर्त्तितः ॥ अतिपापहरोयं स्याद्दृष्टन्यायेन निष्कृतिः ॥ १४० ॥ विश्वासघातनं स्वामिद्रोहोऽन्यायेन दण्डनम् ॥ कृतघ्नता च सामर्थ्ये शरणागत-नाशनम् ॥ १४१ ॥ अतिपापानि पञ्चेति शत्रे देशे तपस्तथा ॥ अकर्म्मणि कृते यत्तदतिरुद्रो विनाशयेत् ॥ १४२ ॥ शाखायां यस्य तु यथा स्वा-ध्यायौ पठितावुभौ ॥ पठनीयौ तथा तेन शाखाखण्डं न कारयेत् ॥ १४३ ॥ न रुद्रो यस्य शाखायान्तैत्तिरीयं पठेत्स तु ॥ शाखा तु यजमानस्य ब्राह्मण-द्वारतः कृता ॥ १४४ ॥ अथ वा तैत्तिरीयाणां नान्यशाखा प्रपूज्यते ॥ शा-खामिश्रं कृतं कर्म्म यजमानं विनाशयेत् ॥ १४५ ॥ धनलोभात्परार्थं यो माभिषिञ्चति मूढधीः ॥ स तु चाण्डालवज्ज्ञेयो निर्धनस्सप्तजन्मसु ॥ १४६ ॥ कुटुम्बिना तु यत्नेन धनार्थम्मम पूजनम् ॥ कृतं चेज्जपदानाभ्यां तद्रुद्रा-

१ पारदे ॥

शोऽस्य निष्कृतिः ॥ १४७ ॥ काको ब्रह्मस्वभोक्ता स्याच्छिवस्वाशी तु कुक्कुटः ॥ देव्यन्नभोक्ता प्लवगो मूषको विष्णुवित्तभुक् ॥ १४८ ॥ चण्डी-चण्डीशनिर्माल्यं तथा वैनायकं द्विजाः ॥ प्रसादं न च गृह्णन्ति स्वयन्द-त्ताहते क्वचित् ॥ १४९ ॥ न सत्कृतं त्वविधिना यैर्वित्तेनान्यजन्मनि ॥ भूत्वा मे पूजकास्ते तु सुखं कुर्वन्त्यनुत्तमम् ॥ १५० ॥ रुद्रो न यस्य शाखायाम्परिशिष्टान्वितं स तु ॥ पठेद्रुद्रन्तैत्तिरीयं लुप्तशाखस्तमेव हि ॥ ॥ १५१ ॥ मन्त्रप्रयोगसहितो रुद्राध्यायोऽथ वक्ष्यते ॥ असंस्कृताय नो वाच्यं तान्त्रिकाय कदाचन ॥ १५२ ॥ ॐ नमस्ते रुद्रमन्यव उतोत इषवे नमः ॥ नमस्ते अस्तु धन्वने बाहुभ्यामुत ते नमः ॥ १५३ ॥ या त इषुः शिवतमा शिवम्बभूव ते धनुः ॥ शिवा शरव्या या तव तया नो रुद्र मृडय ॥ १५४ ॥ या ते रुद्रशिवा तनूरघोरा पापकाशिनी तया नस्तनुवा शन्तमया गिरिशन्ताभिचाकशीहि ॥ १५५॥ यामिषुं गिरिशन्तहस्ते बिभर्ष्य-स्तवे ॥ शिवां गिरित्र तां कुरु माहिꣳसीः पुरुषं जगत् ॥ १५६ ॥ शिवेन वचसा त्वा गिरिशाच्छावदामसि ॥ लक्षमेकं प्रजुहुयाद्वोघृतं योऽत्र सुप्र-भम् ॥ १५७ ॥ माध्वीकं मधुकं क्षौद्रन्तिलांश्च दधिसंयुतान् ॥ यत्कि-ञ्चित्कार्य्यमुद्दिश्य तस्य सिद्धिः प्रजायते ॥ १५८ ॥ एवमेव सहस्रं चेदेका-दशदिनं हुनेत् ॥ बालानां मारका ग्रामे नश्यन्त्येव न संशयः ॥ १५९ ॥ कुमारमारकश्चैव द्वादशाहेन नश्यति ॥ होमः पञ्चदशाहन्तु राज्योपद्रवना-शनः ॥ १६० ॥ होमाद्विंशतिरात्रेण देशोपद्रवनाशनम् ॥ पृथिव्युपद्रवो नश्येन्मासमात्रेण होमतः ॥ १६१ ॥ गवामुपद्रवे जाते गोष्ठमध्ये तदा हुनेत् ॥ वैकङ्कतसमिद्भिश्चायुतं शान्तिः प्रजायते॥ अयुतं रुद्रहोमेन महाशा-न्तिर्भवेद्ध्रुवम् ॥ १६२ ॥ यथा नः सर्वमिज्जगदयक्ष्मꣳ सुमना असत् ॥ जपेदयुतसंख्याकं शापमोक्षः प्रजायते ॥ शिशिरे तु जले प्रातर्लक्षञ्जप्त्वा सुखी भवेत् ॥ १६३ ॥ अध्यवोचदधिवक्ता प्रथमो दैव्यो भिषक् ॥ अहीं-श्च सर्वाञ्जम्भयन्सर्वाश्च यातुधान्यो धराचीः परासुव ॥ १६४ ॥ लक्ष-

१ कण्टकिवृक्षविशेषः ॥

मेकं पुरश्चर्य्यां होमः स्याद्घृतसर्षपैः ॥ व्याधीनां नाशनं चेत्थं प्रयोगान्तरमुच्यते ॥ १६५ ॥ सप्ताभिमन्त्रितान्कृत्वा सर्षपानातुरस्य च ॥ चतुर्दिक्षु क्षिपेद्रक्षा दशदिग्भ्यः प्रजायते ॥ १६६ ॥ सप्ताभिमन्त्रितान्कृत्वा पथि गच्छंस्तु सर्षपान् ॥ दशदिक्षु क्षिपेन्नित्यं पथि क्षेमं प्रजायते ॥ ॥ १६७ ॥ ब्रह्मराक्षसयक्षाद्यैः पिशाचप्रेतभूतकैः ॥ आविष्टः सर्षपैस्ताड्यः सप्तवाराभिमन्त्रितैः ॥ १६८ ॥ पुनः पुनर्मन्त्रपाठं पूर्वं कृत्वा धनार्थिनः ॥ धनं गृहीत्वा गच्छन्ति करे चन्दनमेव हि ॥ १६९ ॥ शिखामाक्रम्य च जपेत्ताडयेद्गौरसर्षपैः ॥ रात्रिं समस्तां स्कन्दादिग्रहपीडा विनश्यति ॥ १७० ॥ अनेन मन्त्रयित्वा तु दद्याच्छास्त्रोक्तमौषधम् ॥ तत्कालं तद्गुणो यः स्यादन्यथा तु यथा तिथिः ॥ १७१ ॥ अभिमन्त्र्य जलं दद्यात्सर्वसत्त्वभवां रुजम् ॥ हरेत्सावग्रहाणां च सर्षपैस्ताडनैस्तथा ॥ १७२ ॥ सर्वभूतोद्भवां पीडां भस्मधारणतो जयेत् ॥ दिवसे च तथा रात्रौ त्रिशूलमभिमन्त्रयेत् ॥ १७३ ॥ सहस्रैकं समादाय क्षिपेन्नागहृदे तु तत् ॥ त्रिशूलेनास्तवेगास्ते नाशं गच्छन्ति पन्नगाः ॥ १७४ ॥ भस्माभिमन्त्रितं कृत्वा पन्नगाक्रान्तमन्दिरे ॥ क्षिपेत्तत्तालशब्देन पन्नगोत्सादनं भवेत् ॥ १७५ ॥ असौ यस्ताम्रो अरुण उत बभ्रुः सुमङ्गलः ॥ ये चैन७ंरुद्रा अभितो दिक्षुः श्रिताः सहस्रशो वैषा७ंहेड ईमहे ॥ १७६ ॥ असौ योऽवसर्पति नीलग्रीवो विलोहितः ॥ उतैनं गोपा अदृशं न दृशन्नु दहार्य्यः ॥ उतैनं विश्वा भूतानि सदृष्टो मृडयाति नः ॥ १७७ ॥ उदयास्तमयोः सूर्य्यमेताभ्यामुपतिष्ठते ॥ अष्टोत्तरशतं त्र्यब्दमक्षय्योविभवो भवेत् ॥ १७८ ॥ सहस्रमभिजप्तेन क्षीरेण स्नापयेच्छिवम्॥अब्देकेन प्रसन्नः स्याद्घृतस्रावाच्च वर्षणम्॥ १७९ ॥ अतसीनांतु पुष्पाणि हुनेदयुतसङ्ख्यया ॥ अवश्यो वश्यतां याति सविता वरदो भवेत् ॥ १८० ॥ अर्कमूलोद्भवैर्दुग्धैराप्लुतानां तु होमयेत् ॥ अयुतं चार्कसमिधां शक्तश्वेतस जले जपेत् ॥ १८१ ॥ होमान्ते[1] भगवान्सूर्य्यो वृष्टिं मुञ्चति नान्यथा ॥ मन्त्रद्वयं तु भजतामिष्टां सिद्धिं प्रयच्छति ॥ १८२ ॥

---

१ तस्येति शेषः ॥

नमो अस्तु नीलग्रीवाय सहस्राक्षाय मीढुषे ॥ अथो ये अस्य सत्त्वानोहन्ते भ्योकरन्नमः ॥ स्थण्डिलस्योपकण्ठे तु कृत्वा सघृतपायसम् ॥ १८३ ॥ कृष्णाष्टमीं समारभ्य यावत्कृष्णचतुर्दशी ॥ प्रत्यहं स्थापयेत्तावत्सहस्रेणा-भिमन्त्रितम् ॥ निवेदयेत्तु देवाय कार्षापणसहस्रकम् ॥ १८४ ॥ उप-माज्जायते लाभः सिद्धे मन्त्रे न संशयः ॥ असिद्धे तु तदर्धं स्यात्सूर्य्यकान्तवृ-षाद्यपि ॥ निवेदनात्पुनर्लाभो लक्षमेकं पुरस्कृतिः ॥ १८५ ॥ होमस्तु पायसघृतैरनाख्येयः प्रयोगवान् ॥ प्रमुञ्चधन्वनस्तमुभयो रात्न्योर्ज्याम् ॥ याश्च ते हस्त इषवः परा ता भगवो वप ॥ १८६ ॥ अवतत्य धनुष्ट्वꣳसह-स्राक्ष शतेषुधे ॥ निशीर्य्य शल्यानाम्मुखा शिवो नः सुमना भव ॥ १८७ ॥ विज्यं धनुः कपर्द्दिनो विशल्यो बाणवाँ उत ॥ अनेशन्नस्य या इषव आभुरस्य निषङ्गधिः ॥ १८८ ॥ या ते हेतिर्मीढुष्टम हस्ते बभूव ते धनुः ॥ तयास्मा-न्विश्वतस्त्वमयक्ष्मया परिभुज ॥ १८९ ॥ नमस्ते अस्त्वायुधायानातताय धृष्णवे ॥ उभाभ्यामुत ते नमो बाहुभ्यां तव धन्वने ॥ १९० ॥ परि ते धन्वनो हेतिरस्मान्वृणक्तु विश्वतः॥अथो य इषुधिस्तवारे अस्मन्निधेहि तम् ॥ ॥ १९१ ॥ आयुधान्याभिमन्त्र्येमाञ्जप्त्वा पञ्चसहस्रकम् ॥ बन्धयित्वा निर-सयेद्गच्छेद्गच्छन्ति शत्रवः ॥१९२॥ जुहुयादयुतन्दर्भकण्टकान्द्वेषकामुकः ॥ गुडम्मुखेन चोच्चार्य शत्रोर्नाम स्मरन्हुनेत् ॥ १९३ ॥ जपाख्यसवनेनैव शत्रु-मुत्सादयेद्धठात् ॥ सम्पूर्णाहं जपन्नुत्सादयेत्सग्राममेव च ॥ १९४ ॥ उत्साद-येत्तु राजानमहोरात्रं दिनार्धके ॥ चतुर्भागेन वैश्यन्तु षड्भागेनैकजातिकम् ॥ ॥ १९५ ॥ पलाशाश्वत्थबिल्वानामपामार्गस्य च क्रमात् ॥ विप्रादिवश्य-कामस्तु दधिक्षौद्रघृतान्विताः ॥ १९६ ॥ हुनेदयुतसंख्याकाः समिधः का-र्य्यसिद्धये ॥ हीनवर्णान्वशीकर्त्तुं वरुणार्ककवेतसान् ॥ १९७ ॥ शाखोट-कांश्च जुहुयादष्टाविंशशतानि च ॥ सौगन्धिकानुत्पलाग्निकुमुदानि प्रयच्छति॥ ॥ १९८ ॥ स्वयन्तु लिङ्गे लक्षन्तु चन्दनाक्तानि भाक्तितः ॥ राज्यभ्रष्टो भवेद्राजा षड्भिर्मन्त्रैः पृथक्पृथक् ॥ १९९ ॥ धनार्थी प्राप्नुयाद्वित्तं शम्भुमेवं प्रपूजयन् ॥ लक्षमेकन्तिलानां यः पृथग्दत्ते शिवोपरि ॥ २०० ॥ आरो-

पयेत्स शत्रूणां मूर्ध्नि तिष्ठति नित्यशः ॥ अयुतं राजवृक्षस्य समिधो होमयेत्तु यः ॥ २०१ ॥ रणे राजकुले द्यूते स शत्रुं त्वरितञ्जयेत् ॥ गुग्गुलं षट्सहस्रं यो दक्षिणामूर्त्तिसन्निधौ ॥ २०२ ॥ यत्कार्य्यार्थे हुनेत्तस्य सिद्धिः शीघ्रं प्रजायते ॥ असाध्यस्यापि सिद्धिः स्याद्धृत्वा चाष्टसहस्रकम् ॥ २०३ ॥ यथा महानसे सिद्धमन्नञ्च जुहुयात्तथा ॥ सहस्राष्टकमेतस्य द्रव्यम्भवति चाक्षयम् ॥ २०४ ॥ एका ऋक् परिशिष्टस्य एतस्याग्रे प्रवक्ष्यत ॥ तच्चं लोकोपकाराय सावधानतया शृणु ॥ २०५ ॥ नमस्ते अस्तु भगवन् विश्वेश्वराय महादेवाय त्र्यम्बकाय त्रिपुरुषाय त्रिपुरान्तकाय त्रिकालाय कालाग्निरुद्राय नीलकण्ठाय सर्वेश्वराय सदाशिवाय श्रीमहादेवाय नमः॥२०६॥अयुतं यो जपेदेतां घृताक्तैर्बिल्वपत्रकैः ॥ प्रतिनाम सहस्रं तु जुहुयाल्लोकवन्दितः ॥ २०७॥ नमो हिरण्यबाहवे सेनान्ये दिशाञ्च पतये नमो नमो वृक्षेभ्यो हरिकेशेभ्यः पशूनाम्पतये नमोनमः ॥ शष्पिञ्जराय त्विषीमते पथीनाम्पतये नमो नमो हरिकेशायोपवीतिने पुष्टानाम्पतये नमोनमः ॥ २०८ ॥ नमो बभ्लुशाय व्याधिनेन्नानाम्पतये नमो नमो भवस्य हेत्यै जगताम्पतये नमः ॥ नमो रुद्रायाततायिने क्षेत्राणाम्पतये नमो नमः सूतायाहन्त्यै वनानाम्पतये नमोनमः ॥ ॥ २०९ ॥ पुरश्चरणमेतस्य सहस्रं चैकमीरितम् ॥ यः संग्रामगतस्तस्य कौशल्यार्थमिदञ्जपेत् ॥२१०॥ जपप्रभावाच्छस्त्राद्यैः सोरिभिर्नैव बाध्यते ॥ सूतायाहन्त्यै पूर्वन्तु परिशिष्टं निगद्यते ॥ २११ ॥ ललाललततायिनाम्पतये नमो नमो ननाननततायिनाम्पतये नमः ॥ नमो रोहिताय स्थपतये वृक्षाणाम्पतये नमो नमो भुवन्तये वारिवस्कृतायौषधीनाम्पतये नमोनमः ॥ २१२ ॥ मन्त्रिणे वाणिजाय कक्षाणाम्पतये नमो नम उच्चैर्घोषायाक्रन्दयते पत्तीनाम्पतये नमोनमः॥२१३॥कृत्स्नवीताय धावते सत्त्वानाम्पतये नमो नमस्सहमानाय निव्याधिन आव्याधिनीनाम्पतये नमो नमः ॥ नमो निषङ्गिणे ककुभाय स्तेनानाम्पतये नमो नमो निषङ्गिणे इषुधिमते तस्कराणाम्पतये नमो नमः ॥ २१४ ॥ सहस्रपञ्चकञ्चास्य पुरश्चरणमुच्यते ॥ एतज्जप्तुर्भयं नास्ति व्याघ्रचौरादिकैर्वने ॥ २१५ ॥ नमो वञ्चते परिवञ्चते स्तायूनाम्पतये नमो

नमो निचेरवे परिचरायारण्यनाम्पतये नमो नमः ॥ सकायिभ्यो जिघा-ᳪं सद्भ्यो मुष्णताम्पतये नमो नमो समिद्भ्यो नक्तञ्चरद्भ्यो विकृन्ताना-म्पतये नमोनमः ॥ २१६ ॥ उष्णीषिणे गिरिचराय कुलञ्चानाम्पतये नमो नमः इषुमद्भ्यो धन्वायिभ्यश्चवो नमः ॥ नमः आतन्वानेभ्यः प्रतिदधाने-भ्यश्च वो नमः नमआयच्छद्भ्योस्यद्भ्यश्च वो नमोनमः ॥ २१७ ॥ सहस्रा-ष्टकमेतस्य पुरश्चरणमुच्यते ॥ व्रणादेस्तीव्रपीडा या नाशकोस्य जपः स्मृतः ॥ २१८ ॥ विसृजद्भ्यो विद्ध्यद्भ्यश्च वो नमा नमः स्वपद्भ्यो जाग्रद्भ्यश्च वो नमः ॥ नमः शयानेभ्य आसीनेभ्यश्च वो नमो नमस्तिष्ठद्भ्यो धावद्भ्यो श्च वो नमोनमः ॥ २१९॥ सभाभ्यः सभापतिभ्यश्च वो नमः ॥ अश्वेभ्यो अश्वपतिभ्यश्च वो नमः ॥ २२० ॥ सहस्रनवकन्तावत्पुरश्चरणमस्य तु ॥ सेनायाश्चतुरङ्गानां शान्तये प्रजपेदिदम् ॥ २२१ ॥ नम आव्याधिनीभ्यो विविध्यन्तीभ्यश्च वो नमो नम उपगणाभ्यस्तृ ᳪं हतीभ्यश्च वो नमः ॥ ॥ २२२ ॥ नमो गणेभ्यो गणपतिभ्यश्च वो नमो नमो व्रातेभ्यो व्रातपति-भ्यश्च वो नमः ॥ नमो गृत्सेभ्यो गृत्सपतिभ्यश्च वो नमो नमो विरूपेभ्यो विश्वरूपेभ्यश्च वो नमः ॥ २२३ ॥ नमो महद्भ्यः क्षुल्लकेभ्यश्च वो नमो नमो रथिभ्यो रथपातिभ्यश्चवो नमः ॥ नमः सेनाभ्यः सेनानीभ्यश्च वो नमो नमः क्षतृभ्यः संग्रहीतृभ्यश्च वो नमो नमो महद्भ्यो अर्भकेभ्यश्च वो नमः ॥२२४॥ नमस्तक्षभ्यो रथकारेभ्यश्च वो नमो नमःकुलालेभ्यः कर्म्मारेभ्यश्च वो नमः॥नमःपुञ्जिष्ठेभ्यो निषादेभ्यश्च वो नमो नमइषुकृद्भ्योधन्वकृद्भ्यश्च वो नमः ॥ नमो मृगयुभ्यः श्वनिभ्यश्च वो नमो नमः श्वभ्यः श्वपतिभ्यश्च वो नमः ॥२२५॥ पुरश्चरणमेतस्य सहस्राणां तु षोडश ॥ दुष्टग्रहबलिं दत्त्वा जप्त्वा चैतान्निरामयः ॥ २२६ ॥ नमो भवाय च रुद्राय नमः शर्वाय च पशुपतये च ॥ नमो नीलग्रीवाय च शितिकण्ठाय च नमः कपर्दिने च व्युप्तकेशाय च ॥ २२७ ॥ नमः सहस्राक्षाय च शतधन्वने च नमो गिरि-शाय च शिपिविष्टाय च॥नमो मीढुष्टमायेषुमते च नमो ह्रस्वाय च वामनाय च नमो बृहते च वर्षीयसे च नमो वृद्धाय च सवृधे च ॥ २२८ ॥ पुर-

श्चर्य्यायुतं चास्य विभवार्थं प्रयोजयेत् ॥ त्रिसन्ध्यं यः पठेदेतदेवं वर्षेण भाग्यवान् ॥ २२९ ॥ नमो अग्रेयाय च प्रथमाय च नम आशवे चाजिराय च ॥ नमः शीघ्र्याय च शीभ्याय च नम ऊर्म्याय चावस्वन्याय च नमः स्रोतस्याय च दीप्याय च ॥ २३० ॥ सहस्रपञ्चकं तावत्पुरश्चरणमुच्यते ॥ गणार्थं तृप्तिमाप्नोति यन्मतं च परैरपि ॥ २३१ ॥ नमो ज्येष्ठाय च कनिष्ठाय च नमः पूर्वजाय चापरजाय च ॥ नमो मध्यमाय चापगल्भ्याय च नमो जघन्याय च बुध्न्याय च ॥ २३२ ॥ नमः सोभ्याय च प्रतिसर्य्याय च नमो याम्याय च क्षेम्याय च ॥ श्लोक्याय च वसान्याय च नम उर्वर्य्याय च खल्याय च ॥ २३३ ॥ नमो वन्याय च कक्ष्याय च नम श्रवाय च प्रतिश्रवाय च ॥ २३४ ॥ सहस्रदशकं तावत्पुरश्चरणमुच्यते ॥ ज्ञातिश्रेष्ठत्वमाप्नोति जपेनैव न संशयः ॥ २३५ ॥ नम आशु शेणाय चाशुरथाय च नमः शराय चावभेदिने च ॥ नमो वर्म्मिणे च वरूथिने च नमो बिल्मिने च कवचिने च नमः श्रुताय च श्रुतसेनाय च ॥ २३६ ॥ पुरश्चर्य्यास्य निर्दिष्टा सहस्राणां तु पंचकम्॥ जात्या नश्यति खंजत्वं पादुकासिद्धिमाप्नुयात् ॥ २३७ ॥ नमो दुन्दुभ्याय चाहनन्याय च नमो धृष्णवे च प्रमृशाय च ॥ नमो दूताय च प्रहिताय च नमो निषङ्गिणे चेषुधिमते च ॥ २३८॥ नमस्तीक्ष्णेषवे चायुधिने च नमः श्रुत्याय च पथ्याय च॥ नमः काट्याय च नीप्याय च नमः कुल्याय च सरस्याय च ॥ नमो नादेयाय च वैशन्ताय च ॥ २३९ ॥ अयुतद्वितयं चास्य पुरश्चरणमुच्यते ॥ संग्रामे जयकृच्चायमनुवाकः प्रकीर्तितः ॥ २४० ॥ नमः कूप्याय चावट्याय च नमो वर्य्याय चावर्य्याय च ॥ नमो मेध्याय च विद्युत्याय च नम इन्द्रियाय चातथ्याय च॥२४१॥नमो वात्याय च रेष्म्याय च नमो वास्तव्याय च वास्तुपाय च ॥ २४२ ॥ षट्सहस्रं पुरश्चर्य्या ग्रहेणाधिष्ठितो रविः ॥ अभिमन्त्रणमेतेन तेन तोयं विमुञ्चति॥२४३॥नमः सोमाय च रुद्राय च नमस्ताम्राय चारुणाय च नमः शङ्गवे च पशुपतये च नम उग्राय च भीमाय च॥२४४॥ नमो अग्रेवधाय च दूरे वधाय च नमो हन्त्रे च हनीयसे च ॥ नमो वृक्षे-

भ्यो हरिकेशेभ्यो नमस्ताराय॥२४५॥नमः शम्भवाय च मयोभवाय च नमः शङ्कराय च मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च॥२४६॥पुरश्चर्य्या-युतमिता जपेदष्टोत्तरं शतम्॥ त्रिकालं भस्मतोयञ्च भक्षयेल्लेपयेत्तथा॥२४७॥ मासत्रयाद्राजयक्ष्मा किलातश्चित्रमब्दतः ॥ नश्यत्येव भवेद्दिव्यो रोगः क्षुद्रो दिनत्रयात् ॥२४८॥ नमस्तीर्थ्याय च कूल्याय च नमो वार्य्याय चावार्य्याय च॥नमः प्रतरणाय चोत्तरणाय च नमः आचार्य्याय चाध्मानाय च॥२४९॥ नमः शष्पाय च फेन्याय च नमः सिकत्याय च प्रवाह्याय च ॥ २५०॥ षट्सहस्रं पुरश्चर्य्याषण्मासं तीर्थगो जपेत् ॥ यथोक्तं तत्तीर्थफलं लभते चेह जन्मनि ॥ २५१ ॥ नम इरिण्याय च प्रमथ्याय च नमः किंशिलाय च क्षयाणाय च नमः कपर्द्दिने च पुलस्तये च ॥ २५२ ॥ नमो गोष्ठ्याय च गृह्याय च नमस्तल्पाय च गेह्याय च ॥ नमः काट्याय च गह्वरेष्ठाय च नमो हृदय्याय च निवेष्प्याय च ॥ २५३ ॥ नमः पांसव्याय च रजस्याय च नमः शुष्काय च हरित्याय च नमो लोप्याय च चोलप्याय च ॥२५४॥ सहस्रनवकं तावत्पुरश्चरणमुच्यते ॥ धातुवादो राजसश्च सिध्यत्येतत्प्रसादतः ॥२५५॥ अत्रास्ति परिशेषस्यानुवाकोप्येक एव हि ॥ रजस्याय च एतस्य नमोन्तस्याग्रतः पठेत् ॥ २५६ ॥ नमो नेदिष्ठाय च कुशाङ्गाय च नमः पराय च परतराय च ॥ नमः परमाय च धूमाय च नमो हराय च ता-राय च ॥ २५७ ॥ नमो वामनाय च हरिण्याय च नमः शिवाय च हरिकेशाय च ॥ २५८ ॥ सहस्राष्टकमेतस्य पुरश्चरणमुच्यते ॥ बाल-ग्रहा विनश्यन्ति बर्हिषोदकमार्जनात् ॥ २५९ ॥ नम ऊर्व्याय च सू-र्य्याय च नमः पर्णाय च पर्णशदाय च ॥ नम उद्गुरमाणाय चाभिघ्नते च नम आखिदते च प्रखिदते च ॥ २६० ॥ अस्य नवसहस्राणां पुरश्चर-णमुच्यते ॥ अभिमन्त्र्य जलं देयं शोकशान्त्यै तु शोकिने ॥ २६१ ॥ नमो वः किरिकेभ्यस्सर्वत्र देवानांहृदयेभ्य इति ॥ परिशिष्टं चैतदत्र प्रयोगेष्वपि यो जपेत ॥ २६२ ॥ तिलहोमेनायुतेन कार्य्यं पलसहस्रकम् ॥ प्रतिष्ठाञ्चैव भूपालात्प्राप्नुयाद्वर्षमध्यतः ॥ २६३ ॥ हुनेद्वोमयखण्डानि

चैकादशसहस्रकम् ॥ घृताक्तानि प्रदातव्या गाव एकादशैव हि ॥२६४॥ पुरश्चरणपूर्वन्तु लक्षैकं तिलतण्डुलान् ॥ यो हुनेत्तस्य गेहे तु राजलक्ष्मीः स्वयं वसेत् ॥ २६५ ॥ एवं च तिलधान्याभ्यां होमाल्लक्ष्मीः स्थिरा भवेत् ॥ शतपुष्पमयीं कृत्वा प्रतिमां राजरूप्यकाम् ॥ २६६ ॥ सहस्रं जुहुयाद्राजा वशोवश्यं प्रजायते ॥ पद्मोत्पलानां लक्षन्तु हुत्वा भूपाश्रियं लभेत् ॥२६७॥चणकप्रतिमा लक्षं होमयेद्गुग्गुलोर्वटीः॥हृतसामन्तराज्यं स प्राप्नोत्येव न चान्यथा॥२६८॥हुनेद्बिल्वसमिद्भिस्तु दक्षिणामूर्त्तिसन्निधौ ॥ लक्षमेकं तदा राष्ट्रं सामन्तस्य लभेत सः ॥२६९॥ महाचतुष्पथे स्थाप्यं लिङ्गं वल्मीकमृद्भवम् ॥ स्नापयेत्पञ्चगव्येन रुद्राध्यायेन मन्त्रयेत् ॥ २७० ॥ मानस्तोकेन मन्त्रेण चाभिषिञ्चेन्निवेद्यकम् ॥ सघृतं पायसं दद्याद्भूतेभ्यश्च तथा बलिम् ॥ २७१ ॥ एवं मासत्रयं कृत्वा महदैश्वर्य्यमाप्नुयात् ॥ पलं चार्धपलं वापि दक्षिणामूर्त्तिसन्निधौ ॥ २७२ ॥ श्वेताम्बरीं चूर्णयित्वा स्थापयेत्ताम्रपात्रके॥आलोड्य कपिलाज्येन प्रदीपिन्याभिमन्त्रितम् ॥२७३॥ सहस्राष्टकमेतेन मन्त्रेण प्रपिबेदथ ॥ भवेत्तस्याप्रतिहतं वाक्यं सर्वत्र निश्चितम् ॥ २७४ ॥ उदुम्बर्य्याश्च समिधो घृताक्ताश्चायुतं हुनेत् ॥ स्वामी बहुगवां स स्यात्क्षीयन्ते नास्य धेनवः ॥ २७५ ॥ बिल्वानां समिधश्चैव हुनेदष्टसहस्रकम् ॥ सुवर्णाष्टकमाप्नोति ह्यसिद्धो रजताष्टकम् ॥ २७६ ॥ बिल्वाभावे त्वामलकं तदभावे उदुम्बरम् ॥ तस्याभावे हैमवती तदभावे विभीतकम् ॥ २७७ ॥ श्रीखण्डगोघृताक्तानां पद्मानां लक्षमेककम् ॥ हुनेद्यस्तस्य लक्ष्मीस्तु स्वयमेवोपतिष्ठते ॥ २७८ ॥ द्रापे अन्धसस्पतेदरिद्रनीललोहित ॥ एषां पुरुषाणामेषां पशूनां मा भेर्मा रोङ्मोचनः किञ्च नाममत्॥ ॥ २७९ ॥ अनेन जुहुयादाज्यमयुतावधि संख्यया ॥ अक्षय्यान्यस्य वासांसि भवन्ति च तथातथा ॥२८०॥ या ते रुद्र शिवा तनूः शिवाविश्वाहा भेषजी ॥ शिवा रुतस्य भेषजी तया नो मृड जीवसे ॥ उर्णाभाश्चाजीवदवेस्तनूं विहाय च ॥ २८१ ॥ एकादशसरं कुर्य्यात्सूत्रमेकैकसूत्रकम् ॥ सहस्रं

१ त्र्यवार्षः ॥

सम्भ्रमन्त्र्यार्थैकादश ग्रन्थयस्स्मृताः॥२८२॥एवं सम्पूज्य तां रज्जुं धूपं दत्त्वा-च बन्धयेत् ॥ वामहस्ते तु गर्भिण्याः स सुवीत सुखं सुतम् ॥२८३॥ दक्षे बाल-कहस्ते तु सुखं तिष्ठति बालकः ॥ बन्धयेद्यदि सूत्रन्तु मन्त्रेणैवाभिमन्त्रितम् ॥ ॥ २८४ ॥ धनिको बाहुमूले वा कण्ठे वा धारयेदिदम् ॥ कदाचिदुत्त-मर्णाद्वै भयन्तस्य न जायते ॥२८५॥ क्ष्मा७ँ रुद्राय तवसे कपर्दिने क्षयद्वी-राय प्रभरामहे मतिम्॥यथा नः शमसद्द्विपदे चतुष्पदे विश्वम्पुष्टं ग्रामे अस्मि-न्ननातुरम् ॥ २८६ ॥ अष्टोत्तरसहस्रन्तु प्रत्यहं जुहुयात्तिलान् ॥ अया-चितं धनन्तेन लोकेभ्य ह्युपलभ्यते ॥ २८७ ॥ यस्तु दूर्वाप्रवालानि घृताक्ता-न्ययुतं हुनेत् ॥ महाज्वरोपघातेपि मृतकल्पः स जीवति ॥ २८८ ॥ माक्षिकं पायसाज्याभ्यामयुतं जुहुयाच्छुचिः ॥ महाग्रहज्वरादिभ्योभिचाराच्च प्रमुच्यते ॥ २८९ ॥ वैकङ्कतीनामयुतं समिधाञ्च घृतैर्हुनेत् ॥ ज्वरादिकभवा पीडा सद्य एव विनश्यति ॥ २९० ॥ द्रव्याद्यर्थं यदा कश्चिन्मृदुभिरभि-रूप्यते ॥ तदा तुषान्प्रजुहुयादयुतं सुखमेधते ॥ २९१ ॥ वैकंकतीश्च समिध उदुम्बर्यास्तथा तिलान् ॥ अनेन जुहुयाल्लक्षं सर्वशक्तिकरं स्मृतम् ॥ ॥ २९२ ॥ गवाश्वान्यपशूनां वा ह्युपवाते तु तत्स्थले ॥ अग्निं संस्थाप्य जुहुयाद्वैकङ्कतीघृतप्लुताः ॥ २९३ ॥ अयुतं तस्य शान्तिः स्यात्पलाशानां तथायुतम् ॥ घृताक्तानां प्रजुहुयान्महाज्वरमुखा ग्रहाः ॥ २९४ ॥ राक्षसा भूतवेतालाः प्रेताश्चापि पिशाचकाः ॥ जनं वापि गजं वाश्वं मुक्त्वा गच्छन्ति दूरतः॥२९५॥ जनानां जननं यस्मिन्गेहे भवति सूतिका ॥ मरणं वाथ हानिर्वा तत्र शान्तिरुदीर्य्यते ॥२९६॥ घृताक्तानां तिलानान्तु ह्ययुतं जुहुयाद्द्विजः ॥ तस्मिन्देशे महामारीव्याघ्रादिभ्यो भयं न वै ॥ २९७ ॥ देवानां क्षोभणं यत्र तत्र शांतिं वदाम्यहम् ॥ पुरस्य मध्यभागे तु वह्निस्थापनमाचरेत् ॥२९८॥ चतुर्दिक्षु च सन्नद्धा गुप्ताश्चत्वार एव हि॥नराः स्थाप्यास्ततः कर्म्म सावधानः समाचरेत् ॥२९९॥ अष्टोत्तरसहस्रन्तु घृताक्ताञ्जुहुयात्तिलान्॥ततोर्धरात्रसमये त्वोदनं सघृतन्तिलान् ॥ ३०० ॥ पिष्टं माषौदनञ्चापि कृशरं परमान्नकम् ॥ सुज्ञो जनपदे दद्यात्स्थानेस्थाने ततो बलिम् ॥ ३०१ ॥ पलाशपत्रे रुद्रेभ्यो

रक्षोभ्यस्तदनन्तरम् ॥ कुर्य्यादेवं पक्षमेकं सर्वोपद्रवनाशनम् ॥ ३०२॥ मृडानो रुद्रो तनो मयस्काधि क्षयद्वीराय नमसा विधेम ते ॥ यच्छञ्च योश्च मनुरायजे पितातदस्यामततोवरुद्रप्रणीतौ ॥ ३०३ ॥ सहस्रन्तु जपेत्तोये तीरे सम्पूजयेच्छिवम् ॥ यावद्दूरे भवेद्दिष्टं त्रिदिनार्वाङ्मिलेत्खलु ॥ ३०४ ॥ मा नो महान्तमुत मा नो अर्भकं मा न उक्षंतन्तमुत मा न उक्षितम् ॥ मानो वधीः पितरं मोत मातरं मानः प्रियास्तन्वो रुद्ररीरिषः ॥३०५॥ परिजनस्य बालानामारोग्यार्थन्तिलान्हुनेत् ॥ अयुतं शीतलादिभ्य आरोग्यं जायते क्षणात् ॥ ३०६ ॥ [१]मानस्तोकं महान्तञ्च सर्वतन्त्रेषु गोपितम् ॥ कथयिष्यामि मुनये देवानां कार्य्यसिद्धये ॥ ३०७ ॥ अतिकृच्छ्रेण कृच्छ्रेण तथा चान्द्रायणेन वा ॥ आदौ संशोध्य चात्मानं पूतकायो जपञ्चरेत् ॥३०८॥ जपन्नेतत्तु भुञ्जीत शाकं वा यावकं पयः॥ भिक्षाञ्चाज्यञ्जपस्तस्य भवेदयुतसंख्यकः ॥ ३०९ ॥ सहस्रमात्रे मन्त्रस्य प्रयोगार्हो भवेन्मनुः ॥ प्रयोगान्ते त्वहोरात्रञ्जपः कार्य्यो निरन्तरम् ॥ ३१० ॥ तद्दशांशेन होतव्य औदुम्बर्यो घृताप्लुताः ॥ महाव्याहृतिभिः पश्चात्तावदेव घृतं हुनेत् ॥ ३११ ॥ संस्रावभागं संप्राश्य प्रयोगेणाक्षयं व्रजेत् ॥ पुनः कर्म्म प्रकुर्वीत प्रायश्चित्तं पुनः पुनः ॥ ३१२ ॥ स्नायाच्च तिलतैलेन सप्तधा मन्त्रितेन च ॥ मरणादिप्रयोगाणाम्भवेत्पातकमोचनम् ॥ ३१३ ॥ ब्रह्मवर्चसकामस्तु हुनेदष्टसहस्रकम् ॥ घृताक्तानान्तु समिधाञ्चौषध्यः सर्वकर्म्मसु ॥ ३१४ ॥ पद्मानान्तु घृताक्तानान्दशरात्रमुपोषितः ॥ अयुतं जुहुयाल्लक्ष्मीकामो वा शिवदर्शनात् ॥ ३१५ ॥ अपामार्गोद्भवानाञ्च तण्डुलानान्तथायुतम् ॥ हुनेद्वापि घृताक्तानां सर्वार्थस्य समृद्धये ॥ ३१६ ॥ गोसहस्रस्य लाभाय जुहुयाद्गोपयोथ वा ॥ आज्याहुतीनाञ्च तथा सहस्राष्टकमादरात् ॥ ३१७ ॥ उपोषितो दशाहानि हुनेद्बिल्वफलानि च ॥ अयुतञ्च घृताक्तानि लभेताष्टस-

१ मानस्तोके तनये मा न आयुषि मा नो गोषु मानो अश्वेषु रीरिषः ॥ मा नो वीरानुद्रभामिनो वधीर्हविष्मन्तः सदमि त्वा हवामहे—अयं मन्त्रः अपरश्च—मानो महान्तमुत मा नो अर्भकं मा न उक्षन्तमुत मा न उक्षितम् ॥ मा नो वधीः पितरं मोतमातरं मा नः प्रियास्तन्वो रुद्र रीरिषः ॥

हस्रकम् ॥ ३१८ ॥ सिद्धे मन्त्रे सुवर्णानि त्वसिद्धे रजतानि च ॥ भार्य्या-
मुक्ती मे भवतु ह्येदर्थं हुनेच्छुचिः ॥ ३१९ ॥ जातीपुष्पाणि चाज्येन मधुना
संयुतानि च ॥ कपिला तु यदा सूता वृषभं वासितापि गौः ॥ ३२० ॥
आज्यदुग्धं गृहीत्वा स्वाः श्रपयेत्तेन वै चरुम् ॥ अष्टोत्तरशतं हुत्वा तथा
चाष्टसहस्रकम् ॥ ३२१ ॥ मन्त्रयित्वा चरुन्तञ्च सपत्नीकः प्रभक्षयेत ॥
आयुष्मतोष्टपुत्रांश्च जनयेन्नात्र संशयः ॥ ३२२ ॥ दूर्वाप्रवालाञ्जु-
हुयाद्दधिक्षीरघृतान्वितान् ॥ आयुष्कामोष्टसाहस्रं चिरायुष्ट्वं स विन्दते
॥ ३२३ ॥ दधिक्षौद्रघृताक्तानां पुष्पाणां कुशकाशयोः ॥ सहस्राण्यष्ट जुहु-
यादिच्छेत्क्षुद्रान्यदा पशून् ॥ ३२४ ॥ त्रिरात्रोपोषितो भत्वा गच्छेन्महाच-
तुष्पथे ॥ कृत्वा मूर्त्तिं गोमयेन तद्दैवतसम्मुखे ॥ ३२५ ॥ पूजयित्वा
हुनेद्भूमौ चाष्टोत्तरसहस्रकम् ॥ कर्म्मणा तेन नृपतिर्भवेद्वश्यो न संशयः ॥
॥ ३२६ ॥ सताभिमन्त्रितन्तीक्ष्णं तैलं तेन करद्वयम् ॥ सम्यक्स्पृष्टस्तेन
स्पृष्टो योयोसौ वशगो भवेत् ॥३२७॥ ब्रह्मवर्चसकामस्तु दधिक्षौद्रघृतान्विताः
॥ बिल्वस्य समिधो हुत्वा लक्षं तेजोनिधिर्भवेत ॥ ३२८ ॥ औदुम्बरीश्च
जुहुयाद्दधिक्षौद्रघृतान्विताः ॥ समिधोष्टसहस्राणि शत्रोरुच्चाटनं भवेत् ॥३२९
सर्वोपद्रवनाशार्थं गृहीत्वा सप्तशर्कराः ॥ मन्त्रयित्वा सहस्रं तु चतुर्दिक्षु क्षिपे-
त्ततः ॥ ३३० ॥ ऊर्ध्वाधस्तस्य निकटे सर्वोपद्रवनाशनम् ॥ एवं कृत्वा व्र-
जन्मार्गे चौरव्याघ्रभयं हरेत् ॥ ३३१ ॥ आ रे तेगोघ्न उत पूरुषघ्ने क्षयद्वी-
राय सुम्नमस्ते ते अस्तु ॥ रक्षाव नो अधि चेदं देवब्रूह्यथो च नः शर्म्म
यच्छाद्विवर्हाः ॥ ३३२ ॥ स्तुहि श्रुतं गर्तसदं युवानं भवन्तं भीममुपहत्नुमुग्र॥
मृडाजरित्रे रुद्रस्तवानो अभ्यन्ते अस्मन्निव यन्तु सेना ॥ ३३३ ॥ परि नो
रुद्रस्य हेतिर्वृणक्तु परि त्वेषस्य दुर्मतिरघायोः ॥ अवस्थिरा मघवद्भ्यस्तनु-
ष्वमीढ्वस्तोकाय तनयाय मृड ॥ ३३४ ॥ मीढुष्टम शिवतम शिवो नः
सुमना भव ॥ परमे वृक्ष आयुधं निधाय कृत्तिं वसान आचर पिनाकं बिभ्रदा-
गहि ॥ ३३५ ॥ महाभये समुत्पन्ने व्याघ्रचौरभयादिषु ॥ चतसृचः स्मरे-
च्चित्ते तद्भयस्य विनाशिकाः ॥ ३३६ ॥ विकिरिद्रविलोहित नमस्ते अस्तु

भगवः ॥ यास्ते सहस्रꣳहेतन्यमस्मान्निवपन्तु ताः ॥ ३३७ ॥ शपेदयुतसंख्याकं विरोधे तु महाजनैः ॥ राजा च वशमायाति प्रीतिश्चाति प्रजायते ॥ ॥ ३३८ ॥ सहस्राणि सहस्रशो बाह्वोस्तव हेतयः ॥ तासामीशानो भगवः पराचीनामुखाकृधि ॥ ३३९ ॥ यदा तु महतो मृत्युर्नृपतेर्वाप्युपद्रवः ॥ तदा होमं प्रकुर्वीत वैकङ्कतसमिद्वरैः ॥ ३४० ॥ औदुम्बरीभिः शाल्मल्या तिलैर्वापि यवैरपि ॥ प्रत्येकमेकादशधा चाभिमन्त्र्य ततोवनिम् ॥ ३४१ ॥ कृशरं पायसं वापि ततो भूतानि चार्चयेत ॥ दद्याद्विडालमांसस्य बलिं नश्यन्त्युपद्रवाः ॥ ३४२ ॥ सहस्राणि सहस्रशो ये रुद्रा अधिभूम्याम् ॥ तेषां सहस्रयोजनेवधन्वानितन्मसि ॥ ३४३ ॥ पठेयुरन्यशाखीया वाक्यान्ते परिशिष्टकम् ॥ अस्मिन्महत्यर्णवे तं रक्षो भवा अधि तथा ॥ ३४४ ॥ नीलग्रीवाः शितिकण्ठाः शर्वा अधः क्षमाचराः ॥ तेषाꣳसहस्रयोजनेवधन्वानितन्मसि ॥ ३४५ ॥ नीलग्रीवाः शितिकण्ठा दिवꣳरुद्रा उपश्रिताः ॥ तेषाꣳसहस्रयोजनेवधन्वानि तन्मसि ॥ ३४६ ॥ ये वृक्षेषु शष्पिंजरा नीलग्रीवा विलोहिताः ॥ तेषाꣳसहस्रयोजनेवधन्वानितन्मसि ॥ ३४७ ॥ ये भूतानामधिपतयो विशिखासः कपर्द्दिनः ॥ तेषाꣳसहस्रयोजनेवधन्वानितन्मसि ॥ ॥ ३४८ ॥ येन्नेषु विविध्यन्ति पात्रेषु पिबतो जनान् ॥ तेषाꣳसहस्रयोजनेवधन्वानितन्मसि ॥ ३४९ ॥ ये पथां पथिरक्षय ऐलबृदा आयुयुधः ॥ तेषाꣳसहस्रयोजनेवधन्वानितन्मसि ॥ ३५० ॥ ये तीर्थानि प्रचरन्ति सृकाहस्ता निषाङ्गिणः ॥ तेषाꣳसहस्रयोजनेवधन्वानितन्मसि ॥ ३५१ ॥ य एतावन्तश्च भयाꣳसश्च दिशो रुद्रा वितस्थिरे ॥ तेषाꣳसहस्रयोजनेवधन्वानितन्मसि ॥ ३५२ ॥ जपेदेता नव ऋचः परिशिष्टसमन्विताः ॥ भवन्ति भोगदास्तेन हीना ज्ञानप्रदा मताः ॥ ४५३ ॥ नमोस्तु रुद्रेभ्यो ये पृथिव्यां येषामन्नमिषवः ॥ तेभ्यो दश प्राचीर्दश दक्षिणा दश प्रतीचीर्दशोदीचीर्दशोर्ध्वाः ॥ तेभ्यो नमोस्तु ते नोवन्तु ते नो मृडयन्तु ते यं द्विष्मो यश्च नो द्वेष्टि तमेषां जम्भेदध्मः ॥ ॥ ३५४ ॥ नमोस्तु रुद्रेभ्यो येन्तारिक्षे येषां वातइषवः ॥ तेभ्यो दशप्राचीर्दश दक्षिणा दश प्रतीचीर्दशोर्द्ध्वाः ॥ ३५५ ॥ नमोस्तु रुद्रेभ्यो ये

दिवि येषां वर्षमिषवः ॥ तेभ्यो दश प्राचीर्दश दक्षिणा दश प्रतीचीर्दशोद्धाः ॥ ३५६ ॥ मध्याह्ने चाज्यं जुहुयादेभिर्मन्त्रैः सकण्टकम् ॥ प्रत्यङ्गिराया मन्त्रस्य कर्म्म कुर्य्यादयं मनुः ॥ ३५७ ॥ मृत्युञ्जयेन मन्त्रेण नमस्तेऽस्य समापनम् ॥ तैत्तिरीयेन्यशाखासु परिशिष्टानि सप्त च ॥ ३५८ ॥ सद्योजा-तादिकाः पञ्च त्र्यम्बकं च यजामहे ॥ षडर्चं एतास्त्वरितरुद्रनामकमुच्यते ॥ ॥ ३५९ ॥ अग्नाविष्यरसजोषसे मा वर्द्धतु चाङ्गिरः शुभैर्वाजैर्निरगात्तम् ॥ ॥ ३६० ॥ नित्यं सन्ध्यावन्दनान्ते तिष्ठन्कालत्रये जपेत् ॥ अष्टोत्तरसह-स्रन्तु षण्मासं सत्यवाग्भवेत् ॥ ३६१ ॥ वाजश्चमे प्रसवश्च मे प्रयतिश्च मे प्रसितिश्च मे धीतिश्च मे क्रतुश्च मे स्वरश्च मे श्लोकश्च मे श्रवश्च मे श्रुतिश्च मे ज्योतिश्च मे स्वश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥ ३६२ ॥ प्राणश्च मेऽपानश्च मे व्यानश्च मेऽसुश्च मे चित्तं च मे अधीतं च मे वाक्च मे मनश्च मे चक्षुश्च मे श्रोत्रं च मे दक्षश्च मे बलं च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥ ॥ ३६३ ॥ ओजश्च मे सहश्च मे आत्मा च मे तनूश्च मे शर्म्म च मे वर्म्म च मेऽङ्गानि च मेऽस्थीनि च मे परूꣳषि च मे शरीराणि च म आयुश्च मे जरा च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥ ३६४ ॥ ज्यैष्ठ्यं च म आधिपत्यं च मे मन्युश्च मे भामश्च मेऽमश्च मे जेमा च मे महिमा च मे वरिमा च मे प्रथिमा च मे वर्षिमा च मे द्राघिमाच मे वृद्धं च मे वृद्धिश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥ ३६५ ॥ सत्यं च मे श्रद्धा च मे जगच्च-मे धनं च मे विश्वञ्च मे महश्च मे क्रीडा च मे मोदश्च मे जातञ्च मे जनि-ष्यमाणञ्च मे सूक्तञ्च मे सुकृतं च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥ ३६६ ॥ ऋतञ्च मे मृतञ्च मे यक्ष्मं च मे नामयं च मे जीवातुश्च मे दीर्घायुस्त्वं च मे न मित्रं च मे भयं च मे सुखञ्च मे शयनञ्च मे सूषश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥ ॥ ३६७ ॥ यन्ता च मे धर्त्ता च मे क्षेमं च मे धृतिश्च मे विश्वञ्च मे महश्च मे संविच्च मे ज्ञात्रञ्च मे सूश्च मे प्रसूश्च मे सीरञ्च मे लयश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥ ३६८॥ शञ्च मे मयश्च मे प्रियं च मे नुकामश्च मे कामश्च मे

१ सद्योजातम्प्रपद्यामि सद्योजाताय वै नमः इत्याद्याः पञ्चर्चः पूर्वं बहुस्थलेषु लिखिताः ।

सौमनसश्च मे भगश्च मे द्रविणञ्च मे भद्रञ्च मे श्रेयश्च मे वसीयश्च मे यशश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥३६९॥ ऊर्क्च मे सूनृता च मे पयश्च मे रसश्च मे घृतं च मे मधु च मे सग्धिश्च मे सपीतिश्च मे कृषिश्च मे वृष्टिश्च मे जैत्रं-चमे औद्भिद्यञ्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥ ३७० ॥ रयिश्च मे रायश्च मे पुष्टञ्च मे पुष्टिञ्च मे विभु च मे प्रभु च मे पूर्णं च मे पूर्णतरं च मे कुयवञ्च मे क्षितंचमेन्नञ्च मे क्षुच्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥३७१॥ वित्तं च मे वेद्यञ्च मे भूतञ्च मे भविष्यच्च मे सुगञ्च मे सुपथ्यं च मे ऋद्धंच मे ऋद्धिश्च मे कॢप्तञ्च मे कॢप्तिश्च मे मतिश्च मे सुमतिश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्॥ ३७२॥ व्रीहयश्च मे यवाश्च मे माषाश्च मे तिलाश्च मे मुद्गाश्च मे खल्वाश्च मे प्रियङ्गवश्च मे णवश्च मे श्यामाकाश्च मे नीवाराश्च मे गोधूमाश्च मे मसूराश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥ ३७३ ॥ अश्मा च मे मृत्तिका च मे गिरयश्च मे पर्वताश्च मे सिकताश्च मे वनस्पतयश्च मे हिरण्यञ्चमेऽयश्च मे श्यामञ्च मे लो-हंच मे सीसंच मे त्रपु च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥३७४॥ अग्निश्च म आपश्च मे वीरुधश्च म ओषधयश्च मे कृष्टपच्याश्च मेऽकृष्टपच्याश्च मे ग्राम्याश्च मे पशवआरण्याश्च मे वित्तं च मे वित्तिश्च मे भूतं च मे भूतिश्च मे यज्ञेन कल्प-न्ताम् ॥ ३७५ ॥ वसु च मे कर्म्म च मे शक्तिश्च मेऽर्थश्च म एमश्च मे इत्या च मे गतिश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥ ३७६ ॥ अग्निश्च म इन्द्रश्च मे सोमश्च म इन्द्रश्च मे सविता च म इन्द्रश्च मे सरस्वती च म इन्द्रश्च मे पूषा च म इन्द्रश्च मे बृहस्पतिश्च म इन्द्रश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्॥ ३७७॥ मित्रश्च म इन्द्रश्च मे वरुणश्च म इन्द्रश्च मे धाता च म इन्द्रश्च मे त्वष्टा च म इन्द्रश्च मे मरुतश्च मे इन्द्रश्च मे विश्वे च मे देवा इन्द्रश्च मे यज्ञेन कल्पताम्॥ ३७८॥ पृथिवी च म इन्द्रश्च मेऽन्तरिक्षं च म इन्द्रश्च मे द्यौश्च-म इन्द्रश्च मे समाश्च म इन्द्रश्च मे नक्षत्राणि च म इन्द्रश्च मे दिशश्चम इन्द्रश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥ ३७९ ॥ अꣳशुश्च मे रश्मिमश्च मे दाभ्यश्च मे धिपतिश्च म उपाꣳशुश्च मेन्तर्यामश्च म ऐन्द्रा वायवश्च मे मैत्रा-वरुणश्च मा आश्विनश्च मे प्रतिप्रस्थानश्च मे शुक्रश्च मे मन्थी च मे यज्ञेन

कल्पन्ताम् ॥ ३८० ॥ आग्रयणश्च मे वैश्वदेवश्च मे ध्रुवश्च मे वैश्वानरश्च मे ऐन्द्राग्निश्च मे महावैश्वदेवश्च मे मरुत्वतीयाश्च मे निष्केवल्यश्च मे सावित्रश्च मे सारस्वतश्च मे पात्नीवतश्च मे हारियोजनश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥ ३८१ ॥ स्रुचश्च मे चमसाश्च मे वायव्यानि च मे द्रोणकलशश्च मे ग्रावाणश्च मे विषवणे च मे पूतभृच्च म आधवनीयश्च मे वेदिश्च मे बर्हिश्च मे अवभृथश्च मे स्वगाकारश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥ ३८२ ॥ अग्निश्च मे घर्म्मश्च मेर्कश्च मे सूर्य्यश्च मे प्राणश्च मेऽश्वमेधश्च मे पृथिवी च मेऽदितिश्च मे दितिश्च मे द्यौश्च मेङ्गुलयः शक्करयो दिशश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥ ३८३ ॥ ऋक्च मे सामचमे स्तोमश्च मे यजुश्च मे दीक्षा च मे तपश्च मे ऋतवश्च मे संवत्सरश्च मेहोरात्रे ऊर्वष्ठीवे बृहद्रथन्तरे च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥ ॥ ३८४ ॥ गर्भाश्च मे वत्साश्च मे त्र्याविश्च मे त्र्यावी च मे दित्यवाट् च मे दित्यौही च मे पञ्चाविश्च मे पञ्चावी च मे त्रिवत्सश्च मे त्रिवत्सा च मे तुर्य्यवाट् च मे तुर्य्यौहीच मे यज्ञेन कल्पन्ताम्॥ ३८५॥ पृष्ठवाट् च मे पृष्ठौही च मे उक्षा च मे वशाच म ऋषभश्च मे बृहच्च मेऽनड्वांश्च मे धेनुश्च मे आयुर्यज्ञेन कल्पन्ताम्॥ ३८६॥ एकाच मे तिस्रश्च मे तिस्रश्च मे पञ्च च मे पञ्च च मे सप्त च मे सप्त च मे नव च मे नव च म एकादश च म एकादश च मे त्रयोदश च मे त्रयोदश च मे पञ्चदश च मे पञ्चदश च मे सप्तदश च मे सप्तदश च मे नवदश च मे नव दश च म एकविंᳪशतिश्च म एकविंᳪशतिश्च मे त्रयोविंᳪशतिश्च मे त्रयोविंᳪशतिश्च मे पञ्चविंᳪशतिश्च मे पञ्चविंᳪशतिश्च मे सप्तविंᳪशतिश्च मे सप्तविंᳪशतिश्च मे नवविंᳪशतिश्च मे नवविंᳪशतिश्च मे एकत्रिंᳪशच्च म एकत्रिंᳪशच्च मे त्रयस्त्रिंᳪशच्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥ ३८७॥ चतस्रश्च मेऽष्टौ च मे २ द्वादश च मे २ षोडश च मे २ विंᳪशतिश्च मे २ चतुर्विंᳪशतिश्च मे २ऽष्टाविंᳪशतिश्च मे २ द्वात्रिंᳪशच्च मे षट्त्रिंᳪशच्च मे २ चत्वारिंᳪशच्च मे २ चतुश्चत्वारिंᳪशच्च मे २ऽष्टचत्वारिंᳪशच्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥ ३८८ ॥ वाजश्च प्रसवश्चापि क्रतुश्च मूर्धा च व्यश्नियश्चान्त्यायनश्चान्त्यश्च भौवनश्च भुवनश्चाधिपतिश्च यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥ ३८९ ॥

एतावान्रुद्र आख्यातः सर्वकामफलप्रदः ॥ विस्वरोवाक्षरः पाठो रुद्रस्तोत्रं तु शान्तये ॥ ३९० ॥ इडा देवहूर्मनुर्यज्ञनीर्बृहस्पतिरुक्थामदानि श॒ᳫंशिषद्विश्वे देवाः सूक्तवाचः पृथिवि मातर्मा मा हि॒ᳫंसीर्मधु मनिष्ये मधु जनिष्ये मधु वक्ष्यामि मधु वदिष्यामि मधुमतीन्देवेभ्यो वाचमुद्या श॒ᳫंशुश्रूषेण्यां मनुष्येभ्यस्तं मा देवा अवन्तु शोभायै पितरो नु मदन्तु ॥ ॐ शान्तिः शान्तिः ॥ शान्तिः॥ ३९१॥ परं शिष्टं जपेच्चैव एष रुद्रविधिः स्मृतः ॥ अभिषिञ्चेत्पौष्टिकार्थे शान्तिकामस्तु होमयेत् ॥ ३९२ ॥ सिद्धिकामो जपेदेवमक्षराणां तु संख्यया ॥ इहैव बहुरुद्राढयः शिव एव न चापरः ॥ ३९३ ॥ पदतुल्यावृत्तिजपाद्विज्ञतिरपि जायते ॥ वाक्यतुल्यावृत्तिजपात्सर्वं पापं विनश्यति ॥ ३९४ ॥ ऋचां सङ्ख्याजपात्सर्वं क्षुद्रपापं विनश्यति ॥ अनुवाकमिमं जप्त्वानिष्टग्रहरुजो जयेत् ॥ ३९५ ॥ देवीसूक्तं प्रवक्ष्यामि सर्वाभीष्टप्रदायकम् ॥ अशक्तः प्रोच्यते रुद्रे विनायं तत्पुरः पठेत् ॥ ३९६ ॥ अथ देवीसूक्तम् ॥ अहं रुद्रेभिर्वसुभिश्चराम्यहमादित्यैरुत विश्वदेवैः ॥ अहं मित्रावरुणौ भा विभर्म्यहमिन्द्राग्नी अहमश्विनौ भा ॥ ३९७ ॥ अहं सोम मनेहंस विभर्म्यहं त्वष्टारमुत पूषणं भगम् ॥ अहं दधामि द्रविणं हविष्मते सुप्राव्ये यजमानाय सुन्वते ॥ ३९८ ॥ अहं राष्ट्री सङ्गमनी वसूनां चिकितुषी प्रथमा यज्ञियानाम् ॥ तां मा देवा व्यदधुः पुरुत्रा भूरिस्थात्रां भूर्य्यावेशयन्तीम् ॥ ३९९ ॥ मया सो अन्नमत्ति यो विपश्यति यः प्राणिति य ईं शृणोत्युक्तम् ॥ अजन्तवो मान्त उपक्षियन्ति श्रुधि श्रुतश्रद्धिवं ते वदामि ॥ ॥ ४०० ॥ अहमेव स्वयमिदं वदामि जुष्टं देवेभिरुत मानुषेभिः ॥ यं कामये तन्तमुग्रं कृणोमि तं ब्रह्माणं तमृषिं तां सुमेधात् ॥ ४०१ ॥ अहं रुद्राय धनुरा तनोमि ब्रह्मद्विषे शरवे हन्तवाउ ॥ अहं जनाय समदं कृणोम्यहं द्यावापृथिवी आविवेश ॥ ४०२ ॥ अहं सुवे पितरमस्य मूर्धन्मम योनिरप्स्वन्तःसमुद्रे ॥ ततो वितिष्ठे भुवना नु विश्वोतामूद्यां वर्ष्मणो स्पृशामि ॥ ॥ ४०३ ॥ अहमेव वात इव प्रवाम्यारभमाणा भुवनानि विश्वा ॥ परो

दिवा परस्ना पृथिव्यै तावती महिना संबभूव ॥ ४०४ ॥ देवीसूक्तमिदं प्रोक्तं सर्वसूक्तोत्तमोत्तमम् ॥ आधारोयं मन्त्रसिद्धेर्द्विजानां परिकीर्तितः ॥ ॥ ४०५ ॥ अथ विष्णोः प्रवक्ष्यामि सूक्तं गणपतेश्च यत् ॥ यत्साधनं विना सर्वे मन्त्रा विघ्नैस्तु विघ्निताः ॥ ४०६ ॥ तस्मादादौ गणेशानं प्रसाद्य पुनराचरेत् ॥ देवतासाधनं तत्तु निर्विघ्नेन प्रजायते ॥ ४०७ ॥ निद्रालस्यं क्षुधा क्रोधो लोभो मोहो मनोभवः ॥ प्रमादो रोग इत्याद्या मन्त्रविघ्नकराः स्मृताः ॥ ४०८ ॥ विधानपूर्व्वकं तस्मादत्र सूक्तं तदुच्यते ॥ यज्ज्ञापकानां कार्य्याणि स्युरप्रतिहतानि च ॥ ४०९ ॥ अस्य च द्वादशर्चस्य गणेशस्य महात्मनः ॥ ऋषिर्गृत्समदो देवो गणपः परिकीर्तितः ॥ ॥ ४१० ॥ आद्यानां त्रिकृचानां च छन्दस्त्रिष्टुप्प्रकीर्तितम् ॥ उत्तराणां नवानाञ्च गायत्रं छन्द उच्यते ॥ ४११ ॥ महागणपतिश्चास्य दैवतं परिकीर्तितम् ॥ विनियोगः कीर्त्तनीयो यथाकार्य्यानुसारतः ॥ ४१२ ॥ गणानान्त्वा गणपतिं हवामहे कविं कवीनामुपमश्रवस्तमम् ॥ ज्येष्ठराजं ब्रह्मणां ब्रह्मणस्पते आ नः शृण्वन्नूतिभिः सीद सादनम् ॥ ४१३ ॥ निषुसीदगणपते गणेषु त्वमाहुर्विप्रतमङ्कवीनाम् ॥ न ऋते त्वत्क्रियते किञ्चनारे महामर्कंमघवञ्चित्रमर्च ॥ ४१४ ॥ त्वेषङ्गणं तव शंखादिहस्तं धृतिव्रतं मा विदानन्ति वारम् ॥ मया भुवो ये ॥ ४१५ ॥ आ तून इन्द्र सुमन्तं चित्रं यामं संगृभाय ॥ महाहस्ती दक्षिणेन ॥ ४१६ ॥ विद्मा हि त्वा तुविकूर्मि तु विदेशन्तुवीमघम् ॥ तुविमात्रमवोभिः ॥ ४१७ ॥ न हि त्वा शूर देवा न मर्तासो दित्स तम् ॥ भीमं गोवादयन्ते ॥ ४१८ ॥ एतोन्विन्द्रं स्तवामेशानं वस्व स्वराज्यम् ॥ न राधसार्धिषं नः ॥ ४१९ ॥ प्रस्तोष उपगासिषच्छ्रवत्साम गीयमानम् ॥ अभिशर्धस्य जुगुरत् ॥ ४२० ॥ आ नो मरुयञ्जनं दक्षिणेनभिमध्यन प्रामृजद्दा इन्द्र ॥ मा नो वसोर्निर्भाक् ॥ ४२१ ॥ उपक्रमस्याभर घृताधृष्णो जनानां यद्यशुष्टरस्य वेदः ॥ ४२२ ॥ इन्द्र य उ नु अस्ति वोजो विशेभिस्तनिदवः ॥ अस्माभिस्तुतं सन्निहि ॥ ४२३ ॥ स याजुसे

जा अस्मभ्यं विश्वश्चन्द्राः॥ बलेश्च मक्षु जरन्तम्॥ ४२४ ॥[1]गणानां त्वा निषुसीद त्वेषंगणन्तथैव च ॥ आ तू न इंद्र विद्महि न हि त्वा शूरमेव च ॥ ४२५॥ अंगुष्ठाद्यं समारभ्य करपृष्ठादिषु न्यसेत् ॥ गणानां त्वेति बाहिश्च हृदयादिषडङ्गकम् ॥ ४२६ ॥ एवं न्यासद्वयं कृत्वा षड्भिश्च व्यापकं भजेत् ॥ ततो द्वादशऋग्भिस्तु न्यासमत्र समाचरेत ॥ ४२७ ॥ मस्तके च मुखे चैव नेत्रयोः कर्णयोस्तथा ॥ नसि कण्ठे हृदि भुजे जठरे नाभिमध्यतः ॥ ४२८॥ गुल्फयोः पादयोश्चैव द्वादशर्चः पृथक्पृथक् ॥ मन्त्रराजाक्षरैश्चैव तृतीयो न्यास एव च ॥ ४२९ ॥ ततः षडक्षरेणैव चतुर्थन्यासमाचरेत् ॥ दशार्चाभिश्च दिग्बन्धं पादे शिरसि चैकक्रम् ॥ ४३० ॥ एवं न्यासविधिं कृत्वा साङ्गावरणपूजनम् ॥ तन्त्रमन्त्रेण सम्पूज्य ऋग्भिर्द्वादशभिस्तथा ॥ ४३१ ॥ षोडशैरुपचारैस्तु साङ्गपीठादिदैवतैः ॥ नैवेद्यैर्विविधाकारैर्मोदकैः सिद्धलड्डुकैः ॥ ४३२ ॥ पायसैः क्षीरखण्डैश्च तोषयेद्गणनायकम् ॥ इक्षुखण्डैरिक्षुरसैः कदलीपनसादिभिः ॥ ४३३ ॥ नारिकेरैर्दाडिमैश्च अन्यैर्नानाविधैः फलैः॥ सचन्द्रकैश्च ताम्बूलैर्दक्षिणाभिः समन्ततः ॥ ४३४ ॥ पूजयित्वा तु मध्याह्ने प्रारभेत जपं ततः ॥ आदौ जपेन्मन्त्रराजं वारद्वादशकं बुधः ॥ ॥ ४३५ ॥ ततश्च ऋग्द्वादशकं जपेत्सर्वमतन्द्रितः ॥ अन्तर्द्वादशपाठे तु मन्त्रराजं पुनर्जपेत् ॥ ४३६ ॥ एवं क्रमेण कर्त्तव्यो वेदमन्त्रजपो हरे ॥ दिनेदिने सदा कार्य्यो जपः संसिद्धिकारकः ॥ ४३७ ॥ सूक्तमन्त्रजपेनाशु सर्वसिद्धिमवाप्नुयात् ॥ अथ वा वक्रतुण्डस्य जप आदौ प्रजायते ॥ ४३८॥ षड्विंशद्वारमावृत्त्या मध्ये सूक्तं गणेश्वरम् ॥ पुनः षड्विंशकावृत्त्या वक्रतुण्डः षडक्षरः ॥ ४३९ ॥ एवं च संयुतं कृत्वा द्वादशर्चं मनुञ्जपेत ॥ एवमष्टोत्तरशतं कृत्वा सूक्तं जपं हरे ॥ ४४० ॥ एकविंशत्सहस्रं तु सूक्तस्योक्ता

१ गणानां त्वेति अंगुष्ठाभ्यां नमः, निषुसीदेति तर्जनीभ्यां नमः, त्वेषंगणं तव शखादिहस्तामिति मध्यमाभ्यां नमः, आतून इन्द्रः सुमंसमिति अनामिकाभ्यां नमः, विद्मा हि त्वा तु विकूर्मिमिति कनिष्ठिकाभ्यां नमः, न हि त्वा शूर देवा इति करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः। अनया रीत्या।हृदयादिन्यासमपि कुर्यात्पुनः मन्त्रं पूर्णं पूर्णं पठेत् । २ ॐ वक्रतुण्डाय हुम् इतिमन्त्रः ।

पुरस्क्रिया ॥ जपाद्दशांशहोमस्तु पायसेन घृतेन च ॥ ४४१ ॥ शर्करापञ्च-खाद्यैश्च कुसुमैः करवीरकैः ॥ बिल्वपत्रैरिक्षुदण्डैर्दाडिमैः कदलीफलैः ॥ ॥ ४४२ ॥ मोदकैर्लड्डुकैश्चैव घृतपक्वैर्मनोहरैः ॥ अलाभे सर्वद्रव्याणां जुहुयात्तिलसर्पिषा ॥ ४४३ ॥ होमस्य दशमांशेन गोपयोभिश्च तर्पयेत्॥ अथ वेक्षुरसेनैव तदभावे गुडोदकम् ॥ ४४४ ॥ तर्प्पणस्य दशांशेन मार्ज्ज-येच्छुभवारिभिः ॥ मार्जनस्य दशांशेन ब्राह्मणान्भोजयेद्बहून् ॥ ४४५ ॥ पायसैः खण्डखाद्यैश्च मोदकैः सिद्धलड्डुकैः॥ अपूपैर्मण्डकाद्यैश्च सघृतैः शर्करा-न्वितैः ॥ ४४६ ॥ सहकाररसैः[1] साज्यैस्तथा च कदलीफलैः ॥ एवंसिद्धे तु सूक्ते तु सफलं तन्निगद्यते ॥ ४४७ ॥ महदैश्वर्य्यमतुलं प्रज्ञां विद्यां यशो बलम् ॥ वाक्सिद्धिं समवाप्नोति चान्ते ब्रह्मपुरं व्रजेत् ॥ ४४८ ॥ यद्यत्कार्यं समुद्दिश्य क्रियते स पुरो जपः ॥ तत्तद्गणपतेर्नूनं प्रसादात्सिध्यति ध्रुवम् ॥ ४४९ ॥ बन्धोच्चाटनयोर्द्वेषे मारणे बन्धमोक्षणे ॥ वश्ये वादे महोत्पाते परचक्रभये तथा ॥ ४५० ॥ महारण्ये रणे वैरिसंकुले सङ्कटे जपेत् ॥ बन्धोच्चाटनयोर्द्वेषे सर्षपैर्लोहसंयुतैः ॥ ४५१ ॥ उलूककाकपक्षैश्च होमोऽरण्ये तु निर्जने ॥ मारणे तु श्मशानस्थो रात्रौ कुर्य्याज्जपं रुषा ॥ ॥ ४५२ ॥ तिलैर्भल्लातपुष्पैश्च राजिकालवणान्वितैः ॥ मेषीलोमान्वितै-श्चैव होमः स्यान्मारणे ध्रुवम् ॥ ४५३ ॥ श्मशाने च तथा रात्रौ जपं कुर्य्याद्धि रोषतः ॥ आकर्षणार्थं साध्यानामुन्मत्तफलबीजकैः[2] ॥ ४५४ ॥ गृध्रपक्षैस्ततश्चार्कमुक्तदुग्धैर्हुनेत्ततः ॥ सप्तवासरपर्य्यन्तन्ततश्चाकर्षणं भवेत् ॥ ४५५ ॥ वश्यार्थं च जपं कुर्य्याद्विशेषेण शिवालये ॥ सूर्य्यास्तमनमा-रभ्य यावत्सूर्य्योदयो भवेत् ॥ ४५६ ॥ तावन्मूलं सम्पुटेन जपेद्भूते त्रिरात्रके दिवा होमः प्रकर्त्तव्यो मधुपुष्पैः फलैस्तथा ॥ ४५७ ॥ तथा च मालती पत्रैर्घृतेन च समन्वितैः ॥ रक्तचन्दनसंयुक्तैर्मोदकैः सघृतैस्तिलैः ॥ ४५८ ॥ तर्पयेदिक्षुरसकैः सद्यो वश्यकरं मतम् ॥ राजानो राजपुत्राश्च राजकीयाश्च

१ आम्ररसैः । २ कनकफलैर्बीजैर्वा ।

मन्त्रिणः ॥ ४५९ ॥ ईश्वरो वशतां याति मनुष्याणा तु का कथा ॥ बन्धमोक्षाय कर्त्तव्यो जपो रात्रौ शिवालये ॥ ४६० ॥ उपवासव्रतो नित्यं ब्रह्मचारी जितेन्द्रियः ॥ एकविंशतिसाहस्रं दिवा होमः शिवालये ॥४६१॥ पायसेन घृताक्तेन बन्धमोक्षे भवेद्ध्रुवम् ॥ सर्वसाधारणो होमः प्रत्यर्चं हि विधानतः ॥४६२॥ आदौ द्वादशवारेण मन्त्रेण द्वादशाहुतीः ॥ पश्चान्मन्त्रविभागेन प्रत्यर्चं जुहुयाद्बुधः॥४६३॥ अन्ते द्वादशवारांस्तु होमश्च मंत्रराजतः॥एवमेव प्रकारेण सर्वसाधारणे जपे॥४६४॥ होमो गणेशसूक्तस्य सम्पुटस्यप्रजायते॥एवं रुद्रविधानं तु देवीसूक्तं तथैव च॥४६५॥विष्णोस्तुभ्यं निगदितं यतो भेदो न आवयोः॥अतः परन्तु ते चेच्छा यत्र तत्प्रति पृच्छ्यताम्॥ ४६६॥

इति श्रीमहामायामहाकालानुमते मेरुतन्त्रे कलिप्रत्ययवेदमन्त्रप्रकाशो द्वादशः॥१२॥

श्रीदेव्युवाच ॥ अहो दुःखप्रदाः खेटाः प्रायः कलियुगे सदा ॥ तेषां तु वेदमार्गेण कीदृक्पूजा मनुश्च कः ॥ १ ॥ कथन्ते दोषमायादिपीडा यच्छन्ति नो नृणाम् ॥ वेदमार्गेण च ब्रूहि तेषां पूजाविनिर्णयम् ॥ २ ॥ श्रीशिव उवाच ॥ साधु पृष्टं त्वया देवि ग्रहपूजाविनिर्णयः ॥ विना कालं तु दुःखेन सर्वान्सम्पीडयन्ति हि ॥ ३ ॥ नीचं कुर्वन्ति चोच्चस्थाः खेचराश्चक्रवर्त्तिनम् ॥ चक्रवर्तिसुतं दासं यदा ते नीचसंस्थिताः ॥ ४ ॥ आत्मा सूर्य्योऽस्ति कालस्य मनः शुभ्रांशुरुच्यते ॥ सत्त्वं भौमो वचश्चान्द्रिर्जीवो ज्ञानसुखे तथा ॥५॥ सितः कामः शनिर्दुःखं छाया राहुः शिखी शिखा ॥ खेटोपासनतो मर्त्यस्त्रिकालज्ञः प्रजायते ॥ ६ ॥ वैदिकेन तु मार्गेण ये ग्रहान्समुपासते ग्रहलोके तु ते सौख्यं ग्रहैश्च सह भुञ्जते ॥ ७ ॥ तत्र भास्करमन्त्रस्य हिरण्यस्तूपको मुनिः॥त्रिष्टुप्छन्दो देवता तु सविता परिकीर्तितः ॥८॥ आँ-

---

१ आकृष्णेन रजसा इति अंगुष्ठाभ्यां नमः, वर्त्तमानो निवेशयन् इति तर्जनीभ्यां नमः, अमृतं मर्त्यं च इति मध्यमाभ्यां नमः, हिरण्ययेन सविता इति अनामिकाभ्यां नमः, रथेनादेवो याति इति कनिष्ठिकाभ्यां नमः, भुवनानि पश्यन् इति करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः । एवं हृदयादिन्यासमपि कुर्य्यात् ॥ अथ पदन्यासः ॥ आ मूर्ध्नि, कृष्णेन नेत्रयोः, रजसा कर्णयोः, वर्तमानो नासिकायाम्, निवेशयन् मुखे,अमृतं गले, मर्त्यं बाह्वोः, च हस्तयोः,हिरण्ययेन नाभौ, सविता लिङ्गे, रथेन पायौ,देवः ऊरुयुग्मे,याति जानुयुग्मे,भुवनानि जङ्घायुग्मे, पश्यन् पादयुग्मे। इति पदन्यासः॥

कृष्णेन रजसा वर्त्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यं च ॥ हिरण्ययेन सविता-रथेन देवो याति भुवनानि पश्यन् ॥ ९ ॥ अंगुष्ठादिषडङ्गादिषड्वर्णान्विभजंश्चरेत् ॥ भुवनस्याथ मन्त्रस्य पदन्यासं समाचरेत् ॥ १० ॥ श्रीसूक्तोक्तऋचां स्थाने ततो ध्यायेद्दिवाकरम् ॥ ११ ॥ पद्मासनं पद्मकरं पद्मगर्भसमद्युतिम् ॥ सप्ताश्वं सप्तरज्जुं च जातं देशे कलिङ्गके ॥ १२ ॥ विश्वामित्रार्यकं त्रिष्टुप्छंदः काश्यपगोत्रजम् ॥ रक्ताम्बरधरं रक्ताभरणैरुपशोभितम् ॥ ॥ १३ ॥ रक्तगन्धानुलेपाङ्गं रक्तध्वजपताकिनम् ॥ किरीटिनं सकेयूरं मण्डितं रक्तच्छत्रिणम् ॥ १४ ॥ रथारूढं तस्य सव्यं त्वधिदैवाग्न्यधिष्ठितम् ॥ प्रत्यधिदेवेश्वरेणासव्ययुक्तं च प्राङ्मुखम् ॥ १५ ॥ ध्यात्वैवं पूजयेद्भानुं फुल्लाक्षतविनिर्मिते ॥ द्वादशांगुलयुक्ते च श्रीपर्णादिकपीठके ॥ १६ ॥ अत्राधिदैवतं पूज्यं तथा प्रत्यधिदैवतम् ॥ वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं जुहुयात्तद्दशांशतः ॥ १७ ॥ होमस्त्वाल्प्ये जपः कार्य्यस्त्वधिप्रत्यधिदैवते ॥ करवीरादिकुसुमै रक्तचन्दनमिश्रितैः ॥ १८ ॥ दूर्वांकुरैश्चाक्षतैश्च तर्प्पणं स्याद्दिनेशितुः ॥ मधुच्छन्दा मुनिश्छन्दो गायत्र्यग्निश्च देवता ॥ १९ ॥ विनियोगस्तु सवितुः प्रीतये चेति कीर्त्तयेत् ॥ २० ॥ अग्निमीले पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम् ॥ होतारं रत्नधातारम् ॥ २१ ॥ वामदेवो मुनिश्छन्दोऽनुष्टुब्रुद्रस्तु देवता ॥ विनियोगस्तु सवितुः प्रीतये चेति कीर्तयेत् ॥ २२ ॥ आ वो राजानमध्वरस्य रुद्रꣳ होतारꣳ सत्ययजꣳ रोदस्योः ॥ अग्निं पुरा तनयित्नोरचित्ताद्धिरण्यरूपमवसे कृणुध्वम् ॥ २३ ॥ होमस्त्वर्कसमिद्भिः स्यादभावे कमलाक्षकैः ॥ तदभावे यवतिलघृतैर्वा मधुरत्रयैः ॥ २४ ॥ अदृष्टसूर्य्यो नाश्नीयान्न रात्रौ भानुवासरे ॥ त्यजेच्च लवणं तक्रं दिवा स्वापं च मैथुनम् ॥ २५ ॥ त्रिकालं प्रजपेत्सूक्तं पूजयेत्तु विशेषतः ॥ एवं सिद्धे मनौ जाते नृपाः स्युस्तस्य किंकराः ॥ २६ ॥ तस्य पादोदकादेव रोगसंघो विलीयते ॥ सिद्धमन्त्रो मुमूर्षुस्तु च्छायां पश्यत्यशीर्षिकाम् ॥ २७ ॥ कुष्ठादिरोगग्रस्तस्तु साधकोर्घ्याणि दापयेत् ॥ आरोग्यार्थं त्वृचा पादैरथ ऋक्त्रितयैः स्वयम् ॥ २८ ॥ एवं चतुर्विंशतिभिरिष्ट्वा सूर्य्यं तु तर्पयेत् ॥ त्रिकालार्घैस्तदा हन्ति दुःसाध्यानपि भास्करः ॥ २९ ॥ पुष्पाणि करवीरस्य

रक्तचन्दनचन्दने ॥ दूर्वाक्षते कुशाग्राणि तिलांस्तत्रयमेव च ॥ ३० ॥ एतान्यावश्यकान्याहुरर्चनेऽष्टौ यथोत्तरम् ॥ निक्षिप्य ताम्रपात्रे तु कस्तूरीं केशरं विधुम् ॥ ३१ ॥ मन्त्रैर्वापि च गायत्र्या जानुभ्यां धरणीं गतः ॥ दृष्ट्वा सूर्यं नमस्कृत्य दद्यादर्घ्यमनन्यधीः ॥ ३२ ॥ अभिषिञ्चेच्च शिरसि ऋचाभिर्दत्ततोयकैः ॥ त्यजेत्पूर्वोदितं सर्वं भानुवारे विशेषतः ॥ ३३ ॥ कुष्ठाद्या ये महारोगाः षण्मासाद्यान्ति संक्षयम् ॥ उपकुष्ठादयो ये च कृते सन्ध्याद्वयेऽपि ते ॥ ३४ ॥ एकसन्ध्यार्चनेनापि सूर्यावर्त्तादयो गताः ॥ केचित्तु सप्ततिदिनैर्मण्डलेन त्रिसप्तकैः ॥ ३५ ॥ सप्तमेनापि चैकाहात्तारतम्यं विचारयेत् ॥ स्वप्यान्नैवोदयेस्ते च पूजयित्वेष्टमाप्नुयात् ॥ ३६ ॥ उद्यन्नद्य मित्रमहमारोहन्नुत्तरां दिवम् ॥ हृद्रोगं मम सूर्य्य हरिमाणं च नाशय ॥ ३७ ॥ शुकेषु मे हरिमाणं रोपणाकासु दध्मसि ॥ अथो हारिद्रवेषु मे हरिमाणं निदध्मसि ॥ ३८ ॥ उदगादयमादित्यो विश्वेन महसा सह ॥ द्विषन्तं मह्यं रन्धयन्मो अहं द्विषतेरधम् ॥ ३९ ॥ एकादशर्चसूक्तस्य हिरण्यस्तूपको मुनिः ॥ त्रिष्टुब्जगत्यौछन्दसी देवता सविता मतः ॥ ४० ॥ ह्वयाम्यग्निं प्रथमं स्वस्तये ह्वयामि मित्रावरुणाविहावसे ॥ ह्वयामि रात्रीं जगतो निवेशनीं ह्वयामि देवं सवितारमूतये ॥ ४१ ॥ आकृष्णेन रजसा वर्तमानो निवेशयन्नमृतंमर्त्यं च ॥ हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन् ॥ ४२ ॥ याति देवः प्रवता यात्युद्वता याति शुभ्राभ्यां यजतो हरिभ्याम् ॥ आ देवो यातु सविता परावतोऽपविश्वा दुरिता बाधमानः ॥ ४३ ॥ अभी वृतं कृशनैर्विश्वरूपं हिरण्यशम्यं यजतो बृहन्तम् ॥ आस्थाद्रथं सविता चित्रभानुः कृष्णा रजांसि तविषीन्दधानः ॥ ४४ ॥ विजनाञ्छ्यावाः शितिपादो अख्यंरथं हिरण्यप्र उगं वहन्तः ॥ शश्वद्विशः सवितुर्दैव्यस्योपस्थे विश्वा भुवनानि तस्थुः ॥ ४५ ॥ तिस्रो द्यावः सवितुर्द्वा उपस्थाँ एकायमस्य भुवने विराषाट् ॥ आणिं न रथ्यममृताधितस्थुरिह ब्रवीतु या उतच्चिकेतत् ॥ ४६ ॥ विसुपर्णो अन्तरिक्षाण्यख्यद्गभीरवेपा असुरः सुनीथः ॥ क्वेदानीं सूर्य्यः कश्चिकेत कतमां द्यां रश्मिरस्याततान ॥

॥ ४७ ॥ अष्टौ व्यख्यत्ककुभः पृथिव्यास्त्रीधन्वयोजना सप्तसिन्धून् ॥ हिरण्याक्षः सविता देव आगाद्दधद्रत्ना दाशुषे वार्य्याणि ॥ ४८ ॥ हिरण्यपाणिः सविता विचर्षणिरुभे द्यावापृथिवी अन्तरीयते ॥ अपामीवां बाधते वेति सूर्य्यमभि कृष्णेन रजसा द्यामृणोति ॥ ४९ ॥ हिरण्यहस्तो असुरः सुनीथः सुमृडीकः स्ववाँ यात्वर्वाङ् ॥ अपसेधन्रक्षसो यातुधानानस्थाद्देवः प्रतिदोषं गृणानः ॥ ५० ॥ ये ते पन्थाः सवितः पूर्व्यासो रेणवः सुकृता अन्तरिक्षे ॥ तेभिर्नो अद्य पथिभिः सुगेभी रक्षा च नो अधि च ब्रूहि देव ॥५१॥ करवीरजपामुस्तदेवदारुमनःशिलाः ॥ केशरैलापद्मकाष्ठमधु[१]पुष्पौघबालकैः ॥५२॥ एतज्जापी प्रतिदिनमेतद्युक्तजलैश्चरेत् ॥ स्नानं सूर्य्यस्य सन्तुष्ट्यै दुष्टो वा यस्य भास्करः॥५३॥कौसुम्भवस्त्रं कनकं माणिक्यं गां तथैव वा॥सर्वञ्चैकतरं दद्यान्नित्यं भास्करसेवकः ॥ ५४ ॥ दद्यादशक्तो गोधूमांस्तथा भास्करपीडितः ॥ गुडान्नाशी तु नित्यं स्याद्धारयेदर्कमूलकम् ॥ ५५ ॥ अथ वक्ष्ये चन्द्रमन्त्रं गौतमोस्य मुनिर्मतः ॥ गायत्री छन्द इत्येकं सोमो देवः प्रकीर्त्तितः ॥ ५६ ॥ आप्यायस्व समेतु ते विश्वतः सोम वृष्ण्यम् ॥ भवावाजस्य सङ्गथे ॥ ५७ ॥ षड्दीर्घबिन्दुयुक्तेन सकारेण षडङ्गकम् ॥ पदन्यासैश्च[२] कर्त्तव्यो रुद्रोक्ताङ्गेषु दिक्षु च ॥ ५८ ॥ किरीटिनं श्वेतवस्त्रं दशाश्वं श्वेतभूषणम् ॥ पाशपाणिं द्विबाहुं तमत्रिगोत्रसमुद्भवम् ॥ ५९ ॥ जातं यवनदेशे च श्वेतगन्धानुलेपनम् ॥ श्वेतध्वजपताकाढ्यं केयूरमणिभूषितम् ॥ ६० ॥ श्वेताकृतिं रथारूढम[३]धिदेवेन संयुतम् ॥ तथा प्रत्यधिदेवेन वायव्याभिमुखं युतम् ॥ ६१ ॥ एवं ध्यात्वा चतुर्विंशत्यंगुलीचतुरस्रके ॥ श्वेताक्षतकृते चन्द्रमर्चेद्देवद्वयान्वितम् ॥ ६२ ॥ वर्णलक्षञ्जपेन्मत्रं सर्वेष्वेतेष्वयं विधिः ॥ जपाद्यम्पूर्ववत्सर्वमाधिप्रत्याधिदेवयोः ॥६३॥ श्वेताक्षतैश्च पुष्पैश्च श्रीखण्डेन च

---

१ मधूकः । २ सां अंगुष्ठाभ्यां नमः, सीं तर्जनीभ्यां नमः, सूं मध्यमाभ्यां नमः, सैं अनामिकाभ्यां नमः, सौंकनिष्ठिकाभ्यां नमः, सः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः । अनया रीत्या हृदयादिन्यासमपि कुर्यात् ॥ ३ चन्द्राधिदेवता आपः । तत्प्रत्यधिदेवतोमा ॥

कम्बुना ॥ श्वेतदूर्वान्वितैस्तर्प्यैः पलाशसमिधो हुनेत् ॥ ६४ ॥ घृताक्तास्त-दभावे तु वास्य परिकीर्त्तिताः ॥ अशक्तौ तदभावे वा जपेन्मन्त्रं दशांशतः ॥ ६५ ॥ मेधातिथिर्ऋषिः प्रोक्तोऽनुष्टुब्छन्द उदाहृतम् ॥ आपोऽत्र देवता-श्चन्द्रप्रीतये विनियोजनम् ॥ ६६ ॥ अप्सु मे सोमो अब्रवीदन्तर्विश्वानि भेषजा ॥ अग्निञ्च विश्वशम्भुवम् ॥ ६७ ॥ ऋषिर्दीर्घतमाः प्रोक्ता जगती छन्द ईरितम् ॥ देवतोमा समाख्याता नियोगश्चन्द्रतुष्टये ॥ ६८ ॥ गौरी-र्मिमाय सलिलानि तक्षत्येकपदी द्विपदी चतुष्पदी॥अष्टापदी दशपदी बुभूवुषी सहस्राक्षरा परमे व्योमन्॥६९॥पौर्णिमायां निराहारस्सायं चंद्रं प्रपूजयेत्॥क्षीरे-णार्घ्यंतु शङ्खेन दद्याद्देवस्य तुष्टये॥७०॥ सूक्तं चन्द्रमसो जप्यं प्राग्वच्चन्द्रस्य सेवनात्॥शान्तो दान्तः सुकीर्तिश्च श्रीमान्दाता सुरूपवान्॥७१॥त्रयोविंशर्च-सूक्तस्य गौतमोस्य मुनिर्मतः ॥ छन्दस्त्रिष्टुब्देवता च चन्द्रमाः परिकीर्तितः ॥ ॥ ७२ ॥ त्वं सोम प्रचिकितो मनीषा त्वं ऽ रजिष्ठमनुनेषि पन्थाम् ॥ तव प्रणीती पितरो न इंद्रो देवेषु रत्नमभजन्त धीराः ॥ ७३ ॥ त्वं सोम क्रतुभिः सुक्रतुर्भूस्त्वं दक्षैः सुदक्षो विश्ववेदाः ॥ त्वं वृषा वृषत्वेभिर्महित्वाद्यु-म्नेभिर्द्युम्न्यभवोनृचक्षाः ॥ ७४ ॥ राज्ञो न ते वरुणस्य व्रतानि बृहद्गभी-रन्तव सोम धाम ॥ शुचिष्ट्वमसि प्रियो न मित्रो दक्षाय्यो अर्य्यमेवासि सोम ॥ ७५ ॥ या ते धामानि दिवि या पृथिव्यामपर्वतेष्वोषधीष्वप्सु ॥ तेभिर्नो विश्वैः सुमना अहेलन्राजन्सोम प्रतिहव्या गृभाय ॥ ७६ ॥ त्वं सोमासि सत्पतिस्त्वं राजोत वृत्रहा ॥ त्वम्भद्रो असि क्रतुः ॥ ७७ ॥ त्वञ्च सोमनो वसो जीवातुं न मरामहे ॥ प्रियस्तोत्रो वनस्पतिः ॥ ७८ ॥ त्वं सोम महे भगं त्वं यून ऋतायते ॥ दक्षं दधासि जीवसे ॥ ७९ ॥ त्वन्नः सोम विश्वतो रक्षा राजन्नघायतः ॥ नरिष्ये त्वावतः सखा ॥ ८० ॥ सोम यास्ते मयो भुव ऊत्यः सन्ति दाशुषे ॥ ताभिर्नोविता भव ॥ ८१ ॥ इमं यज्ञ-मिदं वचो जुषाण उपागहि ॥ सोम त्वं नो वृधे भव ॥ ८२ ॥ सोमगी-र्भिष्ट्वा वयं वर्धयामो वचोविदः॥ समृडीको न आविश ॥ ८३ ॥ गय-स्फानो अमीवहा वसुवित्पुष्टिवर्धनः ॥ सुमित्रः सोम नो भव ॥ ८४ ॥

सोमरारन्धि नो हृदि गावो न यवसेष्वा ॥ मर्य्य इव स्व ओक्ये ॥ ८५ ॥ यः सोमसख्ये तव रारणद्देवमर्त्यः ॥ तं दक्षः स च ते कविः॥ ८६ ॥ उरुष्याणो अभिशस्तेः सोम निपाह्यंहसः ॥ सखा सुशेव एधि नः ॥ ८७ ॥ आप्याय स्व समेतु ते विश्वतः सोमं वृष्ण्यम् ॥ भवा वाजस्य संगथे ॥ ८८ ॥ आप्यायस्व मदिन्तम सोम विश्वेभिरंशुभिः ॥ भवा नः सुश्रवस्तमः सखावृधे ॥ ॥ ८९ ॥ सन्ते पयांसि समु यन्तु वाजाः संवृष्ण्यान्यभिमातिषाहः ॥ आप्यायमानो अमृताय सोम दिवि श्रवा॑ᳬस्युत्तमानि धिष्व ॥ ९० ॥ या ते धामानि हविषा यजन्ति ता ते विश्वा परिभूरस्तु यज्ञम् ॥ गयस्फानः प्रतरणः सुवीरो वीरहा प्रचरासोम दुर्य्यान् ॥ ९१ ॥ सोमो धेनुं सोमो अर्वन्तमाशुं सोमो वीरं कर्म्मण्यं ददाति ॥ सादन्यं विदथ्यं सभेयम्पितृश्रवणं यो ददाशदस्मै ॥ ९२ ॥ अषाहूळंयुत्सु पृतनासु प्रियं स्वर्षामप्सां वृजिनस्य गोपाम् ॥ भरेषुजां सुक्षितिं सुश्रवः संजयन्तं त्वामनुमदेम सोम ॥ ९३ ॥ त्वमिमा ओषधीः सोम विश्वास्त्वमपो अजनयस्त्वङ्गाः ॥ त्वमाततन्थोर्वन्तरिक्ष त्वज्योतिषा वितमो ववर्थ ॥ ९४ ॥ देवेन नो मनसा देव सोम रायो भागंᳬ हसावन्नभियुध्य ॥ मा त्वा तनदीशिषे वीर्य्यस्य भयेभ्यः प्रचिकित्सागमिष्ठौ ॥ ॥ ९५ ॥ पंचगव्यञ्च रजतम्मौक्तिकं शङ्खशुक्तिके ॥ कुमुदानि जले क्षिप्त्वा स्नानञ्चन्द्रस्य तुष्टये ॥ ९६ ॥ श्वेतं वृषं घृतघटं शङ्खङ्कांस्यस्य भाजनम् ॥ मुक्ताहारं च विभवे तारं वा शक्तितो ददेत् ॥ ९७ ॥ चन्द्रसेवाकरो नित्यम्भक्षयेत्पायसं सितैः ॥ सुगन्धैश्च फलैर्युक्तं सोममूलं च धारयेत ॥ ९८ ॥ एवं चन्द्रस्य सूर्य्यस्य कुरुते य उपासनाम् ॥ महापातकजात्रोगान्स तु नाशयितुं क्षमः ॥ ९९ ॥ शुक्लपुष्पान्वितोदेन सङ्कल्पस्य च योजनम् ॥ आदौरोगं समुच्चार्य्य तन्नाशाय ततो वदेत् ॥ १०० ॥ देशकालादि चोच्चार्य्य गोत्राचारादि पूर्वकम् ॥ साध्यनाम तु षष्ठ्यन्तं ह्युचा कल्पेन चोच्चरेत् ॥ १०१ ॥ अर्घ्यदानं करिष्यामि तर्पयामि च वा वदेत् ॥ शिखाबन्धन्ततः कृत्वा भूतोत्सादनमाचरेत् ॥ ॥ १०२ ॥ प्रार्थयित्वा च पृथिवीं संविशेच्च निजासने ॥ सुदर्शनस्य मन्त्रेण दिशा-

सोमरारन्धि नो हृदि गावो न यवसेष्वा ॥ मर्य्य इव स्व ओक्ये ॥ ८५ ॥
यः सोमसख्ये तव श्चरणद्देवमर्त्यः ॥ तं दक्षः स च ते कविः॥८६॥ उरुष्याणो
दभावे तु व[illegible]स्य परिका[illegible] सखा सुशेव एधि नः ॥ ८७ ॥ आप्याय
॥ ९५ ॥ मेधातिथिर्ऋ[illegible] भवा वाजस्य संगथे ॥८८॥ आप्या-
श्चन्द्रप्रीतये विनियोजनम् ॥ ९[illegible] सखावृधे ॥
भेषजा ॥ अ[illegible] उद्यन्नद्य मित्र महो दक्षिणे तु करे
मया यच्च मित्रो रक्षतु मान्ततः ॥ १०७ ॥ वामहस्ते न्यसेच्चैव आरोहन्नु-
त्तरां दिवम् ॥ विहिताकरणात्पापाद्रवी रक्षतु मां सदा ॥ १०८ ॥ हृद्रोग-
म्मम सूर्येति हृदये तु प्रविन्यसेत् ॥ अज्ञानकृतपापात्तु सूर्यो रक्षतु मां
सदा ॥ १०९ ॥ हरिमाणंच नासायां विन्यसेन्मस्तकोपरि ॥ भानुस्तु
सर्वभूतेभ्यः सर्वदा मां च रक्षतु ॥ ११० ॥ शुकेषु मे हरिमाणं दक्षिणे
चरणे न्यसेत् ॥ निषिद्धगमनात्पापाद्भानू रक्षतु मां सदा ॥१११॥ रोपणा
कासु दध्मसि वामपादे तु विन्यसेत् ॥ ऋतुस्त्रीसङ्गसम्भूतात्पापात्पूषाभि
रक्षतु ॥ ११२ ॥ अथो हारिद्रवेषु मे नाभिदेशे तु विन्यसेत् ॥ हिरण्य-
गर्भोवतु मां तमोजात्पापतः सदा ॥ ११३ ॥ हरिमाणन्निदध्मसि जिह्वायां
च मुखे न्यसेत् ॥ मुखजिह्वोद्भवात्पापान्मरीचिर्मां सदावतु ॥ ११४ ॥
उदगादयमादित्यो न्यसेद्दक्षिणचक्षुषि ॥ मामादित्योवतु सदा दृक्समुद्भवपात-
कात् ॥ ११५ ॥ विश्वेन सहसा सह विन्यसेद्वामचक्षुषि ॥ यद्दृष्टव्यन्न
तद्दृष्टन्तत्पापात्सवितावतु ॥ ११६ ॥ द्विषन्तं मह्यं रन्धयन् विन्यसेत्कव-
चोपरि ॥ त्वग्लोमसम्भवात्पापाद्भानुर्मां परिरक्षतु॥११७॥ मो अहं द्विषतेरघं
विन्यसेच्च तथास्त्रके ॥ विद्वेषणकृतात्पापाद्भास्करो मां सदावतु ॥११८॥न्यासं
पुरुषसूक्तस्य देवमूर्तौ समाचरेत् ॥ ततः स्वदेहे विन्यस्य प्राग्वद्ध्यायेद्दिवा-
करम् ॥ ११९ ॥ ततः पुरुषसूक्तेन षोडशर्चेन पूजयेत् ॥ गन्धाक्षतादिपु-
ष्पाणि रक्तान्येव प्रयोजयेत् ॥ १२० ॥ नैवेद्यं पायसं प्रोक्तं ऋक्त्र-
यस्य मुनिर्मतः ॥ कण्वः प्रस्कण्वनामा तु च्छन्दोनुष्टुप्च देवता ॥ १२१॥
श्रीसूर्यस्त्वथ मित्राय इदमर्घ्यं वदेत्सिते ॥ मित्रं सन्तर्पयामीति चैवं

१ सर्वरोगनिवारणाय शार्ङ्गायसशरायास्त्रराजाय सुदर्शनाय नमः इति सुदर्शनमन्त्रः ।

प्रोक्तं सितेतरे॥ १२२॥ एवं रवौ च सूर्य्ये च कल्पनीयं ततः परम्॥ वदेदर्घचर्के मित्ररविभ्यामर्घ्यमित्यपि ॥ १२३॥ त्रयः सर्वर्चके चैवमुन्नेयाः स्वधिया बुधैः॥ कृष्णं सर्वत्र सूर्य्यन्तु तर्पयामीति संवदेत् ॥ १२४ ॥ सर्वर्चेनापि सन्तर्प्यो विशेषोयमुदाहृतः ॥ शनिभौमोश्च वारे तु कार्य्यं नान्यत्र वासरे ॥ ॥ १२५ ॥ क्षुद्ररोगा नश्यन्ति विप्रान्द्वादश भोजयेत् ॥ माहारोगे सहस्रं तु शीतत्वादिमहागदे ॥ १२६ ॥ देशस्योपद्रवे जाते पुनरर्घ्याणि-भास्करे॥ सहस्रमपि तानीह सर्वनीरुक्प्रजायते ॥ १२७ ॥ पुत्रो भार्या च मित्रं च तस्य नीरुक्प्रजायते॥ प्राप्नोति विपुलां लक्ष्मीं ब्रह्म प्राप्नोत्यनामयम् ॥ ॥ १२८ ॥ श्रावणे शुक्लसप्तम्यां विशाखायां भृगोर्दिने ॥ श्रीसूर्य्यः क्रियया जातः पूजा तत्र विशिष्यते ॥ १२९ ॥ माघशुक्लस्य चाष्टम्यां कृत्तिकायां गुरोर्दिने ॥ क्षेत्रे समभवच्चन्द्रः पूजा तत्र विशिष्यते ॥ १३० ॥ भौममन्त्रं प्रवक्ष्यामि विरूपास्य मुनिर्मतः ॥ अङ्गारको देवता च गायत्री छन्द ईरि-तम् ॥ १३१ ॥ अग्निर्मूर्द्धा दिवः ककुत्पतिः पृथिव्या अयम् ॥ आपाꣳरे-ताꣳसि जिन्वति ॥१३२॥ अम्बीजेन षडङ्गानि चांगुलिन्यास एव च ॥ रुद्रस्थानेषु कर्त्तव्यः पदन्यासो द्वितीयकः ॥ १३३ ॥ रक्ताम्बरं रक्तवर्णं रक्तगन्धानुलेपनम् ॥ रक्तपुष्पैः पूज्यमानं चतुर्बाहुं किरीटिनम् ॥ १३४ ॥ वराभयगदाशूलहस्तं मेषोपरि स्थितम्॥ वशिष्ठगोत्रसम्भूतं जमदग्न्यार्षिकं कुजम्॥ ॥१३५॥ जगतीछन्दसं वक्रं रक्तध्वजपताकिनम् ॥ अवन्तीदेशसम्भूतं ध्यात्वा देवम्प्रपूजयेत् ॥ १३६ ॥ रक्तचन्दनसम्मिश्रतण्डुलैस्त्र्यस्रके कृते ॥ अधिदेवतया भूम्या युक्तं षाण्मातुरेण च ॥ तथा प्रत्यधिदेवेन तत्रावाह्य प्र-पूजयेत् ॥ १३७ ॥ वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं मधुरत्रयसंयुताः ॥ खादिर्य्यः समिधो होमे तर्प्पणाद्यं च पूर्ववत् ॥ मेधातिथिर्मुनिश्छन्दो गायत्री भूश्च देवता ॥ १३८ ॥ स्योना पृथिवी भवानृक्षरा निवेशनी यच्छा नः शर्म्म सप्रथाः॥ अपनः शोशुचदघम् ॥ १३९ ॥ मुनिर्दीर्घतमाः प्रोक्तस्त्रिष्टुप्छन्द उदा-हृतम् ॥ देवः स्कन्दः कुजप्रीत्यै जपार्थं विनियोजनम् ॥ १४० ॥ यदक्रन्द-प्रथमं जायमान उद्यन्समुद्रादुत वा पुरीषात् ॥ श्येनस्य पक्षा हरिणस्य

बाहू उपस्तुत्यं महि जातन्ते अर्वन्॥ १४१ ॥ भौमस्य प्रीतिमन्विच्छन्हव्यान्नाशी भवेन्नरः ॥ गोजिह्वान्धारयेन्नित्यं भौमवारे तु रोगिकः ॥ १४२ ॥ कुजमन्त्र तु संसिद्धे संग्रामे विजयी भवेत् ॥ स्वयं नश्यन्ति रिपवो नेत्रच्छायाग्निसन्निभाः ॥ १४३॥ त्रिंशर्चकस्य सूक्तस्य विरूपाङ्गिरसावृषी ॥ गायत्री छन्द उद्दिष्टं देवोग्निः कुजतुष्टये ॥ १४४ ॥ समिधाग्निं दुवस्यत घृतैर्बोधयतातिथिम् ॥ अस्मिन्हव्या होतता ॥ १४५ ॥ अग्नेस्तोमं जुषस्व मे वर्धस्वानेन जन्मना प्रतिसूक्तानि हर्य्यनः॥ १४६ ॥अग्निन्दूतम्पुरोदधे हव्यवाहमुपब्रुवे॥ देवाँ आसादयादिह ॥ १४७॥ उत्ते बृहन्तो अर्चयः समिधानस्य दिवः॥अग्ने शुक्रास ईरते॥ ॥ १४८ ॥ उप त्वा जुष्टे मम घृताचीर्यन्तु हर्य्यतः ॥ अग्ने हव्या जुषस्व नः ॥ १४९ ॥ मन्द्रं होमारेमृत्विजं चित्रभानुं विभावसुम् ॥ अग्निमीळे स उस्रवत् ॥ १५० ॥ प्रत्नं होतारमीड्यं जुष्टमग्निकविं क्रतुम् ॥ अध्वराणामभिश्रियम् ॥ १५१ ॥ जुषाणो अङ्गिरस्तमे मा हव्यान्यानुषक् ॥ अग्ने यज्ञं नय क्रतुपः ॥ १५२ ॥ समिधा न उशन्त्यशुक्रशोचे इहावह ॥ चिकित्वान्दैव्यञ्जनम् ॥ १५३ ॥ विप्रं होतारमद्रुहं धूमकेतुं विभावसुम् ॥ यज्ञानां केतुमीमहे ॥ १५४ ॥ अग्ने निपाहि नस्त्वं प्रतिष्य देवरीषतः ॥ सधिद्वेषः सहस्कृतः ॥ १५५ ॥ अग्निः पत्नेन मन्मनाशुम्भा नस्तन्न्वां स्वाम् ॥ कविर्विप्रेण वां वृधे ॥ १५६ ॥ ऊर्जो निपातमाहुवेग्निम्पावक शोचिषम् ॥ अस्मिन्यज्ञे स्वध्वरे ॥ १५७॥ स नो मित्रमहस्त्वमग्ने शुक्रेण शोचिषा ॥ देवैरासत्सि बर्हिषी ॥ १५८ ॥ यो अग्निन्तन्वो दद्मे देवम्मर्त्तः समर्पयति ॥ तस्मा इद्दीदयद्वसू ॥१५९॥ अग्निर्मूर्धा दिवः ककुत्पतिः पृथिव्या अयम् ॥ अपाꣳरेताꣳसि जिन्वति ॥ १६० ॥ उदग्ने शुचयस्तव शुक्रा भ्राजन्त ईरते ॥ तव ज्योतीꣳष्यर्चयः ॥ १६१ ॥ ईषे वार्य्यस्य हि दात्रस्याग्ने स्वर्पतिः ॥ स्तोतास्यां तव शर्म्मणि ॥ १६२ ॥ त्वामग्ने मनीषिणस्त्वां हिन्वन्ति चित्तिभिः ॥ त्वां वर्धन्तु नो गिरः ॥ १६३ ॥ अदब्धस्य स्वधावतो दूतस्परेभतः सदा ॥ अग्नेः सख्यं वृणीमहे ॥ १६४ ॥ अग्निः शुचिव्रततमः शुचिः शुचिर्विप्रः ॥ शुचिःशुची रोचत आहुतः ॥ १६५ ॥ उत-

त्वाधीतयो मम गिरो वर्धन्तु विश्वहा ॥ अग्ने सख्यस्य बोधिनः ॥ १६६ ॥ यदग्ने स्यामहावं वा यत्स्या अहम् ॥ स्पष्टे सत्याशिषा इहाशिषः ॥१६७॥ वसुर्वसुपतिर्हि त्वमस्यग्ने विभावसुः ॥ स्याम ते सुमतावपि ॥ १६८ ॥ अग्ने धृतव्रताय ते समुद्रायेवसिन्धवः ॥ गिरो वास्रास ईरते ॥ १६९ ॥ युवानं विस्पतिं कविं श्वादम्पुरुवेपुसम् ॥ अग्निं शुम्भामि मन्मभिः॥१७०॥ यज्ञानां रथ्ये वयन्तिग्मजम्भाय वीलवे ॥ स्तोमैरिषे माग्नये ॥ १७१ ॥ अयमग्ने त्वे च अपि जरिताभूतु सन्त्या ॥ तस्मै पावकमृडय ॥ १७२ ॥ धीरो ह्यस्य प्रसिद्धिप्रो न जागृभिः सदा ॥ अग्नेदीदयसिविधवि ॥ १७३ ॥ पुराग्ने दुरितेभ्यः पुरो मृध्रेभ्यः कवे ॥ प्रण आयुर्वसोत्तिरा ॥ १७४ ॥ [1]विश्वम्वला चन्दनञ्च रामठा[2]सनपुष्पकम् ॥ फलिनीबकुलैर्युक्तं स्नानम्भौमस्य तुष्टये ॥ १७५ ॥ आरक्ताम्बुभवं ताम्रं प्रवालञ्च मसूरिका ॥ सुरक्तव[3]स्त्रम-स्रजस्तुष्टचै चाश्वारिपुष्पकम् ॥ १७६ ॥ पूर्वाषाढाख्यनक्षत्रे मासे भाद्रपदे सिते ॥ दशम्यां बुधवारे तु जातस्तत्र महोत्सवः ॥ १७७ ॥ बुधमन्त्रम्प्रव-क्ष्यामि बौद्धस्तस्य मुनिर्मतः ॥ त्रिष्टुप्छन्दो देवतास्य बुद्धो बुद्धिप्रदो मतः ॥ १७८ ॥ उद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृहि त्वमिष्टापूर्त्ते सꣳसृजेथामयञ्च ॥ अस्मिन्सधस्थेऽध्युत्तरस्मिन्विश्वेदेवा यजमानश्च सीदत ॥ १७९ ॥ बुम्बी-जेन षडङ्गेन ध्यानमस्य निरूप्यते ॥ पीताम्बरं पीतवर्णम्पीतगन्धानुलेपनम् ॥ १८० ॥ पीतपुष्पैः पूज्यमानं खड्गचर्म्मगदावरान् ॥ सिन्धूत्थं दधतं हस्तैरत्रिगोत्रसमुद्भवम् ॥ १८१ ॥ भारद्वाजार्षकं जातं मगधे च किरीटिनम् ॥ बृहतीछन्दसम्पीतच्छत्रध्वजपताकिनम् ॥ १८२ ॥ केयू-रमणिशोभाढ्यमधिदैवेन विष्णुना ॥ तेन प्रत्यधिदेवेन युक्तं [4]ज्ञं चिन्तयाम्य-हम् ॥ १८३ ॥ एवं ध्यात्वा शराकारे हरिद्राक्षतनिर्मिते ॥ मण्डले चतुरस्रे ज्ञं सम्यगावाह्य पूजयेत् ॥ १८४ ॥ वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं हुनेत्तस्य दशांशतः ॥ अपामार्गसमिद्भिश्च तर्प्पणानि ततश्चरेत् ॥ १८५ ॥ त्रिवि-क्रमाख्यो यो विष्णुस्स बुधस्याधिदैवतम् ॥ मेधातिथिर्मुनिस्तस्य गायत्री

१ शुण्ठी ॥ २ हिङ्गु ॥ ३ भौमस्य ॥ ४ बुधम् ॥

छन्द ईरितम् ॥ १८६ ॥ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम् ॥ समूढमस्य पांसुरे स्वाहा॥ १८७ ॥अथ प्रत्याधिदैवन्तु विष्णुर्नारायणाभिधः॥ मुनिर्दीर्घतमाः प्रोक्तश्छन्दस्त्रिष्टुबुदाहृतम् ॥ १८८॥ विष्णोर्नु कं वीर्य्याणि प्रवोचं यः पार्थिवानि विममे रजाꣳसि ॥यो अस्कभा यदुत्तरꣳसधस्थं विचक्रमाणस्त्रेधोरुगायः ॥ १८९ दुग्धौदनं समश्नीयान्नैव तुम्बीं कदाचन॥नाम्बरं मलिनं दध्याद्वृद्धदारुजटान्तथा ॥१९०॥ बुधस्य मन्त्रे संसिद्धे वाग्मी भवति पण्डितः ॥ अजेयः प्रतिपक्षाणां स्वयं जेतात्र जायते ॥ १९१ ॥ द्वादशर्चस्य सूक्तस्य विश्वेदेवास्तथर्षयः ॥ देवो ज्ञो बृहतीत्रिष्टुब्जगद्गायत्रगानि च॥ १९२॥ उद्बुध्यध्वं समनसः सखायः समग्निमिन्ध्वं बहवः सनीलाः ॥ दधिक्रामग्निमुषसं च देवीमिन्द्रावतो वसे निह्वये वः ॥ १९३ ॥ मन्द्रा कृणुध्वन्धियः प्रातनुध्वं नावमरित्रपरणीं कृणुध्वम् ॥ इष्कृणुध्वमायुं धारं कृणुध्वम्प्राञ्चं यज्ञं प्रणयता सखायः ॥१९४॥ युनक्त सीरा वियुगा तनुध्वं कृते योनौ वपतेह बीजम् ॥ गिरा च श्रुष्टिः सभरा असन्नो नेदीय इत्सृण्यः पक्वमेयात्॥ १९५॥ सीरा युञ्जन्ति कवयो युगा वितन्वते पृथक् ॥ धीरा देवेषु सुम्नया ॥१९६॥ निराहावान्कृणोत न संवरत्रा दधातन ॥ सिञ्चामहा अवत मुद्रिणं वयं सुषेकमनु पक्षितम् ॥ १९७ ॥ इष्कृता हावमवतं सुवरत्रं सुषेचनम् ॥ उद्रिणं सिञ्चे अक्षितम् ॥ १९८ ॥ प्रीणिताश्वान्हि तञ्जयाथ स्वस्तिवाहं रथमित्कृणुध्वम् ॥ द्रोणा हावमवतमश्म चक्रम सत्रकोशं सिञ्चता नृपाणम् ॥ १९९ ॥ व्रजं कृणुध्वं स हि वो नृपाणो वर्म सीव्यध्वम्बहुला पृथूनि॥ पुरः कृणुध्वमायसीरधृष्टा मा वः सुस्रोच्चमसो दृंहतातम् ॥२००॥ आवो धियं यज्ञियां वर्त्त ऊतये देवा देवीं यजतां यज्ञियामिह ॥ सा नो दुहीयद्यवसेव गत्वी सहस्रधारापयसा मही गौः ॥ २०१ ॥ आतू षिञ्च हरिमीन्द्रोरुपस्थे वाशीभिस्तक्षताश्मन्मयीभिः ॥ परिष्वजध्वं दशकक्ष्याभिरुभे धुरौ प्रतिवह्निं युनक्त ॥२०२॥उभौ धुरौ वह्निरापिब्दमानोन्तर्योनेव चरति द्विजानिः ॥ वनस्पतिं वन आस्थापयध्वं निषोदधिध्वमखनन्त उत्सम् ॥ २०३ ॥ कपृन्नरः कपृथमद्दधातन चोदयत खुदतवाजसातये ॥ निष्टिग्र्यः पुत्रमाच्यवयोतय-

इन्द्रं स बाध इह सोमपीतये ॥ २०४ ॥ हरीतकी कलिफलैर्गोमयाक्षतरोचनैः ॥ स्वर्णामलकमुक्ताभिर्युक्तैः सक्षौद्रैकैः स्नपेत् ॥ २०५ ॥ नीलवस्त्रं च मुद्रान्नं कनकं चोर्णवस्त्रकम् ॥ बुधस्य प्रीतये दद्यान्मालत्याः कुसुमानि वा ॥ ॥२०६॥ नभस्यशुक्लद्वादश्यां सोमवारे द्विजन्मने॥ताराया हिमगोर्जातो बुधस्तस्योत्सवोत्र तु॥२०७॥ मन्त्रं बृहस्पतेर्वक्ष्ये मुनिर्गृत्समदोस्य तु॥त्रिष्टुप्छन्दो देवपतिवन्दितोस्ति हि देवता ॥ २०८ ॥ बृहस्पते अतियदर्य्योअर्हाद्युमद्विभाति क्रतुमज्जनेषु ॥ यद्दीदयच्छवस ऋतं प्रजाततदस्मासु द्रविणं धेहि चित्रम् ॥ २०९ ॥ बृम्बीजेन षडङ्गादिन्यासमत्र समाचरेत् ॥ शृणु ध्यानं प्रवक्ष्यामि यत्तदस्य बृहस्पतेः ॥२१०॥ कमण्डलुधरं देवं वरदण्डाक्षसूत्रकम्॥ पीतवर्णं च सौवर्णकिरीटेन विराजितम् ॥ २११ ॥ वाशिष्ठार्घ्यं सिन्धुदेशभवं पीताम्बरावृतम् ॥ अनुष्टुप्छन्दसं चाङ्गिरसगोत्रं सुरेडितम्॥२१२॥ पीतध्वजपताकाढ्यं पीतच्छत्रानुलेपनम् ॥ केयूराङ्गदशोभाढ्यमधिदेवेन्द्रसंयुतम् ॥ ब्रह्मप्रत्यधिदेवेन युतं सञ्चिन्त्य चाह्वयेत् ॥ २१३ ॥ मन्त्रैर्विरचिते दीर्घचतुरस्रषडंगुले ॥ हरिद्राक्षतसंसिद्धे मण्डले तं प्रपूजयेत् ॥ २१४ ॥ वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं होमस्त्रिमधुरान्वितैः ॥ पिप्पलस्य तु काष्ठैः स्यात्तर्पणं पीतपद्माभिः ॥ २१५ ॥ मुनिर्गृत्समदस्त्रिष्टुप्छन्द इन्द्रश्च देवता ॥२१६ ॥ अधिसञ्ज्ञा गुरोस्तस्य तुष्टये विनियोजनम् ॥ २१७ ॥ इन्द्र श्रेष्ठानि द्रविणानि धेहि चित्तिंदक्षस्य सुभगत्वमस्मे॥ पोषं रयीणामरिष्टिं तनूनां स्वाद्मानं वाचः सुदिनत्वमह्नाम् ॥ २१८ ॥ मुनिर्गृत्समदः प्रोक्तो देवताब्रह्मणस्पतिः ॥ त्रिष्टुप्छन्दो गुरोश्चेयं प्रोक्ता प्रत्यधिदेवता ॥ २१९ ॥ ब्रह्मणस्पते त्वमस्य यन्ता सूक्तस्य बोधितनयं च जिन्व ॥ विश्वं तद्भद्रं यदवन्ति देवा बृहद्वदे मा-वेदथे सुवाराः ॥ २२० ॥ दद्यात्स दधिभक्तं च स्वर्णपीताम्बरादिकम् ॥ नित्यं सन्धारयेद्बाहौ ब्रह्ममूलं तु धारयेत् ॥ २२१ ॥ एवंसिद्धे गुरोर्मन्त्रे वाक्सिद्धिरुपजायते ॥ देहे शक्ती राजमानं स्वशक्त्या वार्थबोधनम् ॥ २२२ ॥

---

१ विभीतकैः॥ २ 'कं' नाम जलम् तथा चोक्तम्—मूर्ध्नि चित्ते जले काये सुखे ब्रह्मणि मारुते । कामे काले सुवर्णे च कशब्दो द्रविणे ध्वनी ॥ इत्यनेकार्थध्वनिमञ्जरीकोशे ॥ ३ स्नपयेत् ॥

एकादशर्चसूक्तस्य वामदेवो मुनिर्मतः ॥ जगती छन्द इत्युक्तं देवतात्र बृहस्पतिः ॥२२३॥ यस्तस्तम्भ सहसाविज्मो अन्तान्बृहस्पतिस्त्रिषधस्थो रवेण॥ तं प्रत्नास ऋषयो दीध्याना पुरोमंविप्रा दधिरमन्द्रजिह्वम् ॥ २२४ ॥ धुनेतयः सुप्रकेतं मदन्तो बृहस्पते अभि येनस्ततस्रे ॥ पृषन्तंसृप्रमदब्धमूर्वं बृहस्पते-रक्षता तस्य योनिम् ॥ २२५ ॥ बृहस्पते यापरमा परावदत आत ऋतस्य स्पृशो निषेदुः ॥ तुभ्यं खाता अवता अद्रिदुग्धामध्वश्चोतंत्यभितो विषम् ॥ ॥ २२६ ॥ बृहस्पतिमधमं जायमानो महोज्योतिषः परमे व्योमन् ॥ सप्ता-स्यास्तु विजातो रवेण विसप्तरश्मिरमत्तमांसि ॥ ससुष्टुभा ऋक्कता गणेन वनं रुरोज फलितं रवेण ॥ २२७ ॥ बृहस्पतिरुश्रिया हव्यसूदः कनिक्रदद्वा वशा-तीरुदाजत् ॥ एवापित्रे विश्वदेवाय वृष्णे यज्ञैर्विधेम मनसा हविर्भिः ॥ बृहस्पते सुमः प्रजा वीरवन्तो वयं स्याम पतयो रयीणाम् ॥ २२८ ॥ स इन्द्राजा प्रतिजन्यानि विश्वा शुष्मेण तस्थावभिवीर्य्येण ॥ बहस्पतिं यः सुकृतं बिभर्ति वल्गूयति वन्दते पूर्वभाजम् ॥ २२९ ॥ स इत्क्षेति सुधित ओकांसि श्वेतस्मा इलायिल्वतेविश्वदानीम् ॥तस्मै विशः स्वयमेवानमन्ते यस्मि-न्ब्रह्मराजं निपूर्वं एति ॥ २३० ॥ अप्रतीतो जयति सन्धनानि प्रतिजन्या-न्युत या सजन्या ॥ अवस्यवे यो वीरवः क्वणोति ब्रह्मणे राजा तमवन्ति देवाः ॥ २३१ ॥ इन्द्रश्च सोमं पवते बृहस्पतेस्मिन्यज्ञेमन्दसाना वृषण्वसूः॥ आवां विशन्त्विदवः स्वाभुगोस्मे रयिं सर्ववीरं नियच्छतम् ॥ २३२ ॥ बृह-स्पत इन्द्रा वर्धतं नः सं चासावां सुमतिर्भूत्वस्मे ॥ अविष्टं धियो जिवृतं पुरं धीर्जजस्तमर्योवनुषामरातिः ॥ २३३ ॥ मदयन्तीपल्लवानि मधूकं श्वेतसर्षपाः ॥ मालतीपुष्पयुक्ताश्च स्नानेन गुरुतोषणम् ॥ २३४ ॥ हरिद्रा शर्करा पीतवस्त्रं स्वर्णं च पित्तलम् ॥ गुरुतुष्टयै प्रदेयं स्यादभावे चण-कास्तथा ॥ २३५ ॥ फाल्गुनस्य सिते पक्षे चैकादश्यां च पुष्यभे ॥ शुक्र-वारे गुरुर्जातस्तत्र कार्य्यस्तदुत्सवः ॥ २३६ ॥ शुक्रमन्त्रं प्रवक्ष्यामि भर-द्वाजो मुनिर्मतः ॥ त्रिष्टुप्छन्दो निगदितं दैत्याचार्य्यस्तु दैवतम् ॥२३७ ॥ शुक्रं ते अन्यद्यजतन्ते अन्यद्विषुरूपे अहनि द्यौरिवासि ॥ विश्वा हि माया-

अवसि स्वधा वो भद्रा ते पूषन्निह राति रस्ति ॥ २३८ ॥ शुम्बीजेन षड-
ङ्गानि कृत्वा ध्यानं समाचरेत् ॥ शुक्लाम्बरं शुक्लवर्णं शुक्लगन्धानुलेपनम् ॥
॥ २३९ ॥ शुक्लपुष्पैः पूज्यमानं शौनकार्य्यं किरीटिनम् ॥ चतुर्भुजं द-
ण्डिनं च साक्षसूत्रकमण्डलुम् ॥ २४० ॥ पङ्क्तिच्छन्दं च वरदं तथा कीक-
टदेशजम् ॥ श्वेतच्छत्रध्वजपताकिनं भार्गवगोत्रजम् ॥ २४१ ॥ सकेयूरं
रथारूढं श्वेताभरणभूषितम् ॥ एवं ध्यात्वा श्वेतवर्णे पञ्चकोणे नवांगुले ॥
॥ २४२ ॥ अधिदैवतमिन्द्राणी शक्रः प्रत्यधिदैवतम् ॥ ताभ्यां युतं दैत्य-
गुरुं मण्डले पूजयेत्ततः ॥ २४३॥ अर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं हुनेत्त्रिमधुरान्वितैः ॥
उदुम्बरस्य काष्ठैश्च तर्पणादि तु चन्द्रवत् ॥ २४४ ॥ वृषाकपिर्मुनिः प्रोक्तः
पङ्क्तिश्छन्द उदाहृतम् ॥ इन्द्राणी देवता प्रोक्ता नियोगः शुक्रतुष्टये ॥२४५॥
इन्द्राणीमासु नारिषु सुभगामहमश्रवम् ॥ नह्यस्या अपरं च न जरसा
मरते पतिर्विश्वस्मादिन्द्र उत्तरः ॥ २४६ ॥ मधुच्छन्द्रा ऋषिः प्रोक्तो गा-
यत्रं छन्द ईरितम् ॥ शुक्रो देवो नियोगोस्य विश्वतः शुक्रतुष्टये ॥ २४७ ॥
इन्द्रं वो विश्वतस्परिहवामहे जनेभ्यः ॥ अस्माकमस्तु केवलः ॥ २४८ ॥
शुक्रसन्तुष्टये नित्यं भक्षणीयः कृतौदनः ॥ अश्वेतं नाम्बरन्दध्यान्मुनिमूलं च
धारयेत् ॥ २४९ ॥ शुक्रमन्त्रस्य सिद्धस्य चिह्नानि स्युः स्त्रियो वशाः ॥
यात्रासिद्धिः प्रकाशश्च चान्तर्भूपतयो वशाः ॥ २५० ॥ निगमर्चस्य सू-
क्तस्य भरद्वाजो मुनिर्मतः ॥ त्रिष्टुब्जगत्यश्छन्दांसि पूषा दैवतमुच्यते ॥
॥ २५१ ॥ शुक्रन्ते अन्ययजतन्ते अन्यद्विरूपे अहनि द्यौरिवासि ॥ विश्वा
हि माया अवसि स्वधा वो भद्रा ते पूषन्निह रातिरस्ति ॥ अजास्यः पशुपा-
वाजपस्त्योधियं जिन्वो विश्वभुवने विश्वे अर्पितः ॥ २५२ ॥ अष्ट्रां पूषासि
पिरामुद्वरीवृजत्सञ्चक्षाणो भुवना देव ईयते ॥ २५३ ॥ यास्ते पूषन्नावो
अन्तःसमुद्रे हिरण्यैमनुलिक्षचरन्ति ॥ ताभिर्यापि इत्या सूर्य्यास्य कामेन कृत-
श्रव इच्छयामः ॥ २५४ ॥ पूषा सुबन्धुर्दिव आपृथिव्या इलस्पतिर्मघवः
दस्यवर्चाः ॥ यो देवासो अददुः सूर्य्यायै कामनकृतन्तवसस्य चम् ॥२५५॥

---

१ अयं सान्तोपि पचाद्याचिच्छन्दोवाच्यदन्तम् आर्षत्वात् ॥ २ अगस्त्यमूलम् ॥

समूलत्रिफला चैला केशरं च मनःशिला ॥ एभिर्युक्तैर्जलैः स्नायाद्भार्गवस्य तु तुष्टये ॥ २५६ ॥ श्वेतो वाजी तथा रौप्यं चन्दनं च सिताम्बरम् ॥ घृतन्दद्याच्छुक्रतुष्ट्यै तदभावे तु तण्डुलान् ॥ २५७ ॥ मधौ सितनवम्यां च रामो जातश्च भार्गवः ॥ रामः पुनर्वसौ शुक्रे मघायामेतदन्तरम् ॥ २५८ ॥ शनिमन्त्रं प्रवक्ष्यामि सिन्धुद्वीपो मुनिर्मतः ॥ गायत्री छन्द इत्युक्तं देवता तु शनैश्चरः ॥ २५९ ॥ शन्नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये ॥ शंये रभिस्रवन्तु नः ॥ २६० ॥ शंबीजेन षडङ्गानि कुर्य्याद्ध्यानं ततश्चरेत् ॥ शशासनं शूलधरमिन्द्रनीलसमद्युतिम् ॥ सौराष्ट्रदेशजं प्रोक्तं वरदं गृध्रवाहनम् ॥ २६१ ॥ भृग्वार्घ्यैं मुकुटेनालंकृतं काश्यपगोत्रकम् ॥ कृष्णाम्बरं कृष्णवर्णं कृष्णगन्धानुलेपनम् ॥ गायत्रीछन्दसं देवं कृष्णाभरणभूषितम् ॥ २६२ ॥ केयूरिणं मुकुटिनं कृष्णवस्त्रावृतं तथा ॥ प्रजापत्याधिदेवेन सहितम्पद्ममास्थितम् ॥ पद्म प्रत्यधिदेवेन युक्तं ध्यात्वा समर्चयेत् ॥ २६३ ॥ कस्तूरीमिलितैः कृष्णचूर्णैं रचितमण्डले ॥ होमश्शमीसमिद्भिः स्यादायसार्घेण तर्प्पणम् ॥ कृष्णपुष्पैश्चन्दनन्तु कालीयैरगुरुं हुनेत्॥ २६४॥ मुनिर्हिरण्यगर्भोऽस्य त्रिष्टुप्छन्द उदाहृतम् ॥ नियोगः शनिप्रीत्यर्थे नानापीडाविनाशने ॥ ब्रह्म जज्ञानमिति च मन्त्रमत्र तु कीर्त्तयेत् ॥ २६५ ॥ यमाय सोमं सुनुत यमाय जुहुता हविः ॥ यमं ह यज्ञो गच्छत्यग्निदूतो अरं कृतः ॥ २६६ ॥ शनेरुपासको नित्यं कृशरं भक्षयेन्नरः ॥ [1]व्याघ्रीजटे गले धार्य्येऽभ्यङ्गः कार्यश्च नित्यशः ॥ २६७ ॥ शनिमन्त्रे तु संसिद्धे सं सिद्धा मनवोखिलाः ॥ तस्य फूत्कारमात्रेण विनश्यन्त्यखिला गदाः ॥ २६८ ॥ नवर्चस्य तु सूक्तस्य सिन्धुद्वीपो मुनिर्मतः ॥ बद्धमाना प्रतिष्ठा वानुष्टुप चैव समीरिताः॥ २६९॥ छन्दांसि देवता आपो नियोगः शनितुष्टये ॥ [2]एतासां जपतः पापं कामजातं विनश्यति ॥ २७० ॥ आपोहिष्ठामयोभुवस्ता न उर्ज्जे दधातन ॥ महेरणाय चक्षसे ॥ २७१ ॥ योवः शिवतमो रसस्तस्य भाजयतेह नः ॥ उशतीरिव मातरः ॥ २७२ ॥ तस्मा अरङ्गमामवो यस्य क्षयाय जिन्वथ ॥

१ श्रीबृहती ॥ २ नवानामृचाम् ॥

आपो जनयथा च नः ॥ २७३ ॥ शन्नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये शंयोरभिस्रवन्तु नः ॥ २७४ ॥ ईशाना वार्य्याणां क्षयन्तीश्चर्षणीनाम् ॥ अपो याचामि भेषजम् ॥ २७५ ॥ अप्सु मे सोमे अब्रवीदन्तर्विश्वानि भेषजा ॥ अग्निश्च विश्वशम्भुवम् ॥ २७६ ॥ आपः पृणीत भेषजं वरूथन्तन्वे मम ॥ ज्योक्चसूर्य्यं दृशे ॥ २७७ ॥ इदमापः प्रवहत यत्किञ्चिद्दुरितं मयि ॥ यद्वाहमभिदुद्रोह यद्वाशेष उतानृतम् ॥ २७८ ॥ आपो अद्यान्वचारिषं रसेन समगस्महि ॥ पयस्वानग्न आगहि तं मासं सृज वर्चसा ॥ ॥ २७९ ॥ रसाञ्जनं कृष्णतिलाः शतपुष्पा घनो[1] बला ॥ लज्जालुलोध्रयुक्ताभिरद्भिः स्नाने शनेर्मुदः ॥ २८० ॥ कृष्णा गौर्महिषी लोहन्तैलं सीसन्तु तुष्टये ॥ शनेर्दद्यादशक्तस्तु लोहं वा मरटानपि ॥ २८१ ॥ ज्येष्ठमासे कृष्णपक्षे चतुर्दश्यामसृग्दिने॥रोहिण्यां सूर्य्यतो जातः शनिस्त[3]त्रार्चनं मुदे ॥२८२॥ राहोर्मन्त्रं प्रवक्ष्यामि वामदेवो मुनिर्मतः ॥ गायत्री छन्द इत्युक्तं सैंहिकेयस्तुदेवता ॥ २८३ ॥ कया नश्चित्र आभुवदूतीसदावृधः सखा ॥ कया शचिष्ठया वृता ॥ २८४ ॥ रांबीजेन षडङ्गानि ध्यानमस्य निरूप्यते ॥ करालवदनं खड्गचर्म्मशूलवृहद्धरम् ॥ २८५ ॥ कृष्णाम्बरं कृष्णवर्णं कृष्णगन्धानुलेपनम् ॥ कृष्णपुष्पैः पूज्यमानङ्केयूरमुकुटान्वितम् ॥ २८६ ॥ पूर्वदेशे समुत्पन्नं क्रूरमान्तीरसार्षकम् ॥ पाटलीगोत्रसंभूतमनुष्टुप्छन्दसंग्रहम् ॥२८७॥ कृष्णच्छत्ररथारूढं कृष्णध्वजपताकिनम् ॥ सर्पाधिदेवतायुक्तं कालप्रत्यधिदैवतम् ॥ २८८ ॥ इत्थं सञ्चिन्त्य नैर्ऋत्ये नक्राकारे तु मण्डले ॥ द्वादशांगुलविस्तीर्णे पूजयेच्छ्यामलाक्षतैः ॥ २८९ ॥ दूर्वाभिर्मधुराक्ताभिरस्य होमो विधीयते ॥ तर्पणादिरिह द्रव्यैः कौलिकांस्तर्प्पयेद्द्विजान् ॥ २९० ॥ सर्पराजो मुनिः प्रोक्तो गायत्रं छन्द ईरितम् ॥ सर्पाश्च देवताः प्रोक्ता नियोगो राहुतुष्टये ॥ २९१ ॥ आयं गौः पृष्णिरक्रमीदसदम्मातरम्पुरः ॥ पितरञ्च प्रयन्त्स्वः ॥ २९२ ॥ कण्वाचार्य्यो मुनिः प्रोक्तो गायत्रं छन्द ईरितम् ॥ देवता तु भवेत्कालो नियोगो राहुतुष्टये ॥ २९३ ॥ माषूणः परापरानिर्ऋति-

१ वारिवाहः । २ लज्जावती । ३ तस्येति शेषः ॥

ढुहेणावधीत् ॥ यदीष्टतृष्णया सह ॥ २९४ ॥ भक्षयेत्तु सदा माषान्दूर्वा-मूलं च धारयेत् ॥ न निन्देन्निन्द्यकर्मस्थान्वंदीमोक्षणमाचरेत् ॥ २९५ ॥ राहोर्मन्त्रस्य सिद्धौ तु दैत्यराक्षसगुह्यकाः ॥ कुर्वते साधकाज्ञां तु सदैव समरे जयः ॥ २९६ ॥ पंचदशर्चसूक्तस्य वामदेवो मुनिर्मतः ॥ छन्दो निवृच्च गायत्री देवता देवनायकः ॥ २९७ ॥ कयानश्चित्र आभुव दूतीसदा-वृधः सखा ॥ कया सचिष्ठया वृता ॥ २९८ ॥ कस्त्वा सत्यो मदानामं-हिष्ठो मत्सदन्धसः ॥ दृढाचिदारुजे वसु ॥ २९९ ॥ अभीषुणः सखीनाम-विता जरितॄणाम् ॥ शतं भवास्यूतिभिः ॥ ३०० ॥ अभी न आव वृत्स्व चक्रं न वृतमहतः ॥ नयुद्भिश्चर्षणीनाम् ॥ ३०१ ॥ प्रवता हि क्रतुना माहा-पदेव गच्छसि ॥ अभक्षि सूर्य्ये स च ॥ ३०२ ॥ संयत्त इन्द्र मन्यवः सं-चक्राणि दधन्विरे ॥ अधन्वे अधसूर्य्ये ॥ ३०३ ॥ उ तस्मा हि त्वामाहु-रिन्मघवानं शचीपते ॥ दातारमविदीदयुम् ॥ ३०४ ॥ तस्मा सद्य इत्यरिशश-मानाय सुन्वते ॥ पुरोचिन्महसे वसुः ॥ ३०५ ॥ महिष्मते शतं वनराधो वरन्त आसुरः ॥ न व्यौत्मानि करिष्यतः ॥ ३०६ ॥ अस्मां अवन्तु ते शतमस्मात्सहस्रमूतयः ॥ अस्मान्विश्वा अभीष्टयः ॥ ३०७ ॥ अस्मां इहा वृणीष सख्याय स्वस्तये ॥ महोराये दिविन्मते ॥ ३०८ ॥ अस्मांअविदि विश्वहेन्द्रराया परिणश ॥ अस्मान्विश्वाभिरूतिभिः ॥ ३०९ ॥ अस्मभ्यं ता अपा विविव्रजां अस्ते व गोमतः ॥ नवाभिरिन्द्रोतिभिः ॥ ३१० ॥ अस्माकं धृष्णुया रथो द्युमां इन्द्रानपच्युतः ॥ गव्युरपुरीयतो ॥ ३११ ॥ अस्माकमुत्तमं कृधि श्रवो देवेषु सूर्य्य ॥ वर्षिष्ठां द्यामिवोपरि ॥ ३१२ ॥ नागवल्लीनागबलाकुमारीचक्रभास्करैः ॥ वचागुडूचीतगरैः स्नानं पात्रचतुष्टये ॥ ३१३ ॥ सीसकं कम्बलं स्वर्णं मेषं दद्यात्तु तुष्टये ॥ राहोरेतदभावे तु त्रिपुरान्[१]सम्प्रदापयेत् ॥ ३१४ ॥ आश्विने पौर्णमास्यां तु भरण्यां सिंहि-का सुतम् ॥ जनयामास तस्मिंस्तं विशेषेणार्चयेन्मुदे ॥ ३१५ ॥ केतु-मन्त्रं प्रवक्ष्यामि मधुच्छन्दा मुनिर्मतः ॥ देवता केतवः प्रोक्ता गायत्रं छन्द

१ त्रिपुरान्गुग्गुलोस्त्रीन्खण्डान्—इत्यर्थः कोद्वितीयो बहुव्रीहौ ।

ईरितम् ॥ ३१६ ॥ केतुं कृण्वन्नकेतवे पेशो मर्य्या अपेशसे ॥ समुषद्भिरजायथाः ॥ ३१७ ॥ कंबीजेन षडङ्गानि ध्यानमत्र निरूप्यते ॥ धूम्राक्षवाहवः पाशधराश्च विकृताननाः ॥ ३१८ ॥ किरीटिनो गृध्रवाहा मध्यदेशोद्भवा दृढाः ॥ चित्राम्बराश्चित्रवर्णाश्चित्रगन्धानुलेपनाः ॥ ३१९ ॥ नानाछन्दस्कैका[1] गोतमार्य्या जैमिनिगोत्रजाः ॥ कृष्णपिङ्गध्वजपताकिनो मुकुटिनस्तथा ॥ ३२० ॥ केयूरिणो रथारूढाः स्थूला ब्रह्माधिदेवताः ॥ चित्रगुप्ताख्यप्रत्याधिदेवताश्चेति चिन्तयेत् ॥ ३२१ ॥ सार्धांगुले ध्वजाकारे वायव्यां मण्डले कृते ॥ चित्रवर्णाक्षतैः पुष्पैस्तत्रावाह्य समर्चयेत्॥ ॥ ३२२ ॥ वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं कुशहोमं समाचरेत् ॥ मधुरत्रयसंयुक्तैश्चित्रद्रव्यैः प्रपूजयेत् ॥ ३२३ ॥ वामदेवो मुनिः प्रोक्तस्त्रिष्टुप्छन्द उदाहृतम् ॥ ब्रह्मास्य देवता केतुप्रीतये विनियोजनम् ॥ ३२४ ॥ ब्रह्मजज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्विसीमतः सुरुचो वेन आवः ॥ सबुन्ध्या उपमा अस्य विष्ठास्सतश्च योनिमसतश्च विवः ॥ ३२५ ॥ प्रस्कण्वस्तु मुनिः प्रोक्तो बृहती छन्द ईरितम् ॥ देवता चित्रगुप्तोत्र नियोगः केतुतुष्टये ॥ २२६ ॥ उषो वाजं हिवंस्वयाश्चित्रो मानुषे जने ॥ तेनावह सुकृतो अध्वराँउप ये त्वा गृणन्ति वह्नयः ॥ ३२७ ॥ सदैव ब्रह्मवेषः स्याल्लिङ्गेनोपविशेत्कचित् ॥ नाश्नीयाद्दग्धमन्नादि केतुसेवनतत्परः ॥ ३२८ ॥ केतुमन्त्रस्य सिद्धौ तु लिङ्गं सर्वत्रमान्यता ॥ बहुधा तु भवेद्गुप्तो दृश्यो न साधकोत्तमः ॥ ३२९ ॥ दशर्चस्य तु सूक्तस्य मधुच्छन्दा मुनिः स्मृतः ॥ देवते चन्द्रमरुतौ गायत्रं छन्द उच्यते ॥ ३३० ॥ युञ्जन्ति ब्रध्न मरुषंचरन्तम्परितस्थुषः॥ रोचन्ते रोचना दिवि ॥ ३३१ ॥ वीलुचिदारुजन्तुभिर्गुहाविदन्द्रवह्निभिः ॥ अविन्द उ श्रिया अनु ॥ ३३२ ॥ देवयन्तो यथामतिमच्छाविदद्वसुङ्गिरः ॥ महामनूषत सृतम् ॥ ३३३ ॥ इन्द्रेण स हि दृक्षसे यजमानो अविभ्युषा ॥ मन्दूस मानचर्वस ॥ ३३४ ॥ अनवद्यैरभि रघूमिमास्वस्वहस्व दर्चतिम् ॥ गणैरिन्दस्य काम्यैः ॥ ३३५ ॥ अतः परिज्मन्नागहि दिवो वारोचनादधि ॥ समस्मिन्र-

१ प्रथमः स्वार्थिकशैषिकः।

ञ्जते गिरः ॥ ३३६ ॥ इतो वासातिमीमहे देवो वा पार्थिवादधि ॥ इन्द्रं माहो वारजसः ॥३३७॥ सहदेवी च लज्जालुबला मुस्ताप्रियङ्गवः ॥ एतद्युक्तजलस्नानात्प्रसीदति सदा शिखी ॥ ३३८ ॥ ऊर्णवस्त्रमजापुत्रं ध्वजश्चापि पताकिकाम् ॥ पीताभां केतुतुष्ट्यै तु दद्याद्वा राजमाषकान् ॥ ३३९ ॥ आषाढस्य सिते पक्षे रौद्रभे केतवोभवन् ॥ अतश्चार्कदिने कार्य्यः केतूनान्तु महोत्सवः ॥ ३४० ॥ इत्थं वैदिकमार्गेण कथितं ग्रहपूजनम् ॥ ये कुर्वन्ति सदा तेषां सिद्धिः करतले स्थिता ॥ ३४१ ॥ ग्रहाराधनशीलानामिह लोके परत्र च ॥ सुखं स्यादथ किं वच्मि तद्ब्रुवन्त्विह देवताः ॥ ३४२ ॥

इति श्रीमहामायामहाकालानुमते मेरुतन्त्रे शिवप्रणीते
नवग्रहकथनप्रकारस्त्रयोदशः ॥ १३ ॥

---

श्रीदेव्युवाच ॥ भगवन्देवदेवेश गुरुणा ज्ञानिना यदा ॥ लोभेन दत्तो मन्त्रश्चेदतो दुःखमवाप्यते ॥ १ ॥ तदा किं देव कर्त्तव्यं यदा सौख्यं न जायते ॥ इह लोके परत्रापि येन संलभ्यते सुखम् ॥ २ ॥ श्रीमहादेव उवाच ॥ प्रायः कलियुगे देवि गुरवो लोभसंयुताः ॥ शिष्यास्सुखेप्सवोऽभक्ता ह्यतो न क्वापि सिद्धयः ॥ ३ ॥ प्रायोमन्त्रग्रहस्तेन दुःखायैवोपजायते तदर्थं सम्प्रवक्ष्यामि सर्वतन्त्रेषु गोपितम्॥४॥मन्त्रत्यागं प्रथमतः कृत्वा प्रत्यङ्गिराम्भजेत् ॥ मन्त्रत्यागविधिं वक्ष्ये येन सञ्जायते सुखम् ॥ ५ ॥ विद्वांसं ब्राह्मणं ज्ञात्वा तन्त्रेषु परिनिष्ठितम् ॥ प्रातस्तस्य गृहं गत्वा स्वीयं दुःखं निवेदयेत्॥६॥ ततस्तेन प्रकर्त्तव्यो मन्त्रत्यागविधिः परः ॥ तत्रादौ रम्यभवने कुम्भं दीक्षाविधानतः ॥७॥ मण्डले स्थापयित्वा तु युतं तीर्थजलैः शुभैः ॥ विलोमतन्त्रमन्त्रेण तत्रावाह्येष्टदेवताम् ॥ ८ ॥ सकलीकृत्य सम्पूज्यावरणञ्च प्रपूजयेत् ॥ एवं सावरणां मन्त्री समभ्यर्च्येष्टदेवताम् ॥ ९ ॥ हुनेद्विलोममन्त्रेण गोघृतेन सहस्रकम् ॥ अष्टान्वितं शतं वापि ततः सन्तर्पयेदमुम् ॥ ॥ १० ॥ ब्रह्मार्पणेन मनुना देवताभ्यो बलिन्ततः ॥ यवान्नैश्चापि दुग्धा-

---

ॐतत्सत्प्राणबुद्धिदेहधर्म्माधिकारजाग्रत्स्वप्नसुषुप्त्यवस्थासु मनसा वाचा कर्म्मणाभ्यन्तरा यच्चोदरेण शिश्ना वा यच्च स्मृतं यदुक्तं यच्च कृतन्तत्सर्वं ब्रह्मार्प्पणं भवेद्भूस्वाहा ।

न्नैर्दिग्विदिक्ष्वध ऊर्ध्वतः ॥ ११ ॥ आयाहीन्द्र सुराधीश शतमन्यो शचीपते ॥ नमस्तुभ्यं गृहाणेमं पुष्पधूपादिकं बलिम् ॥ १२ ॥ आयाहि तेजसा नाथ हव्यवाह वरप्रद॥ गृहाण पुष्पधूपादि बलिमेनं प्रयोजितम्॥ १३॥ प्रेतनाथ त्वमायाहि भिन्नाञ्जनसमद्युते ॥ बलिन्दत्तं गृहाणेमं सुप्रीतो वरदो-भव ॥ १४ ॥ नमस्ते रक्षसां नाथ निर्ऋते त्वमिहागतः॥ गृहाण बलिपूजादि मया भक्त्या निवेदितम् ॥ १५ ॥ एहि पश्चिमदिक्पाल जलनाथ नमोस्तु ते ॥ भक्त्या निवेदितां पूजां गृहीत्वा सुखमाप्नुहि ॥ १६ ॥ प्रभञ्जन प्राणपते त्वमेहि सपरिच्छदः ॥ मया प्रयुक्तं विधिवद्गृहाण बलिमादरात् ॥ १७ ॥ कुबेरतारकाधीशावागच्छेतां सुरोत्तमौ ॥ पुष्पधूपादिभिः प्रीतौ भवतां वरदौ मम ॥ ॥ १८ ॥ ईश त्वमेहि भगवन्सर्वविद्याश्रय प्रभो॥ पूजितः पुष्पधूपाद्यैः प्रीतोभव विभूतये ॥ १९ ॥ आयाहि सर्वलोकानां नाथ ब्रह्मन्समर्चनम् ॥ गृहाण सर्वविप्राग्र्य जगत्कर्त्ते नमोस्तु ते ॥ २० ॥ आगच्छ वरदश्रेष्ठ विष्णो विश्वस्य नायक ॥ पूजितः परया भक्त्या भव त्वं सुखदो मम ॥ २१ ॥ ततः सपरिवारां यः पूजयेन्मन्त्रदेवताम् ॥ मन्त्रेण विपरीतेन पुष्पधूपोपचारकैः ॥ २२ ॥ ततस्तु प्रार्थयेद्विद्वान्पूजितां मन्त्रदेवताम् ॥ अनुकल्पादिनालोच्य मया तरलबुद्धिना ॥२३॥ उपात्तो दुःखदो मन्त्रस्तद्दोषं विनिवर्त्तय ॥ पापं प्रतिहतं मेस्तु भूयाच्छ्रेयः सनातनम् ॥ २४ ॥ तनोतु मम कल्याणं पावनी भक्तिरेव तु ॥ इति सम्प्रार्थ्य मंत्रेशं मंत्रं यंत्रे विलोमतः ॥ २५ ॥ विलिख्यामलकर्पूरचंदनेन समर्पयेत् ॥ कलशोपरि संस्थाप्य भक्त्या परमया युतः ॥ २६ ॥ तद्यन्त्रं स्वस्य शिरसि बद्ध्वा स्नायाद्घटोदकैः ॥ मन्त्रपूतैः पुनश्चान्यं कुम्भं तोयैः प्रपूरयेत् ॥ २७ ॥ तन्मध्ये मंत्रयंत्रं च निक्षिप्याथ प्रपूरयेत् ॥ तं कुम्भं ानद्गायां च शुद्धे वान्यजलाशये ॥ २८ ॥ विसृजेदथ विप्रांश्च यथाशक्ति प्रपूजयेत् ॥ इत्थं कृतविधानस्य दुर्लभस्य मनोरुजः ॥ २९ ॥ विनश्यन्ति न संदेहः क्रमाच्चित्तप्रसन्नता ॥ जायतेऽतीवसम्पन्ना वर्धते तत्कुलं सदा ॥ ३० ॥अथ प्रत्यङ्गिरां वक्ष्ये सारभूतां सुखप्रदाम् ॥ यद्भक्तस्य दृशः

पाताद्भूतप्रेताधिदेवताः ॥ ३१ ॥ कदाचिन्नाभिगच्छान्ति साध्यासिद्धिः प्रजायते ॥ शान्तिं पुष्टिं समृद्धिं च साधकाय प्रयच्छति ॥ ३२ ॥ कुलद्वयविदात्मादि मन्त्रार्थज्ञानकोविदः ॥ आचारसंयुतः शुद्धवाक्छुद्धो मनसा तथा ॥ ॥ ३३ ॥ शान्तबुद्धिः प्रसन्नात्मा जितक्रोधो जितेन्द्रियः ॥ दम्भाहङ्कारमोहादिविकलो ज्ञानवित्तमः ॥ ३४ ॥ ध्यानयोगसमारूढः सर्वाभीष्टप्रसाधकः ॥ मंत्रराजमिमं लब्ध्वा जायते स च भूपतिः ॥ ३५ ॥ विनियोगमथो वक्ष्ये चत्वारिंशद्दचस्तथा ॥ प्रत्यङ्गिरा मुनिः प्रोक्तश्छन्दोनुष्टुप्प्रकीर्तितम् ॥ ३६ ॥ उग्रा कृत्या देवतास्ति महादेवोथ वा हरिः ॥ विनियोगोत्र सर्वेषु त्वभीष्टेषु तथाविधः ॥ ३७ ॥ आदौ शरीरशुद्ध्यर्थं प्राजापत्यं व्रतं चरेत् ॥ कुशोदकेन संशोध्य पञ्चगव्येन वै पुनः ॥ ३८ ॥ चरुं हविष्यं भुञ्जानः शतमष्टोत्तरं जपेत् ॥ दिनत्रयं ततः सिद्धं मन्त्रं कार्य्येषु योजयेत ॥ ३९ ॥ दिक्पालमुद्रासनपल्लवानां विधिं परिज्ञाय जपेत्सुमन्त्रम् ॥ न चान्यथा सिद्ध्यति तस्य मंत्रः पूतः सदायङ्किल मंत्रराजः ॥ ४० ॥ लङ्घयेत्प्रत्यरीन्सर्वानभीष्टं चैव जायते ॥ प्रयुक्तो ब्राह्मणे मंत्रो विपरीतफलो भवेत् ॥ ४१ ॥ जपादौ वा प्रयोगादौ पुरश्चर्य्यादिके तथा ॥ आदौ शांतिं प्रकुर्वीत तद्विधानं निगद्यते ॥ ४२ ॥ बार्हस्पत्यः शान्तिमुनिर्विश्वेदेवाः सुरा मताः ॥ छन्दश्च शक्करी प्रोक्ता शान्त्यर्थं विनियोजनम् ॥ ४३ ॥ तच्छंय्योरावृणीमहे गातुं यज्ञाय॥गातुं यज्ञपतये दैवी स्वस्तिरस्तु नः ॥४४॥ स्वस्तिरस्तु मानुषेभ्यः ऊर्ध्वं जिगातु भेषजम् ॥ शं नो अस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे ॥ ४५ ॥ नमो ब्रह्मणे नमो अस्त्वग्नये ॥ नमः पृथिव्यै नम ओषधीभ्यः ॥ ४६ ॥ नमो वाचस्पतये नमो विष्णवे महते करोमि ॥ भद्रं नो अपि वातय मनः ॥ ४७ ॥ उच्चरंस्त्रिस्तारपूर्वं मन्त्रान्ते शांतिरित्यपि ॥ गायत्र्यष्टोत्तरशतं जप्त्वा कर्म्म समाचरेत् ॥ ४८ ॥ कर्म्मांतेपि पुनश्चैवं कृत्वा कर्म्म समापयेत् ॥ सर्वेषामेव मन्त्राणां बीजमोंशक्तिरत्र ह्रीम् ॥ ४९ ॥ तारमायापुटाः सर्वे जप्तव्याः केवला न हि ॥ तदा क्षिप्रं प्रसिद्ध्यन्ति मंत्रा-

१ ॐ २ ह्रीं ।

स्तंत्रेषु निर्णयः ॥ ५० ॥ अश्विनौ तु मुनी प्रोक्तावनुष्टुप्छन्द ईरितम् ॥ कृत्यात्र देवता चास्य नियोगोभीष्टसिद्धये ॥ ५१ ॥ यां कल्पयन्ति नोरयः क्रूरां कृत्यां वधूमिव ॥ तां ब्रह्मणा अपनिर्णुद्म प्रत्यक्कर्त्तारमृच्छतु ॥ ॥ ५२ ॥ नागत्र्यब्ध्यब्धिवेदेषु नागवर्णैर्ध्रुवादिकैः ॥ ह्रींबीजान्तैः षडङ्गानि मन्त्रस्य तु समाचरेत् ॥ ५३ ॥ शिरोभ्रुमध्यवक्त्रेषु कण्ठे बाहुद्वये हृदि ॥ नाभावूर्वोर्जानुनोश्च पदानि पदयोर्न्यसेत् ॥ ५४ ॥ चतुर्दशक्रमान्मंत्री तारमायापुटान्यपि ॥ ततो ध्यायेत्सिंहमुखीं मुक्तकेशां दिगम्बराम् ॥ ५५ ॥ असिंचर्म्मकरां श्यामां दंष्ट्राग्रां सर्वभीषणाम् ॥ ग्रसन्तीमहितान्स्वस्वतेजसा ध्यानमीरितम् ॥ ५६॥ अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं होमस्तस्य दशांशतः ॥ अपामार्गसमिद्भिस्तु होमो हव्यघृतादिभिः॥५७॥ त्रिकोणे चार्चयेद्देवीं षड्दलेष्वङ्गपूजनम् ॥ लोकपालास्तदस्त्राणि पूजयेदित्थमर्चनम् ॥५८॥ एवंसिद्धमनुर्मन्त्री प्रयोगेषु शतं जपत् ॥ जहुयाच्च शतं दिक्षु दशमन्त्रैर्बलिं हरेत् ॥ ५९ ॥ यो मे पूर्वगतः पाप्मा पापकेनेह कर्म्मणा ॥ इन्द्रस्तन्देवमुच्चार्य्य राजान्ते भञ्जयत्विति ॥ ६० ॥ अञ्जयत्विति चोच्चार्य्य मोहयत्विति चोच्चरेत् ॥ नाशयतु पदं पश्चान्मारयत्वित्यतो बलिम्॥ ६१ ॥तस्मै प्रयच्छतु कृतं ममान्ते च शिवं गम ॥ शान्तिः स्वस्त्ययनं चास्तु बलिमन्त्र उदाहृतः ॥६२॥ प्रणवाद्याष्टषष्ट्यर्णस्तेनैव वितरेद्बलिम् ॥ अस्मिन्मन्त्रेपूर्वपदस्थानेऽन्यादिपदं वदेत् ॥६३॥ इन्द्रइत्यादिकस्थाने अग्निरित्यादिकं पठेत् ॥ एवं तु दश

१ अस्य मन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिरनुष्टुप्छन्दः प्रत्यङ्गिरा देवता बीजं ह्रींशक्तिः कृत्यानाशने विनियोगः ॐ ह्रीमितिबीजाभ्यां सम्पुटितः सप्ताधिकत्रिंशदक्षरो मन्त्रो भवति । अष्टत्रिचतुश्चतुःपञ्चाष्टाक्षरैः प्रणवाद्यैर्ह्रींमन्तैरङ्गन्यासं कुर्यात् । यथा—ॐ यां कल्पयन्ति नोरयः ह्रीं हृदयाय नमः, ॐ क्रूरां कृत्यां ह्रीं शिरसे स्वाहा, ॐ वधूमिव ह्रीं शिखायै वषट्, ॐ तां ब्रह्मणा ह्रीं कवचाय हुम्, ॐ अपनिर्णुद्म ह्रीं नेत्रत्रयाय वौषट् . ॐ प्रत्यक्कर्तारमृच्छतु ह्रीं अस्त्रायफट्—शिरआदिषु मन्त्रपदैरों ह्रींमाद्यन्तैर्न्यसेत् ॥ २ यो मे पूर्वगतः पाप्मापापकेनेह कर्म्मणा ॥ इन्द्रस्तं देवराजा भञ्जयतु अञ्जयतु मोहयतु नाश यतु मारयतु अतः बलिं तस्मै प्रयच्छतु कृतं मम शिवं मम शान्तिः स्वस्त्ययनं चास्तु एतन्मत्रेण पूर्वमिन्द्रं यजेत् । ३ पुनरेवानयैवरीत्या । शक्रपदस्थाने वह्न्यादिपदानि संमेल्य दिक्पालानां तत्तद्दिक्षु बलिं हरेत् ॥

मन्त्राः स्युस्तत्तद्दिक्षु बलिं हरेत्॥६४॥एवंकृते शत्रुकृता कृत्या क्षिप्रं विनश्यति ॥६५॥प्रत्यङ्गिरा मुनिः प्रोक्तोऽनुष्टुप्छन्दः प्रकीर्त्तितम्॥कृत्या तु देवता चास्य नियोगो रिपुनिग्रहे ॥ ६६ ॥ शीर्षण्वतीं कर्णवतीं विष्णुरूपां भयङ्करीम् ॥ यः प्राहिणोदिहाय त्वं नित्यं योजय स्वस्तिभिः॥६७॥वामदेव ऋषिः प्रोक्तो गायत्री छन्द ईरितम् ॥ कृत्या तु देवता प्राग्वन्नियोगोरिनिवर्त्तने ॥ ६८ ॥ येन दिष्टयेह वदसि प्रतिपूरमधापिनि ॥ तमेवातो निवर्त्तस्व मा स्याम्यतो अनागसः ॥ ६९ ॥ मुनिर्वृद्धवशिष्ठोस्यच्छन्दोनुष्टुप्प्रकीर्त्तितम् ॥ देवः कालाग्निरुद्रोत्र नियोगोरिविनाशने॥ ७० ॥अभिवर्त्तस्य कर्त्तारं निरस्तां ताभिरोजसा ॥ आयुरस्य निकृन्तस्य प्रजाश्च पुरुषादिनि ॥७१॥ ऊर्ध्वास्योस्य मुनिः प्रोक्तो नुष्टुप्छन्द उदाहृतम् ॥ देवता यातुधान्योभिचारनाशे नियोजनम् ॥ ७२ ॥ यस्त्वा कृत्ये चकारेह त्वं तं गच्छ पुनर्नवे ॥आसतीः कृत्यानाशाय सर्वास्तु यातुधान्यः ॥ ७३ ॥ आसाम्प्रयोगं वक्ष्यामि पञ्चानामद्भुतं भुवि ॥ इदं पञ्चवैकं सूक्तं शुक्लाष्टम्यां समाचरेत् ॥ ७४ ॥ सुमासि पौर्णमास्यां च यदुम्बरभवं समम् ॥ आनयेद्दण्डमेकंतु पुरुषस्य प्रमाणतः ॥ ७५ ॥ शतनाम स्मरन्दण्डं गृहीत्वाष्टोत्तरं शतम् ॥ सूक्तं जपेत्तदारातिर्दह्यते स महाग्रहैः ॥७६॥ यदि प्रतिपदारम्भात्कर्म्म चैतत्समाचरेत् ॥ अष्टप्रादेशमात्रन्तु दण्डं बैभीतकं समम् ॥ ७७ ॥ गृहीत्वोच्चार्य्यारिनाम जपेत्सूक्तं तदा रिपुः ॥ महाव्याधिगृहीतोसौ म्रियते नात्र संशयः ॥ ७८ ॥ कारस्करस्य चार्कस्य समिधोग्निमुखोद्भवैः ॥ तैलैराक्ता हुनेत्सप्तरात्रमष्टोत्तरं शतम् ॥ ७९ ॥ शत्रुनाशो भवत्येवमथ वा केवलं जपम् ॥ मासमेकं प्रकुर्वीतारिपुर्मृत्युमवाप्नुयात् ॥ ८० ॥ श्मशानकाष्ठमय्या तु तालपत्रे लिखेद्रिपोः ॥ ईश्वरस्यालये नामवर्णान्मन्त्रेण गर्भितान् ॥ ८१ ॥ अष्टोत्तरशतं जप्त्वा भूमौ प्रादेशमात्रके ॥ निखनेत्तत्क्षणादेव ज्वरः शत्रोः प्रजायते ॥ ८२ ॥ तत्क्षणं नाशमायाति प्रयोगान्ते तु दक्षिणाः ॥ दद्याद्गोभूहिरण्यादि यथा शक्त्येति तद्विधिः ॥ ८३ ॥ महादेवो मुनिः प्रोक्तोनुष्टुप्छन्दः प्रकीर्तितम् ॥ कृत्या तु देवता चास्य नियोगो रिपुनि-

ग्रहे॥ ८४ ॥क्षिप्रं कृत्ये निवर्त्तस्व कर्त्तुरेव गृहं प्रति ॥ पशूंश्चैवास्य नाशय वीर्य्यं चास्य निबर्हय ॥ ८५ ॥ अगस्त्योस्य मुनिः प्रोक्तोनुष्टुप्छन्दः प्रकीर्त्तितम् ॥ कृत्या तु देवता प्रोक्ता नियोगो रिपुतक्षणे ॥८६ ॥ यस्त्वां कृत्ये चकारेह विद्वानपि उपग्रहान् ॥ तस्यैवातः परावृत्य तनुं कृन्धि यथा तरुम् ॥ ॥ ८७ ॥ वशिष्ठोस्य मुनिः प्रोक्तोनुष्टुप्छन्दः प्रकीर्त्तितम् ॥ रुद्रस्तु देवता प्रोक्तो नियोगोरिनिकर्त्तने ॥ ८८ ॥ प्रतिचित्वावसे धातुब्रह्मणे विष्णुमित्रहम् ॥ अग्निश्च कृत्यं रक्षोहा चोज एकपात् ॥८९॥ ब्रह्मास्य मुनिराख्यातोऽनुष्टुप् छन्दः प्रकीर्त्तितम् ॥ कृत्या तु देवता प्रोक्ता नियोगोरिनिकृंतने ॥ ९० ॥ यथा त्वांगिरसः पूर्वे भृगवश्चायसेधिरे ॥ अत्रयश्च वशिष्ठश्च तथैव नायसेधि माम् ॥ ९१ ॥ अग्निरस्य मुनिः ख्यातस्त्रिष्टुप्छन्दः प्रकीर्त्तितम् ॥ कृत्या तु देवता प्रोक्ता नियोगोरिनिकर्त्तने॥९२॥यस्ते पर्क्षि स दधौ रथस्यैवं विभूर्धिया ॥ तन्त्रच्छतगते जनन्नास्तेजनो यतः ॥९३॥ अथ वक्ष्येऽस्य चोक्तस्य पञ्चर्चस्य विधिं शुभम्॥भुञ्जानः कपिलाक्षीरमनुवाकं ग्रहं जपेत् ॥९४॥ क्षुत्तृड्द्वन्द्वादिरहितो ब्रह्मचर्य्यरतो भवेत्॥प्रयोगेस्मिंस्तु विज्ञेयाः कामक्रोधादयोरयः ॥ ९५ ॥ पलाशस्य समिद्भिस्तु मधुरैर्दधिभिः घृतैः ॥ हुनेदष्टसहस्रं तु ब्रह्मवर्चसवान्भवेत् ॥ ९६ ॥ गौरत्र दक्षिणा प्रोक्ता पलाशसमिधो हुनेत् ॥ दुग्धाक्ताश्चाष्ट शतकं सप्तभिर्दिवसैर्ग्रहाः ॥९७॥ उपग्रहाः पलायन्ते शान्तिः सर्वत्र जायते ॥ एवं हुत्वा पिप्पलस्य समिद्भिर्यश आप्नुयात् ॥ ९८ ॥ नदीतीरे श्मशाने च भद्रकालालयेपि वा ॥ कृत्वा तद्भस्मनो राशिं ध्यात्वायंनाम चेतसा ॥ ९९ ॥ जपेदष्टसहस्रं स सप्ताहाज्जायतेक्षरी ॥ तदेव भस्माहोरात्रं मन्त्रितं गोष्ठके क्षिपेत् ॥ १०० ॥ सद्यो गोश्च सुखं तत्र जायते नात्र संशयः ॥ पौर्णमास्यामुपोष्याथ रजन्यामंगुलीयकम् ॥ १०१ ॥ स्वरक्षार्थं च सन्धार्य्य जपेदष्टसहस्रकम् ॥ महाराजसमः स स्यादाज्ञया विभवेन च ॥ १०२ ॥ नित्यमष्टोत्तरशतं विष्णोर्देवालये जपेत् ॥ षण्मासाभ्यन्तरेणैव तस्य पूर्णा मनोरथाः[1] ॥ १०३ ॥ संवत्सरजपादेवं ब्रह्मणा सदृशो

१ स्युरिति शेषः ॥

भवेत् ॥ तिलान्भारशतं दद्याद्दक्षिणां तस्य पाठिने ॥ १०४ ॥ भृगुर्मुनिरनुष्टुप् च छन्दः कृत्या च देवता ॥ संग्रामविजये चैव विनियोगः प्रकीर्त्तितः ॥ ॥ १०५ ॥ यो नः कृत्ये रणस्थो वा जनो वान्यो हि हिंसति ॥ तस्य त्वं देवि विद्धाग्निं तनुमृच्छ स्वहेतिना ॥ १०६ ॥ अगस्त्यस्तु मुनिः प्रोक्तश्छन्दोनुष्टुबुदाहृतम् ॥ देवी कृत्या नियोगस्तु विवादादौ जयाय च ॥ १०७ ॥ मनाः शर्यादेनहविमस्य क्षियन्तं या कृत्वने ॥ सरस्वतीत्यवकृत्यमच्छिषस्तस्य किञ्चन ॥ १०८ ॥ महादेवो मुनिः कृत्या देवताछन्द ईरितम् ॥ अनुष्टुप् च नियोगस्तु विवादादौ जयाय च ॥ १०९ ॥ मनः कश्चिदुहारातिर्मनसा प्रतिभूरिति ॥ दूरस्थो वान्तिकस्थो वा तस्य हृयमसृक् पिब ॥ ॥ ११० ॥ मुनिरग्निरनुष्टुप् च छन्दः कृत्या च देवता ॥ दुस्साध्यकार्य्यसिद्ध्यर्थं विनियोगोस्य कीर्त्तितः ॥ १११ ॥ येनासि कृत्ये प्रहिता छद्मनास्मज्जिवांसया ॥ तस्य व्यनेच्चाव्यनहीनस्तहरसाशनिः ॥ ११२ ॥ गौतमो मुनिराख्यातोनुष्टुप् छन्दोस्यदेवता ॥ कृत्यामार्गस्थचौरादिनाशे तु विनियोजनम् ॥ ११३ ॥ यो नोसि वासः प्रस्थानः परा याति पराचतम् ॥ तैर्देविरात्र्याः कृत्ये नो गमयेमान्निकृन्तय ॥ ११४ ॥ अथैतस्यानुवाकस्य प्रयोगः कीर्त्यतेधुना ॥ शुक्लपक्षप्रदिपदमारभ्य प्रत्यहं जपेत् ॥ ११५ ॥ अष्टोत्तरसहस्रन्तु पौर्णमास्यन्तमेव च ॥ भक्षयेत्कपिलाक्षीरं हविष्यौदनमेव च ॥ ॥ ११६ ॥ श्रोत्रियालयभिक्षां वा सर्वकृत्यानिवारणे ॥ समर्थो दर्शनादेव भवेद्भूतस्य का कथा ॥ ११७ ॥ जयेत्तथापमृत्युं च यक्षगन्धर्वराक्षसान् ॥ स्कन्दग्रहब्रह्मरक्षोपस्मारादिगदांस्तथा ॥ ११८ ॥ सर्वे रोगा विनश्यन्ति वृद्धिश्चैवोत्तरोत्तरम् ॥ सर्वोपद्रवशान्तिः स्याद्भवने साधकस्य तु ॥ ११९ ॥ नित्यमष्टोत्तरं हुत्वा घृताक्तान्छालितण्डुलान् ॥ सर्वव्याधिविनाशः स्याच्छिवमेव दिनेदिने ॥ १२० ॥ अष्टोत्तरसहस्रं तु तिलमाषचरुं हुनेत् ॥ घृताक्तं सर्वरोगाणां त्वरितं शान्तिकं स्मृतम् ॥ १२१ ॥ पलाशपुष्पं च तिलान्सुरभीघृतसंयुतान् ॥ हुत्वा चाष्टोत्तरशतं मासं तत्सर्वदुःखहृत् ॥ १२२ ॥ महोत्पातस्य शान्तिश्च जीवेद्वर्षशतं तथा ॥ देया स्वर्णांगुलीयादि दक्षिणा

मन्त्रपाठिने ॥ १२३ ॥ अङ्गिरा मुनिरुद्दिष्टो गायत्री छन्द ईरितम् ॥ देवोऽग्निर्विनियोगस्तु सर्वशत्रुनिकर्त्तने ॥ १२४ ॥ यद्युवेशाद्विपदेस्मानर्दिवेष चतुष्पदी ॥ निरेस्था नो व्रजास्माभिः कर्तुं त्वष्टपदीगृहान् ॥ १२५ ॥ मुनिर्ज्वरस्तु भगवांस्त्रिष्टुप्छन्द उदाहृतम् ॥ मृत्युर्देवो नियोगस्तु जराभवतु शत्रवे ॥ १२६ ॥ यन्द्विष्मो यश्च द्वेष्टचधायुर्यस्य न संशयः ॥ शुने पिपृमि वक्ष्यामि तं प्रत्यस्मत्वमृत्यवे ॥ १२७ ॥ ब्रह्मास्य मुनिराख्यातोनुष्टुप्छन्दः प्रकीर्त्तितम् ॥ अग्निर्देवो नियोगस्तु शत्रुविद्वेषणे मतः ॥ १२८ ॥ यश्च यायज्ञः शपथो यश्च मामीश याति नः ॥ ब्रह्माचपकुद्धशयाशर्वतत्कन्धधस्पतिम् ॥ १२९ ॥ देवता भौम उद्दिष्टो मुनिः कश्यप ईरितः ॥ अनुष्टुप्छन्द उद्दिष्टं नियोगोरिपलायने ॥ १३० ॥ सबन्धुश्चाप्यबन्धुश्च यो अस्म अभिदा मति ॥ तस्य त्वसिन्धयिष्टाय दावित्सर्प ताक्षिरः ॥ ॥ १३१ ॥ पञ्चर्चस्य प्रयोगोस्या धना चात्र प्रवक्ष्यते ॥ समुद्रगामिनीं गत्वा जपेदष्टोत्तरं शतम् ॥ १३२ ॥ जपेन्नित्यमहोरात्रं समुद्दिश्य जलाञ्जलीन् ॥ अष्टाविंशतिसंख्याकांदद्यात्तद्वत्पुनर्जपेत् ॥ १३३ ॥ सप्ताहान्म्रियते शत्रुरस्य रोगी न संशयः॥ विभीतदण्डमाधाय चैकप्रादेशसम्मितम् १३४॥ शत्रुनाम स्मरन्धृत्वा नित्यमष्टोत्तरं शतम् ॥ जपेन्मनुं रिपुकुलं ज्ञाताज्ञाविनश्यति ॥ १३५ ॥ अपराधं विना द्वेष्टा स तु कुष्ठी प्रजायते ॥ अष्टाविंशतिसङ्ख्या यः पश्यन्भानुं रिपुं स्मरन् ॥ अन्वहं प्रजपेच्छत्रुर्ज्वरेण परिपीड्यते ॥ १३६ ॥ तिलतैलाक्तसमिधां होमश्चाष्टशतं भवेत् ॥ शत्रोः पुत्रकलत्राश्वगजताद्यं विनश्यति ॥ १३७ ॥ हिरण्यं दक्षिणां दद्यात्प्रयोगांते च शान्तिकम् ॥ प्रायश्चित्तं पुनः कुर्य्यान्मुक्तदोषः प्रजायते ॥ द्विजान् देवभक्तानां जातु कुर्य्यान्न विप्रियम् ॥ १३८ ॥ कालाग्निरुद्रो देवस्तूपमन्युग कथितो मुनिः ॥ बृहती छंद उद्दिष्टं नियोगोस्यारिनाशने ॥ १३९॥ अभिप्रेहि-शुभप्राक्षं युक्ताशु शपथं रथे ॥ शत्रुर्न तिष्ठति कृत्ये वृको वा विमतो गृहात् ॥ ॥ १४० ॥ मुंनिः सम्यतपाः प्रोक्तो बृहती छंद ईरितम् ॥ ज्वलनो देवता चास्य नियोगोऽरिपलायने ॥ १४१ ॥ परिणो वृद्धिशपथादहन्नग्नि

रिव ह्रदे ॥ शत्रूनेवाभिनोङ्गेहि दिव्यावृक्षमिवाशनिः ॥ १४२ ॥ अङ्गिरास्तु मुनिश्छंदोनुष्टुप् कृत्या च देवता ॥ गजाऽजतुरगादीनां नियोगो रिपुमोहने ॥ १४३ ॥ असपत्नं पुरस्तान्नः शिवं दक्षिणतस्कृधि ॥ अभयं सततं पश्चाद्र उत्तरतो गृहे ॥ १४४ ॥ मुनिः कश्यप इत्युक्तो बृहती छंद ईरितम् ॥ देवी कृत्या नियोगस्तु रिपूणां त्रासनाय च ॥ १४५ ॥ परे हि कृत्ये मातिष्ठ वृद्धसेवपदं नय ॥ मृगास्यहि मृगोरिः प्रांतत्वानि कर्तुमर्हति ॥ १४६ ॥ एतस्यैवानुवाकस्य प्रयोगः कीर्त्यतेधुना ॥ कृष्णाष्टमीं समारभ्य यावच्छुक्लाष्टमी भवेत् ॥ १४७ ॥ इष्ट्वा माहेश्वरं लिङ्गं जपन्नाशयति क्षणात ॥ अभिचारिक कृत्यादीन्हयानां हस्तिनामपि ॥ १४८ ॥ विनाशयेन्महाव्याधिं संस्थाप्य रुद्रकालिकाम् ॥ जपेन्नश्येदरिस्तस्य रक्षितोपीश्वरेण चेत ॥ १४९ ॥ दक्षिणाभिमुखो रुद्राज्जपे दष्टोत्तरं शतम् ॥ नित्यंजपेदेक विंशद्दिनावधि तथा रिपोः ॥ १५० ॥ कलत्रादिकनाशः स्याद्दक्षिणा कम्बलद्वयम् ॥ आत्मरक्षा च कर्तव्या रुद्रन्यासावधानतः ॥ १५१ ॥ मुनिः शर्वः सर्वसुरश्छंदोनुष्टुप्प्रकीर्तितम् ॥ दाहनार्थं पुरादीनां नियोगोस्य भवेत्तथा ॥ १५२ ॥ अग्न्यास्यघोररूपेपि पुरुषेपि विनाशिनी ॥ जृम्भिता प्रतिगृह्णस्व प्रमादाय हि चाद्भुतम् ॥ १५३ ॥ अर्को मुनिरनुष्टुप् च च्छन्दः कृत्यास्य देवता ॥ अतिक्रुद्धस्य राजादेः कोपशान्त्यै नियोजनम् ॥ ॥ १५४ ॥ त्वमिन्द्रो यमो वरुणस्त्वमापोपि च रथोनिलः ॥ त्वं ब्रह्मा चैव रुद्रश्च त्वष्टा चैव प्रजापतिः ॥ १५५ ॥ छन्दस्तु देवी गायत्री देवते चाश्विनौ मतौ ॥ मुनिरिन्द्रो नियोगस्तु त्वरितं रोगनाशने ॥ १५६ ॥ आवर्तध्वं निवर्त्तध्वमृतवः परिवत्सराः ॥ अहोरात्रास्तथाब्दाश्च दिशः प्रतिदिशश्च मे ॥ १५७ ॥ गालवो मुनिराख्यातो मित्रो देवः प्रकीर्तितः ॥ त्रिष्टुप्छन्दो नियोगस्तु कर्त्तव्योद्भुतकर्म्मणे ॥ १५८ ॥ त्वं यमं वरुणं सोमं त्वमापोग्निमथानिलम् ॥ अत्राहत्य पशूंश्चैव चोत्पादयसि चाद्भुतम् ॥ १५९ ॥ मुनिर्विष्णुः सुरो विष्णुरनुष्टुप्छंद उच्यते ॥ नियोगो यस्य कस्यापि रक्षणार्थमुदाहृतम् ॥ ॥ १६० ॥ यो मेरुगर्भशयानं विश्वस्य हितं पुरुषं विजह्रुः ॥ कुम्भीवपाकं नरकं जनान्नीयं पश्चवर्षांश्च एवं पुरुषोसोमपस्य ॥ १६१ ॥ पञ्चर्चमनुवाकन्तु ये जप-

न्तीह नित्यशः ॥ पूर्वकर्म्मसमुद्भूतमाधिव्याधिभयं हरेत् ॥ १६२ ॥ यथात्र-पारिशिष्टस्था ऋगेका प्रोच्यतेधुना ॥ तां जपन्सततञ्जन्तुर्नारिभिः परिभूयते ॥ १६३॥ येन्द्र सुम्यजवेमह्यमग्ने कदा धियो दुर्मदो अग्रनासः ॥ अवध्यै-तानुशोचिषायिण्यतौ भूत्यैवस्वतस्यसनेमयस्याः ॥ १६४ ॥ मुनिः शुक्रो ब्रह्म देवश्छन्दोनुष्टुबुदाहृतम् ॥ स्त्रियो वै मोहनाशाय नियोगोस्य प्रकीर्तितः ॥ १६५ ॥ अत्यक्ता रक्तास्त्वलंकृतः सर्वतो दुरितं वह ॥ जातीयाश्चैव कृत्यानां शत्रुहन्याय चेतसः ॥ १६६ ॥ वसवो मुनयः प्रोक्ताः परमात्मा च देवता ॥ छन्दोनुष्टुब्नियोगोस्य दुर्वध्यारिविनाशने ॥ १६७ ॥ यथा हति पुरासीनं तथैवस्वतसकृन्नरः॥ तथा त्वया युजा वयं तस्य निकुम्भः स्थातुजङ्गमम् ॥ १६८ ॥ अग्निस्तु देवता प्रोक्ता मुनिरिन्दुः प्रकीर्तितः ॥ छन्दोनुष्टुब्नि-योगस्तु चास्य शत्रुविनाशने॥ १६९॥ उत्तिष्ठवमरहीनो जातेह्निभिहेच्छसि ॥ या वास्ते कृत्ययादौ तु प्रतिकृत्स्यामिविद्रवः ॥ १७० ॥ मुनिः शान्तायनः प्रोक्तः परमातत्र देवता ॥ छन्दोनुष्टुब्नियोगस्तु तपोविघ्नकराश्च ये॥ १७१॥ लोभालस्यादयो वाथ दृश्यन्ते ये तपोपहाः ॥ १७२ ॥ तपोविघ्नकराः पाठे स्वायुधाश्शमिदं पठेत् ॥ १७३॥ स्वायुधाः सन्ति नोरयो विघ्नं चैवं परूंषि ते ॥ तैस्तैर्निकपला पापिनोजीवयस्यरीन् ॥ १७४ ॥ भगीरथो मुनि-र्ब्रह्मा छन्दोनुष्टुबुदाहृतम् ॥ पापारीणां च पापस्य नाशाय विनियोजनम् ॥ ॥ १७५ ॥ मास्याच्छिषो द्विपदं तनोचकि चतुष्पदम् ॥ माज्ञातीतन्तु जानस्यान्मनवे क्षिप्रवेशिनौ॥ १७६ ॥पञ्चर्चमनुवाकन्तु नित्यमष्टोत्तरं शतम् ॥ यो जपेत्पूजयेद्रुद्रं तस्य शत्रुक्षयो भवेत् ॥ १७७ ॥ सर्वकृत्याप्रशा-न्तिश्च सर्वलोकवशीकृतिः ॥ रुद्रालये सहस्रन्तु जपन्व्याधिं निबर्हयेत् ॥ ॥ १७८ ॥ कार्पासबीजं लवणं घृतमष्टसहस्रकम् ॥ हुत्वा सूर्य्यस्या भिमुखमष्टाविंशतिसङ्ख्यया ॥ १७९ ॥ जपेद्दृष्टेस्तु संस्तम्भः समुद्रमपि शोषयेत् ॥ अत्रैव मननाभ्यासाद्विद्वत्ता सूपपद्यते ॥ १८० अङ्गिरास्तु मुनिः प्रोक्तः कालो मृत्युश्च देवते ॥ छन्दोनुष्टुब्नियोगस्तु सुदुर्लभप्रसाधने॥ १८१॥ शत्रूयता प्रहितासि मां ये ताभिमघर्वतः ॥ ततस्तथा त्वदनु यो मततुय्यार्य

श्रितः ॥ १८२ ॥ अङ्गिरास्तु मुनिः प्रोक्तो महादेवोस्य देवता ॥ नियोगच्छन्द उद्दिष्टं नियोगः पापकर्त्तने ॥ १८३ एवं त्वनिकृतास्माभिर्ब्रह्मणा देवि सर्वशः ॥ वधेत माष्विनो गत्वा पापधीनेव नो न हि ॥ १८४ ॥ अङ्गिरास्तु मुनिः प्रोक्तोनुष्टुप्छन्दः प्रकीर्त्तितम् ॥ देवी कृत्या नियोगस्तु शत्रूणां शोषणे मतः ॥ १८५ यथा विद्युद्धतो वृक्ष आमूलादनुशुष्यति ॥ एवं प्रतिशुष्यति स यो मे पापं चिकीर्षति ॥ १८६ ॥ कठो मुनिर्महादेवो देवोनुष्टुबुदाहृतम् ॥ स्त्रिया कृताभिचारादौ यामंयामं पठेदिदम् ॥ १८७ ॥ यथा प्रतिशुको भूत्वा तमेव प्रतिधावति ॥ पापन्तमेव धावतु यो मे पापं चिकीर्षति ॥ १८८ ॥ भृगुरस्य मुनिः प्रोक्तो विश्वे देवास्तु देवताः ॥ छन्दोनुष्टुप् तथा योगो दुर्गस्थाने सुखाय च ॥ १८९ ॥ या नश्चेक्षरणे यश्च निष्ण्यौ निघनाऽऽंसति ॥ देवास्ते सर्वं धुन्वन्तु ब्रह्मवर्म ममाचरम् ॥ १९० ॥ पञ्चर्चस्यास्य वर्गस्य प्रयोगो वक्ष्यतेधुना ॥ हुनेदष्टोत्तरशतं घृताक्ततिलतण्डुलान् ॥ ॥ १९१ ॥ मासाष्टकेन चान्नादिवृद्धिर्भवति भूयसी आयुष्कामो हुनेद्देव्यामृतमष्टोत्तरं शतम् ॥ १९२ ॥ स्वजन्मदिवसेब्देस्मिन्नपमृत्युं जयत्यसौ ॥ सर्वपापक्षयश्चैव चित्तशान्तिः प्रजायते ॥ १९३ ॥ पलाशकुसुमैरष्टशतं हुत्वा द्विजर्षभः ॥ ब्रह्मतेजोमयस्तस्य भाति देहोतिभास्वरः ॥ ॥ १९४ ॥ ब्रह्मवृक्षसमिद्भिस्तु कुसुमैर्वाकुलाक्षतैः ॥ घृताक्तैरष्टसाहस्रं हुत्वा पातकनाशनम् ॥ १९५ ॥ अमुनैवानुवाकेन यः कुर्य्यादनलार्चनम् ॥ सर्वपापक्षयस्तस्य वर्षमध्ये प्रजायते ॥ १९६ ॥ अष्टोत्तरसहस्रं तु मनुं जप्त्वा समापयेत् ॥ मनोरस्यार्णसंख्याकान्देवताप्रीतिकारकैः ॥ १९७ ॥ दिव्यैस्तु भोजयेद्विप्रान्देवताराधनक्षमान् ॥ तदभावे वैदिकांश्च मनुर्वेदमयो यतः ॥ १९८ ॥ तदाम्नायप्रवृत्तोन्यांस्तदभावे तु भोजयेत् ॥ एवं गुरुत्याग उक्तः सर्वतन्त्रेषु गोपितः ॥ १९९ ॥ असिद्धो यः स्वयं शिष्यं कथं सन्तारयिष्यति ॥ देवत्यागं प्रवक्ष्यामि सर्वतन्त्रेषु गोपितम् ॥ २०० ॥ कृतनित्यक्रियः पूजां देवतायाः समाचरेत् ॥ सङ्कल्पन्तु ततः कुर्य्याद्देवत्यागादिपूर्व-

१ इदमुत्तरान्वयि ॥

कम् ॥ २०१ ॥ स्वनामगोत्रं चोच्चार्य्य मनसा संस्मरन्हरिम् ॥ परोक्षं वा समक्षं वा गुरोः सम्प्रार्थयेत्सुरम् ॥ २०२ ॥ त्रैलोक्यनाथ जगदीश महेश्वरस्त्वं मत्कान्तकोटिजठराद्भुतशान्तिचिह्नैः॥ यत्त्वं मयाल्पमतिना द्विभुजादिदेही ध्यातोपराधशतकं मम तत्क्षमस्व ॥ २०३ ॥ त्वं सूर्य्यचन्द्रदहनेशगणेशविष्णुब्रह्मेन्द्रशक्तिनरनागगतस्वरूपः ॥ ध्यातोसि चाल्पविषये परिपूजितोसि तन्मेपराधशतकं भगवन्क्षमस्व ॥ २०४ ॥ देवोपि नो न मनवो न च भारती त्वां जानन्ति मन्दमतिनात्र च किं बहूक्त्या॥ध्यातोल्पकं त्वमपराधकृता मयेदं पापं क्षमस्व करुणाकर दीनबन्धो ॥ २०५ ॥ ध्यानं करोमि मनसा न च वेद्मि रूपं मन्त्राक्षरात्मकमिदं परिभावयामि ॥ रूपं त्वदीयमिति यत्प्रवदन्ति वेदाः सिद्धिर्जपान्न च बहिष्कृतपूजनाद्यैः ॥ २०६ ॥ एवं सम्प्रार्थ्य देवेशं प्रणामैर्दण्डवत्पुनः ॥ मन्त्रमूर्त्यादिकं सर्वं गुरवे तत्समर्पयेत् ॥ ॥ २०७ ॥ तदभावे पूजकाय तद्भक्ताय प्रदापयेत् ॥ कुर्य्याज्जपं द्विगुणितं सर्वत्रापि च तद्दिनात् ॥ २०८ ॥ प्राग्वच्च भोजयेद्विप्रान्गुर्वादींश्चापि तोषयेत् ॥ एवन्तु देवतात्यागो मया तुभ्यं निवेदितः ॥ ॥ २०९ ॥ इति वैदिकमन्त्रेण सुसभ्यानां कलौयुगे ॥ विधिर्मया निगदितः किमन्यच्छ्रोतुमिच्छसि ॥ २१० ॥

इति श्रीमहामायामहाकालानुमते मेरुतन्त्रे श्रीशिवप्रणीते प्रत्यङ्गिरामन्त्रकथनप्रकाशश्चतुर्दशः॥ १४ ॥

---

श्रीदेव्युवाच ॥ मन्त्राः श्रुता मया देव वेदोक्ताः कलिसिद्धिदाः ॥ यन्त्राणिश्रोतुमिच्छामि वाञ्छितार्थप्रदानि तु ॥ १ ॥ श्रीशिव उवाच ॥ वेदान्विना ब्राह्मणानां गतिरन्या न विद्यते ॥ स्मृतिर्गतिर्नृपाणां च पुराणानि विशान्तथा ॥ २ ॥ शूद्राणां चापि तन्त्राणि कलिदोषवशान्मतिः ॥ सर्वेषामुपरि तृष्णा तेन दुःखं प्रजायते ॥ ३ ॥ वेदकर्म्मरतो विप्रः कलौ ब्रह्मा न संशयः ॥ वेदकर्म्मविहीनस्तु विज्ञेयो ब्रह्मराक्षसः ॥ ४ ॥ त्रिकालसन्ध्योपासी च गुरुभक्तिपरायणः ॥ अनध्यायेष्वपाठी च गुरूस्वांश्च कृपावतः ॥ वशीकृत्य

सुसेवेतानिशमध्यायतत्परः ॥ ५ ॥ परान्नभोजरहितत्यक्तशूद्रपरिग्रहः ॥ विना जपं विना पूजां कृतमात्रेण सिध्यति ॥ तत्कार्य्यं वैदिकैर्मन्त्रैर्नान्यस्य तु कदाचन ॥ ६ ॥ अथादौ सम्प्रवक्ष्यामि गायत्रीयन्त्रमुत्तमम् ॥ पद्ममष्टदलं कुर्य्याद्ध्रींकारं कर्णिकास्थितम् ॥ ७ ॥ द्वौद्वौ स्वरौ दिग्विदिशं प्रतिपत्रं समालिखेत ॥ किञ्जल्केषु तदग्रेषु गायत्र्यर्णांस्त्रिशस्त्रिशः ॥ ८ ॥ तद्बहिर्वृत्तयुगलान्तरालेषु समालिखेत॥ककाराद्यांस्तथोमापोज्योतीरसोमृतं ब्रह्म ॥९॥ भूर्भुवः सुवरोमिति गायत्रीयन्त्रमुच्यते ॥ सुवर्णे वापि लोहे वा कृत्वा हस्ते तु बन्धयेत ॥ १० ॥ अनायासाद्भवेदात्तिर्धर्म्मे च रमते मनः ॥ अविच्छिन्नो भवेद्वंशः कीर्त्तिस्तस्य विवर्धते ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि सरस्वत्या महाद्भुतम् ॥ ११ ॥ यन्त्रं मेधाकरंतत्र पद्ममष्टदलं लिखेत् ॥ तत्कर्णिकायां षट्कोणे ससाध्यं प्रणवं लिखेत् ॥ तस्य मध्ये कोणषट्के वाग्भवं बीजमालिखेत्॥ ॥ १२ ॥ यश्छन्दसामृषभो विभुश्छन्दोभ्योध्यमृतात्सम्बभूव ॥ स मेन्द्रो मेधया स्पृणोतु अमृतस्य देवधारणो भूयासम् ॥ १३ ॥ एतस्याः पञ्चवर्णा स्तुलिखेदष्टदलेषु च ॥ दलेषु मन्त्रवर्णान्वा वहिर्वृत्तचतुष्टयम् ॥ १४ ॥ कुर्य्यात्तदन्तर्वीथ्योस्तु द्वयोश्चापि ऋचाद्वयम् ॥ क्रमाल्लेख्यं बहिर्वृत्तं मातृकार्णैः प्रपूरयेत् ॥ १५ ॥ शरीरं मे विचक्षणं जिह्वा मे मधुमत्तमा ॥ मनसः काममाकूतिं वाचः सत्यमसीमहि ॥ १६ ॥ यो देवानां प्रथमं पुरस्ताद्विश्वाधिपो रुद्रो महर्षिः ॥ हिरण्यगर्भं पश्यति जायमानं स नो देवः शुभया स्मृत्या संयुनक्ति ॥ १७ ॥ तद्बाहिर्भूपुरं कृत्वा तत्कोणेषु समालिखेत् ॥ ऐंक्लींसौंह्रीं च बीजानि पटस्वर्णादिनिर्मिते ॥१८॥ शुभे दिने समालेख्य धारये द्यो यथाविधि ॥ मेधावी श्रुतिधारी च नीरोगश्च प्रियंवदः ॥ १९ ॥ बहुश्रुतो भवेत्सोपि क्रमाद्वेदागमानपि ॥ न विस्मरति सर्वज्ञस्त्वभ्यासो भवति ध्रुवम् ॥ २० ॥ अथ त्र्यम्बकं यन्त्रं वक्ष्यते सिद्धिकृत्परम् ॥ आलिख्याष्टदलं पद्मं तारं तत्कर्णिकान्तरे ॥ २१ ॥ तस्योदरे साध्यनाम साधकाभीष्ट कर्म्मयुक् ॥ द्वौद्वौ स्वरौ केशरेषु गलेषु त्र्यम्बकाक्षरान् ॥ २२ ॥ चतुश्चतुरो बाह्ये वेष्टितव्यं जनाक्षरैः ॥ वक्ष्यमाणामृचं साध्यो नामवर्णविभूषि-

ताम् ॥ २३ ॥ तया संवेष्टयेद्यंत्रं लिखेत्तद्वत्तदन्तरा ॥ मुनिर्गृत्समदास्त्रि-ष्टुप्छन्दो रुद्रस्तु देवता ॥ २४ ॥ माता रुद्रे चक्रर्धीमा नमोस्तु भीमनि-ष्कृती वृषभवासद्वती ॥ उतो वीरां अर्प्पय भेषजेभिर्भिषक्तमं त्वा भिषजां श्रृणोमि ॥ २५ ॥ भूपुराग्रेषु ठं बीजं दिक्षु बं बीजमेव च ॥ एतत्त्रैयम्बकं यन्त्रं गोपनीयं प्रयत्नतः ॥ २६ ॥ आयुरारोग्यसौभाग्यधर्मार्थसुखमोक्षदम् ॥ २७ ॥ किमत्र बहुनोक्तेन वाञ्छितार्थं परां श्रियम् ॥ लभते नात्र सन्देहो यन्त्रस्यास्य प्रभावतः ॥ २८ ॥ एकोनपञ्चषट्कोष्ठे फलके ब्रह्मशा-खिनः ॥ तत्र मध्यमकोष्ठे तुससाध्यं ह्रीं समालिखेत् ॥ २९ ॥ पूजयेत्परया भक्त्या घृताक्तांस्तिलतण्डुलान् ॥ मासाष्टकेन हुत्वा तु सिद्धिर्भवति भूयसी ॥ ३० ॥ आयुष्कामो हुनेद्दव्यामृतमष्टोत्तरं शतम् ॥ स्वजन्मदिवसेऽब्देस्मिन्नपमृत्युं जय-त्यसौ ॥ सर्वपापक्षयश्चैव चित्तशान्तिः प्रजायते ॥ ३१ ॥ पलाशकुसुमैरष्ट-शतं हुत्वा द्विजर्षभः ॥ ब्रह्मतेजोमयस्तस्य भाति देहोति भास्वरः ॥ ३२ ॥ ब्रह्मवृक्षसमिद्भिस्तु कुसुमैर्वाकुलाशतैः ॥ घृताक्तैरष्टसाहस्रहोमात्पातकनाश-नम् ॥ ३३ ॥ अनेनैवानुवाकेन यः कुर्य्यादघमर्षणम् ॥ सर्वपापक्षयस्तस्य वर्षमध्ये प्रजायते ॥ ३४ ॥ आदित्याभिमुखो यस्तु ह्यष्टाविंशतिसङ्ख्यया ॥ स्थित्वा जपेत्तदा तस्य गङ्गास्नानफलं भवेत् ॥ ३५ ॥ आत्मार्थं वा परार्थं वा जानुदघ्ने जले जपेत् ॥ सर्वग्रहकृता दोषा न तं पीडयितुं क्षमाः ॥ ३६ ॥ कुंकुमेन्दुसमायुक्तं चन्दनं स्थापयेत्पुरः ॥ ३७ ॥ अष्टोत्तरशतं जप्त्वाभि-षिञ्चेत्कुशकूर्चकैः ॥ रुग्णं तदा विनश्येत्तु ग्रहोपग्रहदूषणम् ॥ ३८ ॥ भूत-प्रेतपिशाचादिभूतबाधादि तत्क्षणात् ॥ अपस्मारादयो रोगो बन्ध्याचेल्लभते सुतम् ॥ कुमारी पतिमाप्नोति कन्यार्थ्याप्नोति कन्यकाम् ॥ ३९ ॥ नाभि-मात्रजले स्थित्वा ह्युदयास्तमये जपेत् ॥ अष्टौसहस्राणि तदा महावृष्टिर्नगै-र्दिनैः ॥ ४० ॥ वञ्जुलस्य समिद्भिस्तु हुनेदष्टसहस्रकम् ॥ दुग्धाक्ताभिर्महावृष्टिः सप्ताहात्तु प्रजायते ॥ घृतेन हवनं कार्यमेवं सर्वसुखाप्तये ॥ ४१ ॥ पंचर्चस्यानु-वाकस्य वक्ष्यमाणस्य देवता ॥ कृत्या छन्दस्त्वनुष्टुप्स्यान्मुनिः प्रत्याङ्गिरा

---

१ चेति शेषः ॥ २ य इति शेषः ॥ ३ नश्येयुरिति शेषः ॥

मतः ॥४२॥ यो मे करालि प्रद्वारे योगारे यो निवेशने॥ये मे केशा नखेनैव रंजने दन्तधावने ॥४३॥ प्रतिसहस्त्रतिधावकुमार इव पितृगृहान् ॥ मूर्द्धानमेषां स्फोटय पदमेषां कुलाजलि ॥ ४४ ॥ एतेन संजस नूनवेमधुनग्ने-सनासः ॥ आविर्धतानुच्छो विधं भूम्नैवस्यमस्यदनं परमस्य ॥४५॥ ये नोरविन्दश्चारितासो अग्ने जहुर्मर्त्यासो अमृतं वदन्तः ॥ तेषां चायू१ंष्यर्चिषा जातवेदः शुष्कं तुष्टं क्षमभिसंदस्व ॥ ४६ ॥ रुद्रस्वरूपे रुद्रेशि कृष्णवर्णे भयंकारि ॥ देविदेवि महादेवि महाशत्रुर्विनश्यतु ॥४७॥ स्पृष्ट्वाश्वत्थस्य वृक्षं तु चाष्टोत्तरशतं जपेत् ॥ शनैश्चरदिने चायुरारोग्यैश्वर्य्यमाप्नुयात ॥ ४८ ॥ संस्मृत्य च मुनिच्छन्दोदेवतादि ततः परम् ॥ न्यासश्चापि प्रकर्त्तव्यो मन्त्राणामिति निर्णयः ॥ ४९ ॥ खं फट् जहि मम कृत्ये विधूमाग्निसमप्रभे ॥ देविदेवि महादेवि ममशत्रुर्विनश्यतु ॥ ५० ॥ आदौ पादेन चार्धेन नामयुक्तेन चाचरेत् ॥ षडङ्गान्यंगुलिन्यासं वक्ष्ये नामान्यनुक्रमात् ॥ ५१ ॥ कृष्णाम्बरे च हृदये सिंहवाहिनि शीर्षके ॥ महाबले शिखायां च महाभैरवि वर्म्मणि ॥ ५२ ॥ सर्वकृत्योच्छेदिनीति नेत्रयोरीरितं सुराः ॥ तथा सर्वपरोन्मुक्तमन्त्रच्छेदिन्यथास्त्रके ॥ ५३ ॥ आत्मरक्षां च दिग्बन्धं भूतशुद्ध्यसुसंस्थितिम् ॥ सर्वाश्च मातृकान्यासान्पूर्वमेव समाचरेत ॥ ५४ ॥ पठेदादौ च गायत्रीं पश्चादेन१म्मनुं जपेत ॥ ततः पठेज्जात२वेदं पुनर्गायत्रिकां पठेत् ॥ ५५ ॥ पुनर्मूलं३ ततस्तामग्निवर्णां तपसेत्यृचम् ॥ गायत्रीपूर्वकं मूलमग्ने त्वं५ पारयेति च ॥ ५६ ॥ पुनस्तामृ६चिकां मूलं विश्वानरो दुर्जुहोति ॥ गायत्रीपूर्वकं मूलं यजनाजिनमित्यृचम् ॥ ५७ ॥ अनेन तु प्रकारेण सहस्रान्नियुतावधि ॥ जपेन्मन्त्रं तारतम्ये कामनाया विचार्य्य च ॥ ५८ ॥ यंयं कामयते कामं तंतं प्राप्नोति सर्वथा ॥ प्रयोगस्य विधौ

---

१ त्र्यम्बकं यजामहे इति॥२ जातवेदसे सुनवाम सोमम् इति॥३ मूलं त्र्यम्बकम् इति॥४ तामग्निवर्णां तपसा ज्वलन्तीं वैरोचनीं कर्म्मफलेषु जुष्टाम्॥ दुर्गां देवीं शरणमहं प्रपद्ये सुतर सितरसे नमः। ५ त्वं पारयानव्य इति मन्त्रः ६ तामग्निवर्णाम् इति ॥

कामः सिद्ध्यत्येव न संशयः ॥ ५९ पञ्चर्चस्यानुवाकस्य प्रयोगाः पूर्वमीरिताः ॥ पञ्चर्चभिश्च पञ्चाङ्गं पञ्चम्या नरस्त्रकम् ॥ ६० ॥ सर्वत्रापि जपस्यादौ चाष्टोत्तरशतं जपेत् ॥ इमामं न वै सोपि बाध्यते मदनादिकैः ॥ ६१ ॥ उत्कामदन्तु स्तोमाः कृणुष्वोषे आद्रिवः ॥ अवब्रह्म द्विषो जहि ॥ ६२ ॥ स्वेच्छादयोत्र दुष्टाश्च धर्मविघ्नं प्रकुर्वते ॥ स्वास्थ्येन जपतस्तस्य शत्रुनाशोस्ति तत्र च ॥ ६३ ॥ ग्रन्थिकर्णे विरूपाक्षि स्तम्बस्तनि महोदरि ॥ जहि शत्रूंस्त्रिशूलेन कुप्यस्व पि शोणितम् ॥ ६४ ॥ अङ्गिरास्तु मुनिश्छन्दोनुष्टुप्कृत्या च देवता ॥ मस्तरोगनाशार्थे नियोगो नन्दिवृद्धये ॥ ६५ ॥ कुबेरन्ते मुखं रौद्रं नन्दिम्नन्दिमावह ॥ द्वारं मृत्युं भयं क्रोधं विषं नाशय नोक्षरे ॥ ६६ ॥ पारथ द्वयेनापि कृष्णाम्बरादिनामभिः ॥ युक्तैश्च पूर्वतत्कुर्य्यादंगुल्यादिषडङ्गकम् ॥ ६७ ॥ धार्य्यं पूर्ववदेव स्यादात्मरक्षादिकं तथा ॥ गायत्र्यादिमतैस्तत्तु ागवत्संदर्भितं मतम् ॥ ६८॥ जपेद्दशशतं चाष्टसहस्रं कार्य्यगौरवात् ॥ अवश्यं जायते कार्य्यसिद्धिः पुण्या गिरां त्वियम् ॥ ६९ ॥ विक्षिप्तता मनोर्दोषेगुरुदोषे कदर्थिता ॥ आधिव्याधी देवदोषे तस्मात्तं परिवर्जयेत् ॥ ७० ॥ पूर्वमुक्तो मनुत्यागो गुरुत्यागस्तथोच्यते ॥ मन्त्रो यद्देवतायाः स्यात्तिथौ तस्यां भवेद्भुवि ॥ ७१ ॥ गुरुत्यागस्य संकल्पं कुर्य्यात्तद्दोषपूर्वकम् ॥ गुर्वन्तरं करोमीति नरं वा देवमेव च ॥ ७२ ॥ राशिकूटेन संशुद्धं देवताष्टकमध्यतः ॥ कुर्य्यादेकं गुरुं तत्र पूर्वाभावे परं परम् ॥ ७३॥ आपो हि दक्षिणामूर्तिः सूर्य्यश्चन्द्रो हुताशनः ॥ मन्त्रावरणदेवाश्च जातिदेवः कुलेश्वरः ॥ ७४ । देशदेव इमे त्वष्टौ नरो वा लक्षणान्वितः ॥ गुरोर्युग्मं पूजयित्वा प्रणमेद्दण्डवत्क्षितौ ॥ ७५ ॥ देवतानाम सम्प्रोच्य द्रव्यं तन्नामतो यजेत् ॥ त्रिपर्णस्य पलाशस्य प्राग्रे मुष्टेस्तु दक्षिणे ॥ ७६ ॥ प्रादेशप्रमिते चात्र कुशानास्तीर्य्य मूर्द्धनि ॥ तोयपूर्णं घटं प्राच्यां दुग्धपूर्णन्तु पश्चिमे ॥ ७७ ॥ उत्तरे तु सुरापूर्णं क्रमादेतत्प्रकीर्तितम् ॥ प्राग्गुरोश्चापि चैतन्यं प्रविष्टं नूतने गुरौ ॥ इति सञ्चिन्त्य शिष्यस्तु वेदिकां कारयेत्सुधीः ॥ ७८ ॥ तत्र मन्त्राक्षरोपेतं यच्च कोणचतुष्टयम् ॥

विहाय देवीमावाह्य सम्पूज्य हवनंचरेत् ॥ ७९ ॥ आज्येन मूलमन्त्रेण सम्पातं यन्त्रकें क्षिपेत् ॥ अष्टोत्तरशतं पश्चात्तद्यन्त्रं निखनेद्भुवि ॥ ८० ॥ गृहग्रामादिराष्ट्राणां रक्षार्थं तत्रतत्र च ॥ नक्षत्रग्रहराशीनां लोकेशानां बलिं हरेत् ॥ ८१ ॥ विहिता यत्र रथं वर्धन्ते तत्र सम्पदः ॥ क्षुद्रग्रहमहारोग-चौर[illegible]रीसृपाः ॥ अमुना विलयं यान्ति विधिना नात्र संशयः ॥ ८२ ॥ जा[illegible]वेदसमन्त्रस्य यन्त्रमेतदुदीरितम् ॥ वैदिकैरेव कर्तव्यमन्यथा दुःखदं भवेत् ॥ ८३ ॥ जातवेदसमन्त्रस्य [१]परीतस्य ये सुराः ॥ अंशैः पादाः समुद्दिष्टास्तेषां यन्त्रं वदाम्यहम् ॥ ८४ ॥ नवकोष्ठयुतं कुर्य्याच्चतुरस्रं तु मण्डलम् ॥ ससन्ध्यां विलिखेन्मध्यां मध्यकोष्ठे त्वधः स्थितात् ॥ ८५ ॥ कोष्ठात्क्रमेण मन्त्रस्य लिखेत्तदाष्टकं ततः ॥ प्रादक्षिण्येन तद्बाह्ये वृत्तयुग्मान्तरे लिखेत् ॥ ८६ ॥ मातृकार्णैः सुसंवेष्ट्य बहिर्भूपुरमालिखेत् ॥ भुवि चाखमिदं यन्त्रं भूतरोगनिवारणम् ॥ ८७ ॥ रक्षायुःकीर्तिधीश्रीदं लिखेत्स्वर्णादिपत्रके ॥ धारयेद्बाहुमूलेच कण्ठे वा मस्तकेपि वा ॥ ८८ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि गायत्र्यादित्रिशक्तिकम् ॥ यन्त्रं सर्वार्थदं तत्र पद्ममष्टदलं लिखेत् ॥ ८९ ॥ तस्य मध्ये तु षट्कोणं तन्मध्ये साध्यसंयुतम् ॥ लिखेत्तारं ततः कुर्यात्सप्तव्याहृतिवेष्टितम् ॥ षट्कोणेष्वेवताराद्दि शिवपञ्चाक्षरस्य तु ॥ ९० ॥ एकैकमक्षरं लेख्यं तदग्रेषु च शुद्धिः ॥ पूर्वार्धंश्चैव गायत्र्याः प्रथमे पत्रके लिखेत् ॥ जातवेदसमन्त्रस्य पूर्वार्धन्तु द्वितीयके ॥ ९१ ॥ त्र्यम्बकस्य तु पूर्वार्धे तृतीये तु दले लिखेत् ॥ ॐ ह्रीं ठं वं कं समिति ह्रौं यं मं ततः पचम् ॥ ९२ ॥ सोहं वं ठं नमः प्रोच्य शिवायेति पदं वदेत् ॥ माया लं येति सं कण्ठं तारो माया ध्रुवस्तथा ॥ ९३ ॥ एकोनत्रिंशदर्णोयं मन्त्रः कोष्ठे चतुर्थके ॥ त्र्यम्बकस्योत्तरार्धन्तु पञ्चमेथोत्तरार्धकम् ॥ ९४ ॥ जातवेदसमन्त्रस्य षष्ठेथो ह्युत्तरार्धकम् ॥ गायत्र्या, सप्तमे लेख्यमोमापोज्योतिरीत्यपि ॥ ९५ ॥ गायत्र्यास्तु शिरस्त्वेतद्भवेत्सप्तदशाक्षरः ॥ लिखेदष्टमपत्रे तु बहिर्वृत्तद्वयं लिखेत् ॥ ९६ ॥ तदन्तरे मातृकार्णैर्वेष्टयेद्भूपुरं बहिः ॥ भूपुरस्य तु कोणेषु कूटं चिन्तामणिं लिखेत् ॥

१ इदमुत्तरान्वयि ॥

॥ ९७ ॥ अग्निर्ब्रह्मा वृषो निद्रा पुनरक्षिगतं तथा ॥ शक्रं ततः परं चन्द्रैः कूटं चिन्तामणेर्महत् ॥ ९८ ॥ केशरेषु द्वन्द्वशश्च स्वरान्प्रागादितो लिखेत्॥ शताक्षरमनोर्यन्त्रं भवेदीदृशमेव च ॥९९॥ धारयेद्योयमारोग्यधराधान्यधनादिकम् ॥ लब्ध्वा च निश्चलां लक्ष्मीं स जीवेच्छरदां शतम्॥ १००॥ताम्रादिपत्रेथालिख्य जप्त्वा चाष्टोत्तरं शतम् ॥ हुत्वा घृतेन तावत्तु कृत्वा सम्पातमेव च ॥ १०१॥तावद्भूयो जापित्वा च पुरग्रामाकरादिषु ॥स्थापितं यन्त्रमेतत्तु गोसत्यारोग्यपुष्टिदम्॥ १०२॥कण्ठे वा दक्षिणे बाहौ धारितं यन्नरैः सदा ॥ कुर्य्याच्च रक्षणं तेषां वैरिव्याघ्रादिभीतितः॥ १०३॥अथातः सम्प्रवक्ष्यामि वारुणं यन्त्रमुत्तमम् ॥ अष्टपत्रस्य पद्मस्य षट्कोणं कर्णिकान्तरम् ॥ कृत्वा षट्कोणमध्ये तु ससाध्यं प्रणवं लिखेत् ॥ १०४ ॥ वरुणाय नमः प्रोक्तो वरुणस्य षडक्षरः ॥ एकैकमक्षरं चास्य कोणषट्के लिखेन्मनोः ॥१०५॥ केशरेषु द्वन्द्वशश्च स्वरान्प्रागादितो लिखेत ॥ पूर्वपत्रे ध्रुवं दत्त्वा स्ववर्णान्पञ्च संलिखेत् ॥ १०६ ॥ द्वितीये क्षितिषु क्षिप्तं तोवर्णांश्च तृतीयके ॥ विस्मृत्याशं चतुर्थे तु लिखेद्वरुणमुमोच तत् ॥ १०७ ॥ अवोचन्पञ्चमे षष्ठे आदिमे रूप इत्यपि॥यूयं प्रातः सप्तमे तु अन्ते स्वस्तिभिः सदा नः॥ १०८ ॥ बहिर्वृत्तद्वयं कृत्वा तयोर्मध्ये लिखेद्ध्रुवम् ॥ ऋणमोचनमेतत्तु यन्त्रं सर्वसमृद्धिदम् ॥ १०९ ॥ सर्वरक्षाकरं वश्यं शत्रुसङ्घविनाशनम्॥ किमत्रबहुनोक्तेन वाञ्छितार्थप्रदं नृणाम्॥ ॥ ११० ॥ यदद्यकच्चेति ऋचा यन्त्रं वक्ष्यामि भाग्यदम् ॥ कर्णिकायां साध्यगर्भं तारं पत्रेषु चाष्टसु ॥ १११ ॥ यदद्य प्रथमे कच्च द्वितीये नत्रवृत्रह ॥ चतुर्थे नुदगाग्रे तु अभिसूर्य्याथ षष्ठके ॥ ११२ ॥ शर्वन्तु सप्तमे त्विन्द्रमष्टमे च वशे लिखेत् ॥ बाह्ये वृत्तद्वयं कृत्वा मातृकार्णास्तदन्तरे ॥ वेष्टयेद्भूपुरेणाथ वश्यसौभाग्यकारकम् ॥ सुवर्णरत्नधान्यादिसर्वसम्पत्करं परम् ॥ ११४ ॥ बाहुमूले गले वापि धारयेत्स्वर्णवेष्टितम् ॥ गणेशस्य प्रियं चैतत्तथा वाग्विभवप्रदम् ॥ ११५ ॥ मन्त्रमादौ प्रवक्ष्यामि महासम्पत्तिकारकम् ॥ वैदिकं विष्णुगृहिणी भक्तानां तु विशिष्यते॥ ११६॥ चतुर्दलं लिखेत्पद्मं कर्णिकायां लिखेत्ततः॥तारगर्भसाध्यनाम दलेष्वेवेत्पूर्चं तथा

स्वाग्रादि प्राग्दक्षिणेन लिखेद्दलचतुष्टये ॥ ११७॥ वामदेवो मुनिश्छन्दस्त्रिष्टुब्देवो बृहस्पतिः ॥ अभीष्टसिद्धये चास्य मन्त्रस्य विनियोजनम् ॥ ११८॥ श्वापित्रे विश्वदेवाय वृष्णे यज्ञैर्विधेम नमसा हविर्भिः ॥ बृहस्पतेस्तु प्रजा वीरवन्तो वयं स्याम पतयो रयीणाम् ॥ ११९॥ तद्बाह्येष्टदले दिक्षु यूयमस्माद्दचोङ्घ्रयः एवेन्द्राग्नीत्यृचः पादा लेख्यास्तत्र विदिक्षु च ॥ १२०॥ गौतमो मुनिराद्याया-यास्त्रिष्टुप्छन्दोऽग्निर्देवता ॥ इन्द्राग्नी देवते त्रिष्टुप्छन्दश्चन्द्रो मुनिर्मतः॥ १२१॥ यूयमस्मान्नवत वस्यो अच्छानि रंहतिभ्यो मरुतो मृगृवानाः ॥ जुषध्वं नो हव्यदाति जयत्रा वयं स्याम पतयो रयीणाम् ॥ १२२ ॥ एवेन्द्राग्निपपिवी-त्सा सूतस्य विश्वास्मभ्यं सञ्जपतं जनामि॥ तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदि-तिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः ॥ १२३ ॥ तद्बाह्येष्टदलं कृत्वा क्रमात्तत्र तु संलिखेत्॥ त्वं सोमेतिऋचो वर्णाचोन्पञ्चाङ्गाब्धिशरर्तवः॥ १२४॥ वेदाः षट् षट् तदग्रेषु प्रजायतं ऋचस्तथा ॥ लिखेद्वर्णान्वेदपञ्चसततसप्तगवेन्द्रषट् ॥ १२५ ॥ अग्निर्मे गौतमः सोमस्त्रिष्टुबग्न्यादयो मताः ॥ हिरण्यगर्भकस्त्रिष्टुम्मुन्याद्यास्त-दग्निमे ॥ १२६ ॥ त्वं सोम प्रचिकित्तो मनीषा त्वं रचिष्ठमननेषि पन्थाम तवप्रणीति पितरो न इन्द्रो देवोघरत्नमभजन्त धीराः ॥ १२७ ॥ प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परिता बभूव ॥ यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्यामपतयो रयीणाम् ॥ १२८ ॥ वृत्तद्वयं बहिष्कृत्य तयोर्मध्ये च मातृकाः ॥ लेख्याः सबिन्दुकास्तस्य वेष्टनाकारतां गताः ॥ १२९ ॥ तद्ब-हिश्चैव कोणेषु श्रीं—श्रीं—बीजमिदं लिखेत् ॥ बाहुमूलेथ वा कण्ठे मूर्ध्नि वा यदि धारयेत ॥ १३० ॥ गोगजाश्वादिर्महिषसस्यसम्पद्व-सुन्धराम् ॥ लभते पुत्रपौत्रादिशालिनीं सन्ततिं तदा ॥ १३१ ॥ अथा-न्यत्सम्प्रवक्ष्यामि यन्त्रं लक्ष्मीप्रदं सुराः ॥ षट्कोणमध्ये साध्यस्य नामयुक्प्रणवं लिखेत् ॥ १३२ ॥ लिखेत्कोणेषु श्रीबीजं बहिरष्टदलं लिखेत् ॥ तत्केशरेषु विलिखेद्द्वन्द्वशश्च स्वरान्क्रमात् ॥ १३३ ॥ या लक्ष्मीः सिन्धुसम्भूता भूतधेनुः पुरावसुः ॥ या मा विश्वावसुर्देवी सदा नो जुषतां गृहे ॥ १३४ ॥ चतुरश्चतुरो वर्णान्दलेष्वस्या ऋचो लिखेत् ॥ बहिर्वृत्तद्वयं कृत्वा तयोर-

न्तश्च वेष्टयेत् ॥१३५॥ अश्वदायेति ऋचा च वृत्तमेकं च तद्बहिः ॥ अकारादिक्षकारान्तवर्णैर्मध्यं प्रवेष्टयेत् ॥ १३६ ॥ तद्बहिश्चतुरस्रं च श्रीबीजं कोणगं लिखेत् ॥ श्रियश्चैतत्प्रियं यन्त्रं स्थापितं यत्र मन्दिरे ॥ १३७ ॥ धनैर्धान्यैश्च विविधैरन्यैश्चाश्वगवादिभिः ॥ आपूर्य्य सततं चैव तत्रैव रमते रमा ॥ १३८ ॥ अथ यन्त्रं प्रवक्ष्यामि भारत्याः सर्वकामदम् ॥ षट्कोणमध्ये प्रणवं साध्यनामाभिगर्भितम् ॥ १३९ ॥ पूर्वादिकोणषट्के च ऐं क्लीं सौं विलिखेत्क्रमात्॥सौं क्लीं ऐमथ तद्बाह्ये लिखेदष्टदलं पुनः ॥१४०॥ वक्ष्यमाणऋचोः पादांल्लिखेत्प्रतिदले ततः ॥ सो मो मुनिर्देवता वात्रिष्टुप्छन्दः प्रकीर्तितम् ॥ १४१ ॥ यद्वाग्वदन्त्यपि चेतनानि राष्ट्री देवानां निषसाद मन्दा ॥ चतस्र ऊर्ज्जन्दुदुहे पयांसि क्वश्चित्स्विदस्याः परमञ्जगाम ॥ १४२ देवीं वाचमजनयन्त देवास्तां विश्वरूपाः पशवो नुदन्ति ॥ सा नो मन्द्रेषमूर्ज्जं दुहाना धेनुर्वागस्मानुपष्टुतैतु ॥ १४३ ॥ वृत्तानां पञ्चकं बाह्ये कृत्वा वीथीचतुष्टयम् ॥ ऋषिर्दीर्घतमास्त्रिष्टुप्छन्दो वाणी च देवता ॥ १४४ ॥ चत्वारि वाक्परिमिता पदानि तानि विदुर्ब्राह्मणा ये मनीषिणः ॥ गुहा त्रीणि निहितानेङ्गयान्ति तुरीयां वाचो मनुष्या वदन्ति ॥ ॥ १४५ इमामृचं चाद्यवीथ्यां द्वितीयायां लिखेत्ततः ॥ विश्वामित्रो मुनिस्त्रिष्टुप्छन्दो वाग्देवता मता ॥ १४६ ॥ ससर्परीरमतिं बाधमाना बृहन्मिमाय यमदग्निदत्ता ॥ आसूर्य्यस्य दुहिता ततान्श्रवो देवेष्वमृतमजुर्या ॥ ॥ १४७ ॥ लिखेदिमामृचं पश्चात्तृतीयायां लिखेदथ ॥ प्रागवन्मुन्यादिसर्वासां नियोगो वास्तुसिद्धये ॥ १४८ ॥ ससर्परीरभरत्तूयमेभ्योऽधिश्रवः पाञ्चजन्यासु कृष्टिषु ॥ सापक्ष्याऽनव्यमायुर्दधाना यां मे पलस्तियमदग्नयो ददुः ॥ १४९ ॥ मातृकार्णैश्चतुर्थीन्तु वेष्टयित्वाथ तद्बहिः ॥ भूपुरस्तस्य कोणेषु वाग्भवं बीजमालिखेत् ॥ १५० ॥ एवं स्वर्णादिके पत्रे लिखेद्वा यन्त्रमुत्तमम् ॥ तत्र वाचं समावाह्य पूजयित्वा विधानतः ॥ १५१ ॥ ऋष्यादिकं तु संयोज्य धारयेच्च शुभे दिने ॥ कवीनां तार्किकाणां च चक्रवर्त्ती भवेदसौ ॥ १५२ ॥ वचां पिष्ट्वा लिखेदेतन्ना-

स्वाग्रादिसन तु ॥ घुसरिल्लोलकल्लोलनिभा निर्याति भारती ॥ १५३ ॥ बृहद्ये कद्दचो यन्त्रं वक्ष्ये वश्यकरं परम् ॥ अष्टपत्रस्य पद्मस्य कर्णिकान्तु संल्लिखेत् ॥ १५४ ॥ षट्कोणं तस्य मध्ये तु ससाध्यं ह्रीं समालिखेत् ॥ षट्सु पूर्वादि सुकोणेषु अंश्रीं ह्रीं क्लीं क्रमेण च ॥ १५५ ॥ ग्लौंगंबीजानि संलिख्य पद्मस्य प्रथमे दले ॥ श्रीविद्याप्रथमं कूटं कएईल च ह्रीमिति ॥ १५६ ॥ लिखेद्द्वितीयपत्रे तु यदद्य कच्च वृत्रहन् ॥ श्रीविद्यायां द्वितीयन्तु लिखेत्कूटं तृतीयके ॥ १५७ ॥ असकदलह्रीमिति तदेतत्परिकीर्त्तितम् ॥ उदगा अधिसूर्य्येति लिखेत्पत्रे चतुर्थके ॥ १५८ ॥ श्रीविद्यायास्तृतीयं तु कूटं पञ्चमपत्रके ॥ सकलह्रीमिति प्रोक्तं लिखेत्षष्ठदले पुनः ॥ १५९ ॥ सर्वन्तदिन्द्र ते वशे सप्तमे गणपतये ॥ वर वरद इदं लेख्यं ततश्चाष्टमपत्रके ॥ १६० ॥ सर्वजनं मे वशमानय स्वाहेति सँल्लिखेत् ॥ तद्बाहिर्वृत्रयोरन्तर्वेष्टयेन्मातृकाक्षरैः ॥ १६१ ॥ ततो भूपुरकोणेषु श्रींह्रींक्लींग्लौमिति क्रमात् ॥ लिखेद्धेमपटादौ च हेमसूच्या वशङ्करम् ॥ ॥ १६२ ॥ अथ संवादसूक्तस्य यन्त्रं वक्ष्ये गणेशितुः ॥ चतुर्दले तु कमले कर्णिकायाञ्च षड्दलम् ॥ १६३ ॥ ससाध्यं प्रणवन्तत्र मध्यकोष्ठे च संलिखेत् ॥ अं श्रींह्रींक्लींग्लौंगञ्च ततः पूर्वदले लिखेत् ॥ १६४ ॥ गणपतये याम्ये तु वर वरदेति संल्लिखेत् ॥ तृतीये सर्वजनं मे(ऽधौ) वशमानय स्वाहा ॥ १६५ ॥ तद्बाह्येष्टदलं कुर्य्यादर्धमर्धमृचां लिखेत् ॥ तत्र संवादसूक्तस्य तदिदानीं निगद्यते ॥ १६६ ॥ सतसिद्युवरोवरोवृषं नग्ने विश्वान्यर्य्यआ ॥ रन्तस्य देव समिध्यसमनो वसून्या भव ॥ १६७ ॥ संगछध्वं संवदसध्वं सं वो मनांसि जानताम् ॥ देवा भागं यथा पूर्वे शञ्जानाना उपासते ॥ १६८ ॥ समा नो मन्त्राः समितिः समाना ॥ समानं मनः सहवितमेषां समनिमात्रं अभिमन्त्रये वः ॥ १६९ ॥ समानेन वो हविषा जुहोमि समानीव ञ्याकूतिः समाना ॥ हृदयानि वः समानि वस्तु वो मनो यथावत्सुसहा सति ॥१७०॥ एतत्संवादसूक्तस्य मुनिः संवर्त्तनः स्मृतः ॥ अग्निर्देवस्तथाजायसञ्ज्ञानमितरासु च ॥ १७१ ॥ छन्दस्त्रिष्टुप् तृतीयाया अन्यासां

स्यादनुष्टुभम् ॥ वृत्तत्रयन्तु तद्वाह्ये कृत्वीथिद्वयं लिखेत् ॥ आद्यवीथ्यां जातवेदसे सुनवेत्यृचा पुनः ॥ १७२। आवेष्टयेन्मातृकार्णैः परवीथीन्प्र-वेष्टयेत् ॥ तद्वहिर्भूपुरं कृत्वा तत्र पात्तुष्टयम् ॥ १७३ ॥ कोणेषु च विकोणेषु लिखेद्यच्च तदुच्यते ॥ १७४ भद्रं नो अपि वाताय मनः मरु-तामोनसे स्वाहा ॥ इन्द्रो विश्वस्य राते ॥ शन्नोभवद्विपदे शञ्चतुष्पदे ॥ ॥ १७५ ॥ सङ्घातभेदे मर्त्यानां स्त्रीकरणमुत्तमम् ॥ जगत्सम्मोहनं वश्यं कान्तिसौभाग्यपुष्टिदम् ॥ १७६ गायत्रीभुवनेश्वर्य्या योगयन्त्रमथो-च्यते ॥ लिखेदष्टदलं मध्ये तत्र कोणेषुँल्लिखेत् ॥ १७७ ॥ रमणीयत्रिको-णानि षट्के षड्गुरुमार्गतः ॥ षट्कोणा तु तन्मध्ये साध्यं साधककर्म्मयुक् ॥ १७८ ॥ ह्रींबीजमालिख्य विलोमाभिः प्रवेष्टयेत् ॥ त्रिभिर्व्याहृतिभिश्चैवं मन्त्रं मध्येथऽ पुनः ॥ त्रिभिर्व्याहृतिभिश्चैवं लि-खेन्मनुमथो सुधीः ॥ १७९ ॥ कोणद्वादशदले खंईबीजद्वयं तथा ॥ त्रिकोणानां बहिश्चापि लिखेत्पार्श्वद्वं पुनः ॥ १८० ॥ प्रादक्षिण्येन गायत्र्या देवमातुर्विलोमतः ॥ वर्णद्वयं बिन्दुरलिखेदथ लिखेत्पुनः ॥ १८१ ॥ शनिबीजं त्रिकोणानामग्रे तारयुतं ग्रंत् ॥ श्रृंखलाकाररेखाभिरेकैकेनान्त-राणि च ॥ १८२ ॥ भवत्येवं षड्बीजं श्रृंखलाद्वितयं बहिः ॥ वृत्तद्वयं लिखेत्तत्र वीथ्या लेख्यं विलोमतः १८३ ॥ प्रत्यक्षरं बिन्दुयुतं जातवेद-समन्त्रकम् ॥ वृत्तद्वये तु तद्बाह्ये वीथीचतुष्टयम् ॥ १८४ ॥ मातृकार्णा-नाद्यवीथ्यां सबिन्दूंन्वै लिखेत्क्रमात् द्वितीयायां विलोमेन कुर्य्याद्वाह्येष्टको-णकम् ॥ १८५ ॥ कोणाष्टकेषु लेखेच्चिन्तामणिककूटकम् ॥ तस्य बाह्ये त्रिशूलानि कुर्यात्षोडशसंख्यया ।८६ ॥ एतद्वेदविदां यन्त्रं सर्वकार्य्यप्र-सिद्धिकृत् ॥ सर्वसौभाग्यजननं स्तुविनाशकृत् ॥ १८७ ॥ भुवनेशीम-न्त्रपूजा यन्त्रेस्मिश्च परा भवेत् ॥दिकैस्तेन कर्तव्या पूजा यन्त्रस्य सिद्धये ॥ १८८ ॥ तद्विधिं सम्प्रवक्ष्ये स्वर्णादिकृतपत्रके ॥ एतद्यन्त्रं वैदिकेन सुलेख्यं कुंकुमादिभिः ॥ १८ ॥ यन्त्रमन्ये यजेद्देवीं कुर्य्याद्वीथित्रयं

---

१ तिल्लादेशाभाव आर्षः ॥

बहिः ॥ आद्यायां तु षडङ्गानि पद्यां दिक्चतुष्टयम् ॥ १९० ॥ हृल्लेखां गगनां रक्तां पूजयेच्च करालिकाम् ॥ तृतीयवीथ्यां ब्राह्माद्याः पूजनीया दिगष्टके ॥ १९१ ॥ तद्बाह्ये षोडदलं कृत्वा तत्र यजेदिमाः॥करालीं विकरालीं च धूम्रां सरस्वतीं श्रियम् ॥९२॥ दुर्गामुखीं तथा लक्ष्मीं श्रुतिस्मृतिश्रियो ह्यपि॥श्रद्धां मेधां मतिं कान्ति चार्च्या तस्य बहिः पुनः॥१९३॥ द्वात्रिंशद्दलपद्मं तु कृत्वा तत्र यजेदिमाः। विद्याह्रीपुष्ट्यः प्रज्ञा सिनीवाली तथा कुहूः ॥१९४॥रुद्रवीथ्याप्रभानन्दादायिनी सिद्धिदा शुभा॥कालरात्रिर्भद्रकाली महारात्रिः कपालिनी ॥ १९५ ॥ विकृतिर्दण्डमुण्डिन्यौ दुःखण्डा च शिखण्डिनी ॥ निशुम्भशुम्भमथनी महासुरमर्दिनी ॥१९६ ॥ इन्द्राणी चैव रुद्राणी शङ्करार्धशरीरिणी॥नारी नारणी चैव त्रिशूलिन्यपि पालिनी ॥ अम्बिका ह्लादिनी चैव द्वात्रिंशच्छक्तयस्त्विमाः ॥ १९७ ॥ तद्बाह्ये तु चतुष्षष्टिदलं कृत्वा यजेदिमाः ॥ पिङ्गाक्षीं विशालाक्षीं समृद्धिं वृद्धिमेव च ॥ १९८ ॥ श्रद्धां स्वाहां स्व मायां निद्रां चैव वसुन्धराम् ॥ त्रिलोकधात्रीं गायत्रीं सावित्रीं त्रिदशेश्वरीम्॥ १९९ ॥ सुरूपां बहुरूपां च स्कन्दमात्रच्युतप्रिये ॥ विमलां मलां पश्चादरुणीमारुणीं तथा ॥ २०० ॥ प्रकृतिं विकृतिं सृष्टिं स्थितिं संहृतिमेव च ॥ २०१ ॥ सन्ध्यां च मातृकां हंसीं सतीं सोमगां पराम् ॥ देवमातृभगवत्यौ देवकीं कमलासनाम् ॥ २०२ ॥ त्रिमुखींसप्तकमुखीं सुरासुरविमर्दिनीम् ॥ लम्बोष्ठीं चार्धमुण्डिकां बहुशिश्नां कृशीम् ॥ २०३ ॥ रथरेखा शशिरेखां परां गगनवेगिनीम् ॥ क्षिप्रां च पातालवेगां च मदनातुराम् ॥ २०४ ॥ अनङ्गां च तथानङ्गमानङ्गमेखले ॥ अनंगकुसुमां विश्वरूपां दैत्यभयङ्कराम् ॥ २०५ ॥ क्षोभ्यां सत्यवादां च तन्द्रारूपा शुचिव्रताम् ॥ वरदां चापि विश्वेशीं तद्बाह्ये दिगीश्वरान् ॥ २०६ ॥ तदायुधानां पूजाग्रे प्रोक्तोयं पूजने विधिः ॥ इच्छतं काममाप्नोति तान्त्रिकोप्यनयेज्यया ॥ २०७ ॥ अथ वक्ष्ये जगद्दुर्गायन्त्रमभीष्टदम् ॥ कृत्वा चाष्टदलं पद्मं कर्णिकायां लिखेद्ध्रुवम् ॥ २ ॥ तस्य मध्ये तु ह्रींकारं

तन्मध्ये साध्यनामकम् ॥ क्रमाद्दलेषु सुलिखेत्तारंह्रीमीं तथैव च ॥ २०९ ॥ दुर्गायै नम एतस्य मन्त्रस्यैकैकमक्षरम् ॥ बहिर्वृत्तत्रयं कृत्वा पूर्ववीथ्यां समालिखेत् ॥ २१० ॥ जातवेदसमन्त्रस्य मातृकार्णान्द्वितीयके ॥ तद्बहिश्चतुरस्रं च दौर्गं यन्त्रमिदं स्मृतम् ॥ २११ ॥ अपस्मार-महाभूतक्षुद्रग्रहनिवारणम् ॥ नृणां विजयदं स्त्रीणां पुत्रदं नात्र संशयः ॥ ॥ २१२ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि यन्त्रं श्रीसूक्तजं परम् ॥ कृत्वाष्टपत्रं कमलं श्रीं बीजं कमलान्तरे ॥ २१३ ॥ साध्यनामान्वितं लेख्यं दले-ष्वष्टसु संलिखेत् ॥ कर्दमेत्यादिपञ्चर्चामर्द्धमर्द्धं दश त्वथ ॥ २१४ ॥ श्रिये जनः श्रिय आनिर्याय श्रियञ्च यो जरितृभ्यो ददाति ॥ श्रियं वसाना अमृ-तत्वमायां भवन्ति सत्या समधास्मै तद्गो ॥ २१५ ॥ श्रिय एवेति ऋचोस्तत्र चतुर्थार्द्धं समालिखेत्॥श्रीश्च ते इति मन्त्रस्य द्वयोः स्यादर्धमर्धकम् ॥२१६॥ वृत्तद्वयं तद्बहिश्च कुर्यात्प्रथमवीथिकाम्॥वक्ष्यमाण ऋचा चाद्या मातृकार्णैश्च तत्परा ॥ २१७ ॥ यः शुचिः प्रयतो भूत्वा जुहुयादाज्यमन्वहम् ॥ श्रियः पञ्चदशर्चं च श्रीकामः सततं जपेत् ॥ २१८ ॥ तद्बहिश्चतुरस्रं च लिखेच्छ्री-बीजमालिखेत् ॥ तस्य कोणचतुष्केषु श्रियो मन्त्रं तु वैदिकम् ॥ २१९ ॥ मया यन्त्रमिदं प्रोक्तं धारयेद्यो यथाविधि ॥ पुत्रारोग्यधराधान्यधनगोसस्यशा-लिनीम् ॥ लब्ध्वातिबहुलां लक्ष्मीं जीवेच्च शरदां शतम् ॥ २२० ॥ ताम्र-पात्रे लिखित्वेदं जपेदष्टोत्तरं शतम् ॥ अष्टाविंशतिसंख्याकं हुत्वा सम्पातसेचि-तम् ॥ २२१ ॥ संस्थाप्याङ्गणमध्ये तु लक्ष्मीमावाह्य पूजयेत् ॥ परिवार-युतां लक्ष्मीं बलिदानेन तोषयेत् ॥२२२॥ एवंकृते तु तत्स्थाने वर्धन्ते सर्व-सम्पदः ॥ पुत्राः स्त्रियश्च सुहृदो भृत्या धान्यं रथा गजाः ॥ गावश्च वृषभाः सौख्यं त्वसंख्यन्तत्र जायते ॥ २२३ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि यन्त्रं पौरुष-सूक्तजम् ॥ षट्कोणकर्णिकामध्ये तारं साध्यसमन्वितम् ॥ २२४ ॥ सहस्रा-रहुंफडिति वर्णैकैकं दलेदले ॥ स्वाग्रादिप्रादक्षिण्येन लिखेत्तत्रैव सन्धिषु ॥ ॥२२५॥ षण्णाममन्त्रान्स्वाहान्तानचक्रायेति चादिमः ॥ विचक्राय सुच-क्राय धीचक्राय चतुर्थकः ॥ २२६ ॥ सञ्चक्रायेति च ज्वालाचक्रायेति च

षष्ठकः ॥ चतुर्दलं तु कमलं तद्बहिष्केशरेषु च ॥२२७॥ चतुर्दिक्षु क्रमाल्लेख्यं क्लींकृष्ण क्लीं तथाक्षरम्॥वासुदेवस्य मन्त्रस्य त्रीणित्रीण्यक्षराणि च ॥२२८॥ तत्पत्रेषु लिखेन्मन्त्रं वदेत्तारं तथा नमः ॥ भगवते वासुदेवायेत्यणुर्द्वादशाक्षरः ॥ ॥ २२९ ॥ तद्बाह्येष्टदलं पद्मं केशरेष्वस्य सँल्लिखेत् ॥ एकैकमक्षरं तारो नमो नारायणाय च ॥ २३० ॥ दलेषु चतुरो वर्णान्नारसिंहमनोर्लिखेत् ॥ श्रीं ह्रीं श्रीं जयलक्ष्मीति प्रियाय नित्यमुदितम् ॥ २३१ ॥ मनसे लक्ष्मीसितार्धदेहायेति वै वदेत्॥श्रींह्रींश्रीं नमो मन्त्रस्स्यान्नृसिंहस्य रदाक्षरः ॥२३२॥ तद्बहिः षोडशदलं केशरेषु क्रमाल्लिखेत् ॥ तारं नमो भगवते महासुदर्शनाय च ॥ २३३ ॥ हुंफट् षोडशवर्णोयं दलेषु क्रमतो न्यसेत् ॥ ऋचः पुरुषसूक्तस्य बहिर्वृत्तद्वयं चरेत् ॥ २३४ ॥ तदन्तरालवीथ्यान्तु मातृकार्णैः प्रवेष्टयेत् ॥ सबिन्दुकैर्बहिस्तस्य भूपुरं तच्चतुर्ष्वपि ॥ २३५ ॥ कोणेषु सुलिखेत्तारं यन्त्रं पौरुषमुच्यते ॥ सर्वपापहरं पुण्यं पुत्रायुष्कान्तिकीर्त्तिदम् ॥ २३६ ॥ यन्त्रं हैयङ्गवीनेन लिप्त्वा पुरुषसूक्तकम् ॥ अष्टोत्तरशतं जप्त्वा त्वृतुस्नातां तु भोजयेत् ॥ २३७ ॥ तद्यन्त्रनवनीतं च गर्भं धत्ते तदाङ्गना ॥ सुपुत्रो जायते वाग्मी सर्वागमविशारदः ॥ एवं हैयङ्गवीनं च विषार्त्ते सन्निपातिके ॥ २३८ ॥ शूले क्षये च पाण्ड्वादौ नीरुग्भक्षणतो भवेत् ॥ कुष्ठोपकुष्ठरोगेषु व्रणे भग्ने भगन्दरे ॥ फिरङ्गशीतलाद्येषु लेखनात्सुखमाप्नुयात् ॥ ॥२३९॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि क्षेत्रस्य च पतेरिति ॥ पञ्चर्चस्य च सूक्तस्य यन्त्रं सर्वार्थसिद्धिदम् ॥ २४० ॥ कृत्वाष्टदलपद्मस्य कर्णिकायां तु षड्दलम् ॥ तन्मध्ये प्रणवं लेख्यं स्तस्मिन्हुं बीजमालिखेत् ॥ २४१ ॥ साध्यनाम च बीजे लिखेत्कोणेषु चैककम् ॥ सहस्रारहुंफडस्य चक्रमन्त्रस्य चाक्षरम् ॥ २४२ ॥ षण्नाममन्त्रान्पूर्वोक्ताँलिखेत्षट्कोणसन्धिषु ॥ चतुरश्चतुरो वर्णाँल्लिखेदष्टदले पुनः ॥ २४३ ॥ वराहमन्त्रस्यान्ते तु पत्रके वर्णपञ्चकम् ॥ तारो नमो भगवते वराहरूपमुच्यते॥ ङेन्तं व्याहृतयः प्रोक्ताः पतये पदमुच्चरेत् ॥ २४४ ॥ भूपतित्वं मे देहीति दापयान्तेऽग्निगेहिनी ॥ त्रय-

१ इदमुत्तरत्र संबध्यते ॥

स्त्रिंशद्वर्णकोयं वराहस्य मनुः स्मृतः ॥ २४५ ॥ तद्बाह्ये षोडशदले चार्धा-मर्धां लिखेदृचम् ॥ ऋचस्ता अत्र वक्ष्यामि सावधानतया शृणु ॥ २४६ ॥ क्षेत्रस्य पते मधुमन्तमूर्मिं धेनुरिव पयो अस्मासु धुक्ष्व॥ मधुश्च्युतं घृतमिव सुपूत-मृतस्य नः पतयो मृडयन्ति ॥ २४७ ॥ क्षेत्रस्य पतिना वयं हितेनेव यजा-यसि ॥ गामश्वं योषयित्नवा सनो मूलतीदृशे ॥ २४८ ॥ मधुमतीरोषधीर्द्याव आपो मधुमन्नो भवत्वन्तरिक्षम् ॥ क्षेत्रस्य पतिर्मधुमान्नो अस्य रिष्यं अन्वेनं चरेम ॥ २४९ ॥ शुनं वाहाः शुनं नाराः शुनं कृषतु लाङ्गलम् ॥ शुनं वरत्रा वध्यन्तां शुनमष्ट्रामुदिङ्गया ॥ २५० ॥ शुनासीराविमां वाचं जुषेथां यदि विचक्रथुः ॥ पयो यमस्ते न मामुपसिञ्चतम् ॥ २५१ ॥ अर्वाची सुभगे भव सीते वन्दामहे त्वा ॥ यथा न सुभगा स य-था न सुफलासति ॥ २५२ ॥ इन्द्रसीतां गृह्णातु तां पूषा नियच्छतु ॥ सा नः पयस्वती दुहामुत्तरां समाम् ॥ २५३ ॥ शुनं नः फाला विकृषन्तु भूमिं शुनं कीनाशा अभियन्तु वाहैः ॥ शुनं पर्जन्यो मधुना पयोभिः शुनासीरा शुनमस्मासु धत्तम् ॥ २५४ ॥ क्षेत्रस्य तु पतिर्देवो वामदेवो मुनिः स्मृतः ॥ पुलस्त्यर्षिरनुष्टुप् च त्रिष्टुप्छन्दोस्ति सूक्तके ॥ २५५ ॥ बहिर्वृत्तत्रयं कृत्वा तत्र वीथीद्वयं भवेत् ॥ ग्लौंबीजेनाद्यवीथ्यां तु वेष्टयेन्मातृकार्णकैः ॥ ॥ २५६ ॥ द्वितीयं भूपुरं तस्य बाह्ये कोणेषु ग्लौमिति ॥ लिखेद्दिक्षु च हुंबीजं यन्त्रमेतच्छुभे दिने ॥ २५७ ॥ ताम्रपत्रे समालेख्य स्वर्णसूच्या यथाविधि ॥ स्थापितं भवने द्वारे क्षेत्रे वा नगरेपि वा ॥ २५८ ॥ देशे वा तत्र वर्धन्ते दिनशः सर्वसम्पदः ॥ गजाश्वधेनुमहिषवृषोष्ट्राश्वतरादिभिः ॥ ॥ २५९ ॥ धनधान्यधराशस्यवासोरत्नविभूषणैः ॥ आह्लादयन्ति विभवै-रन्यैश्च स्यात्समागमः ॥ २६० ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि यन्त्रमागावसू-क्तकम् ॥ षट्कोणे सुलिखेत्कामबीजं साध्यसमन्वितम् ॥ २६१ ॥ एकैक-मक्षरं लेख्यं षट्कोणेषु ध्रुवो नमः ॥ कृष्णायेति लिखित्वाग्रे कुर्य्यात्पद्मं चतु-र्दलम् ॥ २६२ ॥ वृत्तेषु सुलिखेत्क्लीं च कृष्ण क्लीमिति वर्णकान् ॥ वासु-देवमनोवर्णा दले लेख्यास्त्रयस्त्रयः ॥ २६३ ॥ तद्बहिर्दिग्दलं कृत्वा पद्मं

तत्केशरेषु च ॥ गोपीजनवल्लभाय स्वाहा मन्त्रं दशाक्षरम् ॥ २६४ ॥ आलिख्य तस्य पत्रेषु नखार्णार्णं द्वयं द्वयम् ॥ माया रमाथ गोपाल ततो विषधराय च ॥ २६५ ॥ वासुदेवाय हुंफट् च स्वाहा विंशार्णको मनुः ॥ तद्बहिः षोडशदलं कृत्वा तत्र लिखेत्स्वरान् ॥ २६६ ॥ केशरेष्वथ पत्रेषु वक्ष्यमाणा ऋचो लिखेत् ॥ अर्धमर्धं प्रतिदलं रमणीयं यथा भवेत् ॥ २६७॥ आ गावो अग्मन्नुत भद्रमकरन्त्सीदन्तु गो एरणयन्त्वस्मे ॥ प्रजावतीः पुरुरूपा इहस्युरिंद्राय पूर्विरुषसो दुहानाः ॥ २६८ ॥ इन्द्रो यज्वने पृणतेश्च शिक्षत्फलं मे ददाति नस्त्वं मुषायति ॥ भूयोभूयो रयिमिदस्य वार्धयन्नभिन्ने खिल्ये निदधाति देवयम् ॥ २६९ ॥ नता नशन्ति तस्करो नासामामित्रो व्यथिरादधर्षति ॥ देवांश्च याभिः स च ते ददाति च ज्योगिताभिः स च ते गोपतिः सह ॥ २७० ॥ न ता अर्वा रेणुकाकाटोअस्तु तेन संस्कृत्तत्र मुच्यन्ति ता अभि ॥ उरुगायमभयं तस्य ता अनुगावो मर्त्तस्य विचरन्ति यज्वनः ॥ २७१ ॥ गावो भगो गाव इन्द्रो मे अच्छानागवः सोमस्य प्रथमस्य भक्षः ॥ इमा या गावः सजनास इन्द्र इच्छामीधृदा मनसा चिदिन्द्रम्॥ २७२यूयं गावो मे दयथा कृशं चिदश्रीरंचित्कृणुथा सुप्रतीकम्॥भद्रं गृहे कृणुथ भद्रवाचो बृहद्वो वय उच्यते सभासु॥२७३॥प्रजावतीः सूयवसं रिसन्तीः सुप्रयाणे पिबन्तीः ॥ मावस्तेन ईशतमाघशंसः पारवोहेतीरुद्रस्यवृज्याः ॥ ॥ २७४ ॥ उपेदमुपपर्चनमाशुगो यूयमृच्यताम् ॥ उप ऋषभस्य रेतः स्युपेन्द्र तव वीर्य्ये ॥ २७५ ॥ वृत्तद्वयं बहिष्कृत्यतद्वीथ्यां कादिकाँल्लिखेत् ॥ अकारान्तांस्तद्बहिश्च भूपुरं सम्यगालिखेत् ॥ २७६ ॥ कोणेषु ग्लौं समालिख्य लिखेद्भूरिति दिक्षु च ॥ गोपालयन्त्रमेतद्धि विधिना स्थापितं गृहे ॥ २७७ ॥ तत्र गावः पयस्विन्यः सवृषाश्च निरामयाः ॥ पीनोध्न्यो बहुरूपाश्च विशालाश्च भवन्ति हि ॥ २७८ ॥ धनधान्यधरारत्नशालिनी तस्य मन्दिरे ॥ लक्ष्मीः कीर्तिः स्थिरा भूत्वा निवसेत्सततं तदा ॥ ॥ २७९ ॥ अथान्यद्वक्ष्यते यन्त्रं गवादेर्बहुभूतिकृत् ॥ मध्येष्टदलपद्मस्य ससाध्यं प्रणवं लिखेत् ॥ २८० ॥ आ गाव इति सूक्तस्य एकैकां च दले

ऋचम् ॥ वृत्तद्वयं बहिष्कृत्य तद्वीथ्यां मातृवेष्टनम् ॥ २८१ ॥ तद्बहिश्चतुरस्रं च कुर्य्याद्यन्त्रमिदं गृहे ॥ स्थापितन्तत्तु गोश्वादिवृषैः पूर्णं सदा भवेत् ॥ ॥ २८२ ॥ अथ वक्ष्ये दिनेशस्य यन्त्रं रोगनिवारणम् ॥ षट्कोणमध्ये तुलिखेत्साध्यं सप्रणवं ततः ॥ २८३ ॥ कोणेषु तारं ह्रींसोहंहंसोवर्णान्क्रमाल्लिखेत् ॥ चतुर्दलन्तु कमलं तद्बहिः केशरेषु च ॥ २८४ ॥ ह्रींह्रींहंसश्च पूर्वादौ लिखेत्पत्रेषु सर्वतः ॥ उद्यन्नद्य ऋचः पादा लेख्यास्तद्बाह्यतो लिखेत्॥ ॥ २८५ ॥ अष्टपत्रं तु कमलं केशरेषु लिखेत्क्रमात् ॥ घृणिः सूर्यस्तथादित्य इदमेकैकमक्षरम् ॥ २८६ ॥ शुकेषुमेत्यादि ऋचः प्रापयेके दले दले ॥ वृत्तद्वयन्तु तद्बाह्ये वीथ्यां मातृप्रवेष्टनम् ॥ २८७ ॥ तद्बहिर्भूपुरास्त्रेषु अंह्रीं ह्रींसः इदं लिखेत् ॥ एतद्यन्त्रं तु सूर्य्यस्य नाशयेत्सकलान्ग्रहान् ॥ ॥ २९८ ॥ तेजो लक्ष्मीं च भोगञ्च प्रतापं वर्द्धयेद्धृतिम् ॥ एतद्गोमयलिप्तायां लिखेदारक्तचन्दनैः ॥ २८९ ॥ धरायां ताम्रसूच्या तु सम्यगावाह्य पूजयेत्॥ पूजान्ते च विशिष्टार्घ्यं प्रकल्प्यास्मै प्रदीयते ॥ २९० ॥ कुष्ठयक्ष्मादिशान्त्यै च क्षुद्ररोगविनाशनम् ॥ इदं यन्त्रं ताम्रपात्रे लिखित्वा स्थापितं गृहे ॥२९१॥ विधिवत्पूजयन्नित्यं हन्यात्कुष्ठमुखान् गदान् ॥ अपस्मारं विस्मृतिं च रोगांश्चैवाभिचारिकान् ॥ २९२ ॥ सुवर्णपत्रे चालिख्य तैलमध्ये विनिःक्षिपेत् ॥ सहस्रसंख्यं प्रजपेदुद्यन्नद्यमिति त्र्यृचम् ॥ २९३ ॥ तत्राशक्तशरीरस्य कुष्ठरोगविनाशनम् ॥ इदमेव लिखेद्यन्त्रं नवीने नवनीतकम् ॥ २९४ ॥ अष्टोत्तरशतं जप्त्वा त्र्यृचं निष्कास्य भक्षयेत् ॥ गदिनो रोगशान्तिः स्यात्सत्यमेतन्न संशयः ॥ २९५ ॥ अथान्यत्सम्प्रवक्ष्यामि गायत्रीसौरमन्त्रयोः ॥ यन्त्रं समस्तरोगाणां नाशनं सूर्य्यवल्लभम् ॥ २९६ ॥ वृत्तं कृत्वा तु तन्मध्ये ससाध्यं प्रणवं लिखेत्॥ बहिस्तस्य त्रिकोणं तु मन्त्रागारेति संलिखेत्॥ २९७॥ एकैकमक्षरं कोणे बहिर्वृत्तं पुनर्लिखेत् ॥ यक्षराजायेति तत्र लिखेत्पञ्चाक्षराणि तु ॥ २२८ ॥ बहिस्तस्य तु षट्कोणे लिखेदेकैकमक्षरम् ॥ सहस्रारं हुंफडिति अष्टकोणे ततो लिखेत् ॥ २९९ ॥ घृणिं सूर्य्यं तथादित्यं लिखेदेकैककोष्ठके ॥ पत्राग्रेषु लिखेच्छ्रीह्रींमिति बीजद्वयं पुनः ॥ ३००॥ सौरं यन्त्रमिदं

प्रोक्तमायुरारोग्यवृद्धिदम् ॥ वन्ध्यानां पुत्रजननं स्त्रीणां सौभाग्यदायकम्॥ ॥ ३०१ ॥ राज्ञां विजयदं सम्यग्रोगिणां रोगनाशनम् ॥ किं बहूक्तेन विधिना धृते हस्ते फलप्रदम् ॥ ३०२ ॥ तथैव संप्रवक्ष्यामि सारात्सारतरं परम् ॥ यद्बुद्ध्वा च मया प्रोक्तं सारमाथर्वणस्य च ॥ ३०३ ॥ शाबरं रूपमास्थाय पृथ्वीं पर्य्यटता मया ॥ कलौ लोका भविष्यन्ति सर्वे कामार्थ-साधकाः ॥ ३०४ ॥ असद्गुरूणां तन्मन्त्रैर्दृष्टैर्वा पुस्तकादिषु ॥ समयाचार-विभ्रष्टा विक्षिप्तास्ते च निर्धनाः ॥ ३०५ ॥ अधर्मेण भविष्यन्ति भूताक्रा-न्तास्तथापरे ॥ अभिचारिककृत्यादिरोगैर्ग्रस्तमहाग्रहैः ॥ तेषामर्थे मया देवा-यन्त्रं तु प्रकटीकृतम् ॥ ३०६ ॥ मृदङ्गसदृशं कुर्य्याच्छीर्षं प्रेतस्य वर्जितम्॥ घ्राणादिकं चतुर्भिश्च इन्द्रियैस्तस्य मध्यगम् ॥ ३०७ ॥ तिर्य्यग्रेखां प्रकुर्वीत मुण्डमित्या बहिर्गताम् ॥ पार्श्वद्वयेपि कर्तव्यमग्रयोः शूलकद्वयम् ॥ ॥ ३०८ ॥ शूलविस्तारतुल्या च तदधस्तूर्ध्वरेखिका ॥ मुण्डो हस्ताभिधः प्रोक्तो मध्यं कुर्य्याच्च शूलवत् ॥३०९॥ गुह्येन्द्रियस्थले कुर्य्यात्पश्चाकारान्तु रेखिकाम्॥त्रिशूलौ पीठिकायुक्तौ पादयोस्तत्स्थले न्यसेत्॥३१०॥एवं कृत्वा प्रेतरूपं बीजान्येतानि संलिखेत् ॥ शीर्षे हस्ते दक्षबाहावूर्ध्वमष्टदलं लिखेत् ॥ ॥ ३११ ॥ रेखार्धभागमुण्डन्तु ङेन्तं डं नं लिखेत्तथा ॥ वामबाहूपरिष्टाच्च हामो इत्यक्षरद्वयम् ॥ ३१२ ॥ अर्धे भागे तु मुण्डस्य सस्मिवाष्टाश्च संलिखेत् ॥ शिखा कार्य्या हृदस्थानं तिर्य्यगूर्ध्वं तु सं सदा ॥३१३॥ लिखे-त्ततो मध्यभागे पार्श्वयोश्च लिखेदिदम् ॥ क्रमान्नव विभागेषु अलीयं प्रथमा भवेत् ॥ ३१४ ॥ भूबीजं च द्वितीये स्यादहीनञ्च तृतीयके ॥ सराहीयं चतुर्थन्तु विहकस्तत्तु पञ्चमम् ॥ ३१५ ॥ त्रैयाक इति षष्ठं स्यात्तथा नाम्बु-दसप्तमम् ॥ त्रैयाक इत्यष्टमञ्च नस्तरं न तथान्तिमम् ॥ ३१६ ॥ बहिः स्थाने प्रकर्त्तव्यं द्विकाद्यं कोष्ठपट्ककम् ॥ ऊर्ध्वपंक्तौ क्रमाल्लेख्यं पङ्क्त्राद्वि-तयं तथा ॥ ३१७ ॥ अधःपंक्तौ सप्तगोष्ठौ पेश्यां लेख्यं त्रसे सदा ॥ पेश्या-बहिर्मम हृदपेश्यधस्तात्तु दक्षिणे ॥ ३१८ ॥ पादपार्श्वे साध्यनाम वामे तन्मन्त्रमालिखेत् ॥ एतद्यन्त्रं दले लेख्यं मस्या तन्नीलकर्पटे ॥ ३१९ ॥

सम्यक्संवेष्टयेत्सा तु वर्त्तिभूता कुशाभिधा ॥ आदित्यवासरे सायं गोमयेनो-पलेपयेत् ॥ ३२० ॥ स्थाने श्वेताक्षतैस्तत्र पद्ममष्टदलं लिखेत् ॥ तत्कर्णि-कायां प्रथमं पूजयेच्च गणाधिपम् ॥३२१॥ तस्यैव दक्षिणे पार्श्वे क्षेत्राधिपति-मर्चयेत् ॥ पत्रेष्विन्द्रादिकानर्चेत्कर्णिकायां तु दीपिकाम् ॥ ३२२ ॥ सम्य-ग्न्यसेत्तदूर्ध्वन्तु स्थापयेत्तैलपात्रकम् ॥ तैलन्तु कुडवोन्मानं तिलानां तत्र ति-ष्ठति ॥३२३॥ तादृशे मृण्मये पात्रे धातुजे वा प्रकल्पयेत् ॥ पूजयित्वा दीपि-कादि सायं तत्रोपवेशयेत् ॥ ३२४ ॥ तद्दर्शयन्निष्टयन्त्रं ध्यायेद्दीपं विलो-कयन् ॥ दीपाधिष्ठातृदेवस्य तुष्ट्यै सावरणस्य च ॥ ३२५ ॥ दद्यादामान्न-मर्कन्तु वैदिकाय कुटुम्बिने ॥ यावच्च प्रज्वलेद्दीपः पश्येत्तावदतन्द्रितः॥ ३२६॥ देवदोषे समुत्पन्ने दीपो वदति स स्वयम्॥यत्किञ्चित्त्वरितं कार्य्यं शान्तिर्भवति निश्चितम् ॥ ३२७ ॥ दोषा यदा राक्षसादेः शरीरे सत्यवादिनि ॥ तदा तदैव कर्तव्यं रोगी सुखमवाप्नुयात् ॥ ३२८ ॥ अभिचारिककृत्यादौ दीप-कम्पः प्रजायते ॥ कम्पते तु क्षणेनैव महांश्चापि क्षणेक्षणे ॥ ३२९ ॥ एकेन भानुवारेण क्षुद्रदोषः प्रणश्यति ॥ भानुवारद्वयं कृत्याकृतदोषविनाशनम् ॥ ॥ ३३० ॥ साधकेनाप्यचरितं त्रिभिर्दोषः क्षयं व्रजेत् ॥ मन्त्रभक्षणदोषोथ चतुर्दीपैर्विनश्यतु ॥ ३३१ ॥ कुगुरुप्राणमन्त्रेण षड्भिर्दोषो विनश्यति ॥ रोगोपि सप्तदीपेन नश्येदेतन्महाद्भुतम् ॥ ३३२॥ त्रिनिमितं स्वयं गच्छे-द्वेधे वातायने त्रयः ॥ अभ्यन्तरे कालिमवाच्छिद्रं वापि प्रदृश्यते ॥ ॥ ३३३ ॥ त्रिशिखो वा द्विवर्णो वा निस्तेजा यदि जायते ॥ पूर्णमा-युर्विनिर्देश्यं स रोगी नैव जीवति ॥ ३३४ ॥ सिद्धयन्त्रमिदं प्रोक्तं तांत्रि-काणां तु सिद्धिदम् ॥ स्वधर्म्मत्यागिनां नैव यन्त्रं कार्य्यं तु पण्डितैः॥ ६३५॥ ब्राह्मं धर्म्ममुपातिष्ठेत्तस्य नास्ति पुरस्क्रिया ॥ स्वयं यंत्राणि मन्त्राश्च सिद्ध्य-न्त्यत्र न संशयः ॥ ३३६ ॥ अष्टादशपुराणानि व्यासेन रचितानि तु ॥ गौतमेन प्रणीतो यो न्यायोसौ धर्म्मसाधनम् ॥ ३३७ ॥ भविष्यन्ति कलौ नानाकुतर्का वेदनाशकाः ॥ तानधीत्य द्विजो भूयः प्रेतो वा ब्रह्मराक्षसः ॥ ॥ ३३८ ॥ मीमांसा सेश्वरा या तु पुरुषार्थप्रसाधिका ॥ निरीश्वरा कर्म्म-

परा भोगं स्वर्गं प्रयच्छति ॥ ३३९ ॥ स्मृतयोष्टादश प्रोक्ताः पंक्तौ चाद्यः पराशरः ॥ शङ्खश्च लिखितो व्यासो वशिष्ठः कश्यपो मुनिः ॥ ३४० ॥ अगस्त्ययमहारीता दिवोदासः प्रजापतिः ॥ पैठीनसिश्च भगवाञ्जमदग्निश्च गौतमः ॥ ३४१ ॥ भारद्वाज इमे प्रोक्ता धर्म्मशास्त्रप्रवर्त्तकाः॥ मतभेदस्तथा तेषां विज्ञेयो दशभेदतः ॥ ३४२ ॥ क्वचित्कालविभेदेन विद्यते तु मुनेर्वचः॥ तस्माज्जातिं कुलं देशं ज्ञात्वा धर्म्मं समादिशेत् ॥ ३४३ ॥ शिक्षा कल्पो व्याकरणं निरुक्तं छन्द एव च ॥ गणितं संहिता होरा त्रिविधं ज्यौतिषं तथा ॥ ३४४ ॥ वेदाङ्गानि षडेतानि वेदाश्चत्वार एव च ॥ चतुर्दश तु वै यद्य-त्प्रोक्तन्धर्म्मसाधनम् ॥ ३४५ ॥ सिद्धे यस्मिंस्तु सिद्धाश्च ऋष्याद्याः स्वयमेव हि ॥ एतद्विरुद्धं वर्णानाम्भवेन्नो धर्म्म साधनम् ॥ ३४६ ॥ आयु-र्वेदो धनुर्वेदो गान्धर्वो नीतयस्तथा ॥ शिल्पविद्याश्च गणितं शकुनं चेति सप्त च ॥ ३४७ ॥ प्रोक्तानि चार्थशास्त्राणि यथोक्ताचरणाद्ध्रुवम् ॥ यद्दर्शित-म्भवेत्तत्र समर्थं पुरुषार्थकृत ॥ ३४८ ॥ साहित्यमागमो वाजीकरणं काम-चारणम् ॥ चतुर्धा कामशास्त्रं स्यात्प्राप्त्यर्थं गुरुशासनतः ॥ ३४९ ॥ धर्म्मा-र्थाद्यविरोधेन भवेत्तत्कामसाधनम् ॥ विना गुरुं विना बुद्धिं पुरुषार्थः प्रणश्यति ॥ ३५० ॥ योगशास्त्रञ्च वेदान्तं द्वयम्मोक्षस्य साधनम् ॥ अन्ये ये प्राकृता ग्रंथा धर्म्माभासाश्च ते सुराः ॥ ३५१ ॥ अस्मिन्कलियुगे घोरे शिश्नोदर-परायणे ॥ कश्चिदेकः कोटिमध्ये सर्वकर्म्मविवर्धनः ॥ ३५२ ॥ बुधो धर्म्मपरो भूयात्तदर्थमिदमुच्यते ॥ उत्पादयेत्सुपुत्रन्तु कुलदीपं तदुच्यते ॥ ॥ ३५३॥ गर्भाधानाख्यसंस्कारं कुर्वीत प्रथमार्तवे॥ सीमन्तोन्नयनं कार्य्यं तथा पुंसवनं स्मृतम् ॥ ३५४॥ एते त्रयस्तु संस्कारा ब्राह्मगर्भत्वकारकाः ॥ एतैरेव तु यो जातः संस्कृतो ब्रह्मबीजतः ॥ ३५५ ॥ जातकर्म्मादयस्तस्य चान्न-प्राशनमेव च ॥ चत्वारस्ते बालकस्य संस्कारा ब्राह्मसिद्धये ॥ ३५६ ॥ व्रतबंधः समावर्तो वेदपाठो विधानतः ॥ एते त्रयस्तु संस्काराः कौमारे ब्रह्म-कारकाः ॥ ३५७ ॥ एवं यो दशसंस्कारैः संस्कृतो दशकर्म्मकृत ॥ स एव

१ विधानमिति शेषः । २ ब्रह्मतेजोवर्द्धनाय ॥

ब्राह्मणो ज्ञेयो मंत्राः सर्वेपि तद्वशाः ॥ ३५८ ॥ तद्दृष्ट्वा राक्षसा वीरा म्लेच्छा बाधितुमक्षमाः ॥ कर्म्माणि दश ते दृष्ट्वा पलायन्ते तु दूरतः ॥ ॥ ३५९ ॥ दशप्रकारान्यतरप्रकारेण धनार्जनम् ॥ निर्वाहाय कुटुम्बस्य प्रथमं कर्म्म चोच्यते ॥ ३६० ॥ याज्यस्य याजनं कृत्वा साधयेत्प्रथमं धनम् ॥ पाठयित्वा योग्यशिष्यं द्वितीयं पारितोषिकम् ॥ ३६१ ॥ दुर्दातारं च दुष्कालं दुर्दानं दुष्टभूमिकाम् ॥ हित्वा प्रतिग्रहं कुर्य्यात्तृतीयन्धनसाधनम् ॥ ३६२ ॥ दायादक्रमतः प्राप्तं सञ्चितं तत्तुरीयकम् ॥ एतद्वंशे तु यद्दिनं तल्लब्धं पञ्चमं स्मृतम् ॥ ३६३ ॥ अर्थोपायास्तु ये प्रोक्तास्साधितं तैस्तु षष्ठकम् ॥ सन्मंत्रस्योपदेशेन यल्लब्धन्तत्तु सप्तमम् ॥ ३६४ ॥ कृषिं यथोक्तमार्गेण कुर्य्यात्तच्चाष्टमं मतम् ॥ कालानुगुणतः प्राप्तं नवमं पारितोषिकम् ॥ ३६५ ॥ विशिष्टं पूर्वपूर्वं तु दानं स्याद्द्विगुणं भवेत् ॥ धनार्जनाख्यं कर्म्मैतत्प्रथमं परिकीर्त्तितम् ॥ ३६६ ॥ पोष्यकर्म्म द्वितीयं स्यादादौ स्वीये कलेवरे ॥ ततः पतिव्रता भार्य्या माता जनयिता ततः ॥ ३६७ ॥ भ्रातरो गुरवः पुत्राः कन्या मातामहस्तथा ॥ श्वश्रूश्चायं पोष्यवर्गो विपत्तौ यत्र लभ्यते ॥ ३६८ ॥ एकांशमंशान्समीकृत्य भागन्तेभ्यः प्रदापयेत् ॥ अत्र पुत्रस्य यो भागस्तस्य पोष्यसमीकृतिम्[1] ॥ कृत्वा विप्रेण रज्येत ब्राह्मण्यान्न तु हीयते ॥ ३६९ ॥ नित्यस्नानं तृतीयं स्यादस्नायी शूद्रतां व्रजेत् ॥ दशस्नानानि चैतानि गुणेनोपचितानि च ॥ आदौ वर्णतरुस्नानं साम्यजं च द्वितीयकम्॥ ३७० ॥ हैमोदकं च मात्रं च भौमाख्यं च विभूतिमत् ॥ गायत्रं चापि वायव्यं कायिकं मानसं तथा ॥ ३७१ ॥ सन्ध्याकर्म्म चतुर्थं स्याद्दशधा तत्प्रकीर्तितम् ॥ प्रागुक्तविधिना पूजा मुद्रा दर्शनपूर्विका ॥ अष्टाधिकसहस्रं च जपो मुख्यमिदं स्मृतम् ॥ ३७२ ॥ द्व्येकयोरेवमाचारात्सन्ध्याभेदत्रयं मतम् ॥ सार्चना मुद्रिकायुक्ता तथा चान्या विमुद्रिका ॥ ३७३ ॥ अष्टोत्तरसहस्रन्तु तथा चाष्टोत्तरं शतम् ॥ अष्टाविंशतिरष्टौ वा जपे भेदचतुष्टयम् ॥ जपाभावे न सन्ध्यार्घ्यं गा-

---

१ इदमुत्तरान्वयि ॥

श्रीपर्णादिकृते पीठे पूजयेत्कुंकुमादिना॥ यन्त्रमेतद्बुधः कुर्य्याच्चतुरस्रत्रयं शुभम्॥ ॥ १९ ॥ तन्मध्येष्टदले कार्यः पूजापीठं गणेशितुः ॥ तत्र पूर्वोक्तविधिना मण्डपादि प्रकल्पयेत् ॥ २०॥ पृथिव्यन्तं समुद्रादि लिखेदिक्षुरसात्मकम् ॥ रत्नद्वीपादि च परं त्वचोंद्दिष्टदलात्मके ॥ २१॥ अर्चयेत्कर्णिकायां तु देवं पत्रेषु वै क्रमात् ॥तीव्रा च ज्व[illegible]ली नन्दाभोगदा कामरूपिणी ॥ २२ ॥ उग्रा तेजस्वती सत्या नवमी विघ्ननाशिनी॥आद्या मध्यातथा चान्तमनाः पीठमनुं शृणु ॥२३॥ॐ सर्वशक्तिकमलासनाय नम इत्यमुम् ॥ पूर्वादिषु चतुर्दिक्षु यजेत्पीठं गणाधिपम्॥ २४॥गणेशानं गौरवर्णं रक्तं च गणनायकम् ॥ गणक्रीडं नीलवर्णं केशरेषु ततो यजेत् ॥२५॥ अग्नीशासुरवायव्यमध्ये चान्तरदिक्षु च ॥ मन्त्रस्यास्य षडङ्गानि ध्यातव्यास्ताश्च देवताः ॥ २६ ॥ तुषारस्फटिकश्यामनीलकृष्णारुणत्विषः ॥ वरदाभयधारिण्यः प्रधानतनवः स्त्रियः ॥ २७ ॥ वक्रतुण्डैकदंष्ट्रौ च महोदरगजाननौ ॥ लम्बोदराख्यविकटौ विघ्नराड्धूम्रवर्णकौ ॥ ॥ २८ ॥ पूर्वादिषु दलेष्वर्च्या ब्राह्म्याद्याश्च दलाग्रतः ॥ ध्यानं तासां प्रवक्ष्यामि प्रोक्तं सव्यक्रमेण तु ॥ २९ ॥ ब्राह्मी वर्णसिता ध्येया मृगचर्म्मविभूषिता॥अक्षमालामयोदण्डं कुण्डिकां दधती करैः ॥३०॥ त्रिशिखं परशुं हस्तैर्डमरुं नृकपालकम् ॥ बिभ्राणां चन्द्रगौराङ्गीं महेशीं भावयेच्छुभाम् ॥ ॥ ३१ ॥ गुणं खट्वाङ्गकं दण्डमंकुशं दधतीं करैः ॥ इन्द्रगोपारुणां ध्यायेत्कौमारीं करुणालयाम् ॥३२॥ अरिशङ्खकपालानि घण्टां च करपङ्कजैः॥ बिभ्राणां वैष्णवीं ध्यायेन्नीलमेघसमप्रभाम् ॥ ३३ ॥ तोमरांकुशवज्राङ्कविद्युद्युक्तकराम्बुजाम् ॥ इन्द्राणीं भावयेन्मन्त्री नीलवर्णां सुभूषणाम् ॥ ॥ ३४ ॥ हलं च मुसलं दोर्भिर्दधानां खड्गखेटकौ ॥ वाराहीं भावयेच्छक्तिमञ्जनाचलसंनिभाम् ॥ ३५ ॥ धारयन्तीं शूलखेटौ कपालं नृशिरः करैः ॥ चामुण्डां शोणवर्णां च मुण्डमालायुतां स्मरेत् ॥ ३६ ॥ स्वर्णाभामक्षमालां च बीजपूरकपालके ॥ पद्मं च दधतीं हस्तैर्महालक्ष्मीं स्मरेत्सुधीः ॥ ३७ ॥ चतुरस्रत्रयान्तस्थवीथिद्वन्द्वे समर्चयेत् ॥ दिक्पालांश्च तदस्त्राणि पूजाविघ्नहरस्य तु ॥ ३८ ॥ यश्चैवं पूजयेदेवं गणेशं विघ्ननाशनम् ॥ असिद्धादपि सम्प्राप्तो

मन्त्रोसौ सिद्धिकृद्भवेत् ॥ ३९ ॥ लक्षमेकं मनुं जप्त्वा जुहुयात्तद्दशांशतः॥ मोदकैः पृथुकैर्लाजैः सक्तुभिश्चेक्षुपर्वभिः ॥ ४० ॥ नारिकेरैस्तिलैर्मोचैर्होमं कुर्य्यात्पृथक्पृथक् ॥ सहस्रमेकं द्विशतं पञ्चाशत्प्रमितं तथा ॥ ४१ ॥ तिलै-स्त्रिमधुराक्तैश्च होमः कार्य्योंथ कथ्यते ॥ दौग्धान्नेन घृताक्तेन होमोभीष्ट-फलप्रदः ॥ ४२ ॥ लक्ष्मीकामो नारिकेरैश्चतुर्थ्यां तु चतुश्शतम् ॥ सित-पक्षादिमारभ्य प्रत्यहं जुहुयात्क्रमात् ॥ ४३ ॥ चतुर्थ्यन्तं ततः सर्वप्राणिनो वशगा नृणाम् ॥ तिलैश्च घृतसंयुक्तैर्होमः श्रीवश्यकीर्त्तिदः ॥ ४४ ॥ स्वादुत्रययुतैर्लाजैर्हुनेत्सप्तदिनावधि ॥ कन्यार्थी लभते कन्यां पुत्रार्थी लभते सुतम् ॥ ४५ ॥ दधिसंसिक्तलवणैर्जुहुयाच्च चतुर्दिनम् ॥ निशीथिन्यां च वश्यादौ भवेद्वश्यं तथेप्सितम् ॥ ४६ ॥ गौरवं लाघवं साध्यं जाप्यं चासा-ध्यमेव च ॥ कार्य्यं ज्ञात्वा होमसंख्यां कल्पयेच्च सहस्रतः ॥४७॥ कोट्यन्त-मेवं विज्ञेयं यत्र संख्या तु नोदिता ॥ सितार्कद्रुममूलेन कुचन्दनसुदारुभिः ॥ ४८ ॥ गजाक्षत्रोटिनं चैव दन्तकेनापि दन्तिनाम् ॥ विधाय विघ्नं सम्पूज्य तं पृष्ट्वा प्रजपेन्मनुम् ॥ ४९ ॥ उपोषितः शुचिश्चन्द्रग्रहणे तं समुद्धरेत् ॥ शिखायां व्यवहारादौ समरे विजयी भवेत् ॥५०॥ रोचनारजसानेन कृतं च मनुना ततः ॥ तिलकं सर्वराजानो लोकाः स्युर्वशगास्सदा ॥ ५१ ॥ नव-नीतेन वै साध्यनामालिख्यानुलोमगम् ॥ विलोमं विघ्नबीजं च तद्वृतं स्थापितं जले ॥ ५२ ॥ जपित्वाष्टोत्तरशतं तूष्णीं तद्भक्षयेत्तदा ॥ सप्ताहाद्वशगः साध्यः साधकस्य भवेद्ध्रुवम् ॥ ५३ ॥ गणेशं तर्प्पयेत्तोयैः भग्नवत्कार्यवशेन तु ॥ मण्डादिभिरवाप्नोति मन्त्रोयं प्रणवादिकः ॥ ५४ ॥ संन्यासिने च पूजायां हृदन्तः परिकीर्तितः ॥ वक्ष्येथ दक्षिणाम्नाये लक्ष्मीगणपतिं सुराः ॥ ५५ ॥ गजलक्ष्मीसमायुक्तमयं योगोति दुर्लभः ॥ श्रीं गं सौम्याय चोच्चार्य्य महागणपतिं तथा ॥ ५६ ॥ ङेन्तमुक्त्वा वरव-रदोक्त्वा सर्वजनं वदेत् ॥ मे वशमानय स्वाहेत्येकोनत्रिंशदक्षरः ॥ ५७ ॥ अन्तर्यामी मुनिश्छन्दो गायत्री त्रिवृदन्विता ॥ देवो लक्ष्मीगणेशो-त्राथाद्यबीजद्वयेन तु ॥ षड्दीर्घयुक्तेनांगानि जातियुक्तानि कारयेत् ॥ ५८ ॥

हेमाभं पीतवसनं शंखचक्रगदाभयान् ॥ दक्षोर्ध्वकरमारभ्य दक्षिणेधः करावधि ॥ ५९ ॥ दधतं शुण्डया स्वर्णघटं पद्मोपरि स्थितम् ॥ पार्श्वेविष्णुलक्ष्म्या चाश्लिष्टं दक्षभुजेन तु ॥ ६० ॥ प्राक्प्रोक्ते पूजयेत्पीठे ना मादिनवशक्तिके ॥ अष्टपत्राम्बुजद्वन्द्वे कर्णिकाकेशरोज्ज्वले ॥ चतुर्द्वारयुक्तचतुरस्रत्रयावृते ॥ ६१ ॥ मूलेन मूर्तिं संकल्प्य तस्यामावाह्य पूजयेत् ॥ प्रथमावृत्तिरङ्गैः स्याद्वक्रतुण्डादिभिः परा ॥ ६२ ॥ अणिमा महिमा चैव लघिमा गरिमा तथा ॥ ईशित्वं च वशित्वं च प्राकाम्यं प्राप्तिरग्रतः ॥ ६३ ॥ चतुर्थी मातृभिश्चाग्रे लोकेशानायुधानि च ॥ लक्षं जपेद्धुनेद्बिल्वसमिधो मधुरप्लुताः ॥ तर्प्पणादि ततः कृत्वा काम्यकर्माणि साधयेत् ॥ ६४ ॥ हुनेच्चैव सहस्राणि श्रीफलैर्मधुरान्वितैः ॥ महालक्ष्मीकरो होमः पुत्रमित्रकलत्रदः ॥ ६५ ॥ शुद्धतोयेन सन्तर्प्य चत्वारिंशच्चतुःशतम् ॥ चत्वारिंशद्दिनान्मन्त्री वाञ्छितां लभते श्रियम् ॥ ६६ ॥ ताराद्योयं रमाहीनस्तथाष्टाविंशदक्षरः ॥ न्यासध्यानादिकं प्राग्वत्पूजाभेदो निगद्यते ॥ ६७ ॥ आदावङ्गानि च ततो बलाका विमला तथा ॥ कमलावनमाला च बिभीषिका च मालिका ॥ ६८ ॥ वशङ्करा वसुमाला पार्श्वयोः शङ्खपद्मकौ ॥ लोकेशांश्च तदस्त्राणि पूजयेत्काम्यमुच्यते ॥ ६९ ॥ उरोमात्रे जले स्थित्वा ध्यात्वा सवितृमण्डले ॥ देवं त्रिलक्षं जपतो धनवृद्धिः प्रजायते ॥ ७० ॥ बिल्वमूलं समास्थाय तावज्जप्ते फलं हि तत् ॥ अशोककाष्ठैर्ज्वलिते वह्नावाज्याक्ततण्डुलैः ॥ ॥ ७१ ॥ होमतो वशयेद्विश्वमर्ककाष्ठे तथापि वा ॥ खादिराग्नौ नरपतिर्लक्ष्मीं[1] पायसहोमतः ॥ ७२ ॥ श्रीमित्येकाक्षरः प्रोक्तो मन्त्रश्छन्दो निवृन्मतम् ॥ भृगुर्मुनिर्देवता तु लक्ष्मीः सर्वप्रदा मता ॥ षड्दीर्घबीजयुक्तेन षडंगानि समाचरेत् ॥ ७३ ॥ पद्मारूढां सुवर्णाभां सपद्मोर्ध्वकरद्वयाम् ॥ अधोदक्षेणाभयदां वामेन वरदायिनीम् ॥ ७४ ॥ हिमाचलनिभैर्नागैः शुण्डाग्रामृतकुम्भकैः ॥ चतुर्भिः सिच्यमानां च क्षौमवस्त्रां किरीटिनीम् ॥ ७५ ॥ ध्यायेद्धारिप्रियां देवीं भक्तानुग्रहकातराम् ॥ धर्म्मा-

१ लभते इति शेषः ॥

दिकल्पिते पीठे भूपुराढ्ये दलाष्टके ॥७६॥ रमामावाह्य गन्धाद्यैः कर्णिकायां यजेत्ततः ॥ विभूतिरुन्नतिश्चैव हृष्टिः कीर्त्तिश्च सन्नतिः ॥ ७७ ॥ व्युष्टिरुत्कृष्टिर्ऋद्धिश्च क्रमात्पूज्या दिगष्टके ॥ मध्ये सिंहासनं पूज्यं सर्वशक्तिमयं तथा ॥ ७८ ॥ बीजाद्यमासनं दद्यान्मूर्तिं मूलेन कल्पयेत् ॥ षडङ्गानि च सम्पूज्य पुनरष्टदलेर्चयेत् ॥ ७९ ॥ चतुर्दिक्षु च देव्यग्राद्वासुदेवं हलायुधम् ॥ प्रद्युम्नं चानिरुद्धं च विदिशासु तथा क्रमात् ॥ ८० ॥ दमकं सलिलं चैव गुग्गुलुं च कुरण्टकम् ॥ देवीदक्षिणहस्ताग्रे शङ्खाख्यं निधिमर्चयेत् ॥ ॥ ८१ ॥ वामे पद्मनिधिं चैव द्वितीयेष्टदले ततः ॥ बलाकां विमलां चैव कमलां वनमालिकाम् ॥ ८२ ॥ बिभीषिकां मालिकां च शाङ्करीं वसुमालिकाम् ॥ लोकपालानायुधानि प्रोक्तमेतच्छ्रियोर्चनम् ॥ ८३ ॥ जपेद्भास्करलक्षं तत्सहस्रं जुहुयात्पुनः ॥ पद्मैस्त्रिस्वादुसंयुक्तैस्त्रिनवैः श्रीफलैरपि ॥ ॥८४ ॥ त्रिभिर्वा मधुराक्तैश्च तर्प्पणादि ततश्चरेत् ॥ एवं सिद्धमनुर्मन्त्री साधयेन्निजवाञ्छितम् ॥ ८५ ॥ वक्षोजदघ्ने पयसि तिष्ठन्नर्कगतां श्रियम् ॥ संस्कृत्य मनुमेनं च जपेल्लक्षत्रयावधि ॥ सोचिरेणैव कालेन दारिद्र्यात्परिमुच्यते ॥ ८६ ॥ मधुसूदनगेहे च बिल्वाध उपविश्य च ॥ त्रिलक्षं प्रजपेन्मन्त्रीवत्सराद्वाञ्छितार्थदः ॥ अधिकं वसुसंवातं लभते नान्यथाचिरात् ॥८७॥ अशोकैधश्चिते वह्नौ सघृतैस्तण्डुलैर्हुनेत् ॥ मन्त्री त्रिभुवनं सर्वं वशं कुर्य्यान्न चान्यथा ॥८८॥ खादिरैः कमलैः सम्यगेधितेग्नौ यथाविधि॥ तण्डुलैस्त्रिस्वादुयुक्तैर्जुहुयान्मन्त्रवित्तमः॥ तेन राजकुलं वश्यं धनवानर्थवान्भवेत् ॥ ८९ ॥ अर्कवह्नौ हुनेन्मन्त्री सुशुद्धैः शालितण्डुलैः॥ नियतं राज्यलक्ष्मीं स चायुष्पुत्राँल्लभेत कम्[1] ॥९०॥ त्रिस्वादुयुक्तैर्नलिनैर्लक्षमेकं हुनेत्सुधीः॥ अलक्ष्मीसहितो मर्त्योलक्ष्मीमाप्नोति निश्चितम्॥ धनधान्यादिसम्पत्त्या तुष्टो भवतिसाधकः ९१॥ ब्राह्मणस्य गृहे बिल्वं समारोप्य विवर्धयेत् ॥ श्रीसूक्तं च पठन्नेव तत्रैव जुहुयात्पुनः॥९२॥ त्रिस्वादुयुक्तैः कुसुमैः फलैश्चापि:समिद्वरैः॥ स्कन्धभेदैस्तस्य नरस्तिष्ठन्मूलेपि संहुनेत॥९३॥ बिल्वाभिमिश्रहविषा हविष्याण्यचिरं रमा॥ प्रत्यक्षा

१ तस्मा अयं मन्त्रो भवेदिति शेषः ॥ २ सुखम्॥

च भवेत्तस्य कथमश्रीः कुले भवेत् ॥९४॥ वक्ष्येथ शक्तिगणपमन्त्रं ह्लीं तत-श्च ह्रीम् ॥ त्र्यक्षरोयं विराट् छन्दो मुनिर्भार्गव ईरितः ॥ ९५ ॥ देवता शक्तिगणपः षडङ्गानि समाचरेत् ॥ षड्दीर्घयुग्गकारेण ततो ध्यायेद्गजा-ननम् ॥ ९६ ॥ दक्षोर्ध्वे चांकुशं वामे पाशं वामे त्वधः करे ॥ बीजपूरं स्वयं तनु दक्षिणे स्वर्णवर्णकम् ॥ ९७ ॥ पुष्करं मोदकान्बिभ्रत्कर्णयोर्दीर्घचामरे॥ पूर्वोक्ते पूजयेत्पीठे पूर्वादिनवशक्तिके ॥ ९८ ॥ अष्टपत्राम्बुजे देवं चतुरस्रत्र-यावृते ॥ प्रथमाङ्गावृतिः प्रोक्ता द्वितीया चापि मातृभिः ॥ ९९ ॥ तृतीया लोकपालैः स्याच्छस्त्रौघैश्च चतुर्थ्यपि ॥ लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं हविष्याशी जितेन्द्रियः ॥१००॥ तद्दशांशं १जुहुयादपूपैर्घृतसम्प्लुतैः ॥ एवं सिद्धमनुर्मन्त्री काम्यकर्माणि साधयेत्॥१०१॥शुक्लपक्षे चतुर्थ्यां च पूजयित्वा विनायकम् ॥ अपूपैर्गुडसंमिश्रैः पक्वान्नैश्च घृतप्लुतैः ॥ १०२ ॥ मरिचैः क्षुरकैश्चैव सैन्ध-वेनापि मिश्रितैः ॥ देवस्य सन्निधौ मन्त्री जुहुयात्त्रिसहस्रकम् ॥ १०३ ॥ गद्यपद्यमयी वाणी सप्ताहाद्भवति ध्रुवम् ॥ वश्यार्थी मधुहोमेन राजानं वशमा-नयेत् ॥ १०४ ॥ कन्यार्थी जुहुयाल्लाजैस्तन्नामपुरमन्त्रतः ॥ सप्त सम्भो-जयेत्कन्या यद्वैकां स लभेत ताम् ॥ १०५ ॥ कर्षमात्रं च वा स्वर्णं पलमात्रं तथैव च ॥ सूर्य्यग्रहे तथा चन्द्रग्रहणे चाभिमन्त्रयेत् ॥ १०६ ॥ अष्टोत्तरसहस्रन्तु सप्तधा विभजेत्ततः ॥ एकं भागं गृहे स्वीये देवताध्यानपूर्वकम् ॥ १०७ ॥ शेषान्भागान्द्वितीयेऽह्नि क्रमाच्चैकैकशः पिबेत् ॥ ध्यानपूर्वं देवतायाः प्रातः प्रातस्तदा भवेत् ॥ १०८ ॥ बुद्ध्या बुधेन सदृशः पण्डितो गुरुणा समः ॥ कविना च कवित्वेन श-निना प्रतिवादकः ॥ १०९ ॥ बन्ध्यर्तुस्नानदिवसे पूजयित्वा विनायकम्॥ निष्कार्धपादमानेन हरिद्राश्च वचान्तथा ॥ ११० ॥ गोमूत्रे कुष्ठकं पिष्टं सहस्रमभिमन्त्रितम् ॥ वन्ध्या कन्या भक्ष्यभोज्यैर्भुक्त्वा संभोज्य स्वं गुरुम्॥ गुरवे दक्षिणां दत्त्वा पिबेन्नारी तदौषधम् ॥ १११ ॥ ततस्सा लभते पुत्रं सर्व-लक्षणसंयुतम् ॥ आयुष्मन्तं सुरूपं च बुद्धिमन्तं श्रिया युतम् ॥ ११२ ॥

१ त्रियामत्रास्य शक्तिः ।

ताराद्योयं चतुर्वर्णो गायत्रं छन्द उच्यते ॥ पूर्ववच्च षडङ्गानि हेमाभो हेमव-स्त्रवान् ॥ ११३ ॥ बृहज्जानुस्तुन्दिलश्च लम्बबाहुर्विलोचनः ॥ दक्षोर्ध्व-हस्तपाशं चाधोवामे चाक्षसूत्रकम् ॥ ११४ ॥ दक्षिणाधो निजं दन्तमूर्द्ध्वे बाहौ तथा सृणिम् ॥ पुष्करेण तु बिभ्राणं मोदकं हेमभूषणम् ॥ शक्तियुक्तं विश्ववन्द्यं गणेशं चिन्तयाम्यहम् ॥ ११५ ॥ प्राग्वत्पूजा समुद्दिष्टा जपे-ल्लक्षत्रयम्मनुम् ॥ घृताक्तैश्च तिलैर्होमं तर्पणादि ततश्चरेत् ॥ ११६ ॥ आज्यान्नैर्जुहुयान्नित्यमन्नवान्स नरो भवेत् ॥ पायसान्नेन महतीं श्रियमाप्नोति मानवः ॥ ११७ ॥ गं क्षिप्रप्रसादनाय हृदन्तोयं दशाक्षरः ॥ ऋषिर्गणक आख्यातश्छन्दः प्रोक्तं विराडिति ॥ ११८ ॥ देवता कथितः क्षिप्रप्रसादनवि-नायकः ॥ षड्दीर्घभाजा बीजेन कुर्य्यादङ्गक्रियां बुधः ॥ ११९ ॥ ध्यानं सर्वत्रायुधानां वामोर्ध्वात्तु प्रदक्षिणम् ॥ पाशांकुशौ विलसतां पत्राग्रं च दध-त्करैः ॥ १२० ॥ बीजपूरं पुष्करे च त्रिनेत्रो रक्तवस्त्रवान् ॥ भक्तं सदा पूर्णचन्द्रमौलिरव्याद्गणेश्वरः॥ १२१ ॥ पूर्वोक्ते पूजयेत्पीठे नवशक्तिसमन्विते ॥ मूर्त्तिं मूलेन सङ्कल्प्य तस्यां विघ्नेश्वरं यजेत् ॥ प्रथमावृत्तिरङ्गैः स्याद्द्वितीया चाष्टभिर्गणैः ॥१२२॥ विघ्नो विनायकः शूरो वीरश्च वरदस्तथा ॥ इभ-वक्रश्चैकदन्तो लम्बोदर इति क्रमात् ॥ १२३ ॥ मातृपूजा दलाग्रे स्याल्लो-केशास्त्राणि चाग्रतः ॥ लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं त्रिस्वाद्वक्तैस्तिलैर्हुनेत् ॥१२४॥ पूर्वोदिताष्टद्रव्यैर्वा तर्पणादि ततश्चरेत् ॥ शर्कराघृतयुक्तेन हविषा जुहुया-त्सुधीः ॥ १२५ ॥ लक्ष्मीवान्केवलाज्येन होमो लोकवशीकरः ॥ घृताक्तं तत्प्रजुहुयाल्लक्ष्मीवान्साधको भवेत् ॥ १२६ ॥ चत्वारिंशद्दिनं मन्त्री नारि-केलं हुनेत्ततः ॥ सर्वसम्पत्समृद्धिः स्यात्प्रत्यहं वाञ्छितार्थकृत् ॥ १२७ ॥ सलाजकैः कंगुभिश्च पृथुकैर्वाञ्छितान्नये ॥ होमो भवेदष्टभिश्च द्रव्यैस्त्रिमधु-रप्लुतैः ॥ १२८ ॥ हुनेत्ततश्च वशयेद्राज्ञस्तत्प्रमदा अपि ॥ चतुश्चत्वारिंश-दाख्यं चतुःशतमतन्द्रितः ॥ १२९ ॥ प्रातःप्रातस्तु सलिलैर्विघ्नेशस्य तु मन्त्रकैः ॥ तर्पयेत्सुसमिद्धिश्च भवेत्तस्य न संशयः ॥१३०॥ पूर्वादिगं गणे-

१ कार्य्यमिति शेषः ॥

शानमायातं रविबिम्बतः ॥ पूर्वोक्तचक्रमध्यस्थं चिन्तयित्वा तु तर्पयेत् ॥ त्र्यक्षरोक्तप्रयोगांश्च कुर्य्यादत्रापि साधकः ॥१३१॥ ॐठांनमश्चतुर्वर्णो हेरम्बस्य मनुर्मतः ॥ मुनिर्गणक आख्यातो गायत्री छन्द ईरितम् ॥ १३२ ॥ पञ्चवक्रोस्य हेरम्बो देवता सिंहवाहनः ॥ षड्दीर्घबीजयुक्तेन षडङ्गविधिरीरितः ॥ १३३ ॥ मुक्ताविद्युन्मेघदुग्धकाश्मीरीसन्निभैर्मुखैः ॥ गजवत्पंचभिर्युक्तः किरीटी चासिहस्तकः ॥ १३४ ॥ अंकुशं च त्रिशूलं च मुद्गरं च कपालकम् ॥ स्वयन्तमभयं चापि वरं मोदकमेव च ॥१३५॥ परशुं चाक्षमालां च दधतं करपङ्कजैः ॥ कोटिसूर्य्यप्रतीकाशं ध्यायेद्धेरम्बमव्ययम् ॥ ॥ १३६ ॥ पद्ममष्टदलं कृत्वा चतुरस्रत्रयावृतम् ॥ चतुर्द्वारसमायुक्तं तत्रादावासनं यजेत् ॥ १३७ ॥ ॐहुंहूं च महासिंहाय गं हेरम्बमुच्चरेत् ॥ आसनाय नमश्चेति प्रोक्तः सप्तदशाक्षरः ॥ १३८ ॥ अनेन चासनं दद्यादनेनैव प्रपूजयेत् ॥ ध्रुवयुक्तेन बीजेन कुर्य्यान्मूर्तिप्रवर्त्तनम् ॥१३९॥ आदावङ्गानि सम्पूज्य लोकपालान्यजेत्पुनः ॥ तेषामस्त्राणि तद्बाह्ये हेरम्बार्चनमीरितम् ॥ १४० ॥ लक्षत्रयं जपं कृत्वा तिलैर्हुत्वा दशांशतः ॥ मधुरत्रयसंयुक्तैस्तर्पणादि समाचरेत् ॥ १४१ ॥ एवं सिद्धमनुर्मन्त्री प्रयोगानाचरेत्ततः ॥ चतुर्दश्यष्टमी षष्ठीष्वेकैकं जुहुयाद् बुधः॥ अपूपैः कृशरैश्चापि मोदकैरिष्टसिद्धये ॥ १४२ ॥ पूर्वोक्तैर्जुहुयाद्द्रव्यैः पर्वस्वपि च मन्त्रवित् ॥ यद्यदिच्छति तत्सर्वं साधकस्तत्र साधयेत् ॥ क्षिप्रप्रसादनप्रोक्तान्प्रयोगान्वा समाचरेत् ॥ ॥ १४३ ॥ तारो ङेन्तो गणेशो हृत्प्रोक्तः सप्ताक्षरो मनुः ॥ प्रणवान्तोष्टवर्णोयं शक्तिबीजादिकोपि वा ॥ १४४ ॥ ऋषिरग्निः समाख्यातो गायत्री छन्द उच्यते ॥ सुब्रह्मण्यो मनोरस्य देवता तु विनायकः ॥ दीर्घभाजाग्निबीजेन षडङ्गानि समाचरेत् ॥ १४५ ॥ रक्ताम्बरं रक्तवर्णं रक्तगन्धानुलेपनम् ॥ रक्तपुष्पैः पूज्यमानं भक्तपातकहारिणम् ॥ १४६ ॥ मुद्गरं च तथा शक्तिं कमलं चांकुशं तथा ॥ हस्तैर्दधानं चन्द्रास्यं नानाभूषणभूषितम् ॥१४७॥ रिपुक्षयकरं देवं सुब्रह्मण्यगणाधिपम् ॥ ध्यात्वैवं पूजिते पीठे पश्चात्सम्पूजयेद्विभुम् ॥ १४८ ॥ केशरेषु षडङ्गानि पूर्वाद्यष्टदले ततः ॥ जय-

न्तश्चाग्निवेषश्च कृत्तिकापुत्र एव च ॥ १४९ ॥ तथा भूतपतिस्सेनानीर्गुहो हेमसूत्रकः ॥ विशालाक्षश्च सम्प्रोक्ताः शक्तिशूलकरा इमे ॥ १५० ॥ दला- ग्रेषु च पूर्वादि यजेदेताननन्तरम् ॥ देवसेनापतिं शक्तिं विघ्नं कुक्कुटमेव च ॥ ॥ १५१ ॥ मेधां मयूरं वज्रं च धियं लोकेश्वरांस्ततः ॥ तदस्त्राणि च सम्पूज्य सुब्रह्मण्यार्चनं त्विदम् ॥ १५२ ॥ लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं सर्पिषा पयसान्धसा ॥ अयुतं जुहुयान्मन्त्री तर्पयेद्विप्रपुङ्गवान् ॥ १५३ ॥ एवंसिद्धे मनौ मन्त्री कुर्य्यात्कामान्यथेप्सितान् ॥ दिनेदिने स मधुरैर्भक्ष्यभोज्यैः प्रतोषयेत् ॥ देवं देवधिया सम्यगर्चयेद्ब्रह्मचारिणम् ॥ १५४ ॥ सुब्रह्मण्यमनोः सम्यगुपास्ति ये प्रकुर्वते॥ऐहिकामुष्मिकान्भोगाँल्लभन्ते नात्र संशयः ॥ १५५ ॥ ॐ हुं गं ग्लौं ह- रिद्रेति चोक्त्वा गणपतये वदेत् ॥ वर वरद इत्युक्त्वा सर्वजनपदं वदेत् ॥ ॥ १५६ ॥ हृदयं स्तम्भय द्वन्द्वं स्वाहा द्वात्रिंशदर्णकः ॥ ऋषिर्मदन आख्या- तश्छन्दोऽनुष्टुप्समीरितम् ॥ १५७ ॥ हरिद्रागणपो देवः षडङ्गानि समाचरेत् ॥ षड्दीर्घयुक्तबीजेन विप्रादीनां प्रकीर्तितः ॥ १५८ ॥ विधिना येन मन्त्रोयं गृह्यते तदहम्ब्रुवे ॥ चतुर्थीदिवसे प्राप्ते शुक्लपक्षस्य मन्त्रवित् ॥ १५९ ॥ शुद्धां हरिद्रामानीय सुपिष्टं कन्यया शुभाम् ॥ सर्वाङ्गे तां समालिप्य स्नाया- च्छुद्धजलैस्ततः ॥ १६० ॥ भक्त्या परमयोपेतः प्रसन्नेनान्तरात्मना ॥ प्रथमं गुरुपादाब्जमर्चयित्वा विधानतः ॥ स्वर्णाङ्गुलीयहारांवैर्भूषणैश्च शुभाम्बरैः ॥ ॥ १६१ ॥ पूर्वोक्तविधिना तस्माद्गृह्णीतेमं मनुं शुभम् ॥ सुगन्धैः सुमनोभिस्तं यजेद्देवधिया पुनः ॥ १६२ ॥ पीताम्बरं पीतवर्णं पीतगन्धानुलेपनम् ॥ पीत- पुष्पैः पूज्यमानं मणिसिंहासनस्थितम् ॥ १६३ ॥ पीतभूषं त्रिनेत्रञ्च ॥ षड्भुजं च वराभयम् ॥ क्रोधमुद्रां सृणिं पाशं परशुं बिभ्रतं करैः ॥ ॥ १६४ ॥ ध्यायेच्छुद्धमना मन्त्री हरिद्रागणपं प्रभुम् ॥ पूर्वोक्तपीठे प्रयजेदङ्गमातृदिगीश्वरैः ॥ १६५ ॥ वेदलक्षं जपित्वान्ते हरिद्राचूर्णमि- श्रितैः ॥ दशांशं तण्डुलैर्हुत्वा ब्राह्मणानपि भोजयेत् ॥ १६६ ॥ सार्धं स- हस्रं सञ्जप्य दशांशं हव्यवाहने ॥ सर्पिर्गुडपुटैः सम्यगपूपैर्जुहुयाद्बहिः ॥

---

१ एकार्णेति वा, ॥

॥ १६७ ॥ हरिद्रागणपं तावत्तर्पयेद्भक्तितत्परः ॥ कुमारीं भोजयेत्तावद्ब्रह्मचारिणमेव च ॥ १६८ ॥ अभीष्टफलमाप्नोति नात्र कार्य्या विचारणा ॥ लाजैः कन्यामवाप्नोति कन्यापि लभते वरम् ॥ १६९ ॥ वन्ध्या नारी रजः स्नाता पूजयित्वा गणाधिपम् ॥ पलप्रमाणगोमूत्रे पिष्टाः सिन्धुवचानिशाः ॥ ॥ १७० ॥ सहस्रं मन्त्रयेत्कन्या बटून्सम्भोज्य मोदकैः ॥ पीत्वा तदौषधं पुत्रं लभते गुणसागरम् ॥ १७१ ॥ वाणीस्तम्भं रिपुस्तम्भं कुर्य्यान्मनुरुपासितः ॥ जलाग्निसिंहचौरास्त्रप्रमुखानपि रोधयेत् ॥ १७२ ॥ एतेऽष्टौ गणपाः प्रोक्ता दक्षिणाम्नायगोचराः ॥ १७३ ॥

इति श्रीमहामायामहाकालानुमते मेरुतन्त्रे शिवप्रणीते
दक्षिणाम्नायगणपतिमन्त्रप्रकाशष्षोडशः ॥ १६ ॥

---

ईश्वर उवाच ॥ ऊर्ध्वाम्नाये प्रवक्ष्यामि गणेशान्सिद्धिदायकान् ॥ भुक्तिमुक्तिप्रदं तत्र महागणपतिं शृणु ॥ १ ॥ तारश्रीबीजहृल्लेखा कामो भूबीजमेव च ॥ गणेशबीजं गणपतये वरवरेति च ॥ २ ॥ द सर्वजनं मे वशमान याग्निवधूरिति ॥ अष्टाविंशतिवर्णोऽयं गणकोऽस्य मुनिर्मतः ॥ ३ ॥ निवृद्गायत्रिका छन्दो महागणपतिः सुरः ॥ गं बीजं ह्रीं च शक्तिः स्याद्दीर्घषट्कयुतस्तु गः ॥ ४ ॥ तारादिबीजषट्केन पृथग्युक्तेन कारयेत् ॥ षडङ्गानि मनोरस्य जातियुक्तानि चाचरेत् ॥ ५ ॥ अथ वा तारपूर्वेण दीर्घषट्कयुतेन च ॥ स्वबीजेनांगुलिन्यासं षडङ्गानि तथाचरेत् ॥ ६ ॥ वर्णा द्वाविंशतिर्न्यस्या गणपत्यादयो मनोः ॥ ब्रह्मरन्ध्रे श्रोत्रयोश्च नेत्रयोश्चनसोर्मुखे ॥ ७ ॥ मूले दक्षभुजस्यादौ मध्ये च मणिबन्धके ॥ अंगुलीमूलकेऽग्रे च वामबाहावपीदृशम् ॥ ८ ॥ विन्यसेदग्रिमान्वर्णांस्ततश्चादौ तदग्रिमान् ॥ मणिपूरे स्वाधिष्ठाने मूलाधारे तदग्रिमान् ॥ ९ ॥ तारं पार्ष्णौ मुखे श्री च हृदि ह्रीं श्रीं गुदे न्यसेत् ॥ पादयोर्ग्लौं हृदि पुनः प्रत्यङ्गं बीजमेव च ॥ १० ॥ अवशिष्टैर्मन्त्रवर्णैः शरीरे व्यापकं न्यसेत् ॥ एवं न्यासविधिं कृत्वा हृदि देवं विचिन्तयेत् ॥ ११ ॥ ऐक्षवे जलधेर्द्वीपे नवरत्नमये शुभे ॥ तत्तरङ्गलसत्तोयैर्धौते शीते महीतले ॥ १२ ॥ तत्तोयगुणसंपृक्तगन्धवाहनिषेविते ॥ कल्पपादपपुष्पौघैः पतद्भिः समलङ्कृते ॥ १३ ॥ नाना-

कुसुमसङ्कीर्णे नानापक्षिविराजिते ॥ अनेकफलसङ्कीर्णे सेविते चाप्सरोगणैः ॥
॥ १४ ॥ ज्वालामालासहस्राढये चोचज्ज्योत्स्नासमाकुले ॥ विलसत्पद्मरागौ-
घकुट्टिमारुणभूतले ॥ १५ ॥ कल्पपादपपुष्पस्थषट्पदस्वनमञ्जुले ॥ पारि-
जातं कल्पतरुं तत्र मध्ये विचिन्तयेत् ॥ १६ ॥ युगपट्टे तु पङ्केन खचितं
पुष्पशोभितम् ॥ नवरत्नमयं तस्याधस्तात्सिंहासनं स्मरेत् ॥ १७ ॥ तन्मध्ये
लिपिपद्मं च षडारं तस्य मध्यतः॥ कर्णिकायां गणेशञ्च तत्संस्थं च महागणम् ॥
॥ १८ ॥ नानारत्नविभूषाढ्यमेकदन्तं गजाननम् ॥ चक्रं चांकुशपद्मादी-
न्बीजपूरं गदां तथा ॥ शरासनं च शूलं च बिभ्रतं हस्तपङ्कजैः ॥ १९ ॥
पद्मोद्यत्करया शक्त्या चाश्लिष्टं वरदं प्रभुम् ॥ अर्द्धेन्दुमौलिं त्र्यक्षं च दीप्य-
मानं कृपाकरम् ॥ २० ॥ पुष्करोद्धृतरत्नौघमयकुम्भमुखच्युतान् ॥ मणि-
मुक्ताप्रवालादीन्वर्षन्तं धारया मुहुः ॥ २१ ॥ सर्वतः साधकास्याग्रे स्वदान-
जललोलुपाम् ॥ षट्पदालीं कर्णतालैर्वारयन्तं मुहुर्मुहुः ॥२२॥ अमरासुरसं-
सेव्यं सद्रत्नमुकुटोज्ज्वलम् ॥ ऊर्ध्वकरं गजमुखं नानाभरणभूषितम् ॥ २३ ॥
इति ध्यात्वा गणपतिं यजेत्सर्वोपचारकैः ॥ धर्मादिक्लृप्ते पूर्वोक्ते तीव्रादिनवश-
क्तिके ॥ २४ ॥ पूजायन्त्रं गणेशस्य मातृकापद्ममुच्यते ॥ चतुर्द्वारसमायुक्तं
चतुरस्रत्रयावृतम् ॥ २५ ॥ तत्कर्णिकायां षट्कोणं तदन्तश्च त्रिकोणकम् ॥
देवस्याग्रे त्रिकोणाच्च बहिर्मन्त्रैर्यजेत्सुरान् ॥ २६ ॥ लक्ष्मीनारायणायेति ॐ
श्रींपूर्वो हृदन्तकः ॥ मन्त्रस्तेन यजेत्तञ्च ध्यायेद्बिल्वतले स्थितम् ॥ २७ ॥
पद्मद्वयेकला लक्ष्मीः शंखचक्रधरो हरिः॥ॐ ह्रींगौरीहराभ्यां च हृदन्तो नव-
वर्णकः ॥ २८ ॥ देवस्य दक्षिणे तौ च ध्यायन्नेवं प्रपूजयेत् ॥ संस्थितौ
च जटाधस्तात्सुवर्णरजतप्रभौ ॥२९॥ पाशांकुशधरा देवी टंकशूलधरो हरः॥
तारः क्लीं रतिकामाभ्यां हृदन्तोयं नवाक्षरः ॥ ३० ॥ पृष्ठस्थपिप्पलाधस्ता-
द्रतिकामौ समर्चयेत् ॥ नालयुक्तोत्पलद्वन्द्वचापपुष्पेषुसंयुतौ ॥ ३१ ॥ ॐ
ग्लौंमहीवराहाभ्यां हृदन्तोयं दशाक्षरः ॥ उत्तरेधः प्रियङ्गोस्तु महीकोलौ
यजेत्ततः ॥ ३२॥ शुकबीज्याग्रकगदाचक्रालंकृतसद्भुजौ ॥ ॐ गं लक्ष्मीगण-
काभ्यां हृदन्तोयं दशाक्षरः ॥ ३३ ॥ देवस्याग्रे त्रिकार्णान्तर्लक्ष्मीयुग्गणकं

यजेत् ॥ षट्कोणेषु यजेन्मन्त्रमोंगं पूर्वौ हृदन्तकः ॥ ३४॥ आमोदं सिद्धिसहितमग्रकोणे समर्चयेत् ॥ समृद्ध्यायुतमभ्यर्चेत्प्रमोदं वह्निकोणके ॥ ३५॥ सुमुखं कान्तिसंयुक्तमीशकोणे समर्चयेत् ॥ दुर्मुखं मदनावत्या यजेद्वारुणकोणगम् ॥ ॥ ३६ ॥ विघ्नं मदद्रवायुक्तं कोणे नैशाचरे यजेत् ॥ वायव्ये विघ्नकर्त्तारं द्राविण्या सहितं यजेत् ॥ ३७ ॥ पाशांकुशधरा विघा शक्तयश्चाभयप्रदाः ॥ रक्तारक्ताम्बरालेपभूषणा मदविह्वलाः ॥ ३८ । षट्कोणस्य बहिर्देवैर्दक्षिणे तु समर्चयेत ॥ वसुधारान्वितं शंखनिधिं वामेर्चयेत्तथा ॥ ३९ ॥ वसुमत्या युतं पद्मनिधिं तद्ध्यानमुच्यते ॥ तत्राद्यो मौक्तिकाभोन्यो माणिक्याभस्तुधारया ॥ वर्षन्तौ धनसम्पात्तिं लोकानां मेघवत्सदा ॥ ४० ॥ केशरेष्वङ्गपूजा स्याद्बाह्याद्याः पत्रमध्यगाः ॥ चतुरस्रे लोकपालांस्तदस्त्राणि च पूर्ववत् ॥ षडावरणसंयुक्तमित्थं देवं समर्चयेत् ॥ ४१ ॥ एकादशायुतं जप्त्वा सहस्रोत्तरमादरात् ॥ दशांशं जुहुयादष्टद्रव्यैरेकाक्षरोदितैः ॥ ४२ ॥ तर्प्पयित्वा दशांशेन चाभिषिक्तोणुना ततः ॥ ब्राह्मणान्भोजयेत्सम्यक् षड्रसैर्भूरिदक्षिणाम् ॥ दत्त्वा प्रणम्य विसृजेदेवं सिद्धो भवेन्मनुः ॥ ४३ ॥ ततः प्रणम्य विधिवद्गुरुं सन्तोष्य यत्नतः ॥ काम्यकर्म्माणि कुर्वीत सिद्धयः स्युर्न चान्यथा ॥ ४४ ॥ रक्तप्रसूनैर्गणपं पूजयित्वा मनुं जपेत् ॥ सहस्राष्टकमस्यान्ते जुहुयात्करवीरजैः ॥ ४५ ॥ तद्दशांशेन कुसुमैर्मधुरत्रयसंस्कृतैः॥ राजा तदा चरो भूत्वा सामात्यः सन्निषेवकः॥४६॥एवं पलाशपुष्पैश्च मधुरत्रयसम्प्लुतैः॥ होमात्सर्वेपि विघ्नाः स्युर्वशास्तस्य न संशयः ॥४७॥ जितेन्द्रियो मन्त्रिवरो घृतमेवं च होमयेत् ॥ कीर्तिम्प्राप्नोति विपुलां चिरकालानुबन्धिनीम् ॥ ४८ ॥ एवमाज्यप्लुतं धान्यं हुत्वामात्यः प्रजायते ॥ अष्टोत्तरसहस्रं तु जप्त्वा होमं समाचरेत् ॥ लवणाज्यसुराभिश्च शोधयित्वास्य भस्म तु ॥ ४९ ॥ करे गृहीत्वा सघृतं तेन नारीं च ताडयेत् ॥ भवत्यामरणांतं सा दासीतोप्यधिकं वशा ॥५०॥ शिवालये लक्षमिताज्जपाद्धोमो दशांशतः ॥ पायसेन त्रिमधुरयुतेन लभते सदा॥ अर्थांश्च विविधान्मन्त्री भोगं मोक्षमवाप्नु-

१ इडभाव आर्षः ॥

यात् ॥ ५१ ॥ अष्टोत्तरसहस्रन्तु हुत्वा जातीप्रसूनकैः ॥ मेधा वेदार्थकरणे बुद्धिं प्राप्नोति साधकः ॥ ५२ ॥ अयुतात्रितयं यस्तु हुनेद्दूर्वां घृतेन च ॥ तस्याल्पमृत्युरोगाद्या नश्यन्त्यायुश्च वर्धते ॥ ५३ ॥ समाहितोयुतं हुत्वा पीतपुष्पैर्घृतान्वितैः ॥ संस्तम्भयेद्वैरिसेनां सभृत्यगजयोधिकाम् ॥ धारास्तम्भं च वाक्स्तम्भं कुर्य्यादत्र न संशयः ॥ ५४ ॥ बिभीतकसमिद्भिश्च जुहुयादयुतत्रयम् ॥ उच्चाटयेद्वैरिसङ्घान्ग्रामं देशं पुरादिकम् ॥ ५५ ॥ अष्टोत्तरसहस्रं तु समिधोऽरुष्कवृक्षजाः ॥ हुत्वा रण्डास्तस्य वश्या जीवेन च धनेन च ॥ ५६ ॥ निम्बपत्रेषु सँलिख्य साध्यनामानि तु द्वयोः ॥ एकस्य चाश्वरक्तेन महिषस्यापरस्य च ॥ ५७ ॥ कटुतैलयुतैर्विंशत्सहस्रं होममाचरेत् ॥ मन्त्रान्ते प्रवदेदेतदमुकं चामुकेन च ॥ ५८ ॥ द्वेषयेति ततः स्वाहा चैकान्ते होममाचरेत् ॥ तयोस्तु जायते वैरं मित्रयोर्जीवनाशकम् ॥ ॥ ५९ ॥ अष्टांगुलं मनुष्यास्थि कीलं शवशिरोरुहैः ॥ संवेष्टय मन्त्रयेदष्टोत्तरं तच्च सहस्रकम् ॥ ६० ॥ मुहूर्ते कुलिके रात्रौ शत्रोर्द्वारि प्रपूजयेत् ॥ सप्ताहतोसौ भवति निश्चयेन यमातिथिः ॥ ६१ ॥ नागस्य विवरद्वारि लक्षमेतं मनुं जपेत् ॥ तस्याग्रतः समायान्ति नागकन्याः सहस्रशः ॥ ६२ ॥ निर्लज्जा भोगकांक्षिण्यः प्रयच्छन्ति रसायनम् ॥ नानामणींश्च रत्नानि यद्यदिष्टतमं भवेत् ॥ ६३ ॥ लक्षमेकं गिरेर्मूर्ध्नि जपेन्मन्त्री दृढव्रतः ॥ कृपाणसिद्धिं लभते प्रार्थनीयां सुरासुरैः ॥ ६४ ॥ वनसारञ्च लज्जालुं शुक्लां च गिरिकर्णिकाम् ॥ नन्द्यावर्त्त मधुपुष्पीं मेलयित्वा सुपेषयेत् ॥ ६५ ॥ कृत्वा तु गुटिकां विंशत्सहस्रमभिमन्त्रयेत् ॥ नेत्रे तया चाञ्जयित्वा निधानं पश्यति ध्रुवम् ॥ ६६ ॥ अष्टोत्तरशतं जप्त्वा पीडाक्रांतं च रोगिणम् ॥ त्रिः फूत्कृत्य हरेत्पीडां सर्वां नास्त्यत्र संशयः ॥ ६७ ॥ गुप्तप्रदेशे रम्ये च गोमयेनोपलेपिते ॥ स्नात्वा मन्त्री नवं कुम्भं चन्दनाद्यैश्च चर्चितम् ॥ ६८ ॥ सुगंन्धतोयैः सम्पूर्य्य शरावेण पिधापयेत् ॥ कपिलाज्येन सम्पूर्णं दीपं न्यस्येत्तथोपरि ॥६९॥ पूजयेदुपचारैस्तं कुमारीं च कुमारकम्॥तत्रोपविश्य तं स्पृष्ट्वा

१ पूर्वपदार्थान्तर्गतस्यापि उत्तरपदार्थस्य बुद्ध्या प्रविभागात्प्रत्यवमर्शः ॥

जपेदष्टोत्तरं शतम् ॥ ७० ॥ तदासौ कथयेत्सर्वं दीपं दृष्ट्वा तु बालकः ॥ भूतं च वर्तमानं च भविष्यन्नात्र संशयः ॥ ७१ ॥ ध्यात्वा महागणपतिमथ वा दीपसन्निधौ ॥ जपेद्गणेशः कथयेत्स्वप्ने चापि शुभाशुभम् ॥ ७२ ॥ ग्रहणे जलमध्यस्थो जपेन्मन्त्रं तदा भवेत् ॥ आकर्षणस्य संसिद्धिः सधान्यपशुयोषिताम् ॥ ७३ ॥ न्यग्रोधस्य तले जप्त्वा लक्षमेकं वटाभिधा ॥ यक्षिणी तु समागत्य धनाद्याकृष्य यच्छति ॥ ७४ ॥ उपोष्य रात्रौ विधिवत्स्नात्वा चानीय सद्वचाम् ॥ पूजयित्वा गणेशं तां स्पृष्ट्वा मन्त्रायुतं जपेत् ॥ ॥ ७५ ॥ पश्चात्कृत्वा तु तच्चूर्णं गृह्णीयात्कर्षमात्रकम् ॥ कपिलाज्यैः पिबेत्प्रातः सप्तभिर्दिवसैः कविः ॥ ७६ ॥ [1]अवश्यमेव भवति पारदस्य क्रियां शृणु ॥ कर्पटे शोधयेदादौ रसमष्टोत्तरं शतम् ॥ ७७ ॥ कर्पासपत्रजरसैर्दिनमेकं च मर्द्दयेत् ॥ कुमारिकाकाशवल्ल्योस्तदा रौप्यसमो भवेत् ॥ ७८ ॥ एतस्य युग्मांशं तु शुद्धं शुल्वं नियोजयेत् ॥ शुल्वादेतत्सार्धभागं शुल्वार्धं कनकन्त्वयः ॥ ७९ ॥ कज्जलाभं वर्धतीयं कर्पासीकन्यकाद्रवैः ॥ दिनैकमारनाले तु मर्दयित्वारनालके ॥ ८० ॥ स्थापयेद्गुटिकां कृत्वा ततो गच्छेच्छिवालये ॥ लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं सिद्धा सा जायते तदा ॥ ८१ ॥ ता मुखे धारयन्मन्त्री रणे च विजयी भवेत् ॥ अवध्यः सर्वभूतानां शस्त्रास्त्रैश्चैव जायते ॥८२॥ तमक्ता म्रियते नैव विषैः सर्पादिसम्भवैः ॥ तत्प्रभावाद्वज्रदेह आकाशे लभते गतिम् ॥ ८३ ॥ नष्टच्छायस्तथादृश्यो जलगोपि प्रजायते ॥ यस्मिन्गेहे स्थिता सा तु तत्र लक्ष्मीः स्थिरा भवेत् ॥ लोकानां दृष्टिबन्धं च सा कुर्य्यात्साधकेच्छया ॥ ८४ ॥ ब्रह्मदण्डीं च लज्जालुं गृह्णीयात्पुष्यभास्करे ॥ वज्राणुकं त्रिलोहं च ताभ्यां सम्यग्विमर्दयेत् ॥ ॥ ८५ ॥ तद्यदा कज्जलीतुल्यं स्यात्तदा गुटिकां चरेत् ॥ ८६ ॥ गणेशं पूजयित्वास्य गृह्णीयाद्गुटिकां शुभाम् ॥ इत्थं विचिन्त्य स्वकरे गृह्णीयात्तन्मनुं जपेत् ॥ ८७ ॥ वक्त्रे शिखायां च करे स्कन्धे वा धारयेच्च ताम् ॥ तस्याः प्रभावान्नायान्ति चौरव्याघ्रोरगादयः ॥ ८८ ॥ साधकस्य समीपं तु न विघ्नैः

१ इदं पूर्वान्वयि ॥

परिभूयते ॥ राजानो वश्यतां यान्ति सुन्दरीणामतिप्रियः ॥ ८९ ॥धत्तूररोचने शङ्खपुष्पी श्वेतापराजिता ॥ सहदेवी ब्रह्मदण्डी हिमं कृष्णागुरुः समम् ॥९०॥सम्पीड्य सम्यक्कुर्य्याच्च गुटिकां विधिना ततः॥कुर्य्याद्द्वादशसाहस्रंजपं तत्तिलके कृते॥ जनानांजायते मोहो गणेशस्य प्रभावतः॥९१॥ दीर्घतुण्डामृताग्राह्याः पुष्यार्के पेषयेच्च ताः॥तच्चूर्णेन करौ लिप्त्वाष्टाधिकं च सहस्रकम्॥९२॥ मनुं जपित्वा तौ हस्तौ गजेभ्यः परिदर्शयेत्॥ विद्रवन्ति तदा नागा ऐरावतसमा अपि॥९३॥गजान्ग्रहीतुकामश्चेद्राजा गजवने तदा॥सम्यक्च कारयेच्छालांदृढां गजनिबन्धिनीम् ॥ ९४ ॥ चतुरस्रां विशालां च दृढावरणसंयुताम् ॥ कुर्य्यात्तत्र स्थलां सम्यक्चतुरस्रां समुन्नताम् ॥ तस्यामुत्तरदिग्भागे कुण्डं कुर्य्याद्यथोदितम्॥मण्डलं सर्वतोभद्रं कृत्वा तत्र प्रपूजयेत् ॥९५॥ नानोपचारैर्गणपं बहिः स्थापनमाचरेत् ॥ त्रिश्रिह्रैनेत्क्रमात्तारश्रीमायाकामबीजकैः ॥ ग्लौंगंभ्यां गणपतये पदेनापि च होमयेत् ॥ ९६ ॥ वरवरदेति ततः पदेनापि च होमयेत् ॥ सर्वं जनं मे वशमानय स्वाहा त्वनेन च ॥ सप्तविंशत्याहुतयो हव्या एधैश्च गोघृतैः ॥९७॥ततः समृद्धिमन्त्रेण तिस्रश्चानेन होमयेत् ॥ भुर्भुवः स्वस्तथा चाग्निर्जातवेदास्ततः परम् ॥ ततश्च मूलमन्त्रेण जुहुयाच्च नवाहुतीः ॥ ९८ ॥ मूलाणुना समस्तेन जपेन्मन्त्रार्णसंख्यया ॥ आज्येनैव ततश्चाष्टद्रव्यैः स्वादुत्रयान्वितैः ॥९९ ॥ देवस्थानस्थदेवानां संख्यया प्रत्यहं ततः॥बहून्सम्भोजयेद्विप्रांस्तदाशीर्भिर्विवर्धितः॥ १००॥ गुरवे दक्षिणां दद्यात्पञ्चाशद्दन्तिनोथ वा ॥ तन्मूल्यं तद्दशांशं वा दत्त्वा सन्तोष्य सद्गुरुम् ॥१०१॥ चतुर्णां मिथुनानां षड्गणेशनिधियुग्मयोः ॥ अङ्गमातृदिगीशानां तन्मंत्रैः सर्पिषा हुनेत् ॥ १०२ ॥ लक्ष्मीनारायणौ गौरीहरौ कामस्तथा रतिः ॥ पृथ्वी वराहाविति तु चत्वारि मिथुनानि च ॥ १०३ ॥ सिद्धिमोदौ तथा ऋद्धिप्रमोदौ कान्तिसंयुतः ॥ सुमुखोथो दुर्मुखस्य प्रियोक्ता मदनावती ॥१०४॥मदनद्रवया युक्तोविघ्नोथो द्राविणीयुतः॥विघ्नकर्तेति षट्प्रोक्ता गणेशाश्च निधिद्वयम्॥ १०५॥शङ्खःपद्मश्च तन्मन्त्रास्तद्बीजं नाम हृत्तथा॥एवं होमं

---

१ स इति शेषः ॥

समाप्याथ नैवेद्यं तु समाचरेत ॥१०६॥ पुनरभ्यर्च्य विघ्नेशं साङ्गं सावरणं तथा ॥ निजे हृदि समुद्वास्य विचरेच्च यथासुखम् ॥ १०७ ॥ ततो दिनैर्वेदवेदैः करिणो निपतन्ति हि ॥ विनायकप्रभावेण कलभाः शतशस्तथा ॥ १०८ ॥ करिणीनां समूहश्च पतत्यम्बु घटे यथा ॥ प्रोक्तकुण्डे प्रोक्तरूपं गणेशं सम्यगर्चयेत् ॥१०९॥ तत्र वह्निं समाधाय जुहुयाल्लक्षसङ्ख्यया॥ पयोघृताभ्यां संयुक्तैः पुष्पैः शर्करयापि च ॥ ११० ॥ क्षौद्रेण पृथगेकैकद्रव्येणागस्त्यगाष्टपः ॥ वेतालसञ्ज्ञा गुटिका कुण्डमध्यात्प्रयाति च ॥ १११॥ अणिमादिकसिद्धीनां प्राप्य तं नायको भवेत् ॥ ब्राह्मे काले समुत्थाय क्षीणचन्द्रे च पर्वणि ॥ ११२ ॥ कपिलायाः पञ्चखण्डं गोमयं प्रतिगृह्य च ॥ संजप्य मन्त्रमयुतं निखातद्वारि धारयेत्॥व्याघ्रक्रोडारिचोरादीन्नात्र कार्य्याविचारणा ॥ ११३ ॥ जातीधत्तूरमञ्जिष्ठा प्रचण्डा हस्तयोजिनी ॥ शिखादिकार्णिकाख्यादि त्वग्जिह्वाचक्षुषामलैः॥ ११४ ॥नासिकाघ्राणजैश्चापि गुटीं सम्यग्विधाय च ॥ स्पृष्ट्वा सम्प्रजपेन्मन्त्रं त्वष्टाधिकसहस्रकम्॥ ११५॥ गुंजिकादिप्रमाणं च यवमानं च लेहयेत्॥ सर्षपार्धं त्वङ्गनाया भक्षितं वश्यकारकम् ॥ ॥ ११६ ॥ जितेन्द्रियो जपेन्मन्त्रमष्टोत्तरसहस्रकम् ॥ दशांशं जुहुयाल्लाजाहयारिकुसुमान्वितान्॥प्राप्नुयात्सत्कुलां कन्यामथ ध्यायेद्विनायकम् ॥ ११७॥ गन्धादिनाभ्यर्च्य तं च मन्त्रं लक्षमितं जपेत् ॥ निगडान्मुच्यते कस्मादथ बिल्वस्य पुष्पकम् ॥ ११८ ॥ तगरं देवदारुं च प्रियंग्वगरुचन्दने ॥ नागकेशरमेतानि मधुना भावयेत्समम् ॥ ११९ ॥ गुटीं कृत्वाथ संस्पृश्य सहस्राष्टकमाजपेत् ॥ भवेत्सा सिद्धगुटिका तद्रूपाद्रोगनाशनम्॥ १२० ॥ एतद्रूपाच्च निस्स्वोपि धनी स्याज्जनवल्लभः ॥ दुर्भगा सुभगा स्त्री स्यात्कुमारी लभते वरम् जलाशये ॥१२१॥ लक्षजपाद्वृष्टिः सप्ताहतो भवेत ॥ अथास्य लक्षहोमस्य प्रयोगं कामिकं शृणु ॥ १२२ ॥ हुनेद्गोपयसा गोर्थे स्वर्णार्थे मधुना हुनेत् ॥ घृतेन लक्ष्म्यै पयसे हुनेच्छर्करया द्विजः ॥ १२३ ॥ दध्ना सर्वर्द्धये होमो घृतान्नैरन्नवृद्धये ॥ लाजैश्च यशसे होमो धनार्थन्तिलतण्डुलैः ॥ ॥ १२४ ॥ कौसुम्भैः करवीरैर्वा वस्त्रार्थं होममाचरेत् ॥ यवैस्तु वशयेद्भू-

पमुत्पलैश्चापि तद्वधूम् ॥ १२५ ॥ कैरवैर्मन्त्रिणस्तस्य पुत्तल्यादि च पिष्ट-
जम् ॥ कृत्वा हुनेद्वधूर्वश्या वटात्प्लक्षादुदुम्बरात् ॥ १२६ ॥ कस्मादपि
गृहीत्वा च समिधो होममाचरेत् ॥ विप्राद्यान्वशयेद्वर्णांल्लोणहोमादवर्षणम् ॥
॥ १२७ ॥ विनश्येद्भूयसी वृष्टिर्महागणपतेस्तदा ॥ वर्णानस्य प्रवक्ष्यामि
काम्यकर्म्माणि संस्मरेत् ॥ १२८ ॥ पीतं स्तम्भेरुणं वश्ये धूम्रमुच्चाटने स्म-
रेत् ॥ मारणे कृष्णमारक्तमाकृष्टौ पाटलं द्विषि ॥ हरिद्वर्णं धनप्राप्त्यै मुक्त्यै
शुक्लं च संस्मरेत् ॥ १२९ ॥ गणेशतर्प्पणं वक्ष्ये सर्वकामफलप्रदम् ॥
त्रिवेदाङ्कसमं यच्च प्रकटं वक्ष्यतेधुना ॥ १३० ॥ एकान्ते विजने रम्ये सर्वो-
पद्रववर्जिते ॥ कृतस्नानादिको मन्त्री पूर्ववन्न्याससंयुतः ॥ १३१ ॥ तडाग-
मध्ये सञ्चिन्त्य पुष्पितं नलिनीवनम् ॥ तस्य मध्ये महापद्मन्तरुणादित्यस-
न्निभम् ॥ १३२ ॥ समुन्नतं सुगन्धाढ्यं रमणीयम्मनोहरम् ॥ सद्यो विक-
सितं ध्यायेन्मन्त्री पूर्वोक्तमन्त्रवत् ॥ १३३ ॥ शुद्धं रजतसोपानं पश्यन्तं रवि-
मण्डलात् ॥ विनिर्गत्यावरुह्याथ कर्णिकामध्यसंस्थितम् ॥ १३४ ॥
इति ध्यात्वा सावरणम्महागणपतिम्पुनः ॥ प्रवरैर्गन्धकुसुमैः प्राग्वत्सा-
वरणं यजेत् ॥ १३५ ॥ निधाय पुष्करमुखं साधकेन्द्रस्य मूर्द्धनि ॥ वर्षन्तं
रत्नधाराभिर्ध्यात्वा देवस्य मूर्द्धनि ॥ १३६ ॥ चन्द्रचन्दनकाश्मीरकस्तूरी
मिलितैर्ज्जलैः ॥ तर्पयेत्परया भक्त्या देवदेवं प्रसन्नधीः ॥ १३७ ॥ यथा
दिष्टस्य नामान्ते तर्पयामीति संवदेत् ॥ तर्प्पणस्य विधिश्चायं शृणु वैदिक-
तर्प्पणम् ॥ १३८ ॥ तर्प्पयाम्येतदन्ते तु स्वाहां वैदिक ईरयेत् ॥ इत-
रस्तु नमो ब्रूयाद्वामाचारी नमो वदेत ॥ १३९ ॥ मूलमन्त्रं समुच्चार्य्य
महागणपतिन्ततः ॥ देवस्य मूर्ध्नि प्रथमन्दशवारं प्रतर्प्पयेत् ॥ १४० ॥
पुनश्चतुश्चतुर्वारं ज्ञेयं सर्वत्र तर्प्पणम् ॥ एकं वर्णं समुच्चार्य्य मूलमन्त्रस्य
तर्प्पयेत् ॥ १४१ ॥ पुनः सम्पूर्णमूलेन चतुर्वारन्तु तर्प्पणम् ॥ एवं षट्
पंचसंख्याकं चतुष्कन्तर्प्पणम्भवेत् ॥ १४२ ॥ पुनर्मूलेन सन्तर्प्य ततो यु-
ग्मानि तर्प्पयेत् ॥ तत्र चायं प्रयोगः स्यादमुकं सहितामिति॥अमुकीन्तर्प्प-

१ तर्पयामि इति शेषः । २ अमुकेनेति शेषः ॥

यामीति पुनर्मूलेन तर्प्पयेत् ॥ १४३ ॥ अमुकया युक्तममुकन्तर्प्पयामि ततो वदेत् ॥ पुनर्मूलम्भवेदेवं चतुष्कमपि तर्प्पणम् ॥ १४४ ॥ एवं षड्गणपानां च सजायानान्तदन्तरा ॥ तर्प्पणं मूलमन्त्रेण चतुष्काजिनसंख्यकम् ॥ १४५ ॥ वसुन्धराशङ्खनिधेर्भार्य्या पद्मनिधेस्तथा ॥ भवेद्वसुमती ताभ्याम्मध्ये मूलेन चाष्टधा ॥ १४६ ॥ तर्प्पणं स्यात्तु मूलेन पुनश्चापि तु तर्प्पयेत् ॥ एवं भूभूचतुष्कांकैर्वेदवेदकृतैर्मितम् ॥ १४७ ॥ तर्प्पणस्य विधिं वच्मि तान्त्रिकाणान्तु यन्मितम्॥आदौ मूलेन सन्तर्प्य मन्त्रवर्णैश्च तर्प्पयेत्॥१४८॥ भूभूभूभूकुभूपंचपंच दिग्भितयेन च ॥ अन्तरान्तरमूलेन चैवं सिद्धिश्चतुष्किका ॥ ॥ १४९ ॥ ततो मूलेन सन्तर्प्य गणेशायुधतर्प्पणम् ॥ कुर्य्यादन्तरमूलेन ह्यायुधानां क्रमस्त्वयम् ॥ १५० ॥ आदौ तद्बीजमुच्चार्य्य प्रणवं च वदेत्ततः ॥ अमुकात्मने च प्रवदेदमुकाय नमस्त्विति ॥ १५१ ॥ नमोमुकन्तर्प्पयामि स्वाहेति कथितो मनुः ॥ विघ्नम्भूमौ रमां मायां श्रीं ह्रीं क्लीं वसुधां च गम् ॥ १५२ ॥ एकादशे गणेशस्य षड्बीजान्यपि संवदेत् ॥ मन्त्रं फलञ्च शक्तिं च प्राणवन्धं वदेत्ततः ॥ १५३ ॥ चक्रव्याप्तिश्च तारं च भूविद्या च त्रिलोककम् ॥ तदात्मन इमे प्रोक्तास्तेषान्नामान्यहं ब्रुवे ॥ १५४ ॥ बीजपूरं च परशुं कार्म्मुकं च त्रिशूलकम् ॥ चक्राब्जपाशोत्पलानि कलभाग्रविषाणयुक् ॥ १५५ ॥ शुण्डायां रत्नकलशमित्थमायुधनिर्णयः ॥ सर्वं द्वाविंशसंख्याकन्तर्प्पणं च प्रजायते ॥ १५६ ॥ षड्बीजान्ते चतुर्थ्यन्तं तत्तन्नाम समुच्चरेत् ॥ पठित्वा सकलम्मूलममुकङ्गणपं वदेत् ॥ तर्प्पयाम्यग्निजायान्तो मन्त्रो मूलान्तरान्तरः ॥ १५७ ॥ विघ्नो विनायको वीरः शूरो वरद एव च ॥ इभवक्रश्चैकदन्तो लम्बोदरगणेश्वरौ ॥ १५८ ॥ क्षिप्रप्रसादनश्चैव महागणपतिस्तथा ॥ एवं विंशच्चतुष्काः स्युस्ततो युग्मानि तर्प्पयेत् ॥ १५९ ॥ युग्मबीजं वदेदादौ गणेशस्य तदुत्तरम् ॥ प्राग्वत्तद्युग्ममाभाष्य मूलेनान्तरितानि च ॥ १६० ॥ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौमिदन्तेषां क्रमाद्बीजचतुष्ककम् ॥ एवं षोडशसंख्यानि

१ भूमित्यत्रोक्तभाव आर्षः ॥

चतुष्काणि भवन्त्यपि ॥ १६१ ॥ श्रीगणेशबीजपूर्वान्तांस्तर्प्पयेच्च विनायकान् ॥ मूलेनान्तरितांश्चैव चतुष्का जिनसंख्यकाः ॥ १६२ ॥ तर्प्पयेद्विधिवत्साग्वन्मूलमन्त्रान्तरान्तरे ॥ ह्रींगं वसुन्धराशंखौ तर्प्पणीयौ च पूर्ववत्॥ ॥ १६३ ॥ अत्रादौ स्त्रीपुमानन्ते बीजयोर्विपरीतता ॥ ग्लौंगं वसुमती पद्मनिध्योर्बीजन्तु तर्प्पणे ॥ १६४ ॥ स्वमष्टौ तर्पणानि मूलेनान्ते प्रतर्पयेत् ॥ भवन्ति वेदवेदाब्धिसंख्यकास्तर्पणक्रमाः ॥ १६५ ॥ मूलमन्त्रश्चतुर्वारम्पूर्वं सन्तर्पयेत्ततः ॥ स्वबीजाद्यस्वाहान्तानि युग्मान्येवम्प्रतर्प्पयेत् ॥ १६६ ॥ गणपानां ततः षट्कं निधिं युग्मं प्रतर्पयेत् ॥ मध्ये मध्ये मूलमन्त्रं चतुर्वारमिति क्रमात् ॥ भवेदष्टोत्तरशतं लघुतर्प्पणमीरितम् ॥ १६७ ॥ महागणपतिं पुष्टिं चत्वारि मिथुनानि च ॥ षड्गणेशान्निधियुगमेवमेतत्त्रयोदश ॥ १६८ ॥ अथाव्यस्तानि चैतानि चान्तरा मूलतर्प्पणम् ॥ कृतञ्च द्विशतञ्चाष्टाधिकमाद्यन्तयोस्तथा ॥ १६९ ॥ मूलन्तदा तु द्विशतञ्जायते षोडशाधिकम् ॥ तर्प्पणम्मध्यमञ्चैतन्महागणपतेर्मतम् ॥ १७० ॥ अथवा पूर्ववत्कुर्य्यादादौ मूलेन तर्प्पणम् ॥ ततश्च मूलमन्त्रस्य चैकैकेनाक्षरेण च ॥ १७१ ॥ मूलमन्त्रस्यान्तरेण कुर्य्यादेवञ्चतुश्चतुः ॥ गजाश्विनेयतुल्यन्तज्जायते च ततः परम् ॥ १७२ ॥ पुनर्भव्यप्रकारेण तर्प्पयेदिति जायते ॥ महागणपतेः पूर्णं तर्प्पणन्तन्त्रवैदिकम् ॥ १७३ ॥ कामनाभेदैस्तु तर्प्पणं वक्ष्यतेधुना ॥ पुष्करे तर्प्पयेद्देवम्मोक्षार्थं शुद्धवारिभिः ॥ १७४ ॥ लक्ष्मीकामेन गोदुग्धैर्मूर्ध्नि तर्प्यो गजाननः ॥ गुह्यप्रदेशे मधुना कामार्थं तर्प्पयेद्विभुम् ॥ १७५ ॥ आकर्षणार्थं वश्यार्थं नेत्रयोर्मधुना तु तम् ॥ घृतेन राजवश्याय देवं पृष्ठे प्रतर्प्पयेत् ॥ १७६ ॥ तथा चैरण्डतैलेन रण्डावश्याय तर्प्पणम् ॥ प्रीतेर्विवृद्ध्यै स्कन्धे तु पयोभिस्तर्प्पयेद्विभुम् ॥ १७७ ॥ क्षीरेण दध्ना मधुना तुण्डे तत्पुत्रवृद्धिकृत् ॥ एवं यः पूजयेत्सम्यग्गणेशम्ममवल्लभम् ॥ तस्य भुक्तिश्च मुक्तिश्च जायते नात्र संशयः ॥ १७८ ॥ अनेनैव सुतेन्द्रेण दिवोदासो विवासितः ॥ कल्पयित्वा वेदवाह्यं मार्गं कलियुगप्रियम् ॥ १७९ ॥ आनीताश्च महत्यात्र दक्षाम्नायस्य देवताः ॥ तदुपासनतो लोकैः स्वस्वधर्म्मो विगर्हितः ॥ १८० ॥ अस्वादन्नस्तु पृक्ष-

स्थवारुण्याः काङ्क्षते फलम्॥क्षुधातुरस्तु भूमिष्ठन्दूरीकृत्य कशेरुकम् ॥१८१॥ दिवोदासीयलोकैस्तु दृष्ट्वा त्वरितकौतुकम् ॥ अन्तःप्रधारितो धर्म्मो वामान्ते कौलिकादिकः ॥ १८२ ॥ राज्ञो धर्म्मं प्रजा भुंक्ते प्रजापापन्तु भूपतिः ॥ तत्पातकेन भूपोसौ काशीतः प्रेषितो दिवम् ॥ मया च काश्यां वसतिः कृता पुत्रप्रसादतः ॥ १८३ ॥ येये वामपथे देवा गणकेन नियोजिताः ॥ काशी-प्रवेशकामार्थं तेते सन्तोषिताः परैः ॥ १८४ ॥ तत्र चीनागणैर्देवैर्वाममार्गेण तर्प्पणम् ॥ याचितन्तन्मया दत्तन्तन्त्रेषु प्रतिपादितम् ॥ १८५ ॥ तन्मार्ग-निरता वीरा जायन्ते क्षत्रियादयः ॥ स्त्रियो भवन्ति योगिन्यो विप्रस्तत्परि-वर्ज्जयेत् ॥ १८६ ॥ दिवोदासस्य राज्यान्ते प्राप्ते कलियुगे च तैः ॥ उप-द्रुता वेदमार्गे विहिताश्च द्विजातयः ॥ १८७ ॥ दुर्जनानान्तु ते भीत्या हिमाचलमुपाश्रिताः ॥ तत्रापि तैरभिद्रुत्य धर्म्मलोपार्थमुद्यतम् ॥ १८८ ॥ तदा विप्रैः स्तुतश्चाहम्बहुभिर्वैदिकैः स्तवैः ॥ तेषाम्मध्यात्समुद्भूतम्मम लिङ्गं मुखान्वितम् ॥ १८९ ॥ तद्विलोक्य तु ते वीराः साष्टाङ्गं प्रणता जगुः ॥ देवदेव त्वदुक्तस्य ॥ मार्गस्यायं व्यतिक्रमः ॥ १९० ॥ क्रियते वैदिकैर्मूर्खै-स्तदुद्धारार्थमुद्यताः गङ्गाजलादप्यधिकम्पावनं कारणं त्विदम् ॥ १९१ ॥ कन्दमूलफलादिभ्यः पवित्रं स्वादु पोषकृत् ॥ एतन्मांसं वयं दद्म उद्धारार्थं त्रिजन्मनाम् ॥ १९२ ॥ नानातीर्थसमुद्भूता अनेकविधिसंस्कृताः ॥ भोग-मोक्षप्रदा मत्स्यास्तानेभ्यो दातुमुद्यताः ॥ १९३ ॥ संसारस्य ह्यसारस्य सारंसारङ्गलोचनाः ॥ अर्द्धाङ्गे या त्वया देव विष्णुना हृदये कृता १९४॥ उत्सङ्गे ब्रह्मणा चापि देवेन्द्रेण निजासने ॥ वयं कारुणिकास्तात ह्येतेभ्यो दातुमुद्यताः॥१९५॥षण्मांसैश्च षडन्नैश्च षट्तीर्थैर्देवसंयुताः ॥ षट्सुगन्धा षड्र-साश्च मुद्रा दातुं समुद्यताः ॥ १९६ ॥ ता एते नैव गृह्णन्ति यष्टव्यं पशवो यथा ॥ स्वर्णपात्रस्थपरममन्नं हित्वा तृणाशिनः ॥ १९७ ॥ तदा मया धर्मपादरक्षार्थं गदितं वचः ॥ शृण्वन्तु मद्वचो वीराः सर्वप्राणिकृपायुतम् ॥ ॥ १९८ ॥ अस्मिन्पापे कलौ लोका नेया नो कौलिके पथि ॥ अतिक्षु-द्रादियोनीनान्दशस्वेकः प्रजायते ॥ १९९ ॥ कृमियोनिषु तेषान्तु दशके

चोन्दुरादिकः ॥ दशके चोन्दुरादीनां विडालादिः प्रजायते ॥ २०० ॥ तेषान्तु दशके पक्षी कश्चिदेकः प्रजायते ॥ तन्मध्ये दशके कश्चिन्मृगजातिषु जायते ॥ २०१ ॥ तेषान्दशकमध्ये च महिषो वा वृषो भवेत् ॥ तेषान्तु दशके कश्चित्खरो वा करभो भवेत् ॥ २०२ ॥ भवेत्तद्दशके कश्चिद्धयादीनाञ्च जातिषु॥तेषान्तु दशके कश्चिन्नरो वाकुञ्जरो भवेत् ॥२०३॥आयुर्वै यस्य कालेन भावयन्तु सदा त्विमम् ॥ तेषामपि मनुष्याणाम्मध्यादेकः प्रजायते ॥ २०४ ॥ कश्चिद्धर्मं पुरस्कृत्य मुक्तोहमिति जायते ॥ तेषान्दशकमध्ये तु कश्चिद्वर्णः प्रजायते॥२०५॥ तेषान्तु दशके कश्चिदनुलोमो भवेज्जनः॥ तेषान्तु दशके कश्चित्प्राप्नुयाद्द्विजतां नरः ॥ २०६ ॥ द्विजानान्दशके कश्चिद्विप्रो भवति कष्टतः ॥ तेषान्तु दशके कश्चित्कर्म्मनिष्ठः प्रजायते ॥ २०७ ॥ कर्म्मिणां दशके कश्चिद्वेदाशीलवान्नरः ॥ तेषां तु दशके कश्चिद्योगी भवति बालकः ॥ २०८ ॥ योगिनां दशके कश्चिदेको ज्ञानी प्रजायते ॥ ज्ञानिनां दशके कश्चिन्मुक्तो भवति वा न वा ॥ २०९ ॥ एवं मोक्षस्सुदुस्साध्यः संसारोयं चिरं स्थितः ॥ सर्वे एव हि मुक्ताः स्युः प्रवृत्ताः कौलिके पथि ॥ ब्रह्मसृष्टिविनाशश्च तूर्णमेव भविष्यति ॥ २१० ॥ एवं प्रतारिता वीरा नन्नृतुर्मदमोहिताः ॥ वयम्मुक्तावयम्मुक्ता अन्योन्यञ्जगुरोजसा ॥ २११ ॥ पुनः प्रमुदिताः सर्वे वचनञ्चेदमब्रुवन् ॥ अहो पशुजना यूयं निरयम्परमं गताः ॥ २१२ ॥ ते वरं याचतास्मभ्यं स्वोद्धारार्थम्भवान्तरे॥ततः प्रमुदितैर्विप्रैर्याचितोयं वरस्तदा ॥ २१३ ॥ अयं यः स कपालीनो लिङ्गरूपी प्रदृश्यते ॥ अस्माकन्तत्र रमताम्मनःस्वव्यभिचारितम् ॥ २१४ ॥ इति श्रुत्वा तदा वीरा वचनञ्चेदमब्रुवन् ॥ सत्यम्भवतु तच्चात्र पशुभिर्याचितन्तु यत् ॥ २१५ ॥ ब्रह्मविष्णुमहेशादिशक्तिसूर्य्यदिवौकसाम् ॥ नाथानस्मान्विहायाद्य पशुभिः किन्नु याच्यते २१६ ॥ वीराय मदिरा मन्त्रो मुद्रा मत्स्यः पलानि च ॥ अहो दैन्यं वयम्भोगमोक्षदाः कौलिका जनाः ॥ भोगेन मुक्तिरस्माकं सा त्यक्ता पशुभिर्जनैः ॥ २१७ ॥ भगे लिङ्गं समाधाय यत्सुखं समवाप्यते ॥ तेनार्चितोन्तरात्मायम्मुक्तो भवति तत्क्षणात् ॥ २१८ ॥ जठराग्नौ हूयते

यत्त्वनेकविधिसंस्कृतम् ॥ फलं तेन तु तुष्टश्चेदन्तरात्मा विमुच्यते ॥ ॥ २१९ ॥ यदैव हृदयङ्गच्छेत्सुधातोप्यधिका सुरा ॥ तदैव सकलाः क्लेशा नाशं यान्ति विमुच्यते ॥ २२० ॥ यदैव गन्धो मुद्राया नासिकाञ्च प्रधावति ॥ अमृतानामयं सारः शफरः परिकीर्त्तितः ॥ २२१ ॥ तद्योगादमृतत्वं चेन्नास्ति किं वैदिके पथि॥अहो शृण्वन्तु पशवस्तन्त्रसारमिदं वचः ॥२२२॥ पण्डितो वापि मूर्खो वा दीक्षितो वाप्यदीक्षितः ॥ मुद्राः शतसहस्रन्तु कृत्वा मोक्षमवाप्नुयात ॥ २२३ ॥ मुद्रायाः करणञ्चैवं शिक्षणीयं कदाचन ॥ चामुण्डाद्या महादेव्यो भैरवाद्या महाबलाः ॥२२४॥ मुद्राभिरेव तृप्यन्ति न पुष्पादिकपूजनैः ॥ महापूजा कृता तेन येन मुद्राष्टकं कृतम्॥२२५॥स यत्पदमवाप्नोति तन्न ब्रह्मा न शंकरः ॥ अवश्यमेव मुक्तिः स्यात्सहस्रभगदर्शनात् ॥२२६॥ पुरा कौलिकमार्गस्य निन्दा वै विष्णुना कृता ॥ तत्पातकवशाज्जातो मत्तो दशरथात्मजः ॥ २२७ ॥ यत्तेन निन्दिता शक्तिस्तत्सीता रक्षसा हृता ॥ दुःखञ्च समनुप्राप्तं वियोगश्चानुकालिकः ॥ २२८ ॥ शरीरं वैभवं लब्ध्वा-पुनस्तेन कृतन्तपः ॥ तदा गोपकुले जातः सदा शक्तिनिषेवकः ॥ २२९ ॥ शरीरार्धेन बालिभिर्नित्यमासवसेवकः षोडशस्त्रीसहस्राणाञ्जातोसौ भगदर्शनात॥ ॥ २३० ॥ मोक्षाधिकारिपशवः शृणुतैतद्धितं वचः ॥ विना मांसं विना मासं विना मत्स्यं च मैथुनम् ॥ २३१ ॥ विना मुद्रामन्यतमं भवेन्नास्तीष्ट-साधनम्॥पशुभिर्याचितं यत्तु किमु चैतत्तदेव हि ॥२२२ ॥ एवमुक्तेषु वीरेषु मुनयः शंसितव्रताः ॥ अन्तः प्रफुल्लवदनाः शान्तिपूर्वं वचो जगुः ॥ ३३३ ॥ वयन्तु पशवो विप्रा अन्नप्राणा विलोकिताः ॥ यूयं सिंहाः सिंहवच्च सदा मांसनिषेवकाः ॥ २३४ ॥ पशूनां च यथा तृप्तिः शाद्वलेनैव जायते ॥ अन्नेन च तथास्माकं न मांसं भक्षितुं क्षमाः॥२३५॥ सिंहानां तु यथा भक्ष्यं मांसं नान्नं कदाचन ॥ तथैव वीरसिंहानां भक्ष्यं मांसादिकं किल ॥२३६॥ इति श्रुत्वा वचस्तेषां प्रोचुस्ते च महेश्वरम् ॥ त्वां सेवयितुमिच्छन्ति पशवो विप्ररूपिणः ॥२३७॥ तस्मात्पशुपतिस्त्वं च नेपालेत्र स्थिरो भव॥इत्युक्त्वा ते पुनः पीत्वा मद्यं मत्तास्तथाभवन् ॥ २३८ ॥ तदा नानाविधैः स्तोत्रै-

विप्रैः सन्तोषितो ह्यहम् ॥ तदा तेभ्यो मया प्रोक्तं व्रियतांव्रियतामिति ॥ ॥२३९॥उक्तं तैश्च पुनर्देव कथं मुक्तिः कलौ भवेत् ॥ येनास्माकं भवेच्छ्रेय-स्तन्धर्म्मं वद नः प्रभो ॥ २४० ॥ इति तेषां वचः श्रुत्वा मया तत्त्वं निरू-पितम् ॥ ज्ञानं विना न मोक्षोत्र ज्ञानं धर्म्माद्दते न हि॥तस्माद्विजाः प्रकर्त्तव्यं वेदोक्तं कर्म्मं नित्यशः ॥ २४१ ॥ यथा पिष्टेन बडिशमत्र गुप्तं निपात्यते मत्स्यानां ग्रहणार्थन्तु तद्वत्तन्त्रनिषेवणम् ॥ २४२ ॥ कश्चिन्मत्स्यो दैवयोगा-च्चूर्णभोक्ता न विद्यते॥तदास्य जायते तृप्तिर्जीवनं च भवेद्यथा॥२४३॥तथैव वाममार्गे च ज्ञाननिर्दग्धकल्मषाः ॥ भवन्ति मुक्ता नान्ये च तस्मात्तं परिवर्ज्जे-येत ॥ २४४ ॥ ये वाममार्गनिरता वेदबाह्यानुसारतः ॥ स्वधर्म्मेव शंसन्ति वचस्तेषां न मानयेत् ॥२४५॥ अस्मिन्कलियुगे घोरे यथाशक्ति करोति यः सेवनं वेदमार्गस्य कलौ तस्य जनिर्न हि ॥ २४६ ॥ यमलोके न निरये पाताले नैवनैव च ॥ यद्ब्राह्मणे जन्म कलौ स एव निरयः स्मृतः ॥ २४७ ॥ अतः परं प्रवक्ष्यामि गणेशेन हृताश्च ये ॥ सत्कार्यार्थं दिवोदासनिस्सारार्थं-देवताः ॥ २४८ ॥ आनीतास्तास्तु मम वै पार्वत्याश्चापि वल्लभाः ॥ गणेश शासनात्कामो दग्धोपि पुनरुत्थितः ॥ २४९ ॥ दिवोदासस्य भवने सर्वेषां हृदये स्थितः ॥ तस्य मन्त्रान्प्रवक्ष्यामि लोकद्वयफलप्रदान्॥ २५० ॥ आदौ क्लीम्बीजरूपोस्य मन्त्र एकाक्षरो मतः ॥ सम्मोहनो मुनिश्छन्दो गायत्रं देवता स्मरः ॥ षड्दीर्घभाजा बीजेन षडङ्गानि प्रकल्पयेत् ॥ २५१ ॥ रक्ताम्बरं रक्तवर्णं रक्तगन्धानुलेपनम् ॥ नानारत्नौघमुकुटभूषणैर्भूषितं शुभम् ॥२५२॥ पाशांकुशाविक्षुचापं पुष्पेषून्दधतं करैः ॥ उपविष्टं रक्तपद्मे कामदेवं विभावये ॥ २५३ ॥ पद्ममष्टदलं कृत्वा मध्येनङ्गं समर्चयेत ॥ कर्णिकायां च षट्पत्रे कोणेष्वङ्गानि पूजयेत् ॥ २५४ ॥ देवाग्रतस्तु मध्यान्तमर्चयेत्केशरेषु च ॥ मोहिनीं क्षोभिणीं चैव त्रासिनीं स्तम्भिनीं ततः ॥ २५५ ॥ आकर्षिणीं द्राविणीं ह्लादिनीं क्लिन्नां च क्लेदिनीम् ॥ षट्पत्रे मदनानङ्गमन्मथा कुसुमाह्वयाः ॥ २५६ अनङ्गकुसुमातुरा ह्यनङ्गाशिशिरापि च ॥ अनङ्गमेखलानङ्गदीपिका च ततः परम् ॥ २५७ ॥ सर्वा ध्येयाः पद्महस्ताः सालंकाराश्च तद्बहिः ॥

पद्मे षोडशपत्राढ्ये स्वाग्रतः परिपूजयेत् ॥ २५८ ॥ युवती विप्रलम्भा च ज्योत्स्ना सूरुमदद्रवा ॥ सुरता वारुणी लोला लीला सौदामनी तथा ॥ ॥ २५९ ॥ कामच्छत्रा चन्द्ररेखा शुकी च मदनाह्वया ॥ योनिर्मायावती चेति तरुण्यः सस्मिताननाः ॥ २६० ॥ कह्लारहस्ताः कामार्त्ताः पत्राग्रे परिचारकान् ॥ विलासविभ्रमौ मोहं शोकं कामस्य पूजयेत् ॥ २६१ ॥ मदनातुरापत्रपौ युवानं चन्दनं तथा ॥ रतिप्रियं चूतपुष्पं ग्रीष्मं तापनमूर्जकम् ॥ ॥ २६२ ॥ हेमन्तं शिशिरं चापि मदन्ते पुष्पसायकाः ॥ एते चार्पिततूणीराः शोण-स्त्रीसक्तमानसाः ॥ २६३ ॥ इक्षुचापाश्च तद्बाह्ये चाष्टपत्रदलेर्चयेत् ॥ परभूः सारसाक्षश्च शुको मेघस्ततः परम् ॥ २६४ ॥ आपांगोरुविलासौ च हीनचीरो रतिप्रियः ॥ भूगृहस्य च कोणे च चतस्रः पूजयेदिमाः ॥ २६५ ॥ माधव्याख्या मालती च हरिणाक्षी मदोत्कटा ॥ श्वेतचामरसद्धस्ताः श्यामा भूषितविग्रहाः ॥ २६६ ॥ इन्द्रादींश्च ततो बाह्ये वज्रादीन्यपि पूजयेत् ॥ एवमाराधयेद्यस्तु गन्धपुष्पादिभिः स्मरम् ॥ २६७ ॥ सौभाग्यमतुलं कामान्महालक्ष्मीं स विन्दति ॥ पुरश्चरणमेतस्य लक्षं द्वादश चोच्यते ॥ २६८ ॥ तद्दशांशं त्रिमध्वक्तैः किंशुकप्रसवैर्हुनेत् ॥ तर्पणं मार्जनं कृत्वा ब्राह्मणानपि भोजयेत् ॥ २६९ ॥ ततोभ्यर्च्य गुरुं विप्रैः प्रणम्य च सुतोषयेत् ॥ एवं सिद्धमनुर्मन्त्री प्रयोगानाचरेत्ततः ॥ २७० ॥ अशोककुसुमैः स्वादुत्रयाक्तै-स्त्रिदिनं हुनेत् ॥ अष्टाधिकं सहस्रं यः सर्वेषां स प्रियो भवेत् ॥ २७१ ॥ गोघृतेन सुसंपातमष्टोत्तरशतं हुनेत् ॥ सम्यक्प्रपूजिते वह्नौ मन्त्रेणानेन मन्त्र-वित् ॥ २७२ ॥ सम्पातं सर्पिषां यो वै स्वां नारीं भोजयेत्प्रिये ॥ आज्ञानुव-र्तिनी सास्य भवेज्जन्मनि जन्मनि ॥ २७३ ॥ दध्यक्तलाजहोमेन प्रत्यहं मण्डलावधि ॥ वाञ्छिताँल्लभते मन्त्री कन्या सापि प्रियं पतिम् ॥ २७४ ॥ मालामन्त्रं प्रवक्ष्यामि कामदेवस्य सिद्धिदम् ॥ हृदयं कामदेवाय सर्वजनप्रिया-य च ॥ २७५ ॥ सर्वजनसम्मोहनाय ज्वलद्वह्निमयं वदेत् ॥ प्रज्वल सर्वजनस्य हृदयं ममकीर्तयेत् ॥ २७६ ॥ वशंकुरुकुरु स्वाहा मन्त्रो नागकृताक्षरः ॥ षड्दीर्घ-यतक्लींबीजैः षडङ्गविधिरीरितः ॥ २७७ ॥ आदौ करांगुलाग्रेतान्वर्णान्कामस्य

चिन्तयेत् ॥ द्रामायां द्राविणीं देवीं द्रोमायां क्षोभिणीमपि ॥ २७८ ॥ क्लीं च वशीकरीं न्यस्येत्क्लूं क्लीमायां महेश्वरीम् ॥ आकर्षिणीं च सः पूर्वां सम्मोहिनींहमादिकाम् ॥२७९॥ काममन्मथकन्दर्प्पमकरध्वजसञ्ज्ञकाः॥मीनकेतुरिमे न्यस्याः पञ्चाङ्गेष्वंगुलीषु च ॥२८०॥ चत्वारिंशन्मन्त्रवर्णानिकारादिस्थले न्यसेत् ॥ मातृकाया नासिकाङ्गेष्वङ्गेष्वथ ततः परम् ॥२८१॥ जठरे हृदये कण्ठे वक्त्रेनसि च पञ्चसु ॥ न्यस्यद्वर्णत्रयं शेषं व्यापकत्वेन सन्न्यसेत्॥ ॥ २८२ ॥ पुनः सम्पूर्णमनुना व्यापकं पुनराचरेत् ॥ ततश्च मातृकार्णानां बृहन्न्यासं समाचरेत्॥ २८३ ॥कामबीजप्रकुटितां मात्रामुक्त्वा च युग्मकम् ॥ स्यान्तं नमः समुच्चार्य्य मातृकाङ्गेषु विन्यसेत् ॥ २८४ ॥ रतियुक्तं न्यसेत्कामं कामदम्प्रीतिसंयुतम् ॥ कान्तां च कामयुक्तां हि कान्तिमन्तञ्च मोहिनीम् ॥ २८५ ॥ कामाङ्गं कमलायुक्तं कामचारं विलासिनीम् ॥ कामयुक्तां कल्पनाञ्च श्यामलां कामुकान्विताम् ॥ शुचिस्मितां न्यसेत्कामवर्धनेन समन्विताम् ॥ २८६ ॥ रमायुक्तं विशालाक्षं रमणं लोलजिह्विकाम् ॥ दिगम्बरां रतिनाथं रमाञ्चातिरतिप्रियम् ॥ रात्रिनाथं कुब्जिकाञ्च रमाकान्तञ्च कान्तया ॥ २८७ ॥ नित्यया रममाणञ्च कल्परूपां निशाकरम् ॥ नन्दकं भोगिनीयुक्तं नन्दनं कामदायुतम् ॥ सुलोचनां नन्दिनञ्च नन्दयन्तं प्रलापिनीम् ॥ २८८ ॥ पञ्चबाणं च मदनींरतिभङ्गकलिप्रियाम् ॥ पुष्पधन्वा मृगाक्षी च सुमुखा च महाधनुः ॥ भ्रमणो नलिनीयुक्तो भ्रमणो यजिनीयुतः॥ २८९ ॥ मन्मथो मदनायुक्तो सोभङ्गश्चापि मालया ॥ शान्तश्च मुग्धया युक्तो भ्रामको रमया युतः ॥ २९० ॥ शृङ्गश्च भ्रमया युक्तो भ्रांताचारस्तु लोलया ॥ भ्रमावहश्चञ्चलया मोहनोदीर्घजिह्वया ॥ २९१ ॥ रतिप्रियां मोदकं च मोहाक्षीं लोलमेव च ॥ मोहवर्धनशृङ्गिण्यो मदनं पाटलां तथा ॥ २९२ ॥ मन्मथं मदनां चापि मालां मातङ्गमेव च ॥ भृङ्गनायकहंसिन्यौ गायकं विश्वतोमुखीम् ॥ २९३ ॥ गीतिज्ञं जगदानन्दं नर्तकं रमणीमपि ॥ क्ष्वेलकं कान्तिसंयुक्तं चोन्मत्तं कलकण्ठिकाम् ॥ २९४ ॥ मत्तं वृकोदरायुक्तं मेज्यौ श्यामां विलासिनम् ॥

सर्वोत्तमायुतं लोभवर्धनं न्यस्य चिन्तयेत् ॥ २९५ ॥ प्राग्वत्पूजादिकं तद्व-त्कृष्णपीठे समर्चयेत् ॥ प्रयोगाश्चापि कर्त्तव्याः कृष्णगोपालसम्भवाः॥ २९६॥ त्रयोदश्यां शुक्लपक्षे सोमवारे सहस्रकम्॥ अष्टोत्तरं च ताम्बूलं गजपुष्करभक्षितम्॥ ॥ २९७ ॥ पुरुषत्वमवाप्नोति सत्पुत्रं द्रावयेत्प्रियाम् ॥ अथ कामस्य गायत्री प्रोच्यते पूजनादिकम् ॥ संन्यासएकाक्षरवन्मुनिर्वात्स्यायनो मतः ॥२९८॥ कामदेवाय विद्महे पुष्पबाणाय धीमहि ॥ तन्नोऽनङ्गः प्रचोदयात् ॥ २९९॥ षण्वति सहस्राणि जपोस्य परिकीर्त्तितः ॥ सर्वान्कामानवाप्नोति परत्रापि च सद्गतिम् ॥ ३०० प्रथमन्तु गणेशेन दिवोदासमहीपतेः ॥ अन्तःपुरे प्रेषि-तोयं नारीणां हृदयं गतः ॥ ३०१ ॥ अपास्य च ततो धर्म्मं राज्ञो हृदयमा-विशत् ॥ मन्दधर्मः शापितो यस्तदा काश्या विवासितः ॥ ३०२॥ तस्माद्गणे शादन्येन कामो मन्त्रोपि चापरः ॥ विष्णुः काममयो यस्मात्तस्मात्कामः सतां गतिः ॥ ३०३॥ अन्तःपुरे गते कामे दिवोदासस्य तेजसा ॥ दन्दह्यमानो गणपस्तत्सहायार्थमुद्यतः ॥ ३०४॥ तदा ध्यात्वा महाकालं महामायां च शाश्व-तीम्॥ तदा तयोः प्रभावेण दृष्टवान्परमं पतिम् ॥ २०५ ॥ तस्मिन्नुदभवत्का-चिद्वर्णाली ब्रह्मवादिनः ॥ तामेव च जपंस्तस्थौ वर्षमात्रं विमुक्तितः ॥ ३०६ ॥ मणिकर्णिका तटे तस्य सिद्धयः समुपस्थिताः ॥ तदा ख्यातः काशिकायामसौ सिद्धिविनायकः ॥ ३०७ ॥ सिद्धये स मनु-ष्याणां नानारूपधरो भवेत् ॥ लोभद्वेषादिकान्सर्वांन्वासयामास तत्र तु ॥ ॥ ३०८ ॥ स मन्त्रः केवलं कोलवाचको मोक्षदायकः ॥ यत्प्रसादाद्दिवो-दासो गुप्तसेनः प्रपञ्चितः ॥ ३०९॥ तस्मात्प्रपञ्चमन्त्रोयं तन्त्रेषु प्रकटीकृतः ॥ उद्धारार्थमविप्राणां गायत्र्येषा मयोदिता ॥ ३१० ॥ सर्वेपि मन्त्रा भो देवा देवसायुज्यकारकाः॥ तस्य चान्तर्गताः पञ्च मन्त्रो येभ्यो मया कृतः॥ ३११॥ पञ्चाम्नायस्य विषयस्तं मन्त्रं कथयाम्यथ ॥ महाकालस्य यो वाची स आदौ प्रणवो मनुः ॥ ३१२ ॥ माहामायावाचिका तु हृल्लेखा परिकीर्तिता ॥ जीव-वाची हंस इति द्व्यक्षरोयं तृतीयकः ॥ ३१३ ॥ जीवकर्म्मच्छेदकरं ज्ञानं यत्प्रोच्यते बुधैः ॥ स एव सोहमिति चेद्वर्णौ मन्त्रश्चतुर्थकः ॥ ३१४ ॥

यस्मात्प्रपञ्च उद्भूतो देवतृप्तिकरश्च यः ॥ स स्वाहा द्व्यक्षरो मन्त्रः पञ्चमः परिकीर्त्तितः ॥ ३१५ ॥ एवमष्टाक्षरश्चायं मन्त्रराजो निरूपितः ॥ यतो ब्रह्माप्रपञ्चादिः स एवास्य मुनिः स्मृतः ॥ ३१६ ॥ गायन्तन्त्रायते यस्माद्गायत्रं छन्द ईरितम् ॥ यस्मादपि स एकोपि तेजसोन्तो न विद्यते ॥ परम्पदेन यत्प्रोक्तं परं ज्योतिश्च देवता ॥ ३१७ ॥ आदौ तु मातृकान्यासः केवलं प्रथमं स्मृतः ॥ सबिन्दुमातृकान्यासो द्वितीयः परिकीर्त्तितः ॥ ३१८ ॥ कलादिमातृकान्यासस्तृतीयः परिकीर्त्तितः ॥ केशवादिकमातृणां चतुर्थो न्यास उच्यते ॥ ३१९ ॥ शिवशक्त्यात्मको न्यासः पञ्चमोत्र समीरितः ॥ मायाबीजादिकः षष्ठो मातृकान्यास उच्यते ॥ ३२० ॥ श्रीबीजादिकमातृणां सप्तमो न्यास उच्यते ॥ मातृकाकामबीजाद्यास्तन्न्यासश्चाष्टमो मतः॥ ३२१ ॥ नवमो ह्रींरमाकामबीजपूर्वास्तु मातृकाः ॥ प्रपञ्चपूर्वाणां मन्त्रो मातृणां दशमः स्मृतः ॥ ३२२ ॥ व्यापकत्वाच्च कालस्य न ध्यानं न च पूजनम् ॥ ॥ ३२३ ॥ लक्षाष्टकं मनोरस्य पुरश्चरणमुच्यते ॥ उग्रताराद्यतिक्रूरस्तारादिश्चैव साधकः ॥ ३२४ ॥ अनेन पुटितो जनो वर्णलक्षमितो यदि ॥ आगत्य मन्त्रदेवस्तु जायते साध्यकिङ्करः ॥ महाकालप्रभावेण स्वर्गिभ्यो नान्यथा भवेत ॥ ३२५ ॥ समिधस्तु वटप्लक्षपिप्पलोदुम्बरोद्भवाः ॥ तिलसिद्धार्थाज्यहविर्होमद्रव्याष्टकं मतम् ॥ ३२६ ॥ होमार्थं पूजयेद्विप्रान्सिद्धमन्त्रस्ततो भवेत् ॥ सिद्ध्यन्ति सर्वकार्य्याणि प्रयोगः कथ्यतेधुना ॥ ३२७॥ दशायुतं विधानेन तदर्धमथ वा पुनः॥ कार्य्यस्यैवानुसारेण हुनेद्द्रव्याष्टकेन च ॥ ॥ ३२८॥ चौरशत्रुभयव्याधिसर्पराक्षसदोषतः॥ चतुःशतन्तदर्धं वा तदर्धं वा हुनेत्ततः ॥ ३२९॥ क्षुद्ररोगेषु जातेषु तत्तद्दोषानुसारतः॥ रससङ्ख्यसहस्राणि हुनेद्द्रव्याष्टकेन च ॥ ३३० ॥ एतद्द्विगुणतश्चाथ चतुर्गुणत एव वा ॥ भूतावेशग्रहावेशकृत्यादीन्सुविनाशयेत् ॥ ३३१ ॥ शास्त्रोक्तं तु क्रमं हित्वा जपपूजादिकन्तु यः ॥ वामे वा कौलिके मार्गे ग्रस्यते भैरवादिभिः ॥ ३३२ ॥ स्मृतिभ्रंशो भवेद्यस्य होमद्रव्याष्टेकन च॥ सहस्रसङ्ख्यहोमेन स्वमो भवति तत्क्ष-

१ अन्यून इत्यर्थः ॥

णात् ॥ ३३३ ॥ प्रत्येकं द्विसहस्रं यो हुनेद्द्रव्याष्टकेन च ॥ अपस्मारं स्मृतिभ्रंशं शोषदोषं स नाशयेत् ॥ ३३४ ॥ द्रव्याष्टकं त्रिमध्वक्तं हुनेत्तस्य तु भोग्यतः ॥ देवेन्द्रस्य महालक्ष्मीस्तल्लक्ष्म्या लज्जतेतराम्॥ ३३५॥ लक्षं लक्षार्धकं वापि त्रिमध्वक्तं तु यो हुनेत् ॥ द्रव्याष्टकं त्रिवर्षावाक्तस्य लोकत्रयं वशे ॥ ३३६ ॥ वश्यादिसाधनं प्रोक्तं त्विह द्रव्याष्टकेन च ॥ वृद्ध्यादिकं विजानीयाद्धोमं तं कार्य्यगौरवात् ॥ ३३७ ॥ शुद्धैस्तिलैस्तु लक्षं यो होमं कुर्य्याद्यथाविधि ॥ महापापानि तस्याशु प्रलयं यान्ति नान्यथा ॥ ३३८ ॥ लक्षं कमलहोमेन महालक्ष्मीः प्रजायते ॥ हविष्यैः पुष्टिदो होमो घृतहोमो यशस्करः ॥ ३३९ ॥ मालतीपुष्पहोमोपि सर्ववश्यप्रदो भवेत् ॥ ३४० ॥ सामुद्रं लवणं हुत्वा तथा वश्यं प्रसाधयेत् ॥ अथ शालिसमुद्भूतांस्तण्डुलान्साधु चूर्णयेत् ॥ ३४१ ॥ मधुरत्रयसंयुक्ततच्चूर्णेनैव साधकः ॥ साध्यप्रतिकृतिं कुर्य्यात्सम्यक्संम्पूज्य तां स्पृशेत् ॥ ३४२ ॥ प्राणस्थापनमन्त्रन्तु जपेत्साष्टशतं ततः ॥ विभज्य जुहुयान्मन्त्री तां न्यासक्रमतो निशि ॥ ॥ ३४३ ॥ सप्तरात्रं प्रकुर्वाणो नरं वा स्त्रियमेव वा ॥ वशीकरोति सोप्येवं नात्र कार्य्या विचारणा ॥ ३४४ ॥ सामुद्रलवणस्यापि पुत्तल्या फलमीदृशम् ॥ प्रादुर्भूते ततस्तस्मिन्वटाग्नौ जुहुयाद्घृतम् ॥ ३४५ ॥ अष्टोत्तरशतं मन्त्री भासितं पतितं च यत् ॥ पूर्णौषधिविपक्केन पञ्चगव्येन पूरिते ॥ ३४६ चुल्ल्यां संस्थापितेधस्ताद्वह्निः कुम्भे प्रदापयेत् ॥ तावत्संख्यं च सञ्जप्य गृह्णीयात्सर्वसिद्धिदम् ॥ ३४७ ॥ लक्षणाद्गात्रलेपाच्च तिलकक्रियया तथा ॥ मस्तके धारणात्सद्यः सर्वे नश्यन्त्युपद्रवाः ॥ ३४८ ॥ भूतप्रेतपिशाचादिविषरोगादिनाशनम् ॥ सर्ववश्यकरं पुंसां श्रीसौभाग्यजयप्रदम् ॥ ३४९ ॥ सहस्रसंख्यके होमे तदानीं गुरवे बुधः ॥ पलं पलार्धकं वापि दद्याद्धेम्नो वरस्य च॥ ३५० ॥ कल्पवृक्षाद्यथा देवा लभन्ते वाञ्छितं फलम् ॥ एवं सिद्धिं प्रपञ्चाख्यमन्त्रेण गणपस्य हि ॥ ३५१ ॥ तत्सन्निधौ समाजग्मू राजकीया महाजनाः ॥ स एव सर्वशास्त्राणां वक्ताभूज्जगतो गुरुः ॥ ३५२ ॥ विना विप्रान्सर्वजनास्तन्त्रमार्गे प्रकीर्त्तिताः ॥ मका-

रपञ्चकेनैव जातं सर्वत्र पूजनम् ॥ ३५३ ॥ शनैश्शनैः समभवत्पृथिव्यां क्वचिदीदृशः ॥ मर्पंचमन्त्रमाहात्म्याद्राजापि भ्रान्तमानसः ॥ ३५४ ॥ मन्नाम्ना कल्पितैर्ग्रन्थैः क्षुद्रदेवरता जनाः ॥ मर्पंचकस्य सेवातो धर्म्मं पश्यन्ति ते न हि ॥ ३५५ ॥ प्र.मुग्रान्त द्रुतं सिद्धिं गणेशस्य प्रभावतः ॥ अहो साक्षात्परब्रह्म अहो गुरुपतिस्त्वयम् ॥ अहोष्टसिद्धिनाथोयं सर्वविद्याविशारदः ॥ ३५६ ॥ मथित्वा चतुरो वेदानस्मद्भाग्यात्कृपालुना ॥ दर्शितः कौलिकः पन्था भुक्तिमुक्तिप्रदायकः ॥ ३५७ ॥ इति नृणां वचः श्रुत्वा जग्मुर्विप्राश्च तं प्रति ॥ स तेषां सम्यगातिथ्यं कृत्वा तुष्टाव चागमम् ॥ ३५८ ॥ अहो विप्रा जीवहिंसाप्रधानं यज्ञकर्म्म तु ॥ न कर्तव्यो गुरुप्रोक्तो यज्ञो यागो मर्पंचकः ॥ ३५९ तपश्चापि न कर्तव्यमात्मा दुःखी प्रजायते ॥ तान्त्रिकं कर्म्म कर्तव्यं वैदिकं न कदाचन ॥ ३६० ॥ वैदिकाः पशवः प्रोक्ता जीवन्मुक्तास्तु तान्त्रिकाः ॥ कुर्वन्त्याभ्यन्तरं कर्म्म तत्त्वमेतद्विचार्य्यताम् ॥ ॥ ३६१ ॥ यद्दीयते प्राप्यते तद्वेदशास्त्रादिसम्मतम् ॥ दुःखं यदात्मनो दत्त्वा कथं सौख्यं प्रलभ्यते ॥ ३६२ ॥ सुखबीजेन संसाध्यं महत्सौख्यं द्विजोत्तमाः ॥ तस्मात्कौलं समासाद्य लोकद्वयसुखप्रदम् ॥ मुक्ता भवन्तु भो विप्रास्त्यज्यतां वेदकर्म्म तत् ॥ ३६३ ॥ जातानि बहुवर्षाणि चाहोरात्राणि कुर्वताम् ॥ काचिद्दृष्टा तत्र सिद्धिः प्रत्यक्षं दृश्यतामिदम् ॥ ३६४ ॥ प्राणाग्निहोत्रं तन्त्रोक्तं कर्म्म षट्कप्रकाशतम् ॥ त्यक्त्वा तदग्निहोत्रन्तु चर्य्यतां दृश्यतामिदम् ॥ ३६५ ॥ इति तद्वचनं श्रुत्वा सरस्वत्या विमोहिताः ॥ त्यक्त्वाखिलं वेदमार्गं प्रविष्टा वामकौलयोः ॥ ३६६ ॥ प्राणाग्निहोत्रं वक्ष्यामि गणेशेन प्रदर्शितम् ॥ ज्ञानिनां त्वरिता सिद्धिरन्येषां पतनं द्रुतम् ॥ उपविष्टः प्रसन्नात्मा प्राङ्मुखः स्थिरमानसः ॥ अतिमृद्वासनं बद्ध्वा पद्मासनमृजुर्भवेत् ॥ ३६७ ॥ शक्तिरूपात्मकं चिन्त्यं मूलाधारे त्रिकोणकम् ॥ मायाबीजन्तु तन्मध्ये चिन्तनीयं गुणात्मकम् ॥ ३६८ ॥ प्राग्रकोणात्त्रिकोणेषु त्रिकोणांस्त्रीन्विचिन्तयेत् ॥ हकारं चापि तन्मध्ये ध्यायेत्सत्त्वगुणा-

१ वासरूपन्यायेन कारप्रत्ययो न एवमग्रेपि ॥

त्मकम् ॥ ३६९ ॥ हकारान्तर्गतं ज्योतिश्चेतो भास्करसन्निभम् ॥ सात्त्विकेन हकारेण वेष्टितं तच्च चिन्तयेत् ॥ ३७० ॥ स हकारो राजसेन ईकारेण समन्वितः ॥ तामसेन तु रेफेण समाक्रान्तन्तु तद्द्वयम् ॥ ३७१ ॥ मूलाधार इति ध्यात्वा पंचकुण्डानि तत्र तु ॥ मध्ये प्राच्यां प्रतीच्यां च कौबेर्यां दक्षिणे तथा ॥ ३७२ ॥ सर्वदा ज्वलदग्नीनि तानि कुण्डानि भावयेत् ॥ मध्यादिपूर्वतस्तत्र ज्ञेयाः पंचाग्नयो ह्यमी ॥ ३७३ ॥ आवसथ्यश्च सत्यश्च गार्हपत्यो हुताशनः ॥ तथा चाहवनीयोऽग्निरन्वाहार्य्यश्च पंचमः ॥ ३७४ ॥ प्रभाजालनिदानांश्च ज्ञानरूपान्निरंजनान् ॥ द्वादशान्तःस्थितांस्तांश्च कल्पादित्यान्विचिन्तयेत् ॥ ३७५ ॥ मातृकार्णानाज्यरूपान्व्यत्यया-त्तत्र होमयेत् ॥ त्रं क्षं हं सं षमिति तु ज्ञेया वर्णाश्च पंच च ॥ ३७६ ॥ ध्येया मरकतप्रख्याः शास्त्रादिज्ञानकारकाः ॥ शं वं लं रं यं च ध्येयाः पंच गोमेदसन्निभाः ॥ सैंहिकेयस्य पंचैते संग्रामे विजयप्रदाः ॥ ३७७ ॥ मं भं बं फं पमिति च वर्णाः पंच शनेर्मताः ॥ नीलेन्द्रेण समा ध्येया मन्त्रसिद्धिप्रदायकाः ३७८ ॥ नं धं दं थं तमिति च ध्येया विद्रुमसन्निभाः ॥ भौमस्यैते द्यूतकलिराजद्वारेषु सिद्धिदाः ॥ ३७९ ॥ णं ढं डं ठं टमित्येते वर्णाः शुक्रस्य कीर्त्तिताः ॥ चिन्तनीया वज्रनिभा यात्राकार्य्यशुभंकराः ॥ ३८० ॥ ञं झं जं छं चमिति च पुष्परागसमत्विषः ॥ गुरोरेते विवाहादिकार्य्यादिषु सुशोभनाः ॥ ३८१ ॥ ङं घं गं खं कमित्येते ध्येया वैदूर्य्यसन्निभाः ॥ केतोरेते शत्रुनाशकरा ध्येया मनीषिभिः ॥ ३८२ ॥ अः अं औं ओं च ऐं ए च ॡं ऌं मौक्तिकसन्निभाः ॥ ॠं ऋं ऊं उं च ईंच आं अं चैतेर्कसन्निभाः ॥ वर्णा हीरकसंकाशा राजकार्य्यंकरा इमे ॥ ३८३ ॥ एवं ध्यात्वा सखेटार्णास्ततो होमं समाचरेत् ॥ क्षं शं मं नं णं च ञं ङं अः एं ऊं आवसथ्यके ॥ ३८४ ॥ लं वं भं धं ढं च झं घं अं ॡं उं सत्यकुण्डके ॥ हं लं बं दं डं च जं गं औं ॡं ईं जुहुयात्ततः ॥ ॥ ३८५ ॥ अग्नावाहवनीयाख्ये सं रं फं थं ततश्च ठम् ॥ छं खं ओं ॠं च इं कारमन्वाहार्य्ये हुनेत्सुधीः ॥ ३८६ ॥ पं यं पं तं टं च

चं कं ऐं क्रं आं गार्हपत्यके ॥ क्षकाराद्यान्नकारान्तान्व्यस्यान्वर्णा-न्क्रमाद्धुनेत् ॥ ३८७ ॥ तारं मायां च तं वर्णं हंसः सोहं ततः परम् ॥ स्वाहेत्युक्त्वा प्रोक्तकुण्डे हुनेदेकैकमक्षरम् ॥ ३८८ ॥ अकारस्तु परब्रह्मरूपी ध्येयस्ततो हुनेत् ॥ एवं हुत्वा शब्दजातं सर्वं शास्त्रादिकं हुनेत्॥ ॥ ३८९ ॥ आवसथ्याभिधे कुण्डे हं बीजेन गुरूक्तितः ॥ स्पर्शादिकान्वायु-गुणान्यं बीजेनेन्द्रकुण्डके ॥ ३९० ॥ सर्वरूपाणि जुहुयाद्रं बीजेन च पश्चिमे ॥ वंबीजेन रसान्सर्वान्हुनेत्कुण्डे तथोत्तरे ॥ ३९१ ॥ लम्बीजेन हुनेत्सर्वान्गन्धान्दक्षिणकुण्डके॥प्रलयानलसंकाशज्वलदग्निष्वहर्निशम्॥ ३९२॥ होमं कुर्वीत कुण्डेषु मातृकावर्णसंयुतम् ॥ नित्यशुद्धपरानन्दचिद्रूपोसौ विरा-जते ॥ ३९३ ॥ ध्रुवयज्ञादिकं होमं जपान्तं तत्तु पूर्ववत् ॥ पञ्चाशत्सङ्ख्यया कृत्वा न्यस्य तावद्यथाविधि ॥ ३९४ ॥ जीवन्मुक्तो भवेन्मन्त्री चिरञ्जीवी च जायते॥तेजसा सूर्य्यकल्पोसौ कर्ता हर्ता च शम्भुवत् ॥ ३९५ ॥ प्रत्यहं विधिनानेन भोजनं कुरुते यदि ॥ गार्हपत्यादिकुण्डेषु क्रमाद्ग्रासांस्तु होमयेत्॥ अथर्वपरिशिष्टोक्तैर्मंत्रैरेतैस्तु पञ्चभिः ॥ ३९६ ॥ गार्हपत्येनेहिरण्यवर्णाः शुचयः पावकाः ॥ अग्निं विहृत्यात्मानमुपचर्य्योर्ध्वं गच्छन्तु स्वाहा ॥ ॥ ३९७ ॥ अन्वाहार्य्येऽपाने गगनरुचयः पावकाः ॥ अग्निं विहृत्यात्मा-नमुपचर्य्योर्ध्वाधस्तिर्य्यग्गच्छन्तु स्वाहा ॥ ३९८ ॥ आहवनीये व्याने रक्त-वर्णाः शुचयः पावकाः ॥ अग्निं विहृत्यात्मानमुपचर्य्य तिर्य्यगूर्ध्वाधो गच्छंतु-स्वाहा ॥ ३९९ ॥ आवसथ्ये समाने सुप्रभावर्णाः शुचयः पावकाः ॥ अग्निं विहृत्यात्मानमुपचर्य्य तिर्य्यगूर्ध्वाधस्समं गच्छन्तु स्वाहा ॥ ४०० ॥ एवं होमं विधायाथ मंत्रमेतमुदीरयेत् ॥ एवं भावनया सर्वमश्नीयाद्धुच्यते मनुः ॥ ४०१ ॥ अहं वैश्वानरो भूत्वा जुहोम्यन्नं चतुर्विधम् ॥ पञ्चमेन विधाने-नोर्ध्वाधस्तिर्य्यक्षु गच्छतु ॥ ४०२ ॥ स्वाहांतोयं चतुस्त्रिंशद्वर्णमंत्र उदा-हृतः ॥ तूष्णीं होमं विधायाथ संस्कृतान्नेन मंत्रवित् ॥ ४०३ ॥ अमृते त्यादिमन्त्रेण पीत्वा च चुलुकोदकम् ॥ आचम्य विधिना पश्चाच्छुद्धाचमन-माचरेत् ॥ ४०४ ॥ मूलाधारं समारभ्य द्वादशान्तावधि स्मरेत् ॥ जीवा-

त्मानं जगद्व्याप्तं नित्यमेकमनन्यगम् ॥ ४०५ ॥ प्रकृतिस्थं शुभं चादि-मध्यान्तरहितं परम् ॥ हवनीयेन शुद्धेन जुहुयात्तेन तर्पितम् ॥ ४०६ ॥ एवं गलत्सुधारूपं पञ्चाशद्वर्णसिक्तकम् ॥ भुक्त्वा हविर्हुतं मंत्री सज्वलत्पञ्च-वह्निकः ॥ ४०७ ॥ प्रातः सायं च कुर्वाणो मंत्री प्राणाग्निहोत्रकम् ॥ गर्भस्थितिभवं क्लेशं विंदते न कदाचन ॥ ४०८ ॥ अत्र तत्त्वं प्रवक्ष्यामि-कौलिकोद्धारहेतुकम् ॥ या काचिद्वाममार्गेण साध्यते देवता तु सा ॥४०९॥ मपञ्चकेन सा तृप्ता साधकस्येष्टदायिनी ॥ नाधिकारस्तु विप्राणां मपञ्चकनि-षेवणे ॥ ४१० ॥ अज्ञानान्मोहतो वापि दुर्गुरोर्वा प्रसङ्गतः ॥ मपञ्चकस्य सङ्गश्चेज्जातो निरयमश्नुते ॥ ४११ ॥ तदुद्धाराय वक्ष्यामि युक्तिं प्राणाग्नि-होत्रकम् ॥ मांसस्य भक्षणे चिंत्यं हुनेत्पश्चिमकुण्डके ॥ ४१२ ॥ अग्निमु-ख्यादेवतया हुतं तद्भुज्यते त्विति ॥ मैथुने स्वस्य वीर्य्यं तु घृतरूपं विचिन्त-येत ॥ ४१३ ॥ दक्षिणाग्निं तु तेनेद्धं भावयेत्सम्भवेत्त तत् ॥ एवमातृप्तिप-र्य्यंतं बालाया मैथुनं चरेत ॥ ४१४ ॥ पूर्णतत्त्वे मनो नीत्वा ध्वजपातः प्रजायते ॥ न तत्र रात्रिजं पापं देवता चेत्प्रसीदति ॥ ४१५ ॥ पूर्वकुण्डेहु-नेन्मुद्रां मूलमंत्रेण साधकः॥देवता तेन तुष्टा स्यान्न पापैरभिभूयते ॥४१६॥ मद्यमुत्तरकुण्डे तु जुहुयाद्देवतामुखे ॥ न चानोत्यस्य गन्धेन पापं वै धर्म्म एव सः ॥ ४१७ ॥ मध्यमे तु हुनेन्मत्स्यान्ध्यायंश्च वडवानलम् ॥ त्यक्तसौख्यः साधकश्चेद्भुक्तिमुक्तिप्रदः स तु ॥ ४१८ ॥ इत्थं वो बोधितं विप्रा वाममार्गे प्रकीर्तिताः ॥ नानामंत्रैः कृताः शिष्या ज्ञातॄणां भुक्तिमुक्तिदैः ॥ ४१९ ॥ शक्तित्रयात्मको मंत्रो वाग्वादिन्याः प्रकीर्त्यते॥ प्रणवं वदयुग्मं च वाग्वादिनि पदं वदेत् ॥ ४२० ॥ ह्रींक्लींक्लिन्ने क्लेदिनीति महाक्षोभं वदेत्कुरु ॥ सौरुक्त्वा मोक्षमुचार्य्यं कुरुष्व प्रणवं वदेत् ॥ ४२१ ॥ वाग्वादिन्या मनुः प्रोक्त एको-नत्रिंशदक्षरः ॥ नवभिश्च नगैर्वर्णैर्जायतेस्य मनुत्रयम् ॥ ४२२ ॥ ब्रह्मा-दीनां त्रयाणां तु वाग्देव्यस्तत्र देवताः ॥ उत्पत्तिस्थितिनाशानां कारिकास्ताः प्रकीर्तिताः ॥ ४२३ ॥ नास्याः पूजा न च ध्यानं नच्छन्दो न च किञ्चन॥

गणेशस्य प्रसादेन वर्णलक्षजपादद्रुतम् ॥ ४२४ ॥ वाक्सिद्धिं समवाप्नोति कार्य्योत्पत्त्यादिकं हृदि ॥ चिंतयित्वा तथा मंत्रखण्डं जप्त्वा वदेत्सकृत् ॥ ॥ ४२५ ॥ तदा सा भारती सत्या शापानुग्रहवादिनी ॥ मौनादस्य स्थिरा सिद्धिरशक्तौ मितभाषणात् ॥ ४२६ ॥ ततः प्रोक्ता गणेशेन त्रिंशद्व्याख्या तु भैरवी ॥ वदवद वाग्वादिनि ऐमित्येको नवाक्षरः ॥ ४२७ ॥ क्लिन्ने क्लेदिनि इत्युक्त्वा महाभागे वदेत्कुरु ॥ भैरवी देवता चात्र वर्णलक्षजपो भवेत् ॥ ॥ ४२८ ॥ न च पूजादिकं न्यासा मपञ्चकनिषेवणम् ॥ केवलं सिद्धये प्रोक्तं सर्वतन्त्रेषु गोपितम् ॥ ४२९ ॥ ज्ञातं यैर्गुरुमार्गेण सिद्धास्ते नात्र संशयः ॥ एताभ्यामेव मन्त्राभ्यां बहवः कौलिकाः कृताः ॥ ४३० ॥ अथ वक्ष्ये विप्रगोप्यां देवीं त्रिपुरभैरवीम् ॥ कौलिके वाममार्गे च सिद्धान्ते द्रुतसिद्धिदाम् ॥ ४३१ ॥ हकारं च सकारं च रेफमैकारसंयुतम् ॥ नादबिन्दुसमायुक्तं वाग्भवं कूटमुच्यते ॥ ४३२ ॥ हकारश्च सकारश्च ककारश्च तथा रवौ ॥ नादबिन्दुसमायुक्ते ईकारे योजयेत्तदा ॥ पञ्चवर्णात्मकं कूटं कामराजाभिधं मतम् ॥४३३॥ हकारश्च सकारश्च रेफमैकारसंयुतम् ॥ विसर्गाढ्यं तृतीयन्तु-कूटं वर्णत्रयात्मकम् ४३४ ॥ तृतीयबीजे बिन्द्वाढ्यं स्त्रीणामुक्तं न सर्गयुक् ॥ ॥ ४३५ ॥ आदौ सकारः पश्चाद्धस्त्रिभिः कूटत्रयेपि च ॥ पठनीयस्तथा तासां देयो मन्त्रः सुसिद्धये ॥ ४३६ ॥ पंक्तिश्छन्दो मुनिः प्रोक्तो दक्षिणा-मूर्त्तिसञ्ज्ञकः॥देववन्दितपादाब्जा देवी त्रिपुरभैरवी ॥४३७॥ आपादं नाभितस्त्वोघमानानि हृदयात्परम् ॥ आहृन्मूर्द्धागतं चान्त्यं चैवं बीजत्रयं न्यसेत् ॥ ४३८ ॥ आद्यं सव्ये परं दक्षे तृतीयमुभयोर्न्यसेत् ॥ ऐं हृत् क्लीं च शिरः प्रोक्तं सौरन्त्येन शिखा मता ॥ ४३९ ॥ ऐं वर्म्म क्लीं च नेत्रं स्यात्सौरास्त्रं परिकीर्तितम् ॥ मूर्ध्न्याधारे हृदि न्यस्यं मनोः कूटत्रयं पुनः ॥ ४४० ॥ कुर्वीत देहसन्नाहं त्रिभिर्बीजैस्तदुच्यते॥ मणिबन्धे करतले कराग्रे च क्रमान्न्यसेत्॥४४१॥ आदौ दक्षे ततो वामे कक्षकूर्प्परपाणिषु ॥ पुनर्दक्षे च वामे च पादयोश्च तथा न्यसेत् ॥ पादान्ते हृदये लिङ्गे संहारक्रमतो न्यसेत्॥४४२॥

१ वाक्सिद्धिं समवाप्नोति–इति पूर्वान्वयि ॥ २ कार्योत्पत्त्येति तु चिन्तयित्वेत्यनेन संबध्यते ॥

अथ सृष्टिक्रमेणैव बीजान्यंङ्गेषु विन्यसेत्॥ आदौ वामे ततो दक्षे कर्णयोश्चिबुके ततः ॥ ४४३ ॥ शङ्खयोश्च मुखे चैव नेत्रयोश्च तथा न्यसेत ॥ बाहुद्वये च हृदये कूर्परद्वितये कटौ॥ ४४४॥ जानुनोर्व्यञ्जने चापि पादयोर्मलनिर्गमे॥ पार्श्वद्वये च हृदये स्तनयुग्मे गले तथा ॥ ४४५॥ नवयोन्यात्मको न्यासः प्रोक्तो बीजत्रयेण तु ॥ लिङ्गे रत्यै नम इति चाद्यबीजेन विन्यसेत् ॥ ४४६॥ प्रीत्यै नमश्च हृदये मध्यबीजेन विन्यसेत्॥ मनोभवायै हृदये भ्रुवोर्मध्ये तृतीयकम् ४४७ ॥ सौः क्लीं ऐमिति बीजैश्च स्थानेष्वेव पुनर्न्यसेत् ॥ अमृतेशीं च योगेशीं विश्वयोनिं क्रमादिमाः॥ विलोमबीजैर्विन्यस्य मूर्त्तिन्यासमथाचरेत्॥ ॥ ४४८ ॥ स्होमितीशानरूपाय ततो मनोभवाय च ॥ नम इत्यन्तःप्रोच्या धरेशानं न्यसेद्बुधः ॥ ४४९ ॥ स्हैं तत्पुरुषरूपाय मकरध्वजकात्मक ॥ नमः प्रोच्य न्यसेद्वक्के हृदये तु ततो न्यसेत् ॥ ४५० ॥ ह्स्रूं अघोररूपाय कन्दर्पस्यात्मने नमः ॥ ह्स्रीं वामदेवरूपाय मन्मथस्यात्मने नमः ॥४५१॥ एतद्गुह्ये प्रविन्यस्य न्यस्येच्च पदयोस्तथा ॥ ह्स्कं सद्योजातात्मने कामदेवाय नम इत्यपि ॥ ४५२ ॥ ऊर्ध्वप्राग्दक्षिणोदीच्यपश्चिमेषु मुखैः क्रमात् ॥ प्रविन्यस्येत्ततः पञ्च बाणानङ्गेषु विन्यसेत् ॥ ४५३ ॥ ह्रां ह्रीं क्लीं ह्रूम-इति च पञ्च बाणाः प्रकीर्तिताः ॥ अंगुष्ठादिकनिष्ठान्तमंगुलीषु क्रमान्न्यसेत् ॥ ॥ ४५४ ॥ क्षोभणद्रावणाकर्षवश्योन्मादाश्च नामतः॥ ललाटे च भ्रुवोर्मध्ये-मुखकर्णाक्षिकण्ठके ॥ ४५५ हृन्नाभिलिङ्गे विन्यस्या एता अष्टौ च शक्तयः शुभगाद्या भगा त्वन्या ततीया भगसर्पिणी ॥ ४५६ ॥ चतुर्थी तु पराजेया पञ्चमी भगमालिनी ॥ अनङ्गानङ्गकुसुमा प्रोक्ता चानंगमेखला ॥ ४५७ ॥ अनंगमदना सर्वा मदविभ्रममन्थराः ॥ ध्येयाः कुसुम्भवसना हरित्काञ्चिकिकाः शुभाः ॥ ४५८ ॥ वाक्कामवूं पुनः स्त्री सस्ताराः पञ्चोदितास्त्वमी ॥ न्यासं कुर्य्याद्भूषणाख्यं ततः स तु निगद्यते ॥ ४५९ ॥ न्यस्येच्छिरसि भ्रूमध्ये कर्णाक्षियुगले नसि ॥ गण्डयोरोष्ठयोर्दन्तपंक्त्योरास्ये न्यसेत्स्वरान्॥ ४६०॥ चिबुकेथ गले कण्ठे पार्श्वयोः स्तनयुग्मके ॥ दोर्मूलयोः कूर्प्परयोः पाण्योस्तत्पृष्ठदेशतः ॥ ४६१ ॥ हस्तद्वये हमित्येकं तत्पृष्ठे च तु नित्यकम् ॥

नाभौ गुह्ये पुनश्चोर्वोर्जानुनोर्जंघयोस्तथा ॥ ४६२ ॥ स्फिजोश्च गुल्फयोः पश्चाच्चरणांगुष्ठयोर्द्वयोः ॥ ग्रैवेये च तथा कट्यां हृदये दलकुण्डले ॥ वामकुण्डलके मूर्ध्नि वलये पानके तथा ॥ ४६३ ॥ हृदयस्थारुणाम्भोजकर्णिकामध्यसंस्थिताम् ॥ जपाकुसुमसङ्काशामरुणाम्बरभूषणाम् ॥ ४६४ ॥ स्मितसौधमहामोहां त्रिनेत्रां चन्द्रशेखराम् ॥ विश्वसौन्दर्य्यसर्वस्वजन्मसागररूपिणीम् ॥ ॥ ४६५ ॥ ब्रह्माब्जनेत्ररुद्रेशशशिवाक्षैर्मण्डसञ्ज्ञितैः ॥ मण्डिताङ्गीं महादेवीं मुक्ताजपवटीधराम् ॥ ४६६ ॥ पुस्तकालंकृतकरां वरदाभयधारिणीम् ॥ आनन्दमधुरां देवीं मदाघूर्णितलोचनाम् ॥ रक्ताङ्गरागसुभगां ध्यायेत्त्रिपुरभैरवीम् ॥ ॥ ४६७ ॥ पूजायन्त्रं प्रवक्ष्यामि भैरवीबालयोरथ ॥ नवयोन्यात्मकं कुर्य्यान्मण्डलं गुरुमार्गतः ॥ ४६८ ॥ हकारञ्च सकारञ्च रेफमौकारसंयुतम् ॥ बिन्दुद्वययुतं चाग्रे त्रिकोणे मध्यमे न्यसेत् ॥ ४६९ ॥ योन्यष्टके कामबीजं बहिरष्टदलं लिखेत् ॥ केशरेषु स्वरालेख्या द्वन्द्वशोग्रदलेषु च ॥ ४७० ॥ कचटांस्तपयान्वर्णाञ्छक्षौ च विलिखेत्क्रमात् ॥ क्रमाद्दलानां ग्रन्थीश्च प्रणवाभ्यां ततश्चरेत् ॥ ४७१ ॥ दलाग्रेषु त्रिशूलानि बहिर्भूपुरमालिखेत् ॥ शूलाग्रेषु लिखेद्वर्णान्क्रमात्रिभ्यश्च पूर्वतः ॥ ४७२ ॥ खगघाङ्कुछजांश्चापि झञठाण्डढणांस्तथा ॥ थदधान्नफबाश्चापि भसराल्ँवषांस्तथा ॥ ४७३ ॥ वृत्तद्वयं च तद्बाह्ये वीथिकायां च मातृकाः ॥ चतुरस्रत्रयं कुर्य्यात्तद्बाह्ये देवतार्चनम् ॥ ४७४ ॥ यन्त्रमध्ये देवपृष्ठाः प्रादक्षिण्येन पूजयेत् ॥ द्वादशैताश्चाद्यवीथ्यामेकस्यां दिशि तु त्रयम् ॥ ॥ ४७५ ॥ वामा ज्येष्ठा तथा रौद्री अम्बिकेच्छे ततः परम् ॥ ज्ञानोक्रियाकुब्जिका च बिम्बा देवी विषघ्निका ॥ ४७६ ॥ दुस्तरा च तथा नन्दा ध्यानमासां निरूप्यते ॥ विप्रा वेदविदो यूयं तच्छृणुध्वं समाहिताः ॥ ४७७ ॥ मुक्ताफलामलमणिस्फुरच्छत्रं शशिप्रभम् ॥ गङ्गातरङ्गधवलं चामरद्वयमद्रि[1]जे ॥ ४७८ ॥ नवरत्नस्फुरद्दीप्तताम्बूलस्य करण्डकम् ॥ मल्लिकामालतीजातीशतपत्राढ्यदामभिः ॥ ४७९ ॥ पूर्णं रत्नमयं भाण्डं तथालङ्कारपू-

---

१ पार्वति ॥

रितम्॥पटीञ्च व्यजनद्वन्द्वं नवरत्नविचित्रितम्॥ ४८० ॥ नीलकण्ठस्य पुच्छैश्च तथोशीरविराजितम् ॥ कर्पूरमृगनाभ्याढ्यं कर्पूरक्षोदसंयुतम् ॥ ४८१ ॥ चषकं स्वर्णरचितं कङ्कतीं हीरराजिताम् ॥ कज्जलस्य शलाकां च करण्डं चन्द्रपूरितम् ॥ ४८२॥ दधानाः परमेशान्यः शक्तयः पीठसंस्थिताः ॥ पूर्वादिक्रमतः सर्वाः सर्वाभरणभूषिताः ॥ ४८३ ॥ सम्पूज्य मध्ये देवेशीं प्रेतासिंहासनं यजेत् ॥ रक्तस्वर्णाकृति स्वर्णदीप्तिमत्कलमव्ययम्॥पञ्चप्रेतासनं साक्षान्मोक्षदायि न संशयः ॥ ४८४ ॥ ह्स्कोः सदाशिवमहाप्रेतपद्मासनाय च ॥ हृदन्तः षोडशार्णोयं मन्त्रः स्यात्पीठपूजनम् ॥ ४८५ ॥ सिंहासनं च सम्पूज्य चक्रैर्व्याकुलसुन्दरीम् ॥ आवाहनाद्या मुद्राश्च दर्शयित्वा प्रदर्शयेत् ॥ वरमुद्रां चाभयाख्यां ध्यायेत्त्रिपुरभैरवीम् ॥ ४८६ ॥ हृदयस्यारुणाम्भोजकर्णिकामध्यसंस्थिताम् ॥ जपाकुसुमसंकाशारुणां स्वर्णविभूषणाम् ॥ ४८७ ॥ स्मितसौधमहामोहां त्रिनेत्रां चन्द्रशेखराम् ॥ विश्वसौन्दर्य्य सर्वस्वजन्मसागररूपिणीम् ॥ ४८८ ॥ ब्रह्मार्कविष्णुरुद्रेशशिवाख्यैर्मञ्चसंज्ञिकैः ॥ मण्डिताङ्गीं महादेवीं मुक्ताजपवटीधराम् ॥ ४८९ ॥ पुस्तकालङ्कृतकरां वरदाभयधारिणीम् ॥ आनन्दमधुरां देवीं मदाघूर्णितलोचनाम् ॥ ४९० ॥ रक्तांगसुभगां साक्षाद्ध्यायेत्त्रिपुरभैरवीम् ॥ मुद्राविंशतिसंख्याकास्ततो देव्यै प्रदर्शयेत ॥ ॥ ४९१ ॥ वराभये पुस्तकाक्षमाले चांकुशपाशकौ ॥ चापबाणे कपालं च कमलं चायुधं तथा ॥ कपालाख्यं वामहस्ततलं कुर्य्यात्कपालवत् ॥ ॥ ४९२ ॥ आवाहनाद्या आदौ स्युश्चतस्रोन्ते च पंच च ॥ दर्शनीया योनिमुद्रास्तासां लक्षणमुच्यते ॥ ४९३ ॥ योनिमुद्रा हृदि क्षिप्ता त्रैलोक्यं क्षोभिणी भवेत् ॥ त्रैलोक्यद्राविणी चास्य त्रैलोक्याकर्षिणी भुवोः ॥ ॥ ४९४ ॥ त्रैलोक्यवशकृद्भालेह्लादकृद्ब्रह्मरन्ध्रके ॥ ततः षडंगावरणं पीठस्योपरितोर्चयेत् ॥ ४९५ ॥ अग्नीशासुरवायव्यमध्ये दिग्दिक्षु च क्रमात् ॥ अग्निकोणे रतिं पश्चात्प्रीतिमुत्तरकोणके ॥ ४९६ ॥ मनोभवान्दक्षकोणे ततो बाणान्समर्चयेत् ॥ द्वौद्वावर्वागुदक्चैकमग्रे कामांश्च बाणवत् ॥ ४९७ ॥ तत्र सम्पूजयेदेताः पूर्वादिक्रमतो बुधः ॥ अनङ्ग-

कुसुमा चाद्या द्वितीयानङ्गमेखला ॥ ४९८ ॥ तृतीयानङ्गमदनाग्रेन-ङ्गमदनातुरा ॥ शुभगा पञ्चमी देवी भगाग्रे भगसर्पिणी ॥ ४९९ ॥ भगमा-लात्र सर्वत्र देवपृष्ठं च पूर्वदिक् ॥ अष्टयोनिषु ब्राह्मयाद्या बाह्ये चाष्टदलद्वयम् ॥ ५०० ॥ ब्राह्मयायुक्तश्चासिताङ्गो रुरुर्माहेश्वरीयुतः ॥ चण्डः कौमारि-कायुक्तः क्रोधः स्याद्वैष्णवीयुतः ॥ ५०१ ॥ वाराह्या च तथोन्मत्तो मा-हेन्द्र्या च कपालभृत् ॥ चामुण्डाभीषणौ महालक्ष्मीः संहारसंयुता॥५०२॥ दीर्घस्वराष्टको बिन्दुयुक्तानामहदान्विताः ॥ क्रमात्स्युरष्टशक्तीनां पूजनेष्टौ मनूत्तमाः ॥ ५०३ ॥न ह्रूभैरवमन्त्रेषु स्वरा ह्रस्वाः सबिन्दुकाः ॥ कामरू-पश्च मलयस्ततः कोल्लगिरिः स्मृतः ॥ ५०४ ॥ कुल्मान्तकवचौ हारे ह्यतो जालन्धरः परः ॥ उड्डीयानं देवकोटं पीठाष्टकमुदाहृतम् ॥ ५०५ ॥ ग्रन्थि-स्थानेषु सम्पूज्यं पश्चिमादिक्रमेण तु ॥ हेतुकं भैरवं त्वाद्यं द्वितीयं त्रिपुरान्त-कम् ॥ ५०६ ॥ वेतालमग्निजिह्वं च कालान्तककपालिनौ ॥ एकपादं भीमरूपं ततो बाह्ये तु भूपुरे ॥ ५०७ ॥ पूजयेल्लोकपालांश्च ऊर्ध्वाधः-क्रमतो यजेत ॥ ब्रह्माणं चैव विष्णुं चाप्यर्चयेत्पश्चिमादितः ॥ वम्पूर्वो बटुको ङेन्तो हृदयान्तस्तथैव च ॥ ५०८ ॥ आदौ त्रिकोणं तद्बाह्ये वृत्तं च चतुरस्रकम् ॥ पूर्वमन्त्रैः समभ्यर्च्य बटुकादींस्ततः परम् ॥ बलिम-न्त्रैश्च बलयो देया यन्त्रान्वदाम्यथ ॥ ५०९ ॥ एह्येहि देवीपुत्रान्ते बटुकान्ते च नाथ च ॥ कपिलान्ते जटाभारभास्वरान्ते त्रिनेत्र च ॥ ज्वालामुखेति सर्वान्ते विघ्नान्नाशयनाशय ॥ ५१० ॥ सर्वोपचारसहितं बलिं गृह्णद्वयं वदेत् ॥ पंचपंचादशार्णोयं स्वाहान्तो बटुकस्य तु ॥ ५११ ॥ पात्रान्तरेण गृह्णीयात्पूर्वं स्थापितपात्रतः॥ तोयं गृहीत्वा वामांगुष्ठेन वैः निसृजे-द्बलिम् ॥५१२॥ॐ यां योगिनीभ्यः स्वाहा सवर्णयोगिनीपदम् ॥ हुं फट् स्वहेति धृत्यर्णो योगिनीनां बलौ मनुः ॥ ५१३ ॥ वामांगुष्ठानामिकाभ्यां मध्ये च पातयेद्बलिम् ॥ सद्दीर्घ्ययुक्तं क्षं प्रोच्य स्थाने क्षेत्रे निपानभूः ॥ ५१४ ॥ धूपदीपादि सहितं बलिं गृह्णद्वयं वधूः ॥ अग्नेरष्टनवा-

१ एतदग्रे तूत्तरान्वयि ॥

र्णोयं क्षेत्रपालबलेर्मनुः ॥ ५१५ ॥ अंगुष्ठतर्ज्जनीभ्यां च तर्जन्या चैकयापि च ॥ गां गीं गूं गणपतये वर वरद शर्वं च ॥ ५१६ ॥ जनं मे वशमानय बलिं गृह्ण द्वयं वदेत् ॥ स्वाहान्ता एकत्रिंशच्च मनौ वर्णाः प्रकीर्तिताः ॥ ५१७॥ वामांगुष्ठमध्यमाभ्यां प्रोक्ष्याग्रे बलिमुत्सृजेत् ॥ निर्माल्यभोजिनी चास्य देवी त्रिपुरचण्डिका ॥ ५१८ ॥ न जपेत्रिंशतो न्यूनं साधकस्तु कदाचन ॥ तत्सम्प्रदायशुद्धात्मगुरोर्लब्ध्वा मनुं सुधीः ॥ ५१९ ॥ प्रजपेत्सिद्धये सूर्य्यलक्षं मन्त्रं दृढव्रतः ॥ तत्सहस्रं प्रजुहुयात्पलाशकुसुमैर्नवैः॥ त्रिस्वादुयुक्तैरश्वारिकुसुमैरथ वा हुनेत्॥ ५२०॥ रक्ताम्बरः प्रीतमना मौक्तिकाभरणैर्युतः॥ चन्दनागुरुकर्पूरकृतगात्रानुलेपनः॥ ५२१॥ ब्रह्मचर्य्यरतः शान्तो विरतः परषङ्गुणे ॥ सर्वभूतसुहृन्मौनी कुमारीपूजको भवेत् ॥ ५२२ ॥ अथैतस्या एकबीजप्रयोगो वक्ष्यतेऽधुना ॥ नवकुन्दनिभां देवीं मुक्ताजालविभूषिताम् ॥ मुक्ताकलापविद्याक्षमालाराजच्चतुर्भुजाम् ॥ ५२३ ॥ एतस्याः प्रथमम्बीजं लक्षं जपति संयतः ॥ कविता जायते तस्य नानावृत्तार्थशोभना ॥ ५२४ ॥ अथ द्वितीयबीजस्य ध्यानादिकमिदं स्मृतम् ॥ रक्तां सुरतरोर्मूलविलसन्माणिपीठगाम् ॥ ५२५ ॥ पाशञ्च बीजपूरञ्च बाणानंकुशमेव च ॥ कपालञ्च धनुश्चेति षड्भुजैर्दधतीं भजे ॥ ५२६ ॥ रक्तैरलंकृतां पुष्पैर्मदाघूर्णितलोचनाम् ॥ हेलाविलाससम्पन्नां नवयौवनसुन्दरीम् ॥ ५२७ ॥ देवीं ध्यात्वा जपेद्बीजं यो लक्षं मध्यतो वशी ॥ त्रैलोक्यं क्षोभयेदाशु पूर्ववत्सिद्धिभागसौ ॥ ५२८ ॥ अथो तृतीयबीजस्य वक्ष्ये ध्यानादिकं खलु ॥ अक्षमालासुधाककुम्भमुद्रापुस्तकधारिणीम् ॥ ५२९ ॥ नवकुन्देन्दुसंकाशां राजन्मौक्तिकभूषणाम् ॥ शक्तिं सच्चिन्मयं ध्यात्वा बीजं सारस्वतं वशी ॥यो जपेज्जायते तस्य कविता भुवि सम्मता ॥ ५३०॥ पलाशपुष्पैस्त्रिस्वादुयुतैर्होमायुतद्वयम् ॥ कुर्य्यात्सरस्वतीतुष्ट्यै सौभाग्यानां गृहं हि सः ॥ ५३१ ॥ जाती करञ्जकशमीवटोद्भवसमिद्वरैः ॥ बिल्वप्रसूनैस्त्रिस्वादुयुतैर्होमं समाचरेत्॥ परनारीनृपाणां च रञ्जनं भवति ध्रुवम्॥ ५३२॥ मालतीवकुलोद्भूतैर्दलैश्चन्दनवारिणा ॥ सिक्तैर्हुनेत्क्रमात्तस्य कवित्वमभिजायते ॥ ५३३॥ अनुलोमविलोमेन मध्यस्थं सा-

ध्यकर्म्मयुक् ॥ मनुं प्रजप्य होतव्यं लोणराजिकया ततः ॥ नरनारीनृपांश्चैव वशयेन्नात्र संशयः ॥ ५३४ ॥ त्रिस्वादुयुग्बिल्वफलैर्होमो मर्त्यावरञ्जनः ॥ साधकस्य समृद्धिश्च कमलाया भवेदपि ॥ ५३५ ॥ त्रिस्वादुयुग्गुडूचीभिर्होमो रोगारिनाशनः ॥ गुप्तरूपा स्थिता काश्यामेवं त्रिपुरभैरवी ॥ ५३६ ॥ अथ सम्पत्प्रदां वक्ष्ये देवीं त्रिपुरभैरवीम् ॥ आहूतां गणनाथेन कौलिकाचारपूजिताम् ॥ ५३७ ॥ हकारं च सकारं च खकारं च फरौ तथा ॥ ऋकारस्वरसंयुक्तं बिन्दुनादविभूषितम् ॥ पञ्चवर्णात्मकं कूटं प्रथमं परिकीर्त्तितम् ॥ ॥ ५३८ ॥ द्वितीयं बीजमृजमैः कात्कौ स्याच्च तृतीयकम् ॥ एवं मंत्रः समाख्यातो द्विरावृत्त्या षडङ्गकम् ॥ ५३९ ॥ प्राग्वदस्याश्चरेन्न्यासं ध्यानमस्या निरूप्यते ॥ उद्यत्सूर्य्यसहस्राभां चंद्रचूडां त्रिलोचनाम् ॥ ५४० ॥ नानालङ्कारसुभगां सर्ववैरिनिकर्त्तनीम् ॥ स्रवद्रुधिरमुण्डालिललितां रक्तवाससम् ॥ ५४१ ॥ डमरुञ्च त्रिशूलं च खड्गं खेटकमेव च ॥ पिनाकं च शरान्पाशानंकुशं पुस्तकं तथा ॥ ५४२ ॥ अक्षमालां च बिभ्राणां शवसिंहासनस्थिताम् ॥ एवं ध्यात्वा यजेत्पीठं प्रथमं पीठमन्त्रतः ॥ ५४३ ॥ अघोरे ऐं ओं चं घोरे मायां घोरद्वयान्तरम् ॥ श्रीं सर्वतः सर्वसर्वेभ्यो नमस्ते पदं वदेत् ॥ रुद्ररूपेभ्यो ह्रीं श्रीं च देवार्णः पीठमन्त्रकः ॥ ५४४ ॥ ततः पूज्यास्तु पीठस्य शक्तयः पृष्ठदेशतः ॥ वामां ज्येष्ठां च रौद्रीं च कालीं च वरलोचनाम् ॥ ५४५ ॥ कलाढ्यां च बलाढ्यां च यजेद्विकारिणीं ततः॥ बलप्रमथिनीञ्चैव सर्वभूतदमां तथा ॥ ५४६ ॥ द्वादशैताः क्रमाद्देव्यो मदनीं च मनोन्मनीम् ॥ पूजापीठं समुद्धृत्य प्राग्वदङ्गानि पूजयेत् ॥५४७॥ रत्यादित्रयमभ्यर्च्य तथानंगादिकान्यजेत् ॥ ब्राह्म्यादियुग्मं सम्पूज्य वसुपत्रेषु मातृकाः ॥ भूपुरे लोकपालांश्च सायुधान्परमेश्वरि ॥ ५४८ ॥ अन्यः सर्वः प्रयोगोयं त्रिपुराभैरवीसमः ॥ चैतन्यभैरवीमन्त्रस्त्र्यक्षरः कथ्यतेऽधुना ॥ सहावकारसंयुक्तौ प्रथमं बीजमीरितम् ॥ ५४९ ॥ सकलैरीसमायुक्तैर्द्वितीयं बीजमुच्यते ॥ सहरौद्रीसमायुक्ता विसर्गांतास्तृतीयकम् ॥ ५५० ॥ उद्यद्भा-

---

१ अमभाव आर्षः ॥

नुसहस्राभां नानालङ्कारभूषिताम् ॥ मुकुटोर्ध्वलसच्चन्द्ररेखां रक्ताम्बराचिताम् ॥ ॥ ५५१ ॥ पाशांकुशधरां नित्यां वामहस्तकपालिनीम् ॥ वरदाभयशोभाढ्यां पीनोन्नतघनस्तनीम् ॥५५२॥ एवं ध्यात्वा यजेद्देवीं पूर्वसिंहासने स्थिताम् ॥ द्विरावृत्त्या षडङ्गानि न्यस्येत्सर्वांगलक्षणम् ॥६५३॥ त्रिकोणं चैव षट्कोणं वसुपत्रं ततः परम् ॥ चतुरस्रं चतुर्द्वारमेवं मण्डलमालिखेत् ॥५५४॥ प्रथमावरणं चात्रषडंगैः परिकल्पयेत् ॥ रत्यादिकास्ततः पूज्यास्त्रिकोणाग्रे वसन्तकम् ॥ वामे कामं विधुं दक्षे यजेद्बाणांश्च पूर्ववत् ॥ ५५५ ॥ डाकिनीं शाकिनीं चैव लाकिनीं काकिनीं ततः ॥ शाकिनीं हाकिनीं चापि पश्चिमादिक्रमाद्यजेत् ॥ अनङ्गकुसुमाद्याश्च वसुपत्रेषु पूर्ववत् ॥५५६॥ परभृत्सारसाख्यौ च शुकमेघाह्वयौ पुनः ॥ अपाङ्गभ्रूविलासौ च हावभावौ प्रपूजयेत् ॥५५७॥ पुरश्चर्यादिकं प्राग्वत्प्रयोगांश्चापि साधयेत् ॥ तद्वदेव च पूजापि शेषं न्यासादिकं तथा ॥ ५५८ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि भुवनेश्वरभैरवीम् ॥ हसावकारसंयुक्तौ प्रथमं बीजमीरितम् ॥ ५५९ ॥ हंसकला ह्रींसमेता द्वितीयं बीजमुच्यते ॥ हसावौकारसंयुक्तौ विसर्गान्तं तृतीयकम् ॥ षड्दीर्घान्वितमध्येन बीजेनोक्तं षडङ्गकम् ॥ ॥ ५६० ॥ जपाकुसुमसङ्काशां दाडिमीकुसुमप्रभाम् ॥ चन्द्ररेखां जटाजूटां त्रिनेत्रां रक्तवाससम् ॥ ५६१ ॥ नानालङ्कारसुभगां पीनोन्नतघनस्तनीम् ॥ पाशांकुशवराभीतीर्दधानां च शिवां श्रये ॥ ५६२ ॥ चैतन्यभैरवीवत्स्याद्यद्यन्नोक्तमिहाथ तत् ॥ षडङ्गावरणं चात्र पूर्ववत्परितो यजेत् ॥ ५६३ ॥ रत्याद्याः पूजयेद्देवि त्रिकोणे तदनन्तरम् ॥ ब्रह्मविष्णुमहेशाद्यास्तत्र पूज्या बहिः पुनः ५६४ ॥ डाकिन्याद्या वसुदले षड्दले हाकिनीमुखाः ॥ अनङ्गकुसुमाद्याश्च ब्राह्म्याद्याश्च समंततः ॥ ५६५ ॥ भूबिम्बे लोकपालांश्च बटुकाद्यांश्च पूजयेत् ॥ चतुःषष्टियोगिनीभ्यो हृदन्तोयं दशाक्षरः ॥ ५६६ ॥ अष्टपत्रेषु भूबिम्बे त्वेकोच्चारेण पूजयेत् ॥ एकादशमहाकोटियोगिनीभ्यो नमोर्चयेत् ॥ ५६७ ॥ जपादिकं प्रयोगाश्च ज्ञेयाः प्राग्वत्त एव हि ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि भैरवीं कमलेश्वरीम् ॥५६८॥ हसस्थाने सहेत्युक्त्वा सर्वं मन्त्रादि पूर्ववत् ॥ राज्ञाज्ञाता ततः शप्ता तुहिनागेऽभवन्नदी ॥ ५६९ ॥ त्यक्तस्तया

वाममार्गो राजभीत्या तु मत्कृते ॥ यतो लब्धं तथा दुःखं कलौ ख्यातिं गमिष्यति ॥ ५७० ॥ पुनस्तेषु च देवेषु प्रत्यक्षेयं भविष्यति ॥ अवर्णाद्याश्च वर्णाश्च भविष्यन्ति वरप्रदाः ॥ ५७१ ॥ त्यक्त्वा मपञ्चकं पूजां कृत्वा ये- चैव मत्पराः ॥ अस्यास्तीरे पुरीश्वर्य्यां न च तेषु प्रसीदति ॥ ५७२ ॥ भुवनेशी भैरवी तु कृत्वा रूपान्तरं मम ॥ कार्य्यार्थे बहवः शिष्याः कौलका वामनाः कृताः॥ तस्माद्ध्यानाद्यर्चनादि प्राग्वद्दक्षिणमार्गतः॥५७३॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि हसराद्यां च भैरवीम् ॥ भुवनेश्वरभैरव्या बीजादौ हसरान्प- ठेत् ॥५७४॥ त्रयाणामपि बीजाना प्रथमं व्यञ्जनात्मकम् ॥ हसराद्यांस्तथा विद्यात्प्राग्वत्पूजादिकं मतम् ॥ ५७५ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि सिद्धां कौलेश- भैरवीम् ॥ आद्यन्तबीजयो रेफरहिता हसरादिकाः ॥ ५७६ ॥ कौलेश्वरी भवेद्विद्या कौलिकानां सुसिद्धिदा ॥ सम्पत्प्रदा भैरवीवत्सर्वं ध्यानादिकं मतम्॥ ॥ ५७७ ॥ कुर्वन्तोपीदृशं कर्म्म दिवोदासस्य तेजसा ॥न शक्तास्तत्र संस्थातुं तदा देवेन ढुण्ढिना ॥५७८॥जयदुर्गा समाहूता भजतां जयदायिनी॥ऊर्द्ध्वा- म्नायस्य ये देवास्तान्वक्ष्यामि समासतः ॥५७९॥ दुर्गेदुर्गेतिदुर्घटेच प्रणवादि- नवाक्षरम् ॥ एकादशार्णं स्वाहान्तं मन्त्रयुग्मं तदीयकम् ॥ ५८० ॥ नारदो मुनिराख्यातो विराट् छन्द उदाहृतम् ॥जयदुर्गा देवतास्य भुक्तिमुक्तिफलप्रदा॥ ॥ ५८१ ॥ ताराद्यैः पञ्चमन्त्रस्य पदैः सर्वेशधीर्मता ॥ जातियुक्तैरङ्ग- क्लृप्तिः षट्पदैस्तैः षडङ्गकम् ॥ ५८२ ॥ अष्टपत्राम्बुजद्वन्द्वं चतुरस्रत्रयावृ- तम् ॥ चतुर्द्वारसमायुक्तं कुंकुमादिभिरुद्धरेत् ॥ ५८३ ॥ कुर्य्यात्स्वपीठपू- जायां नवशक्तिसमर्चनम् ॥ प्रभा माया जया चैव सुप्रभा च विशुद्धिका ॥ ॥ ५८४ ॥ नादिनी सुप्रभावापि विजया सिद्धिदा तथा ॥ एकवह्निशरक्ली- बहीनैरद्भिः प्रपूजयेत् ॥ ५८५ ॥ तारो वज्रनखदंष्ट्रायुधाय महासिंहाय ॥ हुं फट् नमः सिद्धमनुः पीठं चानेन पूजयेत ॥ ५८६ ॥ आसनं मनुना तेन दद्यान्मूलेन कल्पयेत ॥ मूर्त्तिमावाह्य तस्यान्तः पूजयेच्चन्दनादिभिः॥५८७॥ क्रमादावरणाङ्गैश्च जयादिसुप्रभादिभिः ॥ देवायुधैर्दिगीशैश्च हेतिभिर्ध्यान- मुच्यते ॥ ५८८ ॥ मेघाभां चन्द्रमुकुटां सिंहास्यां त्रीक्षणां करैः ॥ चक्रं

खड्गं चर्म्म दरं दधानां च क्रमाद्भजे ॥ ५८९ ॥ जया च विजया कीर्त्तिः प्रीतिश्चापि प्रभा मता ॥ श्रद्धा मेधा श्रुतिश्चेति ओमाद्यक्षरपूर्विकाः॥५९०॥ असिर्दरो गदा खड्गपाशांकुशशरा धनुः ॥ इत्यायुधानि प्रोक्तानि लक्षाणां पञ्चकं जपेत् ॥ ५९१ ॥ दशांशं जुहुयादाज्यैस्तर्पणादि ततश्चरेत् ॥ ततः सिद्धमनुर्मन्त्री प्रयोगानाचरेत्सुधीः ॥ ५९२ ॥ इमं मन्त्रं जपेद्भूयः प्रविशे-त्क्षत्रसङ्गरम् ॥ अशेषेण रिपुं हन्यान्नात्र कार्य्या विचारणा ॥५९३॥विवादे व्यवहारादौ जप्तो विजयदो भवेत् ॥ अनया विधयास्त्राणि शस्त्राणि सुबहून्यपि ॥५९४॥सञ्जप्तानि च संग्रामे सम्यग्विजयदानि तु ॥एतदाराधनाद्देवा दिवोदा-सोभवत्क्षणात्॥संग्रामे सैन्यवर्गस्य क्षयमालोक्य मोहितः॥५९५॥ योच्चारणा-र्थमानीता दिवोदासस्य भूभुजः॥ वनदुर्गा स्थिता गंगापारे तस्या मनुं शृणु ॥ ॥ ५९६ ॥ उत्तिष्ठ पुरुषीत्युक्त्वा किं स्वपिषि भयं वदेत् ॥ मे शमयेति चोच्चार्य्य पश्चाद्ब्रूयात्स्थितं तथा ॥ ५९७ ॥ यदि शक्यमशक्यं वा तन्मे भगवतीति च ॥ शमयाग्निवधूश्चेति मन्त्रो नगगुणार्णकः ॥५९८॥ स्वकार्य्यं साधयित्वेवं गणनाथेन कीलिता॥५९९॥एनां जपेच्च निष्कीलां तदा सिद्धिः प्रजायते ॥६००॥ ओंह्रीं दुं दुं पुनर्दुं च प्रथमं बीजपञ्चकम्॥मन्त्रादौ यो-जयेदन्ते दुंह्रींमोमि इति मन्त्रवित् ॥ ६०१ ॥ निष्कीला जायते विद्या-साधकानां सुसिद्धिदा ॥ आरण्यको मुनिः प्रोक्तो ह्यनुष्टुप् छन्द ईरितम् ॥ ॥ ६०२ ॥ वनदुर्गा देवतास्य सर्वशत्रुविनाशिनी ॥ ऋत्वष्टाष्टभूबाणैर्मन्त्रार्णैः स्यात्षडङ्गकम् ॥ ६०३ ॥ दक्षपादांगुलीमूले गुल्फे जानुनि चोरुके ॥ गुदे-लिङ्गे तथा मूलाधारे च जठरे तथा ॥ ६०४ ॥ पार्श्वयुग्मे हृदि कुचद्वन्द्वे कण्ठे च सन्धिषु ॥ करयोर्वदने नासागण्डयुक्कर्णयुग्मके ॥ ६०५ ॥ भ्रूमध्ये मूर्धनि मनोर्वर्णा न्यस्या यथाविधि ॥ विद्युन्निभां त्रिनेत्रां च ह्यरुणे पङ्कजे स्थिताम् ॥ ६०६ ॥ चक्रं दरं वराभीती हस्तेषु दधतीं शुभाम् ॥ स्वर्णोद्यत्कान्तिवसनां शशिमौलिं वनस्थिताम् ॥ ६०७॥ प्रसन्नां पुष्पभूषाढ्यां पार्श्वोद्यन्मृगशाविकाम् ॥ इति ध्यात्वा यजेद्देवीं पीठे पूर्वोदिते ततः॥६०८॥ पूर्वमङ्गानि पूज्यानि तत आर्य्यादिका यजेत् ॥ चक्राद्यस्त्राणि मातॄश्च लोके-

शानायुधानि च ॥६०९॥ आर्य्या दुर्गा च भद्रा च भद्रकाल्यम्बिका तथा ॥ क्षेम्या च वेदगर्भा च शाङ्करी चाष्टमी मता ॥ ६१० ॥ शङ्खचक्रासिखेटेषु धनुः शूलं गदेति च ॥ वेदलक्षं जपेन्मन्त्रं तद्दशांशं हुनेत्तिलैः ॥ ६११ ॥ व्रीह्याज्यतिलदुग्धान्नैर्दुर्गां सञ्चिन्त्य चानले ॥ तर्प्पणं माज्र्जनं कृत्वा ब्राह्मणा-राधनं तथा ॥ ६१२ ॥ धनधान्यादिभिः सम्यक्तोषयित्वा निजं गुरुम् ॥ एवं सिद्धमनुर्मन्त्री वाञ्छितार्थान्प्रसाधयेत्॥६१३॥ दुर्गां प्रयोगभेदेन चिन्तये-द्वनवासिनीम् ॥ ध्यायेच्छ्रियं श्यामलाङ्गीं हयारेर्मूर्धनि स्थिताम् ॥ ६१४ ॥ शङ्खचक्रासिबाणांश्च तर्जनीचर्म्म खेटकम् ॥ चापं च दधतीं हस्तैः सुप्रसन्ना-ननां भजे ॥ ६१५ ॥ प्रत्यहं प्रजपेन्मन्त्री स्वरक्षार्थं शतं सदा ॥ सहस्रं च तदन्ते च प्रयोगान्कर्त्तुमर्हति ॥ ६१६ ॥ यद्यदुद्दिश्य च मनुं सहस्रं वायुतं जपेत् ॥ अचिराल्लभते तत्तदसाध्यमपि साधकः ॥ ६१७ ॥ प्रातःस्नायी न्यासपूर्वं स्मरन्देवीमनन्यधीः ॥ नित्यं सहस्रं प्रजपेन्मन्त्रं साधकसत्तमः ॥ ॥ ६१८ ॥ क्रूरसर्पग्रहाद्यांश्च दोषान्प्रशमयेत्सुधीः ॥ हुनेदारण्यकतिलैराजि-काभिश्च वा हुनेत् ॥ ६१९ ॥ अपामार्गसमिद्भिर्वा नाशयेत्सकलान्गदान् ॥ अपस्मारादिकान्मन्त्री नात्र कार्य्या विचारणा ॥ ६२० ॥ न्यग्रोधोत्थसमि-द्भिश्च सशुंगाभिर्हुनेत्सुधीः ॥ दशाहतो वाञ्छितार्थसिद्धिर्भवति नान्यथा ॥ ६२१ ॥ त्र्यहं वा सप्तरात्रं वा चैधै रास्नासमुद्भवैः ॥ एकैकं सकलं मन्त्री हुनेद्वाञ्छितसिद्धये ॥ ६२२ ॥ त्रिंशच्छरान्सिताग्रांश्च विधाय जुहुयाद्बुधः॥ कटुतैलैः सहस्रं वा ह्ययुतैस्तदनन्तरम् ॥६२३॥ सम्पाततैलरसनान्समभ्यर्च्य यथाविधि ॥ पूर्ववत्प्रजपेन्मन्त्रं ताञ्छरानपि भूपतिः ॥ ६२४ ॥ शुद्धा-चारश्च धीरश्च धन्वी संग्राममानसः ॥ गृहीत्वा परसेनायां मध्ये गच्छेदभी-तवत् ॥ साधनानि दिशः सर्वाः समन्तात्सफलास्तदा ॥६२५॥ स आगत्य पुनर्भूयो गुरुं धान्यैर्धनैरपि ॥ वस्त्रालङ्करणैश्चापि तोषयेज्जयदायिनम् ॥ ॥ ६२६ ॥ अष्टाधिकशतेनाथ जपेन शवभस्म च ॥ निक्षिपेद्यस्य शिरसि स विद्विष्टो भवेज्जनैः ॥ देशाद्देशान्तरं चैव सदा भ्राम्यति काकवत् ॥६२७॥ कारस्करद्रुमोत्थैश्च पत्रैर्वायुनिपातितैः॥सहस्रं जुहुयात्पादरजोभिः सहवैरिणः॥

॥ ६२८ ॥ उच्चाटोर्थे[1] भवेत्सद्यो विषवृक्षसमुद्भवैः ॥ पुष्पैर्हुनेत्सहस्रं[2] च सेना संस्तम्भयेद्बुधः ॥ ६२९ ॥ तावद्भिस्तस्य पत्रैश्च मन्त्री सेनां निवर्त्तयेत् ॥ विषवृक्षसमुद्भूतां शत्रोः प्रतिकृतिं शुभाम् ॥ ६३० ॥ कृत्वा प्रतिष्ठितप्राणां खण्डखण्डीकृतां निशि ॥ कृष्णपक्षे चतुर्दश्यां ककोलूकवसायुतैः ॥ ॥ ६३१ ॥ होमाद्रिपुर्नाशमेति ह्युन्मत्तसमिधा तथा ॥ होमान्मत्तो रिपुर्नूनं भवत्येव सहस्रतः ॥ ६३२ ॥ वैरिणः प्रतिमा कृत्वा सम्यक् संस्थापितानिलाम् ॥ विषत्रिकटुकालिप्तां सम्यगुष्णजले क्षिपेत् ॥ ६३३ ॥ प्रजपेच्च मनुं सद्यो ज्वराक्रान्तो भवेद्रिपुः ॥ दुग्धाभिषेकतः शान्तिर्भवत्यस्य न संशयः ॥ ६३४ ॥ प्रतिमां विषवृक्षोत्थां निक्षिपेदुष्णवारिणि ॥ उन्मादश्च रिपोः सद्यः पूर्ववच्छान्तिरीरिता ॥ ६३५ ॥ सूर्य्यबिम्बवदारक्तां शूलतर्जनिकाधराम् ॥ ध्यात्वायुतं[3] प्रजप्याथ मारयेद्रिपुसञ्चयम् ॥ ६३६ ॥ असिखेटकराकेंस्था क्रुद्धा सा वनवासिनी ॥ संस्मृता मन्त्रजापेन शमयेच्छत्रुसञ्चयम् ॥ ॥ ६३७ ॥ शरचापकरां सिंहस्थितां पावकसन्निभाम् ॥ कारस्करद्रुसमिधा ह्ययुतं जुहुयात्सुधीः ॥६३८॥ रोगिणोः वैरिणः[4] सर्वे जायन्ते चाचिरात्तदा ॥ विषवृक्षोत्थितैः पत्रैरभिनाशं प्रयान्ति च ॥६३९॥ तद्वृक्षसुमनोभिः स्यादुच्चाटः करिणां ध्रुवम् ॥ राजवृक्षसमिद्धोमाद्रोगा नश्यन्ति दंतिनाम् ॥ ॥ ६४० ॥ विषवृक्षप्रसूनैश्च त्रिमध्वक्तैरिभव्रजः ॥ वशी भवेत्तथा शीघ्रं पत्रैरादित्यकोत्थितैः ॥ ६४१ ॥ त्रिस्वादुयुक्तैः करिणो जातिमंतो भवन्ति च ॥ अभ्यंगः पञ्चगव्येन लोकरक्षाकरः स्मृतः ॥ ॥ ६४२ ॥ करिणां[5] मनुजानां च प्राग्वै तन्त्रविदुत्तमैः ॥ सर्पिस्तिलैर्नित्यकटुराजिकापञ्चगव्यकैः[6] ॥ ६४३ ॥ हविस्तण्डुलकैश्चैव प्रत्येकं तु सहस्रशः ॥ जुहुयादिभसङ्घानां वृद्धिर्भवति नान्यथा ॥६४४॥ महान्तं ब्रह्मवृक्षं च च्छित्त्वा निर्भिद्य पञ्चधा ॥ दिक्क्रमेणैव पञ्चाथ आयुधानि प्रकल्पयेत् ॥ ६४५ ॥ सम्यङ्नित्यं गदा शङ्खो नन्दकश्चक्रशार्ङ्गकौ ॥ कौमोद-

१ अस्य पूर्वपद्यघटकवैरिण इत्यत्र सम्बन्धः । २ अथानन्तरं विषवृक्षकुसुमहोमात्स्तम्भनमिति भावः । ३ ध्यात्वेति शेषः । ४ शत्रूणामिति शेषः । ५ अर्द्धं पूर्वान्वयि । ६ अर्द्धमुत्तरान्वयि ।

कीर्ति क्रमतोप्युक्तमायुधपञ्चकम् ॥ ६४६ ॥ निक्षिप्य पञ्चगव्ये च जपे-त्पञ्चसहस्रकम् ॥ तावच्चाज्येन जुहुयात्सम्पातं तत्र पातयेत् ॥ ६४७ ॥ भूयश्च पूर्वसंख्याकं जपं कुर्य्याद्विचक्षणः ॥ विदध्याद्दैवतान्पञ्च पञ्चगव्यप्रपूरितान् ॥ ६४८ ॥ मध्ये हि तेष्वायुधानि निक्षिपेद्भूतले समे ॥ कुर्य्याच्छान्तिं ततो मन्त्रैर्बलिं हव्यं निजैः शुभैः ॥ ६४९ ॥ नगरग्रामदेशानां कारयेत्क्षेममीदृशम् ॥ यत्रेयं क्रियते रक्षा कमला तत्र वर्धते ॥ ६५० ॥ धनधान्यसमृद्धिः स्याद्रिपुचौरभयं न च ॥ पद्मैर्नृपं वशीकुर्य्यात्तत्पत्नीमुत्पलैरपि ॥ ६५१ ॥ ब्राह्मणान्कुमुदैर्हुत्वा कह्लारैर्विश एव च ॥ शूद्राल्लँवणहोमेन ग्रामं जातीप्रसूनकैः ॥ ६५२ ॥ शङ्खचक्रगदाम्भोजहस्तं सञ्चिन्तयेच्छुभम्॥ रविबिम्बे मुकुन्दं च मनुप्रोक्तेष्टलिङ्गकम् ॥ ६५३ ॥ प्रजपेद्वाथ पुरुषो भगवत्पादयोरथ ॥ सर्वसिद्धिकरः प्रोक्तः प्रकारोयं सुमन्त्रिभिः ॥ ६५४ ॥ साध्यनामाक्षरैः सम्यग्विदर्भितमनुं लिखेत् ॥ यन्त्रे मृदं कुलालस्य करलग्नां प्रगृह्य च ॥ ६५५ ॥ तया कृता या प्रतिमा तस्या हृदि च सन्न्यसेत ॥ संस्थापित्वाभिमुख्येन सप्ताहं प्रजपेन्मनुम् ॥ सन्ध्यात्रये शतं चाष्टाधिकं वश्यो भवेत्तु सः ॥ ६५६ ॥ व्रीहीन्हुनेदष्टशतं प्रत्यहं वत्सराद्भवेत् ॥ व्रीहिमान्गोपयोभिश्च पशुमान्भवति ध्रुवम् ॥ ६५७ ॥ घृतहोमान्मन्त्रिणः स्यात्काञ्चनाप्तिर्महीयसी ॥ दध्ना च सर्वसिद्धिः स्यादन्नैरन्नसमृद्धियुक् ॥ ॥ ६५८ ॥ मधुहोमेन रत्नानां निधिर्भवति नान्यथा ॥ दूर्वाहोमेन दीर्घायुर्मन्त्री भवति निश्चितम् ॥ ६५९ ॥ श्वेतगुञ्जाः समानीय कुडवप्रमिताः शुभाः ॥ एतन्मन्त्रं तु जप्त्वा ता विकिरेच्छत्रुसैन्यके ॥ ६६० ॥ मन्त्रोत्तमः सुजनः स तेनासौ वैरिणश्चमूः ॥ ज्वरादिकैर्महारोगैः पीडिता सा नृणां चिरम् ॥ ६६१ ॥ सेनाधिपतिमुख्यानां परस्परविरोधतः ॥ एवं ह्युपद्रवैर्नानाविधैर्नाशं प्रयाति च ॥ ६६२ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि बीजरूपं महामनुम् ॥ दुरित्येकाक्षरो मन्त्रस्सर्वमन्त्रोत्तमो मतः ॥ ६६३ ॥ ऋषिः काश्यप उद्दिष्टो गायत्री छन्द ईरितम् ॥ देवता तु भवेद्दुर्गा षडङ्गानां विधिस्तथा ॥ षड्दीर्घयुक्तबीजेन विसर्गेणान्वितेन च ॥ ६६४ ॥ दूर्वाश्यामां

त्रिनेत्रां च कमलेष्टदले स्थिताम् ॥ शूलं बाणं खड्गचक्रे शङ्खं खेटं शरासनम् ॥ कपालानि च दक्षाधः क्रमेण दधतीं स्मरेत् ॥ ६६५ ॥ चतुर्लक्षं जपेन्मन्त्रं दशांशं जुहुयात्तिलैः ॥ पूजादिकं प्रयोगादि नवदुर्गासमं स्मृतम् ॥ ॥ ६६६ ॥ येये भूपोपकाराय लक्ष्मीमन्त्राः सुरोधिताः ॥ गणेशेनैव काश्यां ते चार्थदास्तान्ब्रवीम्यहम् ॥ ६६७ ॥ नमः कमलवासिन्यै स्वाहा चेति दशाक्षरः ॥ ऋष्याद्या दक्षवेद्देवी कमला समुदीरिता॥६६८॥देवीं च पद्मिनीं विष्णुपत्नीं तु वरदां मताम्॥तथा कमलरूपां च ङेनमोन्तां च विन्यसेत् ॥ पञ्चाङ्गेषु च ताराद्या ध्यानमस्या निरूप्यते ॥६६९॥ तडित्कान्तिं पद्मयुगवरदाभयसत्कराम् ॥ शरीरभासा भुवनं भासयन्तीं सरोजगाम् ॥ ॥ ६७० ॥ काञ्चीमुकुटमञ्जीरनूपुरै रुचिरां श्रये ॥ आदावङ्गानि तद्बाह्ये कमलाद्यष्टशक्तयः[1] ॥ ६७१ ॥ तद्बाह्ये लोकपालांश्च तदस्त्राणि च तद्बहिः ॥ एवमभ्यर्चयेल्लक्ष्मीं भवेत्सद्यो धनाधिपः ॥ ६७२ ॥ पञ्चलक्षं जपेन्मन्त्रं हविष्याशी जितेन्द्रियः ॥ तद्दशांशं सरसिजैस्त्रिस्वाद्वक्तैर्हुनेत्सुधीः ॥ ६७३ ॥ नद्यां समुद्रगामिन्यां कण्ठदघ्ने जले स्थितः ॥ लक्षत्रयं जपेन्मन्त्री भवेदर्थान्वितो नरः ॥ ६७४ ॥ नन्द्यावर्त्तप्रसूनैश्च जुहुयादुत्तराक्रमे ॥ रमां सम्पूज्य साहस्रं तावद्बिल्वैर्मधुप्लुतैः ॥ ६७५ ॥ फलैर्हुनेत्पौर्णमास्यां पञ्चम्यां वा सिताम्बुजैः ॥ शुक्रवारेब्जपुष्पैश्च मासं यो जुहुयात्सुधीः ॥ संवत्सराद्धनं पूर्णं लभते नात्र संशयः ॥ ६७६ ॥ किम्बहूक्तेन भजते मनुमेनं जितेन्द्रियः ॥ स वाञ्छितार्थाँल्लभते वसुधान्यसमृद्धियुक् ॥ ६७७ ॥ अथ वक्ष्ये गणेशेन काशीराज्याप्तये मम ॥ सांबादित्यस्य रक्षोदिग्भागे लक्ष्मीरुपासिता ॥ लक्ष्मीविनायकस्तत्र प्रसिद्धोसौ गजाननः ॥ ६७८ ॥ दक्षिणेनैव मार्गेण तस्याः सिद्धिर्न वामतः ॥ सकारश्च हकारश्च कलरा वर्णपञ्चकम् ॥ ६७९ ॥ ईकारस्वरसंयुक्तं प्रथमं कूटमुच्यते ॥ हंबीजं तु द्वितीयं स्यात्प्रोक्तोयं त्र्यक्षरो मनुः ॥ ६८० ॥ ऋषिर्हरिश्च गायत्री छन्दो लक्ष्मीश्च मोहिनी॥ साम्राज्यदा देवतोक्ता कूटं बीजं प्रकीर्त्तितम्॥

१ द्वितीयार्थे प्रथमा ।

॥६८१॥शक्तिं श्रीं च षडङ्गानि षड्भिर्दीर्घैः समाचरेत्॥अतसीपुष्पसङ्काशां रत्न भूषणभूषिताम् ॥ ६८२ ॥ शंखचक्रगदापद्मशार्ङ्गबाणधरां करैः ॥ षड्भिः कराभ्यां देवेशीं वरदाभयशोभिताम् ॥ ६८३ ॥ पूजायन्त्रं त्रिकोणं स्यादष्टपत्रं सभूपुरम् ॥ मध्ये प्रपूजयेद्देवीं षडंगानि ततो यजेत् ॥ ६८४ ॥ त्रिकोणकोणे गायत्रीं सावित्रीं च सरस्वतीम् ॥ ईशकोणात्क्रमेणैव ब्राह्मयाद्याश्च दलाष्टके ॥ ६८५ ॥ एकोच्चारक्रमेणैव भूपुरे मनुना पुरा ॥ अष्टादशमहाकोटियोगिनीभ्यो नमोस्त्विति ॥ ६८६ ॥ मन्त्रेण पूजयेत्पश्चादिन्द्रादीनायुधान्यपि ॥ पुनर्देवीं समभ्यर्च्य गन्धपुष्पाक्षतादिभिः ॥ ६८७ ॥ बटुकक्षेत्रपालेभ्यो योगिनीभ्यो बलिं हरेत् ॥ एवमष्टभुजां ध्यात्वा त्रिलक्षं प्रजपेत्सुधीः ॥ ६८८ ॥ तद्दशांशेन पद्मैस्तु हुनेत्साम्राज्यसिद्धये ॥ एवमर्चयतो लक्ष्मीं साम्राज्यं स्यादसंशयम् ॥ ६८९ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामिनित्यक्लिन्नामनुं परम् ॥ भवाणोंसौ मुखे मायानित्यक्लिन्ने मदद्रवे ॥ ६९० ॥ स्वाहान्तोस्य मुनिर्ब्रह्मा छन्दस्त्रिष्टुप् च देवता ॥ नित्यक्लिन्ना ह्रीं च बीजं स्वहा शक्तिः समीरिता ॥ ६९१ ॥ क्लिन्नेति कीलकं प्रोक्तं हृदाद्यने समीरितम् ॥ द्वाभ्यांद्वाभ्यां च शेषाणि कुर्य्यादंगानि साधकः ॥ ६९२ ॥ हृदये दृग्द्वये कर्णद्वये नासाद्वयेपि च ॥ लिंगे गुह्ये पादयोश्च मन्त्रार्णान्क्रमतो न्यसेत् ॥ ६९३ ॥ अरुणामरुणाकल्पामरुणांशुकधारिणीम् ॥ अरुणस्रग्विलेपां तां चारुस्मेरमुखाम्बुजाम् ॥ ६९४ ॥ नेत्रत्रयोल्लसद्वक्त्रां भाले घर्माम्बुमौक्तिकैः ॥ विराजमानां मुकुटलसदर्धेन्दुशेखराम् ॥ ६९५ ॥ चतुर्भिर्बाहुभिः पाशमंकुशं पानपात्रकम् ॥ अभयं बिभ्रतीं पद्ममध्यासीनां मदालसाम् ॥ ६९६ ॥ ध्यात्वैवं पूजयेन्नित्यं प्रागुक्ते शक्तिपीठके ॥ त्रिकोणमादौ तस्यान्तः षट्कोणं बाह्यके लिखेत् ॥ ६९७ ॥ पद्ममाष्टदलं बाह्ये भूपुरेण च वेष्टितम् ॥ तत्र मध्ये यजेद्देवीं चन्दनादिभिरुत्तमैः ॥ ॥ ६९८ ॥ कर्णिकायोनि मध्यस्थदेशे वाग्वीशवह्निषु ॥ नैर्ऋत्यां पुरतो दिक्षु यजेदंगानि षट् क्रमात् ॥ ६९९ ॥ क्षोभिणीं मोहिनीं लोकां त्रिषु कोणेषु पूजयेत् ॥ नित्यां निरञ्जनां क्लिन्नां क्लेदिनीं मदनातुराम् ॥ मद-

द्रवां द्राविणीं च द्रावितां चाष्टपत्रके ॥ ७०० ॥ मदाविला मंगलां च मन्मथार्त्तां मनस्विनीम् ॥ महोन्मोदां मानमयीं माया मन्दां सितावतीम् ॥ द्वारपार्श्वेषु कोणेषु दिक्षु द्वादश पूजयेत् ॥७०१॥ देव्यग्रद्वारके वामे पार्श्वमारभ्य पूजयेत् ॥ लोकेशानपि तद्बाह्ये तदस्त्राणि ततो बहिः ॥ ७०२ ॥ ध्यात्वैवं प्रजपेल्लक्षमनुमेतं दशांशतः ॥ बन्धूकपुष्पैः स्वाद्वक्तैर्जुहुयाद्धविषाथ वा ॥ ७०३ ॥ तद्दशांशं कल्पयित्वा जलैः कर्पूरवासितैः ॥ आत्मानमभिषिच्याथ ब्राह्मणान्भोजयेत्ततः ॥ ७०४ ॥ वित्तभूषाम्बराद्यैश्च तोषयेद्गुरुमात्मनः ॥ सिद्धे मन्त्रे प्रकुर्वीत प्रयोगान्मन्त्रवित्तमः ॥ ७०५ ॥ ततो विद्याप्रयोगार्हो नित्यार्चानिरतस्तथा ॥ सहस्रजापी तद्भक्तः कुर्य्यादुक्तं न चान्यथा ॥ ७०६ ॥ पद्मै रक्तैस्त्रिमध्वक्तैर्होमाल्लक्ष्मीमवाप्नुयात् ॥ तथैव कैरवै रक्तैराज्ञश्च स्ववशं नयेत् ॥ ७०७ ॥ समानरूपवत्सायाः शुक्लाया गोः पयःप्लुतैः ॥ मल्लिकामालतीजातीशतपत्रैर्हुनेद्भवेत् ॥ स्वर्णाप्तिः स्तम्भनं शत्रोर्नृपादीनां क्रुधोपि च ॥ ७०८ ॥ आज्याक्तैः करवीरोत्थैः प्रसूनैराहुतैर्ध्रुवम् ॥ रक्ताम्बराणि वाणिज्यं भूतमर्त्यं वशं नयेत् ॥ भूषावाहनवाणिज्यसिद्धयः स्युः स्ववांछिताः ॥ ७०९ ॥ लवणैः सर्षपैर्गौरैरितरैर्वाथ होमतः ॥ तत्तैलाक्तैर्निशामध्ये त्वानयेद्वांछितां वधूम् ॥ ७१० ॥ तैलाक्तैर्जुहुयात्कृष्णदरपुष्पैः र्निशान्तरा ॥ मासादरातिस्तीव्रार्त्तिज्वरेण परिपीड्यते ॥ ७११ ॥ अरुष्कसुघृताक्तैस्तद्बीजैर्निशि च होमतः ॥ व्रणाः शरीरे नश्येयुर्दुस्साध्याश्च चिकित्सकैः ॥ ७१२ ॥ तैलेन दलितांगस्तु रिपुर्याति यमालयम् ॥ तथा तत्तैलसंसिक्तैर्बीजैरंकोलकैरपि ॥ ७१३ ॥ मारिचैः सर्षपाज्याक्तैर्निशि होमात्तु मानसे वांछितां वनितां कामज्वरार्त्तामानयेद्ध्रुवम् ॥ ७१४ ॥ मारिचैः सर्षपोपेतैः सप्तरात्रं हुतैर्निशि ॥ धनमानकुलैर्नित्यं दुष्प्राप्यामानयेद्वधूम् ॥ ७१५ ॥ अन्नाद्यैर्जुहुयान्नित्यं शतमष्टोत्तरं तु वा ॥ तेनान्नपूर्णे भवने भोक्ता च भवति ध्रुवम् ॥ तण्डुलैराज्ययुक्तैश्च होमाच्छालीनवाप्नुयात् ॥ ७१६ ॥ साध्यक्षवृक्षसम्भूतविष्टपादरजः कृताम् ॥ राजीमरीचलवणैर्जुहुयात्पुत्तलीं निशि ॥ प्रपदाभ्यां च जंघाभ्यांजानुभ्यामूरुयुग्मतः ॥ ७१७ ॥ नाभेरधस्तद्धृदया-

द्गलात्कण्ठात्तथैव च ॥ छित्त्वा शिरस्सुतीक्ष्णेन शस्त्रेण जुहुयात्क्रमात् ॥ एवं द्वादशधा होमान्नरनारीनराधिपाः ॥ ७१८ ॥ वश्या भवेयुः सर्वे हि ज्व-रार्त्ताश्चास्य वांछया ॥ प्रयान्ति निधनं चास्य वांछया नान्ययोगतः ॥ पिष्टेन गुडयुक्तेन मरिचैर्जीरकैर्युताम् ॥ ७१९ ॥ कृत्वा पुत्तलिकां साध्यज्ञानमुक्तामथो हृदि ॥ सनामहोमसम्पातघृते सम्पच्य तां पुनः ॥ स्पृशन्निजकराग्रेण सहस्रं प्रजपेन्मनुम् ॥ ७२० ॥ अभ्यर्च्य तद्घृता-क्तेन भक्षयेत्तद्धिया जपन् ॥ नरनारीनृपास्तस्य वश्यास्स्युर्मरणावधि ॥ ॥ ७२१ ॥ तैरेव पिष्टैर्वृत्तं तु कृत्वा तन्मध्यतस्तथा ॥ साध्यनामस्फुटं कृत्वा प्राग्वत्सम्पाच्य भक्षणात् ॥ ७२२ ॥ वैश्यास्ते वत्सरं भूयः स्वनामा-र्थान्वितैस्तथा ॥ कृत्वा विपच्य स्वादंस्तु वशयेत्तं तदर्थकम् ॥ ७२३ ॥ नारिकेरपयोभिस्तु तर्पणाद्वनिता वशा ॥ कर्पूरवासितैस्तोयैर्मनुष्यान्वशयेत्स्थि-तान् ॥ ७२४ ॥ तर्पणाल्लवणाम्भोभिस्सर्वे स्युस्तस्य किंकराः ॥ तथा लवणयुक्तेन तोयेन वनिता वशा ॥ ७२५ ॥ शुद्धेन वारिणा मासं तदर्धं तप्त-वारकान् ॥ तर्प्पयेद्यस्य नाम्नैवं स तस्य स्याद्वशेऽनिशम् ॥ ७२६ ॥ केतकीवासितैर्ज-म्बूयुतै रम्भाफलोदकैः ॥ तर्पणाद्वनिता वश्या दद्युः प्राणानपि प्रियान् ॥ ॥ ७२७ ॥ तर्पणाल्लवणाम्भोभिस्सतिलैः किन्नरा वशाः ॥ शुद्धेन वारिणा मासं तर्पणात्स्यान्निजं धनम् ॥ नमेरुवासितैस्तोयैस्तर्पणाद्भूमिपा वशाः ॥ ७२८ ॥ कस्तूरीवासितैस्तोयैस्तर्प्पणाद्भूमिपा वशाः ॥ चम्पकैर्वासितजलैस्तर्प्पणं सर्वर-ञ्जनम् ॥ ७२९ ॥ पाटलीशतपत्राभ्यां वासितैर्ज्जलतर्प्पणैः ॥ सर्वलोकचम-त्कारी ध्रुवं भवति नित्यशः ॥ ७३० ॥ कस्तूरीवासिताम्भोभिस्तर्प्पणं सर्वसिद्धि-कृत् ॥ इंद्रचन्दनसौरभ्यवासिताम्भः प्रतर्प्पणैः ॥ ७३१ ॥ वाञ्छितार्थसु-संसिद्धिस्तर्प्पयेद्वैरिमृत्यवे ॥ केवलोष्णोदकैस्तस्य तीव्रज्वरसमुद्भवः ॥ ७३२ ॥ निम्बपत्ररसोपेतैरम्बुभिस्तर्पणाद्द्विषाम् ॥ जायतेन्योन्यवैरुद्धयं येन ते नाशमा-प्नुयुः ॥ ७३३ ॥ तथैवात्युष्णसलिलैस्तर्प्पणाद्द्वेषिणो भृशम् ॥ अतीसा-रादिभिर्दोषैरुदग्रैर्रोगमाप्नुयुः ॥ सर्वविद्यास्वियं मुख्या देवी श्रीविद्यया समा

१ इदम्पूर्वान्वयि ॥ २ इदम्पूर्वान्वयि ॥

॥ ७३४ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि नित्यक्लिन्नामनुं परम् ॥ ॐ ह्रीं मैमिति बीजानि नित्यक्लिन्ने मदद्रवे ॥ ७३५ ॥ ॐ ह्रीं स्वाहेति तिथ्यर्णो मंत्रोयं वाञ्छितार्थदः ॥ ऋषिः सम्मोहनश्छन्दो विराडुक्तं तु देवता ॥ नित्यक्लिन्नाभिधा देवी चतुर्वर्गफलप्रदा ॥ ७३६ ॥ विना वाग्भवबीजं तु द्विद्वियुग्मेषुबाणकैः ॥ समस्तेनांगषट्कं स्यान्नित्यक्लिन्नां स्मरेत्ततः ॥७३७॥ सुरासमुद्रमध्ये तु पृथुद्वीपं स्मरेद्बुधः ॥ तेजोमयं तत्र वनं नानाकल्पद्रुमान्वितम् ॥ ७३८ ॥ भृंगालिमंजुनादेन मंदवातेन सेवितम् ॥ मनोज्ञतृणपुष्पाद्यैर्युक्ते माणिक्यमण्डपे ॥ ७३९ ॥ रत्नसिंहासनं तस्य मध्ये राजत्रिकोणके ॥ तन्मध्येष्टदले देवीमुपविष्टां च संस्मरेत् ॥ ७४० ॥ शीतांशुचूडामरुणाम्भोजाभाम्बिभ्रतीं करैः॥ पाशांकुशौ कल्पवल्लीं कपालं दोर्युगेन च॥ वादयन्तीं कलां वीणां त्र्यक्षां नित्यां स्मराम्यहम् ॥ ७४१ ॥ इति ध्यात्वा यजेत्पीठं चतुश्शक्तियुतं सुधीः ॥ सयोनिकर्णिकं पद्ममष्टपत्रविराजितम् ॥ ७४२ ॥ आं द्राविण्यै च वामायै हृदुक्तैशानके यजेत्॥ ईं स्यादाह्लादकारिण्यै ज्येष्ठायै हृद्रुदासने ॥ ७४३ ॥ ऊं क्षोभिण्यै च रौद्र्यै च नमः पश्चिमकोणके ॥ ऐं गुह्यशक्त्यै हृत्प्रोक्तं यजेन्मध्ये त्रिकोणके ॥ ह्रीं सर्वशक्तिकमलासनाय हृदयान्ततः ॥ ७४४ ॥ पूज्यं त्रयोदशार्णेन देव्याश्चासनमुत्तमम् ॥ नित्यक्लिन्नां तत्र यजेद्वक्ष्यमाणेन वर्त्मना ॥ ७४५ ॥ केशरेष्वंगपूजा स्यात्पत्रेष्वेताः प्रपूजयेत् ॥ इं नित्यामीं सुभद्रां च मंगलां वनचारिणीम् ॥ ७४६ ॥ उऊं पूर्वा मे सुभगा मैं पूर्वा चापि दुर्भगाम् ॥ मनोन्मनी च ॐ पूर्वा मौं पूर्वारुद्ररूपिणीम् ॥ चतुर्थ्यन्तहृदन्तेन नाममन्त्रेण पूजयेत् ॥ ७४७ ॥ वल्लकी वादनपरा ह्यरुणा रक्ता मनोहरा ॥ मदमन्थरगामिन्यः सुभूषाश्चारुभूषणाः ॥७४८॥ हव्यञ्जनाढ्यं कामस्य बीजं बिन्दुद्वयान्वितम् ॥ उच्चार्य्य ङेहृदन्तांश्चानंगादीन्पूजयेत्क्रमात् ॥ ७४९ ॥ पञ्चपत्रेषु देव्यग्रप्रादक्षिण्येन ते तथा ॥ अनंगश्च स्मरो मन्मथाख्यः कामश्च मारकः ॥ पञ्चपुष्पेषुपाशाह्वनांकुशेक्षुधनुर्भृतः ॥ ७५० ॥ पृष्ठभागे भूषणयुक्ता शक्तिस्तत्पार्श्वसंस्थिताः ॥ भूषायुक्ताः

स्मरेद्वक्रकमलाः साधु पूजयेत् ॥ ७५१ ॥ ततो बाह्ये दशदले देव्यग्रादि-प्रदक्षिणम् ॥ षण्डान्तस्वरहीनश्च ककारं बिंदुभूषितत् ॥७५२॥ एकैकं पूर्व-मुच्चार्य्य ङेन्हृदन्तश्च नाम च॥अयन्तु पूजामन्त्रः स्यात्सर्वासां चाप्यनुक्रमात् ॥ ॥६५३॥रतिश्च विरतिः प्रीतिः विप्रीतिश्च मतिस्तथा ॥ दुर्मतिर्निर्धृतिर्विधृति-स्तुष्टिश्चापि वितुष्टिका॥ ७५४॥अरुणाभरणोपेता वीणाहस्ताः स्मिताननाः ॥ लोकपालास्ततो बाह्ये तदस्त्राणि ततो बहिः ॥ ७५५ ॥ वह्निलक्षं जपे-न्मत्रं तद्दशांशं हुनेत्पुनः ॥ घृतेन तर्प्पणाद्यं च कृत्वा संतोष्य देशिकम् ॥ ७५६ ॥ धनधान्यादिभिः सम्यक्प्रयोगानाचरेत्ततः ॥ पूर्वमन्त्रोदितान्सम्यक्पूर्वोक्तविधिना सुधीः ॥ ७५७ ॥ एवं यः पूजये-द्भक्त्या नित्यक्लिन्नां मनोहराम् ॥ प्राप्नोति महतीं लक्ष्मीं याच्यते प्रम-दाजनैः ॥ ७५८ ॥ षडाम्नायैश्चिरं सेव्या पारंपर्य्यं विचार्य्य च ॥ अथातोस्याः प्रवक्ष्यामि द्वादशार्णं महामनुम् ॥ ७५९ ॥ ऐं क्लीं बीजं समुच्चार्य्य नित्यक्लिन्ने मदद्रवे ॥ स्वाहान्तोयं मनुः प्रोक्तो मुनिः सम्मोहनो मतः ॥ ७६० ॥ छन्दो निवृत्समाख्यातं नित्यक्लिन्ना च देवता ॥ वाग्भ-वेन षडंगानि कृत्वा देवीं विचिन्तयेत् ॥ ७६१ ॥ रक्ताम्बरां रक्तवर्णां रक्तगन्धानुलेपनाम् ॥ कमलञ्च सृणिं पाशं कपालं बिभ्रतीं करैः ॥ ॥ ७६२ ॥ मदाकुलितसर्वांगीं त्रिनेत्रां शशिशेखराम् ॥ शाक्तपीठे यजेद्देवीं प्रोक्तांगानि पुरा यजेत् ॥ ७६३ ॥ पूर्वोक्ताश्च ततो बाह्ये शक्ती-र्नित्यादिका यजेत् ॥ अरुणा नीलकमलकपालाढ्यकराम्बुजा ॥ ॥ ७६४ ॥ शतक्रत्वादिकान्बाह्ये वज्रादींश्च ततः परम् ॥ अथ वक्ष्ये महाकालीं समस्तजनमोहिनीम् ॥ ७६५ ॥ आनीतां श्रीगणेशेन वाम-मार्गप्रचारिणीम् ॥ त्वरितं वाममार्गेण ह्यस्याः सिद्धिः प्रजायते ॥ ७६६ ॥ दिवोदासोच्चाटकरां दुर्गायां उत्तरास्थिताम् ॥ ॐ क्षेंक्ष्रेंक्रेंक्रेंश्च पशुं गृहाण-कवचं वदेत् ॥ अस्त्रं स्वाहा शक्रवर्णो मन्त्रः काल्या उदीरितः ॥ ७६७ ॥ न न्यासो न च मुद्रादिर्नात्र काचिद्विचारणा ॥ यथेष्टभक्ष्यपानाभ्यां मैथु-

१ इदं पूर्वान्वयि ॥ रतिं स याच्यते—इत्यर्थः । २ अत्र गौणे कर्मणि लः ॥

नेन प्रसीदति ॥ ७६८ ॥ उष्णतोयेन सम्पूर्णे कुम्भे चैवाथ कालिकाम् ॥ ब्राह्मयादिभिः शक्तिभिश्च युक्ता भक्त्या प्रपूजयेत् ॥ ७६९ ॥ पञ्चवक्त्रां महा-रौद्रीं प्रतिवक्त्रां त्रिलोचनाम् ॥शक्तिशूलधनुर्बाणखेटखड्गवराभयान् ॥ ७७० ॥ दक्षां दक्षभुजैर्देवीं बिभ्राणाम्भोगभूषिताम् ॥ ध्यात्वैवं सिद्धकः साध्यं साधये-न्मनसि स्थितम् ॥ ७७१ ॥ ब्राह्मी माहेश्वरी चैव कौमारी वैष्णवी तथा ॥ वाराही च तथेन्द्राणी चामुण्डा चण्डिकाष्टमी ॥ ७७२ ॥ प्रोक्ता ईशानपर्य्य-न्तं कुम्भकुक्षिस्थिता इमाः ॥ कार्त्तिकेया तमोदेवी महाकाली भयापहा ॥ ७७३ ॥ वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं घृताक्तैस्तिमिभिर्हुनेत् ॥ तर्पणादि ततः कृत्वा सिद्धो मन्त्रैः प्रजायते ॥ ७७४ ॥ नामोच्चारणसंरब्धरज्वा प्रज्वलितेनले ॥ जुहुयाद्वै-रिणः क्रुद्धो देवीमन्त्रं जपंस्तथा ॥ ७७५ ॥ समिधः पिचुमन्दस्य बिभीता ङ्गारहोमतः ॥ सप्ताहाद्वैरिणं हन्ति कालिकामन्त्रयोगतः ॥ ७७६ ॥ उच्चाटो ह्यपराह्णे च सन्ध्यायां मारणन्तथा ॥ दक्षिणस्यां दिशि स्थित्वा ग्रामादेर्द-क्षिणामुखः ॥ एतैरेव भवेद्धोमस्तत्तत्कर्म सुसिध्यति ॥ ७७७ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि महागणपसेविताम् ॥ महाकृत्यां यथा नार्य्यः पातिव्रत्यव्र-ताच्च्युताः ॥ ७७८ ॥ नानाविधाश्चमत्कारा नारीभ्यश्च प्रदर्शिताः ॥ पातिव्रत्याङ्कुशितास्ताः पापराशिर्महानभूत् ॥ ७७९ ॥ स्त्रीषु कृत्यासु जातासु गार्हस्थ्ये भंगुरे सति ॥ पुरुषा यां समासाद्य गृहस्थाः सुखिनो-भवन् ॥ ७८० ॥ तां कृत्यां सम्प्रवक्ष्यामि गृहस्थाश्रममण्डनाम् ॥ ह्रीं महायोगिनीं प्रोच्य गौरीमुक्त्वा भुवेति च ॥ ७८१ ॥ न भयङ्करि हुञ्चेति मन्त्रोयं षोडशाक्षरः ॥ अङ्गिराश्च मुनिर्देवी गायत्री छन्द ईरितम् ॥ ७८२ ॥ एवं फडन्तं भुवनभयङ्करि शिरो मतम् ॥ पुनरेवन्त्रिरावृत्या षडङ्गानि समाच-रेत् ॥ ७८३ ॥ सिंहासीनां कृष्णमुखीं लम्बमानपयोधराम् ॥ दंष्ट्राकरा-लवदनां त्रिनेत्रां सर्वतोज्वलाम् ॥ ७८४ ॥ कृष्णकंचुकसंवीतां विधूमाग्निस-मप्रभाम् ॥ त्रिशूलचक्रचषकखट्वाङ्गवरपङ्कजाम् ॥ ७८५ ॥ लेलिहानां महाजि-ह्वां विद्युत्प्रेक्षणभीषणाम् ॥ ध्यात्वा कृत्यां विधानेनपूजयेन्मन्त्रवित्तमः ॥ ७८६ ॥

१ तस्येति शेषः ।

भीषणां श्रीमतीं देव्या अग्रादारभ्य पूजयेत् ॥ प्रतिष्ठाञ्च तथा विद्यां तद्वाह्ये तु चतुर्दले ॥ ७८७ ॥ पूर्वस्यां शाङ्करीं नाम शुभ्रवर्णाम्बरावृताम् ॥ द्विभुजां सौम्यवरदां पाशांकुशधरां शिवाम् ॥ ७८८ ॥ दक्षिणे मालिकां नाम लम्बजिह्वां भयंकरीम् ॥ पूजयित्वा जपेन्मन्त्रं नित्यमष्टोत्तरं शतम्॥७८९॥ लोकेशार्चादिकं बाह्ये नियोगोस्याथ कथ्यते ॥ कालं विदित्वा प्रतिमां मारणे चाप्यधोमुखीम् ॥ ७९० ॥ तस्याधोमेखलायुक्तं त्रिकोणं वह्निकोणके ॥ चन्द्रगौरं विधायाग्निं परिस्तीर्य्य शरैस्तृणैः ॥ ७९१ ॥ बिभीतकपरिध्या च कल्पयेद्वाऽस्य मारणे ॥ जुहुयान्निम्बतैलाक्तैः काकोलूकोत्थविट्कैः ॥७९२॥ दारयैनं शोषयैनं मारयेत्थं विधाय च ॥ अष्टोत्तरशतं चैव मनुना जुहुयाद्बुधः ॥७९३॥ होमान्ते विधिवत्कृत्वा मारणाग्नेश्च सन्निधौ ॥ यो मे कण्ठग्रहो वापि दूरस्थोप्यन्तिकेपि च ॥ विषक्रव्यमसृक्तस्येत्थमुक्त्वा च निवेदयेत् ॥७९४॥ संरक्ष्याग्निविधानेन नवरात्रं समापयेत् ॥ मृतस्तिष्ठति तेनाशं तावदस्य रिपोर्मतिः॥७९५॥अर्कक्षीरेण मरिचं पिष्ट्वा सिद्धार्थमेव च॥ जले सँल्लोड्य मन्त्रेण रिपुं ध्यात्वा निरुद्धदृक् ॥७९६॥ कृष्णाम्बरोत्तरीयोग्रपादेनाक्रम्य चेद्रिपुम् ॥ वज्रं शूलमिति ध्यात्वा अद्भिस्तस्योपरि क्षिपेत् ॥ नवरात्रान्तरे शत्रुर्म्रियते नात्र संशयः ॥७९७॥ हरसिद्धे चितावह्नौ तैलसिक्तैर्बिभीतकैः ॥ जुह्वतो म्रियते शत्रुः सत्यमौशनसोदितम् ॥ ७९८ ॥ रिपोः प्रतिकृतिन्ध्यात्वा साध्यर्क्षफलकेनले ॥ अर्कक्षीरेण मरिचं पिष्ट्वा तत्रैव लेपयेत् ॥ ७९९ ॥ फट्कारं हृदये कृत्वा शिवं निर्माय कूपके ॥ क्षिपेत्कृष्णचतुर्दश्यां जप्त्वा मन्त्रं सहस्रशः ॥ ८०० ॥ सद्योवगाहनं कृत्वा तस्यामेव च लक्षकम् ॥ मन्त्रं जप्त्वा विधानेन भेदयेच्छिन्नमुद्रया ॥ षण्मासान्म्रियते शत्रुः सन्ध्ययोरुभयोरपि ॥८०१॥ वायुना मुद्धृतं पत्रं शुष्कं बैभीतकन्ततः॥ गृहीत्वा विलिखेन्मन्त्री कृष्णसर्पास्यशोणितैः ॥ ८०२ ॥ नामधेयं रिपोरन्ते वायुबीजं नियोजयेत् ॥ लिखने तस्य गेहे तु काकवद्भ्रमते ध्रुवम्॥८०३॥ वातोद्धूतैः शुष्कपत्रैः काष्ठैरशनिपातितैः ॥ उष्ट्रास्थ्रा च शवाङ्गारैः शत्रो-

१ सन्निधरार्थः ॥

रुच्चाटनं भवेत् ॥ ८०४ ॥ दूर्वां गुडूचीं सम्मिश्य सर्पिषा तिलतण्डुलैः ॥ अन्नैः समिद्भिः पालाशैः शान्तिं कुर्य्याद्विचक्षणः ॥ ८०५ ॥ लक्ष्मीं बिल्वफलैः पत्रैर्नन्द्यावर्त्तैः श्रियं तथा ॥ रक्तपुष्पैरपामार्गैरिंगालैश्च समुद्रकैः ॥ मधुरत्रयसंसिक्तैरेभिः कुर्य्यात्तु वश्यकम् ॥ ८०६ ॥ शान्तिं कृत्वा विधानेन कृत्यामन्त्रमिमं जपेत् ॥ महाव्याधिप्रशमनं नित्यमष्टाधिकं शतम् ॥ ८०७ ॥ जपेदेकाग्रचित्तस्तु लोकवश्यकरं परम् ॥ मनसा चिन्तयेत्कृत्यां गजारूढां विहंगमाम् ॥ ८०८ ॥ तस्य वश्यम्भवेत्क्षिप्रमश्वारूढां तथा भजेत् ॥ चौरव्याघ्रमृगादीनां सलिलादिभयापहाम् ॥ ॥ ८०९ ॥ सप्ताभिमन्त्रितं तोयं पीत्वा मन्त्रसमाहितः ॥ मेधावी च भवेद्वाग्मी तावज्जप्त्वाभिषेकतः ॥ सप्ताभिमंत्रितं कृत्वा विषमप्यमृतम्भवेत ॥ ८१० ॥ पक्षं मासं द्विमासं वा षण्मासं वत्सरन्तु वा ॥ एवं यः कुरुते मर्त्यः स पुण्यां गतिमाप्नुयात् ॥ ८११ ॥ अथ वक्ष्ये महाशान्तिं सर्वोपद्रवनाशिनीम् ॥ वामाचारस्य सङ्गोप्त्रीं समस्तसुरतुष्टिदाम् ॥ ८१२ ॥ वाममार्गभवं पापं हरेत्पुण्यं विवर्द्धयेत् ॥ अकालमृत्युमथिनी सदा विजयवर्द्धिनी ॥ ८१३ ॥ आयुष्यपालिनी पुष्टिलक्ष्मीसौभाग्यवश्यकृत् ॥ ८१४ ॥ पुत्रदा पौत्रदा चैव लक्ष्मीमलविनाशिनी ॥ महाव्याधिप्रशामिनी ह्यपस्मारविनाशिनी ॥ ८१५ ॥ योगिनीभूतवेतालाः प्रेतकूष्माण्डपन्नगाः ॥ तत्र स्थाने न तिष्ठन्ति डाकिन्याद्या विशेषतः ॥ ८१६ ॥ कृत्यामभ्यर्चयेद्वस्त्रे यथाविधिपुरःसरम् ॥ षोडशारं लिखेत्पद्मं योनियुक्तं सबिन्दुकम् ॥ ८१७ ॥ तन्मध्येऽष्टदलं लेख्यमकारादि न्यसेत्क्रमात् ॥ तन्मध्ये रसकोणं तु लिखेन्मूलमनुं स्मरन् ॥ ८१८ ॥ चन्द्रबिम्बं लिखेत्पद्मं तस्योर्ध्वं प्रेतमालिखेत् ॥ न्यस्येत्तन्मध्यगं कुम्भं वस्त्ररत्नविभूषितम् ॥ ८१९ ॥ कुम्भमध्ये न्यसेत्कृत्यां सर्वलक्षणसंयुताम् ॥ अर्चयेच्च यथान्यायं पायसन्तु निवेदयेत् ॥ ८२० ॥ लोके शान्तां यजेद्देवीं तदग्रे होममाचरेत् ॥ जुहुयादाज्यसंसिक्तापामार्गतिलसर्पिषा ॥ ८२१ ॥ दूर्वाम्रखदिराश्वत्थैः प्रत्येकं तु शताष्टकम् ॥ कुण्डे च

१ एतत्पदचतुष्टयं पूर्वान्वयि ॥

स्थण्डिले वापि होमकर्म्म समाचरेत् ॥८२२॥ तस्य दक्षिणपार्श्वे तु लक्ष्मी-न्ध्यायेद्यथाविधि ॥ कुम्भमध्ये न्यसेद्देवीं दक्षिणे तु श्रियं स्मरेत् ॥ ८२३ ॥ वामपार्श्वे यजेद्देवीं हृल्लेखां परमेश्वरीम् ॥ तस्या वै वामपार्श्वे तु पूजयेद्गणना-यकम् ॥८२४॥ अयुतं मूलमन्त्रन्तु जपेन्मृत्युविनाशनम् ॥ लक्षं तु भ्रूण-हत्यायां मद्यपाने सहस्रकम् ॥ ८२५ ॥ गुरुद्रोहे कोटिमितं तथा चाष्टोत्तरं शतम् ॥ ब्रह्मद्रोहे तु प्रयुतं गुरुतल्पगमे तथा ॥ मदात्ययादधर्मादौ पञ्च-लक्षमितं जपेत् ॥ ८२६ ॥ वामे वा कौलिके मार्गे कापाले गन्तुमिच्छति ॥ सचादौ साधयेन्मन्त्रमिमं परिमलाह्वयम् ॥ ८२७ ॥ पापनाशकरो यस्मा-च्छत्रुभीतिनिवारकः ॥ गुरुदोषाः शिष्यदोषा अधर्म्मांगभवाश्च ये ॥ ते सर्वे नाशमायान्ति मनोरस्य जपे कृते ॥ ८२८ ॥ दक्षिणाचारनिष्ठोपि दुःखना-शाय सेवयेत् ॥ शष्कुल्यः फेणिका मुद्गा मांसन्तु वटकेण्डिराः ॥ ८२९ ॥ सौवीरं कांजिकं मद्यं स्वस्त्री शक्तिः प्रकीर्तिता ॥ वृन्ताकशाको मत्स्यार्थे वा-मादधिकसिद्धिदः॥८३०॥अथातः सम्प्रवक्ष्यामि विघ्नं त्रैलोक्यमोहनम्॥प्रप-ञ्चितं प्रपञ्चेपि शक्तिभिर्बहुधा तथा ॥ ८३१ ॥ दिवोदासस्य तपसा शाक्ते मार्गे न येविशन् ॥ तदा सम्मोहनो नाम केदारस्य तु पश्चिमे ॥ ८३२ ॥ गणेशोभूत्तदा तेन सम्पूर्णं मोहितं पुरम् ॥ तस्य मन्त्रं प्रवक्ष्यामि सोर्ध्वाम्नाये-न सिद्धिदम् ॥ ८३३ ॥ वक्रतुण्डैकदंष्ट्राय क्लीं ह्रीं श्रीं गं वदेत्ततः ॥ गणपतिं वरयुग्मं दान्तं सर्वजनं वदेत् ॥ ८३४ ॥ मे वशमानय स्वाहा त्रय-स्त्रिंशल्लिपिर्मनुः ॥ मुनिस्तु गणपः प्रोक्तो गायत्रं छन्द ईरितम् ॥ ८३५ ॥ त्रैलोक्यमोहनो विघ्नो देवता परिकीर्तितः ॥ रुद्रेषुपंचवेदांगनेत्रवर्णैर्मनोः क्रमात् ॥ ८३६ ॥ षडंगविधिरुद्दिष्टो ध्यानपूजादिकं ब्रुवे ॥ महागणेशवत्सर्वं प्रयोगादिकमाचरेत् ॥ ८३७ ॥

इति श्रीमहामायामहाकालानुमते मेरुतन्त्रे शिवप्रणीते
ऊर्ध्वाम्नायगणपतिमन्त्रप्रकाशः सप्तदशः ॥ १७ ॥

श्रीशिव उवाच ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि पूर्वाम्नायगणेश्वरान् ॥ ह्लेखां विरियुग्मं च गणपते वरद्वयम् ॥ १ ॥ दकारं सर्वलोकं मे वशमानय ठद्व- यम् ॥ पंचविंशाक्षरो मन्त्रः प्रोक्तोयं पुत्रपौत्रदः ॥ २ ॥ मुनिर्गणक आ- ख्यातश्छन्दो गायत्रमुच्यते ॥ देवताविरिविघ्नेशो दृष्टादृष्टफलप्रदः ॥ ३ ॥ वेदवेदेषु पंचार्णैः शरलोचनसंख्यकैः ॥ विभक्तैर्मूलमन्त्रार्णैः षडंगानि समा- चरेत् ॥ ४ ॥ सिन्दूराभं त्रिनयनं वामोर्ध्वपाशधारिणम् ॥ दक्षोर्ध्वे चांकुशं दक्षतले मध्ये कपालकम् ॥ ५ ॥ पुष्ट्या योनिं वामतलहस्तेनैव च बिभ्रतम् ॥ चन्द्रमौलिं हस्तिमुखं दक्षिणेन करेण च ॥ ६ ॥ पुष्ट्या लिंगितसर्वांगं स्पृशन्त्या वामपाणिना ॥ लिंगाग्रन्तु गणेशस्य ऊर्ध्वयोः करयोर्द्वयोः ॥ ७ ॥ सन्दधानं पद्मयुग्ममेवं गणपतिं भजेत् ॥ यजेत्पीठे पुरा प्रोक्ते नवशक्तिसमन्विते ॥ ८ ॥ मूलमंत्रेण क्लृप्तायां मूर्त्ता- वावाह्य पूजयेत् ॥ मिथुनानि यजेदादावामोदादीन्दिगम्बरान् ॥ ९ ॥ अंगानि पूजयेत्पश्चान्मातॄश्चैव ततः सुधीः ॥ अर्चयेल्लोकपालाँश्च तद- स्त्राणि ततो बहिः ॥ १० ॥ षडावरणसंयुक्तं विरिविघ्नेश्वरं यजेत् ॥ अथ मन्त्रान्तरं वक्ष्ये विरिविघ्नेश्वरस्य तु ॥ ११ ॥ वरद्वयं दकारञ्च तदा लोकप- दं वदेत् ॥ एकोनविंशत्यर्णोयं निवृच्छन्द उदाहृतम् ॥ १२ ॥ न्यासः षट्त्रिंशदर्णोक्त एकैकं बीजपूर्वकः ॥ अथ ध्यानं प्रवक्ष्यामि ह्यूर्ध्वादूर्ध्वकरेषु तुं ॥ १३ ॥ बीजपूरं गदां चापं चक्रं मालां च दक्षिणे ॥ वामे पद्मं पाशबाणान्रदं रत्नाढ्यकुम्भकम् ॥ १४ ॥ पद्मद्वयकरां पुष्टिमङ्कस्थामरुणप्र- भाम् ॥ आलिंगयन्तमरुणं स्रवन्मदकपोलकम् ॥ १५ ॥ त्रिनेत्रं पीतवसनं दृढ- मुत्थापितध्वजम् ॥ किरीटिनं कुण्डलिनं ध्यायेद्देवं गजाननम् ॥ १६ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि ब्रह्मणा समुपासितम् ॥ काश्या बाह्ये च सौम्यस्थं विरिञ्चिगण- नायकम् ॥ १७ ॥ ह्रीं विरिञ्चिपदं प्रोच्य ङेन्तं गणपतिं पुनः ॥ प्राग्वद्वदे- द्वरादीनि षड्विंशत्यर्णको मनुः ॥ १८ ॥ वेदपञ्चेषुपञ्चेषुद्वयर्णैरुक्तं षड- ङ्गकम् ॥ ध्यानपूजादिकं प्राग्वद्विशेषादस्य साधकः ॥ १९ ॥ सङ्क्रान्सार्था- न्सकृच्छ्रुत्वा वेदान्पठति याज्ञिकः ॥ स्वयमेव प्रजायेत कर्त्ता हर्त्ता यथाविधि

॥ २० ॥ वेदे लक्षमिता प्रोक्ता सर्वेषां तु पुरस्क्रिया ॥ मधुरत्रयसंयुक्तैः पूर्वोक्तैरष्टभिर्हुनेत् ॥ २१ ॥ एवं साधितमन्त्रस्तु प्रयोगान्कर्त्तुमर्हति ॥ विकचोत्पलहोमेन वशयेत्सकलं जगत् ॥ २२ ॥ तिलतण्डुलहोमेन श्रियमाप्नोत्यनिन्दिताम् ॥ मोदकानाज्यसंयुक्तान्हुत्वा विजयमाप्नुयात् ॥ ॥ २३ ॥ मधुरत्रयहोमेन राजानं वशमानयेत् ॥ अभीष्टसाधनो होमो भक्ष्यभोज्यादिकैः कृतः ॥ २४ ॥ अथ शक्तिगणेशस्य त्र्यक्षरो मन्त्र उच्यते ॥ ह्रीं श्रीं ह्रीमितिच्छन्दोऽस्य विराड्डागेव उच्यते ॥ २५ ॥ मुनिर्देवः शक्तिगणेशोऽस्य मन्त्रस्य कीर्तितः ॥ षड्दीर्घभाजा बीजेन षडंगानि प्रकल्पयेत् ॥ २६ ॥ गजेन्द्रवदनं साक्षाच्चतुर्बाहुं सुचामरम् ॥ हेमवर्णं त्रिनेत्रं च पाशांकुशधरं विभुम् ॥ २७ ॥ स्वदन्तं दक्षिणे हस्ते बीजपूरञ्च वामके ॥ पुष्करे मोदकाश्चैव धारयन्तं त्वनुस्मरेत् ॥ २८ ॥ पूर्वोक्ते पूजयेत्पीठे तीव्रादिनवशक्तिके ॥ अष्टपत्राम्बुजे देवं चतुरस्रत्रयावृते ॥ २९ ॥ प्रथमांगावृतिः प्रोक्ता द्वितीया मातृभिः स्मृता ॥ तृतीया लोकपालैः स्याद्वज्राद्यैश्च चतुर्थिका ॥ ३० ॥ लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं हविष्याशी जितेन्द्रियः ॥ तद्दशांशं प्रजुहुयादपूपैर्घृतसम्प्लुतैः ॥ ३१ ॥ एवं सिद्धमनुर्मंत्री काम्यकर्म्माणि साधयेत् ॥ शुक्लपक्षे चतुर्थ्यां तु पूजयित्वा विनायकम् ॥ ३२ ॥ अपूपैर्गुडसंमिश्रैः पक्वान्नैश्च घृतप्लुतैः ॥ मरिचैर्जीरकैश्चैव सैन्धवेन विमिश्रितैः ॥ ३३ ॥ देवस्य सन्निधौ मंत्री जुहुयात्त्रिसहस्रकम् ॥ गद्यपद्यमयी वाणी सप्ताहाद्भवति ध्रुवम् ॥ ३४ ॥ वश्यार्थी मधुहोमेन राजानं वशमानयेत् ॥ कन्यार्थी जुहुयाल्लाजैस्तन्नामायुतमन्त्रतः ॥ ३५ ॥ एकां कन्यामथो सप्त भोजयेल्लभते वधूम् ॥ चन्द्रसूर्य्यग्रहे प्राप्ते पलन्तु कपिलाघृतम् ॥ ३६ ॥ कर्षमात्रं वचाचूर्णं मिश्रीकृत्याभिमन्त्रयेत् ॥ पिबेत्तु नियतो भूत्वा देवताध्यानतत्परः ॥ ३७ ॥ यावज्जीवं भवेत्तावन्नाश्नीयात्किमपीह सः ॥ सप्ताहाज्जायते शीघ्रमपरो वाक्पतिर्यथा ॥ ३८ ॥ वन्ध्या तु स्नानदिवसे पूजयित्वा विनायकम् ॥ निष्कार्धपादमानेन हरिद्रां सैन्धवं वचाम् ॥ ३९ ॥ गोमूत्रे कुडवे पिष्ट्वा सहस्रमभिमन्त्रयेत् ॥ अन्नैः सुभक्ष्यभोज्यैश्च भोजयित्वा च कन्यकाः ॥ ४० ॥

गुरवे दक्षिणां दत्वा पिबेन्नारी तदौषधम् ॥ ततः सा लभते पुत्रं सर्वलक्षण-संयुतम् ॥ ४१ ॥ अथास्य भेदं वक्ष्यामि ताराद्यश्चतुरर्णकः ॥ ऋषिः शुक्रो निगदितश्छन्दो गायत्रमुच्यते ॥ ४२ ॥ देवता शक्तिगणपः सर्वसिद्धि-करः परः ॥ पूर्ववच्च षडंगानि ध्यानमस्य निरूप्यते ॥ ४३ ॥ हेमाभं हेमवस्त्रं च त्रिनेत्रं तुन्दिलं भुजैः ॥ पाशाक्षसूत्रदशनान्धारयन्तं तथांकुशम् ॥ ४४ ॥ पुष्करेण दधानञ्च मोदकं हेमभूषणम् ॥ मध्याह्नादित्यसंकाशं चारुशक्त्या समन्वितम् ॥ ४५ ॥ ततः पूर्वोदिते पीठे देवमावाह्य पूजयेत् ॥ प्रथमा-वृत्तिरंगैः स्याद्दलषट्के ततः परम् ॥ ४६ ॥ पद्मे चाष्टदले वक्रतुण्डादींश्च दलाग्रतः ॥ मातृकाः पूजयेद्बाह्ये भूपुरे लोकपालकान् ॥ ४७ ॥ आयुधानि च तद्बाह्ये प्राग्वच्छेषं समापयेत् ॥ लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं तद्द-शांशं समाहितः ॥ ४८ ॥ जुहुयाद्घृतसंयुक्तैस्तिलैर्मन्त्रविदुत्तमैः ॥ तर्प्पणादि ततः कुर्य्यादेवं सिद्धो भवेन्मनुः ॥ ४९ ॥ काम्यकर्म्म ततः कुर्य्याद्देशिको यतमानसः ॥ आज्यान्नैर्जुहुयान्नित्यमन्नवान्वत्सराद्भवेत् ॥ ५० ॥ पायसाज्येन महतीं श्रियमाप्नोति मानवः ॥ रम्भातुल्यां लभे-त्कन्यामेनं यो भजते नरः ॥ ५१ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि भेदमस्यार्कव-र्णकम् ॥ ह्रीं गं ह्रीं च महेत्युक्त्वा ङेन्तं गणपतिं पुनः ॥ ५२ ॥ स्वाहान्तोस्य भवेच्छन्दो गायत्रीपूर्विका निवृत् ॥ ऋषिर्गणक आख्यातो देवः शक्तिविना-यकः ॥ ५३ ॥ एकेनैकेन चैकेन सप्तभिर्द्वितयेन च ॥ समस्तेन च मन्त्रा र्णैरङ्गक्लृप्तिरिहोदिता ॥ ५४ ॥ मुक्तावलीचन्द्रधरं व्यालनेत्रं च दक्षिणे ॥ ऊर्ध्वाधरैः पद्मसृणी दधानं वाम ऊर्ध्वके ॥ ५५ ॥ दशकुम्भं तलस्थेन प्रिया-योनिं प्रसन्नयेत् ॥ नागवक्त्रं मणिमयं मुकुटं बिभ्रतं प्रभुम् ॥ ५६ ॥ एवं सञ्चिन्त्य विधिवत्साधकः सर्वसिद्धये ॥ यजेत्पूर्वोदिते पीठे विरिविघ्नेशवर्त्मना ॥ ॥ ५७ ॥ लक्षमेकं जपेन्मन्त्रमयुतं जुहुयात्ततः ॥ अपूपैर्घृतसंयुक्तैर्विधिवत्पू-जितेनले ॥ ५८ ॥ तर्प्पणं मार्जनं कृत्वा ब्राह्मणान्भोजयेत्ततः ॥ एवं सिद्धमनु-र्मन्त्री प्रयोगान्विधिवच्चरेत् ॥ ५९ ॥ इक्षुदण्डैः कृतो होमो राजलक्ष्मीं प्रयच्छति ॥ कदल्या नारिकेलैश्च होमो लोकवशङ्करः ॥ ६० ॥ सतिलैः

पृथुकैर्होमो राजानं वशमानयेत् ॥ सक्तुभिश्च कृतो होमो ब्राह्मणानां वशङ्करः ॥ ६१ ॥ सर्पिषा जुहुयात्सम्यग्धनधान्यादिसम्पदे ॥ पूर्वोक्ताश्चापि कर्तव्याः प्रयोगाः साधकैरिह ॥ ६२ ॥ अथान्यं सम्प्रवक्ष्यामि मन्त्रं शक्तिगणेशितुः ॥ ॐ ह्रींगं ह्रीं च वशमानय स्वाहा भवाणर्कः ॥ ६३ ॥ पूर्वोदितास्तु मुन्याद्या मन्त्रार्णैरङ्गकल्पनम् ॥ एकेन द्वित्रियुग्मेन मन्त्रार्णेन समेन च ॥ बन्धूकाभं त्रिनेत्रं च नागास्यं शशिशेखरम् ॥ भोगिमालं गुणसृणी वरेक्षून्हस्तपंकजैः ॥ ६४ ॥ दधानं शुण्डया स्पृष्टभगं चालिङ्गितं तथा ॥ श्यामलाङ्ग्या लिङ्गपद्महस्तया भावयेद्धृदि ॥ ६५ ॥ पूर्वोक्तपीठे पूर्वोक्ता पूजा कार्य्या मनीषिणा ॥ लक्षत्रयं जपेन्मन्त्रमपूपैस्तद्दशांशतः ॥ घृताप्लुतैश्च जुहुयात्तर्पणादि ततश्चरेत् ॥ ६६ ॥ ततो निजगुरुं ध्यात्वा धनधान्यैश्च तोषयेत् ॥ ततः काम्यप्रयोगास्तु तत्कल्पोक्तान्प्रसाधयेत् ॥ ६७ ॥ स्वादुत्रयाप्लुतापूपैर्होमैः कान्तावशङ्करः ॥ शक्तिं विना गणेशो न शक्तिश्चापि न तं विना ॥ ६८ ॥ तस्माद्बुधैः साधनीयः सर्वथा शक्तिसङ्गमः ॥ तस्मादादौ प्रवक्ष्यामि शक्तिं श्रीभुवनेश्वरीम् ॥ ६९ ॥ ह्रीमित्येकाक्षरं बीजं तस्या मन्त्रः प्रकीर्त्तितः ॥ ऋषिः शक्तिर्वशिष्ठश्च सूतश्छन्दोस्य कथ्यते ॥ ७० ॥ गायत्री देवता बोधसंविद्राज्ञ्या कलापरा ॥ हकारस्तु भवेद्बीजमीकारः शक्तिरुच्यते ॥ ७१ ॥ रेफस्तु कीलकं प्रोक्तं नियोगोखिलसिद्धये ॥ षड्दीर्घयुक्तबीजेन षडंगानि समाचरेत् ॥ ७२ ॥ संहारमातृकां सृष्टिमातृकां विन्यसेत्ततः ॥ देव्येकतापादनाय मन्त्रन्यासोथ वक्ष्यते ॥ ७३ ॥ भाले ह्रीं ह्रल्लेखायै मुखे ह्रं भगनाम च ॥ ह्रं रक्ता हृदये स्थाप्या गुदे ह्रीं च करालिका ॥ ७४ ॥ ह्रुं पादयोर्महोच्छुष्मा पञ्चवक्त्रेषु विन्यसेत् ॥ ऊर्ध्वोदग्याम्यपूर्वाशाप्रत्येकस्थेषु च क्रमात् ॥ ७५ ॥ न्यस्येत्कण्ठे च गायत्रीं सावित्रीं वामगे कुचे ॥ सरस्वतीं दक्षकुचे ब्रह्माणीं वामगेंसके ॥ ७६ ॥ हृदि विष्णुं महेशं च दक्षिणेंसे प्रविन्यसेत् ॥ ब्रह्माणं विन्यसेद्भाले गायत्र्या सहितं सुधीः ॥ ७७ ॥ विष्णुं कपोलदेशे तु सावित्र्या सहितं न्यसेत् ॥ महेशं वामगण्डे च वागीश्वर्य्या युतं न्यसेत् ॥ ७८ ॥ वामे धनपतिं युक्तं श्रिया श्रोत्राग्रके न्यसेत् ॥ ७९ ॥ स्मरं रत्या युतं वक्त्रे गणं

पुष्ट्या युतं न्यसेत् ॥ दक्षश्रोत्राग्रके मन्त्री निधी शक्तियुतौ न्यसेत् ॥ ८० ॥ अधःकपोलान्तरयोर्वक्त्रमूले न्यसेत्ततः ॥ गलमूले कुचयुगे वामांसे हृदि-दक्षिणे ॥ ८१ ॥ अंसे पार्श्वयुगे चैतान्न्यसेन्मन्त्री समाहितः ॥ न्यस्येन्मातृरष्ट भाले चांसे पार्श्वे तथोदरे ॥ ८२ ॥ पार्श्वे चांसे च मन्त्रज्ञस्तथा पादे गले हृदि ॥ व्यापयेन्मूलमन्त्रेण तनुं देवीं ततः स्मरेत् ॥ ८३ ॥ उद्यदादित्यरुचिरां शीतांशुकृतशेखराम् ॥ पद्मासनां त्रिनेत्रां च पाशांकुशवराभयैः ॥ अलं-कृतचतुर्बाहुं मन्दस्मितलसन्मुखीम् ॥ ८४ ॥ कुचभारविनम्राङ्गलतां देवीं हृदि स्मरेत् ॥ आदौ कृत्वा तु षट्कोणं तद्बाह्येऽष्टदलाम्बुजम् ॥ ८५ ॥ तद्बाह्ये षोडशदलं चतुरस्रत्रयं बहिः ॥ चतुर्द्वारसमोपेतं मण्डलं प्रोक्तमुत्तमम् ॥ ॥ ८६ ॥ तत्र पीठं यजेत्पूर्वं नवशक्तिसमन्वितम् ॥ जया च विजया चैवा-जिताख्या चापराजिता ॥ ८७ ॥ नित्या विलासिनी दोग्ध्री ह्यघोरा मङ्गला ततः ॥ एतास्तु शक्तयः पूज्याः केशरेषु च मध्यके ॥ ८८ ॥ दद्यान्मूले-नासनं तु मूर्तिं तेनैव कल्पयेत् ॥ देवीमावाहयेत्तस्यामङ्गावरणसंयुताम् ॥ ८९ ॥ पाशांकुशवराभीतिधरा भूतनिभाश्च ताः ॥ हृल्लेखाद्या समभ्यर्च्य विविधा-भरणोज्ज्वलाः ॥ ९० ॥ मध्याग्नेयाम्योदक्प्रत्यक्स्थानेषु क्रमतस्तथा ॥ अग्नी-शासुरवायव्यकोणेष्वग्रेहृदादिकान् ॥ ९१ ॥ यजेदनन्तथाशासु कोणाग्रे मिथु-नानि च ॥ गायत्रीमरुणाभासामरुणाकल्पभूषिताम् ॥ ९२ ॥ चतुर्मुखीं करैर्दण्डं कुण्डिकामक्षमालिकाम् ॥ अभीतिं बिभ्रतीं तद्वद्ब्रह्माणं पुरतो यजेत् ॥ ९३ ॥ सावित्रीं हस्तकमलैरारिशंखगदाम्बुजम् ॥ बिभ्राणां पीतवसनां केयूराङ्गदभूषि-ताम् ॥ ९४ ॥ किरीटहाररशनानूपुरैरुपशोभिताम् ॥ तादृग्रूपमयं विष्णुं रक्षःकोणाग्रके यजेत् ॥ ९५ ॥ शुभ्रां त्रिनेत्रामभ्यन्तः शुभ्रवस्त्रविरा-जिताम् ॥ टङ्काक्षसूत्राभयदवरयुक्तां चतुर्भुजाम् ॥ ९६ ॥ सरस्वतीं यजे-द्वायोः कोणे चेशं च तादृशम् ॥ लक्ष्मीं प्रियांकसंस्थां च दक्षेणालिङ्ग्य बाहुना ॥ ९७ ॥ पतिं कामेन कमलं धनदं च पृषोदरम् ॥ पीतं रत्नघटं रत्नकरञ्जं बिभ्रतीं यजेत् ॥ ९८ ॥ आग्नेये रमणांकस्थां रतिं सव्येन

१ इदं पूर्वान्वयि ॥

पाणिना ॥ आलिङ्ग्य रमणं पद्ममन्यतो दधतीं स्मरेत् ॥ बन्धूकाभं बाणगुण-सृणिचापकराञ्चकम् ॥ ९९ ॥ ऐशान्यां पूजयेत्सम्यग्विघ्नराजं प्रियान्वितम् ॥ सृणिपाशधरं कान्तावराङ्गस्पृक्करांगुलिम् ॥ १०० ॥ माध्वीपूर्णकपालाढ्यं विघ्नराजं दिगम्बरम् ॥ पुष्करे विगलद्रत्नस्फुरच्चषकधारिणम् ॥ ॥ १०१ ॥ सिन्दूरसदृशाकारामुद्दाममदविह्वलाम् ॥ धृतरक्तोत्पलामन्यपाणिना तद्ध्वजस्पृशम् ॥ आश्लिष्टकान्तामरुणां पुष्टिमर्चेद्दिगम्बराम् ॥ १०२॥ कर्णिकायां निधिं पूज्य षट्कोणस्याथ पार्श्वयोः॥आद्या त्वनङ्गकुसुमा ह्यनङ्ग-कुसुमातुरा॥१०३॥ अनङ्गमदनान्या तु ह्यन्या भुवनपालिनी ॥ षष्ठी गगनवेगा स्याच्छशिशीर्षा च सप्तमी ॥ १०४ ॥ अन्ते गगनरेखेषु पत्रेषु परितः स्थिताः ॥ पाशांकुशवराभीतिकरा रक्ताः सुभूषिताः ॥ १०५ ॥ ततः षोडशपत्रेषु कराली विकरालिका ॥ सरस्वती श्रीर्दुर्गोमा लक्ष्मीश्रुत्यौ स्मृति-र्धृतिः ॥ १०६ ॥ श्रद्धा मेधा मतिः कान्तिराख्याः षोडशशक्तयः ॥ खड्ग-खेटकधारिण्यः श्यामाः पूज्याः प्रदक्षिणैः ॥ १०७ ॥ ब्राह्म्याद्यास्तद्बहिःपूज्य-पत्रसन्धिषु दिक्क्रमात् ॥ पश्चाद्बहिः समभ्यर्च्याः शक्तयः परिचारिकाः ॥ १०८ ॥ अनङ्गरूपानङ्गादिमदना मदनातुरा ॥ तथा भुवनवेगा स्या-दग्रे भुवनपालिका ॥ १०९ ॥ षष्ठी च सर्वशिशिरा तदग्रे नंगवेदना ॥ अनङ्गमेखला चेति तद्बाह्ये तु दिगीश्वरान् ॥ ११० ॥ रक्तां रक्तोज्ज्वला-कल्पां रक्तान्तायतलोचनाम् ॥ रक्तोत्पलकरां वामे दक्षिणे क्रमतस्त्विदम् ॥ १११ ॥ चषकं तालवृन्तं च ताम्बूलं छत्रचामरे ॥ दर्प्पणं चांशुकं पुष्पं बिभ्राणां दक्षिणैः करैः ॥ ११२ ॥ वज्रादीन्यपि तद्बाह्ये पूजयेच्चोत्तमोत्तमे॥ कार्प्ये दिव्यावृते चित्ते चतुर्भिरपि चोत्तमा ॥ ११३ ॥ हृल्लेखाद्यैस्तदङ्गैश्च लोकपालैस्तदायुधैः ॥ मध्यास्त्वावरणैः पूजाङ्गलोकेशतदस्त्रकैः ॥ ११४ ॥ द्वाभ्यां कनिष्ठाङ्गलोकपालाभ्यां सा प्रवासके ॥ अनन्यगतिका पूजा ह्यंगेनैकेन कीर्त्तिता ॥ ११५ ॥ पूजालोपं न कुर्वीत भुवनेश्याः कदाचन ॥ सन्ध्या-लोपे यथा पापं पूजालोपे तथा भवेत् ॥ ११६ ॥ सप्ताहपूजालोपे तु शापः पतति दारुणः ॥ शुक्रे तु दक्षिणी वामी रवौ पूजां न लोपयेत् ॥ ११७ ॥

सप्तशुक्रं मानवो यो निष्पूजो भवतीह सः ॥ द्वात्रिंशल्लक्षमानेन जपेन्मन्त्रं समाहितः ॥ ११८ ॥ तद्दशांशं हुनेदष्टद्रव्यैस्त्रिस्वादुसंयुतैः ॥ तर्प्पणादि ततः कुर्य्यान्मन्त्री शास्त्रोक्तवर्त्मना ॥ ११९ ॥ अथान्यदपि मन्त्रस्य पुरश्चरणमुच्यते ॥ एकलिङ्गे शिवागारे दक्षिणामूर्तिमाश्रितः ॥ १२० ॥ बद्धपद्मासनो भस्मशायी च कुशविष्टरः ॥ कृष्णाष्टमीं समारभ्य यावत्कृष्णा चतुर्दशी ॥ १२१ ॥ नित्यमिष्ट्वा शिवं शक्तिं जपेन्मन्त्रं सहस्रकम् ॥ दधिक्षौद्रघृताभ्यक्ता व्याघातसमिधो हुनेत् ॥ १२२ ॥ ततः साग्रसहस्रेण ध्यायेत्सर्वेश्वरीमुखीम् ॥ ततः सिद्धो भवेन्मन्त्रो नात्र कार्य्या विचारणा ॥ १२३ ॥ अश्वत्थोदुम्बरप्लक्षन्यग्रोधसमिधस्तथा ॥ तिलसर्षपदुग्धाज्यद्रव्याण्यष्टमितानि च ॥ १२४ ॥ प्रतिद्रव्यन्तु होमेस्य ह्ययुतानां चतुष्टयम् ॥ एवं सिद्धमनुर्मन्त्री सर्वान्कामान्प्रसाधयेत् ॥ १२५ ॥ नित्यं सौभाग्यदं पञ्चविंशज्जप्त्वाभिषेचनम् ॥ मेधावी च भवेद्वाग्मी तावज्जप्ताम्बुपानतः॥ १२६ ॥ जिह्वाग्रे न्यस्य सञ्जप्तं वाक्सिद्धिः कविता भवेत् ॥ तज्जप्तमञ्जनं वश्यं कर्पूरागुरुमिश्रितम् ॥ १२७ ॥ सासृग्भस्मारुणालेपैर्वश्याय तिलकक्रिया ॥ जानुमात्रजले स्थित्वा निश्चलो मीलितेक्षणः ॥ जपेत्सहस्रं तद्वाग्यामिष्टामाकर्षयेत्स्त्रियम् ॥ १२८ ॥ लाजैः कन्यामवाप्नोति तिलैरारोग्यमश्नुते ॥ पुष्टिमान्दधिहोमेन तण्डुलैश्च तथा भवेत्[1] ॥ १२९ ॥ ब्राह्मीरसयुताँल्लाजान्वचया च समन्वितान् ॥ त्रिसहस्रेणाभिसंमन्त्र्य मासमेकं प्रभक्षयेत् ॥ बृहस्पतिसमो मन्त्री सर्वविद्याधिपो भवेत् ॥ १३० ॥ अश्वत्थसमिधः स्वादुयुक्ता हुत्वा द्विजानसौ ॥ वशयेत्पद्महोमेन राज्ञस्तन्मन्त्रिणस्तथा ॥ १३१ ॥ कुमुदैराजपत्न्याश्च ब्रह्मक्षेत्रजसूनकैः ॥ तण्डुलानां पिष्टकृतां प्रतिमां स्वादुसंयुताम् ॥ ॥ १३२ ॥ कृतप्राणप्रतिष्ठां तां सञ्जप्तां मनुनामुना ॥ भक्षयेत्तामर्कवारे ततः कुर्य्याद्वशं नरम् ॥ राजानं प्रमदां वापि यंयं वाञ्छत्यनुत्तमम् ॥ १३३ ॥ फलके भस्मना शक्तिं ससाध्यां सुलिखेत्सुधीः ॥ गार्भिण्यै दर्शयेदाशु सा सुखप्रसवा भवेत् ॥ १३४ ॥ अभिषेकविधानं तु वक्ष्यते वाञ्छितार्थदम् ॥

१ वश्यकरमित्यर्थः ॥

मण्डपे मण्डलं कुर्य्याद्देवीपीठान्वितं शुभम् ॥ १३५ ॥ यथावत्पीठमभ्यर्च्य कलशान्विन्यसेत्सुधीः ॥ कर्णिकायां दलाग्रे तु स्वर्णरौप्यसुताम्रजान् ॥ ॥ १३६ ॥ मार्त्तिकांस्तत्र विन्यस्य पञ्चैकं वापि तन्त्रवित् ॥ महता वाद्यघोषेण मनुना स्थापयेत्सुधीः ॥ पूर्वोक्तैरुपचारैस्तु निजेष्टायै च मन्त्रवित् ॥ ॥ १३७ ॥ घटेष्वेषु च सम्पूज्या मातरो दिक्क्रमाद्बुधैः ॥ यदि स्युः पञ्चकलशा मध्यादिषु यजेत्क्रमात् ॥ १३८ ॥ हृल्लेखाद्याः पञ्च सुधीरभिषिञ्चेत्तदुत्तरम् ॥ प्रथमं घृतकुम्भेन कषायेण ततः परम् ॥ १३९ ॥ तैलेन च कषायेण मधुना च ततः परम् ॥ द्विजवृक्षत्वचः क्वाथैरभिषिञ्चेत्ततः सुधीः ॥ १४० ॥ द्वारकुम्भदलैः पश्चादन्तराले समाचरेत् ॥ वक्त्रहस्तपदक्षालाचमनान्यपि मन्त्रवित् ॥ १४१ ॥ एकैककलशस्नानानन्तरं पुनरेव हि ॥ कारयेत्तेन नीरेण त्वेवं शक्तो नरो भवेत् ॥ १४२ ॥ ब्राह्मणान्भोजयेन्नानाविधैर्भक्ष्यैश्च तोषयेत् ॥ प्राप्नोति महतीं लक्ष्मीं सर्वदा विजयी भवेत्॥ १४३॥ पलाशाश्वत्थबिल्वानां फलं ग्राह्यं पलार्धकम् ॥ अग्निमन्थलक्षसेव्यनाम्नोः कर्म्म विदुत्तमः ॥ १४४ ॥ प्रसारिणीकाश्मरिकारोहिणीनां तदर्धकम् ॥ उदुम्बरीपाटलीन्दुकुभागाः परिकीर्तिताः ॥ १४५ ॥ बृहत्क्वाथोदकेनैव पूरयेत्कलशं ततः ॥ आप्नोति प्रतिवर्षं च सेकाद्दीर्घायुरुत्तमम् ॥ १४६ ॥ सुन्दरोनामयश्चैव सहितस्तेजसा रविः ॥ कमला किङ्करी तस्य तं दृष्ट्वा विविधाभयाः ॥ नश्यन्ति वर्धते तस्य धनं धान्यसमाकुलम् ॥ १४७ ॥ सर्वे देवा नमस्यन्ति तं दृष्ट्वा फणिनोपि वै॥ न दशन्ति च तत्पुत्राः शयानाः पथिसाधकम् ॥ १४८ ॥ अथ चात्र प्रवक्ष्यामि त्र्यक्षरं मन्त्रमुत्तमम् ॥ ऐंह्रींश्रीमिति पूर्वोक्ता मुन्याद्याश्चात्र कीर्त्तिताः ॥ आद्याद्येन च मध्येन दीर्घषट्कान्वितेन च॥अंगुल्यादिषडङ्गानि शेषन्यासाश्च पूर्ववत् ॥ १४९ ॥ बन्धूकाभां त्रिनयनां चन्द्रार्धकृतशेखराम् ॥ रत्नपात्रं वामहस्ते दक्षे पद्मं ततो मनुम् ॥ १५० ॥ जपेद्द्वादशलक्षं च जुहुयात्तद्दशांशतः ॥ त्रिस्वादुयुक्तहविषा तर्प्पणादि ततश्चरेत् ॥ १५१ ॥ ततः प्रयोगान्कुर्वीत मन्त्री स्वेष्टफलाप्तये ॥ ब्रह्मवृक्षप्रसूनैश्च होमो लक्ष्मीप्रदो मतः ॥ १५२ ॥ सञ्-

पाद्वत्सरं ब्राह्मीसर्पिःपानात्कवित्वभाक् ॥ गौरसर्षपयुग्लोणहोमस्तु वशयेत्त्रि-यम् ॥ नरं नरपतिं वान्यं वशयेन्नात्र संशयः ॥ १५३ ॥ आरग्वधोत्थैः कुसुमैः संसिक्तैश्चन्दनाम्भसा ॥ दुकूलयुक्तै रत्नौघै राज्यलक्ष्मीं च विन्दति ॥ १५४ ॥ तिलतण्डुलसम्मिश्रैर्होमात्पूर्वोदितं फलम् ॥ पूर्वोदितान्प्रयोगांश्च कुर्य्यादत्रापि साधकः ॥ एवमाराधितो मन्त्रो भुक्तिमुक्तिप्रदायकः ॥ ॥ १५५ ॥ अथान्यं त्र्यक्षरं वक्ष्ये द्रुतं वाग्विभवप्रदम् ॥ ऐंह्रींऐमिति मुन्याद्या ज्ञेयाः पूर्वोदितास्तथा ॥ १५६ ॥ आद्यन्तपुटितेनैव दीर्घयुग्मध्यमेन च ॥ जातिभाञ्जि षडङ्गानि विदध्यान्मन्त्रवित्तमः ॥ १५७ ॥ एकाक्षरोदितं न्यासं कुर्य्यान्मन्त्रविदुत्तमः ॥ उद्यद्द्युतिं त्रिनयनां पीनवक्षोजनामिताम् ॥ ॥ १५८ ॥ पद्मं च रत्नपात्रं च ह्यभयं च वरं तथा ॥ हस्तैर्दधानां रक्ताब्जसंस्थां च शशिशेखराम् ॥ मुक्ताहारसमायुक्तां भावयेद्भुवनेश्वरीम्॥ १५९॥ एकाक्षरोदिते पीठे पूजयेद्भुवनेश्वरीम् ॥ पूर्वोक्ताः पूर्ववत्पूज्या हृल्लेखाद्याश्च मन्त्रिणा ॥ १६० ॥ सम्पूजयेत्कोणषट्के पूर्ववन्मिथुनानि च ॥ किञ्जल्केषु षडङ्गानि पूजयेच्च दलेषु ताः ॥ ब्राह्मयाद्या निजनाथाङ्कस्थिताः स्मेराननालसाः ॥ १६१ ॥ असिताङ्गो रुरुश्चण्डःक्रोधोन्मत्तौ कपाल्यथ ॥ विभीषणश्च संहारः प्रोक्तास्तत्पतयास्त्विमे ॥ १६२ ॥ शूलं कपालं प्रेतं च क्षुद्रदुन्दुभिमेव च ॥ १६३ ॥ बिभ्राणाः पाणिभिर्हस्तैस्त्वग्वस्त्रा भीमविग्रहाः ॥ स्मर्तव्या वक्रकेशाश्च पूजाकाले सुमन्त्रिणा ॥ १६४ ॥ दीर्घाद्या मातरः पूज्या ह्रस्वाद्या भैरवास्तथा ॥ तद्बाह्ये स्वरपत्रेषु करालाद्याः पुरोदिताः ॥ ॥ १६५ ॥ पूज्यास्त्वनङ्गरूपाद्या लोकेशा हेतिभिः सह ॥ मनुं जपेत्त्रिलक्षं ब्रह्मवृक्षप्रसूनकैः ॥ १६६ ॥ त्रिमध्वक्तै राजवृक्षपुष्पैर्वा तद्दशांशतः ॥ जुहुयात्तर्प्पणादीनि कुर्य्यान्मन्त्रस्य सिद्धये ॥ १६७ ॥ एवं सूक्तविधानेन यो भजेद्भुवनेश्वरीम् ॥ मदविह्वलयोषाः स राज्ञश्च वशयेत्सुधीः ॥ एकाक्षरोदितान्सर्वान्प्रयोगानाचरेत्तथा ॥ १६८ ॥ अथान्यं सम्प्रवक्ष्यामि त्र्यर्णयन्त्रादिसिद्धिदम् ॥ ओंह्रींक्रोमिति वह्न्यर्णो मुन्याद्येकाक्षरोदितम् ॥ ॥ १६९ ॥ कल्पयेन्माययाङ्गानि ध्यानमत्र निरूप्यते ॥ अंकुशं च गुणा-

भीतिवरांश्च दधतीं करैः ॥ कमलस्थां प्रोद्यदर्ककान्तिं हृदि विभावयेत् ॥ ॥ १७० ॥ पूर्वोदिते यजेत्पीठे हृल्लेखाद्या यथा पुरा ॥ किञ्जल्केषु षडङ्गानि ब्राह्मयाद्या दलमध्यतः ॥ १७१ ॥ ततः शक्रादयो बाह्ये हेतयोऽर्च्यास्तु तद्बहिः ॥ एवं यः पूजयेद्भक्त्या स भवेत्तु कुबेरवत् ॥ १७२ ॥ अनुरक्ताः सर्वलोका भवेयुस्तस्य मन्त्रिणः ॥ मन्त्रं जपेल्लक्षमेकं जुहुयात्तत्सहस्रकम् ॥ १७३ ॥ त्रिस्वादुयुग्दुग्धवृक्षसमिद्भिः भक्तसङ्ग्रहया ॥ शुक्लैस्तिलैः पयोयुक्तैस्तर्पणादि ततश्चरेत् ॥ १७४ ॥ अश्वत्थोदुम्बरप्लक्षवटाश्चत्वार एव च ॥ होमे वृक्षाः समाख्याताः प्रत्येकं षट्सहस्रकम् ॥ १७५ ॥ होमोयं स्यादागमेन चतुर्विंशतिसङ्ख्यकः ॥ सहसा सूर्य्यसद्दशस्तेनाधिष्ठितमन्दिरम् ॥ १७६ ॥ रजन्यां निष्प्रदीपं च प्रदीपशतसंकुलम् ॥ विलोक्यते सर्वजनैरेतन्मन्त्रप्रसादतः ॥ १७७ ॥ लवणैर्मिश्रसिद्धार्थैं रजन्या च घृतप्लुतैः ॥ जुहुयाच्चैव राजानं राजपत्नीं वशं नयेत् ॥ १७८ ॥ अन्नहोमेन मन्त्रज्ञः समृद्धान्नगृहो भवेत् ॥ विकचोत्पलहोमेन लक्ष्मीरेनं न सन्त्यजेत् ॥ १७९ ॥ चतुरंगुलपुष्पैश्च होमः स्यात्कवितापदः ॥ तिलहोमेन पापानां नाशो मन्त्रिण एव हि ॥ १८० ॥ आयुष्कामो घृतेनैव जुहुयान्मन्त्रवित्तमः ॥ पूर्वोदितान्प्रयोगांश्च कुर्य्यादत्रापि मन्त्रतः ॥ अस्मिन्सिद्धे मनौ मन्त्री भुक्तिं मुक्तिमवाप्नुयात् ॥ १८१ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि वक्रतुण्डाय हुंमिति ॥ सर्वसिद्धिकरो मन्त्रः प्रोक्तश्चायं षडक्षरः ॥ १८२ ॥ अस्यं तु कवचं श्रीभिर्जप्तव्यं सर्वसिद्धिदम् ॥ भार्गवो मुनिराख्यातोऽनुष्टुप्छन्द उदाहृतम् ॥ देवता वक्रतुण्डोऽस्य सुरासुरनमस्कृतः ॥ १८३ ॥ विधाय मूलमन्त्रेण करशुद्धिं जितेन्द्रियः ॥ षड्भिर्मन्त्रगतैर्वर्णैः षडङ्गानि प्रकल्पयेत् ॥ १८४ ॥ भ्रूमध्ये कण्ठहृदये नाभ्यामाधारके तथा ॥ षडक्षराण्यथो न्यस्य सर्वेण व्यापकं तथा ॥ १८५ ॥ उद्यद्दिनेश्वररुचिं पाशांकुशवराभयम् ॥ हस्तैर्दधानं स्मेरास्यमरुणं चिन्तयेद्धृदि ॥ ॥ १८६ ॥ पूर्वोक्ते पूजयेत्पीठे वक्रतुण्डं गणेश्वरम् ॥ अष्टपत्राम्बुजद्वन्द्वं चतुर्द्वारयुतेन च ॥ चतुरस्रत्रयेणाथ वेष्टितं च क्रमाल्लिखेत् ॥ १८७ ॥ मध्ये

१ युग्मकम् ॥

देवं समभ्यर्च्य पूजितैरुपचारकैः ॥ आदावङ्गानि सम्पूज्य यथास्थानं विशालधीः ॥ पूर्वदिग्दलमूलेषु शक्तीरष्टौ क्रमाद्यजेत् ॥ १८८ ॥ विद्याख्या विश्वधात्री च भोगदा विघ्ननाशिनी॥ निधिप्रदा च पापघ्नी तथा पुण्या शशिप्रभा ॥ १८९ ॥ दलेषु च यजेत्तत्र ह्यणिमाद्याः पुरोदिताः ॥ द्वितीयेष्टदले तद्वद्वक्रतुण्डादिकान्यजेत् ॥ १९० ॥ चतुरस्रे लोकपालांस्तदस्त्राणि च पूजयेत् ॥ प्राग्वद्वीथीद्वये सम्यग्वक्रतुण्डार्च्चनं त्विति ॥ १९१ ॥ वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं जुहुयात्तद्दशांशतः॥अष्टद्रव्यैः पुरा प्रोक्तैर्मधुराक्तैर्यथाविधि॥ १९२॥ एवं सिद्धे मनौ मन्त्री काम्यकर्म्माणि साधयेत् ॥ तर्प्पयेत्पूर्वमार्गेण वक्रतुण्डं गणेश्वरम् ॥ १९३ ॥ चतुरस्रं हस्तमात्रं कुण्डं कुर्य्यात्तदग्रतः ॥ आदधीत मथित्वाग्निमनूचानगृहाद्धरेत् ॥ १९४ ॥ प्राणायामत्रयं कृत्वा मन्त्री कर्म्म समाचरेत् ॥ ततः पूर्वोक्तवत्कृत्वा मन्त्रन्यासं षडङ्गकम् ॥ १९५ ॥ गन्धपुष्पादिकैराग्निं सम्पूज्य स्थापयेत्ततः ॥ कृशानुमध्ये तत्राथ नागयज्ञोपवीतिनम् ॥ ॥ १९६ ॥ लम्बोदरं भास्करं तं चैकदन्तं त्रिलोचनम् ॥ पद्मासनसमारूढं चतुर्बाहुं त्रिलोचनम् ॥ १९७ ॥ किरीटहारकेयूराङ्गदालंकारभूषितम् ॥ एवं सञ्चिन्त्य मनसा समावाह्य गणेश्वरम् ॥१९८॥ गन्धादिभिः समभ्यर्च्य जलेनाग्निं प्रसिच्य च ॥ षडर्णेन द्विठान्तेन जुहुयाच्च घृताहुतीः ॥ अष्टाधिकसहस्रं च ततः सिद्धो भवेन्मनुः ॥ १९९ ॥ सहस्राष्टचतुर्थीषु पक्षयोरुभयोरपि ॥ शतं त्वपूपैर्जुहुयाद्वत्सराल्लभते धनम् ॥ २०० ॥ मध्याह्नकाले नित्यं हि तदग्रे प्रजपेन्मनुम् ॥ सहस्रं त्रिशतं वाथ शतं वाष्टोत्तरं सुधीः ॥ अचिरणैव महतीं लक्ष्मीं प्राप्नोत्ययत्नतः ॥ २०१ ॥ प्रसन्नतात्र मनसः स्तुतिरन्येप्सिता तथा ॥ स्वापे वैमुख्यता चापि स्वप्ने द्विरददर्शनम् ॥ एतानि मन्त्रसिद्धेर्हि चिह्नान्युक्तानि मन्त्रिभिः ॥ २०२ ॥ पूर्वोक्तसिद्धौदनेन त्रिमासं त्रिशतंहुनेत् ॥ महानिधीनां भवनं भवेद्वैश्रवणोपमः॥ २०३॥गुडाक्तैः पृथुकैर्नारिकेलैर्मरिचसंयुतैः ॥ अपूपैः क्षीरसंयुक्तैर्गणेशस्य च सन्निधौ ॥ अग्नौ सहस्रं जुहुयात्स मन्त्री धनवान्भवेत् ॥ २०४ ॥ शुभशालिमयैः शूर्णैर्मरिचाद्यैः ससैन्धवैः ॥ सजीरकैर्बहुगुडैः शुभैरतिघृताप्लुतैः ॥ २०५ ॥ अपूपैर्जुहुयान्मन्त्री गणेशस्य च सन्निधौ ॥ सहस्रमात्रं लभते महतीमचिराच्छ्रियम् ॥ २०६ ॥

साध्यनामार्णपुटितमनुना जुहुयात्सुधीः ॥ अपामार्गसमिद्भिर्वा पक्वैः पनसजैः फलैः ॥ २०७ ॥ सहस्रं कदलैर्वाथ नरं नारीं वशं नयेत् ॥ लाजकैर्जुहुयादग्नौ सहस्रं कन्यकाप्तये ॥ २०८ ॥ सहस्रमाज्याहुतीनां हुनेत्क्षीराहुतीरपि ॥ सहस्रं रोगशान्त्यर्थं मन्त्रशास्त्रविशारदः ॥ सर्वाहुतीनां जुहुयाल्लक्षं मृत्युञ्जयो भवेत् ॥ २०९ ॥ ब्रह्मवृक्षोत्थसमिधो मधुरत्रयलोलिताः ॥ सहस्रं जुहुयान्मन्त्री मासाच्छत्रूञ्जयेद्ध्रुवम् ॥ २१० ॥ बिभीतकस्य समिधां सहस्रं साष्टकं निशि ॥ लोहितार्क्के श्मशानाग्नौ जुहुयान्मारयेद्रिपुम् ॥२११॥ भूमौ शत्रुस्वरूपं च लिखित्वास्योदरेनलम् ॥ प्रज्वाल्य सिद्धार्थवरैः सहस्रं जुहुयात्सुधीः ॥ तं मारयेत्सप्तदिनैर्नात्र कार्य्या विचारणा ॥ २१२ ॥ शोणमेघसमानाभं गणेशं निजशुण्डया ॥ रिपुं गृहीत्वा वडवामुखे वह्नौ महोत्कटे ॥ २१३ ॥ प्रक्षिपन्तं गणपतिं ध्यात्वामुं प्रजपेन्मनुम् ॥ सहस्रं त्रिदिनेनासौ शत्रुमुच्चाटयेद्ध्रुवम् ॥२१४॥ समुद्रगां नदीं प्राप्य गृहीत्वाञ्जलिना जलम् ॥ सहस्रकृत्वोभिमन्त्र्य परिषिञ्चेत्स्वमूर्धनि ॥ अनेन विधिना मन्त्री पापौघं नाशयेद्ध्रुवम् ॥ २१५ ॥ शनैश्चरदिनेश्वत्थमालम्ब्य त्रिसहस्रकम् ॥ जपन्मनुं गणं ध्यायेद्दोषान्ग्रहभवान्हरेत् ॥ २१६ ॥ वेतसोत्थसमिद्धोमात्सहस्रं वृष्टिमाप्नुयात् ॥ धनार्थी जुहुयाद्धान्यैरन्नाद्यैर्वन्नैर्हुनेद्ध्रुवम् ॥ २१७ ॥ कमलैरुत्पलैर्वापि होमो वस्त्रप्रदो मतः ॥ क्षेत्राभिकांक्षी पललैर्गुडाभ्यक्तैर्हुनेत्सुधीः ॥ ॥ २१८ ॥ तमर्चयित्वा गणपं हरिद्रां सैन्धवं वचाम् ॥ निष्कार्धार्धप्रमाणेन सम्पिष्यैतानि नित्यशः ॥ २१९ ॥ प्रसूत्युन्मितगोमूत्रे सहस्रेणाभिमन्त्रयेत् ॥ स्नातामृतुस्नानदिने विशुद्धां रक्तवाससम् ॥ पाययेत्तां च सा बन्ध्या प्रसूते वत्सरात्सुतम् ॥ २२० ॥ उपोष्य सोमग्रहणे भास्करग्रहणेथ वा ॥ कपिलाज्यं पलं चूर्णं वचायाश्च पलार्धकम् ॥ २२१ ॥ एतत्सहस्रजपितं सहस्रं प्रपिबेत्सुधीः ॥ अवाप्य मेधां महतीं कवितां लभते ध्रुवम् ॥२२२॥ गोचर्ममात्रं भूतेशं चोपलिप्यांशुकावृतम् ॥ कृत्वात्र स्थापयेत्कुम्भं पूजितं चन्दनादिभिः॥२२३॥ कुमारं वा कुमारीं वा दीपस्याग्रे निधाय च॥जपेत्तन्मन्त्रप्रवरमष्टोत्तरसहस्रकम् ॥२२४॥ तेन स्पृष्टा कुमारी वा कुमारो वा ब्रवीति तत् ॥

मनोगतं हि सकलं भविष्यद्भूतमेव च ॥ वर्तमानं मनोरस्य प्रसादान्नात्र संशयः ॥ २२५ ॥ मन्त्रान्तरमथो वक्ष्ये वक्रतुण्डगणेशितुः ॥ मेघोल्काय तथा स्वाहा मन्त्रः प्रोक्तः षडक्षरः ॥ भार्गवो मुनिरस्याणोरनुष्टुप्छन्द ईरितम् ॥ ॥ २२६ ॥ वक्रतुण्डगणेशोस्य देवता देववन्दितः ॥ मन्त्रवर्णैः षडङ्गानि षड्भिः कुर्य्याद्यथा पुरा ॥ ध्यानपूजादिकं सर्वं मन्त्री पूर्ववदाचरेत् ॥२२७॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि मन्त्रं द्वात्रिंशदर्णकम् ॥ रायस्पोषस्य दयिता निधिदो-रत्नदो मतः ॥ २२८ ॥ रक्षोहनोबलगहनोथाद्यश्च षडक्षरः ॥ ऋष्या-दिकं पुरा प्रोक्तं ध्यानपूजादि पूर्ववत् ॥ जपेदर्कसहस्राणि जुहुयात्तद्दशांशतः ॥ २२९ ॥ हविषा घृतासिक्तेन तदन्ते तोषयेद्गुरुम् ॥ एवं सिद्धे मनौ मन्त्री साधयेदिष्टमात्मनः ॥ २३० ॥ षडर्णप्रोक्तमन्त्रेण सर्वं काम्यं समाच-रेत् ॥ अथास्य भेदं वक्ष्यामि मन्त्रमन्यं तथाविधम् ॥ २३१ ॥ रायस्पो-षस्य दयिता निधिदो रत्नदो नृमान् ॥ रक्षोहणोबलगहनोवक्रतुण्डाय हूमिति ॥ २३२ ॥ सायकैस्त्रिभिरष्टाभिश्चतुर्भिः पञ्चभी रसैः ॥ मन्त्रार्णैः स्युः षडङ्गानि मुन्याद्याः पूर्ववन्मताः ॥ २३३ ॥ प्राग्वत्प्रयोगो निधिदो विशेषेण मनुस्त्वयम् ॥ अथ वक्ष्ये वक्रतुण्डगायत्रीं गणपप्रियाम् ॥२३४॥ तत्पुरुषाय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि ॥ तन्नो दन्ती प्रचोदयात् ॥ २३५ ॥ आद्य-न्तयोर्जपेदेनां सर्वमन्त्रप्रसिद्धये ॥ अष्टोत्तरशतं नित्यं पुरश्चरणकृन्नरः ॥ ॥ २३६ ॥ अष्टाविंशतिसंख्याकान्गणेशानदिने जपेत् ॥ जपाद्यन्तेथाष्ट-संख्याननन्यजापी सुसिद्धये ॥ २३७ ॥

इति श्रीमहामायामहाकालानुमते मेरुतन्त्रे शिवप्रणीते
पूर्वाम्नायगणपतिमन्त्रप्रकाशोष्टादशः ॥ १८ ॥

श्रीशिव उवाच ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि पश्चिमाम्नायसिद्धिदान् ॥ नाना-श्चर्य्यकरान्काशीसंस्थितान्गणनायकान् ॥ १ ॥ महागणपतेरंशाश्चतुःषष्टि-विनायकाः ॥ एकैकांते गृहीत्वा तु योगिनीं चेटिकामपि ॥ २ ॥ स्वर्गभूमिं समासाद्य यावदन्तं गृहं मम ॥ अष्टावरणकैरष्टौ संस्थिताः सिद्धिदायकाः ॥ ॥ ३ ॥ तत्राष्टौ काशिकाबाह्ये स्वर्गभूमौ समास्थिताः ॥ योजनैकं बहिष्काश्या-

कीर्तितः परिधिस्तु सः ॥ ४ ॥ गं विघ्नाय नमः प्रोक्तो मन्त्र एष षडक्षरः ॥ क्षिप्रप्रसादनसमप्रष्टानां साधनं स्मृतम् ॥ ५ ॥ वेदायुतं जपेन्मन्त्रं होमश्च घृतपायसैः ॥ प्रयोगाः पूर्ववच्चात्र क्षिप्रमेव च सिद्धयः ॥ ६ ॥ गजानना योगिनी तु योगिनीरूपधारिणी ॥ नान्धवर्णस्ससबिन्दुस्तन्नाममन्त्र इतीरितः ॥ ७ ॥ प्रिया चैतस्य गदिता तत्सिद्धिं कथयाम्यथ ॥ ॐ शिवे शिवपत्नीति शं शिवे स्वकरेति च ॥८॥ पङ्कजं फलं देहीति मनोजवमिदं वदेत् ॥ चरणयोर्देहिदेहि तुभ्यं नम इतीरितः ॥ षट्त्रिंशदक्षरो मन्त्रो-ध्यानमस्या निरूप्यते ॥ ९ ॥ उद्यद्भानुसहस्राभां कमलासनपूजिताम् ॥ हस्ते मोहमयं पाशं दधानां प्रभजे शिवाम् ॥ १० ॥ जपेत्त्रिंशत्सहस्राणि शतपत्रीवनान्तरे ॥ कौसुम्भकुसुमैर्होमं तर्पणादि ततश्चरेत् ॥ एवं सिद्धमनुर्मन्त्री चेटिकां च प्रसाधयेत् ॥ ११ ॥ श्रावणे मासि चाष्टम्यां कृष्णपक्षे निशान्तरे ॥ पूजयित्वा जपेन्मन्त्रन्तदा नादाञ्छृणोति च ॥ १२ ॥ भीषयन्ति च भूतानि तदा चेद्दृढमानसः ॥ तदानेकसुरैर्युक्ता प्रत्यक्षास्य शिवा भवेत् ॥ १३ ॥ तुष्टा फलन्ददात्येकन्तेनासौ साधकोत्तमः ॥ दूरं याति क्षणेनैव मनसोप्यतिवेगवान् ॥ १४ ॥ अदृश्यः सर्वलोकानामपि राजगृहान्तरे ॥ एवं विघ्नगणेशेन मोहिता बहवो जनाः ॥ १५ ॥ विनायकाय हृदयं गं बीजाद्योष्टवर्णकः ॥ वर्णलक्षम्पुरश्चर्य्या गणेशानां प्रकीर्त्तिता ॥ १६ ॥ सर्वासां योगिनीनान्तु स्वबीजाद्या हृदन्तकाः ॥ नाममन्त्रास्स्मृता मन्त्रवर्णलक्षम्पुरस्क्रिया ॥ १७ ॥ गणेशस्य प्रभावेन सिद्धिः स्यात्पारलौकिकी ॥ योगिनीसेवनादत्र न विघ्नैः परिभूयते ॥ १८ ॥ चेटिका प्रोक्तफलदा सर्वत्रैष विनिश्चयः॥ सिंहास्या योगिनी चात्र जटिला विषधारिणी ॥ १९ ॥ अथ काम्या चेटिकाया मनुं विंशतिवर्णकम् ॥ ब्रवीमि वर्णद्वितयात्पातालतलवासिनीम् ॥ २० ॥ श्यामले श्रींसिद्धिमिति देहि स्वाहेति चिन्तयेत् ॥ तालारण्यान्तरे स्वस्थां करतालीमनोरमाम् ॥ ॥ २१ ॥ आलिभिः सहितां गीतकारिणीं श्यामलाम्भजे ॥ जपेदयुतसंख्याकं शान्तात्मा तालकानने ॥ २२ ॥ तद्दशांशेन जुहुयात्स तालीफल-

खण्डकैः ॥ कर्पूरागुरुयुक्तैश्च पूर्णं तत्रिः प्रदक्षिणम् ॥२३॥ कुर्य्यात्तालीवने तत्राथैतन्मध्ये वनांतरे ॥ ज्येष्ठामायां जपेद्रात्रौ सहस्रद्वितयं मनुम् ॥ २४ ॥ अर्धरात्रे चरेद्धोमम्पूर्णं तालफलेन च ॥ झञ्झामारुत आयाति प्रकाशोतीव जायते ॥ २५ ॥ तन्मध्ये तु महादेवी श्यामा षोडशवार्षिकी ॥ नीलांशुकपरीधाना कस्तूरीचन्दनप्रिया ॥ २६ ॥ तान्नमस्कृत्य विश्वेशीं तुष्टा भव वरानने ॥ इत्युक्ता मन्त्रिणे तुष्टा सा ददाति फलत्रयम् ॥ ॥ २७ ॥ परमानसविज्ञानविद्यां जातिमगोरमाम् ॥ कंदर्प्पवत्स्वरूपं च जगतीमोहनक्षमम् ॥ २८ ॥ गं वीराय नमश्चेति प्रोक्तो मंत्रः षडक्षरः ॥ योगिनी चास्य वृद्धा स्याद्वेषतः सा तपस्विनी ॥ २९ ॥ तस्याश्चेटी तु बालोक्ता ह्येकोनत्रिंशदक्षरा ॥ ॐ पंचवार्षिकीत्युक्त्वा बाले वचनमाधुरीम् ॥ ३० ॥ मम देहि द्वयांते तु हुरूणां हुरुयुग्मकम् ॥ भुवनेशीद्वयं चेति ध्यानमस्या निरूप्यते ॥ ३१ ॥ गोरोचनाचर्चितांगीं हेमगौरीं सुरार्चिताम् ॥ चंद्रावतंसां ललितवचनां नेत्रसुंदरीम् ॥ ३२ ॥ गोमयेन समालिप्य शून्यगेहस्य भूमिकाम् ॥ चंदनेन समालिख्य तत्पश्चात्कुंकुमेन च ॥ ३३ ॥ तत्र दूर्वादलैः पूज्या बाला लक्षं जपेत्ततः ॥ धत्तूरकुसुमैर्होमं सहस्रैकं समाचरेत् ॥ ॥ ३४ ॥ तद्बीजैः पूजनं कार्य्यं कौशेयवसनो यजेत् ॥ काषायवस्त्रो नग्नो वा सिद्धमन्त्रः समाचरेत् ॥ ३५ ॥ धत्तूरतैलेनाभ्यङ्गं पौर्णमास्यां विधूदये ॥ पुष्पस्य तद्गृहे गत्वा नग्नो बालामनुं जपेत् ॥ ३६ ॥ ततो रात्रिप्रान्तभागे दूरतः पंचवार्षिकी ॥ दृश्यते सा द्रुमारूढा धावंस्तत्सन्निधौ व्रजेत् ॥ ३७ ॥ सापि मोदप्रहृष्टा हि चुम्बत्याशु तदाननम् ॥ तच्चुम्बनात्तस्य जिह्वा रससन्दोहिनी भवेत् ॥ ३८ ॥ तद्वार्तया याति मोहं राजा राज्येऽखिलो जनः ॥ व्याघ्रादिपशुजातीनां मोहनं तद्वचो भवेत् ॥ ३९ ॥ मुखं तस्य समालोक्य सर्वे मुह्यन्ति जन्तवः ॥ गं सुराय नमश्चेति प्रोक्तो मन्त्रः षडक्षरः ॥४०॥ योगिनी काकतुण्डा स्यात्स्फुटाक्षी चेटिकेरिता ॥ विशालाक्षि गजान्तेति तिले देहियुगं वदेत् ॥ ४१ ॥ दारिद्र्यं दाहयेत्युक्त्वा

ह्रीं स्फुटं हुं कलत्रकम् ॥ वह्नेर्मन्त्रः समाख्यातो नागनेत्रमिताक्षरः ॥ ४२ ॥ जम्बीरनारिकेलानां वने वाथ नदीतटे ॥ अथ वा विजने रम्ये ताहग्वनविभूषिते ॥ ४३ ॥ अथ वा कमलामोदभूषिते सुसरित्तटे ॥ लक्षमेकं जपित्वा तु होमं कुर्य्याद्दशांशतः ॥ ४४ ॥ नारिकेलैस्ततः सिद्धमन्त्रो मन्त्री समाचरेत् ॥ माघे मासि तथाष्टम्यां कृष्णपक्षे विधौ निशि ॥ ४५ ॥ सहस्रं प्रजपेन्मन्त्रं वेतालाः खड्गपाणयः ॥ साधकं ते भीषयन्ति न भेतव्यं तदा क्वचित् ॥ ४६ ॥ वामहस्तासृजा तांश्च सिञ्चेत्ते यान्ति दूरतः ॥ पुनर्जपे समारब्धे तदा कात्यायनी स्वयम् ॥ ४७ ॥ आयाति शवमुण्डानि चर्वयन्त्यतिभीषणा ॥ वामजङ्घासृजा सिञ्चेत्ततः सापि प्रयाति च॥ ४८ ॥ पुनर्जपे समारब्धे भैरवी याति भीषणा ॥ गजमुण्डश्चर्वयन्ती वमन्ती शोणितम्भुवि ॥ ४९ ॥ तया सह समायान्ति भीषणा भैरवास्तदा ॥ सिञ्चेद्दै भैरवांस्तांश्च ततो भालोद्भवासृजा ॥ ५० ॥ पुनः सहस्रजापान्ते नारिकेलत्रयं हुनेत् ॥ तदा देवी समागत्य नारिकेलं प्रयच्छति ॥ तस्मिन्स्थिते जगद्वश्यं जायते नगरेन्दिरा ॥ ५१ ॥ गमुक्ता प्रवदेन्डेन्तं वरदाक्षविनायकम् ॥ हृदन्तो रुद्रवर्णोऽयं मन्त्रः प्रोक्तोऽस्य योगिनी ॥ ५२ ॥ उग्रग्रीवाभिधा प्रोक्ता सैरन्ध्रीरूपधारिणी ॥ वेदास्या हरितालाक्षी मन्त्रः सप्तदशाक्षरः ॥ ५३ ॥ तारं ह्रीं हरितालाक्षि वदेद्रतिकलां ततः ॥ दहयुग्मं वह्निजायां ध्यानमस्या निरूप्यते ॥ ५४ ॥ जपापुष्पसहस्रोद्योतमानां महेश्वरीम् ॥ ध्यायेत्तां हरितालाक्षीं सिद्धिदां शं वितन्वतीम् ॥ ५५ ॥ मृगद्वितीयचरणप्रवेशे भवति ध्रुवम् ॥ आदिमे दिवसे रात्रौ गत्वा वै निर्जने वने ॥ ५६ ॥ दिवसे च समानीय हरितालं मुखे स्वके ॥ लेपयित्वा प्रथमतो जपेदयुतसंख्यकम् ॥ ५७ ॥ घृतकर्पूरकाश्मीरैः कौसुम्भैर्होममाचरेत्॥ पूर्णं कुर्य्यात्कुलिङ्गेन हरितालरसस्पृशा ॥ ५८ ॥ ततो देवी समायाति ललिता हरितालिका ॥ नानावाक्यैर्मोहयन्ती साधकस्तां न विश्वसेत् ॥ ५९ ॥ ततः प्रभातसमये मूलमन्त्रप्रभावतः ॥ भगिनीं स्वां

---

१ शत्रन्तं सप्तम्यन्तञ्चैतत् ॥

रतिकलां साधकाय प्रयच्छति ॥ ६० ॥ वशीभूता रतिकला गृहीत्वा मन्त्रिणं ध्रुवम् ॥ खेचरं कुर्वती सद्यो नयेद्देशे विचिन्तिते ॥ ६१ ॥ यक्षिणी भूतवेतालभैरवानतिभैरवान् ॥ आनयति क्षणेनैव मन्त्रिणो वशमादरात् ॥ ॥ ६२ ॥ देवकिन्नरगन्धर्वविद्याधरपुरे नयेत् ॥ आनयेच्च पुनर्भूमौ नाना वस्तु प्रदर्शयेत् ॥ ६३ ॥ गमुक्ता चेभवक्त्राय हृदन्तोयं गजाक्षरः ॥ योगिन्यस्य हयग्रीवा भवेन्मासोपवासिनी ॥ ६४ ॥ अस्यास्तु कुण्डली चेटी मन्त्रो विश्वमिताक्षरः ॥ ॐ कुण्डिनि नागवाहने फुर्फुर्वह्निगेहिनी ॥ ॥ ६५ ॥ महानागसमारूढामानिम्नस्फुटलोचनाम् ॥ दीप्यन्तीमन्धकारे च फूत्काराहतभूरुहाम् ॥ ६६ ॥ एकलिंगो महादेवो यत्र स्याद्बिल्व-कानने ॥ तत्रेमं प्रजपेन्मन्त्रं लक्षहोमं समाचरेत् ॥ बिल्वमूलेन मन्त्रस्य तदा सिद्धिः प्रजायते ॥ ६७ ॥ रात्रौ शिवचतुर्दश्यामेकान्ते शिवम-न्दिरे ॥ जपेत्सहस्रत्रितयं हुनेत्तस्य दशांशतः ॥ ६८ ॥ बिल्वमूलेन होमांते कुण्डो नाम महाफणी ॥ विस्तीर्णवदनो लम्बो दृश्यते युगविंशकः ॥६९॥ फणां प्रसार्य्य नागोसौ पुनस्तिष्ठति मन्त्रिणः ॥पुरस्तात्तस्य निर्भीत्या स्थातव्यं तेन मन्त्रिणा ॥ ७० ॥ फूत्काराणां सहस्राणि फणाभिः कुरुते ध्रुवम् ॥ तस्य वक्त्राच्छतं ज्वाला निस्सरन्ति पुनः पुनः ॥ ७१ ॥ तथा विषाणि बहुधा नीलपीतच्छवीनि च ॥ पललानि ततो धूमपत्रिगश्चापि शाखिनः ॥ ७२ ॥ एवंविधं महोत्पातं दृष्ट्वा नैव बिभेति चेत् ॥ तदा सा दृश्यते देवी तन्नागफणसंस्थिता ॥ ७३ ॥ तां स्तुयात्स्तुतिभिर्देवीं तोषिता सा ददाति च॥ अमृतन्तोलकमितन्तेन स्यादजरामरः ॥ निधीन्पश्यति भूमिष्ठा-न्वाणी सत्या प्रजायते ॥ ७४ ॥ गमेकदन्तं ङेन्तश्च हृदयांतो गजाक्षरः ॥ वाराही योगिनी जाता वेषाच्छूकरचारिणी ॥ अस्य देवस्य चेटी तु प्रोक्तात्र मधुवासिनी ॥ ७५ ॥ त्रयोदशाक्षरो मन्त्रः प्रणवो मधुवासिनी ॥ कामदे-वीति चोच्चार्य्य क्लींस्वाहेति मनुः स्मृतः ॥ ७६ ॥ स्तूयमाना च कामेन बिभ्रती स्वर्णपंकजम् ॥ ध्यायेन्नवरसां देवीं मृगाक्षीं ब्रह्मसौख्यदाम् ॥७७॥ मधुवृक्षतले स्थित्वा जपेल्लक्षमितम्मनुम् ॥ वासन्तीकुसुमैर्होमो मधुपुष्पैरथापि

वा ॥ ७८ ॥ कर्पूरागुरुसम्मिश्रैः कुर्य्यादयुतसंख्यया ॥ मधुमासि सिताष्टम्यामेकांते निर्जने जपेत् ॥ ७९ ॥ मधुवृक्षतले नीरे गोदावर्य्यां विशेषतः॥ होमः प्राग्वत्सहस्रं स्याज्जपेन्नवसहस्रकम् ॥८०॥ मधुनेति तदा यक्षो ज्वालामालेतिभीषणः ॥ माहिषेण विषाणेन दक्षहस्तेन सम्पिबन् ॥ ८१ ॥ रक्तञ्च वामहस्तेन सुरां पिबति भीषणः ॥ जिह्वयैव च यक्षो हि लतावृक्षादि गुल्मकान् ॥ ८२ ॥ उत्पाट्य चर्वन्घोरो हि भक्ष्यन्देहीति भाषते ॥ न भयं प्राप्नुयात्तस्मान्मिथ्यात्रासादिभिस्तदा ॥ ८३ ॥ तस्मै रक्तं प्रदातव्यम्मन्त्रिणा स्वकरोद्भवम् ॥ ततस्तस्मिन्गते यक्षे देवी वृक्षतले तदा ॥ ॥ ८४ ॥ प्रत्यक्षा जायते तस्मै दद्यात्पौष्पञ्च कार्मुकम् ॥ वितस्तिमात्रन्तेन स्यात्सर्वमोहनकारकः ॥ ८५ ॥ नवयौवनशालिन्यः कुङ्कुमारुणविग्रहाः ॥ धनन्देहं प्रयच्छन्ति तस्मै कामविमोहिताः ॥ ८६ ॥ गञ्च लम्बोदरं ङेन्तं हृदयांतोष्टवर्णकः ॥ योगिनी शरभास्यास्था ज्वालामालावपुर्धरा ॥ चेटी तु मन्थरा प्रोक्ता मंत्रो जिनमिताक्षरः ॥ ८७ ॥ ॐ मन्थरे वदेत्पश्चाद्दिक्षुक्षितिनिवासिनि ॥ मसेष्टवरयुग्मञ्च तुं वं मं वह्निगेहिनीम् ॥ ८८ ॥ करे वहन्ती कोदण्डमैक्षवं लोललोचना ॥ जपाकुसुमशोणांगी मम चित्तस्य मन्थरा ॥ ८९ ॥ इक्षुवाटीस्थले चैव गुडपाकस्थले तथा ॥ रसपञ्चसमीपे तु रचयित्वा शुभं स्थलम् ॥ ९० ॥ लक्षमानम्पुरश्चर्य्यां हीक्षुखण्डैश्च होमयेत् ॥ मज्ञारिषष्ठीरात्रौ तु जपेत्सोमे शतत्रयम् ॥ ९१ ॥ तद्दशांशैर्हुनेदिक्षुखण्डैरायाति मन्थरा ॥ ददाति मधुपात्रं हि दिव्यमाध्वीकमिश्रितम् ॥९२॥तत्पूजयेत्त्रिसन्ध्यं हि तन्मुखान्मन्थरा वदेत् ॥ भाषया स्पष्टया दद्यात्पूजांते यन्मनोगतम् ॥ ९३ ॥ भूतञ्च वर्त्तमानञ्च भविष्यदपि तत्त्वतः ॥ स जानाति न सन्देहो मनोरस्य प्रभावतः ॥ ९४ ॥ यदायदातिसंकष्टञ्जायते मन्त्रिणो ध्रुवम् ॥ तदातदा तु तां देवीं मधुपानैः प्रपूजयेत् ॥ ९५ ॥ संकष्टं हरते तूर्णं विग्रहादौ प्रपूजयेत् ॥ रसपञ्चसमीपे तु भूमिपूजां विधेतः ॥ ९६ ॥ कुंकुमैश्चादिसिन्दूरै रक्तचन्दनवन्दनैः ॥ ९७ ॥ माध्यन्दिनीजपापुष्पकरवीरप्रसूनकैः ॥ यावदालोहितं वस्तु

तावद्भिः परिपूजयेत् ॥ ९८ ॥ वक्ष्येथ कौलिकप्रोक्तान्स्थितानष्टौ विनायका-न्॥नमो भगवते पूर्वं ङेन्तन्तन्नाम चोच्चरेत् ॥९९ ॥ अष्टानामपि मन्त्रोयमैन्द्र्यां सिद्धिविनायकः ॥ उलूकी योगिनी तत्र नापितीरूपधारिणी ॥१००॥ विधि-स्तत्र समाख्यातो ह्यणिमाद्यष्टसिद्धयः ॥ साधको यां सिद्धिमिच्छेत्तद्युक्ताय पदं वदेत् ॥ १०१ ॥मन्त्रमध्ये वर्णलक्षं जपेद्धोमं समाचरेत् ॥ महागणपव-त्सर्वं ततस्तां सिद्धिमाप्नुयात् ॥ १०२ ॥ काश्यामाग्नेयदिग्भागे विज्ञेयोर्क-विनायकः ॥योगिनी च शिवा ह्येषा मृत्तिकारूपधारिणी ॥ १०३ ॥ हंसावा-गस्य चेटी स्यान्मन्त्रः स्याद्द्वादशाक्षरः ॥ ॐहंसगेंबोधयिति वाक्छ्रीबीजाग्नि-वल्लभाः ॥ १०४ ॥ शतचन्द्रसमज्योत्स्नां चन्द्रार्धकृतशेखराम् ॥ वरदाभय-हस्तां च संसेवे हंसगामिनीम् ॥१०५॥ सहस्राणां तु पञ्चाशत्पुरश्चरणमस्य तु ॥ अयुतार्धन्ततो होमं पद्माक्षैराज्यसंयुतैः ॥ १०६ ॥ कुर्य्याद्धोमं यद्वैस्त-द्वत्पद्मयुक्तसरित्तटे ॥ हिरण्यकशिपुप्राणनाशकालतिथौ ध्रुवम् ॥ १०७ ॥ सन्ध्यामारभ्य जप्तव्यं प्रहरत्रितयावधि ॥ भूर्ज्जपत्रैश्च होतव्यं पद्माक्षैः स्वस्व-स्वाष्टकम्॥ १०८ ॥ततो हंससमारूढा शतचन्द्रसमप्रभा ॥ सा देवी मन्त्रिणे तस्मै पद्ममालां प्रयच्छति॥ १०९॥तन्मालाजपतो मन्त्री जायते शास्त्रपारगः॥ अज्ञानाद्येत्सगर्वोपि जायते सत्त्वमस्य तु ॥ दुर्गया स्थापितः काश्या याम्ये दुर्गविनायकः ॥ ११० ॥ मायूरी योगिनी तत्र लोकानामौषधप्रदा ॥ ॐह्री-न्दुयुक्ता दुर्गायै हृदयान्तोष्टवर्णकः ॥१११॥ मुनिः प्रोक्तो नारदाख्यो गायत्री छन्द ईरितम् ॥ दुर्गा देवी यया दुर्गवधार्थं सेवितो गणेः[1]॥११२॥ प्रणवं पूर्व-मुच्चार्य्यं दीर्घषट्कसमन्वितम् ॥ क्रमादाद्यन्तयोर्मायां दुर्गायै चेति मध्यतः ॥ ॥११३॥ पल्लवाद्याः षडङ्गानि चेति मन्त्राः प्रकीर्तिताः ॥ ११४ ॥ सिंहा-सीनां मरकतद्युतिं चन्द्रार्धशेखराम् ॥ शङ्खचक्रधनुर्बाणान्दधतीं त्रीक्षणां भजे ॥ ११५ ॥ अष्टपत्राम्बुजद्वन्द्वे चतुरस्रत्रयावृते ॥ चतुर्द्वारसमायुक्ते कुंकुमा-मादिभिरुद्धृते ॥ कुर्य्यात्स्वपीठपूजायां तत्र शक्तिसमर्चनम् ॥ ११६ ॥ प्रभा समा जया सूक्ष्मा विशुद्धा नन्दिनी तथा ॥ सुप्रभा विजया पूर्वदलात्स-

१ गणेशः ॥

वीर्थसिद्धिदा ॥ ११७ ॥ एवं वह्निसरक्ताविहीनैरद्भिः प्रपूजयेत् ॥ ॐ वज्रनखदंष्ट्रायुधायप्रोक्त्वामहापदम् ॥ ११८ ॥ सिंहाय हुंफट् हृदयमून-विंशतिवर्णकः ॥ सिंहमन्त्रः समाख्यातस्तेन सिंहं प्रपूजयेत् ॥ ११९ ॥ मूर्ति-मावाह्य तस्यान्तु पूजयेच्चन्दनादिभिः ॥प्रथमावृत्तिरङ्गैः स्याद्द्वितीया तु प्रभा-दिभिः ॥ १२० ॥ सबिन्दुनाद्यवर्णेन जयादीनान्तु नामभिः ॥ङेन्तैर्नमोन्तै-स्तृतीयावरणं परिकीर्तितम् ॥ १२१ ॥ जया च विजया कीर्तिः प्रीतिश्चापि प्रभा मता ॥ श्रद्धा मेधा श्रुतिश्चापि चतुर्थावरणं क्रमात् ॥ १२२ ॥ शङ्खं चक्रं गदां खड्गं पाशांकुशशरान्धनुः ॥ बाह्यवीथीद्वये लोकपालानस्त्राणि च क्रमात् ॥ १२३ ॥ जितेन्द्रियो हविष्याशी वसुलक्षं जपेन्मनुम् ॥ तत्सहस्रं तिलैः स्याद्दुलोलिकैर्वा पयोन्धसा ॥ १२४ ॥ जुहुयादेधिते वह्नौ तर्प्पणादि ततश्चरेत् ॥ एवं सिद्धे मनौ मन्त्री प्रयोगानाचरेत्सुधीः ॥ १२५ ॥ यथो-क्तेन विधानेन नवकुम्भान्मनोरमान् ॥ पञ्चरत्नसमायुक्तान्नवस्थानेषु विन्यसेत् ॥ १२६ ॥ मन्त्री दुर्गां यजेन्मध्येष्वन्यत्र च जयादिकाः ॥ चन्दनाद्यैः समभ्यर्च्य धूपदीपैश्च मन्त्रवित् ॥ १२७ ॥ अभिषिञ्चेत्स्त्रियं साध्यं राजानं वा शिशुं बुधः॥ विजयश्रीसमायुक्तो राजा भवति नान्यथा ॥ १२८ ॥ भूता-पस्मारवेतालपिशाचाद्यैर्विमुच्यते ॥ वन्ध्या च ललना पुत्रं विनीतं प्राप्नुयाच्छु-भम् ॥ १२९ ॥ आमयान्मुच्यते मर्त्यो दीर्घायुश्च न संशयः ॥ अनेनैव विधानेन जनानामनुरञ्जनम्॥ दुर्गामनुं च भजतां बह्वादुःखाघनाशनम् ॥ १३० ॥ काश्या नैर्ऋत्यभागे तु ज्ञेयश्चण्डविनायकः ॥ वेश्या वृत्तिकरी चास्य योगिनी चकितानना ॥ हंसीनाम्नी तस्य चेटी तस्याः साधनमुच्यते ॥ १३१ ॥ सुधाकरसमज्योत्स्नां शुक्रशोभितसत्कराम् ॥ वामे हंसं दधानां च पीनोन्नत-पयोधराम्॥ १३२ ॥ एकान्ते च नदीतीरे जपेन्मन्त्रयुतत्रयम् ॥ मुस्तकन्दैः सहोशीरैर्दशांशं होममाचरेत् ॥ १३३ ॥ एवं सिद्धप्रयोगस्तु नदीतीरे च कानने ॥ गहने विल्ववृक्षाणामेकान्तेप्यथ वा सुधीः ॥ १३४ ॥ तुङ्गभ-द्रानदीतीरे यत्र लक्ष्मीश्वरः शिवः ॥ तत्र स्नात्वा तटे तस्या ह्यङ्गायां च दिने यजेत् ॥ भानोर्वारे निशि हुनेत्साम्बदेवीं तथा यजेत् ॥ १३५ ॥ मत्वा

स्तुत्वा प्रार्थयित्वा निर्भयो जनवर्जिते ॥ ददाति मन्त्रिणे शीघ्रं स्फटिकाख्यं मनोहरम् ॥१३६॥ तस्मिन्पश्यति भूतं च भविष्यद्वर्त्तमानकम् ॥ तथा स्वस्य परस्यापि सर्वज्ञो जायते नरः ॥१३७॥ काश्याः पश्चिमदिग्भागे स देहलि-विनायकः॥ योगिनी त्वष्टवक्रास्य वणिक्कर्म्म प्रकुर्वती ॥ १३८ ॥ विचित्रा-नाम चेट्यस्य त्रयोविंशतिवर्णकः ॥ ह्रीं विचित्रे चित्रचैले चैलं देहि पदं वदेत् ॥ वायुं पूरययुग्मं च हुं स्वाहेत्युदितो मनुः ॥ १३९ ॥ अयुतं प्रज-पेत्तीरे सरितस्तद्दशांशतः ॥ कमलाक्षैर्भवेद्धोमस्तत्तत्काम्यं समाचरेत्॥१४०॥ चैत्रे चाश्विनमासे च चतुर्दश्यां निशान्तरे ॥ सरस्तीरे जपेन्मन्त्रं समस्तां रात्रिमन्ततः ॥ १४१ ॥ ततो देवी समायाति विचित्रं वसनाञ्चलम् ॥ ददाति तत्पूजयित्वा रात्रौ संस्थापयेद्गृहे ॥ तद्गृहं पूर्य्यते वस्त्रैराजमन्दि-रैरपि ॥ १४२ ॥ काश्या वायव्यकोणेयमुद्दण्डाख्यो विनायकः ॥ योगिनी कोटराक्ष्यस्य चेटी स्याद्दधिदुग्धदा ॥ १४३ ॥ केशमुचार्य्य चावर्त्तनखरे-हिपदं ततः ॥ ह्रींश्रींस्वाहेति मन्त्रोथ तस्य ध्यानमिहोच्यते ॥ १४४ ॥ स्वच्छतोयैश्च सम्पूर्णं वामे धत्ते कमण्डलुम् ॥ स्वर्णकुण्डलक्षिताढ्यगण्डान्तं विधिपूर्वकम् ॥१४५॥ जपेल्लक्षमितं मन्त्रं नदीतीरे मनोरमे ॥ होमयेच्च त्रिम-धुरैः प्रयोगं तत आचरेत्॥१४६॥कृष्णातीरे महातीर्थेथ वा पञ्चनदे शुभे ॥ मघामासे द्वितीयायां कृष्णपक्षे निशान्तरे ॥ १४७ ॥ कृत्वा तृणकुशूलं तु निक्षिपेत्तत्स्थलान्तरे ॥ कृत्वा सायन्तनं कर्म कुशूलं पूजयेत्ततः ॥ १४८ ॥ तत्र देवीं स्मरन्मन्त्री कुशूलान्तर्विशेद्ध्रुवम् ॥ तत्र बद्धासनो योगी शीतवा-धामुपेक्ष्य हि ॥ १४९ ॥ जपेत्पंचसहस्रं तु देवतां विधिपूर्वकम् ॥ पंचवक्त्रां त्रिनेत्रां च पश्येदष्टभुजां शिवाम् ॥ १५० ॥ ततः सा देवता तस्मै ददाति च कमण्डलुम् ॥ जलपूर्णं ततस्तस्मै जलेनासेचयेत्सुतम् ॥ १५१ ॥ स नरस्तत्क्षणादेव सप्तजन्मसमुद्भवाम् ॥ जातिं वदति तत्कालं तत्तत्कर्म करोति च ॥१५२॥ काश्यामुत्तरभागे तु पाशपाणिर्विनायकः ॥ योगिन्यस्य भवेत्कुब्जा व्यालग्राहा स्वरूपतः ॥ १५३ ॥ यदा न महिषं शक्ता धोतितुं

---

१ प्रकुरुते । २ णिज्लोप आर्षः ॥

विन्ध्यवासिनी ॥ वज्रस्तदा कृतोनेन महिषो येन घातितः ॥ तस्मान्महिषमर्दिन्या मन्त्रं वक्ष्ये समासतः ॥ १५४ ॥ महिषमर्दिनीत्युक्त्वा स्वाहान्तोऽष्टाक्षरो मनुः ॥ मार्कण्डेयो मुनिश्छन्दो गायत्रं दैवतं मनोः ॥ सुरासुरनुता देवी प्रोक्ता महिषमर्दिनी ॥ १५५ ॥ महिष मर्दिनि हुंफट् हृदयं परिकीर्त्तितम् ॥ महिषारीशानि हुंफट् शिरोगं समुदीरितम् ॥ मन्त्रैरेभिर्जातियुक्तैः पंचाङ्गानि प्रकल्पयेत् ॥ १५६ ॥ गारुडोपलदीप्तिं च मणिमौक्तिककुण्डलाम् ॥ तिष्ठन्तीं माहिषे शीर्षे नौमि भालविलोचनाम् ॥२५७॥ चक्रं शङ्खं कृपाणं च बाणं शूलं च तर्जनीम् ॥ कार्मुकं खेटकं हस्तैर्बिभ्रतीं शशिशेखराम् ॥ १५८ ॥ जटामुकुटशोभाढ्यां सर्वाभरणभूषिताम् ॥ पीताम्बरधरां देवीं पीनोन्नतकुचद्वयाम् ॥ १५९ ॥ ततः पूर्वोदिते पीठे यजेन्महिषमर्दिनीम् ॥ प्रथमावृत्तिरङ्गैः स्याद्दुर्गाद्याभिः परीरिता ॥ १६० ॥ स्वाग्रादिप्रादक्षिण्येन दुर्गा च वरवर्णिनी ॥ आर्य्या च कनकाख्यातु कृत्तिका चाभयप्रदा ॥ १६१ ॥ कन्यास्वरूपा आईकांदियों द्विस्वरपूर्विकाः ॥ क्लीबान्तरहितं चात्र ग्राह्यं दीर्घस्वराष्टकम् ॥ १६२ ॥ परादिकं प्रथमतः सबिन्दुं वर्णमुच्चरेत् ॥ ततो देव्यायुधं प्रोच्य तृतीयावरणे यजेत् ॥ १६३ ॥ चतुर्थी लोकपालैः स्यात्पञ्चमी च तदायुधैः ॥ प्रजपेल्लक्षमेकं च तत्सहस्रं तिलैर्हुनेत् ॥ १६४ ॥ एवं सिद्धे मनौ मन्त्री प्रयोगानाचरेत्ततः ॥ तिलहोमाद्वशीकारो नृणां स्त्रीणां भवेद् ध्रुवम् ॥ १६५ ॥ आमयान्मुच्यते मर्त्यः सद्यः सर्षपहोमतः ॥ पद्महोमात्तथा राज्ञः संग्रामे विजयो भवेत् ॥ ॥ १६६ ॥ दूर्वाहोमेन मर्त्यानां रोगशान्तिर्भवेद्ध्रुवम् ॥ ब्रह्मवृक्षोत्थकुसुमैर्लभते पुष्टिमुत्तमाम् ॥ १६७ ॥ धान्यहोमेन धान्यानि काकपक्षहुतेन च ॥ विद्वेषो जायते लोके चात्यन्तसुहृदोरपि ॥ शत्रुर्गच्छति पंचत्वं सत्यं मारिचहोमतः ॥ १६८ ॥ एवं यो भजते देवीं दुर्गां महिषमर्दिनीम् ॥ स नाशयेत्क्षुद्रभूतांश्चौरादीन्दर्शनादपि ॥ उपासितापासितातिनिकटे द्रुतसिद्धिदा ॥ १६९ ॥ काश्यामीशानदिग्भागे ज्ञेयः खर्वविनायकः ॥ दासीरूपं समास्थाय स्थिता विकटलोचना ॥ योगिनी जयदुर्गा च सिद्धिदा तत्र

संस्थिता ॥ १७० ॥ तारो दुर्गे द्वयं प्रोच्य रक्षिणीत्यग्निगेहिनी ॥ दशाक्षरो मनुः प्रोक्तो भजतामिष्टसिद्धिदः ॥ १७१ ॥ नारदर्षिर्विराट् छन्दो जयदुर्गा च देवता ॥ ताराद्यैः पंचैं मन्त्रस्य पदैः सर्वैण सम्मता ॥ जातियुक्ता चाङ्ग-क्लृप्तिः काम्यकर्म्म ह्यथोच्यते ॥ १७२ ॥ दुर्गेति हृदयं प्रोक्तं दुर्गा च शिर ईरितम् ॥ दुर्गायै स्याच्छिखा वर्म्म भूतरक्षाक्षि कीर्तितम् ॥ १७३ ॥ तारादिदुर्गद्वितयं रक्षिण्यक्षि प्रकीर्त्तितम् ॥ तारादियुगलं दुर्गे रक्षिण्यस्त्रमु-दीरितम् ॥ मेघश्यामां ग्लौकिरीटां त्रिनेत्रां सिंहवाहिनीम् ॥ १७४ ॥ चक्रं दरं खड्गशूलौ बाहुभिर्बिभ्रतीं भजे ॥ दौर्गे पीठे यजेद्देवीमुक्तमार्गेण मन्त्रवित् ॥ प्रजपेत्पञ्चलक्षं च तद्दशांशं हुनेद्घृतैः ॥ १७५ ॥ तर्प्पणादि ततः कुर्य्यात्ततः सिद्धो भवेन्मनुः ॥ ततः सिद्धमनुर्मन्त्री प्रयोगानाचरेत्ततः ॥ ॥ १७६ ॥ इमं मनुं जपेद्भूयः प्रविशेच्छत्रुसङ्गरम् ॥ अशेषेण रिपुं हन्या-न्नात्र कार्य्या विचारणा ॥ १७७ ॥ विवादे व्यवहारादौ यशोविजयदो भवेत् ॥ अनया विद्यया जप्तं पताकाध्वजदुन्दुभिः ॥ १७८ ॥ शृङ्गं शङ्खा-दिकं सर्वं यानं सेना च सैन्यपः॥संमुखेत्स च संग्रामे लभते विजयं खलु॥ १७९॥ अथास्याः प्रोच्यते भेदो यदा घोरस्थले पतेत्॥ ऋणं वा जायते तारान्नम उक्ता च पूर्ववत्॥ १८०॥द्वादशार्णो भवेन्मन्त्रः संग्रामविजयप्रदः ॥ मुन्याद्यं पूर्वव-त्प्रोक्तं ध्यानपूजादिकं तथा ॥ १८१ ॥ व्यस्तेन च समस्तेन मन्त्रेणाङ्गानि षट् क्रमात् ॥ काशीप्रान्तस्थिता एते कीर्तिता गणनायकाः ॥ १८२ ॥ देहलीसञ्ज्ञगणपानिकटेऽन्ये तु षोडश ॥ विनायकास्तु काश्यां वै वेदकर्म्मप्रव-र्त्तकाः ॥ १८३ ॥ तान्त्रिकाणां नात्र सिद्धिर्गामिनां तु विशेषतः ॥ वेद-स्तवनादिस्तस्यात्र द्रुतं सिद्धिः प्रजायते ॥ १८४ ॥ अभक्तविघ्नकर्ता च भक्तानां विजयप्रदः ॥ पापिनां पापहर्ता च वाममार्गप्रसाधकः ॥ १८५ ॥ तपोवनपरित्राता सीतारक्षाकरस्तथा ॥ आयुष्कर्त्ता रोगहर्त्ता निधिदाता द्विजा-धिपः ॥ १८६ ॥ तुन्दिलो विश्वरक्षाकृद्गणनाथो गणाधिपः ॥ दुग्धदश्चेति नामानि सर्वसिद्धिकराणि च ॥ १८७ ॥ हृदन्तानि प्रजप्तानि मन्त्रार्णायुत-

१ भिन्नविभक्तिलोप आर्षः ॥

संख्यया ॥ नामानुसारिणी सिद्धिरवश्यं स्यान्न संशयः ॥१८८ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि ये विमुक्तान्तसंस्थिताः ॥ सीमाविनायका अष्टौ मन्त्रस्तेषां निरूप्यते॥ १८९॥धराबीजं समुच्चार्य तद्बीजञ्च समुच्चरेत् ॥ ङेन्तं तन्नामगं प्रोच्य-हृदयान्तो मनुः स्मृतः ॥ १९० ॥ अविमुक्ते पूर्वदिशि लम्बोदरविनायकः ॥ शुष्कोदरी योगिनी तु धात्रीरूपं समाश्रिता ॥ १९१ ॥ तत्रैव शूलिनी दुर्गा-तस्यास्साधनमुच्यते ॥ ज्वलद्वयं शूलिनीति वदेद्दुष्टग्रहे ततः ॥ १९२ ॥ हुं फट् स्वाहेति मन्त्रोयं तिथिवर्णः प्रकीर्त्तितः॥मुनिर्दीर्घतमाश्छन्दः ककुबुक्तं च देवता ॥१९३॥ शूलिन्याद्या महादुर्गा सर्वारिष्टविनाशिनी ॥ दुर्गे स्याद्धृदयं शीर्षं वरदे विन्ध्यवासिनी ॥ १९४ ॥ शिखा वर्म्मासुरान्ते च दमन्यन्ते ततो वदेत् ॥ शुद्धं प्रियं वदेत्पश्चान्नासय रूपमीरितम् ॥ १९५ ॥ अस्त्रं च देवसिद्धान्ते वदेन्मन्त्री सुपूजिते ॥ नन्दिन्यंतरे रक्षयुग्मं समस्तयोगेश्वरीति च ॥ शूलिनीतिपदाद्याश्च वर्म्मास्त्रान्ताः प्रकीर्त्तिताः ॥ १९६ ॥ पञ्चाङ्गमन्त्रमुद्दिष्टमेवं न्यस्तं च मन्त्रिणः ॥ रक्षाकृद्ग्रहदोषघ्नमङ्गकर्तुर्भवेद्ध्रुवम्॥एवं न्यस्य शरीरादौ ध्यायेद्दुर्गां सुरैर्नुताम्॥ १९७॥गदां दरमरिंखड्ग बाणाञ्छूलं च खेटकम् ॥ करालिकां पाशधनुर्दिग्भिर्हस्तैश्च बिभ्रतीम् ॥ ॥ १९८ ॥ मेघाभामिन्दुमुकुटां सिंहारूढां चतसृभिः ॥ कन्यकाभिः परिवृतां त्र्यक्षां भूषणभूषिताम् ॥ १९९ ॥ एवं ध्यात्वा पुनर्न्यासान्कृत्वा कुर्वीत साधकः ॥ दुर्गापीठे पुरा प्रोक्ते ध्यात्वा देवीं प्रपूजयेत् ॥ २०० ॥ दुर्गाद्याभिर्द्वितीया स्यादायुधाद्यैः समन्ततः ॥ दुर्गा च वरदा विन्ध्यवासिन्यसुरमर्द्दिनी ॥ २०१ ॥ प्रोक्ता युद्धप्रिया देवसिद्धाद्या पूजितापि च ॥ नन्दिनी सुमहायोगेश्वरीति गदिताश्च ताः ॥ २०२ ॥ चक्रं शङ्खं खड्ग-गदे शरांश्चापं त्रिशूलकम् ॥पाशं देव्यग्रतश्चैतान्पूजयेच्च प्रदक्षिणम्॥२०३॥ दिशादिनाथैर्वज्राद्यैः पञ्चावरणपूजितम् ॥ वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं जुहुयात्तद्दशांशतः ॥ २०४ ॥ आज्येन साज्यहविषा तर्प्पणादि ततश्चरेत् ॥ आराध्य विप्रान्विधिवद्भक्त्याभ्यर्च्य गुरुं ततः ॥ २०५ ॥ एवं सिद्धमनुर्मन्त्री प्रयोगान्निजवाञ्छितान् ॥ विदधीत विधानेन गुरोराज्ञापुरःसरम् ॥ २०६ ॥

शूलाद्यायुधसंयुक्तामुग्रास्यां शूलिनीं तथा॥ विचिन्त्य प्रजपेन्मन्त्रं यस्तं स्पृष्ट्वा विधानतः ॥ २०७ ॥ तमाविश्य क्षणं सर्वं वदेत्पश्चाद्विनश्यति ॥ मन्त्रावृत्त्या तदानीं च भूतसङ्घः पलायते ॥ २०८ ॥ स्मृत्वा च रोगिणां मध्ये शूलिनीं स्वायुधैर्युताम् ॥ जपतो विद्रवन्त्याशु ग्रहाश्चोपग्रहादयः ॥ २०९ ॥ क्षेमंकरीं पूजयित्वा मनुमेनं जपेत्सुधीः ॥ परायुधानि गृह्णाति सेना[1] निश्चेष्टिता भवेत् ॥ २१० ॥ तिलयुक्तैस्सर्षपैश्च वैरिनामसुसंयुतैः ॥ लक्षं प्रजुहुयाच्छत्रुर्यमस्यातिथ्यमाप्नुयात् ॥ २११ ॥ त्रिस्वादुयुक्तिलैरष्टसहस्रं प्रत्यहं हुनेत् ॥ शक्तिरस्याप्रतिहता वत्सरात्प्राग्भवेदलम् ॥ २१२ ॥ घृतेनाष्टशतं मन्त्री हुत्वा वाञ्छितमप्नुयात् ॥ वत्सरात्प्राग्दूर्वया च मधुरत्रययुक्तया ॥ सम्यगष्टोत्तरशतं हुत्वेप्सितमुपव्रजेत् ॥ २१३ ॥ अष्टोत्तरशतं मन्त्री गुलिकां गोमयस्य च ॥ जुहुयात्सप्तदिवसैरिष्टैः सेङ्कस्तदादरात् ॥ २१४ ॥ अस्पृष्टभूम्यन्तारिक्षे गृहीत्वा गोमयं शुभम्॥ त्रिसहस्रमितं जप्तं यियासोर्द्वारिसङ्खनेत्॥ २१५॥ तस्य संस्तम्भनं तत्र भवने नात्र संशयः ॥ सेनामुखे निखातं च सेनास्तम्भं करोत्यलम् ॥ २१६॥ ग्रामं वा नगरं गच्छेत्संस्मरेदम्बिकां सुधीः ॥ पानीयान्नकरां चैव प्रसन्नां प्रजपेन्मनुम् ॥ २१७ ॥ तर्पयित्वा प्रविष्टस्तं प्राप्नुयान्मिष्टभोजनम् ॥ सहस्रभृत्यवर्गेण सहितो नात्र संशयः ॥ २१८ ॥ अर्कवृक्षसमिद्भिश्च त्रिमध्वक्ताभिरुक्तवत् ॥ जुहुयाद्दशसाहस्रं यान्समुद्दिश्य साधकः ॥ भवन्त्येव हि ते वश्यास्तथाश्वत्थसमिद्वरैः ॥ २१९ प्रसन्नचेताश्च तिलैः पूर्वकर्म्मणि वा हुनेत् ॥ दुर्गाकल्पोदितान्सर्वान्प्रयोगान्साधयेत्सुधीः ॥ २२० ॥ अथ वक्ष्ये कूटदन्तं गणेशं कूटसिद्धिदम् ॥ योगिन्यस्य ज्वलज्जिह्वा नर्त्तकी रूपधारिणी ॥ गृध्रदुर्गस्य निकटे साधकाभीष्टदायिनी ॥ २२१ ॥ तारो नमो भगवति ज्वालामालिनि संवदेत् ॥ गृध्रं गणपतिं वृत्ते स्वाहान्तो द्विनखाक्षरः ॥ २२२ ॥ त्रिचतुष्पञ्चवस्वक्षिमितैर्वर्णैर्मनोः क्रमात् ॥ पञ्चाङ्गानि सुधीरस्य जातियुक्तानि कल्पयेत्[2] ॥ अन्यच्छूलिनिदुर्गावित्सवर्मस्याः

---

१ अप्रत्यये तथैवेष्टेति वार्त्तिकेन परशब्दलोपेन शब्दसम्बन्धिमाहिम्ना वात्र परसेनेत्यर्थः ॥
२ भवेदिति शेषः ॥

प्रकीर्त्तितम् ॥ २२३ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि देवं शालंकटंकटम् ॥ स्वदंष्ट्रा योगिनी चास्य नानासङ्गीतकोविदा ॥ २२४ ॥ विधात्री चेटिका चास्य तस्याः साधनमुच्यते ॥ ओं विधात्रि नीरक्षीरविधायिनि पदं वदेत् ॥ स्वाहान्तास्थितिवर्णोऽयं जपो लक्षमितो मतः ॥ २२५ ॥ धात्रीतरुसमीपस्थां विधात्रीं कमलासनाम् ॥ विशाललोचनां वन्दे नीरक्षीरविधायिनीम् ॥ ॥ २२६ ॥ नदीतीरे तु यत्रास्ते धात्रीवृक्षो मनोरमे ॥ सफलस्तस्य भूमौ तु कार्त्तिक्यां पूर्णिमातिथौ ॥ २२७ ॥ सोमवारे तदा मंत्री निशायां त्रिशतं जपेत् ॥ होमो धात्रीफलैः कार्य्यस्ततस्तु तरुतो ध्रुवम् ॥ जायते हि महाशब्दः प्रसन्नास्मीति शोभनः ॥ २२८ ॥ तन्मन्त्रपठनान्मन्त्री नीरक्षीरं भजेदिह॥इत्युक्तेकीलमुद्धृत्य सम्पठेन्मन्त्रमुत्तमम् ॥ नीरान्वितं ततः क्षीरं जायते क्षीरमादरात् ॥ २२९ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि कूष्माण्डाख्यविनायकम् ॥ बालग्रहपतिश्चास्य योगिनी चारुणानना ॥ वेणुवादनमेवेयं कृत्वा काश्यां सदा रता ॥ २३० ॥ चेटी तु वैनतेयाक्षी तस्याः साधनमुच्यते ॥ तारं च वैनतेयाक्षि सर्पसेवित इत्यपि ॥ नागदेवी डेन्तमुक्त्वास्वाहान्तोष्टादशाक्षरः ॥ २३१ ॥ नानाकमलसर्पादिवेष्टितां विन्ध्यवासिनीम् ॥ ध्यायामि वैनतेयाक्षीं विषदोषहरां शिवाम् ॥ चतुःषष्टिसहस्राणि पुरश्चरणमस्य तु॥२३२॥ श्रावणे मासि नागानां पञ्चमी या प्रकीर्त्तिता ॥ तस्यां जपेन्महामन्त्री रात्रौ वल्मीकभूमिषु ॥ २३३ ॥ अयुतं वैनतेयाक्षीं होमः स्यान्मातुलुङ्गकैः ॥ ततः सा गारुडीं विद्यां प्रसन्ना सम्प्रयच्छति ॥ सर्पाकर्षणशक्तिं च समस्तविषनाशिनीम् ॥ २३४ ॥ मुण्डं विनायकं वक्ष्ये ऋक्षाक्षीयोगिनीयुतम् ॥ काशते काशिकायान्तु वीणावादनतत्परा॥किंकरी नाम चैतस्य चेटी तत्साधनं ब्रुवे॥२३५॥ किंकरी जलदेवीति जलं पूरयपूरय॥धंधं सप्तदशार्णोऽयं जपेद्वर्णसहस्रकम्॥२३६॥ अवृष्टिकाले रात्रौ हि नरो नद्यां जले जपेत् ॥कण्ठमात्रेयुतं चैकं ध्यायन्देवीं समाहितः॥२३७॥ किंकरीं वारुणं पाशं बिभ्रतीं जलरूपिणीम् ॥ विषक्षतस्वरूपाभां घोरगर्जनभीषणाम् ॥ प्रभाते वृष्टिरायाति सा हि

१ इदं पूर्वान्वयि ॥ २ मयेति शेषः ॥ ३ इदं पूर्वान्वयि ॥ ४ स्मरन्निति शेषः ॥

पञ्चदिनावधि ॥ २३८ ॥ अथ वक्ष्ये गणेशानं विख्यातं विकटद्विजम् ॥ योगिनी केकराक्षस्य मृदंगं वादयेद्वरम् ॥ वाग्वादिनी चास्य शक्तिर्मन्त्रावस्य निरूप्यते ॥ २३९ ॥ वदयुग्मं वाग्वादिनि स्वाहेति च दशाक्षरः ॥ ऋषिः कण्वो विराट् छन्दो देवता तु सरस्वती ॥ २४० ॥ मातृकोक्तविधानेन मन्त्री कुर्य्यात्षडङ्गकम् ॥ के[1] श्रोत्रयोनसोर्हस्त्योः कपोलास्ये तथेन्द्रिये ॥ ॥ २४१ ॥ गुदे च विन्यसेद्वर्णांस्ततो वागीश्वरीं यजेत् ॥ सितपद्मगतां श्वेतां लेखनीपुस्तकान्विताम् ॥ नम्रां च कुचभारेण वाग्देवीं चन्द्रशेखराम् ॥ ॥ २४२ ॥ ओंह्रींवर्णजाय चोक्त्वा सरस्वत्यासनाय च ॥ नमः पञ्चदशार्णोयमासनस्य मनर्मतः ॥ अंगानि पूजयेदादौ स्वरद्वन्द्वं ततोर्च्चयेत् ॥ ॥ २४३ ॥ वर्गाष्टकं ततोभ्यर्च्य ततोष्टौ शक्तयस्त्विमाः ॥ योगसन्ध्या च विमला ज्ञानबुद्धिः स्मृतिस्तथा ॥ २४४ ॥ मेधा प्रज्ञा ततः पूज्या मातृकाश्च दिगीश्वराः ॥ तदायुधानि पूज्यानि भूपुरादौ यथाक्रमम् ॥२४५॥ दशलक्षं जपेदन्ते त्रिसध्वक्तैश्च कैरवैः ॥ जुहुयात्तद्दशांशैस्तु शुद्धैश्चाथ तिलैर्हुनेत् ॥ २४६ ॥ तर्पणं मार्जनं कृत्वा ब्राह्मणान्भोजयेत्ततः ॥ एवं सिद्धेमनौ मन्त्री ब्रह्मचर्य्यव्रते स्थितः ॥ २४७ ॥ जपहोमरतो रामां चिन्तयेद्देवताधिया ॥ अचिरादेव स भवेत्कवीनामग्रणीर्ध्रुवम् ॥ २४८ ॥ न्यासान्वितमिमं मन्त्रं दिनादौ प्रत्यहं जपेत् ॥ लभते नात्र सन्देहो वाक्सिद्धिमतुलां नरः ॥ २४९ ॥ ब्रह्मवृक्षरमावृक्षसुमनोभिः समिद्वरैः ॥ मधुरत्रयसंयुक्तैर्जुहुयात्साधकः स्वयम् ॥ अचिराद्वाग्विलासेन कवीनामग्रणीर्भवेत् ॥ २५० ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि राजपुत्रं गणेश्वरम् ॥ योगिन्यस्य बृहत्तुण्डा तालवादनतत्परा ॥ २५१ ॥ मातृकासिद्धिदश्चायं तस्मात्तन्मंत्र उच्यते ॥ यस्यामन्तर्गता मन्त्रास्त्रयस्त्रिंशच्च कोटयः ॥ २५२ ॥ गायत्री मातृका वापि साधिता स नरो भवेत् ॥ समस्तागममन्त्राणां दाता-नास्त्यत्र संशयः ॥ २५३ ॥ अकारादिक्षकारान्ता वर्णा वायुश्च देवता ॥ वदन्ति मातृकां देवीं यया सर्वमिदं ततम् ॥ २५४ ॥ ब्रह्मा मुनिश्च गायत्री

---

१ शिरसि ॥

छन्दो देवी च मातृका ॥ हलो बीजान्यचः प्रोक्ताः शक्तयः कीलकं भवेत् ॥ ॥ २५५ ॥ अव्यक्तं सत्त्वनिर्वाच्यं व्यञ्जनैः स्वरसंगमः ॥ प्रागुक्तमातृकान्यासास्तत्रै मुख्या भवन्ति च ॥ २५६ ॥ सुधाकुम्भाक्षवटिकावरपुस्तकधारिणीम् ॥ पञ्चाशद्वर्णव्याप्ताङ्गीं चन्द्रार्धांकितशेखराम् ॥ २५७ ॥ त्र्यक्षां कुंदेन्दुरुचिरां पद्मस्थां कुचनामिताम् ॥ मुक्तामृतस्फुरद्रूपां भजे मातृसरस्वतीम् ॥ २५८ ॥ लिखेत्स्वर्णादिजे पत्रे रोचनाकुंकुमादिभिः ॥ अष्टपत्रं शुभं पद्मं भूपुरत्रितयावृतम् ॥ २५९ ॥ कर्णिकायां तु स्वकं बीजं केशरेषु द्वयम् द्वयम् ॥ कचटादिकवर्गांश्च लिखेदष्टदलेषु च ॥ २६० ॥ तत्कमलस्याशदिक्षु वं बीजं ठं विदिक्षु च ॥ पूजापीठमिदं प्रोक्तमावांगानि संयजेत् ॥ १६१ ॥ स्वरद्वन्द्वं ततो वर्गान्केशरेषु यजेदिमाः ॥ २६२ ॥ मेधा प्रज्ञा प्रभा विद्याधीर्धृतिस्मृतिबुद्धयः ॥ विद्येश्वरी मध्यमांते पूज्याः पीठे ततः परम् ॥ ॥ २६३ ॥ वर्गाष्टके त्विमाः पूज्या व्यापिनी पालनी तथा ॥ पावनी क्लेशिनी चापि धारिणी मालिनी तथा ॥ २६४ ॥ हंसिनी शान्तिनी पत्रस्याग्रेर्च्या मातरः परम् ॥ वीथ्यां लोकेश्वरानस्त्रे वीथ्यामस्त्राणि पूजयेत् ॥ ॥ २६५ ॥ तद्दशांशेन जुहुयान्मधुरत्रयलोलितैः ॥ तिलैः शुद्धैस्तर्पणादिकृत्वा सिद्धो भवेन्मनुः ॥ २६६ ॥ तत्त्वैर्भूर्यैश्च दिग्भिः कनकरजतताम्रान्तकैर्भिन्नसूत्रैः सम्यक्कृत्वा त्रिवर्गास्तबकमथ जपेद्गव्यमाज्यं हुनेच्च ॥ वस्त्रभाणां च पातं सुजनितहविषा चाभिषिंचेद्धृतैस्तां देवीमभ्यर्च्य धार्य्यं ग्रहगदशमनं संगरे स्याज्जयाय ॥ २६७ ॥ तोयम्पिबेद्दिनादौ च द्विवारं जप्तमेतया ॥ वत्सराज्जायते सम्यक्स मूर्खोपि कवित्वभाक् ॥ २६८ ॥ ब्राह्मीरसेन वचया पयसा पाचयेद्धृतम् ॥ अयुतं जप्तमनया भक्षितं कविताप्रदम् ॥ २६९ ॥ वर्णौषधीकाथसुवर्णकुम्भैर्जपन्सहस्रं च नरं प्रसिंचेत् ॥ कीर्तिश्च लक्ष्मीः कविता तथायुर्भवेच्च वन्ध्या लभते सुतान्वयम् ॥ २७० ॥ अथ प्रवक्ष्ये प्रवरं गणेशं सुरा प्रिया साखिलकर्म्मविज्ञा ॥ स्याद्योगिनी चास्य शुभंकरी च चेटी नदी-

---

१ यन्त्रामिति शेषः ॥

याम्यतटे क्षयोर्स्याः ॥ २७१ ॥ आक्रत्यर्णो मनुस्तारः शुभंकरा परेति च ॥ देवते ममेष्टं देहि दुर्भुश्री शिखिवल्लभा ॥ २७२ ॥ कलाकलापान्परिपालयन्ती विभावयन्ती विषयाननेकान् ॥ नारीनरेन्द्रानपि मोहयन्ती सा मानसे मेस्तु शुभंकरीश्रीः॥२७३॥ जप्त्वा लक्षं च रक्तैर्हयरिपुकुसुमैर्होमयेत्सिद्धमन्त्रः कृष्णायाम्भाद्रकृष्णे हयरिपुगहने चापि शेफोलिसिन्ध्वोः ॥ याम्ये तीरे च नद्या निशि जपमयुतन्तद्दशांशेन होमं कुर्य्यात्प्रातस्तु नीराज्जयति सुखकरान्साधकेन्द्रो गतोसौ ॥ २७४ ॥ नानाभोगकरः कामं यंयं प्रार्थयते तु तम् ॥ स्वयं ददाति सा देवी सुस्त्रीवित्ताम्बरादिकम् ॥ २७५ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि वाराणस्यां तु ये स्थिताः ॥ आवृता वक्रतुण्डाद्याश्चेटीशक्तिसमन्विताः ॥ २७६ ॥ ङेन्तन्तन्नाम हृच्चेति तेषाम्मन्त्रः प्रकीर्त्तितः ॥ वक्रतुण्डविधिः पूर्वमुक्तोष्टानां स एव हि ॥ २७७ ॥ कपालहस्तयुक्तानां प्रदिष्टा ऋक्षयोगिनी ॥ शतनादे योगिनीति देहि देहि वदेत्ततः ॥२७८॥ ह्रींहूंस्वाहेति मन्त्रोयं ध्यानमस्या निरूप्यते ॥ वीणातन्त्रीस्फुरद्धस्तां तन्नादचलकुण्डलाम् ॥ २७९ ॥ कुसुम्भवसनां नम्रां स्तनभारेण योगिनीम् ॥ नदीतीरे चाम्रवणे जपेन्मन्त्रं दशायुतम् ॥ आम्रपत्रैः समूलैश्च हुनेत्सिद्धो भवेन्मनुः ॥ २८० ॥ अमायां श्रावणे मासि रात्रौ दूरे नदीतटे ॥ तत्र रात्रौ मनुं देव्या जपेदष्टसहस्रकम् ॥ २८१ ॥ प्राग्वद्धुनेदष्टशतं ततः शब्दाञ्छृणोति च ॥ वीणावेणुमृदङ्गानां किन्नरीणाञ्च भूयसः ॥ २८२ ॥ इत्यादयः शतं नादा जायंते नादिभीषणाः ॥ ततः सा योगिनीरूपा प्रत्यक्षा मन्त्रिणो भवेत् ॥ २८३ ॥ ददाति योगमुद्रां सा दर्शयेत्कुण्डलीपथम् ॥ ततः स्वानुभवो मन्त्री योगी ज्ञानी प्रजायते ॥ वाक्सिद्धिश्च भवेदस्य ब्रह्मभूयाय कल्पते ॥ २८४ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि चैकदन्तुरविघ्नपम् ॥ योगिनी तस्य रक्ताक्षी गानवादरता सदा ॥ २८५ ॥ नेत्ररम्या चेटिकास्य वेदाग्न्यर्णो मनुश्च ओम्॥नेत्ररम्ये अञ्जनं च देहियुग्मं निधिं वदेत् ॥२८६॥ दर्शयद्वितयं चोक्ता पटलम्पदमुच्चरेत् ॥ दूरीकुरु युगम्पञ्च स्वाहेति कथितो मनुः॥२८७॥

१ निवासः ॥ २ इडभावश्छान्दसः ॥

पुरश्चरणमेतस्या अयुतत्रितयं चरेत् ॥ घृताक्तगुग्गुलैर्होमो देवतां साधयेत्ततः ॥ ॥ २८८ ॥ कानने करवीराणां रात्रौ वैशाखमासि तु ॥ चतुर्दश्यामपि देवीं नेत्ररम्यां शतत्रयम् ॥ २८९ ॥ भौमस्तु वासरः प्रोक्तस्त्वथ वा शुक्रवासरः॥ घृताक्तगुग्गुलैर्होमं ततः कुर्य्याच्छतत्रयम् ॥ २९० ॥ ददाति मन्त्रिणे तस्मै स्वाञ्जनं नेत्रबोधकम् ॥ निधिं भूमिगतं वस्तु दूरदेशगतं तथा ॥ आलोकते स मन्त्री च सद्यो भवति भूपतिः ॥ २९१ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि कपिसिंहद्विपाननम्॥एवं त्रिवदनन्तस्य योगिनी तु शुकी मता॥रसज्ञा चेटकी चास्य पङ्कजाक्षी प्रकीर्त्तिता ॥२९२॥ ॐपङ्कजाक्ष्यमृतफलं देहीति युगं तथा ॥ श्रीं स्वाहा मेघवर्णोयं जपः षष्टिसहस्रकः ॥ होमः पलाशपुष्पैः स्यादभावे च समिद्वरैः ॥ २९३ ॥ सञ्जीवयन्तीव मदं लोलनेत्रातिसुन्दरी ॥ पंकजाक्षी कार्य्यकरी नानालंकारशोभिता॥२९४॥वसतन्तौ च गङ्गायास्तटे ब्रह्मरुहांवने॥ कृष्णाष्टम्याश्चैत्रमासे भौमे शुके थवा निशि॥२९५॥त्रिसहस्रं जपित्वातु पालाशैर्होममाचरेत्॥ततो देवी समायाति ददाति फलमुत्तमम्॥२९६॥जरामरणराहित्यं तत्कालम्भक्षिते सति॥फले तस्मिन्समायाति सद्गुरुःआर्थितःपुनः॥२९७॥अथातः सम्प्रवक्ष्यामि पञ्चास्यश्च गजाननम् ॥ श्येन्यस्य योगिनी प्रोक्ता रागालापनतत्परा ॥ पयोदिनीचेटिकास्य ह्यकत्रिंशाक्षरो मनुः ॥ २९८ ॥ तारम्पयोदिनीत्युक्त्वा जलधाराधरे तथा ॥ अग्निं शमय वाडवं वह्निं च शमय द्वयम् ॥२९९॥ श्रीं स्वाहा नम इत्येतज्जपेदन्ते सहस्रकम् ॥ सरस्तीरे पयः कार्यै हुनेत्सघृतपायसम्॥३००॥ वर्षन्ती जलबिन्दूंश्च मेघमाला मनोरमा ॥ श्यामाम्बरपरीधाना मे चित्तेस्तु पयोदिनी॥३०१॥श्रावणे बहुलाष्टम्यां रोहिणी ऋक्षसम्भवे ॥ भौमे बृहस्पतौ वापि शुक्रे वा तत्र वासरे॥३०२॥रात्रौ स्नान विधिं कृत्वा सरस्तीरे मनोरमे॥अयुतम्प्रजपेन्मन्त्रम्पायसैर्होममाचरेत्॥३०३॥ सहस्रैकन्ततो देवी साक्षात्सा तु पयोदिनी॥ ददाति वरकां चैकाम्मन्त्रिणे तोषमागता॥३०४॥अग्निदाहोस्य नैवास्ति भवेच्च करकान्वितः॥अवृष्टावपि कर्तव्यन्ध्यात्वादेवीं भवेज्जलम्॥३०५॥अथातः सम्प्रवक्ष्यामि हेरम्बं गणनायकम्॥

१ ध्यात्वेति शेषः॥ तेनेति शेषः ॥ ३ इदं पूर्वान्वयि ॥

चत्वरादिककाम्यास्य योगिन्यस्ति कपोतिका ॥ हंसवागीश्वरीशाक्तिर्मन्त्राद्यस्य निरूप्यते ॥ ३०६॥ ॐ ह्रीं ॐ ह्रीं ॐ तथोक्ता सरस्वत्यै नमस्त्विति ॥ ऋषिः शाक्तिश्च देव्यादिर्गायत्री छन्द ईरितम् ॥ ३०७ ॥ हंसवागीश्वरी देवी देवता परिकीर्त्तिता ॥ विद्वांस्तृतीयबीजेन षडङ्गन्यासमाचरेत् ॥ ३०८ ॥ सुषुम्णाग्रे भ्रुवोर्मध्ये रन्ध्राणां नवमे तथा ॥ मन्त्राक्षराणि विन्यस्य चिन्तयेदिष्टदेवताम् ॥ ३०९ ॥ हंसपृष्ठस्थपद्मस्थां कान्तकर्पूरसन्निभाम् ॥ चन्द्राननां मन्दहासां चन्द्रार्धकृतशेखराम् ॥ ३१० ॥ पुस्तकं च करैर्वीणां जपमालां सुधाघटम् ॥ इति ध्यात्वा यजेत्पीठे मातृका याः पुरोदिताः ॥ ३११ ॥ वर्णाद्येनाशनं दद्यान्मूर्तिं मूलेन कल्पयेत् ॥ तस्यामावाह्य तां देवीमर्चयेद्गन्धपुष्पकैः ॥ ३१२॥ संपूज्य पार्श्वयोर्वाचौ संस्कृते प्राकृते उभे ॥ ततोऽङ्गानि च तच्छक्तीर्मातृर्लोकेश्वरानपि ॥ तदस्त्राणि ततो बाह्ये देवीमित्थं प्रपूजयेत् ॥ ॥ ३१३ ॥ प्रज्ञा मेधा श्रुतिः शक्तिः पञ्चमी स्मृतिरीरिता॥ वागीशी सुमतिः स्वस्तिरष्टौ तच्छक्तयो मताः ॥ ३१४॥ वर्णैकाधिकलक्षन्तु जपेन्मन्त्रं समाहितः ॥ तत्सहस्रं प्रजुहुयात्सिताब्जैर्नागचम्पकैः॥ तर्प्पणादि ततः कुर्य्यात्साधको नियतव्रतः ॥ ३१५॥ इमं मनुं यो भजते पातकैर्मुच्यतेचिरात् ॥ लक्ष्मीयशःकान्तियुतः कवित्वस्यालयं भवेत् ॥ ३१६॥ कुर्य्यात्पूर्वानुगादितान्प्रयोगानत्र मन्त्रवित् ॥ अथ मन्त्रान्तरं वक्ष्ये यत्तस्याः षोडशार्णकम् ॥ ३१७ ॥ ऐंकारं पूर्वमुच्चार्य्य नमो भगवतीति च ॥ वेदयुग्मं च वाग्देवी स्वाहान्तो मन्त्र ईरितः ॥ ३१८ ॥ पूर्वमन्त्रोदिताश्चात्र मुन्याद्याः सम्प्रकीर्तिताः ॥ पदैर्मन्त्रस्य षड्भिः स्यात्षडङ्गं चैव जातिमत ॥ ३१९ ॥ कुन्देन्दुभासिवसनां श्वेतमाल्यानुलेपनाम् ॥ वनमालां तथा व्याख्यां मुद्रां पुस्तकमेव च॥ ३२०॥ सुधाकुंभं हस्तपद्मैर्दधतीं श्वेतपद्मगाम् ॥ त्र्यक्षां चन्द्रार्धभालां च पीनोन्नतपयोधराम् ॥ ३२१ ॥ प्राग्वत्पूजाप्रयोगादिविशेषोत्र निगद्यते ॥ अष्टलक्षं जपेन्मन्त्रं हविष्याशी जितेन्द्रियः॥ ३२२ ॥यथाविधि जपान्ते च तद्दशांशं हुनेत्तिलैः॥आज्याप्लुतैस्तर्पणादि सर्वं पूर्ववदाचरेत्॥ ३२३॥अह्नो मुखे प्रत्यहं य एतज्जप्त्वा जलं पिबेत्॥संवत्सराद्भवेद्विद्वान्नात्र कार्य्या विचारणा॥ ३२४॥

स्नानकाले मन्त्रजप्तैस्तोयैः सिञ्चेत्स्वमूर्धनि ॥ सर्वैस्तोयैस्तर्पयेत्तां मेधा वंशे भवेद्ध्रुवम् ॥ जपित्वा मन्त्रमेतं च पुष्पगन्धादिकं सुधीः ॥ ३२५ ॥ शिरसा धारयेत्तेन सभापूज्यः स जायते ॥ वादे च विजयो नित्यं भवेत्तस्य न संशयः ॥ ३२६ ॥ अन्यन्मन्त्रान्तरं चास्या वक्ष्यते रुद्रवर्णकम् ॥ ऐं वाचस्पते अमृते प्लुवः प्लुरिति कीर्तितः ॥ दशाक्षरवदस्यान्यत्पञ्चांगं तु मनोः परैः॥ ३२७ ॥ पद्मसंस्थां पद्मयुगाक्षमालापुस्तकानि च ॥ करैर्दधानां चन्द्रार्धमुकुटां त्रीक्षणां सिताम् ॥ नानामुनिनुतां नम्रां स्तनभारेण ताम्भजे ॥ ३२८ ॥ यजेच्च मातृकापीठे दशार्णोक्तेन वर्त्मना ॥ प्रयोगादि प्रकुर्वीत पूर्ववद्वै दशार्णवत् ॥ ३२९ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि विघ्नराजं विनायकम् ॥ योगिनी पाशहस्तास्य वंशारोहणकारिणी ॥ सरस्वती शक्तिरस्य त्र्यर्णा चेटीत्रयान्विता ॥ ३३० ॥ चारुस्वामीति मन्त्रोऽस्य विप्राणां परिकीर्त्तितः ॥ वाक्तुरस्वामीति संजप्यः क्षत्रियैः परतापकैः ॥ ३३१ ॥ ग्वारुं स्वामीति वैश्यानामैरुं स्वाम्यंघ्रिजन्मनाम् ॥ ऋष्यादिकं दशार्णोक्तं देवी त्र्यर्णा सरस्वती ॥ ३३२ ॥ द्विरुच्चारितमूलेन षडङ्गं जातिसंयुतम् ॥ करन्यासं विधायाथ ध्यायेद्देवीं सरस्वतीम् ॥ ३३३ ॥ मुक्ताहारसमायुक्तां चन्द्रार्धकृतशेखराम् ॥ व्याख्यामुद्रा रत्नकुम्भं त्वक्षमालां च पुस्तकम् ॥ ३३४ ॥ पीनोत्तुङ्गकुचानम्रां श्वेताब्जस्थां सरस्वतीम्॥ ३३५ ॥ पुरा प्रोक्ते मातृकायाः पीठे देवीं समर्चयेत्॥ यथापूर्वं प्रत्यहं यः स भवेद्वाक्पतिर्ध्रुवम् ॥ ३३६ ॥ वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं हविष्याशी जितेन्द्रियः ॥ आज्याक्तहविषा वह्नौ दशांशं जुहुयात्ततः ॥ ३३७॥ तर्पणादि ततः कुर्य्यात्प्रागुक्तविधिना ततः ॥ एवं सिद्धमनुर्मन्त्री प्रयोगान्कर्तुमर्हति ॥ ३३८ ॥ चतुरंगुलसम्भूतैः सुमनोभिर्हुनेत्तु यः ॥ वाचः सोऽप्रतिमां सिद्धिमचिराल्लभते ध्रुवम् ॥ ३३९ ॥ कुचन्दनोदकेनाक्तैर्जातीपुष्पैः सिताम्बुजैः ॥ नंद्यावर्तोद्भवैः कुन्दसंयुतैः कुसुमैर्हुनेत् ॥ ३४० ॥ अचिरादतुलां वाचां सिद्धिं प्राप्नोत्यसंशयम् ॥ एवं मन्त्रं जपेन्मन्त्री सभायां जयमाप्नुयात् ॥ ३४१ ॥ वचां श्वेतां तथा ब्राह्मीं जपितां मनुनामुना ॥ अह्नो मुखे च यः खादेत्स मेधां

वाञ्छितां लभेत् ॥ ३४२ ॥ पाण्डवी पृथुमध्या च पार्थिवा चेति चेटिकाः॥ ॐपाण्डवीति बगले ततश्च बगलामुखि ॥ ३४३ ॥ शत्रोः पादं स्तम्भय-द्विः क्लींह्रीं भुवंचरे वदेत् ॥ स्क्रींस्वाहेति त्रिंशार्णो मन्त्रो ध्यानं निरूप्यते ॥ ३४४ ॥ पीताम्बरां पीतवर्णां पीतगन्धानुलेपनाम् ॥ श्वेतासनां पीतवर्णां विचित्रां पाण्डवीं भजे॥ ३४५॥ अयुतत्रितयं जप्त्वा कुसुम्भकुसुमैर्हु-नेत् ॥ एवं कृत्वा पुरश्चर्य्यां पश्चात्साधनमाचरेत् ॥ ३४६ ॥ वत्सरादौ प्रति-पदि शुक्रवारे जपेन्निशि ॥ अयुतं तद्दशांशेन कुसुम्भकुसुमैर्हुनेत् ॥ ३४७॥ प्रसन्ना जायते देवी वस्त्रमेकं ददाति च ॥ वैरिणोद्वेगतो बद्धं गतिस्तम्भः प्रजायते ॥ ३४८ ॥ कार्त्तिके कृष्णषष्ठ्यान्तु वटवृक्षतले स्थितः ॥ जप्त्वा युतं चूतपत्रैः ससुगन्ध्यगुरूद्भवैः ॥ तैलयुक्तैर्भवेद्धोमः पृथुमध्या प्रसीदति ॥ ३४९ ॥ ददाति पीठं तत्रस्थो दृष्ट्या रामाश्च मोहयेत् ॥ वहन्ति पञ्च-भूतानि तत्पीठं तेन खे गतिः ॥ ३५० ॥ उन्मत्तजनगां देवीं स्थूलाङ्गीं कलहप्रियाम् ॥ कार्त्तिकेयगुहाखेलां पृथुमध्यां भजाम्यहम् ॥ ३५१ ॥ ॐ पार्थिवे च पृथिवीतलचारिणि वायुमा॥ ततो लिनि च तारुण्यं कुरुयुग्मं च धं च धम् ॥ ३५२ ॥ स्वाहैकोनात्रिंशदर्णः पार्थिवाया मनुः स्मृतः ॥ नदीतीरे वृष्टिकाले चतुर्दश्यां निशान्तरे ॥ ३५३ ॥ कूलं खनित्वा कुहरं कर्त्तव्यं युगसप्तकम् ॥ जपस्यार्धायुतो होमः कदलीखण्डकैस्तथा ॥ ३५४ ॥ पृथिवीतलसञ्चारशालिनीं वायुमालिनीम् ॥ भजामि पार्थिवीं देवीं तारुण्याङ्क-प्रदां शिवाम् ॥ ३५५ ॥ तुष्टा ददाति सा शक्तिं पृथिव्यन्तरचारिणीम् ॥ जरामरणराहित्यं सम्भवेच्चैव सर्वगः ॥ ३५६ ॥ विनायकस्तु प्रवरो दण्डहस्ता-स्य योगिनी ॥ रज्जुरोहास्वरूपा सा चेटी कंकालिका मता ॥ ३५७ ॥ ऐं कंकालीमहाकालीकलिकलाभ्यामुच्चरेत् ॥ स्वाहान्तःस्थितिवर्णोयं लक्षमस्य जपो मतः॥ ३५८ ॥ हुनेदस्य सहस्रैकं कंकाली वरदा भवेत् ॥ ईप्सितं तत्साधकस्य तदेकं सा प्रयच्छति॥ ३५९॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि गणेशं मोदक-प्रियम्॥ प्रचण्डा योगिनी चास्य चेटिका पंकवासिनी॥ ३६०॥ ॐ पंकवासिनी पंकजावती वनेदवते ॥ केदारं देहि सिद्धिं च कुरु द्विः कामबीजकम् ॥ रमा

बीजं वह्निजाया चैकत्रिंशाक्षरो मनुः ॥ ३६१ ॥ वैशाखे पञ्चसरासि स्वल्पोदे जलवर्जिते ॥ सप्तरात्रं जपेन्मन्त्रं दिवसे लक्षसङ्ख्यया ॥ होमस्तत्पत्रपुष्पैश्च देव्या ध्यानं निरूप्यते ॥ ३६२ ॥ पंकजाक्षि निशि वै शिवदूति स्मेरवक्त्र-नयनाम्बुजलीले।।मानसे मम वस स्मरदेवि प्रत्यहं कमलकाननसंस्थे॥ ३६३॥ सदा देवी समागत्य त्रिजगद्वशकारकम् ॥ ददाति केशरं चैकं कल्पपुष्पाति-गन्धवत् ॥ ३६४ ॥ घर्षयित्वास्य तिलके कृते स्यादखिलं जगत् ॥ वश्यं राजस्त्रियो भूपाः पण्डिता देवता अपि ॥ ३६५ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि पूर्वदिक्स्थान्विनायकान् ॥ महाश्मशानमावृत्य स्थितानभ-यदायकान् ॥ ३६६ ॥ प्रथमं मनवश्चैषां स्वबीजहृदयादिकम् ॥ चतु-र्थ्यन्तं भवेन्नाम योगिनी वसुविक्रमा ॥ ३६७ ॥ चेष्टां वातुलवत्कुर्य्यात्पा-रिजातसरस्वती ॥ अस्य शक्तिस्तु तन्मन्त्रः प्रोक्त एकादशाक्षरः ॥ ३६८ ॥ ॐ ह्रीं हंसवर्णाश्च सैकारा बिन्दुसंयुताः ॥ पुनर्ह्रीं माँ सरस्वत्यै हृदयान्तो मनुर्मतः ॥ ३६९ ॥ ऋषिध्यानन्यासजपं हंसवागीश्वरीमतम् ॥ प्रयोगाश्चापि सिद्ध्यन्ति पूर्वोक्ताः सर्व एव हि ॥ ३७० ॥ वरानना चेटिकास्य तस्याः साधनमुच्यते ॥ वरानने पदं चोक्त्वा वामलोचन इत्यपि ॥ ३७१ ॥ परस्य मारिणी चोक्त्वा मालिनीद्वितयं ततः ॥ धुंधुंधीं वह्निजायान्तो मनुः षट्त्रिं-शदर्णकः॥ ३७२॥सौन्दर्य्यामृतसन्दोहसारभूतामिमां पराम् ॥ विवर्धितां स्थिरां देवीं सम्भजे तां वराननाम् ॥ ३७३ ॥ रथ्याद्वारे कुजे कृष्णसप्तम्यां तु शुचिर्यजेत् ॥ सहस्रत्रितयं होमः शङ्खैश्चापि कपर्दकैः ॥ ३७४ ॥ ततः स्त्रीरूपिणी दद्यात्कपर्दकं वरानना ॥ कपर्दं स्थापयेद्यत्र कणादीनां कुशूलके ॥ ३७५ ॥ त्रिदिनावधि तद्धान्यं विक्रीतं नैव हीयते ॥ ततो धान्यान्तरं स्थाप्यं वृद्धिस्तत्रापि जायते ॥ ३७६ ॥ सिंहतुण्डो गणाध्यक्षो वेणुप्रा चास्य योगिनी ॥ पृथिव्यावेष्टनकरी सप्तकोटेश्वरी मता ॥ ३७७ ॥ शक्ति-श्चेटी विधुश्रेष्ठा ततः साधनमुच्यते ॥ कः स उक्त्वा चाण्डिकां च सः कः सप्ताक्षरो मनुः ॥ ३७८ ॥ ऋषिर्ब्रह्मा च गायत्री छन्दः प्रोक्तं च देवता ॥

सप्तकोटेश्वरी देवी वागैश्वर्य्यकरी मता ॥ ३७९ ॥ षडूदीर्घयुक्चकारेण[1] षडङ्गं सम्प्रकीर्तितम् ॥ अस्याः पूजादिकं सर्वं त्रिपुरावत्प्रकीर्तितम् ॥ ३८० ॥ विधुश्रेष्ठामनुं वक्ष्ये विधुश्रेष्ठे[2] विपद्गते ॥ मानं पूरय कर्णान्ते ताटङ्कं देहि युग्मकम् ॥ थं लक्ष्मीर्वह्निजायान्तः सप्तविंशाक्षरो मनुः ॥ ३८१ ॥ चित्रायां सोमवारे च यदा सोमग्रहो भवेत् ॥ यावद्विधुविमोक्षः स्यात्तावन्मन्त्रञ्जपे-ज्जले ॥ ३८२ ॥ तदा देवी तु ताटङ्कं दद्यात्सव्यश्रुतिस्थितम् ॥ पूर्णचन्द्र-प्रभाभन्तदमाम्पूर्णां करोति च ॥ ३८३ ॥ साधको लोकमान्यश्च ध्यान-मस्या निरूप्यते ॥ चन्द्रमण्डलसंस्थान्तां विधुश्रेष्ठां वियद्गताम् ॥ काश्मी-रचारुताटङ्कां ध्यायामि शिववल्लभाम् ॥ ३८४ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि कुपिताक्षङ्कजाननम् ॥ पापहन्त्री योगिनी तु पुत्रदारूपधारिणी ॥ ३८५ ॥ कुपिताक्षस्य शक्तिस्तु बाला स्याद्वामलोचना ॥ अस्य चेटी समाख्याता तस्याः साधनमुच्यते ॥ ३८६ ॥ ऐंक्लींसौरिति बालायास्त्र्यक्षरो मन्त्र उच्यते ॠषिस्तु[3] दक्षिणामूर्तिः पंक्तिश्छन्दोस्य देवता ॥ ३८७ ॥ बालाबीजं वाङ्मयं स्यात्तार्त्तीयं शक्तिरुच्यते ॥ कीलकं कामराजः स्याद्द्विरावृत्त्या षडङ्ग-कम्[4] ॥ ३८८ ॥ यथा त्रिपुरभैरव्यास्त्र्यर्णन्यासाः पुरोदिताः ॥ एतद्बीजेन ते सर्वे कर्त्तव्यास्तत्फलाप्तये ॥ ३८९ ॥ अभयं पुस्तकं मालां वरं च दध-तीङ्करैः ॥ अरुणामरुणाब्जस्थां रक्तवस्त्रां द्विजेशकाम्[5] ॥ ३९० ॥ यन्त्रो-द्धारञ्च पूजायाम्पूजयेत्सकलन्तथा ॥ ज्ञेयं त्रिपुरभैरव्यास्त्र्यक्षरायाश्च तत्समम् ॥ ॥ ३९१ ॥ जपो लक्षत्रयं होमे द्रव्याद्यं तद्वदेव हि ॥ कुमारीपूजनं नित्यं काम्यसिद्ध्यर्थमुच्यते ॥ ३९२ ॥ मालतीजातिकामल्लीकुसुमैर्मधुमिश्रितैः ॥

---

१ चां हृदयाय नमः, चीं शिरसे स्वाहा, चूं शिखायै वषट्, चैं कवचाय हुम्, चौं नेत्रत्रयाय वौषट्, चः अस्त्राय फट् । २ ॐ विधुश्रेष्ठे विपद्गते मानं पूरय कर्णताटङ्कं देहिदेहि थं श्रीं स्वाहा ३ अस्य श्रीबालामन्त्रस्य दक्षिणामूर्तिर्ॠषिः पंक्तिश्छन्दः बाला देवता ऐं बीजम् सौः शक्तिः । क्लीं कीलकं बालादेवताप्रीतये चेष्टसाधने विनियोगः ॥ ४ ऐं क्लीं सौः ऐं क्लीं सौः एभिः षड्बीजैः षडङ्गन्यासं कुर्य्यात् यथा ऐं हृदयाय नमः, क्लीं शिरसे स्वाहा, सौः शिखायै वषट्, ऐं कवचाय हुं, क्लीं नेत्रत्रयाय वौषट्, सौः अस्त्राय फट् । ५ द्विजेशः के यस्या इति विग्रहः ॥

घृतचूर्णैश्च जुहुयाद्वागीशत्वं प्रजायते ॥ मूकस्यापि हि मूढस्य शिलारूपस्य नान्यथा ॥ ३९३ ॥ जपापुष्पैराज्ययुतै रक्तक्षीरैर्यथाविधि ॥ हवनान्मोहयेन्मन्त्री लोकत्रयनिवासिनः ॥ ३९४ ॥ कस्तूरीकुंकुमेन्दूनां हवनात्कामवद्भवेत् ॥ चम्पकैः पाटलैर्होमान्महतीं श्रियमाप्नुयात् ॥ ३९५ ॥ गुग्गुल्वगुरुकर्पूरचन्दनानां च होमतः ॥ राजनागेन्द्रदेवानां पुरन्ध्रीर्वशमानयेत् ॥ ॥ ३९६ ॥ लाक्षाहोमाल्लभेद्राज्यं पक्वान्नमधुहोमतः ॥ उपसर्गनिवृत्तिः स्यात्कह्लारहवनाद्धनम् ॥ ३९७ ॥ दुग्धेनायुर्धनं दध्ना मेधारोग्यं घृतेन तु ॥ समिद्भिर्जायते क्षीरं मधुना मृत्युनाशनम् ॥३९८॥दधिमाक्षिकहोमेन सौभाग्यं धनमाप्नुयात् ॥ कह्लारहवनाद्भाग्यं मधुरत्रयरक्तयुक् ॥ ३९९ ॥ छागमांसं हुनेत्सर्वं परराष्ट्रं वशं नयेत् ॥ वैरिस्तम्भः सिताहोमाल्लाक्षाक्षीरपयोदधि ॥ हुतं तदल्पमृत्योश्च रोगाणां चापि नाशनम्॥ ४०० ॥ कमलैररुणैर्होमःसम्यक्सम्पत्तिदायकः ॥ रक्तोत्पलैर्जगद्वश्यं लक्ष्मीर्भाग्यं सितोत्पलैः ॥ ४०१ ॥ दाडिमं मातुलुङ्गं च नारङ्गं सकलं क्रमात् ॥ कूष्माण्डं जुहुयाद्विप्रादिका वश्या न संशयः ॥ ४०२ ॥ खर्ज्जूरीफललक्षस्य होमात्सर्वे नृपा वशाः ॥ द्राक्षा लाक्षासिद्धयष्टीकदलीफलहोमतः ॥ ४०३ ॥ लक्षाद्विंशतिराजानो वश्या स्तस्य महीपतेः ॥ नालिकेरेण लक्षं चेद्धुतोग्निर्नृपवद्भवेत् ॥ ४०४ ॥ पक्वाम्रलक्षहोमेन सम्पूर्णा धरणी वशा ॥ पनसस्य फलैर्लक्षहोमाद्वश्याः शतं नृपाः ॥ ४०५ ॥ गुग्गुलूनां तु होमेन सर्वदुःखानि नाशयेत् ॥ वश्याः सर्वे तिलाज्याभ्यां चन्दनेन तु शत्रवः ॥ ४०६ ॥ रक्तचन्दनहोमेन वश्याः स्युः पुरुषाः स्त्रियः ॥ खर्ज्जूरस्य तु होमेन वाग्वश्यं जायते नृणाम्॥ ॥ ४०७ ॥ कस्तूरीहोमतो भूपा मन्त्रिणः परिचारकाः ॥ नीलतण्डुलहोमेन शान्तिर्भवति मन्दिरे ॥ ४०८ ॥ शर्कराघृतहोमेन सर्वकार्य्याणि साधयेत् ॥ घृतपायसहोमेन धान्यसिद्धिर्भवेद्ध्रुवम्॥४०९॥तत्तदन्नस्य होमेन

१ मृगमदकाश्मीरकर्पूराणाम् । २ महामारीशान्तिः । ३ मधु । ४ अजपललम् । परंत्विदं ब्राह्मणादिवर्ज्यम् शूद्रोऽपि विशुद्धचित्तो नैतदधिकारी भवितुं शक्नोति । कुतः—'अहिंसा परमो धर्मश्चाहिंसा परमं तपः' इति भाषणात् ॥ ५ इदमुत्तरान्वयि ॥ ६ बीजपूरकप्रभेदः ॥

तत्तत्सिद्धिः प्रजायते ॥ सोपस्करैश्च वटकैरुपसर्गान्विनाशयेत् ॥ ४१० ॥ बन्धूककुसुमैर्होमात्सर्वसत्त्वं वशं नयेत् ॥ जपापुष्पैर्जगद्वश्यं बाणपुष्पैश्च मोहनम् ॥ ४११ ॥ बहुलस्य द्रुनेत्पुष्पैः सौभाग्यं जायते महत् ॥ दशाङ्गधूपहोमाच्च सौभाग्यमतुलं भवेत् ॥ ४१२ ॥ जम्बूफलैः स्त्रियो वश्याः कूष्माण्डैर्दैत्यकन्यकाः ॥ श्रीफलैरतुला लक्ष्मीरिक्षुदण्डैः सुखं भवेत् ॥ ४१३ ॥ रसादिक्षो राजकन्या नालिकेरफलेन वा ॥ केवलं घृतहोमेन वरदाः सर्वशक्तयः ॥ ४१४ ॥ वामी तु संगमात्पूर्वं प्रजपेद्वामचक्षुषः ॥ शतमात्रं पौर्णमास्यां विशाखादित्यसंगमे ॥ ४१५ ॥ सद्यः प्रसन्ना देवी स्याद्वीर्य्यस्तम्भं ददाति सा ॥ अपि कांताशतासंगे नासौ स्खलति मानवः ॥ ४१६ ॥ रतिदेवीं रतिप्रीतिं कामकीर्तिं मनोरमाम्॥ मम कामप्रदां सद्यः सम्भजे वामलोचनाम् ॥ ४१७ ॥ ईं लीं भीं रं समुच्चार्य वमुक्त्वा वामलोचने॥वीर्य्यं स्तम्भय द्वि श्चोक्त्वा नादे माकुरु चोच्यते ॥ ४१८ ॥ पञ्चविंशतिवर्णोयं स्वाहांतो मंत्र ईरितः ॥ मदनांधो लक्षजपात्सिध्येद्वा वामलोचना ॥ ४१९ ॥ प्रागुक्तो यस्तु विघ्नेशो नाम्ना क्षिप्रप्रसादनः ॥ काली च योगिनी तस्य शक्तिर्वागीश भैरवी ॥ चित्राक्षी चेटिका चास्य पुरे वसति योगिनी ॥ ४२० ॥ स्थैं ह्रीं चैव समुच्चार्य्य नित्यक्लिन्नेपदं वदेत् ॥ मदद्रवे च सहरा औकारेण समन्विताः ॥ ४२१ ॥ एकादशाक्षरो मंत्रो न्यासध्यानादिकं तथा ॥ चैतन्यभैरवीतुल्यं विशेषोयं च पूजने ॥ ४२२ ॥ अग्रकोणे च चैतन्यनित्यक्लिन्नां मदद्रवाम् ॥ षडंगावरणं पश्चादन्यत्सर्वं यथोक्तवत् ॥ ४२३ ॥ तुल्यश्चैतन्यभैरव्याः प्रयोगादिः प्रकीर्तितः ॥ चित्राक्ष्याः साधनं वच्मि तदेकांते नदीतटे ॥ ॥ ४२४ ॥ षट्कोणं मण्डलं कृत्वा तोयपूर्णान्घटान्न्यसेत् ॥ कोणषट्के तत्र सुराञ्छक्रादींस्तु प्रपूजयेत्॥इन्द्रं विधिं यमं कालं विष्णुमीशं क्रमेण च ॥४२५॥ अक्षय्यमावृतोयोथमारम्भस्य प्रकीर्तितः ॥ तदूर्ध्वमासनं कृत्वा मध्याह्ने प्रजपेन्मनुम् ॥ नित्यं शतत्रयं होमस्त्विरेलायाः फलैर्भवेत् ॥४२६॥

१ स्थैं ह्रीं नित्याक्लिन्ने मदद्रवे स्होम् इति मन्त्रः ॥ २ चित्राक्षि चित्ररूपेण रुद्रादिप्रेतसंस्थे प्रसीद श्रीश्रींस्वाहा ॥

कुर्य्यादेवं प्रत्यहन्तु तृतीया त्वाष्ट्रसंयुता ॥ सोमेन रविणा वापि यदा युक्ता भवेत्तदा ॥ ४२७ ॥ प्रातः कालाज्जपः कार्य्यो घटाद्देवी वदेत्स्फुटम् ॥ येषु कुम्भेषु यद्द्रव्यं स्थापनीयं तथा तु तत् ॥ भविष्यति तदक्षय्यं ध्यानमस्या निरूप्यते ॥४२८॥ रुद्रादिप्रेतमौलिस्थां कलशांकुरमालिनीम् ॥ चित्राक्षीं चित्रवेषां तां सम्भजे परमेश्वरीम् ॥ ४२९ ॥ चित्राक्षि चित्ररूपेण रुद्रादि प्रेतसं वदेत् ॥ स्थे प्रसीदेति युगलं श्रीं स्वाहा त्रिद्विवर्णकः ॥ ४३० ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि चिन्तामणिविनायकम् ॥ योगिनी लक्षणज्ञास्य नाम्ना रुधिरवाहिनी ॥ ४३१ ॥ षट्कूटभैरवी शक्तिश्चित्रकण्ठचस्य चेटिका ॥ हसकलरकारांश्च डकारैकारसंयुतान् ॥४३२॥ बिन्दुयुक्तान्कूटरूपो मनुरस्याः प्रकीर्तितः ॥ सम्पत्प्रदा भैरवीवत्सर्वं न्यासादिकं मतम् ॥ ४३३ ॥ समस्तं चिंतितं दद्याद्रिपुभारविनाशिनी ॥ सेनाविनायकः काश्यां स्थापितस्त्वनया-पुरा ॥ ४३४ ॥ अथातः साधनं वक्ष्ये चित्रकन्यां समासतः ॥ चैत्रशुक्ल-चतुर्दश्यां वसन्ते निशि सञ्जपेत् ॥ ४३५ ॥ सहस्रत्रितयो होमो मधूककु-सुमैर्भवेत् ॥ त्रिंशत्सहस्रं सा देवी तदा दद्याच्च मंत्रिणे ॥ ४३६ ॥ कोकिलास्वरमत्यन्तमोहनं जगतामपि ॥ अपि पक्षिमृगादीनामुरगाणा च मोहनम् ॥ ४३७ ॥ चूतांकुरावतंसा सा वीणानादनिनादिनी ॥ शुक्ला म्बरा शिवाङ्कस्था रक्तकञ्चुकधारणी ॥ ४३८ ॥ चित्रकण्ठि चित्रनादस्वरं देहियुगं तथा ॥ भरिंस्विाहेति मन्त्रोयं मैन्वर्णः[1] परिकीर्तितः॥४३९॥अथातः सम्प्रवक्ष्यामि दन्तिहस्तं विनायकम् ॥४४०॥वसाधया योगिनी च चित्ररेखा-स्वरूपिणी॥पञ्चबाणेश्वरी शक्तिश्चिह्नगम्या च चेटिका ॥४४१ ॥ द्रां ह्रीं क्लीं क्लूं स इत्येष बाणेश्वर्य्या मनुर्मतः॥ऋषिः कामस्तु गायत्री छन्दो बाणेश्वरी सुरी ॥४४२॥ एकाक्षरेण सर्वैश्च मनोर्वर्णैः षडङ्गकम्॥४४३॥रक्तवस्त्रामिक्षुधनु-ष्पुष्पकोदण्डधारिणीम्॥सालङ्कारां च सूर्य्याभां बाणेशीं सुन्दरीं भजे॥४४४॥ त्रिपुरेशीं च संपूज्य मोहयेत्सकलं जगत् ॥ पञ्चलक्षं जपेद्धोमो बन्धूककुसु-मैर्मतः ॥ ४४५ ॥ कृष्णपक्षे चतुर्थ्यां तु चित्रायां सोमवासरे ॥ ध्यात्वायुतं

---

१ चतुर्दशाक्षरः ॥

जपेद्रात्रौ तदा सा वरदा भवेत् ॥ प्रयोगाद्यं सर्वमस्यास्त्रिपुरावत्प्रकीर्त्तितम् ॥ ४४६ ॥ तत्र रात्रौ गृहे सम्याग्दिव्यान्नं यावदीप्सितम्॥तावद्ददाति हेम-न्त्रिन्दिव्यभोगानपि ध्रुवम् ॥ ४४७ ॥ मन्त्रस्तु दिव्यकमले चिह्नाङ्के मे प्रसीद च ॥ श्रींस्वाहा तिथिवर्णोयं ध्यायेत्कण्ठेब्जकस्रजाम् ॥ ४४८ ॥ हस्ते चामृतकुम्भं च सालंकारां मनोहराम् ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि पिचिण्डिलवि-नायकम् ॥ ४४९ ॥ सिद्धिप्रदं राक्षसानां गर्भहस्तास्य योगिनी ॥ मनोहरा कर्म्मकरी चेटी चास्य त्रिलोचना ॥ ४५० ॥ नारी रम्याभिधा मन्त्रस्त्रयो-विंशतिवर्णकः ॥ आदौ तारं ततो नारीं रम्य। कमलवासिनीम् ॥ ४५१ ॥ त्वं नारीं मोहयद्वन्द्वं क्लीं स्वाहा ध्यानमुच्यते ॥ लग्नां कल्याणमूर्त्तिं च मोह-रूपां स्थितां वने ॥ पद्मानां प्रार्थितां शम्भुविष्णुब्रह्मादिकैः सुरैः ॥ ४५२ ॥ मार्गकृष्णचतुर्दश्यां भौमरात्रौ सरस्तटे॥त्रिसहस्रं जपेत्पश्चान्नारङ्गैर्होममाचरेत्॥ ॥४५३॥ चिह्निता स्त्री भवेद्वश्या प्राणैरपि धनैरपि॥ यदा चेच्छा भवेत्स्त्रीणां नारीं रम्यां तदा जपेत् ॥ ४५४ ॥ उद्दण्डमुण्डहेरम्बमथ वक्ष्ये समासतः ॥ योगिनी शरहस्तास्य रूपतः सा वशंकरा ॥ निधिप्रान्ता चेटिकास्य मन्त्रोऽ-स्यास्तिथिवर्णकः ॥ ४५५ ॥ वदेत्तारं निधिप्रान्ते निधिं देहिद्वयं रमा ॥ स्फ्रींस्वाहेति च मन्त्रोयं ध्यायेद्देवीं त्रिमालिनीम् ॥ ४५६ ॥ रसायननिधि प्रीतां भवलक्ष्मीनिधिप्रदाम् ॥ आषाढशुक्लसप्तम्यां चतुर्थ्यां वा समाहितः ॥४५७॥ जपेत्सप्तशतं मन्त्रं पलाशतरुसन्निधौ ॥ पलाशमूलैरत्यन्तैः कोम-लेर्होममाचरेत् ॥४५८॥ततो देवी निधिप्रान्ता मन्त्रिणे तोषमागता ॥ ददाति निधिमेकं हि त्रैलोक्येपि सुदुर्लभम्॥ ४५९ ॥एतासामष्टचेटीनां द्वात्रिंशच्च सहस्र-कम् ॥ निर्जने च वटाधस्ताद्वा गणेशसमीपतः ॥ जपः कार्य्यस्तदा सिद्धिर-र्चयित्वा गणेश्वरम् ॥४६०॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि नगरावरणे स्थितान् ॥ स्थूलदन्तादिकानष्टौ गणेशान् योगिनीयुतान् ॥ शक्तिभिश्चेटिकाभिश्च युक्ता-न्गम्बीजपूर्वकान् ॥ ४६१ ॥ तद्बीजं च पठेन्नाम ङेन्तं भगवते पदम्॥हृदया-

१ ॐनारि रम्ये कमलवासिनि त्वं नारीं मोहयमोहय क्लीं स्वाहा इति मन्त्रः ॥ २ ओंनिधिप्रान्ते निधिं देहिदेहि श्रीं स्फ्रीं स्वाहा ॥

न्तस्तथाष्टानां मन्त्रोयं परिकीर्त्तितः॥ ४६२ ॥ पञ्चकामेश्वरी चास्य शक्ति-स्तन्मन्त्र उच्यते ॥ ह्रीं क्लीं ऐं ब्लूमिति प्रोच्य श्रीं मन्त्रः पञ्चवर्णकः॥४६३॥ ऋषिः सम्मोहनश्छन्दो गायत्रं देवता मता ॥ कामेशी च षडङ्गानि पृथग्वर्णै-[1]स्ततोखिलैः ॥ ४६४ ॥ रक्तां रक्तदुकूलाङ्गलेपनां रक्तभूषणाम् ॥ पाशांकु-शशरानक्षमालिकामभयं धनुः ॥ ४६५ ॥ पुस्तकं च वरं हस्तैर्बिभ्राणां वश-कारिणीम् ॥ पञ्चकामैः परिवृतामस्याः पूजादिकं भवेत् ॥ ४६६ ॥ वाणे-श्वरीसमानं तु वामे कामौ तथार्चयेत् ॥ उदग्दक्षिणयोर्देव्याः स्थलेषु त्रिषु यो-गिनीः ॥ अञ्जनानां सिद्धिकरी नष्टवेषास्य चेटिका॥ ४६७ ॥तारं च नष्ट-वेषे च भ्रामिणीं ह्रींद्वयं वदेत्॥स्त्रींस्त्रीं स्वाहा विश्ववर्णो मन्त्रो ध्यानं निरूप्यते ॥ ४६८ ॥ मांसं च रुधिरं सद्यश्चर्वयन्तीं सुभीषणाम् ॥ प्रेतासनां महादेवीं नष्टवेषां भजाम्यहम् ॥ ४६९ ॥ जपेत्सहस्रत्रितयं कृष्णाष्टम्यां महानिशि ॥ होमश्च गजदन्तेन दशांशस्तुष्यति त्वियम् ॥ ४७० ॥ ददाति मन्त्रिणे चार्द्र-मस्थि तेन तु साधकः॥ भूतप्रेतपिशाचादीन्खेलन्संवशयेदपि॥४७१॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि कलिप्रियगजाननम्॥योगिन्यस्य बृहत्कक्षी गुटी सिद्धिप्रदा मता ॥ त्रिवर्णेशी शक्तिरस्य क्लीं ऐं सौश्च मनुर्मतः ॥४७२॥ द्विरावृत्त्या षडङ्गानि पञ्चबाणान्प्रविन्यसेत्॥ पञ्चकामांश्च विन्यस्य मूलेन व्यापकं चरेत्॥४७३॥ उद्यत्सूर्य्यसहस्राभां माणिक्यवरभूषणाम् ॥ स्फुरद्रत्नदुकूलाढ्यां नानालङ्कार भूषिताम् ॥ ४७४ ॥ इक्षुकोदण्डबाणांश्च ह्यक्षमालां च पुस्तकम् ॥ दधतीं पूजयेत्पश्चात्षडङ्गानि प्रपूजयेत् ॥ ४७५॥ पञ्चबाणास्ततः पूज्या रत्यादि-त्रितयं ततः ॥ कामाष्टकं ततो भैरवाष्टकञ्चापि मातरः ॥ ४७६ ॥ पीठाष्टकं

---

१ ह्रीं अंगुष्ठाभ्यां नमः, क्लीं तर्जनीभ्यां नमः, ऐं मध्यमाभ्यां नमः, ब्लूं अनामिकाभ्यां नमः, श्रीं कनिष्ठिकाभ्यां नमः ॥ ह्रीं क्लीं ऐं ब्लूं श्रीं करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः, अनयैव रीत्याहृदयादिन्यासमपि कुर्यात् ॥२ एतस्योत्तरत्र सम्बन्धः॥३ ॐ नष्टवेषे भ्रामिणि ह्रींह्रींस्त्रींस्त्रीं स्वाहा ॥ अयं चतुर्दशाक्षरो मन्त्रः क्लीं ऐं सौः क्लीं ऐं सौः द्विरावृत्तैः षड्भिरेभिर्बीजैः षडङ्गन्यासः । यथा क्लीं हृदयाय नमः, ऐं शिरसे स्वाहा, सौः शिखायै वषट्,क्लीं कवचाय हुम्, ऐं नेत्रत्रयाय वौषट्, सौः अस्त्रायफट् ॥ ४ पञ्चबाणानां पञ्चकामानां च नामानि पूर्वं लिखितानि ॥

च लोकेशान्मध्ये देवान्समर्चयेत् ॥ पुरश्चरणकृत्यादि काम्यकर्म्म तथाखिलम् ॥ ४७७ ॥ एतस्यास्त्रिपुरेशी च चेटिकास्यनिनादिनी ॥ निनादिनि[1] च गुटिकां देहि स्त्रीं वह्निगेहिनीम् ॥ ४७८ ॥ द्वादशार्णो मनुर्ध्यानमूर्ध्वकेशीं त्रिलोचनाम् ॥ खेचरीं तां चञ्चलाक्षीं महानादां भजाम्यहम् ॥ ४७९ ॥ अमायां च नरः सायं नद्यां स्नायाद्विशेषतः ॥ कृष्णायां निशि कुर्वीत तत्तीरे चायुतं जपम् ॥ ४८० ॥ कस्तूरीकमलैर्होमो दशांशस्तत्र देवता ॥ महाशब्दं प्रकुरुते भीतिदं ध्यानतत्परः ॥ न बिभेति यदा मन्त्री तदा देवी प्रसीदति ॥ ४८१ ॥ ददाति गुटिकामेकां सिद्धिदां च मनोहराम् ॥ तामादाय भवेन्मन्त्री त्रिलोकीगमनक्षमः ॥ ४८२ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि चतुर्दन्तं गजाननम् ॥ सर्प्पास्या योगिनी चास्य धातुवादक्रियाकरी ॥ ॥ ४८३ ॥ एककामेश्वरी शक्तिः कामबीजं मनुर्मतः ॥ ऋषिः सम्मोहनश्छन्दो गायत्री देवता मता ॥ ४८४ ॥ एककामेश्वरी बीजं कः शक्तिर्बिन्दुरुच्यते ॥ लः कीलकं षडङ्गानि षड्दीर्घान्वितमूलतः ॥ ३८५ ॥ पूर्वोक्तपञ्चबाणांश्च न्यसेद्ध्यानं समाचरेत् ॥ ४८६ ॥ जपाकुसुमसङ्काशां धनुर्बाणकरां स्मरेत् ॥ नानालङ्कारशुभगां मोहयन्तीं जगत्त्रयम् ॥ ४८७ ॥ त्रिकोणं चाष्टपत्रं च ततो भूबिम्बमालिखेत् ॥ मोहिनीं क्षोभिणीं चैव शशिनीं स्तम्भिनीं तथा ॥ ४८८ ॥ आकर्षिणीं द्राविणीं च तथैवाह्लादिनीं मताम् ॥ क्लिन्नां च क्लेदिनीं चापि ततः सिंहासनं यजेत् ॥ ततो देवीं समावाह्यार्चयेन्मुद्राश्च दर्शयेत् ॥ ४८९ ॥ अग्नीशासुरवायव्यमध्यदिक्ष्वङ्गपूजनम् ॥ त्रिपुरायास्ततश्चाङ्गान्यर्चयेच्च दलाष्टके ॥ अनङ्गपदमुच्चार्य्य रूपिणी[2] मदना तथा ॥ ४९० ॥ मन्मथा कुसुमा चेति तदग्रे मदनातुरा ॥ शिरा मेषवला तद्वद्दीपिकाष्टौ समीरिताः ॥ ४९१ ॥ दिगीश्वरास्ततः पूज्य। जपेदर्कसहस्रकम् ॥ हुनेद्बन्धूककुसुमैस्तर्प्पणादि ततश्चरेत् ॥ काम्यप्रयोगा विज्ञेयास्त्रिपुरेश्या यथा तथा ॥ ४९२ ॥ अथातः संप्रवक्ष्यामि चक्रविंशतिसङ्ख्यकान् ॥ गणेशा-

---

१ निनादिनि गुटिकां देहिदेहि स्त्रीं स्वाहा इति मन्त्रः ॥ २ श्लोकोक्तरूपिण्यादिनाम्नाम्पुरीनङ्गपदं युञ्ज्यात यथा अनङ्गरूपिणी । अनङ्गमदना इत्यादि ॥

न्त्राजमातङ्ग्या संबद्धान्योगिनीयुतान् ॥४९३॥ बीजषट्कं गणेशस्य ङेन्तं तन्नाम चोच्चरेत् ॥ नमोन्ता मनवस्तेषां क्रमान्नामानि वच्म्यहम्॥३९४॥अग्रे पृष्ठे द्विदन्तादिद्वितुण्डाक्षो विनायकः ॥ ज्येष्ठो विनायकश्चैव तथा गजविनायकः॥४९५॥विनायकः कालसंज्ञो नागेशाख्यो विनायकः॥अथान्तर्गृहमावृत्य स्थिताञ्छृणु विनायकान् ॥ ४९६॥ तथा सृष्टिगणेशश्च यक्षविघ्नेश एव च॥गजकर्णश्चित्रघण्टः स्यान्मङ्गलविनायकः ॥४९७॥ विनायकश्च मित्रादिरथ वानन्दकानने ॥ व्यवस्थिता गणेशा ये ते वक्ष्यन्ते मयाधुना॥४९८॥ मोदः प्रमोदः सुमुखो दुर्मुखो गणनायकः॥विनायको ज्ञानपूर्वो द्वारविघ्नेश एव च ॥ ४९९ ॥ अविमुक्तेशनिकटे त्वविमुक्ताविनायकः ॥ योगिन्यश्च क्रमादेषां कीर्त्यन्ते प्रेतवाहनाः ॥ ५०० ॥ दन्दशूककरा रौद्री मृगशीर्षा वृषानना ॥ व्यालास्या धूर्त्तविश्वासा व्योमैकचरणार्धदृक् ॥ ५०१ ॥ तापिनी तुष्टिपूर्वा च शोषिणी कोटरी तथा ॥ विद्युत्प्रभा स्थूलनासा मार्जारी कंठपूरणा ॥ ५०२ ॥ कामाक्ष्यट्टाट्टहासा च बलाका नतिपुण्यदा ॥ मूकास्या चेति योगिन्यो ङेन्तं नाम नमोन्तकम् ॥ ५०३ ॥ स्वबीजाद्यं भवेन्मन्त्रो यथानामार्थकारकः॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि शक्तिमेषां [1]सिद्धिदाम्॥५०४॥ विख्यातां राजमातङ्गीं सद्यः प्रत्ययकारिकाम् ॥ ऐं ह्रीं श्रीं मनवः प्रोक्ता भगवतीपदं वदेत् ॥ ५०५ ॥ श्रीमातङ्गे वदेदेतच्छूरि सर्वजनेति च ॥ मनोहारि सर्वमुखराजि सर्वमुखेति च ॥ ५०६ ॥ रजनीं सर्वराजेति वशंकारि वदेत्ततः॥ सर्वस्त्रीपुरुषेत्युक्त्वा वशंकारि पदं वदेत् ॥ ५०७ ॥ सर्वदुष्टमृगवशंकरि सर्वपदं ततः॥ सत्त्ववशंकरि सर्वलोकमुखामुकं वदेत् ॥ ५०८ ॥ मे वशमानय स्वाहेत्यष्टाशीत्यक्षरो मनुः ॥ एकविंशाद्विश्वधृतिधृतिविश्वकरैर्मनोः ॥ ५०९ ॥ ओं नमो मुखमंत्राणैः ऐंह्रींश्रींबीजपूर्वकैः ॥ षडङ्गन्यास उदितः पदन्यासं ब्रवीम्यहम् ॥ ५१० ॥ शिरोललाटभ्रूमध्यतालुकण्ठमनोगले ॥ हृदयेऽनाहते बाह्वोर्जठरे नाभिमण्डले॥५११॥स्वाधिष्ठाने व्यञ्जने च पादयोर्दक्षिणान्ययोः॥ मूलाधारे गुदे न्यस्य पदान्यष्टादश क्रमात् ॥ ५१२ ॥ त्र्येकाद्विचतुर्वसु

१ इदं परान्वयि ॥

च लोकेशान्मध्ये देवान्समर्चयेत् ॥ पुरश्चरणकृत्यादि काम्यकर्म्म तथाखिलम् ॥ ४७७ ॥ एतस्यास्त्रिपुरेशी च चेटिकास्यनिनादिनी ॥ निनादिनि च गुटिकां देहि स्त्रीं वह्निगेहिनीम् ॥ ४७८ ॥ द्वादशार्णो मनुर्ध्यानमूर्ध्वकेशीं त्रिलोचनाम् ॥ खेचरीं तां चञ्चलाक्षीं महानादां भजाम्यहम् ॥ ४७९ ॥ अमायां च नरः सायं नद्यां स्नायाद्विशेषतः ॥ कृष्णायां निशि कुर्वीत तत्तीरे चायुतं जपम् ॥ ४८० ॥ कस्तूरीकमलैर्होमो दशांशस्तत्र देवता ॥ महाशब्दं प्रकुरुते भीतिदं ध्यानतत्परः ॥ न बिभेति यदा मन्त्री तदा देवी प्रसीदति ॥ ४८१ ॥ ददाति गुटिकामेकां सिद्धिदां च मनोहराम् ॥ तामादाय भवेन्मत्री त्रिलोकीगमनक्षमः ॥ ४८२ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि चतुर्दन्तं गजाननम् ॥ सर्प्पास्या योगिनी चास्य धातुवादक्रियाकरी ॥ ॥ ४८३ ॥ एककामेश्वरी शक्तिः कामबीजं मनुर्मतः ॥ ऋषिः सम्मोहनश्छन्दो गायत्री देवता मता ॥ ४८४ ॥ एककामेश्वरी बीजं कः शक्तिर्बिन्दुरुच्यते ॥ लः कीलकं षडङ्गानि षड्दीर्घान्वितमूलतः ॥ ३८५ ॥ पूर्वोक्तपञ्चबाणांश्च न्यसेद्ध्यानं समाचरेत् ॥ ४८६ ॥ जपाकुसुमसङ्काशां धनुर्बाणकरां स्मरेत् ॥ नानालङ्कारशुभगां मोहयन्तीं जगत्त्रयम् ॥ ४८७ ॥ त्रिकोणं चाष्टपत्रं च ततो भूबिम्बमालिखेत् ॥ मोहिनीं क्षोभिणीं चैव शशिनीं स्तम्भिनीं तथा ॥ ४८८ ॥ आकर्षिणीं द्राविणीं च तथैवाह्लादिनीं मताम् ॥ क्लिन्नां च क्लेदिनीं चापि ततः सिंहासनं यजेत् ॥ ततो देवीं समावाह्यार्चयेन्मुद्राश्च दर्शयेत् ॥ ४८९ ॥ अग्नीशासुरवायव्यमध्यदिक्ष्वङ्गपूजनम् ॥ त्रिपुरायास्ततश्चाङ्गान्यर्चयेच्च दलाष्टके ॥ अनङ्गपदमुच्चार्य्य रूपिणी मदना तथा ॥ ४९० ॥ मन्मथा कुसुमा चेति तदग्रे मदनातुरा ॥ शिरा मेषबला तद्वद्दीपिकाष्टौ समीरिताः ॥ ४९१ ॥ दिगीश्वरास्ततः पूज्या जपेदर्कसहस्रकम् ॥ जुहुयाद्बन्धूककुसुमैस्तर्प्पणादि ततश्चरेत् ॥ काम्यप्रयोगा विज्ञेयास्त्रिपुरेश्या यथा तथा ॥ ४९२ ॥ अथातः संप्रवक्ष्यामि चैकविंशतिसङ्ख्यकान् ॥ गणेशा-

१ निनादिनि गुटिकां देहिदेहि स्त्रीं स्वाहा इति मन्त्रः ॥ २ श्लोकोक्तरूपिण्यादिनाम्नाम्पुरीनङ्गपदं युञ्ज्यात यथा अनङ्गरूपिणी । अनङ्गमदना इत्यादि ॥

न्त्राजमातङ्ग्या संबद्धान्योगिनीयुतान् ॥४९३॥ बीजषट्कं गणेशस्य ङेन्तं तन्नाम चोच्चरेत् ॥ नमोन्ता मनवस्तेषां क्रमान्नामानि वच्म्यहम्॥४९४॥अग्रे पृष्ठे द्विदन्तादिद्वितुण्डाख्यो विनायकः ॥ ज्येष्ठो विनायकश्चैव तथा गजविनायकः॥४९५॥विनायकः कालसंज्ञो नागेशाख्यो विनायकः॥अथान्तर्गृहमावृत्य स्थिताञ्छृणु विनायकान् ॥ ४९६ ॥ तथा सृष्टिगणेशश्च यक्षविघ्नेश एव च॥गजकर्णश्चित्रघण्टः स्यान्मङ्गलविनायकः ॥४९७॥ विनायकश्च मित्रादिरथ वानन्दकानने ॥ व्यवस्थिता गणेशा ये ते वक्ष्यन्ते मयाधुना॥४९८॥ मोदः प्रमोदः सुमुखो दुर्मुखो गणनायकः॥विनायको ज्ञानपूर्वो द्वारविघ्नेश एव च ॥ ४९९ ॥ अविमुक्तेशनिकटे त्वाविमुक्तविनायकः ॥ योगिन्यश्च क्रमादेषां कीर्त्यन्ते प्रेतवाहनाः ॥ ५०० ॥ दन्दशूककरा रौद्री मृगशीर्षा वृषानना ॥ व्यालास्या वृत्तविश्वासा व्योमैकचरणार्धदृक् ॥ ५०१ ॥ तापिनी तुष्टिपूर्वा च शोषिणी कोटरी तथा ॥ विद्युत्प्रभा स्थूलनासा मार्जारी कंठपूरणा ॥ ५०२ ॥ कामाक्ष्यट्टाट्टहासा च बलाका गतिपुष्पदा ॥ मूकास्या चेति योगिन्यो ङेन्तं नाम नमोन्तकम् ॥ ५०३ ॥ स्वबीजाद्यं भवेन्मन्त्रो यथानामार्थकारकः॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि शक्तिमेषां सुसिद्धिदाम्॥५०४॥ विख्यातां राजमातङ्गीं सद्यः प्रत्ययकारिकाम् ॥ ऐं ह्रीं श्रीं मनवः प्रोक्ता भगवतीपदं वदेत् ॥ ५०५ ॥ श्रीमातङ्गे वदेदेतच्छ्वरि सर्वजनेति च ॥ मनोहारि सर्वमुखराजि सर्वमुखेति च ॥ ५०६ ॥ रजनीं सर्वराजेति वशंकारि वदेत्ततः॥ सर्वस्त्रीपुरुषेत्युक्त्वा वशंकारि पदं वदेत् ॥ ५०७ ॥ सर्वदुष्टमृगवशंकरि सर्वपदं ततः॥ सत्त्ववशंकारि सर्वलोकमुक्तामुकं वदेत् ॥ ५०८ ॥ मे वशमानय स्वाहेत्यष्टाशीत्यक्षरो मनुः ॥ एकविंशद्विश्वधृतिधृतिविश्वकरैर्मनोः ॥ ५०९ ॥ ओं नमो मुखमंत्रार्णैः ऐंह्रींश्रींबीजपूर्वकैः ॥ षडङ्गन्यास उदितः पदन्यासं ब्रवीम्यहम् ॥ ५१० ॥ शिरोललाटभ्रूमध्यतालुकण्ठमनोगले ॥ हृदयेऽनाहते बाह्योर्जठरे नाभिमण्डले॥५११॥स्वाधिष्ठाने व्यञ्जने च पादयोर्दक्षिणान्ययोः॥ मूलाधारे गुदे न्यस्य पदान्यष्टादश क्रमात् ॥ ५१२ ॥ त्र्येकाद्विचतुर्वसुवह्नि

१ इदं परान्वयि ॥

नगाष्टदशदिग्गजैः ।। वेदाग्नीन्दुद्वित्रिनेत्रैर्वर्णैर्मन्त्रपदानि तु ॥ ५१३ ॥ ऐंह्रींश्रींराजमातङ्ग्यै नम उक्त्वा न्यसेत्ततः ॥ मूलाधारे पूर्वबीजत्रयं प्रीत्यै पदं वदेत् ॥५१४॥मातङ्ग्यै नम इत्युक्त्वा हृदये विन्यसेत्पुनः॥बीजत्रयं ततो मनोभवायै च नमो वदेत् ॥५१५॥ भ्रूमध्ये विन्यसेत्पश्चाद्देवीन्यासं समाचरेत् ॥ शिरोवदनहृद्गुह्यपादेषु क्रमतो न्यसेत् ॥ ५१६ ॥ हृल्लेखां गगनां रक्तां ततश्चापि कपालिकाम् ॥ महोच्छुष्मां स्वनामादिवर्णबीजपुरस्सराम् ॥ ॥ ५१७ ॥ मातंग्यन्तां प्राग्विन्यस्य बाणशक्तिं तथा न्यसेत् ॥ मूर्धपादास्यगुह्ये हृदये द्राविणीं क्रमात् ॥ ५१८ ॥ शोषिणीं बंधिनीं मोहिनीं चैवाकर्षिणीन्तथा॥मातंग्यन्तां स्वबीजाद्यां ततः कामाष्टकं न्यसेत् ॥ बीजत्रयाद्यां मातंगीं पदांते मन्मथं मुखे ॥ ५१९ ॥ मकरध्वजं वामांसे मदनं वामपार्श्वके ॥ वामकट्यां पुष्पचापं नाभौ च कुसुमायुधम् ॥ कन्दर्प्पं दक्षकट्यां च दक्षपार्श्वे मनोभवम् ॥ ५२० ॥ रतिप्रियं च दक्षांसे तच्छक्तिन्यास उच्यते ॥ मातंग्यंता अनंगाद्याः स्थानेष्वेष्वेव विन्यसेत् ॥५२१॥ कुसुमा मेखला प्रोक्ता मदना मदनातुरा॥मदनोद्वेगिताग्रे सम्भवा भुवनपालिनी ॥ ५२२ ॥ शशिरेखा ततः कुर्य्यान्न्यासं लक्ष्म्यादिकं यथा ॥ ङेमातंगीनमोन्तांश्च लक्ष्मीं चापि सरस्वतीम् ॥ रतिं प्रीतिं कीर्तिशांत्यौ पुष्टिं तुष्टिं क्रमेण च ॥ ५२३ ॥ मूलाधारे तथा मूले मणिपूरे तथा हृदि ॥ कण्ठे मुखे भ्रुवोर्मध्ये शिरस्येवं च विन्यसेत् ॥ ५२४ ॥ ब्राह्मयाद्याः पूर्वमुद्दिष्टा मातंगीपदपश्चिमाः ॥ मूलाधारे त्वधिष्ठाने नाभौ हृदि गले मुखे ॥५२५॥ भ्रूमध्ये मस्तके चैवमसितांगादिभैरवान्॥मातंग्यन्तान्न्यसेत्पश्चान्मातंग्यंता इमा अपि ॥ ५२६ ॥ आधारे विन्यसेद्वामां ज्येष्ठां लिंगस्य मूलके ॥ नाभौ रौद्रीं तथा शांतिं हृदये सिद्धिदां गले ॥ ५२७ ॥ वागीश्वरीं च भ्रूमध्ये क्रियाशक्तिं च बिंदुके ॥ लक्ष्मीं कलापदे सृष्टिं रोधिकायां तथा न्यसेत् ॥ ॥ ५२८ ॥ अर्धेन्दौ मोहिनीं न्यस्य नादे तु प्रथमां न्यसेत् ॥ भाविनीं चापि नादांते ततो मान्यां तडिल्लताम् ॥ विष्णुं वक्त्रे विष्णुशक्तिं ध्रुवमण्डलके न्यसेत् ॥ ५२९ ॥ ऐंह्रींश्रींपूर्विकाश्चैता ङेमातंगीनमोन्तकाः॥चतस्रः शक्त-

यो न्यस्या मातंगीं शिरसि न्यसेत॥५३०॥ललाटे महामातंगीं महालक्ष्मीं तथा हृदि॥सिद्धलक्ष्मीं तथा मूले मूलाधारे प्रविन्यसेत॥५३१॥ मूलमंत्रं समुच्चार्य्य सर्वांगे व्यापकं चरेत्॥एवं न्यस्तशरीरोसौ चिन्तयेन्मन्त्रदेवताम् ॥ ५३२ ॥ अमृतोदधिमध्यस्थे रत्नद्वीपे मनोहरे ॥ स्वर्णप्राकारसंवीते मण्डपे रत्ननिर्मिते ॥५३३॥ कदम्बबिल्वकह्लारकल्पवृक्षोपशोभिते ॥ वेदीमध्ये सुखास्तीर्णे रत्नसिंहासने शुभे॥५३४॥अष्टपत्रं महापद्मं केशराढ्यं सकर्णिकम् ॥ तन्मध्ये तु त्रिकोणं स्यादष्टपदं ततो बहिः॥५३५॥पुनः षोडशपत्रं स्यात्तद्बाह्ये स्याच्चतुर्दलम् ॥ वेदास्रं सचतुर्द्वारं मण्डलं प्रोक्तमुत्तमम् ॥ ५३६ ॥ तस्य मध्ये सुखासीनां श्यामवर्णां शुचिस्मिताम् ॥ कदम्बमालाभरणां पूजितां च सुरासुरैः ॥ ५३७ ॥ प्रलम्बालकसंयुक्तां चन्द्ररेखावतंसिकाम् ॥ ललाटे तिलकोपेतामीषत्प्रहसिताननाम् ॥ ५३८ ॥ किंचित्स्वेदाम्बुमधुरललाटफलकोज्वलाम् ॥ वलीतरंगमध्याभां रोमराजीविराजिताम् ॥ ५३९ ॥ सर्वाभरणसंयुक्तां मुक्ताहारविभूषिताम्॥नानामणिगणोन्नद्धकटिसूत्रैरलंकृताम् ॥५४०॥ वलयै रत्नखचितैः केयूरैर्मणिभूषितैः॥भूषितां द्विभुजां बालां मदाघूर्णितलोचनाम् ॥ ५४१ ॥ आपीनमण्डलाभोगसमुन्नतपयोधराम् ॥ प्रलम्बकर्णाभरणां स्वर्णोत्तंसविराजताम् ॥ ५४२ ॥ तमालनीलां तरुणीं मधुमत्तां मतङ्गिनीम् ॥ चतुष्षष्टिकलारूपां पार्श्वस्थशुकसारिकाम् ॥ ५४३ ॥ कोटिबालार्कसङ्काशां जपाकुसुमसन्निभाम् ॥ एवं वा पीतवर्णां वा ध्यायेन्मातंगिनीं पराम् ॥ ५४४ ॥ धर्म्मादिक्लृप्तपूर्वोक्ते पीठेच्चर्याः शक्तयो नव ॥ ऐंह्रींश्रींबीजपूर्वाश्च ङेमातंगिनमोन्तकाः ॥ ५४५ ॥ विभूतिरुन्नतिः कांतिः कीर्तिः सृष्टिश्च सम्मतिः ॥ पुष्टिरुत्कृष्टिर्ऋद्धिश्च मातङ्ग्या नव शक्तयः ॥ ॥ ५४६ ॥ वाङ्माये कमलां सर्वशक्त्यन्ते कमलापदम् ॥ सनाय नम इत्युक्त्वा मातंग्याः पीठमर्चयेत् ॥ ५४७ ॥ देव्यामूर्तिं च मूलेन कल्पयित्वा यथाविधि ॥ तस्यामावाह्य देवीमर्चयेत्तदनन्तरम् ॥ ५४८ ॥ पाशांकुशवरा-

---

१ ऐं ह्रीं श्रीं सर्वशक्तिकमलासनाय नमः इति मन्त्रः ॥

भीतिखड्गचर्म्मधनुःशरान् ॥ मौसलीं दुर्गबाणाख्यां योनिमुद्रां प्रदर्श- येत् ॥ ५४९ ॥ त्रिकोणे पूर्वरक्षोदिक्कोणे रत्यादिका यजेत् ॥ पाशांकुशा च श्वेताभा प्रथमायान्तु साञ्जलिः ॥ ५५० ॥ अन्त्यारुणेक्षुकोदण्डपञ्च- बाणलसत्करा ॥ त्रिकोणकाष्टदलयोरन्तराले तु पूजयेत् ॥ ५५१ ॥ मध्ये दिक्षु क्रमात्पञ्चहल्लेखादिकशक्तयः ॥ गुणं सृण्यभयेष्टानि वहन्त्यो भूतसन्निभाः ॥ ५५२ ॥ अग्नीशरक्षःपवनकोणेष्वग्रेदिशासु च ॥ यजेदंगानि मन्त्रज्ञः पंचबाणांस्ततोर्चयेत् ॥ ५५३ ॥ दिक्ष्वग्रे क्रमतो मुक्तास्वर्णविद्रुमहीर- कान् ॥ अमलारुणभायुक्तान्धनुर्बाणायुधांस्तथा ॥ ५५४ ॥ दलेष्वग्रे पूजनीया अनङ्गकुसुमादिकाः ॥ गुणसृण्यभयेष्टानि धारयन्त्योरुणप्रभाः ॥ ॥ ५५५ ॥ अग्रे दलानां सम्पूज्या लक्ष्म्याद्याश्चारुभूषणाः ॥ लक्ष्मी हे- मप्रदा पद्माकरा कौसुम्भकाम्बरा ॥ ५५६ ॥ सरस्वती शङ्खनिभा चिन्मुद्रा पुस्तकेरतिः ॥ श्वेताभा पुष्पबाणेक्षुहस्ता चामललोचना ॥ ५५७ ॥ धनु- र्बाणकरा प्रीतिर्मेचकाभा सिताम्बरा ॥ कीर्त्तिः कुण्डसमा पद्माचिन्मुद्राकरशा- लिनी ॥ ५५८ ॥ चिन्मुद्राभययुक्छान्तिर्ध्यानास्तिमितलोचना ॥ बालाभय- ङ्करा पुष्टिः पीताङ्गा चारुभूषणा॥ ४५९ ॥ तुष्टिर्वराभयकरा प्रसन्नमुखपङ्कजा॥ द्वितीयाष्टदले पूज्या मन्मथाद्या मदोद्धताः ॥ ५६० ॥ पुरआकृष्टचापेज्याः पृष्ठदेशनिषङ्गकाः ॥ पत्रसंस्था मातरस्तु तदग्रे चाष्ट भैरवाः ॥ ५६१ ॥ कपालशूलडमरुवेतालासक्तपाणयः ॥ दीर्घस्वराद्या ब्राह्म्याद्या ह्रस्वाद्या भैरवा अपि ॥ ५६२ ॥ ततः षोडशपत्रस्था वामाद्याः श्यामविग्रहाः ॥ आदर्श- रत्नदीपं च व्यजनं च ततः परम् ॥ ५६३ ॥ नागवल्लीदलं चैव चामरं ज्ञान- कोशकम् ॥ वासोमाल्यातपत्राणाभरणाशुकशालिकैः ॥ ५६४ ॥ चामरं रत्नकलशं तालवृन्तं प्रदीपकम् ॥ बिभ्राणा वामहस्तैश्च देवेशाः खड्गपा- णयः ॥ ५६५ ॥ रक्तवर्णाः सुविमला भावयेदर्चयेदिमाः ॥ वादयन्तीः सदा वीणाञ्चतुःपत्रे ततोर्चयेत ॥ ५६६ ॥ मातङ्ग्याद्यास्तत्र पूज्याः

१ योनिमुद्रालक्षणं बहुस्थलेष्वलेखिषम् ॥ २ इक्षुकोदण्डादिलसत्करा या तां पूजयेदिति अर्थः ॥ ३ पूज्या इति शेषः ॥ ४ वराऽभयेति पा० ॥

पाशाकुशवराभयैः ॥ अलंकृतभुजा रक्ता द्वितीया चेन्दुसन्निभा ॥ ५६७ ॥ असिखेटकशूलाह्वमुण्डहस्ता तथापरा ॥ पाशांकुशसरोजानि योनिमुद्राञ्च बिभ्रती ॥ ५६८ ॥ अरुणा चान्तिमा हेमरत्नपात्रे वराभये ॥ दधाना श्यामवर्णा च ध्यातव्या मन्त्रिसत्तमैः ॥ ५६९ ॥ अग्निनैर्ऋत्यवायव्यरुद्रको- णेषु संयजेत् ॥ गणेशदुर्गावटुकक्षेत्रपालान्बहिर्यजेत् ॥ ५७० ॥ चतुरस्रे लोकपालांस्तदस्त्राणि च तद्बहिः ॥ प्रजपेदयुतम्मन्त्री मन्त्रम्पश्चाद्दशांशतः ॥ ५७१ ॥ त्रिस्वादुयुक्तैर्जुहुयाद्बन्धूककुसुमैर्वशी ॥ तर्पणम्मार्जनं कृत्वा ब्राह्मणाराधनन्तथा ॥ ५७२ ॥ एवं सिद्धमनुर्मन्त्री साधयेन्निजवाञ्छि- तम् ॥ भाग्यार्थी जुहुयाज्जातीमल्लिकानागकेशरैः ॥ ५७३ ॥ श्रीफलै- श्चापि तत्पत्रैर्होमाद्राज्यश्रियं व्रजेत् ॥ राजपुत्रः पङ्कजैः स्त्रीं श्रियमाप्नोत्य- नुत्तमाम् ॥५७४॥ लक्ष्मीपुष्पोत्पलैश्चैव वशयेत्सकलं जगत् ॥ जपाबन्धूकब- कुलैर्वञ्जवृक्षसमुद्भवैः ॥ ५७५ ॥ सुमनोभिश्च जुहुयाद्वश्यायैव हि मन्त्र- वित् ॥ मधुना जुहुयात्तस्य सर्वसिद्धिर्भवत्यलम् ॥५७६॥ त्रिस्वादुसंयुतैः सम्यग्वेतसोत्थसमिद्वरैः ॥ जुहुयाद्वृष्टिकामस्तु गुडूचीभिर्ज्वरं हरेत् ॥ ॥ ५७७ ॥ कदम्बकुसुमैर्हुत्वा वशयेत्प्रमदाजनान् ॥ आयुष्कामः प्रजुहुयाद्दूर्वाभिर्नात्र संशयः ॥ अन्नं प्रजुहुयान्मन्त्री चान्नवाञ्जायतेचिरात् ॥ ॥ ५७८ ॥ शालितण्डुलहोमेन धनाकुलगृहो भवेत् ॥ होमद्रव्यन्तु यत्प्रोक्तं त्रिस्वाद्वक्तं तु तद्भवेत् ॥ ५७९ ॥ नन्द्यावर्त्तप्रसूनैः स्याद्धोमो वाक्सिद्धिदः परः ॥ निम्बप्रसूनहोमाच्च कमलां वाञ्छितां लभेत् ॥ ५८० ॥ हुनेत्किं- शुकंहोमैर्यः स भवेत्तेजसां निधिः ॥ चन्दनागुरुकर्पूररोचनाकुंकुमैरपि ॥ ॥ ५८१ ॥ होमात्तु विश्वं सकलं वशयेन्नात्र संशयः ॥ अष्टाभिर्जपितैरेतैस्ति- लकं जनमोहनम् ॥ ५८२ ॥ सिन्धुवारस्य मूलानि होमयेद्बन्धमुक्तये ॥ उग्रगन्धस्य तैलेन संसिक्तैर्लवणैर्हुनेत् ॥ अचिराच्छत्रुसङ्घं स नाशयेन्नात्र संशयः ॥ ५८३ ॥ संचूर्णितनिशामिश्रैर्लवणैः स्तम्भयेद्रिपुम् ॥ परिपक्वैर- तिरसैः फलैः पुष्पैः सुगन्धिभिः ॥ होमाद्वाञ्छितमाप्नोति नात्र कार्य्या विचा-

१ पदद्वयमुत्तरान्वयि ॥

रणा ॥ ५८४ ॥ अथ मन्त्रान्तरं वक्ष्ये मातङ्ग्या अतिसिद्धिदम् ॥ ऐंक्लीं-सौः‌ऐं समुच्चार्य्य ह्रींश्रीं तारं समुच्चरेत् ॥ ५८५ ॥ नमो भगवतीत्यादिश्चतुर्विंशतिवर्णकः ॥ उच्चरेत्सर्प्पमन्त्रस्य रञ्जनीं क्लीं ततो वदेत् ॥ ५८६ ॥ तथा श्रीबीजमुच्चार्य्य सर्वराजादिकान्वदेत् ॥ पूर्वमन्त्रस्य वर्णास्तु चत्वारिंशत्क्रमात्ततः॥५८७॥वशंकारिपदं प्रोच्य प्राङ्मन्त्रस्यामुकादिकान् ॥ एकादशार्णान्प्रवदेच्छ्रींह्रींऐंसौस्ततो वदेत् ॥ क्लीमवेति द्व्यूनशतं मन्त्रे वर्णाः प्रकीर्तिताः ॥ ५८८ ॥ अयं मन्त्रस्त्रिभुवनवशीकारकरः परः ॥ आचार्य्यानुग्रहात्प्राप्यो महापुण्यतमैर्जनैः ॥ दुष्प्राप्योऽकृतपुण्यैश्च मुनीन्द्राद्यैश्च सेवितः ॥ ५८९ ॥ वाञ्छावितरणे कल्पपादपः पारिकीर्त्तितः ॥ ऋष्याद्याः पूर्वमुदिता मन्त्रस्यास्य भवन्ति हि ॥ ५९० ॥ ततस्तु मातृका न्यस्य देवताभावसिद्धये ॥ पञ्चबाणानंगुलीषु तलयोर्मकरध्वजम् ॥ ५९१ ॥ न्यसेन्मन्त्रं दशार्णं सौर्वाग्भवं ङेन्तमुच्चरेत् ॥ मकरध्वज इत्येतत्क्लीं नमोन्तः प्रकीर्तितः ॥५९२ ॥ शिखाशिरोललाटेषु भ्रूमध्ये नेत्रयुग्मके ॥ श्रोत्रयोर्घ्राणयोर्वक्त्रे गण्डयोः ककुदि क्रमात् ॥ ५९३ ॥ असयोरुरसि न्यस्य स्तनयोर्हृदयाम्बुजे ॥ नाभिमण्डलके गुह्ये मूलाधारे पदोरपि ॥ ५९४ ॥ त्रयोविंशतिसङ्ख्यानि त्रिव्येकद्व्यङ्घ्रिभिस्तथा ॥ षडष्टैकैकचन्द्राष्टनवाष्टादशपत्रिभिः ॥ ५९५ ॥ वस्वष्टवह्निचन्द्राक्षित्रिद्वित्रीन्क्रमान्न्यसेत् ॥ एकोनविंशतियुतान्मन्त्रार्णानादितः क्रमात् ॥ ५९६ ॥ पदैः षड्भिः षडङ्गानि ऐंह्रीं श्रींपूर्वकैश्चरेत् ॥ कामशक्तींदिराबीजान्युक्तानि च शिखा मनोः ॥ ५९७ ॥ षड्दीर्घकामयुक्तेन षडङ्गानि प्रकल्पयेत् ॥ द्राविण्याद्याः पुनः पञ्च कुक्षौ पार्श्वद्वये हृदि ॥ ५९८ ॥ मणिपूरे न्यसेदत्र ब्राह्मयाद्याश्चात्र विन्यसेत् ॥ दक्षपादांगुलीमूले गुल्फसन्धौ च जानुनि ॥ ५९९ ॥ दक्षोरुमूले वामोरुमूले जानुनि गुल्फके ॥ वामपादांगुलीमूले ततो लक्ष्म्यादिका न्यसेत् ॥ ६०० ॥ वामदोर्मूलके मध्ये सन्धौ च मणिबन्धके ॥ वामहस्तांगुलीमूले दक्षहस्तांगुलीतटे ॥ ६०१ ॥ मणिबन्धे मध्यसन्धौ कक्षयोर्मूलके क्रमात्॥मस्तके च भ्रुवोर्मध्ये नेत्रयोः श्रोत्रयोर्गुदे६०२॥

नासायुग्मे मुखे गण्डद्वन्द्वे जिह्वाग्रदेशके ॥ मूलाधारे त्वधिष्ठाने तालौ वामादिका न्यसेत ॥ ६०३ ॥ लक्ष्म्यादिकस्थले न्यस्या असिताङ्गादिभैरवाः ॥ मातङ्ग्यादिचतुष्कं च हृदि नाभौ शिरोगुदे ॥ ६०४ ॥गणेशदुर्गावटुकक्षेत्रपालांस्ततो न्यसेत् ॥ कंभ्रूकण्ठेषु मूले च मन्त्रेण व्यापकं चरेत् ॥ ६०५ ॥ सरस्वतीं महालक्ष्मीं निधियुग्मं प्रविन्यसेत् ॥ आनने च भ्रुवोर्मध्ये दक्षपादे तथोत्तरे ॥ ६०६ ॥ एवं न्यस्य मनुं मन्त्री ध्यायेद्देवीमनन्यधीः ॥ अमृतस्य समुद्रे तु रत्नद्वीपे महावने ॥ ६०७ ॥ पञ्चानां कल्पवृक्षाणां मण्डपे मणिसंयुक्ते ॥ मणिसिंहासनस्योर्ध्वमुपविष्टां विचिन्तयेत ॥ ६०८ ॥ मधुपानेन मुदितां पूर्णमाननिरीक्षणाम् ॥ शुभांशुवदनां नीपपुष्पगुम्फितवेणिकाम् ॥ ॥ ६०९ ॥ वीणालसत्करां रक्तवस्त्रां बिम्बाधरा शुभाम् ॥ कस्तूरीतिलकां चन्द्रमुकुटामुन्नतस्तनीम्॥६१०॥शंखपत्रश्रुतिं मध्यां नम्रां संमेचकच्छविम् ॥ वलयाङ्गदहारादिमञ्जीररशनान्विताम् ॥ ६११ ॥ हास्यैर्भक्तांस्तोषयन्तीं पार्श्वसंस्थालकांशुकाम् ॥ पूर्वोक्ते च शुभे पीठे यन्त्रमेतत्प्रकल्पयेत् ॥६१२॥ त्रिकोणं पञ्चकोणं वाप्यष्टपत्रं कलाछदम् ॥ अष्टपत्रं वेदतलं चतुरस्रं मनोहरम्॥ ॥ ६१३ ॥ चतुर्द्वारसमायुक्तं सर्वदृष्टिमनोहरम् ॥ अत्रावाहाद्य यजेद्देवीं मन्त्री शृङ्गारवेषतः ॥ ६१४ ॥ मूलेन मूर्तिं संकल्प्य कृत्वार्घ्यस्थापनादिकम् ॥ मातङ्गीपीठमभ्यर्च्य कृत्वा मूलप्रकल्पनम् ॥ ६१५ ॥ ततः पुष्पोपचारान्ते लयाङ्गं सम्यगर्चयेत ॥ त्रिकोणेभ्यन्तरे प्राग्वत्षडंगानि प्रपूजयेत् ॥ ॥ ३१६ ॥ मातङ्ग्याद्याश्चतुष्पत्रे चतुरस्रे त्रिकोणतः ॥ गणेशादिचतुष्कं च चतुर्द्वारेषु चार्चयेत् ॥ ६१७ ॥ सरस्वत्यादिकन्यासप्रोक्तांश्चाग्रे दिगीश्वरान् ॥ तदस्त्राणि च तद्बाह्ये न्यासपूर्वं जपेन्मनुम् ॥६१८॥ पुनरभ्यर्च्याङ्गषट्कं सुमिष्टान्नैश्च खाद्यकैः ॥ सदुग्धैश्च निवेद्याथ देवीं नत्वा ततो बलिम्॥ ॥६१९॥ दद्याद्भक्तेन मन्त्रज्ञस्तेनेष्टं लभतेचिरात् ॥ नमो भगवतीत्युक्त्का मातङ्गेश्वरि तत्परम ॥६२०॥ इमं बलिं गृह्णयुग्मं स्वाहान्तः सिद्धवर्णकः॥ ततो देव्या उत्तरतो वायव्यादिसकोणके ॥ ५२१ ॥ पंक्तिक्रमेण ऐंह्रींक्लीं

१ कं शिरः ॥

गुरुभ्यो नम उच्चरेत् ॥ परमेष्ठिगुरुभ्यश्च परमाचार्य्यगुरुभ्यः ॥ ५२२ ॥ आदिसिद्धगुरुभ्यः सद्गुरुभ्यो नम उच्चरेत्॥ सर्वत्र पञ्चस्थानेषु गुरून्सम्पूजये-दिति ॥ ६२३ ॥ पूर्वमेव जपेल्लक्षं पुरश्चरणसिद्धये॥ पलाशपुष्पैर्बिल्वाद्युक्तै-रन्तेऽयुतं हुनेत् ॥ ६२४ ॥ तर्प्पणं मार्ज्जनं कुर्य्याद्भोजयेद्भूसुरानपि ॥ कुमारीर्भोजयेच्चापि वशयेत्क्षोभयेज्जगत् ॥ ६२५ ॥ मातङ्ग्यनुग्रहीभूय सर्व-कर्म्माणि साधयेत्॥कुण्डे वा स्थण्डिले वापि विधेयं काम्यकर्म्मकम्॥६२६॥ रक्तवस्त्रपरीताङ्गो रक्तमाल्यानुलेपनः॥घृताक्तगुग्गुलोहोमाद्राज्ञश्च वशयेत्सुधीः॥ ॥ ६२७॥ मल्लिकाजातिपुन्नागैर्जुहुयाद्भाग्यवान्भवेत् ॥ राज्यार्थी बिल्वपत्रैश्च हुनेत्पद्मैर्विशेषतः ॥ ६२८ ॥ श्रीकामः श्वेतपद्मैश्च रक्तैर्वा जुहुयात्पुनः ॥ उत्पलैर्धनकामस्तु लक्ष्मीपुष्पैश्च होमयेत् ॥ ६२९ ॥ [1]बन्धूकैश्चैव वागर्थी किंशुकैर्[2]बकुलैर्हुनेत् ॥ आकर्षणे तु लवणैस्तिलैर्मधुरसंयुतैः॥६३०॥वञ्जुलै-र्वृष्टिमाप्नोति गुडूचीभिर्हरेज्ज्वरम् ॥ अन्नार्थी जुहुयादन्नैर्धान्यार्थी शालि-तण्डुलैः ॥ ६३१ ॥ गन्धद्रव्येण होमस्तु सर्वसौभाग्यदायकः ॥ [4]कुंकुमैरो-चनाभिर्वा होमो वश्यार्थिनो मतः ॥ नन्द्यावर्त्तप्रसूनैश्च वागर्थी जुहुयादथ ॥ ॥ ६३२ ॥ पलाशपुष्पैस्तेजोर्थी कपिलाज्येन वा हुनेत् ॥ शत्रो-रुन्मादकृद्धोम उन्मत्तकुसुमैरपि ॥ ६३३ ॥ विषमे[5]र्वाह[6]निम्बाक्ष[7]श्लेष्मा-न्तक[8]बिभीतकैः ॥ उलूककाकगृध्रोत्थपक्षैस्तैलपरिप्लुतैः ॥६३४॥ त्र्यस्रकुण्डे च [9]शर्वर्य्यां रिपुनाशाय होमयेत् ॥ पायसैर्गुडसम्मिश्रैः खण्डैरिक्षुदलै-स्तथा ॥६३५॥ उन्मादनाशनो होमः पायसैर्वा घृतप्लुतैः ॥ मरिचं तिलतै-लाक्तं काशश्वासज्वरापहम्॥६३६॥निर्गुण्डीमूलहोमेन निगडस्य विमोचनम्॥ ॥ ६३७ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि जीवस्याकर्षणं परम् ॥ साध्यस्य [10]प्रति-कृतीः कुर्य्याच्चतस्रो मन्त्रवित्तमः ॥ ६३८ ॥ एकां [11]साध्यर्क्षवृक्षोत्थां मधूच्छिष्टेन चापराम् ॥ परां कुलालमृद्भूतां शालिपिष्टेन चापराम्॥६३९॥

---

१ कश्चिद्देशविशेषे प्राकृतवाचा छीगूरनामास्य प्रसिद्धम्॥ २ बन्धुजीवकैः॥ ३ केसरैः॥ ४ काश्मीरैः॥ ५ वारिवाहैः ॥ ६ पिचुमन्दैः ॥ ७ दाडिमैः ॥ ८ बिभीतकैः ॥ ९ रात्रौ ॥ १० प्रतिमाः ॥ ११ साध्यस्य नाम्नो यदृक्षं तदृक्षस्य समिधा द्वितीया प्रतिमा निर्मेया ॥

लिखेत्तासा तु हृदयेमुकं मे वशमानय ॥ साध्यनामामुकस्थाने साध्ये प्राणांश्च तत्र च ॥ ६४० ॥ संस्थाप्य तास्ततः स्पृष्ट्वा मूलमष्टोत्तरं शतम् ॥ जपेन्मूलेमुकस्थाने साध्यनाम तु योजयेत् ॥ ६४१ ॥ अमुकं पदरूपं यद्यन्त्रमन्त्रेषु दृश्यते ॥ साध्याभिधानं तद्रूपं तत्र स्थाने निवेशयेत् ॥ ६४२ ॥ कुण्डमध्ये द्व्यंगुलाधः पुत्तलीं दारुजां खनेत् ॥ उत्तानामथ पिष्टोत्थां स्वासनाधस्तथा खनेत् ॥ ६४३ ॥ पादन्यासस्य संस्थाने मृण्मयीं भुवि पूरयेत् ॥ लवणेन सहैतास्तु तिस्रः पूज्यास्ततः परम् ॥ ६४४ ॥ ततो मधूच्छिष्टमयीमूर्ध्वपादामधोमुखीम् ॥ ६४५ ॥ अर्कतूलकदोरेण[1] बद्धपादां प्रलम्बयेत् ॥ कुण्डोपरि च धूमेन तथा सा व्याकुला भवेत् ॥ ६४६ ॥ ततस्तु लवणं ग्राह्यं कुडवैकं[2] घृतं मधु ॥ गुडं च पेषयेच्छ्लक्ष्णं पुत्तलीन्तेन कारयेत् ॥ ६४७ ॥ स्पष्टाङ्गीं साध्यरूपेण तुल्यां श्लक्ष्णां मनोहराम् ॥ ॥ ६४८ ॥ रक्तमाल्याम्बरालेपः कृतन्यासविधिः स्वयम् ॥ प्रतिमायां तु संहारभागेन न्यासमाचरेत् ॥ ६४९ ॥ नामप्रतिष्ठितप्राणा साध्यानां सप्तधाभजेत[3] ॥ दक्षोरुमूलात्पादांतः प्रथमो भाग ईरितः ॥ ६५० ॥ बस्तितः कण्ठपर्यंतो दक्षभागो द्वितीयकः ॥ भुजो दक्षस्तृतीयः स्याच्चतुर्थो मस्तकम्मतम् ॥ ६५१ ॥ भुजो वामः पञ्चमः स्यात्षष्ठो वामोदरादिकम् ॥ स्यात्सप्तमस्तथोर्वादिपादांतः सव्यदेहतः ॥ ६५२ ॥ स्त्रीणां विभाग उद्दिष्टः कृच्छ्रसाध्योथ वक्ष्यते ॥ गुल्फद्वयं तथा जानुद्वयं जंघाद्वयं तथा ॥६५३॥ मध्यद्वयं च भुजयोर्द्वयं मौलिं तथा भजेत् ॥ शरीरमेकादशधा ह्यसाध्यस्याथ वक्ष्यते ॥ ६५४ ॥ प्राकृतानां तु सप्तानां चैकैकस्य तु सप्तधा ॥ एकैकं जुहुयाद्भागं स्मरञ्छत्रुं निशामुखे ॥६५५॥ दक्षपादाच्च पुरुषान्वामपादात्तथा स्त्रियः ॥एवं सप्ताहतो नार्य्यः संक्षुब्धा मदनातुराः ॥६५६॥ स्विद्यदङ्ग्यो वेपमानाःसाधकं तुष्टमानसम्॥त्राहित्राहि क्षमस्वेति पश्य माम्मा परित्यज्य ॥६५७॥एवं सर्वा व्याहरन्त्यः करुणायुक्तमानसाः ॥ पतन्ति साधकस्याग्रे मदनानलपीडिताः ॥ तिष्ठंति दासवच्चास्य मन्त्रिणो योषितः सदा ॥ ६५८ ॥ लवणन्तिलतैलाक्तं

१ आदित्यफलकार्पासदोरकेण ॥ २ तुलायां चतुष्पलैः कुडवो भवति ॥ ३ भागं कुर्वीतेत्यर्थः ॥

होमयेच्छत्रुनाशनम् ॥ हरिद्राचूर्णसंयुक्तं लवणं स्तम्भने मतम् ॥ ६५९ ॥ मातंगी प्रीयते नित्यम्भौमवारे प्रपूजयेत् ॥ कन्यामेकां तथा तिस्रः पञ्च सप्ताथ वा पुनः ॥ ६६० ॥ स्वादुभिर्भक्ष्यभोज्यैश्च स्वादपानैर्मनोहरैः ॥ अर्चनीयाश्च मन्त्रज्ञैः कन्यकाश्चैव सर्वदा ॥ ६६१ ॥ सर्वा नार्य्यो भावनीयाः श्यामा एवात्र मन्त्रिणा ॥ भौमवारे तथा पिष्टमयान्दीपांश्च कल्पयेत् ॥ ॥ ६६२ ॥ प्रज्वालयेद्घृतैनैतान्मातङ्गीप्रीतये बुधः ॥ मातंगीप्रीतये मंत्री योगिन्यष्टकमायजेत् ॥ ६६३ ॥ दिव्यां च महतीं सिद्धां गणेशीं प्रेतखादिनीम् ॥ डाकिनीं कालिकां कालरात्रिञ्चेशानगोचराम् ॥ ६६४ ॥ निशाचरीं चोर्ध्वकेशीं शुष्कांगीं भोजिनीं तथा ॥ वीरभद्रां विरूपाक्षीं धूम्रां प्राच्याञ्जटाधराम् ॥ ६६५ ॥ कलहां घोररक्ताक्षीं विश्वरूपां भयंकरीम् ॥ प्रियां च राक्षसीं वीरकुमारीं वह्निकोणगाम् ॥ ६६६ ॥ मुण्डरारी रुद्रकार्य्यां भीषणां च भयातुराम् ॥ त्रिपुरांता क्रोधिनीं च दुर्मदां ध्वंसिनीं यमे ॥ ६६७ ॥ दीर्घां लम्बोष्ठिकां हंसीं तापिनीं मन्त्रयोगिनीम् ॥ आदित्यां चापि खट्वांगीं कालाग्निमिति नैर्ऋते ॥ ६६८ ॥ ग्राहिणीं चक्रिणीं पश्चात्कंकालीं भुवनेश्वरीम् ॥ हंकालीं यमदूतीं च कौमारीं च कपालिनीम् ॥ ६६९ ॥ केशिनीं मदिरायां च चारिणीं लोमजङ्घिकाम् ॥ नामकीं कामुकीं वायौ लोमकाधोमुखीं तथा ॥ ६७० ॥ व्याघ्रजटीं सर्पजटीं कुण्डामरिविनाशिनीम् ॥ घोरोग्ररूपविकटां चोदग्दिशि कपालिनीम् ॥ ६७१ ॥ लक्षाद्वि प्रजपेन्मन्त्रं क्षोभयेत्सर्वयोषितः ॥ पृथ्वीश्वरांस्तदर्द्धेन वशयेन्नात्र संशयः ॥ ६७२ ॥ तदर्द्धेन च सत्त्वानि वशगानि भवन्ति हि ॥ दूरस्था योषितः सर्वा आयान्त्ययुतजापतः ॥ ६७३ ॥ स्वदेशयास्तदर्द्धेन समायान्त्येव निश्चितम् ॥ सहस्रत्रितयात्सर्ववाञ्छिताप्तिर्भवेद्ध्रुवम् ॥ ६७४ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि मन्त्रभेदम्महाफलम् ॥ अष्टाशीत्यक्षरे मन्त्रे सर्वसत्त्ववशङ्करि ॥ ६७५॥ एतस्याग्रे वदेत्सौख्य राजलक्ष्मीप्रदे तथा॥ सप्ताक्षराणीति पुनः सर्वलोकादिकं वदेत्॥ ६७६॥ पञ्चोनशतसंख्याकवर्णोयं मन्त्र ईरितः ॥ ऋष्यादिकम्पूर्वमुक्तं षड्बीजैश्च षडङ्गकम्॥ ६७७॥ ध्यानपूजादिकं सर्वमष्टाशीति-

मनोमितम् ॥ ६७८॥ प्रयोगाश्च त एवात्र पुरश्चर्यादिकन्तथा॥ अथान्यत्सम्प्रवक्ष्यामि चतुःपञ्चाशदक्षरम् ॥ ६७९ ॥ ॐ ह्रीं नमश्च पद्मे श्रीं राजिते राजपूजिते ॥ जये विजये गौर्य्येवं गान्धारीति पदं वदेत् ॥६८०॥ त्रिभुवनवशङ्करि सर्वस्त्रीपुरुषेति च॥वशङ्करि सुखदुघे घेघे वा वाग्गिगेहिनी ॥६८१॥ अजो मुनिस्तथा छन्दो निवृद्गायत्रमीरितम् ॥ देवता राजमातङ्गी षडङ्गानि तु मायया ॥ ६८२ ॥ सर्वमेवात्र पूर्वोक्तं ध्यानपूजादिकन्तथा ॥ अथास्य प्रोच्यते भेद एकषष्टिकवर्णकः ॥६८३॥ त्रिभुवनवशङ्करि एतदन्ते वदेत्पुनः॥ भवेत्प्रणवहीनोयम्मन्त्रः सर्वत्र पूर्ववत् ॥ ६८४ ॥ किञ्चिद्वर्णविभेदेनायं प्रोक्तः पार्वतीमनुः ॥ सतारोयं समाख्यातो विजयस्य पदं वदेत् ॥ ६८५ ॥ गौरि गान्धारीति पुनः प्राग्वदेव समापयेत् ॥ एकषष्ट्यक्षरो मन्त्रो निवृच्छन्दो ह्यजो मुनिः ॥ ६८६ ॥ गौरी देवी षडङ्गानि शक्राशेभेभदिग्भवैः ॥ मन्त्राक्षरैः षडङ्गानि ध्यानमस्या निरूप्यते ॥ ६८७ ॥ पाशांकुशकरां रत्नयुक्ताभरणवेणिकाम् ॥ बन्धूकाभां त्रिनयनां स्वर्णलेखां भजाम्यहम् ॥ ६८८ ॥ प्राग्वत्षडङ्गं पीठे तु भुवनेश्या यजेदिमान् ॥ आदावङ्गानि षट्कोणे ब्राह्मयाद्यास्त्वष्टपत्रके ॥ ६८९ ॥ आशाधिपांस्तदस्त्राणि भूपुरादौ समर्चयेत् ॥अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं जुहुयात्पायसैर्घृतैः ॥ ६९० ॥ तर्पणादि ततः कुर्य्यादेवं सिद्धो भवेन्मनुः ॥ प्रयोगांश्चान्नपूर्णाया मातङ्ग्या वा समाचरेत् ॥६९१॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि वश्यमातङ्गिकामनुम् ॥ ॐराजमुखी राजाभिमुखी वश्यमुखि ति च ॥ ६९२ ॥ मायां ह्रीं क्लीं देवदेवि महादेवि ततो वदेत् ॥ देवाधिदेवि सर्वेति जनस्य मुखमुच्चरेत् ॥ ६९३ ॥ मम वश्यं कुरुद्वन्द्वं स्वाहान्तोगकृतार्णकः ॥ दिक्सप्तकतुवेदेषुमैत्रार्णैरङ्गकल्पनम् ॥ ६९४ ॥ विज्ञेयं राजमातङ्गीतुल्यं पूजाजपादिकम्॥प्रयोगांश्चापि जानीयाद्विशेषाद्वश्यकृत्त्वयम्॥६९५॥ माया नमो हिलिहिलि चण्डमातङ्गिनीति च ॥स्वाहेति तिथिवर्णोस्य न्यासपूजादिकं भवेत् ॥ ६९६ ॥ राजमातङ्गिकातुल्यं जपश्चायुतसङ्ख्यया ॥ घृत-

---

१ चतुर्दशभिः, दशभिः,अष्टाभिः, अष्टभिः, दशभिः, एकाधिकदशभिः॥ २ श्रीं॥

पायसहोमश्च प्रयोगाद्यं च पूर्ववत् ॥ ६९७ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि कर्णमा-
तङ्गिकामनुम् ॥ वाग्भवं हृदयं चाथ श्रीमातङ्गीपदं वदेत् ॥ ६९८ ॥अमोघे
सत्यवादिनि मम कर्णे पदं ततः ॥ अवतारपदं द्वेधा सत्यं कथय युग्मकम् ॥
॥ ६९९ ॥ एह्येहि श्रीश्च मातङ्ग्यै नमस्त्र्यब्ध्यर्णको मनुः॥ अङ्गानि वाग्भ-
वेनात्र पूजाद्यं च कृताकृतम् ॥ ७०० ॥ लक्षं जपः पायसाज्यैर्होमः सिद्धो
भवेन्मनुः ॥ कर्णे तु कथयेद्देवी पृच्छकस्य शुभाशुभम् ॥ ७०१ ॥ अथातः
सम्प्रवक्ष्यामि सर्वमन्त्रोत्तमोत्तमम्॥ऐंह्रींश्रींमां समुच्चार्य्य ह्रींक्रोंक्लीं चरमां वदेत्॥
॥७०२॥श्रीमातङ्गेश्वरि सर्ववशंकर्य्यग्निगेहिनि॥त्रयोविंशाक्षरो मन्त्रः सर्वका-
र्य्यप्रसाधकः॥७०३॥निवृद्गायत्रिका छन्दो दक्षिणामूर्त्तिको मुनिः॥कर्णमात-
ङ्गिका चास्य देवता परिकीर्त्तिता॥७०४॥ऐंह्रींश्रींआं समुच्चार्य्य ह्रींक्रोंबीजै-
स्तथा भवेत् ॥ द्विरुक्तैश्च षडङ्गस्य विधिः पूजाजपादिकम्॥७०५॥लक्षत्रयं
जपेन्मन्त्रं मधुरत्रयलोलितैः॥बन्धूकपुष्पैर्होमःस्यात्सितया पायसेन च॥७०६॥
हुनेत्कदल्याश्च फलैर्मन्त्रसिद्धिः प्रजायते ॥ समस्तमन्त्रदानादौ सिद्धः स्या-
त्साधकोत्तमः ॥ ७०७ ॥ अथान्यत्सम्प्रवक्ष्यामि मातङ्गीमन्त्रमुत्तमम् ॥
कामिनी रञ्जिनी स्वाहाष्टाक्षरोयमुदीरितः ॥७०८॥ ऋषिस्सम्मोहनश्छन्दो
निवृत्प्रोक्तास्य देवता ॥ सर्वसम्मोहनी चाङ्गं द्विरावृत्तिपदैर्भवेत् ॥ ७०९ ॥
श्यामाङ्गीं वल्लकीं दोर्भ्यां वादयन्तीं सुभूषणाम् ॥ चन्द्रावतंसां विविधैर्गायनै-
र्विश्वमोहिनीम् ॥ ७१० ॥ पूजामातङ्गिनीपीठे रत्याद्यास्तु त्रिकोणके ॥
पञ्चावरणतः पूज्याः केशरेष्वङ्गपूजनम् ॥ ७११ ॥ अनङ्गकुसुमाद्यास्तु पत्रे-
ष्वग्रेषु मातरः॥लोकपालैश्च वज्राद्यैस्सप्तावृत्तिरियं मता॥७१२॥प्रजपेदयुत-
द्वन्द्वं दशांशं जुहुयात्ततः॥मधूकजैस्त्रिमध्वक्तैः सर्वं सम्मोहयेज्जगत् ॥७१३॥
अथोच्छिष्टां प्रवक्ष्यामि मातङ्गीं गोब्जवर्णिकाम् ॥ ७१४ ॥ नम उ-
च्छिष्टचाण्डालि मातङ्गीति पदं वदेत् ॥ सर्ववशंकारि स्वाहा मन्त्रोयं मोहये-
ज्जगत् ॥ ७१५॥ छन्दो निवृच्च गायत्री मुनी नारदतुम्बुरू ॥ देवता चात्र
मातङ्गी चोच्छिष्टा गोब्जवर्णिका ॥ ७१६ ॥ नेत्ररामकृशानुत्रिरसनेत्रमितैः

क्रमात् ॥ अङ्गानि स्युर्मन्त्रवर्णैस्ततो ध्यायेद्धृदम्बुजे ॥ ७१७ ॥ कृष्णाम्बरां यावकार्द्रचरणामुन्नतस्तनीम् ॥ मुक्ताप्रवालमालाढ्या शङ्खकुण्डलधारिणीम् ॥ ७१८ ॥ त्र्यस्रे रत्यादिकाः पूज्याः कर्णिकायान्तु तद्बहिः ॥ पञ्चबाणास्तथाङ्गानि ब्राह्मयाद्याश्चाष्टपत्रके ॥ ७१९ ॥ द्वितीयेऽष्टदले पूज्या अनङ्गकुसुमादिकाः ॥ चतुरस्रे लोकपालास्तदस्त्राणि ततो बहिः ॥ ७२० ॥ अथास्य भेदा वक्ष्यन्ते क्लींह्रींश्रींपूर्वकं जपेत् ॥ क्लींपूर्वं वा जपेन्मन्त्रावेतयोर्मदनो मुनिः ॥ ७२१ ॥ पूजाजपादिकं प्राग्वद्भेदांश्चास्यापराञ्छृणु ॥ ७२२ ॥ आं क्लीं ह्रीमादिकं मन्त्रं क्लींह्रींमैंमन्तकं जपेत् ॥ वाग्मित्वं च कवित्वं च गानशक्तिं करोति च ॥ ७२३ ॥ मुनिः स्याद्दक्षिणामूर्तिरन्यत्सर्वं पुरोक्तवत् ॥ आंह्रींक्रोंमिद्धिरावृत्या षडङ्गानि समाचरेत् ॥ ७२४ ॥ अंसे तु वेशीकुसुमां मुक्ताभूषोन्नतस्तनीम् ॥ चूलिकां नीलचूडां च वादयन्तीं च वल्लकीम् ॥ ७२५ ॥ माध्वीमत्तां मधुवशां श्यामलाङ्गीं सुकोमलाम् ॥ त्रिकोणं पञ्चकोणञ्च बहिरष्टदलद्वयम् ॥ ७२६ ॥ षोडशारं चाष्टदलं भूपुरान्वितयं लिखेत् ॥ पूज्यबीजं तथा नाम वदेदुच्छिष्टपादुकाम् ॥ ७२७ ॥ पूजयामीति चोच्चार्य देवतापूजनं मतम् ॥ त्रिकोणेषु च रत्याद्याः कोणान्ते तु त्रिशक्तयः ॥ ७२८ ॥ इच्छाज्ञानक्रियाख्याश्च पूज्याश्चाङ्गानि बाह्यतः ॥ द्राविण्याद्याः पञ्चकोणे सम्पूज्याः कामशक्तयः ॥ ७२९ ॥ तद्बाह्याष्टदले पूज्याश्चाष्टदीर्घस्वरान्विताः ॥ ब्राह्मयाद्याः कन्यकानाम्न्यो द्वितीयेऽष्टदले तथा ॥ ७३० ॥ अनङ्गकुसुमाद्याश्च कन्याख्यास्ताः प्रपूजयेत् ॥ उर्वश्याद्याः षोडशारे कन्यकाख्याः प्रपूजयेत् ॥ ७३१ ॥ उर्वशी मेनका रम्भा घृताची मञ्जुकेशिका ॥ काश्यपी च सुकेशी मञ्जुघोषा नागकन्यका ॥ ७३२ ॥ यक्षकन्या च गन्धर्वकन्या वै सिद्धकन्यका ॥ परकायप्रवेशिन्याः कन्यकां दूरदर्शनाम् ॥ ७३३ ॥ गुटिकां सिद्धकन्यां च पादुकासिद्धकन्यकाम् ॥ ततश्चतुर्षु द्वारेषु पूजयेद्द्वारदेवताः ॥ ॥ ७३४ ॥ ततं च विततं चैव घनं च सुषिरं तथा ॥ बटुकं च गणेशं च क्षेत्रपालं च योगिनीम् ॥ ७३५ ॥ उच्छिष्टशब्दपुरतः पादुकां पूजयाम्यथ ॥ स्वनामाद्यक्षरं बीजं कृत्वाग्नेयादिके यजेत् ॥ ७३६ ॥ पुनः सर्वो-

पचारैश्च मध्ये भगवतीं यजेत् ॥ स्वराःसर्वे श्रुतियुता वामभागे ततः परम् ॥
॥ ७३७ ॥ रतिश्च रागिणीयुक्ता पूज्या पार्श्वे च दक्षिणे ॥ अभ्यर्चेत्पर-
मेश्वर्य्याः पाश्वर्योः शुकसारिके ॥७३८॥ पुरतो गुरुपंक्तिं च स्वगुरुं पूजये-
त्ततः ॥ बीजत्रयन्तु बालायाः साधकस्य शुभं भवेत् ॥ ७३९ ॥ यत्किञ्चि-
द्वाथ वामायाः कामो वाग्वा रमापि वा॥मनोरुच्छिष्टमातङ्ग्या दत्वादौ पूज-
येन्मनुम् ॥ ७४० ॥ तेनानेके मन्त्रभेदाः पूजाद्यं च यथेच्छया ॥ गौर-
वाल्लाघवाद्वापि कर्त्तव्यन्तु यथोचितम् ॥ ७४१ ॥ शुचिः स्रग्वी सुवस्त्रश्च
जपेल्लक्षमतन्द्रितः ॥ उच्छिष्टभक्तेन बलिं निशि नित्यं निवेदयेत् ॥ ७४२ ॥
नित्यं जपं च काम्यं च उच्छिष्टेनैव चाचरेत ॥ पलाशकुसुमैः स्वादुयुक्तैर्होमं
तथात्र तु ॥ ७४३ ॥ एतावता न सिद्धिश्चेद्वर्णलक्षं जपेन्मनुम् ॥ कुमारी
पूजनं प्रोक्तं कुर्य्यात्तदपि साधकः ॥ ७४४ ॥ योगिन्यष्टाष्टकस्यापि पूजा-
कार्यात्र मन्त्रिणा ॥ उच्छिष्टभक्तशेषेण रात्रौ तस्यै बलिं हरेत् ॥ ७४५ ॥
पूर्वोदितेन मनुना मन्त्रोयं तेन सिध्यति ॥जपेच्चतुर्दशावृत्तिं पूजनानन्तरं मनुम्
भूपतीनां पूजनयिा नारीणां च विशेषतः ॥ ७४६॥ अष्टोत्तरसहस्रेण ताम्बूलं
मनुनामुना॥जपितं भक्षयेद्या स्त्री याचितानङ्गभोगिका॥७४७॥ मन्त्रिणश्च
वशे तिष्ठेद्यावदायुर्न संशयः॥सहदेवी तथा दूर्वा मुसली मधुयष्टिका ॥७४८॥
भद्रा च विष्णुदयिता लक्ष्मीवल्लन्द्रिवल्यपि ॥ अञ्जलिन्यपि सम्प्रोक्ता पृथगेताः
स्पृशञ्जपेत्॥७४९॥अष्टोत्तरशतं मन्त्री ततस्तन्मूर्ध्नि धारयेत्॥नरो नारी नृपो
वाथ धत्ते हर्षसमूहकम् ॥७५०॥ इन्द्राग्निविष्णुयुग्माङ्कमन्वष्टवसुदिग्गताः ॥
पृथग्जप्ताः शतशतमेताः संयोज्य पेषयेत्॥ ७५१ ॥ शुष्कास्तु गुटिका मन्त्र-
जप्ताश्चाथ सहस्रशः ॥ ललाटे च धृताः सम्यक्सर्वस्त्रीजनरञ्जिकाः ॥७५२॥
भवन्ति सर्वलोकस्य दक्षारञ्जनकर्म्मणि ॥ ७५३ ॥ कुर्य्याच्च गुटिकां रेणुसं-
मितां मन्त्रवित्तमः ॥ तूलवर्त्त्या च कृष्णाज्ययुक्तया कज्जलं धृतम् ॥७५४ ॥
सहस्रमनुना जप्तं मन्त्रितं नेत्रयोः शुभम् ॥ प्रत्यहं च जगद्वश्यं नारीसंक्षोभ-
कारकम् ॥ ७५५ ॥ प्रेतग्रहगणादींश्च नाशयेदचिरादपि ॥ पूर्वोक्तैर्दशभिर्द्र-
व्यैः पञ्चगव्यैश्च कापिलैः॥७५६॥ युक्तं च भसितं जप्तं सहस्रं मनुनामुना ॥

घृतं ललाटे भुवनं वशयेच्चैव नान्यथा॥७५७॥क्षौमे पटे प्रविन्यस्य वर्त्तिका रचिताशुभा॥विष्णवाह्वाकुमुदश्यामपद्मरेणुसुगर्भिता॥७५८॥कृष्णगोसर्पिषादीप्ता तदुत्पन्ना च या मषी॥मातङ्गीमनुना जप्ता नेत्राक्ता रञ्जनी नृणाम्॥७५९॥ तद्वन्नमस्कारिणी संगदिता नात्र संशयः ॥ सविष्णुदयितालक्ष्मीभृङ्गराजोद्भवं रजः॥७६०॥एतद्भावितवर्त्तिः सा कपिलाज्यप्रदीपिता॥तज्जातापि मषी पूर्वं फलदा नात्र संशयः॥७६१॥कर्पूरं चन्दनं पद्मयुगं बकुलरोचने॥त्रैलोक्यं वशयत्येषा मषी तत्सम्भवा भृशम् ॥ ७६२ ॥ विजयं चेन्द्रियाणां च फलं क्रमुकसम्भवम् ॥ मूलैर्निर्वास्य नीरैश्च तन्तुभिर्वेष्टयेत्फलम् ॥ ७६३ ॥ भुवः सूनोर्दिने भूमौ स्थापयेत्तत्फलं ततः ॥ आभौमवारसंजप्तं कर्पूरं तत्फलं ततः॥ ७६४ ॥ पिष्ट्वा चैवाम्बुना जप्त्वा गुटिकाः कारयेद्बुधः ॥ ससूरकमिता एताः खादिता वश्यदाः परम् ॥ ७६५ ॥ हेमपश्चाङ्गकं चात्ममलपञ्चकसंयुतम् ॥ सहस्रवारसंजप्तं भक्षयेत्पानकेषु च ॥ यस्मै दत्तं नरेशाय स वश्यो नात्र संशयः ॥ ५६६ ॥ पूर्वमन्त्रोदितान्सर्वान्प्रयोगान्मन्त्रवांश्चरेत् ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि द्वात्रिंशद्वर्णकं मनुम् ॥ ७६७ ॥ तारो माया वाग्रमा च नमो भगवतीति च॥उच्छिष्टचाण्डालि पदं श्रीमातङ्गि तथेश्वरि ॥७६८॥ सर्वजनवशंकरि स्वाहान्तोयं मनुः स्मृतः ॥ मांतगो मुनिरस्योक्तोनुष्टुप्छन्दश्च देवता ॥ ७६९ ॥ मातङ्ग्याः स्यादंगषट्कं मन्त्रार्णैर्वेदषड्रसैः ॥ षडस्रबाहुभिश्चेति ध्यायेच्छ्यामां सुलोचनाम् ॥ ७७० ॥ शुकोदितं च शृण्वन्तीं रत्नपीठोपरि स्थिताम् ॥ रक्ताम्बरां सुरापानमत्तां पद्मस्थसत्पदाम् ॥ वल्लकीं वादयन्तीं तां मातङ्गीं हृदि भावयेत् ॥ ७७१ ॥ जपोयुतसहस्रन्तु होमः पुष्पैर्मधूकजैः ॥ मध्वक्तैश्च यजेत्पीठे वक्ष्यमाणविधानतः ॥ ७७२ ॥ त्रिकोणाष्टदलद्वन्द्वं कलारं चतुरस्रकम् ॥ पीठं कृत्वा यजेत्तस्मिन्पीठशक्तीर्निवेष्टदाः ॥७७३॥ विभूतिरुन्नतिः कान्तिः सृष्टिः कीर्त्तिश्च सन्नतिः ॥ व्यूढिरुत्कृष्टि-

---

१ ॐ ह्रीं ऐं श्रीं नमो भगवति उच्छिष्टचाण्डालि श्रीमातंगीश्वरि सर्वजनवशंकारि स्वाहा । इति मन्त्रः॥२ ॐ ह्रीं ऐं श्रीं हृदयाय नमः, नमो भगवति शिरसे स्वाहा, उच्छिष्टचाण्डालि शिखायै वषट्, श्रीमातङ्गीश्वरि कवचाय हुम्, सर्वजनवशंकारि नेत्रत्रयायवौषद, स्वाहास्त्राय फट् ।

क्लीन्द्विश्च मातंग्यन्ता इमाः स्मृताः ॥ ७७४ ॥ सर्वशक्तिकमन्त्रान्ते चासनाय हृदन्तकः॥तारमायावाग्रमाद्यः पीठमन्त्रः कलार्णकः ॥७७५॥ विष्टरासनमेतेन शय्यादीनि प्रकल्पयेत् ॥ मूलेन पीठपूजान्ते कुर्य्यादावरणार्चनम् ॥ ७७६ ॥ त्रिकोणेष्वर्चयेत्तिस्रो रतिप्रीतिमनोभवाः॥केशरेषु षडंगानि मातृश्च दलमध्यगाः ॥७७७॥ द्वितीयेष्टदले पूज्या असितांगादिभैरवाः ॥ षोडशारे तु वामाख्या ज्येष्ठा रौद्री प्रशान्तिका ॥ ७७८ ॥ श्रद्धा माहेश्वरी चापि क्रियाशक्तिश्च सप्तमी ॥ सुलक्ष्मीः सृष्टिमोहिन्यौ प्रथमाचारिणी तथा॥७७९॥विद्युल्लता च चिच्छक्तिः सुरापा नन्दया सह॥ नन्दबुद्धिः षोडशी तु पूजनीयाः प्रयत्नतः ॥ ७८०॥ चतुरस्रचतुर्दिक्षु मातंगी सा महादिका ॥ लक्ष्मीस्तथा महालक्ष्मीः पुनर्वह्न्यादिकोणतः ॥ ७८१ ॥ ध्रुवादिकं यजेदादौ मातंगीं परमं ततः ॥ सर्वावरणशक्तीनां ङेन्तं नाम हृदंतकम् ॥ ७८२ ॥ विघ्नेशदुर्गाबटुकक्षेत्रेशा-दिक्सुरास्तथा ॥ वज्राद्याः पूजनीयास्स्युरित्थं सिद्धिर्मनोर्भवेत् ॥ ७८३ ॥ रम्भादण्डैः शुभैर्होमाद्रोगो राज्यन्तु बिल्वकैः ॥ पत्रैः फलैर्वा वश्या स्याज्ज-नता ब्रह्मवृक्षजैः ॥ ७८४ ॥ रोगनाशोऽमृताखण्डैर्निम्बैः श्रीस्तण्डुलैरपि ॥ अवृष्टिं लवणैर्विद्यात्तगरैर्वेतसैर्जलम् ॥ ७८५ ॥ लवणैर्निम्बतैलाक्तैः शत्रुनाशोधिकाशनम् ॥ निशाचूर्णयुतैः काशैर्होमात्स्यात्स्तम्भनं द्विषाम्॥ ॥ ७८६ ॥ रक्तचन्दनकर्पूरमांसीकुंकुमरोचनाः ॥ चन्दनागुरुकर्पूरं गन्धाष्टकमुदीरितम् ॥ ७८७ ॥ एतद्धोमाज्जगद्वश्यं जायते मन्त्रिणो ध्रुवम् ॥ एतत्पिष्टायुतं जप्त्वा तिलकेन जगत्प्रियः ॥ ७८८ ॥ कदलीफलहोमेन सर्वेष्टं समवाप्नुयात् ॥ किं बहूक्तेन मातङ्गी पूजिता कामदा नृणाम्॥७८९॥मध्वष्टलोलरचितां पुत्तलीं दक्षिणार्धतः ॥ हूयादष्टो-त्तरशतं खादिराग्नौ नरो निशि ॥ ७९० ॥ शालिपिष्टमयीं तां तु भक्षयेत्स्त्री वशीकृते ॥ कृष्णभूतनिशि ध्वांक्षोदरे क्षिप्त्वा शुभप्रभाम् ॥ ७९१ ॥ नीलसूत्रेण संवेष्ट्य चिताग्नौ प्रजपेदमुम् ॥ सहस्रजप्तं तद्वह्निं यस्मै दद्यात्स दासवत् ॥ ७९२ ॥ एवं गणेश्वराः प्रोक्ताः पश्चिमाम्नायसंस्थिताः ॥

१ ॐ ह्रीं ऐं श्रीं सर्वशक्तिकमलासनाय नमः ॥

मुनिदेव्यादिसेव्यानां कार्श्या सङ्ख्या न विद्यते ॥ ७९३ ॥ प्रणवादिच्च-तुर्थ्यन्तैर्नमसापि समन्वितैः ॥ स्वबीजाख्यैर्वर्णलक्षजपस्तेषामुदाहृतः ॥ ॥ ७९४ ॥ इक्षुखण्डैस्तिलैर्वापि कमलाद्यैः प्रमोदकैः ॥ तेषां होमः प्रकर्तव्यो मधुरत्रयसंयुतैः ॥७९५॥ भवन्ति फलदास्ते तु बिन्द्वादिकविनायकाः॥ आकर्षाद्याश्च बटुका देवतास्ताः फलप्रदाः ॥ ७९६ ॥

इति श्रीमहामायामहाकालानुमते मेरुतन्त्रे शिवप्रणीते पश्चिमाम्नाय गणपतिमन्त्रकथनेमकोनविंशः प्रकाशः ॥ १९ ॥

---

श्रीशिव उवाच ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि उत्तराम्नायसिद्धिदान् ॥ वदेद्ध-स्तिपिशाचीति लिःलिःस्वाहा नवाक्षरः ॥ १ ॥ कंकालोस्य मुनिश्छन्दो विराडुच्छिष्टनामकः ॥ गणेशो देवता प्रोक्तस्सर्वसम्पत्प्रदायकः ॥ २ ॥ द्वित्रीन्द्विन्दुद्विभिश्चापि पञ्चाङ्गविधिरीरितः ॥ ध्यानं पूजापुरश्चर्य्यादिकं स्याद्वक्रतुण्डवत् ॥ नवलक्षोः जपः प्रोक्तः काम्यकर्म्माण्यथ ब्रुवे ॥ ३ ॥ प्रतिमां कारयेद्धीमान्निम्बकाष्ठमयीं शुभाम् ॥ साध्यांगुष्ठप्रमाणां च गणेशस्य महात्मनः ॥ ४ ॥ स्पृष्ट्वा तां प्रजपेन्मन्त्रं काम्यासिद्धिस्ततो भवेत् ॥ षष्ठ्यां चैव चतुर्दश्यां कृष्णपक्षे च मन्त्रवित् ॥ ५ ॥ उच्छिष्टो रात्रिमध्ये तु जपेन्मन्त्रमिमं शुभम् ॥ वाञ्छितं वशमायाति साधकस्य न संशयः ॥ ६ ॥ भूर्ज्जपत्रे समालिख्य साध्यनाम यथाविधि ॥ मन्त्रेण वेष्टितं कृत्वा जपेन्मन्त्रमनन्यधीः ॥ पादेनाक्रम्य तत्पत्रं हस्तकाष्टीरियं मता ॥ ७ ॥ लिखित्वा पूर्ववत्पत्रं पूजयित्वा विधानतः ॥ साध्यं स्मृत्वा जपेन्मन्त्रं सर्वलोकं वशं नयेत् ॥ ८ ॥ धारयेन्मस्तके यन्त्रं जपन्मन्त्रमनन्यधीः ॥ राजानं राजपत्नीं वा कर्षयेत्तत्क्षणात्सुधीः ॥ ९ ॥ ताम्बूलपत्रपुष्पाणि वस्त्राण्याभरणानि च ॥ फलमूलादिवस्तूनि समादाय जपेन्मनुम् ॥ एकविंशतिवारान्हि दद्यादिष्टाय नान्यथा ॥ १० ॥ वशकृत्सर्वलोकानां प्रयोगोयं प्रकीर्तितः ॥ श्रीखण्डधूपदानेन राजानं वशमानयेत् ॥ ११ ॥ समिधो निम्बकाष्ठस्य कटुतैलसमन्विताः ॥ काकपक्षसमायुक्ता हुत्वा मन्त्री यथाविधि ॥ चिताग्नौ भूरि शत्रुं स उच्चाटयति नान्यथा ॥ १२ ॥ उलूककाकयोः पक्षांस्तद्वत्तारक्तसंयुतान् ॥

श्मशानाग्नौ तु जुहुयाद्विद्वेषः स्निग्धयोर्भवेत् ॥ १३ ॥ शत्रुपादरजोयुक्ता चक्रि-
हस्तमृदं बुधः ॥ श्मशानभस्मसंयुक्तामुद्वर्त्तनसमन्विताम् ॥ शत्रोस्तत्पुत्तलीं
कुर्य्यात्सर्वावयवशोभिताम् ॥ १४ ॥ तस्या हृदि लिखेन्नाम मूलमन्त्रेण
वेष्टयेत् ॥ कृत्वा प्राणप्रतिष्ठान्तु विषरक्ताढ्यपात्रके ॥ १५ ॥ स्थापयित्वा
जपेन्मन्त्रं सम्यगेकाग्रमानसः ॥ म्रियतोरर्न्नि सन्देहो देवताभिः सुरक्षितः ॥
॥ १६ ॥ चितायां दग्धदम्पत्योर्भस्मादाय यथाविधि ॥ रोचनाकुंकुमाभं च
भूर्ज्जे नाम समालिखेत् ॥ १७ ॥ वेष्टितं मूलमन्त्रेण प्राणस्थापनमाचरेत् ॥
साध्यं स्मृत्वा जपेन्मन्त्रं सम्यगष्टोत्तरं शतम् ॥ द्विष्टयोर्जनयोः सम्यक्स्नेहो
भवति तत्क्षणात् ॥ १८ ॥ अथ मन्त्रान्तरं वक्ष्ये चोच्छिष्टस्य गणेशितुः ॥
ॐ ह्रीं क्लींह्रीं समुच्चार्य ह्रींह्रीं घेंघें तथा च फट् ॥ १९ ॥ स्वाहान्तो भवव-
र्णोयं प्राग्वद्ध्यानादिकं मतम् ॥ मुन्यादयः प्रयोगाश्च वर्णलक्षमितो जपः
॥ २० ॥ अथान्यत्सम्प्रवक्ष्येहं चोच्छिष्टस्य महामनुम् ॥ ॐ ह्रींक्रीं च
समुच्चार्य ह्रींहुंघेंघें तथा च फट् ॥ २१ ॥ [1]एकदंष्ट्रायेति हस्तिमुखलम्बोदराय च ॥
उच्छिष्टात्मने क्रांक्रूंह्रींह्रींघेंघेंस्वाहेति ॥ २२ ॥ सप्तविंशतिवर्णोयं वक्र-
तुण्डषडर्णवत् ॥ [2]चतुर्थ्यन्तं हस्तिमुखदद्यात्रं यदोच्चरेत् ॥ २३ ॥ त्रयोविंशतिवर्ण
स्तु तस्य मंत्रः प्रकीर्त्तितः ॥ मुन्यादिदेवतोच्छिष्टगणनाथः प्रकीर्त्तितः ॥ २४ ॥
प्राग्वज्ज्ञेयं प्रयोगादि सिद्धिः कलियुगे द्रुतम् ॥ अथान्यत्सम्प्रवक्ष्यामि
मन्त्रं षड्विंशवर्णकम् ॥ २५ ॥ [3]तारो नमो भगवते एकदंष्ट्राय हस्तिं च ॥
मुखलम्बोदरायेति तथोच्छिष्टमहात्मने ॥ २६ ॥ क्रौंक्लौंह्रींहुं ततो घेंघें स्वा-
हान्तोयम्मनुर्मतः ॥ ऋष्यादिकं पुरा प्रोक्तं [4]क्रौंक्लूंहुं च घेद्वयम् ॥ एतैः षडङ्गं कुर्वीत
प्राग्वद्ध्यानं च पूजनम् ॥ २७ ॥ अथान्यमस्य वक्ष्यामि द्वादशार्णं महाम-
नुम् ॥ ह्रींगं हस्तिपिशाचि लिखेत्स्वाहेति मन्त्रकः ॥ २८ ॥ नवार्णमन्त्रव-
त्सर्वं ध्यानपूजादिकं मतम् ॥ पुरश्चर्य्यार्कलक्षास्यात्प्रयोगादि च पूर्ववत् ॥ २९ ॥

---

१ एकदंष्ट्राय हस्तिमुखलम्बोराय उच्छिष्टात्मने क्रांक्रूं ह्रींह्रींघेंघें स्वाहा ॥ २ पूर्वोक्त उच्छिष्टात्मने एतत्पदस्याग्रे हस्तिमुखाय योजनेन त्रिनेत्रामितमनुर्भवति ॥ ३ ॐ नमो भगवते एकदंष्ट्राय हस्तिमुखलम्बोदराय उच्छिष्टमहात्मने क्रौंक्लूंह्रींहुंघेघे स्वाहा ॥ ४ क्रौं हृदयाय नमः, क्लूं शिरसे स्वाहा, हुं शिखायै वषट्, घें कवचाय हुम्, घें नेत्रत्रयाय वौषट्, क्रौंक्लूं ह्रौं हूं घेघे अस्त्राय फट् ॥

तारो[1] नमोच्छिष्टगणेशाय दशाक्षरो मनुः ॥ ध्यानपूजाप्रयोगादि सर्वमस्य दशार्णवत् ॥ ३० ॥ दशाक्षरस्यास्य चान्ते कथितश्चेन्नवाक्षरः ॥ एकोनविंशवर्णः स्यात्तदा मन्त्रः सुसिद्धिकृत् ॥ ३१ ॥ ध्यानपूजादिकं सर्वं विज्ञेयं तु नवार्णवत् ॥ द्व्यंगद्वित्रिद्विद्विभिश्च मन्त्रार्णैः स्यात्षडङ्गकम् ॥ ३२ ॥ अथान्यत्सम्प्रवक्ष्यामि द्वात्रिंशद्वर्णकं मनुम्॥तारं[2] हस्तिमुखेति च ङेन्तं लम्बोदरं वदेत् ॥ ३३ ॥ उच्छिष्टेति महात्मेति ने आंक्रोंह्रीं समुच्चरेत् ॥ क्लींह्रीं हुं वेद्वयं चापि उच्छिष्टायाग्निगेहिनी ॥ ३४ ॥ रसेषुसतषट्पङ्क्तनेत्रार्णैरङ्गकल्पनम् ॥ उच्छिष्टगणनाथस्य मन्त्रेष्वेषु न शोधनम् ॥ ३५ ॥ सिद्धयादि चक्रमायादौ प्राप्तास्ते सिद्धिदा गुरोः ॥ मनवोमी सदा गोप्या न प्रकाश्या इतस्ततः ॥ ३६ ॥ वाममार्गाराधनं तु विनानेन न सिध्यति ॥ जातिभ्रंशो निर्धनत्वं वंशच्छेदोन्यथा भवेत् ॥ ३७ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि कृतयुक्तास्तु शक्तयः ॥ ब्राह्मणेभ्यः सदा गोप्या विशेषाद्वेदकर्म्मणः ॥ ३८ ॥उच्छिष्टचाण्डलिनीति सुमुखी च महापिशा ॥ चिनि ह्रीं वत्रयं बिन्दुविसर्गाभ्यां च संयुतम् ॥ ३९ ॥ विंशत्यर्णो[3] मनुः प्रोक्तो भजतामिष्टसिद्धिकृतम् ॥ यस्य तिष्ठति मन्त्रोयं न स विघ्नैस्तु बाध्यते ॥ ४० ॥ शवोपरि समासीनां रक्ताम्बरपरिच्छदाम् ॥ रक्तालङ्कारसंयुक्तां गुणहारविराजिताम्॥ ४१ ॥रक्तां षोडशवर्षां च पीनोन्नतवनस्तनीम्॥ उच्छिष्टेन बलिं दत्त्वा जपेत्तद्गतमानसः॥ ४२॥ उच्छिष्टेन प्रकर्त्तव्यो जपोस्याः सिद्धिमिच्छता॥उच्छिष्टं जपतो ह्यस्य जायन्ते सर्वसिद्धयः ॥ ४३ ॥ स्थण्डिलं मण्डलं कृत्वा चतुरस्रं समाहितः ॥ पूजयेन्मण्डले देव्या मूलमन्त्रेण मन्त्रवित् ॥४४॥ तत्र चाग्निं समाधाय वह्निरूप व्यवस्थिताम् ॥ देवीं ध्यात्वा चरेद्धोमं दधिसिद्धार्थतण्डुलैः ॥ सहस्रैकं विधानेन राजा भवति वश्यगः ॥४५॥ माज्जीरस्य तु मांसेन यो देव्यै होममाचरेत् ॥ स प्राप्नोति परां विद्यां शस्त्रशास्त्रवशीकृताम् ॥४६॥ कुर्य्याच्छागस्य मांसेन होमं मधुसमन्वितम् ॥ सहस्रैकं विधानेन भवन्ति धनसिद्धयः ॥४७॥

---

१ ॐनमः उच्छिष्टगणेशाय ॥ २ ॐहस्तिमुखाय लम्बोदराय उच्छिष्टमहात्मने आंक्रोंह्रींक्लीं ह्रींहुंघेघेउच्छिष्टाय स्वाहा ॥ ३ उच्छिष्टचाण्डालिनि सुमुखि महापिशाचिनि ह्रींवंवंवः ॥

विद्याकामश्चरेद्धोमं शर्कराघृतपायसैः ॥ मासात्तस्य भवन्त्येव सिद्धा विद्याश्चतुर्दश ॥४८॥ रजस्वलाया वस्त्रेण मधुना पायसेन च ॥ होमं कृत्वा महादेवि त्रैलोक्यं वशमानयेत् ॥४९॥ नागवल्या चरेद्धोमं मधुना सहसर्पिषा ॥ अयुतैकं विधानेन सिद्धयोऽष्टौ भवन्ति च ॥ ५० ॥नरमार्जारमांसेन घृतेन मधुना सह ॥ चाण्डालकेशयुक्तेन भवदाकर्षणं ध्रुवम् ॥५१॥ तथा बकस्य मांसेन मधुना लोलितेन च॥कृत्वा होममवाप्नोति विद्यावित्तवराननाः ॥५२ ॥ मधुराकस्य होमेन चितावह्नौ तु मन्त्रवित् ॥ कोकिलाकाकपक्षैश्च होमाच्छत्रून्विनाशयेत् ॥ ५३ ॥ उच्चाटनाय शत्रूणां होमं कुर्य्याच्च मन्त्रवित् ॥ पूर्वोक्तेन विधानेन चिताकाष्ठहुताशने॥५४॥उलूककाकपक्षाभ्यां कृत्वा होमं निरन्तरम्॥ शत्रून्विद्वेषयेद्द्वेष्टा चान्योन्यकलहाकुलान् ॥५५ ॥ उलूकपक्षहोमेन गर्भपातो भवेत्स्त्रियाः ॥ सहस्रैकं विधानेन कुर्य्याद्धोमं समाहितः ॥ ५६ ॥ बिल्वपत्रैः समध्वाज्यैर्मासमेकं निरन्तरम् ॥ वन्ध्यापि लभते पुत्रं चिरञ्जीविनमुत्तमम् ॥ ॥ ५७ ॥ प्रातरुत्थाय यः कश्चित्कुर्य्याद्धोमं दिनेदिने ॥ जपापुष्पैराज्ययुतैरष्टोत्तरशतं प्रिये ॥ षण्मासस्य प्रयोगेण भवेदाकर्षणं ध्रुवम् ॥ ५८ ॥ देवगन्धर्वकन्याश्च तथा नागादिकन्यकाः ॥ हठाच्चागत्य कामार्त्ता बलादालिङ्गयन्ति तम् ॥ ५९ ॥ विद्यायै क्रियते होमस्तिलैः पायसमिश्रितैः ॥ स प्राप्नोति महाविद्यां शास्त्रौघदशशालिनीम् ॥ ६० ॥ मधुना रुरुमांसेन होमं कुर्य्यात्प्रयत्नतः॥विद्यावान्धनवान्वापि सर्वशास्त्रवशंकरः ॥६१॥ भोजनानन्तरं चास्या बलिं कृत्वा दिनेदिने॥शतमष्टोत्तरं मन्त्रमुच्छिष्टेन जपेत्सदा ॥६२॥ उत्कटे वा श्मशाने वा शून्यागारे चतुष्पथे ॥ बलिप्रदानतो देवी प्रत्यक्षा भवति ध्रुवम् ॥ ६३ ॥ गोपनीयं प्रयत्नेन कथनीयं न कस्यचित् ॥ गुरुभक्तिश्च कर्त्तव्या कायेन च धनेन च॥६४॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि वामदक्षिण निर्णयम् ॥ कलौ विष्णुप्रार्थनया सर्वतन्त्रेषु गोपितम् ॥६५॥ मनुष्याः पशवो ज्ञेयाः पशवोपि नराः सुराः ॥ पशवोप्यसुराश्चापि भक्ष्यं पानं च मैथुनम् ॥ ॥ ६६ ॥ जानन्ति तुल्यं भेदेन शीतोष्णाद्याः षडूर्मयः ॥ सर्वानेव हि बाधन्ते ममानन्दवनेमुतः ॥ ६७ ॥ द्वयोस्तुल्या गतिः प्रोक्ता कामक्रोधादिकामतः॥

तत्कथं मनुजाः श्रेष्ठास्तत्र त्वां प्रब्रवीमि च ॥ ६८ ॥ पशुदेहादन्यलोकसाधनं नैव जायते ॥ नृदेहात्तद्भवेद्यस्मात्तस्माच्छ्रेष्ठा नरा मताः ॥ ६९ ॥ यो यस्य धर्म्मो विहितस्तेन धर्मेण यो व्रजेत् ॥ तस्यैव परलोकोऽस्ति यावत्पुण्यं वसेद्दिवि ॥ ७० ॥ पुनराढ्यगृहे जन्म सत्संगश्चोपजायते ॥ सावधानस्तत्र यदा शास्त्रश्रवणतो भवेत ॥ तदायं जायते विप्रः श्रोत्रियाणां कुले सुराः ॥ ॥ ७१ ॥ तत्रापि सावधानश्चेद्ब्राह्मधर्म्मपरो यदा ॥ तदा समानन्दवने दीक्ष्यते स समान्तरे ॥ ७२ ॥ पुनः कोपि स्वधर्म्मस्थो ज्ञानाभावाद्वियोनिषु ॥ जायते धर्म्मसाहाय्यान्मया काश्यां विमोच्यते॥ कालस्यांशोऽधिकस्तत्र जपेच्च बहु जीवति ॥ ७३ ॥ उपासना द्विधा प्रोक्ता सकामा कामविच्युता ॥ मोक्षबीजं तु निष्कामा सकामा भवबीजकम् ॥ ७४ ॥ पन्थास्तु दक्षिणः श्रेष्ठो वामः श्रेष्ठतरो मतः ॥ यस्तु वामं विजानाति स एव परमो गुरुः ॥ ॥ ७५ ॥ अहं जानामि सम्पूर्णं पादोनं सनकादयः ॥ अर्धं चापि वशिष्ठाद्याः शक्राद्याः पादसम्मितम् ॥ ७६ ॥ जानन्ति नाथाः षष्ठांशं कोट्यंशमितरे जनाः॥ जानंति कोटयश्चात्र जायंते कृमियोनिषु ॥७७॥ यः करोति सुरापानं जीवन्मुक्तः स जायते ॥ सुरतं यः प्रकुरुते त्रैलोक्यकरणक्षमः ॥ ॥७८॥यो भक्षयति मत्स्यांश्च स शिवो नात्र संशयः॥ मुद्रां भक्षयते यस्तु स सिद्धीनां पतिर्भवेत् ॥ ७९ ॥ मांसं खादति यो मर्त्यस्तस्य मृत्युभयं कुतः ॥ एतस्य चार्थत्रितयं सात्त्विको राजसस्तथा ॥ ८० ॥ तामसश्चेति तत्राद्यो वाममार्गो निरूप्यते ॥ तं मार्गं ये विजानन्ति ते मुक्ता नात्र संशयः ॥ ८१ ॥ श्रीकृष्णो वाममार्गन्तु फाल्गुनायोपदिष्टवान् ॥ मया चिन्तयता दृष्टस्समुनिश्च निरूपितः॥८२॥चाण्डालो वा तुरुष्को वा ब्रह्महा वाथ मत्सरी॥ श्रोत्रियो वा वाममार्गी भुक्तिमुक्त्योः स भाजनम् ॥ ८३ ॥ ज्ञातोयं शुकदेवेन गर्भस्तंभेन धीमता ॥ तं निन्दयति यः पापी विष्ठायां जायते कृमिः ॥ ८४ ॥ वाममार्गे च तन्त्राणि मया त्रीणि कृतानि तु ॥ दत्तात्रेयायचैकन्तु श्रीकृष्णाय तथा परम् ॥ ८५ ॥ देव्यै दत्तं तृतीयन्तु दत्तेन तु युगद्वये ॥ बहवो वृष्णिकाद्याश्च वाममार्गेण मोचिताः ॥ ८६ ॥ श्रीकृष्णाय तु

यद्दत्तं तेन च द्वापरे युगे ॥ इह लोकेषु सन्दाय देवलोके प्रवेशिताः ॥८७॥ यत्तन्त्रं तु मया देव्यै दत्तं तेन विमोहिताः॥पण्डिता अपि संसारे चान्येषां तु कथास्ति का ॥ ८८ ॥ तत्सारं सम्प्रवक्ष्यामि सर्वतन्त्रेषु गोपितम् ॥ कुण्डली शक्तिमुत्थाप्य हठयोगेन भोः सुराः ॥ कृत्वा बुभुक्षितां तान्तु जीवं तस्यै- प्रदर्शयेत्॥८९॥साजीवभक्षणार्थन्तु मुखं व्याकुरुते यदा॥शिरश्चन्द्रामृतं तस्या मुखं यात्येतदीरितम् ॥ ९० ॥ जरामृत्युहरं देवाः सुरापानन्तु वामिनाम् ॥ पीत्वापीत्वा पुनः पीत्वा देहो भवति काष्ठवत् ॥ ९१ ॥ प्राक्कर्म्मवेगतो देहे नाना कर्म्माणि भान्ति च ॥ जीवः प्राप्यात्मसाम्यत्वं नित्यानन्दमयो भवेत् ॥ देहाभिमाने गलिते साधकः स्यान्महेश्वरः ॥ ९२ ॥ भ्रामितन्तु कुलालेन चक्रं चरति वेगतः ॥ तथास्य देहश्चरति व्यहङ्कारस्तु कर्म्मतः ॥ ९३ ॥ यथा केशनखादीनां निर्गतानां तु कर्त्तने ॥ तद्वन्न दुःखं भवति ज्ञानिनां देहताडने ॥ ९४ ॥ जीवः सर्वगतः केशनखादीनां यथा भवेत् ॥ वृद्धिस्तथास्य देहस्य व्यापारः सम्प्रवर्त्तते ॥ ९५ ॥ यथा वृक्षः सजीवोपि पीडया नानुभूयते ॥ तथा चन्द्रसुरामत्तः कामाद्यैर्नानुभूयते ॥ ९६ ॥ इडापिङ्गलयोः प्राणान्सुषुम्णायां प्रवर्त्तयेत् ॥ सुषुम्णा शक्तिरुद्दिष्टा जीवोयन्तु परः शिवः॥तयोस्तु सङ्गमो देवाः सुरतं नाम कीर्तितम् ॥९७॥ वीर्य्यपातस्य समये सुषुम्णासन्नमारुते ॥ उत्पद्यते तु यत्सौख्यं तस्मात्कोटिगुणं तु तत् ॥ ९८ ॥ समाधिस्थास्तु योगीन्द्रास्तेन सौख्येन निर्वृताः॥सहस्रयुगकालन्तु मन्यन्ते ते निमेषवत् ॥ एतदेव रतं प्रोक्तमन्यत्स्याद्रासभं रतम् ॥ ९९ ॥ पञ्चक्लेशास्तु मत्स्याः स्युर्विवेकेनैव ताञ्जयेत् ॥ मत्स्यभक्षणमित्युक्तं मुक्ति- मार्गनिदर्शकैः ॥ १०० ॥ क्लेशकर्म्मविपाकैश्च ह्याशयैः स्यादसङ्गतिः ॥ तदानीं ह्यानन्दमय आत्मत्वं प्रतिपद्यते ॥ १०१ ॥ आत्मनो जायते मोदस्ता मुद्राः परिकीर्त्तिताः ॥ ता ज्ञेया धारणाध्यानसमाध्या- ख्यास्तु मोक्षदाः ॥ १०२ ॥ देहबन्धकरं यत्तु तन्मांसं परिकीर्त्तितम् ॥ अज्ञानेन यतो जीवो देहपाशेन बध्यते ॥ १०३ ॥ अज्ञानभक्षणं प्रोक्तं तन्मांसस्य च भक्षणम्॥ अज्ञाननाशाज्ज्ञानस्योदयान्मोक्षः प्रजायते॥१०४॥

दत्तात्रेयाय यत्प्रोक्तं सात्त्विकं तन्निरूपितम् ॥ अनेन वाममार्गेण मोक्षो भवति सर्वथा ॥ १०५ ॥ श्रीकृष्णार्पितसारार्थं तन्त्रराजस्य गृह्यताम् ॥ ददाति यत्तल्लभते हीति शास्त्रेषु निश्चयः ॥ १०६ ॥ न मांसभक्षणे दोषो न मद्ये न च मैथुने ॥ प्रवृत्तिरेषा भूतानां निवृत्तिश्च महाफला ॥ ॥ १०७ ॥ व्यामोहकारकं मद्यं निषिद्धं नरकप्रदम् ॥ ब्राह्मणो न स्पृशेन्मद्यं वैदिके वर्त्मनि स्थितः ॥ १०८ ॥ यावद्वेदश्च वेदी च कलौ भूमौ प्रवर्त्तते॥ तावन्न ब्राह्मणो मद्यं कलौ सेवेत कर्हिचित् ॥ यथामृतन्तथा मद्यम्प्रोक्तं काले निषेवितम् ॥ १०९ ॥ अमृतेन सहोत्पन्नं स्थाने मद्यं सुधायते ॥ विषेणापि समुत्पन्नं तेन मद्यं विषायते ॥ ११०॥ अग्निर्नाम च गायत्री सा प्राप्ताचेद्गुरोर्मुखात् ॥ कुलद्वयविशुद्धेन वैदिकेनैव वर्त्मना ॥ १११ ॥ अज्ञाते तन्मुखाग्नौ तु सद्यो बिन्दुः पतेद्यदि ॥ प्रतारको वचोभिर्वा धनबुद्ध्या तथा परम् ॥ इह लोके स दुःखी स्यात्प्रेत्य राक्षसतां व्रजेत् ॥११२॥ यदि तन्त्रक्रियायुक्तो गुरुणा संस्कृतो भवेत् ॥ तदा किञ्चित्सुखं प्राप्य प्रेत्य लक्षाधिपो भवेत् ॥ ११३ ॥ विष्णोरप्यर्च्चनं कुर्य्यात्तर्प्पणं सुरया पुनः ॥ अविप्रः सौख्यमाप्नोति प्रेत्य ब्रह्मणि लीयते ॥ गौडी पैष्टी च माध्वी च सुरा इत्यभिधीयते ॥ ॥ ११४ ॥ राजन्यवैश्ययोर्नेष्टा ब्राह्मणस्य तु का कथा ॥ मन्त्रेण संस्कृतं कृत्वा शक्त्युच्छिष्टं तु यः पिबेत् ॥ मद्यं पुनः पुनः स्तन्यं न पिबेत्स पयो नरः ॥ ११५ ॥ दैवात्कदाचिद्विप्रोपि धूर्त्तमन्त्रैः प्रतारितः ॥ दैवेन मद्यपो जातस्तस्योद्धारो मयोच्यते ॥ ११६ ॥ त्यजेत्स वैदिकं कर्म्म तुलसीं नैव संस्पृशेत् ॥ चाण्डालो वा तुरुष्को वा यः कश्चित्कौलमास्थितः ॥ तस्यैव सङ्गः कर्त्तव्यो नान्यविप्रस्य कुत्रचित् ॥ ११७ ॥ प्रत्यहम्पूजयेद्देवीं शाक्तैः सङ्गस्तथान्वहम् ॥ देवताश्चिन्तयेच्छाक्तिं तां पुमान्स्वयमेव हि ॥ ११८ ॥ एवम्भावनया युक्तः शाक्तैः सङ्गं समाचरेत् ॥ प्राणस्यायमनाद्वापि भेषजान्मन्त्रतस्तथा ॥११९॥ संस्तभ्य शुक्रम्प्रजपेद्यावत्स्खलति चाङ्गना ॥ शक्त्यग्नौ तद्दशांशेन स्खलनं होम एव तत् ॥१२०॥ पुनारतं समारभ्य स्खलिताभ्यां च तर्प्पणम् ॥ पुना रतान्मार्ज्जनञ्च एतदष्टदिनैश्चरेत् ॥ १२१ ॥ सम्भोज्याः

शक्तयः पञ्च नवमे तु दिने तथा ॥ एवं कृते विधाने च देवता वरदा भवेत् ॥ ॥ १२२ ॥ रौहितकैस्तु तृप्तिः स्याद्वर्षं मासं च माद्गुरेः ॥ त्रिरात्रन्तिमिभिस्तृप्तिः शृंग्या वापि दिनद्वयम् ॥ १२३ ॥ भागाष्टकं माषपिष्टं षड्भागोजपलस्य च ॥ सुरस्य च सुपक्वस्य शाल्यं भागचतुष्टयम् ॥ १२४ ॥ भागद्वयं तण्डुलानां मेथिकाहिंगुजीरकम् ॥ लवणं च तथा योग्यं सुरया मर्दितं दृढम् ॥ १२५ ॥ चक्रीकृतं नागवल्लीदलैश्च परिवेष्टितम् ॥ जलयन्त्रे विपक्वं तच्छक्तिमुद्रेयमीरिता ॥ १२६ ॥ कालखण्डं कर्करस्य चव्यं यन्त्रविपाचितम् ॥ माषाढकीमसूरैश्च चणकान्नैः समान्वितम् ॥ १२७ ॥ समभागेन चूर्णेन तच्च हिंग्वादिभिर्युतम् ॥ वटकाः कटुतैलेन पक्वाः स्यान्मुद्रिका परा ॥ ॥ १२८ ॥ सर्वासामेव मुद्राणां करणं तु जले स्थले ॥ सुरा देयाथ वा मद्यमासवं वा न चेतरत् ॥ १२९ ॥ गोधूमचूर्णं मांसं च पक्वं सम्मेलयेद्दृढम् ॥ दिनत्रयं जले स्थाप्यं यावदम्लं प्रजायते ॥ १३० ॥ सूक्ष्मं मत्स्यं माषपिष्टं मसूराणां च चूर्णकम् ॥ गोधूमशष्कुलीमध्ये दत्त्वाज्ये परिपाचयेत् ॥ इयं तु परमा मुद्रा शक्तीनामतितृप्तिदा ॥ १३१ ॥ धारिका पूरिकाचैव वेष्टनी पूर्णपूरिका ॥ दक्षमार्गस्थशक्तीनां मुद्रिकाः परिकीर्तिताः ॥ १३२ ॥ सम्यक्सुपक्वं मांसं च तथा मत्स्यभवं पलम् ॥ स्विन्नेन हारिमन्थानं द्विदलेन च मेलयेत् ॥ १३३ ॥ सम्यक्पिष्ट्वा कटाहे तद्घृतेन परिपाचयेत् ॥ समं च सामितं दत्त्वा मारिचानि च पत्रजम् ॥ १३४ ॥ लवङ्गं चापि क्षुद्रैलां जातीं कंकोलकं विधुम् ॥ यथोचितं तत्र दत्त्वा मोदकान्कारयेद्दृढान् ॥ वाममार्गगणेशानां मुद्रा परमतोषकृत् ॥ १३५ ॥ माषान्मकुष्ठांश्चणकान्मुद्गाढकपरं समम् ॥ सम्यक्पिष्ट्वा निबद्धं च दधि दत्त्वा विलोडितम् ॥ १३६ ॥ सूक्ष्मास्य तु वटी बद्धा पङ्क्तिसितया तथा ॥ एलादिकसुगन्धैश्चोद्धूलिका मुद्रिका मता ॥ १३७ ॥ सम्यक्स्विन्नस्य मांसस्य राजिकावत्कृतस्य च ॥ शुष्कस्य भानुकिरणैराज्ये पक्वस्य षड्गुणे ॥ १३८ ॥ दुग्धं दत्त्वा पचेत्सम्यग्यावद्द्रवति पिण्डितम् ॥ समिता च समां दत्त्वा कर्पूरादि यथारुचि ॥ मुद्रेयं गणनाथस्य प्रिया तोषकरी सदा ॥ १३९ ॥ सम्यक्तित्तिरिमांसं च जलयन्त्रेण पाचयेत् ॥

घृतसम्भर्जितं तेन तुल्यं चणकचूर्णकम् ॥ १४० ॥ संमेल्य भर्ज्जयित्वा च घृते सम्यग्विपाचयेत् ॥ सितया मुद्रिका चेयं गणेशानां प्रियंकरा ॥ १४१ ॥ हरिमत्स्यकबिन्दूनां मुद्गानां चूर्णकस्य च ॥ तथा गोधूमचूर्णानां मुद्गचूर्णस्य लड्डुकाः॥दक्षिणानां गणेशस्य प्रीतिदा मुद्रिका मता ॥१४२॥ अब्राह्मणनराणान्तु मांसं सर्वोत्तमं मतम् ॥ मृगाणां च तथा प्रोक्तं तित्तिरादिकपक्षिणाम् ॥ मांसं तृप्तिकरं ज्ञेयं त्र्यहं कालीयकस्य तु ॥ १४३॥ दिनाष्टकं यथान्यायं यस्मिन्देशे तु यद्भवेत् ॥ खाद्यमांसं दैवतायै सम्यक्तच्च निवेदयेत् ॥ १४४ ॥ पूजायन्त्रं दक्षमार्गे प्रोक्तं गन्धाष्टकेन तत् ॥ लिखेद्वा केशरहिमरोचनाभिः समालिखेत् ॥ १४५ ॥ वाममार्गी लिखेदाद्यपुष्पेण यदि यन्त्रकम् ॥ षण्मासपूजनात्तस्य त्वरितं सिद्धिमाप्नुयात् ॥१४६॥ युवत्याश्च प्रसूताया अभावे गृह्यते रजः ॥ तदभावे तरुण्यास्तु नीरोगाया रजो मतम्॥ ॥ १४७ ॥ तदभावे च कुसुमं ग्राह्यञ्चैवापराजितम् ॥ तस्योर्ध्वभागे निक्षिप्य घर्षितं रक्तचन्दनम् ॥ १४८ ॥ तदा गणं मूलमार्गोत्तेन यन्त्रं समालिखेत् ॥ तदभावे तु सुरया घृतरक्तकचन्दनैः ॥ १४९ ॥ यथोक्तं सलिखेयन्त्रं तुष्टा भवति देवता ॥ नवमेत्र प्रकाशोस्ति वाममार्गे सुरोत्तमाः ॥ १५० ॥ वाममार्गे प्रवृत्तस्तु पूजालोपं करोति चेत् ॥ नित्यं न कुरुते तस्य देवतातिबुभुक्षिता ॥ सन्ततिश्चापि सम्पत्तिं भक्षयेन्नात्र संशयः॥ १५१ ॥ प्रतिवर्षं पूजनं तु यन्त्रद्रव्योक्तवर्त्मना॥ वर्षार्धार्धार्धमासेन देवतातृप्तिकारकम् ॥ निर्धनेनैव कर्तव्यो वाममार्गः क्षयावहः ॥ १५२ ॥ रतिमात्रे वामिनात्र कर्तव्या बुद्धिरीदृशी ॥ लिंगं शिवो भगः शक्तिर्गांगं वारि जलं मतम् ॥ ॥ १५३ ॥ इति भावनया वामी रतिं कुर्वन्विमुच्यते ॥ अन्यथा स्त्रीगमनेन नरके परिपच्यते ॥ १५४ ॥ जीवस्य हननेन पापं वामिनां तन्न विद्यते ॥ यदीदृशी तदा बुद्धिर्नोचेन्निरयमाप्नुयात् ॥ १५५ ॥ अवश्यमेव कर्तव्यं मृत्युरोगागतेन च ॥ तस्मादस्य पशोः पापक्षयार्थं गमनाय च ॥ १५६ ॥ सुरलोके घातयामि तत्सुखस्यापि सिद्धये ॥ देवतापरलाभेन तमो हन हनाम्यहम् ॥ १५७ ॥ इत्थं विचार्य्य यो हन्यात्तस्य तुष्यति

देवता ॥ पूर्वजन्मनि यैर्वामिभिः कृतं यदुपासनम् ॥ १५८ ॥ सिद्ध्यन्ति ते तु पशवो बलियोग्या भवन्ति हि॥देवतासन्निधौ त्यक्त्वा प्राणान्यांति सुरालयम् ॥ १५९ ॥ वामिना तु सदा कार्य्या: सर्वासु प्रमदास्वपि ॥ देवीबुद्धिः कठोरं वाप्रियं नैव सुसंवदेत् ॥ १६० ॥ आत्मजाया तथा नार्य्यो यक्षिणीप्रमुखाः पराः ॥ वामिना ताश्च भोक्तव्या एष धर्म्मः सनातनः ॥ १६१ ॥ उत्तरायां नैव कोपि पातं वीर्य्यस्य कारयेत् ॥ चाण्डालीनामपि स्त्रीणां स्पर्शदोषं न मानयेत् ॥ १६२ ॥ रजस्वलाभगं दृष्ट्वा कुर्य्यादेकां पुरस्क्रियाम् ॥ केवलं सुरया होमस्तत्प्रत्यक्षं समाचरेत् ॥ १६३ ॥ उत्तिष्ठति तदा कुण्डाद्देवतार्धांगदर्शनी ॥ ब्रूयाद्वरं गृहाणेति मनोभीष्टन्तु योर्चयेत् ॥ १६४ ॥ स्मशाने वा शून्यगेहे चैत्याधस्ताच्छवोपरि ॥ मुण्डोपर्य्यथ वा शौचस्थाने वा शून्यमन्दिरे ॥ सुरास्थाने प्रकर्त्तव्यं तत्र तिष्ठन्ति देवताः ॥ १६५ ॥ शालग्रामो नार्चनीयस्तुलसीं नैव संस्पृशेत् ॥ तीर्थयात्रां न कुर्वीत गङ्गास्नानं न चाचरेत् ॥ १६६ ॥ स्नानाभावे जपं कुर्य्यात्प्रथमर्त्तुसमन्वितम् ॥ आसनाधोम्बरं कृत्वा जपन्सिद्धिमवाप्नुयात् ॥ १६७ ॥ प्रायशो वाममार्गे तु सिद्धमन्त्रो यदा गुरुः ॥ तदैव जायते सिद्धिरन्यथा प्रेतवद्भवेत् ॥ १६८ ॥ वाममार्गे द्रुतं सिद्धिः कर्म्मणा येन जायते ॥ तदहं ते प्रवक्ष्यामि सूक्ष्मसाधनमद्भुतम् ॥ १६९ ॥ अष्टम्यां वा चतुर्दश्यां कृष्णायाम्भौमवासरे ॥ गृहीत्वा नृकपालन्तु मद्यम्मांसं तथौदनम् ॥ कुल्माषोन्मिश्रितं कृत्वा गच्छेदश्वत्थभूमिकाम् ॥ १७० ॥ एकान्ते निर्जने तस्य तले संलिप्य भूमिकाम् ॥ [१]दण्डमात्रानष्टदिक्षु कीलान्मूलेन पूरयेत् ॥ १७१ ॥ अष्टोत्तरसहस्रेण सप्ततन्तुकदोरकम् ॥ निबध्नीयात्तत्र पूजां देवतायाः समाचरेत् ॥ १७२ ॥ देवीं तु हृदि संस्थाप्य तस्मिन्स्थाने तु दीपकम्॥कुर्य्याच्चैरण्डतैलेनाभावे कापिलहव्यकैः ॥ १७३ ॥ तदभावे तु तैलेन कुडवप्रमितेन च ॥ दीपं कुर्य्यादष्टशतसूत्राणां वर्त्तिका मता ॥ १७४ ॥ तस्योपरि कपालं तत्कज्जलार्थं निवे-

१ दण्डलक्षणं चोक्तं श्रीभास्कराचार्य्येण ॥ " यवोदरैरंगुलमष्टसंख्यैर्हस्तोंगुलैः षड्गुणितैश्चतुर्भिः ॥ हस्तैश्चतुर्भिर्भवतीह दण्डः क्रोशः सहस्रद्वितयेन तेषाम् " इति ॥

शयेत् ॥ दीपं दृष्ट्वा जपेन्मन्त्रं नान्यतस्तु विलोकयेत् ॥ १७५ ॥ अर्धे प्रज्वलिते तैले भूतप्रेतपिशाचकाः ॥ नानारूपा भिन्नशब्दाः साधकं भीषयन्ति ते ॥ १७६ ॥ न भेतव्यं तदन्नं तुं वामहस्तेन निःक्षिपेत ॥ तेषामग्रे नान्यदृष्टिः प्रपश्येद्दीपमेव हि ॥ १७७ ॥ किञ्चिच्छेषे दीपतैले देवी सा वरदा भवेत ॥ तस्यै तं च बलिन्दत्त्वा स्तुत्वा संयाचयेद्वरम् ॥ ॥ १७८ ॥ पूर्वकर्म्मविपाकेन यदि नायाति देवता ॥ दीपान्ते कज्जलं ग्राह्यं तत्र देवीं प्रपूज्य च ॥१७९॥ आनयेत्तद्गृहे सिद्धं दत्त्वाक्ष्णोः स्याज्जगद्वशम् ॥ दत्त्वाक्ष्णोः कज्जलं तच्च प्रयोगानाचरेत्ततः ॥ १८० ॥ सर्वे एव प्रसिद्ध्यन्ति लोलुपेतिगुरौ सति ॥ रक्षयेदञ्जनं सम्यङ्नोचेद्भवति भैरवः ॥ ॥ १८१ ॥ इत्येतद्वो निगदितं गणेशरचितं महत् ॥ तद्ब्रुवन्तु सुराः सर्वे वक्तव्यं किमतः परम् ॥ १८२ ॥

इति श्रीमहामायामहाकालानुमते मेरुतन्त्रे शिवप्रणीते उत्तराम्नायगणपति-मन्त्रकथनं नाम विंशतितमः प्रकाशः ॥ २० ॥

---

श्रीदेव्युवाच ॥ भगवन्देवदेवेश गणेशस्य मया श्रुताः ॥ सरहस्या महामन्त्राः कलौ सिद्धिप्रदायकाः॥ १ ॥अतः परं देववरः कथं पूज्यो दिवाकरः॥ ब्रूहि तस्य च के मन्त्राः केष्वाम्नायेषु कीर्त्तिताः ॥ २ ॥ श्रीशिव उवाच ॥ एक एवास्य चाम्नायो दक्षिणः परिकीर्त्तितः ॥ सथायं पावनं विप्रं स्वयमेव करैः स्पृशेत ॥ ३ ॥ उपासना तथैतस्य स्वधर्म्माचारपूर्विका ॥ चतुर्युगेषु प्रत्यक्षो देवोयं सर्वसम्मतः ॥ ४ ॥ सर्वेषामेव देवानां नेत्रभूतो जगत्पतिः ॥ तस्य मन्त्रान्प्रवक्ष्यामि सावधाना भवाम्बिके ॥ ५ ॥ ॐ घृणिः सूर्य्य आदित्यो मन्त्रश्चाष्टाक्षरो मतः ॥ देवभागो मुनिश्छन्दो गायत्री देवता रविः ॥ ६ ॥ तेजोज्वालामणे हुंफट् स्वाहेति च दशाक्षरः ॥ हृन्मन्त्रः सत्यपूर्वोयं ब्रह्मपूर्वः शिरोमनुः ॥ ७ ॥ विष्णुपूर्वः शिखामन्त्रो वर्म्माणूं रुद्रपूर्वकः ॥

---

१ सत्यतेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा हृदयाय नमः ॥ २ ब्रह्मतेजोज्वालामणे हुंफट् स्वाहा शिरसे स्वाहा ॥ ३ विष्णुतेजोज्वालामणे हुंफट् स्वाहा शिखायै वषट् ॥४ रुद्रतेजोज्वालामणे हुंफट् स्वाहा कवचाय हुम् ॥

अग्निपूर्वो नेत्रमनुरस्त्रं सर्वपदैर्भवेत् ॥ ८ ॥ विधायैवं षडङ्गानि न्यसेन्मूर्तीर्यथाक्रमम् ॥ मस्तकाननहृद्गुह्यपाददेशेषु देशिकः ॥ ९ ॥ पञ्चह्रस्वैः सहादित्यो रविर्भानुश्च भास्करः ॥ सूर्य्यस्ततश्च मन्त्रार्णान्प्रणवाद्यान्न्यसेद्बुधः ॥ १० ॥ ध्यायेत्ततः कुण्डलिनं शतपत्रलसत्करम् ॥पद्मे चैव समासीनं वरकेयूरभूषणम्॥ ॥ ११ ॥ त्रिनेत्रं रक्तवर्णञ्च सुप्रसन्नं दिवाकरम् ॥ पूजयित्वा योगपीठन्तत्पीठे चार्चयेद्रविम् ॥ १२ ॥ धर्म्मादीनां स्थले तत्र यजेत्कोणचतुष्टये ॥ ईशानान्मध्यपर्य्यन्तं समाराध्यं प्रभूतकम् ॥ १३ ॥ विमलञ्च तथा सारं परमं सुखमेव च ॥ तद्बाह्येष्टदलं कृत्वा दलमूलेषु चार्चयेत् ॥ १४ ॥ पूर्वादिषु तथा मध्ये दीप्ता सूक्ष्मा जया तथा ॥ भद्रा विभूतिर्विमला ह्यमोघा विद्युता तथा ॥ १५ ॥ सर्वतोमुखिका चैता अग्निवर्णाः सुभूषिताः ॥ आसां बीजानि रांरींरूंरेंरैंरोंरौंतु क्रमेण च ॥ १६ ॥ रंरश्च नवपीठाणुर्ब्रह्मविष्णुशिवात्मने ॥ सौराय योगपीठाय हृदन्तोष्टादशाक्षरः ॥ १७ ॥ अनेन पीठं सम्पूज्य खखोल्कायाग्निगेहिनीम् ॥ मूर्त्तिं च कल्पयामीति चोक्त्वा मूर्तिं प्रकल्पयेत् ॥ १८॥ तस्यामावाह्य देवेशं तत्र सूर्य्यं समर्चयेत् ॥ तद्बाह्येष्टदलं कृत्वा दिग्दलेषु यजेद्दिमान् ॥ १९ ॥ आदित्यञ्च रविं भानुं भास्करं सूर्य्यमेव च ॥ आद्यार्णबीजा हन्ङेन्ता विदिक्पत्रे यजेदिमाः ॥ २० ॥ उषां प्रज्ञां प्रभां सन्ध्यां ब्राह्मयादींश्च दलाग्रतः ॥ सूर्य्यस्याग्रेरुणः पूज्योप्यथ विध्वादयो ग्रहाः ॥ २१ ॥ तद्बाह्ये भूपुरे पूज्या लोकपालास्तदग्रतः ॥ तदस्त्राणि च तद्बाह्ये भास्करार्चनमीरितम् ॥ २२ ॥ अष्टलक्षं जपित्वान्ते दुग्धवृक्षसमिद्वरैः ॥ जुहुयात्तत्सहस्राणि दुग्धाक्तैः साधकोत्तमः ॥ २३ ॥ तर्प्पयेच्छुद्धसलिलैश्चन्द्रचन्दनवासितैः ॥ स्वाभिषेकं ततः कृत्वा ब्राह्मणान्भोजये-

१ अग्नितेजोज्वालामणे हुंफट् नेत्रत्रयाय वौषट् ॥ २ सर्वतेजोज्वालामणे हुंफट्स्वाहा अस्त्राय फट् । इति षडङ्गं विधाय मूर्तिन्यासं विदधीत स यथा ॥ ३ ॐ आदित्याय नमः मस्तके । एं रवये नमः मुखे । उं भानवे नमः हृदये । इं भास्कराय नमः लिङ्गे । ॐ अंसूर्य्याय नमः पादयोः ॥ इति श्रीसूर्य्यस्य मूर्त्तिन्यासविधिः ॥ ४ अथ मन्त्राक्षरन्यासः ॐ घृ शीर्षणि, ॐ णिः मुखे, ॐ सू कण्ठे, ॐ र्य्यः हृदये, ॐ आ कुक्षौ, ॐ दि लिङ्गे, ॐ त्यः पादयोः, इत्थं न्यासान्कृत्वा ध्यायेत् ॥ ५ कर्पूर ॥

ततः ॥ २४ ॥ एवं सिद्धे मनौ मन्त्री प्रयोगान्कर्तुमर्हति ॥ रक्ताम्बरधरो रक्तमाल्यो रक्तानुलेपनः ॥ २५ ॥ घृतक्षीरसमायुक्तगुडभक्ताशनो निशि ॥ भिक्षाहारस्तथा वीतसङ्गः सन्तोषवान्सदा ॥ २६ ॥ मन्त्रमावर्त्तयेन्नित्यमाराधनपरायणः ॥ रथमभ्यर्च्य भास्वन्तश्चार्घ्यं तस्मै निवेदयेत् ॥ २७ ॥ प्रत्यहं रविवारे वा तद्विधानमुदीर्य्यते ॥ अग्रे मण्डलमालिख्य यजेत्पीठं यथाविधि ॥ ॥ २८ ॥ तत्र संस्थापयेत्पात्रं शुद्धन्ताम्रसमुद्भवम् ॥ रम्यं प्रस्थजलग्राहि मूलमन्त्रं समुच्चरेत् ॥ २९ ॥ शुद्धोदकेन सम्पूर्य्य प्रक्षिपेत्तत्र कुंकुमम् ॥ रोचनां राजिकां रक्तचन्दनं वंशतण्डुलान् ॥ ३० ॥ श्यामाकतण्डुलाच्छालीन्करवीरजपाभवान् ॥ सञ्चिन्त्य देवतात्मैक्यं भास्करं सम्यगर्चयेत् ॥ ३१ ॥ उपचारैर्निवेद्यान्तैस्तत्पिधाय जपेन्मनुम् ॥ सम्यगष्टोत्तरशतं भूयः पुष्पादिभिर्यजेत् ॥ ३२ ॥ उद्धृत्यामस्तकं पात्रं जानुस्पृष्टमहीतलः ॥ दृष्टिं निधाय व्योम्न्यर्के साङ्गं सावरणं स्मरेत् ॥ ॥ ३३ ॥ ततो जपन्मूलमनुं धिया दद्याच्च भानवे ॥ अर्घ्यं प्रसन्नचेताः सन्दद्याच्च सुमनोञ्जलिम् ॥ ३४ ॥ पुनर्नियतधीस्तावद्यावद्भानुर्निजैः करैः ॥ अर्घादिकं समादत्ते जपेदष्टोत्तरं शतम् ॥ ३५ ॥ ततः प्रसन्नो भगवान्प्रयच्छेदिष्टमात्मनः ॥ अनेन तु प्रयोगेण भवेदायुर्निरुग्णता ॥ ३६ ॥ वृद्धिः पुत्रकलत्राणान्तेजो वीर्य्यं धनं यशः ॥ तन्मन्त्रसहिताम्भोभिः सतधाञ्जलिसेचनम् ॥ ॥ ३७ ॥ पापान्धकारदारिद्यनाशनं श्रीकरं परम् ॥ स्थण्डिले स्थापयेत्कुम्भं तीर्थोदकसुपूरितम् ॥ ३८ ॥ हिरण्यरत्नगन्धादि तत्र निक्षिप्य पूरयेत् ॥ देवं सपरिवारन्तु प्रागुक्तविधिना ततः ॥ ३९ ॥ स्थण्डिलेग्निं समारोप्य कपिलापयसा चरुम् ॥ पचेत्तेनैव जुहुयाद्द्व्याज्यसहितेन च ॥ ४० ॥ सहस्रं कृतसम्पातं शुद्धपात्रे तु कारयेत् ॥ ऋतुस्नातां सुनियतां पूर्वाङ्गसमुपोषिताम् ॥ ४१ ॥ अष्टमे दिवसे तान्तु सहस्रमभिमन्त्रितैः ॥ अभिषिञ्चेत्कुम्भजलैर्दद्यात्तस्यै तु मन्त्रवित् ॥ ४२ ॥ सहस्रमन्त्रितं होमसम्पातांतं ततो निशि ॥ नरोपि सूर्य्य एवाहमिति ध्यात्वा तया सह ॥ ४३ ॥ सम्भोगमाच-

रेतेन सुपुत्री गुणवान्भवेत् ॥ अथ मन्त्रान्तरं वक्ष्ये दिनेशस्य षडक्षरम् ॥ ४४ ॥ हंखंखः खोल्कायेति तथान्ते चाग्निगेहिनी ॥ मुनिर्ब्रह्मा च गायत्रं छन्दः सवितृर्दैवतम् ॥ ४५ ॥ सूक्ष्मरूपायाग्निवधूर्मन्त्रेण हृदयं मतम् ॥ सूक्ष्माकारायाग्निवधूरिति मन्त्रेण शीर्षकम् ॥ ४६ ॥ सूक्ष्मबालाय स्वाहेति कवचञ्च सनेत्रकम् ॥ सूक्ष्माकाराय हुंफडित्येवं शस्त्रं प्रकीर्त्तितम् ॥ ४७ ॥ मन्त्रवर्णैः षडङ्गं स्याद्ध्यानमस्योच्यतेधुना ॥ रक्तपद्मद्वयं हस्तैर्बिभ्रतश्च वराभये ॥ ॥ ४८ ॥ बन्धूकामन्त्रिनेत्रश्च रविन्ध्यायेत्सुभूषितम् ॥ पूर्वोक्ते पूजयेत्पीठे देवमावाह्य मन्त्रवित् ॥ ४९ ॥ लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं नियतात्मा जितेन्द्रियः ॥ जुहुयात्तद्दशांशेन बिल्वैरथ पलाशजैः ॥ ५० ॥ उदुम्बरसमुद्भूतैस्त्रिमध्वक्तैः समिद्वरैः ॥ ५१ ॥ तर्प्पणादि ततः कुर्य्यात्प्राक्प्रोक्तविधिना सुधीः ॥ अर्घादिकं च कुर्वीत पूर्ववद्वाञ्छितात्तये ॥ ५२ ॥ एतत्संसेवनान्नृणां खेचरीसिद्धिरीरिता ॥ न भास्करसमः कश्चिद्भुक्तिमुक्तिप्रदायकः ॥ ५३ ॥ प्रणवश्च खखोल्काय मन्त्रः पञ्चाक्षरोस्य च ॥ न्यासो ध्यानं च पूजा च प्राग्वदेव समीरिता ॥ ५४ ॥ खंबीजादिक एषोस्ति षडर्णः सप्तवर्णकः ॥ भवेत्तन्न्यासपूजादि ध्यानाद्यङ्गं षडर्णवत् ॥ ५५ ॥ सप्ततुरङ्गाय विद्महे सहस्रकिरणाय धीमहि ॥ तन्नो रविः प्रचोदयात् ॥ ५६ ॥ इयन्तु सूर्य्यगायत्री जपतामिष्टदायिनी ॥ भग्नत्रानां राजपुत्राणां क्षत्रतेजोविधायिनी ॥ ५७ ॥ यत्पृष्ठं नारिभिर्दृष्टं स्पृष्टं नैव कदाचन ॥ परस्त्रीभिर्यच्छरीरं पुरश्चर्य्याचतुष्टयम् ॥ ५८ ॥ जातिमात्रं राजपुत्रः पुरश्चर्य्याप्रभावतः ॥ सार्वभौमत्वमाप्नोति ब्राह्मणान्प्रतिपालयेत् ॥ ॥ ५९ ॥ ॐ ह्रींहंसश्चतुर्वर्णो मन्त्रः प्रोक्तो दिनेशितुः ॥ ऋषिर्ब्रह्मा च गायत्री छन्दः सूर्य्यश्च देवता ॥ ६० ॥ ताराद्यया षडंगानि षड्दीर्घान्वितमायया ॥ देदीप्यमानरत्नौघमुकुटेन विराजितम् ॥ ६१ ॥ पाशांकुशवराभीतिकरं रक्तं भजे रविम् ॥ नवशक्तिसमायुक्ते पीठे पूर्वोदिते यजेत् ॥ ६२ ॥ प्रकल्प्य मूर्तिं मूलेन तत्रावाह्य दिवाकरम् ॥ सम्पूज्य तस्याव

---

१ हं खं खःखोल्काय अयं षडक्षरो मन्त्रः स्वाहान्तः स्याद्गजाक्षरः॥ तथातारयुतोष्टार्णो नवार्णोपि प्रजायते ॥

रणान्यर्चयेत्क्रमतः सुधीः ॥ ६३ ॥ हृल्लेखा गगना रक्ता कराली च चतुर्थिका ॥ महोच्छुष्मा पञ्चमी च मध्यात्पूर्वादिके यजेत् ॥ ६४ ॥ अङ्गे द्वितीयावरणं मातृकाभिस्तृतीयकम् ॥ सोमङ्गगुरुशुक्राश्च दिक्ष्वारशनिराहवः ॥ केतुर्विदिक्षु पूज्याश्च चतुर्थावरणं रवेः ॥ ६५ ॥ स्वनामाद्यक्षरं बिन्दुभूषितं प्रथमं वदेत् ॥ ङेन्तं हृदन्तं खेटस्य नामपूजामनुर्मतः ॥६६ ॥ पञ्चमी लोकपालैः स्यात्षष्ठी चापि तदायुधैः ॥चतुर्लक्षं जपेन्मन्त्रं जुहुयात्तद्दशांशतः ॥ ब्रह्मवृक्षसमद्भूतैः पुष्पैस्त्रिमधुरप्लुतैः ॥ ६७ ॥ सरोजैर्वा तदा देवं तर्प्पयेदभिषेचयेत् ॥ ब्राह्मणाराधनं कुर्य्यात्ततः सिद्धो भवेन्मनुः ॥ एवं साधितमन्त्रस्तु काम्यकर्म्माणि साधयेत् ॥ ६८ ॥ जपेदेवं प्रतिदिनं रविवारेथवा सुधीः ॥ दद्यादर्घद्वयमपि भवेत्तस्योदितं फलम् ॥ ६९ ॥ अथ श्रेयो [1]जनानां तु येनासौ वक्ष्यते मनुः ॥ त्र्यक्षरोस्य तु ह्रांह्रींसः प्रोक्तः सर्वार्थदायकः ॥ ७० ॥ अजोस्य मुनिरुद्दिष्टो गायत्री छन्द उच्यते ॥ देवतास्य मनोः प्रोक्तः सविता सुरपूजितः ॥ ७१ ॥ गुह्यात्पादतले यावद्गलादेर्गुह्यकं ततः ॥ मूर्धादिकण्ठपर्य्यन्तं मन्त्रार्णान्विन्यसेत्सुधीः ॥ ७२ ॥ मायाबीजेन षड्दीर्घभाजाङ्गानि प्रविन्यसेत् ॥ स्थितः पद्मेरुणे त्र्यक्षोरुणवर्णसुभूषणः ॥ ७३ ॥ पद्मद्वयवराभीतिहस्तश्चारुणसेवितः ॥ पूर्वोदिते यजेत्पीठे नवशक्तिसमन्विते ॥ ७४ ॥ षडङ्गावरणं चाद्यं प्राग्वच्चैव द्वितीयकम् ॥ दिक्पालैश्च तृतीयं स्याच्चतुर्थन्तु तदायुधैः ॥ ७५॥ ततश्च तेजश्चण्डाय निर्माल्यं विनिवेदयेत् ॥ जपेद्द्वादशलक्षं च तत्सहस्रं हुनेत्तिलैः॥ घृताक्तमधुराक्तैश्च यवान्नैश्चैव तादृशैः ॥ ७६ ॥ तर्प्पणादि ततः कुर्य्यात्प्रयोगान्साधयेदथ ॥ दद्यात्पूर्वोदितं चार्घ्यं दिनेशाय सुसाधकः ॥ ७७ ॥ सोप्यस्य धनधान्यादिपुत्रपौत्रविवर्धनम् ॥ करोति रत्नवस्त्रादिभूषणानि विवर्धयेत् ॥ ७८ ॥ अष्टपत्राम्बुजं कुर्य्यात्तत्र कुम्भान्नव न्यसेत् ॥ पत्रमध्ये कर्णिकायां तांश्च तोयेन पूरयेत् ॥ ७९ ॥ नवग्रहान्समावाह्य तेषु कुम्भेषु मन्त्रवित् ॥ कर्णिकाकलशं मूलमन्त्रेणैव सहस्रकम् ॥ प्रजप्यान्येषु तन्मन्त्राञ्छतकृत्वो जपेत्सुधीः ॥ ८० ॥ तज्जलै-

१ येन जनानां श्रेयो जायते स मनुर्वेदिष्यते ॥ २ घृतमध्वक्तैर्यवैः ॥

रभिषिञ्चेत्तु साधको मन्त्रवित्तमः॥मुच्यते नात्र सन्देहः साधको ग्रहदोषतः ॥ ॥८१॥रोगा नश्यन्ति सततं लक्ष्मीश्चापि स्थिरा भवेत् ॥ ग्रहहोमः प्रकर्त्तव्यो ग्रहाणां वै कृते तथा ॥८२॥ चन्द्रभान्वोश्चोपरागे निजर्क्षे वाथ मन्त्रवित् ॥ विग्रहादौ भये चापि घोररूपे महागदे ॥ ८३ ॥ पूर्वं मण्डलकं कृत्वा ग्रहान्सम्पूज्य तत्र च ॥ स्वदिक्षु चाग्नीन्संस्थाप्य जुहुयाच्च समिद्वरैः ॥ ८४ ॥ अर्कद्विजद्रुमापूराश्वत्थोदुम्बरखादिरैः ॥ शमीदूर्वाकुशोद्भूतैः क्रमाद्धोमः समीरितः ॥८५॥ अष्टाधिकं सहस्रञ्च हुत्वा सूर्य्यस्य चाहुतीः ॥ अन्ते चान्यव्याहृतिभिर्हुत्वा होमं समापयेत् ॥ ८६ ॥ गुरुं सन्तोष्य ऋत्विग्भ्यो यथा शक्त्या च दक्षिणाम् ॥ दद्याच्च भोजयेद्विप्रान्संग्रामे विजयी भवेत् ॥ ८७ ॥ रोगाः शान्तिं व्रजन्त्याशु दीर्घमायुश्च विन्दति ॥ कृत्याद्रोहारिकाणाञ्च शान्तिरेवाशु जायते ॥ ८८॥ सर्वेषाञ्च ग्रहाणाञ्च होममेकत्र भावयेत ॥ धनधान्यैश्वर्य्यपूर्ण आयुर्दीर्घं स विन्दति ॥ अथान्यत्सम्प्रवक्ष्यामि संग्रामविजयाभिधम् ॥ ८९ ॥ मन्त्रं सूर्य्यस्य रां हुं च द्व्यक्षरोयं महामनुः ॥ ऋषिश्छन्दो देवताश्च ह्यजगायत्रभानवः ॥ सर्वं पूजादिकञ्चास्य श्रेयोजनकमन्त्रवत् ॥ ९० ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि हंसोयं द्व्यक्षरो मनुः ॥ ब्रह्मा मुनिः समुद्दिष्टो गायत्रं छन्द उच्यते ॥ ९१ ॥ देवी पूर्वन्देवतास्य परमात्मा समीरितः ॥ षड्दीर्घेण सकारेण हंपूर्वेण षडङ्गकम् ॥९२॥ रक्ताब्जकाञ्चननिभं गुणं टङ्कवराभयम् ॥ करैर्दधानं पद्मस्थं हरं गौर्य्यङ्कगम्भजे ॥ ९३ ॥ पूर्वोदिते यजेत्पीठे दिक्कालादिप्रकल्पिते ॥ तत्र देवं यजेन्मूर्तिं मूलेनाकल्प्य मन्त्रवित् ॥ ९४ ॥ पूर्वमंगैर्यजेन्मन्त्री दलेषु च प्रपूजयेत् ॥ ऋतुं वसुं नरश्चापि परञ्च विदिशासु च ॥ ९५ ॥ अब्जां गोजाञ्च ऋतजामद्रिजाञ्च प्रपूजयेत् ॥ ततो लोकेश्वरांश्चापि तदग्रे चायुधान्यपि ॥ ९६ ॥ जपेद्द्वादशलक्षञ्च तद्दशांशं तथा हुनेत ॥ सर्पिरक्तेन हविषा तप्पर्णादि ततश्चरेत् ॥ पूर्वोदितेन विधिना सूर्य्यायार्घं निवेदयेत ॥ ९७ ॥ गोमयेनोपलिप्तायाम्भूमावष्टदलं लिखेत् ॥ सूर्य्याष्टगन्धैरथ वा चन्दनाभ्यां मनुन्त्विमम् ॥ ९८ ॥ लिखेत्तत्कर्णिकायान्तु तस्योर्ध्वं स्थापयेद्घटम् ॥ तीर्थादिजलसम्पूर्णन्तस्योर्ध्वं

स्थापयेत्करम् ॥ ९९ ॥ दक्षिणं वामहस्तेन मूलमष्टोत्तरं शतम् ॥ जपेत्सुधामयन्तञ्च कलशं हृदि भावयेत ॥ १०० ॥ तेनाभिषिञ्चेत्साध्यन्तु जायते गतभीस्त्वसौ ॥ गतरोगो दीर्घजीवी विपद्बाधापरिच्युतः ॥ १०१ ॥ चेत्स्त्री वै नित्यसौभाग्या मन्त्रयेद्दक्षिणङ्करम् ॥ आदौ तेन विधातव्यः करेण करकः शुभः ॥ १०२ ॥ अष्टोत्तरसहस्रञ्च मन्त्रयेत्करकं पुनः ॥ भावयित्वा जलन्तच्चामृतन्तेनाभिषेचयेत् ॥ विषिणं निर्विषो भूयात्स्थावराज्जङ्गमादपि ॥ १०३ ॥ महासर्पेण दष्टश्चेन्मनुना मन्त्रयेत्करम् ॥ विन्यस्येद्दंशिनो मूर्ध्नि मन्त्रयित्वा विषं हरेत् ॥ १०४ ॥ मन्त्रं सुधाकरकरशुद्धधाराप्लुतं स्मरेत् ॥ प्लुतश्चामृतधाराभिर्भावयित्वा मनुञ्जपेत ॥१०५॥ गदिनं मार्ज्जयेत्पश्चात्क्षुद्रामयविनाशनम्॥अपस्मृतिन्त्रिदोषोत्थात्रोगान्हन्यान्न संशयः १०६ शीर्षस्थचन्द्रबिम्बं च स्मरेद्धंसमुरूपकम् ॥ सञ्चिन्त्य प्रजपेन्नित्यं क्षेपयेत्पलितञ्जराम् ॥ १०७ ॥ ध्यायेन्मत्रादिमं वर्णं सुधाधारापरिप्लुतम् ।। द्वितीयश्चन्द्रधाराभिर्मार्ज्जयेत्तेन मन्त्रवित ॥ १०८ ॥ मार्त्तण्डभैरवस्याथ मन्त्रं वक्ष्यामि सिद्धिदम् ॥ हकारो रेफसंयुक्तः पकारेण समन्वितः ॥ १०९ ॥ औकारस्वरसंयुक्तस्तलेऽजाकारसंयुतः ॥ बिन्दुयुक्तं कूटमुक्तं मार्तण्डस्य त्रिवर्णकम् ॥ ११० ॥ पुटितं बिम्बबीजेन सर्वकामफलप्रदम् ॥ बिम्बबीजं दक्षमार्गे भजतां सिद्धिदायकम् ॥ वाममार्गेण भजतामादेश्यं किमिदं बुधैः ॥ ॥ १११ ॥ ब्रह्मामुनिर्निवृच्छंदो मार्त्तण्डाख्यस्तु भैरवः ॥ देवतोक्तोथ हंबीजं बिन्दुः शक्तिः प्रकीर्त्तिता ॥ ११२॥ मूर्त्तयः पञ्च चोद्दिष्टाः सूर्य्यभास्करभानवः ॥ रविर्दिवाकरश्चापि न्यस्तव्या ह्यंगुलीषु ताः॥ ११३ ॥ पञ्चह्रस्वाद्यबीजेन पञ्चदीर्घान्वितेन च ॥ शिरोवदनहृद्गुह्यपाददेशेषु ता न्यसेत् ॥ ॥ ११४ ॥ ततः षडङ्गनेत्रान्तं कुर्य्याद्दीर्घयुताणुना ॥ अङ्गन्यासानन्तरन्तु नेत्रन्यासः प्रकीर्त्तितः ॥ व्यापकं मूलबीजेन कुर्वीत तदनन्तरम् ॥ ११५ ॥ जपाकुसुमसङ्काशमष्टबाहुं चतुर्मुखम्॥मुखेमुखे त्रिनयनं मणिवन्मुकुटान्वितम्॥ ॥ ११६ ॥ खट्वांगपद्मचक्राणि शंखं पाशं तथा सृणिम् ॥ अक्षमालां

---

१ "अकारो वासुदेवः स्यादुकारः शंकरः स्मृतः" ॥ एतत्कोशप्रमाणेन शिवरूपं बुध्येत ॥

कपालं च दधतं करपंकजैः ॥ ११७ ॥ अर्धांगस्थितया शक्त्यालिंगितं हारशोभितम् ॥ पद्मस्थितं हास्यमुखं मार्तण्डं द्युमणिं भजे ॥ ११८ ॥ पीठे दीप्तादिभिर्युक्ते प्राग्वद्देवं प्रपूजयेत् ॥ आदावंगानि सम्पूज्य कर्णिकाया-मुषादिकाः ॥ ११९ ॥ पूर्वादिदिक्षु सूर्य्यादीन्विदिक्षु परिपूजयेत् ॥ नेत्र-मीशानकोणे च तद्बाह्ये खेचरानपि ॥ १२० ॥ दिगीशानायुधानीत्थं मार्त्त-ण्डार्चनमीरितम् ॥ लक्षाणां त्रितयं मन्त्री जपेद्बीजं च बिम्बयोः ॥ दशांशं कमलैः फुल्लैर्जुहुयान्मधुरोक्षितैः ॥ १२१ ॥ प्राग्वत्कुर्य्यादर्घ्यदानं प्रयोगाना-चरेत्ततः ॥ चतुरंगुलसंभूतैः सुमनोभिः श्रियं लभेत् ॥ १२२ ॥ लक्षं हुत्वा च शाल्याज्यतिलबिल्वैर्विधानतः ॥ राजानं वशयेच्छीघ्रं जपाकुसुम-होमतः ॥ जुहुयान्मातुलुंगैश्च लभतेर्थं सुवांछितम् ॥ १२३ ॥ एवं यः साधये-न्मन्त्री तस्य विद्या यशो बलम् ॥ पुत्रो लक्ष्मीश्च सौभाग्यं सर्वदा विजयो भवेत् ॥ १२४ ॥ पूर्वोक्ताष्टाक्षरे तारादग्रे ह्रींबीजमुच्चरेत् ॥ श्रीं मन्त्रोयं दशार्णस्तुपश्चाम्नायेषु कीर्त्तितः ॥ १२५ ॥ ओं ह्रीं ह्रीं ह्रौं सबिन्दुः ससूर्य्या-येत्याग्निगेहिनी ॥ दशाक्षरस्तु जप्तोयं द्वादशायुतसंख्यया ॥ दुष्टग्रहास्तु सौम्याः स्यू राजमान्यः सजायते ॥ १२६ ॥ उपास्यस्तु कृते विष्णुस्त्रेतायां तु महेश्वरः ॥ इन्द्रयज्ञौ द्वापरे तु कलौ चण्डीविनायकौ ॥ भास्करः सर्वतुल्यस्तु सर्वेषां फलदायकः ॥ १२७ ॥ यद्यत्तेजोमयं तत्तज्ज्ञेयं सूर्य्यस्वरूपकम् ॥ इत्येतत्तु-भ्यमाख्यातं किं वाच्यमथ तद्वद ॥ १२८ ॥

इति श्रीमहामायामहाकालानुमते मेरुतन्त्रे शिवप्रणीते सूर्य्यमन्त्रप्रकाश एकविंशः २१

---

श्रीदेव्युवाच ॥ सूर्य्यमन्त्राः श्रुता देव तदंशानां खचारिणाम् ॥ श्रोतु-मिच्छामि च मनून्सप्रयोगांश्च तान्वद ॥ १ ॥ श्रीशिव उवाच ॥ साधुपृष्टं त्वया देवि त्रैलोक्यस्योपकारकम् ॥ कालेन कथितं मह्यं तन्मया कीर्त्यतेधुना ॥ २ ॥ मायया मम रूपं च ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः ॥ तत्त्वतो नैव जानन्ति किम्पुनः शक्तितो जनाः ॥ ३ ॥ अप्रत्यक्षं महाविष्णोस्तद्ब्रह्माह्वयमुच्यते ॥ तथा मम ग्रहा रूपं तव मायेति कीर्त्तितम् ॥ ४ ॥ ग्रहास्तुष्टास्तदा देवा भूपाला

श्चाखिलं जगत् ॥ तुष्टं भवति रुष्टेषु शत्रुत्वमुपजायते ॥ ५ ॥ कदाचिद्ब्रह्मलिखितं मिथ्या दैवाद्भविष्यति ॥ न तु ग्रहकृतं दुःखं सौख्यं मिथ्याप्रजायते ॥ ६ ॥ सौमित्येकाक्षरं बीजं चन्द्रस्य परिकीर्त्तितम् ॥ पंक्तिश्छन्दो देवता च चन्द्रमा भार्गवो मुनिः ॥ सैदीर्घैनिजबीजेन षडंगानि समाचरेत् ॥ ७ ॥ श्वेताब्जसंस्थं रजतकान्तिहारविराजितम् ॥ नीलकेशं च कुमुदं वामे दक्षकरे वरम् ॥ दधानं भावयेदेवं मृगांकं मणिमौलिकम् ॥ ८ ॥ पीठे धर्म्मादिसंयुक्ते गगनं परिपूज्य च ॥ चन्द्रमण्डलपर्य्यंतं ततः सम्पूजयेद्विधुम् ॥ ९ ॥ राज्ञी कुमुद्वती भद्रा सुधा संजीविनी क्षमा ॥ आप्यायिनी चन्द्रिका च ह्लादिनी नव शक्तयः ॥ १० ॥ पूर्वादिक्रमतो मन्त्री मध्यान्ताः पूजयेदिमाः ॥ अमृता तारका ज्योत्स्ना विमला व्यापिनी तथा ॥ चित्रा च कृत्तिका कान्तिः श्रवणा पीठशक्तयः ॥ ११ ॥ अमृतान्ते कलात्मने संवित्पीठाय वै नमः ॥ अनेन पीठं सम्पूज्य नाममन्त्रैश्च शक्तयः ॥ १२ ॥ किञ्जल्केषु षडंगानि तच्छक्तीः पत्रगा यजेत् ॥ रोहिणी कृत्तिका चैव रेवती भरणी तथा ॥ रात्रिरार्द्रा तथा ज्योत्स्ना कला ध्यानमथोच्यते ॥ १३ ॥ सुसिताः श्वेतवसनाः श्वेतमाल्यानुलेपनाः ॥ मुक्ताहारालंकृतांग्यः पाण्यञ्जलिपुटाः शुभाः ॥ १४ ॥ आपीनोन्नतवक्षोजहाराक्रांतावलग्नकाः ॥ मंदं मदनगामिन्यः प्राणनाथाक्तमानसाः ॥ प्रसन्नचन्द्रवदनाः फुल्लेन्दीवरलोचनाः ॥ १५ ॥ ग्रहानष्टौ कलाग्रेषु लोकेशाश्च ततो यजेत् ॥ वज्रादीनि ततो बाह्येप्येवं पूजा समीरिता ॥ १६ ॥ वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं जुहुयात्तत्सहस्रकम् ॥ हविषा घृतसिक्तेन तर्प्पणादि ततश्चरेत् ॥ ततः सिद्धो भवेन्मन्त्रः प्रयोगानाचरेत्ततः ॥ १७ ॥ चन्द्रं शिरसि सञ्चिंत्य

---

१ आंसौं हृदयाय नमः, ईंसौं शिरसे स्वाहा, ऊंसौं शिखायै वषट्, ऐंसौं कवचायहुम् औं सौं नेत्रत्रयाय वौषट्, अः सौं अस्त्राय फट्। इमं न्यासं कृत्वा चां चीं चूं चैं चौं चः एभिः षडक्षरैरङ्गुष्ठादि न्यासं हृदयादिन्यासं च विदधीत स यथा—चां अंगुष्ठाभ्यां नमः, चीं तर्जनीभ्यां नमः, चूं मध्यमाभ्यां नमः, चैं अनामिकाभ्यां नमः, चौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः, चः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः । चां हृदयाय नमः, चीं शिरसे स्वाहा, इत्यादि ॥

जपेन्मन्त्रमनन्यधीः ॥ त्रिसहस्रं तेन लभते राज्यैश्वर्य्यमकिञ्चनः ॥ १८ ॥ लघुमिष्टहविष्याशी जलस्थो विजितेंद्रियः ॥ वेदलक्षमितं मन्त्रं प्रजपेद्यतमानसः ॥ धरागतं निधानं स ध्रुवं प्राप्नोति तत्क्षणात् ॥ १९ ॥ घोरे ज्वरे महाक्लेशे शिरोरोगे च दारुणे ॥ शत्रूत्पादितकृत्यासु कामलाद्यामयेषु च ॥ अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं यच्छांतिरचिराद्भवेत् ॥ २० ॥ पूर्णिमायां जपेन्मत्रं यथाशक्ति जितेंद्रियः ॥ सौभाग्यारोग्यसम्पत्तिभाजनं मनुजो भवेत् ॥२१॥ मैत्रवारुणविस्तीर्णमण्डलानां त्रयं बुधः ॥ लिप्ते भूमण्डले कृत्वा निषीदेत्पश्चिमे ततः ॥ २२ ॥ मध्यस्थे मण्डले न्यस्य पूजोपकरणानि च ॥ अग्रस्थमण्डले पद्मसंयुते पूर्ववद्यजेत् ॥ २३ ॥ विधुं ततो रौप्यजातं पात्रं संस्थाप्य पूरयेत् ॥ शुद्धगोपयसा मन्त्री स्पृशन्पात्रं मनुं जपेत् ॥ २४ ॥ अष्टाधिकशतं पश्चाद्राकायामुदये विधोः ॥ चन्द्राय विद्यामनुना दद्यादर्घं यथाविधि ॥ कान्ति यथेप्सितां कन्यां सत्कीर्तिं लभते ध्रुवम् ॥ २५ ॥ विद्ये विद्यामालिनीयुक् चन्द्रिन्यन्ते च चन्द्रयुक् ॥ मुखि शिरोन्तस्ताराद्यो विद्यामनुरयं स्मृतः ॥ २६ ॥ वंसंवमिति चन्द्रस्य त्र्यर्णो मन्त्रोऽस्य देवता ॥ सोमः श्रीश्छन्द उद्दिष्टमेकतत्त्वो मुनिर्मतः ॥ २७ ॥ आकारः शक्तिरुद्दिष्टो रुं बीजं परिकीर्त्तितम् ॥ बीजेनैव षडङ्गानि ध्यानपूजादिपूर्ववत् ॥ २८ ॥ चन्द्रस्य मण्डलास्यान्तु ह्युकारं पुटितं स्मरेत् ॥ अमृतं निस्सृतं तेन प्लावितं सकलं वपुः ॥ २९ ॥ एवं भावनया तोयं मन्त्रयेत्तिथिवारकम् ॥ समस्तविषरोगाद्यकालमृत्युविनाशनम् ॥ ३० ॥ इत्थं सूर्य्योदयात्पूर्वं जलपानं तु यश्चरेत् ॥ पापक्षयायुर्वृद्धी च वलीपलितनाशनम् ॥ ॥ ३१ ॥ ओंश्रींश्रींश्रूं सबिन्दुः स सो सोमायेत्यग्निगेहिनी ॥ दशाक्षरश्चन्द्रमन्त्रो जप्यश्चाग्रे दयायुतैः ॥ ३२ ॥ होमादिकप्रयोगांश्च सर्वं पूर्ववदाचरेत् ॥ एते प्रोक्ताश्चन्द्रमन्त्रा सर्वकल्याणदायकाः ॥ ३३ ॥ अथ भौममनुं वक्ष्ये सर्वरोगनिवारणम् ॥ अं च अङ्गारको ङेन्तो हृदन्तश्चाष्टवर्णकः॥ ३४॥

---

१ विद्याशब्देन श्रीविद्या गृह्यते तन्मन्त्रेणेति भावः ॥

ऋष्याद्या [1] ब्रह्मगायत्रीभूमिपुत्राः प्रकीर्त्तिताः ॥ अङ्गषट्कन्त्वस्य मनोरादि[2] बीजेन सम्मतम्॥ ३५॥ नमाम्यङ्गारकं रक्तं रक्ताम्बरविभूषणम्॥ जानुस्थवामहस्ताढ्यंभाजनेतरपाणिकम् ॥ ३६ ॥ लक्षाष्टको जपः प्रोक्तः खादिरैरिन्धनैर्हुनेत्॥ ३७॥ साज्यैस्सन्तर्प्पणं रक्तचन्दनाद्यैः समाचरेत्॥ एवं कृते प्रयोगेस्य समरे न पराजयः ॥ अनुग्रहात्तस्य लोकस्त्वनृणी व्याधिविच्युतः ॥ ३८ ॥ ओंश्रींक्रीं मनुमुच्चार्य्य ङेंतो भौमो हृदन्तकः ॥ दशाक्षरो मनुः प्रोक्तो विरूपाक्षो मुनिर्मतः ॥ ३९ ॥ गायत्री छन्द उद्दिष्टं देवता मङ्गलो भवेत् ॥ ह्रींबीजं श्रीश्च शक्तिः स्यात्कीलकं क्रीं प्रकीर्त्तितम्॥ ४०॥ कालादिकं समुच्चार्य्य नियोगो ऋणनाशने ॥ षड्दीर्घयुक्तबीजेन अंगुल्यादिषडङ्गकम् ॥ ४१ ॥ ब्रह्मरन्ध्रे कर्णयोश्च अक्ष्णोर्नासिकयोर्मुखे ॥ लिंगे गुदे च मन्त्रस्य दशवर्णान्क्रमान्न्यसेत् ॥ ४२ ॥ मंगलो भूमिपुत्रश्च ऋणहर्त्ता धनप्रदः स्थिरासनो महाकायः सर्वकर्म्मावरोधकः ॥ ४३ ॥ लोहितो लोहिताक्षश्च सामगानां कृपाकरः ॥ धरात्मजः कुजो भौमो भूमिदो भूमिनन्दनः॥ ४४॥ अंगारको यमश्चैव सर्वरोगापहारकः ॥ वृष्टिकर्त्तापहर्ता च सर्वकर्म्मफलप्रदः ॥ ४५ ॥ शिखायां मूर्ध्नि भाले च नेत्रयोः कर्णयोर्नसोः ॥ मुखे च चिबुके कण्ठे स्कन्धयोर्भुजयोस्तथा ॥ ४६ ॥ पाण्योर्हृद्युदरे नाभौ कट्यां लिङ्गे स्फिचोस्तथा ॥ जान्वोश्च जङ्घयोरंघ्योः क्रमान्नामानि विन्यसेत् ॥ ४७ ॥ चतुर्थ्यन्तहृदन्तानि संविद्यादक्षराणि च ॥ ततो ध्यायेद्रक्तवर्णं रक्तमाल्यांशुकावृतम्॥ ४८॥ कण्ठे कमलमालाढ्यङ्करयोः शक्तिशूलके॥ मंगलानां मंगलञ्च सर्वकामफलप्रदम् ॥ ४९॥ एवन्ध्यात्वा जपेल्लक्षं जुहुयात्करवीरजैः ॥ जपाप्रसूनैः पुरुभिर्मधुरत्रितयान्वितैः ॥ ५० ॥ रक्तचन्दनगन्धाद्यैर्यजेदरुणभूषणम् ॥ विधिना भूमितनयं सर्वाभीष्टफलप्रदम् ॥ ५१ ॥ अंगान्यभ्यर्च्य पूर्वन्तु मंगलाद्यांस्ततोर्चयेत् ॥ एकविंशतिकोष्ठेषु ततो चाष्टौ ग्रहान्न्यसेत् ॥ ५२ ॥ भैरव्यष्टकमर्च्यन्तु ब्राह्मी नारायणी तथा ॥ माहेश्वरी च चामुण्डा कौमारी चापराजिता ॥ ५३ ॥ वाराही नारसिंही च ततोष्टौ भैरवा अपि॥ पूज्या विधानतः

---

१ ब्रह्मा ऋषिः गायत्रीछन्दः भूमिपुत्रो देवता ॥ २ श्रमिति बीजेन षडङ्गन्यासः ॥

सर्वैं मन्त्रिणैर्भिमनूत्तमैः ॥ ५४ ॥ असितागं रुरुं चण्डं क्रोधमुन्मत्तसञ्ज्ञकम् ॥ कपालिनं भीषणं च तथा संहारभैरवम् ॥ ५५ ॥ इन्द्रादिलोकपालांश्च तद्वाह्ये चायुधानि च॥पूजयेद्भैरवानेतान्क्रमात्पूर्वोक्तवर्त्मना॥एवं सिद्धमनुर्मन्त्री प्रयोगान्कर्तुमर्हति ॥ ५६ ॥ पूजोत्तरं भौमवारेंगारकेण त्रिरेखिकाम् ॥ स्वागतो वामपादेन प्रव्रज्याष्टोत्तरं शतम् ॥ ५७ ॥ जपेद्दशांशं होमस्य तर्प्पणं पयसा चरेत् ॥ ब्राह्मणं भोजयेदेकं गुडप्रचुरवस्तुभिः ॥ ५८ ॥ स्तुत्वा नत्वार्चयेद्देवं साधकः स्थिरमानसः ॥ अनेन क्रमयोगेन निहत्य ऋणमादरात् लभते महतीं लक्ष्मीं वत्सरेण न संशयः ॥ ५९ ॥ विशेषान्मंगले वारे देवमेनं समर्चयेत् ॥ जुहुयात्तर्प्पयेन्मन्त्री प्राप्नुयान्निजवाञ्छितम् ॥ ६० ॥ त्रिकोणं पूर्वमुद्धृत्य पञ्चधा विभजेत्ततः ॥ ततस्तृतीयरेखान्तु चिह्नाभ्यां लाञ्छयेत्ततः ॥ ६१ ॥ आद्यरेखां तु युगलं तृतीयांचिह्नयोर्न्यसेत् ॥ द्वितीयाग्रे समाकृष्य तृतीयांचिह्नयोर्न्यसेत् ॥ ६२ ॥ युता रेखा तृतीया तु समभाज्या समन्ततः ॥ तुर्य्यां चिह्नद्वयेनाथ त्रिभिश्चिह्नैश्च पञ्चमी ॥ ६३ ॥ तृतीयाग्रे प्रकुर्वीत पञ्चम्या मध्यचिह्नजे ॥ तुर्य्याग्रे योजयेत्सम्यक्पञ्चम्याश्चिह्नयोर्द्वयोः ॥६४॥ अथ मीनद्वये दद्यात्सूत्रयुग्मं विचक्षणः॥ एवमेकाधिका सम्यक्कोष्ठानां विंशतिर्भवेत् ॥ ६५ ॥ तृतीयातूर्य्ययोर्मध्ये स्थितं वह्निगृहेर्चयेत्॥ देवं तदग्रतो मन्त्री त्रिकोणे दक्षिणे क्रमात् ॥ मङ्गलाद्यांस्तारपूर्वान्नमोन्तानेकविंशतिम् ॥ ६६॥ भौमभक्तस्यैकविंशत्पौरुषी नास्ति निस्स्वता ॥ अथ मन्त्रान्तरंवक्ष्ये भामजस्य महाद्भुतम् ॥ ६७ ॥ तारं मायां रमां म्लां च मं मङ्गलपदं वहेत् ॥ ङेन्तं हृदन्तं रुद्रार्णैः प्रोक्तो भौमप्रियो मनुः ॥ ६८॥ प्राग्वत्पूजादिकं सर्वं चावाहनमनुस्त्वयम् ॥ भगवन्देवदेवेश एह्येहि त्वंमहाप्रभो॥ ६९ ॥ ऐश्वर्य्यं वशमायातु भूतलेषु समाश्रितम् ॥ एकविंशतिभिः पुष्पैरक्तैः प्रत्येकमर्चयेत् ॥ रक्तगन्धादिवस्त्रैश्च नैवेद्यं च गुडोदनम् ॥ ७० ॥ कृत्वा तु त्रिगुणं भूमावेकविंशतिरोटिकाः ॥ गोधूमचूर्णजास्तत्र स्थापयित्वा प्रभक्षयेत् ॥ ७१ ॥ सगुडाः प्रत्यहं जप्यमष्टोत्तरसहस्रकम् ॥ भौमस्तोत्रपुराणादिचर्चया तु दिनं नयेत् ॥ ७२ ॥ एकविंशद्दिनं प्रोक्तं यस्य कस्यापि चाग्रतः ॥ याचनीयं

योग्यवस्तु सत्वरञ्च प्रयच्छति ॥ ७३ ॥ अथ मन्त्रान्तरं वक्ष्ये भूमिपुत्रस्य सिद्धिदम् ॥ ॐहांहंसः खंख इति मन्त्रः प्रोक्तः षडक्षरः ॥ ७४ ॥ मुनि-र्विरूपो गायत्री छन्दो देवो धरात्मजः ॥ षड्भिर्वर्णैः षडङ्गानि मनोः कुर्वीत साधकः॥ ७५ ॥ जपाकुसुमसङ्काशं शक्तिशूलगदाधरम् ॥ मेषसंस्थं रक्तवस्त्रं तं वन्देहं धरात्मजम् ॥ ७६ ॥ रसलक्षं जपेद्धोमः समिद्भिः खदिरस्य च ॥ शैवपीठे यजेद्भौमं प्रागङ्गानि तु पूजयेत् ॥ ७७ ॥ एकविंशतिकोष्ठेषु मंगला-दीन्प्रपूजयेत् ॥ तद्बहिः ककुभां नाथान्कुलिशादींस्ततोर्चयेत् ॥ इत्थं सुसिद्धं मन्त्रेशं स्वेष्टसिद्ध्यै प्रयोजयेत्॥ ७८॥ नारी पुत्रमभीप्सन्ती मङ्गलव्रतमाचरेत्॥ मार्गशीर्षेथ वैशाखे तस्यारम्भः प्रशस्यते ॥ लभते नात्र सन्देहः पुत्रं सर्वगुणा-न्वितम् ॥ ७९ ॥ अरुणोदयवेलायामुत्थाय शुचिविग्रहा ॥ दन्तान्धावेद्धेद-मार्गसमिधा मौनसेविता ॥ ८० ॥ नद्यादिसलिले स्नात्वा धारयेद्रक्तवाससी ॥ नैवेद्यकुसुमालेपादिकान्सम्पाद्य संयता ॥ विधिज्ञं विप्रमाहूय भौममर्चेत्तदाज्ञया ॥ ८१ ॥ रक्तगोगोमयालिप्तदेशे पीठं निवेशयेत्॥ मङ्गलादीनि नामानि स्वप्रतीके-षु विन्यसेत् ॥ ८२ ॥ अंघ्र्योश्च जानुनोरूर्वोः कटौ गुह्ये तथोरसि ॥ वामबाहौ दक्षबाहौ गले च वदने नसोः॥ ८३ ॥ अक्ष्णोर्भाले भ्रुवोर्मध्ये के शिखायां कले-वरे॥ बाहुद्वयेथ मूर्द्धादिपादपर्य्यन्तविग्रहे॥ ८४ ॥ पादतो मूर्द्धपर्य्यन्तं तथा दिक्षु प्रविन्यसेत् ॥ आरं वक्रं भूमिजं च नाभौ वक्षसि मूर्द्धनि ॥ एवं न्यस्तशरीरोसौ ध्यायेद्धरणिनन्दनम् ॥ ८५ ॥ अर्घ्यं संस्थाप्य विधिवत्पूजयेदुपचारकैः ॥ एकविंशतिकोष्ठाढ्ये त्रिकोणे ताम्रपात्रके ॥ ८६ ॥ आवाह्य धरणीपुत्रं स्वर्णपुष्पैश्च चन्दनैः ॥ अङ्गानि पूजयेत्प्राग्वदेकविंशतिकोष्ठतः ॥ ८७॥ मङ्गलादींस्त्रिकोणेषु वक्रमारं च भूमिजम् ॥ ब्राह्म्याद्या मातृका बाह्ये शक्रादीनायुधान्यपि ॥ ॥ ८८ ॥ धूपदीपौ निधायाथ गोधूमान्नं निवेदयेत् ॥ जलपूर्णे ताम्रपात्रे धूपदीपाक्षतान्विते ॥ फलं निधाय मन्त्राभ्यां भौमायार्घ्यं निवेदयेत् ॥ ८९॥ भूमिपुत्र महातेजः स्वेदोद्भव पिनाकिनः ॥ सुतार्थिनी त्वां प्रपन्ना गृहाणार्घ्यं नमोस्तु ते ॥ ९० ॥ एकविंशतिकृत्वोथ प्रणमेत्पूर्वनामभिः ॥ प्रदक्षिणा

---

शिरसि ॥

विधातव्या तावद्भिर्नगपात्मजे ॥ ९१ ॥ खादिराङ्गारकेणाथ कुर्य्याद्रेखा-त्रयं समम् ॥ वामपादेन मन्त्राभ्यामेताभ्यां तत्प्रमार्जयेत् ॥ ९२ ॥ दुःख-दौर्भाग्यनाशाय पुत्रसन्तानहेतवे ॥ कृतरेखात्रयं वामपादेनैव प्रमार्ज्म्यहम् ॥ ॥ ९३ ॥ ऋणदुःखविनाशाय मनोभीष्टार्थसिद्धये ॥ मार्जयाम्यसिता रेखा-स्तिस्रो जन्मत्रयोद्भवाः ॥ ९४ ॥ ततः पुष्पाञ्जलिं कृत्वा स्तुवीत धरणीसु-तम् ॥ ध्यायन्ती चरणाम्भोजं पूजासाङ्गत्वसिद्धये ॥ ९५ ॥ धरणीगर्भसं-भूतं विद्युत्तेजःसमप्रभम् ॥ कुमारं शक्तिहस्तं च मङ्गलं प्रणमाम्यहम् ॥ ॥ ९६ ॥ ऋणहन्त्रे नमस्तुभ्यं दुःखदारिद्र्यनाशिने ॥ नमो विद्योतमानाय सर्वकल्याणकारिणे ॥ ९७ ॥ देवदानवगन्धर्वयक्षराक्षसपन्नगाः ॥ सुखं यान्ति यतस्तस्मै नमो धरणिसूनवे ॥ ९८ ॥ यो वक्रगतिमापन्नो नृणां दुःखं प्रयच्छति ॥ पूजितः सुखसौभाग्ये तस्मै क्ष्मासूनवे नमः ॥ ९९ ॥ प्रसादं कुरु मे नाथ मङ्गलप्रद मङ्गल ॥ मेषवाहन रुद्रात्मन्पुत्रं देहि धनं यशः ॥ १०० ॥ एवं सम्पूज्य सम्भूय गृह्णीयाद्ब्राह्मणाशिषः ॥ गुरवे दक्षिणान्दत्त्वा भुञ्जीतान्नं निवेदितम् ॥ १०१ ॥ प्रतिभौमदिनं कुर्य्यादेवं संवत्सरावधि ॥ तिलैर्विधाय होमं च शतार्धं भोजयेद्द्विजान् ॥ १०२ ॥ माहेयमूर्त्तिं सौवर्णीमाचार्य्याय निवेदयेत्[1] ॥ मण्डलस्थे घटेऽभ्यर्च्य सुतसौ-भाग्यसिद्धये ॥ १०३ ॥ अङ्गारकाय विद्महे शक्तिहस्ताय धीमहि ॥ तन्नो भौमः प्रचोदयात् ॥ १०४ ॥ एषाङ्गारकगायत्री जपिताभीष्ट-दायिनी ॥ एतस्यास्तु जपादेव प्रसीदति धरासुतः ॥ १०५ ॥ ॐक्रांक्रींक्रौं सबिन्दुः सकुजायेत्यग्निगेहिनी ॥ दशाक्षरो भौममन्त्रो जप्यश्चायं नवायुतम् ॥ ॥ १०६ ॥ अथातः संप्रवक्ष्यामि बुधमन्त्रं महाद्भुतम् ॥ बुं ङेन्तो बुधशब्द-श्च हृदयान्तः षडर्णकः ॥ १०७ ॥ बुधमन्त्रोऽस्य मुन्याद्या ब्रह्मपंक्तिबुधा मताः ॥ षडङ्गानि स्वबीजेन विन्यस्यैवं विचिन्तयेत् ॥ १०८ ॥ वन्दे बुधं सदा देवं पीताम्बरसुभूषणम् ॥ जानुस्थवामहस्ताब्जं साभयेतरपाणि-कम् ॥ १०९ ॥ प्रजपेद्वर्णसाहस्रं दशांशं जुहुयाद्घृतैः ॥ अर्चनं त्वङ्गखे-

१ मह्यपत्यप्रतिमाम् ॥

टाशापतिभिश्चयावृतं स्मृतम् ॥ ११० ॥ ॐ ब्रांब्रींब्रूं सबिन्दुः स बुधायेत्य-ग्निगेहिनी ॥ दशाक्षरः सौम्यमन्त्रो जपो लक्षैकसङ्ख्यया ॥ १११ ॥ ॐ-जांजींजूं सबिन्दुः स चतुर्थ्यन्तो बृहस्पतिः ॥ वह्निस्त्रीविश्ववर्णोयं जप्यः पञ्च-दशायुतम् ॥ ११२ ॥ अथातः संप्रवक्ष्यामि गुरुमन्त्रं गुरुत्वकृत् ॥ बृं बृह-स्पतये हृच मन्त्रश्चाष्टाक्षरो मतः ॥ छन्दोनुष्टुम्मुनिर्ब्रह्मा देवः प्रोक्तो बृह-स्पतिः ॥ ११३ ॥ बृंबीजं तेन कुर्वीत बीजेनैवाङ्गकल्पनम् ॥ सुवर्णाभं पीतवस्त्रं रत्नस्वर्णाम्बरादिकम् ॥ ११४ ॥ किरन्तं दक्षहस्तेन रत्नादीन्वा-मपाणिना ॥ स्पृशन्तं सम्यगपरं वृषणौ कनकादिकम् ॥ ११५ ॥ नानाल-ङ्कारशोभाढ्यं विद्यासागरपारगम् ॥ जपित्वाशीतिसाहस्रं हुत्वा तेन घृतेन वा ॥ ११६ ॥ धर्म्मी धर्मादिपीठे तं पूजयेदङ्गदिक्सुरैः ॥ सिद्धे मनौ प्रकु-र्वीत प्रयोगानिष्टसिद्धये ॥ ११७ ॥ हारिद्राकुंकुमैर्हुत्वा घृताक्तैर्दिवसत्रयम् ॥ सप्तविंशच्छतान्मन्त्री वासांसि लभते मणीन् ॥ ११८ ॥ शत्रुरोगादिपी-डासु कलहे स्वजनोद्भवे ॥ जुहुयात्पिप्पलोत्थाभिस्समिद्भिस्तन्निवृत्तये ॥ ॥ ११९ ॥ गुरोरुपासकानां तु जायन्ते सर्वसम्पदः ॥ वस्त्रं मे देहि शुक्राय हृदयान्तः शुभादिकः ॥ १२० ॥ एकादशाक्षरो मन्त्रो विराट् छन्द उदा-हृतम् ॥ ब्रह्मा मुनिर्देवता तु शुक्रो दैत्यादिपूजितः ॥ १२१ ॥ पंङ्क्तिः पदैः षडङ्गानि ततो देवं विचिन्तयेत् ॥ शुक्रं नमाम्यासनस्थं मुक्ताभरण-भूषितम् ॥ १२२ ॥ स्वर्णवासोरत्नधाराचिन्मुद्राजकरद्वयम् ॥ अयुतं प्रजपेमन्त्रं सहस्रं जुहुयाद्घृतैः ॥ अङ्ग्रहाशेशहेतिचतुरावरणं मनोः ॥ १२३ ॥ शुक्रस्यो पासको यस्तु तस्य म्लेच्छादयो वशाः ॥ भवन्ति मन्त्रमाहात्म्यान्नश्यन्ते च क्ष यादयः ॥ १२४ ॥ मन्त्रान्तरं तु ताराद्यं स्वाहान्तं स्याद्भवार्णकः ॥ बीजं तारोग्निभार्य्या तु शक्तिर्मुन्यादि पूर्ववत् ॥ अङ्गेन्द्राद्यायुधैः पूजा त्रिरावृत्यास्य कीर्त्तिता ॥ १२५ ॥ सुगन्धैः श्वेतकुसुमैर्जुहुयाच्छुक्रवासरे ॥ एकविंशति-

---

१ वस्त्रं मे देहि शुं शुक्राय नमः । इति एकादशाक्षरो मन्त्रः । २ वस्त्रं हृदयाय नमः, मे शिरसे स्वाहा, देहि शिखायै वषट्, शुं कवचाय हुम्, शुक्राय नैत्रत्रयाय वौषट्, नमः अस्त्राय फट् ३ अङ्गग्रहदिक्पालतदायुधैर्मन्त्रस्य चतुरावरणपूजनम् ।

वारान्यो लभते सांशुकं मणिम् ॥ एतन्मन्त्रोपासकाना प्रभुत्वमुपजायते ॥ १२६ ॥ ॐ ह्रां ह्रीं ह्रौं सबिन्दुस्सशुक्रायेत्यग्निगेहिनी ॥ दशाक्षरः शुक्रमन्त्रो जप्योयं द्वादशायुतम् ॥ १२७ ॥ उदुम्बरसमिद्भिश्च जुहुयात्स-कलापदः ॥ भूपैः कृता विनश्यन्ति स्त्रीसौख्यमुपजायते ॥ १२८ ॥ शनै-श्चराय[2] हृदयं समाद्यश्चाष्टवर्णकः ॥ मुन्याद्या[3] ब्रह्मगायत्रीशनैश्चरसमाह्वयाः ॥ षड्दीर्घयुक्तबीजेन षडङ्गानि समाचरेत् ॥ १२९ ॥ वन्दे शनैश्चरं वक्र-दंष्ट्रं नीलविभूषणम् ॥ वामजानुस्थितं वामकरं दक्षे वरं दधत् ॥ १३० ॥ जपेदक्षरसाहस्रं तद्दशांशं हुनेद्घृतैः ॥ षडंगग्रहदिक्पालसायुधैः परिपूजनम् ॥ शनैश्चरस्य भक्तानामापदो न दारिद्रता॥ १३१॥ ॐप्रांप्रींप्रौंस इत्युक्त्वा शनै-श्चरपदं वदेत्॥ङेन्तं स्वाहा द्वादशार्णो जपः प्रयुतसम्मितः॥ १३२॥हुनेच्छमी-समिद्भिश्च क्लीबाः सर्वेस्य वश्यगाः॥ क्लीबानत्रानयेत्युक्तं साधकोस्य प्रभावतः॥ ॥१३३॥अपरं तु मनुं वक्ष्ये राहवे नम उच्चरेत् ॥ एंपूर्वकः षडर्णोयं वर्णैरेवा-ङ्गकल्पनम् ॥ मुन्याद्या ब्रह्मगायत्रीराहवः परिकीर्तिताः ॥१३४ ॥ वन्दे राहुं धूम्रवर्णं सर्पकायं कृताञ्जलिम् ॥ विकृतास्यं रक्तनेत्रं धूम्रालङ्कारमन्वहम् ॥ ॥१३५॥जपेद्वर्णसहस्रं तु होमयेद्गोघृतेन च॥ग्रहाशाधिपशस्त्रैश्च पूजावृत्तिरुदी-रिता॥राहोरुपासको भूपः संग्रामे विजयी भवेत्॥१३६॥ॐसांसींसौं सबिन्दुः सराहवे चाग्निगेहिनी ॥ दशाक्षरो राहुमन्त्रो जप्यश्चायं दशायुतम् ॥१३७॥ दूर्वाभिर्होमयित्वा च द्विजान्सन्तर्प्य सिद्ध्यति ॥ यात्रासिद्धिश्च संग्रामे नियतं विजयो भवेत् ॥ कं केतवे हदित्येवं केतुमन्त्रः षडर्णकः ॥ १३८ ॥ ब्रह्मा-मुनिर्मतश्छन्दः पांक्तिः केतुश्च देवता॥कं बीजं केतुशक्तिश्च बीजैनैव षडंगकम्॥ ॥ १३९ ॥ वन्दे केतुं कृष्णवर्णं कृष्णवस्त्रविभूषितम् ॥ वामोरुन्यस्तसद्धस्तं साभयेतरपाणिकम् ॥ १४० ॥ अंगैर्ग्रहैश्च दिक्पालैः पूजावृत्तित्रयात्मिका॥ अत्र तु ग्रहपूजायां पूज्यं मध्ये निवेशयेत् ॥ १४१ ॥ तदग्निमं चोत्तरस्या-मीशानादि तदग्रतः ॥ ॐ प्रांप्रींप्रौं सबिन्दुः सकेतवे वह्निगेहिनी ॥ १४२ ॥

१ ॐ ह्रां ह्रीं ह्रौंसः शुक्राय स्वाहा इति दशाक्षरमन्त्रः॥ २ शं शनैश्चराय नमः॥ ३ ब्रह्मामुनिर्गा-यत्रीछन्दः शनैश्चरो देवता अभीष्टसिद्धये शनिप्रीतये विनियोगः ॥

दशाक्षरः केतुमन्त्रो जपोयं द्वादशायुतम् ॥ १४३ ॥ होमः कुशैः प्रकर्त्तव्यो घृताक्तैस्तर्प्पणादि च ॥ उपासकानामेतस्य केतवोग्रे चलन्ति हि ॥१४४॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि ग्रहमातृसुसाधनम् ॥ ग्रहमातरि तुष्टायां किं ग्रहैर्दुस्स्थितैरपि ॥ ग्रहमातरि रुष्टायां सुग्रहैः किं प्रयोजनम् ॥ १४५ ॥ मंगला पिंगला धान्या भ्रामरी भद्रिका तथा ॥ उल्का सिद्धा संकटा च विकटागर्भपालिका ॥ १४६ ॥ रुद्रनेत्रान्विताश्चाष्टौ जन्मर्क्षाच्च क्रमाद्दशाः ॥ फलं नामनि रूपं स्यादेकोपचयता द्वयोः ॥ १४७ ॥ पिंगला सूर्य्यजननी महाधिव्याधिकारिका ॥ तुष्टा चेच्छत्रुवर्गस्य रुष्टा कुर्य्यात्तु साधके॥ १४८॥ क्षें बीजन्तु समुच्चार्य्य पिंगले वैरिवारणि ॥ प्रसीद फडिति प्रोच्याणुस्त्रयोदशवर्णकः ॥ दीर्घषट्कयुजा पूर्वबीजेनैव षडंगकम् ॥ १४९ ॥ पिंगवर्णां पिंगकेशीं पिंगनेत्रां धनुः शरान् ॥ हस्ताभ्यां दधतीं पद्मयुगलं तां भजाम्यहम् ॥ १५० ॥ अथ पूजाविधिं वक्ष्ये सर्वासामेव तन्त्रतः ॥ जपापुष्पाणि शस्तानि धूपो गुग्गुलसम्भवः ॥ १५१ ॥ घृतप्रदीपोमधुरा नैवेद्याः पायसादयः॥अलंकारस्तथा रक्तास्तथा वस्त्राणि चन्दनम् ॥ १५२ ॥ स्वर्णालंकरणैश्चापि सद्रव्यैर्बहुचम्पकैः ॥ तर्प्पयेत्परमेशानीं तत्तन्मन्त्रैः सहस्रधा ॥१५३॥ सुवर्णपात्रे निश्छिद्रे हस्तायामे मनोरमे ॥ कृत्वा यन्त्रं यथोक्तन्तु योगिनीं तत्र पूजयेत् ॥ १५४ ॥ तत्तन्मन्त्रं जपित्वा तु विघ्नशान्त्यै सहस्रशः ॥ सप्ताहेन प्रजायेत त्रिविधोत्पातवारणम् ॥ १५५ ॥ ततश्च कुण्डं विधिवत्कृत्वा च चतुरस्रकम् ॥ अथ वा स्थण्डिले शुद्धे सुलिप्ते गोमयाम्बुभिः ॥ १५६ ॥ चतुर्हस्तप्रमाणेन योजयेत्स्थिरमानसः ॥ योगिन्यग्निन्तु संस्थाप्य कृत्वा पूर्वोदिताः क्रियाः ॥ अन्यासां दशवारांस्तु विरुद्धायाः सहस्रधा ॥ १५७ ॥ बिल्वपत्रैस्तत्फलैश्च कमलैर्नागकेशरैः जुहुयात्पायसान्नेन तथैव कुलवस्तुना ॥ सहस्रमयुतं वापि लक्षं वा कामनाक्रमात् ॥ १५८ ॥ अथ पूजां प्रवक्ष्यामि मध्ये देवीं प्रपूजयेत् ॥ इच्छां ज्ञानं क्रियाशक्तिं त्रिषु कोणेषु पूजयेत् ॥ १५९ ॥

१ क्षां क्षीं क्षूं क्षैं क्षौं क्षः । एभिरक्षरैः षडंगन्यासं चरेत्॥

मन्मथान्पञ्च तदधः पञ्चकोणेषु पूजयेत् ॥ षडङ्गं पूजयेत्पश्चादष्टपत्रेन्ययोगिनीः ॥ तद्बाह्ये भूपुरे लोकपालानस्त्राणि पूजयेत् ॥ १६० ॥ पूजाप्रकारो होमश्च सर्वासामयमेव हि ॥ विशेषः पुनरत्रास्ति शत्रूच्छेदाभिचारकैः ॥ १६१ ॥ खड्गचर्मधरामुग्रां ध्यायेत्षड्भुजधारिणीम् ॥ गरुडासनमासीनां वैरिनिग्रहकारिणीम् ॥ १६२॥ लक्षमेकं प्रजप्यादौ जपेल्लक्षं हि तर्प्पयेत् ॥ सर्वशत्रुविनाशः स्याद्दुःखं नाप्नोति कुत्रचित् ॥ १६३ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि चन्द्रमातुश्च साधनम् ॥ मायाद्यो[1] वह्निजायान्तो मङ्गले मङ्गलालये ॥ १६४ ॥ एकादशाक्षरो मन्त्रो मङ्गलायाः प्रकीर्तितः ॥ कृत्वाद्येन षडङ्गानि दीर्घषट्कयुजा तथा ॥ १६५ ॥ ध्यायेदेनां त्रिनयनामुद्यदादित्यसन्निभाम् ॥ दरस्मेरमुखाम्भोजां सिन्दूरसुन्दराधराम् ॥ १६६ ॥ पद्मद्वये धनुर्बाणान्दधतीं भुजपल्लवैः ॥ सुगुञ्जन्मञ्जुमञ्जीरां काञ्चीगुणविराजिताम् ॥ ॥ १६७ ॥ एवं ध्यात्वा महेशानीं पूर्ववत्परिपूजयेत् ॥ ततो लक्षं मनुं जप्त्वा तारमायापुरःसरम् ॥ १६८ ॥ योगिनीक्षेत्रबटुकगणाधिपबलिं हरेत् ॥ सर्वासामेव पूजान्ते मङ्गलैवं प्रसीदति ॥ १६९ ॥ योगिन्यास्तु प्रसादार्थं वर्णलक्षं मनुं जपेत्॥ दुर्योगिन्यनुकूलार्थं जपेत्तत्सङ्ख्यकायुतम्॥ १७० ॥ अदृष्टप्रतिबद्धस्तु शुभायाश्च फलस्य च॥ प्राप्तये प्रजपेत्तावत्सहस्रन्तु मनुं सुधीः॥ १७१ ॥ [2]प्रकर्तव्यो वर्णशतं यावत्तुष्टास्ति योगिनी ॥ तुष्टाया वर्णशतकै रोगिणं चाभिमन्त्रयेत ॥ १७२॥ वर्णतुल्येन मन्त्रेण यस्याः सेवापरो भवेत्॥ तस्याः पीडानिवृत्तिः स्याद्वर्णाभ्यन्तर्गतैर्जपैः ॥ १७३ ॥ एवंविधिर्नवानां तु विज्ञेयः सुरसत्तमाः॥ योगिनी तुल्यफलदा वामे मार्गे च दक्षिणे॥ १७४ ॥ अथातःसम्प्रवक्ष्यामि भ्रामरीं भौममातरम्॥ क्ष्रीं भ्रामरीपदं चोक्त्वा सपत्नान्मे अधीश्वरि ॥ भ्रामय क्ष्रीं षड्दशार्णो मन्त्रोऽस्याः परिकीर्तितः॥ १७५॥ पिङ्गलावत्सर्वमस्याः सिद्धये शर्करा दश ॥ मन्त्रयित्वा तथा मार्गे दशदिक्षु च सन्त्यजेत ॥ १७६॥ प्रातस्ततो व्रजेन्मार्गे मार्गस्थास्सर्व एव हि॥ सर्वे मोहं समायान्ति व्याघ्राःसर्प्पाश्च तस्कराः ॥ शुल्किनो दुष्टभूपाश्च नित्यमेवं समाचरेत् ॥ १७७ ॥ उपानत्क-

---

१ ह्रीं मंगले मंगलालयै स्वाहा ॥ २ जपः प्रकर्तव्य इति शेषः ॥

तले यस्य लिखित्वा नाम च व्रजेत ॥ योजनैकं जपन्मन्त्रं स भ्रमेच्च वसुन्धराम् ॥ १७८॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि भद्रिकां बुधमातरम्॥ ब्लं बीजं तोयभूयोगाज्जातमादौ समुच्चरेत् ॥ १७९ ॥ भद्रिके मे मम भद्रं देहीत्येवं पदं वदेत् ॥ पुनश्च परभद्राणि नाशयद्वितयं ततः ॥ १८० ॥ स्वाहान्तो जिनवर्णोयं भद्रिकाया मनुर्मतः ॥ [1]षड्दीर्घयुक्तबीजेन षडङ्गविधिरीरितः॥ १८१ ॥ मङ्गलावच्छुभानां स्याद्ध्यानन्तु फलदायिनाम् ॥ पिङ्गलावत्समुद्दिष्टं जपाद्यं प्रोक्तवर्त्मना ॥ १८२॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि धान्याख्यां गुरुमातरम् ॥[2]श्रीं धनदे समुच्चार्य्य धान्ये स्वाहाष्टवर्णकः ॥ १८३ ॥ षड्दीर्घाढ्याद्यबीजेन षडङ्गविधिरीरितः ॥ नास्ति धान्यासमाकाचिदिह लोके धनप्रदा ॥ १८४ ॥ पुरश्चर्य्यात्रयं कृत्वा प्राग्जन्मार्ज्जितपातकम् ॥ दहेत्तु धान्या ददते धन्यत्वं साधकाय च ॥ १८५ ॥ बृहस्पतीश्वरात्पश्चात्काश्यां धान्यां विलोकयेत् ॥ पुरश्चर्य्यां तत्र कृत्वा यशोधन्यः प्रजायते ॥ १८६ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि सिद्धां शुक्रस्य मातरम् ॥ [3]ह्रीं सिद्धिदे सर्वं मम समुक्ता साधयद्वयम्॥ १८७॥ हृदन्तोयं षोडशार्णः सिद्धःसिद्धामनुर्मतः॥ बीजेनैव षडङ्गानि जपाद्यं पूर्ववच्चरेत्॥ नास्ति सिद्धोपासकानां कर्म्मासिद्धिस्तु कुत्रचित ॥ १८८ ॥ उपासकाय सिद्धाय येनाम्नायेन जायते ॥ तेनाम्नायेन देवानां पाके स्यात्सर्वमेव हि ॥ सिध्येत् षट्कर्म्म मर्त्यस्य मनोराराधनं विना ॥१८९॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि चोल्कां मन्दस्य मातरम् ॥ ऐं [4]ह्रींमुल्कापदं पश्चाद्देव्यै हृच्चाष्टवर्णकः॥ मन्त्रः प्रोक्तः प्रजतोयं धनारोग्यप्रदो मतः ॥ १९० ॥ ॐ मम सर्वरोगान्नाशय भञ्जयैकादशाक्षरः ॥ सर्वरोगापहो मन्त्रो मार्जनात्संप्रपद्यते ॥ १९१ ॥ उल्कामन्त्रो यस्य सिद्धो न गदास्तस्य मन्दिरे ॥ शीतलाया महामाया महिषं ल-

---

१ ब्लां, ब्लीं, ब्लूं, ब्लैं, ब्लौं, ब्लः, एभिः षडक्षरैः षडंगन्यासं चरेत् । यथा ब्लां हृदयाय नमः, ब्लीं, शिरसे स्वाहा इत्यादि ॥ २ श्रीं धनदे धान्ये स्वाहा इति मन्त्रः ॥ ३ ह्रीं सिद्धिदे सर्वं मम साधयसाधय नमः ॥ ४ ऐं ह्रीं उल्कादेव्यै नमः इति अष्टाक्षरमन्त्रः । ऐं ह्रीं बीजाभ्यां षडंगकल्पना भवति । यथा ऐं ह्रीं हृदयाय नमः, ऐं ह्रीं शिरसे स्वाहा, ऐं ह्रीं शिखायै वषट्, ऐं ह्रीं कवचाय हुम्, ऐं ह्रीं नेत्रत्रयाय वौषट्, ऐं ह्रीं अस्त्राय फट् ॥

क्षणान्वितम् ॥१९२॥ उल्काप्रीत्यै समुत्सृज्य नगरे भ्रामयेत्पुनः ॥ नाना-वाद्यैः परिवृतं वस्त्रादिभिरलङ्कृतम् ॥ उत्सृजेत्तं यमाशायामुपद्रवशमो भवेत् ॥ ॥ १९३ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि सङ्कटां राहुमातरम् ॥ ह्रीं सङ्कटे च रोगं मे परमं नाशयद्वयम् ॥ १९४ ॥ षोडशार्णस्तु मन्त्रोयं सर्वदुः-खापहो मतः ॥ कारागृहे जपेल्लक्षं बन्धमोक्षः प्रजायते ॥ १९५ ॥ वीरे श्वरादुदक्काश्यां सङ्कटा यत्र संस्थिता ॥ तत्र षोडशलक्षाणि जप्त्वा होमस्तु दूर्वया ॥ १९६ ॥ तस्य सिद्धो भवेन्मन्त्रस्तन्मुखाद्यदि निस्स रेत् ॥ अमुकस्यामुकं कष्टं गतं तद्गतमेव हि॥१९७॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि विकटां केतु मातरम् ॥ तारो[१] नमो भगवति विकटे वीरपालिके ॥ १९८ ॥ प्रसीदयुगलं मन्त्रः प्रकृत्यर्णः प्रकीर्त्तितः ॥ काश्यां वीरेश्वरासन्ना पश्चिमे विकटा स्थिता ॥ १९९ ॥ तत्र मन्त्रमिमं जप्त्वा ग्रहतप्ताश्च बालकाः ॥ उदरं चापि वन्ध्यायाः प्रजावत्यास्तथा शिरः ॥ २०० ॥ पित्रादित्यक्त-बालाश्च तथा मातृविवर्ज्जिताः ॥ साधकस्य करस्पृष्टा नीरोगाश्चिर जीविनः ॥ २०१ ॥

इति श्रीमहामायामहाकालानुमते मेरुतन्त्रे शिवप्रणीते
नवग्रहप्रकाशो द्वाविंशः ॥ २२ ॥

---

मुनय ऊचुः ॥ देवदेव महादेव भक्तानुग्रहकारक ॥ ब्राह्मयाद्यष्टौ भास्करस्य तटे तिष्ठन्ति शक्तयः ॥ १ ॥ रणे मृतानां योगेन मृतानां सहगामिनाम् ॥ स्वर्णं याश्च प्रयच्छन्ति तन्मनून्ब्रूहि शङ्कर ॥ २ ॥ श्रीशिव उवाच ॥ ब्रह्म-शक्तिस्तु शक्तीनां नायिका परिकीर्त्तिता ॥ योगिनां मुक्तिदात्री सा भोगि-नां भोगदा मता ॥ ३ ॥ ब्रामित्येकाक्षरं बीजं मुनिर्वाचस्पतिर्मतः ॥ गाय-त्री छन्द उद्दिष्टं वः शक्तिः कीलकं चरः ॥ ४ ॥ ध्यायेद्ब्राह्मीं पद्मसंस्थां हंसारूढां चतुर्मुखाम् ॥ अक्षमालावराभीतिकमण्डलुकरारुणाम् ॥ ५ ॥[२]बीजे

---

१ ॐ नमो भगवति विकटे वीरपालिके प्रसीदप्रसीद ॥ २ ब्रां हृदयाय नमः, ब्रां शिरसे स्वाहा ब्रां शिखायै वषट्, ब्रां कवचाय हुम्, ब्रां नेत्रत्रयाय वौषट्, ब्रां अस्त्राय फट्, ॥

नैव षडङ्गानि मध्ये देवीं प्रपूजयेत् ॥ षट्कोणेषु षडङ्गानि शक्तयोऽर्च्याः कलादले ॥ ६ ॥ चिन्तामणिज्ञाननीलघटाकिन्यन्तारिक्षतः[1] ॥ महत्पूर्वाश्च सप्तैतास्सरस्वत्यः प्रकीर्त्तिताः ॥ ७ ॥ लोकेश्वरीं शिवान्ते च त्रिपुराद्वितयं भवेत् ॥ वागीश्वरीरुद्रविष्णुमुखान्ते चाक्षया मता ॥ ८ ॥ पद्मावत्येव रूढा च षोडशी कीर्त्तिनायिका ॥ तत्तन्मन्त्रैः पूजनीया बाह्ये दिक्पाःसहेतयः ॥ ॥ ९ ॥ लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं पलाशकुसुमैर्हुनेत् ॥ तत्पुष्पयुक्तसलिलैस्तर्प्पयेन्मार्ज्जयेत्कुशैः ॥ १० ॥ ऐश्वर्य्यार्थं तु सिध्यर्थं गायत्री प्रथमांघ्रियुक् ॥ संरक्षणार्थं पुष्ट्यर्थं द्वितीयचरणान्वितम् ॥ मारणोच्चाटनाद्यर्थं तृतीयेन समन्वितम् ॥ लक्षमात्रं जपेन्मन्त्रं कार्य्यसिद्धिः प्रजायते ॥ ११ ॥ अथादौ सम्प्रवक्ष्यामि चिन्तामणिसरस्वतीम् ॥ तारं मायां च हस्रानैकाराढ्यान्सबिन्दुकान् ॥ ॥ १२ ॥ पुनर्मायां च तारं च वदेन्ङेन्तां सरस्वतीम् ॥ १३ ॥ हृदयान्तो भवार्णोयं मन्त्रस्तु परिकीर्त्तितः[2] ॥ त्रिष्टुप्छन्दो मुनिः कंठश्चिन्तामणि सरस्वती ॥ १४ ॥ देवताद्यं च बीजं स्याद्भ्रीं शक्तिस्त्वङ्गकल्पनम्[3] ॥ स्वरसम्पुटितैः कादिवर्गैः स्यादंगकल्पनम् ॥ १५ ॥ पुनश्च तारहल्लेखापुटितं दीर्घषट्कयुक् ॥ स्वकूठं तेन चांगानि मन्त्रार्णान्विन्यसेत्तनौ[4] ॥ मूर्द्धभ्रूमध्यकर्णाक्षिनासिकास्यगुदांघ्रिषु ॥ १६ ॥ हंसारूढां मौक्तिकाभां मन्दहासेन्दुशेखराम् ॥ वीणामृतवटाक्षस्रग्दीप्तहस्ताम्बुजास्थिताम् ॥ १७ ॥ ध्यात्वैवं मनसापूज्य कुर्य्याद्बाह्यार्चनं ततः ॥ वाग्देव्यौ पार्श्वयोः पूज्ये संस्कृतप्राकृताह्वये ॥ १८ ॥ ततः षडंगावरणं ततश्चाष्टदलेर्चयेत्[5] ॥ प्रज्ञां मेधां श्रुतिं चैव स्मृतिं शक्तिं ततोर्चयेत् ॥ १९ ॥ वागीश्वरीं वसुमतीं स्व-

---

१ चिन्तामणिसरस्वती, ज्ञानसरस्वती, नीलसरस्वती, घटसरस्वती, किनिसरस्वती, अन्तारिक्षसरस्वती ॥ २ ॐ ह्रीं हैं ह्रीं ॐ सरस्वत्यै नमः इति एकादशाक्षरमन्त्रः ॥ ३ अं कं खं गं घं ङं आं हृदयाय नमः, इं चं छं जं झं यं ईं शिरसे स्वाहा इत्थं न्यासकल्पनम् । पुनः ऐंह्रींबीजाभ्यांसंपुटितैः स्हां, स्हीं, स्हूं, स्हैं, स्हौं, स्हः, एभिः कूटाक्षरैर्न्यासीन्कुर्य्यात् यथा ॐ ह्रीं स्हां ॐ ह्रीं हृदयाय नमः इत्यादि ॥ ४ ॐ मूर्ध्नि ह्रीं भ्रूमध्ये, स्हैं दक्षकर्णे, ह्रीं वामकर्णे, ॐ दक्षनेत्रे, स वामनेत्रे, रनासिकायाम् स्वमुखे, त्यै गुदे, न दक्षपादे, मः वामपादे, इत्यक्षरन्यासः ॥ ५ ततोर्चयेदित्यनयोरुत्तरत्रान्वयः ॥

स्तिब्राह्म्यादिका अपि ॥ दिक्पालैश्च चतुर्थं स्याज्जपेद्द्वादशलक्षकम् ॥ २० ॥ घृताक्तैरविसाहस्रं हुनेद्व्रीह्याढ्यचम्पकैः ॥ एवं सिद्धमनुर्मन्त्री काम्यकर्माणि साधयेत् ॥ २१ ॥ सूर्य्यमण्डलगां देवीं ध्यायेत्प्रतिदिनं यजेत् ॥ सहस्रत्रितयं यस्तु त्रिमासात्स्यान्महाकविः ॥ २२ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि ज्ञान पूर्वां सरस्वतीम् ॥ ऐकारयुक्ता हसरा बिन्द्वन्ताः पूर्वबीजकम् ॥ २३ ॥ हसक्षलर इत्येवं पंच ईकारसंयुताः ॥ विसर्गान्तास्तृतीयं स्याद्बीजं ज्ञानप्रदो मनुः ॥२४॥ ऋषिस्तु दक्षिणामूर्त्तिर्देवी ज्ञानसरस्वती ॥ अन्तबीजं भवेच्छक्तिराद्यबीजन्तु कीलकम्॥२५॥आद्यबीजेन चांगानि कृत्वा बीजानि विन्यसेत् दक्षिणे च करे वामे द्वये बीजत्रयं पुनः ॥२६॥ पादादिनाभिपर्य्यन्तं नाभ्यादि हृदयान्तकम्॥हृदयादि च शीर्षान्तं क्रमाद्बीजत्रयं न्यसेत्॥२७॥ततो ध्यायेत्सूर्य्यनिभां त्र्यक्षां चन्द्रकलाधराम् ॥ करैर्धत्रीं जपवटीं पुस्तकं वरदाभये ॥ पीनोत्तुंगस्तनीं पूर्णचन्द्रास्यामरुणाम्बराम् ॥ २८ ॥ एवं ध्यात्वा गिरं देवीं ततो बाह्ये समर्चयेत् ॥ नवयोनित्रिकोणेषु वामा ज्येष्ठादिका यजेत् ॥२९ ॥ प्राङ्मध्ययोन्योरन्तस्तु यजेच्छक्तिचतुष्टयम् ॥ आद्या वह्नी विषघ्नी स्यात्ततो दूरतरा मता ॥३०॥ सर्वादौ तेन ता बाह्ये पञ्चकोणं समाचरेत् ॥ आग्नेयेशाननैर्ऋत्यवायव्ये पश्चिमे क्रमात् ॥ ३१ ॥ यजेत्कोणे पञ्चबाणाञ्छोषणं मोहनन्तथा ॥ सन्दीपसम्मोहनकौ तथा चोन्मादनोन्तिमः ॥ ३२ ॥ ततोङ्गावरणं पूज्यं पूर्वाशाद्यष्टयोनिषु ॥ क्रमेण शक्तयः पूज्याः शुभगा च तथा भगा ॥३३॥ भगपूर्वा सर्पिणी च ततश्च भगमालिनी॥ अनंगानंगकुसुमा ततश्चानंगमेखला ॥ अनंगमदना चेति ध्यानमासां निरूप्यते ॥ ३४ ॥ अक्षस्रक्पुस्तककरा रक्ताभाः सर्वशक्तयः ॥ दिव्यांबराः सर्वभूषाः सर्वाभीष्टप्रदायिकाः ॥ ३५ ॥ ब्राह्म्याद्याश्च ततोभ्यर्च्यास्तदग्रे पूजयेत्पुनः ॥ भैरवानसितांगाद्याञ्छक्रादीनायुधान्यपि ॥ ३६ ॥ यजेद्द्वादशलक्षं स्याज्जपस्त्रिमधुरान्वितैः॥ हुनेत्पलाशपुष्पैश्च दशांशं वा शतांशकम् ॥ ३७ ॥ एवं सिद्धमनुर्मन्त्री प्रयो-

---

१ ध्यानमाह ॥

गानाचरेदथ ॥ पलाशपुष्पैरयुतं सौभाग्याय च होमयेत् ॥ ३८ ॥ लक्ष्म्यै तथैव जुहुयान्महासारस्वताय च ॥ मधुरत्रितयोपेतबिल्वैश्चैवायुतं हुनेत् ॥ भवन्ति सकला लोका वश्या नास्त्यत्र संशयः ॥३९॥ एवं कुर्य्यात्समृद्ध्यर्थं बीजैकैकस्य कथ्यते ॥ पृथक्प्रयोगो ध्यानं च पंचाशद्वर्णशोभिताम् ॥४०॥ नवकुन्दनिभां देवीं मुक्ताजालैश्च भूषिताम् ॥ मुद्राकपालविद्याक्षमालाराजन्महाभुजाम्॥४१॥ एवं ध्यात्वा जपेल्लक्षं पूजनाद्यं च पूर्ववत् ॥ कविता तस्य जायते नानावृत्तार्थशोभिता ॥४२॥ रक्तां सुरतरोर्मूले विलसन्मणिपीठगाम् ॥ सृणिपाशकपालेषुमातुलुंगधनुष्कराम् ॥ ४३ ॥ रत्नैरलंकृतां काममदघूर्णितलोचनाम् ॥ हेलाविलाससम्भिन्नां नवयौवनसुन्दरीम् ॥ ४४ ॥ देवीं ध्यात्वा जपेल्लक्षं यो बीजं मध्यमं वशी ॥ त्रैलोक्यं क्षोभयेदाशु पूर्ववत्सिद्धिभागसौ ॥ ४५ ॥ अक्षमालासुधाकुम्भमुद्रापुस्तकधारिणीम् ॥ नवकुन्देन्दुसंकाशां राजन्मौक्तिकभूषणाम् ॥ ४६ ॥ शक्तिं संविन्मयीं ध्यात्वा बीजं सारस्वतं वशी ॥ यो जपेत्प्राय एतस्य कविता भुवि सम्मता ॥४७॥ अथातो वाममार्गस्थां वक्ष्ये नीलसरस्वतीम्॥तारो लक्ष्मीश्च हृल्लेखा हसाबौङ्कारसंयुतौ ॥४८॥ हुंफट् नीलसरस्वत्यै स्वाहान्तो मनुवर्णकः ॥ ऋष्याद्या ब्रह्मगायत्र्यौ तथा नीलसरस्वती ॥ ४९ ॥ नेत्रैचन्द्रेन्दुनेत्रांगनेत्राणैरंगकल्पनम् ॥ मन्त्रोत्थितैरथो ध्यायेद्देवीं सर्वेष्टसिद्धिदाम् ॥ ५० ॥ घण्टां शिरः शूलमसिं कराब्जैर्दधतीं भजे ॥ पोथयन्तीं पादतले पशुं चन्द्रकलाधराम् ॥ ५१ ॥ जपपूजादिकं सर्वमस्यास्तारावदाचरेत् ॥ विशेषाज्जयदा वादे विधेयं साधिता नृभिः ॥ ५२ ॥ अथान्यत्सम्प्रवक्ष्यामि तारं च भुवनेश्वरीम् ॥ श्रीमदेकजटे नीलसरस्वति पदं वदेत् ॥५३॥ महोग्रतारे देवीति खेखः सर्वपदं वदेत् ॥ भूतपिशाचराक्षसान्ग्रस युग्मं ममेति च ॥ ५४ ॥ जाड्यं छेदय

---

१ ओं श्रीं ह्रीं स्हौं हुं फट् नीलसरस्वत्यै स्वाहा । इति चतुर्दशाक्षरो मन्त्रः ॥ २ द्वेकैकद्विषड्द्विवर्णैः षडङ्गानि न्यस्येत् । यथा ओं श्रीं हृदयाय नमः, ह्रीं शिरसे स्वाहा इत्यादि ॥ ३ ओं ह्रीं श्रीमदेकजटे नीलसरस्वति महोग्रतारे देवि खेखः सर्वभूतपिशाचराक्षसान् ग्रसग्रस मम जाड्यं छेदयछेदय श्रीं ह्रीं फट् स्वाहा । इति द्विपञ्चाशदक्षरो मन्त्रः ॥

युग्मं च श्रींह्रींफट् वह्निगेहिनी ॥ द्विपंचाशाल्लिपिश्चायं ध्यानपूजादिपूर्ववत् ॥ ॥ ५५ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि त्रिवर्णं मन्त्रनायकम्॥ह्रींश्रींहुमिति मुन्याद्यं यथा त्रिपुरभैरवी ॥ ५६ ॥ अथान्यं सम्प्रवक्ष्यामि ब्लूं वं वदयुगं तथा ॥ त्रींहुंफट् च नवार्णोयं ध्यानपूजादि पूर्ववत् ॥ ५७ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि वामां घटसरस्वतीम् ॥ हसखफरवर्णाश्च ऐंकारेण समन्विताः ॥५८॥ तस्याः स्यादादिमं कूटं हसरा औंसमन्विताः ॥ विसर्गान्ता द्वितीयं स्याद्धसौ फो रफ एव च ॥ ५९ ॥ ईकारेण च संयुक्तास्तृतीयं कूटमुच्यते ॥ वाचं माया रमां द्रां ह्रीं कामं ब्लूं संस्तथैव च ॥ ६० ॥ ध्रीं बीजं च समुच्चार्य्य ततो घटसरस्वति ॥ घटे वदद्वयम्पश्चात्त्वरयुग्मं वदेत्ततः ॥ ६१ ॥ रुद्राज्ञया ममाभीतिलाषं कुरुयुगं तथा ॥ स्वाहान्तोग्निकृताणोंयं प्राग्वत्पूजादिकं भवेत् ॥६२॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि विद्यां किनिसरस्वतीम् ॥ वामाचारेण फलदां वाग्बीजं हैं समुच्चरेत् ॥ ६३ ॥ ह्रीमुच्चार्य्य किनिद्वन्द्वं विद्ये मन्त्रो नवाक्षरः ॥ चामुण्डामन्त्रवत्सर्वं जपन्यासादिकं भवेत् ॥ ६४ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि ह्यन्तरिक्षसरस्वतीम्॥ वाचं मायामन्तरिक्षसरस्वत्याग्निगेहिनी ॥ ॥ ६५ ॥ द्वादशार्णो मनुर्जप्तो वर्णलक्षमितो यदा ॥ शृणुयादीप्सितां वार्तां दूरस्थामपि साधकः ॥ ६६ ॥ महासरस्वतीं वक्ष्ये सर्वकामफलप्रदाम् ॥ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं समुच्चार्य सौंक्लींह्रीं ऐं पुनर्वदेत् ॥ ६७ ॥ ब्लूं तु स्त्रीं नीलतारे च सरस्वतिपदं ततः ॥ द्रांह्रींक्लींब्लूं स उच्चार्य्य ऐंह्रींश्रींक्लीं पुनर्वदेत् ॥ ६८ ॥ सौःसौःह्रीं वह्निजायान्तो मन्त्रो द्वात्रिंशदर्णकः ॥ ब्रह्मानुष्टुप्सरस्वत्यो मुन्याद्याः परिकीर्त्तिताः॥६९॥पञ्चपञ्चाष्टपञ्चेषुयुगार्णैरंगकल्पनम् ॥ नवासनां सर्प्पभूषां कर्त्रीं चापि कपालकम् ॥ ७० ॥ चषकं च त्रिशूलं च दधतीं च चतुष्करैः॥ मुण्डमालाधरां त्र्यक्षां भजे नीलसरस्वतीम् ॥७१॥ चतुर्लक्षं जपेद्विद्यां किंशुकैर्मधुरान्वितैः॥ दशांशं जुहुयात्पूजां पीठे कुर्य्याच्च सोच्यते॥७२॥

---

१ त्रिपुरभैरवीमन्त्रस्ये त्यर्थः॥ २ ब्लूंवं वदवद त्रींहुंफट् । इति नवाक्षरो मन्त्रः ॥ ३ हस्फें ह्सौं ह्रौस्फौ ऐं ह्रीं श्रीं द्रां ह्रीं क्लीं ब्लूं सः घीं घटसरस्वति घटे वदवद तुर तुर रुद्राज्ञया ममाभिलाषं कुरु कुरु स्वाहा अयं वह्निवेदार्णः ॥

आदौ त्रिकोणं षट्कोणमष्टषोडशपत्रकम् ॥ द्वात्रिंशत्पत्रमन्ते स्याच्चतुः-षष्टिदलं तथा ॥ ७३ ॥ त्रिरेखाढ्यं धरागेहं चतुरस्रमतः परम् ॥ एवं यन्त्रं समालिख्य बाह्यतः पूजनं चरेत् ॥ ७४ ॥ चतुरस्रस्याग्निकोणे विघ्नेशं परि-पूजयेत् ॥ वायुकोणे क्षेत्रपालमैशाने भैरवं तथा ॥ ७५ ॥ नैर्ऋते योगि-नीस्सर्वा वामभागे गुरुं यजेत् ॥ भूगृहस्याद्यरेखायामणिमा लघिमा तथा ॥ ॥ ७६ ॥ महिमा चेशिता पूज्या वशिता कामरूपिणी ॥ गरिमा प्राप्तिरि-त्येताः पूज्याः पूर्वादिदिक्क्रमात् ॥ ७७ ॥ धरागृहस्य रेखायां द्वितीयायां तु भैरवाः[1] ॥ भूमिगेहे तृतीयाया रेखायां मातरः[2] पुनः ॥ ७८ ॥ इत्थमावा-वृतिं चेष्ट्वा योनिमुद्रां प्रदर्शयेत् ॥ चतुःषष्टिदले पद्मे शक्तीरर्चेच्च तावतीः ॥ ७९ ॥ कुलेशी कुलनन्दा च वागीशा भैरवी तथा॥उमाश्रीशान्तयश्चण्डा धूम्रा काली करालिनी ॥ ८० ॥ महालक्ष्मीश्च कंकाली रुद्रकाली सरस्व-स्वती ॥ वाग्वादिनी च नकुली भद्रकाली शशिप्रभा ॥ ८१ ॥ प्रत्यंगिरा सिद्धलक्ष्मीर्ह्यमृतेशी च चण्डिका ॥ खेचरी भूचरी सिद्धा कामाक्षी हिंगुला-बला ॥ ८२ ॥ जया च विजया चाप्यजिता नित्याऽपराजिता॥ विलासिनी तथा घोरा चित्रा मुग्धा धनेश्वरी ॥ ८३ ॥ सोमेश्वरी महाचण्डा विद्या हंसी विनायिका॥वेदगर्भा तथा भीमा उग्रा वैद्या च सद्गतिः॥८४॥उग्रेश्वरी चन्द्रगर्भा ज्योत्स्ना सत्या यशोवती ॥ कुलिका मा[3]लिनी काम्या ज्ञानवत्यथ डाकिनी ॥ ८५ ॥ राकिनी लाकिनी चाथ काकिनी शाकिनी ह्यपि ॥ हाकिनी च चतुःषष्टिशक्तयः सिद्धिदायिकाः ॥ ८६ ॥ दर्शयेत्खेचरीं मुद्रां द्वितीयावरा-णेर्चिते ॥ द्वात्रिंशत्पत्रमध्ये तु पूज्या एतास्तु शक्तयः ॥ ८७ ॥ किराता योगिनी वीरा वेताला यक्षिणी हरा ॥ ऊर्ध्वकेशी च मातंगी मोहिनी वंशव-र्द्धिनी ॥ ८८ ॥ मालिनी ललिता दूती मनोज्ञा पद्मिनी धरा ॥ शर्वरी छत्रहस्ता च रक्तनेत्रा विचर्चिका ॥ ८९ ॥ मातृका दूरदर्शी च क्षेत्रेशी

---

१ असितांगो रुरुश्चण्डः क्रोधोन्मत्तकपालिनौ ॥ भीषणश्चाथ संहार एतेष्टौ भैरवा मताः ॥
२ ब्राह्मी, माहेश्वरी, कौमारी, वैष्णवी, वाराही, इन्द्राणी, चामुण्डा, महालक्ष्मीः इमा अष्टौ मातरः ॥ ३ कामिनी इति क्वचित्पाठः ॥

रंगिणी नटी ॥ शान्तिर्वित्या वज्रहस्ता धूम्रा श्वेता सुमङ्गला ॥ ९० ॥ इष्ट्वा तृतीयावरणं बीजमुद्रां प्रदर्शयेत् ॥ ततः शोडशपत्रेषु पूज्याः षोडशशक्तयः ॥ ९१ ॥ मुग्धा श्रीः कुरुकुल्ला च त्रिपुरा तु तलक्रिया ॥ रतिः प्रीतिस्तथा बाला सुमुखी श्यामलाविला ॥ ९२ ॥ पिशाची च विदारी च शीतला वज्रयोगिनी ॥ सर्वेश्वरीति सम्पूज्य सृणिमुद्रां प्रदर्शयेत् ॥ ९३ ॥ अष्टपत्रे स्वस्वमन्त्रैर्यजेदष्टसरस्वतीः ॥ नमः पद्मासने पद्मरूपे वाग्भुवनेश्वरी ॥ ॥ ९४ ॥ कामो वदद्वयं वाग्वादिनि स्वाहा ध्रुवादिकः ॥ वागीश्वर्य्या मनुः प्रोक्तश्चतुर्विंशतिवर्णकः ॥ महाकविर्वर्णलक्षजपात्स्यात्स्याच्च पूजनम् ॥ ९५ ॥ हंसकलहरायुक्तो ईकारेण वदद्वयम् ॥ चित्रेश्वरीति वाग्बीजं स्वाहान्तो द्वादशाक्षरः॥ ९६ ॥ चित्रेश्वर्य्या मनुर्लक्षजपाच्चित्रकलाप्रदः॥ स्त्रीवश्यकृत्तथानेन वह्निकोणे प्रपूजयेत् ॥ ९७॥ वाग्बीजं कुलजे वाक्च सरस्वत्यनलाङ्गना॥ एकादशार्णमन्त्रेण कुलजां दक्षिणेर्चयेत् ॥ ९८ ॥ वाङ्मायाश्रीं वदद्वन्द्वं कीर्त्तीश्वर्य्यनलप्रिया ॥ त्रयोदशार्णेन यजेन्नैर्ऋत्ये कीर्त्तिनायिकाम् ॥ ९९ ॥ पश्चाद्यजेच्च पूर्वोक्तामन्तरिक्षसरस्वतीम् ॥ वायव्यकोणे पूर्वोक्तां यजेद्घटसरस्वतीम् ॥ १००॥ उदङ्नीलसरस्वत्या नवार्णेन च तां यजेत् ॥ ईशाने पूजयेत्पूर्वप्रोक्तां किनिसरस्वतीम् ॥ पंचम्यांवृत्तिमाराध्य क्षोभमुद्रां प्रदर्शयेत् ॥ ॥ १०१ ॥ तस्य बाह्ये तु षट्कोणे डाकिनी राकिनी तथा ॥ लाकिनी काकिनी चैव शाकिनी हाकिनी तथा ॥ दर्शयेद्द्राविणीं मुद्रां षष्ठावरणपू-

---

१ परिवर्त्य करौ स्पृष्टावर्धचन्द्राकृती प्रिये ॥ तर्ज्जन्यांगुष्ठयुगलं युगपत्कारयेत्ततः ॥ अधः कनिष्ठावष्टब्धे मध्यमे विनियोजयेत् ॥ तथैव कुटिले योज्यं सर्वाधस्तादनामिके ॥ बीजमुद्रेयमुदिता सर्वसिद्धिप्रदायिनी ॥ २ अंकुशमुद्रा ॥ ३ ॐ नमः पद्मासने पद्मरूपे ऐं ह्रीं क्लीं वदवद वाग्वादिनि स्वाहा । इति मन्त्रः ॥ ४ प्रणवाद्यः आदावोंकारयुक्तश्चेत्तदा चतुर्विंशत्यक्षरो मनुर्भवति ॥ ५ हसकलरानिमांश्चतुरो वर्णान्संयुज्य ह्रींबीजं पश्चाद्वदवदेति ततश्चित्रेश्वरि ऐं स्वाहेति पदयोजनाद्द्वादशाक्षरो मन्त्रो भवति॥ ६ ऐं कुलजे ऐं सरस्वति स्वाहा इति मन्त्रः॥ ७ ऐं ह्रीं श्रीं वदवद कीर्त्तीश्वरि स्वाहा । ८ ऐं ह्रीं अन्तरिक्षसरस्वति स्वाहा इति ॥ मन्त्रः ॥ ९ घटसरस्वतीमन्त्रः पूर्वं लिखितः ॥ १० ब्लूं वें वदवद त्रीं हुंफट्स्वाहा इति मंत्रः ॥ ११ ऐं ह्रें ह्रीं किणि किणि विच्चे किणि सरस्वत्यां अयं नवाक्षरो मन्त्रः ॥

जने॥१०२॥ त्रिकोणे तद्बहिः पूज्याः परा बाला च भैरवी ॥ दर्शयेत्कर्षिणीं मुद्रां पूजा चेत्थं प्रकीर्तिता ॥ १०३ ॥ गणेशाय क्षेत्रपाय योगिन्यै भैरवाय च ॥ तारायै चापि वितरेद्बलिं नित्यं चतुष्पथे ॥ १०४ ॥ परमान्नं च शाकाज्यपायसापूपकादिकान् ॥ बलिद्रव्यं समाख्यातं येनेष्टं सा प्रयच्छति ॥ १०५ ॥ अस्या ध्यानं त्रिधा वच्मि सत्त्वादिगुणभेदतः ॥ श्वेताम्बराढ्यां हंसस्थां मुक्ताभरणभूषिताम् ॥ चतुर्वक्त्रामष्टभुजैर्दधानां मुद्रिकां भजे ॥ ॥ १०६ ॥ वराभये पाशशक्ती ह्यक्षस्रक्पुष्पमालिके ॥ शब्दपाथोनिधौ ध्यायेत्सृष्टिध्यानमुदीरितम् ॥ १०७ ॥ अथ चान्यत्प्रवक्ष्यामि ध्यानं तदवधारय ॥ रक्ताम्बरां रत्नसिंहासनस्थां हेमभूषिताम् ॥ १०८ ॥ एकवक्त्रां वेदसंख्यैर्भुजैः सम्बिभ्रतीं क्रमात् ॥ अक्षमालाम्पानपात्रमभयं वरमुत्तमम् ॥ श्वेतद्वीपस्थितां ध्यायेत्स्थितिध्यानमितीरितम् ॥ १०९ ॥ कृष्णांबराढ्यां नौसंस्थामस्थ्याभरणभूषिताम् ॥ नववक्त्राम्भुजैरष्टादशभिर्दधतीं वरम् ॥ ॥ ११० ॥ अभयम्परशुं दर्वीं खड्गं पाशुपतं हलम् ॥ भिन्दिपालञ्च मुशलं कर्त्रीं शक्तिं त्रिशीर्षकम् ॥ १११ ॥ संहारास्त्रं वज्रपाशौ खट्वाङ्गं गदया सह ॥ रक्ताम्भोधौ स्थितान्ध्यायेत्संहारध्यानमीरितम् ॥ ११२ ॥ कर्म्मसु क्रूरसौम्येषु ध्यायेन्मन्त्री तथातथा ॥ एवं सिद्धे मनौ मन्त्री गिरा वाचस्पतिर्भवेत् ॥ ११३ ॥ दूर्वोत्थया तु लेखन्या रोचनारसयुक्तया ॥ बालस्याच्छिन्ननालस्य जिह्वायां विलिखेन्मनुम् ॥ सम्प्राप्ते सोऽष्टमे वर्षे सर्वशास्त्रज्ञतामियात् ॥ ११४ ॥ अयुतमन्त्रसञ्जप्तां वचां बालस्य कण्ठतः ॥ बध्नीयात्पूर्वसम्प्रोक्तं बलिं दत्त्वा विधानतः ॥ द्वादशे वत्सरे प्राप्ते भक्षिता सा कवित्वकृत् ॥ ११५ ॥ ज्योतिष्मतीभवन्तैलं कर्षमात्रं सुमन्त्रितम् ॥ उपरागे जलस्थो योऽश्नीयाद्वाचस्पतिर्भवेत् ॥ ११६ ॥ चतुष्पथे श्मशाने वा हित्वा लज्जाम्भयन्तथा ॥ जपेच्छवं समारुह्य विद्यान्तत्परमानसः ॥११७॥ शृणोत्यसावमुं शब्दं निशीथे जपतत्परः ॥ पारगो भव विद्यानां सर्वसिद्धिमवाप्नुहि ॥ ११८ ॥ विद्वत्कुलसमुद्भूतमष्टवर्षं शिशुद्वयम् ॥ उपविश्य तयोर्मूर्ध्नि करौ दत्त्वा जपेन्मनुम् ॥ ११९ ॥ वेदान्तन्यायसंयुक्त्या विवदेते

उभावपि ॥ यः कौतुकी स आश्चर्य्यं विद्यायाः पश्यतु ध्रुवम् ॥ १२० ॥ विधाय वेदिकां रम्यां विजने कदलीवने ॥ तत्रासीनो जपेद्विद्यामर्कलक्षं विधानतः ॥ १२१ ॥ दासीचालितदोलायामारूढा सुस्मिताननाम् ॥ पुन्नागचम्पकाशोकरम्भाविपिनसंस्थिताम् ॥ १२२ ॥ एवं ध्यात्वा भगवतीं बलिं दद्याज्जपान्ततः ॥ एवं कुर्वन्नरः सर्वमभीष्टं लभते ध्रुवम् ॥ १२३ ॥ निर्वासा विशिखः प्रेतभूमिस्थो यो जपेन्मनुम् ॥ अयुतं कृष्णभूताहे स वाक्सिद्धिमवाप्नुयात् ॥ १२४ ॥ विद्यां सौख्यं धनम्पुष्टिमायुः कीर्त्तिं बलं श्रियम् ॥ रूपं कामयमानेन सेव्येयन्तु सरस्वती ॥ १२५ ॥ अथ लोकेश्वरीं वक्ष्ये त्रिकूटाख्यां सरस्वतीम् ॥ श्रींह्रींक्लींमिति मन्त्रोस्यास्त्रिबीजः परिकीर्त्तितः ॥ १२६ ॥ मुनयस्त्वस्य सम्प्रोक्ता भृगुसम्मोहनादयः ॥ छन्दो निवृच्च गायत्री देवी लोकेश्वरी मता ॥ १२७ ॥ ह्रींबीजं क्लीं च शक्तिः स्याद्विमन्त्रार्णैः षडङ्गकम् ॥ ध्यानमस्याः प्रवक्ष्यामि नानारत्नचये स्थितः ॥१२८॥ सुवर्णजः कल्पतरुर्मणिकुट्टिमभूमिगः ॥ तस्याधस्ताद्रत्नमये स्थितां सिंहासनोपरि ॥ १२९ ॥ श्वेतपद्मे समासीनाम्मणिकुण्डलभूषिताम्॥ केयूरहारमुकुटरसनानूपुरान्विताम् ॥ १३० ॥ पद्मद्वयं पाशवरौ चांकुशेक्षुशरासने ॥ अभीतिं पुष्पबाणांश्च दधानां करपल्लवैः ॥ १३१ ॥ हेमाभां सततदूतीभिस्तरुणीभिः समावृताम् ॥ चामरादर्शकरकताम्बूलकरचारुभिः ॥ १३२ ॥ प्रसन्नदृष्टया पश्यन्तीं साधकं त्विति चिन्तयेत्॥ सूर्य्यलक्षं जपेन्मन्त्रं हुनेत्त्रिमधुरान्वितैः ॥ १३३ ॥ राजवृक्षसमिद्भिश्च तद्दशांशं प्रहोमयेत् ॥ षट्कोणमध्ये देवेशीं कोणेष्वङ्गानि पूजयेत् ॥१३४॥ लक्ष्मीं हरिं पार्वतीं च शङ्करं च रतिं स्मरम् ॥ पार्श्वद्वये शङ्खपद्मनिधी पूज्यौतदनन्तरम् ॥ १३५ ॥ ब्रह्मादिभिस्तृतीयं स्यात्स्त्रीरूपैर्लोकपालकैः ॥ चतुर्थं पञ्चमन्तेषामायुधैरिति पूजनम् ॥ ॥ १३६ ॥ ततः काम्यानि कुर्वीत जपेत्सूर्य्यसहस्रकम् ॥ तावद्धुनेद्बिल्वफलैः सम्पत्तिः परमा भवेत् ॥ १३७ ॥ राजवृक्षसमिद्धोमात्कांक्षिता-

१ त्रिबीजानां द्विरावृत्त्या षडंगानां न्यासान्विदधीत यथा श्रीं हृदयाय नमः ह्रीं शिरसे स्वाहा, क्लीं शिखायै वषट् श्रीं कवचाय हुम्, ह्रीं नेत्रत्रयाय वौषट् क्लीं अस्त्राय फट् ॥

कर्षणम्भवेत् ॥ जपाकुसुमहोमस्तु समस्तजनवश्यकृत् ॥ १३८ ॥ पलाश-पुष्पहोमेनात्युत्कृष्टकविता भवेत्॥ अथातः संप्रवक्ष्यामि त्रिपुरां शिवसञ्ज्ञिताम्॥ ॥ १३९ ॥ सबिन्दवो द्वादशैव स्वराः प्रथमबीजकम् ॥ द्वितीयं कामबीजं स्यात्तृतीयं सौरिति स्मृतम् ॥ तुल्यं ज्ञानसरस्वत्या ध्यानन्यासार्चनादिकम् ॥ ॥ १४० ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि रुद्रविश्वेश्वरीमनुम् ॥ ॐवांश्रींह्रीं समुच्चार्य्य स्फ्रेंसौं स्वाहान्तको मनुः ॥ १४१ ॥ अष्टाक्षरो मुनिश्चास्य त्रिविक्रम उदाहृतः ॥ रुद्रवागीश्वरी देवी गायत्री छन्द ईरितम् ॥ १४२ ॥ स्वाहा शक्तिश्च वां बीजं षड्भिर्मन्त्रार्णकैः क्रमात् ॥ सांसींसूं चापि सैंसौंसः पूर्वकैरंग-कल्पनम् ॥ १४३ ॥ सर्वज्ञामृततेजोज्वालामालिनि तदुत्तरम् ॥ तृप्तेत्युक्त्वा वदवद अनादिबोधवज्रिणे ॥ १४४ ॥ वज्रधराय स्वतन्त्रनित्यमलुप्तशाक्ति च ॥ सहजातिरूपिणे चानन्तशक्तिबालिं वदेत ॥ १४५ ॥ पशुं हुंफट् पाशुपतास्त्रायेति पदमुच्चरेत् ॥ सहस्राक्षायेति मन्त्रः प्रोक्तः सप्ततिवर्णकः ॥ सर्वकामप्रदश्चैवं ध्यानमस्या निरूप्यते ॥ १४६ ॥ शुभ्राभां त्रीक्षणां दोर्भि-र्बिभ्रतीं फलपुस्तके ॥ वराभये सर्पभूषां रुद्रवागीश्वरीं भजे ॥ जपपूजाप्रयो-गादि ज्ञेयं वाग्वादिनीसमम् ॥ १४७ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि विष्णुवागी-श्वरीमनुम् ॥ ॐ श्रींस्फुं श्रीं नमश्चेति षडर्णो मन्त्र उच्यते ॥ १४८॥ कश्य-पोस्य मुनिः प्रोक्तो गायत्री छन्द ईरितम् ॥ विष्णुवागीश्वरी देवी श्रीं शक्तिः स्फुं च बीजकम्॥ श्रींबीजेन षडङ्गानि ध्यानमस्या निरूप्यते॥ १४९ ॥ हेमाभां बिभ्रतीं दोर्भिः फलपुस्तककुंभकान् ॥ अभयं सर्पभूषाढ्यां विष्णुवागीश्वरीं भजे ॥ अस्या पूजादिकं षष्ठवर्णवाग्वादिनीसमम् ॥ १५० ॥ अथातः

---

१ अंआं इंईं उंऊं ऐंऐं ओंऔं अं अः क्लीं सौः ॥ २ ओं वां श्रीं ह्रीं स्फ्रेंसौं स्वाहा ॥ ३ वामित्यादिप्रागभावाधिकरणक्षणे ॐ सांसीमिति संयोज्य तैः षडङ्गन्यासान्कुर्वीत यथा—साम् ओं हृदयाय नमः, सींवां शिरसे स्वाहा, सूं श्रीं शिखायै वषट्, सैं ह्रीं कवचाय हुम, सौस्फ्रें नेत्रत्रयाय वौषट्, सः सौं अस्त्राय फट् ॥ ४ सर्वज्ञामृततेजोज्वालामालिनि तृप्ता वदवद अनादिबोधे वज्रिणे वज्रधराय स्वतन्त्रनित्यमलुप्तशक्तिसहजातिरूपिणे अनन्तशक्तिबालिं पशुं हुंफट्पाशुपतास्त्राय सहस्राक्षाय ॥

सम्प्रवक्ष्यामि मुख्यवागीश्वरीमनुम् ॥ ह्रीं वाचस्पते अमृतप्लूः प्लूंह्रींसौं च संवदेत् ॥ १५१ ॥ द्वादशार्णो मन्त्र उक्तो मुनिः कंठः प्रकीर्त्तितः ॥ विष्णु-वागीश्वरी देवी विराट् छन्दः प्रकीर्त्तितम् ॥ १५२ ॥ प्लुः शक्तिर्वाक्च बीजं स्याद्धृत्तु वाचस्पते इति ॥ अमृतेति शिरः प्रोक्तं प्लूः शिखा प्लूं च वर्म्मकम् ॥ वाचस्पते अमृतेति नेत्रं प्लूः प्लूं तथास्त्रकम् ॥ १५३ ॥ ध्यानपूजादिकं प्राग्वत्प्रयोगः कथ्यतेधुना ॥ संवत्सरं हविष्याशी सहस्रम्प्रत्यह-ञ्जपेत् ॥ १५४ ॥ जपान्ते दशवारञ्च जप्त्वा तेनोदकं पिबेत् ॥ तेन लोको-त्तरा मेधा जायते नात्र संशयः ॥ १५५ ॥ जपेद्गोमूत्रपकाशी तिथिलक्षं मनुं त्विमम् ॥ साज्यकोलसमिद्भिस्तु हुनेदष्टसहस्रकम् ॥ भूतम्भव्यं वर्त्तमानं सर्वं जानाति साधकः ॥ १५६ ॥ कपिलाज्ययुतं ब्राह्मीरसम्प्रातस्तु यः पिबेत् ॥ चुलुकैकम्मन्त्रितन्तु दशवारम्मलत्रयम् ॥ १५७ ॥ धारयेद्वेदशा-स्त्रादि प्रोक्तञ्च त्वेकवारकम् ॥ सकृच्छ्रुतन्तु यत्नेन न च विस्मर्य्यते क्वचित् ॥ ॥ १५८ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि पद्मावत्या मनुं शुभम् ॥ ह्रीं च पद्मावति स्वाहा सप्तार्णः परिकीर्त्तितः ॥ १५९ ॥ ऋषिर्ब्रह्मा च च गायत्री छन्दः पद्मावती सुरी ॥ स्वाहा शक्तिश्च ह्रीं बीजं षड्दीर्घस्वरयुक्तया ॥ प्रकुर्य्यान्[1]मायायाङ्गानि ध्यानमस्या निरूप्यते ॥ १६० ॥ रक्तोत्पलकरद्वन्द्वां पद्मस्थां कमलाननाम् ॥ बन्धूकाभां त्रिनयनां नानाकल्पोज्ज्वलां स्मरेत् ॥ ॥ १६१ ॥ शक्तिपीठे यजेद्देवीं पुरोङ्गानि च मातृकाः ॥ लोकपालां-स्तदस्त्राणि पद्मावत्यर्चनं स्मृतम् ॥ १६२ ॥ लक्षमेकम्पुरश्चर्य्या दशांशं जुहुयाद्धृतैः ॥ एवम्मनुं यो भजते सुभगः सर्वयोषिताम् ॥ पद्मावतीसमान्या तु नास्ति सौभाग्यदा भुवि ॥ १६३ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि ह्यश्वारू-ढामहामनुम् ॥ तारमुक्त्वा[2] तथा चैहि परमेश्वर्य्यग्निगेहिनीम् ॥ १६४ ॥ दशार्णोयं मुनिर्ब्रह्मा विराट् छन्दश्च देवता ॥ अश्वारूढा षडङ्गानि तारायै-स्त्रिपदैर्द्विधा ॥ १६५ ॥ अश्वारूढां चन्द्रभालां त्र्यक्षां पाशेन साध्यकम्॥ बध्वानयन्तीं वामेन दक्षे कनकवेत्रिकाम् ॥ १६६ ॥ शक्तिपीठे यजेद्देवीं

१ ह्रीं बीजेन षडंगन्यासं कुर्य्यात् २ ॐ एहि परमेश्वरि स्वाहा । इति मन्त्रः ॥

पुरोंगानि प्रपूजयेत् ॥ मातृरिन्द्रादिदिग्बाह्ये तदस्त्राणि ततो बहिः ॥१६७॥ जपेदयुतसङ्ख्याकं दशांशं जुहुयाद्घृतः ॥तर्पणादि ततः कुर्य्यात्पूर्वोक्तविधिना सुधीः ॥ इत्थं ध्यात्वैव सकलं विश्वं वशयतेऽचिरात् ॥ १६८ ॥ आज्यान्नं जुहुयान्मन्त्री लभते वाञ्छितं फलम्॥ त्रिमध्वक्तैस्तथा लोनैर्वश्या भूपा हुनेत्तु यः ॥ १६९ ॥ पूर्वोक्तेन विधानेन वश्याः स्युर्वनिता अपि ॥अनया विद्यया सार्पिहोमः काञ्चनदो मतः ॥ १७० ॥ त्रिस्वादुभिः सहस्रं च हुनेत्स्त्रीवश-सिद्धये ॥ पूर्वोक्तेनैव होमेन नारीमाकर्षयेद्ध्रुवम् ॥१७१॥ तारादिरथ माया दिरयमेकादशार्णकः ॥ षड्दीर्घमाययैवास्य षडङ्गविधिरीरितः ॥ १७२ ॥ ॐ ॐ ह्रीं क्रों पूर्वकोयं प्रोक्तो विश्वमितार्णकः ॥ द्विभूभूत्रीषुयुग्मैश्च षडङ्ग-विधिरीरितः ॥ १७३ ॥ पञ्चलक्षं पुरश्चर्य्या पूजाद्यं पूर्ववन्मतम् ॥ पूर्वे चाव-रणे प्रोक्ताः साक्षयाः कीर्त्तिनायिकाः ॥ इन्द्रादिबाह्यावरणे प्रोक्तो ब्राह्मया विधिस्त्वयम् ॥ १७४ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि सम्यङ्माहेश्वरीविधिम् ॥ ॐ ह्रींनमो भगवति माहेश्वर्य्येहि संवदेत् ॥ १७५ ॥ परमे पदमुच्चार्य्ये-श्वरि स्वाहान्तको मनुः ॥ तारादिरेकाविंशार्णोऽश्वारूढावत्परं मतम्॥१७६॥ वृषारूढां भालचन्द्रां त्रिनेत्रां शशिसन्निभाम् ॥ दधतीं शूलडमरुं महाहिवलयां भजे ॥ १७७ ॥ वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं बिल्वपत्रैर्घृतप्लुतैः ॥ जुहुयात्तद्दशां-शेन परमैश्वर्य्यवान्भवेत् ॥ १७८ ॥ आदावङ्गानि सम्पूज्य राशिपत्रे ततो यजेत् ॥ आदौ बालां तथा शक्तिं नित्यक्लिन्नाधिवासिनीम् ॥ १७९ ॥ अन्नपूर्णां तथा गौरीं वज्रप्रस्तारिणीमपि ॥ वज्रेश्वरीं च त्वरितां शिवदूतीं त्रिकण्टिकाम् ॥ १८० ॥ वश्ये त्रिकण्टिकीं चापि स्वस्वमन्त्रैः समर्चयेत् ॥ ततो दिक्पांस्तदस्त्राणि चेत्थं माहेश्वरी मता ॥ १८१ ॥ अथातः सम्प्र-वक्ष्यामि बालामन्त्रान्सुसिद्धिदान् ॥ वाक्कामसौस्त्रिबीजानि सौः क्लींऐं च पुनः पठेत् ॥ १८२ ॥ षडर्णोयं मनुः प्रोक्तो दक्षिणामूर्तिको मुनिः ॥ गायत्री छन्द उद्दिष्टं देवी त्रिपुरबालिका ॥ १८३ ॥ पाशांकुशौ पुस्तकाक्षसूत्रे च दधती करैः ॥ रक्ता त्र्यक्षा चन्द्रभाला ध्येया बाला सुरार्चिता ॥ १८४ ॥

१ ॐ ह्रीं एहि परमेश्वरि स्वाहा ॥

न्यासानत्र प्रकुर्वीत षडङ्गान्मातृकासमान् ॥ जपेल्लक्षं दशांशेन होमः पुष्पैर्हयारिजैः ॥ १८५ ॥ पूजा पूर्वोदिते पीठेनङ्गैः रत्यादिशायकैः ॥ प्रभादिभिर्दिगीशाद्यैः प्रयोगः पूर्ववन्मतः ॥१८६॥ श्रीं क्लीं ह्रीं ऐं कामसौश्च ह्रीं क्लीं श्रीं च नवाक्षरः ॥ ध्यानपूजादिकं सर्वं पूर्वप्रोक्तषडर्णवत् ॥ १८७ ॥ अथान्यत्सम्प्रवक्ष्यामि वाक्कामौसौस्समुच्चरेत् ॥ बालत्रिपुरे स्वाहेति दशार्णोऽन्यच्च पूर्ववत् ॥ १८८ ॥ अथान्यत्सम्प्रवक्ष्यामि क्लीं ह्रीं ऐं च समुच्चरेत् ॥ ततश्च बाले त्रिपुरे सिद्धिं देहि नमस्त्विति ॥ १८९ ॥ चतुर्दशाक्षरो मन्त्रो मुन्याद्यं च षडर्णवत् ॥ प्रयोगाश्चात्र सिध्यन्ति त्रिवर्णोक्तास्तथाखिलाः ॥ १९० ॥ अथान्यो वक्ष्यते ह्रींश्रीक्लींमुक्त्वा त्रिपुरेति च ॥ भारति कवित्वं देहि स्वाहान्तोऽन्यच्च पूर्ववत् ॥ १९१ ॥ ह्रीं ह्रीं ह्रीं प्रौढत्रिपुरे ह्यारोग्यमैश्वर्य्यं देहि ॥ स्वाहान्तोष्टादशार्णोयं न्यासाद्यं स्यात्षडर्णवत् ॥ १९२ ॥ ह्रींश्रींक्लीं बालत्रिपुरे मदायत्तां वदेत्ततः ॥ विद्यां कुरु नमः स्वाहा विंशत्यर्णश्च पूर्ववत् ॥ ॥ १९३ ॥ अथान्यत्सम्प्रवक्ष्यामि मायां श्रीं क्लीं परात्परे ॥ त्रिपुरे सर्वमित्युक्त्वा ईप्सितं साधयेति च ॥ १९४ ॥ स्वाहा विंशतिवर्णोयं मुन्याद्यन्तु षडर्णवत् ॥ सिद्धे मन्त्रे लक्षजपादभीष्टं सिध्यति ध्रुवम् ॥ १९५ ॥ अथान्यं सम्प्रवक्ष्यामि क्लीं क्लीं श्रीं च ह्रींद्वयम् ॥ त्रिपुरे ललिते प्रोच्य मदीप्सितां च योषितम् ॥ १९६ ॥ देहि वाञ्छितमित्युक्त्वा कुरु ज्वलनकामिनीम् ॥ अष्टाविंशतिवर्णोयं श्रीदः सर्वन्तु पूर्ववत् ॥ १९७ ॥ अथान्यं सम्प्रवक्ष्यामि शक्तेरष्टाक्षरं मनुम् ॥ आं श्रीं ह्रीं क्लींक्लीं च ह्री च श्रीममष्टाक्षरो मनुः ॥ ॥ १९८ ॥ अजो मुनिश्च गायत्री छन्दः शक्तिश्च देवता ॥ स्त्रीवश्याकर्षणादौ च विनियोग उदाहृतः ॥ १९९ ॥ षड्दीर्घमाययाङ्गानि सर्वैरष्टाङ्गमीरितम् ॥ हृच्छिरश्च शिखा वर्म्म नेत्रास्त्रोदरपृष्ठकम् ॥ अष्टाङ्गं विन्यसेन्मन्त्रं मूलेन व्यापकं चरेत् ॥ २०० ॥ आनन्दरूपिणीं देवीं पाशांकुशधनुःशरान् ॥ बिभ्रतीं दोर्भिररुणां कुचाढ्यां हृदि भावयेत् ॥ २०१ ॥ शाक्ते पीठे यजेद्देवीं हृल्लेखादिभिरंगकैः ॥ मातृभिर्लोकपालैश्च वज्राद्यैः पञ्चमावृतिः २०२ ॥

१ क्लींबीजम् ॥ २ ऐं क्लीं सौः बालत्रिपुरे स्वाहा ॥

अष्टलक्षं जपेत्साज्यैर्दशांशं जुहुयात्तिलैः ॥ नित्यक्लिन्नामथो वच्मि नित्यक्लिन्ने मदद्रवे ॥ २०३ ॥ नमश्चेति दशार्णोयं मुनिरत्रिः प्रकीर्त्तितः ॥ नित्यक्लिन्ना देवता च त्रिष्टुप् छन्द उदाहृतम् ॥ २०४ ॥ नित्याद्यैर्हृदयं स्वाहासाम्नाद्यैः शिर ईरितम् ॥ क्लिन्ने स्वाहा शिखा नित्यक्लिन्ने च कवचं मतम् ॥ २०५ ॥ नित्यक्लिन्ने नमश्चास्त्रं ध्यानं पूर्ववदाचरेत् ॥ पूजादिकमथो मन्त्री पूर्ववत्परिकल्पयेत् ॥ २०६ ॥ एकलक्षं जपेन्मन्त्रन्तद्दशांशं हुनेत्तिलैः ॥ तर्प्पणादि ततः कुर्य्यात्पूर्वोक्तविधिना सुधीः ॥ प्राग्वत्प्रयोगाः सेव्येयं दारिद्रे सुखकारिणी ॥ २०७ ॥ अथातो वह्निवासिन्या नवार्णो मनुरुच्यते॥ ॐ ह्रीं च वह्निवासिन्यै नमश्चेति मुनिर्मतः ॥२०८॥ वशिष्ठश्च तथा छन्दो गायत्री देवता त्वियम् ॥ शक्तिबीजन्तु शक्तिस्स्यात्कीलकं मध्यमेरितम् ॥ २०९ ॥ विद्याद्वितीयबीजेन दीर्घस्वरयुता सुधीः ॥ मायान्तेन षडङ्गानि कुर्य्यान्मन्त्री कराङ्गयोः ॥ २१० ॥ नेत्रयोः कर्णयोर्नासाकपोलास्यध्वजे गुदे ॥ मन्त्राक्षराणि विन्यस्य सर्वेण व्यापकं चरेत् ॥ २११ ॥ तप्तकाञ्चनसङ्काशां नवयौवनसुन्दरीम् ॥ चारुस्मेरमुखाम्भोजां विलसन्नयनत्रयाम् ॥ २१२ ॥ अष्टभिर्बाहुभिर्युक्तां माणिक्याभरणोज्ज्वलाम् ॥ वामहस्तेषु रत्नाब्जं शङ्खं पुण्ड्रेक्षुजं धनुः ॥२१३॥ग्लौमण्डलं दक्षिणेषु कह्लारं हेमशृङ्गकम् ॥ पुष्पेषुं मातुलुङ्गं च स्वसमानसखीवृताम् ॥ २१४ ॥ नवकोणे कर्णिकायामादावङ्गानि चार्चयेत् ॥ अष्टयोनिषु सम्पूज्यास्तदग्रास्तु प्रदक्षिणम् ॥ २१५ ॥ ज्वालिनी विश्वलिङ्गन्यन्या मङ्गला च मनोहरा ॥ कमला कितवा विश्वा विविधा चेति शक्तयः ॥ २१६ ॥ तद्बहिर्द्वादशदले सम्पूज्या राशिशक्तयः ॥ मेषा वृषा च मिथुना कर्कटाद्याश्च ता मताः ॥ २१७ ॥ दशदिक्षु तथा चाग्रे दशशक्तीः प्रपूजयेत् ॥ घस्मरां सर्वभक्षां च विश्वाख्या विविधोद्भवाम् ॥ २१८ ॥ चित्ररूपां निस्सपत्नां निरातङ्कां च पावनीम् ॥

---

१ ह्रां ह्रीं अंगुष्ठाभ्यां नमः, ह्रीं ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः, ह्रूं ह्रीं मध्यमाभ्यां नमः, ह्रैं ह्रीं अनामिकाभ्यां नमः, ह्रौं ह्रीं कनिष्ठिकाभ्यां नमः,ह्रः ह्रीं करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः,एवंरीत्या हृदयादिन्यासानपि कुर्य्यात् ॥

अचिन्त्यां वै भवस्तुतां तदग्रे लोकपालकान् ॥ २१९ ॥ तदस्त्राणीति पूजोक्ता देव्याः सर्वसमृद्धिदा ॥ एकलक्षं जपेन्मन्त्रं दशांशं जुहुयाद्घृतैः ॥२२० ॥ तर्प्पणं मार्ज्जनं कृत्वा ब्राह्मणाराधनं तथा ॥ सिद्धमन्त्रः प्रकुर्वीत प्रयोगान्नि-जवाञ्छितान् ॥ २२१ ॥ काम्यहोमविधिं वक्ष्ये सम्यग्वाञ्छितदायकम् ॥ शालितण्डुलमादाय प्रस्थं भाण्डे नवे क्षिपेत् ॥ २२२ ॥ तत्पूत्कृत्य सुसंस्कृ-त्य विद्ययाष्टोत्तरं शतम् ॥ जप्त्वा होमः विधातव्यो महालक्ष्मीकरो भवेत् ॥ ॥ २२३ ॥ नित्यमष्टोत्तरशतं पञ्चम्यां प्रतिपद्यपि ॥ शुक्ले सहस्राण्यष्टौ च वर्षमेवं समाचरेत् ॥ २२४ ॥ तदा नृपसमानः स्याद्धनधान्यादिभिर्महान् ॥ घृतहोमादवाप्नोति सकलं वाञ्छितं फलम् ॥ २२५ ॥ पञ्चमीषु विशेषेण पूजां कुर्य्याद्व्रती भवेत् ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि ह्यन्नपूर्णेश्वरीमनुम् ॥२२६॥ ॐश्रींह्रींक्लीं नमः श्चोक्त्वा भगवतिपदं वदेत् ॥ माहेश्वरि चान्नपूर्णे स्वाहा विंशतिवर्णकः ॥ २२७ ॥ छन्दस्त्रिष्टुम्मुनिर्ब्रह्मा ह्यन्नपूर्णा च देवता॥ ह्रींबीजं चापि शक्तिः श्रीं कीलकं क्लीं प्रकीर्तितम् ॥ २२८ ॥ षड्दीर्घयुक्तहृल्लेखा षडंगेषु प्रकीर्तिता ॥ ब्रह्मरन्ध्रे च सीमन्ते भाले भ्रूमध्ययोर्नसि ॥ २२९ ॥ वक्रे कण्ठे च हृदये कुक्षिनाभ्योश्च लिंगके ॥आधारे स्फिग्द्वये बाहुद्वये जानु-द्वये तथा ॥२३०॥ पादयोश्च नवद्वारे पदन्यास उदाहृतः॥ पुनर्मूर्ध्नि भाले च भ्रूमध्ये च मुखे गले ॥२३१॥ हृन्नाभिलिंगे पदयोः पदानि क्रमतो न्यसेत्॥ व्युत्क्रमेण पुनःपायुलिङ्गनाभ्यादिषु न्यसेत् ॥ २३२ ॥ ब्रह्मरन्ध्रास्य-हृदयं मूलाधारेषु विन्यसेत् ॥ चतुर्बीजानि शेषांस्तु मातृकोक्तस्वरस्थले ॥ व्यापकं च ततः कुर्य्यात्सर्वमन्त्रेण साधकः ॥ २३३ ॥ तप्तकाञ्चनसंकाशां बालेन्दुकृतशेखराम् ॥ नवरत्नप्रभादीप्तमुकुटां कुंकुमारुणाम् ॥२३४॥ चित्र-वस्त्रपरीधानां मीनाक्षीं कमलस्तनीम् ॥ नृत्यन्तीमीशमनिशं दृष्ट्वानन्दमयीं पराम् ॥ २३५ ॥ सानन्दमुखलोलाक्षीं मेखलाढ्यनितम्बिनीम् ॥ अन्नदा-नरतां नित्यां भूमिश्रीभ्यां नमस्कृताम् ॥ २३६ ॥ दुग्धान्नभरितं पात्रं सरत्नं वामहस्तके ॥ दक्षिणे तु करे देव्या दर्वीं ध्याये-त्सुवर्णजाम् ॥ २३७ ॥ त्रिकोणं च चतुष्पत्रवसुपत्रं ततःपरम् ॥ कला-

पत्रं च भूविम्बं चतुरस्त्रत्रयावृतम् ॥ २३८ ॥ आदावंगानि सम्पूज्य त्रिकोणाग्रे शिवं यजेत्॥ॐ ह्रां शिवायेति पूजामन्त्रोयं वै नगाक्षरः॥२३९॥ अनेन पूजयेद्देवं ध्यानं तस्य निरूप्यते ॥ गोक्षीरधामधवलं पञ्चवक्त्रं त्रिलोचनम् ॥ २४० ॥प्रसन्नवदनं शान्तं नीलकण्ठविराजितम् ॥ कपर्दिनं स्फुरत्सर्पभूषणं मल्लसन्निभम् ॥ नृत्यन्तमीश्वरं देवं त्रिकोणाग्रे सुरेश्वरम् ॥२४१॥ वामभागे त्रिकोणस्य वराहं परिपूजयेत् ॥ तारो नमो भगवते वराहपदमुच्चरेत ॥ २४२ ॥ रूपाय भूर्भुव इति स्वःपतये च कीर्त्तयेत् ॥ भूपतित्वं मे देहीति प्रदापय शिखिप्रियाम् ॥ वराहपूजने प्रोक्तो मन्त्रो रामाग्निवर्णकः ॥ २४३ ॥ नारायणं दक्षकोणे नमो नारायणाय च ॥ ताराद्येनाष्टवर्णेन मन्त्रेण परिपूजयेत् ॥ वामदक्षिणयोः पूज्ये भूश्रियौ स्वस्वमन्त्रतः ॥२४४॥ अन्नं[1] मह्यमन्नमिति देहीत्युक्त्वा पुनर्वदेत् ॥ अन्नाधिपतये चेति ममान्नं च प्रदापय ॥ २४५ ॥ स्वाहान्त आकृत्यर्णोयं ग्लौंपुटो[2] भूमिपूजने ॥ श्रीपूजने श्रीपुटः स्याच्चतुष्पत्रे ततोर्चयेत् ॥ २४६ ॥ पश्चिमादिक्रमेणैव परविद्यां ध्रुवेण[3] च ॥ भुवनेशीं स्वबीजेन[4] रमया[5] कमला तथा ॥ २४७ ॥ शुभगां कामबीजेन ब्राह्म्याद्यास्त्वष्टपत्रके ॥ चन्द्रमण्डलरूपिण्यः पश्चिमादिक्रमेण च ॥ २४८ ॥ कलाः षोडश सम्पूज्या ह्यन्नपूर्णायै संवदेत् ॥ तन्नामान्ते नमश्चोक्त्वा इति मन्त्रेण पूजयेत् ॥ २४९ ॥ अमृता मानदा तुष्टिः पुष्टिः प्रीती रतिश्च ह्रीः ॥ श्रीश्च स्वाहा स्वधा ज्योत्स्ना ततो हैमवती भवेत् ॥ २५० ॥ छाया च पूर्णिमा नित्या अमावस्येति षोडश ॥ भूपुरे लोकपालाश्च तदस्त्राणि तदग्रतः ॥ २५१ ॥ लक्षं जपेत्सनियमो दशांशेन च होमयेत् ॥ रम्यपायससर्पिर्भ्यां सिद्धिदा भवति ध्रुवम् ॥ २५२ ॥ तर्प्पणादि ततः कुर्य्यात्पूर्वोक्तविधिना सुधीः ॥ अन्नपूर्णेश्वरी देवी पूजितान्नसुवर्णदा ॥२५३॥ बीजहीनेयमेव स्यात्षोडशार्णा तथा परा ॥ मायाद्या चाथ ताराद्या

---

१ अन्नं मह्यमन्नं देहि अन्नाधिपतये ममान्नं प्रदापय स्वाहा॥ २ अस्मात्पूर्वं मन्त्रे ग्लौंबीजयोजनेन पृथ्वीपूजनमन्त्रस्तथा श्रींसंपुटितः श्रींविद्यापूजनमन्त्रोयमेव भवेत् ॥ ३ ॐकारेण ॥ ४ ह्रींबीजेन ॥ ५ श्रींबीजेन ॥

मता सप्तदशाक्षरा ॥ मायातारादिका चान्या गदिताष्टादशाक्षरा ॥ २५४ ॥ मुन्याद्याः पूर्वमुदिता माययांगक्रिया मता ॥ अष्टनागेन्द्रवज्राद्यैः साधयेत्पूर्ववच्च ताः ॥ २५५ ॥ अन्नप्रदाख्यमन्त्रस्य पूर्वोक्तस्योच्यते विधिः ॥ ऋषिर्ब्रह्माकृतिश्छन्दो देवते भूश्रियौ मते ॥ २५६ ॥ पंचांगानि मनोर्वर्णैर्वेदेष्वृत्वंगवायुभिः ॥ क्षीराब्धौ स्वर्णरजतद्रवद्वीपे सुरान्विते ॥ २५७ ॥ शुभकल्पद्रुमावृत्तिशोभिते मणिकुट्टिमे ॥ वित्तपस्याग्रतस्तत्र स्वासीने वसुधांश्रियौ ॥ २५८ ॥ धनौघान्संसृजन्त्यौ च भक्तार्थं प्रतिचिन्तयेत् ॥ आवाह्य वैष्णवे पीठे देव्या गन्धादिभिर्यजेत् ॥ २५९ ॥ पूर्वमंगानि सम्पूज्य पूजयेच्च दलाष्टके ॥ दिग्दलेषु क्रमात्खं च वायुमग्निं तथा जलम् ॥ २६० ॥ विदिग्दले निवृत्तिं च प्रतिष्ठामीशकोणतः ॥ विद्यां शान्तिं ततो बाह्येष्टदले चाष्ट शक्तयः ॥ २६१ ॥ एकाक्षरं श्रियः प्रोच्य बलाकाद्याः समर्चयेत् ॥ इन्द्रादयस्तदस्त्राणि पूजा चैवं समीरिता ॥ २६२ ॥ लक्षं जपेदाज्यपक्केनान्नेन जुहुयात्तथा ॥ तर्प्पणादि ततः कृत्वा विप्रान्सम्भोजयेत्ततः ॥ गुरुं सन्तोष्य यत्नेन मन्त्रसिद्धिमवाप्नुयात् ॥ २६३ ॥ दिनादौ प्रजपेन्मन्त्रमष्टोत्तरशतं बुधः ॥ छत्रधान्यान्नरत्नौघसमृद्धो भवति ध्रुवम् ॥ २६४ ॥ अथान्यं सम्प्रवक्ष्यामि तारो ह्रीं श्रीं मनोभवः ॥ नमो भगवतीत्युक्त्वा माहेश्वरि ममेति च ॥ २६५ ॥ अभीप्सितं तथान्नं च देहियुग्ममनन्तरम् ॥ अन्नपूर्णे वह्निजाया चैकत्रिंशार्णको मनुः ॥ २६६ ॥ युगाङ्गवेदसप्ताब्धिषडर्णैरङ्गकल्पनम् ॥ ध्यानपूजाप्रयोगादि प्राग्वत्सर्वं समीरितम् ॥ २६७ ॥ अथान्यं सम्प्रवक्ष्यामि पञ्चविंशतिवर्णकम् ॥ तारो रमा च हृल्लेखा नमो भगवतीति च ॥ २६८ ॥ माहेश्वरि प्रसन्नेति वरदे पदमुच्चरेत् ॥ अन्नपूर्णेग्निजायांतो मन्वर्णैरंगकल्पनम् ॥ २६९ ॥ त्रिषड्वेदर्तुवेदाक्षिवर्णैर्ध्यानजपादिकम् ॥ सर्वं प्राग्वत्परिज्ञेयं विशिष्टं जपतः फलम् ॥ २७० ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि गौरीमन्त्रान्महाफलान् ॥ ह्रीं गौरिरुद्रदयिते योगेश्वरिपदं वदेत् ॥ २७१ ॥ हुंफट् स्वाहा षोडशार्णो गौरीमन्त्र उदाहृतः ॥ अजोस्य मुनिराख्यातोनुष्टुप्छन्दोस्ति देवता ॥ २७२ ॥ गौरी सद्भाग्यशब्दस्य सर्वसम्पत्प्रदायिका ॥ षड्दीर्घमायया

कुर्य्यात्षडङ्गानि मनोरथ ॥ २७३ ॥ हेमाभां बिभ्रतीं दोर्भिर्दर्प्पणाञ्जनसाधने॥पाशांकुशौ सर्वभूषां तां गौरीं सर्वदा स्मरेत्॥२७४॥शाक्ते पीठे यजेद्देवीं चन्दनाद्यैर्मनोहरैः ॥ अङ्गानि पूर्वमभ्यर्च्य सुभगाद्यास्ततो यजेत् ॥ २७५ ॥ सुभगा ललिता चान्या कामिनी काममालिनी ॥ पाशांकुशा दर्प्पणाख्या चाञ्जना च शलाकिका ॥ २७६ ॥ शक्तयो दिक्षु सम्पूज्या आयुधाख्या विदिक्षु च ॥ शक्रादयस्तदस्त्राणि गौरीपूजा समीरिता ॥ २७७ ॥ एकलक्षं जपेन्मन्त्रं दशांशं जुहुयाद्घृतैः ॥ तर्प्पणादि ततः कुर्य्याद्गुरुं सन्तोष्य यत्नतः ॥२७८॥ सिद्धे मन्त्रे प्रकुर्वीत मन्त्री काम्यानि नान्यथा॥ वामाक्षीणामक्षिमध्या वामोरौ सुलिखेन्मनुम् ॥ २७९ ॥ आच्छादयन्वामदोष्णा तन्मनाः प्रजपेन्मनुम्॥शतं सहस्रं लोलाक्षीमानयेत्काममोहिताम्॥ ॥ २८० ॥ एतन्मन्त्रेण जपितं गन्धपुष्पफलादिकम् ॥ दत्तं संसेवितं सर्वजनतावश्यकारकम् ॥ २८१ ॥ अथान्यं सम्प्रवक्ष्यामि सर्वस्त्रीवश्यकारकम् ॥ कांक्षितस्त्रीवशङ्करि सुभगे च पृथग्द्वयम् ॥ २८२ ॥ स्त्रीस्वाहेत्यूनविंशार्णो न्यासः प्राग्वत्समीरितः ॥ गौं गौरीमूर्त्तये हृच्च पीठमन्त्र उदाहृतः ॥ ॥ २८३ ॥ सुभगायै विद्महे काममालिन्यै धीमहि ॥ तन्नो गौरी प्रचोदयात् ॥ २८४ ॥ गायत्र्या त्वनया सर्वानुपचारान्प्रकल्पयेत् ॥ अङ्गानि पूर्वमभ्यर्च्य सुभगाद्यास्ततो यजेत ॥ २८५ ॥ तदग्रेष्टदले पूज्या मध्यान्तं स्वाग्रतः क्रमात् ॥ दीर्घाष्टकोपेतमेवं प्रथमं योजितं च वै ॥ सबिन्दुङेन्तं तन्नाम नमोन्तं तन्मनुर्मतः ॥२८६॥ प्रभा ज्ञाना च वाग्वागीश्वरी स्याज्ज्वालिनी ततः ॥ वामा ज्येष्ठा च रौद्री च गुह्यशक्तिः क्रमादिमाः ॥ २८७ ॥ लोकपालास्तदस्त्राणि होमाद्यं पूर्ववन्मतम् ॥ अस्याद्यवर्णतस्त्वर्वाक् साध्याय च प्रयोजयेत् ॥ जपेन्मन्त्रं शतं चापि स वश्यो भवति ध्रुवम् ॥ २८८ ॥ ब्रह्मश्रीनामिकां गौरीमथ वक्ष्ये समासतः ॥ माया नमश्च ब्रह्मश्रीराजिते राजपूजिते ॥ २८९ ॥ जये च विजये गौरी गान्धारी त्रिभुवेति च ॥ न वशङ्करि चेत्युक्त्वा सर्वलोकवशंकारि ॥ ॥ २९० ॥ सर्वस्त्रीपुरुषेत्युक्त्वा सर्वलोकवशं कारि ॥ पदं वदेत्सुदु द्वे द्वेहीं स्वाहा भूरसार्णवान् ॥ ऋषिर्ब्रह्मा निवृ-

च्छन्दो गौरी देवी प्रकीर्त्तिता ॥ २९१ ॥ स्वाहाशक्तिश्च बीजं ह्रीं मन्त्रार्णैः स्यात्षडङ्गकम् ॥ इन्द्रदिग्वसुहस्ताशारुद्रार्णैर्ध्यानमुच्यते ॥ २९२ ॥ पूर्णचन्द्रलसन्मौलिं बन्धुजीवारुणाङ्गिकाम् ॥ पाशांकुशधरां त्र्यक्षां शुक्रपुष्पविराजिताम् ॥ शोणलेपां जगद्वन्द्यां कुसुम्भारुणवस्त्रिकाम् ॥ २९३ ॥ आदावङ्गानि सम्पूज्य मातृकावेष्टनं ततः॥लोकपालांस्तदस्त्राणि पूजाक्रम उदाहृतः ॥२९४॥ अयुतं च जपः कार्य्यः पायसैर्जुहुयात्ततः ॥ मधुरत्रयसंयुक्तैर्होमः स्यात्तिलतण्डुलैः ॥२९५॥ रक्तोत्पलैर्वा लवणैरथ वा मधुरैः फलैः ॥ दिनत्रयं सहस्रं तु शीघ्रं वश्यकरः स्मृतः ॥ २९६ ॥ प्रातःकाले तु सूर्य्यस्य मण्डलस्थां च देवताम्॥ध्यात्वा चाष्टोत्तरशतं जपेत्सर्वजगद्वशम्॥ २९७॥अथ राजमुखीं गौरीं वक्ष्ये सप्ताब्धिवर्णिकाम् ॥ ॐ राजमुखि राजाधिमुखि वश्यमुखीति च॥२९८॥शक्तिश्रीकामबीजानि देविदेवि समुच्चरेत्॥महादेवीति देवाधिदेवि सर्वजनस्य च ॥ २९९ ॥ मुखं मम वशं चेति कुरुयुग्माग्निगेहिनी॥ मन्त्रवर्णस्तु हृदयं त्रिंशद्भिः शिर ईरितम् ॥ ३०० ॥ मन्त्रारम्भात्पुनः सप्तदशभिस्तु शिखा स्मृता ॥ वर्म्माष्टभिः शरैर्नेत्रं मेवैरस्त्रं प्रकीर्त्तितम् ॥ ३०१ ॥ ऋष्यादि ध्यानपूजादि प्राग्वद्वक्ष्ये प्रयोगकम् ॥ सर्वजनपदस्थाने साध्यनाम नियोजयेत् ॥ ३०२ ॥ जपहोमतर्प्पणादिकरणे परमं वशम् ॥ मधुरत्रयसंयुक्तमष्टोत्तरशतं हुनेत् ॥३०३॥ सपुष्पासहदेव्यास्तु समिधः सप्तरात्रकम् ॥ तद्भस्मना प्रयोगस्तु समस्तजनवश्यकृत् ॥ ३०४ ॥ अथास्य भेदं वक्ष्यामि हसरा वाग्भवान्विताः ॥ आद्यकूटं द्वितीयं स्याद्राजमुख्यादि पूर्ववत् ॥ अष्टचत्वारिंशदर्णो मन्त्रस्तद्वत्समीरितः ॥३०५॥ यो विशेषस्तं तु वक्ष्ये भवद्ध्यब्ध्यब्धिसायकैः ॥ मेवैश्चापि मनोर्वर्णैः षडङ्गविधिरीरितः ॥ ३०६ ॥ जपहोमादिकं प्राग्वत्प्रयोग इह तूच्यते ॥ सुसम्पन्नं घृतं हुत्वा सहस्रं सप्तवारकम् ॥ सम्पाताज्यन्तु साध्यस्य प्राणिनां वशकारकम् ॥३०७॥ साध्यनक्षत्रवृक्षेण कुर्य्यात्साध्याकृतिं शुभाम् ॥ तस्या मनुं प्रतिष्ठाप्य प्राङ्गणे निखनेच्च ताम् ॥ ३०८ ॥ तत्रानलं समाधाय रक्तचन्दनसंयुतैः ॥ जपापुष्पैर्निशीथिन्यां जुहुयात्सप्त वासरान् ॥ ३०९ ॥ सहस्रं प्रत्यहं पश्चात्तां निष्कास्य

सरित्तटे ॥ निखनेत्साधकस्तस्य साध्यो दासो भवेद् ध्रुवम् ॥ ३१० ॥
अथातः सम्प्रवक्ष्यामि वज्रप्रस्तारिणीमनुम् ॥ वाग्बीजं चापि हल्लेखा नित्याक्लिन्ने मदद्रवे ॥ ३११ ॥ स्वाहांतो द्वादशार्णोऽयमङ्गिरास्तु मुनिर्मतः ॥ त्रिष्टुप्छन्दो देवता च वज्रप्रस्तारिणी मता ॥ ३१२ ॥ बीजेनाद्येन चाङ्गानि षट् च दीर्घान्वितेन च ॥ अस्या पूजादिकं सर्वं नित्याक्लिन्नावदाचरेत् ॥ ३१३ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि वज्रेश्वर्य्या महामनुम् ॥ ह्रीं क्लीं क्लिन्ने तथा क्रों च पश्चान्नित्यमदद्रवे ॥ ३१४ ॥ ह्रीं चेति द्वादशार्णोऽयं बीजं शक्तिश्च ह्रीं मता ॥ ऋषिर्ब्रह्मा च गायत्री छन्दो वज्रेश्वरी सुरी ॥ ३१५॥ आद्यो माया भवेद्बीजं चान्तिमा शक्तिरुच्यते ॥ वाग्भवं कीलकं ज्ञेयं ह्रीं क्लीं ह्रीं च हृन्मनुः ॥३१६॥ [1]ह्रीं क्लीं शिरः शिखा ह्रीं क्रों ह्रीमथ कवचं भवेत॥ ह्रीं नित्याक्लिन्ने ह्रीं नेत्रं ह्रीं मदे ह्रीमितीरितम् ॥ ३१७ ॥ ह्रीं द्रवे ह्रीमिदं चास्त्रं वर्णन्यासक्रमं ब्रुवे ॥ इत्येवं शक्तिपुटितान्मन्त्रार्णान्दश विन्यसेत् ॥ ॥ ३१८ ॥ श्रोत्रनासाकपोलाक्षिनाभिगुह्येषु च क्रमात् ॥ ततः सञ्चिन्तयेद्देवीं सर्वसौख्यप्रदायिनीम् ॥ ३१९ ॥ रक्तां रक्ताम्बरां रक्तगन्धमाल्यविभूषिताम् ॥ चतुर्भुजां त्रिनयनां माणिक्यमुकुटोज्ज्वलाम् ॥ ॥ ३२० ॥ पाशांकुशाविक्षुचापदाडिमीपुष्पसायकान् ॥ दधानां बाहुभिर्नेत्रैर्दर्प्पणामोदशीतलैः॥ ३२१ ॥पश्यन्तीं साधकं न्यस्ते षट्कोणाढ्यमहीपुरे॥ चक्रमध्ये सुखासीनां स्मेरवक्त्रसरोरुहाम् ॥ ३२२ ॥ शक्तिभिः स्वस्वरूपाभिरावृतां पोतमध्यगाम् ॥ सिंहासनेऽभितः प्रेङ्खत्पोतस्थाभिश्च शक्तिभिः ॥ ॥ ३२३ ॥ वृतान्ताभिर्विनोदानां यातायातादिभिस्तथा ॥ शोणाब्धौ हेमपोते च सिंहासनमनन्तरम् ॥ तत्र चक्रं तत्र देवीं सम्यगावाह्य पूजयेत ॥ ३२४ ॥ त्रिकोणस्याग्रमारभ्य चेच्छां ज्ञानां क्रियाभिधाम् ॥ शक्तिं सम्पूज्य देव्यास्तु वामकोणादितोऽर्चयेत् ॥ ३२५ ॥ शक्तिषट्कं च षट्कोणे डाकिनीं राकिनीं तथा ॥ लाकिनीं काकिनीं चैव शाकिनीं हाकिनीं

[1] ह्रीं क्रीं ह्रीं ॥ एतन्मन्त्रेण शिखायां न्यासः कार्यः कुत एतन्न्यासे मन्त्राक्षरं ह्रींबीजसम्पुटितं दृश्यते तेनायमपि तथैव भवेत् ॥

तथा ॥ ३२६ ॥ बहिर्द्वादशपत्रे च देव्यग्रात्सव्यतो यजेत् ॥ हृल्लेखां क्लेदिनीं क्लिन्नां क्षोभिणीं मदनातुराम् ॥ ३२७ ॥ निरञ्जनीं रागवतीं तथैव मदनावतीम् ॥ मेखला द्राविणीं वेगवतीं द्वादक्षशक्तिकाः ॥ ३२८ ॥ तद्बहिः षोडशदले कमलां कामिनीं यजेत्॥ कल्यां कान्तां च कलितां कौताख्यां च किरातिकाम् ॥ ३२९॥ कलां च कलनां चैव कौशिकीं कम्बुवादिनीम् ॥ कातरां कक्कटां कीर्त्तिं कुमारीं कुंकुमामपि ॥ ३३०॥ चतुरस्रे तु देव्यग्रे द्वारदक्षिणपार्श्वतः॥क्रमाद्यजेद्द्वारयोर्द्वे कोणेकोणे तथैकिकाम्॥ ३३१॥ भागिनीं वेगिनीं नागां चपलां पेशलां सतीम् ॥ रतिं श्रद्धां भोगलोलां मन्दां मत्तां मनस्विनीम् ॥ यजेदाशाधिपान्बाह्ये तदस्त्राणि ततो बहिः ॥ ३३२ ॥ एवं सम्पूजयन्मर्त्यो दारिद्र्यान्मुच्यतेऽचिरात् ॥ रोगापमृत्युदौर्भाग्यजराशोकादिविच्युतः ॥ ३३३ ॥ मन्त्री लक्षत्रयं जप्त्वा तद्दशांशं हुनेद्घृतैः ॥ आरग्वधप्रसूनैर्वा प्रसूनैर्बकुलोद्भवैः॥ ३३४॥तर्प्पयेद्विधिना तद्वत्सलिलैर्भक्तिमान्सुधीः॥ आत्मानमभिषिच्याथ तर्प्पयेद्ब्राह्मणानपि॥ ३३५॥एवं संसिद्धमन्त्रस्तु नित्यार्चानिरतः सदा॥गुरुभक्तः प्रकुर्वीत प्रयोगान्निजवाञ्छितान् ॥ ३३६॥ सहस्रजापी स्थितधीर्मन्त्रवीर्य्यविदात्मवान् ॥ यः सोपि काम्यान्कुर्वीत प्रयोगान्निजवाञ्छितान्॥ ३३७॥यदज्ञानेन मोहेन चापलेनाथ वा चरेत्॥अनर्थक्लेशरोगादि पीडाःप्राप्नोति निश्चितम्॥ ३३८॥अरुणैः पङ्कजैर्होमं कुर्य्यात्त्रिमधुरप्लुतैः॥षण्मासाल्लभते लक्ष्मीं महतीं श्लाघ्यविग्रहाम् ॥ ३३९॥कह्लारैः क्षौद्रसंयुक्तैः पूर्णाब्दं तद्दिनावधि॥जुहुयान्नित्यशो भक्त्या सहस्रं विकचैः शुभैः ॥ ३४०॥ तद्दिनेषु च पूर्वोक्तान्भोजयेद्गुरुरूपतः ॥ तावज्जपेच्च होमान्ते यावत्संख्यं हुतं कृतम् ॥ ॥ ३४१ ॥ चम्पकैः क्षौद्रसंसिक्तैः सहस्रहवनाद् ध्रुवम् ॥ लभते स्वर्णनिष्काणां शतं मासेन पूर्ववत् ॥ ३४२ ॥ पाटलैर्घृतसंयुक्तैर्जुहुयात्त्रिसहस्रकम् ॥ दर्शादिमासाल्लभते चित्राणि वसनानि च ॥ ३४३ ॥ कर्पूरचन्दनादीनि सुगन्धीनि च मासतः ॥ वस्तूनि लभते हृद्यैर्वस्तुभिर्भोगयोगिभिः ॥ ३४४ ॥ शालिभिः क्षीरसंसिक्तैर्मन्त्रविच्च शतं हुनेत् ॥ तेन शालिसमृद्धिः स्यान्मासैः षड्भिरसंशयम् ॥ ३४५ ॥ तिलैर्हुतैस्तु दिवसैर्वर्षादारोग्यमाप्नुयात् ॥

स्वजन्मसूचिषु तथा दूर्वाभिर्जुहुयात्सुधीः॥ निरातङ्को महाभागो शतं वर्षाणि जीवति ॥ ३४६ ॥ गुडूचीतिलदूर्वाभिः स्वजन्मसु सदा हुनेत ॥ चिरायुः श्रीयशोभाग्यपुण्यदृष्टयादिभाग्भवेत् ॥ ३४७ ॥ घृतपायसदुग्धैश्च हुनेत्तेषु त्रिषु क्रमात्॥ आयुरारोग्यविभवैर्जनमान्यो भवेत्तदा॥ ३४८॥ सप्तम्यां कदली-होमात्सौभाग्यं लभते ध्रुवम् ॥ दूर्वात्रिकैस्तु प्रादेशमात्रैस्त्रिस्वादुसंयुतैः ॥ षण्मासादब्दतो वापि रोगमुक्तः सुखी भवेत्॥ ३४९॥ तद्दिनेषु जपेद्विद्यां नि-त्यशः सलिलं स्पृशन्॥ सहस्रवारं तैस्तोयैः स्नानं पानं समाचरेत्॥ पाकाद्यमपि तेनैव कुर्य्याद्रोगविमुक्तये॥ ३५०॥ साध्यर्क्षवृक्षसञ्चूर्णं त्र्यूषणं सर्षपास्तिलाः॥ पिष्टं च साध्यपादोत्थरजसा च समन्वितम् ॥ कृत्वा पुत्तलिकान्तैस्तु हृदयेन च संयुताम् ॥ ३५१ ॥ प्राग्वच्छित्त्वायसैः शस्त्रैस्तीक्ष्णैः पुत्तलिकां हुनेत्॥ त्रिसहस्रं त्रियामायां सर्षपैस्तद्रसप्लुतैः ॥ शतयोजनदूरादप्यानयेद्वनितां बलात् ॥ ३५२ ॥ तान्तु पुत्तलिकां मद्यमधूच्छिष्टसमान्विताम्॥ कृतप्राण-प्रतिष्ठां च श्मशाने निखनेन्निशि ॥ क्लेशैस्तैः स विनिर्मुक्तः सुखी जीवति भूतले ॥ ३५३ ॥ साध्यवृक्षेण कृत्वा तां सर्षपाढ्येन चेप्सिताम् ॥ तोय-मध्ये निधायैतां क्वाथयेद्युतवासरे ॥ वैरी घोरज्वरेणार्त्तः कृते प्राग्वत्सुखी भवेत् ॥ ३५४ ॥ तथैव चाण्डिकागेहे यथाविधियुतो यजेत् ॥ साध्यो वशः स्यान्नृपतिर्भास्करायतने तथा ॥ तद्विधानेन सहितेशत्रुरुन्मादवान्भवेत् ॥ ॥ ३५५ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि त्वरितामन्त्रमुत्तमम् ॥ ॐ ह्रीं हूंखेंचेंक्षेंक्षः श्रींहूंक्षेंह्रींफट्मनुर्भवेत्॥ ३५६ ॥ त्वरिताया द्वादशार्णो मुनिरर्जुन ईरितः ॥ विराट् छन्दश्च ॐ बीजंह्रीं शक्तिस्त्वरिता सुरी ॥ ३५७॥ ॐ ह्रींहूं हृदयं प्रोक्तं शिरः खेंचें समीरितम् ॥ क्षें क्षः शिखा च वर्म्म श्रीं हूं क्षें नेत्रम्प्रकीर्त्तितम् ॥ ३५८ ॥ ह्रींफडस्त्रं षडङ्गानि कृत्वा वर्णास्ततो न्यसेत् ॥ कपालकण्ठहृन्नाभिगुह्योरुषु सजानुषु ॥ जङ्घयोः पादयोर्मन्त्री सर्वेण व्याप-कञ्चरेत् ॥ ३५९ ॥ लसच्छ्यामतनुं रक्तपङ्कजोद्यत्पदाम्बुजाम् ॥ ताट-ङ्कातङ्कविद्योतिरशनानूपुरात्मकैः ॥ ३६० ॥ विप्रक्षत्रियविट्शूद्रजातिभि-

१ नागरापिप्पलीमरिचानि त्र्यूषणशब्देनोच्यन्ते ॥

भीमविग्रहैः ॥ द्विद्विक्रमादष्टनागैः कल्पितोद्यत्सुभूषणाम् ॥ ३६१ ॥ पल्लवांकुशसंवीताशिखिपुच्छकृतैः शुभैः ॥ वलयैर्भूषितभुजाम्माणिक्यमुकुटोज्ज्वलाम् ॥ ३६२ ॥ बर्हिबर्हकृतापीडां छत्रान्तान्तत्पताकिनीम् ॥ गुञ्जाफललसद्धारविलसत्कुचमण्डलाम् ॥ ३६३ ॥ त्रिनेत्रां चारुवदनां मन्दस्मितमुखांबुजाम् ॥ वराभयकरां गण्डद्वयाम्मुकुटशोभिताम् ॥ ॥ ३६४ ॥ फणासहस्रसंयुक्तावथ तक्षकवासुकी ॥ शङ्खपालः स्वर्णवर्णः फणाष्टकशतावृतः ॥ आसने हेमरचिते त्वष्टसिंहवृतेऽभितः ॥ ३६५ ॥ आदौ तु पीठमन्त्रेण देवीपीठम्प्रपूजयेत् ॥ क्षंहुंहंवज्रदेहेति क्षिं चोक्त्वाथ कुरुद्वयम् ॥ ३६६ ॥ गर्ज्जद्वयन्तथा हुंहुंछां च पञ्चाननाय च ॥ नमः षड्विंशदर्णोयं कुर्य्यादष्टदलन्ततः ॥ ३६७ ॥ कर्णिकायाञ्च पूर्वादिकेशरेष्वष्टसुक्रमात् ॥ षडङ्गानि प्रणीतां च तद्गायत्रीक्रमाद्यजेत ॥ ३६८ ॥ हुंकालीं खेचरीं चण्डां छेदिनीं क्षेपिणींस्त्रियम् ॥ हूंकारीं वा शचीं क्षेमकरीं पूर्वादिपत्रके ॥ ३६९ ॥ तद्बहिर्भूपुरद्वन्द्वं पश्चिमद्वारसंयुतम् ॥ फट्कारीं पूजयेद्द्वारमध्ये देव्यास्तु किङ्करीम् ॥ ३७० ॥ कृष्णां कर्बुरकेशीं च हस्त तालवतीं जयेत् ॥ जयां च विजयां द्वारपार्श्वयोर्वेत्रधारिणीम् ॥ ३७१ ॥ तयोरग्रे किंकरं च गदाहस्तम्प्रपूजयेत् ॥ किङ्कराय रक्षरक्ष त्वरिताज्ञास्थिरो भव ॥ ३७२ ॥ हुंफडष्टादशाणोर्यम्मन्त्रः किंकरपूजने ॥ तदग्रे लोकपालांश्च तदस्त्राणि ततो यजेत् ॥ गायत्र्यृचा च सम्पूज्य देवसान्निध्यकारिणीम् ॥ ३७३ ॥ त्वरितादेवि विद्महे तुणिवियायै धीमहि ॥ तन्नो देवी प्रचोदयात् ॥ ३७४ ॥ प्रणवेन विना मन्त्रो भवार्णः परिकीर्त्तितः ॥ मोहनः सर्वलोकानान्तेन मोहननामकः ॥ ४७५ ॥ प्रणवानान्तु नवकमादौ च स्यान्नखार्णवान् ॥ सर्वसिद्धिप्रदातृत्वात्सर्वसिद्धीश्वरो मतः ॥ ३७६ ॥ आरक्तैर्वनसम्भूतैर्मनोज्ञैश्च सुगन्धिभिः ॥ धूपदीपादिभिर्नृत्यगीतैः सम्पूजयेच्छिवाम् ॥ ॥ ३७७ ॥ एवम्पूजां विधायाग्रे यजेद्दिग्यां सहस्रकम् ॥ शतं वा कृतहोमस्तु प्राग्वत्पूजां समापयेत् ॥ ३७८ ॥ एवं संस्मृत्य लक्षैकम्प्रजपेन्मनुमुत्तमम् ॥ मध्व-

---

१ क्षंहुंहं वज्रदेह क्षिं कुरुकुरु गर्जगर्ज हुंहुंछां पञ्चाननाय नमः ॥

कबिल्वसमिधो जुहुयात्तद्दशांशतः ॥ ३७९ ॥ सुगन्धिसलिलैश्चैव तर्प्पयेत्त्व-रिताम्पराम् ॥ आत्मानमभिषिच्याथ ब्राह्मणानपि भोजयेत् ॥ ३८० ॥एवं-सिद्धे मनौ तस्मै नरनारीनराधिपाः॥ नमस्क्रियाम्प्रकुर्वन्ति नात्र कार्य्या विचा-रणा ॥३८१॥ देवदानवगन्धर्वयक्षचारणयोषितः ॥ सिद्धविद्याधराणां च यो-षितोऽप्सरसस्तथा ॥ ३८२॥विस्पष्टजघनोरस्काः पृष्ठदोर्मूलमञ्जुलाः॥प्रस्खल-त्पदविन्यासाः संस्फुरद्दशनांशुकाः ॥ ३८३ ॥ प्रलोभयन्ति चागत्य मन्त्रिणं ताभिरन्तिके ॥ प्रलोभ्यमानो मन्त्रज्ञो यदा विक्रियते न सः ॥ तदैव वाञ्छितन्तस्मै ददाति त्वरिताखिलम् ॥ ३८४ ॥ सञ्जप्य कर्णयोर्विद्यां पद्भ्यां च जपसिद्धये ॥ सन्ताड्य शीर्षे सहसा मृतमुत्थापयेद-सौ ॥ ३८५॥ काम्यहोमविधिं वक्ष्ये यथाविधि विधानवित् ॥ कृत्वा योनिं कुण्डमध्ये समाधायाग्निमत्र वै ॥ ३८६ ॥ सम्पूज्य पूर्वविधिना देवतां विधि-वत्सुधीः ॥ तिलसर्षपगोधूमशालिधान्ययवैर्हुनेत् ॥३८७॥ त्रिमध्वक्तैरेकशो वा समेतैर्वा समृद्धये ॥ बकुलैश्चम्पकै रक्तैः कह्लारैररुणोत्पलैः ॥ ३८८ ॥ कैरवैर्मल्लिकाकुन्दमधुकैरिन्दिराप्तये ॥ अशोकैः पाटलैर्बिल्वैस्तत्तदाप्नोति निश्चितम् ॥ ३८९ ॥ दूर्वां गुडूचीमश्वत्थं वटमारग्वधं तथा ॥ सिताज्य-लक्षकं[1] हुत्वा रोगान्मुक्तो नरोऽचिरात् ॥ ३९० ॥ इक्षुजम्बूनारिकेरमोचा-गुडसिता हुनेत् ॥अचलां लभते लक्ष्मीं भोक्ता च भवति ध्रुवम् ॥ ३९१ ॥ एतैरुदीरितैराज्यमधुक्षीरप्लुतैर्हुनेत् ॥ एकैकैर्वनिता वश्या यावज्जीवं धना-दिभिः ॥ ३९२ ॥ एतैराज्यप्लुतैर्भूयो वश्यास्स्युर्हवनात्तथा ॥ क्षीराक्तैस्तैर्हुनेन्मर्त्यो वशे तिष्ठन्त्यशेषतः ॥ ३९३ ॥ सर्षपाज्यैर्हुनेन्मृत्युका-ष्ठाग्नौ वैरिमृत्यवे ॥ तद्युक्तैर्वैरिणो नित्यम्माषैरपि च तत्कृते ॥ ३९४ ॥ यक्षेन्धनाग्नौ यो नित्यं क्षतजोत्पादितं चरुम् ॥ कारस्करघृतोपेतं फणिशीर्ष-स्रुचा हुनेत्॥३९५॥ कृष्णांशुकशिरोवेष्टः खड्गपाणिश्च रोषवान्॥ निशायां जुहुयात्सयो निहन्तुं वैरिणं हठात् ॥ ३९६ ॥ मृत्युकाष्ठानले तस्य फलैः पत्रैश्च होमतः ॥ सप्तरात्रादरातेस्तु गजाश्वा रोगमाप्नुयुः ॥ ३९७ ॥

---

१ भवेदिति शेषः ॥

चतुरंगुलजे होमे चतुरङ्गबलैर्नृपः ॥ सप्ताहाद्रोगमाप्नोति दुःखार्त्तो नैव संशयः ॥ ३९८ ॥ मन्त्रजप्तोदकैः सेकाद्रोगशांतिर्भविष्यति ॥ तज्जप्तमष्टधा तावद्य-ज्जलं चुलुकोदकात् ॥ ३९९ ॥ होमसङ्ख्या यावती स्याज्ज-पसंख्या च तावती ॥ तत्कर्णरन्ध्रजापाच्च नश्येयुश्च विषग्रहाः ॥ ४०० ॥ तद्यन्त्रस्थापनं चैव विषभूतारिनाशनम् ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि शिवदूती-मनुम्परम् ॥ ४०१ ॥ माया च शिवदूत्यै हृत्सप्तार्णोयम्मनुर्मतः ॥ ऋषी रुद्रोस्य गायत्री छन्दः स्याद्देवता शिवा ॥ ४०२॥ ह्रीं बीजं च नमः शक्तिः शिवदूत्यै च कीलकम्॥षड्दीर्घयुक्तमनुना षडंगविधिरीरितः ॥४०३॥ तेनैव पुटितैरङ्गे मन्त्रार्णैर्विन्यसेत्तनौ॥ श्रोत्रनासाकपोलाक्षिनाभिषु क्रमतः सुधीः ॥ पृष्ठे मनसि विन्यस्य व्यापकं विद्यया चरेत् ॥ ४०४ ॥ निदाघकालमध्याह्न-दिवाकरसमप्रभाम् ॥ नवरत्नकिरीटां च त्रीक्षणामरुणाम्बराम् ॥ ४०५ ॥ नानाभरणसम्भिन्नदेहकान्तिविराजिताम् ॥ शुचिस्मितामष्टभुजां स्तूयमानाम्म-हर्षिभिः ॥ ४०६ ॥ पाशं खेटङ्गदां रत्नचषकं वामबाहुभिः ॥ दक्षिणैरं-कुशं खड्ग कुठारं कमलन्तथा ॥ ४०७ ॥ दधानां साधकाभीष्टदानोद्यमस-मन्विताम् ॥ ध्यात्वैवम्पूजयेद्देवीं दूतीं दुरितनाशिनीम् ॥ ४०८ ॥ वृत्तद्वयं बहिष्कुर्य्यादन्तरालेङ्गषट्ककम्॥त्रिकोणस्याग्रकोणादिप्रादक्षिण्येन तद्बहिः ॥ इच्छाज्ञानक्रियाशक्तीस्त्रिषु कोणेषु पूजयेत ॥ ४०९ ॥ तद्बाह्ये कोणषट्के तु स्वाग्रतः पूजयेदिमाः॥सिद्धा वाणी पूर्णसिद्धाग्रे विग्रहवती तथा ॥४१०॥ नादा मनोन्मनी चेति तद्बहिश्चापि षड्दले ॥ डाकिन्याद्यास्तदग्रे तु यजे-दष्टदलाम्बुजे ॥ ४११॥ शिवदूतीसमाकारवर्णायुधसमन्विताः॥सुमुखीं सुन्दरीं सारां सुमनां च सरस्वतीम् ॥ ४१२ ॥ समयां सर्वगां सिद्धां तद्बाह्येष्टदले यजेत् ॥वागीशां वरदां विश्वां विनदां विघ्नकारिणीम्॥४१३॥वीरां विघ्नहरां विद्यां तदग्रे भूपुरे यजेत् ॥ द्वारस्य दक्षिणम्भागं समारभ्य प्रदक्षिणम् ॥ ॥ ४१४ ॥ विह्वलां कर्षिणीं लोलां नित्यां मदनमालिनीम्॥प्रमोदां कौतुकां पुण्यां लोकेशास्त्राणि तद्बहिः ॥ ४१५ ॥ लक्षजपेत्प्रयत्नेन घृताक्तेन च

होमयेत् ॥ तर्प्पयेद्गन्धसलिलैरात्मानमभिषेचयेत् ॥ ४१६ ॥ ब्राह्मणान्भोजयेच्चापि गुरुं यत्नेन तोषयेत्॥वशयेद्वनिता होमात्कौशिकैर्मधुमिश्रितैः॥नारिकेलफलोपेतैर्गुडैर्लक्ष्मीमवाप्नुयात् ॥ ४१७ ॥ तथाज्यसिक्तैः कह्लारैः क्षीराक्तैररुणोत्पलैः ॥ त्रिमध्वक्तैश्चम्पकैश्च प्रसूनैर्बकुलोद्भवैः ॥ ४१८ ॥ मधूकजैः प्रसूनैश्च होमात्कन्यामवाप्नुयात् ॥ पुन्नागजैर्हुतैर्वैश्याण्याज्यैरिष्टमवाप्नुयात् ॥ ४१९ ॥ महिषीर्माहिषैराज्यैरजागव्यैश्च गास्तथा ॥ अवाप्नोति हुतैराज्यैरम्लै रत्नादि साधकः ॥ ४२० ॥ शालिपिष्टमयीं कृत्वा पुत्तलीं च सितायुताम्॥हृद्देशेन्यस्य साध्याख्यामर्चेत्तैलाज्ययोर्निशि ॥४२१॥ रात्रिंदिवं तु ताम्मन्त्री विद्याजतान्तु भक्षयेत्॥सप्तरात्रप्रयोगेण नरो नारी नृपोथ वा ॥ दासवच्च समायाति प्रियं प्राणादि चार्पयेत् ॥ ४२२ ॥ हयारिपुष्पैररुणैस्सितैर्वा जुहुयात्ततः ॥ त्रिसप्तरात्रान्महतीमवाप्नोति श्रियं नरः ॥ ४२३ ॥ छागमांसैस्त्रिमध्वक्तैर्होमात्स्वर्णमवाप्नुयात् ॥ क्षीराक्तैः सस्यसम्पन्नाम्भुवमाप्नोति मण्डलात् ॥ पद्माक्षैर्जुहुयाल्लक्ष्मीमवाप्नोति त्रिभिर्दिनैः ॥ ४२४ ॥ समस्तापत्तारणीयम्मोहिनी विश्वमोहिनी ॥ श्रीकरा शिवरूपाह्वा प्रोक्ता सर्वसमृद्धिदा ॥ ४२५ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि त्रिवर्णान्तु त्रिकण्टिकाम् ॥ हुंखेंक्षः फट् चेति मन्त्र ऋष्यादि त्वरितासमम्॥ ४२६ ॥ षडंगन्तु द्विरुक्तार्णैर्ध्यानमस्या निरूप्यते ॥ पादादिनाभिपर्य्यन्तमरुणां नाभितो गलम् ॥४२७॥ नीलां गलाद्ब्रह्मरन्ध्रं श्वेतां च चतुराननाम् ॥ हस्तेषु शङ्खचक्रे च दीपौ चन्द्रार्धशेखराम् ॥ ४२८ ॥ अर्चयेत्त्वरितापीठे प्रयागोद्यन्तथैव च ॥ वर्णलक्षं जपेदन्ते दशांशेन घृतैर्हुनेत् ॥ ४२९ ॥ आत्मानन्देवतारूपं ध्यात्वा कृत्वा करद्वये ॥ शूलमुद्रां ग्रहग्रस्तान्दृष्ट्वमम्प्रजपेन्मनुम् ॥ ४३० ॥ आशुग्रहात्प्रमुच्येत नरो मन्त्रप्रभावतः ॥ नातः परतरा विद्या ग्रहनिर्वापणक्षमा ॥४३१॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि विद्यां वश्यत्रिकण्टिकाम्॥खेंक्लींक्षें त्र्यर्णमन्त्रोयं निखिलं त्वरितासमम् ॥ ४३२ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि कौमार्य्या विधिमुत्तमम् ॥ कौं कौमार्य्यै नम इति षडर्णो मन्त्र ईरितः ॥ ४३३ ॥ मुनिर्ब्रह्मा च

१ गुग्गुलुभिः ॥

गायत्री छन्दः कौमारिका भवेत् ॥ देवता कौमिदं बीजं कौमार्य्यै शक्तिरुच्यते ॥ ४३४ ॥ मन्त्रवर्णैः षडङ्गानि हृदि ध्यायेच्च देवताम् ॥ शक्त्यक्षस्रग्वराभीतिकरां बन्धूकसन्निभाम् ॥ ४३५ ॥ मयूरध्वजिनीं चैव रक्तामौदुम्बरास्थिताम् ॥ हरित्कञ्चुकिकां रम्यां नानालङ्कारभूषिताम् ॥ ४३६ ॥ आदावङ्गानि चाभ्यर्च्य पञ्चकोणे यजेत्पुनः ॥ अहल्यान्द्रौपदीं सीतान्तारा मन्दोदरीमपि ॥ ४३७ ॥ ब्राह्मयादिका अष्टदले दिक्पतीनायुधानि तु ॥ मुख्या पूजा भवेदस्याः कुमार्य्या एव नान्यतः ॥ ४३८ ॥ कुमार्यभावेन्यदेशे पूजेयं तु समीरिता ॥ लक्षषट्कं जपः प्रोक्तः पञ्चखाद्यैस्तथा हुनेत् ॥ ४३९ ॥ मधुरत्रयसंयुक्तैः सिद्धमन्त्रस्ततो भवेत् ॥ तर्पणम्मार्जनं कृत्वा कुमारीरपि भोजयेत् ॥ ४४० ॥ अथ मोटनकं वक्ष्ये देवाविर्भावकारणम् ॥ पाकक्रिया प्रकर्तव्या चतुर्भक्ष्यसमन्विता ॥ भार्यया साधकेन्द्रस्य पातिव्रत्यादियुक्तया ॥ ॥ ४४१ ॥ अप्रसूताः स्त्रियः पञ्च आहूय सुकुमारिकाः ॥ अलंकृताः पवित्रास्ता एकपंक्त्योपवेशयेत् ॥ ४४२ ॥ तदादौ विघ्नपस्थानमन्त्रे तु बटुकस्य च ॥ ताः सम्पूज्य महत्पात्रं पवित्रं च तथा चरेत् ॥ ४४३ ॥ स्वस्वद्विगुणमानेन मध्वाज्यसमितं दधि ॥ दुग्धं च निक्षिपेत्तत्र नैवेद्यन्तत्र निक्षिपेत ॥ ॥ ४४४ ॥ कुमारिकाया हस्तेन मन्थयेयुः स्त्रियश्च तत् ॥ तन्मन्थनान्महेशानि देवावेशः प्रजायते ॥ ४४५ ॥ देवावेशे जायमाने सुगन्धो वाति मारुतः ॥ सर्वं मनोगतं वक्ति देवता सुप्रसीदति ॥ ४४६ ॥ सिद्ध्यन्ति सर्वकार्य्याणि मोटकानां शतेन च ॥ नखैर्भवेद्विवाहस्तु पञ्चाशद्भिः सुतास्तथा ॥ ॥ ४४७ ॥ अशीत्या गतराज्याप्तिर्विंशत्या लभते धनम् ॥ अष्टोत्तरशतेनापि साधकेन तु मेलयेत् ॥ ४४८ ॥ कौमारिका चेष्टदेवं कुमार्य्या ईरितो विधिः ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि वैष्णवीमन्त्रमद्भुतम् ॥ अकचटतपयशैर्वैष्णव्या मन्त्र ईरितः ॥ ४४९ ॥ अष्टाक्षरो मुनिश्चास्य नारदोनुष्टुबुच्यते ॥ छन्दस्तु वैष्णवी देवी न्यासः प्रणवपूर्वकः ॥ ४५० ॥ मूलमन्त्राक्षरैः कुर्य्यात्त्रिभिस्त्रिभिरनुक्रमात् ॥ विन्यसेदक्षराण्यष्टावोङ्कारं च तथा स्मरेत् ॥ ४५१ ॥

शोणपद्मप्रतीकाशां मुक्तामूर्द्धजलम्बिनीम् ॥ लसत्काञ्चनसम्भूतकुण्डलोज्ज्वलशालिनीम् ॥ ४५२ ॥ स्वर्णरत्नसमुन्नद्धकिरीटसूत्रधारिणीम् ॥ कृष्णशुक्लारुणैर्नेत्रैस्त्रिभिश्चापि विभूषिताम् ॥ ४५३ ॥ बन्धूकदन्तरसनाशिरीषसुमनासिकाम् ॥ कम्बुग्रीवां विशालाक्षीं सूर्य्यकोटिसमप्रभाम् ॥ ४५४ ॥ चतुर्भुजां विवसनां पीनोन्नतपयोधराम् ॥ दक्षिणाभ्यां कराभ्या तु खड्गं च जपमालिकाम् ॥ ४५५ ॥ बिभ्रतीं वामहस्ताभ्यां त्वभयं च वरं तथा ॥ अनल्पनागनासोरुं गुप्तगुल्फां सुपार्ष्णिकाम् ॥ गात्रेण रत्नस्तम्भं च सम्यगालम्ब्य संस्थिताम् ॥ ४५६ ॥ किमिच्छसीति वचनं व्याहरन्तीं मुहुर्मुहुः ॥ पञ्चाननं पुरः संस्थं निरीक्षन्तीं स्ववाहनम् ॥ ४५७ ॥ ईदृशीं चण्डिकां ध्यात्वा नमः फडिति मस्तके ॥ स्वबीजे सुमनो दद्यात्साहमेवं विचिन्तयेत्॥४५८॥ पञ्चाननं मण्डलस्थं मध्ये वश्यं प्रपूजयेत् ॥ आवाहनं ततः कुर्य्याद्गायत्र्या शिरसा सह ॥ ४५९ ॥ महामायायै विद्महे चण्डिकायै धीमहि॥ तन्नो देवी प्रचोदयात् ॥ ४६० ॥ ततस्तु मूलमन्त्रेण गन्धं पुष्पं सदीपकम् ॥ नैवेद्यं च ततो दद्यान्मोदकं पायसं तथा ॥ ४६१ ॥ पुष्पाञ्जलित्रयं दद्यान्मूलमन्त्रेण शोभनम् ॥ एवं सम्पूज्य मध्ये तु मन्त्रेणांगानि पूजयेत् ॥ ४६२ ॥ शैलपुत्रीं चन्द्रघण्टां स्कन्दमातरमेव च ॥ कालरात्रिं च दिक्पत्रेष्वर्चयेच्चन्दनादिभिः॥४६३॥चण्डिकामथ कूष्माण्डां तथा कात्यायनीं शुभाम् ॥ महागौरीं चाग्निकोणनैर्ऋत्यादिषु पूजयेत ॥ ४६४ ॥ ततः सम्पूज्य लोकेशीं तदस्त्राणि च मन्त्रवित् ॥ महामायां नमामीति मूलमन्त्रेण चाष्टधा ॥४६५॥ पूजयेत्पद्ममध्ये तु सुमनाञ्जलिभिस्तथा ॥ अष्टभिश्च महामायां नमामीति च मन्त्रतः ॥ ४६६ ॥ देव्यै समर्प्य धूपादि सर्वं प्राग्वत्समापयेत॥ लक्षद्वयं भवेदस्य पुरश्चरणकर्म्म तु ॥४६७॥ दशांशो होम आज्येन कर्त्तव्यं तर्प्पणादिकम्॥अशुचिर्न महामायां पूयजेत्तु कदाचन॥४६८॥ अवश्यं तु स्मरेन्मन्त्रं योतिभक्तियुतो भवेत॥ दन्तरक्ते समुत्पन्ने स्मरणं न चविद्यते॥४६९॥दुःखान्नेत्रजले जाते क्रोधादिक्षुद्रकर्म्मणि ॥ धूमोद्गारे मैथुने च सूतके मृतके च वै

॥ ४७० ॥ जलौकादर्शने सर्प्यकृमिभूनागदर्शने ॥ कामाज्जातेङ्गनास्पर्शे मृते पितारि वत्सरम् ॥४७१॥ आसेव्ये गुरुविप्राणां क्षीणे वीर्य्ये च्युते तथा॥ आकर्षे मातृमरणे षण्मासं च गुरौ मृते ॥ ४७२ ॥ भार्य्यामृतौ त्रिमासं च मासमेकं तु राजनि ॥ न स्मरेच्च महामायां शुचितापत्यसिद्धिदाम् ॥४७३॥ ॐ नमोन्ते महामायायै मनुर्वसुवर्णकः ॥ प्राग्वन्मुन्यादिकं प्रोक्तं पूजाजपमुखं तथा ॥ ४७४ ॥ ॐ नमोन्ते च वैष्णव्यै मन्त्रः प्रोक्तः षडक्षरः॥ मन्त्रार्णैरत्र चाङ्गानि शेषं पूर्ववदाचरेत् ॥ ४७५ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि सर्वसिद्धिप्रदं मनुम् ॥ नमस्ते चास्तु ह्यभये त्वनघे पूजिते वदेत् ॥अमिते पदमुच्चार्य्य तदग्रे चापराजिते ॥ ४७६ ॥ ततश्च सिद्धकथिते:साधकपदमुच्चरेत ॥ सिद्धस्मृते महाविद्ये अनेकांसे उमे ध्रुवे ॥ ४७७ ॥ अरुन्धती च सावित्रि गायत्रि जातवेदसि ॥ मानस्तोके सरस्वति रमणी रामणीति च ॥ ४७८ ॥ धरणी धारणी चेति सौदामिनि तथादिति ॥ दितीति विनते चेति गौरि गन्धारि संवदेत ॥ ४७९ ॥ मातङ्गि कृष्णयशोदे सत्यवादिनि संवदेत् ॥ ब्रह्मवादिनि कालीति कपालिनि करालि च ॥ ४८० ॥ नेत्रसद्यो मातरीति ततः स्थलगतं वदेत ॥ अन्तारिक्षगतं चेति जलगतं वदेत्पुनः ॥ ४८१ ॥ वामपादान्ते रक्षयुग्मं सर्वभूतपदं वदेत् ॥ सर्वोपद्रवेषु स्वाहा ताराद्यन्तो मनुर्मतः ॥ ४८२॥ मुनिर्नारद आख्यातो गाथा छन्दः प्रकीर्तितम्॥ अघोरवैष्णवी देवी चायुतं जप ईरितः ॥४८३॥ प्राग्वत्पूजादिकं सर्वं फलमस्य निरूप्यते ॥ यस्याः प्रणश्येत्पुष्पं हि गर्भश्चापि पतेद्यदि ॥४८४ ॥ म्रियते बालको यस्याः काकवन्ध्या च या भवेत् ॥ भूर्ज्जपत्रे त्विमा विद्यां लिखित्वा धारयेद्यदि ॥४८५॥ एतैर्दोषैर्न लिम्पेत सुभगा पुत्रिणी भवेत् ॥ पुमांश्च धारयेद्यश्च सोभीष्टं फलमाप्नुयात ॥ ४८६ ॥ रणे राजकुले द्यूते संग्रामे शत्रुसंकटे ॥अग्निचौरभये घोरे नित्यं तस्य जयो भवेत् ॥ ४८७ ॥ नित्यं निवारयेत्तस्य समरे काण्डधारिणी ॥ गुल्मशूलाक्षिरोगाणां क्षिप्रं नाशयति व्यथाम् ॥ शिरोरोगज्वराणां च नाशनं सर्वदेहिनाम् ॥ ४८८ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि त्रैकोक्यविजयाभिधाम् ॥

वैष्णवीं चन्द्रवेदाग्निवर्णां साधकसिद्धिदाम् ॥ ४८९ ॥ ऐकाहिकद्व्याहि-कत्र्याहिकचातुर्थिकेति च ॥ मासिकद्विमासिकेति वातिकपैत्तिकेषु च ॥ ॥ ४९० ॥ श्लैष्मिके सान्निपातिके सततज्वरसंम्भवे ॥ विषज्वरग्रह-र्क्षादिसर्वदोषान्तकारिणि ॥४९१॥ कालि सरयुगं गौरी धमयुग्मं वदेत्तथा ॥ विद्याशाले तालमाले रुद्ररूपे पच द्वयम् ॥ ४९२ ॥ विघ्नं नाशय पापं च हर दुस्स्वप्नमित्यपि ॥ विनाशिनि पदं ब्रूयात्तश्च कमलासने ॥ रजनी सन्ध्ये दुन्दुभिनादे मानस इत्यपि ॥ ४९३॥ वेगे शङ्खिनि चक्रिणि वज्रिणी गदिनीति च ॥ ततश्च शूलिनि वदेदपमृत्युविनाशिनि ॥ विश्वेश्व-री द्राविडीति वदेद् द्रविडिकेशि च ॥ ४९४ ॥ दयितेऽतः पशुपतेर्मे दुः-खेति पदं वदेत् ॥ विमर्दिनि पदं पश्चाद्वदेत्साधकसत्तमः ॥ ४९५ ॥ मोदयुक्ता शर्वरीति किरातिनि पदं वदेत् ॥ मातङ्गि प्रणवं ह्रांह्रींह्रूंक्षौं कुरुयुगं तथा ॥४९६॥ ये मां द्विषन्ति प्रत्यक्षं परोक्षं वेति तान्वदेत् ॥ सर्वान्हनयुगं चोक्ता दमयुग्मं पचद्वयम् ॥ ४९७ ॥ मर्दयद्वितयं चापि तापयद्वयमेव च द्विःशोषयोत्सादय द्विर्ब्रह्माणीति च संवदेत् ॥ ४९८ ॥ माहेश्वरीति वाराहि वैनायकि परैन्द्रि च ॥ आग्नेयीति च चामुण्डे वारुणी वायवी तथा॥४९९॥ रक्षयुग्मं च चंडेति इन्द्रोपेन्द्रभगिन्यपि ॥ जये च विजये शान्ति स्वस्ति-पुष्टि धृतीति च ॥ ५०० ॥ विवर्तिनी कामुकी च कामदुघे परं वदेत् ॥ सर्वकाम फलेत्युक्त्वा प्रदे सर्वपदं वदेत् ॥ ५०१ ॥ भूतेषु मां प्रियं चेति

---

१ एकाहिकद्व्याहिकत्र्याहिकचातुर्थिकमासिकद्विमासिकवातिकपैत्तिकश्लैष्मिकसान्निपातिकसतत-ज्वरसम्भवविषज्वरग्रहर्क्षादिसर्वदोषान्तकारिणि कालि सर सर गौरि सर सर गौरिधम धम विद्याशाले तालमाले रुद्ररूपे पच पच विघ्नं नाशय पापं हर दुःस्वप्नविनाशिनि कमला सने रजनीसन्ध्ये दुन्दुभिनादे मानसवेगे शङ्खिनि चक्रिणि वज्रिणि गदिनि शूलिनि अपमृत्युविना शिनि विश्वेश्वरि द्राविडि द्रविडकेशि पशुपतिदयिते मे दुःखविमर्दिनि मोदशर्वरि किरातिनि मातङ्गि ॐ ह्रीं क्षं क्षौं कुरु कुरु ये मां प्रत्यक्षं द्विषन्ति ये मां परोक्षं द्विषन्ति तान्सर्वान्हन हन दम दम पच पच मर्दय मर्दय तापय तापय शोषय शोषयोत्सादयोत्सादय ब्रह्माणि माहेश्वरि वाराहि वैना यकि ऐन्द्रि आग्नेयि चामुण्डे वारुणि वायवि रक्षरक्ष चण्डे इन्द्रोपेन्द्रभगिनि जये विजये शान्ति स्वस्तिपुष्टिधृतिविवर्धिनि कामुकि कामदुघे सर्वकामफलप्रदे ॥

कुरुद्वन्द्वाग्निवल्लभे ॥ ध्यानपूजादिकं प्राग्वत्पुरश्चर्य्यायुतद्वयम् ॥ प्राग्वद्धोमफलं चास्य साधकः सात्त्विको भवेत् ॥५०२॥ मानयन्ति च भूपास्तं स शापानुग्रहक्षमः ॥ सन्तत्या चापि सम्पत्त्या भवेत्कीर्त्या समन्वितः ॥ दर्शनादेव नश्यन्ति भूताद्या भैरवा अपि ॥ ५०३॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि वैष्णवीमपराजिताम् ॥ तारमाकर्षिणिपदं आवेशिनि पदं वदेत् ॥५०४॥ ज्वालामालिनि रमणी रामणी धरणीति च ॥ धारिणी तपनीत्युक्ता तापिनि मदोन्मादिनि ॥ ॥५०५॥ शोषिणीतिपदं चोक्त्वा ततः सम्मोहिनीति च ॥ तथा नीलपताकेति महानीले महाप्रिये ॥ ५०६ ॥ महाग्नेयि महाचण्डे महारौद्रि महेति च ॥ वज्रिणीति तथादित्याद्ये च जाह्नवि संवदेत् ॥५०७॥ यमघण्टे किलिकिलि चिन्तामणिपदं वदेत् ॥ सुरभि सुरोत्पन्ने च सरस्वति पदं ततः ॥५०८॥ सर्वकामदुघे प्रोच्य यथा मम मनीषितम्॥कार्य्यं तन्मम सिद्ध्यत्विति स्वाहान्तोयं मनुर्मतः ॥५०९॥ षड्द्वादशार्णो मुन्यादिप्राग्वत्सौख्यप्रदो मनुः ॥जपेद्वर्णशतं होमादिकं पूर्ववदाचरेत्॥५१०॥असिद्धसाधिनीं देवीं प्रवक्ष्याम्यथ वैष्णवीम्॥ ताराद्या वह्निजायान्ता पृथक्च षड्युगं वदेत् ॥ ५११ ॥ तिस्रो व्याहृतयः श्लोकः स्वधास्वाहावसानकः॥ यत एवागतं पापं तत्रैव प्रतिगच्छतु ॥५१२॥ ॐ बले अबले महाबले असिद्धसाधिनि ॥ स्वाहान्तः षड्बाणवर्णो लक्षमेकं जपः स्मृतः ॥५१३॥ तृतीया व्याहृतिश्चात्र स्वरित्येषा प्रकीर्तिता ॥ होमपूजादिकं प्राग्वद्येन सिद्ध्यति देवता ॥ ५१४ ॥ स्वाहान्तैर्मन्त्रखण्डैस्तु हुनेदष्टसहस्रकम् ॥ वसुदेवसहस्राणि चावदानानि तत्र तु ॥ ५१५ ॥ देवकल्पोदितैर्द्रव्यैस्तदा सा देवता वशा ॥ प्राक्कर्म्मप्रतिबद्धापि वैष्णवीत्रासतस्तु सा ॥ ५१६ ॥ साधकस्य मनोभीष्टं कामं यच्छति सत्वरम् ॥ इयं देवी

---

१ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ भूर्भुवः स्वः यत एवागतं पापं तत्रैव प्रतिगच्छतु ॐ बले अबले महाबले असिद्धसाधिनि स्वधा स्वाहा स्वाहा स्वाहा स्वाहा स्वाहा स्वाहा ॥ तृतीया व्याहृतिरर्थाद्भूर्भुवस्स्वरित्येतत्समुदायघटकं स्वःपदमिदमेव तृतीयमस्ति तत्सर्वे लोका बुध्यन्ते एव पुनः तृतीया व्याहृतिः स्वरिति कथिता तत्कथनस्यैतत्तात्पर्यं विद्यते किं तृतीयव्याहृतेर्भेदद्वयं ग्रन्थेषु दृश्यते एकः स्वः द्वितीयः पुनः भुवरिति अतोत्र स्वरित्यस्य पुनर्लेखः ॥

मया पूर्वं ललिता वश्यकामदा ॥ उपासिता तदा जाता ललिता[1] ललिता च सा ॥ ५१७ ॥ त्रयात्त्रिंशत्कोटिदेवनायिका ललिता तु या ॥ बलात्कारेण कामस्य वशीकृत्य यया पुनः ॥ ५१८ ॥ चेटीवन्मदधीना तु स्थापिता त्वं वरानने ॥ यस्य कस्यापि देवस्य होमद्रव्यं विलोक्य च ॥ मन्त्रेणानेन जुहुयात्तत्कर्म्म प्रसिद्ध्यति ॥ ५१९ ॥ इयं होमप्रिया देवी भुक्तिमुक्तिप्रदायिका ॥ मारणोच्चाटने चापि न प्रयोज्या कदाचन ॥ ५२० ॥ अथ वार्त्तालिकां वक्ष्ये वाराहीं शत्रुघातिनीम् ॥ ऐंग्लौंठंठमिति हुंस्वाहान्तोष्टाक्षरो मनुः ॥ ५२१ ॥ छन्दोनुष्टप् च कपिलो मुनिर्वार्त्तालिकाऽसुरी ॥ वाराह्यत्र षडङ्गानि क्रमाद्दिद्वीन्दुषट्कभिः ॥ ५२२ ॥ द्वाभ्यां ध्यायेत्ततो देवीं विद्युद्भासां कराम्बुजैः ॥ दधानामंकुशं पाशं मुद्गरं शक्तिमेव च ॥ ॥ ५२३ ॥ विद्युद्भासां त्रिनेत्रां च नाशयन्तीं तथा रिपून् ॥ अङ्गषट्कदिशाधीशायुधानीत्यावृतित्रयम् ॥ ५२४ ॥ वसुलक्षं जपित्वान्ते बिल्वपत्रैर्हयारिजैः ॥ धात्रीफलैर्भृङ्गराजैः कशैश्चापि दशांशतः ॥ ५२५ ॥ होमः कार्य्यस्तर्प्पणादि कुर्य्याद्ब्राह्मणभोजनम् ॥ एवं सिद्धमनुर्मन्त्री प्रयोगान्कर्त्तुमर्हति ॥ ५२६ ॥ अंकुशेनारिमानीय बद्ध्वा पाशेन तं दृढम् ॥ मुद्गरेण घ्नतीं मूर्ध्नि तां स्मरन्नयुतं जपेत् ॥ ५२७ ॥ वन्योपलैः प्रजुहुयादयुतं भस्म तत्क्षिपेत् ॥ वापीकूपतडागादौ तत्पानीयस्य पानतः ॥ ५२८ ॥ म्रियन्ते रिपवस्तस्य वा हिंसन्ति परस्परम् ॥ स्थानं त्यक्त्वा च गच्छन्ति नात्र कार्य्या विचारणा ॥ ५२९ ॥ अथास्याः सम्प्रवक्ष्यामि मालामन्त्रं सुसिद्धिदम् ॥ ॐ ऐं ग्लौं ऐं नमश्चोक्त्वा ततो भगवतीति च ॥ ५३० ॥ वाराहिवाराहि युगं वराहमुखि वाग्भवम् ॥ ग्लौंऐं अन्धे अन्धिनीति नमो रुन्धे च रुन्धिनि ॥ ५३१ ॥ नमो जृम्भे जृम्भिणीति नमो मोहे च मोहिनि ॥ नमः स्तम्भे स्तम्भिनीति नम ऐंग्लौं च वाग्भवम् ॥ ५३२ ॥ सर्वदुष्टप्रदुष्टानां सर्वेषां सर्ववाग्वदेत् ॥ चित्तचक्षुर्मुखगलजिह्वास्तम्भं कुरुद्वयम् ॥ ५३३ ॥ शीघ्रं वश्यं कुरुकुरु ऐंग्लौं मैंठचतुष्टयम् ॥ हुंफट्स्वाहेति मन्त्रोयं वेदरुद्राक्षरः स्मृतः ॥

[1] अभूदिति शेषः ॥

॥ ५३४ ॥ मुनिः शिवोस्य जगती छन्दो वार्त्तालिकासुरी ॥ वाराह्यस्य षडङ्गानि वार्त्ताली हृदयं स्मृतम् ॥ ५३५ ॥ वाराहीति शिरः प्रोक्तं शिखा- वाराहमुख्यपि ॥ अन्धे अन्धिनि वर्म्मोक्तं रुन्धे रुन्धिनि नेत्रकम् ॥५३६॥ जृम्भे जम्भिणि चास्त्रं स्यात्ततो ध्यायेच्च देवताम् ॥ रक्ताब्जकर्णिकायान्तु शवासनसमास्थिताम् ॥५३७॥ मुण्डमालालसत्कण्ठां नीलाभान्दधतीङ्करैः॥ अभयं मुसलञ्चापि फलञ्चापि वरन्तथा ॥ ५३८ ॥ वराहास्यान्तुङ्गकुचां त्रिनेत्रामरुणाम्बराम् ॥ जपेन्मन्त्रं सहस्राणि बन्धूककुसुमैस्तिलैः ॥५३९॥ हुनेत्समधुरैः पूजा जयादिनवशक्तिके ॥ पीठे स्वर्णमये रौप्ये ताम्रे भूर्ज्जेथ वारुणे ॥ ५४० ॥ लिखेद्गोरोचनारात्रिचन्दनागुरुकुंकुमैः ॥ योनिपञ्चास्रषट्कोणाष्टपत्रशतपत्रकम् ॥ ५४१ ॥ सहस्रदलभूबिम्बं संवीतं द्वारशोभितम् ॥ कैलासाचलमध्यस्थं पीठमेतद्विचिन्तयेत् ॥ ५४२ ॥ तत्रावाह्य यजेद्देवी- मुपचारैर्मनोहरैः ॥ त्रिकोणमध्ये देवेशीं षडङ्गान्यपि तत्र तु ॥ ५४३ ॥ वार्त्ताल्यर्च्या च वाराही त्र्यस्रे वाराहमुख्यपि ॥ जृम्भिणी मोहिनी चैव स्तम्भिनी पञ्चकोणके ॥ ५४४ ॥ पूजयित्वा तथा चेमाः षट्कोणेषु ततो यजेत् ॥ डाकिन्याद्याः पार्श्वयोश्च स्तम्भिनीं क्रोधिनीमपि ॥ ५४५ ॥ षट्कोणाग्रे यजेच्चण्डं छत्रन्तस्याः सुतोत्तमम् ॥ शूलं मुण्डञ्च डमरुं कपालं दधतं करैः ॥ ५४६॥ इन्द्रनीलनिभं नग्नं जटाभारविराजितम् ॥ अष्टपत्रे तु वार्त्तालीमुखं देव्यष्टकं यजेत्॥५४७॥शतपत्रे तु सम्पूज्या रुद्रार्कवसवोश्विनौ ॥ शतकोणाग्रतः सिंहः पूज्यो महिषसंयुतः॥५४८॥सहस्रपत्रे वाराहीम्पूजयेच्च सहस्रशः॥क्रों वाराह्यै नम इति पूजामन्त्रः षडक्षरः ॥५४९ ॥भूपुरद्वारदेशे तु बटुकं क्षेत्रपालकम्॥योगिनीं गणनाथञ्च तत्तन्मन्त्रैः प्रपूजयेत् ॥५५०॥बं बटुकाय हृदयं सप्तार्णो बटुकार्चने ॥ क्षें क्षेत्रपालाय नमोष्टार्णः क्षेत्रपपूजने ॥५५१॥ यों योगिनीभ्यो हृदयं सप्तार्णोयन्तदर्चने॥ गं गणपतये नमोष्टवर्णोयं गणेशितुः॥ ॥ ५५२ ॥ दिक्पालानायुधैर्युक्तान् दिक्षु सम्पूजयेत्ततः ॥ पूजान्ते बटुकादिभ्यो बलिमन्त्रैर्बलिं हरेत् ॥५५३॥ एह्येहि देवीपुत्रेति बटुकेति च नाथ

१ एह्येहि देवीपुत्रबटुकनाथ कपिलजटाभारभासुर त्रिनेत्रज्वालामुख सर्वविघ्नान् नाशय नाशय सर्वोपचारसहितं बलिं गृह्णगृह्ण स्वाहा ॥

च ॥ कपिलजटाभारेति भासुरेति वदेत्ततः ॥ ५५४ ॥ त्रिनेत्र ज्वालामुखेति सर्वविघ्नांस्ततो वदेत् ॥ नाशयद्वितयं सर्वोपचारसहितं बलिम्॥५५५॥ गृह्णयुग्मन्ततः स्वाहा पञ्चपञ्चाक्षरो मनुः ॥ बटुकस्य बलिं दद्यादनेन श्रद्धयान्वितः ॥ ५५६ ॥ हूं स्थानक्षेत्रपालेश सर्वकामं च पूरय ॥ स्वाहान्तः षड्दीर्घयुक्तः क्षाद्यस्त्रिद्विमितार्णकः ॥ ५५७ ॥ क्षेत्रपालबलेर्मन्त्रो गणेशस्याथ कथ्यते ॥ गांगींगूंगमिति प्रोच्य ङेन्तं गणपतिं तथा ॥ ५५८ ॥ वरवरद सर्वेति जनं मे वशमानय ॥ सर्वोपचारसहितं बलिं गृह्णयुगं पुनः ॥ ॥ ५५९ ॥ स्वाहान्तः खाब्धिवर्णोयं बलिमन्त्र उदाहृतः॥एवं तेभ्यो बलिं दत्त्वा स्वस्वमुद्राः प्रदर्शयेत् ॥ ५६० ॥ अंगुष्ठानामिके मध्यानामे क्षेत्रबलौ मते ॥ किञ्चिद्वक्रीकृता मध्या गणनाथबलौ स्मृता ॥ ५६१ ॥ अनामामध्यमांगुष्ठा योगिनीनां बलौ पुनः ॥ योगिनीनां बलेर्मन्त्रं साधनान्ते पठेदिमम् ॥५६२॥ यों योगिनीभ्यः स्वाहेति सप्तार्णः स्रग्धरा त्वियम्॥५६३॥ ऊर्ध्वं ब्रह्माण्डतो वा दिवि गगनतले भूतले निष्कले वा पाताले वा नले वा सलिलपवनयोर्यत्र कुत्र स्थिता वा ॥ क्षेत्रे पीठोपपीठादिषु च कृतपदा धूपदीपादिकेन प्रीता देव्यस्सदा नः शुभयुतविधिना यान्तु वीरेन्द्रवन्द्याः ॥ ५६४ ॥ एवं सम्पूज्य संस्तूय नत्वात्मन्युपसंहरेत् ॥ सिद्धमन्त्रः प्रकुर्वीत प्रयोगाञ्छिवभाषितान् ॥ ५६५ ॥ हरिद्रया चन्दनेन लाक्षया गुरुणापि च ॥ पूरण विविधैर्मांसैर्जुहुयादिष्टसिद्धये ॥ ५६६ ॥ हरिद्रामालया कुर्य्याज्जपं स्तम्भनकर्म्मणि ॥ स्फाटिकैः पद्मबीजैश्च रुद्राक्षैः शुभकर्म्मणि ॥ ५६७॥ स्वर्णादिपात्रे सुरया बन्धूककुसुमैस्तिलैः ॥ वाराहीं तर्पयेत्सर्वकामं सम्पूरयेन्नरः ॥ ५६८ ॥ चतुश्शतन्तु तापिच्छैर्जुहुयात्स्तम्भनेच्छया ॥ लाजचूर्णतिलैः कुर्य्याद्वरमेषासृगन्वितैः ॥ ५६९ ॥ पिण्डं मनोहरं तं तु पूरयेत्तर्प्पयेदपि ॥ सम्पन्नमदनं साङ्गमेतस्यै विनिवेदयेत् ॥ ५७० ॥ कुण्डे पिण्डं विधायामुं

---

१ आं ईं ऊं ऐं औं अः क्षें हूं स्थानक्षेत्रपालेश सर्वकामं पूरय स्वाहा ॥ २ गां गीं गूं गं गणपतये वरवरद सर्वजनं मे वशमानय सर्वोपचारसहितं बलिं गृह्णगृह्ण स्वाहा ॥

जुहुयात्तत्र वायुतम् ॥ एकविंशतिरात्रीषु लाजै रक्तसमन्वितैः ॥ ५७१ ॥ एवं कृते वैरिवृन्दं भक्ष्यते योगिनीगणैः ॥ एवं वार्त्तालिकायास्तु साधनं वाममार्गतः ॥ ५७२ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि वाराहीं स्वप्नसञ्ज्ञिताम् ॥ ॐ ह्रीं नमश्च वाराहि घोरे स्वप्नं विसर्गयुक्॥ ५७३ ॥ ठद्वयं वह्निजायान्तो मन्त्रः पञ्चदशाक्षरः ॥ ईश्वरोस्य मुनिः प्रोक्तो जगती छन्द ईरितम्॥ ५७४ ॥ देवता स्वप्नवाराही बीजं तारः प्रकीर्तितः॥ हृल्लेखाशक्तिरुद्दिष्टाठद्वयं कीलकं मतम् ॥ ५७५॥ द्विपञ्चनेत्रदस्राक्षियुग्मार्णैश्चाङ्गकं मनोः ॥ पादयोर्ध्वजने कट्योः कण्ठे गण्डद्वये तथा॥ ५७६॥ नेत्रयोः कर्णयोर्नासाद्वयमन्त्रार्णकान्न्यसेत्॥ ततो ध्यायेद्घनश्यामां त्रिनेत्रामुन्नतस्तनीम्॥ ५७७॥ कोलास्यां चन्द्रभालाञ्च दंष्ट्रोद्धृतवसुन्धराम् ॥ खड्गांकुशौ दक्षिणयोर्वामयोश्चर्म्मपाशकौ ॥ अश्वारूढां च कोलास्यां नानालंकारभूषिताम्॥ ५७८॥ त्रिकोणे तां समाराध्य षट्कोणेष्वङ्गदेवताः ॥ षोडशारे यजेच्छक्तीर्वक्ष्यमाणाश्च षोडश॥ ५७९॥ उच्चाटनी तदीशी च शोषिणी शोषिणीश्वरी ॥ मारणी मारिणीशी च भीषणी भीषणीश्वरी ॥ ॥ ५८०॥ त्रासिनी त्रासिनीशी च कम्पिनी कम्पिनीश्वरी ॥ आशाविवर्तिनी पश्चादाशाविवार्त्तिनीश्वरी॥ ५८१ ॥ वस्तुजातेश्वरी पश्चात्सर्वसम्पादिनीश्वरी ॥ एताःपूज्याश्चतुर्थ्यन्ताः प्रणवाद्या नमोन्तकाः॥ ५८२॥ यजेदष्टदले पद्मे मातृभैरवसंयुताः॥ लोकपालान्दशदले द्वितये हेतिसंयुतान्॥ ५८३॥ लक्षं जपेद्दशांशेन नीलपद्मैस्तिलैर्हुनेत् ॥ एवं सिद्धमनुर्मन्त्री काम्यकर्म्माणि साधयेत् ॥ ॥ ५८४॥ तर्प्पयेन्नारिकेरोत्थैर्जलैस्तीर्थोद्भवैरपि॥ आनयेत्तरुणीं वर्षात्सर्वकामसमृद्धये ॥ ५८५ ॥ कृष्णपक्षे विश्वघस्रे भूताहे वा कृतव्रतः ॥ चतुष्पथान्नदीकूलद्वयात्कुलालवेश्मनः ॥ ५८६ ॥ मृदमानीय धत्तूररसैः संयुक्तयानया ॥ रचयेत्पुत्तलीं रम्यां साध्यासुस्थापनान्विताम् ॥ ५८७ ॥ ततः श्वेताम्बरे यन्त्रं नृमार्ज्जारासजा लिखेत् ॥ पीताङ्गारयुजा योनिं षट्कोणं भूपु-

१ ॐ ह्रीं नमो वाराहिघोरे स्वप्नं ठःठः स्वाहा ॥ २ ॐ ह्रीं हृदयाय नमः, नमो वाराहि शिरसे स्वाहा, घोरे शिखायै वषट्, स्वप्नं कवचाय हुम्, ठःठः नेत्रत्रयाय वौषट्, स्वाहा अस्त्राय फट् ॥ ३ वराहमुखीम् ॥ ४ उच्चाटनीश्वरी ॥ एवमग्रेतया रीत्या ॥

रान्वितम् ॥ ५८८ ॥ तदन्तर्मन्त्रमालिख्य वेष्टयेन्मनुनामुना ॥ साध्यमुच्चाटययुगं शोषयद्वितयं ततः ॥ सहस्रं चाष्टकं भूयः पूजयेत्तां समाहितः ॥ ५८९ ॥ एवं कृते नरा नार्य्यो राजानो राजवल्लभाः ॥ सिंहा गजा मृगाः क्रूरा भवेयुर्वशगा ध्रुवम् ॥५९०॥ चित्ते ध्यात्वा निजं कार्य्यं शयीत विजने वृती ॥ यथा भावि तथा देवी स्वप्ने वदति मन्त्रिणे ॥ ५९१ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि इन्द्राणीमिष्टराज्यदाम् ॥ ईं इन्द्राण्यै नम इति मन्त्रः प्रोक्तः षडक्षरः ॥ ५९२ ॥ गुरुर्मुनिश्च गायत्री छन्दो देवीन्द्रवल्लभा ॥ ईंबीजं शक्तिरिन्द्राणी नमः कीलकमुच्यते ॥ ५९३ ॥ वज्रपाशवराभीतिहस्तां श्यामाम्बरां वराम् ॥ चतुर्दन्तगजानल्पच्छायासंस्थां हिरण्यभाम् ॥ ५९४ ॥ कोणषट्केष्वङ्गपूजा तद्बाह्येष्टदले यजेत् ॥ बगलां छिन्नमस्तां च तारां दक्षिणकालिकाम् ॥ ५९५ ॥ धूमावतीं भद्रकालीं महाकालीं प्रतिक्रियाम् ॥ तत्तन्मन्त्रैस्तु तद्बाह्ये लोकेशानायुधान्यपि॥५९६॥लक्षषट्कं जपेन्मन्त्रं मालतीकुसुमैर्हुनेत् ॥ त्रिमध्वक्तैस्तावदेव राज्यार्थं राजवृक्षजैः ॥ ५९७ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि स्तम्भिनीं बगलामुखीम् ॥ तारं मायां समुच्चार्य्य वदेच्च बगलामुखि ॥ ५९८ ॥ तदग्रे सर्वदुष्टानां ततो वाचं मुखं पदम् ॥ स्तम्भयेतिपदं जिह्वां कीलयेति ततः परम् ॥ ५९९ ॥ बुद्धिं विनाशय ह्रीं ॐ स्वाहा वेदाग्निवर्णकः ॥ नारायणो मुनिस्त्रिष्टुप्छन्दश्च बगलामुखी ॥ ६०० ॥ देवीबीजन्तु हृल्लेखा स्वाहा शक्तिः समीरिता ॥ विनियोगोस्य विख्यातः पुरुषार्थचतुष्टये ॥ ६०१ ॥ हृल्लेखा हृदयम्प्रोक्तं शिरश्च बगलामुखि ॥ शिखातु सर्वदुष्टानां ततो वाचम्मुखम्पदम् ॥ ६०२ ॥ स्तम्भयेति च वर्म्मोक्तं जिह्वां कीलय नेत्रकम् ॥ बुद्धिं विनाशयास्त्रं स्यात्षडङ्गन्यास ईरितः ॥ ६०३ ॥ मूर्ध्नि भाले भ्रुवोर्मध्ये नेत्रयोः श्रोत्रयोर्नसोः ॥ गण्डद्वये तथा चोष्ठेऽधरास्य-

---

१ ओंह्रीं बगलामुखि सर्वदुष्टानां वाचं मुखं स्तम्भय जिह्वां कीलय बुद्धिं विनाशय ह्रींओं स्वाहा ॥ २ ओंह्रीं हृदयाय नमः, बगलामुखि शिरसे स्वाहा, सर्वदुष्टानांशिखायै वषट्, वाचं मुखं स्तम्भय कवचाय हुम्, जिह्वां कीलय नेत्रत्रयाय वौषट्, बुद्धिं विनाशय ह्रींओंस्वाहा अस्त्राय फट् ॥

चिबुकेषु च ॥ ६०४॥ गले च दक्षदोमूले तन्मध्ये मणिबन्धके ॥ अंगुलीनान्तथा मूले हस्ताग्रे चैवमेव हि ॥ ६०५ ॥ न्यसेद्वामभुजादौ च दक्षोरुमूलके ततः ॥ दक्षजानुनि गुल्फे चांगुलिमूले पदाग्रतः ॥ ६०६ ॥ गम्भीराञ्च मदोन्मत्तान्ततकाञ्चनसन्निभाम् ॥ चतुर्भुजां त्रिनयनां कमलासनसंस्थिताम् ॥ ६०७ ॥ मुद्गरन्दक्षिणे पाशं वामे जिह्वां च वज्रकम् ॥ पीताम्बरधरां सान्द्रवृत्तपीनपयोधराम् ॥ ६०८ ॥ हेमकुण्डलभूषां च पीतचन्द्रार्धशेखराम् ॥ पीतभूषणभूषाञ्च स्वर्णसिंहासनास्थिताम् ॥ ६०९ ॥ एवं ध्यात्वा च देवेशीं शत्रुस्तम्भनकारिणीम् ॥ भूप्रदेशे मनोरम्ये पुष्पामोदसुधूपिते ॥६१०॥ गोमयेनाथ संलिप्ते मण्डले त्वासनं चरेत् ॥ सौवर्णे वाथ रौप्ये वा पैत्तले वापि भूर्ज्जके ॥ ६११ ॥ कर्पूरागरुकस्तूरीश्रीखण्डकुंकुमैरपि ॥ लिखेद्यन्त्रं प्रयत्नेन लेखन्या हेमतारयोः ॥ ६१२ ॥ मध्ये योनिं समालिख्य तद्बाह्ये तु षडस्रकम् ॥ तद्बाह्येष्टदलम्पद्मन्तद्बाह्ये षोडशच्छदम् ॥ चतुरस्रत्रयं बाह्ये चतुर्द्वारोपशोभितम् ॥ ६१३ ॥ यत्रनोक्तन्देवतायाः पीठं वा पीठशक्तयः ॥ तत्र मायोदितं पीठं ज्ञेयास्ता एव शक्तयः ॥ ६१४ ॥ तद्बीजेन यजेत्पीठं यद्वा मायाणुनाथ वा ॥ तत्रावाह्य यजेद्देवीं सुप्रीतैरुपचारकैः ॥ ६१५ ॥ यजेदङ्गानि षट्कोणे पूर्वद्वारादिषु क्रमात् ॥ गणेशं बटुकं चापि योगिनीः क्षेत्रपालकम् ॥ ६१६ ॥ ईशानादिनिर्ऋत्यन्तं गुरुपंक्तिं समर्चयेत् ॥ बगलां पूर्वपत्रे तु स्तम्भिनीं च ततः परम् ॥६१७॥ जृम्भिनीं मोहिनीं चत्र प्रगल्भामचलां जयाम् ॥ दुर्धर्षाकल्मषाधीराकल्याण्याकालकर्षिणीः ॥ भ्रामिकां मन्दगमनां भोग्याख्यां चैव योगिकाम् ॥ ६१८ ॥ एताः षोडशपत्रेषु गन्धपुष्पाक्षतैर्यजेत् ॥ षोडशस्वरसंयुक्ताः सम्प्रदायात्कुलागमे ॥ ६१९ ॥ यजेत्तु पत्रमध्येषु कल्पिते चाष्टपत्रके ॥ पूर्वाद्ब्राह्म्यादिका अष्टौ वाहनायुधसंयुताः ॥६२०॥ लोकेशांश्च तदस्त्राणि पूजयेद्बाह्यतस्तथा ॥ योनिमध्ये मूलदेवीं त्रिरञ्जलिभिरर्च्चयेत्॥६२१॥ धूपदीपसुनैवेद्यैर्गन्धताम्बूलदीपकैः ॥ नीराज्य विधिवत्पश्चाद्यथासंख्यं निवेदयेत् ॥६२२॥ पवित्रारोपणं कार्य्यं दमनेन तु पूजयेत् ॥ देयं चापि सितान्नेन प्रत्यहं बलिपञ्चकम्॥६२३॥

हरिद्राग्रन्थिजा माला पीताम्बरधरः स्वयम् ॥ पीतासनः स्मरेत्पीतं चायुतं जपमाचरेत् ॥ ६२४ ॥ दशांशेन कृते होमे पीतद्रव्यैः प्रतर्प्पयेत् ॥ सर्वपीतोपचारेण मन्त्रः सिद्ध्यति मन्त्रिणः ॥६२५॥ साध्यसञ्ज्ञां समुच्चार्य्य स्तम्भयेति ततः परम् ॥ गतिस्तम्भकरी विद्या अरिस्तम्भनकारिणी ॥ ६२६ ॥ मेधां प्रज्ञां च शास्त्रादीन्देवदानवपन्नगान् ॥ स्तम्भयेच्च महाविद्या सत्यं सत्यं न संशयः॥एकान्ते परमे रम्ये शुचौ देशेथ वा गृहे ॥६२७॥ कुण्डं सलक्षणं कृत्वा मेखलात्रयशोभितम् ॥ योनिर्वितस्तिमात्रा तु षट्कर्म्माण्यत्र साधयेत् ॥ तथाकर्षणकामस्तु लोणं त्रिमधुरान्वितम् ॥ ६२८ ॥ निम्बपत्रैस्तैलयुक्तं विद्वेषणकरं परम् ॥ हरितालं हरिद्रां च लवणेन च संयुताम् ॥ स्तम्भने होमयेद्देवीं प्रज्ञायाश्च गतेर्मतेः॥६२९॥आसुर्य्याश्चापि तैलेन महिषी रुधिरेण च ॥ रिपूणां मारणार्थन्तु श्मशानाग्नौ हुनेन्निशि ॥ गृध्राणामपि काकानां गृहधूमयुतेन वै ॥ ६३० ॥ पक्षेण जुहुयाद्देवि शत्रोरुच्चाटनाय वै॥ पूर्वा कुलालमृत्तावत्येरण्डश्चतुरंगुलः ॥ ६३१ ॥ लाजास्त्रिमधुयुक्ताश्च सर्वरोगोपशान्तये ॥ लक्षमेकं जपेद्देवि ब्रह्मचारी दृढव्रतः ॥ ६३२ ॥ पर्वताग्रे महारण्ये सिद्धे शैवालये गृहे ॥ सङ्गमे च महानद्योर्निशायामपि साधयेत ॥ ६३३ ॥ श्वेतब्रह्मतरोर्मूले पादुकाश्चैव कारयेत् ॥ अलक्तस्य च रागेण रञ्जिताश्च हरिद्रया ॥ ६३४ ॥ अनया विद्यया चापि लक्षैकेन च मन्त्रिताम् ॥ शतयोजनमात्रन्तु स गच्छेच्चिन्तिते पथि ॥ ६३५ ॥ रसं मनःशिला तालं माक्षिकेण समन्वितम् ॥ पिष्ट्वाभिमन्त्र्य लक्षैकं सर्वाङ्गे लेपने कृते ॥ ६३६ ॥ अदृश्यकारकं तत्स्याल्लोके च महदद्भुतम् ॥ सुरभेरेकवर्णाया धारोत्थं क्षीरमाहरेत् ॥ ६३७ ॥ शर्करामधुसंयुक्तंत्रिशतैर्मन्त्रितं प्रिये ॥ पाययित्वा तु हरते विषं स्थावरजङ्गमम् ॥ ६३८ ॥ दारिद्र्यमोचनं चैव लक्षमेकञ्जपेत्ततः ॥ दशांशेन कृते होमे एभिर्द्रव्यैः पृथक्पृथक्॥६३९॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि वाममार्गेण सिद्धिदाम् ॥ इन्द्राण्याः परमां शक्तिं

१ भवेदिति शेषः ॥

छिन्नमस्तां महेश्वरीम् ॥ ६४० ॥ प्रणवश्च[1] रमा लज्जाबीजद्वन्द्वञ्च वाग्भवम् ॥ वज्रवैरोचनीये ह्रींह्रींफट् स्वाहा घनाक्षरः ॥ ६४१ ॥ भैरवोस्य मुनिः प्रोक्तो विराट् छन्द उदाहृतम् ॥ छिन्नमस्ता भवेद्देवी वाममार्गेण सिद्धिदा ॥ ६४२ ॥ आंखङ्गाय[2] हृदाख्यातमीं सुखङ्गाय मस्तकम् ॥ ऊं वज्राय शिखा प्रोक्ता ऐं पाशाय तनुच्छदम् ॥ ६४३ ॥ औं अंकुशाय नेत्रं स्याद्स्त्रासरक्षकाय च ॥ हूंहूं नवार्णोस्त्रमन्त्रः सर्वे स्युः प्रणवादिकाः ॥ स्वाहान्ता सर्वे एवैते ततो ध्यानं समाचरेत् ॥ ६४४ ॥ भास्वन्मण्डलमध्यस्थां विपरीत रते स्थिताम् ॥ रतिकामसमारूढां विकीर्णसकलालकाम् ॥६४५॥ वामे करे निजशिरच्छिन्नं सन्दधतीं पुनः ॥ गलान्निर्गतरक्तञ्च पिबन्तीन्तन्मुखेन च डाकिनीवर्णिनीभ्याञ्च सखीभ्यां परिधारिताम् ॥ ६४६ ॥ आधारशक्तिमारभ्य परतत्त्वान्नपूजिते ॥ पीठे जयाख्या विजया अजिता चापराजिता ॥ ६४७॥ नित्या विलासिनी षष्ठी दोग्ध्री घोरा च मङ्गला ॥ दिक्षु मध्ये च सम्पूज्या नवपीठस्य शक्तयः ॥ ६४८ ॥ सर्वबुद्धिप्रदे[3] वर्णनीये सर्वपदं ततः ॥ सिद्धिप्रदे डाकिनीये प्रणवं वज्रं वै वदेत् ॥ ६४९ ॥ रोचनीये तथैह्येहि नमोन्तः प्रणवादिकः ॥ पीठमन्त्रो वेदवह्निवर्णः पीठार्चने मतः॥६५०॥ त्रिकोणं रसकोणञ्चाष्टदलं भूपुरन्ततः ॥ बाह्यावरणमारभ्य पूजयेत्प्रतिलोमतः॥ ॥ ६५१ ॥ भूपुराद् बाह्यभागेषु वज्रादीनि प्रपूजयेत् ॥ तदन्तः सुरराजादीन् द्वारेषु द्वारपान्यजेत् ॥ ६५२ ॥ करालं विकरालञ्चातिकालं महाकालकम् ॥ एकलिङ्गां योगिनीञ्च डाकिनीम्भैरवीं तथा ॥ ६५३ ॥ महाभैरविकेन्द्राक्ष्यावसिताङ्गीञ्च हारिणीम्[4] ॥ ६५४ ॥ ष् कोणेषु षडङ्गानि त्रिकोणे छिन्नमस्तकाम् ॥ डाकिनी[5] वर्णिनी तारवाग्भ्यां तत्पार्श्वयोर्य-

---

१ ॐ श्रीं ह्रीं ह्रीं ऐं वज्रवैरोचनीये ह्रीं ह्रीं फट् स्वाहा ॥ २ ॐ आं खङ्गाय स्वाहा हृदयाय नमः, ॐ ईं सुखङ्गाय स्वाहा शिरसे स्वाहा, ॐ ऊं वज्राय स्वाहा शिखायै वषट्, ॐ ऐं पाशाय स्वाहा कवचाय हुम्, ॐ अंकुशाय स्वाहा नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ अः त्रासरक्षकाय हूं हूं स्वाहा अस्त्राय फट् ॥ अनया रीत्याषडङ्गन्यासा विधेयाः ॥ ओं सर्वबुद्धिप्रदे वर्णनीये सर्वसिद्धिप्रदे डाकिनीये ओं वज्रवैरोचनीये एह्येहि नमः इति मन्त्रः ॥ ४ सं पुनर्हारिणीमेकत्रकरणेन संहारिणीमिति सिद्धम् ॥ ५ ॐ ऐं डाकिन्यै नमः ॥ ॐ ऐं वर्णिन्यै नमः इति मन्त्रः ॥

जेत् ॥ ६५५ ॥ एवम्पूजा प्रकर्तव्या जपेल्लक्षचतुष्टयम् ॥ पालाशाबल्वज-वर्णापि जुहुयात्कुसुमैः फलैः ॥ ६५६ ॥ तर्प्पणादि ततः कुर्य्यादेवं सिद्धो भवेन्मनुः ॥ श्रीपुष्पैर्लभते लक्ष्मीं तत्फलैश्च समीहि-तम् ॥ ६५७ ॥ वाक्सिद्धिं मालतीपुष्पैश्चम्पकैर्हवनात्सुखम् ॥ घृताक्तं छागमांसं यो जुहुयात्प्रत्यहं शतम् ॥ मासमेकन्तु वशगास्तस्य स्युः सर्वपार्थि-वाः ॥ ६५८ ॥ हयारिकुसुमैः श्वेतैर्लक्षसंख्यं जुहोति यः ॥ रोगजालं परा-भूय सुखी जीवेच्छतं समाः ॥ ६५९ ॥ रक्तैस्तत्सङ्ख्यया हुत्वा वशयेन्मन्त्रि-णो नृपान् ॥ फलैर्हुत्वाप्नुयाल्लक्ष्मीमुदुम्बरपलाशजैः ॥ ६६० ॥ गोमायुमां-सैस्तामेव विवाहं पायसान्धसा ॥ बन्धूककुसुमैर्भाग्यं कर्णिकारैः समीहितम् ॥ ॥ ६६१ ॥ तिलतण्डुलहोमेन वशयेन्निखिलाञ्जनान् ॥ नारीरजोभिराकृष्टं मृगमांसैः समीहितम् ॥ ६६२ ॥ स्तम्भनं माहिषैर्मांसैः पंकजैः सवतैरपि ॥ चिताग्नौ परभृत्पक्षैर्जुहुयादरिमृत्यवे ॥ उन्मत्तकाष्ठदीप्तेऽग्नौ तत्फलं वायसच्छ-दैः ॥ ६६३ ॥ द्यूते वने नपद्वारे समरे वैरिसंकटे ॥ विजयं लभते मन्त्री ध्यायेद्देवीं जपन्मनुम् ॥ ६६४ ॥ भुक्तौ मुक्तौ सितां ध्यायेदुच्चाटे नीलरो-चिषम् ॥ रक्तां वश्ये मतौ धूम्रां स्तम्भने कनकप्रभाम् ॥ ६६५ ॥ निशि दद्याद्बलिं तस्यै सिद्धये मदिरादिना॥ गोपनीयः प्रयोगोऽथ प्रोच्यते सर्वसिद्धिदः ॥ ६६६ ॥ मताहे कृष्णपक्षस्य मध्यरात्रे ततो गते ॥ स्नात्वा रक्ताम्बर-धरो रक्तमाल्यानुलेपनः ॥ ६६७ ॥ आनीय पूजयेन्नारीं छिन्नमस्तास्वरू-पिणीम् ॥ सुन्दरीं यौवनाक्रान्तां नरपञ्चकगामिनीम् ॥ ६६८ ॥ सस्मितां मुक्तकबरीं भूषादानप्रतोषिताम् ॥ विवस्त्रां पूजयित्वैनां चायुतं प्रजपेन्मनुम् ॥ ॥ ६६९ ॥ बलिं दत्त्वा निशां नीत्वा सम्प्रेक्ष्य धनतोषिताम् ॥ भोजयेद्वि-विधैरन्नैर्ब्राह्मणान्देवताधिया ॥६७०॥ अनेन विधिना लक्ष्मीं पुत्रान्पौत्रान् ॥ यशः सुखम्॥ नारीमायुश्चिरं धर्म्मभिष्टमन्यदवाप्नुयात् ॥७३१॥ तस्यां रात्रौ व्रतं कार्य्यं विद्याकामेन मन्त्रिणा॥मनोरथेषु चान्येषु गच्छेत्तां प्रजपेन्मनुम्॥ ॥ ६७२ ॥ किं बहूक्तेन विद्याया अस्या विज्ञानमात्रतः ॥ शास्त्रज्ञानं

१ पूर्वोक्तलक्ष्मीमेव प्राप्नुयादित्यर्थः ॥ २ वाञ्छितम् ॥ ३ प्राप्ते ॥

पापनाशः सर्वसौख्यं लभेद्ध्रुवम् ॥ ६७३ ॥ उषस्युत्थाय शय्यायामुपविश्य जपेच्छतम् ॥ अङ्कमासान्तरे मन्त्री कवित्वेन जयेत्कविम् ॥ ६७४ ॥ शिवेन कीलिता विद्या तदुत्कीलनमुच्यते ॥ माया तारपुटां मन्त्रे जपेदष्टोत्तरं शतम् ॥ ६७५ ॥ मन्त्रस्यादौ तथैवान्ते भवेत्सिद्धिप्रदा तु सा ॥ एष नूनं विधिर्गोप्यः सिद्धिकामेन मन्त्रिणा ॥ ६७६ ॥ उदिता छिन्नमस्तेयं मार्गेऽस्मिन्नतिसिद्धिदा ॥ अथ वक्ष्ये षोडशार्णं चतुर्भेदं मनूत्तमम् ॥ ६७७ ॥ श्रीं[1]ह्रींहूंऐं वज्रवैरोचनीये ह्रीं च हूं प्रिया ॥ दहनस्य तिथिर्वर्णो लक्ष्मीबीजा[2]दिको धने ॥ ६७८ ॥ लज्जा[3]बीजादिको वश्ये हूमाद्येनाघनाशनम् ॥ वाग्बीजाद्येन मोक्षः स्याच्चत्वारः प्रणवादिकाः ॥ ६७९ ॥ भवन्ति षोडशार्णाश्च चतुर्मुखमुखेरिताः ॥ उपास्याश्चतुराम्नायैर्मुनिर्ब्रह्मा समीरितः ॥ ६८० ॥ न्यासपूजादिकं प्राग्वत्किञ्चित्काम्यमिहोच्यते ॥ गुरवे दक्षिणां दद्याद्वस्त्राणि विविधानि च ॥ धर्म्मार्थकाममोक्षाणां गुरुरेव समाश्रयः ॥ ६८१ ॥ साधितोयं महामन्त्रः सर्वसिद्धिप्रदायकः ॥ ददात्यष्टौ महासिद्धीः किम्पुनः क्षुल्लकाः प्रियाः॥ ६८२ ॥ भुक्तौ मुक्तौ च शान्तौ च श्वेतपुष्पं विनिर्दिशेत् ॥ काम्यकर्म्माणि सर्वत्र ध्यानं स्यात्पुष्पवर्णकम् ॥ ६८३ ॥ जाग्रच्छयान उत्तिष्ठन्भुञ्जानः संयमन्नपि ॥ सदाकालं जपेन्मन्त्रमापत्तस्य न विद्यते॥ ६८४ ॥ संलिख्य स्वकरे मन्त्रं मुष्टिबन्धं समाचरेत् ॥ स्तम्भयेत्पशुशस्त्राणि यावन्मुष्टिं न मुञ्चति ॥ ६८५ ॥ लिखित्वा स्वकरे मन्त्रमातुरं संस्पृशञ्जपेत् ॥ विमुच्यते हठाद्रोगान्मुक्तरोगः सुखी भवेत् ॥ ६८६ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि विश्ववर्णं महामनुम् ॥ वज्रवैरोचनीये हूंह्रींश्रींस्वाहाध्रुवादिकः॥ ध्यानपूजादिकं प्राग्वत्किञ्चित्काम्यमुदीर्य्यते॥ ६८७ ॥ शुक्लेन ध्यानमात्रेण मन्त्रमेनं जपेच्च यः॥ महोरगशतैर्दष्टं मृतमुत्थापयेन्नरः॥ ६८८ ॥ रक्तेन वशमायान्ति सर्वभूतलवासिनः पीतेन स्तम्भयेन्नित्यं नौकावाजिगजादिकम् ॥ ६८९ ॥ लिखित्वा स्वकरे मन्त्रं

१ श्रीं ह्रीं एं ऐं वज्रवैरोचनीये ह्रीं हूं स्वाहा अयं मन्त्रः पञ्चदशाक्षरः ॥ २ श्रीं बीजमादौ संयोज्य पूर्वोक्तमन्त्रो धनाप्तिकर इति भावः ॥ ३ ह्रीं श्रीं हूं ऐं वज्रवैरोचनीये ह्रीं हूं स्वाहा अयं वशीकरणमन्त्रः ॥

यावन्मुष्टिं न मुञ्चति ॥ कृतेन ध्यानमात्रेण रिपूनुच्चाटयेन्नरः ॥ मारयेदप्ययत्नेन कृष्णध्यानान्न संशयः ॥ ६९० ॥ तर्प्पणं च प्रकुर्वीत पयसा पायसेन च॥ घृतेन मधुना वापि सुरया तत्र साधकः॥६९१॥ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यः शूद्रश्चेति यथाक्रमम् ॥ तर्प्पणस्य विधानेन हठात्सिद्धः प्रजायते ॥६९२॥ ततो होमं प्रकुर्वीत समिद्भिः कुसुमैस्तथा ॥ श्रीफलानां च होमेन तथैवोदुम्बरस्य च ॥ ६९३ ॥ सर्वसिद्धिप्रदो होमो विधातव्यः प्रयत्नतः ॥ शतमष्टोत्तरं कृत्वा जुहुयात्तर्प्पणोत्तरम् ॥ ६९४ ॥ पुष्पहोमविधिं वक्ष्ये सर्वकामसमृद्धिदम् ॥ नित्यमष्टोत्तरशतं मासषट्कं समाचरेत् ॥ ६९५ ॥ अथ वा लक्षमात्रन्तु कुर्य्यात्सिद्धिर्भवेद्ध्रुवम् ॥ आज्ययुक्तः सामिषश्च होमान्ते प्रत्यहं बलिः ॥ ६९६ ॥ श्वेताश्वमारकुसुमैर्जीवयेत्कालदष्टकम् ॥ मध्वक्ततिलपुष्पैस्तु भवेत्सम्पत्तिरुत्तमा ॥ ६९७ ॥ कर्णिकारैश्च सातिलैः सहस्रैः सुन्दरीं लभेत॥ साज्यैर्बन्धूककुसुमैरयुतैः सुभगो भवेत् ॥ ६९८ ॥ बन्धूकपुष्पैः सातिलैस्तण्डुलैश्च विमिश्रितैः ॥ रक्तचन्दनरक्ताश्वमारपुष्पैर्नृपो वशः ॥ ६९९ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि तारामन्त्रान्कवित्वदान् ॥ सम्यग्गुरुमुखात्प्राप्तान् वामाचारेण साधितान् ॥ ७०० ॥ यद्यदृष्टवशाल्लाभो मन्त्रस्यास्य प्रजायते ॥ ज्येष्ठपुत्राय दातव्यो नान्येभ्यश्च कदाचन ॥ ७०१ ॥ ये मन्त्रा वाममार्गेण उपास्यन्ते तु तेऽखिलाः ॥ स्वपुत्रादौ प्रदातव्या दक्षिणा न कदाचन ॥ ॥ ७०२ ॥ यो विप्रः स्वकुलं हित्वा दक्षिणाय प्रयच्छति ॥ वाममार्गोपासनन्तु तौ द्वौ लोकद्वयाच्च्युतौ ॥ ७०३ ॥ ॐ मायात्रीं हुंफडिति पञ्चवर्णो मनुर्मतः ॥ मुनिरक्षोभ्यसञ्ज्ञोऽस्य बृहती छन्द ईरितम् ॥ ७०४ ॥ तारा देवी ह्रीं च बीजं हुं शक्तिश्चात्र कीर्तिता॥[1]षड्दीर्घयुग्लज्जयात्र षडङ्गविधिरीरितः ॥ ७०५ ॥ न्यासषट्कं ततः कुर्य्यात्तारायाः सर्वसिद्धिदम् ॥ तत्रादौ प्रथमो न्यासः[3] श्रीकण्ठादिः पुरोदितः ॥ ७०६ ॥ मातृकाक्षरमुच्चार्य्य ह्रींत्रींहुंपूर्वकं वदेत् ॥ श्रीकण्ठादिसपत्नीकं नमोन्तं मातृकास्थले ॥ ७०७ ॥ विन्यस्य

---

१ जपमिति शेषः । २ ह्रांह्रींह्रूंह्रैंह्रौंह्रः एष्वेकैकेन षडङ्गन्यासं कुर्य्यात् ॥ ३ श्रीकण्ठादिन्यासस्तु पूर्वमुक्तः तेनात्र नावाचि ॥

च चतुर्थ्यन्तं न्यासोयम्प्रथमः स्मृतः ॥ अस्मिन्न्यासे क्रियमाणे देवीमेवंविधा स्मरेत् ॥ ७०८ ॥ शवपीठसमासीनां नीलकान्तिन्त्रिलोचनाम् ॥ अर्धेन्दु-शेखरां नानाभूषणाढ्यां चतुर्भुजाम्॥ ७०९ ॥ द्वितीयन्तु ग्रहन्यासं कुर्यात्तां समनुस्मरन् ॥ त्रिबीजस्वरपूर्वं तु रक्तं सूर्य्यं हृदि न्यसेत् ॥ ७१० ॥ तथा-ह्यवर्गपूर्वं तु सोमं शुक्लं भ्रुवोर्द्वयोः ॥ एवम्मन्त्रविधानज्ञः कवर्गाद्यञ्च मङ्गलम्॥ ॥ ७११ ॥ रक्तं नेत्रत्रये चापि चवर्गाद्यं च वक्षसि ॥ बुधं श्यामं न्यसेत्पीतं टवर्गाद्यं गले गुरुम् ॥ ७१२ ॥ तवर्गाद्यं श्वेतवर्णं वण्टिकायान्तु भार्गवम् ॥ नीलवर्णं पवर्गाद्यं नाभिदेशे शनैश्चरम् ॥ ७१३ ॥ शवर्गाद्यं धूम्रवर्णं ध्यात्वा राहुं न्यसेन्मुखे ॥ लक्षाद्यं धूम्रवर्णाभं केतुं नाभौ पुनर्न्यसेत् ॥ ७१४ ॥ न्यासन्तृतीयं वक्ष्यामि बीजत्रितयपूर्वकम् ॥ समानवर्णानुच्चार्य्य प्रागिन्द्राय नमोस्तु के ॥ ७१५ ॥ दीर्घस्वरसमायुक्तं चाग्नेय्यामग्नये नमः ॥ दक्षिणे यमाय नमः कवर्गाद्यं ललाटके ॥ ७१६ ॥ चवर्गाद्यं च नैर्ऋत्यां नैर्ऋत्याय नमो मुखे ॥ टवर्गाद्यं गले पश्चाद्वरुणाय नमस्त्विति ॥ ७१७ ॥ न्यसेद्धृदि तवर्गाद्यं वायव्यां वायवे नमः ॥ पवर्गाद्यं कुबेराय नमो वै दक्षिणे करे ॥ ॥ ७१८ ॥ वामहस्ते यवर्गादीशाने रुद्राय हृद्भवेत् ॥ शवर्गाद्यूर्ध्वकामाय नमो नाभौ तु विन्यसेत् ॥ हुं लक्षाद्यं पृथिव्यै हृत्पादयोरिति विन्यसेत् ॥ ॥ ७१९ ॥ शिवशक्त्याभिधो न्यासश्चतुर्थः कथ्यतेधुना ॥ ह्रींत्रींहुंपूर्वकः कार्य इन्द्रियाघहरः परः ॥ ७२० ॥ ब्रह्माणं डाकिनीयुक्तं वादिसान्तार्णपूर्व-कम् ॥ मूलाधारे न्यसेच्चैव चतुर्दलसमन्विते ॥ ७२१ ॥ श्रीविष्णुं शाक्ति-

---

१ ह्रीं त्रीं हुं अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं ॡं एं ऐं ओं औं अं अः रक्तवर्णाय सूर्य्याय हृदि, ह्रींत्रीं हुं यं रं लं वं शुक्लवर्णाय सोमाय नमः भ्रुवोः, ह्रीं त्रीं हुं कं खं गं घं ङं रक्तवर्णाय मङ्गलाय नमः लोचनत्रये, ह्रीं त्रीं हुं चं छं जं झं ञं श्यामवर्णाय बुधाय नमः वक्षसि, इत्थं शेषग्रहन्यासः कर्त्तव्यः ॥ २ ह्रीं त्रीं हुं अं इं उं ऋं लृं ऐं ओं अं मूर्ध्नि पूर्वे इन्द्राय नमः, ह्रीं त्रीं हुं आं ईं ऊं ॠं ॡं ऐं औं अः मूर्ध्न्याग्नेय्यामग्नये नमः, ह्रीं त्रीं हुं कं खं गं घं ङं दक्षिणे यमाय नमो मुखे, इत्यादि ॥ ३ ह्रीं त्रीं हुं वं शं षं सं डाकिनीयुक्ताय ब्रह्मणे नमः मूलाधारे, ह्रीं त्रीं हुं बं भं मं यं रं लं शाकिनीयुक्ताविष्णवे नमः स्वाधिष्ठाने, डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं लाकिनीयुक्त-रुद्राय नमः मणिपूरके ॥

नीयुक्तं वादिलान्तार्णपूर्वकम् ॥ स्वाधिष्ठानाभिधे चक्रे लिङ्गस्थे षड्दले न्यसेत ॥ ७२२ ॥ रुद्रन्तु लाकिनीयुक्तं डादिफान्तार्णपूर्वकम् ॥ न्यसेच्चक्रे दशदले नाभिस्थे मणिपूरके॥ ७२३ ॥ईश्वरं कादिठान्तार्णपूर्वकं काकिनीयुतम्॥ विन्यसेद्द्वादशदले हृदयस्थे त्वनाहते ॥ ७२४ ॥सदाशिवं शाकिनीं च षोडशस्वरसंयुताम्॥ कण्ठस्थे षोडशदले विशुद्धाख्ये प्रविन्यसेत् ॥ ७२५॥ आज्ञाचक्रे परशिवं हाकिनीसंयुतं तथा ॥ हक्षार्णपूर्वं भ्रूमध्यसंस्थितेतिमनोहरे ॥ ७२६ ॥ वक्ष्येथ पञ्चमं न्यासं समस्तारिष्टनाशनम् ॥ अंआंकवर्गं ह्रींत्रींहुं तारायै नम-उच्यते ॥ ७२७ ॥ विन्यसेद् ब्रह्मरन्ध्रेथ इंईं चापि चवर्गकम् ॥ ह्रींत्रींहुं नम उग्रायै ललाटे चापि विन्यसेत् ॥ ७२८ ॥ उंऊं टवर्गं ह्रींत्रींहुं महोग्रायै नमो भवेत् ॥ विन्यसेच्च भ्रुवोर्मध्ये कण्ठे ऋंॠं तवर्गकम् ॥ ह्रींत्रींहुं च वज्रायै नमोन्तं सकलेष्वपि ॥ ७२९ लृंॡं पवर्गं ह्रींत्रींहुं नमः काल्यै हृदि न्यसेत्॥ एंऐं यवर्गं ह्रींत्रींहुं सरस्वत्यै च नाभिके ॥ ओंऔं सवर्गं ह्रींत्रींहुं कामेश्वर्य्यै च लिङ्गके ॥ ७३० ॥ अंअः लक्षौ च ह्रींत्रींहुं चामुण्डायै नमो न्यसेत् ॥ मूलाधारे न्यसेत्पश्चात्पीठन्यासं समाचरेत् ॥ ७३१ ॥ आधारे कामरूपाख्यं बीजह्रस्वार्णपूर्वकम् ॥ हृदि जालन्धरं पीठं दीर्घपूर्वं प्रविन्यसेत् ॥ ७३२ ॥ ललाटे पूर्णगिर्य्याख्यं कवर्गाद्यं न्यसेत्सुधीः॥ उड्डियानं चवर्गाद्यं केशसन्धौ प्रविन्यसेत्॥ ७३३ ॥ भ्रुवोर्वाराणसीपीठं टवर्गाद्यं समाहितम् ॥ तवर्गपूर्विकां न्यस्येदवन्तीं नयनद्वये ॥ ७३४ ॥ पवर्गपूर्वकं मायापुरीपीठं मुखे-न्यसेत् ॥ कण्ठे तु मथुरापीठं यवर्गाद्यं प्रविन्यसेत् ॥ ७३५ ॥ नाभावयोध्या पठिन्तु शवर्गाद्यं प्रविन्यसेत् ॥ कटौ काञ्चीपुरीपीठं दशमन्तु प्रविन्यसेत् ॥

---

१ ह्रीं त्रीं हुं अं आं कं खं गं घं ङं तारायै नमः ब्रह्मरन्ध्रे, ह्रीं त्रीं हुं इं ईं चं छं जं झं ञं उग्रायै नमः ललाटे, ह्रीं त्रीं हुं उं ऊं टं ठं डं ढं णं महोग्रायै नमो भ्रुवोः, अग्रेप्येवं ज्ञेयम् ॥ २ ह्रीं त्रीं हुं अं इं उं ऋं लृं एं ओं अं कामरूपपीठाय नम आधारे ॥ ३ ह्रीं त्रीं हुं आं ईं ऊं ॠं ॡं ऐं औं अः जालन्धरपीठाय नमः हृदि ॥ ४ ह्रीं त्रीं हुं कं खं गं घं ङं पूर्णगिरिपीठाय नमः ललाटे ॥ ५ ह्रीं त्रीं हुं चं छं जं झं ञं उड्डियानपीठाय नमः केशसन्धौ ॥ ६ ह्रीं त्रीं हुं टं ठं डं ढं णं वाराणसीपीठाय नमः भ्रुवोः ॥ ७ ह्रीं त्रीं हुं तं थं दं धं नं अवन्तीपीठाय नमः नयनद्वये इत्यादि ॥

॥ ७३६ ॥ षोढा न्यासस्तु तारायाः ओक्तोभीष्टप्रदायकः॥ महाप्रलयपानीये लसच्छ्वेताम्बुजास्थिताम् ॥७३७॥ कर्त्री खड्गं नीलपद्मं कपालं दधतीं करैः॥ सर्पकाञ्चीं सर्पकरां सर्पकंकणकुण्डलाम्॥७३८॥सर्पकेयूरमञ्जीरां नीलाभां रक्तलोचनाम् ॥ पिङ्गोग्रैकजटां त्र्यक्षां व्याघ्रत्वक्परिधायिनीम् ॥७३९ ॥ दंष्ट्राकरालवदनां ललज्जिह्वां स्मिताननाम् ॥ नरास्थिपट्टं बध्नन्तीं भालेऽक्षोभ्यमुनीश्वराम्॥७४०॥स्थापयन्तीं च तदधो ध्यायेच्छवहृदासनाम्॥ नानाप्रकारपूजास्यास्तन्त्रेतन्त्रे प्रकाशिता ॥७४१॥ जपात्सिद्धिरवश्यं स्यात्सा पूजात्र निगद्यते ॥संस्कारा वैदिका यस्य तस्मै विद्या न सिध्यति ॥७४२॥ लोभाद्वा मोहतो दद्याद् गृह्णीयाद्यदि वैदिकः ॥ उभयोः कुलनाशः स्याद्दारिद्र्यो जन्मजन्मनि ॥ ७४३ ॥ शक्रे तु वैभवोन्मत्ते ब्रह्मविष्णुमहेश्वरैः ॥ साधिता वाममार्गेण देवानां विजयाय च ॥ ७४४ ॥ जनयित्वा वारणादीन्मानयित्वा सुरेश्वरम् ॥ स्वविक्रमं ख्यापयित्वा शक्रो देवपतिः कृतः ॥७४५॥ उत्कर्षकारिणी तस्माद्वाममार्गेण साधिता॥कृत्वा तु तान्त्रिकस्नानम्पूजार्थं जलमाहरेत्॥ ॥ ७४६ ॥ तारं वज्रोदके हुंफट् सप्तार्णोयंजलग्रहे ॥ उपानत्पादुके त्यक्त्वा पूजको जलमाहरेत् ॥ ७४७ ॥ त्रिधा चाचमनम्पश्चादनेन मनुना चरेत् ॥ तारं मायां सुविशुद्धधर्म्मसर्वपदं वदेत् ॥ ७४८ ॥ पापानि शाम्याशेषेति विकल्पानयनेति च ॥ यः स्वाहेति च षड्विंशदर्ण आचमने मनुः ॥ ७४९ ॥ ततः कुर्य्याच्छिखाबन्धम्मन्त्रेणानेन ॐमणि ॥ धरिवज्रिणि शिखरिणि च सर्ववशङ्करे॥७५०॥णि हुंफट् वह्निजायान्तस्त्रयोविंशतिवर्णकः ॥ भूमिशुद्धिं नवार्णेन ततः कुर्य्यात्तु साधकः ॥७५१॥ ॐरक्षरक्ष हुं चास्त्रं स्वाहा मन्त्रो-नवाक्षरः॥त्रयोदशार्णमन्त्रेण विघ्नानुत्सारयेत्ततः॥ ७५२॥ॐसर्वविघ्नानुत्सारय हुंफट् ज्वलनप्रिया ॥७५३॥ मायाबीजं जपापुष्पनिभं नाभौ विचिन्तयेत् ॥ तदुत्थेनाग्निना देहन्दहेत्सार्द्धं स्वपाप्मना ॥ ७५४ ॥ त्रीं बीजन्तु सुवर्णाभं

१ ॐ वज्रोदके हुं फट् ॥ २ ॐ ह्रीं सुविशुद्धधर्म्मसर्वपापानिशाम्याशेषविकल्पानयनाय स्वाहा ॥ ३ ॐ मणिधरि वज्रिणि शिखरिणि सर्ववशङ्करिणि हुंफट् स्वाहा ॥ ४ ॐ रक्षरक्ष हुं फट् स्वाहा ॥ ५ ॐ सर्वविघ्नानुत्सारय हुंफट् स्वाहा ॥ ६ ह्रीम् ॥

चिन्तयेद्धृदि मन्त्रवित् ॥ पवनेन तदुत्थेन पापभस्म क्षिपेद्भुवि ॥ ७५५ ॥ हुंबीजमिन्दुकुन्दाभं भाले ध्यायेच्च भावतः ॥ अनया भूतशुद्धया तु देवीसादृश्यमाप्नुयात्॥ ७५६॥ ततस्तु देव्याः पूजार्थं मन्त्रयेत्काश्यपीं ध्रुवम् ॥ पवित्रवज्र भूमे हुंस्वाहा मन्त्रो भवाक्षरः॥ ७५७॥ द्वादशार्णेन मन्त्रेण भूमौ कुर्य्याच्च मण्डलम्॥ आसुरे खे वज्ररेखे हुंस्वाहाप्रणवादिकः ॥ ७५८॥ चतुर्दशार्णमनुना कसुमानि सुशोधयेत्॥ यथागताभिषेकेति सामग्री मे पदं वदेत् ॥ तारादिहुँफट्स्वाहान्तो नृपवर्णो मनुर्मतः ॥ ७५९ ॥ ततः संशोधयेच्चित्तं पञ्चार्णेन सुसाधकः ॥ ॐआंह्रीं वह्निगृहिणी पञ्चार्णश्चित्तशोधने ॥ ७६० ॥ अथार्घ्यस्थापनार्थन्तु लंवं चोक्त्वा प्रमार्जयेत् ॥ भूमिं पूर्वोक्तमन्त्रेण मण्डलस्य तु मण्डलम् ॥ ७६१ ॥ कुर्य्याद्वृत्तं त्रिकोणं च भूपुरन्तस्य बाह्यतः ॥ कुर्य्यात्तत्राधारशक्तिं कूर्म्मं शेषं च संयजेत् ॥ ७६२ ॥ आधारं स्थापयेत्तत्र ॐह्रीं फडिति मन्त्रतः ॥ आधारं पूजयेत्तत्र वं वँह्निमण्डलाय च ॥ ७६३॥ नमोन्तेन नवार्णेन ततो नरकपालकम् ॥ हुंफट्मन्त्रेण संक्षाल्य स्थींबीजेन निवेशयेत् ॥ ७६४ ॥ ततोर्चयेन्नृकपालन्तज्जपेन्मन्त्रचतुष्टयम् ॥ कालीकपालाय नमो ह्रांह्रींह्रूंपूर्वकं वदेत् ॥ एकादशाक्षरो मन्त्रस्तेनपूजादिकम्मतम् ॥ ७६५ ॥ स्त्रांस्त्रींस्त्रूंतारिणीत्युक्त्वा कपालाय नमोन्तकः ॥ द्वादशार्णेनात्रभवेत्कपालार्चा द्वितीयिका ॥ ७६६ ॥ ह्रांह्रींह्रूं प्रोच्य नीलकपालाय नम इत्ययम् ॥ एकादशार्णोनेनोक्ता कपालार्चा तृतीयिका ॥ ७६७॥ ह्रींयांस्त्रींहुं स्वर्गकपालाय सर्वापदं वदेत् ॥ ततो धाराय सर्वाय तथा सर्वोद्भवाय च ॥ ७६८ ॥ सर्वशुद्धिमयायेति सर्वासुररुधीति च ॥ रारुणाय च शुभ्रायेतिसुराभाजनाय च ॥ ७६९ ॥ देवीकपालाय नमश्चतुर्थो मन्त्र ईरितः ॥

---

१ पृथिवीम्॥ २ ओङ्कारम् ॥ ३ ॐ पवित्रवज्रभूमे हुंफट्स्वाहा॥ ४ ॐ आसुरेखे वज्ररेखे हुं स्वाहा॥ ५ ॐ यथाभिषेकसामग्री मे हुंफट्स्वाहा ॥ ६ ॐ ओं ह्रीं स्वाहा ॥ ७ ॐ वं वह्निमण्डलाय नमः ॥ ८ ह्रांह्रींह्रूं कालीकपालाय नमः ॥ ९ स्त्रांस्त्रींस्त्रूं तारिणीकपालाय नमः ॥ १० ह्रां ह्रीं ह्रं नीलकपालाय नमः ॥ ११ ह्रीं स्त्रीं हुं स्वर्गकपालाय सर्वाधाराय सर्वाय सर्वोद्भवाय सर्वशुद्धिमयाय सर्वासुररुधिरारुणाय शुभ्राय सुराभाजनाय देवीकपालाय नमः ॥

षट्पञ्चाशत्कवर्णोयं कपालस्य तु पूजने ॥ ७७० ॥ ततस्तस्मिन्कपाले तु पूजयेदर्कमण्डलम् ॥ ॐसूर्य्यमण्डलायेति नमोन्तोयं नवाक्षरः ॥ ७७१ ॥ सूर्य्यमण्डलपूजायां नृकपाले मनुर्मतः ॥ मूलमन्त्रं पठंस्तस्मिन्सुधाबुद्ध्या सुरां क्षिपेत् ॥ ७७२ ॥ गन्धपुष्पाक्षतान् क्षिप्त्वा त्रिखण्डाख्यां प्रदर्शयेत् ॥ मुद्रां सा तु करौ व्यस्तावंगुष्ठौ कारयेत्समौ ॥ ७७३ ॥ अनामान्तर्गते कृत्वा तर्ज्जन्यौ कुटिलाकृती ॥ कनिष्ठिके निजस्थाने त्रिखण्डाह्वानकर्म्मणि ॥ ७७४ ॥ ततस्तस्यां सुरायान्तु पूजयेच्चन्द्रमण्डलम् ॥ एकादशार्णेन ततः शंखतोयन्तु मन्त्रयेत् ॥ ७७५ ॥ ह्रींश्रींह्रौमों समुच्चार्य्य ह्रींत्रींहुंफट् समुच्चरेत् ॥ ह्सौ ह्रुमिति वागाद्यो मन्त्र एकादशाक्षरः ॥ ७७६ ॥ ह्रींबीजेन ततो मद्यं किञ्चिच्छङ्खाम्बुना क्षिपेत् ॥ शंखमुद्रां योनिमुद्रां शंखतोयाय दर्शयेत् ॥ ७७७ ॥ तत्र वृत्ताष्टषट्कोणं ध्यात्वा देवीं विचिन्तयेत् ॥ पूर्वोक्तां पूजयित्वैनां मूलेनाथ प्रतर्प्पयेत् ॥ ७७८ ॥ तर्जनी मध्यमानामाकनिष्ठाभिर्महेश्वरीम् ॥ सांगुष्ठाभिश्चतुर्वारं महाशंखस्थिते जले ॥ ७७९ ॥ पञ्चाक्षराणुना पश्चात्संतर्प्यानन्दभैरवम् ॥ ॐह्रौंह्सौं च नमोन्तोयं मन्त्रो भैरवपूजने ॥ ७८० ॥ ततस्तेनार्घ्यतोयेन प्रोक्ष्य पूजनसाधनम् ॥ योनिमुद्रां प्रदर्श्याथ प्रणमेद्भवतारिणीम् ॥ ७८१ ॥ ततस्तां पूजयेत्पीठे पद्मे षट्कोणकर्णिके ॥ धरागृहावृते पीठमादावर्च्य सशक्तिकम् ॥ ७८२ ॥ ऐंक्लौं सरस्वतीत्युक्त्वा योगपीठात्मने नमः ॥ चर्तुदशाक्षरो मन्त्रः प्रोक्तः पीठस्य पूजने ॥ ७८३ ॥ मेधा प्रज्ञा प्रभा विद्या धीधृतिस्मृतिबुद्धयः ॥ विद्येश्वरीति सम्प्रोक्ता पीठस्य नव शक्तयः ॥ ७८४ ॥ महीगृहचतुर्दिक्षु गणेशं बटुकन्तथा ॥ क्षेत्रपालं योगिनीं च ध्यात्वा सम्यक्प्रपूजयेत् ॥ ७८५ ॥ पाशां-

---

१ ॐ ह्रीं त्रीं हुं फट् ॥ २ ॐ सोममण्डलाय नमः । अयं चन्द्रमण्डलार्चनमन्त्रः ॥ ३ ऐं ह्रीं श्रीं ह्रौं ॐ ह्रीं त्रीं हुं फट् ह्सौ ह्रुमित्येकादशाक्षरो मन्त्रः ॥ ४ वामांगुष्ठं तु संगृह्य दक्षहस्तस्य मुष्टिना । कृतोत्तानां तथामुष्टिमंगुष्ठं तु प्रसारयेत् ॥ वामागुंल्यस्तथा शिष्टाः संयुताः सुप्रसादिताः ॥ दक्षिणांगुष्ठके लग्ना मुद्रा शंखस्य भूतिदा ॥ ५ मिथः कनिष्ठिके बध्वा । तर्जनीभ्यामनामिके ॥ अनामिकोर्ध्वे संश्लिष्टदीर्घमध्यमयोरधः। अंगुष्ठाग्रद्वयं न्यस्य योनिमुद्रेयमीरिता।

कुशौ त्रिशूलं च कपालं दधतं करैः ॥ अलंकारचयोपेतं गणेशं प्राक्प्रपूजयेत् ॥ ७८६ ॥ कपालशूले हस्ताभ्यां दधतं सर्प्पभूषणम् ॥ श्वयूथवेष्टितं रम्यं वटुकं दक्षिणेऽर्चयेत् ॥ ७८७ ॥ डमर्वसित्रिशूलांश्च कपालं दधतं करैः ॥ कृष्णं दिगम्बरं क्रूरं क्षेत्रपं पश्चिमे यजेत् ॥ ७८८ ॥ डमरुं पाशलिङ्गे च कपालं दधतीं करैः ॥ रक्तमाल्यां रक्तवस्त्रां योगिनीमुत्तरे यजेत् ॥७८९॥ ततः सम्पूजयेद्देव्या मस्तकेऽक्षोभ्यसंज्ञकम् ॥ मुनिं द्वादशवर्णेन मनुना स निगद्यते ॥७९० [1]अक्षोभ्य वज्रपुष्पं च प्रतीच्छानलवल्लभा ॥ अथ सम्पूजयेत्कोणषट्के देव्या षडङ्गकम् ॥ ७९१ ॥ ततश्चाष्टदलादिक्षु यजेद्वैरोचनामितौ ॥ [2]पद्मनाभं शंखपाण्डुरं पूर्वादौ समर्चयेत् ॥७९२॥ [3]आग्नेयादिकपत्रेषु लामकां मामकान्तथा ॥ पाण्डुरां तारकां चापि भूगृहद्वारतोर्चयेत् ॥ ७९३ ॥ [4]प्रागादिषु क्रमेणैव पद्मान्तकयमान्तकौ ॥ विघ्नान्तकं नरान्तं च वक्ष्यन्ते मनवोर्चने ॥ ७९४ ॥ आदौ प्रणवमुच्चार्य्य नामबीजं समुच्चरेत् ॥ सम्बुद्ध्यतं च तन्नाम वज्रपुष्पम्प्रतीच्छ च ॥ ७९५ ॥ स्वाहान्तो मनुराख्यातो द्वादशानामयं क्रमः ॥ शक्रादींश्चापि वज्रादीन् पूजयेत्तदनन्तरम् ॥७९६॥ ततश्च नित्यपूजान्तेन्वहं देव्यै बलिं हरेत् ॥ मद्याम्बुमीनपिशितमुद्रापिष्टम्भवेद्यथा ॥ ७९७ ॥ तृप्तिः स्वस्य तु तन्मानन्तत्र मन्त्रो निगद्यते ॥ [5]श्रीमदेकजटे नीलसरस्वति महोग्र च ॥ ७९८ ॥ तारे देवि खखेत्युक्त्वा सर्वभूतपिशाचराक्षसान् ग्रसग्रस मम जाड्यं छेदयछेदय ॥ ७९९ ॥ श्रींह्रीं फट्वह्निजायान्तस्तारमायादिको मनुः ॥ भवेद्द्विपञ्चाशदर्णः पूजैवेष्टार्णतामियात् ॥८००॥ रतं कुर्वन्नदन्भक्ष्यमनेकन्दधि मध्वपि ॥ मद्यं मांसं च ताम्बूलञ्च-

---

१ अक्षोभ्य वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा॥ २चतुर्थ्यन्ति शेषः मन्त्रो यथा ॐ वैं वैरोचन वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा, ॐ अं अमितवज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा, ॐ पं पद्मनाभवज्र०, ॐ शं शंखपाण्डुरवज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा॥ ३ ॐ लांलामके वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा, ॐ मां मामके वज्र०, ॐ पां पाण्डुरे वज्र०, ॐ तां तारके वज्रपुष्पं प्र०॥ ४ भूपुरस्य चतुर्द्वारेषु पूर्वादिषु क्रमेणं यजेत्तन्मन्त्रानाह ॐ पं पद्मान्तक वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा, ॐ यं यमान्तक वज्र०, ॐ विं विघ्नान्तक वज्र०, ॐ नं नरान्तक वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा ॥ ५ ॐ ह्रीं श्रीमदेकजटे नीलसरस्वति महोग्रतारे देवि खखसर्वभूतपिशाचराक्षसान् ग्रसग्रस मम जाड्यं छेदयछेदय श्रींह्रींफट्स्वाहा ॥

पेल्लक्षचतुष्टयम् ॥ ८०१ ॥ दशांशं जुहुयाद्रक्तपद्मैः क्षीराज्यलोलितैः ॥ आदौ यन्त्रम्पूजयित्वा जपस्थाने जपञ्चरेत् ॥ ८०२ ॥ नारीं पश्यन्स्पृशन् गच्छन् महानिशि बलिं हरेत् ॥ न कार्य्यः सुभ्रुवां द्वेषो यत्नतः परिपूजयेत् ॥ ८०३ ॥ जपे न कालनियमो न स्थितौ सर्वदा जपेत ॥ श्मशाने शून्यसदने देवागारेथ निर्जने ॥ ८०४ ॥ पर्वते वनमध्ये वा शवमारुह्य मन्त्रवित ॥ समरे शत्रुनिहतं यदा षण्मासिकं शिशुम् ॥ ८०५ ॥ विद्यां संसाधयेच्छीघ्रं साधितैवम्प्रसिद्ध्यति ॥ एवं सिद्धमनुर्मन्त्री प्रयोगान्कर्त्तुमर्हति॥ ॥ ८०६ ॥ जातमात्रस्य बालस्य दिवसत्रितयादधः ॥ जिह्वायां स लिखेन्मन्त्रम्मध्वाज्याभ्यां शलाकया ॥ ८०७ ॥ सुवर्णकृतया यद्वा मन्त्री धवलदूर्वया ॥ गतेऽष्टमेब्दे बालोसौ जायते कविराड् ध्रुवम् ॥ ८०८ ॥ सूर्य्यग्रहे भवेत्काष्ठम्पद्मयुक्तं सरोवरे ॥ तच्च जलमध्ये तत्समानीय तटे पुनः ॥ ॥ ८०९ ॥ दन्तैर्धृत्वा ततः कुर्य्याल्लेखनीं द्वादशांगुलाम् ॥ मधुतैलसुराभिश्च संलिखेत्पद्मिनीदले ॥ ८१० ॥ मूलमन्त्रं मातृकार्णैर्मन्त्री सम्यक्प्रवेष्टयेत् ॥ निखाय तद्दलं कुण्डे चतुरस्रे समेखले ॥ ८११ ॥ संस्थाप्य पावकन्तत्र हुनेन्मूलाणुना ततः ॥ गोदुग्धमदिराक्तन्तु रक्तपद्मसहस्रकम् ॥ होमान्ते तेन मनुना पूर्वद्रव्यैर्बलिं हरेत् ॥८१२॥पद्मेपद्मे महापद्मे पद्मावति च इत्यपि ॥ स्वाहान्तः प्रणवादिश्च मन्त्रोयं षोडशाक्षरः ॥ ८१३ ॥ ततो निशीथेपि बलिं पूर्वोक्तमनुना हरेत् ॥ एवंकृते पण्डितानामजेयः कविराड् भवेत् ॥ निवासो भारतीलक्ष्म्योर्जनतारञ्जनक्षमः ॥ ८१४ ॥ गोरोचनामनेनैव मनुना तु शतञ्जपेत् ॥ ललाटे तिलकं कृत्वा यं पश्येत्स तु दासवत् ॥ ॥ ८१५ ॥ श्मशानाङ्गारमाहृत्य शर्वर्य्यां भौमवासरे ॥ कृष्णाम्बरेण संवेष्ट्य निबद्धं रक्ततन्तुभिः ॥ ८१६ ॥ शताभिजप्तम्मूलेन निक्षिपेद्वैरिवेश्मनि॥ उच्चाटयति सप्ताहात्सकुटुम्बं न संशयः ॥८१७॥ क्षाराढ्यया निशामन्त्रं लिखित्वा पौरुषेस्थिनि ॥ रविवारे निशीथिन्यां सहस्रमभिमन्त्रयेत् ॥ ॥ ८१८ ॥ तत्क्षिप्तं शत्रुभवने मण्डलभ्रंशकं भवेत् ॥ क्षेत्रे क्षिप्तं सस्यहान्यै

१ हारिद्रया ॥

जवह्नतुरगालये ॥ ८१९ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि दैत्यानां वरसिद्धये ॥ ब्रह्मणोपासितान्तारां बल्यादिभिरुपासिताम् ॥ ॐ त्रीं ह्रीं हूं समुच्चार्य-ह्रींहुंफट् सप्तवर्णकः ॥८२०॥ मुनिर्ब्रह्मा च गायत्री छन्दस्तारा च देवता ॥ न्यासांस्तु पूर्ववत्कुर्याद्ध्यानमस्या निरूप्यते ॥ श्वेताम्बरां चन्द्रकान्ति-चन्द्रार्धकृतशेखराम् ॥ ८२१ ॥ कर्तरीं च कपालं च कराभ्यां दधतीं भजे ॥ नानालंकारशोभाढ्यां त्रीक्षणाम्पद्मसंस्थिताम् ॥ ८२२ ॥ जपपूजा-दिकं त्वस्याः सर्वं पूर्ववदाचरेत् ॥ मधुपुष्करपत्राब्नहोमाद्रियानिधिर्भवेत् ॥ ॥ ८२३ ॥ रक्तां वश्ये स्वर्णनिभां स्तम्भने मारणेऽसिताम् ॥ उच्चाटने धूम्र वर्णां शान्तौ श्वेतां विचिन्तयेत् ॥ ८२४ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि तारक-स्य वराय तु ॥ ब्रह्मणोपासितान्तारां द्वादशार्णां सुदुर्लभाम्॥ ८२५ ॥ वाचं लज्जां रमां कामं ह्सौर्हुं चोग्रमुच्चरेत् ॥ तारे हुंफाडिति प्रोक्तो मन्त्रोयं द्वादशाक्षरः ॥ ८२६ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि ब्रह्मणा समुपासिताम् ॥ हिरण्यकशिपोर्दातुं वरं सप्तार्णसम्मिताम् ॥ ८२७ ॥ प्रणवं कवचं मायां क्लीं प्राक्कूटं च पञ्चमम् ॥ हुंफडन्तः सर्वमस्य न्यासाद्यम्पूर्ववद्भवेत्॥८२८॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि हारिणा या ह्युपासिता ॥ बौद्धमार्गप्रचारार्थं सिद्धिदा द्वादशाक्षरी ॥ ८२९ ॥ उपासिता ब्रह्मणा यां तस्याः कूटे तु पञ्चमे ॥ सौरुक्त्वा साधिता विद्या द्वादशार्णातिबुद्धिदा ॥ ८३० ॥ यत्प्रभावाद्दिवो-दासः काश्या उच्चाटितः पुरा ॥ तस्यास्तु पूर्ववज्ज्ञेयं न्यासध्यानजपादिकम्॥ ॥ ८३१ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि सप्तार्णां रामसेविताम् ॥ लक्ष्मीप्रभृतिरा सार्थं तया मन्त्रस्तदा हली ॥८३२॥ ब्रह्मोपासितसप्तार्णमध्ये कूटं तु पञ्चमम् ॥ त्यक्त्वा तत्र सौश्चोक्त्वा विद्या रामेण सेविता ॥ ८३३ ॥ सर्वसिद्धिकरी चेयं शत्रुसंहारकारिणी ॥ ध्यानपूजादिकम्प्राग्वत्प्रयोगादिकमेव च॥ ८३४ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि नारायणसुसेविताम् ॥ पञ्चार्णां यत्प्रभावेण दैत्यानां कदनं कृतम् ॥ ८३५ ॥ त्रीं हुं फट् क्लीं वाग्भवं च पञ्चार्णा सर्वसिद्धिदा ॥

---

१ॐ त्रींह्रींहूंह्रींहुं फट्॥ २तारकासुरायवरं दातुमित्यर्थः ॥३ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्सौः उग्रतारे हुंफट् ॥ ४ ॐ हुं ह्रीं ह्रीं क्लीं सौःहुंफट् ॥ ५ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं सौः हुं उग्रतारे हुंफट् ॥ ६ ॐ हुं ह्रीं क्लीं सौः हुं फट्॥ ७ बलभद्रसेविताम् ॥ ८ रासससमये लक्ष्मीनामगोप्यादिविलासार्थम्॥ ९ दाशरथिना॥

एषां त्रयाणां तु मुनिर्विष्णुः प्राग्वज्जपादिकम् ॥ ८३६ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि मया या समुपासिता ॥ दत्ता च रविणादित्यै सा विद्या तु षडक्षरी ॥ ८३७ ॥ ॐ ह्रीं हुं ह्रीं हुं फडिति मुनिः सोहं च पूर्ववत् ॥ ज्ञेयं न्यासादिकं पूर्वं प्रयोगादि च पूर्ववत् ॥८३८॥ अथान्यं सम्प्रवक्ष्यामी चास्याः पञ्चाक्षरं मनुम् ॥ जलन्धरवधार्थं तु मया सिद्धीकृतं पुरा ॥ ८३९ ॥ त्रीं हुं मायां हुंफडिति मनुः पञ्चाक्षरो मतः ॥ मया पञ्चमुखैर्जप्तो दक्षमार्गेण भोः सुराः ॥ ८४० ॥ देवांशेषु च विप्रेषु तथा धर्म्मपरेषु च ॥ यमानां नियमानां च तत्रस्था नान्यदेवता ॥८४१ ॥ वाममार्गाराधितास्तु कार्य्यं साधयितुं क्षमाः ॥ दक्षिणाराधिता देवा रणसाहाय्यकारकाः ॥ ८४२ ॥ तेजोनिधीन्त्रिपून्हत्वा नयन्ति ब्रह्म शाश्वतम् ॥ क्षत्रियाणां क्षयार्थं तु मया रामाय चार्पिताः ॥ ८४३ ॥ पञ्चामृतं सुरास्थाने मांसस्थाने च सूरणम् ॥ मत्स्यस्थाने खण्डकाद्यं धर्म्मपत्न्यां रतं मतम् ॥ ८४४ ॥ अन्यच्च पूर्ववद्देवा भुंजते तत्प्रकाशितम् ॥ कस्तु तारां न सेवेत लोकद्वयपरीप्सया ॥ ८४५ ॥ अस्याः पूजादिकं प्राग्वद्विशेषोत्र निरूप्यते ॥ तारायाः सद्गुरौ सिद्धिः स्त्रीरते भ्रान्तता भवेत् ॥ ८४६ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि महातारामनुं सुराः ॥ सिद्धा मार्गद्वयेनापि वर्णवर्णाधिकारतः ॥ ८४७ ॥ त्रीं ह्रीं ह्रां हुं नमस्तारायै महापदमुच्चरेत् ॥ तारायै सकलेत्युक्त्वा दुस्तरात्तारयद्वयम् ॥ ८४८ ॥ तरद्वयं वह्निजाया द्वात्रिंशार्णो मनुर्मतः ॥ न्यासपुजाजपाद्यं तु प्राग्वत्सर्वं समाचरेत्॥ ॥ ८४९ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि देवीं दक्षिणकालिकाम् ॥ क्रीं क्रीं क्रीं हुं द्विरुच्चार्य्य लज्जाबिजद्वयं तथा ॥ ८५० ॥ दक्षिणे कालिके पश्चात्पुनर्बीजानि संवदेत् ॥ क्रमेणैवाग्निगृहिणी मन्त्रो द्वाविंशदर्णकः ॥८५१॥ भैरवोस्य मुनिः प्रोक्तस्त्रिष्टुप्छन्द उदाहृतम् ॥ देवता कालिका देवी ह्रीं बीजं हुं च शक्तिका॥८५२॥दीर्घषट्कयुताद्येन बिन्दुना संयुतेन च॥षडङ्गानि न्यसे

---

१ त्रीं हुं फट् क्लीं ऐं ॥ २ त्रीं ह्रीं ह्रां हुं नमस्तारायै महातारायै सकलदुस्तरात् तारय तारय तर तर स्वाहा ॥ ३ क्रीं क्रीं क्रीं हुं हुं ह्रीं ह्रीं दक्षिणे कालिके क्रीं क्रीं क्रीं हुं हुं ह्रीं ह्रीं स्वाहा ॥ ४ क्रां क्रीं क्रूं क्रैं क्रौं क्रः एभिर्बीजैः षडङ्ग विदधीत । यथा क्रां हृदयाय नमः, क्रीं शिरसे स्वाहा इत्यादि ॥

न्मन्त्री द्विः सकृद्वा यथाविधि॥८५३॥पञ्चाशद्भिर्मातृकार्णैर्हृदये च भुजद्वये॥ दशभिर्दशभिः कुर्य्यात्तथा जङ्घाद्वये क्रमात् ॥ ८५४ ॥ ऐष्वङ्गेषु च मूलेन पञ्चभिः पञ्चभिः शरैः॥सप्तभिश्चापि मन्त्रार्णैर्व्यापकं च समन्ततः ॥८५५॥ करालवदनां घोरां मुक्तकेशीं चतुर्भुजाम्॥कालिकां दक्षिणां दिव्यां मुण्डमाला-विभूषिताम्॥८५६॥खड्गाभयवराञ्छिन्नं मुण्डं च दधतीं करैः ॥ महामेघप्रभां श्यामां तथा चैव दिगम्बराम् ॥ ८५७ ॥ कण्ठावसक्तमुण्डालीगलद्रुधिरच-र्चिताम् ॥ कर्णावतंसतानीतशवयुग्मविराजिताम् ॥ ८५८ ॥ घोरदंष्ट्रा-करालास्यां पीनोन्नतपयोधराम् ॥ शवानां करसङ्घातैः कृतकाञ्चीं हसन्मुखीम् ॥ ८५९ ॥ सृक्कद्वयगलद्रक्तधाराविस्फुरिताननाम् ॥ घोररूपां महारौद्रीं श्मशानालयवासिनीम् ॥ ८६० ॥ दन्तुरां दक्षिणां व्यालीयुक्तालम्बिक-चोच्चयाम् ॥ शवरूपमहादेवहृदयोपरिसंस्थिताम् ॥ ८६१ ॥ शिवाभिर्घोर-रावाभिश्चतुर्दिक्षु समन्विताम् ॥ महाकालसमायुक्तां शवोपरिरतान्विताम् ॥ ॥ ८६२ ॥ सुखप्रसन्नवदनां स्मेरारुणसरोरुहाम् ॥ एवं सञ्चिन्तयेत्कालीं श्मशानालयवासिनीम् ॥ ८६३ ॥ आदौ विरचयेत्पञ्च त्रिकोणानि ततः परम् ॥ पद्ममष्टदलं बाह्ये भूपुरं तत्र पूजयेत् ॥ ८६४ ॥ ततो मध्यत्रिको-णान्तर्न्यसेद्देवीं च दक्षिणे ॥ महाकालं च तत्रैव न्यसेदेष विधिः स्मृतः ॥ ८६५ ॥ ततः पूर्वादिकोणेषु वामावर्तेन पूजयेत् ॥ कालीं कपालिनीं कुल्लां प्रथमे तु त्रिकोणके ॥ ८६६ ॥ नीलां घनां बलाकां च द्वितीये तु त्रिकोणके ॥ कुरुकुल्लाविरोधिन्यौ विप्रचित्तां तृतीयके ॥ ८६७ ॥ उग्रामु-ग्रप्रभां दीप्तां चतुर्थे तु त्रिकोणके ॥ मात्रां मुद्रां च मित्रां च त्रिकोणे पञ्चमे यजेत् ॥ ८६८ ॥ सर्वाः श्यामा असिकरा मुण्डमालाविभूषणाः ॥ तर्ज्जनीं वामहस्तेन धारयन्ति च सस्मिताः ॥ ८६९ ॥ ब्राह्मीं नारायणीं माहेश्वरीं

---

१ अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं ॡं हृदये, एं ऐं ओं औं अं अः कं खं गं घं दक्षभुजे, ङं चं छं जं झं ञं टं ठं डं ढं वामभुजे, णं तं थं दं धं नं पं फं बं भं दक्षजंघायाम्, मं यं रं लं वं शं षं सं हं क्षं वामजंघायाम् ॥२ क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं नमो हृदये, ह्रीं ह्रीं दक्षिणे नमो दक्षभुजे, कालिके क्रीं क्रीं वामभुजे, क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहापादद्वये, इमं न्यासं कृत्वा पुनः समस्तमूलमन्त्रेण व्यापकं कुर्य्यात् ॥

मुण्डां कुमारिकाम् ॥ अपराजितां च वाराहीं नारासिंहीं दलाष्टके ॥ सम्पूज्य यत्नतश्चापि बलिं सम्प्रतिपादयेत् ॥ ८७० ॥ हृदयं चापि देवेश्यै समर्प्य विधिवद्बुधः ॥ निर्माल्यं वै शुचौ देशे धारयेच्च सदैव हि ॥ ८७१ ॥ एकलक्षं जपेन्मन्त्रं हविष्याशी दिवा शुचिः ॥ अशुचिश्च तथा रात्रौ लक्षमेकं जपेन्मनुम् ॥ दशांशं जुहुयादाज्यैस्तर्पयेदभिषेचयेत् ॥ ॥ ८७२ ॥ होमश्च तर्पणं पूजा कर्त्तव्या च विशेषतः ॥ ततः प्रयोगान्कुर्वीत काम्यानिष्टफलाप्तये ॥८७३॥ नागयज्ञोपवीतिनीं चन्द्रार्धकृतशेखराम् ॥ देवीमेवं च सञ्चिन्त्य महाकालसमीपगाम् ॥ ८७४ ॥ हुंहुंक्रीं च तथा क्रींक्रीं पञ्चबीजानि योजयेत् ॥ अन्ते तु मूलमन्त्रस्य जपपूजादिकं चरेत् ॥ ॥ ८७५ ॥ वश्यकामः साधकश्चेद्रक्तपुष्पैः प्रपूजयेत् ॥ कामबाणसमाविद्धा निर्लज्जा विह्वलाः स्त्रियः ॥ स्वंस्वं सन्त्यज्य भर्त्तारमालिङ्गन्ति सदैव तम्॥ ॥८७६॥ एवमाकर्षणे योज्यमादौ हुंक्रीं ततः परम् ॥ लोहितां शूलहस्तां च महाकालाग्रसंस्थिताम् ॥ ध्यात्वा सम्पूजयेत्पुष्पैः पीतैराकर्षणं भवेत् ॥८७७॥ कपिलां द्विभुजां कर्त्रीं सव्ये दक्षे कपालकम् ॥ ध्यात्वैवं सर्वमन्त्रान्ते ठद्वयं परिकीर्तयेत् ॥ ८७८ ॥ एवं प्रजप्य पुष्पेण कृष्णेनैव तु पूजयेत् ॥ मरणं तु भवेत्तस्य यमुद्दिश्य कृता क्रिया ॥ ८७९ ॥ उच्चाटयति पिङ्गाक्षी सन्त्रासयति केकरा ॥ विद्रावयति शुष्कास्या प्रोन्मत्तयति घूर्णिका ॥८८०॥ विक्षोभयति संक्षुब्धा सम्पादयति सम्मता ॥ सङ्कोचयति संरुद्धा विरुद्धा च विरोधयेत् ॥ ८८१ ॥ योयो भावो यत्र ज्ञेयस्तं भावं स्थापयेदिति ॥ अत्र सर्वत्र कर्त्तव्यं भावमात्रस्य चिन्तनम् ॥ उच्चाटनं विनान्यत्र सर्वत्र सुरतं मतम् ॥८८२॥ स्नातः शुक्लाम्बरधरः कृतनित्यक्रियो दिवा ॥ रात्रौ नग्न शयानश्च मैथुने च व्यवस्थितः ॥ अवाक्यो मुक्तकेशश्च तेन स्युः सर्वसिद्धयः ॥ ८८३ ॥ नग्नां वरस्त्रियं पश्यन्प्रजपेदयुतं मनुम् ॥ स भवेत्सर्वसिद्धीनां पारगः सर्वदैव हि ॥ ८८४ ॥ तस्य दर्शनमात्रेण वादिनो निष्प्रभा मताः ॥ गद्यपद्यमयी वाणी तस्य सर्वविधा भवेत् ॥८८५॥ अवाक्यो मुक्त-

१ बिभ्रतीमिति शेषः ।

केशश्च हविष्यं भक्षयन्नरः ॥ प्रजपेदयुतं तावदेवं प्रतिनिधिर्भवेत् ॥ ८८६ ॥
ऋतुमत्या भगं पश्यन्नयुतं प्रजपेन्नरः ॥ अनर्घकविता तस्य गद्यपद्यमयी भवेत् ॥
॥८८७॥ अष्टोत्तरशतं जप्त्वा भगमालोक्य चान्ततः ॥ प्रयाति मैथुनं योसौ
धनधान्यसुतान्वितः ॥८८८॥ सुरते जपितव्यश्च सदापापविशुद्धये॥ यदि योषि-
त्प्रसङ्गेन रेतः पतति यत्नतः॥८८९॥समुत्साद्यं ततो जपं सर्वकामसमृद्धये ॥
श्मशानाङ्गारमादाय मुक्तकेशो दिगम्बरः॥८९०॥जपेदयुतसंख्यं तु सर्वकाम-
समृद्धये॥प्रेतमारुह्य तत्रैव यो जपेन्मन्त्रवित्तमः॥८९१॥अयुतं वाग्यतो भूत्वा
कविभिः स तु पूजितः॥ स याति परमां सिद्धिं देवैरपि सुदुर्लभाम् ॥८९२॥
स्वदेहरुधिराक्तैश्च बिल्वपत्रैः सहस्रशः ॥ श्मशानेऽभ्यर्चयेद्देवीं वागीशसमतां
व्रजेत्॥८९३॥सुरतत्यक्तशुक्रेण ह्यर्कपुष्पैः सहस्रकैः ॥ श्मशानेऽभ्यर्चयेद्देवीं
सर्वां सिद्धिं स विन्दति ॥८९४॥ धन्वाब्जपत्रैः सम्पूज्य देवीं सर्वफलप्रदाम् ॥
लोके स कुलवान्वाग्मी सर्वयोषित्प्रियो भवेत् ॥ सुखी स्यान्नात्र सन्देहो
महाकालवचो यथा॥८९५॥श्मशाने योषितं नीत्वा मन्त्रैः प्राच्यं सहस्रकैः॥
रक्तचन्दनदिग्धाङ्गीं रक्तपुष्पैरलङ्कृताम् ॥ ८९६ ॥ तावत्पुष्पैर्मनुं प्राच्यं
ततो ध्यायेच्च चण्डिकाम्॥ततो गत्वानुयाद्राज्यं यद्यसौ न बिभेति वै॥८९७॥
श्मशाने ह्ययने चैवं शवासनगतः स्थिरः ॥ असकृत्तु जपेन्मन्त्रं सर्वसिद्धिप्रदो
भवेत् ॥ ८९८ ॥ तर्पयेच्च शवास्यं तु रक्तमांसादिभिस्त्रिधा ॥ त्रिस्त्रिर्मन्त्रा-
नुदीर्य्यैवं सर्वसिद्धिर्भवेत्ततः ॥ ८९९ ॥ तर्प्पयेच्च पयोभिर्हि सुधाधारायुतै-
स्तथा ॥ रेतोभिश्च तथा तद्वत् स्वकीयेन कचेन च ॥ ९०० ॥ मैथुनोपाचिता-
द्भिश्च भगप्रक्षालनाम्बुभिः॥मेषमाहिषरक्तेन नररक्तेन चैव हि॥मूषमार्ज्जाररक्तेन
वाग्मित्वं तस्य जायते ॥ ९०१ ॥ धनित्वं जायते तस्य सर्वसिद्धिः प्रजायते
॥ वचसा स भवेज्जीवो धनेन च धनाधिपः ॥ ९०२ ॥ आज्ञया देवराजो-
सौ रूपेण च मनोभवः ॥ बलेन पवनो ज्येष्ठस्सर्वतत्त्वार्थसाधकः ॥ ९०३ ॥
साधितासाधितं मांसं सास्थि दद्यात्सदा बलिम्॥मूषमांसं मेषमांसं छागं माहि-
षमेव च ॥ ९०४ ॥ सर्वं सास्थि प्रदातव्यं सदा त्वग्लोमसंयुतम् ॥ अज-

१ मन्त्र इति वा पुरुषः इति वा शिष्यते मन्त्रशेषपक्षे तस्येत्यध्याहार्यमिति गौरवम् २ ॥ तदन्यत्र नेति ज्ञेयम् ॥

कस्य नखं छिन्नं केशं स्वमार्जनीगतम् ॥ निवेदयेच्छ्मशाने तत्सर्वसिद्धिप्रदो भवेत् ॥ १०५ ॥ नारीरजोयुजां कृत्वा पर्णानां शतमुत्तमम् ॥ प्रत्येकं प्रजपेन्मन्त्रं ततस्तद्धोमयेद्बुधः ॥ १०६ ॥ युगानांगयुतं तेन पूजिता दक्षिणा भवेत् ॥ सर्वसिद्धिर्भवेत्तस्य वाग्मी धीरस्स जायते ॥१०७॥ न तस्य दुर्लभं किञ्चित्पृथिव्यां जातु जायते ॥ योनिरूपं हि कृत्वा तु कुण्डं वितस्त्यरत्नितः ॥ ॥ १०८ ॥ हस्तविस्तारतो वापि कृत्वा चैव यथाविधि ॥ तत्र कार्य्या हि मन्त्रेण वह्निस्थापनिकाः क्रियाः ॥१०९ ॥ महाकालाय देवाय दद्यात्प्रथममाहुतिम् ॥ स्रुवेणाज्येन मांसेन भक्तेन रुधिरेण च ॥ ११० ॥ कृष्णपुष्पेण साज्येन सरक्तेन विशेषतः ॥ आमिषादिभिरप्येवं जुहुयाच्च श्मशानके ॥ ॥१११॥ स्नातः शुक्लाम्बरधरः शुचिः प्रयतमानसः ॥ दिवा सर्वं प्रकुर्वीत सर्वकामार्थसिद्धये ॥ ११२ ॥ रात्रौ नग्नो मुक्तकेशो मैथुनेनापि संयुतः ॥ प्रकुर्वीत प्रयत्नेन सर्वकामार्थसिद्धये ॥ ११३ ॥ द्विजानामत्र सर्वेषां विधी रात्रौ प्रदर्शितः ॥ शूद्राणां चैव संप्रोक्तो रात्रावेव विधिर्मया ॥ ११४ ॥ महाकालं यजेद्यत्नात्पश्चाद्देवीं प्रपूजयेत् ॥ त्रिधा विभज्य मन्त्राद्यैर्यत्नात्साधकसत्तमः ॥ ११५ ॥ मांसं रक्तं तिलं केशो नखो भक्तं च पायसम् ॥ आज्यं चेति प्रयत्नेन होतव्यं सर्वसिद्धये ॥ ११६ ॥ एवं कृत्वा विधानेन भजते सिद्धिमुत्तमाम् ॥ यद्यत्प्रार्थयते जन्तुस्तत्तत्प्राप्नोति नित्यशः ॥ ११७॥ देवत्वं दानवत्वं च सिद्धचारणतां तथा॥हवनात्सर्वमाप्नोति नित्यमेवमतन्द्रितः॥११८॥ एकचित्तो जपेन्मन्त्रं चत्वारिंशत्सहस्रकम् ॥ होमं तु रक्तपुष्पेण कुण्डे कुर्य्याद्यथाविधि ॥ ११९ ॥ एतन्मन्त्रजपान्मन्त्री मुच्यते ब्रह्महत्यया ॥ पितृमातृवधाद्यैश्च किमन्यैः क्षुद्रपातकैः ॥ १२० ॥ कपिलारत्नसम्पूर्णपृथ्वीदानस्य यत्फलम् ॥ कोटिहोमसहस्रैर्य्यद्ध्यानेन फलभाग्भवेत् ॥ यंयं स्पृष्ट्वा जपेन्मन्त्री स तंतं वशमानयेत् ॥ १२१ ॥ जपित्वाष्टोत्तरशतं जुहुयाद्रक्तपुष्पकैः ॥ कुर्य्यान्नृपं वशे मन्त्री नासाध्यं भुवनत्रये ॥१२२॥ शून्यागारे देवगृहे स्वयम्भूस्थान एव च ॥ ब्रह्मचारी हविष्याशी भवेदिन्द्रसमो जपात् ॥

१ कर्मेति शेषः ॥ २ ब्रह्मक्षत्रियविशाम् ॥

॥९२३॥ कुण्डे त्रिकोणसंज्ञे तु शान्तौ पुष्टौ तथैव च ॥ अयुतं जुहुयान्मन्त्री सहस्रत्रितयं पुनः ॥ ९२४ ॥ काम्ये सहस्रमारक्तैः पुष्पैर्हुत्वा दशांशतः ॥ तर्पयेच्च पुनस्तद्वद्देवीं ध्यात्वा हुताशने ॥ ९२५ ॥ सम्पूज्य मूलमन्त्रेण बिल्व-पत्रैर्घृतान्वितैः ॥ सहस्रं प्रत्यहं हुत्वा प्राप्नोति परमां गतिम् ॥घृताक्तमालतीपु-ष्पैर्होमाद्धुतकविर्भवेत् ॥ ९२६ ॥ नासाध्यं विद्यते किञ्चिदिह मन्त्रविद-स्सदा ॥ देव्याराधनशक्तिश्च गुरुभक्तस्य नान्यथा ॥ ९२७ ॥ अथातः संप्र-वक्ष्यामि मन्त्रमष्टाक्षरं परम् ॥ दक्षिणे कालिके स्वाहा मन्त्रोऽष्टाक्षर ईरितः ॥ ॥ ९२८ ॥ न्यासः प्राग्वद्ध्यानमत्रशवरूपशिवस्थिताम् ॥ महाकालरता-सक्तां शिवाभिर्दिक्षु वेष्टिताम् ॥ ९२९ ॥ नवशक्तियुते पीठेनन्ता च विजया जया॥तथापराजया नित्या विलासिन्यपि कीर्त्तिता॥९३०॥क्षुब्धा घोरा मङ्ग-लेति पीठमन्त्रोऽर्कवर्णकः॥ह्रींकालिकायोगपीठात्मने नम उदाहृतः॥९३१॥ अङ्गानि पूर्वमाराध्य षड्दलेषु ततोर्चयेत् ॥ कालीं कपालिनीं कुल्लां कुरुकु-ल्लां विरोधिनीम् ॥ ९३२ ॥ विप्रचित्तां च सम्पूज्य नवकोणेष्वथोर्च-येत् ॥ उग्रामुग्रप्रभां दीप्तां नीलां घनां बलाकिकाम् ॥ ९३३ ॥ मात्रां मुद्रां तथामितां पूज्याः पत्रेषु मातरः ॥ पूर्वोक्तभूपुरे पूज्या भैरव्योष्टौ च भैरवीः ॥ ९३४॥ ततो महाभैरवी च तृतीया सिंहभैरवी ॥ धूम्राख्या भैरवी तुर्य्या पञ्चमी भीमभैरवी ॥ ९३५ ॥ उन्मत्तभैरवी षष्ठी वशीकरणभैरवी ॥ सप्तमी भैरवी ख्याताष्टमी मोहनभैरवी ॥ ९३६ ॥ दिक्पतींश्च तदस्त्राणि पूजैवं परिकीर्तिता ॥ पुरश्चर्य्यादिकं प्राग्वत्प्रयोगानाचरेत्तथा ॥ ९३७ ॥ स्त्रीप्रहारं च निन्दां च कौटिल्यं चाप्रियं वचः ॥ आत्मनो हितमन्विच्छन्का-लीभक्तो विवर्जयेत् ॥ ९३८ ॥ असृजा महिषादीनां कालिकां यस्तु तर्प्प-येत् ॥ तस्य स्युरचिरादेव करस्थाः सर्वसिद्धयः ॥ ९३९ ॥ अथान्यं सम्प्र-वक्ष्यामि चैकविंशतिवर्णकम् ॥ ॐह्रीं ह्रीं हुं युगं त्रिः क्रीं दक्षिणे कालिके वदेत् ॥९४०॥ त्रि क्रीं हुँहुँ च होमश्चात्र घृतेनैव विधेयः॥साधकेन हि कि-

१ शब्दक्रमादर्थक्रमस्य बलीयस्त्वेन जयार्चनोत्तरं विजयार्चनं विधेयमत्रजयाशब्दस्य पूर्वं पाठस्तु छन्दस्स्वारस्यात् इति सुधियो ज्ञम् ॥

युग्ममस्य न्यासादि पूर्ववत् ॥ ९४१ ॥ बिल्वमूले शवारूढो वटमूले तथैव च॥लक्षं मनुं जपित्वेमं सर्वसिद्धीश्वरो भवेत्॥पञ्चमं[1]प्रतिमित्यायं दक्षिणाम्नायसिद्धिदः ॥ ९४२ ॥ अथातः संप्रवक्ष्यामि शक्रार्णं मनुमुत्तमम् ॥ क्रीं हुं ह्रीं दक्षिणे कालिके क्रींहुंह्रीं दहनप्रिया॥९४३॥पूजनं पूर्ववत्प्रोक्तं न्यासध्यानजपादिकम् ॥ विशेषान्नमुरादीनामयमाकर्षणक्षमः ॥ ९४४ ॥ हुं हुं त्रिः क्रीं द्विश्च लज्जा दक्षिणे कालिके पुनः॥ हुं च त्रिर्द्विश्च लज्जा स्वाहेत्याकृतिवर्णवान् ॥ ९४५ ॥ न्यासपूजादिकं प्राग्वद्विशेषेण वशीकृतिः ॥ जपादेतस्य भूतिश्च सर्वमन्यत्तु पूर्ववत् ॥ ९४६ ॥ क्रीं क्रीं क्रीं हुं समुच्चार्य्य हुंलज्जाद्वयमुच्चरेत् ॥ दक्षिणे कालिके स्वाहा नृ[3]पवर्णः प्रकीर्त्तितः ॥ ९४७ ॥ मन्त्रराजोयमाख्यातः पूर्ववत्यादुपासना ॥ विशेषाङ्कतराज्यानामयं राज्यप्रदो मतः॥९४८॥क्रींमित्येकाक्षरो मन्त्रः कालिकायाः प्रकीर्तितः॥ जपेत्कृष्णचतुर्दश्यां शून्यागारे मनुं निशि॥उपवासपरश्चैवमेकाहात्सिद्धिमाप्नुयात् ॥९४९॥ रुद्रा श्मशाने विपिने जपेल्लक्षं तु वाग्यतः॥ आर्द्रोष्णीष आर्द्रवासास्तेन मन्त्रः प्रसिध्यति॥९५०॥ होमश्चात्र घृतेनैव तर्पणादि ततश्चरेत्॥अथवा प्रजपेन्मन्त्रं श्मशाने विगतज्वरः ॥ ९५१ ॥ निशाभोजी दशांशेन तिलैर्हवनमाचरेत् ॥ जपपूजादिप्राग्वद्विशेषाद्रोगमोक्षदम्॥९५२॥क्रींमुक्त्वा कालिके स्वाहाषडर्णो मन्त्र ईरितः ॥ न्यासपूजादिकं प्राग्वद्विशेषाद्रोगदो मतः ॥ ९५३ ॥ क्रींहुंह्रीं त्र्यक्षरात्मायं मन्त्रः काल्याः प्रकीर्त्तितः ॥ प्राग्वज्जपादिकं चास्य विशेषात्सन्ततिप्रदः ॥ ९५४ ॥ कालीबीजं च हुं माया हुंफट् पञ्चाक्षरो मनुः ॥ न्यासध्यानादिकं प्राग्वद्विशेषाद्भूतनाशनः ॥ ९५५ ॥ क्रींहुंह्रीं च हुं फट् स्वाहान्तःसप्ताक्षरो मतः॥प्राग्वन्न्यासादिकं सर्वं विशेषाच्छान्तिकारकः॥९५६॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि धूमावत्या मनुं परम्॥ धूंधूं धूमावति स्वाहा मन्त्रोष्टाक्षर ईरितः ॥ ९५७ ॥ पिप्पलादो मुनिश्छन्दो निवृज्ज्येष्ठास्य देवता ॥ षड्दीर्घबिन्दुयुक्तेन धकारेण षडङ्गकम् ॥ ९५८ ॥ आद्यबीजद्वयान्तस्थैः

---

१ पञ्चमकारप्रतिमित्या॥ २ हुंहुंक्रींक्रींक्रींहुंहुंदक्षिणे कालिके हुंहुंहुंह्रींह्रींस्वाहा ३ षोडशार्णः॥

षडर्णैर्न्यासमाचरेत ॥ अंगुष्ठादिषडङ्गेषु पुनर्देवीं विचिन्तयेत ॥ ९५९ ॥ विवर्णां चञ्चलां कृष्णां दीर्घां च मलिनाम्बराम् ॥ विमुक्तकुन्तलां दीर्घां विधवां विरलद्विजाम् ॥ ९६० ॥ काकध्वजरथारूढां विलम्बितपयोधराम् ॥ शूर्प्पहस्तां तु रूक्षाक्षीं धूतहस्तां त्वरान्विताम् ॥ ९६१ ॥ प्रवृद्धरोम्णीं तु भृशं जटिलां कुटिलेक्षणाम् ॥ क्षुत्पिपासार्दितां नित्यं सदा कलहतत्पराम् ॥ ९६२ ॥ एवंविधां सदा ध्यायेत्ततः कर्म्म समाचरेत ॥ पूर्वोक्ते पूजयेत्पीठे ज्येष्ठां शत्रुनिवर्त्तने ॥ ९६३ ॥ केशरेषु षडङ्गानि पत्रस्था अष्ट शक्तयः ॥ क्षुधा तृषा रतिर्निद्रा निर्ऋतिर्दुर्गतिरुषा ॥ अक्षमेति ततो देवा इन्द्राद्या आयुधान्विताः ॥ ॥ ९६४ ॥ एवं ज्येष्ठां समाराध्य सिद्धमन्त्रः प्रजायते ॥ उपोष्य कृष्णभूताहे नग्नो मुक्तशिरोरुहः ॥ शून्यागारे श्मशाने वा कान्तारे भूधरेथवा ॥ ॥ ९६५ ॥ प्रत्यहं प्रजपेन्निर्भीर्ध्यायेद्देवीं शवासनाम् ॥ एवं लक्षं जपेन्मन्त्रं नाशयेदाचिरादरीन् ॥ ९६६ ॥ जुहुयाल्लवणोपेतां राजिकां निशि तत्फलम् ॥ ॥ ९६७ ॥ आख्यापर्य्यन्तमालिख्य तत्र स्थाप्य शिवं यजेत ॥ अवष्टभ्य शिवं शत्रुनाम्नाथ प्रजपेन्मनुम् ॥ सहस्राद्रूर्ध्वतः शत्रुज्वरेण परिगृह्यते ॥ ९६८ ॥ पञ्चगव्येन शान्तिः स्याज्ज्वरस्य पयसापि वा ॥ मन्त्राद्यक्षरमालिख्य शत्रुनाम ततः परम् ॥ द्वितीयान्तं मनौ शत्रोर्नामैवं मनुमालिखेत ॥ ९६९ ॥ रणेऽयुत जपाच्छत्रोर्निश्चितं मरणं भवेत् ॥ कृत्वा यन्त्रे रिपोराख्यामारण्ये पद्मिनीदले ॥ उन्मादो जायते शत्रोर्मनोरयुतजापतः ॥ ९७० ॥ दग्ध्वा कङ्कं श्मशानाग्नौ तद्भस्मादाय मन्त्रितम् ॥ विरोधिनाम्नाष्टाशासु क्षिप्तमुच्चाटनं रिपोः ॥ ९७१ ॥ श्मशानभस्मना कृत्वा शिवं तस्योपरि न्यसेत ॥ विरोधिनाम संरुद्धं कृष्णपुष्पैः समर्चयेत् ॥ ९७२ ॥ महिषी क्षीरधूपं च दद्याच्छत्रुविपत्करम् ॥ महिषीरूपेणागत्य स्वप्ने शत्रुं विनाशयेत् ॥ ९७३ ॥ मन्त्रेणानेन संलिख्य तद्भस्म रिपुमन्दिरे ॥ समुच्चाटयते तूर्णं नात्र कार्य्या विचारणा ॥ ९७४ ॥ न्यस्य पाणितले शत्रोराख्यानं चितिभस्मना ॥ वह्नावधोमुखः क्रुद्धस्तापयेदयुतं जपन् ॥ धूमावतीमनुं मन्त्री शत्रुर्यमपुरं व्रजेत् ॥ ॥ ९७५ ॥ प्राग्वत्करतले नामार्द्धद्वयं तु रिपोर्न्यसेत ॥ जलस्थः प्रजपेन्मन्त्रं

हुंकारान्नाशयेदरीन् ॥ १७६ ॥ श्मशानभस्मना लिङ्गं कृत्वा पुष्पादिनार्चयेत् ॥ भगवान्निति सम्भाष्य मनसा कर्म्म चिन्तयेत् ॥ १७७ ॥ निम्बकाकच्छदानेकीकृत्य चाष्टशतं जपेत् ॥ दद्याद्धूपं साध्यनाम्ना सद्यो विद्वेषयेदरीन् ॥ चिताकाष्ठानले क्षीरहोमाच्छान्तिः प्रजायते ॥ १७८ ॥ रजोधूमप्रदानेन गृध्ररूपेण कालिका ॥ मारयत्यरिमागत्य शान्तिर्निर्माल्यधूपतः ॥ ॥ १७९ ॥ वाराहवालधूपेन हन्याच्छूकररूपिणी॥ अश्वत्थपत्रधूपेन शान्तिर्भवति नान्यथा ॥ १८० ॥ शान्तिस्सर्वाभिचारस्य पञ्चगव्येन जायते ॥ क्षीरेण शान्तिर्भवति मधुरत्रितयेन वा ॥ १८१ ॥ कीले क्ष्वेडतरोश्चापि शत्रोर्नाम समालिखेत् ॥ निर्दह्य मूलमन्त्रेण शत्रोर्नामाक्षराणि वै ॥ जप्त्वा पदद्वये मन्त्री खनेदुच्चाटनं रिपोः ॥ १८२ ॥ शत्रुपादद्वयाद्धूलिं घृताक्तां भक्तमिश्रिताम् ॥ वायसेभ्यो बलिं दत्त्वा शत्रोरुच्चाटनं भवेत् ॥ १८३ ॥ शत्रुपादद्वयाद्धूलिं चिताभस्मयुतां क्षिपेत् ॥ शत्रुगेहेपि सञ्जप्तां शत्रोरुच्चाटनं भवेत् ॥ १८४ ॥ ज्येष्ठावासे श्मशाने वा निर्माल्यं पादगोचरम् ॥ गर्दभावासभूमौ वा प्रेतस्थाने चतुष्पथे ॥ १८५ ॥ ऊषरे मेहनोर्व्यां वा हदनस्थानमध्यको ॥ आनीय शर्करां मन्त्री दिग्वासा दक्षिणामुखः ॥ श्मशानस्थो विनिःक्षिप्य चिताग्नौ मर्जयेत्तथा ॥ १८६ ॥ मन्त्रं तं तु जपेल्लक्षं निक्षिपेच्छत्रुवेश्मनि ॥ सेनामध्येपि सर्वेषां क्षणादुच्चाटनं भवेत् ॥ १८७ ॥ गर्ते पिपीलिकानान्तु पादधूलियुतान्कणान् ॥ सघृतान्सप्तवारांस्तु जुहुयान्मन्त्रविन्निशि ॥ भ्रमते काकवत्सर्वां महीमावरणादिषु ॥ ॥ १८८ ॥ कृत्वा प्रतिकृतिं शत्रोर्जन्मवृक्षेण मन्त्रवित् ॥ कृत्वा प्रतिष्ठां प्राणस्य विद्ध्वा मर्मसु कण्टकैः ॥ आयासैर्मन्त्रमावृत्य वक्ष्यमाणैः प्रवेष्टयेत् ॥ १८९ ॥ पूर्वोक्तशर्कराभिस्तु जप्त्वा नित्यं प्रतापयेत् ॥ सप्तरात्रेण तस्यापि भवेदुच्चाटनं ध्रुवम् ॥ १९० ॥ मुख्यशैलाह्वये लेख्यौ सारमेयवराहयोः ॥ मन्त्रेण दमितौ साध्यौ भौमवारोदये रवेः ॥ १९१ ॥ धत्तूररससंयुक्तचिताङ्गारेण मन्त्रितम् ॥ व्यत्यस्य पृष्ठतो बद्ध्वा केशपाशेन तं जपेत् ॥ १९२ ॥ श्मशाने शत्रुमार्गे वा तद्गृहे निखनेन्निशि ॥ विद्वे-

पणं भवेत्सद्यो गौरीशंकरयोरपि ॥ ९९३ ॥ अश्वत्थत्वचि मन्त्रार्णैर्दर्भितं साध्यमालिखेत् ॥ अन्यद्विपतरोस्तद्वज्जपित्वोद्धृत्य विन्यसेत् ॥ ९९४ ॥ पूर्वोक्तकण्टकैर्विद्धा जपेत्स्पृष्ट्वा शतं शतम् ॥ विद्विष्टौ भवतस्तौ च नाम्नामपि च तत्क्षणात्॥ एते प्रयोगाः कथिता धूमावत्या मया सुराः ॥ ९९५ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि भद्रकाल्या महामनुम् ॥ ह्रौं कालीति महाकालि द्विः किणिः फड् वसुप्रिया ॥ चतुर्दशाक्षरो मन्त्रो भद्रकाल्या उदाहृतः ॥ ९९६ ॥ पदैः षड्भिः षडङ्गानि जातियुक्तानि कल्पयेत् ॥ ध्यातव्येयं सदा देवी भद्रकाली भयापहा ॥ ९९७ ॥ क्षुत्क्षामा कोटराक्षी च नाहं तृप्तेति वादिनी ॥ जम्बूफलाभदशनाज्ज्वलत्पारां च बिभ्रती ॥ मषीमुखी मुक्तकेशी जगद्ग्रसनलालसा ॥ ९९८ ॥ अशेषं कालिकातन्त्रे यत्प्रोक्तं तदिहापि च ॥ जपपूजाप्रयोगाद्यं यो विशेषः स उच्यते ॥९९९॥ आराध्य प्रजपेन्मन्त्रं नित्यमष्टोत्तरं शतम् ॥ रिष्टमाला विधातव्या जपार्थं सिद्धिमिच्छता ॥ इयं देवी महादेवी शत्रुविग्रहकारिणी ॥ १००० ॥ यथेष्टचेष्टया चिन्त्या धर्म्मकामार्थसिद्धिदा ॥ अथ मन्त्रान्तरं वक्ष्ये भद्रकाल्याः सुगोपितम् ॥ गृध्रकर्णि विरूपाक्षि लम्बस्तनि महोदरि ॥ १००१ ॥ उत्पादयोत्पादयेति द्विधोपरिपदं भवेत् ॥ द्विधा वेत्ति पदं हुंफट् स्वाहा सप्ताग्निवर्णकः ॥ १००२ ॥ पिप्पलादो मुनिः प्रोक्तो निवृच्छन्द उदाहृतम् ॥ भद्रकाली देवता स्याद्विरुत्पादय हृत्स्मृतम् ॥ १००३ ॥ उपरिभ्यां शिरः प्रोक्तं वेत्तिभ्यां तु शिखा स्मृता ॥ हुंफड्भ्यां कवचं प्रोक्तं स्वाहयास्त्रमुदीरितम् ॥ १००४ ॥ अतिरौद्रां महादंष्ट्रां भृशं दीर्घां कृशोदरीम् ॥ सुवृत्तनयनां शूरां दीर्घघोणां मदातुराम् ॥ १००५ ॥ स्निग्धगम्भीरनिर्घोषां नीलजीमूतसन्निभाम् ॥ कुटिलभ्रुकुटीदीनां महारदनभीषणाम् ॥ १००६ ॥ दष्टौष्ठकोपताम्राक्षीं रक्तदीर्घशिरोरुहाम् ॥ त्रिशूलव्यग्रदोर्दण्डां नरकीं पिप्पलाशिनीम् ॥ ॥ १००७ ॥ अतिरक्ताम्बरां देवीं रक्तमांसासवप्रियाम् ॥ शिरोमालाभूषि-

१ ह्रौं कालि महाकालि किणिकिणि फट् स्वाहा इति चतुर्दशाक्षरो मन्त्रः ॥ २ गृध्रकर्णि विरूपाक्षि लम्बस्तनि महोदरि उत्पादयोत्पादय उपरि वेत्ति वेत्ति हुंफट् स्वाहा ॥

ताङ्गीं पिबन्तीं शोणितासवम् ॥ १००८ ॥ नृत्यन्तीं च हसन्तीं च पिशाचगणसेविताम् ॥ पिशाचस्कन्धमारुह्य भ्रमन्तीं वसुधातले ॥ १००९ ॥ शंकरस्य मुखोत्पन्नां योगिनीं योगवल्लभाम्॥इत्थंभूतां भद्रकालीं मातृभिः परिवारिताम् ॥ १०१० ॥ ध्यात्वा सम्यक्समाराध्य ततो मन्त्रं जपेद्बुधः ॥ अयुतं मन्त्रसिद्ध्यर्थं मातृकान्यासतत्परः ॥ १०११ ॥ घृतहोमं तथा कृत्वा तर्पणादि समाचरेत् ॥ धूमावत्या च यत्प्रोक्तमनयापि तदाचरेत् ॥ ॥ १०१२ ॥ उक्तः प्रयोग एवात्र विशेषविधिरुच्यते ॥ आज्याप्लुतं तु निर्दोषमेकमूलं वनान्तरात् ॥ विषवृक्षं समादाय ततो होमं समाचरेत् ॥ ॥ १०१३ ॥ शून्यागारे वने वापि कुण्डं कृत्वा त्रिकोणकम् ॥ विषवृक्षेन्धनेनाग्निं प्रज्वाल्यावाहयेत्सुधीः ॥ १०१४ ॥ ततो दण्डं जपेन्मन्त्री विषवृक्षस्य साधकः ॥ अष्टोत्तरशतं वह्नौ तं दण्डं निक्षिपेद्बुधः ॥१०१५॥ सुविनीतं द्विजं वीरं कृत्वा चोत्तरसाधकम् ॥ दिक्षु सर्वासु संस्थाप्याः स्वभेदाः खड्गहस्तकाः ॥ १०१६ ॥ कृतरक्षः समाराध्य वह्निं क्रोधसमन्वितः ॥ अष्टोत्तरशतं जप्त्वा दण्डाग्रं जातवेदसि ॥ १०१७ ॥ दत्त्वा सिद्धार्थकैर्मन्त्री जुहुयात्सवनत्रयम् ॥ तैलोक्षितैश्च होमान्ते दिक्पालबटुयोगिनीः ॥ अग्न्यादींश्चापि सन्तोष्य बलिदानेन देवताम् ॥ १०१८ ॥ ध्यायेच्च प्रलयोदग्रमेघाभां रक्तनेत्रिकाम् ॥ शूलाग्रप्रोतसिंहां च नरमालाविभूषिताम् ॥ १०१९ ॥ तीक्ष्णदंष्ट्रां रक्तमधुमत्तां चैव भयानकाम् ॥ उल्काहस्तां शत्रुसङ्घं शिलायां निघ्नतीं मुहुः ॥ १०२० ॥ भावयित्वा करेणोल्कां दक्षिणेन रिपून्मुखीम् ॥ गत्वा दूरेण विसृजेत्तं दण्डं ध्यानमास्थितः॥ १०२१ ॥सुसहायस्ततस्तीर्थं गच्छेत्पश्चात्तु वाग्यतः ॥स्नात्वावश्यं शुचिर्भूत्वा कण्ठमात्रोदके स्थितः ॥१०२२॥ जपेत्सुदर्शनं दुर्गां सावित्रीं च समाहितः ॥ अष्टोत्तरसहस्रन्तु जपेदन्यच्छतं शतम् ॥ १०२३ ॥ उष्णीषवासा आच्छाद्यससहायः सुरालयम् ॥ गत्वा तु महतीं पूजां कृत्वा देवस्य चक्रिणः ॥ पादयुग्मं समालम्ब्य वर्णलक्षं जपेन्मनुम् ॥१०२४॥ तावज्जप्त्वा घटैः सम्यगभिषिञ्चेत्स्वकं वपुः ॥ दक्षिणा विधिवद्दत्वा शान्तिहोमञ्च कारयेत् ॥ १०२५ ॥ यद्वा दुर्गालये लक्षं सावि-

त्रीये तथैवं च ॥ कृत्वाभिषेकं ताभ्यान्तु शक्तितो भोजयेद्द्विजान् ॥१०२६॥ दक्षिणां शक्तितो दद्यात्सिद्धो भवति साधकः ॥ रुद्रदण्डप्रयोगोयं दारुणोरग-सूदनः ॥ १०२७ ॥ बिभीतकफले शत्रोर्लिखेन्नाम विदर्भितम् ॥ मन्त्रं जप्त्वा सहस्रन्तु खनेत्पीतावनौ पुनः ॥ उच्चाटनं भवेत्क्षिप्रमचलस्यापि किं नृणाम् ॥ १०२८ ॥ धत्तूरबीजचूर्णेन बिभीतकफले तथा ॥ त्रिकोणेरिप्र-तिकृतिं लिखेत्सम्यगधोमुखीम् ॥१०२९॥ अष्टोत्तरसहस्रन्तु जप्त्वा तां निख-नेत्पुनः ॥ पादपातो यथा शत्रोः स्यात्तथोच्चाटयेद्बलात् ॥ १०३० ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि महाकालीमनुं परम् ॥ ॐ क्ष्रूं क्ष्रूं क्रमतः क्रें च पशुं गृहाण चोच्चरेत् ॥ १०३१ ॥ हुं फट् स्वाहा शक्रवर्णः सिद्धमन्त्र उदाहृतः॥ नास्य मुन्यादिकन्यासः सिद्धमन्त्रस्य विद्यते ॥ १०३२ ॥ कृष्णतोयेन सम्पूर्णे घटे चाहूय कालिकाम्॥ब्राह्म्यादिभिश्च दूतीभिर्युक्तां सम्पूज्य भक्तितः॥ ॥ १०३३ ॥ अष्टमीं चण्डिकां स्तोत्रदेवीं ध्यायेद्गृहे पुनः॥ पञ्चवक्त्रां महा-रौद्रीं प्रतिवक्त्रं त्रिलोचनाम् ॥ १०३४ ॥ शक्तिशूलधनुर्बाणखेटखड्गवराभ-यान् ॥ वामदक्षभुजैर्देवीं बिभ्राणां भोगिभूषणाम् ॥ १०३५ ॥ वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं वामाचारेण साधकः ॥ पिचुमन्दस्य समिधो घृताक्ता जुहुयात्ततः॥ ॥ १०३६ ॥ हुत्वा प्रज्वलिते वह्नौ तर्पणादि ततश्चरेत् ॥ एवं सिद्धमनु-र्मन्त्री मारयेदचिराद्रिपून् ॥ १०३७ ॥ देवीं प्रत्यङ्गिरां नाम सर्वापत्तिविघा-तिनीम् ॥ स्मरेदनन्यमनसा मानवो मानमाप्नुयात् ॥ १०३८ ॥ ॐ अं कं चं तथा टं पं यं शं ह्रां ह्रीं समुच्चरेत् ॥ हुंस उक्त्वा हुं तथास्त्रं स्वाहान्तः षोड-शाक्षरः ॥ १०३९ ॥ मुनिर्विंशोता छन्दोष्टिर्देवताः षट् प्रकीर्तिताः ॥ महावायुर्महापृथ्वी महाकाशस्तथैव च ॥ १०४० ॥ महासमुद्रनामा च महा-पर्वत एव च ॥ महाग्निश्चेति हूं बीजं ह्रीं शक्तिः परिकीर्तिता ॥ १०४१ ॥ लज्जया तु षडङ्गानि षट्दीर्घान्वितया चरेत् ॥ मन्त्रदेवांस्ततो मन्त्री ध्याये-त्सुस्थिरमानसः ॥ १०४२ ॥ ताररत्नार्चिराक्रान्तसंभः प्रस्रवणैर्युतम् ॥ व्याघ्रादिपशुभिर्व्याप्तं सानुयुक्तं गिरिं स्मरेत् ॥ १०४३ ॥ मत्स्यकूर्मादिबी-

१ ॐ अं कं चं टं तं पं यं शं ह्रां ह्रीं हूं सः हुं फट्स्वाहा ॥ इति षोडशाक्षरमन्त्रः ॥

जाढ्यं नवरत्नसमर्चितम् ॥ घनतोयं सकल्लोलमकूपारं विचिन्तयेत्॥ १०४४॥ ज्वालावलीसमाक्रान्तं जगत्त्रितयमद्भुतम् ॥ पीतवर्णं महावह्निं संस्मरेच्छत्रुशान्तये ॥ १०४५ ॥ स्वरात्समुत्थरेणवौघमलिनमूर्ध्वभूविदम् ॥ पवनं संस्मरेद्विश्वजीवनं प्राणरूपतः ॥ १०४६ ॥ नदीपर्वतवृक्षादिकलिता ग्रामसंकुला॥ आधारभूता जगतो ध्येया पृथ्वीह मन्त्रिणा ॥ १०४७ ॥ सूर्य्यादिग्रहनक्षत्र कालचक्रसमन्वितम् ॥ निर्मलं गगनं ध्यायेत्प्राणिनामाश्रयप्रदम्॥ १०४८॥ एवं षट् देवता ध्यात्वा सहस्राणि तु षोडश ॥ जपेन्मन्त्रं दशांशेन षड्द्रव्यैर्होममाचरेत् ॥ १०४९॥ व्रीहींश्च सतिलानाज्यं सर्षपांश्च यवांस्तिलान् ॥ एतान्हुत्वा यथाभागं पीठे पूर्वोदिते यजेत ॥ १०५० ॥ अङ्गदिक्पालवज्राधैरेवं सिद्धो भवेन्मनुः ॥ शत्रूपद्रव आपन्ने युञ्जीतात्र महामनुम् ॥ १०५१ ॥ अकारं पर्वताकारं धावन्तं शत्रुसम्मुखम्॥ ततोन्मुखमत्युग्रं प्राच्यां दिशि विचिन्तयेत् ॥ १०५२ ॥ ककारं क्षुब्धकल्लोलं प्लाविताखिलभूतलम् ॥ समुद्ररूपिणं भीमं प्रतीच्यां दिशि चिन्तयेत् ॥ १०५३॥ तुरीयपञ्चमाद्यर्णैः पृथ्वीगगनरूपिणौ ॥ शत्रुवर्गं च बध्नन्तौ चिन्तयेन्नियतात्मवान् ॥ १०५४ ॥ तदग्निमं वर्म्मयुगं शत्रोर्निःश्वासपद्धतिम् ॥ निरुन्धानं स्मरेन्मन्त्री विदग्धद्रिपुमाकुलम् ॥ १०५५ ॥ मायादिवर्णत्रितयं शत्रोर्नेत्रे श्रुती मुखम् ॥ प्रत्येकं तु निरुन्धानं चिन्तयेत्साधकोत्तमः ॥ १०५६ ॥ वह्निसंक्षोभितं वक्त्रं रिपुमस्तकदेशतः ॥ उत्थाप्य वह्निं तद्देहं प्रदहेत्स मनुं स्मरेत् ॥ १०५७ ॥ एवं वर्णान्स्मरेन्मन्त्रं जपेद्वर्णसहस्रकम् ॥ मण्डलत्रितयादर्वाग्दारयेत्तेन विद्विषम् ॥ ॥ १०५८ ॥ एवं यः कुरुते कर्म्म प्राणायामजपादिभिः ॥ संशोधयित्वा चात्मानं स्वरक्षायै हरिं स्मरेत् ॥ १०५९ ॥ अथ प्रत्याङ्गिरामालामन्त्रः सिद्धः प्रकीर्त्यते ॥ ॐ ह्रीं नमः कृष्णवाससे स्तुते विश्वसहस्र ॥ १०६०॥

---

१ ॐ ह्रीं नमः कृष्णवाससे स्तुते विश्वसहस्रहिंसिनि सहस्रावने महबलेपराजिते प्रत्याङ्गिरे परसैन्यपरकर्म्मविध्वंसिनि परमन्त्रोत्सादिनि सर्वभूतदमनि सर्वदेवान्बन्धबन्ध सर्वविघ्नां छिन्धि छिन्धि क्षोभयक्षोभय परयन्त्राणि स्फोटयस्फोटय सर्वशृंखलां त्रोटयत्रोटय ज्वलज्ज्वालाजिह्वे करालवदने प्रत्यंगिरे ह्रीं नमः ॥

हिंसिनि सहस्रावने महाबलेपराजिते ॥ प्रत्यङ्गिरे परसैन्यपर कर्म्मपदं वदेत् ॥ १०६१ ॥ विध्वंसिनि परमन्त्रोत्सादिनीति ततो वदेत् ॥ सर्वभूतेति दमनि सर्वदेवान्वदेत्ततः ॥ १०६२ ॥ बन्धयुग्मं सर्वविद्यां छिन्धिछिन्धि क्षोभयद्वयम् ॥ परयन्त्राणीति वदेत्स्फोटयद्वितयं ततः ॥ ॥ १०६३ ॥ सर्वशृङ्खलां त्रोटयत्रोटय ज्वलदुच्चरेत् ॥ ज्वालाजिह्वे कराळेति वदने प्रत्यङ्गुच्चरेत् ॥ १०६४ ॥ गिरे ह्रींनम इत्येष सपादशतवर्णवान् ॥ ब्रह्मानुष्टुम्मुनिश्छन्दो देवी प्रत्यङ्गिरा मता ॥ १०६५ ॥ बीजशक्ती तारमाये कृत्याकार्य्ये नियोजयेत् ॥ षडङ्गानां विधिश्चात्र षड्दीर्घान्वितमायया ॥ १०६६ ॥ सिंहारूढातिकृष्णाङ्गी ज्वालावक्त्रा भयङ्करा ॥ शूलशस्त्रकरा खड्गं दधती या तु तां भजे ॥ १०६७ ॥ अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं सहस्रं तिलराजिकाः ॥ हुत्वा सिद्धमनुर्मन्त्री प्रयोगेषु शतं जपेत् ॥ ॥ १०६८ ॥ ग्रहभूतादिकारिष्टं सिञ्चेन्मन्त्रं जपञ्जलैः ॥ विनाशयेत्परकृतं यन्त्रमन्त्रादिसाधनम् ॥ १०६९ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि चामुण्डाया महामनुम् ॥ नवदुर्गात्मकं यस्य सेवनाद्भुक्तिमुक्तिके ॥ १०७० ॥ सुरथो यत्प्रसादेन राज्यं प्राप्य भवेन्मनुः ॥ संसारबन्धनिर्नाशि ज्ञानमाप समाधिना ॥ १०७१ ॥ मार्कण्डेयपुराणोक्तचरित्रत्रितयस्तवः ॥ जपाद्यस्य फलं दद्यात्तं मनुं वच्मि साम्प्रतम् ॥ १०७२ ॥ वाग्लज्जाकामबीजानि चामुण्डायै पदं वदेत् ॥ विच्चे नवार्णमन्त्रोयं शक्तिमन्त्रोत्तमोत्तमः ॥ ॥ १०७३ ॥ ब्रह्माविष्णुमहेशास्तु मुनयोस्य प्रकीर्त्तिताः ॥ गायत्र्युष्णिगनुष्टुप् च च्छन्दस्त्रयमुदीरितम् ॥ १०७४ ॥ देवोस्य तु महाकाली महलक्ष्मीः सरस्वती ॥ नन्दाशाकम्भरीभीमाशक्तित्रयमुदाहृतम् ॥ १०७५ ॥ अस्य बीजत्रयं दुर्गा भ्रामरी रक्तदन्तिका ॥ अग्निवायुभगास्तत्त्वं प्राग्वद्न्यादिकं न्यसेत् ॥ १०७६ ॥ स्तनयोः शक्तिबीजानि तत्त्वानि हृदये पुनः ॥ तत एकादशन्यासान्कुर्य्यादिष्टफलप्रदान् ॥ १०७७ ॥ प्रथमं मातृकान्यासं प्रागुक्तं च समाचरेत् ॥ कृतेन येन देवस्य सारूप्यं याति मानवः ॥ १०७८ ॥

१ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ॥

अथ द्वितीयं कुर्वीत न्यासं सारस्वताभिधम् ॥ बीजत्रयं[1] तु मन्त्राद्यं तारादिहृदयान्तकम् ॥ १०७९ ॥ षडक्षरो भवेन्मन्त्रो नवस्थानेषु विन्यसेत् ॥ कनिष्ठानामिकामध्यातर्जन्यंगुष्ठयुग्मके ॥ १०८० ॥ करमध्ये हस्तपृष्ठे मणिबन्धे च कूर्परे ॥ हृदयादिषडङ्गेषु जातियुक्तं पुनर्न्यसेत् ॥ १०८१ ॥ अस्मिन्सारस्वते न्यासे कृते जाड्यं विनश्यति ॥ न्यासः कार्यः सप्तशत्याः पठेत्कामविशेषतः ॥ १०८२ ॥ ततस्तृतीयं कुर्वीत न्यासं मातृगणादिकम् ॥ मायाबीजादिका[2] ब्राह्मी पूर्वतः पातु मां सदा ॥ १०८३ ॥ माहेश्वरी तथाग्नेय्यां कौमारी दक्षिणेऽवतु ॥ वैष्णवी पातु कौणप्यां[3] वाराही पश्चिमेवतु ॥ १०८४ ॥ इन्द्राणी पावने कोणे चामुण्डा चोत्तरेवतु ॥ ऐशान्ये तु महालक्ष्मीरूर्ध्वं व्योमेश्वरी तथा ॥ १०८५ ॥ सप्तद्वीपेश्वरी भूमौ रक्षेत्कामेश्वरी तथा ॥ तृतीयेस्मिन्कृते न्यासे त्रैलोक्ये विजयी भवेत् ॥ १०८६ ॥ न्यासं चतुर्थं कुर्वीत नन्दजादिसमन्वितम् ॥ नन्दजा पातु पूर्वाङ्गं कमलांकुशमण्डिता ॥ १०८७ ॥ खड्गपात्रकरा पातु दक्षिणे रक्तदन्तिका ॥ पृष्ठे शाकम्भरी पातु पुष्पपल्लवसंयुता ॥ १०८८ ॥ धनुर्बाणकरा दुर्गा वामे पातु सदैव माम् ॥ शिरःपात्रकरा भीमा मस्तकाच्चरणावधि ॥ १०८९ ॥ पादादिमस्तकं यावद्भ्रामरी चित्रकान्तिभव ॥ तुर्य्यं न्यासं नरः कुर्वञ्जरामृत्युं व्यपोहति ॥ १०९० ॥ ब्रह्माद्यम । कुर्वीत न्यासं पञ्चममुत्तमम् ॥ पादादिनाभिपर्यन्तं ब्रह्मा पातु सनातनः ॥ १०९१ ॥ नाभेर्विशुद्धिपर्य्यन्तम्पातु नित्यञ्जनार्दनः ॥ विशुद्धेर्ब्रह्मरन्ध्रान्तम्पातु रुद्रस्त्रिलोचनः ॥ १०९२ ॥ हंसः पातु पदद्वन्द्वं वैनतेयः करद्वयम् ॥ चक्षुषी वृषभः पातु सर्वाङ्गानि गजाननः ॥ १०९३ ॥ परापरौ देहभागौ पात्वानन्दमयो हरिः ॥ कृतेस्मिन्पञ्चमे न्यासे सर्वकामानवाप्नुयात् ॥ १०९४ ॥ षष्ठं न्यासन्ततः कुर्य्यान्महालक्ष्म्यादिसंयुतम् ॥ मध्यं पातु महालक्ष्मीरष्टादशभुजान्विता ॥

---

१ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः कनिष्ठायुग्मे, ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः अनामिकायुग्मे, ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः मध्यमायुग्मे, अस्यैव षडक्षरस्य न्यासाच्छेषस्थानेष्वपि कुर्य्यात् ॥ २ ह्रीं ब्राह्मी मां पूर्वतः पातु, ह्रीं माहेश्वरी आग्नेय्यां पातु एवमन्यत्रन्यस्येत् ॥ ३ नैर्ऋत्याम् ॥

॥ १०९५ ॥ ऊर्ध्वं सरस्वती पातु भुजैरष्टाभिरूर्जिता ॥ अधः पातु महाकाली दशबाहुसमन्विता ॥ १०९६ ॥ सिंहो हस्तद्वयम्पातु परहंसोक्षियुग्मकम् ॥ १०९७ ॥ महिषं हि समारूढो यमः पातु पदद्वयम् ॥ महिषश्चण्डिकायुक्तः सर्वाङ्गानि ममावतु ॥ १०९८ ॥ षष्ठेस्मिन्विहिते न्यासे सद्गतिं प्राप्नुयान्नरः ॥ मूलाक्षरन्यासरूपन्ततः कुर्वीत सप्तमम् ॥ १०९९ ॥ ब्रह्मरन्ध्रे[1] नेत्रयुगे श्रुत्योर्नासिकयोर्मुखे ॥ ११०० ॥ पायौ मूलमनोर्वर्णांस्ताराद्यान्विन्यसेत्सुधीः ॥ नमोन्तान्सप्तमोस्मिंस्तु कृते रोगक्षयो भवेत् ॥ ११०१ ॥ पायुतो ब्रह्मरन्ध्रान्तं पुनस्तानेव विन्यसेत् ॥ कृतेस्मिन्नष्टमे न्यासे सर्वं दुःखं विनश्यति ॥ ११०२ ॥ कुर्वीत नवमं न्यासं मन्त्रव्याप्तिस्वरूपकम् ॥ मस्तकाच्चरणं यावच्चरणान्मस्तकावधि ॥ ११०३ ॥ पुरोदक्षे पृष्ठदेशे वामभागेषु सन्न्यसेत् ॥ मूलमन्त्रकृतो न्यासो नवमो देवताप्रियकृत् ॥ ११०४ ॥ ततः कुर्वीत दशमं षडङ्गन्यासमुत्तमम् ॥ मूलमन्त्रं जातियुक्तं हृदयादिषु विन्यसेत् ॥ कृतेस्मिन्दशमे न्यासे त्रैलोक्यं वशमानयेत् ॥ ११०५ ॥ चण्डीपाठेपि कर्त्तव्या न्यासाश्चेष्टप्रदायकाः ॥ अन्यन्यासोक्तफलदं कुर्यादेकादशन्ततः ॥ ११०६ ॥ खङ्गिनी शूलिनीत्यादि पठित्वा श्लोकपञ्चकम् ॥ आद्यं कृष्णतरं बीजं ध्यात्वा सर्वाङ्गके न्यसेत् ॥ ११०७ ॥ शूलेन पाहिनो देवीत्यादिश्लोकचतुष्टयम् ॥ पठित्वा सूर्यसदृशं द्वितीयं पृष्ठतो न्यसेत् ॥ ११०८ ॥ ततः षडङ्गं कुर्वीत विभक्तैर्मूलवर्णकैः ॥ एकेनैकेन चैकेन चतुर्भिर्युग्मकेन च ॥ ११०९ ॥ समस्तेनैव मन्त्रेण कुर्य्यादङ्गानि षट् क्रमात् ॥ शिखायां नेत्रयोः श्रुत्योर्नसोर्वक्त्रे गुदे न्यसेत् ॥ १११० ॥ मन्त्रवर्णान्समस्तेन व्यापकाष्टकमाचरेत् ॥ ततो देवीत्रयं ध्यायेत्कालिकाध्यानमुच्यते ॥ ११११ ॥ दशास्यां दशपादां च दशहस्तां विधिस्तुताम् ॥ इन्द्रनीलद्युतिं खड्गं चक्रं शङ्खं शिरः शरान् ॥ १११२ ॥ दक्षहस्तेषु दधतीं गदां शूलं भुशुण्डिकाम् ॥ परिघं च धनुर्बाणौ दधतीं ब्रह्मसंस्तुताम् ॥ मधुकैटभनाशार्थं सालङ्कारां त्रिवीक्षणाम् ॥ १११३ ॥ ततो ध्यायेन्महालक्ष्मीं महिषासुरमर्दिनीम् ॥ सम-

---

१ ऐंनमः ब्रह्मरन्ध्रे, ह्रींनमः दक्षनेत्रे, क्लींनमः वामनेत्रे । एवमन्यत्रापि शेषेषु न्यसेत् ॥

स्तदेवतातेजोजातां पद्मासनस्थिताम् ॥ १११४ ॥ अष्टादशभुजामक्षमालां पद्मं च सायकान् ॥ खड्गं वज्रं गदां चक्रन्दक्षहस्ते कमण्डलुम् ॥१११५॥ शंखं च दधतीं वामे शक्तिं च परशुं धनुः ॥ चर्मदण्डौ सुरापात्रं घंटां पाशं त्रिशूलकम् ॥ १११६ ॥ सरस्वतीं ततो ध्यायेच्छरच्चन्द्रसमप्रभाम् ॥ शंखं च मुशलं चक्रं दक्षहस्तेषु बिभ्रतीम् ॥ १११७ ॥ घण्टां शूलं हलं चापं वामहस्तेषु बिभ्रतीम्॥ गौरीदेहसमुद्भूतां नृणामानन्ददायिनीम्॥ १११८॥ आधारभूतां जगतः शुम्भादिकविमर्दिनीम् ॥ अधिष्ठात्रीं तृतीयं हि चारित्रं च स्मरेत्सदा ॥ १११९ ॥ एवं ध्यात्वा जपेल्लक्षचतुष्कं तद्दशांशतः ॥ पायसान्नेन जुहुयात्पूजिते हेमरेतसि ॥ ११२० ॥ जयादिशक्तिभिर्युक्ते पीठे देवीं समर्चयेत् ॥ एतद्यन्त्रं वृत्तत्र्यस्रषट्कोणाष्टदलान्वितम् ॥११२१॥ श्रिया च नैर्ऋते विष्णुं वायव्ये तूमया शिवम्॥ विदारयन्तं महिषं प्राक्कोणे मृगपं यजेत्॥ ॥ ११२२ ॥ षट्कोणेषु च पूर्वादौ नन्दजां रक्तदन्तिकाम् ॥ शाकम्भरीं तथा दुर्गां भीमां च भ्रामरीं यजेत् ॥ ११२३ ॥ तारस्वबीजपूर्वाश्च ङेन्ता हृदयसंयुताः ॥ सर्वासामेव शक्तीनां नाममन्त्रा यतः स्मृताः ॥ ११२४ ॥ ततश्चाष्टदले ब्राह्मीं माहेशीं च कुमारिकाम् ॥ वैष्णवीं चापि वाराहीं तथेन्द्राणीं प्रपूजयेत् ॥ ११२५ ॥ चामुण्डामथ तद्बाह्ये चतुर्विंशदलेर्चयेत् ॥ विष्णु मायां चेतनां च बुद्धिं निद्रां क्षुधान्तथा ॥ ११२६ ॥ छायां शक्तिं परां तृष्णां क्षान्तिं जातिं तदुत्तरम् ॥ लज्जां शान्तिं तथा श्रद्धां कान्तिं लक्ष्मीं धृतिं तथा ॥ ११२७ ॥ वृत्तिं स्तृतिं स्मृतिं चापि दयां तुष्टिं ततः परम् ॥ पुष्टिं च मातरं भ्रान्तिमर्चयेद्भूपुरेषु च ॥ ११२८ ॥ चतुष्कोणेषु गणपं क्षेत्रेशं बटुकं तथा ॥ योगिनीश्च सुरेशाद्यांस्तद्बाह्ये चायुधानि च॥ ११२९॥ मार्कण्डेयपुराणोक्तं नित्यं चण्डीस्तवं पठेत् ॥ पुटितं मूलमन्त्रेण जपन्नाप्नोति वाञ्छितम् ॥११३०॥ कलौ न चण्डीसदृशी सिद्धिदा भुवनत्रये ॥ वामदक्षिणमार्गाभ्यामधिकारिफलप्रदा ॥ ११३१ ॥ तत्रादिमं चारित्रं तु रोगनाशाय योजयेत् ॥ उपसर्गविनाशाय मध्यमं योजयेद्बुधः ॥ ११३२ ॥ अन्त्यं विषयकामस्तु चारित्रं परिशीलयेत् ॥ चरित्रद्वयशीलस्य न वंशश्छि-

घते क्वचित् ॥ ११३३ ॥ पठेदाद्यं तु चरितं विपत्तिस्तस्य नश्यति ॥ अनाद्यं पठते यस्तु मारयेदचिराद्रिपून् ॥ ११३४ ॥ सार्थानुस्वारपद्यं च सप्तशत्याश्च यो जपेत् ॥ यस्तु मन्त्रेण पुटितं तत्पृष्ठाङ्कस्य संख्यया ॥ ११३५ ॥ पठेच्च श्रीं तथाद्यन्ते सकामस्तस्य सिद्ध्यति ॥ स्वशत्रून्दैत्यभावेन स्वमित्रान्देवताधिया ॥ ११३६ ॥ भावेन यो जपेच्चण्डीं त्रिसन्ध्यं मासमात्रकम् ॥ मृता वा मृतकल्पा वा शत्रवः स्युर्न संशयः ॥ ११३७ ॥ सितपक्षादिमारभ्य चाष्टम्यन्तमिषस्य च ॥ जपेल्लक्षमनुं होमः स्वाद्यैस्त्रिमधुराप्लुतैः ॥ ११३८ ॥ प्रत्यहं पूजयेद्देवीं चण्डीमाद्यां तथा पठेत् ॥ विप्रान्गुरून्समाराध्य वाञ्छितं लभते द्रुतम् ॥ ११३९ ॥ सप्तशत्याश्चरित्रस्य प्रथमस्य विधिर्मुनिः ॥ छन्दो गायत्रमुदितं महाकाली तु देवता ॥ ११४० ॥ ॥ वाग्बीजं पावकस्तत्त्वं धर्मार्थे विनियोजनम् ॥ प्रयोगाणान्तु नवतिर्मारणे मोहनेत्र तु ॥ ११४१ ॥ मध्यमस्य चरित्रस्य मुनिर्विष्णुरुदाहृतः ॥ उष्णिक् छन्दो महालक्ष्मीर्देवता बीजमद्रिजा ॥ ११४२ ॥ वायुस्तत्त्वं धनप्राप्त्यै विनियोग उदाहृतः ॥ उच्चाटे स्तम्भने चात्र प्रयोगाणां शतद्वयम् ॥ ११४३ ॥ उत्तमस्य चरित्रस्य मुनिः शङ्कर उच्यते ॥ महासरस्वती देवी त्रिष्टुप् छन्द उदाहृतम् ॥ ११४४ ॥ कामो बीजं रविस्तत्त्वं कामाप्त्यै विनियोजनम् ॥ विद्वेषवश्ययोश्चात्र प्रयोगा दिक्कृतैर्मिताः ॥ ११४५ ॥ एवं सप्तशतं चात्र प्रयोगाः परिकीर्तिताः ॥ तस्मात्सप्तशतीत्येवं व्यासेन परिकीर्तिता ॥ ११४६ ॥ सौम्यानि यानि रूपाणीत्यत्रापि परिकीर्तिताः ॥ उपास्या दक्षिणे मार्गे लक्ष्म्याद्याः सप्त शक्तयः ॥ तस्मात्सप्तशतीत्येवं प्रोक्ता व्यासेन धीमता ॥ ११४७ ॥ महाविद्येत्यादिसप्तशक्त्यो ब्रह्मणा स्तुताः ॥ तस्मात्सप्तशतीत्येवं प्रोक्ता व्यासेन धीमता ॥ ११४८ ॥ ब्रह्मेन्द्रगुरुशुक्राणां विष्णुरुद्रसुरद्विषाम् ॥ उपास्या देवता यास्ता इह सप्तशती ह्यतः ॥ ११४९ ॥ लक्ष्मीश्च ललिता काली दुर्गा गायत्र्यरुन्धती ॥ सरस्वती चेति सप्त ह्युपास्या वाममार्गतः ॥ ११५० ॥ काली तारा छिन्नमस्ता सुमुखी भुवनेश्वरी ॥ बाला कुब्जेति मनवः सूचिताः सम्प्रकीर्तिताः ॥ ११५१ ॥ नाम्ना सप्तशती

चेति मध्यमे चरिते द्विधा ॥ तत्तन्मन्त्रोक्तसङ्केतैर्मन्त्रशक्तिः प्रजायते ॥ ११५२ ॥ एवं स्तवाभियुक्तानामित्यारभ्य तृतीयके ॥ चरिते शक्तयस्सप्त चामुण्डान्ताः प्रकीर्तिताः ॥ ११५३ ॥ हंसयुक्तविमानाग्रे इत्यारभ्य प्रकीर्तिताः ॥ ब्रह्माण्याद्याः सप्तसंख्या वर्तमानाश्च तत्र हि ॥ ११५४ ॥ वैवस्वतेन्तरे प्राप्ते इत्यारभ्य च सप्त तु ॥ शक्तयः प्रोक्ताः स्वयं देव्यास्तस्मात्सप्तशती स्मृता ॥ ११५५ ॥ सप्तशत्यास्तु सत्तत्वं वेद्म्यहं सर्वमेव हि ॥ पादोनं श्रीहरिर्वेत्ति वेत्त्यर्धन्तु प्रजापतिः ॥ ११५६ ॥ व्यासस्तुर्य्यांशकं वेत्ति कोट्यंशमितरे जनाः ॥ यथामन्त्रस्तु सिद्ध्यर्थं योज्यते क्रियतेथवा ॥ ११५७ ॥ बीजादिकं तथा सद्भिः कामनावशतः क्वचित् ॥ वर्णानां च पदानां च व्यत्यासस्तु व्यवस्थितः ॥ ११५८ ॥ शब्दशास्त्रविरुद्धो यः पाठः सोऽशुभकर्म्मणि ॥ शब्दशास्त्राविरुद्धस्तु पाठः शान्तिकपौष्टिके ॥ ११५९ ॥ सार्थस्मृतिं पठेच्चण्डीस्तवं स्पष्टपदाक्षरम् ॥ समाप्तौ तु महालक्ष्मीं ध्यात्वा कृत्वा षडङ्गकम् ॥ जपेदष्टशतम्मूलं देवतायै निवेदयेत् ॥ ११६० ॥ एवं यः कुरुते सोत्र नावसीदति कुत्रचित् ॥ शतचण्डीविधानन्तु प्रवक्ष्ये च प्रियं नृणाम् ॥ ११६१ ॥ नृपोपद्रवमापन्ने दुर्भिक्षे भूमिकम्पने ॥ अतिवृष्ट्यामनावृष्टौ परचक्रभये क्षये ॥ ११६२ ॥ सर्वविघ्ना विनश्यन्ति शतचण्डीविधौ कृते ॥ रोगाणां वैरिणां नाशो धनपुत्रसमृद्धयः ॥ ११६३ ॥ शङ्करस्य भवान्या वा प्रासादनिकटे शुभम् ॥ मण्डपं द्वारवेद्याद्यं कुर्य्यात्सध्वजतोरणम् ॥ तत्र कुण्डं प्रकुर्वीत प्रतीच्याम्मध्यतोपि वा ॥ ॥ ११६४ ॥ स्नात्वा नित्यकृतिं कृत्वा वृणुयाद्दशवाडवान् ॥ जितेन्द्रियान्सदाचारान्कुलीनान्सत्यवादिनः ॥ व्युत्पन्नांश्चण्डिकापाठे रतांल्लज्जादयावतः ॥ ११६५ ॥ मधुपर्कविधानेन वस्त्रशस्त्रादिदानतः ॥ पाद्यार्घ्यमासनम्मालां दद्यात्तेभ्योपि भोजनम् ॥ ११६६ ॥ ते हविष्यान्नमश्नन्तो मन्त्रार्थगतमानसाः ॥ भूमौ शयानाः प्रत्येकञ्जपेयुश्चण्डिकास्तवम् ॥ मार्कण्डेयपुराणोक्तं दशकृत्वः सचेतसः ॥ ११६७ ॥ नवार्णचण्डिकामन्त्रञ्जपेयुश्चायुतं पृथक् ॥ यजमानः पूजयेच्च कन्यानां नवकं शुभम् ॥ ११६८ ॥ द्विवर्षाद्या

दशाब्दान्ताः कुमारीः परिपूजयेत् ॥ नाधिकाङ्गीं न हीनाङ्गीं कुष्ठिनीं च व्रणाङ्किताम् ॥ ११६९ ॥ अन्धाक्षीं केकराक्षीं च कुरूपां रोमयुक्ततनुम् ॥ दासीजाताम्भोगयुक्तामिष्टां कन्यां न पूजयेत् ॥ ११७० ॥ विप्रां सर्वेष्टसंसिद्ध्यै यशसे क्षत्रियोद्भवाम् ॥ वैश्यजां धनलाभाय पुत्राप्त्यै शूद्रजां यजेत् ॥ ॥ ११७१ ॥ द्विवर्षा सा कुमार्य्युक्ता त्रिमूर्त्तिर्हायनत्रिका ॥ चतुरब्दा तु कल्याणी पञ्चवर्षा तु रोहिणी ॥ ११७२ ॥ षडब्दा कालिका प्रोक्ता चण्डिका सप्तहायना ॥ अष्टवर्षा शाम्भवी स्याद्दुर्गा तु नवहायना ॥ ११७३ ॥ सुभद्रा दशवर्षोक्ता नाममन्त्रैः प्रपूजयेत् ॥ एकाब्दां ह्यप्रीतिभावाद्रुद्राब्दान्तु विवर्ज्जयेत् ॥ ११७४ ॥ तासामावाहने मन्त्रः श्लोकरूपो निगद्यते ॥ मन्त्राक्षरमयीं लक्ष्मीं मातॄणां रूपधारिणीम् ॥ ११७५ ॥ नवदुर्गात्मिकां साक्षात्कन्यामावाहयाम्यहम् ॥ कुमारिकादिकन्यानाम्पूजामन्त्रान्ब्रुवेऽधुना ॥ ११७६ ॥ जगत्पूज्ये जगद्वन्द्ये सर्वशत्रुविनाशिनि ॥ पूजां गृहाण कौमारि जगन्मातर्नमोस्तु ते ॥ ११७७ ॥ त्रिपुरां त्रिपुराधारां त्रिवर्गज्ञानरूपिणीम् ॥ त्रैलोक्यवन्दितां देवीं त्रिमूर्तिं पूजयाम्यहम् ॥ ११७८ ॥ कालात्मिकां कलातीतां कारुण्यहृदयां शिवाम् ॥ कल्याणजननीन्नित्यां कल्याणीं पूजयाम्यहम् ॥ ११७९ ॥ कामचारां शुभां कान्तां कालचक्रस्वरूपिणीम् ॥ कामदां करुणोदारां कालिकाम्पूजयाम्यहम् ॥ ११८० ॥ चण्डीम्पूज्यां चण्डिमयीं चण्डमुण्डप्रभञ्जिनीम् ॥ पूजयामि सदा देवीं चण्डिकां चण्डविक्रमाम् ॥ ११८१ ॥ सदानन्दकरां शान्तां सर्वदेवनमस्कृताम् ॥ सर्वभूतात्मिकां लक्ष्मीं शाम्भवींपूजयाम्यहम् ॥ ११८२ ॥ दुर्गमे दुस्तरे कार्य्ये भवदुःखविनाशिनीम् ॥ सुन्दरीं पूजयेद्भक्त्या दुर्गान्दुर्गार्तिनाशिनीम् ॥ ११८३ ॥ सुन्दरीं स्वर्णवर्णाभां सुखसौभाग्यदायिनीम् ॥ सुभद्रजननीं देवीं सुभद्राम्पूजयाम्यहम् ॥ ॥ ११८४ ॥ एतैर्मन्त्रैर्लक्षणाढ्यान्तांतां कन्याम्प्रपूजयेत् ॥ गन्धैः पुष्पैर्भक्ष्यखाद्यैर्वस्त्रैराभरणैरपि ॥ ११८५ ॥ वेद्यां विरचिते रम्ये सर्वतोभद्रमण्डले ॥ घटं संस्थाप्य विधिवत्तत्रावाह्यार्चयेच्छिवाम् ॥ ११८६ ॥ तदग्रे कन्यकाश्चापि भोजयेद्ब्राह्मणानपि ॥ उपचारैश्च विधिवत्पूर्वोक्तावरणान्यपि ॥

॥ ११८७ ॥ एवं चतुर्दिनं कृत्वा पञ्चमे होममाचरेत् ॥ पायसान्नैस्त्रिमध्व- क्तैर्द्राक्षारम्भाफलैरपि ॥११८८॥ मातुलुङ्गैरिक्षुखण्डैर्नारिकेलैः पुनस्तिलैः॥ जातीफलैराम्रफलैरन्यैर्मधुरवस्तुभिः ॥ ११८९ ॥ सप्तशत्या दशावृत्त्या प्रतिश्लोकं हुतं चरेत् ॥ अयुतं च नवार्णेन स्थापितेऽग्नौ विधानतः ॥ ॥ ११९० ॥ कृत्वावरणदेवानां होमं तन्नाममन्त्रतः ॥ कृत्वा पूर्णाहुतिं सम्यग्देवमाग्निं विसृज्य च ॥ ११९१ ॥ अभिषिञ्चेच्च यष्टारं विप्रौघः कल- शोदकैः ॥ निष्कं सुवर्णमथ वा प्रत्येकन्दक्षिणां दिशेत् ॥ ११९२ ॥ भो- जयेच्च पृथग्विप्रान्भक्ष्यखाद्यैः पृथग्विधैः ॥ तेभ्योपि दक्षिणान्दत्त्वा गृह्णीया- दाशिषः शुभाः ॥ ११९३ ॥ एवंकृते जगद्वश्यं सर्वे नश्यन्त्युपद्रवाः ॥ राज्यं धनं यशः पुत्रानिष्टमन्यल्लभेत च ॥ ११९४ ॥ एतद्दशगुणं कुर्या- च्चण्डीसाहस्रजं विधिम् ॥ विद्यावतः सदाचारान्ब्राह्मणान्वृणुयाच्छतम् ॥ ॥ ११९५ ॥ प्रत्यहं चण्डिकापाठान्विदध्युस्ते शतोन्मितान् ॥ अयुतं च जपेयुस्ते प्रत्येकं च नवार्णकम् ॥ ११९६ ॥ पूर्वोक्ताः कन्यकाः पूज्याः पूर्वमन्त्रैः शतं शुभाः ॥ एवं दशाहं सम्पाद्य होमं कुर्य्यात्प्रयत्नतः ॥ ११९७ ॥ सप्तशत्याः शतावृत्त्या प्रतिश्लोकं विधानतः ॥ लक्षसंख्यं नवार्णं च पूर्वोक्तद्रव्यसञ्चयैः ॥ ११९८ ॥ होतृभ्यो दक्षिणान्दत्त्वा पूर्वो- क्तान्भोजयेद्द्विजान् ॥ सहस्रसम्मितान्साधून्देव्याराधनतत्परान् ॥ ११९९ ॥ एवं सहस्रसंख्याके कृते चण्डीविधौ नृणाम् ॥ सिद्ध्यत्यभीप्सितं कर्म्म दुःखौ- घश्च विनश्यति ॥ नारीदुर्भगरोगाद्या नश्यन्ति व्यसनोच्चयाः ॥ १२०० ॥ नेमं विधिं वदेद्दुष्टे खले चौरे श्रुतिद्रुहि ॥ साधौ जितेन्द्रिये दान्ते वदेद्विधिमि- मम्परम् ॥ एवं सावर्णिका तुष्टा ब्रह्मश्रोतॄन्प्ररक्षति ॥ १२०१ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि महालक्ष्म्या महामनुम् ॥ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं वेदवर्णो मन्त्रश्चास्या उदाहृतः ॥ १२०२ ॥ ऋषिर्भृगुर्निवृत्पूर्वमनुष्टुप्छन्द ईरितम् ॥ देवता कमला प्रोक्ता सर्वसम्पत्करी शुभा ॥ एकाक्षरविधानेन तदङ्गानि प्रकल्पयेत्॥ ॥ १२०३ ॥ चतुर्भिः श्वेतकरिभिर्घटैर्मणिमयैः सदा ॥ आसिच्यमाना रत्नाभा पद्मस्था पद्मलोचना ॥ पद्मद्वयं च हस्तेषु बिभ्रती नृपसेविता ॥

॥ १२०४ ॥ एकाक्षरोदिते पीठे यजेद्देवीं च पूर्ववत ॥ अर्कलक्षं जपेन्मन्त्री नियताशी हुतं चरेत् ॥ तत्सहस्रं सरोजैश्च रक्तैस्त्रिस्वादुसंयुतैः ॥ पूर्वत्रोक्तप्रयोगांश्च कुर्य्यान्मन्त्री यथाविधि ॥ १२०५ ॥ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं समुच्चार्य्य हस्रा औयुताः पुनः ॥ विसर्गान्ताः पञ्चमन्तु बीजमेतदुदाहृतम् ॥ ॥ १२०६ ॥ जगत्प्रसूत्यै हृदयं द्वादशार्णो मनुः स्मृतः ॥ प्रणवादिरयम्मन्त्रः स्यात्त्रयोदशवर्णकः ॥ १२०७ ॥ कण्वाद्या ब्रह्मगायत्री महालक्ष्मीः प्रकीर्त्तिता ॥ संशोध्य मनुना पाणिं प्रणवाद्यं हृदन्तकम् ॥ १२०८ ॥ अंगुलीषु क्रमान्मन्त्री विन्यसेद्बीजपञ्चकम् ॥ मन्त्रशेषं जपेन्मन्त्री तलयोरुभयोरपि ॥ १२०९ ॥ मूर्द्धादिचरणं यावन्मन्त्रेण व्यापकं न्यसेत् ॥ शेषं सप्तार्णकं मन्त्री विन्यसेद्धृदयादिषु ॥ १२१० ॥ पञ्चबीजैः पञ्च मन्त्री शेषैः षष्ठन्तु कल्पयेत् ॥ चतुर्थे ज्ञानमुख्यैश्च युक्तं कुर्य्यात्षडङ्गकम् ॥१२११॥ ज्ञानैश्वर्य्ये शक्तिबले वीर्य्यं तेजश्च षट् क्रमात्॥एवं न्यसेन्मनुं मन्त्री चिन्तयेदिष्टदेवताम् ॥१२१२॥ आदौ स्मरेत्स उद्यानं सर्वर्तुप्रतिशोभितम् ॥ मन्दान्दोलितकर्पूरकदलीवृन्दमण्डितम् ॥१२१३॥ अशोकनागसरलकोविदारमनोरमम् ॥ मल्लिकायूथिकाकुन्दमदयन्तीसुगन्धिकम् ॥१२१४॥ द्राक्षावल्लीनागवल्लीमाधवीदेवदारुभिः ॥ नमेरुभिर्लवङ्गैश्च चन्दनै रक्तचन्दनैः ॥ १२१५ ॥ वञ्जुलैर्मातुलुङ्गैश्च दाडिमीलकुचैः शुभम् ॥ नारिकेलैश्च खर्ज्जूरैः पूगैः कुरबकैर्वृतम् ॥ १२१६ ॥ मालतीकेतकीजातीपाटलीतुलसीवृतम् ॥ नंद्यावर्त्तैर्मदनकैः सर्वर्त्तुकुसुमोज्ज्वलम् ॥ १२१७ ॥ प्रमदैः पिचुमन्दैश्च मन्दारैरुपशोभितम् ॥ १२१८ ॥ शिरीषैः पनसैरुच्चैः शाखोटैरुपशोभितम् ॥ महानसन्तस्य मध्ये स्मरेन्मन्त्री मनोरमम् ॥ मल्लिकायूथिकाकुन्दजातीमालतिकावृतम् ॥ १२१९ ॥ भ्रमद्भ्रमरमालाभिरलंकृतचतुर्दिशम् ॥ केकिकेकारवाकीर्णं लक्ष्मणासारसावृतम् ॥ १२२० ॥ कौरव्यहंससंघातं चक्रकारण्डवोज्ज्वलम् ॥ फुल्लैः सरसिजै रम्यैः कह्लारैः कैरवैरपि ॥ १२२१ ॥ नीलेन्दीवरसंघैश्च सुगन्धिकुसुमैर्वृतम् ॥ सर्वर्तुशोभिभिः कल्पद्रुमैर्मण्डितमुज्ज्वलम् ॥ १२२२ ॥ पुलिनं तत्र तन्मध्ये

रत्नमण्डपकुट्टिमम् ॥ समुद्यदर्कसन्दोहकिरणद्युतिभास्करम् ॥१२२३॥ हिम रश्मिकरव्रातसिक्तामृतसुशीतलम् ॥ प्रोल्लसद्दलितस्वर्णप्राकारसुमनोहरम् ॥ ॥ १२२४ ॥ नवरत्नमयप्रोद्यत्कपाटाट्टालिकावृतम् ॥ नूतनोद्यन्महारत्नरचितं तुङ्गगोपुरम् १२२५ ॥ तप्तगालितहेमादिदण्डध्वजसमूहकम् ॥ वैडूर्य्यादिमहारत्नरचितस्तम्भराजितम् ॥ १२२६ ॥ सन्तप्तस्वर्णरचितगवाक्षशतसंकुलम् ॥ हेमदण्डस्फुरद्दीपसहस्रं सुमनोहरम् ॥ १२२७ ॥ नानाविधक्षौमैर्वस्त्रै रचिताभिश्च काञ्चनैः ॥ सक्षुद्रघण्टिकायुक्तपताकाभिरलंकृतम् ॥ शरद्राकासुधारश्मिदुकूलरचितैः शुभैः ॥ विचित्रवसनोद्भूतैर्युतं चन्द्रायुतैरपि ॥ ॥ १२२८ ॥ काञ्चनोर्वीमणिव्रातकुट्टिमालंकृतं शुभम् ॥ घनसारागुरुनखकस्तूरीकुंकुमैरपि ॥ १२२९ ॥ तमालैर्द्रव्यजातैश्च सुगन्धिभिरथेतरैः ॥ क्रमादेवं चतुर्द्वारं मण्डपं परिचिन्तयेत् ॥ १२३० ॥ तदन्तः पारिजातस्य मूले सिंहासनं नवम् ॥ नानारत्नगणाकीर्णं तत्र देवीं विचिन्तयेत्॥१२३१॥ बालभास्करसत्कान्ति शशिशेखरमण्डिताम् ॥ मुक्ताहारोज्ज्वलां रम्यां रत्नाकल्पविभूषिताम् ॥ १२३२ ॥ हस्ताम्भोजैश्च बिभ्राणां नूतनां शालिमञ्जरीम् ॥ पद्मद्वयं कौस्तुभं च सस्मितास्यसरोरुहाम् ॥१२३३॥ विकचोत्पलसंशोभिनयनत्रयभूषिताम् ॥ क्वणन्नूपुरसम्फुल्लरक्तोत्पलपदद्वयाम् ॥१२३४॥ नितम्बविलसद्धेमरशनादाममञ्जुलाम् ॥ बलित्रयलसद्वेदिमध्यदेशसुशोभिताम् ॥ ॥ १२३५ ॥ गंभीरावृत्तहन्नाभिहृदमण्डलमण्डिताम् ॥ यक्षकर्दमसंलिप्तपीनोन्नतघनस्तनीम् ॥ १२३६ ॥ कुम्भिकुम्भोद्भवप्रोद्यन्मुक्तादामविराजिताम्॥ क्षौमोत्तरासङ्गवतीं पुष्पदामविभूषिताम् ॥ १२३७ ॥ माणिक्यस्वर्णखचितवैदूर्य्याद्यङ्गदोज्ज्वलाम् ॥ काञ्चनोद्यत्पद्मरागमणिसंबद्धकङ्कणाम् ॥१२३८॥ नानाविधलसद्रत्नमुद्रिकालंकृतांगुलीम् ॥ कम्बुकण्ठकलारावां स्वर्णग्रैवेयराजिताम् ॥ १२३९ ॥ विचित्रनानालंकारालंकृताङ्गीं शुचिस्मिताम् ॥ उद्यदर्कप्रभाभास्वद्रत्नताटंकशोभिताम् ॥ १२४० ॥ निर्लाञ्छनशरद्राकाताराधि-

१ काञ्चनैरितिवस्त्रविशेषणम् । रचिताभिरिति तु पताकाविशेष्यमिति सुधीभिर्ज्ञेयम् ॥

पशुभाननाम् ॥ पञ्चसायककोदण्डजिद्भ्रूयुगविराजिताम् ॥ १२४१ ॥ बिडालनासिकां प्रोद्यत्तिलपुष्पाक्षतां शुभाम् ॥ कर्णपूरीकृतस्वर्णबद्धरत्नांकुरां शुभाम् ॥ १२४२ ॥ प्रवालविलसत्कान्तिं रुचिराधरपल्लवाम् ॥ शेखरे प्रोष्ठ सद्रत्नरशनावलिशोभिताम् ॥ १२४३ ॥ शीतांशुशकलाकारकाचिरालकराजिताम् ॥ कान्तकुञ्चितसंस्निग्धनीलमञ्जुलमूर्द्धजाम् ॥ १२४४ ॥ तप्तहाटकसम्बद्धनानारत्नौघशेखराम् ॥ सौन्दर्य्यसलिलाम्भोधिं रत्नसारविभूषिताम् ॥ १२४५ ॥ विलासलक्ष्म्या भवनं महालक्ष्मीं विचिन्तयेत् ॥ वामाधःकरमारभ्य साध्यदक्षकरावधि ॥ १२४६ ॥ आयुधानि च पूर्वोक्ते रमापीठे यजेदिमाम् ॥ दद्याद्बीजेनासनं च स्वाणुना मूर्त्तिकल्पनम् ॥ १२४७ ॥ दक्षभागे यजेद्देव्या गणकं वामतस्तथा ॥ सुमनोञ्जलिहस्तं च पुष्पाभरणमर्चयेत् ॥ १२४८ ॥ अङ्गानि पूजयेदादौ यथास्थानं च मन्त्रवित् ॥ अष्टपत्रे स्थिता पूज्या ह्युमा श्रीश्च सरस्वती ॥ १२४९ ॥ दुर्गा धरणिगायत्र्यौ देव्युषा चेति शक्तयः ॥ नानालंकरणाढ्यास्स्युरम्भोजद्वयपाणयः ॥ १२५० ॥ अंघ्रिप्रक्षालनार्थञ्च प्रोच्येते वह्निसूर्यभे ॥ पूजनीये प्रयत्नेन कराभ्यां धृतचामरे ॥ ॥ १२५१ ॥ निधीन् संपूज्य वरुणं पश्चिमे छत्रधारिणम् ॥ पारितश्च यजेद्राशीन्ग्रहांश्च ततोर्चयेत् ॥ १२५२ ॥ चतुर्दन्तान्दिग्गजांश्च यजेदाशासु मन्त्रवित् ॥ लोकपालांस्तदस्त्राणि तत्तद्बाह्ये यजेत्पुनः ॥ १२५३ ॥ जपेद्भास्करलक्षं च नियताशी धृतव्रतः ॥ तद्दशांशं प्रजुहुयाद्घृताक्तैस्त्रिस्वादुसंयुतैः ॥ १२५४ ॥ पद्मै रमाद्रुमफलैः प्रत्येकमयुतं हुनेत् ॥ सुशीतैः शुचिभिस्तोयैस्तर्प्पयेदयुतद्वयम् ॥ १२५५ ॥ एवं सिद्धमनुर्मन्त्री गुरुभक्तो दृढव्रतः ॥ कुर्य्यात्काम्यानि कर्माणि स्वाभीष्टानि च मन्त्रवित् ॥ १२५६ ॥ आज्यप्लुताभिर्दूर्वाभिरायुष्कामो हुनेन्नरः ॥ सहस्रं दशरात्रं च समिद्धे हव्यवाहने ॥ १२५७ ॥ घृताक्ताभिश्च दूर्वाभिरष्टोत्तरसहस्रकम् ॥ सप्ताहं जुहुयाज्जीवेद्वत्सराणां शतं सुधीः ॥ १२५८ ॥ दूर्वायुक्तैर्घृताभ्यक्तैः स्निग्धैः प्रजुहुयाद्बुधः ॥ आरोग्यकामः कमलैरारभ्यार्कदिनं सुधीः ॥ १२५९ ॥ दशाहं प्रत्यहं वापि सर्पिषाक्तास्समिद्वराः ॥ कण्ठमात्रे

जले स्थित्वा महालक्ष्मीमिति स्मरेत् ॥ १२६० ॥ अष्टाधिकसहस्रं च ऊर्ध्वबाहुर्जपेन्मनुम् ॥ स वाञ्छितार्थं लभते तथारोग्यं च साधकः॥ १२६१॥ अन्वहं जुहुयादष्टसहस्रं शालिभिर्ध्रुवम् ॥ सोऽचिराल्लभते लक्ष्मीं महतीं साधकोत्तमः ॥ १२६२ ॥ रमालताप्रसूनैर्वा नंद्यावर्त्तसमुद्भवैः ॥ श्वेतसर्षपकैराज्यप्लुतैर्वा जुहुयाद्बुधः ॥ १२६३ ॥ महीयसीं रमामाप्नोत्यचिरात्साधकोत्तमः ॥ मान्यते च तथा सर्वैर्जन्तुभिर्नान्यथात्र च ॥ १२६४ ॥ नारिकेलरसैर्युक्तैर्मरिचैर्वारिकान्वितैः ॥ गुडयुक्तघृतैः पक्वैरपूपैर्जुहुयात्सुधीः ॥ १२६५ ॥ संयतः प्रत्यहं चाष्टशतं पायसभुग्द्विजः ॥ मण्डलाच्च ध्रुवं साक्षाद्भवेद्वैश्रवणोपमः ॥ गुडमिश्रहविष्यस्य होमादन्नसमृद्धिमान् ॥ १२६६ ॥ अष्टोत्तरसहस्रं च जपापुष्पाणि संहुनेत् ॥ संगृह्य भस्ममन्त्री तन्नागवल्लीरसेन च ॥ सहितं तिलकं कुर्य्यात्सर्वं वश्यं भवेद्ध्रुवम् ॥ १२६७॥ पलाशोत्थसमिद्भिश्च कुसुमैर्जुहुयात्तथा ॥ वश्या भवेयुर्मुखरा वशिनस्तस्य[1] मन्त्रिणः ॥ १२६८ ॥ जातिकाकुसुमैर्मन्त्री राजानं वशमानयेत् ॥ जुहुयादरुणाम्भोजैर्वश्यास्स्युस्तस्य विश्वगाः ॥ १२६९ ॥ नीलोत्पलानां होमेन वश्याश्चारण्यसम्भवाः ॥ वशयेत्प्रमदा विद्वान्मधूककुसुमैर्हुनेत् ॥ १२७० ॥ नवकोष्ठात्मकं सम्यङ्मण्डलं रचयेत्सुधीः ॥ मध्ये यन्त्रं वक्ष्यमाणं कल्पयेच्च यथाविधि ॥ ॥१२७१॥ तेषु कोष्ठेषु नवसु विन्यसेत्कलशान्नव ॥ शुभांश्चन्दनकाश्मीरलिप्तान्सर्वाङ्गसुन्दरान् ॥१२७२॥ कुर्वंस्तण्डुलसंयुक्तान्सर्वदृष्टिमनोहरान् ॥ पूजयेच्च यथावत्तान्वासितैस्तीर्थपुष्करैः ॥ १२७३ ॥ कर्षस्वर्णेन रचितन्नवरत्नसमन्वितम् ॥ कर्णिकामध्यविलसत्तत्र पद्मं तु कारयेत् ॥ ॥ १२७४ ॥ मध्यमे कलशे रम्ये यथावत्तद्विनिःक्षिपेत् ॥ खादिरोशीरकाश्मीरचन्द्रागुरुतमालकम् ॥ १२७५ ॥ जातीकक्कोलसंयुक्तं वीक्ष्य सर्वं विभागशः ॥ कलशेषु च सर्वेषु यथाविधि विलोडयेत् ॥ १२७६ ॥ सदाभद्रा च दूर्वा च देवी श्रीश्च मधुव्रता ॥ अपामार्गस्य पत्राणि मुसली वज्रवल्लरी ॥१२७७॥ चक्रप्रियंगुव्रीहींश्च मुद्गगोधूमतण्डुलान् ॥ शालिमाषांश्च

---

१ तस्येति शेषः

सतिलान्यवान्प्रक्षाल्य निःक्षिपेत् ॥ १२७८ ॥ कदलीनारिकेराणां श्रीधात्री कुचभूरुहाम्[1] ॥ फलानि पद्मबकुलजातीसौगन्धिकानि च ॥ १२७९ ॥ मल्लिकाचम्पकाशोकपुन्नागोत्थानि निःक्षिपेत् ॥ पुष्पाणि केतकस्याथ तुलसीपल्लवांस्तथा ॥ १२८० ॥ न्यग्रोधोदुम्बरप्लक्षचैत्यानां ब्रह्मकूर्चनम् ॥ प्रक्षिप्य च घटान्वस्त्रैश्छादयेच्चम्पकैः शुभैः ॥ १२८१ ॥ साक्षतैः सफलैस्तांश्च वेष्टयेत्क्षौमवाससा ॥ तेषु मध्यस्थकलशे समावाह्य महेश्वरीम् ॥ ॥ १२८२ ॥ महालक्ष्मीं चन्दनाद्यैरुपचारैश्च संयजेत् ॥ शेषेष्वष्टसु कुम्भेषु क्रमानुक्रमतो यजेत् ॥ १२८३ ॥ सुगन्धैश्चन्दनैः पुष्पैर्मनोज्ञैर्धूपदीपकैः ॥ भक्ष्यभोज्यनिवेद्यैश्च यथाविधि यजेत्सुधीः ॥ १२८४ ॥ संस्पृश्य तान्घटान्मन्त्री त्रिसहस्रं मनुं जपेत् ॥ ततः साध्यं समानीय संयतं स्थण्डिले शुभे ॥ १२८५ ॥ सुपीठे तं निवेश्य स्वं तस्मिन्साध्येनुयोजयेत् ॥ मनोहरैरलङ्कारैर्विविधैर्वसनैरपि ॥ १२८६ ॥ आदरादप्यलंकृत्य सुक्लृप्तं सुमनोवृतम् ॥ सुवासिनीभिर्जायाभिरर्चितानां द्विजन्मनाम् ॥ १२८७ ॥ सहाशीर्वचनैः सर्ववाद्यानां निनदैः सह ॥ वेदघोषेण च सह लग्ने चैव तु शोभने ॥ १२८८ ॥ तेषु मध्यस्थितं कुम्भं समुद्धृत्य गुरुः स्वयम् ॥ मूलमन्त्रं जपन्सिञ्चेत्साध्यशीर्षिण ततोपरैः ॥ १२८९ ॥ कलशैः पूर्ववत्सिक्त्वा हस्तेनास्य शिखां शिरः ॥ संस्पृशन्वेदगादितामाशिषं संप्रयच्छति॥ ॥ १२९० ॥ कल्याणमस्तु च सदा सम्पदश्च निराकुलाः ॥ प्रसीदतु महालक्ष्मीः सकला देवता अपि १२९१ ॥ रक्षन्तु त्वां सर्वदेवा विजयोस्तु सुखी भव ॥ इत्थं दत्त्वाशिषं पश्चाद्वाससी परिधाय च ॥ १२९२ ॥ आचान्तः प्रणमेत्सम्यग्यथाविधि गुरुं शिशुः ॥ नानाविधैश्च वसनैर्नानालङ्करणैः शुभैः ॥ १२९३ ॥ धनैर्धान्यै रत्नगोभिर्महिषीभिश्च दासकैः॥दासीभिर्देवताबुद्ध्या गुरुं सन्तोषयेत्सुधीः॥ १२९४॥नानाविधैर्भक्ष्यभोज्यैर्लेह्यैश्चोष्यैस्तथेतरैः॥दीनान्धकृपणैः सार्धं भोजयेच्च द्विजन्मनः॥

[1] अप्रत्यये तथैवेष्ट इति वार्तिकेन कुचफलशब्दघटकफलस्य लोपेन निर्देशः । कुचफलो दाडिमः ।

॥ १२९५॥ ततः स्वमन्दिरे कुर्य्यादुत्सवं बन्धुभिः सह ॥ महात्रिलोकरम्यश्च ततः स नृवरः स्वयम्॥ १२९६॥कृतार्थं मन्यते सम्यगात्मानं नान्यथा क्वचित्॥ राजा शत्रून्विजयतेभिषिक्तश्च यथाविधि ॥ १२९७ ॥ राजपुत्रश्च राजा स्यादचिरादाप्नुयात्पदम् ॥ बन्ध्याभिषिक्ता रमणादचिराद्वाञ्छितं सुतम् ॥ महामतिं च लभते नात्र कार्य्या विचारणा ॥ १२९८ ॥ महामयेषु भूतादि समुत्थेषु भयेषु च ॥ कृत्याद्रोहादिदोषे च प्रकुर्य्यादभिषेचनम् ॥ १२९९ ॥ अभिषेकेणामुना च नृणां भवति निश्चितम् ॥ सर्वसम्पच्च सौभाग्यं सर्वामय-शमस्तथा॥सर्वापद्वारणं चैव सर्वसौख्यानि निश्चितम् ॥ १३०० ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि सप्तविंशाक्षरं मनुम्॥ तारो रमा शक्ति लक्ष्मि कमले कमलालये ॥ १३०१ ॥ प्रसीदद्वितयं श्रींह्रींश्रीं महालक्ष्मि हृत्ताथा ॥ गायत्रीछन्द उद्दिष्टं मुनिर्दक्षः प्रजापतिः ॥ १३०२ ॥ लक्ष्मीर्देव्यथ पैञ्चाङ्गं त्रिबीजपु-टितैर्मनोः ॥ वर्णैस्त्रिपञ्चरामाग्निरामैर्ध्यानमथो ध्रुवे ॥१३०३॥ सिन्दूराभां च पद्मस्थां पद्मपत्रं च दर्पणम् ॥ अर्घपात्रं च दधतीं सद्धारमुकुटान्विताम् १३०४॥ नानादासीपरिवृतां काञ्चीकुण्डलमण्डिताम् ॥ लावण्यभूमिकां वन्दे सुन्दरा-ङ्गदबाहुकाम् ॥ १३०५ ॥ पूर्वोदिते यजेत्पीठे वर्त्तमानेन वर्त्मना ॥ पुरो-ङ्गानि यजेत्पश्चाच्छ्रीधरादींस्ततः परम् ॥ १३०६ ॥ श्रीधरश्च हृषीकेशो वैकुण्ठो विश्वरूपकः ॥ वासुदेवः सङ्कर्षणश्च प्रद्युम्नानिरुद्धकौ ॥ १३०७ ॥ तदग्राष्टदले पूज्या भारती पार्वती तथा ॥ ब्राह्मी सती दिक्षु चैता आग्नेयादि-विदिक्षु तु ॥ १३०८ ॥ दमकः सलिलश्चापि गुग्गुलुश्च कुरन्तकः ॥ चत्वारस्तु गजा एते तृतीयेष्टदलेर्चयेत् ॥ १३०९ ॥ अनुरागो विसंवादो विजयो वल्लभो मदः ॥ हर्षो बलश्च तेजस्वी यजेल्लोकेश्वरान्बहिः ॥१३१०॥ तदायुधानि तद्बाह्ये पूजयेच्चन्दनादिभिः ॥ एवं सम्पूजयेल्लक्ष्मीं यो मर्त्यः स धनी भवेत् ॥ १३११ ॥ लक्षं जपेत्फलैर्बिल्वैर्जुहुयान्मधुरोक्षितैः ॥ दशाहं

---

१ ॐ श्रीं ह्रीं श्रीं कमले कमलालये प्रसीदप्रसीद श्रीं ह्रीं श्रीं महालक्ष्मि नमः ॥
२ श्रीं ह्रीं श्रीं कमले श्रीं ह्रीं श्रीं हृदयाय नमः, श्रीं ह्रीं श्रीं कमलालये श्रीं ह्रीं श्रीं शिरसे स्वाहा एवमन्यात्रापि ज्ञेयम् ॥

संस्कृते वह्नौ प्राक्प्रोक्तेनैव वर्त्मना ॥ १३१२ ॥ एवं सिद्धमनुर्मन्त्री साधये-दिष्टमात्मनः ॥ चन्दनाक्तैः सरसिजैर्लक्षं प्रजुहुयात्सुधीः ॥१३१३॥ लभते वैरिणां राज्यं तथैव समरं विना॥ राजलक्ष्मीमनु चैव प्राप्य राजसभां व्रजेत् ॥ तथा स्वं प्राप्यते नित्यं नात्र कार्य्या विचारणा ॥ १३१४ ॥ सहदेवीं श्रीलतां च श्वेतदूर्वापराजिते ॥ भृङ्गां मधुव्रतां शक्रवल्लीं शाल्मलिमूसलीं ॥ १३१५ ॥ हरिचन्दनकालीयं कर्पूरं रक्तचन्दनम् ॥ कुष्ठकक्कोलकाश्मीरं हारिद्राशिखरी समे ॥ १३१६ ॥ पिष्ट्वा सम्यक्चसञ्जप्तमष्टोत्तरसहस्रकम् ॥ अनेन तिलकं कुर्य्यात्सर्वं वश्यं भवेद्ध्रुवम् ॥ पूर्वोक्ताश्चात्र सिद्ध्यन्ति प्रयोगा वाञ्छितार्थदाः ॥ १३१७ ॥ ॐशुद्धवाससे चोक्ता नमो महाश्रिये च हृत्॥ चतुर्दशाक्षरो मन्त्रो लक्ष्मीहृदयनामकः ॥ १३१८ ॥ मनोः पदैश्च पंचाङ्गं पूर्ववद्ध्यानपूजनम् ॥ जपस्त्रिलक्षमेतस्य पद्मैर्होमो दशांशतः ॥ १३१९ ॥ मुनिश्छन्दादिकं प्राग्वत्प्रयोगः पूर्ववन्मतः ॥ एतस्योपासकानां तु न वंशे स्याद्दरिद्रता ॥ १३२० ॥ यौं नौं मौं नम ऐं चोक्ता श्रियै श्रीं नम इत्यपि एकादशार्णो मन्त्रोयं जमदग्निर्मतो मुनिः ॥ १३२१ ॥ त्रिष्टुप्छन्दो रमा देवी षडङ्गविधिरुच्यते ॥ यौं नौं मौं नम ऐं नमो हृदयाय नमोस्तु हृत् ॥ ॥ १३२२ ॥ यौं नौं मौं नम ऐंस्वाहा शिरसेग्निवधूः शिरः ॥ यौं नौं मौं नम ऐं वषट् शिखायै च वषट् शिखा ॥ १३२३ ॥ यौं नौं मौं नम ऐं हुं च कवचं कवचाय हुम् ॥ श्रियै नेत्राय वौषट् च प्रोच्य नेत्रे तु विन्यसेत् ॥ १३२४ ॥ श्रीं नमोस्त्राय फट् चेत्यस्त्रमंगुल्यादिकं तथा ॥ ध्यानपूजादिकं सर्वं महालक्ष्मीवदाचरेत् ॥ १३२५ ॥ नित्यं द्वादशसाहस्रं सप्तरात्रं मनुं जपेत् ॥ तेन सिद्धो भवेन्मन्त्रः साधकस्य न संशयः ॥१३२६॥ होमः पूर्वोदितैर्द्रव्यैर्दशांशं तर्प्पणादिकम् ॥ कृत्वा ब्राह्मणभोजान्तं मन्त्रसिद्धिः प्रजायते ॥ १३२७ ॥ लक्ष्मीं सुवर्णकक्करां ध्यात्वा मन्त्रमिमं जपेत् ॥ अष्टोत्तरसहस्रं स लभते वाञ्छितं फलम् ॥ १३२८ ॥ जपन्नष्टशतं विश्वं तिलकाद्वशयेद्ध्रुवम् ॥ मासत्रयं जपित्वा च ग्रामं मन्त्री तथाप्नुयात्

॥ १३२९ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि लक्ष्मीं पद्मप्रभाभिधाम् ॥ पद्मप्रभे पद्मसुन्दरि पद्मेश्यान्निगोहिनि ॥ १३३० ॥ चतुर्दशाक्षरो मन्त्रो ध्यानाद्येकाक्षरोदितम् ॥ पदैश्चतुर्भिः सर्वेण पञ्चाङ्गं गदितं मनोः ॥ १३३१ ॥ जपपूजा पुरश्चर्य्यादिकमेकाक्षरोदितम् ॥ इयं सिद्धा महाविद्या भक्तानां कल्पवल्लिका ॥ १३३२ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि लक्ष्मीसाम्राज्यसञ्ज्ञितम् ॥ आदौ श्रीबीजमुच्चार्य्य सहकलहरास्ततः ॥ १३३३ ॥ ईकारान्ता बिन्दुयुता द्वितीयं कूटमुच्यते ॥ पुनश्च श्रीं समुच्चार्य्य मन्त्रस्त्र्यक्षर ईरितः ॥ १३३४ ॥ ऋषिर्हरिस्तथा छन्दो गायत्री देवता मता ॥ तथैव मोहिनी लक्ष्मीस्सर्वसाम्राज्यदायिनी ॥ १३३५ ॥ बीजं कूटं समाख्यातं शक्तिः श्रीबीजमुच्यते ॥ षड्भिर्दीर्घैः स्वरैर्विद्वान्षडङ्गानि प्रविन्यसेत् ॥ ॥ १३३६ ॥ अतसीपुष्पसङ्काशां रत्नभूषणभूषिताम् ॥ शङ्खचक्रगदापद्मशार्ङ्गबाणधरां करैः ॥ १३३७ ॥ षड्भिः कराभ्यां देवेशीं वरदाभयशोभिताम् ॥ पूजयामि जगद्धात्रीं बिन्दुषट्कोणमेव च ॥ १३३८ ॥ त्रिकोणं चाष्टपत्रं च भूपुरद्वारमण्डितम् ॥ अस्मिन्समावाह्य देवीं पूजयेदुपचारकैः ॥ १३३९ ॥ बिन्दौ देवीं षडङ्गानि षट्कोणेषु यजेत्ततः ॥ अग्रे यजेच्च गायत्रीं सावित्रीं च सरस्वतीम् ॥ १३४० ॥ ब्राह्मयाद्याश्चाष्टपत्रेषु भूपुरे मनुनामुना ॥ अष्टादशमहाकोटियोगिनीभ्यो नमस्त्विति ॥ १३४१ ॥ अर्च्याः स्युर्नेत्रयोगिन्यः शक्राद्यानायुधान्यपि ॥ पुनर्देवीं समभ्यर्च्य गन्धपुष्पाक्षतादिभिः ॥ १३४२ ॥ बटुकक्षेत्रपालेभ्यो योगिनीभ्यो बलिं हरेत् ॥ एवमष्टभुजां ध्यात्वा त्रिलक्षं प्रजपेत्सुधीः ॥ १३४३ ॥ तद्दशांशेन पद्मैस्तु हुनेत्साम्राज्यसिद्धये ॥ तर्प्पणं मार्ज्जनं कुर्य्याद्ब्राह्मणानपि भोजयेत् ॥ १३४४ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि सप्तवर्णं रमामनुम् ॥ हृदयं ब्रह्मतनये मन्त्रोयं परिकीर्त्तितः ॥ १३४५ ॥

---

१ पद्मप्रभे पद्मसुन्दरि पद्मेशि स्वाहा, अथ षडंगन्यासः पद्मप्रभे हृदयाय नमः, पद्मसुन्दरि शिरसे स्वाहा, पद्मेशि शिखायै वषट्, स्वाहा कवचाय हुम्, पद्मप्रभे पद्मसुन्दरि पद्मेशि स्वाहानेत्रत्रयाय वौषट् ॥ २ मन्त्रमिति शेषः ॥ ३ श्रीं सह कल्हीं श्रीमितित्र्यक्षरमन्त्रः ॥ ४ आं ईं ऊं ऐं औं अः एभिः षडक्षरैः षडङ्गं कुर्यात् । यथा आं हृदयाय नमः ईंशिरसे स्वाहा इत्यादि ॥ ५ नमः

मनोः पदद्वयेनैव त्रिरावृत्त्या षडङ्गकम् ॥ ध्यानपूजापुरश्चर्यादिकमेकाक्षरोदितम् ॥ १३४६ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि ज्येष्ठालक्ष्मीमनुं परम् ॥ ॐह्रीं-श्रीमादिलक्ष्मीति पदमुक्त्वा स्वयम्भुवे ॥ ह्रीं ज्येष्ठायै नमः प्रोच्य मन्त्रः सप्तदशाक्षरः ॥ १३४७ ॥ ऋषिरस्य स्मृतो ब्रह्मा छन्दस्त्रिष्टुबुदाहृतम् ॥ देवता ज्येष्ठलक्ष्मीश्च श्रीमाये शक्तिबीजके ॥ १३४८ ॥ प्रमृज्य त्रिः करौ विद्वानङ्गन्यासं समाचरेत् ॥ त्रिवेदाब्ध्यब्धिवह्नियुग्मवर्णैरङ्गानि षट् क्रमात् ॥ ॥१३४९॥ शिरोभ्रूमध्यवक्त्रेषु बीजानां त्रितयं न्यसेत् ॥ हन्नाभ्याधारजान्वंघ्रौ पदानां पञ्चकं न्यसेत ॥१३५०॥ पद्मासनस्थामरुणामरुणाम्बरधारिणीम् ॥ कुंकुमक्षोदलिप्ताङ्गीं प्रफुल्लकमलेक्षणाम् ॥ १३५१ ॥ मन्दस्मितमुखां ज्येष्ठां सुधापूर्णं घटं घटम्॥धनपूर्णं सृणिं पाशं दधतीं भुजपल्लवैः ॥ १३५२ ॥ चिन्तयेत्परया भक्त्या ततो देवीं प्रपूजयेत् ॥ सम्यग्धर्म्मादिभिः पीठं मन्त्रवित्परिकल्पयेत ॥ १३५३ ॥ लोहिताक्षी विरूपाक्षी कराली नीललोहिता ॥ समदा वारुणी पुष्टिरमोघा विश्वमोहिनी ॥ पूर्वादिदलमध्येषु मध्ये चार्च्याः क्रमादिमाः ॥ १३५४ ॥ रक्तज्येष्ठायै विद्महे नीलज्येष्ठायै धीमहि ॥ तन्नो-लक्ष्मीः प्रचोदयात ॥ १३५५ ॥ गायत्र्यावाह्य तां ज्येष्ठां पूजयेच्चन्दनादिभिः ॥ अङ्गानि मातृलोकेशांस्तदस्त्राणि प्रपूजयेत् ॥ १३५६ ॥ लक्षं तु प्रजपेन्मन्त्रं जुहुयात्तद्दशांशतः ॥ पायसेन सुसिद्धेन सर्पिःसिक्तेन साधकः ॥ ॥ १३५७ ॥ तर्प्पणं मार्जनं कृत्वा ब्राह्मणानपि भोजयेत् ॥ इह वंशं च सम्पत्तिं वैकुण्ठं लभते मृतः॥ १३५८॥अथातः सम्प्रवक्ष्यामि सिद्धिलक्ष्मीमहामनुम्॥एकादशाक्षरैरूनं तं शतत्रयवर्णकम्॥ १३५९॥ॐश्रीं नमःसर्वसिद्धियोगिनीभ्यो नमो वदेत्॥सर्वसिद्धिमातृकाभ्यो नमो नित्योदिता वदेत॥ १३६०॥ नन्देत्युक्त्वा नन्दितायै सकलेतिपदं ततः ॥ कुलचक्रनामिकायै भगवत्यै पदं वदेत् ॥ १३६१ ॥ ततश्चण्डकपालिन्यै ॐह्रींहुंह्रां वदेत्ततः ॥ ॐक्षौंक्रौं नम

१ नमो ब्रह्मतनये त्रिरावृत्ताभ्यामेताभ्यां पदाभ्यां षडंगानि न्यस्येत्। स यथा—नमः हृदयाय ब्रह्म तनये शिरसे स्वाहा, नमः शिखायै वषट्, ब्रह्मतनये कवचाय हुम्, नमः नेत्रत्रयाय वौषट्, ब्रह्मतनये अस्त्राय फट् ॥ २ ॐ ह्रीं श्रीं आदिलक्ष्मि स्वयम्भुवे ह्रीं ज्येष्ठायै नमः ॥

इत्युक्त्वा परमेति च हंसिनी ॥ १३६२ ॥ निर्वाणमार्गदे देवि विषमोपप्लवेति च ॥ प्रशमनि पदं प्रोच्य सकलेतिपदं वदेत् ॥ १३६३ ॥ दुरितारिष्टक्लेशेति दलनीति ततः पदम् ॥ सर्वापदाम्भोधितारिणीत्युक्त्वा सकलेति च॥ १३६४॥ शत्रुविध्वंसिनि देव्यागच्छ आगच्छ उच्चरेत् ॥ हंसयुग्मं बलायुग्मं नरेति रुधिरांत्र च ॥ १३६५ ॥ वसाभक्षिणि मम शत्रूनुक्त्वा मर्दयमर्दय ॥ खादखाद त्रिशूलं नो भिन्धिभिन्धि वदेत्ततः ॥ १३६६॥ छिन्धिछिन्धीति खड्गेन ताडयद्वितयं वदेत् ॥ छेदयद्वितयं प्रोच्य तावद्यावन्ममेति च ॥ १३६७ ॥ सकलेति पदस्यान्ते वदेदेवम्मनोरथान् ॥ साधयद्वितयान्ते तु वदेत्परम इत्यपि॥ ॥ १३६८ ॥ कारुणिके भगवति महाभैरवरूपधारिणि त्रिदश चेत्युक्त्वा वरेति नमिते वदेत् ॥ १३६९ ॥ सकलेति च मन्त्रेण मातः प्रणत इत्यपि ॥ जनेति वत्सले देवि महाकालिपदं वदेत् ॥ १३७० ॥ कालनाशिनि हुंहुंहुं प्रसीद मदनातुराम् ॥ कुरुकुरु सुरासुरकन्यकां ह्रीं वसुप्रिया ॥ १३७१ ॥ हुं त्रिधाफट् ततः स्वाहा मन्त्रोयं समुदीरितः ॥ त्रिलोचनमुनिश्चातिजगतीछन्द उच्यते ॥ १३७२ ॥ सिद्धिलक्ष्मीर्देवता श्रीं बीजं ह्रीं शक्तिरुच्यते ॥ तारादिकन्तु हृदयं वदेत्परमहंसिनि॥ १३७३॥ निर्वाणमार्गदे देवि शीर्षमन्त्रो ध्रुवादिकः ॥ विषमोपप्लवप्रशमनि ध्रुवाद्या शिखा मता ॥ १३७४ ॥ सकलदुरितारिष्टक्लेशदलनि वर्म्म च ॥ सर्वापदाम्भोधितारिणीति नेत्रं ध्रुवादिकम् ॥ १३७५ ॥ सकलशत्रुध्वंसिनि ताराद्यं चास्त्रमुच्यते ॥ एवं कृत्वा षडङ्गानि वक्त्रन्यासं समाचरेत् ॥ १३७६ ॥ ॐ नमः सर्वसिद्धीति योगिनीभ्यः पदं वदेत् ॥ ईशानवक्त्राय नमः पूर्ववक्त्रे तु विन्यसेत् ॥ १३७७ ॥ ॐ नमः सर्वसिद्धीति मातृभ्य इति चोच्चरेत् ॥ तत्पुरुषेति वक्त्राय नमः प्रोच्य न्यसेदवाक् ॥ १३७८॥ ऐं ह्रीं नित्योदितानन्दनन्दितायै वदेत्ततः ॥ अघोरवक्त्राय नमः पश्चिमे तु मुखे न्यसेत् ॥ १३७९॥ ऐं सकलकुलचक्रनायिकायै पदं वदेत्॥ वामदेववक्त्रायेति नमश्चोदङ्मुखे न्यसेत्॥ ॥ १३८० ॥ भगवत्यै चण्डकपालिन्यै वाक्पूर्वकं न्यसेत् ॥ सद्योजातेति वक्त्राय नमश्चोर्ध्वमुखे न्यसेत् ॥ १३८१ ॥ पञ्चवक्त्रां दशभुजां पीनोन्नतप-

योधराम् ॥ तडित्कोटिसमप्रख्यां सिन्दूरारुणविग्रहाम् ॥ १३८२ ॥ अक्षमालां कपालञ्च शूलं खड्गञ्च बिभ्रतीम् ॥ खेटं घण्टां स्वर्णपाशं सांकुशं वरदाभये ॥ १३८३ ॥ नीलग्रीवां चन्द्रमौलिं त्रिनेत्रां सर्पभूषणाम् ॥ सर्वसिद्धिप्रदां देवीं सिद्धिलक्ष्मीं विचिन्तयेत् ॥ १३८४ ॥ मार्गद्वयेपि पूजास्या मापीठे दक्षिणे यजेत् ॥ वामे तु भुवनेश्वर्य्या अङ्गैः स्यात्प्रथमावृतिः ॥ ॥ १३८५ ॥ राज्यविद्या च सौभाग्यामृतकाम्यपदादिकाः॥ सत्यभोगयोगपूर्वा लक्ष्म्योऽष्टौ च दलाष्टके ॥ १३८६ ॥ एतद्द्वितीयावरणं ब्राह्मयाद्याभिस्तृतीयकम् ॥ चतुर्थमसिताङ्गाद्यैर्लोकपालैश्च पञ्चमम् ॥ १३८७ ॥ चतुस्सहस्रप्रमितः पुरश्चर्य्याजपः स्मृतः ॥ होमयेद्गुग्गुलाज्याभ्यां प्रयोगानथ वच्म्यहम् ॥ १३८८ ॥ अश्वत्थवृक्षमालिङ्ग्य न्यग्रोधं प्लक्षमेव च ॥ सहस्रन्तु जपेन्मन्त्रं ग्रहपीडादिशान्तये ॥ १३८९ ॥ जातीगुल्मं समालिङ्ग्य कर्णिकारं सुपुष्पितम् ॥ बिल्वं वा पूजयेद्देवीं जपेदष्टसहस्रकम् ॥ १३९०॥ सहस्रं लभते स्वर्णं न दरिद्रो भवेत्ततः ॥ शालिभिः स्वर्णलाभः स्याद्गोधूमैः पुष्टिरेव च ॥ १३९१ ॥ यवहोमेन धान्यं स्यादिक्षुभिश्चतुरंगुलैः ॥ कुमुदैर्जनवात्सल्यं बकुलैरतुलाः श्रियः ॥ १३९२ ॥ अशोकपुष्पैर्लाभः स्यात्पाटलीभिः शुभाङ्गना ॥ माषहोमेन मूकः स्यात्कोद्रवैर्व्याधियुग्भवेत् ॥ ॥ १३९३ ॥ फलैर्बिभीतकैर्भ्रान्तो म्रियते शाल्मलीहुतात् ॥ कटुतैलेन विद्वेषः स्तम्भः प्रीतप्रकारकैः ॥ १३९४ ॥ वायुवेगपतत्पत्रहोमेनोच्चाटनं रिपोः ॥ होमोऽन्येषां पदार्थानामष्टोत्तरसहस्रकम् ॥ १३९५ ॥ कस्तूरिकादिहोमेन दिव्यदेहं लभेत ना ॥ सरसीरुहहोमेन साम्राज्यं भलते नरः ॥ १३९६ ॥ ब्रह्मवृक्षसमिद्धोमाद्ब्रह्मश्रियमवाप्नुयात॥आयुषे दूर्वया होमो वटहोमेन यक्षिणी॥ ॥ १३९७ ॥ उदुम्बरसमिद्धोमात्पुत्रः स्यादुत्तमोत्तमः ॥ महाभये समुत्पन्ने महारिष्टसमुद्भवे ॥१३९८॥ सितश्रीपुष्पबीजेनापामार्गमिश्रितेन च ॥ तिलतण्डुलहोमेन महाभयनिवारणम् ॥ १३९९ ॥ श्रीफलं घृतसंयुक्तं जुहुयात्तिलतण्डुलम् ॥ श्वेतपद्मकहोमेन विद्यार्थी लभते च ताम् ॥ १४०० ॥ भोगार्थी लभते भोगान्स्वेष्टं प्राप्नोत्यसंशयम् ॥ ज्वराश्चातुर्थिकाद्याश्च व्याधयो

विविधा ग्रहाः ॥ १४०१ ॥ सप्तजप्तोदकानान्तु नश्यन्त्यभ्युक्षणात् क्षणात् एकविंशतिजप्ताम्बुपानात्सर्वविषापहम् ॥१४०२॥ कुंकुमागुरुकर्पूरगोरोचनविमिश्रितम् ॥ तिलकं सप्तजपितं सर्ववश्यकरम्भवेत् ॥ १४०३ ॥ भक्ष्यभोज्यान्नहोमस्तु सर्वसिद्धिविभूतिकृत् ॥ इत्यष्ट मातृकाः प्रोक्ताः किमन्यच्छ्रोतुमिच्छसि ॥ १४०४ ॥

इति श्रीमहामायामहाकालानुमते मेरुतन्त्रे शिवप्रणीते ब्राह्म्याद्यष्टमातृकामन्त्रप्रकाशस्त्रयोविंशः ॥ २३ ॥

श्रीदेव्युवाच ॥ सर्वेषां ये तु देवनां बाह्यावरणके स्थिताः ॥ दिगीशास्तन्मनून्ब्रूहि फलं चापि महेश्वर ॥ १ ॥ श्रीमहेश्वर उवाच ॥ शृणु देवि प्रवक्ष्यामि दिक्पतीनाम्मनून्क्रमात् ॥ इमिन्द्राय नमश्चेति शक्रमन्त्रः षडक्षरः ॥ २ ॥ पंक्तिश्छन्दोमुनिर्ब्रह्मा देव इन्द्रः प्रकीर्त्तितः ॥ इन्द्राय शक्तिरिम्बीजं बीजेनैव षडङ्गकम् ॥ ३ ॥ पीतवर्णं सहस्राक्षं वज्रपद्मकरं विभुम् ॥ सर्वालङ्कारसंयुक्तं नौमीन्द्रन्दिक्पतीश्वरम् ॥ ४ ॥ षडस्रमध्ये देवेन्द्रं पत्रेष्वङ्गानि पूजयेत् ॥ तद्बाह्येष्टदले प्रोक्तमन्त्रैरेतैः क्रमाद्यजेत् ॥ ५ ॥ कं कार्त्तिकेयं रं चाग्निमीं यमं हं च निर्ऋतिम् ॥ वं वरुणं यं च वायुं सं सोमं चेशमं त्विति ॥ ६ ॥ ङेन्ता नमोन्ता मन्त्राः स्युर्वज्राद्यैः स्यात्तृतीयकम् ॥ प्रजपेल्लक्षमेकन्तु बिल्वाज्यं जुहुयात्ततः ॥ ७ ॥ एवं सिद्धमनुर्मन्त्री प्रयोगं कर्त्तुमर्हति ॥ मण्डलन्तु चतुष्कोणं कृत्वा तन्मध्यगं लिखेत् ॥ ८ ॥ पद्ममष्टदलं तस्मिन्नववस्त्रेण वेष्टितम् ॥ अव्रणं स्थापयेत्कुम्भं सुवर्णोदकपूरितम्[1] ॥ ९ ॥ पूज्य सपरिवारेन्द्रं सहस्रेणाभिमन्त्रयेत् ॥ तज्जलं स्थापयेत्तेन राज्यभ्रष्टो नृपो लभेत् ॥ १० ॥ स्वराज्यमन्योपि नरः स्नातो लक्ष्मीपतिर्भवेत् ॥ नस्नापयेद्धर्महीनम्भक्तिश्रद्धादिविच्युतम् ॥ ११ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि तत्त्वार्णं वह्निमन्त्रकम् ॥ भूर्भुवःस्वरग्ने च जातवेद इहावह ॥ १२ ॥ सर्वकर्म्माणि संभाष्य[2] साधयाग्निप्रियान्तकः ॥ ऋषिर्भृगुर्भवेच्छन्दो गायत्रं देवतानलः ॥ १३ ॥ पञ्चपड्वेदपञ्चत्रिकरवर्णैः षडङ्गकम् ॥ ध्यायेदग्निं कण्ठगतस्वर्णमालाविराजितम् ॥ १४ ॥ रक्तचन्दनलि-

१ सुगन्धोदकमिति वा पा. ॥ २ त्यपत्रार्षः ॥

ताङ्गमरुणस्रक्सुशोभितम् ॥ ज्वालापुञ्जकृताटोपं श्वेतवस्त्रं च बिभ्रतम्॥ १५॥
शक्तिं च स्वस्तिकं दर्भमुष्टिं च जपमालिकाम् ॥ स्रुक्स्रुवौ च वराभीती रक्ताभं
दहनम्भजेत् ॥ १६ ॥ गुरोर्लब्धमनुर्मन्त्री चतुर्दश्यामुपोषितः ॥ जपेद्भानु-
सहस्राणि शुद्धाचारो जितेन्द्रियः ॥ १७ ॥ अमावास्यादिने विप्रान्भोजये-
न्मधुरोत्तरैः ॥ भक्ष्यैर्भोज्यैर्यथाशक्ति दद्यात्तेभ्यश्च दक्षिणाः ॥ १८ ॥ भुक्त्वा
स्वयं समानीय होमद्रव्याणि शोधयेत् ॥ अपरं दिनमारभ्य होमं कुर्य्यादत-
न्द्रितः ॥ १९ ॥ क्रमाद्वटसमिद्व्रीहितिलराजीहविर्घृतैः ॥ नित्यमष्टोत्तरशतं
जुहुयाद्दिनशः सुधीः ॥ २० ॥ दशाहमेवं निर्वर्त्य विधानेन विधानवित् ॥
ततः पूर्णाहुतिं सम्यगेकादश्यां द्विजोत्तमान् ॥ सम्पूज्य तर्प्पयेद्विप्रैर्यथाविभव-
मादरात् ॥ २१ ॥ गुरवे दक्षिणां दद्याद्धेनुं साङ्गां पयस्विनीम् ॥ वासांसि
धनधान्यादि नत्वा सम्प्रीणयेद्गुरुम् ॥ २२ ॥ स्वमण्डलान्तं प्रयजेत्पीठं
सनवशक्तिकम् ॥ पीता श्वेतारुणा कृष्णा धूम्रा तीक्ष्णा स्फुलिङ्गिनी ॥
रुचिरा ज्वलिनी प्रोक्ताः क्रमशो नव शक्तयः ॥ २३ ॥ स्वबीजेनासनन्द-
द्यान्मूर्त्तिं मूलेन कल्पयेत् ॥ अत्र सम्पूजयेद्वह्निं विधिना प्रोक्तलक्षणम् ॥
॥२४॥ अङ्गपूजा पुरा प्रोक्ता मूर्त्तयोऽष्टौ दलेष्विमाः ॥ जातवेदाः सप्तजिह्वो
हव्यवाहनसञ्ज्ञकः ॥ २५ ॥ अश्वोदरजसञ्ज्ञोन्यः पुनर्विश्ववराह्वयः ॥
कौमारतेजाः स्याद्विश्वमुखो देवमुखः परः ॥ २६ ॥ अर्च्यः स्वस्तिकश-
क्तिभ्यां विराजितकराम्बुजः ॥ लोकेशानर्चयेद्बाह्ये वज्राद्यायुधसंयुतान् ॥
॥ २७ ॥ इति सम्पूजयेन्नित्यं जपेत्साष्टं सहस्रकम् ॥ जायते वत्सरादर्वा-
ग्धनधान्यसमृद्धिमान् ॥ २८ ॥ षण्मासं कपिलाज्येन जुहुयाद्वत्सरान्तरे ॥
तस्य सञ्जायते लक्ष्मीः कीर्त्तिस्त्रैलोक्यवन्दिता ॥ २९ ॥ साज्यमन्नं प्रजु-
हुयाद्वत्सराल्लभते श्रियम् ॥ कुसुमैर्बिल्ववृक्षस्य दधिक्षौद्रघृतप्लुतैः ॥ करवीर-
प्रसूनैर्वा मण्डलात्स्यात्समृद्धिमान् ॥ ३० ॥ शालिभिर्जुहुयान्नित्यं विधिना-
ष्टोत्तरं शतम् ॥ व्रीहिगोमहिषान्नाद्यैर्भवनन्तस्य पूर्य्यते ॥ तिलहोमेन महतीं
श्रियमाप्नोति मानवः ॥ ३१ ॥ पलाशबिल्वखदिरशमीदुग्धमहीरुहाम् ॥
विकङ्कतारग्वधयोः समिद्भिः करवीरजैः ॥ ३२ ॥ प्रसूनैः कुमुदैः पद्मैः

कह्लारैररुणोत्पलैः ॥ जातीप्रसूनैर्दूर्वाभिर्नित्यमष्टोत्तरं शतम् ॥ ३३ ॥ एकेन जुहुयान्मन्त्री प्रतिपत्स्वथ वा सुधीः ॥ साधयेदखिलान्कामान्षण्मासान्नात्र संशयः ॥ ३४ ॥ अथ मन्त्रान्तरं वक्ष्ये वह्नेः सेव्यं त्रिवर्णकैः ॥ उत्तिष्ठ पुरुष ब्रूयाद्धरिपिङ्गलतत्परम् ॥ ३५ ॥ लोहितीक्षपदन्देहि मे प्रदापय ठंद्वयम् ॥ चतुर्विंशत्यक्षरात्मा समृद्धिमनुरीरितः ॥ ३५ ॥ ऋष्यादयः पुरा प्रोक्ता मन्त्रार्णैरङ्गकल्पनम् ॥ षट्शराब्धित्रिवेदद्विमितैर्ध्यायेद्धुताशनम् ॥ ॥ ३७ ॥ सिन्दूरपूरप्रतिमं स्वर्णाश्वत्थाद्विनिर्गतम् ॥ रोमवल्लीलसज्ज्वालं कान्ताजनविमोहनम् ॥ ३८ ॥ अनर्घ्यरत्नसंयुक्तभूषणैश्च विभूषितम् ॥ लक्षं मनुं जपेदेनं पयोन्नेन ससर्पिषा ॥ दशांशं जुहुयाद्वह्नौ तुरगाग्निमनुं स्मरेत् ॥ ३९ ॥ पीठे प्रागीरितेऽभ्यर्च्य तदङ्गैर्मूर्तिभिः सह ॥ आशापालैस्तदीयास्त्रैरभ्यर्च्य हव्यवाहनम् ॥ ४० ॥ प्रातःस्नानरतो मन्त्री सहस्रम्प्रजपेन्मनुम् ॥ जित्वा रोगान्स जीवेत श्रिया वर्षशतं नरः ॥ ४१ ॥ हृत्प्रमाणजले स्थित्वा भानुमालोक्य सम्प्लुतः ॥ चतुःसहस्रं प्रजपेन्नित्यं संवत्सरावधि ॥ ४२ ॥ अपमृत्युभवात्रोगकृत्यादारिद्र्यसम्भवान् ॥ क्लेशान्निर्जित्य तेजस्वी जीवेद्वर्षशतं सुधीः ॥ ४३ ॥ कृत्तिकायाम्प्रतिपदि शालिहोमो धनप्रदः ॥ दध्ना च समिद्भिर्वा प्रतिपत्सु भवेद्धनम् ॥ ४४ ॥ इष्टावाप्तिर्भवेदाज्यैः पद्मैर्ग्राममवाप्नुयात् ॥ तिलैर्ज्योतिष्मतीभूतै रिपुराष्ट्रजयेन्नृपः ॥ ४५ ॥ अश्वत्थसमिधो मेषीघृताक्ता जुहुयान्नरः ॥ कन्यामिष्टामवाप्नोति सापि तं प्राप्नुयाद्वरम् ॥ ४६ ॥ शुद्धाज्येन कृतो होमो ज्वरनाशकरः परः ॥ सप्ताहं जुहुयान्मन्त्री बन्धूककुसुमैः शुभैः ॥ सान्नैः सहस्रमचिरान्महतीं श्रियमाप्नुयात् ॥ ४७ ॥ मासं क्षीरेण गव्येन क्षीराहारो जितेन्द्रियः ॥ सहस्रं जुहुयान्मन्त्री सम्पदामधिपो भवेत् ॥ आज्याक्तदूर्वाहोमेन जीवेद्वर्षशतं नरः ॥ ४८ ॥ अष्टोत्तरशतं नित्यं हविषा मृगमुद्रया ॥ जुह्वता लभ्यते लक्ष्मीर्धनधान्यसमृद्धिदा ॥ ४९ ॥ प्रतिमासं प्रतिदिनं जुहुयादयुतं घृतैः ॥ श्रीर्भवेन्महती तस्य षण्मासादनपायिनी ॥ ५० ॥ अरु-

---

१ स्वाहा ॥ २ उत्तिष्ठ पुरुष हृदयाय नमः, हरिपिङ्गल शिरसे स्वाहा इत्यादि ॥

णैरुत्पलैः फुल्लैर्मधुरत्रयसंयुतैः ॥ जुहुयाद्वत्सरादर्वाक् स भवेदिन्दिरापतिः ॥ ॥ ५१ ॥ अरुणाब्जैस्त्रिमध्वक्तैर्जुहुयादन्वहं सुधीः ॥ सहस्रं वत्सरार्धेन भवेद्भूमिपुरन्दरः ॥ वत्सरं जुह्वतस्तैः स्याल्लक्ष्मीरिन्द्रेण वाञ्छिता ॥ ५२ ॥ जुहुयादमृताखण्डैः पयोक्तैः सप्त वासरान् ॥ त्रिसहस्रं प्रतिदिनम्मन्त्रसिद्ध्यै जितेन्द्रियः ॥ ५३ ॥ कृत्यादाहज्वरोन्मादरोगाञ्जित्वा निरन्तरम् ॥ जीवेद्वर्षशतं भूत्वा तेजसा भास्करप्रभः ॥ ५४ ॥ करवीरजपाबिल्वपलाशनृपभूरुहाम् ॥ प्रसूनैः कुसुमैः फुल्लैः कुटजैर्जातिसम्भवैः ॥ ५५ ॥ पुष्पैर्हुत्वा त्रिमध्वक्तैर्मन्त्री प्रतिपदम्प्रति ॥ आप्नुयान्महतीं लक्ष्मीं वत्सराद्वाञ्छिताधिकाम् ॥ ५६ ॥ आदाय तण्डुलप्रस्थं निर्मलं साधुशोधितम् ॥ गोदुग्धेन हविः कृत्वा कवलन्तेन कल्पयेत् ॥ ५७ ॥ आज्याक्तं तत्समादाय पूजिते हव्यवाहने ॥ गन्धमाल्यादिभिः सम्यग्जपित्वाष्टोत्तरं शतम् ॥ ५८ ॥ जुहुयात्प्रतिपत्स्वग्निं ध्यात्वा तुरगविग्रहम् ॥ जायते वत्सरादेव लक्ष्मीस्त्रैलोक्यमोहिनी ॥ ५९ ॥ मन्त्रेणानेन जपितां वचां खादेद्दिनागमे ॥ भारती निवसेत्तस्य मुखाम्भोजेतिनिश्चला ॥ ६० ॥ अष्टोत्तरशतं प्रातर्जपित्वा [1]कं पिबेन्नरः ॥ जाठराग्निर्भवेत्तस्य घृतेनैव हुताशनः ॥ ६१ ॥ कृत्वा नवपदात्मानं मण्डलम्प्रागुदीरितम् ॥ कलशान्नवकल्याणान्स्थापयेत्प्रोक्तवर्त्मना ॥ क्षीरवृक्षसमुद्भूतैः क्वाथैस्तान्पूरयेत्क्रमात् ॥ ६२ ॥ वस्त्रादिभिरलंकृत्य नवरत्नानि निःक्षिपेत् ॥ मध्ये सम्पूजयेदग्निमूर्त्तीरष्टौ दिशां क्रमात् ॥ कुम्भेषु धूपदीपाद्यैः पुष्पधूपैर्मनोहरैः ॥ ६३ ॥ स्पृष्ट्वा जपेत्ततः कुम्भं मन्त्रमष्टोत्तरं शतम् ॥ अभिषिञ्चेत्ततः साध्यं विनीतं दत्तदक्षिणम् ॥ ६४ ॥ ज्वरग्रहमहारोगदारिद्र्यादीन्विजित्य सः ॥ जीवेद्वर्षशतं सम्यगभिषिक्तः श्रिया सह ॥ अग्नेराराधनं चेत्थं भुक्तिमुक्तिप्रदायकम् ॥ ६५ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि यममन्त्रमघापहम् ॥ [2]ॐक्रोंह्रींआं च तद्बीजं ङेन्तं वैवस्वतं वदेत् ॥ ६६ ॥ धर्म्मराजाय भक्तानुग्रहकृते नमो वदेत् ॥ चतुर्वि-

---

१ जलम् ॥ २ ॐक्रों ह्रीं आं वैं वैवस्वताय धर्मराजाय भक्तानुग्रहकृते नमः ॥

शतिवर्णोयं यममन्त्रोखिलेष्टदः ॥ ६७ ॥ त्रिद्वीप्विषवगयुग्माणैः षडङ्गानि स्मरेद्यमम् ॥ मेघश्यामं प्रसन्नास्यं नानालङ्कारसंयुतम् ॥ ६८ ॥ महिषस्थं दण्डधरं संस्तुतं पितृभिर्वृतम् ॥ नानारूपधरैर्दूतैः श्वेतवस्त्रं भजेद्यमम् ॥ ६९॥ पूजयेत्षड्दलेङ्गानि वसुपत्रे ग्रहाष्टकम् ॥ दिगीशांश्च यमस्थाने चित्रगुप्तं प्रपूजयेत् ॥ ७० ॥ वज्रादींश्चापि तद्बाह्ये यमपूजा प्रकीर्त्तिता ॥ वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं हुनेदाज्यान्वितैस्तिलैः ॥ ७१ ॥ एवं सिद्धमनुर्मन्त्री निग्रहानुग्रहक्षमः ॥ तस्य संस्मरणादेव सकलापन्निवारणम् ॥ ७२ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि चित्रगुप्तमनुं परम् ॥ तारो नमो विचित्राय ङेन्तः स्याद्यमलेखकः ॥ यमेत्युक्त्वा च वाहिकाधिकारिणे वदेत्ततः ॥ ७३ ॥ ततः षडक्षरं कूटं यमलकरपास्तथा ॥ उकारस्वरसंयुक्तास्सचन्द्राः कूटमुच्यते ॥ ७४ ॥ जन्मसम्पत्प्रलयं च द्विधा कथय ठंद्वयम्॥ अष्टत्रिंशदक्षरोयं चित्रगुप्तमनुर्मतः॥ सप्तषण्मनुवस्वङ्गनेत्राणैरङ्गकल्पनम् ॥ ७५ ॥ किरीटिनं श्वेतवस्त्रं विचित्रासनसंस्थितम् ॥ लेखकं पापपुण्यानां चित्रगुप्तमहम्भजे ॥ ७६ ॥ जपेद्वर्णसहस्रं च ततः सिद्धो भवेन्मनुः ॥ राजद्वारे विवादे च संग्रामे जयदायकः ॥ ॥ ७७ ॥ भजन्ति लेखका ये तु मन्त्रमेतं नृपाङ्गणे ॥ मान्यां कीर्त्तिं च वंशं च संस्थाप्य स्वर्गगामिनः ॥ ७८ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि नैर्ऋतस्य मनुं परम् ॥ ॐक्षं निर्ऋतये रक्षोधिपतये पदं वदेत् ॥ ७९ ॥ धूम्रवर्णाय खड्गेति हस्ताय प्रेतवाहनम् ॥ ङेन्तस्ततश्च हृदयं त्रिंशदर्णो मनुर्मतः ॥ ८० ॥ किरीटिनश्च पिङ्गाक्षं धूम्राभं प्रेतवाहनम् ॥ नानारक्षोगणैः सेव्यं खड्गचर्म्मधरं भजे ॥ ८१ ॥ ॐ क्षमाद्यैर्हृदन्तैश्च पञ्चाङ्गैः पञ्चभिः पदैः ॥ ८२ ॥ आसुरीशक्तिसहितं मध्ये तु निर्ऋतिं यजेत् ॥ पञ्चकोणेषु मञ्चाङ्गमष्टपत्रे यजेदिमाः ॥ ८३ ॥ नवस्थां पाशिनीं वाणीं त्रासिनीं गुप्तचारिणीम् ॥ राक्षसीं भीतिदां कृत्यां खेटान-

१ वदेदित्यस्यात्रापि सम्बंधः ॥ २ ॐक्षं निर्ऋतये नमः हृदयाय नमः, ॐक्षं रक्षोधिपतये नमः शिरसे स्वाहा, ॐक्षं धूम्रवर्णाय नमः शिखायै वषट्, ॐक्षं खड्गहस्ताय नमः कवचायहुम्, ॐक्षं प्रेतवाहनाय नमः नेत्रत्रयाय वौषडित्यादि ॥

स्राणि तद्बहिः ॥८४॥ जपेत्रिंशत्सहस्राणि गुञ्जाज्याभ्यां हुनेत्ततः ॥ एवं तु सिद्धे मन्त्रेस्मिन्नभयं जायते वने ॥ ८५ ॥ रक्षोभूतपिशाचाद्याश्चौरव्याघ्रोरगादयः ॥ मनुष्या अपि ये वन्या मृगादीनां तु का कथा॥८६॥स्वयमेव पलायन्ते साधकस्य रणादपि ॥ ८७ ॥ जप्त्वा हुत्वा पर्वदिनेऽयुतं वापि सहस्रकम् ॥ परेह्नि वा गुडार्थं च कानने विचरेद्बुधः ॥ ८८ ॥ अनेन मनुना कुर्य्यात्तृणसूत्राभिमन्त्रणम् ॥ बध्नीयात्सीमायां वने वा मार्ग एव च ॥ न भयं जायते तत्र व्याघ्रचौरोरगादिजम् ॥ ८९ ॥ निर्क्रीतिं भजते यस्तु नीचजातौ न जायते ॥ जन्मान्तरे द्विजो भूत्वा काशीं प्राप्य विमुच्यते ॥ ९० ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि आसुर्य्या मनुमद्भुतम् ॥ कलौ द्रुतफलश्चैतत्सदृशो नास्ति चागमे ॥ ९१ ॥ कटुके कटुकपत्रे सुभगे आसुरीति च ॥ ततो रक्ते पदं ब्रूयात्तत्पश्चाद्रक्तवाससे ॥९२॥ अथर्वणस्य दुहितरघोरे प्रवदेत्ततः ॥ अघोरकर्म्मके देवि अमुकस्य गतिं दह ॥९३॥ दहेति चोपविष्टस्य गुदं दहयुगं तथा ॥ सुप्तस्येति प्रोच्य मनो दहयुग्मं वदेत्ततः ॥ ९४ ॥ प्रबुद्धस्येति हृदयं दहयुग्मं हनद्वयम् ॥ पचयुग्मं तावदिति दहयुग्मं पचेति च ॥ ९५ ॥ यावन्मे वशमायाति हुंफट् स्वाहा ध्रुवादिकः॥ प्रोक्तोयमासुरीमन्त्रो दशोत्तरशताक्षरः ॥ ॥ ९६ ॥ अङ्गिराः स्यान्मुनिश्छन्दो विराड् देवी तथासुरी ॥ स्वाहा शक्तिस्तथौंबीजं मन्त्रस्यास्य प्रकीर्तितम् ॥ हुंफट्स्वाहान्तकैर्मन्त्रवर्णैः प्रत्यङ्गकल्पनम् ॥ ९७ ॥ दक्षयोः कार्म्मुकं शूलं वामयोश्च शरांकुशौ ॥ बिभ्रतीं चन्द्रभां पद्मस्थितां सुबहुभूषणाम् ॥ अहियज्ञोपवीतां तामासुरीं संस्मराम्यहम् ॥ ९८ ॥ जप्त्वायुतं हुनेद्राजीवृताभ्यां मन्त्रसिद्धये ॥ गृहीत्वा तु सपञ्चाङ्गमासुरीं मन्त्रयेच्च ताम् ॥ ९९ ॥ तया धूपितमात्मानं यो जिघ्रेत्स वशो भवेत् ॥ मध्वाक्तामासुरीं हुत्वा सहस्रं वशयेज्जगत् ॥ १०० ॥ राजिकाप्रतिमां कृत्वा दक्षांघ्रेर्मस्तकावधि ॥ अष्टोत्तरशतं खण्डाञ्जुहुयादसिना कृतान् ॥ नार्य्याः प्रतिकृतेर्वामपादादिहवनं चरेत् ॥ १०१ ॥ सप्ताहमेवं

१ ॐ कटुके कटुपत्रे सुभगे आसुरि रक्ते रक्तवाससे अथर्वणस्य दुहितरघोरे अघोरकर्म्मके देवि अमुकस्य गतिं दहदह उपविष्टस्य गुदं दहदह सुप्तस्य मनो दहदह प्रबुद्धस्य हृदयं दहदह हनहन पचपच तावद् दहदह पच यावन्मे वशमायाति हुं फट् स्वाहा ॥

कुर्वीत राजीकाष्ठैश्चितानले ॥ दासवज्जायते साध्यस्त्रिलिङ्गो ह्यपि तद्वशे ॥ ॥१०२॥ कटुतैलान्वितां राजीं निम्बपत्रयुतां रिपोः ॥ नामयुञ्जनुना हुत्वा ज्वरिणं कुरुते रिपुम् ॥१०३॥ एवं राजीं सलवणां हुत्वा स्फोटयते रिपुम् ॥ अर्कदुग्धाक्ततद्धोमान्नेत्रनाशः प्रजायते ॥ १०४ ॥ सप्ताहं तु पलाशाग्नौ हुनेद्विप्रवशीकृतौ ॥ क्षत्रियं तु गुडाभ्यक्तराजिकाभिर्वशं नयेत् ॥ १०५ ॥ दध्यक्तराजिकाहोमाद्वैश्यो वश्यः प्रजायते ॥ शूद्रो लवणयुग्घोमात्प्रत्यहं साष्टकं शतम् ॥ १०६ ॥ एकादिसप्तकैः सप्तसप्तकान्तं यदा हुनेत् ॥ असाध्यं साधयेत्कार्य्यं साधको नात्र संशयः ॥ आसुरीसमिधो हुत्वा मध्वक्ता लभते निधिम् ॥ १०७ ॥ जलपूर्णे घटे राजीपल्लवैः समलंकृते ॥ आवाह्य चासुरीं तत्र पूजयेदुपचारकैः ॥ १०८ ॥ अष्टोत्तरशतं मूलमन्त्रेणापि च मन्त्रयेत् ॥ तेनाभिषिक्तो भवति व्याध्याधिभ्यां विवर्जितः ॥ १०९ ॥ मनःशिला चन्दनं च तगरं नागकेशरम् ॥ आसुर्य्याश्चापि पुष्पाणि प्रियंगु च समंसमम् ॥ ॥ ११० ॥ सम्यग्विचूर्ण गुटिकाः शतवाराभिमन्त्रिताः ॥ गुञ्जानिभा यस्य मूर्ध्नि स्थापितैका वशस्तु सः ॥ १११ ॥ ससर्षपाश्च निम्बाग्नौ सप्ताहं राजिका हुनेत् ॥ अष्टोत्तरशतं याम्याभिमुखो मारयेदरीन् ॥ ११२ ॥ कलौ काम्यकरी नान्या सत्यं नास्त्यासुरीसमा ॥ सर्वेपि कुण्ठिता मन्त्रा नासुरी परमेश्वरी ॥ ११३ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि मन्त्रं वरुणदैवतम् ॥ तारं वं वरुणायेति जलाधिपतये वदेत् ॥ ११४ ॥ वदेच्च शुक्लवर्णाय पाशहस्ताय संवदेत् ॥ मकरेति वाहनाय चेकोनत्रिंशदर्णकः॥ ॐ ममाद्यैर्नमोन्तैश्च पञ्चाङ्गं पञ्चभिः पदैः ॥ ११५ ॥ श्वेतांशुको दधद्धस्तैः पाशांकुशाभयवरान् ॥ स्वच्छारविन्दवसतिर्मुक्ताभरणभूषितः ॥ तुन्दिलश्च प्रसन्नास्यो वरुणो निधिदोस्तु मे ॥ ११६ ॥ त्रिष्टुप्छन्दो वशिष्ठर्षिर्देवता वरुणो मतः ॥ जपेद्वर्णसहस्रं तु होमः पद्माक्षकैः स्मृतः ॥ ११७ ॥ अङ्गानि पूजयेदादौ नदीषट्कं ततोर्चयेत ॥ मणिकर्णीन्तथा गङ्गां नर्मदां च सरस्वतीम् ॥ गो-

१ रिपोरिति सम्बन्धिमहिम्ना बोध्यः॥ २ कार्य्या इतिशेषः। अग्रे च तासां मध्ये एकापि गुटिका यस्य शिरसि न्यस्ता स तस्य वशवर्त्तीत्यर्थः॥

दावरीं च कालिन्दीं समुद्रास्तदनन्तरम् ॥ ११८ ॥ अनन्तो वासुकिस्तक्षः कर्कोटः पद्मकस्तथा ॥ महापद्मः शङ्खपालः कुलिकोऽष्टदले ततः ॥ ११९ ॥ तद्वाह्येऽर्कदले पूज्या विमलाद्याश्च शक्तयः ॥ दिगीशैरायुधैश्चेति षडावरणपूजनम् ॥ प्रयोगाश्चात्र सिद्ध्यन्ति देवमन्त्रोदिताः परे ॥ १२० ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि मणिकर्णीमहामनुम् ॥ यस्योपासनतो वश्यं मृत्युः काश्यां प्रजायते ॥ १२१ ॥ ओमैं ह्रीं श्रीं कामबीजमों मं च मणिकर्णिके ॥ नम ॐ तिथिवर्णोयं भुक्तिमुक्तिफलप्रदः ॥ १२२ ॥ वेदव्यासो मुनिः प्रोक्तश्छन्दः स्यादतिशक्वरी ॥ मणिकर्णी देवतास्य कुद्विद्वयक्षीषुवह्निभिः ॥ मन्त्राणैः स्यात्षडङ्गानि ध्यायेत्तां पश्चिमामुखीम् ॥ १२३ ॥ दक्षहस्ते पद्ममालां मातुलुङ्गमदक्षिणे ॥ श्वेतपद्मोद्भवां मालां रुचिरां दधतीं गले ॥ श्वेतवस्त्रावृतां त्र्यक्षीं ध्यायेद्बद्धाञ्जलिः पराम् ॥ १२४ ॥ लक्षत्रयं जपेन्मन्त्रं त्रिमध्वक्ताम्बुजैर्हुनेत् ॥ लिखेदष्टदलं पद्मं कर्णिकायां तु षड्दलम् ॥ १२५ ॥ अङ्गानि षड्दलेऽर्च्यानि पत्रमध्ये शिवं हरिम् ॥ विधिं सूर्य्यं पर्वतेशं मेनां चापि भगीरथम् ॥ १२६ ॥ वरुणं च दलाग्रेषु मीनं कूर्म्मं च दर्दुरम् ॥ मकरांश्चापि हंसांश्च तथा कारण्डवानपि ॥ १२७ ॥ चक्रवाकान्सारसांश्च तद्बहिर्भूपुरे यजेत् ॥ इन्द्रादींश्चापि वज्रादीन्मन्त्रोयं दक्षमार्गिणाम् ॥ १२८ ॥ सुखानि सन्ततिं वित्तं जीवते सम्प्रयच्छति ॥ मन्त्रोयं मृत्युकाले तु काश्यां मुक्तिप्रदो ध्रुवम् ॥ १२९ ॥ अथ मन्त्रान्तरं वक्ष्ये वामिनामपि सद्गतिः ॥ भवेद्यस्य प्रसादेन तारं मं मणिकर्णिके ॥ १३० ॥ प्रणवात्मिके हृद्यायं मन्त्रः स्याच्छक्रवर्णकः ॥ उपासनाध्यानपूजाः स्वीयाम्नायेन कल्पयेत् ॥ १३१ ॥ अद्रोहः सर्वभूतानां परमं चास्य साधनम् ॥ पुरश्चर्य्याप्रयोगादि पूर्वमन्त्रसमं मतम् ॥ १३२ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि गङ्गाया मन्त्रपञ्चकम् ॥ पञ्चाम्नायैस्तत्क्रमेण चोपास्यं सिद्धिका-

---

१ ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ मं माणिकर्णिके नमः ॐ ॥ २ मूलोक्तसंख्याक्रमेण निम्नलिखितन्यासा विधेयास्ते यथा—ॐ हृदयाय नमः, ऐं ह्रीं शिरसे स्वाहा, श्रीं क्लीं शिखायै वषट्, ॐ मं कवचाय हुम्, मणिकर्णिके नेत्रत्रयाय वौषट्, नमः ॐ अस्त्राय फट् ॥

रकम् ॥ १३३ ॥ तारो[1] नमो भगवति वाग्बीजं च हिलिद्वयम् ॥ मिलि-
युग्मं च गङ्गे मां पावयद्वितयं द्विठः ॥ १३४ ॥ एकोनात्रिंशद्वर्णोयं जप्तव्यो
दक्षिणक्रमैः ॥ [2]त्रिवेदाङ्गाग्निषण्नेत्रैर्मन्त्राणैरङ्गकल्पनम् ॥ १३५ ॥ शुभ्रवस्त्रां
त्रिनेत्रां च वरं पद्मं च दक्षयोः ॥ अभयं कलशं वामकरयोर्मकरास्थिताम् ॥
॥ १३६ ॥ अर्धेन्दुमुकुटां ब्रह्मविष्णुरुद्रस्वरूपिणीम् ॥ नानालङ्कारशोभाढ्यां
प्रसन्नवदनां भजे ॥ १३७ ॥ पूजाद्यं मणिकर्णीवज्जपो लक्षं प्रकीर्त्तितः ॥
तिलाज्याभ्यां भवेद्धोमो मन्त्रोयं भुक्तिमुक्तिदः ॥ १३८ ॥ अथायमेव[3] मन्त्र-
स्तु त्यक्तपूर्वनगाक्षरः ॥ ऊर्ध्वाम्नायेन साध्यः स्यात्षडङ्गानि शरैः कृतैः ॥
॥ १३९ ॥ त्रित्रित्रिनेत्रमन्त्रार्णैर्ध्यानाद्यं पूर्ववन्मतम् ॥ सर्वपापक्षयकरो भुक्ति-
मुक्तिप्रदायकः ॥ १४० ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि पश्चिमाम्नायगं मनुम् ॥
तारो नमः शिवायै च नारायण्यै पदं वदेत् ॥ १४१ ॥ दशहरायै गङ्गायै
स्वाहान्तो नखवर्णकः ॥ वेदव्यासो मुनिश्छन्दः कृतिर्गङ्गा च देवता ॥ १४२ ॥
त्रित्र्यब्धीषुत्रिनेत्रार्णैः षडङ्गान्यर्चनादिकम् ॥ निखिलं पूर्ववत्कुर्यान्निखिला-
भीष्टदो मनुः ॥ १४३ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि पूर्वाम्नायगतं मनुम् ॥ ॐ ह्रीं
श्रीं ह्रद्भगवति गङ्गे च दयिते नमः ॥ १४४ ॥ हुंफडष्टादशार्णोयं भजतामी-
प्सितप्रदः ॥ त्रिद्व्यब्धीषुद्विद्विवर्णैः षडङ्गविधिरीरितः ॥ १४५ ॥ ऋषिच्छन्दो
देवतादि प्राग्वद्ध्यानं च पूजनम् ॥ वर्णलक्षं जपेद्धोमः प्राग्वत्सम्पत्करस्त्वयम्
॥ १४६ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि वाममार्गे प्रसिद्धिदम् ॥ हिलिद्वन्द्वं मिलिद्वन्द्वं
गङ्गे देवि नमस्तथा ॥ १४७ ॥ तारादिस्तिथिवर्णोयं छन्दो मुन्यादि पूर्ववत् ॥
त्रिद्विद्वयाक्षियुगद्वयर्णैः षडङ्गविधिरीरितः ॥ १४८ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि रेवा-
मन्त्रमघापहम् ॥ नर्मदायै नम इति षडर्णः परिकीर्त्तितः ॥ १४९ ॥ युवतीं कच्छ-

---

१ ॐ नमो भगवति ऐं हिलिहिलि मिलिमिलि गङ्गे मां पावयपावय स्वाहा स्वाहा ॥ २ त्रिचतु षट्त्रिषड्द्विमन्त्रवर्णैर्न्यासाः कार्याः तेग्रे दर्श्यन्ते—ॐ नमो हृदयाय नमः, भगवति शिरसे स्वाहा, ऐं हिलि हिलि मिलि मिलि शिखायै वषट्, गंगे मां कवचाय हुम्, पावयपावय नेत्रत्रयाय वौषट्, स्वाहा अस्त्रायफट् ॥ ३ अस्यैवाद्यसप्ताक्षरपरित्यागेन द्वाविंशत्यक्षरात्मापरो भवति ऐं ॐ हिलि हिलि मिलि मिलि गंगे मां पावय पावय स्वाहा स्वाहा ॥

पारूढा वराभयघटाम्बुजैः॥लसद्धस्तां स्वर्णकान्ति सालङ्कारां भजाम्यहम् ॥ ॥ १५० ॥ मुनिः शिवस्तु गायत्री छन्दो रेवा च देवता ॥ षडङ्गानि च मन्त्रार्णैः प्रजपेद्वर्णसङ्ख्यया ॥ १५१ ॥ तिलाज्यहोमो मन्त्रेण सर्वपापप्रणाशनः ॥ इह सौख्यं परत्रापि शिवलोके महीयते ॥ १५२ ॥ सरस्वत्यास्तु ये मन्त्रा नद्यास्ते परिकीर्त्तिताः ॥ सरस्वतीतटे जप्तास्त्वरितं सिद्धिदायकाः ॥ ॥ १५३ ॥ गङ्गामन्त्रेषु सर्वेषु गौतमीयपदं वदेत् ॥ गङ्गाशब्दस्य पूर्वे ते गोदाया मनवः स्मृताः ॥ १५४ ॥ ॐ नमः सूर्य्यतनये यमलोकनिवासिनि ॥ श्रीकृष्णखेलयुनदि त्राहि मां त्वं भवार्णवात् ॥ १५५ ॥ यमुनायाः श्लोकरूपो मनुर्मुनिरहं स्मृतः॥ छन्दोनुष्टुप्षडङ्गानि पादार्धार्धक्रमेण च ॥१५६ ॥ गङ्गावत्पूजनं वर्णसहस्रं जप ईरितः ॥ तिलाज्याभ्यां हुनेन्मन्त्री भास्करिं नैव वीक्षते ॥ १५७ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि हिमजेशम्पतेर्मनुम् ॥ अमुकद्वीपावरकामुकद्रव्योदधे वदेत् ॥ १५८ ॥ अमुकम्मे देहि तथा दापयेत्यग्निगेहिनी ॥ समुद्रमन्त्र उद्दिष्टः सिन्धुद्वीपो मुनिर्मतः ॥१५९॥ गायत्री छन्द उद्दिष्टन्तत्रात्सिन्धुश्च देवता॥पदैर्मनोः षडङ्गानि तत्तद्रूपं विचिन्तयेत् ॥१६०॥ जपेद्वर्णसहस्राणि तत्तद्द्रव्यैस्तथा हुनेत् ॥ तत्तदन्तर्गतं वस्तु लभते साधको ध्रुवम् ॥ १६१ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि वायुमन्त्रम्महाद्भुतम् ॥ तारं यं वायवे प्राणाधिपतये पदं वदेत् ॥ १६२ ॥ कृष्णवर्णायांकुशेति हस्ताय मृगवाहना ॥ य नमो गोद्विवर्णोयं वायुमन्त्र उदीरितः ॥ १६३ ॥ गणकोस्य मुनिश्छन्दो निवृद्वायुश्च देवता ॥ पञ्चाङ्गानि मनोरस्य ओं यं बीजादिकैः पदैः ॥ १६४ ॥ कृष्णवर्णं धावमानम्मृगस्थं वेगवत्तरम् ॥ सह्याद्रिं चापि शेषाद्रिं मैनाकं मन्दरन्तथा॥ पाशांकुशकरम्प्रेतकृत्यापरिसरान्वितम्॥ १६५॥ जपेद्वर्णसहस्राणि लाजाज्याभ्यां च होमयेत् ॥ सिद्धमन्त्रस्तु तत्कालम्भवेद्भूमौ बलाधिकः ॥ १६६ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि महाकृत्यामहामनुम् ॥

---

१ एकैकाक्षरैर्हृदयादिन्यासाः यथा—नहृदयाय नमः, मशिरसे स्वाहा, दा शिखायै वषट् इत्यादि ॥

२ ॐ यं वायवे प्राणाधिपतये कृष्णवर्णायांकुशहस्ताय मृगवाहनाय नमः ॥

यस्य विज्ञानमात्रेण नासाध्यम्भुवनत्रये ॥ १६७ ॥ [1]माया महायोगिनीति गौरीति भुवनेति च ॥ भयंकारि तथा हुं च षोडशार्णो मतो मनुः ॥१६८॥ अङ्गिराश्च मुनिर्देवी गायत्री छन्द ईरितम् ॥ सिंहवक्त्रा महाकृत्या भीतिदोक्ता च देवता ॥ १६९ ॥ [2]षड्दीर्घयुक्तबीजेन मन्त्रार्धेनाथयोगिना ॥ हृदयन्तु ततोर्धेन मन्त्रार्धेन शिरः स्मृतम् ॥ शिखाकवचनेत्रास्त्रं पुनरेवं प्रकल्पयेत् ॥ १७० ॥ सिंहासनां कृष्णमुखीं लम्बमानपयोधराम् ॥ दंष्ट्राकरालवदनां त्रिनेत्रां सर्वतोज्वलाम् ॥ १७१ ॥ कृष्णकञ्चुकसंवीतां विधूमाग्निसमप्रभाम् ॥ त्रिशूलचक्रचषकखट्वाङ्गकरपंकजाम् ॥ १७२ ॥ लेलिहानमहाजिह्वां विद्युत्प्रेक्षणभीषणाम् ॥ वश्ये ध्यायेद्रक्तवर्णां रक्तपुष्पैश्च पूजिताम् ॥ मारणे कृष्णवर्णां च कृष्णपुष्पाम्बरावृताम्॥ १७३॥ चतुर्दलन्तथाष्टास्रं भूपुराढ्यं समुद्धरेत् ॥ अचार्यन्त्रे कर्णिकायां देवीं बाह्यचतुर्दले ॥ पूर्वस्मिञ्छांकरीं नाम शुभ्रवर्णाम्बरावृताम् ॥१७४॥ द्विभुजां सौम्यवदनां पाशांकुशधरां शिवाम् ॥ दाक्षिणे मारिकां नाम लम्बजिह्वामधोमुखीम् ॥ १७५ ॥ कृष्णवर्णां रक्तकेशीं रक्तमाल्यानुलेपनाम् ॥ चतुर्भुजां सिंहनादां ज्वलच्छूलकपालिनीम्॥ १७६ ॥ खड्गहस्तां शिरोमालां सर्वाभरणभूषिताम् ॥ पश्चिमे वारुणीं नाम स्वर्णवर्णां हसन्मुखीम् ॥ १७७ ॥ सुवर्णमालिकां शुभ्रदंष्ट्रामभयदां सदा ॥ उदीचिभीतिकां नाम चतुर्वक्त्रां भयंकराम् ॥ १७८ ॥ पूजयित्वा जपेन्मन्त्रं जुहुयाद्राजिका घृतैः॥ ततः प्रयोगे कुर्वीत स्वेष्टं स च निगद्यते ॥ १७९॥ कालं विदित्वा प्रतिमां मारणे चाप्यधोमुखीम् ॥ वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं नित्यमष्टोत्तरं शतम् ॥ ॥ १८० ॥ देव्यग्रतो यजेदष्टदले कृत्यां मनोन्मनीम् ॥ सर्वकृत्यां भीषणीं च श्रीमतीं च प्रतिष्ठिताम् ॥ १८१ ॥ विद्यामुत्पादिनीं चेति दिगीशादींश्च भूपुरे ॥ तस्याधो मेखलायुक्तं त्रिकोणं वह्निकूचकम् ॥ १८२ ॥ चन्द्रगौरं विधायाग्निं परिस्तीर्य शरैस्ततः ॥ बिभीतकपरिध्या च कल्पयेद्यस्य मारणम् ॥ १८३ ॥ जुहुयान्निम्बतैलाक्तैः का-

१ ह्रीं महायोगिनि गौरि भुवनभयङ्करि हुम् ॥ २ ह्रीं महायोगिनि गौरि फट् हृदयाय नमः, भुवनभयंकरि शिरसे स्वाहा, हूं महायोगिनि गौरि फट् शिखायै वषट् इत्यादि ॥

कोलूककपक्षकैः ॥ दारयैनं शोषयैनं मारयेत्याभिधाय च ॥ १८४ ॥ अष्टोत्तरशतं चैवमनया जुहुयाद्बुधः ॥ होमान्ते विधिवत्कृत्यामाराध्याग्नेश्च सन्निधौ ॥ १८५ ॥ यो मे कण्ठग्रहो वातिदूरस्थश्चान्तिकेपि च ॥ भुंक्ष्व क्रव्यमसृक् तस्य पिबेत्युक्त्वा निवेदयेत् ॥ १८६ ॥ संरक्ष्याग्निं विधानेन नवरात्रं समाचरेत् ॥ जुह्वन्तिष्ठति यावत्स तावदस्य रिपोर्मृतिः ॥ ॥ १८७ ॥ अर्कक्षीरेण मारिचं पिष्ट्वा सिद्धार्थमेव च ॥ जले संलोडय मन्त्रेण रिपुं ध्यात्वा निरुद्धदृक् ॥ १८८ ॥ कृष्णाम्बरोत्तरीयोग्रपादेनाक्रम्य तं रिपुम् ॥ वज्रशूलमिति ध्यात्वापस्तस्योपरि निःक्षिपेत् ॥ नवरात्रोत्तरे शत्रुर्म्रियते नात्र संशयः ॥१८९॥ हरसिद्धेत्यृचा वह्नौ तैलसिक्तैर्बिभीतकैः ॥ जुह्वतो म्रियते शत्रुः सत्यमौशनसं मतम् ॥ १९० ॥ रिपोः प्रतिकृतिं कृत्वा साध्यर्क्षामलके फले ॥ अर्कक्षीरेण मारिचं पिष्ट्वा तत्रैव लेपयेत् ॥ फट्कारं हृदये कृत्वा शिवनिर्माल्यके क्षिपेत् ॥ १९१ ॥ ततः कृष्णचतुर्दश्यां जपेन्मन्त्रं सहस्रशः ॥ सद्योवगाहनं कृत्वा तस्यामेव विचक्षणः ॥ १९२ ॥ मन्त्रं जपित्वा विधिना भेदयेल्लिङ्गमुद्रया ॥ षण्मासान्म्रियते शत्रुः सन्ध्ययोरुभयोरपि ॥ १९३ ॥ वायुना चोद्धृतम्पत्रं शुभ्रं बैभीतकं ततः ॥ गृहीत्वा विलिखेन्मन्त्री कृष्णसर्पास्यशोणितैः ॥ उष्ट्रास्थ्ना च शवाङ्गारैः शत्रोरुच्चाटनं भवेत् ॥ १९४ ॥ दूर्वागुडूच्या गव्यैश्च सर्पिषा तिलतण्डुलैः ॥ अन्यैः समिद्भिः पालाशैः शान्तिं कुर्य्याद्विचक्षणः ॥ १९५ ॥ लक्ष्म्यै बिल्वफलैः पत्रैर्नन्द्यावर्त्तैः श्रिये तथा ॥ रक्तपुष्पैरपामार्गैरङ्गारैश्च सुभद्रकैः ॥ मधुरत्रयसांसिक्तैरेभिः कुर्य्याच्च वश्यकम् ॥ ॥ १९६ ॥ शान्तिं कृत्वा विधानेन जपेत्सारिमलं त्विमम् ॥ महाव्याधिप्रशमनं नित्यमष्टोत्तरं शतम् ॥ १९७ ॥ जपेदेकाग्रचित्तस्तु लोकवश्यकरं परम् ॥ मनसा चिन्तयेत्कृत्यां गजारूढामिभद्रवीम् ॥ १९८ ॥ तस्य वश्यम्भवेत्सर्वमश्वारूढां तथैव च ॥ चौरव्याघ्रमृगादीनां सलिलादेर्भयापहम् ॥ १९९ ॥ सप्ताभिमन्त्रितं तोयं पीत्वा मन्त्रञ्जपेद्बुधः ॥ मेधावी च भवेद्वाग्मी तावज्जापाभिषेकतः ॥ २०० ॥ सप्ताभिमन्त्रितं कृत्वा विष-

मप्यमृतं भवेत् ॥ पक्षम्मासं द्विमासं वा षण्मासं वत्सरं तु वा ॥ २०१ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि कृत्याशान्तिविधिक्रमम् ॥ कृत्यां समर्चयेद्धस्ते यथा विधिपुरःसरम् ॥ २०२ ॥ षोडशारं लिखेत्पद्मं योनियुक्तं सबिन्दुकम् ॥ तन्मध्येष्टदलं न्यस्य यकारादीन्न्यसेत्क्रमात् ॥ २०३ ॥ तन्मध्ये रसकोणन्तु लिखेन्मूलमनुं स्मरेत् ॥ चन्द्रबिम्बं लिखेत्पद्मं तस्योर्ध्वं प्रतिमां लिखेत् ॥ ॥ २०४ ॥ तस्य मध्ये न्यसेत्कुम्भं रक्तवस्त्रविभूषितम् ॥ कुम्भमध्ये न्यसेत्कृत्यां सर्वलक्षणसंयुताम् ॥ २०५ ॥ अर्चयेच्च यथान्यायम्पायसन्तु निवेदयेत् ॥ परितोष्य च तान्न्यस्येदसिताङ्गादिभैरवान् ॥ २०६ ॥ गन्धपुष्पादिभिश्चार्च्य तद्बाह्ये क्षेत्रपालकान् ॥ लोकेशान्तं यजेद्देवि तदग्रे होममाचरेत् ॥ २०७ ॥ तस्य दक्षिणपार्श्वे तु लक्ष्मीं ध्यायेद्यथाविधि ॥ कुम्भमध्ये न्यसेद्देवीं दक्षिणे तु श्रियं स्मरेत् ॥ २०८ ॥ वामपार्श्वे यजेद्देवीं हृल्लेखां परमेश्वरीम् ॥ तस्या वै वामपार्श्वे तु पूजयेद्गणनायकम् ॥ अयुतं मूलमन्त्रन्तु जपेन्मृत्युविनाशनम् ॥ २०९ ॥ कृत्यामन्त्रः परिप्रोक्तः सर्वकामफलप्रदः ॥ [1]महाशान्तिकरे लोके दुःखदारिद्र्यनाशनः ॥ २१० ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि राजराजमनूञ्छुभान् ॥ [2]यक्षाय च कुबेराय वदेद्वैश्रवणाय च ॥ २११ ॥ धनधान्याधिपतये धनधान्यपदं वदेत् ॥ समृद्धिं मे देहि वदेद्दापयाग्निप्रियान्तकः ॥ २१२ ॥ पञ्चत्रिंशद्वर्णमनुर्विश्रवा मुनिरीरितः ॥ छन्दस्तु बृहती [3]त्र्यब्धीष्वष्टाष्टागैः षडङ्गकम् ॥ २१३ ॥ गारुडात्मनिभं शान्तं मुकुटादिविभूषितम् ॥ वरङ्गदाश्च दधतन्तुन्दिलं यक्षसेवितम्॥ २१४ ॥लक्षमेकञ्जपेन्मन्त्रं दशांशं जुहुयात्तिलैः ॥ धर्म्मादिपीठे प्रयजेदङ्गलोकेशहेतिकम् ॥ २१५ ॥ शिवालये जपेन्मन्त्रमयुतं धनवृद्धये॥ बिल्वमूलोपविष्टेन जप्तो लक्षं धनर्द्धिदः॥ २१६ ॥ अथ मन्त्रान्तरं वक्ष्ये [4]ॐक्लींह्रींश्रीं समुच्चरेत्॥ श्रींह्रींक्लींॐ च विंवित्तेश्वराय नम इत्यपि॥ २१७ ॥ षोडशार्णोऽस्य मुन्यादिश्रा

१ यस्मात् इतिशेषः ॥ २ यक्षाय कुबेराय वैश्रवणाय धनधान्याधिपतये धनधान्यसमृद्धिं मे देहि दापय स्वाहा ॥ ३ यक्षाय हृदयाय नमः, कुबेराय शिरसे स्वाहा, वैश्रवणाय शिखायै वषट्, धनधान्याधिपतये कवचाय हुम्, धनधान्यसमृद्धिं मे नेत्रत्रयाय वौषट्, देहि दापय स्वाहा अस्त्रायफट् ॥ ४ ॐ क्लीं ह्रीं श्रीं श्रीं ह्रीं क्लीं ॐ विं वित्तेश्वराय नमः ॥

ग्वत्रिद्विद्विनेत्रकैः ॥ पञ्चाक्षिभ्यां षडङ्गं स्याद्ध्यानपूजादि पूर्ववत् ॥ २१८ ॥ अथ मन्त्रान्तरं वक्ष्ये कुबेरस्य गजाक्षरम् ॥ तारो वैश्रवणायेति स्वाहा पञ्चाङ्गमन्त्र तु ॥ स्वाहान्तैः प्रणवाद्यैश्च पञ्चभिर्मन्त्रवर्णकैः ॥ २१९ ॥ धनपूर्णं स्वर्णकुम्भं तथा रत्नकरण्डकम् ॥ हस्ताभ्यां बिभ्रतं खर्वकरपादं च तुन्दिलम् ॥ २२० ॥ वटाधस्ताद्रत्नपीठोपविष्टं सास्मिताननम् ॥ वर्णलक्षजपेद्धोमपूजे प्राग्वन्महाधनी ॥ सेवनादस्य भवति यक्षिण्याद्यास्तथा वशे ॥ २२१ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि ईशानमनुमद्भुतम् ॥ प्रणवं हं समुच्चार्य्य चेशानाय वदेत्ततः ॥ २२२ ॥ विद्याधिपतये चेति स्फटिकेति वदेत्ततः ॥ वर्णाय शूलहस्ताय ङेन्तश्च वृषवाहनः॥२२३॥ नमोन्त एकत्रिंशाद्भिर्वर्णैर्मन्त्र उदाहृतः॥ ॐह्मायैर्नमोन्तैश्च पञ्चाङ्गं पंचभिः पदैः ॥ २२४ ॥ शक्तीनां मनवो ये च ते विद्याः परिकीर्त्तिताः ॥ पुरुषाणान्तु ते मन्त्रा विद्यास्तु पुरुषं विना ॥ भवन्ति नैव फलदा यथा नारी नरं विना ॥ २२५ ॥ पुंसां योगो यत्र नोक्तस्तत्रेशानं प्रयोजयेत् ॥ स्त्रीमन्त्रो भोगदः प्रोक्तः पुम्मन्त्रो मोक्षदः परः॥ उभयोपासनं देवि भुक्तिमुक्तिप्रदायकम् ॥ २२६ ॥ लक्ष्म्याश्च विष्णुना योगो गायत्र्या भास्करेण च ॥ गणेशेन सरस्वत्या यक्षिण्याद्याभिरात्मनः ॥ ॥ २२७ ॥ दक्षिणाम्नायशक्तीनां शैवमन्त्रैश्च योजनम् ॥ वामे तु भैरवैर्मन्त्रैः शेषाम्नायेष्वयं मनुः ॥२२८॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि ब्रह्मणो मन्त्रमद्भुतम् ॥ तारं पाशं ब्रह्मणे च लोकाधिपतये वदेत् ॥ २२९ ॥ रक्तवर्णायोर्ध्वलोकपालकाय वदेत्ततः ॥ पद्महस्ताय च पदं ङेन्तःस्याद्धंसवाहनः ॥ नमोन्तोबागरामार्णो मन्त्रोयं परिकीर्त्तितः ॥ २३० ॥ तारपाशादिकैः षाड्भिः पदैरङ्गं हृदन्तकैः ॥ नास्य पूजाविधिः प्रायो जपोस्य परिकीर्त्तितः॥२३१॥ वर्णलक्षजपादेव निग्रहानुग्रहक्षमः ॥ दशपत्रे यजेदेनं प्रागीशान्तदले सुराः ॥ न तत्र मन शापोस्ति शापः केवलपूजने ॥ २३२ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि शेषस्य मनुमद्भुतम् ॥ तारं मायामनन्ताय नागाधिपतये वदेत् ॥ गौरवर्णायातलादिसप्तलोकेश्वराय च ॥ २३३ ॥ चक्रहस्ताय गरुडवाहनाय नमोन्तकः ॥ एकचत्वारिंशदर्णो मन्त्रोनन्तस्य कीर्त्तितः ॥ २३४ ॥ मन्त्रम्प्रति-

चतुर्दश्याश्चतुर्दशशतञ्जपेत् ॥ दुग्धं हुत्वाथविप्रेन्द्रान्भोजयेच्च चतुर्दश ॥ २३५॥ कुर्य्याच्चतुर्दशीं भक्त्या धनधान्ययुतो भवेत् ॥ राज्यभ्रष्ट इयाद्राज्यं विद्याकामस्तु पण्डितः ॥ २३६ ॥ भाद्रशुक्लचतुर्दश्यां विशेषात्पूजनम्मतम् ॥ ईश्वरस्य च पूजायां खपृथिव्योः प्रपूजनम् ॥ एवमुक्ता दिक्पमन्त्राः किमन्यच्छ्रोतुमिच्छसि ॥ २३७ ॥

इतिश्रीमहामायामहाकालानुमते मेरुतन्त्रे शिवप्रणीते दशदिगीशमन्त्रप्रकाशश्चतुर्विंशः ॥ २४ ॥

---

श्रीदेव्युवाच ॥ देवदेव महादेव तेजोमात्रन्तु सूर्यजम् ॥ तथा दीपस्य मे मन्त्रं फलञ्च कृपया वद ॥ १ ॥ ईश्वर उवाच ॥ शृणुदेवि प्रवक्ष्यामि दीपस्य विधि मद्भुतम् ॥ आदौ गणेशदीपस्तु कार्याकार्य्यविनिर्णये ॥२॥ कर्त्तव्यस्तत्प्रवक्ष्यामि कार्य्यमष्टविधं स्मृतम् ॥ शान्तिकम्पौष्टिकं वश्यं मारणं स्तम्भनन्तथा ॥ मोहोच्चाटौ द्वेषणञ्च तेषु दीपञ्चरेत्क्रमात् ॥ ३ ॥ गोधूमयवमाषाणां मृत्तिका स्वर्णभाण्डजम् ॥ ताम्रायसं क्रमात्पात्रं वर्तयः श्वेतपीतकैः ॥ कृष्णनीलारुणारक्तहरितकपिशसूत्रकैः ॥ ४ ॥ पूर्वाशाद्यष्टकाष्ठानां क्रमात्सम्मुखमाचरेत् ॥ उदक्प्राग्दक्षतोयेशाग्निरक्षोवायुशूलिदिक् ॥ सम्मुखन्तु मुखं कुर्य्यात्साधकः स्वस्वकर्म्माणि ॥ ५ ॥ गव्याज्यन्तिलतैलं च राजिकोत्थंच सार्षपम् ॥ माहिष्याज्यमुमातैलं वसातैलं कुसुम्भजम् ॥ ६ ॥ लिखेत्सूर्यदलं पद्मं लिप्तगोमयमण्डले ॥ दीपस्य दिशमारभ्य गणेशं तत्र पूजयेत् ॥ ७ ॥ सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजकर्णकः ॥ लम्बोदरश्च विकटो विघ्ननाशो विनायकः ॥ ॥ ८ ॥ धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः ॥ द्वादशैतानि नामानि यः पठेच्छृणुयादपि ॥९॥ विद्यारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा ॥ संग्रामे संकटे चैव विघ्नस्तस्य न जायते ॥ एतानत्र यजेद्विद्वान्पश्चाद्दीपं प्रदापयेत् ॥ १० ॥ ऊर्ध्वाधः कम्पते दीपस्तदा कार्य्यं प्रसिद्ध्यति ॥ तिर्यक्कम्पेन कार्यं स्यात्सम्यग्ज्योतिषि सत्वरम् ॥ ११ ॥ तेजोमांद्ये विलम्बेन चात्र कौतुकमुच्यते ॥ जातां देवगणे कन्यां कुमारं वा समानयेत् ॥ १२ ॥ स्त्रियं वा

शुद्धवेषाश्च सम्यगानीय पूजयेत् ॥ अधस्तात्स्थापयेत्पूतं विस्तीर्णं कास्यभाजनम् ॥ १३ ॥ जलपूर्णं च तन्मध्ये सा पश्येत्स्थिरदृक्कतः ॥ चिन्तयित्वा स्वीयकार्यन्तदुपर्य्यक्षतान्क्षिपेत् ॥ कार्य्यानुसारं सा पश्येत्पुत्तलीनां च कौतुकम् ॥ ॥ १४ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि बगलादीपमुत्तमम् ॥ कृतेन येन विघ्नौघो विलयं याति मन्त्रिणः ॥ १५ ॥ शुद्धानि खलु बीजानि पक्षतुर्मुद्गरेण वा ॥ एकीकृत्य विधातव्यो दीपः सुस्निग्धशोभनः ॥ १६ ॥ षट्त्रिंशत्तन्तुभिः कार्या दृढा वर्तिः सुरञ्जिता ॥ गव्यमाज्यञ्च कौसुम्भं तैलं वा दीपकर्म्मणि ॥ ॥ १७ ॥ एतान्यानीय पूर्वन्तु ततो दीपम्प्रदापयेत् ॥ हरिद्रया रक्तवस्त्रं परिधाय शुचिः क्षमी ॥ १८ ॥ पीतासनोपविष्टश्च पीतमाल्यानुलेपनः ॥ उत्तरासम्मुखो भूत्वा हरिद्रालिप्तभूतले ॥ १९ ॥ त्रिकोणं कारयित्वा तु दीपं संस्थाप्य यत्नतः ॥ घृतमापूर्य्य वर्त्तिं च दीपं प्रज्वालयेत्सुधीः ॥ २० ॥ मूलमन्त्रं समुच्चार्य्य चेति दीपन्ततो वदेत्॥संकल्पन्यासपूर्वं तु जपेदष्टोत्तरं शतम् ॥२१॥ एवं रात्रोपकुर्वाणो मासेनैकेन साधकः॥ असाध्यान्साधयेत्कामान्वशयेदात्मनो रिपून् ॥ क्षोभयेत्स्तम्भयेच्चापि द्वेषयेत्प्रक्षिपेदपि॥२२॥अथातः सम्प्रवक्ष्यामि सर्वमन्त्रेषु गोपितम् ॥ दीपं बटुकनाथस्य सर्वकामफलप्रदम् ॥ तारं मायां रमां कामम्मायां लक्ष्मीं च वाग्भवम् ॥२३॥सर्वज्ञाय प्रचण्डेति वदेत्परा क्रमाय च ॥ बटुकेति इमं दीपं गृहाण पदमुच्चरेत् ॥२४॥सर्वकार्य्याणीति पदं साधयेति वदेत्तथा॥दुष्टान्नाशय युग्मञ्च त्रासयद्वितयंजपेत्॥२५॥सर्वतो ममरक्षां च कुरु युग्मं च वर्म फट्॥स्वाहा फट् षष्ठिवर्णोयं दीपमन्त्र उदाहृतः ॥२६॥ भवेद्भैरवमन्त्रस्य साधको य उपासकः ॥ तेन वर्त्तिः प्रकर्त्तव्या मन्त्रार्णमितसूत्रकैः ॥ २७ ॥ आदौ तु लघुदीपेन ज्ञात्वा कार्यस्य साध्यताम् ॥ पश्चात्कुर्य्यात्तु साध्ये तु कार्य्यंप्रोक्तन्तु दीपकम् ॥ २८ ॥ साध्ये कार्य्यद्विगुणितं कष्टे तु त्रिगुणं मतम् ॥ असाध्येनैव कर्त्तव्यो दीपस्त्रासप्रदो भवेत् ॥ २९ ॥ यस्य कार्य्यस्य पात्रादि यदुक्तं लघुकर्म्मणि ॥ तदेव सर्वं विज्ञेयं द्विपलं पात्रमुच्यते ॥३०॥ अष्टसूत्रा भवेद्वर्त्तिः स्नेहः पलमितः स्मृतः॥कार्य्यन्तु द्विविधं प्रोक्तं शुभं चाशुभमेव च ॥३१॥ यस्मिन्नान्यस्य कष्टं स्याच्छुभं तच्छा-

न्तिपौष्टिकम् ॥ तत्रोच्यते भैरवस्य ध्यानं श्वेतं चतुर्भुजम् ॥ ३२ ॥ श्वेतवर्णं दक्षहस्ते वामे शृङ्गन्तु राजतम्॥ ध्यात्वा मुकुटमौलिं च श्वेतकौपीनवाससम् ॥ ॥ ३३ ॥ त्रिनेत्रं श्वेततिलकं मुक्ताभरणभूषितम् ॥ वैरिणां दुःखजनकमशुभं मारणादिके ॥ ३४ ॥ नीलवर्णं मुक्तकेशं शिरोमालाविभूषितम् ॥ किङ्किणीमालया युक्तं त्रिनेत्रं च भयानकम् ॥ ३५ ॥ नागपाशं च घण्टां च वामयो दक्षयोः पुनः ॥ वरं कपालं दधतं ध्यायेत्तं क्रूरविग्रहम् ॥ ३६ ॥ सर्वस्मिञ्छुभकार्य्ये तु तैलं स्यात्पुष्पवासितम् ॥ गोधूमपिष्टजं पात्रमथवा तण्डुलोद्भवम्॥ कर्त्तव्यं कुडवग्राहि शोधयेच्छ्वेतपर्वतम् ॥ ३७ ॥ जलपूतन्तु तद्धान्यं सोमे कृत्वा विशोषयेत् ॥ कुमार्या हस्तकेनैव भौमे वेष्टयं समाचरेत् ॥ दीपपात्रं साधकस्तु भैरवं कवचं पठेत् ॥ ३८ ॥ स्वष्टेमन्त्रस्य ये वर्णाः साध्यनामसमन्विताः ॥ कामप्रयोगे कर्त्तव्या वैदिकैस्तत्र तन्तुभिः ॥ तिस्रः पञ्च तथा सप्त वर्त्तयः कार्यगौरवात् ॥ ३९ ॥ देवानामालये दीपः शुभकर्म्मणि शस्यते ॥ उत्तराभिमुखः शान्तौ प्राङ्मुखः पौष्टिके मतः ॥ ४० ॥ दीपमन्त्रमथो वक्ष्ये कुर्य्याद्वृत्तत्रयं शुभम् ॥ महत्रिकोणकस्योर्ध्वङ्कोणेष्वस्य च संलिखेत् ॥ ४१ ॥ षट्कोणं षोडशदलयुक्तं तस्य च बाह्यतः ॥ लिखेदष्टदलं पद्मं दीपयन्त्रमुदाहृतम् ॥ ४२ ॥ परीक्षार्थं नित्यदीपे काम्यकर्म्मकमुच्यते ॥ पुष्पं वासिततैलं वा सर्वकामफलप्रदम् ॥ ४३ ॥ माषगोधूममुद्गाश्च तिलतण्डुलकाः शुभाः ॥ तैर्निर्मितन्दीपपात्रं सर्वकामफलप्रदम् ॥ ४४ ॥ एकविंशतिसूत्रैश्च श्वेतैः स्यात्सर्वकामदः ॥ निकटे भैरवस्यापि शालग्रामस्य सन्निधौ ॥ ४५ ॥ तथा स्फटिकलिङ्गस्य निकटे सर्वकामदः ॥ अश्वत्थतरुमूले च सर्वकामसमृद्धये ॥ ४६ ॥ शतान्यष्टौ तथा चाष्टगुरुकार्य्ये पलानि तु॥ मध्यमेऽष्टांशरहितैः साध्येष्टाविंशसम्मितैः॥ ४७॥ सहस्रसूत्रजा वर्त्तिर्महाकार्य्येऽथ मध्यमे ॥ शतत्रयेण कर्त्तव्या लघुकार्य्ये शतेन तु ॥ ४८ ॥ श्रीकामस्तिलतैलेन पात्रं कस्तूरिकाभवम् ॥ यद्वा लवङ्गकर्पूरत्वगेलानां समुद्भवम् ॥ दीपं कुर्य्यान्नृपद्वारे वर्षात्स्यान्महती रमा ॥ ४९ ॥ दरिद्रस्ताम्रपात्रे वा कस्तूर्य्यादिकलेपिते ॥ पथिकागमनार्थन्तु तिलतैलेन दीपकम् ॥ ५० ॥

गोधूमतण्डुलसमं चूर्णपात्रम्प्रशस्यते ॥ राजद्वारे चरेद्दीपमेकविंशतिसूत्रकम् ॥ वर्णतश्चैव धवलं विघ्नमार्गादिकं जयेत् ॥ ५१ ॥ वश्यार्थमतसीतैलं पात्रं तण्डुलपिष्टकम् ॥ राजद्वारे चरेद्दीपं वर्तिः कौशुम्भरक्तिका ॥ ५२ ॥ सार्षपं राजनाशाय तैलं पात्रन्तु मुद्गजम् ॥ हनुमत्सन्निधौ दीपो वर्तिः कौसुम्भरक्तिका ॥ ५३ ॥ मारणे राजिकातैलं यद्वा बैभीतकोद्भवम् ॥ दीपं दद्यान्मारणार्थं राजद्वारे पितुर्गृहे ॥ ५४ ॥ दक्षिणाभिमुखं दीपं लोहपात्रे प्रकल्पयेत् ॥ शत्रोर्मृत्युकरे कार्ये वर्तिः स्यात्कृष्णतन्तुभिः ॥ ५५ ॥ करञ्जतैलमुच्चाटे पात्रं कृष्णतिलोद्भवम् ॥ वर्तिश्च कृष्णसूत्रस्य राजद्वारे चरेदिमम् ॥ ५६ ॥ मधूकतैलं विद्वेषे पात्रञ्चात्र कुलत्थजम् ॥ चतुष्पथे दीपदानं वर्तिः स्यादत्र कर्बुरा ॥ ५७ ॥ मोहने चाढकीपात्रं माञ्जिष्ठं सूत्रमुच्यते ॥ प्रदीपे तिलतैलं स्यान्नृपद्वारे चरेदिमम् ॥ ५८ ॥ संग्रामविजयार्थं तु पात्रं स्यान्माषपिष्टजम् ॥ दुर्गायाः सन्निधौ देया रक्तसूत्रैश्च वर्त्तिका ॥ ५९ ॥ सन्धौ त्रिपिष्टजं पात्रं वा नदीकूलमृद्भवम् ॥ दीपश्च सङ्गमे दद्याद्वर्तिंत्रिगुणरूपिकाम् ॥ ६० ॥ एकविंशतिसङ्ख्याकास्तन्तवोऽध्यध्यतिस्मृताः ॥ पात्रं च मृण्मयं कुर्य्याद्दीपदाने चतुष्पथे ॥ ६१ ॥ बालग्रहे च भूतादौ खेटेषु विषमेषु च ॥ शैलकूले देवतायाः सन्निधौ दीपमाचरेत् ॥ ६२ ॥ मारणादिकषट्कर्म्म साधने वा चतुष्पथे ॥ माहिषेण घृतेनैव पात्रं नरकपालजम् ॥ ६३ ॥ विद्याकामो गणेशस्य संनिधौ दन्तपात्रके ॥ श्वेतां वर्तिं गोघृतेन चतुर्थ्यां तु समाचरेत् ॥ ६४ ॥ राजद्वारे बन्धमुक्तौ कारागेहेथ वा चरेत् ॥ पात्रे तु ताम्रजे दीपं धूम्रवर्णां तु वर्त्तिकाम् ॥ ॥ ६५ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि दीपयोर्लघुकाम्ययोः ॥ शुभाशुभादिचिह्नानि यैः कार्य्याकार्य्यनिर्णयः ॥ ६६ ॥ विघ्नादिदर्शने दीपारम्भे सिद्धीः क्रमेण च ॥ पूर्णा पादोनिताधा च पादतुल्याथ वर्तिका ॥ ६७ ॥ म्लेच्छादिदर्शने प्रोक्तं मार्ज्जारादिकदर्शनम् ॥ मध्यमं नीलकण्ठादेः श्रीकीर्त्तिविजयप्रदम् ॥ ६८ ॥ दीपज्वाला समा श्लक्ष्णा जायते च प्रदक्षिणा ॥ अष्टभिर्दिवसैस्तस्य कार्यसिद्धिर्न संशयः ॥ ६९ ॥ खरकण्टप्रभा

ज्वाला[1] मरणं बान्धवैः सह ॥ कृष्णा ज्वाला तदा शत्रोः कार्य्यं नैव प्रजायते॥ ॥ ७० ॥ दीपे नादः सुपूर्णे च कार्य्यसिद्धिर्विलम्बतः ॥ यदा चेरचरेद्दीपः[2] कार्यं नष्टं तदा भवेत् ॥ ७१ ॥ दीपस्य वपने चौर्यं गोनाशः पात्रसंश्रवे ॥ दीपवर्येषु तद्दीपनयनान्मन्दनेत्रता ॥७२॥ कृत्वा न्यासादिकं सर्वं प्राङ्मुखो दीपमाचरेत् ॥ एतद्दीपविधानं तु बटुकस्य प्रकीर्तितम् ॥ ७३ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि शक्तीनां तुष्टिकारकम् ॥ पात्रे त्रिकोणे शक्त्यर्थं दीपदानं प्रकल्पयेत् ॥७४॥ दक्षिणाम्नायशक्तीनां त्रिलोहान्यतमं भवेत् ॥ ऊर्ध्वाम्नाये पिष्टपात्रं काचपाषाणसम्भवम् ॥ ७५ ॥ पश्चिमाम्नायदेवीनां प्राच्यानां मार्त्तिकं मतम् ॥ नृकपालं वामगानां क्रमाद्वै गोघृतं तथा ॥ ७६ ॥ तैलं च सार्षपं प्रोक्तं वसा चेति यथाक्रमम् ॥ श्वेतरक्तहारित्पीतकृष्णसूत्रास्तु वर्त्तिकाः ॥ ॥ ७७ ॥ देवाम्नायमुखा दीपाः कर्त्तव्या देवतालये ॥ देवागारे सरित्तीरे राजगेहे चतुष्पथे ॥ ७८ ॥ श्मशाने च कृता दीपास्तत्तद्दैवततुष्टिदाः ॥ गणेशवत्परीक्षात्र कार्याकार्यविनिर्णये ॥ ७९ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि शिवदं शिवदीपकम् ॥ सर्वपापप्रशमनं सर्वोपद्रवनाशनम् ॥ ८० ॥ शून्ये तु वह्निसूत्राणां दीपवर्त्तिं प्रकल्पयेत् ॥ बिल्वपत्रोद्भवं पात्रं दद्याद्दीपं शिवालये ॥ ८१ ॥ एवं द्वादशवर्षाणि प्रज्वलेद्दिनरात्रकम् ॥ तस्य वंशे न दारिद्र्यं नाकालमरणं भवेत् ॥ ८२ ॥ पूर्वद्वारे श्रिये दीपः स्वर्गमोक्षाय दक्षिणे ॥ पश्चिमे वृष्टये देयः शेषकार्य्येषु चोत्तरे ॥ ८३ ॥ गोघृतेन कृतो दीपः शिवस्यातिप्रियंकरः ॥ तिलतैलेनाभिचारे तारतम्यं विचारयेत् ॥ ८४ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि रोगघ्नं भानुदीपकम् ॥ कुर्य्यात्स्वर्णमये पात्रे तदभावेपि ताम्रके ॥ ॥८५॥कुसुम्भवर्त्या कृतया सूत्रैर्द्वादशभी रवौ ॥ द्वादशांगुलदीर्घा सा कुडवन्तु घृतं स्मृतम्॥८६॥ज्वलयित्वा सकृद्दीपं न स्पृशेत्तं यदाखिलम्॥घृतं प्रज्वाल्य शान्तश्चेद्रोगनाशस्तदा ध्रुवम्॥८७॥पलमारभ्य खार्यन्तं दृष्ट्वा रोगबलाबलम्॥ कल्पयेद्दीपद्रव्यस्य मानं लोकानुसारतः ॥ ८८ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि विष्णोर्दीपं महाद्भुतम् ॥ सर्वकामो गोघृतेन मारणं माहिषेण च ॥ ८९ ॥

१ बोधयतीतिशेषः ॥ २ एवंविधमव्यक्तशब्दं कुर्य्यादित्यर्थः ॥

विद्वेषादिषु वर्कर्याखिषु पात्रं क्रमाद्भवेत् ॥ ताम्रजं लोहजं काचं क्रमात्रिषु च कर्म्मसु ॥ ९० ॥ विष्णोस्तु प्रीतये कुर्य्यादामलोत्थरजोभवे ॥ दुःस्वप्नोत्पातभूतानि नश्यन्त्यच्युतदीपतः ॥ ९१ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि सर्वतन्त्रेषु गोपितम् ॥ गोपनीयं प्रयत्नेन न वाच्यं यस्य कस्यचित् ॥ ९२ ॥ शक्त्याद्यहर्गणार्केषु भक्तो वर्णात्प्रजायते ॥ मन्त्रवर्णस्य दिवसे क्रमाद्दीपम्प्रकल्पयेत्॥ ॥ ९३ ॥ स्नायन्तु कुडवाज्यस्य वर्त्तयः पञ्च तन्तुभिः॥यावज्ज्वलति दीपोसौ तावत्तस्य मनुं जपेत् ॥ ९४ ॥ मन्त्रार्णसंख्यदीपेषु ज्वलितेषु च तद्दिने ॥ पुनर्दीपे कृते या तु दीपं संपश्यति स्फुटा ॥ ९५ ॥ इष्टं स्वकीयं कथयेद्यावद्यन्मानसेप्सितम् ॥ तदादिदेवता तुष्टा गुप्तमेतत्प्रकाशितम् ॥ ९६ ॥ कार्त्तवीर्य्यसमोन्यो न भवेद्दीपप्रियः सुरः ॥ तन्त्रेषु तद्दीपविधिर्बहुधा सम्प्रकीर्तितः ॥ ९७ ॥ इति ते भास्करस्योक्तो विधिर्दीपसमन्वितः ॥ अतः परं यदिष्टं त्वं पृच्छ तत्तच्च मां प्रति ॥ ९८ ॥

इति श्रीमहामायामहाकालानुमते मेरुतन्त्रे श्रीशिवप्रणीते दीपविधिप्रकाशः पञ्चविंशः ॥ २५ ॥

श्रीदेव्युवाच ॥ भगवञ्छ्रोतुमिच्छामि कल्पे कस्मिन्भवन्ति वै ॥ दशावताराः श्रीविष्णोस्तान्समस्तान्वद प्रभो ॥ १ ॥ श्रीशंकर उवाच ॥ एकत्र भाव उत्पन्नो मत्स्यो वै कल्प आदिमे ॥ तस्य मन्त्रम्प्रवक्ष्यामि भुक्तिमुक्तिप्रदायकम् ॥२॥ तारो नमो भगवते मं मत्स्याय रमां वदेत्॥द्वादशाक्षरमन्त्रोयं मुनिर्ब्रह्मा समीरितः ॥ ३ ॥ गायत्रं छन्द उद्दिष्टं देवता मीनविग्रहः ॥ भगवान्स रमानाथो बीजं श्रीं मं च कीलकम् ॥ ४ ॥ नात्यघोरो हि न सम आकण्ठं वा नराकृतिः ॥ घनश्यामश्चतुर्बाहुः शङ्खचक्रगदाधरः ॥ ५ ॥ शृङ्गिमत्स्यनिभो मूर्धा लक्ष्मीर्वक्षसि राजते॥ पद्मचिह्नितसर्वाङ्गः सुन्दरश्चारुलोचनः॥६॥ जपेद् द्वादशसाहस्रं त्रिमध्वक्तैस्तिलैर्हुनेत्॥ प्रत्यहं तद्दशांशेन वैशाखे कार्त्तिके तथा ॥ ७ ॥ माघे च मार्गशीर्षे च हविष्याशी जितेन्द्रियः॥ आरभ्य भाद्रबहुलामष्टमीं षोडशाहकम् ॥ ८ ॥ लक्ष्मीमनुं जपेन्नित्यं त्विमं

१ ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीम् इतिद्वादशाक्षरमन्त्रः ॥

वापि कलाशतम् ॥ तथैव होमः कर्त्तव्यस्तथान्यदिवसेषु तु ॥ ९ ॥ तर्पयेद् द्वादशशतं तिलतण्डुलचन्दनैः॥आद्यन्तयोः शतान्यष्टौ तर्प्पयेच्च तथा श्रियम् ॥ ॥ १० ॥ रक्तोत्पलैर्वा पद्मैर्वा मालत्यादिसुगन्धिभिः ॥ एवं कृते चैकवर्षा-न्मंत्रसिद्धिः प्रजायते ॥ ११ ॥ नित्यं द्वादशविप्रांश्च श्रीरूपां च सुवासि-नीम् ॥ भोजयेत्पूजनं चास्य चरेत्तोयाशये सदा ॥ १२ ॥ षट्पत्रकर्णिका-यान्तु श्रीयुतं देवमर्च्चयेत् ॥ षट्पत्रेषु षडङ्गानि यजेद्बाह्यचतुर्दले ॥ १३ ॥ मण्डूकं मकरं कूर्म्मं शिशुमारं च पूर्वतः ॥ तद्बाह्यगदले पूज्याः क्षीराद्याः सप्तसिन्धवः ॥ १४ ॥ तद्बाह्येष्टदले पूज्या वासुक्याद्याः फणीश्वराः ॥ तस्य बाह्ये शक्रदले रत्नानि तु चतुर्दश ॥ १५ ॥ समुद्रजानि पूज्यानि लक्ष्मीकौस्तुभकानि च ॥ गङ्गाद्याः षोडश ततो पूजयेच्च महापगाः ॥१६॥ ततश्चाष्टदले वेदानुपवेदसमन्वितान्॥ दिगीशांश्च तदस्त्राणि नवावरणपूजनम् ॥ ॥ १७ ॥ एवं सिद्धमनुर्मन्त्री जायते सिद्धिभाजनम् ॥ एतं सुसंस्कृतं मन्त्रञ्जपेदष्टोत्तरं शतम् ॥ १८ ॥ तद्देवतादिने सिद्धः पुस्तकादेव जायते ॥ अकुण्ठितः प्रयोगेण न पुनस्तस्य संस्कृतिः ॥ १९ ॥ एतत्पल्लविता मन्त्रा-मम सिध्यन्ति पार्वति ॥ एतत्सम्पुटिताः सर्वे वैदिकाः सिद्धिदाः कलौ ॥ २० ॥ अनेन ग्रथिता जप्ताः कौलेषु द्रुतसिद्धिदाः ॥ गाणेशा वैष्णवाः सौराः सिद्धिं दद्युर्विदर्भिताः॥ २१ ॥यद्बलात्सर्वमन्त्राणां स्वयं सिद्धिः प्रजायते ॥ तस्मात्प्रोक्तो नान्यतन्त्रे मेरुतन्त्रे प्रकाशितः ॥ २२ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि कूर्ममन्त्रम्महाद्भुतम् ॥ एकः कूर्मावतारोभून्मथ्यमाने महोदधौ॥ ॥ २३ ॥ तारो नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर ॥ धुरन्धराय नत्यन्तः सिद्धवर्णो मनुः स्मृतः ॥ २४ ॥ प्रकृतिश्छन्द उद्दिष्टं कश्यपोस्य मुनिर्मतः ॥ देवता भगवान्विष्णुर्जातः कच्छपरूपधृक् ॥ २५ ॥ धराधरेत्यादिशक्तिः कुं बीजं स्वेष्टसिद्धये॥ नियोगो देवताध्यानं शंखचक्रगदाधरम्॥ २६ ॥पीतांबरं कूर्म-पृष्ठं लसल्लांगूलशोभितम्॥ दीर्घग्रीवं महाग्राहं गिरन्तं रक्तलोचनम् ॥ २७ ॥ मन्त्रवर्णैः षडङ्गानि जपो लक्षचतुष्टयम् ॥ आज्यहोमस्तर्पणन्तु चन्दनोत्पलवा-

१ ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधरधुरन्धराय नमः ॥

रिभिः ॥ २८ ॥ कर्णिकायां यजेत्कूर्मं दिग्गजांश्च दिगष्टके॥ तद्बाह्ये तु चतुर्दिक्षु मदनं वैभुकं हारिम् ॥ २९ ॥ महेश्वरं च तद्बाह्ये यजेदष्टदले पुनः ॥ धरां शेषं क्षीरनिधिं मण्डूकं देवताद्रुमम् ॥ ३० ॥ चिन्तामणिं कामधेनुं सुमेरुं च दिगीश्वरान् ॥ भूपुरे तस्य बाह्ये तु हेतयो वा समीरिताः ॥ ॥ ३१ ॥ एवं सिद्धमनुर्मन्त्री प्रयोगान्कर्तुमर्हति ॥ श्मशाने कूर्म्मचक्रस्य शत्रुनामादिवर्गतः ॥ ३२ ॥ अष्टम्यां च चतुर्दश्यां भौमे क्रूरोभे तथा ॥ राजिकाप्रतिमां कुर्याच्छत्रुपांशुसमन्विताम् ॥ ३३ ॥ अष्टोत्तरशताङ्गानि तत्तैलाक्तानि होमयेत् ॥ आदौ वामं ततो दक्षं स्त्रिया चैतद्विपर्ययात् ॥ ॥ ३४ ॥ पादांगुलीनां दशकं प्रपदौ पादमध्यके ॥ पार्ष्णिगुल्फकजंघोरुयुगं सक्थियुगं तथा ॥ ३५ ॥ आदौ लिङ्गगुदौ स्फिक्के वस्तिर्नाभिस्तथोदरम् ॥ कटित्रिकं च हृदयं हुनेत्पार्श्वद्वयं ततः ॥ ३६ ॥ दशांगुल्यश्च करभगोत्रद्रव्यायुषा तथा ॥ रेखास्थानानि चोच्चार्य्य मणिबन्धप्रकोष्ठकौ ॥ ३७ ॥ कूर्प्परौ तु भुजौ कक्षौ स्तनौ वक्षःस्थलं गलम् ॥ हनुद्वयं तथा चोष्ठौ चोर्ध्वाधःस्थं रदद्वयम् ॥ ३८ ॥ श्मश्रुकूर्चं तथा नासां कपोलौ गण्डशङ्खकौ ॥ नेत्रे भ्रूमध्यकं भालं ब्रह्मरन्ध्रमिति क्रमात्॥ ३९ ॥ एवं कृते त्रिसप्ताहाद्याति शत्रुर्यमालयम् ॥ न ब्राह्मणे प्रयोक्तव्या यतोसौ विष्णुदैवतम् ॥ ४० ॥ अङ्कोलफलपिष्टेन कृत्येयं मोहकारिणी ॥ हरिद्रया कृतं चेदं स्तम्भयेदखिलं जगत् ॥ ४१ ॥ विद्वेषे रक्तसंयुक्तपादधूपादितो भवेत् ॥ श्मशानस्य मृदोच्चाटे गोधूमैर्वश्यता भवेत् ॥ ४२ ॥ सहस्रमयुतं वापि लक्षं कार्यानुसारतः ॥ सत्कार्ये प्रजपेन्मन्त्रं सिद्धिः स्यान्नात्र संशयः ॥ ४३ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि वराहस्य मनूञ्छुभान् ॥ कल्पजाताश्चतुर्वर्णा अवतारा रमापतेः ॥ ४४ ॥ तारो नमो भगवते वराहेति च संवदेत् ॥ रूपाय भूर्भुवः सुवः पतये भूपतीति च ॥ ४५ ॥ त्वं मे देहि दापयेति स्वाहान्तः सुरवर्णकः ॥ ऋष्याद्या भार्गवानुष्टुब्वराहाः परिकीर्त्तिताः ॥ ४६ ॥ पञ्चाङ्गान्येकशृङ्गाय नमश्चोक्त्वा हृदि न्यसेत् ॥

१ ब्रह्माणम् ॥

मांव्योल्काय नमःशीर्षे तेजोधिपतये नमः ॥ ४७ ॥ शिखाया कवचं तस्य विश्वरूपाय वै नमः ॥ महादंष्ट्राय च नमोऽस्त्रमेतत्पल्लवान्वितम् ॥ ४८ ॥ सप्तषट्सप्तपञ्चाष्टमूलार्णैश्च पुनश्चरेत् ॥ न्यासः केशवमात्राख्यो न्यासो नित्यस्तु वैष्णवे ॥ ४९ ॥ पादाग्राज्जानुपर्य्यन्तं स्वर्णाभं च ततः स्मरेत् ॥ आनाभि-कर्पूरनिभं नाभितस्तु गलावधि ॥ ५० ॥ अग्निवर्णं मस्तके च पूर्णचन्द्रस-मद्युतिम् ॥ शङ्खारिखड्गांश्च गदां वरशक्ती तथैव च ॥ ५१ ॥ अभयं दंष्ट्रया क्षोणीं दधतं श्वसनेऽनिलम् ॥ वागीशां हुंकृतौ बाह्वोश्चन्द्रसूर्य्यौ शिवं मुखे ॥ ५२ ॥ पद्ममष्टदलं कृत्वा मध्ये देवं समर्चयेत् ॥ दंष्ट्रायां तस्य वसुधां दिक्पत्रेषु यजेत्क्रमात् ॥ ५३ ॥ ईशानपूर्वयोर्मध्ये पञ्चाङ्गानि विदिक्षु च ॥ पुनः कोणेषु पूज्यानि रक्षःप्राच्यन्तरान्तिमम् ॥ ५४ ॥ दलाग्रेषु क्रमाच्चक्रं शंखं खड्गं च खेटकम् ॥ गदा शक्तिं वरं चैव चापं बाह्येषु दिक्पतीन् ॥ ५५ ॥ भूपुरेथ तदस्त्राणि पूजाक्रम इतीरितः ॥ लक्षं जपेच्च पद्मानि स्वाद्वक्तानि च होमयेत् ॥ ५६ ॥ तर्प्पणादि ततः कुर्य्यान्मन्त्रसिद्धिः प्रजायते ॥ अथास्यान्यप्रकारेण पुरश्चरणमुच्यते ॥ ॥ ५७ ॥ बिल्ववृक्षस्य सान्निध्ये जपेन्मासमहस्रकम् ॥ दशांशं जुहुयादग्नौ पुरश्चरणवान्भवेत् ॥ ५८ ॥ अर्थी ध्यानाज्जपाद्भूमिर्जपपूजाहुतिव्रतैः ॥ धनधान्यधरालक्ष्म्यो भवन्त्यत्र न संशयः ॥ ५९ ॥ भूमण्डले सदा ध्यातः प्रयच्छति कुले शुभम् ॥ वारुणे मृत्युतः शान्तिराग्नेये ज्वरवश्यता ॥ ६० ॥ वायुमण्डल उच्चाटे खे भूतग्रहरक्षणम् ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि मण्डलध्यान-मद्भुतम् ॥ ६१ ॥ चतुष्कोणं पीतवर्णं मध्ये लंबीजसंयुतम् ॥ नन्द्यावर्त्तांश्च कोणेषु चिन्तयेद्भुमिमण्डलम् ॥६२॥ कुक्कुटाण्डसमाकारमर्धचन्द्रनिभन्तथा॥ वारुणं मण्डलं श्वेतं मध्ये वंबीजलाञ्छितम् ॥ ६३ ॥ रक्तवर्णं त्रिकोणं च मध्ये रंबीजमन्त्रहि ॥ तैजसं मण्डलं प्रोक्तं ध्येयं भावुकसत्तमैः ॥ ६४ ॥ यंबीजसंयुतं मध्ये वृत्तं षड्बिन्दुलाञ्छितम् ॥ समीरमण्डलं धूम्रवर्णं ध्येयं सदा जनैः ॥ ६५ ॥ आकाशमण्डलं वृत्तं मध्ये हंबीजसंयुतम् ॥ नील-वर्णं महाशून्यमनाहतरवं स्मरेत् ॥ ६६ ॥ सिंहगे शुक्लपक्षे हि रवौ श्वेत-

शिलां शुभाम् ॥ पञ्चगव्यपरिक्षिप्तां जपितामयुतेन च ॥ ६७ ॥ उदङ्मुखो जपेन्मन्त्रं क्षेत्रे तां निखनेत्पुनः ॥ शत्रूणां सन्निरोधो हि क्षेत्रं चास्य विनश्यति ॥ ६८ ॥ अर्कोदयेऽङ्गारवारे जपेन्मन्त्रं समाहितः ॥ वैरिरुद्धादपि क्षेत्रान्मृदमानीय यत्नतः ॥६९॥ तां च त्रिधा विभज्यात्र चुल्लमेकं विलिप्य च॥पाकपात्रं द्वितीयं च पयस्यन्ने तथापरम् ॥ ७० ॥ संस्कृते हव्यवाहे च तण्डुलैश्च पचेच्चरुम् ॥ तत्र देवं यथावच्च धूपदीपादिभिर्यजेत् ॥ ७१ ॥ साज्येन तेन हविषा हुनेदष्टाधिकं शतम् ॥ एवं भौमाष्टवारेषु कुर्य्यान्नियतधीः क्रमात् ॥ ७२ ॥ ततः शत्रुगृहीतं तत्क्षेत्रं सम्प्राप्यतेचिरात् ॥ अह्नो मुखे भौमवारे मृदं संगृह्य पूर्ववत् ॥७३॥ पूर्ववच्च चरुं कृत्वा जुहुयात्प्रोक्तवर्त्मना ॥ बलिं च दद्यात्क्षेत्रस्य विरोधो नश्यति क्षणात् ॥ ७४ ॥ देवस्य हुतशेषेण बलिदानमिहोदितम् ॥ सप्तभिर्दिवसैश्चात्र डाकिनीविकृतिं हरेत् ॥ ७५ ॥ तामेव मृत्तिकां दुग्धे विलोड्याज्येन संहुनेत् ॥ अष्टाधिकशतं मन्त्री शालिभिर्द्दिनिशं सुधीः ॥ ७६ ॥ तत्तु संवत्सरात्पूर्णं शालिभिश्च गृहं भवेत् ॥ अनेन जुहुयादाज्यं सहस्रं प्रत्यहं नरः ॥ ७७ ॥ तेन सर्वसमृद्धिः स्यादञ्जूल्याश्च[1] प्रसूनकैः ॥ सहस्रं स्वादुसंयुक्तैर्वाससां सिद्धिरुच्यते ॥ ७८ ॥ लाजहोमाच्च कन्याप्तिर्बिल्वजैः श्रीर्भवत्यलम् ॥ जिनादिक्षेत्रमासाद्य वादिनः प्रजयेत्सदा ॥ ७९॥ तत्रासीनो जपेन्मन्त्रं चाष्टोत्तरसहस्रकम् ॥ एवं कृते ततस्तस्य भूमिवादो विनश्यति ॥ ८० ॥ स्वात्मानं मेरुसदृशं कोलरूपं विचिन्तयेत् ॥ अङ्गारवारे प्रजपेत्क्षेत्रं कुर्य्यात्प्रदक्षिणम् ॥ ८१ ॥ ततो मृदं प्रगृह्णीयात्स्वस्य क्षेत्रं क्षिपेच्च ताम्॥ नित्यं भूमिं स्पृशन्मन्त्री जपेदष्टसहस्रकम् ॥ विन्दते महतीं लक्ष्मीं शमयेत्सर्वकण्टकान् ॥ ८२ ॥ प्रतिष्ठाभूमिकामस्तु भृगौ भौमेधिकं जपेत् ॥ नित्यमष्टसहस्रं च यो जपेद्धरिमर्चयन् ॥ महतीं श्रियमाप्नोति महाराजो भवत्यलम् ॥ ८३ ॥ लक्षं होमो जपान्ते स्याद्द्रव्यैश्चैव सपायसैः सप्तद्वीपानवाप्नोति नात्र कार्य्या विचारणा॥८४॥ दधिमध्वाज्यसिक्ताश्च चतुरंगुलसम्मिताः ॥ गुडूचीरष्टसाहस्रं हुनेद् व्याधिर्विनश्यति ॥ आम्रपर्णैर्हुवेन्नित्यं

१ लज्जालोः ॥

ज्वरशान्तिः प्रजायते ॥ ८५ ॥ गृहीत्वा हस्तयोर्नीरं जपेदक्षरसंख्यया ॥ मुखप्रक्षालनं कृत्वा मुखश्रीस्तस्य वर्द्धते ॥ एवम्प्रोक्तो वराहस्य मनुः सर्वार्थसिद्धिदः ॥ ८६ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि वराहाष्टाक्षरम्परम् ॥ ॐभूर्वराहाय नमो मुनिर्ब्रह्मा समीरितः ॥ ८७ ॥ जगती छन्द उद्दिष्टं वराहो देवता स्मृतः॥पदैः समस्तमन्त्रेण पञ्चाङ्गानि प्रकल्पयेत् ॥ ८८ ॥ कृष्णाङ्गं नीलवस्त्रं च मालिनम्पद्मसंस्थितम् ॥ पृथ्वीशक्तियुतं ध्यायेच्छंखचक्राम्बुजं गदाम्[१] ॥ ॥ ८९ ॥ भूलक्ष्मीकान्तिभिश्चैव समस्तैः परिवारितम् ॥ चर्मासिमाद्भिश्च कलौ द्रुतसिद्धिप्रदायकम्॥९०॥जपपूजादिकं सर्वमस्य पूर्ववदाचरेत्॥एवम्मनुं यः प्रभजेत्स भवेच्च धरापतिः ॥ ९१ ॥ इमित्येकाक्षरो मन्त्रो वराहस्यप्रकीर्त्तितः ॥ हयग्रीवो मुनिः प्रोक्तश्छन्दोनुष्टुप् च देवता ॥ ९२ ॥ वराहो दीर्घयुक्तेन बीजेनैवाङ्गकल्पनम् ॥ प्राग्वद्ध्यायेद्रक्तवर्णं पूजाद्यं पूर्ववद्भवेत ॥ ॥ ९३ ॥ भूरित्येकाक्षरं बीजं सर्वं प्राग्वत्समीरितम् ॥ पीतवर्णं सदाध्याये द्वापरे द्रुतसिद्धिदम् ॥ ९४ ॥ एषाश्चतुर्णां शक्तिस्तु पृथिवी परिकीर्त्तिता ॥ क्रमाद्वक्ष्ये हि तन्मन्त्रान्वराहस्य प्रियानति ॥ ९५ ॥ ॐनमो भगवत्यै च धरण्यै धरणीधरा ॥ धृषे स्वाहेति मन्त्रोयमूनविंशतिवर्णकः ॥ ९६ ॥ धराहृदयमन्त्रोयं भूपतित्वप्रदायकः ॥ मुनिर्वराहोस्य निवृच्छन्दो देवी धरा मता ॥ त्र्यब्धित्रीषुद्विद्विवर्णैः षडङ्गविधिरीरितः ॥ ९७ ॥ इन्दीवरयुतां शालिमञ्जरीं दधतीं शुकम् ॥ धराम्पद्मासनां ध्यायेन्नानाभूषणभूषिताम्॥९८॥ पूजा तु वैष्णवे पीठे पूर्वमङ्गानि पूजयेत् ॥ ततो यजेदष्टदले पूर्वतः कुं च भूकलाः ॥ ९९ ॥ वह्निं वह्निकलाश्चैव तोयं सूर्यं च तत्कलाः ॥ इन्द्रादीं श्चापि वज्रादीनिति पूजाविधिः स्मृतः ॥ १०० ॥ लक्षजपेत्प्रजुहुयाद् घृतसिक्तौदनेन च ॥ तर्पणं मार्ज्जनं कुर्य्याद्विप्राणां तर्पणन्तथा ॥ विधिना तेन संसिद्धे मनौ काम्यानि कारयेत्॥१०१॥रक्तोत्पलानि जुहुयात्स्वाद्वक्तानि सहस्रकम्॥इष्टां भुवमवाप्नोति तद्वन्नीलोत्पलैर्हुनेत् ॥१०२॥ प्रियंगुपुष्पहोमेन मधुराक्तेन मन्त्रवित्॥बहुधान्यधराश्रीणा सत्यम्भवति भाजनम् ॥ १०३ ॥

१ दधानमिति शेषः ॥

मधुरार्द्रतरां हुत्वा नूतनां शालिमंजरीम् ॥ धरापतिर्भवेन्मन्त्री मण्डलेन न संशयः ॥ १०४ ॥ प्रातर्भृगुदिने मन्त्री साध्यक्षेत्रान्मृदं हरेत् ॥ शुद्धतोये समालोड्य तां च तत्र पचेच्चरुम्॥ १०५॥अग्नौ दुग्धघृताक्तं जुहुयात्तं यथाविधि ॥ मासषट्कं भृगोर्वारे ह्येवं कृत्वा लभेद्धराम्॥ १०६॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि धरामन्त्रं महाद्भुतम् ॥ ॐमहीं ग्लौं नमः प्रोच्य भगवत्यै पदं वदेत्॥ ॥१०७॥ धरायै धरणीं प्रोच्य धरेयुग्माग्निगेहिनीम् ॥ ग्लौं ह्रीं तारं समुच्चार्य्य चतुर्विंशाक्षरो मनुः॥ १०८॥ चतुर्वर्णैः षडङ्गानि ध्यानादि पूर्ववन्मतम् ॥ एष उक्तस्तु वाराहो मन्त्रः सिद्धोखिलेष्टदः ॥ १०९ ॥ ग्लौमित्येकाक्षरो मन्त्रः प्राग्वत्पूजादिकम्भवेत् ॥ षड्दीर्घयुक्तबीजेन षडङ्गविधिरीरितः ॥ ११० ॥ लमित्येकाक्षरं बीजं सर्वाभीष्टप्रदायकम् ॥ सर्वं प्राग्वत्षडङ्गानि दीर्घषट्कान्वितेन च ॥ १११ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि नृसिंहस्य मनून्क्रुतम् ॥ प्रतिमन्वन्तरं वायमवतारो हरेर्भवेत् ॥ ११२ ॥ द्वीपान्तरे नृसिंहस्तु चतुर्दशसु मूर्त्तिषु ॥ आकल्पं विद्यते तत्र भक्तानुग्रहकारकः ॥ ११३॥ आदिमन्वन्तरे जातो नृसिंहो वक्ष्यतेधुना ॥ द्वात्रिंशदर्णको गोप्यो भुक्तिमुक्तिप्रदो मतः ॥ ११४ ॥ उग्रं वीरं महाविष्णुं ज्वलन्तं सर्वतोमुखम् ॥ नृसिंहं भीषणं रुद्रं मृत्युमृत्युं नमाम्यहम् ॥ ११५ ॥ ब्रह्मा मुनिरनुष्टुप् चच्छन्दोस्ति नृहरिः सुरः ॥ मन्त्रस्य तु पदैश्चैव प्रणवेनाङ्गपञ्चकम्॥ प्रथमो न्यास उद्दिष्टः सर्वाभीष्टप्रदायकः ॥ ११६॥ वेदवेदार्णषट्षट्कवेदार्णैः स्यात्षडङ्गकम् ॥ षडङ्गाख्यो द्वितीयोयमङ्गन्यास उदाहृतः ॥ ११७ ॥ शीर्षे भाले दक्षनेत्रे वामनेत्रे मुखे क्रमात् ॥ दक्षिणे बाहुमूले च तन्मध्ये मणिबन्धके॥ ११८॥ दक्षांगुलीनां मूले च तदग्रे वामगे भुजे ॥ तन्मध्ये मणिबन्धे चांगुलीमूले तदन्तके ॥ ॥ ११९ ॥ दक्षोरुजानुगुल्फेषु चांगुलीमूलकेग्रके ॥ कण्ठे हृदि तथा नाभौ दक्षपार्श्वे च वामके॥ १२०॥ पृष्ठे ककुदि मन्त्रस्य न्यसेद्वर्णान्भयापहान्॥ तृतीयो न्यास उदितः साक्षाद्देवमयो भवेत् ॥ १२१॥ दक्षांगुष्ठं समारभ्य कनिष्ठान्तन्त्रिपर्वसु ॥ वामां कनिष्ठामारभ्य वामांगुष्ठावधि न्यसेत् ॥ १२२ ॥ एवं

१ ॐ ग्लौं नमः भगवत्यै धरायै धरणि धरेधरे स्वाहा ग्लौं ह्रीं ॐ म ॥

दक्षकरतले वामेपि करजं हरेत ॥ पातकं तुर्य उदितो न्यासोंगुल्यादिकः परः ॥ १२३ ॥ ब्रह्मरन्ध्रे च शिरसि भाले भ्रूमध्यके ततः ॥ नयने नयनाधश्च कपोले कर्णमूलके ॥ १२४ ॥ दन्तपङ्क्तौ च चिबुके उत्तरोष्ठेऽधरोष्ठके ॥ कण्ठे नाभौ भुजे दक्षे वामे च हृदये स्तने ॥ १२५ ॥ एवं दक्षकरतले वामे वापि कटौ ततः॥लिङ्गे चोरौ तथा जानौ जङ्घायां चापि गुह्यके॥१२६॥ पादांगुलीषु सर्वासु तथा हस्तांगुलीषु च॥सर्वाङ्गे रोमकूपेषु रक्तहृत्पललास्थिषु ॥ १२७ ॥ मज्जाशुक्रे क्रमाद्वर्णान्मन्त्रस्यैकैकशो न्यसेत् ॥ अयन्तु पञ्चमो न्यासः सर्वारिष्टनिवारकः ॥ १२८ ॥ पादयोर्गुल्फयोश्चैव जङ्घयोर्जानुनोस्तथा॥ऊर्वोः कटिद्वये नाभौ हृदि बाह्वोस्तथा गले॥१२९॥ चिबुके दन्तपङ्क्त्योश्चौष्ठाग्रयोश्च कपोलयोः ॥ कर्णयोर्वदने नासाद्वयेक्षणोश्चापि मूर्द्धनि ॥ पादादिवर्णन्यासोयं पञ्चमः परिकीर्त्तितः ॥ १३० ॥ मनोभवबलाकर्षी नृहरेरतिवल्लभः ॥ मुखे मूर्द्धनि नासायां नेत्रे श्रोत्रे तथा मुखे ॥ हृदि नाभौ कटौ जान्वोः पादयोः क्रमतो न्यसेत् ॥ १३१ ॥ षष्ठोयन्तु पदन्यासो भुक्तिमुक्तिप्रदायकः॥अस्मिन्न्यासे कृते देहे रोगैः स्थातुं न शक्यते॥१३२॥ नासाग्रे नयनद्वन्द्वे नाभौ हृदि च मूर्द्धनि ॥ बाह्वोश्चरणयोर्न्यस्येन्मन्त्रार्णाना चतुष्ककम् ॥ १३३ ॥ सप्तमोयं न्यास उक्तश्चतुर्वर्णात्मको हरेः ॥ धर्मार्थकाममोक्षाणां दायको नात्र संशयः ॥ १३४ ॥ मूर्ध्नि वक्षसि नाभौ च सर्वाङ्गे वा प्रवेशयेत् ॥ पादन्यासोष्टमश्चायं सिंहव्याघ्रभयापहः ॥ १३५ ॥ पादतो हृदयाच्चापि न्यसेदर्धद्वयं मनोः ॥ अर्द्धन्यासोयमुदितो नवमोघसमूहहृत् ॥ १३६ ॥ उग्रादिपदमाभाष्य द्वितीयान्ते नमाम्यहम् ॥ अन्ते ब्रूयान्नवस्थाने न्यसेदास्ये च मस्तके॥१३७॥नासायां नेत्रयोः श्रोत्रे ब्रह्मरन्ध्रे तथा हृदि ॥ नाभौ कट्यादिपादान्तं न्यासोयं दशमः स्मृतः ॥१३८॥ नृसिंहपूर्वाण्याभाष्य चोग्रादीनि पदानि च॥नमाम्यहं ततः प्रोच्य नवस्वङ्गेषु विन्यसेत् ॥ १३९ ॥ पूर्वोक्तेष्वेव डाकिन्यादिकभीतिहरो भवेत् ॥ अयमेकादशो न्यासो नृहरेरतिपावनः ॥ १४० ॥ उग्रादिकपदैरेवं पूर्ववत्तैर्भवेत्पुनः ॥न्यासश्चाष्टविधोप्येवमूनविंशप्रकारकः ॥ १४१ ॥ आनाभिमूलाधाराच्च न्यसेद्वर्ण-

त्रयं बुधः ॥ नाभेर्हृदयपर्य्यन्तं न्यसेद्वर्णचतुष्टयम् ॥ १४२ ॥ हृदो भ्रूमध्य-पर्य्यन्तं वर्णषट्कं प्रविन्यसेत् ॥ मूर्द्धादिपादपर्य्यन्तं चिन्तयेन्नृहरिं विभुम् ॥ १४३ ॥ एवं विंशतिरुद्दिष्टा न्यासानां पातकापहा ॥ १४४ ॥ यस्मान्नृसिंहो भगवान्पापं कृत्वास्य सेवके ॥ तत्कालं कुरुते कोपं विक्षितं कुरुते जगत् ॥ १४५ ॥ तस्मादपरिहार्य्येणमज्ञातानां तु पाप्मनाम् ॥ न्यासैर्भवति नाशोऽतः सर्वन्यासान्समाचरेत् ॥ १४६ ॥ वामेऽरिशंखा दक्षे तु जानुविन्यस्तबाहुकम् ॥ ग्रसन्तं दैत्यराजानं कृशानूपमतेजसा ॥ १४७ ॥ दंष्ट्राप्रदीप्तवदनं ललज्जिह्वं त्रिलोचनम् ॥ सुरैश्च मुनिभिर्लक्ष्म्या कृताञ्जलिकया शुभम् ॥ १४८ ॥ मूर्त्ति मूलेन सङ्कल्प्य देवमावाह्य पूजयेत् ॥ वामाङ्के नृहरेः पूज्या लक्ष्मीर्भूषणभूषिता ॥ १४९ ॥ वामे पद्मधरा दक्षबाहुना नृहरिं विभुम् ॥ आश्लिष्यन्ती शान्तिमूर्त्तिस्ततोङ्गानि प्रपूजयेत् ॥ १५० ॥ यजेदाशासु गरुडं शिवानन्तौ विधिं क्रमात् ॥ श्रियं ह्रियं धृतिं पुष्टिं तथा वह्निदिगादिषु ॥ तृतीयेष्टदले पूज्यं नृसिंहानान्तथाष्टकम् ॥ १५१ ॥ शंखिनश्चक्रिणं स्वर्णं श्यामं वा शुभवाससम् ॥ नृसिंहस्तम्भनाख्यं तु श्वेतम्प्राच्यां समर्चयेत् ॥ १५२ ॥ सिन्दूरारुणमाग्नेये यजेद्वश्यनृसिंहकम् ॥ बाणचापधरं लक्ष्म्या सेवितम्मकरध्वजम् ॥ १५३ ॥ दक्षे यजेदब्जमालाशंखाप्य्यसिगदाधरम् ॥ भिन्नदैत्यहृदं कृष्णं त्रिनेत्रं मारणक्षमम् ॥ विद्वेषोच्चाटनकरं नीलोत्पलसमप्रभम् ॥ ॥ १५४ ॥ वायवीये तथा कोणे शंखचक्रगदाधरम् ॥ विप्राणां पुष्टिदं नेत्रत्रितयालंकृताननम् ॥ १५५ ॥ उदग्दले नृसिंहं तं पाञ्चजन्यं सुदर्शनम् ॥ गदां निधिं च बिभ्राणं लक्ष्म्या युक्तं निधिप्रदम् ॥ १५६ ॥ विद्याभूतिमुदक्पूर्वे क्षीराभम्पीतवाससम् ॥ पाशांकुशस्फुरद्बाहुं शंखचक्रधरम्प्रभुम् ॥ १५७ ॥ हत्सरोरुहमध्यस्थं चन्द्रपुञ्जसुनिर्मलम् ॥ लक्ष्म्या युक्तं नारसिंहं पूजयेत्साधकः सदा ॥ १५८ ॥ चक्रं शंखं महापद्मं मुसलं देवदक्षिणे ॥ शंखं खेटं गदां शार्ङ्गं पूजयेद्देववामतः ॥ १५९ ॥ चतुर्थावरणश्चैतल्लक्ष्म्यादिभिरनन्तरम् ॥ लक्ष्मीदक्षिणतस्तुष्टिं वामे तत्रैव कौस्तुभम् ॥ ॥ १६० ॥ श्रीवत्सं दक्षिणे मध्ये वनमालां च पूजयेत् ॥ पीताम्बरं ब्रह्मसूत्रं

नाभिपद्मं किरीटकम् ॥ १६१ ॥ भूषणानि च सर्वाणि पुरोभागे प्रपूजयेत् ॥ षष्ठीश्रद्धादिभिः श्रद्धा मेधा तुष्टिश्च कार्मुका ॥ १६२ ॥ भीमाक्षी चैव सभया चक्राक्षी दीप्तिलक्षणा ॥ एवं सम्पूज्य विधिवत्साधकोभीष्टमाप्नुयात् ॥ ॥ १६३ ॥ अष्टलक्षं जपेन्मन्त्रं दीक्षितो विजितेन्द्रियः ॥ तत्सहस्रं प्रजुहुयाद्घृताक्तहविषानले ॥ १६४ ॥ तर्पणम्मार्जनं कृत्वा ब्राह्मणाराधनन्ततः ॥ कुर्यात्संसिद्धमन्त्रस्तु प्रयोगानाचरेत्ततः ॥ १६५ ॥ काम्यप्रयोगसिद्ध्यर्थं ध्यानभेदान्वदाम्यहम् ॥ उद्यत्सहस्रार्कभासं त्रिनेत्रम्भीषणाकृतिम् ॥ १६६ ॥ वज्रतुल्येक्षणं वह्निकान्तिं नानाभुजैर्वृतम् ॥ नखैर्दारितदैत्येशं रक्तधाराक्तकायकम् ॥ १६७ ॥ क्रूरकर्मादिविषये स्मरेदेवम्भयानकम् ॥ विश्वरूपमयं ध्यानं नृहरेः प्रोच्यतेधुना ॥ १६८ ॥ नृसिंहन्तम्महाभीमं कालानलसमप्रभम् ॥ अन्त्रमालाधरं रौद्रं कण्ठे हारेण शोभितम् ॥ १६९ ॥ नागयज्ञोपवीतं च पञ्चाननसुशोभितम् ॥ चन्द्रमौलिं नीलकण्ठं प्रतिवक्त्रे त्रिलोचनम् ॥ १७० ॥ भुजैः परिघसंकाशैर्दशभिश्चोपशोभितम् ॥ अक्षसूत्रं गदां पद्मं शङ्खं गोक्षीरसन्निभम् ॥ १७१ ॥ धनुश्च मुसलं चैव बिभ्राणं चक्रमुत्तमम् ॥ खड्गं शूलं च बाणं च नृहरिं रुद्रगोपनम् ॥ १७२ ॥ इन्द्रनीलकनीलाभश्चन्द्राभं वर्णसन्निभम् ॥ पूर्वोदयोत्तरज्वालादूर्ध्वास्यं सर्ववर्णकम् ॥ एवमुग्रहरिं ध्यायेत्सर्वव्याधिनिवृत्तये ॥ १७३ ॥ ध्येयो यदा महत्कर्म्म तदा षोडशहस्तवान् ॥ नृसिंहः सर्वलोकेशः सर्वाभरणभूषितः ॥ १७४ ॥ द्वौ विदारणकर्माणौ द्वौ जनोद्धरणक्षमौ ॥ शंखचक्रधरौ रम्यावन्यौ बाणधनुर्धरौ ॥ १७५ ॥ खड्गखेटधरावन्यौ द्वौ गदापद्मधारिणौ ॥ पाशांकुशधरावन्यौ द्वौ रिपोर्मुकुटार्पितौ ॥ १७६ ॥ इति षोडशदोर्दण्डमण्डितं नृहरिं विभुम् ॥ ध्यायेदम्बुजनीलाभमुग्रकर्मण्यनन्यधीः ॥ १७७ ॥ ध्येयो महत्तमे कार्य्ये तदा षड्विंशहस्तवान् ॥ नृसिंहः सर्वभूषाढ्यः सर्वसिद्धिकरः प्रभुः ॥ १७८ ॥ दक्षिणे खड्गचक्रे च परशुं पाशमेव च ॥ हलं च मुसलं सम्यगभयं चांकुशन्तथा ॥ १७९ ॥ पट्टिशं भिन्दिपालं च खेटतोमरमुद्गरान् ॥ वामभागकरैः शंखं खड्गं पाशं च शूलकम् ॥ १८० ॥

हुताशनवरं शक्तिं सम्यङ्मृण्मयकुण्डिकाम् ॥ कार्मुकन्तर्जनीमुद्रां गदां डमरुमर्थिकान् ॥ करद्वन्द्वैः क्रमाच्छत्रोर्जानुमस्तकपत्तलम् ॥ १८१ ॥ ऊर्ध्वीकृताभ्यां हस्ताभ्यां चान्त्रमालाधरं हरिम् ॥ अधःस्थिताभ्यां हस्ताभ्यां हिरण्यकविदारणम् ॥ १८२ ॥ प्रियंकरश्च भक्तानां दैत्यानां च भयङ्करम् ॥ नृसिंहं संस्मरेन्नित्यं महामृत्युभयापहम् ॥ १८३ ॥ यथोच्यते ध्यानमन्यन्मुखारोगभयंकरम् ॥ विषरोगाभियां मृत्योर्हरं शत्रुभयापहम् ॥ १८४ ॥ स्वर्णौघतुल्यगरुडे स्थितं पूर्णेन्दुचन्द्रकम् ॥ सुमुखं विद्युदाभासं नेत्रत्रयविराजितम् ॥१८५॥ सुभूषं पीतवसनं शंखचक्राभयावरान् ॥ धारयन्तं चतुर्भिश्च करैः क्षेत्रादिनाशकम् ॥ अपमृत्युमहाकृत्यानाशकं नृहरिं स्मरेत ॥१८६॥ लक्ष्मीफलैस्त्रिमधुरैः सुगन्धैः कुसुमैर्हुनेत् ॥ अयुतं मधुराद्यैश्च दारिद्रो न भवेत्कलौ ॥ १८७ ॥ उदुम्बरसमिद्धोमाद्धान्यसिद्धिर्भवेद्ध्रुवम् ॥ अपूपलक्षहोमेन धनदेन समो भवेत ॥ १८८ ॥ क्रुद्धस्य सन्निधौ राज्ञो जपेदष्टोत्तरं शतम् ॥ सद्यो नैर्मल्यमाप्नोति प्रसादं चाधिगच्छति ॥ १८९ ॥ कुन्दप्रसूनहोमेन स सौंदर्य्यमवाप्स्यति ॥ मधूकपुष्पहोमेन चेष्टसिद्धिः प्रजायते ॥ ॥ १९० ॥ तुलसीपत्रहोमेन कीर्त्तिर्भवति नान्यथा ॥ शतहोमेन कालीनां वशीकरणमुत्तमम् ॥ १९१ ॥ हरिद्राखण्डहोमेन स्तम्भनम्भवति ध्रुवम् ॥ बदरीफलहोमेन सर्वविघ्नः प्रणश्यति ॥ १९२ ॥ रोगे मध्वाज्यसिक्ताश्च गुडूचीश्चतुरंगुलाः ॥ जुहुयादयुतं योसौ चिरञ्जीवति वत्सरान् ॥ १९३ ॥ शनैश्चरदिनेश्वत्थं स्पृष्ट्वा चाष्टोत्तरं शतम्॥जपेज्जित्वा स मृत्युं वै शतवर्षाणि जीवति ॥ १९४ ॥ श्रीप्रसूनैः प्रजुहुयात्तत्काष्ठैर्ज्वलितेनले ॥ सहस्रमात्रेण ततो लक्ष्मीमाप्नोति निश्चितम्॥दूर्वाहोमादरोगी स्याल्लक्ष्मीवाञ्छ्रीफलैर्भवेत ॥ ॥ १९५ ॥ अनेन मनुना जप्तान्वहं भूतिः शिवस्य च ॥ वशिता प्रातरुत्थाय वाक्सिद्धिं सा प्रयच्छति ॥ १९६ ॥ जले नृसिंहं सम्पूज्य चन्दनेन सुपुष्पकैः ॥ अष्टोत्तरशतं नित्यं दूर्वाभिर्जुहुयात्सुधीः ॥ १९७ ॥ क्षुद्रभूतज्वरास्तस्य विनश्यन्त्युपसर्गजाः ॥ रात्रौ दृष्टे तु दुःस्वप्ने मन्त्री स्नात्वा मनुं जपेत ॥ रक्षां करोति दुष्टेभ्यो दुस्तरेभ्योपि मन्त्रिणः ॥ १९८ ॥ मनुमेतं

जपेद्यस्तु तस्य नाशयति क्षणात् ॥ प्रेतग्रहमहारोगान्घोरं चैवाभिचारकम् ॥ गदानन्यान्भयोत्पातदुःखानि हरते ध्रुवम् ॥ १९९ ॥ मनुं प्रजपतो दुःखं नाशमेति सुमन्त्रिणः ॥ क्रूरं नृसिंहं सञ्चिन्त्य शत्रुञ्च मृगशावकम् ॥ २०० ॥ कन्धरायां गृहीत्वार्तं क्षिपन्तं दिक्षु चिन्तयेत् ॥ सबान्धवस्य झटिति तस्योच्चाटः प्रजायते ॥ २०१ ॥ कृत्वावाग्दिशमुत्तानं युगपद्धरिणा स्वयम् ॥ नखैर्दीर्यमाणं तं संस्मरेन्निशितैर्द्रुतम् ॥ २०२ ॥ अष्टाधिकशतं चामुं जपेन्मनुमनन्यधीः ॥ भवेन्मण्डलमध्येयं दिवाकरसुतातिथिः ॥ २०३ ॥ करवीरभवैः काष्ठैः सम्यक्सन्दीपितेनले ॥ रिपुसंघक्षयकरं नृसिंहं चन्दनादिभिः ॥ २०४ ॥ सम्यगभ्यर्च्य जुहुयाच्छरान्साग्रान्सशूलकान् ॥ सहस्रमेकं च मनुं भक्षयेच्छत्रुमुत्कटम् ॥ २०५ ॥ एवं शरान्विनिःक्षिप्य शत्रुसेनां विदारयेत् ॥ जुहुयात्सप्तदिवसांस्ततो राज्ञश्चमूं सुधीः ॥ २०६ ॥ सुदिने च शुभे लग्ने शत्रुसैन्यजिगीषया ॥ प्रस्थापयेत्तां सुदृढां रक्षितां बलिभिर्नरैः ॥ २०७ ॥ तदग्रे चिन्तयेद्देवं नृसिंहं शत्रुसञ्चयम् ॥ भक्षयन्तं यजेन्मन्त्री कुर्यादायाति सा चमूः ॥ २०८ ॥ यावत्तावद्रिपुं जित्वा सर्वान्राजश्रिया सह ॥ आगच्छेद्भूपतिः शूरः पश्चान्मन्त्रिणमादरात् ॥ २०९ ॥ तोषयेत्क्षेत्रवसुभिर्वस्त्रालंकरणैः शुभैः ॥ मन्त्रिणो यदि सन्तोषो न भवेद्भूपतेस्तदा ॥ २१० ॥ अनर्थः सुमहानेव जायते दुःसहो भृशम् ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि द्वितीयं नृहरिं विभुम् ॥ २११ ॥ क्ष्रौमित्येकाक्षरो मन्त्रो मुनिरत्रिः प्रकीर्तितः ॥ गायत्री छन्द उद्दिष्टं देवता नृहरिः स्मृतः ॥ २१२ ॥ षड्दीर्घयुक्तबीजेन षडङ्गानि समाचरेत् ॥ एकलक्षं जपेन्मन्त्रं हविष्याशी जितेन्द्रियः ॥ २१३ ॥ जुहुयात्तद्दशांशं तु घृताक्तैः पायसैः शुभैः ॥ तर्पयेत्क्षुद्रसलिलैः कृत्वा चात्माभिषेचनम् ॥ २१४ ॥ ब्राह्मणान्सम्यगाराध्य सिद्धमन्त्रः समाचरेत् ॥ मन्त्रराजोदितान्सर्वान्प्रयोगानत्र साधकः ॥ २१५ ॥ अष्टाधिकसहस्रेण जपितैः कलशोदकैः ॥ विषार्त्तमभिषिञ्चेत मुच्यते हि विषेण सः ॥ २१६ ॥ मुच्यतेन्यैस्तथा तैस्तु लूतामूषकजैरपि ॥ वह्नुवृश्चिकोत्थैश्च विषैर्मुक्तो भवेद्ध्रुवम् ॥ २१७ ॥ जपितं मनुनानेन भस्म

चाष्टोत्तरं शतम् ॥ शिरोक्षिकर्णहृत्कुक्षिकण्ठरोगान्विनाशयेत् ॥ २१८ ॥ विसर्पश्च वमिं हिक्कां ज्वरांश्चैव विनाशयेत् ॥ मन्त्रौषधादिसम्भूतानभिचारान्वि-कारकान् ॥ शमयेद्भस्मसंलिप्तं नात्र कार्य्या विचारणा ॥ २१९ ॥ मृत्यु स्थाने लिखेन्मन्त्री संसाध्यं च दहन्निव ॥ क्रूरेण चक्षुषा पश्यञ्जपेदष्टदिना-वधि ॥ अष्टाधिकसहस्रञ्च म्रियते रिपुरस्य हि ॥ २२० ॥ वश्यमाकर्षविद्वेषौ महाचण्डादिकर्म्म च ॥ कुर्य्यादयुतजापेन तत्तदर्हणकर्मणा ॥ अयमेकाक्षरो मन्त्रः प्रोक्तस्सर्वसमृद्धिदः ॥ २२१ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि तृतीयं नृहरे-र्मनुम् ॥ आं ह्रीं ज्रौं क्रौं ह्रां फडिति षडर्णो मन्त्र ईरितः ॥ २२२ ॥ पंक्तिश्छन्दो मुनिर्ब्रह्मा श्रीनृसिंहस्तु देवता ॥ मन्त्रवर्णैरङ्गषट्कं कृत्वा ध्यायेन्नृसिंहकम् ॥ २२३ ॥ भीषणास्यः क्रोधदीप्तो रक्तवर्णेन्दुशेखरः ॥ सोमसूर्याग्निनेत्रश्च नानामणिविभूषितः ॥ २२४ ॥ दक्षाद्यूर्ध्वक्रमेणैव चक्र-शंखौ गुणांकुशौ ॥ वज्रं गदां दारयन्तं द्वाभ्यां दैत्येश्वरोदरम् ॥ २२५ ॥ पूर्वोदिते यजेत्पीठे मूर्तिं मूलेन कल्पयेत् ॥ तस्यां सम्पूज्य नृहरिं कुर्य्या-दावरणार्चनम् ॥ २२६ ॥ तद्बाह्ये षड्दलेऽङ्गानि तदस्त्राण्यष्टपत्रके ॥ ॥ २२७ ॥ अरि शंखं गुणं चैव सृणिं च कुलिशं गदाम् ॥ खड्गं खेटं च तद्बाह्ये भूपुरं तु दिगीश्वरान् ॥ २२८ ॥ तदायुधानि तद्बाह्ये नृहरेरिति पूज-नम् ॥ लक्षषट्कं जपेन्मन्त्रं केवलेन घृतेन च ॥२२९॥ जुहुयात्षट्सहस्राणि तर्पणादि ततश्चरेत् ॥ एवं सिद्धमनुर्मन्त्री प्रयोगानाचरेत्ततः ॥ २३० ॥ अपामार्गसमिद्भिश्च पूताभिः पञ्चगव्यकैः ॥ जुहुयाच्च सहस्रैकं सप्ताहं भूतशा-न्तये ॥ २३१ ॥ गुडूचीसमिधो दुग्धलोडिताश्च सहस्रकम् ॥ चतुर्दिनं प्रजु-हुयाज्ज्वरशान्तिः प्रजायते ॥ २३२ ॥ रक्तोत्पलैः प्रत्यहं यो मधुरत्रयलो-डितैः ॥ सहस्रसङ्ख्यं जुहुयात्पायसेनेष्टमाप्नुयात् ॥ मन्त्रजापी वत्सरेण धन-धान्यसमृद्धियुक् ॥२३३॥ प्रफुल्लैस्तरुणाम्भोजैर्मधुरत्रयलोडितैः ॥ सहस्रद्वा-दशमितं हुत्वा सर्वजनप्रियः ॥ २३४ ॥ प्रातस्त्रिमधुरोपेतलाजैर्हि पक्षमा-त्रकम् ॥ सहस्रं जुहुयात्कन्यां कन्यार्थी लभते ध्रुवम ॥ वरार्थिनी लभे-ताशु वरं सर्वमनोहरम् ॥ २३५ ॥ तिलराजैरपामार्गैः पायसान्नैर्हुनेद् ध्रुवम्॥

स दीर्घायुरवाप्नोति विमुक्तः सकलैर्गदैः ॥ कलत्रमित्रपुत्राद्यैर्धनधान्यसमन्वितः ॥ २३६ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि तुल्यमन्वन्तरोद्भवम् ॥ ज्वालामालं नृसिंहं तु शत्रुभूतादिनाशकम् ॥ २३७ ॥ ॐ क्ष्रौं नमो भगवते नारसिंहाय संवदेत् ॥ ज्वालेति मालिने दीप्तदंष्ट्रायाग्निपदं वदेत् ॥ २३८ ॥ नेत्राय सर्वरक्षोघ्नाय सर्वपदमुच्चरेत् ॥भूतविनाशनो ङेन्तः सर्वघोरविनाशनः॥ ॥ २३९ ॥ ङेन्त एव द्विर्दहेति पच रक्षयुगं तथा ॥ हुंफट्स्वाहेति मन्त्रोयं षष्टिषड्क्षाक्षरो मतः ॥२४०॥ ऋषिः प्रजापतिश्छन्दो गायत्री नृहरिः सुरः ॥ विश्वदिग्भवधृत्याशावेदार्णैः स्यात्षडङ्गकम् ॥ २४१ ॥ उद्यत्कालानलनिभं प्रलयाब्दसमस्वनम् ॥ शंखं चक्रमसिं खेटं दधानं दैवतैस्तुतम् ॥ २४२ ॥ षडक्षरोक्तविधिना पूजाद्यं चास्य कीर्त्तितम् ॥ लक्षं जपेद्दशांशं तु कपिलासर्पिषा हुनेत् ॥ २४३ ॥ तर्पणादि ततः कुर्य्यात्प्रयोगो मन्त्रराजवत् ॥ विशेषतोयं भूतादिज्वरहा परिकीर्तितः ॥ २४४ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि यो जातश्चरमे विभुः ॥ मन्वन्तरे सलक्ष्मीकः सेव्यते यो गृहस्थितैः ॥ २४५ ॥ ओं श्रींह्रींश्रीं जय लक्ष्मीप्रियाय नित्यशब्दतः ॥ प्रमुदितपदं प्रोच्य चेतसे च ततो वदेत् ॥ २४६ ॥ लक्ष्मीश्रितार्धदेहाय श्रीं ह्रीं श्रीं च ततो नमः ॥ देववर्णो मनुः प्रोक्तो जपतां सर्वकामदः ॥ २४७ ॥ लक्ष्मीनृसिंहो देवोस्य छन्दोनुष्टुप्प्रकीर्त्तितम् ॥ मुनिः प्रजापतिः प्रोक्तः श्रींबीजेन षडङ्गकम् ॥ ॥ २४८ ॥ पुरस्तात्केशवः पातु शंखचक्रगदाधरः ॥ पश्चान्नारायणः शश्वन्नीलजीमूतसन्निभः ॥ २४९ ॥ इन्दीवरदलश्याम ऊर्ध्वे मे माधवो गदी ॥ गोविन्दो दक्षिणे पार्श्वे धन्वी चन्द्रप्रभो महान् ॥ २५० ॥ उत्तरे हलधृग्विष्णुः पद्मकिञ्जल्कसन्निभः ॥ आग्नेय्यामरविन्दाक्षो मुसली मधुसूदनः ॥ ॥ २५१ ॥ त्रिविक्रमः खड्गपाणिर्नैर्ऋत्यां ज्वलनप्रभुः ॥ वायव्यां वामनो

१ ॐ क्ष्रौं नमो भगवते नारसिंहाय ज्वालामालिने दीप्तदंष्ट्राय अग्निनेत्राय सर्वरक्षोघ्नाय सर्वभूतविनाशनाय सर्वघोरविनाशनाय दह दह पच पच रक्ष रक्ष हुं फट् स्वाहा ॥ २ ॐ श्रीं ह्रीं श्रीं जय लक्ष्मीप्रियाय नित्यप्रमुदितचेतसे लक्ष्मीश्रितार्धदेहाय श्रीं ह्रीं श्रीं नमः ॥ ३ क्रीडाकुन्दनलप्रभः इत्यपि पाठः ॥

वज्री तरुणादित्यदीप्तिमान् ॥ २५२ ॥ ऐशान्यां पुण्डरीकाक्षः श्रीधरः पट्टिशायुधः ॥ विद्युत्प्रभो हृषीकेशो वायव्यां दिशि मूर्द्धनि ॥ २५३ ॥ हृत्पद्मे पद्मनाभो मे सहस्रार्कसमप्रभः ॥ सर्वायुधः सर्वशक्तिः सर्वज्ञः सर्वतोमुखः ॥ ॥ २५४ ॥ इन्द्रगोपकसङ्काशः पाशहस्तोपराजितः ॥ सबाह्याभ्यन्तरं देहं व्याप्य दामोदरः स्थितः ॥ २५५ ॥एवं सर्वत्र निश्छिद्रं नामद्वादशपञ्जरम्॥ प्रविष्टोहं न मे किञ्चिद्भयमस्ति कदाचन ॥ २५६ ॥ इति न्यासं विधायादौ लक्ष्मीनरहरिं स्मरेत् ॥ सर्पेन्द्रभोगशयनः सर्पेन्द्राभोगछत्रवान् ॥ ॥ २५७ ॥ आलिङ्गितश्च रमया दीप्तभासेन्दुसन्निभः ॥ पद्मचक्रवराभीति धरत्र्यक्षेन्दुशेखरः ॥ २५८ ॥ एवं ध्यात्वा यजेत्पीठे पूर्वोक्ते तु गृहाश्रमी ॥ अङ्गानि षड्दलेभ्यर्च्य शक्तीश्चाष्टदले यजेत् ॥ २५९ ॥ भास्वरी भास्करी चित्रा द्युतिरुन्मीलिनी तथा ॥ रमा कान्तिर्धृतिश्चेति भूपुरे तु दिगीश्वरान् ॥ ॥ २६० ॥ तदायुधानीति भवेच्चतुरावृतिपूजनम् ॥ यष्ट्युत्तरं त्रिलक्षं च प्रजपेत्तत्सहस्रकम् ॥२६१॥ मध्वक्तमल्लिकापुष्पैर्जुहुयान्मन्त्रवित्तमः॥अभ्यर्च्य सलिले देवं तर्पयेन्मन्त्रनामतः ॥२६२॥ अभिषिञ्चेच्च मूर्द्धानं ब्राह्मणान्भोजयेत्ततः ॥ ततः प्रयोगान्कुर्वीत साधको निजवाञ्छितान् ॥२६३॥ मल्लिकाकुसुमैर्होमः सर्वकामकरः शुभः॥अनुष्टुबुक्तांस्तत्रापि सर्वान्कुर्याद्गृहाश्रमी॥ ॥ २६४ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि षष्ठे मन्वन्तरेभवत् ॥ लक्ष्म्या सह नृसिंहो यस्तन्मन्त्रं सर्वकामदम् ॥२६५॥ ॐ श्रीं लक्ष्मीनृसिंहाय मनुरष्टाक्षरो मतः ॥ मुनिः प्रजापतिश्छन्दो लक्ष्मीर्वा नृहरिः सुरः॥२६६॥षड्दीर्घयुक्तक्ष्रौंबीजैः षडङ्गविधिरीरितः ॥ ध्यानपूजादिकं सर्वं षडक्षरवदीरितम् ॥ २६७॥ वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं तद्दशांशं घृतप्लुतैः ॥ पायसैर्जुहुयात्तत्र मन्त्रतर्पणमाचरेत् ॥ २६८ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि यो जातः सप्तमे हरिः ॥ जयजयश्रीनृसिंह मनुरष्टाक्षरो मतः ॥ २६९ ॥ ऋष्याद्यष्टार्णवत्प्रोक्तं पूजा चास्य षडर्णवत् ॥ एकार्णवत्प्रयोगांश्च गृहस्थः साधयेच्छुचिः ॥ २७० ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि त्वष्टमे यस्त्वजायत ॥ दशावतारो नृहरिर्दक्षसावर्णिकोत्र चेत ॥ २७१ ॥ ॐक्ष्रौं नमो भगवते नरसिंहाय संवदेत् ॥ ॐक्ष्रौं

च मत्स्यरूपाय ॐक्ष्रौं कूर्मोपि ङेन्तकः ॥ २७२ ॥ ॐक्ष्रौं वराहरूपाय ॐक्ष्रौं चैव पुनर्वदेत् ॥ तथा नृसिंहरूपाय ॐक्ष्रौं वामनतस्तथा ॥ २७३ ॥ रूपाय ॐॐॐक्ष्रौंक्ष्रौंक्ष्रौं रामायेति कीर्त्तयेत् ॥ २७४ ॥ ॐक्ष्रौं कृष्णाय ॐक्ष्रौं च कल्किने संवदेत्ततः ॥ जयशब्दद्वयान्ते तु शालग्रामनिवासिने ॥ ॥ २७५ ॥ दिव्यसिंहायेति चोक्त्वा वदेत्पश्चात्स्वयंभुवे ॥ पुरुषाय नम ॐक्ष्रौं एकोनशतवर्णकः॥ २७६॥ छन्दोतिजगती प्रोक्तं ऋषिरत्रिःप्रकीर्तितः॥ दशावतारनृहरिर्देवता सर्वकामदः ॥ २७७ ॥ षड्दीर्घयुक्तबीजेन षडङ्गानि प्रकल्पयेत ॥ मन्त्रराजवदेतस्य ध्यानपूजादिकं भवेत् ॥ २७८ ॥ यजेत्षडङ्गपूजान्ते मत्स्यादीनवतारकान् ॥ अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं साधयेद्धविषा ततः ॥ २७९ ॥ जुहुयात्तद्दशांशेन तर्पणादि ततश्चरेत् ॥ काम्यकर्माणि सर्वाणि मन्त्रराजवदेव हि ॥ २८० ॥ अस्य संसेवनाद्विप्रा ब्रह्मचर्य्यादिविच्युताः ॥ नृसिंहरूपतां प्राप्य जाताः स्थाने नृसिंहकाः ॥ २८१ ॥ प्रविशन्ति च ते नेह सम्यक्कुर्वन्ति पूजिताः ॥ अत्र बीजाक्षरत्यागान्नानाबीजादियोजनात् ॥ जायन्ते कोटिशो मन्त्राः शूद्रसिद्धिविधायकाः ॥२८२॥ लोभाधिक्यात्कलियुगे न गुरुर्न च देवता ॥ एकं श्रेयस्करं प्रोक्तं नृहरेर्नामगर्जनम् ॥ २८३ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि जायते नवमे तु यः ॥ नरसिंहो वीरनामा शृणु तत्साधनं प्रिये ॥ २८४ ॥ बाले च तरुणे वृद्धे प्रयोगार्थं मनुत्रयम् ॥ तारो नमो भगवते वीरान्ते नृपदं वदेत् ॥ २८५ ॥ तद्युक्तं च वदेत्पश्चान्ङेन्तं सिंहपदं ततः ॥ पीनोर्ध्वाङ्गाय चेत्युक्त्वा चाग्निनेत्राय संवदेत् ॥ २८६ ॥ सर्वभूतविनाशेति नायेत्युक्त्वा द्विधा दह ॥ रक्षयुग्मं च ह्रींयुग्मं रक्षरक्षाग्निगेहिनी ॥ २८७ ॥ एवं हि प्रथमो मन्त्रो नृसिंहस्य समुद्धृतः ॥ वर्णास्त्रयोदश प्रोच्य नीलदीप्तपदं वदेत् ॥ २८८ ॥ दंष्ट्राय चाग्निनेत्राय सर्वरक्षो वदेत्ततः ॥ घ्नायोक्त्वा सर्वभूतेति वदेद् ङेन्तं विनाशनम् ॥ २८९ ॥ सर्वघोरविनाशाय हनद्वन्द्वं दहद्वयम् ॥

१ कूर्मरूपायेत्यर्थः ॥ २ ॐ नमो भगवते वीरनृसिंहाय नीलदीप्तदंष्ट्राय अग्नि नेत्राय सर्वरक्षोघ्नाय सर्वभूतविनाशनाय सर्वघोरविनाशाय हनहन दहदह पचपच वधवध फट् स्वाहा ॥

पचयुग्मं वधयुग्मं फट्स्वाहान्तो द्वितीयकः ॥ २९० ॥ तृतीयमथ वक्ष्यामि पूर्वोक्ताश्चै त्रयोदश ॥ सर्वभूतेति सम्प्रोच्य ङेन्तं चैव विनाशनम् ॥ १९१॥ सर्वघोरेति पूर्वोक्तं तथा सर्वपदं वदेत् ॥ रक्षोघ्नाय पदं चोक्त्वा हनद्वन्द्वं दह-द्वयम् ॥ २९२ ॥ पचद्वयं वधद्वन्द्वं रक्षयुग्मं च मां तथा ॥ हुंफट्स्वाहा तृतीयोयं मन्त्रश्चात्र समुद्धृतः ॥ २९३ ॥ मन्त्रराजोक्तवच्चैषां पूजाद्यं सम्प्रकीर्त्तितम् ॥ मालामन्त्रा इमे ख्याता द्रुतसिद्धिविधायकाः ॥ २९४ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि दशमे जायते तु यः ॥ ॐक्ष्रौं महानृसिंहाय नमोन्तो दशवर्णकः ॥ २९५ ॥ वामदेवो मुनिश्छन्दो विराड्देवो नृसिंहकः ॥ षड्-दीर्घयुक्स्वबीजेन षडङ्गन्यासमाचरेत् ॥ २९६ ॥ ध्यानपूजापुरश्चर्य्या होमो लक्ष्मीनृसिंहवत् ॥ वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं प्रयोगोष्टाक्षरोदितः ॥ २९७ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि मन्त्रमेकादशस्य तु ॥ ॐक्ष्रौं नमो भगवते नरसिंहाय मन्त्रकः ॥ त्रयोदशार्ण उद्दिष्टो भुक्तिमुक्तिप्रदायकः ॥ २९८ ॥ वामदेवो मुनिः प्रोक्तो जगती छन्द ईरितम् ॥ देवता नरसिंहोत्र स्वबीजेनाङ्गकल्प-नम् ॥ ध्यानपूजाप्रयोगादि षडक्षरवदीरितम् ॥ २९९ ॥ अथातः सम्प्रव-क्ष्यामि द्वादशे योभिजायते ॥ काश्यां स नित्यं वसते दुष्टबुद्धिप्रचारकः ॥ ॥ ३०० ॥ तारं सहस्रारज्वालावर्त्तिने क्ष्रौ हनद्वयम् ॥ हुंफट्स्वाहा चोन-विंशवर्णो मन्त्र उदीरितः॥ ३०१ ॥ मुनिर्जयन्त आख्यातश्छन्दो गायत्रमीरि-तम्॥सुदर्शननृसिंहोस्य देवता परिकीर्त्तितः॥ ३०२॥चक्रराजाय हृत्प्रोक्तं ज्वाला चक्राय वै शिरः॥जगच्चक्राय च शिखा कवचं त्वस्य सम्मतम्॥ ३०३॥असुरान्त कचक्राय त्वस्त्राय फडितीरितम् ॥ सुदर्शनायेति मनुः पञ्चाङ्गं समुदीरितम् ॥ ॥ ३०४ ॥ चक्राणां तु सभामध्ये कालाग्निसदृशप्रभम् ॥ चतुर्भुजं विवृत्ता स्यं चतुश्चक्रधरं हरिम्॥तप्तकाञ्चनसङ्काशं त्रिनेत्रं चापविग्रहम् ॥ ३०५ ॥ ध्यायेत्समस्तदुःखघ्नं तादृग्लक्ष्म्या समन्वितम् ॥ पूर्वोक्ते वैष्णवे पीठे

---

१ ॐ नमो भगवते वीरनृसिंहाय सर्वभूतविनाशाय सर्वघोरविनाशनाय सर्वरक्षोघ्नाय हनहन दहदह पचपच वधवध रक्षरक्ष मां हुं फट् स्वाहा ॥

पूजयेदुक्तवर्त्मना ॥ विदिक्ष्वग्रे च पश्चाङ्गं क्रमाद्दिक्षु प्रपूजयेत् ॥ ३०६ ॥ जयाच विजयां पश्चादजितां चापराजिताम् ॥ विदिक्षु पूजयेत्पश्चान्मुदितां मोदिनीं तथा सहस्त्रां सिद्धिसञ्ज्ञां च लोकेशानायुधानि च ॥ ३०७ ॥ रविलक्षं जपेन्मन्त्रं दशांशैस्तु तिलैः शुभैः ॥ हुनेत्पुष्पैस्ततश्चापि चत्वारिंशत्सहस्रकैः ॥ ३०८ ॥ पुनराज्येन जुहुयात्सहस्रेण नमस्क्रियाम् ॥ तर्पणादि ततः कृत्वा प्रयोगानाचरेत्पुनः ॥ ३०९ ॥ विप्रो जपितु मीक्षेत कुशानास्तीर्य्य भूतले ॥ तस्मिन्देशे समाराध्य सुदर्शननृसिंहकम् ॥ ३१० ॥ मन्त्रं सहस्रावृत्त्या तु जुहुयाद्देवसन्निधौ ॥ सहस्रं मूलमन्त्रेण ह्यपामार्गसमिद्वरैः ॥ ३११ ॥ तद्भस्म तिलकं कृत्वा निर्गच्छेच्छत्रुसन्निधौ ॥ दासवत्कुरुते शत्रून्सर्वान्नास्त्यत्र संशयः ॥ ३१२ ॥ अथ शत्रुमनुं स्मृत्वा तर्पणं चापि कारयेत् ॥ अयुतं जयमाप्नोति नात्र कार्य्या विचारणा ॥ ३१३ ॥ अथौदुम्बरपीठे च देवदेवं निवेशयेत् ॥ तस्याग्रे वर्त्तुले कुण्डे होतव्याज्यादिभिः शमीम् ॥ ३१४ ॥ अयुतं यो घृताक्तां तु मध्वक्तां वा जितेन्द्रियः ॥ जयमाप्नोति संग्रामे नित्यम्परशुरामवत् ॥ ३१५ ॥ मन्त्रेणानेन जपितं तारहेमादिकञ्च यत् ॥ तेनांगुलीयकं कृत्वा जपहोमादिसाधितम् ॥ ३१६ ॥ धारयेद्दक्षिणे हस्ते मृत्युरोगाञ्जयेदरीन् ॥ राज्ञः सकाशात्पूजां च लभते धारयेत्सदा ॥ ३१७ ॥ जलं त्रिसप्तजपितं सर्वोदरगदान्तकृत् ॥ पुनर्नवाशिफानिष्कत्रयं लवणसंयुतं ॥ ३१८ ॥ स्पृष्ट्वा जप्तन्तच्च हरेद्गुल्मशूलादि मासतः ॥ मासमेकं प्रतिदिनं दूर्वाहोमसहस्रकम् ॥ कृत्वा सम्पूजयेद्देवं राजयक्ष्मा प्रणश्यति ॥ ३१९ ॥ तैलैर्वा मधुना वापि तादृग्घोमः प्रमेहहृत् ॥ नेत्ररोगः सहस्रेण पद्महोमेन नश्यति ॥ ३२० ॥ द्विसप्तजप्ततोयेन क्षालनं नेत्ररोगहृत् ॥ दशधा जप्ततोयेन करकेणैव सेचयेत् ॥ ३२१ ॥ तावत्सम्मन्त्रितेनापि नवनीतेन लेपनात् ॥ सप्ताहमध्यात्सद्यो हि नाशयेत्तु विसर्प्पकान् ॥ ३२२ ॥ अपामार्गेण जुहुयान्नित्यमष्टोत्तरंशतम् ॥ यस्तु तावन्नमस्कारान्कुर्य्यान्न्यासमतन्द्रितः ॥ अपस्मारादिकान्सर्वान्ग्रहानन्यान्विनाशयेत् ॥ ॥ ३२३ ॥ शुद्धाद्भिः पूरिते कुम्भे चन्द्रमण्डलमध्यगम् ॥ सुदर्शननृसिंहन्तु सुधाविग्रहधारिणम् ॥ यथावच्चिन्तयेत्तत्र पूजयेदुपचारकैः ॥ ३२४ ॥

जप्त्वा शत सहस्रञ्च दष्टं तेनैव सेचयेत् ॥ तथा स्पृशेद्वामहस्तं त्वङ्गस्पर्शाद्विषं हरेत् ॥ ३२५ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि भुक्तिमुक्तिप्रदायकम् ॥ जातं त्रयोदशे देवं नृसिंहं क्ष्रौं तु सम्पुटम् ॥ ३२६ ॥ मायया भोगदाता स्यात्प्रणवेन च मोक्षदः ॥ अस्य पूजाप्रयोगाद्यमेकाक्षरसमं भवेत् ॥३२७॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि जातं मन्वन्तरे विभुम् ॥ अभयाक्षो नृसिंहोयं समस्तभयनाशनः ॥ ३२८ ॥ तारो नमो भगवते नरसिंहाय हृद्भवेत् ॥ तेजस्तेजस इत्युक्त्वा आविराविर्भवेति च ॥३२९॥ वज्रनख वज्रदंष्ट्र कर्म्माशयान्॥ द्वीरन्धय ॥ तमोद्विर्ग्रसवह्निर्स्त्री वदेदभयमात्मनि ॥ ३३० ॥ भूयिष्ठा ॐक्ष्रौंमिति च द्विषष्ट्यर्णो मनुमतः॥मुनिः शुकोतिजगती छन्दः प्राग्वद्दिवाखिलम् ॥ ॥ ३३१ ॥ चतुर्दशनृसिंहानां साधनं वेदबोधितम् ॥ तदत्र कथितं देवि भुक्तिमुक्तिप्रदायकम् ॥ ३३२ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि वामनस्य शुभान् ॥ मनून् ॥ मन्वन्तरन्तु प्रत्येकं सुरेशादपहृत्य वै ॥ ३३३ ॥ पुनर्ददाति हरये त्रैलोक्यं स बलिर्नृपः ॥ एकमन्वन्तरे शक्रः स्वयमेवाभवद्बलिः॥ ३३४॥ एवं षड्वामनाः कल्पे तेषां मन्त्रान्वदाम्यहम् ॥ ॐ नमो विष्णवे ब्रूयात्सुरान्ते पतये महा ॥ ३३५ ॥ बलाय वह्निगृहिणीं धृतिवर्णोमनुर्मतः॥ मुनिरिन्दुर्विराट् छन्दो देवता चैव वामनः ॥ ३३६ ॥ एकद्वित्र्याशुगशरनेत्रार्णैरङ्गकल्पनम् ॥ भ्रूमध्यकण्ठहृदयनाभ्यंघ्र्याधारकेषु च ॥ ३३७ ॥ न्यसेन्मनोः षट् पदानि पदन्यासोयमीरितः ॥ मूर्ध्नि नेत्रद्वये कर्णद्वये नसि मुखे तथा ॥ ३३८ ॥ कण्ठे हृदि तथा बाह्वोर्नाभौ पृष्ठे च गुह्यके ॥ जान्वोश्च पादयोरष्टिकाष्ठाङ्गन्यास ईरितः ॥३३९॥ मूर्ध्नि भाले दृशोः श्रोत्रे नस्यास्ये तालुकण्ठयोः ॥ बाहुहृज्जठरे नाभौ गुह्योर्वोर्जानुजंघयोः ॥ पादे पृष्ठे न्यसेद्वर्णान्वर्णन्यासोयमीरितः ॥ ३४० ॥ ज्वलन्मयूखकनकच्छत्राधः पुण्डरीकगम् ॥ पूर्णचन्द्रनिभं ध्यायेच्छ्रीभूम्याश्लिष्टपार्श्वकम् ॥ ३४१ ॥ द्वीष्वंगुल्युच्छ्रयायामो मयूखस्फटिकप्रभः॥दध्यन्नं वामहस्तेन स्वर्णस्य चषकं दधत्॥

१ ॐ नमो विष्णवे सुरपतये महाबलाय स्वाहा ।

पीयूषपूर्णस्वर्णस्य कलशं दक्षिणे दधत् ॥ वैष्णवे पूजयेत्पीठे तत्र सूर्य्याग्निमण्डले ॥ ३४२ ॥ सोमस्य मण्डलं पृष्ठं योगपीठस्वरूपकम् ॥ विष्णवे सह सोमाय त्रैलोक्याप्यायनाय च॥मन्त्रो ह्योङ्कारहृत्पूर्वः स्वाहान्तो नववर्णकः ॥ ३४३ ॥ अनेन योगपीठस्य पूजनं समुदीरितम् ॥ ततः षड्दलमध्ये तु पूजयेद्वामनं विभुम् ॥ ३४४ ॥ षड्दलेषु षडङ्गानि बाह्ये षोडशपञ्चके ॥ पूषा सुमनसा प्रीतिः पुष्टिस्तुष्टिस्तथैव च ॥ ३४५ ॥ ऋद्धि र्धृतिश्च सौम्या च मरीचिर्मुण्डमालिनी॥शशिनी सुभगा चैव लक्ष्मीरिच्छा तथैव च ॥३४६॥ सम्पूर्णमनुका चैवममृता षोडशी मता॥ ततश्चाष्टदले पूजेत् पूजा चैर्वासुदेवकम्॥ ३४७॥तदर्धं वा तदर्धं वा जपेन्मन्त्रमनन्यधीः ॥दशांशं पायसं हुत्वा तर्पणादि समाचरेत्॥ ३४८॥स्वगृहे मण्डलं कृत्वा तन्मध्ये वामनं यजेत्॥ दध्योदनं निशापक्वं नैवेद्यं स्याद्विभूतिकृत् ॥ ३४९ ॥ अन्नकामो हुनेन्नित्यमष्टाविंशतिसंख्यया ॥ सितान्नं घृतसम्मिश्रं प्राप्नुयादन्नमक्षयम् ॥ ३५० ॥ अपूपं षड्रसोपेतं हुनेदष्टसहस्रकम्॥ अलक्ष्मीर्नाशमायाति महतीं श्रियमाप्नुयात्॥ ॥ ३५१ ॥ अयुतं मन्त्रविद्धुत्वा दध्यन्नं शर्करान्वितम् ॥ अन्नपर्वतमाप्नोति यत्रयत्र स गच्छति ॥ ३५२ ॥ हुनेद्बिल्वसमीपस्थः पद्माक्षैरयुतं नरः ॥ वसुधारां महालक्ष्मीं वर्षाद्वर्षति तत्र च ॥ ३५३ ॥ विद्यार्थी प्रजपेल्लक्षं ध्यायन्देवं जनार्दनम् ॥ जुहुयात्पायसं मन्त्री साक्षाद्वागीश्वरो भवेत्॥ ३५४॥ पुत्रकामो जपेल्लक्षं पुत्रजीवदलैर्हुनेत्॥तत्काष्ठदीपिते वह्नौ स सत्पुत्रमवाप्नुयात्॥ ॥६५५॥ ध्यात्वा त्रिविक्रमं देवं रक्ताभं करवीरकैः ॥ हुनेदयुतसंख्यैश्च सर्वत्र विजयी भवेत्॥ ३५६ ॥ रक्षाकामोपि पद्मानामयुतं जुहुयात्ततः ॥ ध्यात्वा चैन्द्रपदं राज्यं लभेताशु ह्यकण्टकम् ॥ ३५७ ॥ अपामार्गदलैर्हुत्वा लवङ्गैर्वा मधुप्लुतैः ॥ अयुतं साध्यनामाद्यं स वश्यो भवति ध्रुवम् ॥ ३५८॥ आरोग्यकामो जुहुयादपामार्गशतंशतम् ॥ सप्ताहान्मुच्यते रोगैस्तावदेवं जपेत्सुधीः ॥ ३५९ ॥ आयुष्कामस्त्रिमध्वक्तैस्तिलदूर्वाङ्कुशोक्षितैः ॥ अयुतं जुहुयात्तावज्जपेदायुर्लभेत वै ॥ ३६० ॥ स्मृत्वा त्रिविक्रमं रूपं चाष्टोत्तरस-

१ तस्येत्यध्याहार्य्यम् ॥

हस्रकम् ॥ जपान्निर्मुक्तबन्धः स्याद्वामनस्य प्रसादतः ॥ ३६१ ॥ दधि वामनसेवातो नासाध्यं भुवनत्रये ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि सर्वज्ञेश्वरवामनम् ॥ ॥ ३६२ ॥ ॐक्लींश्रींवं समायोज्य पूर्वमन्त्रो मनुर्मतः ॥ च्यवनो मुनिराख्यातो गायत्रं छन्द ईरितम् ॥ ३६३ ॥ देवता चास्य सम्प्रोक्तः सर्वज्ञेश्वरवामनः ॥ द्वाविंशत्यर्णकोङ्गानि षड्दीर्घान्वितकामतः ॥ ३६४ ॥ कर्पूरधवलं देवं निविष्टं सरसीरुहे ॥ प्रसन्नञ्च सुनेत्रञ्च चारुस्मितमनोहरम् ॥ ॥ ३६५ ॥ दण्डं चामृतकुम्भञ्च शरच्चन्द्रसमप्रभम् ॥ दधिभक्तं सोपदंशं वसुपात्रं पवित्रकम् ॥ चिन्तयेज्जगतां नाथं सर्वस्यार्तिहरं हरिम् ॥ ३६६ ॥ अस्य पूजादिकं सर्वं पूर्वोक्तेनैव वर्त्मना ॥ कुर्यात्ततो मन्त्रसिद्धः काम्यान्स्वाभीष्टदायकान् ॥ ३६७ ॥ सहस्रं हविषा होमो लक्ष्मीदो धान्यलाभकृत् ॥ ॥ ३६८ ॥ धान्यहोमोन्नबीजैश्च शतपत्रसमुद्भवैः ॥ सहस्रहोमाद्भीतीनां नाशो भवति निश्चितम् ॥ ३६९ ॥ दध्यक्ताज्येन जुहुयाद्दुर्गत्या मुच्यते नरः ॥ त्रैविक्रमं वामनस्य रूपं ध्यायेन्मनुं स्मरेत् ॥ ३७० ॥ घोरोत्पातैर्मुच्यतेसौ देवेशश्च पटे लिखेत् ॥ भित्तौ वालिख्य गन्धाढ्यैः पूजयेद्यज्ञवामनम् ॥ महतीं श्रियमाप्नोति यद्यदन्यदभीप्सितम् ॥ ३७१ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि तृतीयं भोगवामनम् ॥ तारो नमो भगवते विष्णवे च दशाक्षरः॥ ॥ ३७२ ॥ संयुक्तः पूर्वमन्त्रश्चेद्भवेद्द्वाविंशदर्णकः ॥ ऋषिः कपिल आख्यातो गायत्रं छन्द ईरितम् ॥ ३७३ ॥ उदीरितः सर्ववन्द्यो देवता भोगवामनः ॥ त्रिवेदत्रीषुबाणद्विमन्त्रार्णैरङ्गकल्पनम् ॥ ३७४ ॥ नीलवर्णश्चतुर्बाहुः शंखचक्रगदाब्जभृत् सर्वान्भोगान्ददात्येष भक्तानां भोगवामनः ॥ ॥ ३७५ ॥ अस्य पूजादिकं सर्वं मन्त्री पूर्ववदाचरेत् ॥ एतादृशस्तु नास्त्यन्यो जन्मन्यस्मिन्फलप्रदः ॥ ३७६ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि तुर्य्यं बालकवामनम् ॥ तारो हृदयमाये च बालकान्ते विधे पदम् ॥ ॥ ३७७ ॥ पूर्वमन्त्राग्रिमाद्वर्णाद्द्वाविंशत्यक्षरो मनुः ॥ त्र्यंकषट्पञ्चपञ्चद्विमन्त्रार्णैरङ्गकल्पनम् ॥ ३७८ ॥ पीताम्बरोत्तरीयोसौ मौञ्जीकौपीनधृग्घरिः॥ कमण्डलुं च दध्यन्नं दण्डं छत्रं करैर्दधत् ॥ यज्ञोपवीती नीलाभो ध्यातव्य-

श्छद्मवामनः ॥ ३७९ ॥ पूजादिकं पूर्ववच्च कुर्य्यान्मन्त्री यथाविधि ॥ अन्नविद्याभूमिदोयं भक्तानामभयप्रदः ॥ ३८० ॥ नाश्नीयात्तण्डुलीशाकं तथा चौदुम्बरं फलम् ॥ श्राद्धान्नं कर्कटीं चैव भक्षयेन्न कदाचन ॥ ॥ ३८१ ॥ पद्मपत्रे न भुञ्जीत तथा चार्कदलेष्वपि ॥ तुषकार्पासबीजानि न स्पृशेच्च कदाचन ॥ ३८२ ॥ वल्मीकं गोमयं विप्रच्छायामपि न लंघयेत् ॥ देवाग्निगुरुपूजां च कुर्य्याद्भक्तिसमन्वितः ॥ एवं यो नियमैर्युक्तस्तस्य मन्त्रः प्रसिध्यति ॥ ३८३ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि विश्वरूपं तु वामनम् ॥ तारो नमो भगवते मायाबालेति विष्णवे ॥ तदग्निमे पूर्वमन्त्रः षड्विंशत्यक्षरो मनुः॥ ३८४ ॥ ब्रह्मा मुनिश्च गायत्री छन्दो बीजं ध्रुवः स्मृतः॥ स्वाहा शक्तिर्देवता श्रीमायाबालकवामनः ॥३८५॥ त्रिवेदनागपञ्चेषुद्विवर्णैरङ्गकल्पनम् ॥ ध्यानपूजाप्रयोगादि सर्वं पूर्ववदाचरेत् ॥ अन्नविद्याभूमिदोयं भक्तानामभयङ्करः ॥ ३८६ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि षष्ठन्तु बलिवामनम् ॥ तारो नमो भगवते वदेच्च बलिवामनम् ॥ ३८७ ॥ सर्वापत्तिपदं प्रोच्य ङेन्तं विनाशनं वदेत् ॥ ततः श्रीबीजमाभाष्य त्रयोविंशातिवर्णकः ॥ ॥ ३८८ ॥ वाङ्मुनिर्जगती छन्दो देवता बलिवामनः ॥ पदैः षड्भिः षडङ्गानि शेषं पूर्ववदीरितम् ॥ ३८९ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि राममन्त्रं समाहृतम् ॥ आकल्पमेक एवायं जामदग्न्यो महाबलः ॥ दुष्टक्षत्रतमोध्वंसी रेणुकोद्भूतभास्करः ॥ ३९० ॥ ब्रह्मक्षत्राय विद्महे क्षत्रियान्ताय धीमहि ॥ तन्नो रामः प्रचोदयात् ॥३९१॥ भरद्वाजो मुनिः प्रोक्तो गायत्रं छन्द ईरितम् ॥ श्रीमान्परशुरामोस्य देवता भक्तवत्सलः॥ अष्टेषुत्र्यक्षिवेदार्णैर्मनोः प्रोक्तं षडङ्गकम्॥३९२॥ नेत्रयोः कर्णयोर्नासाद्वये चाधरयुग्मके ॥ स्तनयोर्भुजयोः पार्श्वद्वयेऽङ्घ्र्योर्विन्यसेत्पदम् ॥ ३९३ ॥ आधारे हृदये मूर्ध्नि क्रमात्पादान्प्रविन्यसेत ॥ के दृशि श्रोत्रनासायां कपोले हनुवक्त्रयोः ॥ ३९४ ॥ कण्ठांसबाहुहस्तेषु पार्श्वहृत्पृष्ठकोदरे॥ नाभिकट्योर्गुदे लिङ्गे ऊर्वोर्वा जानुजंघयोः ॥ ॥ ३९५ ॥ पादे च विन्यसेद्वर्णास्ततो ध्यायेत्रिधा तनुम् ॥ सात्त्विके श्वेतवर्णं च भस्मोद्धूलितविग्रहम् ॥ ३९६ ॥ किरीटिनं कुण्डलिनं वरं स्वक्षवरा-

भयान् ॥ करैर्दधानं तरलं विप्रं क्षत्रवधोद्यतम् ॥ पीताम्बरधरं कामरूपं बालानिरीक्षितम् ॥ ३९७ ॥ ध्यायेच्च तामसं क्षत्ररुधिराक्तपरश्वधम् ॥ आरक्तनेत्रकर्णस्थब्रह्मसूत्रं यमप्रभम्॥ ३९८॥ धनुष्टङ्कारनिर्घोषसंत्रस्तभुवनत्रयम् ॥ चतुर्बाहुं मुसलिनं राजसं क्रुद्धमेव च ॥ ३९९ ॥ वैष्णवे तु यजेत्पीठे देवाग्राच्च चतुर्दले ॥ जमदग्निं च कालं च रेणुकां काममर्चयेत् ॥ ४०० ॥ तद्दलेषु षडङ्गानि तद्वाह्येऽष्टदले यजेत् ॥ दिक्षु वेदान्विदिक्पत्रेषूपवेदांस्ततो यजेत् ॥ ४०१ ॥ ततश्चाष्टदले पूज्या विद्बुद्धाश्चाक्षतारकाः ॥ ब्रह्मास्त्रं वैष्णवास्त्रं च रौद्रं वायव्यमेव च॥४०२॥आग्नेयं चैव नागास्त्रं मोहनं स्तम्भनं तथा ॥ ऐन्द्रपालिकमस्त्रं च महापाशुपतं तथा ॥ ४०३ ॥ पूजयेद्दशपत्रेषु द्वादशारे ततोऽर्चयेत् ॥ कश्यपं च भरद्वाजं विश्वामित्रं च गौतमम् ॥४०४॥ वशिष्ठं नारदं चात्रिं पुलस्त्यं पुलहं क्रतुम् ॥ याज्ञवल्क्यं भार्गवं च षोडशारे ततो यजेत् ॥ ४०५ ॥ संहिताश्च पुराणानि मीमांसां न्यायमेव च ॥ सांख्यं पातञ्जलं शिल्पं वेदाङ्गानि च षट् क्रमात् ॥ ४०६ ॥ सर्वाण्युपपुराणानि चेतिहासपुराणकम् ॥ स्मृतीस्तु भूपुराग्रे च दिगीशानायुधानि च ॥ ॥ ४०७ ॥ वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं सिताढ्यघृतपायसैः ॥ हुनेद्ब्राह्मणभोज्यान्तं कृत्वा सिद्धो भवेन्मनुः॥४०८॥ब्रह्मकर्मरतो नित्यं गायत्रीजपतत्परः॥स एव जायते सिद्धो नान्यविप्रः कदाचन॥४०९॥गायत्रीप्रथमं पादं पूर्वं कृत्वा जपेन्मनुम् ॥ लक्षं प्राग्वद्धुनेद्रामं सात्त्विकं तत्र चिन्तयेत् ॥ ४१० ॥सन्तानार्थं विवाहार्थं कृष्यर्थं वर्षणाय च ॥ विषयार्थं धनार्थं च वाक्सिद्ध्यर्थमुदाहृतम्॥ ॥ ४११ ॥ सहस्रमयुतं लक्षं प्रयुतं कोटिमेव च ॥ साध्यकृच्छ्रेतिकृच्छ्रे च दैवसाध्ये त्वसाध्यके ॥ ४१२ ॥ कार्या जपस्य संख्येयं क्रमाज्ज्ञेया दशांशतः ॥ होमः सर्वत्र विज्ञेयः प्रत्यवायनिराकृतौ ॥ ४१३ ॥ तावदेव जपेद्विद्वान्गायत्रीजपतत्परः ॥ मनागपि न कर्त्तव्यो ब्रह्मद्वेषः कदाचन ॥४१४॥ गायत्रीमध्यचरणयुक्तं मन्त्रं जपेद्धुनेत् ॥ तिलौदनाज्यं रामं तु राजसं तत्र भावयेत् ॥ ४१५॥ देशग्रामपुरादीनां बालानां च गवामपि ॥ रक्षणं स्यान्महामारीशीतलाशान्तये तथा ॥ ४१६ ॥ गायत्र्यन्तिमपादेन युक्तं मन्त्रं

जपेद्ध्रुवम् ॥ होमः सर्षपतैलाक्तैस्तामसं चिन्तयेद्विभुम् ॥ ४१७ ॥ सर्वशत्रु-विनाशः स्याद्रोगादीनां तथा क्षयः ॥ एवं कुर्याद्यमुद्दिश्य तस्य नाशो भवे द्ध्रुवम् ॥ ४१८ ॥ वैशाखशुक्लपक्षे च तृतीयायां तु वार्षिकी ॥ भवेदस्य महापूजा तां भक्तः प्रयतश्चरेत् ॥ ४१९ ॥ रामभक्तं द्विजं नत्वा संग्रामे याति चेन्नृपः ॥ अवश्यं स रिपूञ्जित्वा कुशली स्वगृहं व्रजेत् ॥ ४२० ॥ रामभक्तेन यो दत्तः पुस्तके लिखितो मनुः ॥ स तु सिद्धिप्रदो ज्ञेयो नास्ति तस्य पुरस्क्रिया ॥ ४२१ ॥ यत्किञ्चित्पुस्तकारूढं रामभक्तमुखोद्गतम् ॥ यन्त्रं मन्त्रोथ वा विद्या तत्सिद्धं नास्ति संशयः ॥ ॥४२२॥ ज्ञात्वा षोडशसंस्कारैः संस्कृतं चार्यवंशजम् ॥ कुलद्वयविशुद्धं तु राममन्त्राधिकारिणम् ॥ ४२३ ॥ फिरङ्गा यवनाश्चीनाः खुरासानाश्च म्लेच्छजाः ॥ रामभक्तं प्रदृष्ट्वैव त्रस्यन्ति प्रणमन्ति च ॥ ४२४ ॥ कृत्वा तु वालुकामूर्तिं श्रीरामस्यार्चयेद्वने ॥ शान्तं शत्रुमदं कुर्य्यात्कुसुमानि च वै हुनेत् ॥ ४२५ ॥ राज्ञोमुकस्य कटकं जुहोमीति तथा वदेत् ॥ सप्ता-हार्वाक्तस्य सैन्यं नष्टं तावन्मितं भवेत् ॥ ४२६ ॥ महेन्द्राग्रे च काश्यां च यो जपेन्निर्जने वने ॥ वर्षादर्वाक् तस्य रामः प्रत्यक्षो जायते ध्रुवम् ॥ ॥४२७॥ सोमवारे काशिकायां गयायां पितृपक्षके ॥ सूर्पारके पौर्णमास्यां प्रयागे तु मृगे रवौ ॥ ४२८ ॥ गोदावर्य्यां सिंहगेर्के गङ्गाद्वारे घटस्थिते॥ सूर्य्यग्रहे कुरुक्षेत्रे रामो गच्छति सर्वदा ॥ ४२९ ॥ आद्यो रामो जाम-दग्न्यः क्षत्रियाणां कुलान्तकः ॥ परश्वधधरो दाता मातृहा मातृजीवकः ॥ ४३० ॥ समुद्रतीरनिलयो महेशपठिताखिलः ॥ गोत्राणकृद्गोप्रदाता विप्रक्षत्रियकर्मकृत् ॥४३१॥ द्वादशैतानि नामानि त्रिसन्ध्यं यः पठेन्नरः ॥ नापमृत्युर्न दारिद्र्यं नच वंशक्षयो भवेत् ॥ ४३२ ॥ श्रीमत्परशुराम-स्य गायत्र्येषा महाद्भुता ॥ राज्यकृत्कलिभूपानां सर्वतन्त्रेषु गोपिता ॥ ॥ ४३३ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि भुक्तिमुक्तिप्रदायकान् ॥ राममन्त्रान्स भगवन्प्रतिमन्वन्तरे ह्यभूत् ॥४३४॥ युगानां परिवर्तेन कल्पे रामावतारकः ॥ ततो ह्यस्य प्रवक्ष्यामि मन्त्रराजं षडक्षरम् ॥ ४३५ ॥ रामाय नम

इत्येष रांक्लींह्रींऐंप्रपूर्वकः ॥ श्रींतारायश्च षड्वर्णो मन्त्रोयं षड्विधो मतः ॥ ॥ ४३६ ॥ ब्रह्मा सम्मोहनः शक्तिर्दक्षिणामूर्तिरेव च ॥ अगस्त्यः श्रीशिवः प्रोक्ता मुनयोनुक्रमादिमे ॥ ४३७ ॥ छन्दो गायत्रसंज्ञं च श्रीरामो देवता मतः ॥ पञ्चाशन्मातृकामन्त्रवर्णप्रत्येकपूर्वकः ॥ ४३८ ॥ लक्ष्म्यादिर्वाग्भवादिश्च मन्मथादिर्ध्रुवादिकः ॥ रामचन्द्रमनोर्भेदाः शतद्वयमिता अमी ॥ ४३९ रामभद्रेतिशब्देन चैवं भेदाः शतद्वयम् ॥ रमाबीजादिकानां तु विश्वामित्रो मुनिर्मतः ॥ ४४० ॥ वाग्बीजपूर्वकाणां तु दक्षिणामूर्तिरुच्यते ॥ कामबीजादिपूर्वाणां मुनिः सम्मोहनो मतः ॥ ४४१ ॥ तारादिपूर्वकाणां तु श्रीशिवः प्रोच्यते मुनिः ॥ श्रीमायामन्मथैकैकबीजाद्यन्तर्गतो यदा ॥ रामभद्रो रामचन्द्रः षोढा षड्वर्ण उच्यते ॥ ४४२ ॥ षोढा नमोन्तः प्राक्प्रोक्तः फट्कारान्तः स एव हि ॥ षोढा स्याद्वह्निजायान्तः स एवं षड्विधो मतः ॥ ४४३ ॥ चतुर्विंशतिसंख्याका भेदास्तेन निरूपिताः ॥ ॥४४४॥ ब्रह्मरन्ध्रे भ्रुवोर्मध्ये हृन्नाभ्योर्गुह्यपादयोः ॥ बीजैः षड्दीर्घसंयुक्तैः षडङ्गविधिरीरितः ॥ ४४५ ॥ वीरासनसमारूढं व्याख्यामुद्रोपशोभितम्॥ वामोरुन्यस्ततद्धस्तं सीतालक्ष्मणसंयुतम् ॥ ४४६ ॥ वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं दशांशं मधुरप्लुतैः ॥ बिल्वपत्रैः फलैः पुष्पैस्तिलैर्वा पङ्कजैर्हुनेत् ॥ ॥ ४४७ ॥ पूजयेद्वैष्णवे पीठे मूर्तिं मूलेन कल्पयेत् ॥ श्रीं सीतायै द्विठान्तेन वामपार्श्वगतां यजेत् ॥४४८॥ ततस्त्रिकोणकोशाग्रे पृष्ठतो लक्ष्मणं यजेत् ॥ ४४९ ॥ वामपार्श्वत्रिकोणस्थं शार्ङ्गं दक्षिणतः शरान् ॥ ततः षड्दलमध्ये तु षडङ्गानि प्रपूजयेत् ॥ ४५० ॥ तद्बाह्येष्टदलं प्रोक्तं पूजयेदिष्टदिक्षु च ॥ ४५१ ॥ आत्मानं च निवृत्तिं च ह्यन्तरात्मानमेव च ॥ प्रतिष्ठां परमात्मानं ततो विद्यां प्रपूजयेत् ॥ ४५२ ॥ नानात्मानं तथा शान्तिं केशरेषु प्रपूजयेत् ॥ ४५३ ॥ दलमध्ये वासुदेवं श्रियं संकर्षणं तथा॥शान्तिं प्रद्युम्नमग्रेनिरुद्धं च रतिमर्चयेत् ॥ ४५४ ॥ हनूमन्तं च सुग्रीवं भरतं च बिभीषणम् ॥ ४५५ ॥ निषादाङ्गदशत्रुघ्नाञ्जाम्बवन्तं दलाग्रतः ॥ आञ्जनेयं तदग्रे च वाचयन्तं कृताञ्जलिम् ॥ ४५६ ॥

धृतिं जयन्तं विजयं सुराष्ट्रं राष्ट्रवर्द्धनम् ॥ अकोपं धर्मपालाख्यं मन्त्रिणश्च क्रमाद्यजेत् ॥ ४५७ ॥ वशिष्ठं वामदेवं च जाबालिं गौतमं तथा ॥ भरद्वाजं काश्यपं च वाल्मीकिं कौशिकं तथा ॥ ४५८ ॥ नारदं सनकं चैव सनातनमतः परम् ॥ सनत्कुमारं च यजेत्तद्बाह्ये द्वादशारके ॥ ४५९ ॥ नीलं नलं सुषेणं च मैन्दं च शरभं ततः ॥ द्विविदं च गवाक्षं च सकिरीटं सकुण्डलम् ॥ ४६० ॥ श्रीवत्सं कौस्तुभं शंखं गदाचक्रे च पद्मकम् ॥ अर्चयेत्षोडशदले पूर्वतस्तु कृताञ्जलीन् ॥ ४६१ ॥ ध्रुवो धरश्च सोमश्च आपश्चैवानिलोनलः ॥ प्रत्यूषश्च प्रभातश्च वसवाष्टौ प्रकीर्त्तिताः ॥ ४६२ ॥ वीरभद्रश्च शण्डश्च गिरीशश्च महायशाः ॥ अजैकपादहिर्बुध्न्यः पिनाकी चापराजितः ॥ ४६३ ॥ भुवनाधीश्वरश्चैव कपाली च दिशाम्पतिः ॥ स्थाणुर्भगश्च भगवान्रुद्रा एकादश स्मृताः ॥ ॥ ४६४ ॥ विवस्वान् सूर्यवेदाङ्गौ भानुरिन्द्रो रविस्तथा ॥ गभस्तिस्तु यमः सर्वसाक्षी चापि दिवाकरः ॥ ४६५ ॥ चित्रो विष्णुरिति प्रोक्ता आदित्या द्वादश क्रमात् ॥ ४६६ ॥ धातारमन्ते प्रयजेद्द्वात्रिंशत्पत्रकेष्विमान् ॥ ४६७ ॥ इन्द्रादीन्भूगृहे बाह्ये तदस्त्राणि च संयजेत् ॥ ४६८ ॥ एवं सिद्धमनुर्मन्त्री प्रयोगान्कर्त्तुमर्हति ॥ ४६९ ॥ धनाय कमलैर्जातीपुष्पैश्चन्दनलोलितैः ॥ भवेद्धनाधिपातिवन्नीलोत्पलहुतेन च ॥ ४७० ॥ वशयेद्विश्वमखिलं बिल्वपुष्पैर्धनात्यये ॥ ४७१ ॥ हुता दीर्घायुषे दूर्वा रक्ताब्जैर्धनवृद्धये ॥ ४७२ ॥ आधाय कुण्डे विधिवदग्निं पूर्वोक्तवर्त्मना ॥ ततो देवं समवाह्य पूजयेदुपचारकैः ॥ ४७३ ॥ पञ्चभिर्वा षोडशभिः पूजोपकरणैःपृथक् पलाशाश्वत्थखदिरोदुम्बराम्रवटेन्धनैः ॥ अग्निं हुत्वालये सम्यग्यज्ञियैरथवेन्धनैः॥४७४॥ तत्र सम्पूजयेत्सम्यग्राघवं प्रोक्तवर्त्मना ॥४७५॥ लक्षन्तदर्धमथ वा जापयित्वा दशांशतः ॥ तिलैर्हुत्वा यथादिष्टं तत्तदेवानुयान्नरः॥४७६॥ बिल्वप्रसूनैरैश्वर्य्यमर्चितेशौ हुते भवेत ॥ ४७७ ॥ पलाशकुसुमैर्हुत्वा मन्त्री वै वेदविद्भवेत् ॥ ४७८ ॥ दूर्वाभिश्च गुडूचीभिः प्रत्येकमपि वा हुतैः ॥ निरामयश्च दीर्घायुर्भवत्येव न संशयः॥४७९॥ ध्यात्वाथ मन्मथं रामं सीता-

मपि रतिं स्मरेत्॥कवचस्य प्रयोगे यो जपहोमादिकर्मसु॥४८०॥रामं च बोध-
दातारं स्मरन्नाराध्य भक्तितः॥उपैति सदृशीं कन्यां लाजहोमेन साधकः॥४८१॥
रामं विधिवदाराध्य ज्वलितेऽग्नौ प्रयोगवित्॥मधुरत्रययुक्तैर्हि पायसैर्जुहुयात्सुधीः॥
सर्वाधिपत्यं वै द्रव्यं भवेदेव न संशयः ॥ ४८२ ॥ तिलैश्च तण्डुलैराज्यैर्हुत्वा
लोकाभिपूजितम् ॥ आरात्संवत्सरं यावत्षट्सहस्रं दिनेदिने ॥ ४८३ ॥
जपेच्च जुहुयादग्नौ तद्दशांशं घृतान्धसा ॥ अयमेवान्नदो लोके सर्वेषामपि जायते
॥ ४८४ ॥ बिल्वप्रसूनैः कुमुदैस्तथा बिल्वदलैरपि॥ हुत्वा तु लभते लक्ष्मी-
मचिरादत्र साधकः ॥४८५॥ आराध्य रामं साङ्गं च विधिवद्वत्सरात्सुधीः॥
उदयाद्यावदस्तं स्याज्जपेन्मन्त्रमनन्यधीः ॥ फलम्भवति तस्याशु देवानामपि
दुर्लभम् ॥ वैराज्येनाधिपत्येन मर्त्यानामुत्तमो भवेत ॥ ४८६ ॥ पूर्णिमायां
निशीथिन्यामुदयास्तमनं विधोः ॥ संवत्सरं प्रकुर्वीत जपहोमादिकं बुधः ॥
॥ ४८७ ॥ रात्रौ यजेद्दिवा होमं कुर्यादेवं परेऽहनि ॥ ब्राह्मणान्भोजयित्वा
तु व्रतमेतत्समापयेत् ॥ ४८८ ॥ सोमसूर्य्यादिकं यस्तु व्रतं कुर्वीत मानवः ॥
भुक्तिम्मुक्तिं च लभते त्विहलोके परत्र च ॥४८९॥ रक्तपद्मैश्च बन्धूकैस्तथा
रक्तोत्पलैरपि ॥ अभीष्टलोकवश्यार्थं जुहुयादर्चितेऽनले ॥ ४९० ॥ वाह्यै
श्वर्य्याय भोगार्थं जपेल्लक्षमनन्यधीः ॥ पत्रैर्बिल्वप्रसूनैर्वा दशांशं जुहुयात्सु-
धीः ॥४९१॥ समुद्रतीरे गोष्ठे वा लक्षजापी पयोव्रतः ॥ पायसेनाज्ययुक्तेन
हुत्वा विद्यानिधिर्भवेत् ॥ ४९२ ॥ मन्त्रवित्स्वाधिपत्यार्थं शाकाहारो जला
न्तरे ॥ जपेल्लक्षं च जुहुयाद्बिल्वपत्रैर्दशांशतः ॥ तदेव पुनरायाति स्वाधिपत्यं
न संशयः ॥ ४९३ ॥ उपोष्य गङ्गामध्यस्थो राममभ्यर्च्य संजपेत् ॥
लक्षञ्जपित्वा जुहुयात्कमलान्यथवा तिलान् ॥ जातीपुष्पाणि मधुरत्रितया-
क्तानि संहुनेत् ॥ ४९४ ॥ मन्दभाग्यः स्थिरम्भाग्यमथ रामार्चनाल्लभेत ॥
जपित्वा जुहुयादिन्दुं राज्यश्रियमवाप्नुयात॥वैशाखे राघवं कुर्य्यात्पश्यन्ननिमिषे
क्षणः ॥ ४९५ ॥ निराहारो जपेल्लक्षं मौनी पञ्चाग्निमध्यगः॥ दशांशं
कमलैर्हुत्वा स चारोगी भवेद् ध्रुवम् ॥ ४९६ ॥ माघमासे जले स्थित्वा
कन्दमूलफलाशनः ॥ जपेल्लक्षं च जुहुयात्पायसेनार्चितेऽनले ॥ ४९७ ॥

दशांशं पुत्रपौत्राद्यैरुपेतः प्राप्नुयाच्छ्रियम् ॥ श्रीरामसदृशः पुत्रपौत्राढ्योपि प्रजायते ॥ ४९८ ॥ बलिष्ठैः शत्रुभिर्मन्त्री परिभूतार्थमानसः ॥ तदा हन-हनेत्युक्त्वा तन्नामान्तरितं जपेत् ॥ ४९९ ॥ ध्यात्वा रघुपतिं क्रुद्धं कालानल-मिवापरम् ॥ आकर्णसशराकृष्टकोदण्डभुजमण्डितम् ॥ ५०० ॥ नाशयन्तं रिपून्सर्वांस्तीव्रमार्गणवृष्टिभिः॥रक्तनेत्रम्महावीरवर्य्यमैन्द्रे रथे स्थितम्॥५०१॥ लक्ष्मणादिमहावीरैर्वृतं हनुमदादिभिः॥ कोटिकोटिमहावीरैः करोद्धृततरूत्तमैः ॥ ॥५०२॥वज्राङ्गैरपि हुंकारभीकारसुमहारवैः॥नदद्भिरभिधावद्भिः समरेरिगणं प्रति॥५०३॥ एवं ध्यात्वा निराहारो मारणाय रिपोः पुनः ॥ जुहुयाच्छा-ल्मलीपुष्पैर्दशांशं मन्त्रसाधकः ॥ अत्यन्तसुसमृद्धोपि न शत्रुरवशिष्यते ॥ ५०४ ॥ वैरिणं रावणं ध्यात्वा तथात्मानं रघूद्वहम् ॥ विधाय पूर्ववत्सर्व-मनायासेन मारयेत् ॥ ५०५ ॥ सीताहरणशोकाच्च क्रुद्धीभूतमचेतसम् ॥ जपेद्रघुपतिं ध्यायन्निराहारो जले वसन् ॥दशांशं च तिलैर्हुत्वा स्तम्भयेच्छत्रु-संहतिम् ॥ ५०६ ॥ निधाय वायुबीजेन यन्नम त्रासयेति च ॥ जपेन्मन्त्रं निराहारो जुहुयाच्च तिलैरपि ॥५०७॥ रामं ध्यात्वा विषण्णन्तं सीतान्वेषण-कातरम् ॥ रामभद्रं चिरं साक्षाद्रावणं चापि वैरिणम् ॥ ५०८ ॥ समुद्रतीरे लङ्कायां हेमप्राकारसन्निधौ ॥ सुग्रीवादिभिरन्यैश्च दैवतैर्नारदादिभिः॥५०९॥ उपास्यमानं सदसि ध्यात्वा देवं सलक्ष्मणम् ॥ विभीषणायागताय ददतं शरणार्थिने ॥ ५१० ॥ वरदानं जपेल्लक्षं जुहुयात्पङ्कजैरपि ॥ स्वस्थानमान-येच्छीघ्रं राजानमथवा प्रभुम् ॥ ५११ ॥निमील्य चक्षुः स्नेहात्तु चोपलभ्य पुनःपुनः ॥ प्रमोदयन्तं सहसा त्वचिरादानयेत्प्रियम् ॥ ५१२ ॥ रामं ध्यात्वा जपेल्लक्षं हुत्वा रक्ताम्बुजैरपि ॥ संमोहयति वेगेन राजानमपि वा प्रभुम् ॥ ५१३ ॥ तारादिर्मुक्तये मन्त्रो रमादिर्भुक्तये भवेत् ॥ वाक्सिद्धये च वागादिः सर्ववश्याय मन्मथः ॥ ताराद्यैः पुटितान्मन्त्रान्सर्वार्थान्विनियोजयेत् ॥ ५१४ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि स्वारोचिषसमुद्भवम् ॥ रामस्यैकाक्षरं मन्त्रं कीर्त्यते स तु रामिति ॥ ५१५ ॥ ब्रह्मा मुनिः स्याद्गायत्रं छन्दो रामोस्य देवता ॥मूर्त्तिपञ्जरनामानं तत्त्वन्यासं च कारयेत् ॥ ५१६ ॥ षड्-

दीर्घसुसमायुक्तबीजेनैव षडङ्गकम् ॥ ध्यानपूजादिकं प्राग्वद्रामलक्षं जपेन्मनुम् ॥५१७॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि तृतीयं तु मनोर्विधिम् ॥ राम इत्येष कथितो द्व्यक्षरो भुक्तिमुक्तिदः ॥ ५१८ ॥ एकाक्षरोक्तमृष्यादि स्यादाद्यन्तं षडङ्गकम् ॥ ध्यानपूजाप्रयोगादि सर्वं ज्ञेयं षडर्णवत् ॥५१९॥ श्रीवेदशतविंशानामयुतस्य लिखेत्क्रमात् ॥ एकोपचयकोष्ठेषु मन्त्रमेनं प्रपूजयेत् ॥ उपचारैः षोडशभी रामं ध्यात्वा यथाविधि ॥ ५२० ॥ कृष्णपक्षतिमारभ्य पौर्णमास्यां समापयेत् ॥ जायन्ते तेन कार्य्याणि ह्यनुश्लोकदलैः प्रिये ॥५२१॥ गजाश्व वृषबालानां क्षुद्ररोगो विनश्यति॥षड्कर्माणि विनश्यन्ति कृत्याश्चारिप्रणोदिताः ॥ ५२२ ॥ बन्धमोक्षो रोगनाशः सन्तानोद्यमलब्धयः॥ गतराज्यधनादीनां प्राप्तिः ख्यातिर्धनागमः ॥ विधानं वा महासिद्धिर्भवेद्वा चक्रवर्त्तिता ॥५२३॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि चतुर्थन्तु मनोर्विधिम् ॥ तारमायारमानङ्गवाक्स्वबीजैश्च षड्विधः॥द्व्यक्षरो मन्त्रराजस्तु त्र्यक्षरः परिजायते ॥५२४॥ न्यासपूजाप्रयोगादि सर्वं पूर्ववदाचरेत् ॥५२५॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि षष्ठमन्वन्तरोद्भवम् ॥ रामाय नम इत्येष मन्त्रः पञ्चाक्षरो मतः ॥५२६॥ विश्वामित्रो मुनिः प्रोक्तः पंक्तिश्छन्दोऽस्य देवता ॥ रामभद्रो बीजशक्ती प्रथमार्णस्ततोन्तिमः ॥ ५२७॥ भ्रूमध्ये हृदि नाभ्यंघ्र्योः पादयोर्विन्यसेन्मनुम् ॥ षडङ्गं पूर्ववत्कार्य्यं मन्त्रार्णैर्मनुनाम्नकम् ॥ ५२८ ॥ मध्ये वने कल्पतरोर्मूले वै पुष्पकासने ॥ लक्ष्मणेन प्रगुणितं चाक्ष्णः कोणेन सायकम् ॥ अवेक्षमाणं जानक्या कृतव्यजनमीश्वरम् ॥ ५२९ ॥ जटाभारलसच्छीर्षं श्यामं मुनिगणावृतम् ॥ लक्ष्मणेन धृतच्छत्रमथ वा पुष्पकोपरि ॥ ५३० ॥ दशास्यमथनं शान्तं ससुग्रीव विभीषणम् ॥ विजयार्थी विशेषेण वर्णलक्षं जपेन्मनुम् ॥ प्राग्वद्धोमस्तर्पणादि प्रयोगाद्यं च साधयेत् ॥ ५३१ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि सप्तमे जातमन्त्रकम् रामचन्द्रो रामभद्रो ङेन्तो नतियुतो द्विधा ॥ ५३२ ॥ सप्ताक्षरो निगदितो मन्त्रः सप्तर्षिसेवितः॥ ध्यानपूजाप्रयोगादि निखिलन्तु षडर्णवत् ॥ ५३३ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि मन्त्रं सावर्णिकोद्भवम् ॥ तारादिषड्भिः संयुक्तो द्विधा सप्ताक्षरो मतः ॥ ५३४ ॥ अष्टाक्षरो द्वादशधा कीर्त्तितो वाञ्छितार्थदः ॥

सर्वं षडर्णवज्ज्ञेयं ध्यानपूजाजपादिकम् ॥ ५३५ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि मन्त्रान्नवमसम्भवान् ॥ तारो रामश्चतुर्थ्यन्तः क्रोधान्तो वह्निवल्लभः॥५३६॥ अष्टार्णोयं परो मन्त्रो मुन्यादिः स्यात्षडर्णवत् ॥ नाशनः सर्वदोषाणां संग्रामे विजयप्रदः ॥५३७॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि मन्त्रान्दशमसम्भवान् ॥ क्रूं ह्रीं नमश्च रामाय ह्रीमित्यष्टाक्षरः परः ॥ ५३८ ॥ ऋषिः सदाशिवः प्रोक्तो गायत्रं छन्द उच्यते ॥ रामचन्द्रोस्य मन्त्रस्य देवता परिकीर्त्तितः॥ ५३९॥ नमो रामाय ह्रींहृच्च नमो रामाय ह्रीं शिरः ॥ दीर्घया माययाङ्गानि तारप-श्चार्णयुक्तया ॥ ५४० ॥ रामं त्रिनेत्रं सोमार्धधारिणं शूलिनं वरम् ॥ भस्मोद्धूलितसर्वाङ्गं कपर्दिनमुपास्महे ॥ ५४१ ॥ रामाभिरामां सौन्दर्य्य-सीमां सोमावतंसिनीम्॥ पाशांकुशधनुर्बाणधरां ध्यायेत्त्रिलोचनाम्॥रामशक्ति-न्तु सीताख्यां वर्णलक्षं जपेन्मनुम् ॥ ५४२ ॥ होमपूजादिकं सर्वं षडक्षर-वदीरितम् ॥ विशेषतो भोगदोसौ संग्रामे विजयप्रदः ॥ ५४३ ॥ अथैकादश सम्भूतान्राममन्त्रान्वदाम्यहम् ॥ सप्तार्णो यो मनुः प्रोक्तः षड्भिस्तारादिकैः पृथक् ॥ ५४४॥ सम्पुटिता द्वादशधा नवार्णा मनवः स्मृताः ॥ ध्यानपूजादि-कं सर्वं [illegible] सप्तार्णवच्चरेत्॥ ५४५॥अथातःसम्प्रवक्ष्यामि द्वादशान्तरसम्भवम्॥ [illegible]नकीवल्लभो ङेन्तः स्वाहान्तश्च हुमादिकः ॥ ५४६ ॥ दशाक्षरोयं मन्त्रः स्याद्वशिष्ठोस्य मुनिः स्वराट् ॥ छन्दश्च देवता रामः सीतापाणिप-रिग्रहः ॥ ५४७ ॥ आदिबीजन्द्विषः शक्तिरङ्गं षड्दीर्घके मतम् ॥ शिरोललाटभ्रूमध्यनेत्रकण्ठस्तनेष्वपि ॥ ५४८ ॥ नाभ्यूरुजानुपादेषु दशार्णान्विन्यसेन्मनोः ॥ अयोध्यानगरे चैव विचित्रे स्वर्णमण्डपे ॥ ॥ ५४९ ॥ मन्दारपुष्पैराबद्धविताने तोरणान्विते ॥ सिंहासने समारूढं पुष्पकोपरि राघवम् ॥ ५५० ॥ रक्षोभिर्हरिभिर्देवैर्दिव्ययानगतैः शुभैः ॥ संस्तूयमानं मुनिभिः प्रह्वैरुपसेवितम् ॥ ५५१ ॥ सीतालंकृतवामाङ्गं ल-क्ष्मणेनोपशोभितम् ॥ श्यामं प्रसन्नवदनं सर्वाभरणभूषितम् ॥ ५५२ ॥ ध्यायन्नेवं जपेन्मन्त्रं वर्णलक्षमनन्यधीः ॥ जपपूजाप्रयोगादि सर्वमस्य रामोस्यर्णवत् ॥ ५५३ ॥ अथ त्रयोदशे जातं राममन्त्रं वदाम्यहम् ॥ रामो

ङेन्तो धनुष्पाणिस्तथा स्याद्वह्निसुन्दरी ॥ ५५४ ॥ दशाक्षरो मुनिर्ब्रह्मा विराट् छन्दोस्य देवता ॥ राक्षसान्तकरो रामो रां बीजं परिकीर्त्तितम् ॥ ॥ ५५५ ॥ स्वाहा शक्तिः स्वबीजेन षडङ्गानि समाचरेत् ॥ वर्णन्यासं तथा ध्यानं पुरश्चर्य्याविधिं तथा ॥ ५५६ ॥ दशाक्षरोक्तवत्कुर्य्याच्चाप-बाणधरं स्मरेत् ॥ विशेषाज्जयदश्चायं सर्ववाञ्छितदायकः ॥ ५५७ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि चान्यमन्वन्तरोद्भवम् ॥ ॐ हृद्भगवते रामचन्द्रायेति मनुर्मतः ॥ ५५८ ॥ अर्कार्णो द्विविधोप्यस्य मुनिर्ध्यानजपादिकम् ॥ दशाक्षरवदेव स्यादयं कल्याणकारकः ॥ ५५९ ॥ अथ वक्ष्ये वायुजातोपा-सितं मन्त्रनायकम् ॥ श्रीराम जयरामेति जयराम जयेति च ॥ ५६० ॥ त्रयोदशाक्षरो मन्त्रः सर्वमस्य दशार्णवत् ॥ पदत्रयैर्द्विरावृत्त्या चाङ्गन्यासं समाचरेत् ॥ ५६१ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि भरतोपासितं मनुम् ॥ सतारं हृद्भगवते रामो ङेन्तो महा ततः ॥ पुरुषाय पदं पश्चाद्द्विठान्तोष्टादशाक्षरः ॥ ५६२ ॥ विश्वामित्रो मुनिश्छन्दो गायत्रं देवता मता ॥ दशास्यदर्प्प-दलनो रामभद्रः प्रकीर्त्तितः॥५६३॥ तारो बीजं नमः शक्ती रामचन्द्रः षड-ङ्गकम् ॥ मूलमन्त्रैः कोशलेन्द्रः सत्यसन्धस्ततः परम् ॥ ५६४ ॥ राव-णान्तकनामा च सर्वलोकहितस्तथा ॥ शश्वत्प्रसन्नवदनश्चतुर्थी नमसा वदेत् ॥ ५६५ ॥ नन्दिग्रामस्योपवने भरतायतनेर्च्चिते ॥ रम्ये सुगन्धपुष्पा-द्यैर्वृक्षवृन्दैश्च मण्डिते ॥ ५६६ ॥ निष्कोणभेरीपटहशङ्खतूर्य्यादिनिःस्वने ॥ पवित्ररूपे परितो जयमङ्गलभाषिते ॥ ५६७ ॥ पाटीरघुसृणोशीरकर्पूरागुरु-गन्धिते ॥ नानाकुसुमसौरभ्यवाहिगन्धवहान्विते ॥ देवगन्धर्वनारीभिर्गाय-न्त्यादिविभूषिते ॥ ५६८ ॥ सिंहासनसमारूढं पुष्पकोपरि राघवम् ॥ सौमित्रिसीतासहितं जटामुकुटशोभितम् ॥ ५६९ ॥ चापबाणधरं श्यामं ससुग्रीवविभीषणम् ॥ हत्वा रावणमायान्तं कृतत्रैलोक्यरक्षणम् ॥ ५७० ॥ रामभद्रं हृदि ध्यायन्दशलक्षं जपेन्मनुम् ॥ होमपूजाप्रयोगादि सर्वं ज्ञेयं षडर्णवत् ॥ ५७१ ॥ अथ वक्ष्ये विभीषणोपासितं मोक्षदायकम् ॥ राज्य-श्रियाः प्रदातारं भक्तानामभयप्रदम् ॥ ५७२ ॥ रामभद्र महेष्वास रघुवीर

नृपोत्तम ॥ दशास्यान्तक रां रक्ष देहि दापय मे श्रियम् ॥ ५७३ ॥ द्वात्रिंशदक्षरो मन्त्रो विश्वामित्रो मुनिर्मतः ॥ छन्दोऽनुष्टुब्देवता तु रामभद्रः प्रकीर्त्तितः ॥ ५७४ ॥ चतुःसागरवेदाब्धिवस्विभैरङ्गकल्पनम् ॥ मस्तके च ललाटे च नेत्रयोः कर्णयोस्तथा ॥ ५७५ ॥ गण्डयोश्च नसोरास्ये ततश्च भुजमूलयोः ॥ कूर्परद्वितये वापि मणिबन्धद्वये तथा ॥ ५७६ ॥ कण्ठे च स्तनयोर्हृत्के नाभौ च जठरे कटौ ॥ मेढ्रे पायावूरुमूलद्वये जान्वोश्च गुल्फयोः ॥ ५७७ ॥ मन्त्रवर्णान्न्यसेत्तेन जपादावधिकारवान् ॥ पूर्वोक्त-ध्यानमत्रापि लक्षं च प्रयतो जपेत् ॥ पीतं वा चिन्तयेद्रामं धनार्थी यो मनुं जपेत् ॥ ५७८ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि लक्ष्मणोपासितं मनुम् ॥ तारो नमो भगवते ङेन्तः स्याद्रघुनन्दनः ॥ ५७९ ॥ रक्षोघ्नविशदायेति मधुरेति पदं ततः ॥ प्रसन्नवदनायेति ततश्चामिततेजसे ॥ ५८० ॥ बलायेति च रामाय विष्णवे नम इत्ययम् ॥ सप्तचत्वारिंशदर्णो मालामन्त्र उदीरितः ॥ ५८१ ॥ मुनिः पितामहश्छन्दः स्यादनुष्टुप् च देवता ॥ राज्याभिषिक्तो रामश्चों बीजं शक्तिर्नमस्त्विति ॥ ५८२ ॥ सप्तषट्सप्तदशषट्रुद्रसङ्ख्यैः षडङ्ग-कम् ॥ शिरोमुखभ्रूमध्येषु नेत्रयोः कर्णयोर्नसोः ॥ ५८३ ॥ गण्डयोरोष्ठयो र्दन्तपंक्त्योरास्ये च कक्षयोः ॥ तथा कूर्परयोरस्य तथैव मणिबन्धयोः ॥ ॥ ५८४ ॥ अंगुलीमूलयोश्चैवाथांगुलीनां तथाग्रयोः ॥ कण्ठे हृदि स्तन-द्वन्द्वे पार्श्वयोः पृष्ठके करे ॥ ५८५ ॥ जठरे च तथा नाभौ स्वाधिष्ठाने ध्वजे गुदे ॥ ऊर्वोर्जान्वोस्तथांघ्र्योश्च सर्वाङ्गेपि न्यसे-त्क्रमात् ॥५८६॥ध्यानं दशाक्षरप्रोक्तं लक्षमेकं जपेन्मनुम्॥ बिल्वप्रसूनैः पत्रै-र्वा तिलैस्त्रिमधुना युतैः ॥ ५८७ ॥ मधुरत्रययुक्तेन पायसेनाथ वाम्बुजैः ॥ होमं दशांशतः कुर्यात्तथा सर्वत्र तर्पणम् ॥ मार्जनं भोजयेद्विप्रान्प्रयोगादि च पूर्ववत् ॥ ५८८ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि शत्रुघ्नोपासितां पराम् ॥ जयदां रामगायत्रीं जपितां सूर्यवंशजैः ॥ ५८९ ॥ दाशरथाय विद्महे तथा सीतेति वल्लभा ॥ य धीमहीति तन्नो रा तदग्रे मः प्रचोदयात् ॥५९०॥ एषा स्याद्रा-मगायत्री भक्तानां भुक्तिमुक्तिदा ॥ जन्मप्रभृति यत्पापं दशभिर्याति संक्षयम्॥

॥५९१॥ पुरा कृतं शतेनैव सहस्रेण जपेन वा ॥ चतुर्लक्षं जपेद्यस्तु मोक्षभाक् न संशयः ॥५९२॥ यच्च यावच्च पूजादि सर्वं पूर्ववदाचरेत ॥ तारादिरेषा गायत्री मुक्तिमेव प्रयच्छति ॥ ५९३ ॥ मायादिरपि वै द्रव्यं रमादिश्च श्रियं राम् ॥ मन्मथेनापि संयुक्ता संमोहयति मेदिनीम् ॥ ५९४ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि श्रीसीतोपासितं मनुम् ॥ श्रीरामाय हुंफट् च स्वाहान्तोयं नवाक्षरः ॥ ५९५ ॥ अगस्त्योस्य मुनिः प्रोक्तः पंक्तिश्छन्द उदाहृतम् ॥ श्रीमद्दाशरथी रामो देवता परिकीर्त्तितः ॥ ५९६ ॥ स्वाहा शक्तिश्च रां बीजं बीजेनैव षडङ्गकम् ॥ सबिन्दुभिर्यकाराद्यैः पञ्चाङ्गन्यास ईरितः ॥५९७॥ नीलोत्पलदलश्यामं जटामुकुटमण्डितम् ॥ पीताम्बरधरं देवं चापबाणविभूषितम् ॥ ५९८ ॥ दक्षिणे लक्ष्मणं ध्यायेत्कनकाभं किरीटिनम् ॥ वामभागे जगद्योनिं प्रकृतिं परमेश्वरीम् ॥ ५९९ ॥ सीतां चम्पकगौराङ्गी श्वेतवस्त्रविभूषिताम् ॥ सर्वाभरणसंयुक्तां द्विभुजां रत्नकुण्डलाम् ॥ धनुर्बाणकरं देवं सीतां पद्मकरां स्मरेत ॥ ६०० ॥ यद्वा रामं चतुर्बाहुं शंखचक्रासिशार्ङ्गिणम् ॥ सीतालक्ष्मणसंयुक्तं ध्यायेत्कल्पतरोरधः ॥ ६०१ ॥ ध्यात्वैवं हृदये राममन्तरा वा बहिर्यजेत ॥ षट्कोणमध्ये रामं च कोणेष्वङ्गानि चार्चयेत्॥६०२॥ तद्बाह्येष्टदले पूर्वदिगादौ भरतं यजेत् ॥ हनूमन्तं लक्ष्मणं च जाम्बवन्तं क्रमेण च ॥६०३॥ सुग्रीवमर्चयेत्पश्चात्पूजयेच्च विभीषणम्॥ सीतां च सुग्रीवाग्रे तु दिक्पालान्हेतिभिः सह ॥६०४॥ जपेद्द्वादशलक्षाणि होमश्चाशोकपुष्पकैः॥ तर्पणादि ततः कृत्वा प्रयोगार्हो भवेन्मनुः ॥ ६०५ ॥ रक्तापामार्गपत्रैश्च मधुरत्रयसंयुतैः ॥ वा कंजपत्रैर्जुहुयाद्धोमोयं लोकवश्यकृत ॥ ६०६ ॥जप पुष्पहुतं भस्म तिलकं लोकवश्यकृत् ॥ मल्लिकाभिर्जगद्वश्यं भवत्येव न संशयः॥ ॥६०७॥ लक्षत्रयं जपेन्मन्त्री सर्वज्ञानमवाप्नुयात् ॥ अश्रुतान्यपि शास्त्राणि षड्भिर्लक्षैस्तु विन्दति ॥ नवभिर्देवकन्याभिर्देववत्स प्रमोदते ॥६०८॥ चन्द्र सूर्योपरागे तु मोक्षौषद्धयभिमन्त्रितम् ॥ कपिलाज्यं पिबेद्यस्तु दूर्वारसविमिश्रितम् ॥ ६०९ ॥ अथाज्ज्योतिष्मतीतैलमङ्कोलरसमिश्रितम् ॥ शुद्धब्राह्मीरसं वापि स सर्वज्ञो भवेद्ध्रुतम् ॥६१०॥ सन्ध्यात्रये प्रतिदिनं सहस्रत्रितयं जपेत् ॥

मासेन महदैश्वर्यं जायते नात्र संशयः ॥ ६११ ॥ श्रीकामो जुहुयात्पद्मै- युतं त्रिमधुप्लुतैः ॥ धनवाञ्जायते मन्त्री द्वितीय इव यक्षराट् ॥ ६१२ ॥ बिल्वपत्रैश्च जुहुयादथवा तद्दलैर्हुनेत् ॥ लक्षमेकं विधिस्थाने निधिलाभो भ- वेद्ध्रुवम् ॥ ६१३ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि मयैवोपासितं सुराः ॥ ज्ञानप्र- महामन्त्रं सनकाद्यैरुपासितम् ॥ ६१४ ॥ ॐ नमो ब्रह्मदेवाय रामायाकुण्ठ- मेधसे ॥ उत्तमश्लोकवर्य्याय न्यस्तदण्डार्चितांघ्रये ॥ ६१५ ॥ शुकदेवो मुनि- श्चास्य छन्दोनुष्टुबुदाहृतम् ॥ श्रीरामो देवता बीजं रां वर्य्यः शक्तिरुच्यते ॥ ॥ ६१६ ॥ चतुष्पादैः समस्तेन पञ्चाङ्गविधिरीरितः॥ वाग्वद्ध्यानादिकं लक्षं पुरश्चर्या प्रकीर्त्तिता ॥ ६१७ ॥ आज्यपायसहोमं च ब्राह्मणार्चां समाच रेत् ॥ प्रयोगाः पूर्वमन्त्रोक्ता मोक्षार्थी साधयेदमुम् ॥ ६१८ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि शक्रेणोपासितं मनुम् ॥ येन कारागृहान्मुक्तो रावणस्य सुरे श्वरः ॥ ६१९ ॥ तारो नमो भगवते रामभद्राय संवदेत् ॥ बन्दीविमुक्तश्शृं- खले स्वाहा द्वाविंशदक्षरः ॥ ६२० ॥ विभीषणो मुनिः प्रोक्तो जगती छन्द ईरितम् ॥ स्वाहा शक्तिर्ध्रुवो बीजं रामभद्रोऽस्य [illegible] पदैरस्य षडङ्गानि जपेल्लक्षमितं सदा ॥६२१॥ प्राग्वद्धोमादिकं [illegible] र्थं जप्यंतेयुतम् ॥ सप्ताहा- ज्जायते मोक्षो नात्र कार्य्या विचारणा॥६२२॥ अथातःसम्प्रवक्ष्यामि सीतामन्त्रं महाद्भुतम् ॥ श्रीसीतायै नमः स्वाहा सीतामन्त्रः षडक्षरः ॥६२३॥ जनको- ऽस्य मुनिश्छन्दो गायत्रं देवता मता॥सीता भगवती प्रोक्ता श्रीं बीजं शक्तिरन्यको॥ दीर्घस्वरयुताद्येन षडङ्गानि प्रकल्पयेत् ॥६२४॥ पूजयेद्वैष्णवे पीठे ध्यायेद्राघव संयुताम्॥स्वर्णाभामम्बुजकरां रामालोकनतत्पराम् ॥ ६२५ ॥ वर्णलक्षं जपे न्मन्त्रमिष्टार्थं साधयेत्ततः ॥ आरोग्याय घृतं धान्यन्ताम्बूलं वश्यसिद्धये ॥ श्रीफलानि तिलान्मुक्त्यै भुक्त्यै च जुहुयात्सदा ॥ ६२६ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि कृष्णमन्त्रान्महाद्भुतान् ॥ कृष्णः स एव भगवान्कलिद्वापरस- न्धिगः ॥ ६२७ ॥ वृद्धये कलिधर्म्माणाम्भक्तानान्तारणाय च ॥ एकसप्त- तिरूपोसौ प्रतिमन्वन्तरेभवत् ॥ ६२८ ॥ तदुक्ताचरणान्मोक्षस्तत्कृत्याचर-

१ मन्त्र इति शेषः ॥ २ तस्येति शेषः ॥

णोऽच्युतिः ॥ इति तत्त्वं समाख्यातं विष्णोः सन्धिभवस्य च ॥ ६२९ ॥ जातश्चाद्ये कलियुगे नानागोगीरते रतः ॥ सत्कर्म कुर्वतां पातस्तदुक्तिर्मोक्षसाधनम् ॥ ६३० ॥ स्वधर्मनिरतानान्तु कलौ जन्म न जायते ॥ तस्य मन्त्रं प्रवक्ष्यामि भुक्तिमुक्तिप्रसाधनम् ॥ ६३१ ॥ गोपीजनवल्लभाय स्वाहा मन्त्रो दशाक्षरः॥ नारदोऽस्य मुनिः प्रोक्तो विराट् छन्द उदाहृतम् ॥६३२॥ देवता नन्दपुत्रः क्लीं बीजं शक्तिः शिखिप्रिया ॥ अचक्राय हृदाख्यातं विचक्राय शिरोऽपि च ॥ ६३३ ॥ सुचक्राय शिखा पश्चात्त्रैलोक्यरक्षणन्ततः ॥ चक्राय कवचं प्रोक्तमसुरान्तकशब्दतः ॥ ६३४ ॥ चक्रायास्त्रमिदं कुर्य्यादङ्गानां पञ्चकं मनोः ॥ सर्वाङ्गेषु मनुं न्यस्य मन्त्रन्यासं समाचरेत् ॥ ६३५ ॥ जातियुक्तं च पञ्चाङ्गन्तथा पञ्चांगुलीषु च ॥ हृदये शीर्षके चैव शिखायां कवचे तथा॥६३६॥ अस्त्रे पार्श्वद्वये कण्ठे पृष्ठे मूर्द्धनि च क्रमात्॥ ततः करतले पृष्ठे व्यापकत्वेन विन्यसेत् ॥ ६३७ ॥ प्रणवाद्यं नमोन्तं च सकलं च मनुं बुधः ॥ वामांगुष्ठं समारभ्य दक्षांगुष्ठान्तकं न्यसेत् ॥ ६३८ ॥ तारसम्पुटितैर्वर्णैर्दशभिश्च नमोयुतैः ॥ एष संहारनामा तु न्यासः प्रथम ईरितः ॥ ॥ ६३९ ॥ दक्षांगुष्ठादिवामान्तं सृष्टिन्यास उदाहृतः ॥ अंगुष्ठाभ्यां समारभ्य कनिष्ठान्तं स्थितिर्भवेत् ॥ ६४० ॥ एवं न्यासत्रयञ्चेति पञ्चन्यासाः प्रकीर्त्तिताः ॥ ६४१ ॥ पूर्व्वमुक्तं तु पञ्चाङ्गं वामदक्षिणहस्तयोः ॥ न्यसेद्दशांगुलीष्वेवं षष्ठो न्यासः प्रकीर्त्तितः ॥६४२॥ आदौ मूलं समुच्चार्य्य मातृकाञ्च सबिन्दुकाम्॥ विपरीतं पुनर्मूलं सप्तमः परिकीर्तितः॥ ६४३॥ पादयोः पाणियुग्मे हृन्मुखयोर्मस्तके तथा ॥ पुनर्हृदि च सर्वाङ्गे सर्वाङ्गसकलाङ्गके ॥ ६४४ ॥ दश तत्त्वानि भूस्तोयं तेजो वायुर्नभस्तथा ॥ अहङ्कारो महत्तत्त्वं प्रकृतिः पुरुषः परः ॥ तत्त्वन्यासोऽष्टमोयं हि मया तुभ्यं प्रकीर्त्तितः ॥ ६४५ ॥ सर्वाङ्गादि तु पादान्तं न्यासमेनं प्रविन्यसेत् ॥ विलोमतत्त्वन्यासोयं नवमः परिकीर्त्तितः ॥ ६४६ ॥ मस्तकादि तु पादान्तं कराभ्यां व्यापकं न्यसेत्॥ तारसंपुटितम्मन्त्रं त्रिवारं दशमस्त्वयम् ॥ ६४७ ॥ पादयोर्जानुनोर्लिंगे जठरे हृदये मुखे ॥ नासयोः कर्णयोरक्ष्णोः शिरसि क्रमतो न्यसेत्॥ सबिन्दुकान्मन्त्र

वर्णान्संहारोयं शिरोन्वितः ॥ ६४८ ॥ मस्तके नेत्रयोः कर्णे नासयोश्च मुखे हृदि ॥ जठरे व्यञ्जने जान्वोः पादयोश्च क्रमान्न्यसेत् ॥ मन्त्रवर्णान्द्वादशोयं सृष्टिन्यासः प्रकीर्त्तितः ॥ ६४९ ॥ हृदये जठरे लिङ्गे जानुनोः पादयोश्च के ॥ अक्ष्णोः श्रुत्योर्नसि मुखे मन्त्रवर्णान्क्रमान्न्यसेत् ॥ स्थितिन्यासः समाख्यातो मूलस्यायं त्रयोदशः ॥ ६५० ॥ मूलाधारे ध्वजे नाभौ हृदये च गले मुखे ॥ अंसयोरूरुयुग्मे च न्यासोयं स्याच्चतुर्दशः ॥ ६५१ ॥ स्कन्धे नाभौ कुक्षिहृदोः कटौ पार्श्वद्वये तथा ॥ पृष्ठेग्रे च न्यसेन्मन्त्रवर्णान्पञ्चदशस्त्वयम् ॥ ६५२ ॥ मूर्ध्नि भ्रूमध्यके चाक्ष्णोः कर्णयोर्नासिकाद्वये ॥ गण्डयोश्च न्यसेद्वर्णान्न्यासोयं षोडशः स्मृतः ॥ ६५३ ॥ दक्षिणे भुजमूले च तन्मध्ये मणिबन्धके ॥ मूलांगुलीनामग्रे च तथांगुष्ठादिपञ्चसु ॥ ६५४ ॥ क्रमेण विन्यसेद्वर्णान्न्यासः सप्तदशः स्मृतः ॥ इत्थं वामकरे न्यस्य न्यासस्त्वष्टादशो भवेत् ॥ ६५५ ॥ दक्षोरुमूलजानौ च गुल्फे चांगुलिमूलके ॥ अंगुल्यग्रे तथांगुष्ठादौ न्यासस्तूनविंशकः ॥ ६५६ ॥ एवं न्यसेद्वामपादे न्यासो विंशमितः स्मृतः ॥ मस्तके तत्सर्वभागादौ सम्पूर्णे शिरस्यथ ॥ बाहुयुग्मे सन्धियुग्मे न्यासोयश्चैकविंशकः ॥ ६५७ ॥ शीर्षाक्षिमुखकण्ठोरोजठरे मूलधारके ॥ लिङ्गे जानुनि पादे च द्वाविंशोयं प्रकीर्त्तितः ॥६५८॥ कर्णयोर्गण्डयोर्न्यस्येदंसयोः स्तनयोस्तथा ॥ पार्श्वयोर्भुजयोश्चोर्वोर्जानुनोर्जङ्घयोः पदोः॥युग्मन्यासोयमाख्यातस्त्रयोविंशतिसंख्यकः॥ ६५९ ॥ चतुर्दशं समारभ्य दशन्यासास्तु ये स्मृताः॥विभूतिपञ्जरो नाम चैष एव प्रकीर्त्तितः ॥६६०॥ अशेषसुखकामार्थकीर्त्तिकान्त्यादिकारकः ॥नरनारीनरेन्द्राणां वश्यकर्माणि शस्यते॥भुक्तिमुक्तिप्रदो भक्तिप्रदो विष्णोः पदाम्बुजे ॥ ६६१ ॥ कुर्य्यान्मन्त्री ततो न्यासं नारसिंहं तु पञ्चमम् ॥ मूर्त्तिपञ्जरनामाख्यं प्रोक्तं पापप्रणाशनम् ॥ ६६२ ॥ पुनः सृष्टिस्थितिन्यासौ दशाङ्गन्यासमाचरेत् ॥ प्रोक्तमाद्यप्रकारेण न्यासानामुपकल्पने ॥ ६६३ ॥ वैष्णवीर्दर्शयेन्मुद्राः पूर्वोक्ताः सकला अपि ॥ एवं कृत्वा विधानेन मन्त्री मन्त्रकलेवरम् ॥६६४॥ त्र्यन्ते बोधितं नित्यं कृष्णं ध्यायेज्जगत्पतिम्॥ पूर्वं वृन्दावनं रम्यं स्मरेत्पुष्पादि

राजितम् ॥ ६६५ ॥ नवीनपल्लवोद्रेकफलसम्पत्तिसंयुतम्॥ मधुपैः कृतराङ्कारैः कीराद्यैश्च निनादितम् ॥ ६६६ ॥ आदित्यतनयापार्श्वलहरीकणशीतलम् ॥ तस्मिन्वने कल्पतरुं नवपल्लवशोभितम् ॥६६७॥ सर्वशाखाग्रसंयुक्तं नवरत्नफलान्वितम् ॥ दिव्यामृतौघवर्षेण सिञ्चन्तं विश्वमुच्छ्रितम् ॥६६८॥ज्वलद्रत्नसमाबद्धां पुष्परेणुविभूषिताम् ॥ षडूर्मिरहितां ध्यायेत्तस्याधस्ताद्वसुन्धराम् ॥६६९॥माणिक्यकुट्टिमं तत्र योगपीठं विचिन्तयेत्॥ पद्ममष्टदलं तत्र यथोक्तं रत्नपर्णकम् ॥ ६७०॥तस्य मध्ये सुखासीनं कृष्णं ध्यायेदनन्यधीः ॥उद्यदादित्यसङ्काशं प्रसन्नवदनं विभुम् ॥ ६७१ ॥ इन्द्रनीलमणिप्रख्यं स्निग्धदीर्घशिरोरुहम् ॥ मायूरेण सुपिच्छेन राजमानशुभाङ्गकम् ॥६७२॥ कुटिलालकविभ्राजदास्यं कर्णकृतोत्पलम् ॥ ६७३ ॥ गोरोचनाकृतिलकं पूर्णचन्द्रनिभं स्मरेत् ॥ पद्मनेत्रं दीप्तमणिं मकराकृतिकुण्डलम् ॥ ६७४ ॥ कपोलस्थललावण्यविजितस्वच्छदर्पणम् ॥ अत्यद्भुतोन्नासिकं च पक्वबिम्बफलाधरम् ॥ ६७५ ॥ दाडिमीबीजरदनं कम्बुसुन्दरकण्ठकम् ॥ आरण्यैः पल्लवैः पुष्पैः कृतग्रैवेयसम्पदम् ॥ ६७६ ॥ कौस्तुभप्रभया दीप्तविशालोन्नतवक्षसम् ॥ श्रीवत्साङ्काङ्कितोरस्कं वृषस्कन्धं च हारिणम् ॥ ६७७ ॥ आजानुलम्बदोर्दण्डं वलित्रययुतोदरम् ॥ क्षुद्रघण्टिकया बद्धकटिं ग्रैवेयराजितम्॥६७८॥ चक्रशङ्खलसत्पद्मामृतकुण्डाम्बरादिभिः ॥ कुलिशप्रमुखैश्चिह्नैराङ्कितस्वच्छपत्तलम् ॥ ६७९ ॥ मुखाम्बुजसमायुक्तवंशच्छिद्रार्पितांगुलिम् ॥ तन्मृदुध्वनिसन्तानविवशीकृतमानसम् ॥ ६८० ॥ अपाङ्गैः प्राणिजातन्तु मोहयन्तमनारतम् ॥ परमानन्दसन्दोहसम्पूर्णीकृतमानसम् ॥ मुखपद्मसमासक्तस्वान्तनेत्राभिराजितम् ॥ ६८१ ॥ गोभिरूधोमहाभारमन्दयानाभिरेव च ॥ कवलीकृतसन्त्यक्तन्यासलेशाभिरप्यलम् ॥ ६८२ ॥ प्रस्नुतस्तनपानेन सम्भृताननिःस्वनैः ॥ डिण्डीरवाभिसंयुक्तद्रवैर्द्दष्टिमनोहरैः ॥६८३ ॥ वंशवादनप्रोन्नीतगीताकर्णनलालसैः ॥ उत्तम्भनीकृतश्रोत्रपुटयुग्मैश्च तर्णकैः ॥ ॥ ६८४ ॥ किञ्चिद्विषतरूद्भूतिजातकण्डूतिमस्तकैः ॥ परस्परविमर्दार्थखुरस्पृष्टमहीतलैः ॥ ६८५ ॥ स्निग्धैर्गुरुभिरत्यन्तसुशोभिगलकम्बलैः ॥

वत्सीवत्ससमूहैश्च संवृतं तदनन्तरम् ॥ ६८६ ॥ कृतसम्भ्रमसन्दोहं लघुदीर्घकलेवरैः ॥ उच्चकर्णपुटैः पीतवंशशब्दसुधारसैः ॥ ६८७ ॥ स्ववयस्यैश्च गायद्भिर्नृत्यद्भिः सविभाषणैः ॥ नानावेषधरैर्बालैः संस्तुवद्भिः समावृतम् ॥ मधुराकृतिभिः सर्वैः पीयूषाद्भुतभाषणैः ॥ ६८८ ॥ शार्दूलनखसंक्लृप्तगलाकल्पैस्तथावृतम् ॥ ततो गोपपुरन्ध्रीणां स्मरेद्वृन्दं समाहितः ॥ ६८९ ॥ तद्भावभावकल्लोलसञ्जीवितमनोभवम् ॥ वल्लवीवल्लवगवां देववृन्दं बहिः स्मरेत् ॥ ६९० ॥ सम्मुखे देवदेवस्य कांक्षन्तं धनसञ्चयम् ॥ ऋषिसङ्घं तथा दक्षे वेदाध्ययनतत्परम् ६९१ ॥ धर्मार्थिनं स्मरेत्पश्चान्मेनकाप्रमुखास्तथा ॥ वामभागे च योगीन्द्रान्यक्षगन्धर्वकिन्नरान् ॥ ६९२ ॥ सिद्धविद्याधरांश्चापि चारणाप्सरसां गणम् ॥ अनेकश्रुतिसम्पूर्णवीणावादनतत्परम् ॥ ६९३ ॥ आकाशे नारदं ध्यायेन्मुनिवर्य्यं गतस्मयम् ॥ एवं ध्यात्वा यजेत्पीठे देहे मानसिकार्चनम् ॥ ६९४ ॥ बाह्यपूजां ततः कुर्य्यान्मूर्तिं मूलेन कल्पयेत् ॥ न्यासोक्तं क्रमतः पश्चाद्गन्धाद्यैर्देवमर्चयेत् ॥ ६९५ ॥ एवं ध्यात्वा यजेत्पीठे वैष्णवे नवशक्तिके ॥ आदौ स्वीये पीठमये देहे मानसिकार्चनम् ॥ ६९६ ॥ सृष्ट्या स्थित्या च सम्पूज्य पञ्चाङ्गं च दशाङ्गकम् ॥ वंशं च वनमालां च श्रीवत्सं कौस्तुभं तथा ॥ ६९७ ॥ पूजयेत्कृष्णवर्णस्थं ततश्चावरणार्चनम् ॥ कर्णिकायां चतुर्दिक्षु देवस्य परितोर्चयेत् ॥ ६९८ ॥ दामं सुदामं श्रीदामं वसुदामं तथापरम् ॥ तेजोरूपधरांश्चैतान्केसरेष्वङ्गपूजनम् ॥ ६९९ ॥ रुक्मिणीप्रमुखाश्चाष्टपत्रेषु महिषीर्यजेत् ॥ रुक्मिणीं सत्यभामां च नग्नजित्तनयार्कजे ॥ ७०० ॥ मित्रविन्दां लक्ष्मणां च जाम्बवत्या सुशीलिकाम् ॥ कमलं चार्घपात्रं च बिभ्रतीर्दक्षिणान्ययोः ॥ ७०१ ॥ सुन्दरीर्दिव्यरक्ताभा वस्तुलेपादिभिर्युताः ॥ स्तनभारनता नानारत्नजालविभूषणाः ॥ ७०२ ॥ पत्राग्रेषु ततः पूज्या वसुदेवश्च देवकी ॥ नन्दगोपो यशोदा च बलभद्रः सुभद्रिका ॥ ७०३ ॥ गोपाला गोपिकाः कृष्णशुश्रूषासक्तमानसाः ॥ स्वर्णाभो वसुदेवस्तु रक्तो नन्दः प्रकीर्त्तितः ॥ ७०४ ॥ रक्तश्यामनिभे प्रोक्ते मातरौ दक्षिणे करे ॥ वरं वामे वहन्त्यौ तु पात्रं गोपयसा भृतम् ॥

मुक्ताहारधरे रत्नकुण्डलादिविभूषिते ॥ ७०५ ॥ बलभद्रस्तु कुन्दाभो मुशली हलसंयुतः ॥ नीलाम्बरो मदोन्मत्तश्चञ्चलश्चैककुण्डलः ॥ नानोपायनहस्ताब्जगोपापत्यैः सुपूजितः ॥ ७०६ ॥ मध्ये बहिश्च पूर्वादौ मन्दारं पारिजातकम् ॥ सन्तानं कल्पवृक्षं च चन्दनं च प्रपूजयेत् ॥ ७०७ ॥ दीर्वनम्रबृहच्छाखान्भूपुरे तु दिगीश्वरान् ॥ तदायुधानि विधिना क्रमतः सम्यगर्चयेत् ॥ ७०८ ॥ शर्करादधिसंयुक्तं सघृतं गोपयो हविः ॥ नालिकेरं गुडं पूरीर्नवनीतं सितोपलम् ॥ ७०९ ॥ क्षौद्रं सङ्कल्प्य नैवेद्यं गोमुद्रां संप्रदर्शयेत् ॥ ॐनमः परमेत्युक्त्वात्मने निरुपमं वदेत् ॥ ७१० ॥ नैवेद्यं कल्पयामीति विंशत्यर्णो मतो मनुः ॥ समये च निवेद्यं हि कुर्यादन्यत्पुरोक्तवत् ॥ ७११ ॥ ततश्चन्दनपङ्केन स्वीये देहे विभूषयेत् ॥ मूलमन्त्रेण मन्त्रज्ञो मूर्तिं निर्माय मन्त्रकैः ॥ ७१२ ॥ कुर्य्यात्पुष्पाञ्जलिं पञ्च तुलसीपत्रतो बुधः ॥ मूलमन्त्रं समुच्चार्य्य पादपद्मद्वयं विभोः ॥ ७१३ ॥ करवीरद्वयेनाथ मध्यदेहे प्रकल्पयेत् ॥ अम्भोजयुग्मतः पश्चादुत्तमाङ्गे निवेदयेत् ॥ ७१४ ॥ एभिः सर्वैः कृते गात्रे तावतः कुसुमाञ्जलीन् ॥ देवस्य दक्षिणे दद्याच्छ्वेतपुष्पाणि मन्त्रवित् ॥ ७१५ ॥ सप्तावरणसंयुक्तमित्थं कृष्णस्य पूजनम् ॥ सर्वसम्पत्करं पुंसां भोगमोक्षफलप्रदम् ॥ ७१६ ॥ अङ्गैश्चेन्द्रादिभिर्वज्रप्रमुखैरावृतित्रयम् ॥ संक्षेपपूजनं तेन कृत्वा कृष्णाष्टकं यजेत् ॥ ७१७ ॥ कृष्णाय वासुदेवाय देवकीनन्दनाय च ॥ दामोदराय गोविन्द हृषीकेश कुमारहृत ॥ ७१८ ॥ धर्मसम्पत्करश्चेति ङेनमोन्तो ध्रुवादिकः ॥ एतैरेव विधातव्या कृष्णार्चा ह्यथवा बुधैः ॥ ७१९ ॥ समर्पयेदर्घ्यजलैर्गन्धपुष्पाक्षतान्वितैः ॥ सम्पूज्य स्वे हृदम्भोजे समुद्वास्य नमेत्ततः ॥ ७२० ॥ ततः पूर्वोक्तविधिना दीक्षितः प्रजपेन्मनुम् ॥ मन्त्रार्थं चिन्तयन्मन्त्री नियमस्थो जितेन्द्रियः ॥ ७२१ ॥ चत्वारिंशत्सहस्राणि श्वेतपद्माक्षमालया ॥ पश्चान्मन्त्रस्य शुद्ध्यर्थं दशलक्षं जपेत्सुधीः ॥ ७२२ ॥ लक्षं हुनेद्रक्तपद्मैः सितासर्पिर्मधुप्लुतैः ॥ शर्कराघृतसंयुक्तैरब्जैर्वा जुहुयाद्वरैः ॥ ७२३ ॥ तर्पयेत्सलिलैः शुद्धैश्चन्द्रचन्दनसंयुतैः ॥ आत्माभिषेकं

कृत्वाथ भूदेवान्पूजयेत्ततः ॥ ७२४ ॥ नानाविधैर्भक्ष्यभोज्यैस्ताम्बूलैश्च सदक्षिणैः ॥ ततो निजगुरुं सम्यक्प्रणिपत्य यथाविधि ॥ ७२५ ॥ धनधान्याम्बराद्यैश्च वित्तशाठ्यविवर्जितः ॥ तोषयेत्परया भक्त्या निजकार्यस्य सिद्धये ॥ ७२६ ॥ ततः सिद्धमनुर्मन्त्री प्रयोगान्निजवाञ्छितान् ॥ कुर्याद्भक्तियुतः सम्यङ्नित्यनैमित्तिके रतः ॥ ७२७ ॥ तत्काले देवकीजातं शङ्खचक्रगदाम्बुजान् ॥ दधतं पीतवसनं सुन्दरं गगनप्रभम् ॥ ७२८ ॥ निशायामे चतुर्थे तु ध्यात्वा लक्षं जपेन्मनुम् ॥ त्रिमध्वक्तैस्तद्दशांशैः किंशुकप्रसवैर्हुनेत् ॥ वीर्य्यं प्रज्ञां स्मृतिं प्राप्य कवीनामग्रणीर्भवेत् ॥ ७२९ ॥ मातुरङ्कगतं दिव्यं चलत्पादकरं शिशुम् ॥ ध्यात्वा क्षीरधियां तोयैस्तर्पयेल्लभते सुतम् ॥ ७३० ॥ पिबन्तं पूतनास्तन्यं यस्तु तस्याः शिरः स्मरेत् ॥ शतं साग्रं जपेन्मन्त्रं रुदतीं पूतनां तथा ॥ छिन्नमर्मप्रणादाढ्यां तदा नश्यन्ति राक्षसाः ॥७३१॥अपामार्गस्य समिधः पञ्चगव्यान्विता हुनेत्॥ ध्यायेत्ततस्ताः कृष्णस्य हुतशेषांस्तु प्राशयेत् ॥ ७३२ ॥ सहस्रमन्त्रितैस्तोयैरभिषिक्ताय रोगिणे ॥ ग्रहपीडादिमुक्तिः स्याद्बालानां रुग्विनाशनम् ॥ ॥ ७३३ ॥ स्वकीयवरसांक्षितं सकलं भावयेन्मनुम् ॥ अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं विघ्नसंघाः शमं ययुः ॥ ७३४ ॥ नीलगात्रं स्वहस्ताभ्यां नवनीतं नवं दधि॥ दधानं किङ्किणीसंघं लसत्स्वच्छविभूषणम् ॥ ७३५ ॥ दूर्वात्रयैश्च दुग्धाद्यैर्हुत्वैवं प्रजपेन्मनुम् ॥ सन्तोष्य गुरुविप्रांश्च व्याध्यादिरहितो भवेत् ॥ ७३६ ॥ कर्मबन्धं पातयन्तं कृष्णं ध्यात्वा जपेन्मनुम् ॥ तेनापि मन्त्रितं तोयं क्षिप्त्वा पीडां व्यपोहति ॥ ७३७॥ गोगणं साधु रक्षंतं चारयन्तमितस्ततः॥ वेणुं धमन्तं गोविन्दं ध्यायेत्पूर्वोदितं फलम् ॥ ७३८ ॥ कालीयस्य फणामध्ये नृत्यन्तं कृष्णमञ्जसा ॥ सुधादृष्ट्या वीक्षमाणं तद्रात्रौ प्रजपेन्मनुम् ॥ ॥ ७३९ ॥ वामहस्तस्य तर्जन्या तर्जयेन्मतिसत्तमः ॥ सुखीकरोति धिषणं कालदष्टमपि क्षणात्॥७४०॥कालीयदमनं कृष्णं ध्यात्वा कुशचये जपेत् ॥ अष्टोत्तरशतं स्नायाद्विषार्तो निर्विषो भवेत् ॥ ७४१ ॥ गोवर्धनगिरिं वामबाहुदण्डेन बिभ्रतम् ॥ दक्षिणेन व्रजप्राणिप्राणसन्त्राणसूचकम् ॥७४२॥ कृष्णं

सञ्चिन्तयेन्मन्त्रं गच्छञ्छत्रुं मृधे जयेत् ॥ भीतिदास्तं न बाधन्ते विष-
वर्षणवायुवत् ॥ ७४३ ॥ व्यर्थमेवोघमायान्तं वासवं चिन्तयेद्धुनेत् ॥
अयुतं लवणैः शुद्धैरनावृष्टिर्भवेद्ध्रुवम् ॥ ७४४ ॥ यमुनायां तु गोपीभिर्ज-
लक्रीडाकरं हरिम् ॥ मुहुर्मुहुः सिच्यमानं क्षीराक्तैरयुतं हुनेत् ॥ भूयसीं
वृष्टिमिष्टां हि कुर्यादसमयेपि सः ॥ ७४५ ॥ एवमेव स्मरन्कृष्णं पीडितस्य
तु मस्तके ॥ मोहनार्त्तिगरस्फोटभूतराक्षसपन्नगैः ॥ मन्त्रं जपेत्तदानीं तु
सुखी भवति नान्यथा ॥ ६४६ ॥ वैनतेयगतं कृष्णं सप्रद्युम्नं बलान्वितम् ॥
आत्मभूतपराभूतैर्जनैः सर्वैः स्तुतं तथा ॥ ७४७ ॥ एवं ध्यात्वा ग्रहाक्रा-
न्तमस्तके संजपेन्मनुम् ॥ महाघोरग्रहो दुष्टस्तदानीं नाशमाप्नुयात् ॥७४८॥
एवं ध्यात्वानले कृष्णं साङ्गमभ्यर्च्य चायुतम् ॥ क्षीराच्छिन्नाखण्डहोमा-
त्सर्वं क्रूरज्वरं हरेत् ॥ ७४९ ॥ क्षीरार्णवप्रविष्टाङ्गं ग्रीष्मपीडाहरं हरिम् ॥
ध्यात्वा स्पृशेज्जपन्नार्तं पाणिभ्यां स सुखी भवेत् ॥ ७५० ॥ अर्चितेग्नौ
हुनेत्कृष्णं सान्दीपिनिसुतप्रदम् ॥ ध्यात्वा दुग्धगुडूचीभिरपमृत्युर्विनश्यति ॥
॥ ७५१ ॥ कृष्णं पुत्रान्प्रयच्छन्तं विप्राय मृतसूनवे ॥ ध्यात्वा पार्थयुतं
मन्त्रं जपेत्पुत्रसमृद्धये ॥ २५२ ॥ पुत्रजीवककाष्ठाग्नौ सक्षौद्रैस्तु फलैर्हुनेत् ॥
अयुतं लभते पुत्रान्नीरोगांश्चिरजीविनः ॥ ७५३ ॥ दुग्धवृक्षत्वचां क्वाथैः
कृष्णमावाह्य रात्रिषु ॥ पूजयित्वायुतं जप्त्वा शतयोषापतिर्भवेत् ॥ ७५४ ॥
अभिषिञ्चेद्घृतेनैव पाययेदर्कवासरे ॥ एवं कतिपयैर्मासैर्वन्ध्यापि लभते
सुतम् ॥ ७५५ ॥ बोधिपत्रगतं तोयं जप्तमष्टोत्तरं शतम् ॥ मौनं कृत्वा
पिबेन्नारी प्राग्वर्षाल्लभते सुतम् ॥ ७५६ ॥ कृत्यां क्रूरां महाभीमां
काशिराजेन योजिताम् ॥ पराजित्यात्मचक्रेण काशीं तद्भववह्निना ॥
॥ ७५७ ॥ शेषेण भस्मीकुर्वन्तं कृष्णं सम्यग्विचिन्तयेत ॥ जुहुयान्निशि
सिद्धार्थैः स्वीयतैलविलोलितैः ॥ ७५८ ॥ एवंकृते तु सप्ताहं वैरिणा केन-
चित्कृता ॥ कृत्या भूयस्तमेवाशु क्षपयेन्नात्र संशयः ॥ ७५९ ॥ संस्थितं
स्वालये दिव्ये बदरीवृक्षभूषिते ॥ घण्टाकर्णं च हस्ताभ्यां स्पृशन्तं संस्मरे-
द्धरिम् ॥ ७६० ॥ मधुराक्तैस्तिलैर्लक्षं जुहुयादेधितेऽनले ॥ अशेषपापना-

शार्थं पुष्ट्यर्थं च जपेत्तथा ॥ ७६१ ॥ खगेश्वरसमारूढं कुर्वन्तं बाणवर्षणम् ॥ धावमानं रिपुगणमनुधावन्तमाशुगम् ॥ ७६२ ॥ जपेत्सप्तसहस्राणि कृष्णं ध्यात्वा मनुं बुधः ॥ सप्ताहाद्वैरिणां भूयो ह्युच्चाटो देशतो भवेत् ॥ ॥ ७६३ ॥ कपित्थफलसम्पातमेवमेवाब्दके क्षिपन् ॥ कृष्णं ध्यात्वायुतं जप्तो मनुरुच्चाटकृद्रिपोः ॥ ७६४ ॥ वैरिसंकटरूपं च कर्षणं प्राणवर्जितम् ॥ अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं हुनेद्वा तत्समं बुधः ॥ ७६५ ॥ समिद्भिर्जन्मनक्षत्रे मारणस्य प्रयोगवित् ॥ शत्रुर्निधनमाप्नोति सुधाभक्षोऽपि नान्यथा ॥ ७६६ ॥ कलिद्रुमसमिद्वर्यैर्निम्बतैलप्लुतैर्हुनेत् ॥ ७६७ ॥ यामिन्यामयुतं स्वस्थो रिपुर्यमपुरं व्रजेत् ॥ ७६८ ॥ कार्पासबीजरजनीनिम्बपत्रं कटुत्रयम् ॥ एवं तैलन्तु जुहुयाच्छ्मशाने निशि मारणे ॥ ७६९ ॥ मारणं नैव कुर्वीत बलात्कृत्यायुतं जपेत् ॥ हुनेच्च तावद्धविषा तत्पातकनिवृत्तये ॥ ७७० ॥ पुरन्दरमुखाञ्जित्वा हरन्तं सुरपादपम् ॥ कृष्णं ध्यायञ्जपल्लँक्षं सर्वतो जयमाप्नुयात् ॥ ७७१ ॥ अर्जुनाय च गीतार्थं कथयन्तं जपेन्मनुम् ॥ ध्यात्वा धर्मस्य वृद्धिः स्याद्योगसिद्धिश्च जायते ॥ ७७२ ॥ त्रिस्वादुयुक्तैर्लक्षं यः कण्डकप्रसवैर्हुनेत् ॥ ७७३ ॥ महाकविः स वागीशो वेदवेदाङ्गपारगः ॥ ॥ ७७४ ॥ विश्वरूपं हरिं ध्यायेत्सहस्रं साष्टकं जपेत् ॥ देहगेहपुरग्रामवास्तुरक्षा भवेद्ध्रुवम् ॥ ७७५ ॥ आरण्यकारुणैः पुष्पैर्मध्याह्ने विधिनार्चयेत् ॥ ॥ ७७६ ॥ हरिं गृहे जपेत्साष्टसहस्रं द्विजवश्यकृत् ॥ ७७७ ॥ मालतीकुसुमैः श्रेष्ठैर्गोपवेषं यथा पुरा ॥ कृष्णमभ्यर्च्य नृपतीन्वशान्नयति दासवत् ॥ ॥ ७७८ ॥ रक्ताश्वमारैर्वैश्यांश्च शूद्रान्नीलोत्पलैस्तथा ॥ अत्र ध्यायेच्च गायन्तं श्रीकृष्णं जनमोहनम् ॥ ७७९ ॥ तण्डुलैर्घृतपुष्पैश्च घृताक्तैर्यः सहस्रकम् ॥ अन्वहं सप्तशतकं हुत्वा तद्भस्म धारयेत् ॥ ७८० ॥ तद्भस्मधारणान्नारी स्वपुमांसं वशं नयेत् ॥ ७८१ ॥ पुरुषश्च तथा नारीं दासीं कुर्यान्न संशयः ॥ ७८२ ॥ पुष्पताम्बूलवासांसि कज्जलालयनादिकम् ॥ सहस्रमभिमन्त्र्याथ येभ्यो दद्याच्च ते वशाः ॥ ७८३ ॥ आपणव्यवहारादौ

१ धावु गतिशुद्ध्योरित्यतः शानच् ॥

विवादे राजवेश्मसु ॥ जपित्वाऽष्टोत्तरशतं बरीभर्त्ति च सद्वचः ॥ ७८४ ॥ उपविष्टं कदम्बाधो बल्लवीभिः स्मरेद्धरिम् ॥ त्रिमध्वपामार्गसमिद्धोमाल्लोक-त्रयं वशम् ॥ रासक्रीडारतं ध्यात्वा जपेन्नित्यं सहस्रकम्॥७८५॥इष्टां कन्या-मवाप्नोति मासमात्रेण साधकः॥कुसुमाभ्युच्चयारूढं ध्यात्वा सायं सहस्रकम्॥जपे-त्कन्यामण्डलेन लभते वाञ्छितं वरम्॥७८६॥कृतमालप्रसूनैश्च करण्टकुसुमै-रपि॥हुत्वा वशीकरोत्येव भूपालान्सपरिच्छदान् ॥७८७॥ बकुलोद्भवसत्पुष्पैः पालाशोत्थैश्च तैरपि ॥ इक्षुजैर्वैश्यशूद्रौ च स्वायत्तौ कुरुते क्षणात् ॥ रक्तो-त्पलैर्वा कुसुमैश्चम्पकैः पाटलोद्भवैः ॥ ७८८ ॥ हुत्वायुतं च मध्वक्तैर्वशये द्वणयोषितः ॥ अश्वमारप्रसूनैर्यो मध्वक्तः प्रत्यहं हुनेत् ॥ ७८९ ॥ रात्रौ सहस्रसंख्याकैः सप्तरात्रमतन्द्रितः॥ सोङ्गनानां सहस्रञ्च नवयौवनगर्वितम् ॥ पञ्चबाणप्रविद्धाङ्गं दासीकुर्य्यान्न संशयः ॥ ७९० ॥ सिद्धार्थलवणोपेतैर्मध्व कैस्त्रिसहस्रकम् ॥ होमं कुर्वात रात्रौ च वह्नौ विप्रान्वशं नयेत् ॥ ७९१ ॥ त्रिस्वाद्वक्तैर्बिल्वफलैर्वा पत्रैर्वा प्रसूनकैः ॥ पद्मैः सतण्डुलैर्होमात्तर्पणाच्छ्रीः स्थिरा भवेत् ॥ ७९२ ॥ वासांसि बल्लवस्त्रीणां मनोभिः सह केशवम् ॥ समादाय कदम्बन्तु समारूढं विचिन्तयेत् ॥ ७९३ ॥ जपेत्सहस्रमानं यो रात्रौ स दशभिर्दिनैः॥ शचीमप्यानयेन्मन्त्री किमन्यां नरयोषितम् ॥७९४॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि द्वितीये यस्तु जायते ॥ ७९५ ॥ तारसम्पुटितश्चायं मन्त्रः स्याद्द्वादशाक्षरः ॥ ७९६ ॥ पुरश्चर्य्याजपन्यासपूजाद्यं पूर्ववद्भवेत् ॥ ॥ ७९७ ॥ प्रयोगाश्च विशेषेण प्रयोगोत्र निरूप्यते ॥ ७९८ ॥ चन्द्रकुन्द-सुगौराङ्गं रक्तपद्मदलेक्षणम् ॥ आरिकम्बुगदापद्मं बाहुदण्डैश्च बिभ्रतम् ॥ ॥ ७९९ ॥ दिव्यैश्च चन्दनालेपैः पद्मनाम्ना विभूषितम् ॥ पीताम्बरलसद्गात्रं तरुणं मुनिसेवितम् ॥ ८०० ॥ विकसत्पद्ममध्यस्थं ध्यात्वा नन्दात्मजं प्रभुम् ॥ स्वहृत्पद्मगतं देवं पुराणं पुरुषं नवम् ॥ ८०१ ॥ नीलमेघनिभं वापि द्रुतहेमनिभं तु वा ॥ लक्षद्वादशकं जप्त्वा तत्सहस्रं समिद्वरैः॥८०२॥ दुग्धाप्लुतैर्हुनेन्मन्त्री पयोद्रुमसमुद्भवैः ॥ मध्वादिलोलितेनापि हविषा वा जितेन्द्रियः ॥ ८०३ ॥ पश्चाद्विश्वाधिपं नित्यं चिदानन्दकलेवरम् ॥ भवा-

न्धकारसुमणिं स्वीये हृत्सरसीरुहे ॥ ८०४ ॥ आत्माभेदेन सञ्चिन्त्य प्रत्यहं परमेश्वरम् ॥ त्रिसहस्रं जपेन्मन्त्री जपेत्सन्ध्योक्तवर्त्मना ॥ ८०५ ॥ मनुमेतं जपेद्यस्तु श्रद्धाभक्तिसमन्वितः ॥ संसाराब्धिं समुल्लंघ्य जीवन्मुक्तः स जायते ॥ ८०६ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि तृतीयेयं जगत्पतिः ॥ अयोनिजशरीरेण प्रकटो जायते भुवि ॥ ८०७ ॥ दशाक्षरोयं यामादिस्तस्य मन्त्रो भवाक्षरः॥८०८॥कामदेवो मुनिः प्राग्वदन्यत्सर्वं समीरितम्॥८०९॥अथातः सम्प्रवक्ष्यामि चतुर्थेप्ययमेव हि ॥ हरशिष्य इति ख्यातो वाममार्गप्रवर्त्तकः ॥ ८१० ॥ दशाक्षरोयं लज्जादिस्तस्य मन्त्रो भवाक्षरः ॥ ८११ ॥ प्राग्वत्सर्वं विना शाक्तं नायं मन्त्रोस्य सिध्यति ॥ ८१२ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि पंचमोयं जगत्पतिः ॥ सुदामदारिद्र्यहरो मन्त्रोयं तदुपासितः॥८१३॥ दशाक्षरोयं लक्ष्म्याद्यो भवेदेकादशाक्षरः ॥ ८१४ ॥ न्यासपूजाप्रयोगादि पूर्ववत्परिकीर्त्तितम् ॥८१५॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि कलौ षष्ठे जगत्पतिः ॥ संसारानन्दसन्दोहदर्शकोस्य मनुस्त्वयम् ॥ ८१६ ॥ श्रीकृष्णाय वदेत्पश्चाद्गोविन्दाय दशाक्षरः ॥ एवमष्टादशार्णोयं मन्त्रः प्रोक्तोखिलेष्टदः ॥ ८१७ ॥ कृष्णो देवस्तु गायत्री छन्दः स्यान्नारदो मुनिः ॥ ८१८ ॥ स्वाहा शक्तिश्च क्लीं बीजं वेदाब्ध्यब्धिविलोचनैः ॥ ८१९ ॥ मन्त्रार्णैः स्याच्च पंचाङ्गं त्वंगुलीषु करद्वये ॥ मूलमन्त्रेण सर्वाङ्गे त्रिवारं व्यापकं चरेत् ॥ ॥ ८२० ॥ एतान्यङ्गानि विन्यस्य प्रणवेन ततः पुनः ॥ ८२१ ॥ के ललाटे भ्रुवोर्मध्ये कर्णयोर्नेत्रयोर्नसि॥८२२॥मुखे कण्ठे हृदि नाभौ कट्यां लिङ्गे ततः परम् ॥ जानुयुग्मे पदद्वन्द्वे न्यसेदेकैकमक्षरम् ॥ ८२३ ॥ पादादिमस्तकान्तं च न्यसेच्चैव पदानि तु ॥ शिरोवदनहृद्गुह्यपादेषु मनुवित्तमः ॥ ॥ ८२४ ॥ पञ्चाङ्गानि पुनर्न्यस्य मुन्यादिन्यासमाचरेत् ॥ न्यासान्तरादिकं सर्वं दशवर्णोक्तवद्भवेत् ॥ ८२५ ॥ ध्यानं चोक्तप्रकारेण पूजनं च तथा भवेत् ॥ अयुतद्वयसंख्यातमधिकारार्थमादरात् ॥ ८२६ ॥ पंचलक्षं जपेत्पश्चाद्दशांशं पूर्ववद्धुनेत् ॥ तर्प्पणादि ततः सर्वं पूर्वोक्तविधिना चरेत् ॥ ॥ ८२७ ॥ अथ साधितमन्त्रस्य साधकस्य कलाप्तये ॥ त्रिकालार्चाविधिं

वक्ष्ये गोविन्दस्य जगत्पतेः ॥ ८२८ ॥ उक्तवृन्दावने रम्ये स्वर्णभूमौ सुमण्डपम्॥ रम्यं रत्नमयं दिव्यं स्मरेत्कल्पतरोरधः॥८२९॥ नानारत्नस्थली-मध्ये रत्नसिंहासने शुभे॥ यथोक्तपद्ममध्यस्थं वासुदेवं विचिन्तयेत्॥८३०॥ इन्द्रनीलनिभं कान्तं शिशुं सुमधुराकृतिम् ॥ स्निग्धवक्त्रं ललाटान्तलुठन्मूर्द्ध-जसञ्चयम्॥ ८३१ ॥ भृङ्गसङ्गसमासक्तपद्मसुन्दरसम्मुखम् ॥ इन्दीवरदला-कारशोभिनेत्रद्वयान्वितम् ॥८३२॥ चलत्कुण्डलसंशोभिपृथुगंडसुमण्डितम् ॥ रक्ताधरं सुनासं च हसन्तं हृतमानसम् ॥ ८३३ ॥ नानारत्नगणाकीर्णकण्ठा भरणभूषितम्॥गोधूलिधमरोरस्कं शार्दूलनखधारिणम् ॥ ८३४ ॥ विशिष्ट-मुष्टसन्देहं स्वर्णेनपथ्यदीपितम् ॥ कटिदेशलसज्जंघाद्वये बद्धमनोहरम् ॥ ८३५ ॥ रत्नकांचनसंछन्नकिंकिणीजालमालिनम् ॥ तिरस्कु-र्वन्तं वनजबन्धूकप्रसवश्रियम् ॥ ८३६ ॥ अत्यन्तारुणसच्छाखहस्तपा-दाब्जशोभितम् ॥ पयसोद्धृतपिण्डं च नवनीतमयं शुभम् ॥ दक्षिणोत्तरयोः पाण्योर्वहन्तं साधु सुस्पृहम् ॥ ८३७ ॥ पथिव्यघकराणां च दैत्यानां दुष्ट-चेतसाम् ॥ पूतनाशकटादीनां विनाशाय कृतोद्यमम् ॥ ८३८ ॥ गोपीगोपा-लधेनूनां समूहेनावृतं सदा ॥ आखण्डलमुखैर्देवैः ॥ सेवितं कामतत्परैः ॥ ॥८३९॥प्रातरेवंविधं कृष्णं ध्यात्वा सुस्थिरमानसः ॥ प्रागुक्त एव पीठेमुं हरिं संपूजयेत्प्रभुम्॥८४०॥ स्वाङ्गावरणमाद्यं स्याद्द्वितीयं लोकपालकैः॥८४१॥ वज्रादिभिस्तृतीयं च पूजयित्वा प्रसन्नधीः॥पक्वरम्भाफलं खण्डं नवनीतं हवि-र्दधि॥मेलयित्वा सुनैवेद्यं निवेद्य प्रीणयेद्विभुम्॥८४२॥उषस्येवं विधानेन श्रद्धा भक्तिसमन्वितः ॥ श्रीकृष्णं पूजयेद्यत्र पूजोपकरणैः शुभैः ॥ ८४३ ॥ ऐहिकीं सर्वसम्पत्तिं प्रागेव प्राप्नुयात्ततः ॥ देहान्ते विष्णुसायुज्यं प्रयाति नियतं कृती ॥ ८४४ ॥ प्रातः प्रत्यहमेवं हि पूजयित्वा नरो हरिम् ॥ गव्यं दधि निवेद्यास्मै गुडयुक्तमथापि वा ॥ ८४५ ॥ तद्बुद्ध्या शुद्धनीरेण तर्प्प-येत्सुमुखं हरिम् ॥ अष्टोत्तरसहस्रं तु मूलमन्त्रं जपेत्ततः ॥ ८४६ ॥ दिन-मध्ये भजेच्चापि सुन्दराकृतिमद्भुतम् ॥ इन्द्रादिदेवसिद्धैश्च सेवितं खचरैस्तथा ॥ ८४७ ॥ गवां गोपालगोपीनां समूहैः परितो वृतम् ॥ नीलाम्बुवाहसत्का-

न्तिविशिष्टाङ्गश्रियं विभुम् ॥ ८४८ ॥ नीलकण्ठस्य सत्पिच्छैः केशभारसुमण्डितम् ॥ उद्भ्रमद्भ्रूलतं देवं पद्मपत्रायतेक्षणम् ॥ ८४९ ॥ पूर्णचन्द्रलसद्वक्त्रं रत्नकुण्डलमण्डितम् ॥ गण्डमण्डलसंशोभं सुघोषं सस्मिताननम् ॥ पीतवस्त्रधरं चारुमुक्ताहारविभूषितम् ॥८५०॥ काञ्चीकटककेयूरमुद्रिकानूपुरादिभिः ॥ अलंकृतशरीरं तं पिशङ्गाम्बरसंवृतम् ॥ ८५१ ॥ मुक्तामाणिक्यसञ्छन्नवनमालाद्भुतांशुकम् ॥ कामबाणप्रविद्धाङ्गं वेणुवादनतत्परम् ॥ ॥ ८५२ ॥ ह्रस्वं विचित्रितं वेषं वामे शंखं सुवेत्रकम् ॥ अभिरामतरं दक्षं रत्नश्रेष्ठमभीष्टकम् ॥ ८५३ ॥ ध्यात्वैवं विधिना देवं पूजयेदिष्टसिद्धये ॥ दामाद्यैरङ्गकैश्चापि महिषीभिश्च तत्परम् ॥ ८५४ ॥ वसुदेवादिभिः पश्चात्कल्पवृक्षैरनन्तरम् ॥ इन्द्राद्यैश्च तदस्त्रैश्च सप्तावरणसंयुतम्॥८५५॥अर्चयित्वा तु गोविन्दं विधिवत्साधकोत्तमः ॥ नैवेद्यं काञ्चने पात्रे पूर्वोक्तं च निवेदयेत् ॥ ८५६ ॥ अष्टाधिकशतं पश्चाद्धनेत्साधु पयोन्धसा ॥ शर्कराघृतयक्तेन बालिं पश्चात्प्रकल्पयेत् ॥ ८५७ ॥ देवर्षियोगिदेवेभ्य उपदेवेभ्य आदरात् ॥ देवाग्रभागमारभ्य सव्यमार्गाद्बलिर्मतः ॥ ८५८ ॥ स्वस्वदिक्क्रमतो विद्वान्भक्तियुक्तः प्रसन्नधीः ॥ नवनीतहविर्बुद्ध्या तोयैः सन्तर्प्पयेन्मुखे ॥ सहस्रं शतमानं वा साष्टकं पूजयेज्जपन् ॥ ८५९ ॥ मध्याह्ने कृष्णमेवं यः पूजयेद्भक्तितत्परः ॥ गीर्वाणवृन्दवन्द्योसौ सम्मतः सर्वजन्तुषु ॥ ८६० ॥ आयुर्बुद्ध्यादिश्रीकान्तिसुभगत्वादिसंयुतः ॥ सत्सन्ततिसुहृद्वर्गपशुक्षेत्रधनादिभिः ॥ सर्वैश्वर्य्यसमेतोत्र सुखं भुक्त्वा हरिं व्रजेत् ॥ ८६१ ॥ अपराह्णार्चनं सन्ध्यापर्यन्तं मनुनामुना ॥ दशाक्षरेण मनुना रात्रौ पूजनमाचरेत् ॥ ८६२ ॥ सन्ध्यायां द्वारकामध्ये रम्ये रामाश्रये शुभे ॥ गृहैः षोडशसाहस्रैः सर्वतः परिवेष्टिते ॥ ८६३ ॥ पद्मेन्दीवरकल्हारसंस्तृतैः सुजलाशयैः ॥ हंसादिपक्षिभिर्व्याप्तैः संवृताद्भुतमन्दिरे ॥८६४॥ उद्यदादित्यसङ्काशे चित्रिताद्भुतमण्डपे॥ कोमलास्तरणे दिव्यस्वर्णपंकजमण्डिते ॥ ८६५ ॥ सूपविष्टं परात्मानं कृष्णं ध्यायेत्समाहितः ॥ नारदादिमुनिश्रेष्ठैः संवृतं मोक्षकांक्षिभिः ॥ ८६६ ॥ अद्वैतार्थविचारेण मुनिवर्य्येभ्य एव च ॥ अग्निरूपं परं तेजो दिशन्तं मन्त्रगौ-

रवात् ॥ ८६७ ॥ नीलेन्दीवरसंकाशं शान्तमूर्तिं गुणालयम् ॥ सरोजदलसंकाशनेत्रं मकरकुण्डलम् ॥ ८६८ ॥ स्निग्धालकाग्रसम्बद्धमुकुटाङ्कितमस्तकम् ॥ अत्यन्तमधुराकारं प्रसन्नमुखपंकजम् ॥ ८६९ ॥ श्रीवत्सवक्षसं दिव्यवनमालाविभूषितम् ॥ दूरीकृतधराभारं प्रसन्नहृदयं विभुम् ॥ ८७० ॥ शंखचक्रगदापद्मधारिणं तु चतुर्भुजम् ॥ इत्थं सञ्चिन्त्य देवेशं गोविन्दं सम्यगर्चयेत् ॥८७१॥ अष्टप्रियाभिरङ्गैश्च तृतीये गरुडं पुरः॥ पर्वतं विष्णुनिशठं वृद्धवृन्दारकं तथा ॥ ८७२ ॥ विष्वक्सेनं च शैनेयं[1] प्रादक्षिण्येन पूजयेत् ॥ लोकपालांस्तदस्त्राणि पञ्चमावरणार्चनम् ॥८७३॥ नैवेद्यं पायसं दत्वा सम्यक् पूजावसानकम् ॥ खण्डाक्तक्षीरसद्बुद्ध्या नीरैः कृष्णं तु तर्पयेत् ॥८७४॥ अष्टोत्तरशतं पश्चाज्जपेत्तावद्विचिन्तयन् ॥ सर्वार्चासु हुनेन्मन्त्री मध्याह्ने तु यथाविधि ॥ ८७५ ॥ अवसानार्घ्यविध्यन्तं विधाय स्तुतिमाचरेत् ॥ नत्वा निवेद्य चात्मानं विष्णुं तु स्वहृदि स्वयम्॥ न्यस्येद्देवमयो भूत्वा स्वात्मानं पूजयेत्ततः॥८७६॥सन्ध्याकाले हरिं त्वेवं प्रत्यहं योर्चयेन्नरः॥इह भोगान्बहून्भुक्त्वा व्रजेच्चान्ते स सद्गतिम् ॥ ८७७ ॥ नन्दात्मजं यजेद्रात्रौ कामाकुलितचेतसम् ॥ रासक्रीडासमाक्रान्तं वल्लवीचक्रवेष्टितम् ॥ ८७८ ॥ स्थलपंकजपुष्पाणां दिव्यरेणुयुतेन च ॥ रिङ्गत्तरङ्गबिन्दूनां सम्पृक्ताग्र्येण वायुना ॥ कालिन्दीसैकते शुभ्रे शीतले तापहारिणि ॥ ८७९ ॥ कामबाणप्रविद्धाङ्गदिव्यस्त्रीकोटिकादिभिः॥ सेविते चन्द्रकिरणसमुद्द्योतितदिङ्मुखे॥चलद्भृङ्गाङ्गनाशब्दवाचालितदिगन्तरे ॥ ८८० ॥ सिद्धगन्धर्वदेवौघयक्षकिन्नरपन्नगैः ॥ विद्याधरैः सपत्नीकैर्विमानेषु कृतासनैः ॥ आकाशे सञ्चरद्भिस्तैः पुष्पवृष्टिकृताद्भुते ॥ ८८१ ॥ रासक्रीडाविधौ रत्नशंकुगं परमेश्वरम् ॥ एतद्देहसमाक्लृप्तदिव्यानेककलेवरम् ॥ नारीणा युग्मयोर्देवं प्रत्येकं चान्तरागतम् ॥ ८८२॥ तत्तत्कण्ठसमालम्बिबाहुद्वयविराजितम् ॥ आत्मसम्बन्धसञ्जातकामानलसुदीपितम् ॥ रोमोद्गमसमाक्रान्तनागवल्लीतरुं मुहुः ॥ ८८३ ॥ नानामुनिगणैर्मिश्रं मधुरस्वरसंयुतम् ॥ सुवर्णरचितैर्दिव्यैर्महामणिपरिष्कृतैः ॥ कृतचारु-

---

1 सात्यकिम् ॥

स्वनैः सर्वालंकारैर्हृदयंगमम् ॥ ८८४ ॥ इत्थं पृथक्छरीरं तं संयुतं मणिभिर्यथा ॥ हिरण्यरचितं सम्यक्सरो मरकतावृतम् ॥ मणिशङ्खौ सुविस्तीर्णे रक्तपद्मगतं प्रभुम् ॥ ८८५ ॥ अतसीपुष्पसङ्काशं यौवनश्रीसमन्वितम् ॥ तदानीं ॰कफुल्लारविन्दच्छदविलोचनम् ॥ ८८६ ॥ भूषणैर्विविधैश्चारुपल्लवानेकगुच्छकैः ॥ शितिकण्ठशिखण्डैश्च बद्धमूर्द्धजसञ्चयम् ॥ ८८७ ॥ पूर्णिमाचन्द्रसङ्काशसुन्दराननपङ्कजम् ॥ रत्नकुण्डलसंशोभिगण्डमण्डलमण्डितम्॥ ८८८ ॥ पक्वबिम्बफलाकाररक्ताधरविराजितम् ॥ नानारत्नसमाकृतसंभूषणसुभूषितम् ॥ ८८९ ॥ स्वर्णवर्णलसद्वस्त्रं विद्रुमश्रीगृहं परम् ॥ नवप्रवालरुचिरहस्तपादतलं विभुम् ॥८९०॥भ्रमरालीलसत्पुष्पमालिकावृतपद्द्वयम्॥ अङ्गनाकुचसंश्लेषलग्नकुंकुमवक्षसम्॥८९१॥महोक्षांसनिभस्कन्धं वंशवादनतत्परम्॥ अनङ्गबाणसंविद्धं सर्वलोकैकसद्गतिम् ॥इत्थं ध्यात्वा यजेत्पीठे चाङ्गावरणसंयुतम् ॥८९२॥ श्रींक्लींपूर्वाः केशवाद्याः सबिन्दुस्वरसंयुताः ॥ मातृकास्तु न्यसेत्पूर्वं ततः पूजनमाचरेत् ॥ इन्द्राद्या भूपुरे पूज्या वज्रादीन्यायुधान्यपि ॥८९३॥ ततः सुक्वथितं दुग्धं सितोपलसमन्वितम् ॥ राजते भाजने सम्यक्संस्कृत्य विनिवेदयेत् ॥ ८९४ ॥ कांस्यपात्रेषु नैवेद्यं स्वरसंख्येषु कल्पयेत् ॥ प्रत्येकं मिथुनेभ्यश्चान्यत्सर्वं पूर्ववन्मतम् ॥ ८९५ ॥ रात्रावेवं भोजयेद्वै सर्वकामवशंकरः ॥ इन्दिरामन्दिरो भूत्वा सर्वाराध्यः सुभुक्तिमान् ॥ ॥ ८९६ ॥ रात्रौ सन्ध्यासु यश्चैवं प्रत्यहं तु प्रपूजयेत्॥ तुल्यं फलं स चाप्नोति भवाब्धेः पारगो भवेत् ॥ ८९७॥ अर्चान्तरे देवकस्य तर्प्पणानां विधिम्ब्रुवे ॥ पुरोक्तानां च काम्यानां साधकेषु फलप्रदम् ॥ ८९८ ॥ पूजनव्यतिरेकेपि तत्फलं लभ्यते बुधैः ॥ पीठाद्रिस्तर्प्पणादौ तु कृत्वा मूलेन चैकशः॥ ॥ ८९९ ॥ तत्रावाह्य यजेद्देवं जलेचैवोपचारकैः ॥ धेनुमुद्रां प्रदर्श्यात्र स्मृत्वा तर्प्पणसाधकम् ॥ ९०० ॥तद्धिया जलमादाय स्वर्णपात्रे कृतेन तु॥ सम्यगञ्जलिना देवं तर्पयेन्मूलमुच्चरेत् ॥९०१॥ त्रिकालं तर्पयेन्नित्यमष्टाविंशतिसंख्यया ॥ तत्तत्कालोचितान्पश्चात्तर्पयेत्परिवारकान्॥९०२॥एकैकवारं मन्त्रज्ञो मूलेनापि प्रतर्पयेत् ॥ गुडयुक्तं दधि प्रातर्नवनीतयुतं हरेः ॥९०३॥

अह्नो मध्ये समाख्यातं सन्ध्यायां दुग्धमुत्तमम् ॥ सितोपलविमिश्रं तु तर्पणद्रव्यमीरितम् ॥ ९०४ ॥ बाह्येत्र पूर्ववद्विद्यादन्यत्सर्वं यथा भवेत् ॥ तत्प्रसादजलैः सिञ्चेदात्मानमिह मन्त्रवित् ॥ ९०५ ॥ मूलमन्त्राभिजपितं जलं मन्त्री पिबेत्ततः ॥ हारिमुद्रास्य मन्त्रज्ञो जपेन्मन्त्रन्तु तन्मयः ॥ ॥ ९०६ ॥ काम्यतर्पणवस्तूनि ततो वक्ष्यामि यानि तु ॥ भजेदुक्तप्रकारेषु समालभ्यैकमेव तु ॥९०७॥ सकृज्जलेन सन्तर्प्य दुग्धैर्वारचतुष्टयम्॥ पश्चात्षोडशभिर्द्रव्यैः प्रत्येकं च चतुष्टयम् ॥ ९०८ ॥ पायसं दधि भक्तं च तिलास्तण्डुलकास्तथा ॥ गुडो भक्तं च दुग्धं च दध्यथो नवनीतकम् ॥ ९०९॥ घृतं च कदलं मोचामलकं मधुवल्लभा॥ मृद्वी मोदकपूर्पश्च पृथुकाश्चैव लाजकाः ॥ ९१० ॥ द्रव्याणि षोडशैतानि मूलमन्त्रेण तर्पयेत् ॥ प्रातरेवं तर्पयेद्यः सायं वा सतसंख्यया॥ ९११ ॥ कृष्णं प्रतिदिनं विद्वाञ्छुद्धबुद्धिश्च तत्परः॥ तस्य मण्डलमात्रेण वाञ्छितं भवति ध्रुवम् ॥ ९१२ ॥ अथान्यत्तत्फलं वक्ष्ये पूर्ववत्तत्फलप्रदम् ॥ धारोष्णं क्वथितं दुग्धं दधि दध्युदकं पुनः॥९१३॥ सर्पिस्तथा पायसं च तक्रं त्रिक्षौद्रमेव च॥ पञ्चामृतं नवैतानि प्रत्येकं शतमष्ट च ॥ ९१४ ॥ तर्पयेल्लोकमान्योसौ यशस्वी च प्रजायते ॥ खण्डमिश्रितधारोष्ण दुग्धबुद्ध्या जलैः शुभैः ॥ ९१५ ॥ कृष्णं सन्तर्प्य गच्छेद्यो ग्रामं वा नगरं तथा ॥ स तु नानारसोपेतं भक्ष्यं भोज्यं च विन्दति ॥ ९१६ ॥ तर्पणं यावदाख्यातं जपस्तावानिह स्मृतः॥ इह सन्तर्पणादेव फलमाप्नोति वाञ्छितम् ॥ ९१७ ॥ भिक्षुको ब्राह्मणो नित्यं स्वयं गोविन्दरूपधृक् ॥ भत्वा नानाविधैर्भावैरभिरामैर्मुहुर्मुहुः ॥९१८॥ मनोभिः सह गोपीनां दधिदुग्धघृतादिकम्॥ बलाद् गृह्णन्ददद्भिक्षामायाति महतीं तुलाम् ॥ ९१९ ॥ गोपीहस्तसरोजानि धृत्वा नृत्यन्तमञ्जसा ॥ कृष्णं सञ्चिन्त्य मन्त्रज्ञो जपेदष्टादशाक्षरम् ॥ ९२० ॥ लाजैर्मधुप्लुतैर्वापि चूर्णैर्लाजसमुद्भवैः॥ हुत्वायुतं जपेत्तावत्कन्यामिष्टां लभेत सः ॥ ९२१ ॥ अष्टादशाणमन्त्रेण पलाशसमिधोयुतम् ॥ मधुप्लुतकुशैर्वापि हुनेद्वा तिलतण्डुलैः ॥ ९२२ ॥ वशीभवन्ति भपाला दत्त्वा सर्वस्वमादरात् ॥ एवमष्टादशार्णस्य प्रयोगः कथितो मया ॥ ९२३ ॥अथातः

सम्प्रवक्ष्यामि सप्तमेयं जनार्दनः॥प्रत्यक्षो जायते मन्त्रः क्लीं कृष्णाय नमस्त्विति ॥ १२४ ॥ मुनिः कामोस्य गायत्रं छन्दः कृष्णोस्य देवता ॥ षड्दीर्घा-न्वितबीजेन षडङ्गानि च पूजनम् ॥ १२५ ॥ प्राग्वज्जपेद्वर्णलक्षं तर्पणं चात्र पूर्ववत् ॥ सम्पत्प्रदो विशेषेण मन्त्रोयं परिकीर्त्तितः ॥ १२६ ॥अथातः सम्प्रवक्ष्यामि जातो यश्चाष्टमे कलौ ॥ एकावतारे सम्पूर्णे सूक्ष्मरूपी जनार्दनः ॥१२७॥ हिमाचले वरे तीर्थे समाधिं स समाश्रयेत् ॥ पुनश्च कलिधर्माणा वृत्त्यर्थं च जनार्दनः ॥ १२८ ॥ काञ्चिद्देषं समापद्य प्रकटो जायते भुवि ॥ भक्तेभ्यश्चाभयं दत्त्वा मोहयित्वा च दुष्कृतान् ॥ १२९ ॥ पाखण्डमार्गं प्रकटं किञ्चित्सिद्धिसमन्वितम् ॥ दर्शयित्वा च मर्त्यानां पुनस्तत्रैव यात्यसौ ॥ १३० ॥ एकादशाक्षरो मन्त्रो मायाश्रीबीजपूर्वकः॥ स्याद्योष्टमे कलियुगे सर्वसिद्धिविधायकः ॥ १३१ ॥ मुन्यादिकं जपो न्यासो ध्यानं होमश्च तर्पणम् ॥ वक्ष्यमाणस्य कृष्णस्य द्वादशार्णमनोः समम् ॥ १३२ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि यो जातो नवमे विभुः॥क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय मन्त्रोस्याष्टाक्षरो मतः॥१३३॥ प्राग्वन्मुन्यादिकं ध्यानं चानुलोमविलोमकैः ॥ पादैः कराङ्ग-न्यासस्तु प्रयोगाद्यं च पूर्ववत् ॥ १३४ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि दशमे देवकीसुतः ॥ जातः कृष्णस्तस्य मनुरों नमो ङेन्तकृष्णकः ॥ १३५ ॥ देवकीपुत्राय हुंफट्स्वाहा षोडशवर्णकः॥ नारदोस्य मुनिश्छन्दोनुष्टुप् कृष्णस्तु देवता ॥ १३६ ॥ तारांद्यैः षट्पदैश्चास्य षडङ्गविधिरुच्यते ॥ वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रमन्यत्प्रोक्तं दशार्णवत् ॥ १३७ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि जातमे-कादशे कलौ ॥ स्वयमेव मुनिर्जातः स्वगायत्र्युपदेशतः ॥ १३८ ॥ उद्धृता बहवो लोकाः सगर्वा भ्रंशिता द्विजाः ॥ शूद्रोपि राज्यं सम्प्राप्य गायत्रीं सम्य-गभ्यसेत् ॥ १३९ ॥ स शूद्रः क्षत्रियो ज्ञेयः संग्रामे जायते जयः ॥ तस्य

---

१ क्लींमितिबीजेन षडङ्गन्यासः यथा—क्लीं हृदयाय नमः क्लीं शिरसे स्वाहेत्यादि ॥ २ ॐ नमः कृष्णाय देवकीपुत्राय हुं फट् स्वाहा ॥ ३ ओं नमः हृदयाय नमः । ओंकृष्णाय शिरसे स्वाहा । ओंदेवकीपुत्राय शिखायै वषट् । ओं हुं कवचाय हुम् । ॐ फट् नेत्रत्रयाय वौषट् । ओं स्वाहा अस्त्राय फट् ॥

वंशे स्थिरं राज्यं मृतो विष्णुपदं व्रजेत् ॥ ९४० ॥ दामोदराय विद्महे वासुदेवाय धीमहि ॥ तन्नः कृष्णः प्रचोदयात॥ ९४१ ॥गायत्रं छन्द उद्दिष्टं श्रीकृष्णो देवता स्मृतः ॥ पञ्चत्रिपञ्चरामाब्धिवेदवर्णैः षडङ्गकम् ॥ ९४२ ॥ गायत्रीवत्पुरश्चर्या न्यासमुद्रादिदर्शनम् ॥ ध्यानपूजादिकं सर्वं ज्ञेयं कृष्णदशार्णवत् ॥ प्रयोगांश्चात्र गायत्र्यास्तथा कुर्य्यान्न संशयः ॥९४३ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि यो जातो द्वादशे कलौ ॥ नन्दगोपकुमाराख्यः प्रकटोभूज्जनार्दनः ॥९४४ ॥ ग्लौंक्लीं नमो भगवते नन्दपुत्राय बालक ॥ रूपाय च बलायेति गोपीजनपदं वदेत् ॥ ९४५ ॥ वह्निभायाग्निजायान्तो मन्त्रोयं रदवर्णकः ॥ षड्दीर्घाढ्याद्यबीजेन षडङ्गविधिरीरितः ॥ ९४६ ॥ ध्यानपूजादिकं सर्वं दशार्णवदुदीरितम् ॥ अष्टादशार्णमन्त्रस्य प्रयोगानाचरेत्तथा ॥ ९४७ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि तं यो जातस्त्रयोदशे ॥ गोपानां मध्यतो गोपश्चमत्कारप्रदर्शकः ॥ ९४८ ॥ योगिश्वरास्तु जानन्वः प्रशंसन्ति महर्षयः॥ गोपीभिश्च तदा गोपैः स पृष्टश्च जनार्दनः ॥ केनेदृशी तु भवता सिद्धिर्लब्धा तु तद्वद ॥ ९४९ ॥ यदा गोपाङ्गना भूत्वा ब्रह्मज्ञा मुनयोपि च ॥ त्वामेव प्रणमन्तिस्म क्रीडन्नारीशतैस्तदा ॥ ९५० ॥ सर्वास्स्खलन्ति तास्त्वन्तु वीर्यं नैव प्रमुञ्चसि ॥ कामार्त्तः कथ्यते नातः सर्वज्ञस्त्वं कथं पुनः ॥ ९५१ ॥ वयं निष्कपटा भक्ताः सत्यमेतत्तदा वद ॥ एवमुक्तो हरिस्तत्र स्वमलब्धं मनुं जगौ ॥ ९५२ ॥ तेह्लुकीदेवदेवीततवेदेवरतोरतः ॥ तरतो रूढतो ख्यातो न ख्यातो देवकीसुतः ॥ ९५३ ॥ जप्तव्यः सिद्धमन्त्रोयमेकान्ते निर्जने वने ॥ वर्णलक्षजपेन प्राग्जन्मपापं विनश्यति॥ ९५४ ॥ ततो लक्षत्रयजपाद्भूतप्रेतपिशाचकाः॥ सर्वे प्रत्यक्षतां यान्ति साधकानां तु मन्त्रिणाम् ॥ ९५५ ॥ लक्षद्वादशजापेन दृश्यन्ते यमकिंकराः ॥ लोकानां वशमायान्ति तत्स्मृतं कथयन्ति च ॥९५६॥ जप्त्वा षोडशलक्षाणि शक्राद्याः प्रकटाः सुराः ॥ योगिनो योगिनीसंघो ब्रह्मविष्ण्वादिदर्शनम् ॥ ९५७ ॥ द्वात्रिंशत्प्रमिते जप्ते मत्समो नात्र संशयः॥प्राप्यते चन्द्रदेवेन श्रीकृष्णस्य सरूपताम् ॥९५८॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि यो जातस्तु चतुर्दशे ॥ सिद्धा यज्ज-

पमात्रेण पुरानेके महर्षयः ॥९५९॥ क्षीरगोपपगोरक्षी रक्षमाक्षक्षमाक्षर ॥ गो मानो गगनो मा गो यक्षगत्यत्यगक्षय ॥ ९६० ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि कलौ पञ्चदशे तु यः ॥ निवसन्कुन्दकुंजेषु मुकुन्दो यः प्रकीर्तितः ॥ ॥ ९६१ ॥ श्रीमन्मुकुन्दचरणौ सदा शरणमित्यपि ॥ अहं प्रपद्ये मन्त्रोयं प्रोक्तश्चाष्टादशाक्षरः ॥ ९६२ ॥ नारदोस्य मुनिश्छन्दो गायत्रं देवता भवेत् ॥ मुकुन्द आचक्रायेत्यादिकैः पञ्चाङ्गमीरितम् ॥ दशार्णवत्पूजनं स्यादङ्गेन्द्रादि तदायुधैः ॥ ९६३ ॥ चतुर्लक्षं जपेन्मन्त्रं तद्दशांशं च होमयेत ॥ पलाशपुष्पैस्तच्चूर्णैस्तर्प्पणादि ततश्चरेत् ॥ ९६४ ॥ मन्त्रेणानेन जपितमष्टोत्तरशतं जलम् ॥ दिनादावन्वहं पीत्वा मासमात्रं प्रसन्नधीः ॥ सद्यः श्रुतिधरो मन्त्री जायते वेदपारगः ॥ ९६५ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि षोडशे बालकृष्णकम् ॥ ध्रुवो नमो भगवते बालकृष्णाय हुं तथा ॥ फडन्तोयं महामन्त्रः षोडशाक्षर उच्यते ॥९६६॥ अस्य षोडशवर्णस्य मुनिः स्यान्नलकूबरः ॥ छन्दो गायत्रमुद्दिष्टं बालकृष्णस्तु देवता ॥ ॥ ९६७ ॥ पञ्चाङ्गानि तु युक्तानि ध्यानं पूर्वोदितं भवेत् ॥ पूजा चाङ्गस्ववर्गाद्यैः पुरश्चर्यादि पूर्ववत् ॥ ९६८ ॥ अथ सप्तदशे जातं कृष्णं वच्म्यन्नदायकम् ॥ अन्नरूप रसरूप तुष्टिरूप नमोनमः ॥ ९६९ ॥ अन्नाधिपतयेऽन्नं च तथा नह्यं समुच्चरेत् ॥ प्रयच्छाग्निवधूर्मन्त्रास्त्रिंशद्वर्णोन्नदायकः ॥ ॥ ९७० ॥ नारदो मुनिरस्य स्याच्छन्दोनुष्टुबुदाहृतम् ॥ अन्नाधिपतिकृष्णोस्य देवता परिकीर्त्तितः ॥ ९७१ ॥ पञ्चाङ्गन्यासपूजादि सर्वं ज्ञेयं दशार्णवत् ॥ अन्नदो जायते मन्त्री मन्त्रमेतं सदा जपेत् ॥ ९७२ ॥ अथ चाष्टादशे जातवासुदेवमनुं ब्रुवे ॥ तारो नमो भगवते वासुदेवाय हुं च फट् ॥ ॥ ९७३ ॥ स्वाहा षोडशवर्णोयं गायत्रं छन्द ईरितम् ॥ मुनिर्ब्रह्मा ग्रहव्राख्यो देवता देवकीसुतः ॥ ९७४ ॥ दशार्णवच्च पञ्चाङ्गं वर्णलक्षं जपेन्मनुम् ॥ अर्चनाङ्गैर्लोकपालैर्ग्रहाद्यैश्च समीरिता ॥ ९७५ ॥ सर्वग्रहभये घोरे भूतप्रेतादिसंकुले ॥ राजद्वारे रणे द्यूते जप्तव्योयं मनूत्तमः॥ अथातः सम्प्रक्ष्यामि ऊनविंशे मनुं परम् ॥ ९७६ ॥ तारो नमो भगवते वासुदेवाय संवदेत् ॥

पुरुषोत्तम आयुर्मे देहीत्युक्त्वा च विष्णवे॥९७७॥प्रभविष्णव इत्युक्त्वा नमोन्तास्त्रिंशदर्णकः ॥ ९७८ ॥ मुन्याद्या नारदोनुष्टुप् श्रीकृष्णः परिकीर्तितः ॥ पञ्चाङ्गं द्वादशान्ते हि हृदानन्दात्मने तु हृत् ॥ ९७९ ॥ पुरुषोत्तमप्रीत्यात्मने हृदन्तं तु शिरः स्मृतम् ॥ द्वादशार्णान्त आयुर्मे देहि स्याज्ज्योतिरात्मने ॥ ९८० ॥ शिखाथ द्वादशार्णान्ते विष्णवे प्रभविष्णवे ॥ मायात्मने च कवचं द्वादशार्णं ततो वदेत् ॥ नमश्चिदात्मने नेत्रं पञ्चाङ्गविधिरीरितः ॥ ९८१ ॥ अङ्गलोकेशवज्राद्यैरर्चयित्वा जपेन्मनुम् ॥ लक्षमेकं दशांशेन जुहुयात्पायसैः शुभैः ॥ ९८२ ॥ दुग्धादिसम्प्लुतैर्दूर्वात्रितयैरेधितेनले ॥ जुहुयाद्दीर्घशालित्वं लभते नात्र संशयः ॥ प्राग्वद्द्वशार्णमन्त्रोक्ताङ्गन्यासं तु समाचरेत् ॥ ९८३ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि विंशेकलियुगे मनुम् ॥ बालवपुषे स्वाहेति सप्तार्णोयं मनुर्मतः ॥ ९८४ ॥ अस्यैकर्णेन पञ्चाङ्गं षष्ठं द्व्यर्णेन कीर्त्तितम् ॥ मुन्याद्यं ध्यानपूजादि सर्वं स्याद्बालकृष्णवत् ॥ ९८५ ॥ सप्तलक्षं जपेन्मन्त्रं जुहुयान्नवनीतकम् ॥ बालानां भयनाशार्थं रक्षार्थं च ततो जपेत् ॥ ९८६ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि त्वेकविंशकलौ मनुम् ॥ गोपालकपदं ब्रूयात्ततो वेदधराय च ॥ ॥ ९८७ ॥ वासुदेवाय हुं फट् च स्वाहान्तोष्टादशाक्षरः ॥ नारदोस्य मुनिश्छन्दो गायत्रं कृष्णदेवता ॥ ९८८ ॥ आचक्रादिभिरङ्गानि पूजा पूर्वोक्तवर्त्मना ॥ ग्रहगोपालरक्षादौ प्रशस्तः शान्तिकेपि च ॥ ९८९ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि द्वाविंशे तु कलौ मनुम् ॥ यः कालियफणामध्ये दिव्यं नृत्यं करोति तम् ॥ ९९० ॥ नमामि देवकीपुत्रं नृत्यराजानमद्भुतम् ॥ मुनिर्नारद आख्यातश्छन्दोनुष्टुबुदीरितम् ॥ कालीयमर्दनः कृष्णो देवता परिकीर्तितः ॥९९१॥ चतुष्पादैश्च सर्वेण पञ्चांगविधिरीरितः ॥ अङ्गैरिन्द्रादिभिः पश्चाद्वज्राद्यैरर्चयेच्च तम् ॥ ९९२ ॥ एकलक्षं जपित्वाग्नौ जुहुयादयुतं घृतैः ॥ विषनाशकरा योगाः कर्तव्या मनुनामुना ॥९९३॥ एतन्मन्त्रप्रयोगेण त्रस्यन्त्यथ महोरगाः ॥ एतन्मन्त्रसमो लोके विषघ्नो नैव विद्यते ॥ ९९४ ॥

---

१ समासान्तविधेरनित्यत्वान्न टच् ॥

शुष्कवृक्षस्य पञ्चाङ्गैर्गोमूत्रेण सुवेष्टितैः ॥ निर्मिता गुटिका सम्यङ्मन्त्रेणानेन मन्त्रिता ॥ नेत्रे चाञ्जनमात्रेण सैषा विषविनाशिनी ॥ ९९५ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि त्रयोविंशकलौ मनुम् ॥ श्रीमायाकामबीजानि ङेन्तं कृष्णमुदीरयेत् ॥ ९९६ ॥ ङेयुतं चापि गोविन्दं स्वाहान्तो द्वादशाक्षरः ॥ मुनिर्ब्रह्मा च गायत्रं छन्दः कृष्णोस्य देवता ॥ भूभूभूरामवेदाक्षिमन्त्रार्णैरङ्गकल्पनम् ॥ ९९७ ॥ कोटिभास्करसङ्काशे द्वारकायां गृहोत्तमे ॥ बहुभिः कल्पतरुभिर्वेष्टिते रत्नमण्डपे ॥ ९९८ ॥ विलसन्मणिवर्यौघचित्रितस्वर्णभित्तिके ॥ विकसत्पुष्पमालाभिः सहितेऽनङ्गमौक्तिकैः ॥ पुष्परागधराशोभिरत्नविद्योतितान्तरे ॥ ९९९ ॥ निरन्तरतरद्रत्नसुधाधाराभिवर्षिणः ॥ अधो वै कल्पवृक्षस्य शाखाव्याप्तस्य पत्रिणः ॥ १००० ॥ फलरत्नप्रदीपालीसमुद्योतितादिङ्मुखे ॥ तद्योगे रविबिम्बाभरत्नसिंहासनाम्बुजे॥ १००१ ॥ सूपविष्टं रमाकान्तं द्रुतस्वर्णनिभं स्मरेत् ॥ समेघरविचन्द्रोद्यद्विद्युत्कोटिनिभच्छविम् ॥ १००२ ॥ हृद्यङ्गं सर्वतः सौम्यं नानालङ्कारमण्डितम् ॥ अरिशंखगदापद्मधारिणं पीतवाससम् ॥ १००३ ॥ स्पृशन्तं कलशं द्योतन्मणिधारमहर्निशम् ॥ रुक्मिणीसत्यभामे द्वे दक्षे वामे स्थिते प्रभोः ॥ १००४ ॥ कालिन्दी मित्रविन्दा च सत्या जाम्बवती तथा ॥ सुशीला लक्ष्मणा चेति समावृत्य स्त्रियः स्थिताः ॥ १००५ ॥ ततः षोडशसाहस्रमिता नार्यः समन्ततः ॥ स्मर्तव्याः स्वर्णरत्नादिधरा दुग्धलसत्कराः ॥ १००६ ॥ यजेदष्टनिधींस्तासां धनान्यावर्षतो बहिः ॥ ततोग्रे दिक्पतीन्देवान्पूजयेदपि पूर्ववत् ॥ १००७ ॥ पूर्वं सञ्चिन्त्य देवेशं ततः पूजां समाचरेत् ॥ पूर्वोदितप्रकारेण पीठन्यासावसानकम् ॥ १००८ ॥ कर्म निर्वर्त्य मन्त्रज्ञो मूलमन्त्रेण मन्त्रवित् ॥ प्राणायामत्रयं कृत्वा ऋष्यादिन्यासमाचरेत् ॥ १००९ ॥ करांगुलीषु करयोः षडङ्गन्यासमाचरेत् ॥ व्यापकं मूलमन्त्रेण विन्यस्य च करात्पुनः ॥ १०१० ॥ पुनः षडङ्गं विन्यस्य देहे देशिकसत्तमः ॥ पुटितं मूलमन्त्रेण मातृकावत्प्रविन्यसेत्॥ १०११ ॥मूलेन व्यापकं कृत्वा मन्त्रवर्ण

१ श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय स्वाहा ॥

ततो न्यसेत्॥मूर्तिपञ्जरकस्थाने मूर्तिपञ्जरमाचरेत्॥ १०१२॥ देवस्य बाह्यपूजार्थं चोच्यते यन्त्रमुत्तमम् ॥ गोमयेनोपलिप्तायां भूमौ पीठं प्रविन्यसेत् ॥ ॥ १०१३ ॥ अष्टगन्धादिकेनैव षट्कोणं यन्त्रमुद्धरेत् ॥ कामबीजं कर्णिकायां ससाध्यं सुलिखेत्ततः ॥ १०१४ ॥ क्लींह्रीमष्टादशार्णेन तत्त्वं सम्यक्च वेष्टयेत् ॥ शक्रराक्षसवायूनां कोणे श्रीबीजमालिखेत् ॥ १०१५ ॥ अन्त्येष्वग्न्यादिकोणेषु मायाबीजं प्रकल्पयेत् ॥ कोणसन्धिषु षड्वर्णमन्त्रस्यैकैकमक्षरम् ॥ १०१६ ॥ बहिरष्टदलं पद्मं केशरेषु त्रिशस्त्रिशः ॥ १०१७ ॥ सुलिखेत्कामतः पश्चाद्वर्णानथ दलेषु च ॥ १०१८ ॥ क्रमोत्क्रमाभ्यां मन्त्रस्य कामदेवस्य वर्णितान् ॥ लिखेद्वर्णान्धृतिदले बहिर्वृत्तद्वयं लिखेत् ॥ ॥ १०१९ ॥ तद्वीथ्यां मातृकावर्णैर्बिंदुयुक्तैश्च वेष्टयेत् ॥ धरापुरे चतुर्दिक्षु रमां मायां च कोणगाम् ॥१०२०॥ संलिख्यैवं महावश्यं पत्रे स्वर्णादिजे बुधः ॥ सम्यक्संपूज्य प्रजपेद्धृतं च मनुजोत्तमैः ॥ १०२१ ॥ करोमि लोकपूज्यं तं राजवश्यं च सर्वदा ॥ १०२२ ॥ अस्मिन्यन्त्रे पीठपूजां कृत्वा पूर्वोक्तवर्त्मना ॥ तत्र मूर्त्तिं प्रकल्प्यास्यां कृष्णमावाह्य पूजयेत् ॥ ॥ १०२३ ॥ आसनप्रमुखैर्मन्त्री भोज्यान्तैरुपचारकैः ॥ चतुर्थेऽङ्गाद्य मूलान्तं भूषणादि प्रपूजयेत् ॥ १०२४ ॥ किरीटाय नमः शीर्षे कुण्डलाभ्यां च कर्णयोः ॥ दक्षोर्ध्वहस्ते चक्राय वामोर्ध्वे कम्बवे नमः ॥ ॥ १०२५ ॥ गदां वामाधःकरतले दक्षे पद्माय वै नमः ॥ स्कन्धादिपादपर्यन्तं नाभ्यन्तोपरि मालिकाम् ॥ १०२६ ॥ वक्षःस्थले श्रीवत्साय कौस्तुभाय गले नमः ॥ षट्सु पूर्वादिकोणेषु षडङ्गानि समर्चयेत् ॥ ॥ १०२७ ॥ वासुदेवादिका मूर्त्तीः कोणकेशरगा यजेत् ॥ शान्तिं श्रियं भारतीं च रतिं दिग्दलकेशरे ॥ १०२८ ॥ ततः पूर्वादिपत्रेषु रुक्मिणीप्रमुखा यजेत् ॥ दक्षवामक्रमात्पश्चाद्देवदेवं समर्चयेत् ॥ १०२९ ॥ षोडशस्त्रीसहस्राणि देवदेवस्य शार्ङ्गिणः ॥ दलाग्रस्थास्ततः पूज्याः पूजनीयाः क्रमादमी ॥ १०३० ॥ इन्द्रनीलौ च कुमुदो मकरोऽनङ्गकच्छपौ ॥

१ पट्टे स्वर्णेचेति वा पा० ॥ २ पूजनीयाः क्रमादमीत्येतेषामुत्तरत्र सम्बन्धः ॥

शङ्खपद्मौ च तद्वाह्ये लोकेशानायुधान्यपि ॥ १०३१ ॥ इत्थं सम्पूज्य गोविन्दं नैवेद्यं हविरर्पयेत् ॥ हरेः पायसखण्डादिदधिभिः परिकीर्त्तितम् ॥ ॥ १०३२ ॥ करोद्वर्त्तनताम्बूलवस्त्रादीनि निवेदयेत् ॥ तथा प्रणम्य चोद्वास्य हरिं सावरणं हृदि ॥ पुनः सञ्चिन्त्य सम्पूज्य प्रजपेच्छक्तितो मनुम् ॥ १०३३ ॥ परमभ्यर्च्य देवेशं वेदलक्षं जपेन्मनुम् ॥ सर्पिषा जुहुयात्पश्चाद्दशांशं तर्पयेत्ततः ॥ १०३४ ॥ स्वाभिषेकं विधायाथ ब्राह्मणान्भोजयेत्ततः ॥ इत्थं साधितमन्त्रस्तु प्रयोगान्विदधीत वै ॥ १०३५ ॥ पूजयित्वानले कृष्णं श्वेतैस्तत्पुष्पतण्डुलैः ॥ अयुतं घृतसंयुक्तैर्हुत्वा तद्भस्म धारयेत् ॥ १०३६ ॥ समस्तधनधान्यादिस्त्रीवश्यं च भवेद्ध्रुवम् ॥ मन्त्रार्णैर्लक्षसङ्ख्यं यो हुनेन्मधुरसान्वितैः ॥ १०३७ ॥ गोघृतैर्वापि जुहुयात्तस्य लक्ष्मीः स्थिरा भवेत् ॥ रक्तादिवसनाकांक्षी हुनेत्पुष्पैश्च तादृशैः ॥ ॥ १०३८ ॥ मधुराक्तैर्घृताक्तैर्वाप्यष्टोत्तरसहस्रकम् ॥ मधुना संयुतैश्चैव सुगन्धाष्टकसंयुतैः ॥ १०३९ ॥ सहस्रं जुहुयान्नित्यं मासमात्रेण साधकः ॥ राज्ञः पुरोहितो भूत्वा भुक्तिभाङ्नात्र संशयः ॥ १०४० ॥ प्रयोगजपहोमादि दशाक्षरसमं मतम् ॥ मन्त्रेणानेन कुर्वीत ताभ्यां मन्त्रोत्तमादरात् ॥ ॥ १०४१ ॥ न्यासध्यानजपार्चाभिर्होमतो यो भजेन्मनुम् ॥ रत्नकाञ्चनधान्यादिसमृद्धं तस्य मन्दिरम् ॥ जायते हस्तगा तस्य सकला वसुधा चिरम्॥ ॥ १०४२ ॥ पुत्रपौत्रकलत्राद्यैर्भुक्त्वा भोगान्बहूनिह ॥ अन्ते याति परं धाम वैष्णवं मुनिदुर्लभम् ॥ १०४३ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि चतुर्विंशकलौ मनुम् ॥ लक्ष्मीशक्तिमनोजातबीजान्ते दशवर्णकम् ॥ १०४४ ॥ कामाद्यश्च हृदन्तोयं षोडशार्णो मनुर्मतः ॥ ऋष्यादिकं दशार्णोक्तं पञ्चाङ्गमपि तादृशम् ॥ १०४५ ॥ वराभयकराभ्यां तमालिङ्गन्तं प्रियाङ्ककम् ॥ अब्जोत्पललसद्धस्तपद्मयालिङ्गितं मुदा ॥ १०४६ ॥ धारयन्तं रथाङ्गं च शंखं सव्यकरे परे ॥ एवं ध्यात्वा जपेन्मन्त्रं दशलक्षं समाहितः ॥ ॥ १०४७ ॥ तावत्संख्यसहस्राणि हुनेदाज्यमनुत्तमम् ॥ तर्पणाद्यैर्भवेन्मन्त्रः सिद्धोशेषफलप्रदः ॥ १०४८ ॥ पूजा चात्र विधातव्या पूर्वोक्तद्वादशार्ण-

वत् ॥ दशार्णवज्जपश्चापि विधेयो नात्र संशयः ॥ १०४९ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि पञ्चविंशे कलौ मनुम् ॥ मायाश्रीसहितो मन्त्रो दशार्णो द्वादशाक्षरः ॥ १०५० ॥ ॥ विधानमस्य विज्ञेयं षोडशार्णोक्तवर्त्मना ॥ १०५१ ॥ यस्मिन्मन्त्रे यस्य मनो रमते दिष्टकर्मतः ॥ देवः प्रागुक्तवत्तत्र मन्त्रसिद्धिर्द्रुतं भवेत् ॥ १०५२ ॥ अथातः संप्रवक्ष्यामि क्रमाज्जाता युगत्रये ॥ ये मन्त्रा दशवर्णस्य भेदाः सिद्धिविधायकाः ॥ १०५३ ॥ काममायेन्दिरापूर्वो मायाश्रीकामपूर्वकः ॥ लक्ष्मीमायास्मराद्यश्च मन्त्रराजो दशाक्षरः ॥ १०५४ ॥ त्रयोदशाक्षरा मन्त्रास्त एवैते युगत्रये ॥ मुन्याद्यन्तु विधिस्तेषां पङ्क्त्यामुक्तविधानतः ॥ १०५५ ॥ ध्यानन्तृतीयमन्त्रे तु दशार्णे समुदाहृतम् ॥ विंशार्णोक्तं द्वितीये तु प्रथमेथ निगद्यते ॥ १०५६ ॥ दरारिवाद्यशब्देन रञ्जिताशामुखाम्बुजम् ॥ वंशमादाय हस्ताभ्यां वादयन्तं मुदान्वितम् ॥ ॥ १०५७ ॥ रविमण्डलगं कृष्णं ध्यायेदिष्टफलाप्तये ॥ अङ्गेन्द्रादिकवज्राद्यैरर्चना सर्वसिद्धिदा ॥ १०५८ ॥ बाणलक्षं जपित्वाग्रे दशांशं हविषा हुनेत् ॥ तर्पणादि ततः कृत्वा सिद्धमन्त्रः समाचरेत् ॥ १०५९ ॥ कान्तिपुष्टिघृताद्यन्नकामो मन्त्रैः प्रयोगकान् ॥ दशाष्टादशवर्णोक्तानष्टाविंशे कलाविति ॥ १०६० ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि चोनत्रिंशमिते कलौ ॥ अष्टादशाक्षरो मन्त्रः कामान्तोत्र प्रकीर्त्तितः ॥ १०६१ ॥ नारदोस्य मुनिश्छन्दो गायत्रं कृष्णदेवता ॥ षड्दीर्घान्वितकामेन षडंगविधिरीरितः ॥ ॥ १०६२ ॥ बिभ्राणं दक्षिणे हस्ते ससितं दुग्धमोदकम् ॥ वामे नवीनमाज्यस्य पिण्डं सुन्दरमद्भुतम् ॥ १०६३ ॥ वैयाघ्रनखसंशोभिगलं सान्द्रघनच्छविम् ॥ एवं ध्यात्वा जपेन्मन्त्रमेकलक्षमनन्यधीः ॥ शर्कराघृतयुक्तेन दशांशं हविषा हुनेत् ॥ तर्प्पणादि ततः कुर्य्यात्प्राग्वद्ब्राह्मणभोजनम् ॥ ॥ १०६४ ॥ अंगलोकेशवज्राद्यैरर्चनास्य समीरितता ॥ १०६५ ॥ सरोजमध्यगं कृष्णं पूजयित्वा विधानतः ॥ तस्यैव श्रीमुखाम्भोजमर्चयेन्मन्त्रमुच्चरन् ॥ १०६६ ॥ गोदुग्धेन सुपक्वेन सुपक्वैः कदलीफलैः ॥ दध्ना च नवनीतेन पुत्रमाप्नोति वत्सरात् ॥ यद्यदिच्छति तत्सर्वं तर्प्पणेनैव सिध्यति ॥

॥ १०६७ ॥ दध्ना श्रीर्मधुना तेजो घृतेनायुर्विवर्धते॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि मन्त्रं त्रिंशत्तमेकलौ ॥ ऐंक्लीं कृष्णाय चेत्युक्त्वा गोविन्दाय रमां वदेत् ॥ ॥१०६८॥ गोपीजनवल्लभाय स्वाहान्तो विंशवर्णकः ॥ सर्वैश्वर्यप्रदो नित्यं साधकानामभीष्टदः ॥ अष्टादशलिपिः प्रोक्तं मुन्याद्यं चाङ्गकल्पनम् ॥ ॥१०६९॥ विंशाक्षरोक्तवज्ज्ञेया सपर्य्या ध्यानमुच्यते ॥ दक्षोर्ध्वेस्फाटिकीं मालां वामेन धृतपुस्तकम् ॥ अधःकराभ्यां मुरलीं वादयन्तं मनोहरम् ॥ ॥ १०७० ॥ पीताम्बरं मेघकान्तिं गायन्तमतिकोमलम् ॥ मयूरपक्षसम्बद्धकेशजालश्रियान्वितम् ॥ १०७१ ॥ सर्वज्ञं मुनिवृन्देन सेवितं सर्वदैवतम्॥ युवतीवेषलावण्यरमणीयतरं स्मरेत् ॥ पञ्चपञ्चेषुवेदत्रिवर्णैः पञ्चाङ्गकल्पनम् ॥ ॥ १०७२ ॥ वेदलक्षं मनुं जप्त्वा किंशुकैर्मधुनाप्लुतैः दशांशं जुहुयादग्नौ साधको मन्त्रसिद्धये ॥ तर्पणादि ततः कुर्यान्मन्त्री पूर्वोक्तवर्त्मना ॥ ॥ १०७३ ॥ मनुमेनं जपेद्यस्तु देवं सम्पूज्य यत्नतः ॥ देवस्यानुग्रहात्तस्य मुखं पद्माक्षिकोद्भवम् ॥ १०७४ ॥ गङ्गातरङ्गकल्लोलवाग्विलासमनोहरा ॥ गद्यपद्यात्मिका तस्य ब्रुवतो भारती सदा ॥ १०७५ ॥ अशेषवेदवेदार्थसर्वशास्त्रविशारदः ॥ राज्यैश्वर्यं परं प्राप्य भुङ्क्ते भोगाननेकशः ॥ ध्यानं पूर्वोक्तमप्यन्ते देहं त्यक्त्वा हरिं व्रजेत् ॥ १०७६ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि चैकत्रिंशोन्मिते कलौ ॥ तारो नमो भगवते नन्दपुत्राय नन्द च ॥ १०७७ ॥ व्रजगोपीजनेत्युक्त्वा तदन्ते ङेन्तवल्लभम् ॥ स्वाहाष्टाविंशदर्णोयं मुनिरस्य तु नारदः ॥ २०७८ ॥ उष्णिक् छन्दो देवता च नन्दपुत्रोखिलेष्टदः ॥ आचक्रादिपदैः प्राग्वत्पञ्चाङ्गं परिकीर्तितम् ॥ १०७९ ॥ रत्नपात्रं करे दक्षे हेमजातं च वामतः ॥ बहन्तं मध्यगं कृष्णं स्त्रीभ्यामालिङ्गितं सदा ॥ ॥ १०८० ॥ अङ्गलोकेशवज्राद्यैः पूजनं परिकीर्तितम् ॥ लक्षं जपेत्प्रजुहुयाद्धविषा सर्वसिद्धये ॥१०८१॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि द्वात्रिंशत्प्रमिते कलौ॥ नन्दपुत्रस्य शब्दान्ते श्यामलाङ्गाय कीर्तयेत् ॥१०८२॥ ततश्च बालवपुषे कृष्णाय पदमुच्चरेत् ॥ गोविन्दाय दशार्णं च द्वात्रिंशद्वर्ण ईरितः ॥१०८३॥

१ नन्दपुत्राय श्यामलाङ्गाय बालवपुषे कृष्णगोविन्दायगोपीजनवल्लभायस्वाहा ॥

मुन्याद्या नारदोनुष्टुप्कृष्णः पूजादिकाप्तये ॥ अष्टादशार्णकप्रोक्तप्रयोगा इह वर्णिताः ॥ १०८४ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि त्रयस्त्रिंशन्मिते कलौ ॥ ॐ श्रीं ह्रीं हद्भगवते नन्दपुत्राय बालव ॥ १०८५ ॥ पुषे च श्यामलाङ्गाय ततश्चाष्टादशाक्षरः ॥ द्विचत्वारिंशदर्णोयं छन्दोनुष्टुब्विधिर्मुनिः ॥ ॥ १०८६ ॥ कृष्णो देवोस्य पूजाद्यं प्राग्वत्सर्वं प्रकल्पयेत् ॥ रामैकादशपञ्चेषुधृत्यर्णैरङ्गकल्पनम् ॥ १०८७ ॥ अन्यत्सर्वं प्रयोगाद्यमष्टाविंशतिवर्णवत् ॥ मन्त्रोयं सकलैश्वर्यकांक्षितार्थैकसाधनः ॥ १०८८ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि चतुस्त्रिंशात्मके कलौ ॥ तारो नमो भगवते रुक्मिणीवल्लभाय च॥१०८९॥स्वाहान्तः षोडशार्णोयं मन्त्रराण्नारदो मुनिः ॥ छन्दोनुष्टुब्देवतास्य रुक्मिणीवल्लभः स्मृतः॥ १०९०॥भूद्वयब्धिसप्तनेत्रार्णैः पञ्चाङ्गं परिकीर्तितम्॥कलया श्यामलं कृष्णं नानालङ्कारमण्डितम्॥ १०९१॥पीतकौशेयसद्वस्त्रं स्वर्णवेत्रविभूषितम् ॥ १०९२ ॥ करपद्मेन दक्षेण लिम्पन्तं वामपाणिना॥ वराभीष्टवतीं देवीं मञ्जगां काञ्चनप्रभाम् ॥ वामहस्तधृताम्भोजां तां समालिङ्गितां प्रियाम् ॥ १०९३ ॥ अङ्गैर्नारदमुख्यैश्च लोकपालैस्तदायुधैः ॥ पूजनं धर्मकर्मार्थं निःश्रेयसफलप्रदम् ॥ १०९४ ॥ सप्तलक्षं जपेन्मन्त्रं हुनेन्मधुरलोलितैः ॥ दशांशं कमलैः पश्चात्तर्पणादि समाचरेत् ॥१०९५॥ महदैश्वर्य्यमोक्षादिकांक्षिभिः सेवितो मनुः ॥ अभीष्टकृत्प्रयोगाद्यं विज्ञेयन्तु दशार्णवत् ॥ १०९६ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि पञ्चत्रिंशन्मिते कलौ ॥ लीलादण्डं सुशिक्षन्तं गोपीजनपदं व्रजेत् ॥ १०९७ ॥ दोर्दण्डं बालरूपेति मेघश्यामपदं तथा ॥ भगवन्प्रभविष्णो स्यादेवन्तु त्रिंशदक्षरः ॥ १०९८ ॥ नारदोस्य मुनिश्छन्दो गायत्री देवता मता ॥ लीलादण्डधरः कृष्णो देवस्तु परिकीर्तितः ॥ १०९९ ॥ वामहस्ताम्बुजस्थेन लीलादण्डेन गोपिकाः ॥ पुराङ्गनाश्च साकूतं मोहयन्तं महाप्रभुम् ॥ ११०० ॥ आत्मनः प्रियमित्रस्य स्कन्धन्यस्तान्यहस्तकम् ॥ हतकंसं स्मरेत्कृष्णमप्रमेयपराक्रमम् ॥ ॥ ११०१॥ अङ्गैरिन्द्रादिवज्राद्यैरर्चनं च समीरितम् ॥ लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं दशांशं तिलतण्डुलैः ॥ त्रिमध्वक्तैर्हुनेत्पश्चान्मार्जनादि समाचरेत् ॥११०२॥

शुभगः स जगद्वन्द्यो रमाया भवनं भवेत् ॥ ११०३ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि षट्त्रिंशे यः कलौ भवेत् ॥ गोवल्लभाय स्वाहेति मन्त्रःसप्ताक्षरो मतः ॥ ११०४॥ नारदो मुनिरस्य स्यादुष्णिक् छन्दस्तु देवता ॥ गोवल्लभो हरिः प्रोक्तो गवां वृद्धिकरः परः ॥ दशार्णोक्तविधानेन पञ्चाङ्गविधिरीरितः ॥ ११०५ ॥ इन्द्र-नीललसत्कान्तिं पीतवाससमच्युतम् ॥सर्प्पारिपिच्छनिकरैः सम्यक्क्लृप्तावतंस-कम् ॥११०६॥ वंशं वामकरे यष्टिं दक्षे पाशं च बिभ्रतम् ॥ कपिलां वन-मध्यस्थामाह्वयन्तं च गां मुदा ॥ ११०७ ॥ एवं यजेत्ततस्तस्य पीठे पूर्वो दिते शुभे ॥ आदावङ्गानि सम्पूज्य पूजयेद्यो गणाष्टकम् ॥ ११०८ ॥ पीतो रक्तश्च सिन्दूरः श्वेतो नीलो हरिद्भवेत् ॥ कालः कर्णात्मकश्चेति ततः प्रोक्तं गणाष्टकम् ॥ ११०९ ॥ पुरन्दरमुखास्तेषामायुधानि ततः परम् ॥ १११० ॥ ध्यात्वा मन्त्रं जपेत्तस्य वर्णलक्षं जितेन्द्रियः ॥ तत्सहस्रं हुनेन्मन्त्री गोदुग्धेन पुरोक्तवत् ॥ ११११ ॥ गोदुग्धैः प्रत्यहं साग्रं सहस्रं जुहुयाच्च यः ॥ मोक्षार्थं च गवां वृद्धिर्जायते तस्य भूयसी ॥ १११२ ॥ दशाक्षरोक्तवत्सर्वं विधानं चास्य कीर्त्तितम् ॥ सर्वे प्रयोगाः सिद्ध्यन्ति सम्पू-र्णाः स्युर्मनोरथाः ॥ १११३ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि सप्तत्रिंशोन्मिते कलौ ॥ तारो नमो भगवते श्रीगोविन्दाय संवदेत् ॥ १११४ ॥ द्वादशार्णो मनुः प्रोक्तो नारदोस्य मुनिर्मतः ॥ गायत्री छन्द उद्दिष्टं श्रीकृष्णो देवता मनोः ॥१११५॥ चन्द्रनेत्राब्धिबाणार्णैः सम्पूर्णेनाङ्गकल्पनम् ॥ कल्पद्रुम-तले रम्ये रत्नसिंहासने शुभे ॥ १११६ ॥ सर्वलक्षणसंयुक्ते निविष्टं नन्द-नन्दनम् ॥ प्रस्नुतस्तनभारेण गोवृन्देन युतं भजेत् ॥ १११७ ॥ मेघश्यामं वरं दण्डं हस्ताभ्यां बिभ्रतं तथा ॥ पद्मायताक्षं शक्रस्य हस्तिकुम्भामृतस्य तु ॥ १११८ ॥ धारया सिच्यमानं च ध्यायेद्विष्णुं तमव्ययम् ॥ रुक्मिणी-सत्यभामादिभागयोर्वामदक्षयोः ॥ १११९ ॥ शक्रमग्रे पृष्ठतस्तु सुरभिं च समर्चयेत् ॥ रुद्रादिवरुणान्तेषु केशरेषु चतुर्ष्वपि ॥ ११२० ॥ देवाग्राद्दश पत्रेषु कालिन्दी रोहिणी तथा॥नाग्नजिती सुनन्दा च मित्रविन्दा सुलक्षणा॥ ॥ ११२१ ॥ जाम्बवती सुशीला च चतुष्कोणेषु भूपुरे ॥ आग्नेयादिषु

सम्पूज्याः किंकिणीदामयष्टिकाः ॥ ११२२ ॥ पद्मश्च तत्पुरोभागे श्रीवत्सं कौस्तुभं तथा ॥ वनमालां भूपुरेथ देवाग्रादिप्रदक्षिणम् ॥ ११२३ ॥ शार्ङ्गं गदां तु चक्रं च वसुदेवं च देवकीम् ॥ नन्दं यशोदां धेनूश्च गोपालांश्चापि गोपिकाः ॥ ११२४ ॥ दशदिक्षु प्रपूज्यैवं लोकपालायुधानि च ॥ देवाग्रतस्तस्य वामे कुमुदं कुमुदाक्षकम् ॥ पुण्डरीकं वामनं च शंकुकर्णं ततः परम् ॥ ११२५ ॥ सर्वनेत्रञ्च सुमुखं सुप्रतिष्ठितमेव च॥ देवस्यान्तरतो वामे विष्वक्सेनं समर्चयेत् ॥ ११२६ ॥ एवं सञ्चिन्त्य देवेशं वर्णलक्षं जपेन्मनुम् ॥ तत्सहस्राणि गोक्षीरैर्जुहुयात्तर्पयेत्ततः ॥ ११२७ ॥ आसनाराधनान्तन्तु प्राग्वत्कुर्यादतन्द्रितः ॥ दिनादावथ मध्याह्ने समयत्रितयेथवा ॥ ॥ ११२८ ॥ गोष्ठाभ्यां सततं कृष्णमर्चयेद्विधिनामुना ॥ भक्त्या परमयोपेतो गोपालाँश्च समर्चयेत् ॥ ११२९ ॥ दीर्घायुर्निर्भयश्चैव धनधान्यधरादिभिः ॥ पुत्रपौत्रैश्च सन्मित्रै राज्यान्ते विष्णुमन्दिरम् ॥ तस्माद्भजेदमुं मन्त्रं द्रुतं सिद्धिप्रदं शिवे ॥११३०॥अथातः सम्प्रवक्ष्यामि त्वष्टाविंशन्मिते कलौ॥ वदेद्गोकुलनाथाय नमोन्तोष्टाक्षरो मनुः ॥ ११३१ ॥ अजो मुनिश्च गायत्री छन्दो देवो हरिर्मतः ॥ वर्णद्वयेन पञ्चाङ्गं सकलेन प्रकल्पयेत् ॥ ॥ ११३२ ॥ कुण्डलाभ्यां लसन्नेत्रं नीलाब्जाभं महाद्युतिम् ॥ प्रश्चान्तिके च धावन्तं मदनेन पुरान्वितम् ॥ ११३३ ॥ ग्रैवेयाङ्गदहारादिभूषणैर्जयशोभितम् ॥ नानामुनिगणैर्हृष्टं सेवितं सर्वलीलया ॥ ११३४ ॥ पूर्वोदिते यजेत्पीठे चतुर्दिक्केशरेषु च ॥ चतुरङ्गानि सम्पूज्य चास्त्रं कोणेषु पूजयेत् ॥ ॥ ११३५ ॥ दिक्पत्रेषु यजेन्मूर्तीर्वासुदेवादिकास्तथा ॥ रुक्मिणीं सत्यभामां च लक्ष्मणां जाम्बवतीं तथा ॥ तद्बहिर्लोकपालानां वज्रादीनां च पूजनम् ॥ ११३६ ॥ वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं तत्सहस्रं ततो हुनेत् ॥ पद्मैर्बिल्वसमिद्भिर्वा पायसैर्घृतसंयुतैः ॥ तर्प्पणादि ततः कृत्वा समृद्धिर्महती भवेत् ॥ ॥ ११३७ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि कलौ गोत्रिमितं हरिम् ॥ तारं रमां ह्रियं कामं श्रीकृष्णाय ततो वदेत् ॥ ११३८ ॥ श्रीगोविन्दाय चेत्युक्त्वा श्रीगोपीजनवल्लभः ॥ ङेन्तो बीजत्रयं चाद्यं पञ्चविंशाक्षरो मनुः ॥११३९॥

नारदो मुनिराख्यातो गायत्री छन्द उच्यते ॥ श्रीकृष्णो बलदेवेन युक्तः प्रोक्तोस्य देवता ॥ वेदवेदेषु गोरामसम्पूर्णेन षडङ्गकम् ॥ ११४० ॥ सेवितौ वैनतेयेन मेदिनीमण्डलाविनौ ॥ रमन्तौ दिव्यभावेन बलकृष्णौ च संस्मरेत्॥ पूजाजपप्रयोगादि सर्वं ज्ञेयं दशार्णवत् ॥ ११४१ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि चत्वारिंशत्कलौ मनुम् ॥ एकच्छन्दर्षिदेवादिप्रयोगन्यासकावपि ॥ ॥ ११४२ ॥ कृमित्येकाक्षरो मन्त्रः सर्वकामसमृद्धिदः ॥ नारदोस्य मुनिर्देवो गायत्रं छन्द उच्यते॥ ११४३॥देवस्तु बालगोपालः षड्दीर्घान्वितकामतः षडङ्गानि ततो ध्यायेत्संस्थितं कमलादिके ॥ ११४४ ॥ कृष्णं पद्मासनं गुञ्जत्किङ्किणीविलसत्कटिम् ॥ हस्ताभ्यां नवनीतं च पायसं चापि बिभ्रतम्॥ ॥ ११४५ ॥ कण्ठदेशे व्याघ्रनखं स्वर्णपट्टविराजितम् ॥ मेघश्यामं च परितो गोपगोपीजनावृतम् ॥ ११४६ ॥ यजेत्पूर्वोदिते पीठे वह्नीशासुरवायुषु ॥ हृदादिकवचान्तानि चार्चेदङ्गानि साधकः ॥ ११४७ ॥ कृष्णं तत्पुरतोभ्यर्च्य दिक्ष्वतस्तद्बहिः सुरान् ॥ आखण्डलमुखांश्चैव वज्रादीन्यायुधानि च ॥ ११४८ ॥ लक्षं जपेद्धुनेद्धेनोः पयसा हविषा तथा ॥ कृत्वा ब्राह्मणभोज्यान्तं स्वेप्सितार्थाँल्लभेन्नरः ॥ ११४९ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि कलावेकचतुर्मिते ॥ स एव कृष्णः प्रकटः कृष्णो द्व्यर्णो मनुर्मतः॥ विप्रादिपादजान्तास्तु नाममन्त्राधिकारिणः ॥ ११५० ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामिद्विचतुस्सम्मिते कलौ ॥ ॐकृष्ण इति मन्त्रोयं त्रिवर्णः परिकीर्त्तितः ॥ ११५१ ॥ मुन्यादिकप्रयोगान्तं सर्वं पूर्ववदस्य तु ॥ मुनिभिस्तु विशेषेण संसेव्यो भुक्तिमुक्तिदः ॥ ११५२ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि त्रिचतुस्साम्मिते कलौ ॥ ॐ कृष्णायेति मन्त्रोयं चतुर्वर्णोखिलेष्टदः ॥ मुन्यादिकं प्रयोगान्तं सर्वं प्राग्वत्समाचरेत् ॥ ११५३ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि वेदवेदामिते कलौ ॥ कृष्णाय हृदयं पञ्चवर्णः प्राग्वज्जपादिकम् ॥ ११५४ ॥ अथातः सायककृतसम्मिते कामबीजयोः ॥ मध्येकृष्णाय पञ्चार्णः सर्वं पूर्ववदेव हि ॥ ११५५॥ अथातः षट्कृतमिते गोपालायाग्निगेहिनी ॥ षडक्षरोयं मुन्यादिप्रयोगान्तं च पूर्ववत् ॥ ११५६ ॥ अथातो नगवेदाख्ये क्लीं कृष्णायाग्निगेहिनी ॥ षड-

क्षरो मन्त्रराजो जपध्यानादि पूर्ववत् ॥ ११५७ ॥ अथाष्टवेदतुल्ये तु कृष्णा-
येति पदं वदेत् ॥ गोविन्दायेति सप्तार्णः प्राग्वन्मुन्यादिकं मतम् ॥ ११५८ ॥
अथ गोवेदतुल्ये तु श्रीमायाकामबीजतः ॥ कृष्णाय कामबीजं च प्राग्वत्सप्ता-
क्षरो मनुः ॥११५९॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि पंचाशत्प्रमिते दधि ॥ भक्षणाय
द्विठान्तोयमष्टवर्णः प्रकीर्त्तितः ॥ ११६० ॥ अथैकपंचप्रमिते सुप्रसन्नात्मने
नमः ॥ अष्टवर्णः समाख्यातो मुन्याद्यं पूर्ववन्मतम् ॥ ११६१ ॥ अथ द्विपं-
चप्रमिते कामं कृष्णाय संवदेत् ॥ गोविन्दाय पुनः कामो नवार्णः परिकीर्त्तितः
॥ ११६२ ॥ अथ त्रिपंचप्रमिते कृष्णो गोविन्द एव च ॥ङेन्तश्च हृदयान्तश्च
मनुः प्रोक्तो नवाक्षरः॥ ११६३॥अथ वेदेषु युक्तेषु कामं ग्लौं काममुच्चरेत् ॥
श्यामलाङ्गाय हृदयं दशार्णः परिकीर्त्तितः॥ ११६४॥अथ पंचेषु संयुक्ते बालान्ते
वपुषे वदेत्॥कृष्णाय वह्निजायान्तो मन्त्रः प्रोक्तो दशाक्षरः ॥११६५॥ अथ
षड्बाणयुक्ते तु क्लीं कृष्णा य परेति च॥नन्देति बालवपुषे स्वाहा पंचदशाक्षरः
॥११६६॥अथातः सम्प्रवक्ष्यामि सप्तबाणमिते कलौ॥कामबीजद्वयं कृष्णपदं
वेदार्ण उच्यते॥११६७॥मुन्यादयः षडङ्गानि चकार्णोक्तेन वर्त्मना॥तद्ध्यानं
विशेषोत्र कल्पवृक्षतले स्थितम् ॥ ११६८ ॥ अङ्गैरावरणं पूर्वं निधिभि-
स्तदनन्तरम् ॥ महापद्मश्च पद्मश्च शङ्खो मकरकच्छपौ ॥ ११६९ ॥ मुकु-
न्दकुन्दनीलाश्च खर्वश्च निधयो नव॥लोकपालैश्च वज्राद्यैः पश्चादावरणद्वयम्॥
॥११७०॥ एवं ध्यात्वा जपेन्मन्त्रं वेदलक्षं जितेन्द्रियः ॥ दशांशं जुहुयादग्नौ
श्रीफलैर्मधुरप्लुतैः॥ ११७१ ॥ तर्प्पणादि ततः कुर्य्यात्पूर्वोक्तं मन्त्रसिद्धये॥
मधुरत्रयसद्बुद्ध्या शुद्धतोयैर्दिनागमे ॥ ११७२ ॥ दशपूर्णप्रयोगाश्च कर्त्त-
व्याः साधकेन तु ॥ भुक्तिप्रदो मुक्तिदश्च सर्वकामप्रदस्त्विति ॥ ११७३ ॥
अथातः सम्प्रवक्ष्यामि वसुबाणमिते कलौ ॥ कृष्णस्यादौ द्वयोः कामबीजयो-
रंकयोजनात्॥ ११७४॥मन्त्रान्तरो युगे वृत्तो नारदाद्यैरुपासितः॥षड्दीर्घभाजा
बीजेन तादृशेनाङ्गकल्पनम्॥११७५॥ततो ध्यायेत्कल्पवृक्षमूले चान्दोलिका-
स्थितम् ॥ किंङ्किणीसंवृतकटिं नीलकुञ्चितमूर्द्धजम् ॥ ११७६ ॥ चित्रन्यासं
सरोजाक्षं तिलकाभूषणान्वितम् ॥ आरक्तवर्णं गोपीभ्यां दशायां कलितं

मुहुः ॥ प्राग्वत्पूजादिकं सर्वं पुरश्चर्य्या तथेरिता ॥ ११७७ ॥ रक्तपद्मैर्हुने-न्मन्त्री रक्तपद्मैर्दशांशतः ॥ तर्प्पणादि ततः कृत्वा गुरुं यत्नेन तोषयेत् ॥ ॥११७८॥ मधुरत्रयसंसिक्तामारक्तां शालिमञ्जरीम् ॥ जुहुयान्नित्यशः सार्धं शतमेकेन मन्त्रतः ॥ मण्डलात्सर्वसस्यादि वस्तुजातं तदा भवेत् ॥ ११७९ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि नवबाणमिते कलौ ॥ वाग्लज्जाक्लींरमाह्रींग्रींज्रींत्रीं-जयजयेति च ॥ ११८० ॥ कृष्णकृष्णेति चाभाष्य निरन्तरपदं वदेत् ॥ क्रीं त्रीं नित्यप्रमुदितरेतसे पदमुच्चरेत् ॥ ११८१ ॥ नित्यक्रियाय कृष्णाय क्लीं गोपीजनवल्लभा ॥ य स्वाहा ग्रीं च ह्रीं चेति द्विपञ्चाशल्लिपिर्मनुः ॥ ११८२ ॥ आनन्दनारदमुनिर्विराट् छन्दोस्य देवता ॥ सम्मोहनहरिः प्रोक्तो मन्त्रवर्णैः षडङ्गकम् ॥ ११८३ ॥ आद्यन्तैश्च त्रिभिर्बीजैः संयुक्तैश्च क्रमेण च ॥ अष्टभी रविभिर्नेत्रैर्नवभिश्च नखेन्दुभिः ॥ ११८४ ॥ न्यासादिकं ततः कृत्वा देहे पीठं प्रकल्प्य च ॥ हस्तद्वये दशार्णोक्तविधिना न्यासमाचरेत् ॥ ११८५ ॥ षडङ्गान्यस्य कामानां पञ्चपञ्च प्रविन्यसेत् ॥ त्रिवारं मूलमन्त्रेण व्यापकं च ततश्चरेत् ॥ ११८६ ॥ कामसम्पुटिता-न्न्यस्य मातृकार्णान्यथा पुरा ॥ दशतत्त्वादिकं न्यस्य तदन्ते मूर्तिपञ्जरम् ॥ ११८७ ॥ सृष्टिस्थितिषडङ्गानि वर्णान्न्यस्येच्च पूर्ववत् ॥ सर्वमन्य-त्पुरोक्तेन विधानेन विधाय वै ॥ ११८८ ॥ साधकः सर्वलोकेशं ध्याये-त्सम्मोहनं हरिम् ॥ पुरे च मणिजे रम्ये पर्वताम्बुधिमध्यगे ॥ ११८९ ॥ नानाशोभाविचित्रेण मणिभिर्दीपितान्तरे ॥ उद्यानवापिकावाटीनानाजनमनो-हरे ॥ ११९० ॥ तत्रातिरम्ये विपुले विश्वकर्म्मविनिर्मिते ॥ नानारत्नग-णाकीर्णे गेहे सञ्चिन्तयेद्धरिम् ॥ ११९१ ॥ नानालङ्कारशोभाढ्यं श्री-वत्साङ्कितवक्षसम् ॥ नानासुगन्धरुचिरमङ्कन्यस्तकराम्बुजम् ॥ ११९२ ॥ विहिताम्भोजयुग्माभ्यां विस्तृताभ्यां च कामतः ॥ आलिंग्य तां च बाहुभ्यां श्वेतमुक्ताविभूषितम् ॥ ११९३ ॥ स्वदक्षस्थितयाश्लिष्टं श्यामया सत्य-

१ ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं ग्रीं ज्रीं त्रीं जयजय कृष्ण कृष्ण निरन्तरं क्रीं त्रीं नित्यप्रमुदितरेतसे नित्यक्रियाय कृष्णाय क्लीं गोपीजनवल्लभाय स्वाहा ग्रीं ह्रीं ॥

भामया ॥ चक्रवज्जाम्बवत्या च श्लिष्टं वामस्थया तथा ॥ ११९४ ॥ कालिन्द्या च परिश्लिष्टमग्रदेशस्थया विभुम् ॥ पद्मं गदां शंखचक्रे चतुर्भिर्दधतं करैः ॥ ११९५ ॥ करद्वयलसद्वंशविभावितमुखाम्बुजम् ॥ चतुर्दिक्षु बहिर्देवैर्मुनिभिः सेवकैर्वृतम् ॥ ११९६ ॥ एवं ध्यात्वा तु पूर्वोक्ते पीठे देवं समर्चयेत् ॥ विंशार्णोदितयन्त्रं च सम्यगत्र सुलेखयेत् ॥ ११९७ ॥ मध्यस्थपीठपरितः पूर्वादिषु लिखेत्क्रमात् ॥ ह्रींत्रींह्रींत्रीं च बीजानि शिष्टैर्वर्णैः प्रवेष्टयेत् ॥ ११९८ ॥ दशबीजैर्विरहितैर्द्विचत्वारिंशसम्मितैः ॥ षट्कोणेथ क्रमाल्लेख्यं ऐंह्रींश्रीमीशकोणतः ॥ ११९९ ॥ पुनस्तान्येव नैर्ऋत्याच्छेषं प्राग्वत्समाचरेत् ॥ अर्घ्यपात्रादि संस्थाप्य मध्यबीजे हरिं यजेत् ॥१२००॥ यथाध्यानं च तत्पूर्वादिष्वर्च्या रुक्मिणीमुखाः ॥अङ्गानि षट्सु कोणेषु वामांके सर्वगां यजेत् ॥१२०१॥दलमध्ये तु लक्ष्म्याद्यास्तदग्रे धनुरादिकाः॥यजेत्कृष्णाग्रमध्ये तु पृष्ठगं चांजनं धनुः ॥ १२०२ ॥ शङ्खपद्मौ निधी पूज्यौ शुक्लवर्णौ तु पार्श्वयोः ॥ सर्वदा चापि वर्षन्तौ धाराभिर्वस्तुसञ्चयम् ॥ १२०३ ॥ हेरम्बं साम्बनामानं दुर्गां च तदनन्तरम्॥विष्वक्सेनं च कोणेषु वर्णगान्पक्षिणो यजेत् ॥ १२०४ ॥ रक्तमारक्तसुप्रख्यदूर्वाकनकवर्णकान् ॥ तद्बहिर्वासवादीनां वज्रादीनां च पूजनम् ॥१२०५ ॥दीक्षितो विधिना मन्त्रं प्राप्यामुं सद्गुरोः कृती ॥ दर्शनं भाषणं स्पर्शवचनश्रवणादिकम् ॥ वर्जयेत्प्रजपेल्लक्षं स्त्रीमात्रस्य गुरोरपि ॥१२०६॥ सिताब्जमधुमिश्रैश्च दशांशं पायसैर्हुनेत् ॥ तर्प्पणं मार्ज्जनं कृत्वा ब्राह्मणान्भोजयेत्ततः॥१२०७॥ मन्त्रमेनं जपेद्यस्तु प्रत्यहं विधिनामुना ॥ समर्चयति गीर्वाणाँल्लोकानन्दकरश्च सः ॥ १२०८ ॥ दिवादौ कृष्णचन्द्रं च दुग्धबुद्ध्या जलैः शुभैः ॥ अन्वहं तर्प्पयेद्यस्तु शतं साग्रं भवेद्ध्रुवम् ॥ १२०९ ॥ इन्दुश्रीजलबिन्द्वाभस्तद्विभूतिमहार्णवः ॥ चन्द्रचन्दनपंकाक्तमालतीकुसुमैर्यवैः ॥ १२१० ॥ अयुतं मन्त्रवर्णेन यो जुहोति विभावसौ ॥ त्रैलोक्यं तद्वशे तिष्ठेत्ख्यातः कविवरो भवेत् ॥ १२११ ॥ मन्त्रिणो ध्यानमात्रेण मन्त्रस्यास्य यथाविधि ॥ वश्या भवंति सततं स्मरार्ताः सुरयोषितः ॥ १२१२ ॥ जपादिकर्म्मभिर्नून-

यस्मात्किंकिं न लभ्यते ॥ स्पर्द्धां स्वाभाविकीं त्यक्त्वा चित्रमेतत्सुमंत्रिणः ॥ ग्रहेन्दिरा सदस्या स्यात्सेवने भक्तितत्परा ॥ १२१३ ॥ व्याधिदारिद्र्यपापौघक्रूरग्रहविषादिभिः ॥ विपत्तिदुःखदौर्भाग्यमृत्य्वादिरहितः सदा ॥ १२१४ ॥ पुत्रपौत्रधनारोग्यवरस्रग्गन्धवाहिभिः ॥ सम्पन्नः सर्वसम्पत्या यशस्वी दीर्घजीवनः ॥ १२१५ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि कलौ षष्टिमिते मनुम् ॥ यज्जपादेव पुत्रादेरुत्पत्तिर्भवति ध्रुवम् ॥ ॥ १२१६ ॥ देवकीसुत गोविन्द वासुदेव जगत्पते ॥ देहि मे तनयं कृष्ण त्वामहं शरणं गतः ॥ १२१७ ॥ द्वात्रिंशदक्षरो मन्त्रो नारदोस्य मनोर्मुनिः॥ छन्दोनुष्टुब्देवता च कृष्णः सन्तानदायकः ॥ १२१८ ॥ पादैश्चतुर्भिः सर्वैश्च पञ्चाङ्गानि मनोर्विदुः ॥ शङ्खचक्रधरं देवं श्यामवर्णं चतुर्भुजम् ॥ ॥ १२१९॥ सर्वाभरणसन्दीप्तं पीतवाससमच्युतम्॥मयूरपिच्छसंयुक्तं विष्णुतेजोपबृंहितम् ॥ समर्प्पयन्तं विप्राय नष्टानानीय बालकान् ॥१२२०॥ध्यात्वा ततोर्चनादीनि कुर्य्याद्भक्तिपरायणः॥अर्चना चेन्द्रवज्राद्यैरुदितास्य महात्मनः ॥ ॥ १२२१ ॥ लक्षं जप्त्वा तद्दशांशं जुहुयाद्गोघृतेन च ॥ तर्प्पणादि ततः कुर्य्यान्मन्त्रः सिद्ध्यति मन्त्रिणः ॥१२२२॥ दशम्यामर्धरात्रे तु शुक्लपक्षस्य मन्त्रवित् ॥ पुत्रार्थं शान्तिकं कृत्वा तत्रस्थो विष्णुमर्च्चयेत् ॥ १२२३ ॥ य एवं भजते मन्त्री साधकः पुत्रकाम्यया ॥ स वर्षाल्लभते पुत्रं विनीतं चिरजीविनम् ॥ १२२४ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि ह्येकषष्टितमे कलौ ॥ वासुदेवाय निगडच्छेदन ङेन्तमुच्चरेत्॥वासुदेवाय हुंफट् च स्वाहा विंशार्णको मनुः॥ ॥१२२५॥नारदोस्य मुनिः प्रोक्तो गायत्री छन्द उच्यते ॥ श्रीकृष्णो देवता प्रोक्तो निगडच्छेदकारकः॥न्यासध्यानजपार्चादि दशवर्णोक्तवद्भवेत्॥ १२२६॥

---

१ देवकीसुत गोविन्द हृदयाय नमः,वासुदेव जगत्पते शिरसे स्वाहा,देहि मे तनयं कृष्ण शिखायै वषट्, त्वामहं शरणं गतः कवचाय हुम् ॥ देवकीसुत गोविन्द वासुदेव जगत्पते ॥ देहि मे तनयं कृष्ण त्वामहं शरणं गतः नेत्राभ्यां वौषट् ॥ तन्त्रांतरेषु तु पूर्वमन्त्रार्द्धेन नेत्रयोरुत्तरमन्त्रार्द्धेनास्त्रस्य न्यासः । किञ्चास्य मन्त्रस्य प्रथमे क्लींबीजयुक्तस्य जपाच्छीघ्रमेव तनयप्राप्तिर्जायते । तथा ह्रींमोमाद्यस्याऽपि जपोन्यत्र ॥

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि नेत्रषष्टिमिते कलौ ॥ कामबीजात्मको मन्त्रो मुनिर्मोहननारदः ॥ १२२७ ॥ छन्दो गायत्रकं देवः कृष्णः सम्मोहनो मतः ॥ षड्दीर्घभाजा बीजेन षडंगानि प्रकल्पयेत् ॥ १२२८ ॥ आसनं न्यासपर्य्यन्तं चोक्तरीत्या विधाय तु ॥ अंगुलीषु न्यसेदंगं हस्तयोस्तलयोरपि ॥ १२२९ ॥ पञ्चांगुलीषु बाणांश्च पूर्वोक्तान्क्रमतो न्यसेत ॥ बीजसम्पुटितान्न्यस्य मातृकार्णाननन्तरम् ॥ १२३० ॥ षडङ्गानि पुनर्न्यस्य यथास्थाने शरान्न्यसेत् ॥ १२३१ ॥ शिरोवदनहृल्लिङ्गपादेषु क्रमतः सुधीः ॥ शेषतत्त्वमुखानेतान्पञ्चबीजप्रपूर्वकान् ॥ १२३२ ॥ जगत्सम्मोहनं कृष्णं ध्यायेत्पश्चात्समाहितः ॥ वृन्दारकद्रुमौघेन विलसत्कल्पशाखिनः ॥ मूले लसत्स्थलीराजद्रत्नसिंहासनोपरि ॥ ११३३ ॥ वामस्कन्धे पाक्षिपत्रे स्थितं बन्धूकसन्निभम् ॥ अरिशङ्खसृणीन्पाशं पुष्पबाणेक्षुकार्मुकम् ॥ ॥ १२३४ ॥ पद्मं गदां च हस्ताब्जैरष्टभिर्दधतं निजैः॥ घूर्णनेत्रं कुण्डलिनं हारिणं सुकिरीटिनम् ॥ १२३५॥ किङ्किणीनूपुराद्यैश्च मुद्रिकारत्नमाल्यकैः ॥ पीताम्बरै रक्तलेपैर्युक्तं वामोरुगां रमाम् ॥ आलिङ्गन्तं वामबाहुधृतपद्मावलिं विभुम् ॥ १२३६ ॥ विंशाक्षरोदिते पीठे भूषणाद्यैर्यजेद्धरिम् ॥ पश्चादङ्गानि बाणांश्च न्यासमार्गेण पूजयेत ॥ १२३७ ॥ किरीटं मस्तके श्रोत्रद्वये कुण्डलयुग्मकम् ॥ चक्राद्यं त्रिषु हस्तेषु श्रीवत्सं कौस्तुभं तथा ॥ ॥ १२३८ ॥ वक्षोहृदि तथा कण्ठे वनमालां नितम्बके ॥ पीताम्बरं महालक्ष्मीं वामांके बीजपूर्विकाम् ॥ १२३९ ॥ अभ्यर्च्य कर्णिकामध्ये दिग्विदिक्ष्वङ्गदेवताः ॥ ततो बहिश्वरान्बाणान्दिक्षु कोणेषु पूजयेत् ॥ ॥ १२४० ॥ यजेदष्टाग्रपत्रेषु लक्ष्म्याद्याः प्रोक्तलक्षणाः ॥ इन्द्रादीन्पूजयेद्बाह्ये वज्रादीन्यायुधान्यपि ॥ १२४१ ॥ प्रजपेद्दशलक्षाणि पलाशकुसुमैर्हुनेत् ॥ त्रिस्वाद्वक्तैस्तर्प्पयेच्च सहस्रद्वादशावधि ॥ १२४२ ॥ आत्माभिषेकं कृत्वाथ विप्रानभ्यर्च्य तोषयेत ॥ अनेन मनुना तोयैर्मोहिनीपुष्पसंयुतैः ॥ १२४३ ॥ दिनादारभ्य मन्त्री तु तर्प्पयेच्च फलप्रदम् ॥ त्रैलोक्यं मोहयेद्यस्तु जपेन्मन्त्रं समाहितः ॥ १२४४ ॥ सर्वान्कामानवाप्नोति वा-

ञ्छितानत्र वर्णितान् ॥ अयुतं सर्पिषा हुत्वा ससम्पातं हुताशने ॥ १२४५॥ तावज्जले जपित्वा च तद्घृतं भोजयेत्स्त्रियम् ॥ यस्तु तद्वशगा सा स्यात्सापि तं वशमानयेत् ॥ १२४६ ॥ अष्टादशलिपिप्रोक्ते वश्यं चानेन साधयेत् ॥ एवं यो भजते मन्त्रं भोगान्भुक्त्वा हरिं व्रजेत् ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि रामषष्टिमिते कलौ ॥ १२४७ ॥ त्रैलोक्यमोहनाय विद्महे ॥ स्मराय धीमहि ॥ तन्नो विष्णुः प्रचोदयात् ॥ १२४८ ॥ जपेदस्यैव गायत्रीं चतुर्वर्गफलप्रदाम् ॥ मुन्यादि सकलं प्राग्वद्गायत्री सपुरस्क्रिया ॥ नाशयेत्सर्वपापानि सिद्धेयं कल्पवल्लिका ॥ १२४९ ॥ यद्यदिष्टं भवेत्कार्य्यं सहस्रादयुतादपि ॥ यथायोग्यं जपेत्साध्यमसाध्यं च प्रसिद्ध्यति ॥१२५०॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि वेदषष्टिमिते कलौ ॥ ग्लौमित्येकाक्षरो मन्त्रो जगती छन्द ईरितम् ॥ १२५१ ॥ ऋषिस्तु नारदः प्रोक्तः श्रीकृष्णो देवता मतः ॥ बीजं गकार ॐ कारः शक्तिः प्रोक्तं षडङ्गकम् ॥ १२५२ ॥ षड्दीर्घान्वितबीजेन गकारं मूर्ध्नि विन्यसेत्॥ग्लौं नाभौ तु तथौं गुल्फे बिन्दुं पादद्वये न्यसेत् ॥ १२५३ ॥ कदम्बमूले क्रीडन्तं वृदावननिवासिनम् ॥ पद्मोपरि स्थितं वन्दे वेणुं गायन्तमीश्वरम् ॥ १२५४ ॥ पीताम्बरधरं देवं वनमालाविभूषितम् ॥ गोपीभिर्गोपवृन्दैश्च सेवितं कृष्णमर्च्चयेत् ॥१२५५॥ दशार्णवच्च पूजा स्यात्पिङ्गगोपालसम्मता ॥ लक्षायुतसहस्राणि चत्वार्य्यस्य जपो मनोः ॥ १२५६ ॥ घृतहोमदशांशेन तर्प्पणादि ततश्चरेत् ॥ एवं संसिद्धमन्त्रस्तु दशार्णोक्तप्रयोगकान्॥ १२५७॥ कुर्य्यादिह तु सौभाग्यमन्ते याति हरेः पुरम् ॥ १२५८ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि पञ्चषष्टिमिते कलौ ॥ कामबीजान्तरे कृष्णमन्त्रोयं त्र्यक्षरो मतः ॥ १२५९ ॥ नारदोस्य मुनिश्छन्दो गायत्री देवता मता ॥ कृष्णः ककारो बीजं स्यादीकारः शक्तिरुच्यते ॥ १२६० ॥ षड्दीर्घस्वरयुक्तेन मूलेनापि षडङ्गकम् ॥ ध्यानपूजाप्रयोगादि पिङ्गगोपालवन्मतम् ॥ १२६१ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि रसषष्टिमिते कलौ ॥ तारो नमश्च कृष्णाय मन्त्रो रसमितार्णकः १२६२ ॥ नारदोस्य मुनिश्छन्दो गायत्री देवता मताः ॥ श्रीकृष्णः प्रणवो बीजं माया

शक्तिश्च पूर्ववत् ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि वसुषष्टिमिते कलौ ॥ १२६३ ॥ उत्तिष्ठ श्रीकृष्ण स्वाहा मनुरष्टाक्षरो मतः वामदेवो मुनिः पंक्तिश्छन्दो विष्णुश्च देवता ॥ हुंभीषयद्वयं हृच्च हुमन्तं त्रासयद्वयम् ॥ १२६४ ॥ शिरः शिखा च वर्मोक्तं प्रमर्दययुगं मतम् ॥ वर्म प्रध्वंसययुगं वर्मान्तं रक्षयद्वयम् ॥ १२६५॥ हुमन्तमंत्रं सम्प्रोच्य षडङ्गानि समाचरेत् ॥ अष्टाङ्गानि न्यसेन्मन्त्री मन्त्रवर्णैर्यथाविधि ॥ १२६६ ॥ पचाङ्गनेत्रजठरपृष्ठेषु क्रमतो न्यसेत् ॥ विदध्यात्करयोर्न्यासं मन्त्रार्णैरष्टभिः सुधीः ॥ १२६७ ॥ दक्षतर्ज्जनिकायाश्च यावत्स्याद्वामतर्जनी ॥ सृष्टिरेतद्वैपरीत्यं संहारो गदितः स्थितिः ॥ १२६८ ॥ दक्षान्यतर्जनीपूर्वां कनिष्ठायुग्मकान्तकाम् ॥ द्रावण्याद्यबीजयुतामंगुष्ठादिषु विन्यसेत् ॥ १२६९॥ सबीजपूर्वकान्कामानंगुष्ठादिषु विन्यसेत्॥ तातो बाणार्णपुटितां मातृकां च प्रविन्यसेत् ॥ १२७० ॥ प्रकृतिश्च महत्तत्त्वमहङ्कारखवायवः ॥ तेज आपो धरा चेति तत्त्वाष्टकमुदीरितम् ॥ १२७१ ॥ व्यस्तमन्त्रार्णसंयुक्तं पादे लिङ्गे तथा हृदि ॥ मुखे शीर्षे हृदि पुनर्हृदये सकलाङ्गके ॥ १२७२ ॥ न्यसेत्संहार उक्तोयं सर्गस्तद्विपरीतकः ॥ तारसम्पुटमूलेन त्रिशो न्यस्येत्तनौ पुनः ॥ कट्यास्यहृन्नाभिगुल्फजानुपादेषु विन्यसेत् ॥ एषा सृष्टिश्च नाभ्याद्या हृदन्ता स्थितिरीरिता ॥ १२७३॥ सर्गत्यक्तमतिश्चापि संहारो मन्त्रिभिर्मतः ॥ मन्त्रार्णानामयं प्रोक्तस्त्रिधा न्यासो धनप्रदः ॥ १२७४ ॥ मूलाधारे हृदि मुखे बाहुद्वन्द्वोरुनाभिषु ॥ मन्त्रार्णान्विन्यसेन्मत्री न्यासोयं दार्ढ्यकारकः ॥ १२७५ ॥ गले च जठरे हस्ते स्तनयोः पार्श्वयोस्तथा ॥ पृष्ठे च विन्यसेद्वर्णान्न्यासोयं शुभकारकः॥ १२७६ ॥ मूर्द्धनेत्रश्रोत्रमुखहस्ताग्रे मणिबन्धयोः ॥ कूर्परे चांसके न्यस्य मनोर्वर्णान्धनप्रदान्॥ ॥ १२७७ ॥ पादाग्रयोर्गुल्फयोश्च जानुनोश्च नितम्बयोः ॥ मन्त्रस्य विन्यसेद्वर्णान्न्यासोयं काम्यकः स्मृतः ॥ १२७८ ॥ दक्षबाहौ तथा मूले मध्ये च मणिबन्धके ॥ अंगुष्ठादौ न्यसेद्वर्णान्पञ्चमो धर्मवृद्धिकृत ॥ १२७९ ॥ एवं न्यासो वामहस्ते षष्ठः पापनिवर्तकः ॥ दक्षोरुमूले जानौ च गुल्फे पञ्चांगुलीषु

---

१ उपलब्धयोः पुस्तकयोर्मध्ये सप्तषष्टिमितकल्पावतीर्णकृष्णमन्त्रवर्णनाविषयकः पाठः स्खलितः ॥

च ॥ १२८० ॥ अयन्तु सप्तमो न्यासो वामगस्त्वष्टमो मतः ॥ दक्षांगुष्ठं समारभ्य वाममध्याच्च विन्यसेत् ॥ १२८१ ॥ क्रमेण मन्त्रवर्णांश्च न्यासोयं नवमः स्मृतः ॥ एवन्तु पादयोर्न्यस्येन्न्यासोयं दशमो भवेत् ॥ १२८२ ॥ मूर्द्धाक्षिकण्ठहृदये जठरे चोरुजानुनोः ॥ पादयोश्च न्यसेद्वर्णान्न्यास एकादशः स्मृतः ॥ १२८३ ॥ त्वगसृङ्मांसमेदोऽस्थिमज्जाशुक्रमरुत्सु च ॥ कर्मणा विन्यसेद्वर्णान्न्यासोयं द्वादशः स्मृतः ॥ १२८४ ॥ दक्षगण्डे च दक्षांसे तत्स्तने दक्षपार्श्वके ॥ दक्षस्फिचि च जंघायां पादेयन्तु त्रयोदशः ॥ १२८५ ॥ एवं प्रविन्यसेद्वामगुल्फादौ स चतुर्दशः ॥ प्रथमार्णं पादतले पदपादाग्रजानुषु ॥ १२८६ ॥ गुदगुह्ये तृतीयन्तु पार्श्वनाभौ चतुर्थकम् ॥ वक्षःपृष्ठहृदयेषु कण्ठे वक्त्रे नसोस्तले ॥ १२८७ ॥ श्रोत्रनेत्रद्वये चान्यं ललाटे चाष्टमं न्यसेत् ॥ सर्वोपद्रवहन्तायं न्यासः पञ्चदशः स्मृतः ॥ १२८८ ॥ शिरोक्षिमुखहृन्नाभिगुह्यजान्वंघ्रिषु न्यसेत् ॥ षोडशोयमिति प्रोक्तस्तत्त्वपञ्जरसञ्ज्ञकः ॥ १२८९ ॥ ततस्तनौ मूलमन्त्रं व्यापकत्वेन विन्यसेत् ॥ नृसिंहं पञ्चमे प्रोक्तमाचरेन्मूर्तिपञ्जरम् ॥ १२९० ॥ मुखे ब्राह्मणवर्णं च हस्तयोः क्षत्रियं न्यसेत ॥ ऊर्वोर्वैश्यं शूद्रवर्णं पादयोरिति विन्यसेत ॥ १२९१ ॥ न्यसेत्किरीटं शिरसि श्रुत्योर्मकरकुण्डले ॥ ग्रैवेयं कौस्तुभं कण्ठे हृदि श्रीवत्सहारकम् ॥ १२९२ ॥ अङ्गदे भुजयोर्न्यस्य केयूरान्सर्वबाहुषु ॥ कङ्कणे हस्तयोर्न्यस्य मेखलां च कटौ न्यसेत् ॥ १२९३ ॥ न्यस्यांगुलीषु मुद्राश्च न्यसेत्पीताम्बरद्वयम् ॥ परिधाने चोत्तरीयं पादयोर्नूपुरं तथा ॥ ॥ १२९४ ॥ न्यसेच्छङ्खं च चक्रं च वामदक्षोर्ध्वहस्तयोः ॥ अधःपाण्योर्गदापद्मे ततो ध्यानं समाचरेत् ॥ १२९५ ॥ दुग्धाम्भोधौ सितद्वीपं नानामणिगणैर्युतम् ॥ वनं सञ्चिन्तयेत्तत्र सकलर्तुसमन्वितम् ॥ १२९६ ॥ न्यासोक्ताभरणैः शस्त्रैरुपेतं दीप्ततेजसम् ॥ सुरासुरर्षिप्रमुखैः सेवितं चाप्सरोगणैः ॥ १२९७ ॥ प्रसन्नवदनं ध्यात्वा तत्त्वदेवं प्रपूजयेत ॥ पूर्वोक्तपीठे मूलेन मूर्तिं सङ्कल्प्य चाह्वयेत ॥ १२९८ ॥ अङ्गानि कर्णिकायाञ्च दिक्पत्रेषु चतुर्ष्वपि ॥ श्रियं पीताम्बराक्तां च धृतिं कान्तिं सितासिते ॥ १२९९ ॥

इन्द्रादींश्चापि दिक्पत्रे वज्रादींस्तद्बहिर्यजेत् ॥ अष्टलक्षं जपेन्मन्त्रं नियमस्थो जितेन्द्रियः ॥ १३०० ॥ दुग्धाक्तबिल्वसमिधां होमः प्रोक्तो दशांशतः ॥ जलैः सघृतदुग्धान्नैस्तर्प्पणादि समाचरेत् ॥ १३०१ ॥ गुरुं सन्तोष्य यत्नेन सिद्धमन्त्रो भवेद् ध्रुवम् ॥ ततः कुर्वीत मन्त्रज्ञः प्रयोगांश्च प्रसिद्धये ॥ १३०२ ॥ दुग्धपूतैः सरसिजैरयुतं जुहुयाच्छ्रिये ॥ मधुरत्रयसंयुक्तैः पलाशकुसुमैर्हुनेत् ॥ १३०३ ॥ कान्त्यर्थं केवलाज्येन जुहुयाद्दुग्धमायुषे॥त्रिस्वादुयुक्तं लवणं हुनेन्निशि सहस्रकम्॥१३०४॥अष्टाधिकं च मासेन सोमरस्त्रीवृतो भवेत्॥का कथा सर्वयोषासु चान्यासु वशगासु च ॥ अयुतं जुहुयादाज्यं दूर्वाभक्तैश्च शोधितम् ॥ १३०५ ॥ भुञ्जीत प्रत्यहं भक्तं गुरुं सन्तोषयेद्धनैः ॥ वस्त्रालङ्करणाद्यैश्च ब्राह्मणानपि भोजयेत् ॥ ॥१३०६॥यो जपेन्मृत्युरोगादौ न्यसेच्चायुश्च विन्दति ॥सूर्य्यबिम्बे न्यस्तदृष्टिरब्देन सततं जपेत्॥१३०७॥उत्क्षिप्तबाहुःषण्मासाद्धनाढ्यः सुमहान् भवेत्॥ दुग्धमध्ये प्रातरमुं रमेशं तर्प्पयेद्बुधः ॥ अष्टाधिकं सहस्रं तु स भवेद्गोरमान्वितः॥१३०८॥ सुमिष्टमन्नं लभते वने वै भृत्यवर्गयुक् ॥ षट्कर्माणि च सिद्धयन्ति याति विष्णोः परम्पदम् ॥ १३०९ ॥ अथो गोषट्कलौ मन्त्रस्तारादिरयमेव हि ॥ यज्जपेनावतारोत्र सर्वकालफलप्रदः ॥१३१०॥ अथ सप्ततिके चायं लक्ष्म्यादिर्जप्यते जनैः ॥ नावतारः स एवात्र देवः प्रत्यक्षतां गतः ॥ १३११ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि चैकसप्तमिते कलौ ॥ अवतारोत्र मन्त्रस्तु श्रीकृष्णः शरणं मम ॥ १३१२ ॥ चतुष्पदैः समस्तेन पञ्चाङ्गविधिरीरितः ॥ ध्यानपूजाप्रयोगादि दशाक्षरवदीरितम् ॥ १३१३ ॥ अथातः संप्रवक्ष्यामि बौद्धमन्त्रं महाफलम् ॥ सभ्यत्वान्न द्विजातीनामधिकारोस्ति कर्हिचित् ॥ १३१४ ॥ वाममार्गरता विप्राः कुण्डका जातिविच्युताः॥ हीना वैदिकसंस्कारैः प्रमादान्म्लेच्छतां गताः ॥ गोलकाश्च तथा जात्या कायस्थादय एव च ॥ १३१५ ॥ बौद्धं विष्णुं समाराध्य भुक्तिं मुक्तिं प्रयान्ति ते ॥पतितानामयं मन्त्रः सम्प्रोक्तः शरणप्रदः॥१३१६॥नमो भगवते

१ ॐ उत्तिष्ठ कृष्णाय स्वाहा ॥

बुद्धसंसारार्णवतारक॥कलिकालादहं भीतः शरण्यं शरणंगतः॥ १३१७॥ आद्यैः पदैश्चतुर्भिश्च चरणद्वितयेन च ॥ षडङ्गविधिराख्यातः सर्वेण व्यापकं चरेत् ॥ ॥ १३१८ ॥ पद्मे पद्मासनस्थं च ऊर्वोर्न्यस्तकरद्वयम् ॥ गौरं मुण्डितसर्वाङ्गं ध्यानस्तिमितलोचनम् ॥ १३१९॥ पुस्तकासक्तहस्तैश्च नानाशिष्यैश्च शोभितम् ॥ इन्द्रादिलोकपालैश्च ताम्रवर्णाम्बरावृतम् ॥ १३२० ॥ एवं ध्यात्वा यजेत्पद्मे द्वात्रिंशद्दलसम्मिते ॥ कर्णिकायां षडङ्गानि दले शिष्यान्यजेत्क्रमात् ॥ १३२१ ॥ मीनांकं ललितां वीरं योगिनीं ज्ञानदायिनीम् ॥ सर्वज्ञं सुगतं बुद्धं पार्श्वनाथं तथागतम् ॥ १३२२ ॥ चार्वाकं धर्मराजं च जिनं पद्मावतीं तथा ॥ कामिनीं च महामायां श्रीकृष्णं च विनायकम् ॥ १३२३ ॥ समन्तभद्रं वर्त्मार्षिं निविचन्द्रं मनोहरम् ॥ षडभिज्ञं दशबलं शास्तारं श्रीघनं क्षयम् ॥ १३२४ ॥ दण्डिनं मुण्डिनं क्रान्तं श्रावकं लोकपोषणम् ॥ तद्बाह्ये भूपुरे दिक्पांस्तदस्त्राणि च पूजयेत् ॥ ॥ १३२५ ॥ वर्णलक्षं जपेन्मन्त्री होमयेच्च घृतौदनम् ॥ तुलसीमिश्रतोयैश्च भगवन्तं प्रतर्प्पयेत् ॥ १३२६ ॥ परस्य दुःखकरणं मनसापि न चाचरेत्॥ एवं तु वर्तमानस्य वाक्सिद्ध्यादि प्रजायते ॥ १३२७ ॥ राजानो वशगास्तस्य नाशं यान्ति ह्युपद्रवाः ॥ भूतप्रेतादिपीडायां महागदभये तथा ॥ १३२८ ॥ अनेन मन्त्रितं भस्म दत्त्वा दुःखात्प्रमुच्यते ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि कल्किमन्त्रं महाफलम् ॥ कंकल्किने हृदन्तोयं मन्त्रः प्रोक्तः षडक्षरः ॥ १३२९ ॥ मन्त्रार्णैश्च षडङ्गानि पूर्णेन व्यापकं चरेत् ॥ मन्त्रोयमतिगोप्यस्तु स्तुत्यश्च नृपनाशकः ॥ १३३० ॥ ध्यानं नीलहयारूढं श्वेतोष्णीषविराजितम् ॥ महामुद्राढ्यहस्तं च कौस्तुभोद्दामकण्ठकम् ॥ १३३१ ॥ मर्दयन्तं म्लेच्छगणं क्रोधपूरितलोचनम् ॥ अन्तर्हितैर्देवमुनिगन्धर्वैः संस्तुतं हरिम् ॥ १३३२ ॥ वैष्णवे तु यजेत्पीठे पद्मे तं केशरेषु च ॥ षडङ्गानि च पत्रेषु पूजयेत्तस्य सेवकान् ॥ १३३३॥ उद्दामं काञ्चनं दीर्घं भीमं घोरं भयानकम् ॥ कालं नीलं लोकपालान्भूपुरे हेतयस्त-

१ पूज्या इति शेषः ॥

था ॥ १३३४ ॥ षड्लक्षं च जपेन्मन्त्रं ससितैः पायसैर्हुनेत् ॥ तर्पयेत्सलिलैः शुद्धैः प्रीणयेद्भूसुरानपि ॥ १३३५ ॥ एवमाराधितो मन्त्रः संग्रामे विजयप्रदः ॥एतत्साधकमालोक्य दूरतो दुःक्षितीश्वराः ॥ १३३६ ॥ प्रणमन्ति तथा म्लेच्छाः शत्रवो यान्ति संक्षयम् ॥ दिनेदिने वर्धते श्रीर्मृतो वैकुण्ठमाप्नुयात् ॥ १३३७ ॥ एते तु मनवः प्रोक्ताः श्रीविष्णोः परमात्मनः ॥ दशावतारूपस्य किमन्यच्छ्रोतुमिच्छसि ॥ १३३८ ॥

इति श्रीमहामायामहाकालानुमते मेरुतन्त्रे शिवप्रणीते दशावतार-मन्त्रप्रकाशः षड्विंशः ॥ २६ ॥

---

श्रीदेव्युवाच ॥ देवदेव महादेव भक्तानुग्रहकारक ॥ चतुर्विंशतिमूर्त्तीनां मन्त्रांश्च मेधुना वद॥ १ ॥ईश्वर उवाच॥शृणु देवि प्रवक्ष्यामि मूर्त्तिमन्त्रानशेषतः ॥ भुक्तिमुक्तिप्रदान् विप्रैराराध्यान्सचतुर्थकैः॥ २ ॥को ब्रह्मा तु समुद्दिष्ट ईशः शो वो हरिः स्मृतः ॥ वर्णत्रयात्मको मन्त्रः केशवः परिकीर्त्तितः ॥ ३॥ पृथक्ताभ्यां षडङ्गानि पूर्णेन व्यापकं चरेत् ॥ आनाभिपादपर्य्यन्तं मङ्गलं मधुसम्मितम् ॥ ४॥ शंखचक्रे हि शूले च त्वक्षमालां कमण्डलुम् ॥ भुजैष्षड्भिर्दधानं च रक्तवर्णं च सत्कटिम् ॥ ५ ॥ अन्तर्बाह्योत्तरीयं च नागयज्ञोपवीति नम् ॥ मयूरमुकुटं रम्यं मकराकृतिकुण्डलम् ॥ ६ ॥ एवं ध्यात्वा यजेत्पीठे पद्मे चापि चतुर्दले ॥ सनकादीन्कर्णिकायां गणेशं नन्दिकेश्वरम् ॥ ७ ॥ कार्त्तिकेयं भृङ्गिणं च दलमध्ये समर्चयेत् ॥ दलाग्रेषु क्रमाच्चापि प्रह्लादं नारदं बलिम् ॥ ८ ॥ पार्श्वयोः पृष्ठतश्चापि रमोमे वेदमातरम् ॥ अग्रदक्षक्रमाद्गां च हंसं पक्षीश्वरं तथा ॥ ९ ॥ भूपुरे लोकपालांश्च तद्धेतीश्च समर्चयेत् ॥ जपे ल्लक्षत्रयं मन्त्रं मधुरत्रितयैर्हुनेत् ॥ १० ॥ सन्तोष्य विप्रान्सिद्धिः स्यात्कर्त्ता हर्ता तथात्मवान् ॥ इह लोके सुखं प्राप्य मृतो मोक्षमवाप्नुयात् ॥ ११ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि नारायणमहामनुम् ॥ नमो नारायणायेति ताराद्यष्टाक्षरो मनुः ॥ १२॥ छन्दश्च देवीगायत्री साध्यनारायणो मुनिः ॥ देवता परमात्मास्य पञ्चाङ्गविधिरुच्यते ॥ १३ ॥ कुब्जोल्कश्च महोल्कश्च

अविरक्तोल्क एव च ॥ सहस्रोल्कश्चतुर्थोक्तः स्वाहोल्को हेतिसंयुतः ॥ पञ्चाङ्गमन्त्राः सम्प्रोक्ता अंगुष्ठादावपि न्यसेत ॥ १४ ॥ अष्टाक्षरेण व्यस्तेन कुर्यादष्टाङ्गकेषु च ॥ सृष्टिन्यासोयमुद्दिष्टस्संहारश्चारणादिकः ॥ १५ ॥ नाभौ च गुह्यदेशे च जान्वोः पादयोस्तथा ॥ मूर्ध्नि नेत्रद्वये चैव सुमुखान्ते तथा हृदि ॥ ॥ १६ ॥ स्थितिन्यासस्त्वयं प्रोक्तो विभूतेः पञ्जरं शृणु ॥ सर्वन्यासेषु तारेण पुटितार्णान्प्रविन्यसेत् ॥ १७ ॥ मूलाधारे हृदि मुखे भुजयोश्चोरुमूलयोः ॥ नाभिदेशे प्रथमको न्यासोयं परिकीर्त्तितः ॥ १८ ॥ गले नाभौ हृदि कुचद्वये पार्श्वद्वये तथा ॥ पृष्ठे चेति द्वितीयोयं न्यासस्तु परिकीर्त्तितः ॥ १९ ॥ शीर्षे मुखे नेत्रयुगे कर्णयोर्नासिकाद्वये ॥ क्रमेण विन्यसेद्वर्णान्न्यासोयं स्यात्तृतीयकः ॥२०॥ बाहुमूले बाहुमध्ये मणिबन्धेंगुलीषु च ॥ दशहस्ते चतुर्थः स्याद्वामबाहौ च पञ्चमः ॥ २१ ॥ दक्षोरुमूलजान्वोश्च गुल्फे चांगुलिषु न्यसेत्॥ न्यासः षष्ठोयमुदितो वामांघ्रौ सप्तमः स्मृतः॥ २२ ॥त्वगसृङ्मांसमेदोस्थिमज्ञा शुक्रानिलेषु च ॥ हृदि ध्यात्वा न्यसेद्वर्णान्न्यासोयं चाष्टमः स्मृतः॥ ॥ २३ ॥ शीर्षदेशे मुखे हृत्कजठरोरुषु जंघयोः ॥ पादयोश्च न्यसेद्वर्णान्न्यासोयं नवमः स्मृतः ॥२४॥ गण्डयोरंसयोरूर्वोः पादयोश्च ततः परम् ॥ वामोर्ध्वकरगं चक्रं दक्षेधः करशंखकम्॥२५॥ गदां वै वामोर्ध्वकरे पङ्कजं दक्ष हस्तके ॥ विभूतिपञ्जराख्योयं न्यासो दशविधः स्मृतः ॥ २६ ॥ क्षित्यप्तेजोमरुद्व्योमाहंमहत्प्रकृतिस्तथा॥ तत्त्वाष्टकमिदं बिन्दुयुग्वर्णाद्यं तथोक्तवत् ॥ ॥ २७ ॥ ङेयुतं हृदयान्तं च स्थानेष्वेतेषु विन्यसेत् ॥ पल्लिङ्गहृन्मुखे शीर्षे नेत्रहृद्व्यापकेषु च ॥ २८ ॥ संहारनामा तत्त्वानां न्यासः सृष्टिस्तथा क्रमात् ॥ बिन्दुनादशक्तिशान्तिरूपमात्मचतुष्टयम् ॥ २९ ॥ न्यसेत्पूर्वं तनौ मन्त्री देवताभावसिद्धये ॥ मूर्त्तिपञ्जरविन्यासं प्रणवाद्यं समाचरेत ॥ ३० ॥ नारायणाय चार्यम्णे अं हृन्मध्ये च नाभिगमम् ॥ ईं माधवाय मित्राय नमः प्रोच्य हृदि न्यसेत ॥ ३१ ॥ ईं गोविन्दाय वरुणाय नमश्चैव गले न्यसेत् ॥ उं विष्णवे चांशुमते नमो दक्षिणपार्श्वके ॥ ॥ ३२ ॥ ऊं मधुसूदनाय च भगाय दक्षिणांसके ॥ एं त्रिविक्रमाय वि-

वस्वते हृद्दक्षगण्डके ॥ ३३ ॥ ऐं वामनाय चेन्द्राय हृदन्तं वामपार्श्वके ॥ ॐ श्रीधराय पूष्णे च नमो वामांसके न्यसेत् ॥ ३४ ॥ हृषीकेशाय पर्ज्जन्यायौं हृदा वामगण्डके ॥ अं पद्मनाभाय त्वष्ट्रे नमो ह्यश्च प्रविन्यसेत् ॥ दमोदराय ककुदि सर्गान्तो विष्णवे नमः ॥ ३५ ॥ किरीटहारकेयूरमकराकृतिकुण्डलम् ॥ शंखचक्रगदापद्महस्तं पीताम्बरावृतम् ॥ ३६ ॥ श्रीवत्साङ्कं लसद्वक्षस्स्थलं श्रीभूमिसंयुतम् ॥ आत्मज्योतिःसम्प्रदीप्तसहस्रादित्यतेजसम् ॥ ३७ ॥ सम्बुद्ध्योक्त्वा च सर्वाणि तदन्ते च वदेन्नमः॥ द्विसप्तत्यक्षरो मन्त्रो व्यापकत्वेन चोदितः ॥ ३८ ॥ अतः परं प्रवक्ष्यामि तत्त्वानाञ्च मनूत्तमम् ॥ तारोक्त्यां खादिकान् वर्णान् सबिन्दून् हृदयान्तकान् ॥ ३९ ॥ परायेति पदस्यान्तेमुकतत्त्वात्मनेनमः ॥ उक्त्वा ह्यमुं न्यसेत्पश्चात्तत्त्वनामस्थलानि तु ॥ जीवं प्राणं सर्वतनौ न्यसेदेवं द्वयं बुधः ॥ ४० ॥ बुद्ध्यहङ्कारमनसां हृदि तत्त्वत्रयं न्यसेत् ॥ मस्तकाननहृद्गुह्यपादांसेषु च वैक्रमात् ॥ ४१ ॥ शब्दस्पर्शरूपरसगन्धतत्त्वानि विन्यसेत् ॥ श्रोत्रत्वगक्षिजिह्वाख्यघ्राणानां तत्त्वपञ्चकम् ॥ ४२ ॥ कर्णयोः सकलाङ्गाक्षिजिह्वाघ्राणेषु विन्यसेत्॥ वाक्पाणिपायुपादाख्योपस्थानां तत्त्वपञ्चकम् ॥ ४३ ॥ मुखे पाण्योः पादयोश्च गुदे लिङ्गे न्यसेत्क्रमात् ॥ आकाशवायुतेजांसि जलक्ष्मातत्त्वपञ्चकम् ॥ ४४ ॥ मूर्ध्नि वक्त्रे च हृदये न्यसेल्लिङ्गे च पादयोः ॥ ततस्तु हृदये न्यस्येन्मण्डलत्रितयं पुनः ॥ ४५ ॥ सूर्य्यसोमकृशानूनामर्कषोडशदिक्कलम् ॥ हंसरं वर्णपूर्वं च योजयित्वा च पूर्ववत् ॥ ४६ ॥ ततः कुर्य्याद्वासुदेवादिकं न्यासं स उच्यते ॥ न्यसेदोंखांनमः प्रोक्त्वा पराय परमेष्ठिने॥ ४७॥ वासुदेवेति तत्त्वात्मने नमो मस्तके मतम्॥ तारोयं नम इत्युक्त्वा पुरुषायपदं वदेत्॥ ४८॥ सङ्कर्षणेति तत्त्वात्मने नमश्चमुखेन्यसेत्॥ ओंरं नमःपरायेति निवृत्तिं ङेन्तनामनि ॥४९॥ रुद्धतत्त्वात्मने प्रोच्य नमोन्तं व्यञ्जने न्यसेत् ॥ ओंलं नमः परायेति शर्वायेति पदं वदेत्॥ ५०॥ नारायणाय तत्त्वात्मने नमः पादयोर्न्यसेत् ॥ ओंक्ष्रौं नमः परायेति नृसिंहाय पदं वदेत्॥ ॥ ५१ ॥ कोपतत्त्वात्मने हृच सर्वाङ्गे व्यापकं चरेत् ॥ एवं विन्यस्य विधिव-

त्साक्षान्नारायाणो भवेत् ॥ ५२ ॥ ज्वररोगाभिचाराद्या भूताद्या यान्ति सङ्क्षयम् ॥ वैष्णवीर्दर्शयेन्मुद्राः पूर्वोक्ताश्च ततः परम् ॥ ५३ ॥ किरीटमनुना दद्यात्स्वके पुष्पाञ्जलित्रयम् ॥ ऊर्ध्वं चाधो दक्षभेदाद् घण्टां च कमलं गदाम् ॥ ५४ ॥ शंखं चक्रं सूर्य्यकान्तिं पार्श्वयोर्धरणीं रमाम् ॥ क्रेयूरहारमुकुटं संपीताम्बरकुण्डलम् ॥ ५५ ॥ कौस्तुभोद्भिन्नहृदयं श्रीवत्साङ्कितवक्षसम् ॥ नवशक्तिसमायुक्ते पीठे देवं यजेत्ततः ॥ ५६ ॥ विमलोत्कर्षिणी ज्ञाना क्रियायोगा तथैव च ॥ प्रभा सत्या तथेशानानुग्रहा नव शक्तयः ॥ ५७ ॥ तारो नमो भगवते विष्णवे पदमुच्चरेत् ॥ सर्वात्मने वासुदेवाय साक्षिणे पदमुच्चरेत ॥ ५८ ॥ सर्वात्मने योगपीठ-पद्मपीठात्मने नमः ॥ पीठमन्त्रः समाख्यातः सप्तत्रिंशद्भिरक्षरैः ॥ ५९ ॥ अनेन पीठं सम्पूज्य देवमावाहयेत्ततः ॥ तुभ्यं तमभिधास्यामि मन्त्रमावाहनस्य च ॥ ६० ॥ एह्येहि भगवन्देव लोकानुग्रहकारक ॥ यज्ञभागं गृहाण त्वं वासुदेव नमोस्तु ते ॥ ६१ ॥ आवाह्य तत्र विधिवदुपचारैर्यथोदितैः ॥ कर्णिकायां यथास्थानं यजेदङ्गानि पूर्ववत् ॥ ६२ ॥ केशरेषु यजेत्पश्चान्मन्त्रवर्णान्यथोदितान् ॥ दिक्पत्रेष्वर्चयेद्वासुदेवं सङ्कर्षणं तथा ॥ ६३ ॥ प्रद्युम्नमनिरुद्धं च कम्ब्वब्जारिगदाधरान् ॥ गौरहारिद्र-कृष्णाख्यशुक्लनीलनिभान्क्रमात ॥ ६४ ॥ शान्तिं क्षिप्रां भारतीं च शक्तिं कोणेषु पूजयेत ॥ शुक्लस्वर्णपयःश्यामसङ्काशाश्चारुभूषणाः ॥ ६५ ॥ अब्जं चक्रं दरं चैव गदां पीताम्बरं तथा ॥ अर्चेन्मुसलखड्गौ च वनमालां दलाग्रतः ॥ ६६ ॥ भूपुरे प्रागिमे पूज्याः खगः कृष्णोरुणो विराट् ॥ अतः शङ्खनिधिः पद्मनिधी रक्तोथ रक्तभाक् ॥ ६७ ॥ ईच्छयामो बाण-दुर्गो विष्वक्सेनो निशानिभः ॥ आग्नेयादिदलेष्वेते पूज्याश्चाग्रे दिगीश्वराः ॥ ६८ ॥ तदग्रे हेतयश्चेति षडावरणपूजनम् ॥ नारायणस्य गायत्रीं ब्रवीम्येकमनाः श्रुणु ॥ ६९ ॥ नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि ॥ तन्नो विष्णुः प्रचोदयात् ॥ ७० ॥ क्षत्रियादेस्तु संस्कारं प्रवत्कुर्य्यात्तथा-नया ॥ योग्यः स्याद्विष्णुदीक्षायां द्विजवत्पापवर्जितः ॥ ७१ ॥ दन्तलक्षं

जपेन्मन्त्रं त्रिमध्वक्तैः सरोरुहैः ॥ जुहुयात्तर्पयेत्कृष्णचन्द्रं च केशराम्बुभिः ॥ ७२ ॥ मार्ज्जनान्ते सदाचारान्भोजयेद्वैष्णवान्द्विजान् ॥ एवं सिद्धमनुर्मन्त्री प्रयोगन्तु समाचरेत् ॥७३॥ सायुधाष्टभुजं सौम्यं सर्वाङ्गधवलद्युतिम् ॥ सम्मुखीकरणे ध्यायेद्विष्णुं गरुडगामिनम् ॥ ७४ ॥ एवमेव हरिं ध्यायेद्रोगः संसारकर्मभिः ॥ दधिमध्वाज्ययुक्ताश्च चतुरंगुलसम्मिताः ॥ गुडूचीरयुतं हुत्वा मृत्युमेवातितर्ज्जयेत् ॥ ७५ ॥ शनैश्चरदिनेश्वत्थं सम्यगालभ्य पाणिना ॥ जपेदष्टोत्तरशतं स भवेदपमृत्युजित् ॥ ७६ ॥ पञ्चविंशमितं जप्त्वा मन्त्री शुद्धाः पिबेदपः ॥ निरस्तपातको भूत्वा नीरोगो ज्ञानवान्भवेत् ॥ ॥ ७७ ॥ जप्त्वायुतं च कुम्भाद्भिः सेचनं सर्वरोगनुत् ॥ जपित्वा यस्तु भुञ्जानो धीमानारोग्यवान्भवेत् ॥ ७८ ॥ चन्द्रसूर्य्योपरागे तु त्रिदिनं दिनमेव च ॥ उपोष्याष्टसहस्रन्तु स्पृष्ट्वा शालीन्घृतं जपेत् ॥ यः पिबेल्लभते मेधां कविताबोधनं च सः ॥ ७९ ॥ बिल्वैरयुतहोमेन सद्यो धनपतिर्भवेत् ॥ पद्मतन्तुमयं सूत्रमयुतेनाभिमन्त्रितम् ॥ धारयेद्दक्षिणे हस्ते सर्वतः स्यात्सुरक्षितः ॥ ८० ॥ एवं सङ्क्षेपतः प्रोक्तमन्ते मन्त्राष्टकं शृणु ॥ एते ह्यष्टौ मन्त्रवर्णा मन्त्राष्टकमुदीर्य्यते ॥८१॥ छन्दर्षिदेवताश्चैषां ध्यानाद्यं च वदामि ते ॥ गौतमोथ भरद्वाजो विश्वामित्रः क्रमेण च ॥ जमदग्निर्वशिष्ठश्च कश्यपोत्रिर्वटोद्भवः ॥ ८२ ॥ गायत्र्युष्णिगनुष्टुप् च बृहती पङ्क्तिरेव च ॥ त्रिष्टुप् च जगती चैव विराट् छन्दांस्यनुक्रमात् ॥ ८३ ॥ धरा ध्रुवस्तथा सोम आपोग्निर्वायुरेव च ॥ प्रत्यूषश्च प्रभासश्च विज्ञेया देवताः क्रमात् ॥ ८४ ॥ अग्निर्भूर्वायुराकाश आदित्यो द्यौर्विधुश्च ते ॥ तत्त्वानि सप्तलोकास्तु क्षेत्राणि खचरात्मकाः ॥ ८५ ॥ शुक्लं हिरण्मयं कृष्णं रक्तं कुंकुमसन्निभम् ॥ पद्मकिञ्जल्कनीलाभं रक्तवर्णाष्टको मतः ॥ ८६ ॥ षडाद्ययोरुदात्तः स्यात्स्वरितस्तु द्वितीययोः ॥ प्रचयस्त्रिचतुर्वर्णैर्निहतं पञ्चमाक्षरम् ॥ ८७ ॥ उदात्तं सतमं चेति ज्ञात्वा वेदं जपेन्मनुम् ॥ दधच्चक्रं गदां पद्मं दरं दक्षिणवामयोः ॥ सान्तराः स्युः शंखचक्रगदापद्मकराः क्रमात् ॥ ८८ ॥ यां मूर्तिं पूजयेत्पूर्वमन्यास्तस्या भवन्ति हि ॥ अङ्गान्यन्तिमपत्रे तु

मध्यस्थं पुनरर्चयेत् ॥ ८९ ॥ तत्र प्रणवपूजायां चाङ्गावृत्तिस्तथादिमा ॥ द्वितीयावरणं प्रोक्तमन्त्रवर्णाष्टमूर्त्तिभिः ॥ ९० ॥ वासुदेवादिकैः शान्त्यादिसंयुक्तैस्तृतीयकम् ॥ तृतीयेष्टदले प्रोक्ता रतिश्चापि धृतिस्तथा ॥ ९१ ॥ कान्तिस्तुष्टिश्च पुष्टिश्च स्मृतिर्दीप्त्याख्यकीर्त्तयः ॥ वज्रादिभिश्चतुर्थी स्यात्प्राग्वत्षष्ठी सपञ्चमी ॥ ९२ ॥ मोकारावृत्तिपूजायां तृष्णावृत्तिचतुष्टयम् ॥ नाकारावृत्तिपूजायामावृत्तित्रयपूजने ॥ ९३ ॥ राकारावृत्तिपूजायां तुल्यमेवावृतिद्वयम् ॥ तृतीयावरणे पूज्या श्रीर्माया च मनोन्मनी ॥ ९४ ॥ ह्रीर्मोहिनी महामाया रमाद्या आवृतित्रयम् ॥ यवर्णमूर्तिपूजायान्तुल्यमेवावृतिद्वयम् ॥ ९५ ॥ तृतीयावरणे चक्रं शंखश्चापि गदा हलः ॥ शार्ङ्गं च मुसलं खड्गस्त्रिशूलमिति पूजनम् ॥ शोकारमूर्त्तिपूजायां प्राग्वदावरणद्वयम् ॥ ॥ ९६ ॥ तृतीयेष्टदलेऽनन्तो वासुकिस्तक्षकस्तथा ॥ कर्कोटकस्तथा पद्मो महापद्मस्ततः परम् ॥ शंखपालश्च कुलिकः प्रोक्तमत्रावृतिद्वयम् ॥ ९७ ॥ यकारमूर्तिपूजायामङ्गैस्स्यात्प्रथमावृतिः ॥ वासुदेवादिभिः शान्त्यादियुक्तैरमया मता ॥ ९८ ॥ तृतीयार्कदले कोणे वाद्यांश्चैव प्रपूजयेत् ॥ चतुर्थ्यामष्टपत्रे तु वज्रादीनां समर्चनम् ॥ ९९ ॥ पञ्चम्यां दिग्दलेष्वर्च्या मत्स्याद्या ह्यवतारकाः ॥ षष्ठ्यामिन्द्रादिकाश्चाग्रे तदस्त्राणीति पूजनम् ॥ १०० ॥ जपेत्षोडशलक्षाणि हुनेदत्र तु पूर्ववत् ॥ इह लोके सुखं प्राप्य विष्णुसायुज्यमाप्नुयात् ॥ १०१ ॥ अथान्यं मुक्तिदं वक्ष्ये नारायणमनुं परम् ॥ नारायणस्य चरणौ शरणं च ततो वदेत्॥ १०२॥ प्रपद्ये तारमुच्चार्य्य श्रीमन्नारायणाय च ॥ नमो जिनार्णको मन्त्रो मुन्याद्यं पूर्ववन्मतम्॥ १०३॥ षड्दीर्घयुक्तकामेन षडङ्गविधिरस्य तु ॥ ध्यानपूजाप्रयोगादि पूर्ववत्परिकीर्त्तितम् ॥ १०४॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि माधवस्य महामनुम् ॥ क्षिप्रसिद्धिकरः काश्यां यद्वासौ ध्रुवपूर्वकः ॥ १०५ ॥ रमां बिन्दुपदं चोक्त्वा माधवाय नमो नमः ॥ द्वादशार्णो महामन्त्रः पञ्चाङ्गानि क्रमात्पदैः ॥ १०६ ॥ शंखचक्रगदापद्मधरं पीताम्बरावृतम् ॥ बद्धाञ्जली रमा वामे वादयन्ती च वल्लकीम्॥ ॥ १०७ ॥ नारदस्तुम्बुरुर्दक्षभागे तैरपि संयुतम् ॥ प्रसन्नवदनं ध्यायेद्वर-

दानसमुद्यतम् ॥१०८॥ पूर्वोक्ते पूजयेत्पीठे मध्ये लक्ष्म्या समावृतम् ॥पञ्चाङ्गपूर्वमभ्यर्च्य यजेदष्टदले क्रमात् ॥ १०९ ॥ किरणां धूतपापां च यमुनां च सरस्वतीम् ॥ गङ्गामसीं च वरुणां गण्डकीं च दलाष्टके ॥ ११० ॥ विदुरं नारदं भीष्मं दिवोदासार्जुनौ बलिम् ॥ विभीषणं च प्रह्लादं बाह्ये षोडशपत्रके ॥ १११ ॥ मोदं प्रमोदं सुमुखं दुर्मुखं गणनायकम् ॥ ढुण्ढिराजं विशालाक्षं ढुण्ढिभैरवमीश्वरम् ॥११२॥ साम्बादित्यं योगिनीं च दण्डपाणिं विनायकम् ॥ जैनेन्द्रं च महामायं भूपुरे दिक्पतीनपि ॥ ११३ ॥ दन्तलक्षं जपेन्मन्त्रं होमं प्राग्वत्समाचरेत ॥ शान्त्यादिगुणसम्पन्नो ध्यवनान्मुक्तिभाग्भवेत् ॥ ११४ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि गोविन्दस्य परं मनुम् ॥ गोविन्दाय नमश्चेति षडर्णो मनुरीरितः ॥ ११५ ॥ शौनकोस्य मुनिश्छन्दो विराड्गोविन्द ईश्वरः ॥ षडङ्गं मन्त्रवर्णैः स्यात्सर्वेण व्यापकं चरेत् ॥ ११६ ॥ शंखचक्रगदापद्मधरं ध्यायेत्किरीटिनम् ॥ गरुडोपरि संस्थं च सनकाद्यैरुपासितम् ॥ ११७ ॥ लक्ष्मीधराभ्यां सहितमुद्यदादित्यकुण्डलम् ॥ लोकरक्षाकरं दिव्यं दिव्यमाल्यानुलेपनम् ॥ ११८ ॥ पूर्वोदिते यजेत्पीठे वैष्णवेनोक्तवर्त्मना ॥ देवमावाह्य मन्त्राङ्गैः प्रथमावृतिरीरिता ॥ ११९ ॥ चक्राद्यैश्च द्वितीया स्यात्तृतीया सनकादिभिः ॥ सनकः स्यात्ततोप्यग्रे सनन्दनसनातनौ ॥ १२० ॥ सनत्कुमारश्च पराशरो व्यासश्च नारदः ॥ शौनकोष्टम एव स्याच्चतुर्थी लोकपालकैः ॥ १२१ ॥ तदायुधैः पञ्चमी स्यादेवं पूजा समीरिता ॥ लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं तद्दशांशं हुनेद् घृतैः ॥ १२२ ॥ तर्पणं मार्जनं कुर्याद्ब्राह्मणानपि भोजयेत् ॥ एवं कृतप्रयोगस्य रोगनाशो भविष्यति ॥ १२३॥ कन्यार्थी लाजहोमेन लक्ष्म्यर्थी बिल्वहोमतः॥वस्त्रार्थी पुष्पहोमेन आरोग्यार्थी तिलैर्हुनेत्॥१२४॥रविवारे जले स्थित्वा नाभिमात्रे जपेद्बुधः ॥ अष्टोत्तरसहस्राणि ज्वरनाशो भवेद्ध्रुवम् ॥१२५॥ विवाहार्थं जपेन्मासं शशिमण्डलसन्निभम् ॥ ध्यायेल्लभेद्रमां[1] कन्यां कुलीनां च कुटुम्बिनीम् ॥१२६॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि विष्णुमन्त्रं महाद्भुतम् ॥ विष्णवे नम इत्येष मन्त्रः पंचाक्षरो मतः ॥ १२७ ॥ नारदोस्य मुनिश्छन्दो गायत्री विष्णुरीश्वरः ॥

१ रमयतीति रमा ताम् सुन्दरीमिति यावत् ॥

पञ्चवर्णैः समस्तेन षडङ्गविधिरीरितः ॥ १२८ ॥ शंखचक्रगदापद्मधरं लक्ष्मीसमावृतम् ॥ पीताम्बरं घनश्यामं ध्यायेत्तं भूषणान्वितम् ॥ १२९ ॥ पूर्वोक्ते च यजेत्पीठे षट्कोणाष्टदलान्विते॥बलिं विभीषणं भीष्मं प्रह्लादं नारदार्जुनौ ॥ १३० ॥ षड्दले चाष्टपत्रे तु विदिक्षु सनकादिकान् ॥ एवं शीलं सुशीलं च जयं च विजयं दिशि ॥ भूपुरे दिक्पतीनिष्ट्वा तदस्त्राणि ततो बहिः ॥ १३१ ॥ पंचलक्षं जपेन्मन्त्रं त्रिमध्वक्तैस्तिलैर्हुनेत् ॥ तर्प्पणैर्मार्जनैर्विप्रभोजनैराशु सिद्ध्यति ॥ १३२ ॥ अनेन लक्षपद्मानि शान्तिकामः समर्चयेत् ॥ न कदाचिद्दरिद्रः स्याद्दूर्वाभिः स्यादरोगता ॥१३३॥ रक्तैर्हयारिकुसुमै राजानं वशमानयेत् ॥ चम्पकैः श्रियमाप्नोति मालत्यापि सुखी भवेत् ॥१३४॥ तुलसीमञ्जरीभिस्तु सर्वकामानवाप्नुयात् ॥ केतक्या जायते कामो ह्यमरो जायते नरः ॥ पारिजातैस्तु सौन्दर्य्यं नातः परतरो मनुः ॥ १३५ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि मधुसूदनसन्मनुम् ॥ तारो नमो भगवते ङेन्तश्च मधुसूदनः ॥ १३६ ॥ त्रयोदशाक्षरो मन्त्रो मुनिर्ब्रह्मा समीरितः ॥ छन्दोनुष्टुब्देवता तु भगवान्मधुसूदनः ॥ १३७ ॥ पदैर्मन्त्रस्य सर्वेण पञ्चाङ्गविधिरीतः ॥ शेषतल्पप्रसुप्तं तु लक्ष्मीसंवाहितांघ्रिकम् ॥ १३८ ॥ नाभिपद्मस्थितविधिं शंखचक्रगदाधरम् ॥ पीताम्बरं घनश्यामं मधुकैटभमारकम् ॥ १३९ ॥ कर्णिकायां यजेद्विष्णुं बहिरष्टदलेर्चयेत् ॥ योगनिद्रां महामायां कालरात्रिं च कालिकाम् ॥ १४० ॥ महारात्रिं मोहरात्रिं महाविद्यां च मोहिनीम् ॥ एवं सम्पूज्य देवेशं जपेल्लक्षचतुष्टयम् ॥ १४१ ॥ पद्मैर्हुनेत्त्रिमधुराप्लुतैस्तस्य दशांशतः॥तर्प्पणं मार्जनं कुर्यान्मन्त्रसिद्धिः प्रजायते ॥ १४२ ॥ आम्रपुष्पैर्गोघृताक्तैर्हुत्वा भोगमवाप्नुयात्॥पलाशकुसुमैर्हुत्वा शत्रूणां स्तम्भयेद्बलम्॥१४३॥ अथार्कैः शोकनाशः स्यात्सिन्दूरैर्वश्यता भवेत्॥मालत्या चातुला लक्ष्मीरन्यत्पूर्ववदेवतु ॥१४४॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि मन्त्रं त्रैविक्रमं परम् ॥ तारं नमो भगवते व्याहृतित्रितयं वदेत् ॥ १४५ ॥ व्यापकाय पदं पश्चान्ङेन्तं चापि त्रिविक्रमम् ॥ १४६ ॥ विंशत्यर्णो महामन्त्रो गतराज्यप्रदायकः ॥ पदपञ्चकसर्वेण षडङ्गविधिरीरितः ॥ १४७ ॥ मुनयो वालखिल्याः स्युश्छन्दो

गायत्रमीरितम् ॥ देवता विश्वरूपोस्य त्रिविक्रम उदाहृतः ॥ १४८ ॥ दक्षांघ्रिव्याप्तपातालं वामांघ्रिव्याप्तभूतलम् ॥ दक्षिणं पुनरुत्थाप्य स्वर्गव्याप्तकरं हरिम् ॥१४९॥ बलिदत्तैः कुशतिलैस्तोयैः सम्प्रस्रवत्करम्॥ अभयं वामहस्तेन कुर्वन्तं च सुरेश्वरम् ॥ गङ्गौघधौतपादाब्जं ध्यायेद्ब्रह्मादिकैः स्तुतम् ॥ १५० ॥ वैष्णवे च यजेत्पीठे दलेष्वष्टसु च क्रमात् ॥ बलिं विधिं च प्रह्लादं कश्यपं चादितिं शिवम् ॥ लक्ष्मीं भुवं भूपुरे तु दिगीशानायुधानि च ॥ १५१ ॥ विंशल्लक्षं जपेन्मन्त्रं तिलतण्डुलसर्षपैः ॥ त्रिमध्वक्तैर्हुनेत्पश्चात्तर्प्पणाद्यं च कारयेत् ॥ १५२ ॥ एवं सिद्धमनुर्मन्त्री लभते वाञ्छितं फलम् ॥ १५३ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि वामनस्य मनुं परम् ॥ तारो नमो भगवते बलिसर्वस्वहारिणे ॥ १५४ ॥ अमुकं देहि ममाभीष्टमनेकं च वामन ॥ मायां रमां समुच्चार्य्य मन्त्रो द्वात्रिंशदर्णकः ॥ ॥ १५५ ॥ कामो मुनिरनुष्टुप् च छन्दो देवस्तु वामनः ॥ सप्ताष्टार्कत्रिभूचन्द्रैः षडङ्गविधिरीरितः॥ १५६ ॥प्रगृह्णन्तं बलिं चार्थान्हर्षेण ददतं बलिम्॥ पूर्णकामावुभौ ध्यायेदिति प्रीतिसमन्वितौ ॥ १५७ ॥ पूर्वोक्तमर्चनन्तत्रं कोटिमात्रं जपेन्मनुम् ॥ लक्षं हुनेद्बिल्वफलैर्मधुरत्रयसंयुतैः ॥ १५८ ॥ तर्प्पणं मार्जनं कृत्वा तथा ब्राह्मणभोजनम् ॥ तद्दशांशं च मन्त्रस्य सिद्धिः स्यात्स्थापनाशिका ॥ १५९ ॥ एवं सिद्धमनुर्मन्त्री ध्यायन्देवं जपेन्मनुम् ॥ साध्ये ददतमिष्टार्थं ध्यात्वा वर्णमितं जपेत् ॥ भावयेद्वाञ्छितं स्वार्थं स दद्यान्नात्र संशयः ॥ १६० ॥ अहोरात्रं जपेद्वापि स देवादर्थदा भवेत् ॥ प्रातस्तदा स्वयं मन्त्रं साधकाय प्रयच्छति ॥ १६१ ॥ दद्यादभीष्टं ललिताप्यन्यदेवस्य का कथा ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि श्रीधरस्य मनुं परम् ॥ रमां शक्तिं कामबीजं श्रीधराय ततो वदेत् ॥ १६२ ॥ त्रैलोक्यमोहनायेति नमोन्तः षोडशाक्षरः ॥ ऋषिर्ब्रह्मा भवेच्छन्दो गायत्रं श्रीधरस्सुरः ॥ १६३ ॥ श्रीबीजेन षडङ्गानि कुर्य्यात्षड्दीर्घसंयुजा ॥ दुग्धाब्धौ च सिते द्वीपे सर्वर्त्तुफलितद्रुमे ॥ १६४ ॥ तत्र कल्पद्रुमाधस्तात्पक्षीन्द्रराचितासने ॥ शङ्खचक्रगदापद्मपाणिं चामीकरद्युतिम् ॥ १६५ ॥ किरीटिनं कुण्डलिनं श्रीवत्सांकि-

तवक्षसम् ॥ हृदि लक्ष्मीधरं ध्यायेच्छ्रीधरं पुरुषार्थदम् ॥ १६६ ॥ यजेच्च-वैष्णवे पीठे कर्णिकायां सुरेश्वरम् ॥ षडङ्गानि यजेत्तत्र देवाङ्गेषु ततो यजेत् ॥ ॥ १६७ ॥ वक्षस्स्थले दक्षभागे श्रीवत्सायेति पूजयेत् ॥ वामे च कौस्तुभायेति ग्रीवायां पूजयेत्ततः ॥ १६८ ॥ नमोन्तं वनमालायै मुकुटायेति संयजेत् ॥ भाले च कर्णिकायां च पक्षिराजाय वै नमः ॥ १६९ ॥ नमः पंकजनाभाय गरुडायेति पूजयेत् ॥ पुरुषोत्तमकं लक्ष्मीनिवासं तदनन्तरम् ॥ ॥ १७० ॥ सकलश्च जगन्नाथं जगत्क्षोभणमेव च ॥ सर्वस्त्रीहृदयोन्मादं मदोन्मादकमेवच ॥ १७१ ॥ सर्वसौभाग्यदं सर्वकामदं च प्रपूजयेत् ॥ तदुत्सङ्गगतां देवीं पूजयेच्छ्रीं श्रियै नमः ॥ १७२ ॥ लोकेश्वरांश्च वज्रादीन्भूपुरे परिपूजयेत् ॥ लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं तद्दशांशं घृतैर्हुनेत् ॥ १७३ ॥ तर्प्पणादि ततः कुर्य्यात्पूर्ववत्साधकोत्तमः ॥ ततः सिद्धमनुर्मन्त्री काम्यकर्म समाचरेत् ॥ ॥ १७४ ॥ गन्धैश्च शतपुष्पैश्च होमो लक्ष्मीकरः परः ॥ वराहोक्तान्प्रयोगांश्च विदध्यादत्र साधकः ॥ भजते श्रीधरं यस्तु स च लोकद्वये सुखी ॥ १७३ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि हृषीकेशस्य सन्मनुम् ॥ कामबीजं हृषीकेशो ङेहृदन्तो गजाक्षरः ॥ १७६ ॥ छन्दोनुष्टुबृषिर्ब्रह्मा हृषीकेशश्च देवता ॥ षड्दीर्घयुक्तकामेन षडङ्गविधिरीरितिः ॥ १७७ ॥ शंखचक्रगदापद्मधारिणं संस्मरेद्विभुम् ॥ गरुडोपरि संविष्टं शुभ्रवर्णं सुभूषणम् ॥ १७८ ॥ श्रीधरोक्ते यजेत्पीठे ह्यङ्गाद्यावरणान्वितम् ॥ अष्टलक्षं जपेन्मन्त्रं तद्दशांशं हुनेत्पुनः ॥ आज्याक्तैः कमलैः पूर्णैस्तर्प्पणादि ततश्चरेत् ॥ १७९ ॥ एवं सिद्धमनुर्मन्त्री प्रयोगान्पूर्ववच्चरेत् ॥ विजयायाः प्रसूनैश्च तर्प्पणं सर्वकामदम् ॥ ॥ १८० ॥ अथ मन्त्रान्तरं वक्ष्ये श्लोकरूपं महाफलम् ॥ यज्जपादेव सिध्यन्ति साधकाभीष्टकोटयः ॥ १८१ ॥ स्थाने हृषीकेश तव प्रकीर्त्या जगत्प्रहृष्यत्यनुरज्यते च ॥ रक्षांसि भीतानि दिशो द्रवन्ति सर्वे नमस्यन्ति च सिद्धसंघाः ॥ १८२ ॥ अर्ज्जुनोस्य मुनिः प्रोक्तोनुष्टुप् छन्दश्च देवता ॥ हृषीकेशोखिलं सर्वं ज्ञेयं वै पूर्वमन्त्रवत् ॥ १८३ ॥ षड्दीर्घयुक्तबीजेन षडङ्गविधिरीरितः ॥ प्रलयाब्धौ शेषतल्पे लक्ष्मीसंवाहितांघ्रिकम् ॥ १८४ ॥

नाभिपुष्करसंस्थेन धात्रा स्तुतमरिन्दमम् ॥ पद्मं कौमोदकीं हस्तैर्दधतं दीप्तते जसम् ॥ १८५ ॥ पीताम्बरधरं श्याममर्धोन्मीलितलोचनम् ॥ ध्यात्वार्चयेच्छ्रीधरोक्तपीठे तद्वज्जपादिकम् ॥ १८६ ॥ प्रयोगांश्च विजानीयात्पद्मनाभार्चनं त्विति ॥ १८७ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि दामोदरमनुं परम् ॥ राधादामोदरायेति कामबीजेन सम्पुटः ॥ नवाक्षरो महामन्त्रो भोगभाजां सुसिद्धिदः॥ १८८॥ कामदेवो मुनिश्छन्दो गायत्रं देवता मतः॥ राधादामोदरः साक्षाद्भुक्तिमुक्तिफलप्रदः ॥ १८९ ॥ पीताम्बरधरं श्यामं नानालंकारभूषितम् ॥ वामोत्सङ्गगतां राधां चालिङ्गन्तं मुदान्वितम् ॥ १९० ॥ उद्याने संस्मरेद्देवं नानापुष्पलतायुतम् ॥ षडङ्गं कामबीजेन यजेद्देवं सशक्तिकम् ॥ १९१ ॥ कर्णिकायां केशरेषु गौर्य्याद्या मातृका यजेत् ॥ ब्रह्मादिकान्पद्ममध्ये पत्राग्रे तु ह्रियं रतिम् ॥ १९२॥ पञ्चकामान्वसन्तं च तद्बाह्ये भूपुरेऽर्चयेत् ॥ दिगीशांश्चापि वज्रादीनेवं पूजा समीरिता ॥ १९३ ॥ नवलक्षं जपेन्मन्त्रं तण्डुलं सघृतं हुनेत् ॥ तर्पणं मार्जनं कृत्वा दम्पत्योर्भोजनं चरेत् ॥ १९४ ॥ एकलक्षादिपंचान्तं कार्य्यलाघवगौरवात् ॥ पुरश्चरणवत्कुर्याज्जपाद्यं कार्य्यसिद्धये॥ १९५॥ चतुर्ष्वपि युगेष्वेतत्समोद्भुतफलो न हि ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि संकर्षणमनुं परम् ॥ १९६॥ कामबीजं समुचार्य्य ङेन्तन्त्रैलोक्यमोहनम्॥ ततश्चाप्रतिरूपाय पराय च वदेत्पदम् ॥ १९७॥ संकर्षणात्मने हृच्च पञ्चविंशाक्षरो मनुः॥ त्रैमुनिस्तु मुनिश्छन्दो मितं संकर्षणः सुरः॥ १९८॥ षड्भिः पदैः षडङ्गानि तथांगुष्ठादिषु न्यसेत् ॥ अंकुशं दक्षिणे हस्ते वामेनाभयमेव च ॥ १९९॥ मेघश्यामं पीतवासो नानाभरणसंयुतम् ॥ नारदादियुतं ध्यायेद्वाणीलक्ष्म्यौ च पार्श्वयोः ॥ २००॥ सुवर्णमध्ये विपिने स्थितं कल्पद्रुमावृतेः ॥ यजेच्च वैष्णवे पीठे नवलक्षं जपेन्मनुम्॥ २०१॥ हुनेत्तिलैस्त्रिमधुराप्लुतैः स्यात्तर्प्पणादिकम् ॥ २०२ ॥ एवं सिद्धमनुर्मन्त्री दूर्वाखण्डायुतं हुनेत्॥ समस्तरोगनाशस्तु लक्ष्मीः पद्माक्षहोमतः॥ २०३॥ आकर्षणं बिल्वफलैस्ताम्बूलैः स्याद्वशीकृतिः॥ दीर्घायुष्यं गोघृतेन महिषेणापि मन्मथः ॥ २०४ ॥ पुत्रजीवकबीजानां घृताक्तानां च होमतः॥ वन्ध्यापि लभते पुत्रं होमसंख्यायुतादिकम्॥ २०५॥

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि वासुदेवमनुं परम्॥ तारो नमो भगवते वासुदेवायसंस्मृतः॥ ॥२०६॥ द्वादशार्णस्तु गायत्री छन्दश्चास्य प्रजापतिः ॥ मुनिर्देवो वासुदेवः पञ्चाङ्गविधिरीरितः ॥२०७॥ पदैः समस्तैस्तु तथा द्वादशाङ्गं ततो न्यसेत्॥ स्तनयोर्हृदये पृष्ठे बाह्वोरूर्वोश्च जानुनोः॥पादयोस्तु मनोर्वर्णान्न्यसेद्बिन्दूनमोन्तकान्॥२०८॥ मन्त्रं सम्पूर्णमेवं तु यथास्थाने न्यसेद्बुधः ॥ त्रिशस्तारत्रिपुटितमूलेन व्यापकं चरेत् ॥ २०९ ॥ मन्त्रार्णैस्त्रिविधं न्यासं न्यसेन्मन्त्री ततः परम् ॥ कपोलकर्णदृक्कण्ठदोर्हृज्जठरनाभिषु ॥ २१० ॥ लिङ्गजान्वंघ्रिषु प्रोक्तः सृष्टिन्यासस्तु मन्त्रिभिः ॥ हृदादिकोयं शीर्षान्तः स्थितिन्यास उदाहृतः ॥ २११॥ पादावारभ्य शीर्षान्तो न्यासः संहारसञ्ज्ञकः ॥ एष क्रमो यतीनां तु व्यस्ततो ब्रह्मचारिणाम् ॥ २१२ ॥ संहारसृष्टिस्थितयो ग्रहस्थानां प्रकीर्तिताः॥संहृतां दोषसंहारः सृष्टौ च शुभ सृष्टयः॥स्थितौ च शान्तिविन्यासः स स्यात्कार्यस्त्रिधा बुधैः ॥२१३॥ जीवतत्त्वात्मने प्रोच्य पुरुषाय नमश्च के॥प्राणतत्त्वात्मने भाले सर्वगाय नमो न्यसेत् ॥ बुद्धितत्त्वात्मनेच्युताय नमो नेत्रयोर्न्यसेत् ॥२१४॥ चित्ततत्त्वात्मने वासुदेवाय च नमो मुखे ॥ कर्णे हृत्पद्मतत्त्वाय वदेत्संकर्षणाय च॥२१५॥नमोन्यसेदथो दक्षभुजे सूर्यकलात्मने॥ सूर्यमण्डलतत्त्वाय प्रद्युम्नाय ततो न्यसेत् ॥ ततो न्यसेद्वामबाहौ तत्षोडशकलात्मने ॥ २१६ ॥ चन्द्रमण्डलतत्त्वानिरुद्धाय हृदि न्यसेत् ॥ न्यसेत्ततश्च हृदये मध्यदेशे कलात्मने ॥ अग्निमण्डलतत्त्वाय ङे[illegible] वा नारायणो मतः ॥ २१७ ॥ कुक्षौ न्यस्येद्वासुदेवं तत्त्वश्च ब्रह्मणे न[illegible]ः ॥ संकर्षणाख्यतत्त्वाय लिङ्गे स्याद्विष्णवे नमः ॥ २१८ ॥ ततः [illegible] प्रद्युम्नतत्त्वाय नृसिंहाय नमो न्यसेत्॥दक्षपादे च वामेनिरुद्धतत्त्वात्म[illegible]नेत्॥२१९॥वाराहाय नमश्चेति तत्त्वन्यास उदाहृतः ॥ मूर्त्तिर्ध्यानमुच्यते ॥ दुग्धाम्भोधौ सितद्वीपे दिव्ययोषाविराजिते ॥ २२१ तु पङ्कजम् ॥२२२॥ स्वर्णाभं चिन्तयेत्तत्र वासुदेवं स्मिताननम्॥चन्द्रक

नामानं केशवादिकमाचरेत्॥ ॥ २२० ॥ न्यासं ततो वासुदेवं ध्यायेन् ॥ तत्रास्तेसौ महारम्ये सर्वर्तुद्रुमसंकुले ॥ तत्र कल्पद्रुमाधस्ताद्रत्नमंचे ॥न्ति शंखचक्रगदापद्मलसत्करम्॥२२३॥

श्रीवत्साङ्गदकेयूरमुकुटं चारुकुण्डलम् ॥ सकौस्तुभं पीतवस्त्रं धृतग्रैवेयकंकणम् ॥ २२४ ॥ सनकाद्यैः सिद्धविद्याधरगन्धर्वसेवितम् ॥ यजेन्नारायणे पीठे मूर्त्तिं मूलेन कल्पयेत् ॥ २२५ ॥ पूर्वमङ्गानि सम्पूज्य वासुदेवादिहेतयः ॥ दिग्विदिक्षु च सम्पूज्यास्ततो द्वादशमूर्तयः ॥ केशवाद्याः समभ्यर्च्य लोकेशा आयुधैः सह ॥ एवं सम्पूज्य विधिवज्जपेद्द्वादशलक्षकम् ॥ तत्सहस्रं च कमलैर्जुहुयान्मधुरप्लुतैः ॥ २२६ ॥ तदभावे तिलैः शुद्धैर्जुहुयादाज्यसंप्लुतैः ॥ तर्प्पणादि ततः कृत्वा प्रयोगानाचरेत्तथा ॥ क्षीरवृक्षसमिद्भिश्च होमः स्यात्पापमुक्तये ॥२२७॥ दुग्धकाष्ठैः शमीमिश्रैः सहस्राण्ययुतानिच ॥ आज्येन हविषो होमाच्चित्तशुद्धिः प्रजायते ॥ पायसेन तिलैः शुद्धैः समिदाज्यैः सशालिभिः ॥ पृथगष्टसहस्राणि हुत्वाभीष्टमवाप्नुयात् ॥ नारायणोक्तान्निखिलान्प्रयोगानाचरेत्ततः ॥ २२८ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि वासुदेवमनुं परम् ॥ तारं मायाद्वयं लक्ष्मीद्वयं लक्ष्मीपदं वदेत् ॥ २२९ ॥ वासुदेवाय हृदयं शक्रवर्णः स्मृतो मनुः ॥ ऋषिः प्रजापतिश्छन्दो गायत्री बीजकं ध्रुवः ॥२३०॥ देवो लक्ष्मीर्वासुदेवः शक्तिर्देवी प्रकीर्त्तिता द्विद्विद्वीषुद्विभिर्वर्णैस्ताराद्यैरङ्गकल्पनम् ॥२३१॥ उद्यत्सौदामिनीकान्ति नानाभूषणभूषितम् ॥ लक्ष्म्यालिङ्गनतश्चैकीभूतं चाङ्कगतां हि ताम्[1] ॥ ॥ २३२ ॥ पुस्तकं दर्प्पणं पद्मं रत्नकुंभं रमां करैः ॥ दधतीं शंखचक्राब्जगदाहस्तं गदाधरम् ॥२३३॥ द्वादशाक्षरवत्पूजा शक्रलक्षं जपो मतः ॥ दशांशं पङ्कजैर्होमो मधुरत्रयसंयुतैः ॥ २३४ ॥ पायसेन कृतो होमो लक्ष्मीवश्यप्रदो भवेत् ॥ मधुराक्तैस्तिलैर्हुत्वा सर्वकार्याणि साधयेत् ॥ २३५ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि प्रद्युम्नमनुमद्भुतम् ॥ क्लीं प्रद्युम्नाय हृदयं मनुः सप्ताक्षरो मतः ॥ २३६ ॥ कामो मुनिर्विराट् छन्दः प्रद्युम्नश्चास्य देवता ॥ नियोगः समरे जेतुं कामयुद्धे तथा स्त्रियाः ॥ २३७ ॥ ध्यायेन्मधुवने देवं सर्वर्तुकुसुमावृते ॥ आलिङ्गितं प्रभावत्या नानारूपं सुभूषितम् ॥ २३८ ॥ शरचापधरं कान्तं कान्ताभिरपि वीक्षितम् ॥ गन्धर्वैरभितो गीतं प्रसन्नमुखपंक-

१ पश्यन्तामिति शेषः ॥

जम् ॥ २३९ ॥ यजेत्पूर्वोदिते कामपीठे मन्त्रायुतं जपेत् ॥ शरत्काले वसन्ते वा दिनानामेकविंशतिम् ॥ २४० ॥ आद्यन्तयोः पूजनं स्याद्भोजयेद्दम्पतीयुगम् ॥ एवं सिध्यति मन्त्रोयं सर्वाभीष्टप्रदायकः ॥ २४१ ॥ सहस्रादिक कोटयन्तं होमः कार्य्यो वशो भवेत् ॥ यक्षिण्यो वशगाश्चैव वश्यः स्याद्योगिनीगणः ॥ २४२ ॥ राजिकाभिः स्त्रियो वश्याः सर्प्पाः स्युर्गारुडीदलैः ॥ विप्राः पलाशकुसुमैः सेवन्तीभिर्नृपास्तथा ॥ २४३ ॥ वैश्याश्च चम्पकैः शूद्राः पुष्पैः सहचरोद्भवैः ॥ तुरुष्का यान्ति दासत्वं जयन्त्याः कुसुमैर्हुनेत् ॥ ॥ २४४ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि चानिरुद्धमनुं तथा ॥ बाणरुद्धानिरुद्धाय मनोन्यास्मिन्मनोरथे ॥ उषाहृदयरुद्धाय कामरूपाय ते नमः ॥२४५॥ वात्स्यायनो मुनिश्छन्दोनुष्टुब्देवोनिरुद्धकः ॥ स्मरेदुषागृहे तं च चित्रलेखादिसंयुते ॥ २४६ ॥ पर्यंके सुखमासीनं नानालंकारभूषितम् ॥ आलिङ्गितप्रियोषं च स्त्रीकौतुकरमान्वितम् ॥ २४७ ॥ नमोन्तैः षट्पदैः कामबीजाद्यैः स्यात्षडङ्गकम् ॥ कामपीठे यजेद्देवं वर्णलक्षं जपेन्मनुम् ॥ २४८ ॥ घृताक्तः कामकुसुमैरभावे चूतसम्भवैः ॥ जुहुयान्मन्त्रराजस्य सिद्धितोस्य जगद्वशम् ॥ २४९ ॥ अयं लौकिकमार्गेण साधको निशि होमयेत् ॥ अष्टोत्तरसहस्रं तु तदा कुलवतो नृपाः ॥ दासीभूताः साधकस्य जपेदृतुमतीं यभेत् ॥२५० ॥ अष्टोत्तरसहस्रं त भतप्रेतपिशाचकाः ॥ प्रत्यक्षीभूय कार्याणि कुर्वते द्[illegible]रम् ॥ २५१ ॥ किञ्चिद्भक्ष्यन्त[illegible] दद्यात्ते सर्वकारकाः ॥ अथ वक्ष्ये महामन्त्रं सौख्यदं पौ[illegible]त्तमम् ॥ मायारमातारकामबीजं हृत्पुरुषोत्तम ॥ २५२ ॥ आद्या[illegible]निरुद्धलक्ष्मीति निवाससकलेति च ॥ जगत्क्षोभण सर्व स्त्रीहृदयेति विदारण ॥ २५३ ॥ ङेन्तं मनोन्मादकरं सुरासुरपदं वदेत् ॥ मनुजसुन्दरीत्युक्त्वा मनोन्मथमनांसि च ॥ २५४ ॥ तापयद्वितयं प्रोच्याद्वि द्विंर्दीपय शोषय ॥ द्विर्मारय स्तम्भय द्विर्द्विर्नाशयपदं वदेत् ॥ २५५ ॥ आकर्षयद्वयं प्रोच्य द्विरावेशय संवदेत् ॥ परमोक्का च सुरभे सौभाग्यकर सर्व च ॥ २५६ ॥ कामप्रदेति चोच्चार्य चालक्ष्मीं हनयुग्मकम् ॥ चक्रेण गदया

१ इदम् उत्तरान्वयि ॥

चेति खड्गेनेति समुच्चरेत् ॥ २५७ ॥ सर्व्वबाणैर्भिन्धिभिन्धि पाशेन त्रासयद्व-
यम् ॥ बन्धबन्धेत्यंकुशेन द्विश्वासय कुरुद्वयम् ॥ २५८ ॥ किन्तिष्ठसीति
चोच्चार्य्य तावद्यावत्समीप्सितम् ॥ मे सिद्धं भवति क्लीं हुं फट् नमो ह्रीं रमां
वदेत् ॥ २५९ ॥ कामंकामं कुशुत्रांशुद्विवर्णोयं मनुर्मतः ॥ भेदानस्य प्रवक्ष्या
मि कामनावर्णभेदतः ॥ २६० ॥ आदौ मायां तथान्ते च सप्तबीजानि वर्ज
येत ॥ ज्ञानदीक्षी च सन्न्यासी यस्तु केवलवैष्णवः ॥ २६१ ॥ मोहनार्थ-
न्तु देवानां त्यजेदावरणद्वयम् ॥ स्तम्भयद्वितयं ब्रूयात्तथा सम्मोहयद्वयम् ॥
॥ २६२ ॥ निष्कामो ह्रीं रमादौ तु न ब्रूयात्परमस्य च ॥ पूर्वं समस्तशब्दं
च योजयेद्द्विधरेति च ॥ २६३ ॥ अनिष्टकरणार्थन्तु शत्रोर्नाम प्रयोजयेत् ॥
स्थाने लक्ष्म्या इति प्रोच्य भेदाश्चत्वार एव हि ॥ २६४ ॥ जैमिनिर्मुनिरेते
षां छन्दश्चामितमीरितम् ॥ त्रैलोक्यमोहनो नाम देवता पुरुषोत्तमः
॥ २६५ ॥ ॐल्क्लींपूर्वाणि हुंफट् च नमोन्तानि प्रविन्यसेत् ॥ षडङ्गेषु
पदान्यत्र वदेच्च पुरुषोत्तम ॥ २६६ ॥ त्रिभुवनोन्मादकर हृदये पारिकीर्ति-
तम् ॥ सकलजगत्क्षोभणेति लक्ष्मीदयित शीर्षके ॥ २६७ ॥ शिखायां
स्यान्मन्मथोत्तमाङ्गज कामदीपन ॥ कवचं स्यात्परमसुभगसर्वपदं वदेत ॥
॥ २६८ ॥ सौभाग्यकराप्रतिमरूप केशव संस्मरेत् ॥ अत्रैव
कवचान्ते तु न्यसेदस्त्रं सुरासुर ॥ २६९ ॥ सुन्दरीं मनुजेत्युक्त्वा
हृदयेति विदारण ॥ सर्वप्रहरणेत्युक्त्वा धर सर्वमनांसि वा ॥ २७० ॥
हनद्वयं च हृदयं धनान्याकर्षयद्वयम् ॥ महानन्तेति चास्यान्ते नेत्रे मं
फट् च कीर्त्यते ॥ २७१ ॥ भुवनेश्वर सर्वज्ञ वदेज्जनमनांसि च ॥ हन-
युग्मं दारयद्विर्मे विद्यां वशमानय ॥ २७२ ॥ नेत्रमन्त्रः समाख्यातस्तथां-
गुष्ठादिषु न्यसेत्॥कनिष्ठयोर्नेत्रमनुमस्त्रं तु करपृष्ठयोः॥२७३॥तत्त्वन्यासं ततः
कुर्य्याद्वासुदेवस्य भूतिदम् ॥ न्यसेत्करांगुलिषु च कामबीजानि शक्तिकाः ॥
॥ २७४ ॥ द्रां द्राविणीं तथा कामं क्षोभिणीं द्रीं च मन्मथाम् ॥ वशी-
करां क्लीं कन्दर्पं क्लीं बीजं मकरध्वजम् ॥ २७५ ॥ आकर्षिणीं चाथ मीन
केतुं सम्मोहिनीं च सः ॥ कामबीजसम्पुटितं मातृकान्यासमाचरेत्॥२७६॥

पूर्वोक्तकाममन्त्रार्णैः स्थितिन्यासं समाचरेत् ॥ विन्यसेन्मातृकान्यासं पूर्वोक्तं च ततश्चरेत् ॥ २७७ ॥ ततः श्रीकरविष्णूक्ततत्त्वन्यासं समाचरेत् ॥ संहाराख्यं च सृष्ट्याख्यं स्थानेष्वेतेषु च क्रमात् ॥ २७८ ॥ पार्श्वद्वये नाभिलिङ्गगुदेषूरुद्वये तथा ॥ जानुनोर्गुल्फयोः सर्वाङ्गुलिष्विति ततः क्रमात् ॥ २७९ ॥ ततश्च वासुदेवोक्तमन्त्रन्यासान्समाचरेत् ॥ संहारसृष्टिस्थित्याख्यांस्तथा नारायणोदितम् ॥ २८० ॥ मूर्त्तिपञ्जरविन्यासञ्चायत्रीन्यासमाचरेत् ॥ प्रतिवर्णं प्रकुर्वीत तां गायत्रीमथो शृणु॥ सिद्ध्यन्ति सर्वकार्य्याणि जपाद्विष्णुप्रसादतः ॥ २८१ ॥ त्रैलोक्यमोहनाय विद्महे स्मराय धीमहि ॥ तन्नो विष्णुः प्रचोदयात् ॥ २८२ ॥ शीर्षे भाले नेत्रयोश्च दक्षदोर्मूलमध्ययोः ॥ मणिबन्धांगुलीमूले चांगुल्यग्रे प्रविन्यसेत् ॥ ॥ २८३ ॥ एवं दक्षोरुमूले च जानुगुल्फांगुलीतले ॥ अंगुल्यग्रे तथा वामे भुजमूलादिके न्यसेत् ॥ २८४ ॥ ततः पुनश्च पूर्वोक्तषडङ्गद्वादशाङ्गकान् ॥ न्यासान्कुर्य्यात्तथा कामबाणन्यासमतः परम् ॥ २८५ ॥ श्रीं स्वं श्रिये नमश्चोक्त्वा वामोरौ तु प्रविन्यसेत् ॥ स्वां लक्ष्म्यै च नमः के स्वीं सरस्वत्यै नमो मुखे ॥ २८६ ॥ स्वूं रत्यै च नमः कण्ठे स्वें प्रीत्यै लिङ्गके नमः ॥ ककुदि स्वैं नमः कीर्त्त्यै स्वौं कान्त्यै च नमो हृदि ॥ २८७ ॥ स्वं तुष्टयै च नमो नाभौ स्वः पुष्ट्यै च नमोऽङ्गके ॥ ततश्च मूलम[illegible] प्राग्वद्व्यापकमाचरेत् ॥ २८८ ॥ आयुधानि यथास्थानं तु[illegible] अथ वक्ष्ये सेत् ॥ कामबीजैर्न्यसेत्पश्चाच्छ्रीवत्सं कौस्तुभं तथा ॥[illegible]र्बीजं हृत्पुरुषोत्तम ततः पश्चाद्दृष्ट्यादिन्यासमाचरेत् ॥ ऊर्ध्वांगु[illegible] च ॥ जगत्क्षोभण सर्व योजयेत्॥२९०॥त्रैलोक्यमोहनाख्यायं मन्त्रस्[illegible]न्मादकरं सुरासुरपदं वदेत् ॥ शरीरादौ ध्यायेच्छ्रीपुरुषोत्तमम् ॥ २९[illegible]५४ ॥ तापयद्वितयं प्रोच्यद्वि द्र्विपरि संस्थितम् ॥ सर्वाङ्गसुन्दरं सौम्यं सर्वा[illegible]शयपदं वदेत् ॥ २५५ ॥ आकसुरनुतं शश्वत्स्त्रीभिश्चैव समावृतम्॥चक्रं शंख[illegible]का च सुरभे सौभाग्यकर सर्वं च ॥२९३॥ पाशं च बिभ्रतं दोर्भिर्वामाङ्गस्थि[illegible] हनयुग्मकम् ॥ चक्रेण गदया पद्मकरयालिङ्गितं स्मरेत् ॥२९४॥ पीठमध्[illegible]

पक्षिराजायस्वाहेति तस्य पूजामनुर्मतः॥ २९५॥ ततो देवं समावाह्य दद्यात्पुष्पाञ्ज- लिं ततः ॥ तद्वामोरौ पूजनीया मन्त्रिणा श्रीः श्रिये नमः ॥ २९६ ॥ देवा- ग्रादिचतुर्दिक्षु कोणेषु पुरतस्तथा ॥ क्रमादभ्यर्च्चयेदङ्गषट्कं स्यात्प्रथमावृतिः ॥ ॥ २९७ ॥ अष्टभिश्चापि चक्राद्यैरायुधैरपरावृतिः ॥ तृतीयावरणे लक्ष्मीवाग्र- तिप्रीतिकीर्त्तयः ॥ २९८ ॥ कान्तिस्तुष्टिश्च पुष्टिश्च पूज्या अथ चतुर्थके॥ इन्द्राद्यांश्चापि वज्रादीन्पञ्चमे चेति पूजनम् ॥ २९९ ॥ ततः पुष्पाञ्जलिं दद्यात्तन्यासोक्तनामभिः ॥ आदौ क्लीमत्र त्रैलोक्यमोहनाय ततो वदेत् ॥ ॥ ३०० ॥ ततो लज्जारमाकामबीजाद्यैः पञ्चनामभिः ॥ नमोन्तैः पञ्च पुष्पाणामञ्जलींश्च समर्प्पयेत् ॥ ३०१ ॥ पुरुषोत्तहृषीकेशौ विष्णुश्रीधर रामकाः ॥ पंच नामानीति चात्र पुरुषोत्तपूजने ॥ ३०२ ॥ चतुर्लक्षं जपेन्मन्त्रं हुनेदर्कसहस्रकम् ॥ बिल्वैर्वा कमलैः पश्चात्तर्पणाद्यैर्भवेन्मनुः ॥ ॥ ३०३ ॥ सिद्धः प्रयोगान्कुर्वीतायुतं प्रातर्जपेन्मनुम् ॥ समस्ताधौ प्रजु- हुयादष्टोत्तरसहस्रकम् ॥ ३०४ ॥ सम्यग्ज्योतिष्मतीतैलेनारोगो बुद्धिमा न्भवेत् ॥ समूलकाण्डां शिरसि दद्यादंजलिनीं तु यः ॥ अष्टाधिकशतं जप्त्वा सर्वलोकप्रियो भवेत् ॥ ३०५ ॥ अश्वमारप्रसूनैश्च सम्पूज्य पुरुषो त्तमम् ॥ अष्टाधिकसहस्रं तु कुमुदैर्जुहुयात्ततः ॥ राजानो वशगाः सर्वे मास- [illegible]न्न संशयः ॥ ३०६ ॥ मालतीपुष्पहोमेन तद्वद्वैश्यान्नयेद्वशम् ॥ पला- हृदयेति [illegible] प्राग्वद्विप्राश्च वश्यकाः ॥ ३०७॥ अभिवाञ्छति यां योषां तस्या हनद्वयं च हृदयं जपेत्पक्षं प्रतिदिनं चाष्टाधिकसहस्रकम् ॥ दिनादौ फट् च कीर्त्यते ॥ २७५ न्दिवादिनी ॥ ३०८ ॥ चौरापहृतवित्तस्तु साष्टा- युग्मं दारयद्विर्मे विद्यां वशमानयामिद्धिस्तु हुनेत्पक्षत्रयं यमी ॥ ३०९ ॥ गुष्ठादिषु न्यसेत्॥ कनिष्ठयोर्नेत्रमङ्क्रमाज्जुहुनेत् ॥ अथ वार्णसहस्रं तु प्रजपे- कुर्य्याद्वासुदेवस्य भूतिदम् ॥ न्यसनं दत्त्वा प्रणम्य स्वगृहं प्रति ॥ ३१० ॥ ॥ २७४ ॥ द्रां द्राविणीं तथा कास्थ च ॥ निखातं शत्रुसदने शत्रुमुच्चा करां क्लीं कन्दर्प क्लीं बीजं मकरध्वाष्टशतं जप्ता निखाता शत्रुमन्दिरे ॥ क्रू केतुं सम्मोहिनीं च सः ॥ कामबं

वारे च लग्नेपि शत्रुमुच्चाटयेद्ध्रुवम् ॥ ३१२ ॥ हयारिकुसुमं चापि पक्षयोरुभयोरपि ॥ शुक्लं रक्तं केशयुक्तं रिपुमुच्चाटयेद्ध्रुवम् ॥ ३१३ ॥ षण्मासं जुहुयाद्रात्रौ कलिद्रुमसमिद्वरैः ॥ रिपुर्निधनमायाति साष्टाधिकसहस्रतः ॥ ३१४ ॥ मासषट्कं हुनेदर्कसमिद्भिश्च सहस्रकम् ॥ यद्वा ज्योतिष्मतीतैलं हुनेदष्टसहस्रकम् ॥ ३१५ ॥ शत्रुर्मरणमाप्नोति सर्वो मासचतुष्टयात् ॥ मन्त्री विविक्ते भूदेशे जपहोमार्चने रतः ॥ ३१६ ॥ अङ्कोलाज्यं सहस्रं तु हुनेन्मासत्रयावधि ॥ ततः पूर्वाच्च मध्याह्ने पावकाच्चन्द्रसन्निभा ॥ ३१७ ॥ प्रादुर्भवेच्च गुटिका यस्तामभ्यर्च्य धारयेत् ॥ अनेनैवाथ शिरसि स भवेत्खेचरः सदा ॥ ३१८ ॥ अदृश्यः सिद्धसङ्घैश्च तथा स्वर्णादिधातुकृत् ॥ आज्याक्ताभिश्च दूर्वाभिर्होमो भयविनाशकः ॥ ३१९ ॥ यस्य नामयुतं मन्त्रं जपेदयुतसङ्ख्यया ॥ शमयेदापदस्तस्य नात्र कार्य्या विचारणा ॥ ३२० ॥ इमं मन्त्रं जपेद्यस्तु समस्तैश्वर्य्यवान्भवेत् ॥ अयं मनुवरो गोप्यो न देयः पापिने क्वचित् ॥ ३२१ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि मन्त्रं श्रीपुरुषोत्तमम् ॥ तारं मारं रमां ङेन्तं वदेच्च पुरुषोत्तमम् ॥ ३२२ ॥ हुं फट् स्वाहेति मन्त्रोयं विश्ववर्णः प्रकीर्त्तितः ॥ ब्रह्मा मुनिश्च गायत्री छन्दोसौ पुरुषोत्तमः ॥ ३२३ ॥ देवता कीर्त्तितश्चास्य नियोगोभीष्टसिद्धये ॥ भूभूषड्द्विद्विवर्णैः षडङ्गविधिरीरितः ॥ ३२४ ॥ संस्मरेत्परमं विष्णुं रक्तवर्णं चतुर्भुजम् ॥ शङ्खचक्रोत्पलगदाधारिणं पुरुषोत्तमम् ॥ ३२५ ॥ पूर्वोदिते यजेत्पीठे प्राग्वदङ्गानि चार्चयेत् ॥ वासुदेवादीनि दिक्षु शक्तीर्वै कोणगा यजेत् ॥ ॥ ३२६ ॥ नारायणोक्तशङ्खादीन्पार्षदान्कुमुदादिकान् ॥ दिगीशांश्च तदस्त्राणि प्राग्वत्षड्वर्णपूजनम् ॥ ३२७ ॥ वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं सहस्रं पङ्कजैर्हुनेत् ॥ तर्प्पणादि ततः कृत्वा मन्त्रसिद्धिः प्रजायते ॥ ३२८ ॥ ततः प्रयोगानखिलान्पूर्वमन्त्रोदितांश्चरेत् ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि मन्त्रमाधोक्षजं वरम् ॥ रमा तारं ह्रियं कामं हृद् ङेन्तस्स्यादधोक्षजः ॥ ३२९ ॥ दशार्णोयं मुनिर्ब्रह्मा पंक्तिश्छन्दः समीरितम् ॥ साधकानां कामदायी देवता स्यादधोक्षजः ॥ ३३० ॥ षड्भिः पदैः षडङ्गानि ध्यायेद्देवमनन्यधीः ॥ शङ्खचक्र

गदापद्मपाणिं पीताम्बरावृतम् ॥ ३३१ ॥ मेघश्यामं सुरुचिरं गरुडासनसंस्थितम् ॥ वासुकिप्रमुखैर्नागैः सेवितं रमया युतम् ॥ ३३२ ॥ यजेच्च वैष्णवे पीठे षडङ्गानि प्रपूजयेत् ॥ सनकादीन्नारदं च जयं च विजयं तथा ॥ ॥ ३३३ ॥ अग्रतश्चापि पक्षीन्द्रं तद्बाह्येऽष्टदले यजेत् ॥ नागाष्टकं दिगीशांश्च भूपुरे हेतिसंयुतान् ॥ ३३४ ॥ पञ्चलक्षं जपेन्मन्त्रं तिलाज्यैरयुतं हुनेत ॥ तर्प्पणादि ततः कृत्वा सहस्रं भोजयेद्द्विजान् ॥ ३३५ ॥ एवं सिद्धमनुर्मन्त्री दशधा मन्त्रितं जलम् ॥ विषार्त्ताय च सर्प्पादिदष्टकाय प्रदापयेत् ॥ ॥ ३३६ ॥ तत्कालं निर्विषोऽसौ स्यात्सेवते तज्जलं यदि ॥ कुष्ठादिकगदैर्युक्तो मुच्यते नात्र संशयः ॥ ३३७ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि नृसिंहमनुमद्भुतम् ॥ तारं लक्ष्मीं च हृल्लेखां जयलक्ष्मीप्रियाय च ॥ नित्यप्रमुदितेत्युक्त्वा चेतसे प्रवदेत्ततः ॥ ३३८ ॥ लक्ष्मीश्रितार्धदेहाय रमां लज्जां नमोनमः ॥ त्रिरामवर्णो मन्त्रोयं मुनिर्ब्रह्मा समीरितः ॥ छन्दोतिजगती देवो नृहरिः शक्तिरद्रिजा ॥ ३३९ ॥ रमाबीजं षडङ्गानि श्रीबीजेन प्रकल्पयेत् ॥ ॥ ३४० ॥ क्षीराब्धौ संस्मरेद्देवमग्रे च वसुवेष्टितम् ॥ रुद्रैश्च दक्षिणे भागे शङ्खचक्रगदाम्बुजान् ॥ हस्तैर्दधानं सर्प्पस्य फणाच्छत्रविराजितम् ॥ ॥ ३४१ ॥ पीताम्बरधरं त्र्यक्षं नीलकण्ठं रमान्वितम् ॥ वर्षाहतुल्यसाहस्रं जपोऽस्य परिकीर्त्तितः ॥ ३४२ ॥ मध्वक्तैर्मल्लिकापुष्पैर्होमयेत्तद्दशांशतः ॥ तर्प्पणादि ततः कुर्य्यादङ्गैः स्यात्प्रथमावृतिः ॥ ३४३ ॥ भास्वती भास्करी चिन्ता द्युतिरुन्मीलिनी रमा ॥ कान्ती रुचिश्चाष्टपत्रे भूपुरे दिव्यहेतयः ॥ ३४४ ॥ एवं सिद्धमनुर्मन्त्री प्रयोगानाचरेत्ततः ॥ मल्लिकाकुसुमैर्होमश्चायुतं त्विष्टदायकः ॥ ॥ ३४५ ॥ अन्यानपि प्रयोगांश्च कुर्य्यादष्टार्णकोदितान् ॥ ३४६ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि नृसिंहमभयप्रदम् ॥ तारो नमो भगवते नरसिंहाय हृद्वदे ॥ ३४७ ॥ तेजस्तेजस आभाष्याथाविराविर्भवेति च ॥ वज्रनख व-

१ ॐ श्रीं ह्रीं जयलक्ष्मीप्रियाय नित्यप्रमुदितचेतसे लक्ष्मीश्रितार्धदेहाय श्रीं श्रीं नमोनमः ।

२ नमो भगवते नरसिंहाय नमस्तेजस्तेजसे आविराविर्भव वज्रनख वज्रदंष्ट्र कर्माशयान् रोधयरोधय तमो ग्रसग्रस स्वाहा अभयमात्मनि भूयिष्ठाः ॐ क्षौम् ॥

त्रदंष्ट्र ततः कर्म्माशयान्वदेत् ॥ ३४८ ॥ रोधय द्वितयं पश्चात्तमो ग्रसयुगं वदेत् ॥ स्वाहां तथाभयं चात्मनि भूयिष्ठा ध्रुवं वदेत् ॥ ३४९ ॥ नृसिंहबीजमथ च द्विषष्ट्यर्णो मनुर्मतः ॥ शुकदेवो मुनिः प्रोक्तोऽमितं छन्दश्च देवता ॥ ३५० ॥ अभयाख्यो नारसिंहो ध्यानपूजादिकं भवेत् ॥ दशावतारनृहरेस्तुल्यं लक्षमितो जपः ॥ ३५१ ॥ अथातः संप्रवक्ष्यामि जनार्दनमनुं परम् ॥ जं जनार्दनाय नमो मन्त्रश्चाष्टाक्षरो मतः ॥ ब्रह्मा ऋषिरनुष्टुप् चच्छन्दो देवो जनार्दनः ॥ ३५२ ॥ जंपूर्वकैर्नमोन्तैश्च पञ्चार्णैरङ्गपञ्चकम् ॥ वराभये चक्रगदे दधतं पीतवाससम् ॥ ३५३ ॥ आलिङ्गितञ्च रमया नारदाद्यैरभिष्टुतम् ॥ अस्य पूजाप्रयोगादि जपहोमादिकं भवेत् ॥ ३५४ ॥ नारायणाष्टार्णवच्च विशेषात्पितृतोषकृत् ॥ तत्पुत्रस्य च लोकोस्ति पौरुषोयं मनूत्तमः ॥ तथा संसेविते मुक्तिराजन्मब्रह्मचारिभिः ॥ ३५५ ॥ अथातः संप्रवक्ष्यामि गतराज्यप्रदायकम् ॥ उपेन्द्रमन्त्रं प्रणवमुमुपेन्द्राय हृन्नमः ॥ ॥ ३५६ ॥ दशाक्षरो मनुश्चास्य मुनिः कश्यप उच्यते ॥ पंक्तिश्छन्द उपेन्द्रस्तु देवो बीजं तथा स्मृतम् ॥ ३५७ ॥ पृथक्पदैः समस्तेन षडङ्गविधिरीरितः ॥ ध्यानपुजाप्रयोगाद्यं बलिवामनवद्भवेत् ॥ ३५८ ॥ अथातः संप्रवक्ष्यामि हरिमन्त्रमभीष्टदम् ॥ हरये नम इत्येष मन्त्रः पञ्चाक्षरो मतः ॥ ३५९ ॥ समस्तपापौघवनदहने वडवानलः ॥ श्रीबीजाद्यस्तु दारिद्र्ये सर्वनाशाय पक्षिराट् ॥ ३६० ॥ लज्जाबीजादिकश्चायं भुक्तिमुक्तिप्रदायकः ॥ ऐंसमन्वितमन्त्रोयं द्रुतं विद्याप्रदायकः ॥ ३६१ ॥ स एव प्रणवाद्यस्स्यादज्ञानेन्धनपावकः ॥ जपन्कामादिकं तत्र मोहयेद्धनिनां गणान् ॥ ॥ ३६२ ॥ वाग्बीजपूर्वकं जप्त्वा वाक्सिद्धिं समवाप्नुयात् ॥ हूङ्कारपूर्वकं जप्त्वा समरे विजयी भवेत् ॥ ३६३ ॥ तारपूर्वं जपित्वा तं द्रुतं प्राप्नोति वाञ्छितम् ॥ कामपूर्वं च जपतो वंशः कश्यपवद्भवेत् ॥ ३६४ ॥ सर्वेषामेव छन्दस्तु गायत्री नारदो मुनिः ॥ हरिर्देवस्त्वाद्यपदं बीजशक्ती मनोर्मते ॥ ॥ ३६५ ॥ हकाराद्यैः पञ्चवर्णैरखिलेन षडङ्गकम् ॥ मेघश्यामं सुनयनं काकपक्षविराजितम् ॥ ३६६ ॥ राधिकादिप्रियायुक्तं पर्य्यटन्तं वनेवने ॥

विचित्रपरिधिं वंशीं दधतं वामदक्षयोः ॥ ३६७ ॥ अथ कृष्णोक्तवत्पूजा जपो लक्षाष्टको मतः ॥ होमः पञ्चामृतेनाथ प्रयोगोस्य निगद्यते ॥ ३६८ ॥ यस्मिन्कार्य्ये तु यो मन्त्रो गदितः कार्य्यगौरवात् ॥ एकायुतादिपञ्चान्तं पुरश्चरणवज्जपेत् ॥ ३६९ ॥ अथ वक्ष्येऽयोनिजस्य कृष्णस्य मनुमद्भुतम् ॥ कामो गोवल्लभो ङेन्तो मोहिताखिलयोषितम् ॥ ३७० ॥ भूषितं नूपुराद्यैश्च श्यामलं पञ्चवार्षिकम् ॥ काकपक्षधरं नानाकेलिकौतुककारकम् ॥ ३७१ ॥ कर्णिकायां यजेद्देवं दलमध्ये यजेदिमान् ॥ वासुदेवं रुक्मिणीं च तथा संकर्षणाभिधम् ॥ ३७२ ॥ सत्यभामां च प्रद्युम्नं लक्ष्मणामनिरुद्धकम् ॥ जाम्बवतीं च तद्बाह्ये भूपुरे दिक्पतीनथ ॥ ३७३ ॥ तदायुधानि च ततो जपेल्लक्षाष्टकं मनुम् ॥ ब्रह्मवृक्षसमिद्भिश्च हुनेदष्टसहस्रकम् ॥ ॥ ३७४ ॥ तर्प्पणादि ततः कृत्वा मन्त्रसिद्धिः प्रजायते ॥ विदधीत प्रयोगांश्च पूर्वान्कृष्णमनूदितान् ॥ ३७५ ॥ मूर्तीनां मनवश्चैते मया प्रोक्ताः सुसिद्धिदाः ॥ उक्ताः केचिच्च तन्त्रे॒ वक्तव्यं किमतः परम् ॥ ३७६ ॥

इति श्रीमहामायामहाकालानुमते मेरुतन्त्रे शिवप्रणीते चतुर्विंशतिमूर्तिमनुकथनं नाम सप्तविंशः प्रकाशः ॥ २७ ॥

---

श्रीदेव्युवाच ॥ श्रीविष्णोरवतारा ये स्थिता युगचतुष्टये ॥ तन्मन्त्राञ्छ्रोतुमिच्छामि भुक्तिमुक्तिप्रदायकान् ॥ १ ॥ शिव उवाच ॥ सम्यक्पृष्टं त्वया देवि शृणवादौ मन्त्रमद्भुतम् ॥ मम विष्णोः प्रियतमं मन्त्रं हरिहरात्मकम् ॥ २ ॥ [१]प्रणवं चापि हृल्लेखा हौंबीजं शंकरेति च ॥ नारायणाय च नमो हौंह्रीं ॐ षोडशाक्षरः ॥ ३ ॥ ऋषिर्नारायणश्छन्दोनुष्टुब्हरिहरः सुरः ॥ षड्दीर्घयुङ्मायया च षडङ्गानि प्रकल्पयेत् ॥ ४ ॥ शूलं चक्रं पाञ्चजन्यमभयं दधतं करैः ॥ स्वस्वरूपार्धनीलार्धदेहं हरिहरं भजे ॥ ५ ॥ नवशक्त्यभिधे पीठे पूर्वमङ्गानि संयजेत् ॥ लक्ष्मीनारायणं भूमिं धराख्यामम्बिकां तथा ॥ ६ ॥ गौराङ्गीं गोमतीं गौरीं गान्धारीं भूपुरे पुनः ॥

---

१ ॐ ह्रीं हौं शंकरना[illegible]णाय नमो हौं ह्रीं ॐ ॥

लोकेशानपि चेन्द्रादीन्वर्णलक्षं जपेन्मनुम् ॥ ७ ॥ तिलैश्च तण्डुलैर्होमं तर्पणादि ततश्चरेत् ॥ एवं सिद्धमनुर्मन्त्री हृदि कृत्वा तु वाञ्छितम् ॥ ८ ॥ जपेदष्टाक्षरं शान्तो दिनानामेकविंशतिम् ॥ लभते वाञ्छितानर्थान्सद्यः प्रीतिकरो मनुः ॥ ९ ॥ अथोच्यते हयग्रीवमन्त्रः सर्वार्थसिद्धिदः ॥ सहावुकारसंयुक्तौ बिन्दुना परिशोभितौ ॥ १० ॥ विप्रसेव्यो बीजमन्त्रो हयग्रीवस्य चादिमः ॥ हसावौकारसंयुक्तौ साबिन्दू क्षत्रियस्य च ॥ ११ ॥ हसावेकारसंयुक्तौ सबिन्दू वैश्यजन्मनः ॥ त्रिष्टुप्छन्दो मुनिर्ब्रह्मा हयग्रीवोऽस्य देवता ॥ १२ ॥ षड्दीर्घयुक्तबीजेन षडङ्गविधिरीरितः ॥ कमलं जपमालां चाभयं कमेव च ॥ १३ ॥ श्वेतपद्मस्थितं गौरं श्वेतपद्मानुलेपनम् ॥ भक्तप्रियं हयग्रीवं वन्देहं दानवान्तकम् ॥ १४ ॥ गायत्रीमस्य वक्ष्येहं स रुद्रः संस्कृतो यया॥ मन्त्राधिकारी भवति देवमावाहयेत्तया ॥ १५ ॥ वागीश्वराय विद्महे हयग्रीवाय धीमहि ॥ तन्नो हंसः प्रचोदयात् ॥ १६ ॥ यजेद्वाजिहरेः पीठे चाङ्गैः स्यात्प्रथमावृतिः ॥ प्रज्ञा मेधा स्मृतिर्विद्या श्रीर्वागीशा हयाननः ॥ १७ ॥ विद्याविलासाख्यहयग्रीवो वै मानमर्दनः ॥ लक्ष्म्यादिभिस्तृतीया स्यात्ताश्च लक्ष्मीः सरस्वती ॥ १८ ॥ रतिः प्रीतिः कीर्तिकान्त्यौ तुष्टिः पुष्टिश्चतुर्थिका ॥ त्र्यावृत्तः कुमुदाद्यैः स्यात्प्रोक्तास्ते दधिवामने ॥ १९ ॥ पञ्चमी लोकपालैः स्यात्षष्ठी स्याच्च तदायुधैः ॥ वेदलक्षं जपेन्मन्त्रं दशांशं जुहुयाद्घृतैः ॥२०॥ सुगन्धाद्यैस्तर्प्पणं स्यान्मार्ज्जनं विप्रभोजनम् ॥ सिद्धो मन्त्रः प्रयोगार्हो जायते भुक्तिमुक्तिदः ॥ २१ ॥ शशिमण्डलमध्यस्थं हेमकुण्डलिनं मनुम् ॥ करं ध्यात्वा न्यसेद्वक्त्रे सभापूज्यः सजायते ॥ २२ ॥ अथवा तं करं कर्म्मे न्यस्य तज्जलसेचनात् ॥ प्रातर्हरति लूतादिदौर्भाग्यं पञ्चधा विषम् ॥२३ ॥ योम्भस्त्रिसप्तजपितं प्रभाते प्रत्यहं पिबेत् ॥ सप्ताहाज्जायते तस्य दिव्या वाणी मनोरमा ॥ २४ ॥ चन्द्रमण्डलमध्यस्थलकारे न्यस्य मन्त्रकम् ॥ पीतं चापि मुखं ध्यात्वा स्तम्भयेत्परभारतीम् ॥ २५ ॥ प्रभावद्वयमध्यस्थं प्रभा बीजेन संयुतम् ॥ संलिखेद्दर्भमूलेन भर्जपत्रे हरिद्रया ॥ २६ ॥ यन्त्र

प्रतिष्ठितप्राणं शरावद्वयसंपुटम् ॥ वेष्टितं पीतसूत्रेण मूकत्वं कुरुतेचिरात्॥ ॥२७॥ शृङ्गाटपुरमध्यस्थं रेखाकान्तं तु बीजकम् ॥ ज्वालामालाकुलं ध्यायेत्स्तम्भनं परमं मतम् ॥ २८ ॥ वायुमण्डलमध्यस्थं वायुबीजसमन्वितम् ॥ संहारकमिदं ध्यानं विषादीनां न संशयः ॥२९॥ जलमण्डलमध्यस्थं ध्यात्वा चंद्रांशुनिर्मलम् ॥ आप्यायते करे ह्येतत्सर्वरोगविनाशनम् ॥ ३० ॥ शून्य गर्भगतं यन्त्रं हेमगोक्षीरसन्निभम् ॥ ध्यायेद्भूतलमध्यस्थं निर्विषीकरणम्परम् ॥ ३१ ॥ लिखेद्रोचनया भूर्ज्जे मन्त्रं बाहौ विधारयेत् ॥ महारक्षा भवेदेषा सर्वदोषविनाशकृत् ॥ ३२ ॥ बीजं रेफसमायुक्तं मध्यस्थं सहकारयोः ॥ हकारद्वयमध्यस्थं जप्तं मासन्तु वैरकृत् ॥ ३३ ॥ अथान्यं शृणु देवेशि मन्त्रं वाग्बुद्धिकारकम् ॥ उद्गिरत्प्रणवोद्गीथ सर्ववागीश्वरेश्वर ॥ ३४ ॥ सर्ववेदमयाचिन्त्य सर्वं बोधयबोधय ॥ स्वबीजप्रणवाभ्यां च श्लोकमेनं पुटेदथ ॥ ३५ ॥ षट्त्रिंशदक्षरो मन्त्रः स्वाहान्तोष्टत्रिवर्णकः ॥ छन्दोनुष्टुम्मुनिर्ब्रह्मा हयग्रीवस्तु देवता ॥ ३६ ॥ पञ्चाङ्गानि मनोस्तारमनुपादैर्भवन्ति हि ॥ हयग्रीवं चतुर्बाहुम्पारदाम्भोधरद्युतिम् ॥ शङ्खारिपाणिमश्वास्यं जानुन्यस्तकरं भजेत् ॥ ३७ ॥ पूर्वपीठे यजेन्मूर्तिं बीजमन्त्रेण कल्पयेत् ॥ यजेदष्टदले पद्मे देवाग्रादिप्रदक्षिणम् ॥३८॥ चतुर्वेदास्तु सम्पूज्यास्तत्कोणेषु यजेत् क्रमात् ॥ वेदाङ्गानि स्मृतिं न्यायं सर्वशास्त्राणि चार्चयेत् ॥ ३९ ॥ तस्य बाह्ये तु षट्कोणे षडङ्गानि समर्चयेत ॥ भूपुरे लोकपालांश्च तदस्त्राणि ततो यजेत् ॥ ॥ ४० ॥षट्त्रिंशल्लक्षकञ्जप्त्वा कुन्दैस्त्रिस्वादुसंयुतैः ॥ होमयेत्तर्पणाद्यन्तं कृत्वा सिद्धो भवेन्मनुः ॥ ४१ ॥ लक्ष्मीकामः प्रजुहुयाद्बिल्वपत्रैस्तथायुतम्॥ श्रीकामो जुहुयान्नित्यं कुन्दैस्त्रिमधुरप्लुतैः ॥ ४२ ॥ आज्यं ब्राह्मीरसे पक्वं मन्त्रेणानेन साधितम् ॥ सेवितं विधिना प्रातरतिबुद्धिकरं त्विदम् ॥ ४३ ॥ साधितां मन्त्रवर्य्येण वचामनुदिनं सुधीः ॥ भक्षयेत्सर्वशास्त्राणां व्याख्याता भवति ध्रुवम् ॥ ४४ ॥ अथ मन्त्रान्तरं वक्ष्ये त्वरितं धारणाप्रदम् ॥ ऋग्यजुस्सामरूपाय वेदाभरणकर्म्मणे ॥ ४५ ॥ प्रणवो ह्रीं नृवपुषे महाश्वशिरसे नमः॥ हंसादिः सोहमन्तश्च मन्त्रः षट्त्रिंशदक्षरः ॥ ऋष्याद्यङ्गविधिध्यानपूजा-

काम्यानि पूर्ववत् ॥ अथ मन्त्रान्तरं वक्ष्ये तीक्ष्णबुद्धिकरं परम् ॥ ४६ ॥ विल्वोत्तीर्णस्वात्मरूपचिन्मयानन्दरूपिणे ॥ ४७ ॥ तुभ्यं नमो हयग्रीव विद्याराजाय विष्णवे ॥ स्वाहा सोहं च हंसादिरष्टत्रिंशाक्षरो मनुः ॥४८॥ तारमन्त्रपदैश्चात्र पञ्चाङ्गविधिरीरितः ॥ पुरश्चर्य्या तु ष[1]त्रिंशल्लक्षमन्यच्च पूर्ववत् ॥ ४९ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि परं ज्ञानप्रदम्मनुम् ॥ स्वबीजं हयशिरसे नमश्चाष्टाक्षरो मनुः ॥ ५० ॥ एकाक्षरोक्तमृष्यादि च्छन्दोनुष्टुबुदाहृतम् ॥ हस्तैर्दधानं मालां च पुस्तकं वरपङ्कजम् ॥ ५१ ॥ कर्पूराभं सौम्यरूपं नानाभूषणभूषितम् ॥ एवं ध्यात्वाखिलं कुर्य्यादेककर्णोक्तवर्त्मना॥ ॥ ५२ ॥ अथ विष्णोः प्रवक्ष्यामि मन्त्रं रोगापहारकम् ॥ अच्युतानन्तगोविन्दपदं ङेन्तं हृदन्तकम्॥भवाक्षरो मनुः प्रोक्तो भवरोगैकभेषजम् ॥५३॥ शौनकर्षिर्विराट् छन्दः परमात्मा तु देवता ॥ षडङ्गविधिरुक्तोस्य द्विरुक्तैर्मनुनामभिः॥५४॥शङ्खचक्रधरं देवश्चतुर्बाहुं किरीटिनम्॥सर्वायुधैरुपेतं च गरुडोपरिसंस्थितम् ॥ ५५ ॥ सनकादिमुनीन्द्रैस्तु सर्वदेवैरुपासितम् ॥ श्रीभूमिसहितं देवमुद्यदादित्यसन्निभम्॥५६॥प्रातरुद्यत्सहस्रांशुमण्डलोपमकुण्डलम् ॥ सर्वलोकस्य रक्षार्थमनन्तं नित्यमेव हि ॥ ५७ ॥ अभयं वरदन्देवं धारयन्तं युगान्वितम् ॥ गोविन्दमनुवत्प्रोक्तम्पञ्चावरणसंयुतम् ॥ ५८ ॥ लक्षमेकञ्जपेन्मन्त्रं तद्दशांशं हुनेद् घृतैः॥तर्प्पणादि ततः कुर्य्याद्रोगनाशः प्रजायते ॥५९॥ लाजहोमन्तु कन्यार्थी धनार्थी बिल्वहोमकम्॥वस्त्रार्थी पुष्पहोमं च नैरुज्यार्थी तिलैर्हुनेत् ॥ ६० ॥ रविवारे जले स्थित्वा नाभिमात्रे जपेद् बुधः ॥ अष्टोत्तरसहस्रन्तु ज्वरनाशो भविष्यति ॥ ६१ ॥ विवाहार्थी जपेन्मासं शशिमण्डलसन्निभम् ॥ ध्यायेल्लभेच्छुभां कन्यां कुलीनां च कुटुम्बिनीम् ॥६२॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि विष्णोः प्रीतिकरं परम् ॥ अनन्ताय नमश्चेति षड्वर्णोयमुदाहृतः ॥६३॥ न्यासो मुनिश्च गायत्री छन्दोनन्तश्च देवता ॥ नियोगो रोगनाशार्थमन्यद्गोविन्दवद्भवेत् ॥ ६४ ॥ अथान्यं सम्प्रवक्ष्यामि विष्णोः प्रीतिकरं परम् ॥ वेदव्यासस्य विद्यादिप्रदं पदमिहोच-

१ तस्येति शेषः ॥

रेत् ॥ ६५ ॥ वेदव्यासाय हृदयमष्टार्णो मनुरीरितः ॥ मुनिर्ब्रह्मा तथानुष्टुप्छन्दः सत्यवतीसुतः ॥ ६६ ॥ देवो बीजं भवेदाद्यं नमः शक्तिः प्रकीर्तिता ॥ षड्दीर्घयेन बीजेन षडङ्गविधिरीरितः ॥ ६७ ॥ व्याख्यामुद्रादक्षहस्तं वामजानुतले स्थितम् ॥ योगपट्टासनारूढं प्रफुल्लकुसुमद्युतिम् ॥ ६८ ॥ दीर्घकण्ठं विशालाक्षन्तुन्दिलं मुनिवन्दितम् ॥ नानाशिष्यैः परिवृतं कृष्णद्वैपायनम्भजे ॥ ६९ ॥ जपेदष्टसहस्राणि पायसैर्होममाचरेत् ॥ पूर्वोक्ते तु यजेत्पीठे पूर्वमङ्गानि पूजयेत् ॥ ७० ॥ प्राच्यादिषु यजेत्पैलं वैशम्पायनजैमिनी ॥ सुमन्तुं कोणभागेषु श्रीशुकं लोमहर्षणम् ॥ ॥ ७१ ॥ उग्रश्रवसमन्यांश्च मुनीन्बाह्ये तु भूपुरे ॥ इन्द्रादींश्च तदस्त्राणि पूजा चैवं समीरिता ॥ ७२ ॥ एवं सिद्धमनुर्मन्त्री वर्षमात्रं यदा जपत् ॥ त्रिकालेष्टोत्तरशतं कवित्वं शोभनाः प्रजाः ॥ ७३ ॥ स्वयमेव पुराणानामर्थः स्फुटति गोपितः॥व्याख्यानशक्तिं कीर्तिं च लभते सम्पदोन्वयम्॥७४॥ अथ मन्त्रान्तरं वक्ष्ये चिरंजीवित्वकारकम् ॥ तारं नमः समाभाष्य मन्त्रमेतन्ततो वदेत् ॥ ७५ ॥ सोहं तारं पुनश्चोक्त्वा मन्त्रश्चेन्द्राक्षरो मतः ॥ कहोडोस्य मुनिर्देवी गायत्री छन्द ईरितम् ॥ ७६ ॥ अपमृत्युहरो व्यासश्चिरंजीवी च देवता ॥ हं बीजं सश्च शक्तिः स्याद्दीर्घषट्कसमन्वितः ॥ हकारस्तु षडङ्गार्थं ध्यानपूजादि पूर्ववत् ॥ ७७ ॥ षट्पञ्चसहस्राणि जपोस्य परिकीर्तितः ॥ कुष्ठादिकमहारोगनाशार्थं लक्षमेककम् ॥ ७८ ॥ जपेन्मन्त्रं प्रत्यहन्तु चाष्टोत्तरशतं जलैः ॥ मन्त्रितैः स्नापयेद्दुग्धैर्नीरुक्स्यान्नात्र संशयः ॥ स्वल्पमृत्युविनाशश्च पूर्णमायुः प्रजायते ॥ ७९ ॥ अथ विष्णुप्रियान्वक्ष्ये गरुडस्य मनून् परान् ॥ तत्र व्रात्या द्विजा ये च सपुत्रा ये च वैष्णवाः ॥ ८० ॥ तेषां सत्कृतये मन्त्रसिद्धये विषविनाशिनीम् ॥ सर्पभीतिहरीं वक्ष्ये गायत्रीं सर्वकामदाम् ॥ पक्षिराजस्य सर्वेषां नृणामिष्टसुसिद्धये ॥ ॥८१॥सुपर्णाय विद्महे पक्षिराजाय धीमहि॥तन्नो गरुडः प्रचोदयात्॥८२॥ चतुर्विंशतिलक्षेण जपेनेयं च सिद्ध्यति॥ध्यानपूजादिरहिता जपमात्रफलप्रदा॥ ॥८३॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि गरुडस्य परम्मनुम्॥तारो नमो भगवते महाग-

रुडङेन्तकम् ॥ ८४ ॥ श्रीविष्णुवरवाहेतिनाय त्रैलोक्यमेव च ॥ पूजिताय वज्रनखवज्रतुण्डपदं वदेत् ॥ ८५ ॥ वज्रपक्षाय पिङ्गेति शरीराय वदेत्ततः ॥ एह्येहि महागरुड दुष्टनागान्पदं वदेत् ॥ ८६ ॥ छिन्धिद्वयं दुष्टविषान्द्विश्छिन्धिदुष्टराक्षसान् ॥ द्विर्भिन्ध्यावेशययुगं बद्धो हुंफड् वसुप्रिया ॥ ८७ ॥ षण्णवत्यक्षरो मन्त्रो मुनिर्ब्रह्मा प्रकीर्त्तितः ॥ गायत्री छन्द उद्दिष्टं देवता गरुडो मतः ॥ ॥ ८८ ॥ हलो बीजानि चोक्तानि स्वरा मन्त्रस्य शक्तयः ॥ मन्त्रोक्तविषनाशार्थं विनियोगः प्रकीर्त्तितः ॥ ८९ ॥ गरुडात्मा वैनतेयस्तार्क्ष्यश्छन्दोमय स्तथा ॥ कपिलाक्षस्तथा नागगरलान्तकरो मतः ॥ ९० ॥ प्रणवादिचतुर्थ्यन्तैर्नमसापि समन्वितैः ॥ एतैः षण्णामभिन्र्यासश्चाङ्गुल्यादिर्हृदादिकः ॥ ॥ ९१ ॥ हिमाद्रिशिखराकारं पूर्णचन्द्रनिभाननम् ॥ दीर्घबाहुं वृषस्कन्धं नागाभरणभूषितम् ॥ ९२ ॥ अनन्तो वामकटकं यज्ञसूत्रं तु वासुकिः ॥ तक्षकः कटिसूत्रं च हारः कर्कोट उच्यते ॥ ९३ ॥ पद्मश्च दक्षिणेपार्श्वे महापद्मश्चवामतः ॥ शङ्खपालः शिरोदेशे कुलिकस्तु भुजान्तरे ॥ ९४ ॥ आजानु काञ्चनाभासं ह्यानाभं तुहिनप्रभम् ॥ आकण्ठाद्रक्तवर्णं च विष्णध्वजगतं भजे ॥ ९५ ॥ अङ्गदिक्पायुधैश्चैव गरुडस्य तु पूजनम् ॥ मन्त्रार्णसङ्ख्याशततो जपः सप्तगुणो मतः ॥ ९६ ॥ आज्ञया दर्शनात्तस्य स्थावरं जङ्गमं विषम् ॥ नाशमायान्ति रोगाश्च विसर्प्पाद्या न संशयः ॥ ९७ ॥ वक्ष्येथ गारुडं मन्त्रं क्षिप तारोग्निगेहिनी ॥ पञ्चाक्षरो मनुः पंक्तिश्छन्दोनन्तो मतो मुनिः ॥ ९८ ॥ देवता गरुडस्तारो बीजं शक्तिर्वसुप्रिया ॥ स्वाहान्तो हृदये न्यस्य ज्वलज्वल महामते ॥ ९९ ॥ रुद्रचूडानन स्वाहा नत्यन्तं मस्तके न्यसेत् ॥ गरुडान्ते शिखे स्वाहा शिखाया मनुरीरितः ॥ १०० ॥ सर्वमन्त्रस्तु गरुड प्रभुं जययुगं वदेत् ॥ द्विः प्रभेदय वित्रासयद्वयं द्विर्विमर्दय ॥ १०१ ॥ स्वाहा सप्तत्रिंशदर्णान्तेत्र मन्त्रोथ कथ्यते ॥ उग्ररूपधरेत्युक्त्वा सर्वविषहरेति च ॥ ॥ १०२ ॥ भीषयद्वितयं सर्वं दहयुग्मं ततो वदेत् ॥ भस्मीकुरुकुरु स्वाहादन्त वर्णो मनुर्मतः ॥ १०३ ॥ अस्तु मन्त्रोप्रतिहतबलाप्रतिहतेति च ॥ त्रासनान्ते वदेद्धुंफट् स्वाहान्तोष्टादशाक्षरः ॥ १०४ ॥ पादे कण्ठे हृदि मुखे मूर्ध्नि

वर्णान्क्रमान्न्यसेत ।। ततस्स्वर्णनिभं नागप्रज्ञप्ताङ्गविभूषणम् ॥ १०५ ॥ चञ्च्वग्रप्रचलद्भोगिभोगं मुकुटमण्डितम् ॥ पक्षोच्चारितसत्साम गानं विषहरं भजे ॥ ॥ १०६ ॥ पक्षिराजाय स्वाहेति पीठे सप्ताक्षरो मनुः ॥ पूजयेन्मातृका पद्मे गरुडं वेदविग्रहम् ॥ १०७ ॥ अङ्गान्यादौ कर्णिकायां तत्तन्मन्त्रैश्च पूजयेत् ॥ अनन्तो वासुकिस्तक्षकाख्यः कर्कोटपद्मकौ ॥ १०८ ॥ महापद्मः शंखपालः कुलिकोथ दिगीश्वराः ॥ तदायुधानि भूगेहे पञ्चलक्षं जपेन्मनुम्॥ ॥ १०९ ॥ तिलैर्हुनेत्तर्प्पणादि कृत्वा सिद्धमनुर्भवेत् ॥ दर्शनादूरगस्तस्य सर्प्पो नश्येद्विषद्वयम् ॥ ११० ॥ विष्णुभक्तिपरो भूयो भवेदारिविनाशनः ॥ इह लोके सुखी दीर्घजीवी भूपतिपूजतः ॥ १११ ॥ परत्र याति वैकुण्ठमिति विष्णुप्रिया मया ॥ गदिता मनवो देवि किमन्यच्छ्रोतुमिच्छसि ॥ ११२ ॥

इति श्रीमहामायामहाकालानुमते मेरुतन्त्रे शिवप्रणीते विष्णुप्रियमन्त्रकथनं नामाष्टाविंशः प्रकाशः ॥ २८ ॥

श्रीदेव्युवाच ॥ सुदर्शनाद्यायुधानां सूचिताः पुरुषोत्तम ॥ मन्त्रास्तान्विधिपूर्वान्मे ब्रूहि यत्साधनाज्जयः॥ १ ॥श्रीशिव उवाच ॥ सर्वेषामायुधानां च नाथः प्रोक्तो महायुधम्॥सुदर्शनं नाम यच्च मया प्राग्विष्णवेर्प्पितम् ॥ २ ॥अवतारो यदंशस्य कार्तवीर्य्यार्ज्जुनाभिधः॥यत्तत्पर्य्यास्तु लङ्केशः सहस्राब्दं चचार ह ॥ ॥ ३॥तस्यादौ प्रोच्यते मन्त्रो भुक्तिमुक्तिप्रदायकः॥तारः सहस्रार हुंफट् तस्य मन्त्रो नवाक्षरः॥ ४ ॥अहिर्बुध्न्यो मुनिश्छन्दोनुष्टुब्देवः सुदर्शनम् ॥ चक्राद्यान्तैराविशुद्धिसुज्वालावकुलैः पृथक् ॥ ५॥ षडङ्गमनवस्तस्य जातियुक्ता द्विठान्तकाः ॥ ऐन्द्रं चक्रेण बध्नाति नमश्चक्राग्निगेहिनी ॥ ६ ॥ वह्निमुच्चार्यदिग्बन्धं चैवं कुर्य्याद्दशस्वपि ॥ दिशासु तर्जन्यंगुष्ठयोगेनात्र स्थलेषु च॥ ७॥ तारत्रय तथा रक्षद्वयं चक्रपदंवदेत् ॥ फट्स्वाहेति द्वादशार्णो वह्नि-

१ चेत्यध्याहार्य्यम् ॥ २ आचक्राय स्वाहा हृदयाय नमः, विचक्राय स्वाहा शिरसे स्वाहा, शुद्धिचक्राय स्वाहा शिखाय वषट्, सुचक्राय स्वाहा कवचाय हुम्, ज्वालाचक्राय स्वाहा नेत्रत्रयाय वौषट्, वकुलचक्राय स्वाहा अस्त्रायफट् ॥

प्राकारसंज्ञितः ॥ ८ ॥ अनेन मनुना ह्यस्य पारितोषिमयं बुधः ॥ प्राकारं परिकल्प्याथ न्यासानन्यान्समाचरेत् ॥ ९ ॥ सुंउंरक्काशनाभं च गुह्ये शिरसि विन्यसेत् ॥ ईंमध्याननहृद्गुह्यजानुगुल्फतलेषु च ॥ १० ॥ अग्निवर्णान्न्यसेद्वर्णांस्ततो ध्यायेत्सुदर्शनम् ॥ दक्षाग्रूर्ध्वक्रमादष्टभुजैरायुधधारिणम् ॥ ॥ ११ ॥ चक्रं शंखं गदा पद्मं मुसलं च शरासनम् ॥ पाशमंकुशमादीप्तं भीमदंष्ट्रं रविप्रभम् ॥ १२ ॥ पूजयेद्वैष्णवे पीठे मूर्तिमूलेन कल्पयेत् ॥ कर्णिकायां षडङ्गानि चक्राद्यस्त्राणि केशरे ॥ १३ ॥ हयग्रीवोदिता लक्ष्मीर्दिक्पत्रेषु च संयजेत् ॥ भूपुरे लोकपालांश्च तदस्त्राणि तदग्रतः ॥ १४ ॥ ध्यानप्राणप्रतिष्ठान्ते पूजान्ते च प्रदर्शयेत् ॥ त्रिस्थाने चक्रगायत्र्या चक्रमुद्रां च तां शृणु ॥ १५ ॥ सुदर्शनाय विद्महे महाज्वालाय धीमहि ॥ तन्नश्चक्रं प्रचोदयात् ॥ ॥ १६ ॥ जपेद्द्वादशलक्षं च तत्सहस्रं पृथग्घुनेत् ॥ तिलैस्त्रिमधुरोपेतैः सर्षपैर्मधुरान्वितैः ॥ १७ ॥ त्रियुक्तैर्बिल्वपत्रैश्च तथा दुग्धौदनेन च ॥ ततश्च केवलाज्येन तर्प्पणादि ततश्चरेत् ॥ १८ ॥ एवं सिद्धमनुर्मन्त्री प्रयोगानाचरेत्क्रमात् ॥ खातादिशोधितं स्थानं गोमयेनोपलेपयेत् ॥ १९ ॥ हस्तद्वयान्तराले च कुर्य्याद्याम्योत्तरद्वयम् ॥ वृत्तवेष्टितषट्कोणं तद्बाह्ये भूपुरावृतम् ॥ २० ॥ कर्णिका पीतवर्णा स्याद्रक्ताभं कोणषट्ककम् ॥ तदन्तरालं श्यामेन शेषं श्वेतेन पूरयेत् ॥ ॥ २१ ॥ कर्णिकायां लिखेत्तारं मन्त्रार्णान्कोणषट्कके ॥ आदावुत्तरचक्रे च दक्षिणे च ततो न्यसेत् ॥ २२ ॥ शालिं शालिजलैःपूर्णमेकैकं कलशं न्यसेत् ॥ दीक्षाविधिप्रकारेण पीठपूजां समाचरेत् ॥ २३ ॥ सम्यगावाहयेत्तत्र तत्सुदर्शनरूपकम् ॥ सम्पूज्य सांगावरणमन्यचक्रे ततस्तथा ॥ २४ ॥ चक्रे संस्थापयेद्वह्निं वैष्णवं तद्विधानतः ॥ प्रतिद्रव्यं भवेद्धोमः षट्त्रिंशदधिकं शतम् ॥ २५ ॥ आज्यं चापामार्गसमिच्चाक्षता राजिकास्तिलाः ॥ हविष्पृथक्पंचगव्यं हुनेदाज्यं तु तत्क्रमात् ॥ २६ ॥ प्रतिद्रव्यस्य सम्पातान्कुम्भतोये विनिक्षिपेत् ॥ होमं समाप्य च ततः प्रक्षाल्यार्घ्यस्य पिण्डकम् ॥ कुम्भोपरि निधायाथ साध्यं समुपवेशयेत् ॥ २७ ॥ स्वस्य दक्षे ततः कुम्भं

१ लक्ष्म्याद्या इति तात्पर्यम् ॥

साध्यस्योपरि च त्रिधा ॥ भ्रामयित्वा ततश्चोदङ्मार्ज्जनं कलशं क्षिपेत् ॥ ॥ २८ ॥ दूरदेशे ततोऽन्यादि दूरदेशे समुत्क्षिपेत् ॥ हुतशिष्टान्नेन दद्याद्बलिं च मनुनामुना ॥ २९ ॥ [1]नमो विष्णुगणेभ्यो नः सर्वशान्तिकरे वदेत् ॥ भ्यो बलिं प्रतिगृह्णन्तु शान्त्यै हृत्तत्त्ववर्णकः ॥ ३० ॥ विप्रान्स-म्भोज्य गुरवे दक्षिणां च प्रकल्पयेत् ॥ ज्वरादिरोगसंघातान्प्रयोगोऽयं विना-शयेत् ॥ ३१ ॥ अपस्माररुजं चैव पिशाचग्रहवैकृतम् ॥ रक्षोभूतादिपीडां च नाशयेत्स त्वयं विधिः ॥ ३२ ॥ स्तनजद्रुमसम्भूतैः फलकैः पंजरं श-तम् ॥ कृत्वा मन्त्री पंचगव्यैः पूजयेत्साध्यमत्र च ॥ ३३ ॥ निवेश-येच्छुद्धमन्त्रैर्वस्त्रं शुद्धं स्पृशेज्जपेत् ॥ मन्त्रमग्निं प्रतिष्ठाप्याग्न्यादिकोणेषु मन्त्रवित् ॥ विप्रवर्य्यैः कारयेच्च होमं पूर्वोदितं क्रमात् ॥ ३४ ॥ द्रव्यै-स्तांस्तोषयेद्विप्रान्यजमानो गुरुं तथा ॥ एष योगः सर्वरोगापमृत्युद्रोहनाशकः ॥ ३५ ॥ गव्यैः समस्तैः क्षीरेन्दुवल्कलोत्थकषायकैः ॥ त्रिभिः सम्पूरितैर्जप्तैः कुम्भैः सम्पातसंयुतैः ॥ ३६ ॥ प्राग्वद्धोमस्तस्य चान्ते ग्रहान्विष्णुं च साधयेत् ॥ अभिषिञ्चेद्[2]दानुदिने चामयाद्यातुरं तथा ॥ ३७ ॥ स्वस्थो भवेद्द्रुतं भूतप्रेतराक्षसपीडितः ॥ घृतं पक्वं पञ्चगव्यैर्जपिते मनुनामुना ॥ ३८ ॥ ग्रहपीडानिरुद्धानां गार्भिणीनां हिताय च ॥ मन्त्रं जपेद्दशशतं पञ्चगव्यं स्पृशेत्सुधीः ॥ ३९ ॥ पद्मपत्रे ब्रह्मवृक्षपत्रे बिल्वफले तथा ॥ संन्यस्य तत्स्वीयगृहे निखनेच्च परस्य वा ॥ रक्षा भवति तद्गेहे सम्पद्वृद्धिः प्रजायते ॥ ४० ॥ पलाश स्तनजं रक्तचन्दनं गुग्गुलुन्तथा ॥ घुसृणं च हरिद्रां च रोचनं बिल्वराजिके ॥ ४१ ॥ अपामार्गास्तिलान्दूर्वां विष्णुकान्तां तुलस्यपि ॥ कृष्णां च तुलसीं प्रोक्तां जवमर्कद्रुमं तथा ॥ ४२ ॥ सहदेवीं तथा लक्ष्मीं कुशगोमयसद्वचाः ॥ कमलं रोचनां पञ्चगव्ये संक्वाथयेन्मुहुः ॥ ॥ ४३ ॥ संस्कृतेऽग्नौ तस्य भस्म कुर्य्यात्तत्सर्वदायकम् ॥ जपितं मनुनानेन सम्यक्च शिरसा धृतम् ॥ ४४ ॥ सर्वभूतग्रहव्याधिकृत्यादुःखादिवारणम् ॥

---

१ नमो विष्णुगणेभ्यो नः सर्वशान्तिकरेभ्यो बलिं प्रतिगृह्णन्तु शान्त्यै नमः ॥ २ भक्षयेदिति शेषः ॥३ अमभाव आर्षः ॥

द्रोहोन्मादरिपुत्राससर्वपापहरं मतम् ॥ आपन्नाशकमेतत्स्याद्वश्यदं शिवदं परम् ॥ ४५ ॥ फलत्रययुतैः कल्कं पञ्चगव्ये पचेद्घृतम् ॥ प्रस्थं च कल्कद्रव्याणि मुस्ता शुण्ठी निशा तथा ॥ ४६ ॥ चित्रकैलाशतावर्य्यौ बचा वाट्या वृषा तथा ॥ मांस्याह्वा च विडङ्गं च मञ्जिष्ठा कटुरोहिणी ॥ ॥ ४७ ॥ मनुनानेन जपितं वन्ध्यापुत्रप्रदायकम् ॥ भूतप्रेतपिशाचादिभयघ्नं नात्र संशयः ॥ ४८ ॥ पञ्चगव्याज्यमेतद्धि गर्भरक्षाकरं परम् ॥ गुटिकां गुग्गुलोः कृत्वा हुनेदष्टसहस्रकम् ॥ ४९ ॥ दिवसत्रितयं वापि चतुर्दिवसमेव च ॥ भवेत्सर्वोपद्रवाणां नाशो मन्त्रगदस्य च ॥ ५० ॥ अपामार्गसमिद्भिश्च हुनेदयुतसंख्यया ॥ भूतज्वरभयव्याधिकृत्यापस्मारनाशनम् ॥ ५१ ॥ घृताक्तैः कमलैर्हुत्वा श्रीवृद्धिं लभते नरः ॥ आज्याक्ताभिश्च दूर्वाभिर्होमाद्दीर्घायुराप्नुयात् ॥ ५२ ॥ पलाशस्य समिद्भिश्च मेधावृद्धिः प्रजायते ॥ वस्त्रार्थी श्वेतकुमुदैराज्याक्तैर्जुहुयान्नरः ॥ ५३ ॥ पशूनां वृद्धिमन्विच्छन्हुनेत्सकमलैर्घृतैः ॥ औदुम्बरसमिद्धोमात्पुत्रलाभो भवेद् ध्रुवम् ॥ ५४ ॥ अष्टोत्तरसहस्रं च हुनेदश्वत्थजैस्तथा ॥ समिद्वरैर्महारोगमुक्त्येयं विधिःस्मृतः ॥ ॥ ५५ ॥ चक्रमध्ये स्थितं स्वं च चिन्तयन्यो मनुं जपेत् ॥ एकोपि दुर्जयो युद्धे भवत्येव न संशयः ॥ ५६ ॥ कल्पान्ताग्निनिभं चक्रं वैरिणो यस्य मूर्द्धनि ॥ स्मरेत्सप्तदिनं तस्य ज्वलनप्रतिमो ज्वरः ॥ भवेत् त्रिंशद्दिनैश्चाथ प्राप्नोति मरणं ध्रुवम् ॥ ५७ ॥ सकारं स्वरसंयुक्तं याहीति पदवेष्टितम् ॥ संस्मरेद्यस्य शीर्षे तु तस्योच्चाटो दशाहतः ॥ ५८ ॥ मण्डलान्मरणं याति सान्तं काकनिभं रिपोः ॥ मूर्ध्नि स्मरेच्च सप्ताहादुच्चाटो वा मृतिर्भवेत् ॥ ॥ ५९ ॥ शरच्छशा प्रतिमं सुधाधाराभिवर्षिणम् ॥ सकारं संस्मरेन्मूर्ध्नि स जीवेच्छरदां शतम् ॥ ६० ॥ षट्कोणं सुलिखेत्कोणषट्के ठं तु समालिखेत् ॥ कर्णिकायां तथा ठं च शेषमन्त्रार्णकं तथा ॥ ६१ ॥ साध्यनाम लिखेन्मध्ये काश्मीरैर्भूर्ज्जपत्रके ॥ आपन्निवारणं यन्त्रं भूतप्रेतभयापहम् ॥ ६२ ॥ अथान्यं सम्प्रवक्ष्यामि सुदर्शनमहामनुम् ॥ तारो नमो भगवते महासुदर्शनं वदेत् ॥ ६३ ॥

१ ॐ नमो भगवते महासुदर्शनाय हुं फट् ॥

ङेन्तं हुंफट् पोडशार्णो मुन्याद्यं पूर्ववन्मतम् ॥ तथा न्यासश्च पूजायां सर्वं रक्षाकरो मनोः ॥ ६४॥ जपेद् द्वादशलक्षाणि प्रत्येकं क्रमतो हुनेत् ॥ चतुर्विं शच्छतानीति तिलांश्चापि ससर्षपान् ॥ ६५ ॥ विल्वाज्यपालाशसमित्या यसानीति कीर्त्तितम् ॥ अनुरूपजपध्यानान्मन्त्रोयं वाञ्छितप्रदः ॥ ६६ ॥ लिखेदादौ तु षट्कोणं मध्यकोणेषु तं लिखेत् ॥ एकैकं सुलिखेद्वर्णं बहि-र्भूपुरवेष्टनम् ॥ ६७ ॥ सम्पातसाधितं चैतद्गर्भिणीगर्भरक्षकम् ॥ उन्मादग्रह-भूतादीनाभिचारांश्च नाशयेत् ॥ ६८ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि मालामन्त्रं सुदर्शनम् ॥ तारो नमो भगवते महापूर्वपदत्रयम् ॥ ६९ ॥ ङेन्तं सुदर्शनं चक्रं ज्वालं ङेन्तं ततो वदेत्॥दीप्तरूपं सर्वनाथ रक्षयुग्मं च मां महा ॥७०॥ बलायाग्निवधूं हुंफट् सप्त वेदाक्षरो मनुः ॥ ध्यानपूजादिकं प्राग्वज्जपो वर्ण-सहस्रकम् ॥ ७१ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि मालामन्त्रं सुदर्शनम् ॥ ॐक्लीं सुदर्शनमहाचक्रराज दहद्वयम्॥७२॥सर्वदुष्टभयं द्विर्द्विः कुरु च्छिन्धि च भिन्धि च ॥ विदारयद्वयं प्रोच्य परमन्त्रान्ग्रसद्वयम् ॥७३॥भक्षयद्वितयं प्रोच्य भूतानि त्रासयद्वयम्॥हुंफट् स्वाहेति चक्राय नमो वेदनुगाक्षरः॥७४॥सुदर्शन-महामन्त्रः संग्रामे विजयप्रदः ॥ ध्यानपूजादिकं सर्वं ज्ञेयमस्य षडर्णवत् ॥ ॥ ७५ ॥ जपेद्वर्णसहस्राणि ततः सिद्धो भवेन्मनुः॥ जप्त्वादौ चाष्टसाहस्रं रणे गच्छेद्द्रुतं जयी ॥ ७६ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि शंखमन्त्रं जयप्रदम् ॥ ॐक्लीं जलचरायेति स्वाहान्तोयं नवार्णकः ॥ ७७ ॥ विष्णुहस्तगतं ध्यात्वा यः शंखं नित्यमर्चयेत्॥पूजान्ते प्रजपेन्मन्त्रमष्टोत्तरसहस्रकम् ॥७८॥ पाञ्चजन्येन चैकत्वं ध्यायेज्जपसमापनम् ॥ कुर्यादेवं मासषट्कं ततः सिद्धो भवेन्मनुः ॥ ७९ ॥ पाञ्चजन्यसमं शंखमात्मानं विष्णुमेव च ॥ ध्यात्वा-

---

१ नमोभगवते महासुदर्शनाय महाचक्राय महाज्वालाय दीप्तरूपाय सर्वनाथ रक्षरक्ष मा-महाबलाय स्वाहा हुं फट् ॥ २ ॐ क्लीं सुदर्शन महाचक्रराज दहदह सर्वदुष्टभयं कुरुकुरु छिन्धिछिन्धि भिन्दिभिन्दि विदारयविदारय परमन्त्रान् ग्रसग्रस भक्षयभक्षय भूतानि त्रासयत्रासय हुंफट् स्वाहा चक्राय नमः ॥ इति मन्त्रः ॥

भिवादयेच्छंखं रणे विजयकारकम् ॥ ८० ॥ तारो मारः खड्ग तीक्ष्ण भिन्धिभिन्धीति हुं च फट् ॥ द्वादशार्णः खड्गमन्त्रो यो जपेद्वादशाक्षरम् ॥ ॥ ८१ ॥ प्रत्यहं पूजयेत्खड्गं कलयेन्मरणं विना ॥ खड्गसिद्धिस्तस्य भवेन्न कदाचित्पराजयः ॥ ८२ ॥ दैवान्निष्कासिते तस्मिन्फलाद्यं छेदयेत्तदा ॥ पूजयित्वा ततः कोणे स्थापयेत्प्रणमेदपि ॥ ८३ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि धनुर्मन्त्रं नवाक्षरम् ॥ शार्ङ्गाय सशरायेति हुंफट् जप्यो नवायुतम् ॥ ॥ ८४ ॥ तिलाज्यहोमात्संसिद्धो मन्त्रः स्यान्नित्यपूजनात् ॥ ततो धनुषि बाणाढ्ये शार्ङ्गध्यानं समाचरेत् ॥ अजेयो जायते धन्वी शार्ङ्गमन्त्रं स मुच्चरेत् ॥ ८५ ॥ अथ वक्ष्ये गदामन्त्रं तारं कामं समुच्चरेत् ॥ कौमोदकि महासर्वबले सर्वासुरान्तिके ॥ ८६ ॥ प्रसीद हुंफट्स्वाहेति पञ्चविंशार्णको मनुः ॥जपेल्लक्षामिमं मन्त्रं पूजयेन्नित्यशो गदाम् ॥ ८७ ॥ कौमोदकीं स्मरे-त्तत्र द्वन्द्वयुद्धे जयी भवेत् ॥ साधको वा गजारूढो गदाहस्तो विशेद्रणम् ॥ ॥ ८८ ॥ स्वयं विष्णुरिति ध्यायंस्तत्काले सर्वशत्रवः ॥ भयभीताः पला-यन्ते चतुरङ्गबला अपि ॥ ८९ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि मुसलस्य मनुं ध्रुवम् ॥ क्लींमसंवर्त्तकपदं मुसलं पोथयद्वयम् ॥ हुंफट् स्वाहान्तको मन्त्र ऊनविंशतिवर्णकः ॥ ९० ॥ प्रजपेदयुतं मन्त्रं खादिरीः समिधो हुनेत् ॥ घृताक्ताश्चायुतं मन्त्रसिद्धिस्तस्य प्रजायते ॥९१॥ गृहीत्वा मुसलं हस्ते जपे-न्मन्त्रं रणे विशेत् ॥ पलायन्तेस्य रिपवो दक्षो रुद्राद्यथा तथा ॥ ९२ ॥ शत्रोः प्रतिकृतिं चैव कुर्यान्नाम क्रियान्वितम् ॥ लिखित्वा हृदये तस्य क्रोधान्मुसलधारणम् ॥ कुर्यादरेर्वा गदादेः स्तम्भः स्यान्नात्र संशयः ॥९३॥ अथांकुशमनुं वक्ष्ये तारं मदनमंकुशम् ॥ कंचुद्वयं च वर्म्मास्त्रं स्वाहान्तो विश्ववर्णकः ॥ ९४ ॥ अंकुशस्य मनोश्छन्दो मतिर्गणपतिर्मुनिः ॥ देवश्चा-त्रांकुशो विष्णुरूपी गजविमर्दकः ॥ ९५ ॥ भूभूत्रिवेदयुग्माक्षिवर्णैः कुर्या

१ ॐ क्लीं खड्ग तीक्ष्ण भिन्धिभिन्धि हुं फट् ॥ २ शार्ङ्गाय सशराय हुं फट् ॥ ३ ॐ क्लीं कौमोदकि महासर्वबले महासुरान्तके प्रसीद प्रसीद हुं फट् स्वाहा ॥ ४ कामसंवर्त्तक मुसल पोथय पोथय हुं फट् स्वाहा ॥

स्यडङ्गकम् ॥ केवलांकुशपूजात्र जपो लक्षं त्रयोदश॥ ९६ ॥ साध्ये सद्द्रव्यहोमः स्यत्सिद्धमन्त्रो नृपान्रिपून् ॥ त्रासयेन्नात्र सन्देहो भवन्ति वचनाद्वशे ॥ ९७ ॥ अथ प्रवक्ष्ये पाशस्य मन्त्रं तारं मनोभवम् ॥ पाशं वधयुगं चैवाकर्षयद्वितयं च हुम् ॥ फट्स्वाहेत्यूनविंशार्णो वरुणो मुनिरुच्यते ॥९८॥ समुद्रश्चामितं छन्दो भूभूषट्सप्तनेत्रकैः ॥ नेत्रैरङ्गानि तं चैव ध्यायेद्वरुणहस्तगम् ॥ ९९ ॥ लक्षत्रयं भवेद्धोमः कैरवाख्यप्रसूनकैः ॥ सिद्धमन्त्रो हुने दाज्यं वश्यार्थमयुतं तथा ॥ मारणाय मधुसिते द्वेषे तैलं ततो गुडम्॥१००॥ अथ च्छत्रमनुं वक्ष्ये छं छत्राय नमस्त्विति ॥ मुनिर्मन्त्रश्च छन्दोस्य गायत्री देवता हरः ॥ १०१ ॥ छत्ररूपं ध्यानमस्य स्वर्णदण्डं सितप्रभम् ॥ आरक्तकलशं ध्यायेन्मस्तके स्वे च पूजयेत् ॥ १०२ ॥ वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं होमः स्याद्घृतपायसैः ॥ तर्पणाद्यं ततः कुर्य्याच्छत्रमन्त्रस्य सिद्धये ॥ ॥ १०३ ॥ साधयित्वा मनुं चैनं गतराज्यो विशेद्रणम् ॥ एकोपि स रिपूञ्जित्वा राज्यं तु लभते द्रुतम् ॥ १०४ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि लोकरूपमनुं परम् ॥ चामरस्य ग्रहावेशदृष्ट्यादिकनिवारणम् ॥ १०५ ॥ शशाङ्ककरसङ्काश क्षीरडिण्डिमपाण्डुर ॥ प्रोत्सारयाशु दुरितं चामर श्रीं नमोस्तु ते ॥ १०६ ॥ द्वात्रिंशच्च सहस्राणि जपित्वा सुरभेर्घृतम् ॥ हुत्वा सिद्धो भवेन्मन्त्रो नित्यं चामरमर्चयेत् ॥ १०७ ॥ तेन ग्रहाभिभूता वादुस्साध्या दीर्घरोगिणः ॥ सप्ताहमर्ज्जिताः सायं प्रातः स्युर्दोषवर्ज्जिताः ॥ १०८ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि ध्वजमन्त्रद्वयं प्रिये ॥ शक्रकेतवे च महावीर्य्याय श्याम वर्णकम् ॥ १०९ ॥ ङन्तं च च्छत्रराजाय नमो नारायणध्वज ॥ गरुडासन रक्षद्विरायुधानि रिपून्दह ॥ ११० ॥ द्वयं वर्म्मास्त्राग्निजाया द्विपञ्चाशार्णको मनुः॥ ध्वजमन्त्रं जपेत्पञ्चसहस्रं सिद्धये हुनेत् ॥ १११ ॥ आज्यैः पश्चाल्लिखेयन्त्रं स्वसैन्याङ्कैश्च सम्मितम् ॥ ध्वजं तु पूजयेन्नित्यं शत्रुभीतिनिवारणम् ॥ ११२ ॥ अथ वक्ष्ये पताकाया मन्त्रं तारं रमात्रयम् ॥ हिरण्यकशिपोर्युद्धे पूतने दैवतासुरे ॥ ११३ ॥ रणारपतिकालेति नेति मृत्यु पदं वदेत ॥ कालहं त्रिर्दहद्वन्द्वं रिपून्सर्वान्पताकिके ॥ ११४ ॥ हुं फट्

स्वाहेति मन्त्रोत्र चैनं पञ्चायुतं जपेत् ॥ ततस्त्रिमधुरैर्होमादिकैः सिद्धो भवेन्मनुः ॥ ११५ ॥ बीजवर्णं पताकायां लिखेदङ्कक्रमेण तु ॥ स्थितप्राणां च ता दृष्ट्वा रिपुर्याति दिशो दश ॥ ११६ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि शूलमन्त्रं ध्रुवं वदेत् ॥ त्रिशूलाय नमश्चेति मन्त्रः सप्ताक्षरो मतः ॥ ११७ ॥ उष्णिक् छन्दो वामदेवो मुनिर्देवः पिनाकधृक् ॥ शिवहस्तगतं ध्यायेच्छूलं लक्षत्रयं जपेत् ॥ होमस्तु बिल्वपत्रैः स्यात्सिद्धो मन्त्रस्त्वयं भवेत् ॥ ॥ ११८ ॥ ॐ क्लीं सर्वायुधायैच पिनाकिनिर्मिते वदेत् ॥ शूलाकृष्टे चण्डिवृते सर्वदुष्टनिबार्हिणि ॥ ११९ ॥ सर्वसत्त्वाङ्कभूते च देवताप्रतिपादिते ॥ क्षुरिके रक्ष मां नित्यं सर्वाशुभविनाशिनि ॥ १२० ॥ शान्तिपक्षे द्वयं द्वेधा हत्सप्तत्यक्षरो मनुः ॥ जप्त्वा वर्णसहस्रं च सिद्धः शत्रुनिवारणः ॥ १२१ ॥ अथ वक्ष्ये कटारस्य मनुं श्लोकस्वरूपकम् ॥ शस्त्रिणामेव सर्वेषां योस्ति रक्षाकरः परः ॥ १२२ ॥ रक्षाङ्गानि गजान्रक्ष रक्ष वाजिधनानि च ॥ मम देहं सदा रक्ष कटारक नमोस्तु ते ॥ १२३ ॥ जपेद्वर्णसहस्राणि तिलाज्यैर्होममाचरेत् ॥ स्थापयेत्सिद्धमन्त्रस्तु ततः स्थाने कटारकम् ॥ तत्र सम्पूजयेत्तच्च नाग्निचौरादिजं भयम् ॥ १२४ ॥ अथ वक्ष्ये श्लोकरूपं कन्तमन्त्रं जयप्रदम् ॥ प्रापयानय शत्रूंस्त्वमनया देवमायया ॥ गृहाण जीवनं तेषां मम सैन्यं च रक्ष माम् ॥ १२५ ॥ प्राग्वज्जपादिना सिद्धः प्रयोगार्हो मनुर्भवेत् ॥ कुर्य्यादष्टांगुलन्यासान्धातुजान्नखजानपि ॥ दिगष्टके रणे यात्वा रिपूणां कदनं भवेत् ॥१२६॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि वर्माणं वमसम्पुटम् ॥ वर्म्मञ्छर्मप्रद त्वं मां रक्षरक्ष समन्ततः ॥ १२७ ॥ अष्टादशाक्षरो मन्त्रो जप्यस्तावत्सहस्रकम् ॥ आज्यैस्तावद्धुनेत्सिद्धस्तत्सम्पातेन संस्कृतम् ॥ ॥ १२८ ॥ संग्रामे कवचं धृत्वा रिपून्हत्वा प्रयात्यसौ ॥ तत्रैव स्वीयवर्षाणामंकयन्त्रं क्षितिप्रदम् ॥ १२९ ॥ अथातो दण्डगायत्रीं वक्ष्येहं हितकाम्यया ॥ नानादण्डाविनिर्मुक्तो जपादस्याः प्रजायते ॥ जपमात्रेण संसिद्धिर्हुनेच्च घृतपायसैः ॥ १३० ॥ ब्रह्मोद्भवाय विद्महे स्वर्णरूपाय धीमहि ॥

१ ङ्यापोरिति ह्रस्वः ॥

तन्नो दण्डः प्रचोदयात् ॥ १३१ ॥ सहस्रायुतमारभ्य कार्य्यलाघवगौ-
रवात् ॥ कोटयन्तं प्रजपेन्मन्त्री सर्वदण्डैर्विमुच्यते ॥ १३२ ॥ ॐ क्लीं रामा
युधायेति श्रीं पं परशवे नमः॥ तिथ्यक्षरोयं परशोर्मन्त्रः संग्रामसिद्धिदः॥ १३३॥
इत्यायुधानां मनवः समाख्याताः सुरेश्वरि ॥ गोपिता बहुतन्त्रेषु किमन्यच्छ्रो-
तुमिच्छसि ॥ १३४ ॥

इति श्रीमहामायामहाकालानुमते मेरुतन्त्रे शिवप्रणीते आयुधमन्त्रकथनं
नामैकोनत्रिंशः प्रकाशः ॥ २९ ॥

---

श्रीदेव्युवाच ॥ शक्तिं विना न देवोस्ति शक्तिश्चापि पतिं विना ॥
नचास्तीति पुरा प्रोक्तमत्र शक्तीर्वदाधुना ॥ १ ॥ श्रीशिव उवाच ॥
लक्ष्मीरुक्ता विष्णुशक्तिरन्या अपि वदामि ते ॥ यतिभिः केवलो देवः सेव्यो
नान्यैस्तथा त्रिभिः ॥ २ ॥ शक्तिश्च केवला सेव्या वाममार्गरतैर्द्विजैः ॥
यतस्तु धर्म्मपतितो वाममार्गी पुमान्मतः ॥ ३ ॥ ये हरिं वाममार्गेण
पूजयन्त्यद्विजातयः ॥ तेषां भुक्तिश्च मुक्तिश्च तदन्ते त्वं मनुं शृणु ॥ ४ ॥
आद्याक्षरं च सकलं कूटं मायान्वितं वदेत् ॥ वदयुग्मं च चित्रेशे वाग्बीजं
दहनाङ्गना ॥ ५ ॥ द्वादशार्णो मनुः प्रोक्तो मुनिर्ब्रह्मा समीरितः ॥ चित्रेश्वरी
देवता स्याच्छन्दो गायत्रमुच्यते ॥ ६ ॥ षड्दीर्घयुक्तकूटेन षडङ्गविधि-
रीरितः ॥ नीलोत्पलदलश्यामां मदाघूर्णितलोचनाम् ॥ ७ ॥ नानाल-
ङ्करणोपेतां रक्तवस्त्रोपशोभिताम् ॥ क्रीडन्तीं हरिणा सार्धं स्थगितां च
वनेवने ॥ ८ ॥ एवं ध्यात्वा ततो मन्त्री कुर्य्यात्पूजां यथाविधि ॥ नोपा-
स्या जातु चिद्विप्रैर्वाममार्गप्रभावतः ॥ ९ ॥ अथ विष्णोः प्रवक्ष्यामि कुलजां
शक्तिमुत्तमाम् ॥ सेव्या कौलिकमार्गेण तदधीनस्तदा हरिः ॥ १० ॥
वाग्बीजं कुलजे वह्नौ सरस्वत्यनलाङ्गना ॥ एकादशाक्षरो मन्त्रो मुनिः स्या-
द्वामकेश्वरः ॥ ११ ॥ त्रिष्टुप्छन्दस्तु कुलजा देवता परीकीर्त्तिता ॥
पञ्चाङ्गं स्यात्पञ्चपदैरंगुष्ठादिषु विन्यसेत् ॥ १२ ॥ गौराङ्गी नीलवसना
नानालङ्कारभूषिता ॥ क्रीडन्ती हरिणा सार्धं महावटसमाश्रिता ॥ १३ ॥

पूजादिकं चरेदस्या उग्रातारासमो जपः ॥ अत्रैकादशलक्षाणि सुरा मांसं च होमयेत् ॥ भगपूजां विशेषेण कुर्य्याद्वीरांश्च भोजयेत् ॥ १४ ॥ एकान्ते यो वटाधस्ताल्लिङ्गं योनौ प्रवेश्य च ॥ लक्षमात्रं जपेद्यस्तु त्रिकालज्ञः स जायते ॥ १५ ॥ पञ्चमासं पूजयित्वा वटाधस्ताच्च तां निशि ॥ षण्मासं नियतं देवीं वाग्बुद्धिस्तस्य जायते ॥ १६ ॥ सन्ध्याद्वये चार्धरात्रे यो वर्षैकं प्रपूजयेत् ॥ कुलजां पञ्चमैः स स्याद्धनधान्यसमन्वितः ॥ राजमान्यो महातेजाः पूज्यते सकलैर्जनैः ॥ १७ ॥ अथ मार्गद्वयोपास्यां वक्ष्ये गोपालसुन्दरीम् ॥ मायाश्रीकामबीजानि कृष्णायेति पदं वदेत् ॥ ॥ १८ ॥ एकोनविंशकं वर्णं रुद्रदेवस्वरौ तथा ॥ पञ्चमं च ततो बीजमेभिः सप्तमकूटकम् ॥ १९ ॥ गोविन्दाय पदं पश्चाच्चित्रैश्वर्य्यादिकूटकम् ॥ गोपीजनवल्लभाय ततश्च कमलत्रयम् ॥ २० ॥ कूटरूपं समुच्चार्य्य वदेद्वै हंसवाहिनीम् ॥ त्रयोविंशाक्षरो मन्त्रो भुक्तिमुक्तिफलप्रदः ॥ २१ ॥ मुनिर्विधाता दक्षे तु वामे चानन्दभैरवः ॥ छन्दस्तु देवी गायत्री देवो गोपालसुन्दरी ॥ २२ ॥ त्रित्रिवेदाब्धिवेदाब्धिवर्णैः कूटविहीनकैः ॥ षडङ्ग विधिरुद्दिष्टो मन्त्रवर्णान्न्यसेत्तनौ ॥ २३ ॥ कूटत्रयविहीनांश्च विंशत्यङ्गेषु विन्यसेत् ॥ मूर्ध्नि भाले भ्रुवोरक्ष्णोः कर्णयोर्नासयोर्मुखे ॥ २४ ॥ चिबुके च गले बाह्वोर्हृदये जठरे तथा ॥ नाभौ लिङ्गे गुदे सक्थ्नोर्जानुनोर्जङ्घयोरपि ॥ २५ ॥ गुल्फयोः पादयोः सृष्टिन्यासोयं परिकीर्त्तित ॥ हृदयाद्यो भुजान्तश्च न्यासोयं स्थितिसञ्ज्ञकः ॥ २६ ॥ पादादिमस्तकान्तश्च संहारः परिकीर्त्तितः ॥ एवं न्यासत्रयं कृत्वा पुनः सृष्टिस्थितिं चरेत ॥ २७ ॥ ततश्च करशुद्ध्याख्यं न्यासं कुर्वीत तं शृणु ॥ ह्रीं श्रीं-पूर्वं अं च आं च स्वरौ न्यस्येत्क्रमेण तु ॥ २८ ॥ मध्यानामाकनिष्ठासु पुनस्तानेव विन्यसेत् ॥ मायां रमां तथा क्लीं च कामबीजं हकारयुक् ॥ ॥ २९ ॥ क्लौं च चक्रासनायेति हृदुक्ता जङ्घयोर्न्यसेत ॥ मायां लक्ष्मीं समुच्चार्य्य हसयुक्तानि चोच्चरेत ॥ ३० ॥ वाक्कामौ सौं च बीजानि सर्वमन्त्रासनाय च ॥ नमोन्तः शक्रवर्णोयं विन्यसेज्जानुनोस्तथा ॥ ३१ ॥

लज्जा लक्ष्मीं समुच्चार्य्य साध्यसिद्धासनाय च ॥ नमः प्रोच्य न्यसेल्लिङ्गे रुद्रवर्णोयमीरितः ॥ ३२ ॥ ततो वाग्देवतान्यासं कुर्य्यात्तस्य मनुं शृणु ॥ मेघवण वदेन्ङेन्तं सबिन्दुं षण्मितस्वरम् ॥ ३३ ॥ आद्यं बीजं षोडशार्णं बीजयुक्तं ततो वदेत् ॥ तदेव बीजं वशिनी देवतायै नमस्तथा ॥ ३४ ॥ सप्तविंशतिवर्णोयं मन्त्रः शिरसि विन्यसेत् ॥ कवर्गं बिन्दुसंयुक्तं कामं कामेश्वरीं तथा ॥ ३५ ॥ वाग्देवतायै हृदयं न्यसेद्भाले वनार्णकम् ॥ चवर्गं बिन्दुसंयुक्तं दशरामेषुवर्णकान् ॥ बिन्दुतुर्य्यान्स्वरोपेतान्षष्ठं बीजमुदाहृतम् ॥ ३६ ॥ नोदिनीवाग्देवतायै नमः षोडशवर्णकम् ॥ भ्रूमध्ये विन्यसेन्मन्त्रं टवर्गं बिन्दुसंयुतम् ॥ ३७ ॥ द्वितीयपंचमौ षष्ठस्वरबिन्दु समन्वितौ ॥ विमलावाग्देवतायै नमश्चेति गले न्यसेत् ॥ ३८ ॥ तवर्गं बिन्दुसंयुक्तं त्रिसप्तमनुवर्णकान् ॥ बिन्दुतुर्य्यस्वरोपेतान्बीजं प्रोक्तं तथारुणा ॥ ३९ ॥ वाग्देवतायै च नमो न्यसेद्धृदि नृपार्णकम् ॥ पवर्गंबिन्दुसंयुक्त माद्यमन्त्यं च पंचमम् ॥ ४० ॥ तृतीयं च द्वितीयं च षष्ठबिन्दुसमन्वितम्॥ जयन्तीवाग्देवतायै नमोयं नृपवर्णकः ॥ ४१ ॥ यवर्गं बिन्दुसंयुक्तमीशागत्र्यक्षिवर्णकम् ॥ बिन्दुषष्ठस्वरोपेतं कूटकान्तमुदाहृतम् ॥ ४२ ॥ सर्वेश्वर्य्यै च वाग्देवतायै हृत्षोडशाक्षरः॥मूलाधारे न्यसेदेनं सवर्गं बिन्दुसंयुतम्॥ ॥ ४३ ॥ क्षींबीजं कौलिनिवाग्देवतायै च हृदन्तकम् ॥ न्यसेदूर्वादिशदान्तं न्यासं वाग्देवताभिधम् ॥ ४४ ॥ ततो मन्त्रस्थितं कूटत्रयं काम्यं हृदि न्यसेत् ॥ कूटत्रयद्विरावृत्त्या षडङ्गं पुनराचरेत् ॥ ४५ ॥ कमलावसुधायुक्तं ध्यायेच्छ्रीचक्रगं हरिम् ॥ क्षीराम्भोधौ सितद्वीपे वने कल्पद्रुमादिभिः॥ ४६॥ व्याप्ते तस्मिन्स्वर्णमयं चिन्तयेद्रत्नमण्डपम् ॥ मण्डपे तत्र श्रीपीठे स्थितं कृष्णं विभावयेत् ॥४७॥ पद्ममष्टदलं शंखं बाणान्वंशीं च दक्षिणैः ॥ भुजैर्दधानं वामैस्तु चापं पाशं तथांकुशम् ॥ ४८ ॥ विपञ्चीं च महारत्ननानाभरणभूषितम् ॥ पीताम्बरधरं गोपीसमूहैः परितो वृतम् ॥ ४९ ॥ आदावष्टदले पद्मे कर्णिकायां षडङ्गकम् ॥ पूर्वादिकदले वासुदेवं शान्तिं क्रमाद्यजेत्॥ ॥५०॥सङ्कर्षणं श्रियं प्रद्युम्नाख्यं चापि सरस्वतीम् ॥ अनिरुद्धं रतिं पत्राग्रे-

ब्वर्च्या अष्टनायिकाः ॥ ५१ ॥ रुक्मिणी सत्यभामा च कालिन्दी जाम्बवन्तिका ॥ मित्रविन्दा लक्ष्मणा च सत्या नाग्नजिती तथा ॥ ५२ ॥ तद्बाह्येष्टदले पूज्यास्तदग्रे निधयो नव ॥ महापद्मश्च पद्मश्च शंखो मकरकच्छपौ ॥ ॥ ५३ ॥ मुकुन्दकुन्दनीलाश्च खर्वश्च निधयो नव ॥ योगिन्यस्तु रहस्याख्यास्तदग्रेष्टदलेर्चयेत् ॥ ५४ ॥ यक्षिणी चापि कामेशी कामिनी मादिनी बलात् ॥ जयिनी चैव सर्वेशी कौलिनीत्यष्ट शक्तयः ॥ ५५ ॥ ततो दशदले पूज्या निर्गभाख्यास्तु योगिनीः ॥ सर्वज्ञा सर्वशक्तिश्च सर्वैश्वर्य्यफलप्रदा ॥ ॥ ५६ ॥ सर्वज्ञानमयी पश्चात्सर्वज्ञानविनाशिनी ॥ सर्वाधारस्वरूपा च सर्वपापहरापरा ॥ ५७ ॥ सर्वानन्दमयी पश्चात्सर्वरक्षास्वरूपिणी ॥ सर्वेप्सितार्थफलदा पश्चिमादिविलोमगाः ॥ ५८ ॥ तदग्रिमे दशदले पूजयेत्कुलयोगिनीः ॥ सर्वसिद्धिप्रदा त्वाद्या सर्वसम्पत्प्रदापरा ॥ ५९ ॥ सर्वप्रियङ्करी चव सर्वमङ्गलकारिणी ॥ सर्वकामप्रदा पश्चात्सर्वदुःखविमोचिनी ॥ ६० ॥ सर्वमृत्युप्रशमनी सर्वविघ्नविनाशिनी ॥ सर्वाङ्गसुन्दरी चैव सर्वसौभाग्यदायिनी ॥ ६१ ॥ अग्रे चतुर्दशारे तु योगिनीः साम्प्रदायिकाः ॥ पश्चिमादिविलोमेन पूजयेत्क्रमतस्तु ताः ॥ ६२ ॥ सर्वसंक्षोभिणीं चैव सर्वविद्राविणीं तथा ॥ सर्वाकर्षिणिकां प्रोक्तां सर्वाह्लादकरीं तथा ॥ ६३ ॥ सर्वसम्मोहिनीं चैव सर्वस्तम्भनकारिणीम् ॥ सर्वजृम्भणिकां प्रोक्तां ततः सर्ववशंकरीम् ॥ ॥ ६४ ॥ सर्वरञ्जनिकां चैव सर्वोन्मादनिकां तथा ॥ सर्वार्थसाधिनीं चैव सर्वसम्पत्तिरूपिणीम् ॥ ६५ ॥ सर्वमन्त्रमयीं चापि सर्वद्वन्द्वक्षयंकरीम् ॥ ततोष्टारे [1]रा प्रोक्ता योगनीः परिपूजयेत् ॥ ६६ ॥ पूर्वादिष्वनुलोमेन बन्धूककुसुमप्रभाः ॥ अनङ्गकुसुमा त्वाद्या द्वितीयानङ्गमेखला ॥ ६७ ॥ अनङ्गमदना तद्वदनङ्गमदनातुरा ॥ अनङ्गलेखा चानङ्गवेगानङ्गांकुशा तथा ॥ ६८ ॥ अनङ्गमालिनी त्वष्टौ पाशांकुशलसत्कराः ॥ तदग्रे षोडशारे तु पश्चिमादिविलोमतः ॥ ६९ ॥ कामाकर्षिणिका पूर्वं बुद्ध्याकर्षिणिकापरा ॥ अहङ्काराकर्षिणी च शब्दाकर्षिणिका तथा ॥ ७० ॥ स्पर्शाकर्षिणिका तद्वद्रूपाकर्षिणिका भवेत ॥ रसाकर्षिणिका

१ पूज्या इति शेषः ॥

प्रोक्ता गन्धाकर्षिणिका मता ॥७१॥ चित्ताकर्षिणिका चापि धैर्य्याकर्षिणिका मता ॥ नामाकर्षिणिका चैव बीजाकर्षिणिका तथा ॥ ७२ ॥ अमृताकर्षिणी चापि स्मृत्याकर्षिणिका मता ॥ शरीराकर्षिणी पश्चादात्माकर्षिणिका तथा ॥ ७३ ॥ तदग्रेष्टदले पूज्या योगिन्यः प्रकटा इह ॥ क्षोभणद्रावणाकर्षमनोन्मादमहांकुशाः ॥ ७४ ॥ खेचरीं बीजसञ्ज्ञां च योन्याख्यामूर्ध्वतो यजेत् ॥ तद्वचाधः समभ्यर्च्य तद्बहिर्भूपुरे यजेत् ॥ ७५ ॥ ब्राह्म्याद्यष्टौ तद्बहिश्च प्राग्वचागारभूपुरे ॥ द्वारे द्वयं प्रागणिमा महिमा लघिमेशिता॥७६॥ वशिता गुरुता भुक्तिः प्राकाम्यं प्राप्तिरेव च॥रससिद्धिश्च दशमी सपर्य्यैवं समीरिता ॥ ७७ ॥ लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं जुहुयात्पायसेन वै ॥ तर्पणादि ततः कुर्य्यान्मन्त्रसिद्धः प्रजायते ॥७८॥ नवलक्षं जपेत्तां तु रुद्ररूपो नरो भवेत् ॥ करवीरजपुष्पैश्च होमान्मोहयते जगत् ॥ ७९ ॥ चन्द्रकुंकुमकस्तूरीहोमात्कामाधिको भवेत ॥ चम्पकैः पाटलैर्बिल्वैर्वशमानयते चिरात् ॥ ८० ॥ करञ्जफलहोमेन भूतप्रेतादयो वशाः ॥बिल्वैः स्यादतुला लक्ष्मीरिक्षुखण्डैस्तथा वशाः ॥ ८१ ॥ लाजहोमो राज्यदायी मधुनोपद्रवक्षयः ॥ निशि[1] स्वर्णफलैर्होमो रिपुसेनाविनाशकृत् ॥ ८२ ॥ दध्याज्यदुग्धमधुभिः कृताद्धोमादवाप्नुयात् ॥ आरोग्यं सम्पदं कामं धनं शर्करया सुखम् ॥ ८३ ॥ कमलैर्धनसम्पत्तिर्दाडिमै राजवश्यता ॥ क्षत्रियो मातुलुङ्गैश्च वैश्यो नारिङ्गजैः फलैः ॥ ८४ ॥ शूद्रः कूष्माण्डसम्भूतैर्वश्याः स्युरचिराद्ध्रुवम् ॥ पनसानां लक्षहोमाद्वश्याः स्युश्चक्रवर्तिनः ॥ ८५॥ द्राक्षाफलैरिष्टसिद्धी रम्भाभिर्मन्त्रिणो वशाः ॥ नारिकेरैस्तु पाण्डित्यं तिलैः सर्वेष्टसिद्धयः ॥ ८६ ॥ गुग्गुलैर्दुःखनाशः स्यात्सर्वेष्टं शर्करागुडैः ॥ प्रायसैर्धनधान्यादि बन्धूकैः प्राणिनो वशाः ॥ ८७ ॥ पक्वचूतफलैर्होमाद्रक्तमात्राद्धरा वशा ॥ लवणै राजिकायुक्तैर्होमाद्दुष्टविनाशनम् ॥ ८८ ॥ कर्पूरहोमाल्लभते वाक्पतित्वं नरोऽचिरात ॥ घृ तहेमादीप्सितात्प्तिः शक्तिः स्यात्तिलतण्डुलैः॥ ८९॥ अथान्यां सम्प्रवक्ष्यामि वाममार्गफलप्रदाम् ॥ कृष्णस्य शक्तिं सुमुखीं द्विजानां नाधिकारिता[2] ॥ ९० ॥

---

१ निशि च्छागपलैरिति वा निशि शाकफलैरिति पुस्तकाशुद्ध्या पाठो न ज्ञायते तदूह्यं यथामति सुधीभिः ॥ २ नचेतिशेषः ॥

उच्छिष्टचाण्डालिनि सुमुखि देवि महापिशा ॥ चिनि ह्रीं ठश्चठःठश्च द्वाविंशत्यक्षरो मनुः ॥ ९१ ॥ भैरवोस्य मुनिश्छन्दो गायत्री सुमुखी सुरी ॥ मुनिरामद्विषट्चन्द्रबन्ध्वर्णैरङ्गकल्पनम् ॥ ९२ ॥ ततश्च सुमुखीं ध्यायेत्पुष्पहारविभूषिताम् ॥ रक्ताम्बरां रक्तवर्णां रक्तपुष्पानुलेपनाम् ॥ ९३ ॥ नृकपालं च खड्गं च कराभ्यां दधतीं नवाम् ॥ शवासनां पीनकुचां देवीं श्रीसुमुखीं भजे ॥ ९४ ॥ कालीपीठे यजेद्देवीं पंचकोणाढ्यकर्णिके ॥ अष्टपत्रे षोडशारे वृत्तभूपुरशोभिते ॥९५॥ मूलेन मूर्त्तिं संकल्प्य पाद्यादीनि प्रकल्पयेत्॥ चन्द्रां चन्द्राननां चारुमुखीं चामीकरप्रभाम् ॥ ॥ ९६ ॥ चतुरां पंचकोणेषु केशरेष्वङ्गदेवताः ॥ ब्राह्म्याद्या अष्टपत्रेषु षोडशारे कलादिकाः ॥ ९७ ॥ कला कलानिधिः काली कमला च क्रिया कृपा ॥ कुला कुलीना कल्याणी कुमारी कलभाषिणी ॥ ९८ ॥ कराली च करालास्या कान्ता कामप्रदा कुजा ॥ भक्तोच्छिष्टोऽयुतं जप्त्वा जायते सम्पदां पदम् ॥ ९९ ॥ उच्छिष्टेनैव भक्तेन बलिं दद्यान्निरन्तम् ॥ गव्याज्याक्तैः प्रजुहुयाल्लक्षं सिद्धार्थतण्डुलैः॥ १०० ॥ भवन्ति वशगास्तस्य राजानो राजमन्त्रिणः ॥ शास्त्राणि वशगानि स्युर्होमं माज्जारमांसतः ॥ १०१ ॥ धनर्द्धिश्छागमांसेन विद्याप्राप्तिस्तु पायसैः॥ मधुपायससंयुक्तक्षीरजोयुक्तवाससा॥ ॥ १०२ ॥ होममाचरतः पुंसो जनता वशवर्त्तिनी ॥ मधुसर्पिर्युतैर्नागवल्लीपत्रैर्महाश्रियः ॥ १०३ ॥ सद्योनिहतमार्जारमांसेन मधुसर्पिषा ॥ युक्तेनान्त्यजकोणार्धैर्हुतैराकर्षति स्त्रियः॥ १०४॥ मध्वाक्तशशमांसेन तत्फलं विद्यया सह ॥ उन्मत्ततरुजैर्दीप्तचितग्नौ जुहुयाच्छदैः ॥ १०५ ॥ कोकिलाकाकमांसेन मारयेदचिरादरीन् ॥ वायसोलूकयोः पत्रैर्होमाद्विद्वेषयेदरीन् ॥ गर्भपातः सगर्भाया उलूकच्छदहोमतः ॥ १०६ ॥ आज्याक्तैर्बिल्वपत्रैर्वा मासमेकं सहस्रकम् ॥ प्रत्यहं जुहुयात्तेन वन्ध्यापि लभते सुतम् ॥ सौभाग्यार्थं दुर्भगाया बन्धूककुसुमैर्हुनेत ॥ १०७ ॥ चतुष्पथे बलिं दत्वा जपतश्चाष्टकायुतम् ॥ उच्छिष्टस्य च सा देवी प्रत्यक्षा जायतेचिरात् ॥ १०८ ॥ यत्र नोक्ता होमसंख्या मन्त्रोकान्तत्र निर्दिशेत ॥ वाममार्गेण सुमुखी क्षिप्रं

कामविधायिनी ॥ १०९ ॥ भोजनान्ते तदोच्छिष्टैर्जाप्या सा स्वेष्टसिद्धये ॥ न क्षिप्रफलदा देवी सुमुखी सुदृढापरा ॥ ११० ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि वाममार्गेण सिद्धिदाम् ॥कृष्णप्रियामेकजटां ह्रींत्रींहुंफट् च ह्नन्मनुः ॥१११॥ अस्य न्यासादि मुन्यादि तारापञ्चाक्षरीसमम् ॥ पूजावात्र पुरश्चर्य्या प्रोक्ता लक्षचतुष्टयम् ॥ तद्वत्प्रयोगकरणं कृष्णशक्तिरियम्परा ॥११२॥ अथ वक्ष्ये चैकजटामन्त्रं सव्यवशीकरम् ॥ तारो लज्जा नमो भेति गवत्येकजटे मम ॥ पुष्पं प्रतीक्षस्व स्वाहा द्वाविंशत्यक्षरो मनुः ॥११३॥ ऋषिः पतञ्जलिश्छन्दो गायत्र्येकजटा सुरी॥षडङ्गविधिरुद्दिष्टो दीर्घषड्युक्तमायया॥ध्यानपूजाप्रयोगादि सर्वं पूर्वोक्तवद्भवेत् ॥११४॥ अथ तत्रैकवीरायाः कृष्णशक्तेर्मनुं शृणु ॥ या तु भार्गवरामेण कार्त्तवीर्य्यवधाय च॥कृत्वा स्वं शाबरं रूपं वाममार्गेण सेविता ॥ ॥११५॥ तेन तन्त्रान्तरे प्रोक्ता सेवारीतिर्मया सुराः ॥जरासन्धभयात्कृष्णो यदा सिन्धुं समाश्रितः ॥ ११६ ॥ तदा रामेण निर्दिष्टा श्रीकृष्णस्य जयैषिणः ॥ तामावाह्य स कृष्णोपि भोगेन पर्य्यतोषयत् ॥ ११७ ॥ आरे सुदर्शिता नार्या तस्मात्सा रेणुकाभवत् ॥ सम्भोगे तु जपेन्मन्त्री यथा सन्तोषयेत्स्त्रियम् ॥११८॥ सन्तुष्यते तदा देवी रेणुका वरदा भवेत् ॥ प्रणवः कमला माया क्रौमैं पञ्चाक्षरो मनुः ॥ ११९ ॥ भैरवोस्य मुनिः पङ्क्तिश्छन्दो देवी च रेणुका ॥ पञ्चवर्णैः समस्तेन षडङ्गविधिरीरितः ॥ १२० ॥ हेमाद्रिसानावुद्याने नानाद्रुममनोहरे ॥ रत्नमण्डपमध्यस्थवेदिकायां स्थितां स्मरेत् ॥ १२१ ॥ गुञ्जाहारां कर्णयुग्मे मयूरच्छदभूषिताम् ॥ कोदण्डबाणौ करयोर्नववल्कलधारिणीम् ॥ १२२ ॥ शोणपुष्पीनूपुरा च मल्लिकाकलिकाभराम् ॥ यजेदष्टदले पद्मे कर्णिकायां षडङ्गकम् ॥ १२३ ॥ हुङ्कारी खेचरी चण्डा छेदनी क्षेपणी तथा ॥ स्त्री तुङ्कारी क्षेमकारी तदग्रे भूपुरे यजेत् ॥ १२४ ॥ दिक्पतींश्च तदस्त्राणि, पञ्चलक्षं जपेन्मनुम् ॥ बिल्वकाष्ठैधिते वह्नौ हुनेद्बिल्वफलैस्तथा ॥ १२५ ॥ तर्प्पणाद्यैः सिद्धमन्त्रः प्रयोगानाचरेत्ततः ॥ मल्लीपुष्पैर्हुतो वश्यमिक्षुदण्डैर्धनाप्तये ॥ १२६ ॥ पञ्चगव्यैर्धनानि स्युरशोककुसुमैः सुताः ॥ इन्दीवरैः कृतो होमो नृपपत्नीवशं-

करः ॥ अन्नादिरत्नैः सकलं मधूकैर्वाछितं भवेत् ॥ १२७ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि कृष्णस्यातीव वल्लभाम् ॥ षोडशस्त्रीसहस्राणा यत्प्रभावात्प्रभुर्भवेत् ॥ ॥ १२८ ॥ तारो ह्रीं योगिनी द्वेधा योगेश्वरियुगं वदेत् ॥ १२९ ॥ योगे भयंकरीत्युक्त्वा सकलस्थावरेति च ॥ जङ्गमस्य मुखं प्रोच्य हृदयम्मम चोच्चरेत् ॥ १३० ॥ वशमाकर्षयद्वन्द्वं स्वाहान्तः खशरार्णकः ॥ पितामहो मुनिः प्रोक्तश्छन्दोतिजगती मता ॥ १३१ ॥ हरेः प्राणसमा शैलपुत्री देवी स्वयंवरा ॥ ॐ ह्रां जगत्त्रयवश्यमोहिन्यै हृदयाय हृत् ॥ १३२ ॥ त्रैलोक्यवश्यमोहिन्यै तारमायादिकं शिरः ॥ उरङ्गवश्यमोहिन्यै ॐ ह्रैमाद्यं शिखा भवेत् ॥ १३३ ॥ ॐ ह्रैं सर्वराजवश्यमोहिन्यै कवचम्मतम् ॥ ॐ ह्रौं सर्वस्त्रीपुरुषमोहिन्यै चेति नेत्रकम् ॥ १३४ ॥ प्रणवो ह्रः सर्ववश्यमोहिन्यै चास्त्रमीरितम् ॥ ततश्च मूलमन्त्रेण सर्वाङ्गे व्यापकं चरेत् ॥ ॥ १३५ ॥ संसारसागरे कृष्णं क्रीडन्तं वीक्ष्य शंकरः ॥ तत्तत्सुखेच्छया कृष्णरूपं जग्राह मोहनम् ॥ १३६ ॥ आनन्दकाननं ध्यायंस्तद्दृष्ट्वा गिरिजा भवत् ॥ मोहिता स्वस्वरूपञ्च कृत्वाष्टगुणसुन्दरम् ॥ १३७ ॥ तस्मिन्नवसरे विष्णुमयः पीताम्बरं दधत् ॥ जगौ मङ्गलगीतानि यावत्स्यान्मैथुनालयः ॥ ॥ १३८ ॥ मृतः कामो मङ्गलैस्तैः पूर्णश्चित्ते तयोरभूत् ॥ देव्यै मधूकजाम्माला नागहारं हरोऽर्पयत् ॥ १३९ ॥ विष्णुर्योगकरस्तत्र तयोर्जातः पुरोहितः ॥ तस्मै देवी वरं प्रादात्तेन जाता हरिप्रिया ॥ १४० ॥ एवं ध्यात्वा त्रिवेदाङ्गकोणं यन्त्रं समुद्धरेत् ॥ अष्टदशादिग्भूपालदन्ताष्टकृतिसम्मितैः ॥ १४१ ॥ दलैः पद्मानि कुर्वीत बाह्यवृत्तत्रयं पुनः ॥ भूपुरं वर्त्तुलं कार्यं पूजायन्त्रमितीरितम् ॥ शेषा स्वयंवरा पूज्या त्रिकोणाभ्यन्तरे ततः ॥ तद्बाह्ये चतुरस्रस्य दिक्षु मेधां यजेत्ततः ॥ १४२ ॥ विद्यां लक्ष्मीं महालक्ष्मीं षट्कोणेऽङ्गानि संयजेत् ॥ द्विद्विस्वरानष्टदले शक्रादीन्दिग्दले पुनः ॥ १४३ ॥ तदायुधानि तद्बाह्ये दिग्दले षोडशारके ॥ तारायेन नमोन्तेन श्रीबीजेन यजेच्छ्रियम् ॥ १४४ ॥

---

१ ॐ ह्रीं योगिनि योगेश्वरि योगेश्वरि योगे भयंकारि सकलस्थावजङ्गमस्य मुखं हृदयं मम वश्यमाकर्षयाकर्षय स्वाहा ॥

पाशं मायामंकुशं च शिवायै नम इत्यपि ॥ अष्टाक्षरेण मनुना रदपत्रे शिवां यजेत् ॥ १४५ ॥ रमां मायां च मदनं त्रिपुरायै नमस्तथा ॥ नवाक्षरेण त्रिपुरां चतष्षष्टिदलेर्चयेत् ॥ १४६ ॥ वृत्तत्रये महालक्ष्मीं भवानीं पुष्पसायकम् ॥ चतुरस्रे चतुर्द्वारि विघ्नक्षेत्रेशभैरवान् ॥ योगिनीं पूजयेदित्थं नवावरणपूजनम् ॥ १४७ ॥ जपेल्लक्षचतुष्कं च पायसाज्जुहुयात्तथा ॥ एवं यो भजते देवीं वश्यास्तस्यामिता जनाः ॥ ॥ १४८ ॥ लाजैस्त्रिमधुरोपेतैर्जुहुयादयुतं तु यः ॥ लभते वाञ्छितां कन्यां धनमानसमन्विताम् ॥ १४९ ॥ सर्वोपास्या त्वियं देवी सिद्धा मार्गद्वयेपि च ॥ लक्ष्मीभेदास्तु ये पूर्वं प्रोक्तास्तु विष्णुसाधने ॥ दक्षमार्गेण संसिद्धा वामेनैते प्रकीर्त्तिताः ॥ १५० ॥ त्यज्यते दक्षिणो मार्गो यतः पापक्षयो भवेत् ॥ सिद्धिर्मध्ये यदा मृत्युस्तदा जन्मान्तरे भवेत् ॥ १५१ ॥ न भजेद्वाममार्गन्तु यतोनिष्टो दुरत्ययः ॥ तन्मार्गिणां महापापं पापात्मानोत्र ये स्थिताः ॥ १५२ ॥ एवं ते वैष्णवो मन्त्रो मया सम्यगुदीरितः ॥ यस्मिन्भुक्तिश्च मुक्तिश्च किं वक्तव्यमतः परम् ॥ १५३ ॥

इति श्रीमहामायामाहाकालानुमते मेरुतन्त्रे शिवप्रणीते विष्णुशक्तिमनुकथनं नाम त्रिंशः प्रकाशः ॥ ३० ॥

---

श्रीदेव्युवाच ॥ श्रुता गाणेश्वराः सौरा वैष्णवा मनवो मया ॥ इन्दानीं श्रोतुमिच्छामि तव मन्त्रान्ससिद्धिदान् ॥ १ ॥ श्रीमहादेव उवाच ॥ कथयिष्यामि ते देवि शैवान्मन्त्रान्महाद्भुतान् ॥ यान्साधयित्वा भोगांस्तु भुक्त्वा मोक्षमवाप्नुयात् ॥ २ ॥ नमः शिवायेति मन्त्रः पञ्चार्णस्तारपूर्वकः ॥ षडक्षरोयं विप्राणां भुक्तिमुक्तिप्रसाधकः ॥ ३ ॥ वामदेवो मुनिश्छन्दः पंक्तिर्देवः सदाशिवः ॥ षडर्णैस्तु षडङ्गानि पञ्चार्णैरङ्गपञ्चकम् ॥ ४ ॥ तर्जन्योर्विन्यसेन्नं तत्पुरुषाय नमस्त्विति ॥ ॥ ५ ॥ मध्यमानामिकयोर्विन्यसेच्चक निष्ठयोः ॥ शिंप्रोच्य सद्योजाताय नमोथानामयोर्न्यसेत् ॥ वामुक्त्वा वामदेवाय नमोथांगुष्ठयोर्न्यसेत् ॥ ६ ॥ यमीशानाय हृदये चैवमेव मुखे न्यसेत् ॥ हृदये पादयोर्गुह्ये न्यासोयं स्यात्तृतीयकः ॥ ७ ॥ प्रग्याम्यवारुणोदीचीमध्ये चक्रेषु पञ्चसु ॥ एवमेव

न्यसेत्प्रोक्तो न्यासोयं१श्चमोग्रहत ॥८॥ ॐसर्वशक्तिधाम्ने हृदयाय च नमो-
वदेत् ॥ नमुक्ता नित्यतृप्तेति शक्तिधाम्ने शिरो भवेत् ॥ ९ ॥ ममित्युक्त्वाना-
दिबोधशक्तिधाम्ने शिखा भवेत् ॥ शिमनन्तशक्तिधाम्ने कवचाय नमस्त्विति ॥
॥ १० ॥ वामनन्तशक्तिधाम्ने नमो नेत्रत्रयाय च ॥ यमनन्तशक्तिधाम्ने वदे-
दस्त्राय फट् तथा ॥ ११ ॥ षोढा न्यासं ततः कुर्यान्मन्त्रार्णैर्बिन्दुसंयुतैः
हृदि वक्त्रे दक्षिणांसे वामांसे दक्षिणोरुके ॥ १२ ॥ वामोरौ प्रथमश्चार्यं
कण्ठे नाभौ च दक्षिणे ॥ पार्श्वे च वामपार्श्वे च पृष्ठे हृदि द्वितीयकः ॥
॥१३॥ मूर्ध्नि वक्त्रे दक्षनेत्रे वामनेत्रे तथैव च ॥ दक्षनासापुटे वामनसि प्रोक्त-
स्तृतीयकः ॥ १४ ॥ दक्षदोर्मूलके मध्ये मणिबन्धेंगुलीतले ॥ मध्येंगुली-
नामग्रे च चतुर्थः परिकीर्त्तितः ॥ १५ ॥ एवमेव प्रकर्त्तव्यो वामदोर्मूल-
कादिषु ॥ दक्षोरुमूले मध्ये च गुल्फे चांगुलिमूलके ॥ १६ ॥ अंगुल्यग्रे
च वमोरावेवमेव न्यसेद्बुधः ॥ पञ्चमोयं भवेन्न्यासो मूर्ध्नि वक्त्रे हृदि
न्यसेत ॥ १७ ॥ उदरे वापि दक्षोरुमूलादिचरणान्तकम् ॥ वामोरुमू-
लपादाग्रपर्य्यन्तः षष्ठकस्त्वयम् ॥ १८ ॥ ततो हृदि मुखे कण्ठे न्यसे
द्बाहुद्वये तथा ॥ पुनर्वक्त्रांसहत्पादद्वयोरुजठरे न्यसेत् ॥ १९ ॥ पुनर्मू-
र्ध्नि च भाले च जठरे चांसयोर्हृदि ॥ एवं द्वादशधा न्यस्य वामेन पङ्कजं
चरेत् ॥ २० ॥ नमोस्तु स्थानभूताय ज्योतिर्लिङ्गामृतात्मने ॥ चतुर्मूर्त्ति-
वपुस्स्थाय भसिताङ्गाय शम्भवे ॥ २१ ॥ ततो ध्यायेत्तु गोक्षीररजताद्रि-
समप्रभम् ॥ चारुचन्द्रकलाराजज्जटामुकुटमण्डितम् ॥ २२ ॥ पञ्चवक्त्र-
धरं शम्भुं प्रतिवक्त्रं त्रिलोचनम् ॥ शार्दूलचर्म्मवसनं रत्नाभरणभूषितम् ॥
॥ २३ ॥ दक्षोर्ध्वहस्ते टङ्कं च वरं च दधतं करैः ॥ वामोर्ध्वहस्ते
हरिणन्दधानमभयम्परे ॥ २४ ॥ सुप्रसन्नमुखाम्भोजं निविष्टं कुशविष्टरे ॥
ब्रह्मविष्णुमहेशाद्यैः स्तुतं कृष्णं सुरासुरैः ॥ २५ ॥ विश्वद्यं विश्वावपुषं
भवभीतिहरं भवम् ॥ ध्यात्वार्चयेत्ततः पीठे षोडशैरुपचारकैः ॥ २६ ॥
नवैताः शम्भुपीठस्य शक्तयः परिकीर्त्तिताः ॥ वामा ज्येष्ठा ततो रौद्री
काली कलविकर्णिका ॥ २७ ॥ ततो बलविकर्णा च बलप्रमथनी तथा ॥

सर्वभूतदमन्याख्या ततः प्रोक्ता मनोन्मनी ॥ २८ ॥ तारो नमो भगवते सकलेति पदं वदेत् ॥ गुणात्मशक्तियुक्ताय योगपीठात्मने नमः ॥ २९ ॥ योगपीठस्य पूजायां मन्त्रो रसकरार्णवान् ॥ आवाह्य देवं सम्पूज्य पुष्पान्तैरुपचारकैः ॥ ३० ॥ ततश्चाष्टदले पूज्य दिक्पत्रेषु शिवाग्रतः ॥ तत्पुरुषो ह्यघोरश्च सद्योजातस्ततः परम् ॥ ३१ ॥ वामदेवस्तथेशानो मध्यकोणेषु संयजेत ॥ निवृत्तिं च प्रतिष्ठां च विद्यां शान्तिं तु मध्यतः ॥ ॥ ३२ ॥ शान्त्यतीता तथा बाह्येष्टदले केशरेषु च ॥ अग्नीशासुरवायव्यमध्ये सर्वत्र केशरे ॥ ३३ ॥ षडङ्गान्वयपत्रेषु देवाग्रात्तु प्रदक्षिणम् ॥ अनन्तसूक्ष्मं च शिवम्महोक्षं चैकनेत्रकम् ॥ एकरुण्डं त्रिमूर्त्तिं च श्रीकण्ठं च शिखण्डिनम् ॥ ३४ ॥ रक्तपीतासितारक्तकृष्णरक्ताञ्जनासितान् ॥ किरीटार्पितबालेन्दून्पद्मस्थांश्चारुभूषणान् ॥ ३५ ॥ त्रिनेत्रान्प्रतिवक्त्रेषु चापहस्तान्मनोरमान् ॥ उमां चण्डेश्वरं नन्दिमहाकालौ महेश्वरम् ॥ ३६ ॥ वृषभं भृङ्गिरीटिं च स्कन्दन्तद्बाह्यपङ्कजे ॥उत्तरदलमालभ्य बीजनीलाहृतान्सितान् ॥ ३७ ॥ चित्रं निशाकराभं च पीतनीलान्यजेत्क्रमात् ॥ तद्बाह्ये चतुरस्रे च यजेदिन्द्रादिदिक्पतीन् ॥ ३८ ॥ अनन्तं च विधातारमीशं नैर्ऋत्यपार्श्वतः ॥ तत्पार्श्वे तद्वाहनानि बाह्येऽस्त्राणि प्रपूजयेत् ॥ ३९ ॥ लक्षषट्कं जपेन्मन्त्रं नियमस्थो जितेन्द्रियः ॥ तत्सहस्रं प्रजुहुयात्तिलैः शुद्धैर्घृतप्लुतैः ॥ ॥ ४० ॥ पायसैः क्षीरवृक्षोत्थसमिद्भिर्वाथ होमयेत् ॥ तावत्संख्यातिलैः शुभ्रैस्तर्प्पयेच्च तथासितैः ॥ ४१ ॥ मार्ज्जयेत्तद्दशांशेन भोजयेच्छिवतत्परान् ॥ एवं संसाधितो मन्त्रः सर्वान्कामान्प्रयच्छति ॥ ४२ ॥ पर्वते लक्षमेकन्तु महानद्यां द्विलक्षकम् ॥ तीर्थे त्रिलक्षं सञ्जप्य हुनेद्दूर्वाकुरैस्तिलैः ॥ तद्दशांशेन पूर्णायुर्नीरोगः साधको भवेत् ॥ ४३ ॥ अश्वत्थवृक्षं संस्पृश्य जपेल्लक्षद्वयं शनैः॥आम्रैर्हुनेत्तद्दशांशैर्दीर्घायुश्च युवा भवेत् ॥ ४४ ॥ आदित्यसम्मुखो भूत्वा जपेल्लक्षमनन्यधीः ॥ अर्कैरष्टशतं नित्यं हुनेद्रोगैर्विमुच्यते ॥ ४५ ॥ समस्तव्याधिनाशार्थं पालाशसमिधा हुनेत् ॥

१ इमेपदे पूर्वत्र सम्बध्येते ॥

अयुतं रोगहीनः स्यादथ पूर्वोदितैर्यजेत् ॥ ४६ ॥ शान्त्यष्टकं च जुहुयादुपतिष्ठेत भास्करम् ॥ नित्यं तस्य महारोगा नाशं यान्ति न संशयः॥४७॥ नवतोयेन सम्पूर्णं घटं संस्पृश्य सञ्जपेत ॥ अयुतं तज्जलैः स्नानं रोगाणामौषधं स्मृतम् ॥ ४८ ॥ अष्टाविंशं जपित्वा तमश्नीयात्प्रत्यहं नरः ॥ हुनेच्चारुपलाशैश्च तावदारोग्यमाप्नुयात ॥ ४९ ॥ पिबेदष्टोत्तरशतं जपित्वा योऽर्कसन्निधौ ॥ औदरैरामयैः सर्वैर्मासेनैकेन मुच्यते ॥ ५० ॥ एकादशेन भुञ्जीयादन्नं चैवाभिमन्त्रितम् ॥ भक्ष्यं चोष्यं तथा पेयं विषमप्यमृतं भवेत ॥ ५१ ॥ चन्द्रसूर्य्यग्रहे पूर्वमुपोष्य विधिना शुचिः ॥ यावद्ग्रहणमोक्षस्तु तावन्नद्यां समाहितः ॥ ५२ ॥ जपेत्समुद्रगामिन्यां विमोक्षे ग्रहणस्य तु ॥ अष्टोत्तरसहस्रेण पिबेद्ब्राह्मीरसं ततः ॥ ५३ ॥ ऐहिकीं लभते मेधां सर्वश्रुतिवहां शुभाम् ॥ सारस्वती भवेद्देवी तस्य वागतिमानुषी ॥ ५४ ॥ ग्रहाणां चैव पीडासु जप्त्वायुतमथो हुनेत् ॥ तिलाज्यैरष्टसाहस्रं ग्रहपीडा विनश्यति ॥ ५५ ॥ दुःस्वप्नदर्शने स्नात्वा जपेच्चैवायुतं नरः ॥ घृतेनाष्टशतं हुत्वा दुःस्वप्नफलनाशनम् ॥ ५६ ॥ चन्द्रसूर्य्यग्रहे लिङ्गं समभ्यर्च्यायुतं जपेत् ॥ यत्किञ्चित्प्रार्थयेत्तस्य निकटेन तदाप्नुयात् ॥ ५७ ॥ गजानां तुरगाणां वा गवां वा व्याधिसम्भवे ॥ समिद्भिर्जुहुयान्मासमयुतं व्याधिशान्तये ॥ ५८ ॥ जप्त्वान्ते शस्त्रबाधायां जुहुयादयुतं शुचिः ॥ पलाशस्य समिद्भिस्तु तस्य शान्तिर्भविष्यति ॥ ५९ ॥ आत्मवादिकसन्ध्यायामेतदेव समाचरेत् ॥ प्रध्वंसयति तच्छाक्तिं शत्रुस्तस्य मरिष्यति ॥ ६० ॥ विद्वेषणार्थे जुहुयाद्विभीतसमिधाष्टकम् ॥ परापकारः पापाय शृणु तत्पापनाशनम् ॥ ६१ ॥ मां ध्यात्वैकाग्रचित्तेन चाभिषिञ्चेत्समन्त्रतः ॥ अष्टोत्तरशतं जप्तैस्तोयैः पापं लयं व्रजेत् ॥ सन्ध्योपासनविच्छेदे सहस्रैकं जपेत्तथा ॥ ६२ ॥ विड्वराहैश्च चाण्डालैर्मार्ज्जारैःकुक्कुटैरपि॥स्पृष्टमन्नं न भुञ्जीत तत्र चाष्टशतं जपेत्॥६३॥ ब्रह्महत्याविशुद्ध्यर्थं जपेल्लक्षायुतं नरः ॥ योनिजेषु तदर्धं स्यात्तदर्धं भूपयोनिके ॥ ६४ ॥ सहस्रपञ्चकं क्षुद्रपापेषु जप ईरितः ॥ जितेन्द्रियो जपेल्लक्षपञ्चकं शिवदङ्मनाः ॥ ६५ ॥ ब्राह्मणो वान्यकुलजो वायुपञ्चकजिद्भवेत् ॥ निगृही-

तेन्द्रियः पञ्चलक्षं जप्त्वेन्द्रियं जयेत् ॥ ६६ ॥ पञ्चविंशलक्षजपात्तत्त्वानां विजयी भवेत् ॥ मध्यरात्रेयुतं जप्त्वा निकटे ब्रह्मसिद्धिभाक् ॥ ६७ ॥ जपेद्वने शिवमना निर्वाते ध्वनिवर्ज्जिते ॥ मध्यरात्रे विवश्यश्च तद्वशो भवति ध्रुवम् ॥ ६८ ॥ शिवमभ्यर्च्य साहस्रजपो नित्यं रमाप्रदः ॥ सहस्रद्वयजापेन महारोगैः प्रमुच्यते ॥ ६९ ॥ सहस्रत्रयजापेन दीर्घमायुर्लभेत ना ॥ चतुस्सहस्रजापेन वाञ्छितानि समाप्नुयात् ॥ ७० ॥ तिलैः शुद्धैर्घृताज्याक्तैः प्रत्यहं त्रिसहस्रकम् ॥ मासं हुत्वा विनश्येत्तु रोगस्तस्य न सम्भवेत् ॥ ७१ ॥ [1]अयं षडक्षरो मन्त्रः षोढा स्यादक्षरात्मकः॥ लक्षमेकं पुरश्चर्य्या मुनयोमी प्रकीर्त्तिताः ॥ ७२ ॥ ब्रह्मा च गौतमोत्रिश्च विश्वामित्रस्तथाङ्गिराः ॥ भरद्वाजोथ छन्दांसि पंक्तिगायत्र्यनुष्टुभः ॥ ७३ ॥ त्रिष्टुप् च बृहती चेति विराट् चैवात्र देवताः ॥ परब्रह्मेन्द्रविष्णू च विधात्र्यश्विगुहाः क्रमात् ॥ ७४ ॥ ज्योतिर्वर्णः कुंकुमाभो मेचको धूम्रवर्णकः॥ पीतोरुणः क्रमाद्वर्णा देवतानां प्रकीर्त्तिताः ॥ ७५ ॥ क्रमान्नियोगो मोक्षार्थं गतराज्याप्तये श्रिये ॥ ऐश्वर्य्याय च विद्यायै निजपापक्षयाय च ॥ ७६ ॥ लज्जयाद्यन्तयोर्युक्तः पञ्चार्णः सप्तवर्णकः॥ षडर्णश्चाष्टवर्णः स्यादेवं मन्त्रद्वयं भवेत् ॥ ७७ ॥ वामदेवो मुनिः पंक्तिश्छन्दो देव उमापतिः॥तारषड्दीर्घमायाद्यैः स्यान्मन्त्रार्णैः षडङ्गकम् ॥७८॥ बन्धूककुसुमारक्तं चन्द्रार्धकृतशेखरम् ॥ शूलं कपालमभयं वरं च दधतं करैः ॥ ७९ ॥ वामोरुसंस्थितां देवीं श्लिष्यन्तं वामबाहुना ॥ स्मेरवक्त्रं त्रिनयनं सर्वाभरणभूषितम् ॥ ८० ॥ एवं ध्यात्वा यजेत्पीठे पूर्वोक्ते नवशक्तिके ॥ आदौ पञ्चदले पद्मे केशरेष्वङ्गषट्ककम् ॥ ८१ ॥ मध्ये प्राग्दक्षिणे दिव्ये पश्चात्पत्रेर्हणीयकाः ॥ हल्लेखा गगनायुक्ता चतुर्थी तु कुलालिका ॥ ॥ ८२ ॥ महोच्छुष्मा क्रमादेताः पञ्चभूतसमप्रभाः ॥ पाशांकुशवराभीतिधारिण्योमितभूषणाः ॥ ८३ ॥ तद्बाह्येष्टदले चैव वृषभाद्यष्टदेवताः ॥ सम्यग्ध्यात्वा क्रमाद्दर्च्या देवाग्रादिप्रदक्षिणम् ॥ ८४ ॥ हिमालयाभं वृषभं तीक्ष्णास्यं तं त्रिलोचनम् ॥ सर्वाभरणसन्दीप्तं साक्षाच्छन्दस्स्वरूपिणम्

---

१ एतत्पूर्वं मन्त्राकथनात्पाठविच्छेदो ज्ञायते ॥

॥ ८५ ॥ कपालशूलविलसत्करं कालघनप्रभम् ॥ क्षेत्रपालं त्रिनयनं दिगम्बरमथार्चयेत् ॥ ८६ ॥ शूलटङ्काक्षवलयकमण्डलुलसत्करम् ॥ रक्ताकारं त्रिनयनं चण्डीशं परिपूजयेत् ॥ ८७ ॥ शङ्खचक्रवराभीतिकरां मरकतप्रभाम् ॥ दुर्गां प्रपूजयेत्सौम्यां त्रिनेत्रां रत्नभूषणाम् ॥ ८८ ॥ पाशांकुशवराभीतिधारिणं कुंकुमप्रभम् ॥ विघ्ननाशकमभ्यर्चेच्चन्द्रार्द्धकृतशेखरम् ॥ ॥ ८९ ॥ श्यामं रक्तोत्पलाकारं वामांकन्यस्तसत्करम् ॥ त्रिनेत्रं रक्तवस्त्राढयं सेनापतिमथार्च्चयेत् ॥ ९० ॥ तद्बाह्येष्टदले पूज्या ब्राह्मयाद्याश्चाष्टमातरः ॥ तद्बहिश्चतुरस्राणि त्रीणि तद्वीथिकाद्वये ॥ ९१ ॥ इन्द्रादीन्दशादिक्पालांस्तदस्त्राणि बाहिर्यजेत् ॥ मनुलक्षं जपेन्मन्त्रं तत्सहस्रं यथाविधि ॥ ९२ ॥ जुहुयान्मधुरासिक्तैरारग्वधसमिद्वरैः ॥ तर्प्पणं मार्ज्जनं प्राग्वद्विप्रसन्तर्प्पणन्तथा ॥ ९३ ॥ एवं सिद्धमनुः कुर्य्यात्प्रयोगाद्यञ्च पूर्ववत् ॥ एतत्संसाधनात्सम्पत्सन्ततिः सम्प्रजायते ॥ ९४ ॥ हौमित्यैकाक्षरो मन्त्रः प्रोक्तः प्रासादसञ्ज्ञकः ॥ वामदेवो मुनिश्छन्दः पंक्तिर्देवः सदाशिवः ॥ ९५ ॥ हंबीजं शक्तिरौकारः सर्वाभीष्टे नियोजनम् ॥ षड्दीर्घयुक्तबीजेन षडङ्गविधिरीरितः ॥ ९६ ॥ पञ्चब्रह्मविधानाख्यं न्यासं शृण्वन्तु देवताः ॥ यस्मिन्कृते तु पञ्चत्वे जाते पञ्चमुखो भवेत् ॥ ९७ ॥ आदौ तु पञ्चमन्त्रेण मस्तके स्वे मुनिं न्यसेत् ॥ मुनिश्छन्दो देवतास्तु ध्यानपूर्वं हृदि न्यसेत् ॥ अयन्तु प्रथमो न्यासो देवताप्रीतिकारकः ॥ ९८ ॥ ईश्वरः सर्वविद्यानामिश्वरोस्य मनोर्मुनिः ॥ स एव देवो भूपंक्त्यनुष्टप्छन्दांसि चिन्तयेत् ॥ ९९ ॥ शक्तिं डमरुकाभीतिवरान्संदधतं करैः ॥ ईशानं त्रीक्षणं शुद्धं नागयज्ञोपवीतिनम् ॥ १०० ॥ मनोस्तत्पुरुषायेति मुनिस्तत्पुरुषः स्मृतः ॥ आपो देव्योस्य गायत्री छन्दो ध्यानं निरूप्यते ॥ १०१ ॥ परश्वधवराभीति दधानं विद्युदुज्ज्वलम् ॥ चतुर्मुखं तत्पुरुषं त्रिनेत्रं वृषगामिनम् ॥ १०२ ॥ अघोरेभ्योथ घोरेभ्यो मनोरग्निर्मुनिर्मतः ॥ अनुष्टुप्छन्द आख्यातं देव आपः प्रकीर्त्तिताः ॥ १०३ ॥ मालां दण्डं पाससृणी डमरुं खट्वकाङ्गकम् ॥ खड्गं कपालं हस्तैश्च दधतं त्रीक्षणं भजे ॥ १०४ ॥ अञ्जनाभं चतुर्वक्त्रं वाम-

देवं त्रिलोचनम् ॥ वराभयाक्षवलयकुठारं दधतं करैः ॥ १०५ ॥ सद्यो-जातं प्रवक्ष्यामि मन्त्रस्य तु हरो मुनिः ॥ अञ्जनाभं चतुर्वक्त्रं भीमदंतं भयापहम् ॥ नानाभीमगणैर्युक्तमघोरं चिन्तयेद्धृदि॥ १०६ ॥ वामदेवायेति मनोर्वामदेवो मुनिः स्मृतः ॥ विकृतिश्छन्द उद्दिष्टं भर्गो देवः प्रकीर्त्तितः ॥१०७॥ अथ द्वितीयं वक्ष्यामि न्यासं सर्वार्थसिद्धिदम् ॥ त्रैं श्रीं ह्रीं च तथाहं क्षैं हुं ह्रौं च श्रीत्रयं वदेत् ॥ १०८ ॥ पराबीजद्वयं प्रोच्य सर्वज्ञाय हृदीरितम् ॥ अमृततेजोज्वालेति मालिने च पदं ततः ॥१०९॥ तृप्ताय ब्रह्मशिरसे शिरोमन्त्र उदीरितः ॥ ज्वलितशिखिशिखायानादिबोधाय तच्छिखे ॥ ११० ॥ वज्राय वज्रहस्ताय स्वतन्त्राय तनुच्छिदे ॥ सौंचौंसौमिति संभाष्य मुनयेऽलुप्तशक्तये ॥ १११ ॥ नेत्रत्रयायेति मन्त्रो नेत्रस्यैव प्रकीर्त्तितः॥ श्रीं परशुं च ङेन्तं हुं फट् तथानन्तशक्तये ॥ ११२ ॥ अस्त्रमुक्तं षडङ्गानि कुर्य्याद्देवं समाहितः ॥ पूर्वदक्षिणपश्चाशासौम्यमध्येषु पञ्चसु ॥ मुखेषु विन्यसेदीशानादीन्पञ्च हि च क्रमात् ॥ ११३ ॥ तृतीयोथ तथेशानादिकानंगुष्ठकादिके ॥ न्यसेत्तिर्य्यक्छिरोवक्त्रहृदयांघ्रिषु पञ्चमः ॥ ११४ ॥ पञ्चब्रह्ममनोर्न्यासानेवं कृत्वा ततः परम् ॥ अष्टत्रिंशत्कलान्यासं कुर्य्यात्तेजोभिवृद्धये ॥ ॥ ११५ ॥ ईशानादिकलाः पञ्च ह्यंगुष्ठादिषु विन्यसेत् ॥ प्रणवाद्यं मन्त्रपदं कला ङेन्ता नमोन्तकाः ॥ ११६ ॥ ईशानः सर्वविद्यानां शशिनी प्रथमा कला ॥ ईश्वरः सर्वभूतानामङ्गदाख्या ततः परम् ॥ ११७ ॥ ब्रह्माधिपत्याद्यर्णानां त्रिदशानां तथेष्टदा॥ शिवो मेत्रास्तु मारीची चतुर्थी कथिता कला॥ ॥ ११८ ॥ सदाशिवो तथैतस्य पञ्चमी चांशुमालिनी ॥ तत्पुरुषाय विद्महे शान्तिं पूर्वमुखे न्यसेत् ॥ ११९ ॥ महादेवाय धीमहि विद्याख्यां पश्चिमे मुखे ॥ तन्नो रुद्रः प्रतिष्ठाख्यां याम्यास्ये त्वष्टमीं न्यसेत् ॥१२०॥ प्रचोदयान्नित्यविद्यां नवमीमुदगानने ॥ अघोरेभ्यस्तामसीं तु दशमीं हृदि विन्यसेत् ॥ १२१ ॥ अथवायामथ घोरेभ्यो मोहामेकादशीं न्यसेत् ॥ दक्षिणांसे घोररूपां विन्यसेद्द्वादशीं कलाम् ॥ १२२॥ घोरतरेभ्यो वामांसे निद्राख्यां तु त्रयोदशीम् ॥ सर्वेभ्यो नाभिमध्ये तु व्याधिताख्यां चतुर्दशीम् ॥ १२३ ॥

कुक्षौ तु सर्वसर्वेभ्यो भूतिः पञ्चदशी भवेत् ॥ नमस्ते अस्तु पृष्ठे तु सुधाख्या षोडशी कला ॥ १२४ ॥ वक्षःस्थले रुद्ररूपेभ्यः कला सप्तदशीं मता ॥ वामदेवाय विरजां गुह्ये त्वष्टादशीं न्यसेत् ॥ १२५ ॥ वामदेवाय निरजां दक्षां दक्षांसके न्यसेत् ॥ श्रेष्ठाय नम इत्युक्त्वा वामांसे तु रतिं न्यसेत् ॥ ॥ १२६ ॥ रुद्राय नम इत्युक्त्वा दक्षोरौ पालिनीं न्यसेत् ॥ कालाय नमो द्वाविंशसंज्ञां वामोरुके न्यसेत् ॥ १२७ ॥ त्रयोविंशी कलेत्युक्त्वा कलाख्यां दक्षजानुनि॥न्यसेच्छ्रियं विकर्णाय नमो वामे च जानुनि॥ ॥१२८॥बलेत्युक्त्वा बुद्धिनाम्नीं दक्षजंघागतां स्मरेत् ॥ न्यसेज्ज्ञानां विकर्णाय नमो वामे च जंघके ॥ १२९ ॥ हृदि रात्रिं सप्तविंशीं बलाय नम इत्यपि ॥ कट्यां बलप्रमथनाय नमो गुह्यके न्यसेत्॥ १३० ॥ सर्वभूतदमनाय मोहिनीं दक्षपार्श्वके ॥ वामपार्श्वे मनोन्मनाय नमश्चोभयं न्यसेत् ॥ ॥ १३१ ॥ सद्योजातं प्रपद्यामि सिद्धिं पादतलेत्ववाक् ॥ ऋद्धिं चोदक्पादतले सद्योजाताय वै नमः ॥ १३२ ॥ भवे [1]श्रुतिं त्रयस्त्रिंशीं दक्षहस्ततले न्यसेत् ॥ वामहस्ततले लक्ष्मीं चतुस्त्रिंशत्कलां न्यसेत् ॥ ॥ १३३ ॥ पञ्चत्रिंशीं नासिकायां मेधां नाभिभवे न्यसेत्॥ षट्त्रिंशीं मूर्द्धनि क्षान्तिं विन्यसेच्च भुजे रमाम् ॥ १३४ ॥ सप्तत्रिंशीं भवेत्युक्त्वा शुद्धां न्यस्येदवाग्भुजे ॥ उद्भवाय नमः प्रोच्य तिर्य्यग्वामभुजे न्यसेत् ॥ १३५ ॥ ततश्च मूलमनुना पुटान्सव्ये च मन्त्रकान् ॥ सद्योजातादिकान्न्यस्य व्यापकन्यासमाचरेत् ॥ १३६ ॥सदाशिवात्मकं ध्यात्वा स्वात्मानं सर्वदैवतैः ॥ अवास्थितं शिवोहं च ध्यात्वान्तः पूजनं चरेत् ॥ १३७ ॥ ततश्चावाह्य पूजायामीशानाद्यैश्च पञ्चभिः ॥ प्रथमावरणं ज्ञेयं द्वितीयं स्यात्षडङ्गकैः ॥ ॥१३८॥अनन्ताद्यैस्तृतीयं स्याच्चतुर्थं स्यादुमादिभिः ॥इन्द्राद्यैः पंचमं चापि वज्राद्यैः षष्ठकं मतम् ॥ १३९॥ लक्षद्वयं जपेन्मन्त्रं हविष्याशी जितेंद्रियः ॥ पंचविंशतिसाहस्रसम्मितैः करवीरजैः॥ १४० ॥ जपापुष्पैस्तु पद्मैर्वा जुहुयात्तर्प्पणादिकम् ॥ कृत्वा संसिद्धमन्त्रस्तु कुर्य्यात्काम्यानि पूर्ववत् ॥ १४१ ॥

---

१ भवेभवे नातिभवेत्यादि ॥

तारमायाधराबीजपूर्वः पञ्चाक्षरो मनुः ॥ अष्टवर्णो भवेदस्य वामदेवो मुनि-र्मतः ॥ देवः सदाशिवः प्रोक्तः पंक्तिश्छन्द उदाहृतम् ॥ १४२ ॥ माया-प्रमादबीजाभ्यां भेदिताभ्यां च षट्स्वरैः ॥ षड्भिस्तथा मन्त्रवर्णैः षडङ्गानि सजातिभिः ॥ १४३ ॥ ध्यायेत्ततश्च सिन्दूरारुणं शम्भुं त्रिलोचनम् ॥ टंकं मृगं तथा देवीं चालिङ्गन्तं वरप्रदम् ॥ १४४ ॥ हस्तैश्चतुर्भिरारक्तपद्मं च दधतीं करैः ॥ पीतवृत्तघनोत्तुङ्गस्तनीं वामांकसंस्थिताम् ॥ १४५ ॥ रक्तपद्मसमासीनं रक्तस्रग्गन्धलेपनम्॥एवन्ध्यात्वा च पंचार्णपीठे तद्वद्यजेद्धरम् ॥ ॥ १४६ ॥ अष्टलक्षं जपेन्मन्त्रं तत्सहस्रं तथा हुनेत् ॥ घृताप्लुतैः पाय-सान्नैस्तर्प्पणादि ततश्चरेत् ॥ १४७ ॥ एवं सिद्धमनुः कुर्य्यात्प्रयोगान्हि षडर्णवत् ॥ १४८ ॥ ॐ जूं स इति मन्त्रस्य प्रोक्तो मृत्युञ्जयाभिधः ॥ ऋषिः कहोडो देव्यादिगायत्री छन्द ईरितम्॥ १४९ ॥ मृत्युंजयो महादेवो देवता परिकीर्त्तितः ॥ षड्दीर्घयुक्तभृगुणा षडङ्गानि समाचरेत् ॥ १५० ॥ स्मरेत्पद्मद्वयस्थं च चन्द्रार्काग्नित्रिलोचनम् ॥ हस्तेषु ज्ञानमुद्रां च पाशरुद्रा-क्षमालिके ॥ १५१ ॥ कर्पूराभं शीर्षचन्द्रं करोद्गामृतधारया ॥ अर्धाङ्गं बहु-भूषाढ्यं कान्ताभिश्च विमोहितम् ॥ १५२ ॥ एवं संपूजयेत्पीठे मूर्तिं मूलेन कल्पयेत ॥ अङ्गेन्द्राद्यैस्तदस्त्रैश्च त्रिरावरणपूजनम् ॥ १५३ ॥ जपेत्त्रिलक्षं जुहुयादमृतां खण्डकैः प्लुताम्॥शुद्धदुग्धेन च ततस्तर्प्पणादि समाचरेत्॥ एवं संसिद्धमन्त्रस्तु प्रयोगान्वैचरेदथ॥ १५४ ॥सुधाफलैः सुधाखण्डैर्मन्त्री मासं सह-स्रकम् ॥ आराधिताग्नौ जुहुयाद्विधिवद्विजितेन्द्रियः ॥ १५५ ॥ सन्तुष्टः शंकरस्तस्य सुधाप्लावितविग्रहः ॥ आयुरारोग्यसम्पत्तियशःपुत्रान्विवर्धयेत् ॥ ॥ १५६ ॥ सुधावटौ बिल्वदूर्वाः पयः सर्पिः पयो हविः ॥ इत्युक्तैः सप्त-भिर्द्रव्यैर्जुहुयात्सप्त वासरान् ॥ १५७ ॥ अष्टोत्तरसहस्रं तु नित्यं सप्ताधिका-न्द्विजान् ॥ भोजयेन्मधुराकैश्च सर्वरोगैः प्रमुच्यते ॥ १५८ ॥ होमाद्यं पूर्ववद्दद्याद्विप्रेभ्योधिकदक्षिणाम् ॥ आरण्यैः पशुभिर्गोभिर्हस्तिभिर्वाजिभि स्तथा ॥ गुरुं सम्प्रीणयेत्पश्चाद्धनाद्यैर्देवताधिया॥ १५९ ॥अनेन विधिना सद्यः कृत्याद्रोहज्वरादिभिः ॥ विमुक्तः सुचिरं जीवेत्साधिकं शरदां शतम् ॥ १६० ॥

अभिचारज्वरे तीव्रे घोरोन्मादे शिरोगदे ॥ असाध्यरोगे संजाते तथा चैवमहाभये ॥ होमोयं शान्तिदः प्रोक्तः सर्वसम्पत्प्रदायकः ॥ १६१ ॥ द्रव्यैरेतैः प्रजुहुयात्रिजन्मा च यथाविधि ॥ भोजयेन्मधुरैर्भोज्यैर्ब्राह्मणान्वेद-पारगान् ॥ १६२ ॥ दीर्घमायुरवाप्नोति काश्मरीबकुलोद्भवैः ॥ समिद्वरैः कृतो होमः सर्वमृत्युगदापहः ॥ १६३ ॥ सिद्धान्नैर्विहितो होमो महाज्वर-विनाशनः ॥ अपामार्गसमिद्धोमः सर्वामयविनाशनः ॥ १६४ ॥ अथातो दक्षि-णामूर्तिमन्त्रं वक्ष्याम्यभीष्टदम् ॥ ॐ[1]कारमायाबीजाभ्यां पुटं षट्त्रिंशदक्षरम् ॥ ॥ १६५ ॥ दक्षिणामूर्त्तये तुभ्यं वटमूलनिवासिने ॥ ध्यानैकनिरताङ्गाय नमो रुद्राय शम्भवे ॥ १६६ ॥ मुनिः शुक्रः समुद्दिष्टोनुष्टुप् छन्दः प्रकी-र्त्तितम् ॥ देवता जगतामादिर्दक्षिणामूर्त्तिरव्ययः ॥ १६७ ॥ प्रणवो बीज-मित्युक्तं हृल्लेखा शक्तिरीरिता ॥ विनियोगः समुद्दिष्टः पुरुषार्थचतुष्टये ॥ ॥ १६८ ॥ आदौ तु मूलमन्त्रेण करशुद्धिं समाचरेत् ॥ रसनेत्राष्टकवसु बाणवह्निमितैः क्रमात् ॥ १६९ ॥ तत्रैव तु च मन्त्रार्णैस्तारमायादिकैः पुनः ॥ षड्दीर्घैस्तारमायान्तैः षडङ्गानि समाचरेत् ॥ १७० ॥ मूर्ध्नि भाले दक्षनेत्रे वामे चैव तु कर्णयोः ॥ १७१ ॥ दक्षगण्डे वामगण्डे नासिकायां कटौ तथा ॥ लिङ्गे दक्षोरुमूले च जानुमूले च गुल्फके ॥ १७२ ॥ पादां गुलीनां मूले च जानुमध्ये च गुह्यके ॥ पाण्यंगुलीनां मूले च न्यसेत्स्थान चतुष्टये ॥ एवं वामोरुमध्यादौ कुर्य्यान्न्यासोयमीरितः ॥ १७३ ॥ हिमा-चलतले रम्ये सिद्धकिन्नरगुह्यकैः ॥ नानाद्रुमैः पुष्पफलपत्रोपेतैर्विराजिते ॥ ॥ १७४ ॥ शिलाविवरनिर्गच्छन्निर्झरैः शीतलानिले ॥ नानाभृङ्गैः पक्षिगणैर्विधुरीकृतसम्मुखे ॥ शुकादिमुनिभिर्युक्ते वटं तत्र विचिन्तयेत् ॥ ॥ १७५ ॥ गारुत्मतमयैः पत्रैः पद्मरागमयैः फलैः ॥ नवरत्नमयाकल्पै-स्तोरणाद्यैरलंकृतम् ॥ १७६ ॥ तस्य मूले स्वर्णभूमौ रत्नसिंहासने शुभे ॥ आसीनममिताकल्पं शरच्चन्द्रनिभाननम् ॥ १७७ ॥ रजताद्रिप्रतीकाशं

१ ॐ ह्रीं दक्षिणामूर्त्तये तुभ्यं वटमूलनिवासिने ॥ ध्यानैकनिरतांगाय नमो रुद्राय शम्भवे ॐ ह्रीं ॥

मुनिदेवगणैः स्तुतम् ॥ जटामुकुटिनं वीरासनं नासावलोकनम् ॥ १७८ ॥ त्रिनेत्रं सुप्रसन्नास्यं निविष्टं शुभपङ्कजे ॥ दक्षिणोर्ध्वकरे टङ्कं व्याख्या-मुद्रामधः करे ॥ १७९ ॥ वामोर्ध्वहस्ते हरिणं वामजानुन्यधःकरम् ॥ प्राक्प्रोक्ते पूजयेत्पीठे प्रथमे तु दले यजेत् ॥ १८० ॥ केशरेषु षडङ्गानि देवाग्रादिप्रदक्षिणम् ॥ पूजयेदष्टपत्रेषु पूजयेद्वृषभादिकान् ॥ १८१ ॥ वीथीद्वये च लोकेशांस्तदस्त्राणि च पूजयेत् ॥ पुरश्चरणसिद्ध्यर्थं प्रजपेद-युताष्टकम् ॥ १८२ ॥ जुहुयात्तद्दशांशेन तिलैः क्षीरपरिप्लुतैः ॥ पायसेनाथ वा देवाः केवलेन घृतेन वा ॥ तर्प्पणादि ततः कुर्य्यात्प्रयोगार्हो भवेन्मनुः ॥ ॥ १८३ ॥ मासमेकञ्च भिक्षाशी सहस्रं चाष्टकं जपेत् ॥ मन्त्रं प्रतिदिनं मन्त्री विद्वत्त्वं लभते ध्रुवम् ॥ १८४ ॥ मूलमन्त्रेण पुटितां मातृकां मनु-वित्तमः ॥ जलं स्पृष्ट्वा त्रिधा जप्त्वा पिबेदब्दाद्भवेद्ध्रुवम् ॥ अखिलानां च शास्त्राणां व्याख्याता च महाकविः ॥ १८५ ॥ रोमपिप्पलिकाब्राह्मीवचा-सर्ज्जरसैर्घृतैः ॥ सुगन्धद्रव्यसंयुक्तैर्नन्दिकेश्वरकल्पितैः ॥ १८६ ॥ तत्क-ल्कसहितैर्ब्राह्मीरसे पक्वं च गोघृतम् ॥ अनेन मन्त्रवर्य्येण जीवितंत्वयुतावधि॥ ॥ १८७ ॥ तत्र संसेवितं कीर्त्तिकविताश्रीधृतिप्रदम् ॥ कान्तिरक्षायुष्यदं च गदितं सर्वसिद्धिकृत ॥ १८८ ॥ अथो विभेदाद्द्वाविंशद्वर्णो मन्त्रो निग द्यते ॥ तारो नमो भगवते दक्षिणामूर्त्तये वदेत् ॥ १८९ ॥ मह्यं मेधां प्रयच्छेति स्वाहान्तोथ द्वितीयकः ॥ मेधास्थाने पठेत्प्रज्ञां फलं नामानुसा-रतः ॥ १९० ॥ मेधाकण्ठेन सामर्थ्यं प्रज्ञा प्रोक्ता तु या स्मृतिः ॥ बीज-द्वयालिपतो मन्त्रः सिद्ध्यते वाममार्गिणाम् ॥ १९१ ॥ ऋषिर्ब्रह्मा समु-द्दिष्टो गायत्रं छन्द ईरितम् ॥ देवता श्रीमहादेवो दक्षिणामूर्त्तिसञ्ज्ञकः ॥ ॥ १९२ ॥ प्रणवः प्रोच्यते बीजं स्वाहा शक्तिरीति स्मृता ॥ मेधापदं कीलकं स्यात्पुरुषार्थे नियोजनम् ॥ १९३ ॥ताररुद्धैः स्वरैर्दीर्घैः षड्भिर ङ्गानि कल्पयेत् ॥ शिरोरुमध्यवक्त्रेषु हृदि नाभौ च गुह्यके ॥ १९४ ॥ जान्वोश्चरणयोर्न्यस्येत्पदान्यष्टौ मनोः क्रमात् ॥ वर्णन्यासमथो मूर्ध्नि भाले-क्षणोः श्रोत्रयोर्नसोः ॥ ओष्ठे दन्ते च जिह्वायां चिबुकांसयोर्गले ॥ १९५॥

बाहूरोनाभिगुह्येषु गुदोर्वोर्जानुजङ्घयोः ॥ पादपाण्योश्च सर्वाङ्गे ततो देवं विचिन्तयेत् ॥ १९६ ॥ शङ्करन्तु शरच्चन्द्रनिभमम्भोजमध्यगम् ॥ गङ्गाधरं शरच्चन्द्रकरोल्लसितशेखरम् ॥ १९७ ॥ प्रसन्नवदनाम्भोजं त्रिनेत्रं सुस्मिताननम् ॥ दिव्याम्बरधरं देवं गन्धमाल्यैरलंकृतम् ॥ १९८ ॥ नानारत्नमयाकल्पमनुकल्पविभूषितम् ॥ मुक्ताक्षमालां दक्षोर्ध्वे ज्ञानमुद्रामधः करे ॥ ॥ १९९ ॥ वामोर्ध्वे च सुधाकुम्भं पुस्तकं तदधःकरे ॥ दधानं चिन्तयेद्देवं मुनिवृन्दनिषेवितम् ॥ २०० ॥ एवं ध्यात्वा यजेत्पीठे पूर्वोक्ते नवशक्तिके ॥ पद्मत्रयसमोपेते भूगेहत्रितयान्विते ॥ २०१ ॥ चतुर्द्वारयुतेऽङ्गानि केशरेषु यजेत्ततः ॥ स्वरान्षोडश तत्रैव द्वन्द्वशः केशरस्थितान् ॥ ॥ २०२ ॥ यजेद्वर्गाष्टकं पश्चादष्टपत्रेषु चापरे ॥ सरस्वतीं चतुर्वक्रं सनकं च सनन्दनम् ॥ २०३ ॥ सनातनं चैव सनत्कुमारं च शुकं तथा ॥ व्यासं च परतोऽष्टौ तु पार्वतीं शुभगां तथा ॥२०४॥भद्रां क्रिया शान्तिरौद्र्यौ कालीं कलभिकामपि ॥ चतुरस्रे चतुष्कोणमाग्नेये शांतमर्च्चयेत ॥ २०५ ॥ सिद्धगन्धर्वयोगीन्द्रान्विद्याधरगणानपि ॥ इन्द्रादींश्च तदस्त्राणि प्राग्वद्वीथीद्वये यजेत् ॥ २०६ ॥ एकलक्षं जपेन्मन्त्रं दशांशं जुहुयात्ततः ॥ क्षीराज्याक्तैस्तिलैः पद्मैः पायसैर्वा घृतप्लुतैः ॥ तर्प्पणादि ततः कृत्वा काम्यकर्म्माणि-साधयेत् ॥ २०७ ॥ कण्ठमात्रोदके स्थित्वा जपेन्मन्त्रं सहस्रकम् ॥ प्रत्यहं मण्डलादर्वाक्कवीनामग्रणीर्भवेत् ॥ २०८ ॥ पञ्चविंशतिधा जप्तमन्नपायसनेवच भक्षितं क्षीरसंसिक्तं परं वा काव्यकारकम्॥सर्वापन्नाशकं चैव सर्वरोगविनाशनम्॥ ॥ २०९ ॥ त्रयोदश्यां प्रदोषे च सोपवासः शिवालयम्॥मौनी गत्वार्चयेद्देवं विद्यायुःपरिवृद्धये ॥ २१० ॥ आज्येन पायसान्नेन वाक्कामो जुहुयात्सदा ॥ श्रीकामो जलजैर्बिल्वैर्नन्द्यावर्त्तैः सदा हुनेत् ॥ २११ ॥ आज्यक्षीराक्तदूर्वाभिर्हुत्वा दद्याच्च दक्षिणाम् ॥ गुरवे गां च महिषीं तस्य मृत्युभयं कुतः ॥ २१२ ॥ आदित्याभिमुखो भूत्वा दद्याद्दशजलाञ्जलीन् ॥ मूलमन्त्रेण मन्त्रज्ञः सर्वदोषैर्न बाध्यते ॥ २१३ ॥ प्रातः सायं च सप्तैवं मध्याह्ने चैकविंशतिम् ॥ दुग्धबुद्ध्या जलैर्देवं तर्प्पयित्वा ततो हुनेत् ॥ पलाशपुष्पै-

रचिरात्कविर्होमादिभिर्भवेत् ॥ २१४ ॥ गौर्घ्या पार्श्वस्थया सार्धं श्रीकामश्चिन्तयेत्प्रभुम् ॥ अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं भूयसीं श्रियमाप्नुयात् ॥ २१५ ॥ भुञ्जानः प्रयतो मन्त्री गोमूत्रे पक्वमोदनम् ॥ भिक्षान्नमथ वा मन्त्रमयुतद्वितयं जपेत् ॥ २१६ ॥ अश्रुतान्वेदशास्त्रादीन्व्याचष्टे नात्र संशयः ॥ एवमाराधितो मन्त्रो भुक्तिमुक्तिप्रदायकः ॥ २१७ ॥ अथातो दक्षिणामूर्त्तेर्द्व्यक्षरो मनुरुच्यते ॥ हंस इत्यस्य गायत्री छन्दो ब्रह्मा मुनिर्मतः ॥ ॥ २१८ ॥ देवता दक्षिणामूर्त्तिर्हंबीजं शक्तिरन्तिमः ॥ हसव्यञ्जनयोर्योगे षड्दीर्घाघङ्गकल्पनम् ॥ २१९ ॥ ध्यानपूजादिकं सर्वं तथाकाम्यनियोजनम् ॥ द्वात्रिंशदक्षरप्रोक्तदक्षिणामूर्त्तिमन्त्रवत् ॥ २२० ॥ विशेषतः स्वयं रोगहरः सारस्वतप्रदः ॥ ज्ञानप्रदश्च भवति तथा मोक्षप्रदोपि च ॥ ॥ २२१ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि वामिनां सिद्धिदस्य तु ॥ दक्षिणामूर्त्तिभेदस्य तस्य मन्त्रचतुष्टयम् ॥ २२२ ॥ ऊर्ध्वपश्चिमयोः सौम्यप्रागाम्नायोक्तसिद्धिकृत् ॥ २२३ ॥ क्रमादेतेत्र प्रोच्यन्ते महादेवाय हुं त्विति ॥ वामो मुनिर्विराट् छन्दो देवता वामनायकः ॥ २२४ ॥ कालिकाबीजपूर्वैश्च षड्वर्णैस्स्यात्षडङ्गकम् ॥ लिङ्गन्यस्तमहाकालं मादिरासक्तमानसम् ॥ ॥ २२५ ॥ लोहदण्डं मांसपिण्डं पानपात्रं त्रिशूलकम् ॥ दधतं भर्जितम्मत्स्यं चषकं रुधिरस्य च ॥२२६॥ स्पृशन्तमेकेन भगमपरेण कुचद्वयम् ॥ इत्थं संचिन्त्य देवेशं कालपीठे समर्चयेत् ॥ २२७ ॥ भगमालां भगलतां भगां कोणत्रये यजेत् ॥ लिङ्गस्थितं लिङ्गभगमात्मानं चात्ममेखलम् ॥ ॥ २२८ ॥ मत्स्यप्रियं च तद्बाह्ये पञ्चकोणे समर्चयेत् ॥ मदोन्मत्तं रतिकरं चलन्मध्यं स्खलत्पदम् ॥ २२९ ॥ वेदपृष्ठं धर्मशस्त्रं शान्त्यतीतं निरञ्जनम् ॥ तत्र स्थितं च तद्बाह्ये पूजयेन्नवयोनिके ॥ २३० ॥ लक्षाष्टकञ्जपेन्मन्त्रं प्रथमं तु सुरान्वितैः ॥ होमाद्धि मांसशकलैर्मन्त्रासिद्धिः प्रजायते ॥ २३१ ॥ सम्भोगी यो जपेल्लक्षं जुहुयाच्चायुतं परम् ॥ तर्प्पयेच्चन्दनेनैव तत्परम्मन्त्रसिद्धये ॥ २३२ ॥ जपादिकं प्रकर्तव्यं यथाकार्यानुसारतः ॥ अवश्यञ्जायते कार्य्यं तस्माच्चेद्विकलेन्द्रियः ॥ तदा न कार्य्यं भवति वाममार्गेण

साधितम् ॥ २३३ ॥ अथातो दक्षिणामूर्त्तेरपरो मन्त्र उच्यते ॥ तारो नमो भगवते दक्षिणामूर्त्तये वदेत् ॥ मह्यं मेधां वदेत्प्रज्ञां प्रयच्छानलवल्लभाम् ॥ ॥ २३४ ॥ चतुर्विंशतिवर्णोयं मुनिर्ब्रह्मा समीरितः ॥ देवता दक्षिणा मेधा गायत्री छन्द उच्यते ॥ २३५ ॥ मेधाबीजं तथा शक्तिः स्वाहा मेधासमृद्धये ॥ नियोगोथ षडङ्गानि आं ईं ऊं ऐं च औं च अः ॥ २३६ ॥ एतैर्वर्णैस्तु दिग्बन्धम्भूर्भुवःसुवरोमिति ॥ व्याख्यापीठेतिशुभ्रं च भस्मोद्धलितविग्रहम् ॥ २३७ ॥ ज्ञानमुद्राक्षमालाढ्यं वीणापुस्तकधारिणम् ॥ प्राग्वत्पूजादिकं सर्वं पुरश्चरणमुच्यते ॥ २३८ ॥ कृष्णाष्टमीं समारभ्य यावत्कृष्णचतुर्दशी ॥ चत्वारिंशत्सहस्राणां जपात्स्याच्च पुरस्क्रिया ॥ २३९ ॥ आज्यं दशांशं होतव्यं मन्त्रसिद्धिः प्रजायते ॥ पापाधिक्यान्न चेत्सिद्धिस्तदैवन्तु समाचरेत् ॥ २४० ॥ बिल्वाधस्स्थो जपेल्लक्षं ततः सिद्धिर्भवेदिति ॥ दूरे दृष्टा च चेत्सिद्धिः पश्चाद्द्वारे शिवालये ॥ लक्षमेकं मनुञ्जप्त्वा हुत्वाज्यं सिद्धिभाग्भवेत् ॥ २४१ ॥ ततः प्रयोगं कुर्वीत हुनेत्पालाशपुष्पकैः ॥ यमुद्दिश्यायुतं सोपि मूर्खो विद्यानिधिर्भवेत् ॥ २४२ ॥ कण्ठमात्रे जले स्थित्वा जपेन्मन्त्रसहस्रकम् ॥ प्रत्यहं मण्डलादर्वाक्कवीनामग्रणीर्भवेत् ॥ ॥ २४३ ॥ भुञ्जानः प्रयतो मन्त्री गोमूत्रे पक्वभोजनम् ॥ भिक्षान्नमथ वा मन्त्रमयुतद्वितयं जपेत् ॥ अश्रुतं वेदशास्त्रादि व्याचष्टे नात्र संशयः ॥२४४॥ स्वहस्ते जलमादाय प्रातस्तदभिमन्त्रयेत् ॥ पञ्चविंशतिवारान्हि पाययेद्बालकाय तत् ॥ मासषट्कं तस्य विद्या भवेद्गङ्गाप्रवाहवत् ॥ २४५ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि नृसिंहाद्बलिनो मम ॥ मन्त्रं शरभसञ्ज्ञस्य द्रुतसिद्धिप्रदायकम् ॥ ॥२४६॥ ॐ[1]खंखांखं फडुच्चार्य्य द्विः शत्रून्प्रससीति च॥तथा हुं फट् सर्वास्त्रसंहरणाय शरभेति च॥शान्ताय पक्षिराजाय हुं फट् स्वाहा नमो मनुः ॥२४७॥ एकचत्वारिंशदर्णो वासुदेवो मुनिर्मतः ॥ कालाग्निरुद्रः शरभो देवता परिकीर्तितः ॥ २४८॥ छन्दस्तु जगती स्वाहा शक्तिर्बीजं खमुच्यते ॥ वेदांकदश-

१ ॐ खं खां खं फट् शत्रून् प्रससिप्रससि हुं फट् सर्वास्त्रसंहरणाय शरभाय शान्ताय पक्षिराजाय हुं फट स्वाहा नमः ॥

सप्तागसागरैरङ्गकल्पनम् ॥ २४९ ॥ पुनः समस्तमन्त्रेण दिग्बन्धं तु समाचरेत् ॥ चन्द्रार्काग्नित्रिनयनं कालीदुर्गाद्विपक्षकम् ॥ २५० ॥ विद्युज्जिह्वं वज्रनखं वडवाग्न्युदरन्तथा ॥ व्याधिमृत्युरिपुघ्नं च चण्डवातातिवेगिनम् ॥ ॥ २५१ ॥ हृद्भैरवस्वरूपं च वैरिवृन्दनिषूदनम् ॥ मृगेन्द्रत्वक्छरीरेस्य पक्षाभ्यां चंचुना रवः ॥ २५२ ॥ अधोवक्त्रश्चतुष्पाद ऊर्ध्वदृष्टिश्चतुर्भुजः ॥ कालान्तदहनप्रख्यो नीलजीमूतनिःस्वनः ॥ २५३ ॥ अरिर्यद्दर्शनादेव विनष्टबलविक्रमः ॥ सटाक्षिप्तग्रहर्क्षाय पक्षविक्षिप्तभूभृते ॥ अष्टपादाय रुद्राय नमः शरभमूर्त्तये ॥ २५४ ॥ एवं ध्यायेत्सहस्रं तु प्रजपेत्पायसं हुनेत् ॥ प्रत्यहं मासषट्केन मन्त्रसिद्धिः प्रजायते ॥ २५५ ॥ तदाजेयस्तु संग्रामे भूतप्रेतपिशाचकाः ॥ नश्यन्ति दर्शनादेव चाधयो व्याधयस्तथा ॥ २५६ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि मालामन्त्रं सुसिद्धिदम् ॥ तारो नमो भगवते ङेन्तं शरभ शाल्व च ॥ २५७ ॥ सर्वभूतोच्चाटनाय ग्रहराक्षस चोच्चरेत् ॥ निवारणाय ज्वालेति ङेन्तं मालास्वरूपकम् ॥ २५८ ॥ दक्षनिष्काशनायेति साक्षादिति पदं वदेत् ॥ कालरुद्रस्वरूपाष्टमूर्त्तये च तथा वदेत् ॥ २५९ ॥ कृशानुरेतसे चेति महेतिपदमुच्चरेत् ॥ क्रूरभूतोच्चाटनायेत्यप्रतिशयनाय च ॥ २६० ॥ शत्रूंश्च नाशयद्वन्द्वं वदेच्छत्रुपशूंस्ततः ॥ गृह्णयुग्मं खादयुग्मं तारं हुं फड्वसुप्रियाम् ॥ २६१ ॥ अष्टोत्तरशतार्णोयमष्टोत्तरशतं जपेत् ॥ प्रत्यहं मासषट्केन सिद्धः स्यात्तत्फलं शृणु ॥ २६२ ॥ पात्रे पूतं जलं स्थाप्य सप्तवाराभिमन्त्रितम् ॥ पानार्थं तत्प्रसादेन दातव्यं लापयेत्तथा ॥ २६३ ॥ प्रयान्ति सर्वभूतानि ज्वराश्चातुर्थिकादयः ॥ सप्ताहात्तत्प्रयोगेण नात्र कार्य्या विचारणा ॥ २६४ ॥ अथातःसम्प्रवक्ष्यामि ह्यघोरास्त्राह्वयं मनुम् ॥ मायां स्फुरद्वयं चैव प्रस्फुराद्वितयं वदेत् ॥ २६५ ॥ पश्चाद्धदेत्तरद्वन्द्वं तरप्रान्तं च प्रद्वयम् ॥ प्रचटद्वितयं पश्चात्कहद्वन्द्वं महद्वयम् ॥ ॥ २६६ ॥ बन्धद्वयं घातय द्विर्हुंहुं भूशरवर्णकः ॥ मनुः प्रोक्तोघोरमुनिरुष्णिक् छन्दोस्य देवता ॥ २६७ ॥ अघोररुद्रो वं बीजं ह्रीं शक्तिश्च प्रकीर्तिता ॥ शरर्तुदशदिग्दन्तिदिवाकरमितैर्मनोः ॥ वर्णैः कुर्य्यात्षडङ्गानि पदन्यासोथ वक्ष्यते ॥ २६८ ॥ भाले वक्त्रे गले हृद्यथो नाभिकरजानुषु ॥ सजंघपादयो-

श्चैव पदान्येकादश न्यसेत्॥२६९॥शरर्त्तुनेत्रवस्वब्धिशरवेदाब्धिवेदकैः ॥ रस-नेत्रमितैर्वर्णैस्तत्पदैश्च भवत्यसौ ॥२७०॥ मेघाकारं ततो ध्यायेद्भीमदंष्ट्रं त्रिलोचनम् ॥ भुजङ्गभूषणं रक्तवस्त्रनालेपशोभितम् ॥ २७१ ॥ परशुं करवालं च बाणं त्रिशिखमेव च ॥ दधानं दक्षिणैर्हस्तैरूर्ध्वादिक्रमतः परैः ॥ डमरुं खेटकं चापं नृकपालं च बिभ्रतम् ॥ २७२ ॥ काम्यकर्मसु रक्ताभं कृष्णाभमभिचारके ॥ निग्रहे ग्रहभूतादिमुक्तौ मुक्तानिभं स्मरेत् ॥ २७३ ॥ एवं सञ्चिन्त्य देवेशं शिवपीठे पुरोदिते ॥ षट्कोणान्तास्थिते पद्मद्वितये भूपुरैर्वृते ॥ २७४ ॥ केशरेष्वङ्गपूजा स्याद्देवाग्रादिप्रदक्षिणैः ॥ डमरुं परशुं खड्गं खेटं बाणं तथा धनुः ॥ २७५ ॥ शूलं कपालं ब्राह्मयाद्या द्वितीयेऽष्टदलेऽर्चयेत् ॥ वीथीद्वये लोकपालांस्तदस्त्राणि च पूजयेत् ॥ २७६ ॥ लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं हविष्याशी जितेन्द्रियः ॥ जुहुयात्तद्दशांशेन तिलैः शुद्धघृतप्लुतैः॥२७७॥तर्प्पणं मार्ज्जनं कृत्वा भोजयेन्मधुरैर्द्विजान् ॥ एवं सिद्धे मन्त्रवरे काम्यकर्म्माणि साधयेत् ॥२७८॥ क्रमात्सर्पिरपामार्गतिलसर्षपपायसैः ॥ साज्यैः सहस्रं प्रत्येकं यामिन्यां जुहुयात्सुधीः ॥ होमोयं नाशयेत्सद्यो भूतकृत्यादिनायकान् ॥२७९॥ श्वेतकिंशुकनिर्गुण्डी हेमापामार्गसम्भवैः ॥ समिद्वरैः कृतो होमः पूर्ववद्भुतशान्तिदः ॥ २८० ॥ अपामार्गाश्वत्थयोश्च पञ्चगव्ये समुक्षिताः ॥ समिधो जुहुयात्कृष्णपञ्चम्यां निशि संयतः ॥ पृथक्सहस्रहोमेन भूतानां निग्रहो भवेत् ॥ २८१ ॥ क्रमात्सर्पिरपामार्गपञ्चगव्यहविर्घृतैः ॥ हुत्वा सहस्रं प्रत्येकं पात्रे सम्पातयेद्भुते॥ २८२॥ सम्पातसर्पिषा साध्यं भोजयेद्भुतशान्तये ॥ अघोरास्त्राह्वयो मन्त्रः सर्वकाम्यानि साधयेत् ॥ २८३ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि मन्त्रं पाशुपतास्त्रकम्॥तारः श्रीं पशुशब्दान्ते हुंफड्मन्त्रः षडक्षरः ॥२८४॥ वामदेवो मुनिः पंक्तिश्छन्दः पशुपतिः सुरः ॥ मन्त्रार्णैः षड्भिरङ्गानि हुंफडन्तैः सबिन्दुकैः॥ २८५॥जातियुक्तानि चाङ्गेषु तथांगुष्ठादिषु क्रमात् ॥ध्यायेत्पशुपतिं सम्यङ्मन्त्री चैकाग्रमानसः॥२८६॥पञ्चवक्त्रं दशभुजं प्रतिवक्त्रं त्रिलोचनम् ॥ अग्निज्वालानिभश्मश्रुमूर्द्धजं भीमदंष्ट्रकम् ॥२८७॥

१ पदन्यास इति शेषः ॥

खड्गं बाणानक्षसूत्रं शक्तिं परशुमेव च ॥ दधानं दक्षिणैर्हस्तैरूर्ध्वादिक्रमतः परैः ॥ २८८ ॥ खेटचापौ कुण्डिकां च त्रिशूलं ब्रह्मदण्डकम् ॥ नानाभरणसन्दीप्तं बालचन्द्रैरलंकृतम् ॥ २८९ ॥ मध्याह्नार्कसमं ध्यात्वा शिवपीठे तथार्च्चयेत् ॥ पद्ममष्टदलं कृत्वा कर्णिकाकेशरान्वितम् ॥ ॥ २९० ॥ चतुर्द्वारसमायुक्तं चतुरस्रत्रयावृतम् ॥ एवं पात्रे समालिख्य स्वर्णरौप्यादिके शुभे ॥ २९१ ॥ पटे वा फलजे वापि श्रीकण्ठादिसमुद्भवे ॥ सर्वोपचारैराराध्य यजेदङ्गानि पूर्ववत् ॥ २९२ ॥ दलेषु मातृकाः पूज्या लोकेशास्त्राणि तद्बहिः ॥ पूजयेद्विधिनानेन सर्वान्कामानवाप्नुयात् ॥ ॥२९३॥लक्षषट्कं जपेन्मन्त्रं हविष्याशी जितेन्द्रियः ॥ दशांशैर्जुहुयाद्द्रव्यैर्घृताक्तैः संस्कृतेनले ॥ तर्प्पणादि ततः कृत्वा प्रयोगार्हो भवेन्मनुः ॥ २९४ ॥ अनेन मन्त्रितं तोयं ग्रहभूतास्पदे क्षिपेत् ॥ सद्यस्तन्मुञ्चति क्रन्दत्यहो मन्त्रप्रभावतः ॥ २९५ ॥ अनेन मन्त्रितान्बाणान्विसृजेद्युधि भूपतिः ॥ जयेत्क्षणेन सकलानरीन्नास्त्यत्र संशयः ॥ एवं मन्त्रस्तु संसिद्धो भुक्तिमुक्तिप्रदो भवेत् ॥२९६॥ अथास्य भेदं वक्ष्यामि पशवन्ते पतिशब्दयुक् ॥ भवेदष्टाक्षरो मन्त्रो मुन्याद्यं पूर्ववन्मतम् ॥ २९७ ॥ हुं शक्तिः श्रीं च बीजं स्यात्तद्भिन्नैश्च षडक्षरैः ॥ प्रणवाद्यैः षडङ्गानि प्राग्वद्ध्यात्वा च पूजयेत् ॥ ॥ २९८ ॥ सद्योजातादिभिः पञ्चब्रह्मभिः प्रथमावृतिः ॥ षडङ्गैश्च द्वितीया स्यात्तदस्त्राद्यैस्तृतीयिका ॥ २९९ ॥ उमादिभिश्चतुर्थी स्यात्स्वायुधैश्चापि पञ्चमी ॥ षष्ठी चेन्द्रादिभिः प्रोक्ता सप्तमी च तदायुधैः ॥ ३०० ॥ अष्ट लक्षं पुरश्चर्य्या पायसेन हुनेत्ततः ॥ अन्यत्सर्वं प्रयोगादि पूर्ववत्परिकीर्त्तितम्॥ ॥ ३०१ ॥ नीलकण्ठमनुं वक्ष्ये समस्तविषनाशनम् ॥ शंनींठ इति मन्त्रोयं त्रिवर्णः सर्वकामदः ॥ ३०२ ॥ अरुणो मुनिरुद्दिष्टोनुष्टुप्छन्दस्तु देवता ॥ नीलकण्ठः शं च बीजं ठः शक्तिः परिकीर्त्तिता ॥ ३०३ ॥ हरायेति हृदयं च शिरः प्रोक्तं कपर्द्दिने॥नीलकण्ठायेति शिखा कवचं कालकूटवि ॥३०४॥

---

१ ॐ श्रीं पशुपतिः हुं फट् ॥ २ ॐ ॐ हृदयायनमः ॐ पं शिरसे स्वाहा ॐ शुं शिखायै वषट् ॐ पं कवचाय हुम् ॐ तिः नेत्रत्रयाय वौषट् ॐ हुं फट् अस्त्राय फट् ॥

षभक्षणाय हुंफट् स्याच्छ्रीकण्ठाय त्रिनेत्रकम् ॥ अस्त्रं च शितिकण्ठाय स्वाहान्ता इति सम्मताः ॥ ३०५ ॥ न्यस्याः षडङ्गमनवश्चांगुष्ठादिषु विन्यसेत् ॥ मूर्ध्नि कण्ठे च हृदये न्यसेद्बीजत्रयं पुनः ॥ ३०६ ॥ ध्यायेद्देवं नीलकण्ठं बालार्कायुतवर्चसम् ॥ जटाभूतलसच्चन्द्राकारकैः फणिसत्तमैः ॥ ॥ ३०७ ॥ कृतकल्पकराम्भोजैर्दधानं जपमालिकाम् ॥ शूलं कपालं खट्वाङ्गमक्षमालां च बिभ्रतम् ॥ ३०८ ॥ प्रतिवक्त्रं त्रिनयनं व्याघ्रचर्म्माम्बरावृतम् ॥ पद्ममध्ये समासीनमतिसुन्दरविग्रहम् ॥ ३०९ ॥ एवं ध्यात्वार्चयेत्पीठे शैवे सर्वोपचारकैः ॥ पद्मे वसुदले रम्ये चतुरस्रत्रयावृते ॥ ३१० ॥ चतुर्द्वारे पूर्वमङ्गलोकेशानायुधानि च ॥ एवं प्रपूजयेमन्त्री सर्वकामस्य सिद्धये ॥ ३११ ॥ लक्षत्रयं जपेन्मन्त्रं हविष्यैराज्यसंयुतैः ॥ तद्दशांशं तर्प्पणादि भोजयेन्मधुरैर्द्विजान् ॥ ३१२ ॥ एवं सिद्धमनुर्मन्त्री त्वष्टोत्तरसहस्रकम् ॥ स्पृष्ट्वा जपेद्विषग्रस्तं तत्क्षणान्निर्विषो भवेत् ॥ ३१३ ॥ बीजाभ्यां प्रथमान्त्याभ्यां पार्श्वयोर्विषमाहरेत् ॥ ३१४ ॥ एवं मन्त्राभिजपितकलशोदकसेचनात् ॥ तक्षकेणापि सन्दष्टस्तत्क्षणान्निर्विषो भवेत ॥ ३१५ ॥ विलोक्य विषिणं मन्त्रं प्रजपेत्सुसमाहितः ॥ विषद्वयान्मुच्यतेसावचिरान्नात्र संशयः ॥ ३१६ ॥ दृष्ट्वा च डुण्डुभग्रस्तं स्वशिरःकण्ठहृत्सु च ॥ मनुवर्णत्रयं न्यस्य देवतारूपकं गुरुम् ॥ ३१७ ॥ स्मरेत्स्वदक्षिणानामामध्यमातर्जनीषु च ॥ मन्त्राक्षरत्रयं न्यस्य तदंगुलिभिरुत्तमम् ॥ ३१८ ॥ त्रिशूलमुद्रामासाद्य ग्रस्तस्याभिमुखं नयेत् ॥ प्रदर्श्य मन्त्रं प्रजपेत्पञ्चाशद्वारमत्र तु ॥ ३१९ ॥ स्थावरं जङ्गमं चैव कृत्रिमं च तथा विषम् ॥ रोगग्रहाद्यपस्मारानपमृत्युं च नाशयेत् ॥ ॥ ३२० ॥ पञ्चाशन्मनुना जप्तमन्नमौषधमेव च ॥ भक्षितं चेत्तु रोगादिनाशनं परमं मतम् ॥ ॐ नमो नीलकण्ठाय मनुरष्टाक्षरः परः ॥ मुनिर्ब्रह्मा च गायत्री छन्दो देवः प्रकीर्त्तितः ॥ ३२१ ॥ नीलकण्ठो ध्यानपूजाजपाद्यं पूर्ववन्मतम् ॥ प्रयोगाश्च विशेषेण महाविषहराः स्मृताः ॥ ३२२ ॥ स एव वह्निजायान्तो दशवर्णः प्रकीर्त्तितः ॥ अरुणोस्य मुनिश्छन्दो गायत्रं देवतामहान् ॥ ३२३ ॥ नीलकण्ठोस्य बीजं तु तारः शक्तिर्दहप्रिया ॥ हुं नमो

नीलकण्ठाय शिरः स्वाहा नमस्त्विति ॥ ३२४ ॥ शिखोंनमो नीलकण्ठाय नमः कवचं मतम् ॥ स्वाहा नमो नेत्रमिति ॐ नमोस्त्रं समीरितम् ॥ ॥ ३२५ ॥ दक्षिणं पादमारभ्य वामपादावधि क्रमात् ॥ वर्गाष्टकं न्यसेन्मन्त्री पादोरुगुल्फसन्धिषु ॥ ३२६ ॥ हृत्कण्ठमुखशीर्षेषु न्यसेद्वर्गाष्टकं पुनः ॥ पूर्वाद्यैराननैर्युक्तः पीतश्वेतारुणासितैः ॥ ३२७ ॥ अभयं परशुं चापं वासुकिं च दधद्भुजैः ॥ ध्येयो देवोस्य पार्श्वस्था गौरी चाप्यतिसुन्दरी ॥ ३२८ ॥ संहारनिर्विषस्तम्भावेशात्कुर्य्यात्क्रमान्मुखैः ॥ दशलक्षं पुरश्चर्य्या सर्वत्राक्षरवन्मता ॥ ३२९ ॥ मन्त्राक्षराणि हृत्पृष्ठे के कण्ठे कुक्षियुग्मके ॥ हृदि बाह्वोर्नेत्रयोश्च मस्तके च क्रमाद्यजेत् ॥ ३३० ॥ विषाक्रान्तस्य पूर्वोक्तमीशं ध्यायञ्च्छताष्टकम् ॥ जपेन्मन्त्रं दृशा सर्वविषाणां वारणम्भवेत् ॥ ३३१ ॥ आथान्यो वक्ष्यते मन्त्रो नानाकार्य्यकरः परः ॥ तारो नमो भगवते सर्वज्ञेतिपदं वदेत् ॥ ३३२ ॥ कण्ठं निं नीलकण्ठाय अमलेति पदं वदेत् ॥ ङेन्तं द्विः क्षिप ॐ स्वाहा चोनत्रिंशाक्षरो मनुः ॥ ३३३ ॥ विमलोस्य मुनिः प्रोक्तः कृतिश्छन्द उदाहृतम् ॥ अमलाख्यो नीलकण्ठो रुद्रो देवः प्रकीर्त्तितः ॥ ३३४ ॥ स्वाहा शक्तिस्तु वौं बीजं मन्त्रार्णैरङ्गपञ्चकम् ॥ सप्तभिः पञ्चभिः षड्भिश्चतुर्भिश्चापि सप्तभिः ॥ ३३५ ॥ ध्यानार्चनादिकं सर्वं पूर्ववत्समुदाहृतम् ॥ लक्षमेकं पुरश्चर्य्या हुनेदाज्यं दशांशतः ॥ ३३६ ॥ एवं सिद्धमनुर्मन्त्री दशवाराञ्जपेद्यदि ॥ दुष्टं विषं द्रव्यसंस्थं हरेदत्र न संशयः ॥ ३३७ ॥ जप्त्वा पञ्चदशोन्मानं हरेद्वृश्चिकजं विषम् ॥ विषमूषीविषं हन्ति जपः सप्तदशोन्मितः ॥ ३३८ ॥ अष्टादशजपाद्धन्यादहिसर्पं नात्र संशयः ॥ एकविंशतिजापेन त्वभिचारक्षयो भवेत् ॥ ३३९ ॥ परन्तस्य जपाद्धन्ति षड्विंशात्सूतिकागदम् ॥ दन्तमूलगदं त्रिंशचतुस्त्रिंशाच्च शीतलाम् ॥ षट्त्रिंशच्च शिरोरोगं गर्भदुःखं खवेदतः ॥ नेत्ररोगं वेदवेदैः खबाणैः सकलं विषम् ॥ ३४० ॥ शतसंख्याकजापेन सर्वरोगविनाशनम् ॥ अग्निना निहतानान्तु जपेदष्टोत्तरं शतम् ॥ ३४१ ॥ अथ चिन्तामणेः कर्ट

प्रवक्ष्याम्यतिसिद्धिदम् ॥ यथत्प्रोक्तं वैदिकानान्तत्तत्सिद्धिविधायकम् ॥
॥ ३४२ ॥ प्रथमः प्रणवः सप्त वेदनेत्रैश्चतुर्दशम् ॥ षष्टिबिन्दुयुतं कूटं
प्रोक्तं दक्षिणमार्गिणाम् ॥ ३४३ ॥ चत्वारश्चापि चत्वार एकत्रेदद्विवर्णकाः॥
द्वितीयः स्वरबिन्दुभ्यां युक्तः कूटमुदाहृतम् ॥ ३४४ ॥ शैवादीनां
वामिनां तु तुर्य्यवर्णं समुच्चरन् ॥ एकोनत्रिंशकश्चैतत्सप्तवेदाक्षिसम्मितम् ॥
॥ ३४५ ॥ ततः स्वराः समुच्चार्य्याः शकारास्तु तिथिसम्मिताः ॥ एतत्कूटं
समुद्दिष्टं मुन्याद्यमथ कथ्यते ॥ ३४६ ॥ कश्यपोस्य मुनिश्छन्दोनुष्टुब्देव
उमापतिः ॥ बीजं क्षकारो रः शक्तिर्मकारः कीलकम्मतम् ॥ ३४७ ॥
रेफादिव्यञ्जनैः षड्भिः कुर्य्यादङ्गानि षट् क्रमात् ॥ विद्रुमारक्तवामार्धदेहं
नीलाम्बराङ्ककम् ॥ ३४८ ॥ अधिगङ्गाशशाङ्कार्धं विलसत्तुङ्गमौलिकम् ॥
हावभावविलासार्धनारीरूपं महेश्वरम् ॥ ३४९ ॥ त्रिशूलपाणिं पद्मानि
नृकपालं करेषु च ॥ भीषणं परदेहार्धमालालेपविराजितम् ॥ ३५० ॥
एवं ध्यात्वा यजेत्पीठे शैवे सर्वोपचारकैः ॥ अङ्गानि पूजयेदादौ वामेष्टदल-
केशरे ॥ ३५१ ॥ अर्चयेदष्टपत्रेषु कार्त्तवीर्य्यवृषादिकान् ॥ ब्राह्मयाद्या
मातरः पूज्या द्वितीयेष्टदले पुनः ॥ ३५२ ॥ लोकेशांश्च तदस्त्राणि
प्राग्वद्वीथीद्वये यजेत् ॥ पूजाद्रव्यादिकं ग्राह्यं स्वस्वाम्नायविभेदतः ॥
॥ ३५३ ॥ शैवादिभिर्वामिभिश्च ध्यायेदष्टभुजं शिवम् ॥ परशुं पन्नगं शूलं
कपालं च शरासनम् ॥ ३५४ ॥ शरान्वह्निं च खड्गं च दधतं स्त्रीवि-
लासिनम् ॥ गङ्गातरङ्गविलसच्चन्द्रखण्डाभिशेखरम् ॥ ३५५ ॥ त्रिनेत्रं
त्रिदशैः पूज्यां चिन्तयेत्पार्श्वगां शिवाम् ॥ अरुणामरुणाकल्पामरुणांशुक-
धारिणीम् ॥ ३५६ ॥ अरुणाम्बुजमालाढ्यां त्रिनेत्रां सद्विभूषणाम् ॥
शूलैः षोडशभिर्व्यग्रभुजषोडशमण्डिताम् ॥ ३५७ ॥ लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं
त्रिमध्वक्तैः सतण्डुलैः ॥ तिलैर्दशांशं जुहुयात्तर्प्पणादि ततश्चरेत् ॥
एवं संसिद्धमन्त्रस्य प्रयोगो वक्ष्यतेधुना ॥ ३५८ ॥ रेफस्थाने हंस इति पदं
दत्त्वा जपेन्मनुम् ॥ शीघ्रन्तेन भवेत्सिद्धिर्ज्ञानं च विषनाशनम् ॥ प्रसाद्य
यो जपेन्मन्त्रमयुतम्भाग्यदायकम् ॥ ३५९ ॥ ततो नाशो भवेत्सद्यो

भूतादीनां रुजामपि ॥ द्विधा ग्रहार्तौ जपति बीजमेतन्न संशयः ॥ त्रिकोणं चिन्तयेन्मूर्ध्नि ग्रस्तस्याग्न्यर्कसन्निभम् ॥ ३६० ॥ तन्मध्ये चिन्तयेद्बीजं ग्रहानावेशयेत्तदा ॥ एतन्मन्त्राभिजपितं बन्धुजीवप्रसूनकम् ॥ ग्रस्तस्य मूर्ध्नि क्षिप्तं च क्षणादावेशकारकम् ॥ ३६१ ॥ पौष्टिके शान्तिके मन्त्रं शुक्लवर्णं विचिन्त्य च ॥ सकारमादौ संयोज्य जपेत्सिद्धिः प्रजायते ॥ ३६२ ॥ आपुष्टौ च वशीकारे रक्तं रेफादिकन्तथा ॥ हकाराद्यं च हेमाभं स्तम्भने चैव चिन्तयेत् ॥ ३६३ ॥ धूम्रवर्णं यकाराढ्यं विद्वेषोच्चाटयोरपि ॥ शुद्धस्फटिकसङ्काशो ध्येय उग्रो मुमुक्षुभिः ॥ ॥ ३६४ ॥ अकारादिः प्रजप्तव्यः स मन्त्रो देशिकैः सदा ॥ वायुमण्डलमध्यस्थं मन्त्रं कृष्णं विचिन्तयेत् ॥ ३६५ ॥ नेत्रयोर्विषमं त्वान्ध्यं बाधिर्य्यं कर्णयोरपि ॥ कुक्षौ शूलं मुखे छर्दिं कुर्य्याद्वायुं च मर्म्मसु ॥ ॥ ३६६ ॥ चिन्तयेत् कण्ठमालायां चतुरस्रस्य मध्यगम् ॥ चन्द्रमण्डलमध्यस्थं स्वरैः षोडशभिर्युतम् ॥ ३६७ ॥ नेत्रोत्पातं नेत्ररोगं हरत्याशु न संशयः ॥ रक्तस्रावं कृशाङ्गीनां योनौ ध्यानं हरेत्क्षणात् ॥ ३६८ ॥ कक्षौ ध्यानं च शूले स्याद्विस्फोटविषमज्वरे ॥ तथा रक्तामये चैवमामे दाहे शिरोगदे ॥ स्मरेद्यन्त्रं बाहुगतं तत्र तद्दोषशान्तये ॥ ३६९ ॥ अत्यारक्तं त्रिकोणान्तःस्थितं यन्मूर्ध्नि चिन्तयेत् ॥ निधाय पाणिं सा वश्या योषाकर्षणमुच्यते ॥ दुष्टाङ्गनाहृदम्भोजे स्थितं मन्त्रं विचिन्त्य च ॥ ३७० ॥ मन्त्रवर्णैरथो बद्ध्वा तेजोरूपां च तां स्मरेत् ॥ तच्छीर्षकेशपाशेनाकर्षयेद्योषितं ध्रुवम् ॥ वशयेत्तत्क्षणाद्योषां स्रावयेच्छुक्रमेव च ॥ ३७१ ॥ निजलिङ्गशिरस्स्थं च बीजं संचिन्तयेत्तदा ॥ प्रवेशयेद्योनिमध्ये तत्संसर्गाच्च सा वशा ॥ ३७२ ॥ कुलालमृदमानीय तत्र बीजं समालिखेत् ॥ तन्मकारस्य रेफे तु साध्याख्यां कर्म्मसंयुताम् ॥ ३७३ ॥ विलिख्य तत्त्रिकोणेन वेष्टयेत्तद्बहिस्तथा ॥ षट्कोणैकं समावेष्ट्य षट्कोणे तु समाचरेत् ॥ ३७४ ॥ रेफं सबिन्दुकं तच्च विलोमैर्वेष्टयेत्स्वरैः ॥ प्राणप्रतिष्ठां कृत्वास्य चुल्ल्यधो निखनेत्ततः ॥ ३७५ ॥

स वश्यो जायते क्षिप्रं तात्सिद्धान्नस्य भक्षणात् ॥ पतिः प्रियायाः कुरुते तदाज्ञां दासवत्सदा ॥ ३७६ ॥ मधुरत्रययुक्तेन शालिपिष्टेन पुत्तलीम् ॥ प्रपदाभ्यां च जंघाभ्यां जानुभ्यामूरुयुग्मतः ॥ ३७७ ॥ नाभेरधस्तद्धृदयात्कण्ठादाशीर्षकं ततः ॥ एवं द्वादशधा छित्त्वा तीक्ष्णशस्त्रेण संहुनेत् ॥ ॥ ३७८ ॥ मूलमन्त्रेण स क्षिप्रं वश्यः स्याज्जीवितान्तकम् ॥ चतुरस्रे नागवल्लीदले कृत्वास्य मध्यतः ॥ वकारमध्यसाध्याख्यां लिखित्वा मनुमध्यतः ॥३७९॥ कामराधः स्थितो रेफस्तदधश्चतुरस्रकम् ॥ लिखेत्तस्य चतुष्कोणे ठकारं बिन्दुभूषितम् ॥ ३८० ॥ विलिख्य स्थापितप्राणं मूलमन्त्राभिमन्त्रितम् ॥ अष्टोत्तरसहस्रेण शिरोरोगी प्रभक्षयेत् ॥ ३८१ ॥ शिरोरोगविनिर्मुक्तो यावज्जन्म भवेत्सुखी ॥ सरेफेण ककारेण कण्ठे साध्यस्य बन्धयेत् ॥ ॥ ३८२ ॥ वक्षःस्थलं ककारेण वामं चापि मकारतः ॥ दक्षांसं रेफतो वामं तथैव च वकारतः ॥ ३८३ ॥ ठौंकारेण मुखं नाभिं डकारेण प्रबन्धयेत् ॥ वक्षो विन्द्वर्धचन्द्राभ्यां बद्धा कर्षन्स्मरोद्धिया ॥ मरणान्तं स वश्यस्स्यादचिरान्नात्र संशयः ॥ ३८४ ॥ बन्धुजीवस्य पुष्पेण त्रिकोणं रचयेल्लिखेत् ॥ तत्पुष्पेण च तद्बीजं चन्दनागुरुकुंकुमैः ॥ ३८५ ॥ अस्मिन्संस्थाप्य तत्रैव पूजयित्वा हुनेच्च तैः ॥ अष्टोत्तरशतं तस्य सम्पातं पातयेत्ततः ॥ ३८६ ॥ त्रिलोहं मुष्टिकायां तु पुनस्तनभिमन्त्रयेत् ॥ अष्टोत्तरसहस्रेण तं करे धारयेन्नृपः ॥ ३८७ ॥ जयेत्स युधि भूपालान्दुर्जयान्प्रधनेपि च ॥ विषवेतालभूतादिदुष्टैर्बाध्यते न च ॥ ३८८ ॥ पञ्चविंशत्सुवर्णस्य रजतस्य तु षोडश ॥ भागा दशैव ताम्रस्य त्रिलोहेत्र प्रकीर्त्तिताः ॥ ३८९ ॥ अथान्यत्सम्प्रवक्ष्यामि मुनिभिर्यदुपासितम् ॥ अन्त्यसप्तमवेदाक्षिवर्णषष्ठस्वरान्वितम् ॥ ३९० ॥ बिन्दुयुक्तं भवेत्कूटं मुन्याद्याः पूर्ववन्मताः ॥ षड्दीर्घभाजा बीजेन षडङ्गविधिरीरितः ॥ ३९१ ॥ अंगुल्यादिकरान्तं च करन्यासं ततश्चरेत् ॥ मूलाद्यन्तं तु भूकूटं कनिष्ठायां पुनर्न्यसेत् ॥ ॥ ३९२ ॥ ततश्चत्वारि बीजानि तथैवानामिकादिषु ॥ क्षकारं मूलबीजं तु भसहाभिसमन्वितम् ॥ ३९३ ॥ चत्वार्य्येतानि बीजानि क्रमात्तेषां तु

देवताः ॥ जयाख्या विजयाख्या च ह्यजिता च पराजिता ॥ ३९४ ॥ पादान्मूर्द्धावधि न्यस्येन्मुष्टिकामूलमन्त्रकम् ॥ मूर्द्धादिपादपर्य्यन्तं तलाभ्यां व्यापकं न्यसेत् ॥ ३९५ ॥ षडङ्गानि पुनर्न्यस्य देवं देवीं च पूजयेत् ॥ शिरोवदनहृन्नाभिगुदेष्वेवं क्रमान्न्यसेत् ॥ ३९६ ॥ ध्यायेत्सूर्य्यप्रतीकाशं प्रतिवक्त्रं त्रिलोचनम् ॥ चन्द्रार्धालंकृतं हस्तैश्चतुर्भिर्दधतं क्रमात् ॥ सृणिं पाशं कपालं च खट्वाङ्गं रत्नभूषितम् ॥ ३९७ ॥ रक्ताङ्गं रक्ताभरणांशुकं चिपिटनासिकम् ॥ शैवपीठे यजेद्देवं वक्ष्यमाणेन चात्मना ॥ ३९८ ॥ नपुंसकस्वरैर्विद्वाननुलोमविलोमगैः ॥ धर्मादिकैरधर्म्माद्यैः पादगात्राणि कल्पयेत् ॥ ३९९ ॥ इकारेण यजेद्देवीतत्त्वरूपगुणानपि ॥ चतुर्थपञ्चमाभ्यान्तु मायाविद्यामयो भवेत् ॥ ४०० ॥ अत ऊर्ध्वं च पीठस्य जकारेण ततोम्बुजम् ॥ सन्ध्यक्षरैश्चतुर्दिक्षु स्थिता वामादिका यजेत् ॥ ४०१ ॥ वामा ज्येष्ठा च रौद्रीच्छा ज्वालामालाविराजिता ॥ इत्थं सङ्कल्पिते पीठे तुम्बुरुं तत्र पूजयेत् ॥ ४०२ ॥ चतुर्द्वारसमायुक्तचतुरस्रत्रयावृते ॥ अष्टपत्राम्बुजेङ्गानि केशरेषु समर्चयेत् ॥ ४०३ ॥ दिक्पत्रेषु स्वबीजानि रक्ता वामादिका यजेत् ॥ अरुणांशुकपुष्पाढ्यास्ताम्बूलाकुलिताननाः ॥ ४०४ ॥ वल्लकीवादनरता मदविभ्रममन्थराः ॥ अष्टपत्रेषु चाभ्यर्च्या देव्यो दुर्गादिकाः[1] क्रमात् ॥ ४०५ ॥ दुर्गगा सुभगा चैव कराली मोहिनी तथा ॥ बद्धाञ्जलिपुटाः किञ्चिदानम्रवदनाम्बुजाः ॥ ४०६ ॥ देवीसदृशभूषाढ्यास्तद्बीजानि सबिन्दवः ॥ शषसहास्तु तद्बाह्ये यजेद्वीथीद्वये मनुम् ॥ ४०७ ॥ लोकेश्वरांस्तदस्त्राणि चेत्थं पूजाक्रमः स्मृतः ॥ लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं दशांशं तु हुनेद्घृतैः ॥ ४०८ ॥ तर्प्पणादि ततः कृत्वा प्रयोगानाचरेत्ततः ॥ युगवह्निपुटान्तस्थं बीजं स्मृत्वा सहस्रकम् ॥ अष्टोत्तरं जपेद्धाराज्ज्वरो नश्येन्न संशयः ॥ कुपितस्य हृदम्भोजे स्मृत्वा बीजमिदं जपेत् ॥ ४०९ ॥ अष्टोत्तरसहस्रं तु तत्कोपो नश्यति ध्रुवम् ॥ एतम्मन्त्रं जपित्वा तु प्रातः

१ उपलब्धपुस्तकद्वयेपि दुर्गादिचतुर्देव्यर्चनमेवास्ति चतुर्देवीपूजनोनत्वेन पाठविच्छेदोनुमीयते ॥ पूर्वत्राष्टदलेषु तत्पूजनवर्णनात् ॥

काले पिबेज्जलम् ॥ हृद्रोगास्तस्य नश्यन्ति सर्वे विष्टम्भकादयः ॥ ॥ ४१० ॥ मण्डलं नवनाभाख्यं कृत्वा संस्थापयेद्घटम् ॥ पुत्रिणी कन्यकामाता भवेदत्र तु का कथा ॥४११॥ राजाभिषेके विजयी विप्रो वेदविदां वरः ॥ भूतप्रेतादिकाः कृत्या रोगा नश्यन्ति तत्क्षणात् ॥ श्रीतुम्बुरुशिवस्यायं मन्त्रः सर्वार्थसिद्धिदः ॥ ४१२ ॥ अथातो दक्षिणामूर्त्तेर्नवार्णो मन्त्र उच्यते ॥ [1]प्रणवाघरमाभ्यां तु सम्पुटो नववर्णकः ॥ ४१३ ॥ भवेत्पञ्चाक्षरो मन्त्रो विराट् छन्दो मुनिः शुकः ॥ दक्षिणामूर्तिरुद्रोस्य देवता समुदीरितः ॥ ४१४ ॥ श्रीपूर्वपञ्चवर्णैश्च बिन्दुयुक्तैर्ध्रुवादिकैः ॥ दीर्घस्वरैः षडङ्गानि [2] ततोर्णन्यासमाचरेत् ॥ दृक्कर्णनासिकाद्वन्द्वे मुखे लिङ्गे गुदे पुनः ॥ ४१५ ॥ पुनर्वर्णान्न्यसेच्छीर्षे ललाटे दृशि घोणके ॥ मुखे हृदुदरे जानौ पादे चायं द्वितीयकः ॥ सृष्टिन्यासं ततः कुर्यात्तृतीयं भुजयोः क्रमात् ॥ ४१६ ॥ पादमूले च तन्मध्ये पादान्ते दक्षवामयोः ॥ सर्वांगुलीषु विन्यस्य मूलेन व्यापकं चरेत् ॥ ४१७ ॥ स्थितिन्यासं ततः कुर्य्याच्चतुर्धा स निगद्यते ॥ दक्षपार्श्वे वामपार्श्वे पृष्ठे च जठरे हृदि ॥ कण्ठे दक्षे बाहुमूले न्यसेत्ककुदि चान्तरे ॥ ४१८ ॥ बाहुमूले प्रथमके न्यासं वक्ष्ये द्वितीयकम् ॥ शीर्षे ललाटे नेत्रे च वामे दक्षे च कर्णयोः ॥ नासामुखे तृतीयं तु कण्ठहृन्नाभिषु न्यसेत् ॥ ४१९ ॥ दक्षिणे च तथा वामे बाहुमूले च पार्श्वयोः ॥ कटेश्च भागद्वितये चतुर्थ कथयाम्यथ ॥ ॥ ४२० ॥ बाहुमूले च तन्मध्ये वामाङ्गुल्यग्रदक्षिणे ॥ विन्यसेत्प्रथमं वर्णं द्वितीयार्णं ततो न्यसेत् ॥ ४२१ ॥ आबाहूदक्पादमूलतत्सन्ध्यंगुलिकाग्रके ॥ तृतीयं विन्यसेद्वर्णं चांगुलीनां च सन्धिषु ॥ ४२२ ॥ चतुर्थाद्यास्तथा वर्णा वामदक्षिणहस्तयोः ॥ कनिष्ठाद्यंगुलीनां च न्यसेत्सन्धित्रिके त्रिके ॥ ४२३ ॥ ततश्च व्यापकं कृत्वा संहारन्यासमाचरेत् ॥ वामपाद-

---

१ ॐ श्रीं नमः शिवाय ॐ श्रीं इति नवाक्षरमन्त्रः । २ ॐ श्रीं आं हृदयाय नमः, ॐ श्रीं ईं शिरसे स्वाहा, ॐ श्रीं ऊं शिखायै वषट्, ॐ श्रीं ऐं कवचाय हुम्, ॐ श्रीं औं नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ श्रीं अः अस्त्रायफट् ॥ एवमङ्गुष्ठादिन्यासोपि ।

तले पृष्ठे वामदक्षिणपार्श्वयोः ॥४२४॥ तेषां च समुदायेपि जङ्घायामूरुक द्वये ॥ तथा दक्षिणपादे च क्रमादर्णानिमान्न्यसेत् ॥४२५॥ एवं च दक्षिणे पादे द्वितीयो न्यास उच्यते ॥ वामे करतले पृष्ठे तथा जानुनि दक्षिणे ॥ ॥ ४२६ ॥ तत्समूहे तथा नाभौ हृदयेथ पुनर्न्यसेत् ॥ वामदक्षिणकट्यां च तृतीयो वै प्रकीर्तितः ॥ एवं दक्षिणहस्ते च चतुर्थः परिकीर्तितः ॥ ॥ ४२७ ॥ वामदक्षिणकट्यां तु स्तनान्तं वर्णयुग्मकम् ॥ स्तनाभ्यां हृदयाभ्यां च न्यसेद्वर्णं तृतीयकम् ॥ ४२८ ॥ हृदयान्मस्तकान्तं च चतुर्थं वर्णमादिशेत् ॥ मस्तकस्य चतुर्दिक्षु चत्वारोर्णाः समीरिताः ॥ नवमं ब्रह्मरन्ध्रे च न्यासोयं पञ्चमः स्मृतः ॥ ४२९ ॥ ततश्च व्यापकं कृत्वा सृष्टिन्यासं समाचरेत् ॥ व्यापकं च पुनः कृत्वा स्थितिन्यासं समाचरेत् ॥ ४३० ॥ पुनश्च व्यापकं कृत्वा पञ्च शान्त्यादिकान्न्यसेत् ॥ मूर्द्धास्यहृद्गुह्यपादे पुनस्तानेव विन्यसेत् ॥ ४३१ ॥ ऊर्ध्वप्रागादिकास्येषु पुनर्व्यापकमाचरेत् ॥ पुनर्मुन्यादिकं न्यस्य षडङ्गानि ततश्चरेत् ॥ ४३२॥ ततो ध्यायेद्योनिलिङ्गं दक्षिणामूर्तिविग्रहम् ॥ शतयोजनकोच्छ्रायं पञ्चसप्तति विस्तृतम् ॥ ४३३ ॥ वटवृक्षमनुस्मृत्य तदधस्ताद्विचिन्तयेत् ॥ मण्डपं रुचिरं तद्वत्सहस्रस्तम्भसंयुतम् ॥ ४३४ ॥ चतुस्तम्भयुतं तस्य मध्ये सिंहासनं शुभम् ॥ तत्रासीनं महादेवं दक्षिणामूर्त्तिविग्रहम् ॥ ४३५ ॥ शुद्धस्फटिकसङ्काशं शशिखण्डविभूषितम्॥ व्याघ्रचर्म्मधरं शान्तं जटामुकुटमण्डितम् ॥४३६॥ मुखपंकरुहोल्लासं सोमसूर्य्याग्निलोचनम् ॥ मुद्रापरश्वधमृगान्बिभ्राणं बाहुभिस्त्रिभिः ॥ ४३७ ॥ अङ्काष्टके दधानं तु रामबीजं शुशोभनम् ॥ व्याकुर्वन्तं समस्तानि ब्रह्मतन्त्राणि सादरम् ॥४३८॥ धृतपंकजहस्तं च सर्वमोहप्रणाशनम् ॥ शुकादिमुनिमुख्यैस्तु पुस्तकोज्ज्वलपाणिभिः ॥ ४३९ ॥ उमयेन्दिरया वाचा वाग्देव्या चापि वामतः॥ ब्रह्माण्या पद्मनाभेन चानन्देन च संवृतम् ॥ ४४० ॥ वेदैश्चाङ्गैश्च वेदान्तैर्विदिशासु च वेष्टितम्॥ मीमांसाधर्म्मशास्त्राभ्यां दिशि प्राच्यामुपासितम् ॥४४१ ॥इतिहासपुराणाभ्यां यमाशायां तु पश्चिमे ॥ साङ्ख्यपातञ्जलाभ्यां तु सौम्याशायामुपासितम् ॥ ४४२ ॥

त्रयस्त्रिंशद्भिरिन्द्राद्यैर्देवैः संवेष्टितं प्रभुम् ॥४४३॥ यावन्तो वैश्वदेवस्य नीवी-सम्बन्धिनः सुराः ॥ ४४४ ॥ त्रीणि चैव सहस्राणि षष्ट्यग्राणि शतानि च ॥ तावद्भिर्विविधैः साक्षाद्गन्धर्वाद्यैश्च संयुतम् ॥४४५॥ परभूतं महादेवं दक्षिणा-मूर्त्तिमादरात् ॥ भावयेद्योपि सद्भावं सर्वज्ञश्च भवेद्ध्रुवम् ॥ ४४६ ॥ अस्य पूजाप्रयोगादि द्वात्रिंशार्णसमं मतम् ॥ पञ्चलक्षं पुरश्चर्य्या होमो द्वात्रिंशदर्ण वत् ॥ अष्टोत्तरशतं नित्यं जपेत्पुष्पाञ्जलिस्तथा ॥ ४४७ ॥ अथान्यं सम्प्रवक्ष्यामि मन्त्रं द्वात्रिंशदक्षरम् ॥ सर्वं पूर्ववदेवं स्याद्विशेषो ज्ञानदस्त्वयः ॥ ॥ ४४८ ॥ अज्ञानेन्धनदीप्ताय ज्ञानाग्निज्वालरूपिणे ॥ आनन्दाघहर प्रीत सम्यज्ज्ञानं प्रयच्छ मे ॥ ४४९ ॥ खड्गरावणमन्त्रोथ कथ्यते तन्त्रगोपितम् ॥ [1]तारो नमो भगवते ङेन्तः पशुपतिर्ध्रुवः ॥ ४५० ॥ हृद्भूताधिपतिर्ङेन्त ओं हृद्रुद्राय चोच्चरेत् ॥ खड्गरावण लंलं च विहरद्वितयं सर ॥ ४५१ ॥ सर नृत्यद्वयं पश्चाद्व्यसनं पदमुच्चरेत् ॥ भस्मार्चितशरीराय ततो घण्टापदं वदेत् ॥ ४५२ ॥ कपालमालाधराय व्याघ्रचर्मपदं ततः ॥ परिधानायाथ ङेन्तः शशांककृतशेखरः ॥ ४५३ ॥ कृष्णसर्प्पपदं प्रोच्य वदेद्यज्ञोपवीतिने ॥ चलद्वयं बल द्वेधा अतिवर्तिकपालिने ॥ ४५४ ॥ जहिद्वयं वदेद्भूतान्ना-शयद्वितयं ततः॥ ४५५॥ मण्डलेति पदान्ते तु मध्ये फड्द्वितयन्ततः ॥ ४५६॥ रुद्रां कुशेन शमय प्रवेशययुगं वदेत् ॥ द्विरावेणय रक्षांसि धाराधिपति संवदेत ॥ ४५७ ॥ रुद्रो ज्ञापयति स्वाहा मन्त्रोयं खड्गरावणः ॥ रावणोस्यामितं छन्दो देवता खड्गरावणः ॥ ४५८ ॥ षड्दीर्घबिन्दुयुक्तेन खकारेण षडङ्ग-कम् ॥ सद्योजातादिकान्देहे चेशानादीन्मुखेषु च ॥ ४५९ ॥ रक्ताम्बरं रक्तवर्णं चन्द्रमौलिं त्रिलोचनम् ॥ पञ्चाननं करैर्घण्टां कपालांकुशम-

---

१ ॐ नमो भगवते पशुपतये ॐ नमो भूताधिपतये ॐ नमो रुद्रायखड्गरावण लंलं विहर विहर सरसर नृत्यनृत्य व्यसनं भस्मार्चितशरीराय घण्टाकपालमालाधराय व्याघ्रचर्मपरिधानाय शशांककृतशेखराय कृष्णसर्प्पयज्ञोपवीतिने चलचल बलबल अतिवर्तिकपालिने हनहन भूतान्नाशय नाशय मण्डलाय फट्फट् रुद्रांकुशेन शमयशमय प्रवेशय प्रवेशय आवेणय आवेणय रक्षांसि धराधि-पतिः रुद्रो ज्ञापयति स्वाहा ।

स्तकम्॥४६०॥कृपाणं खेटखड्वाङ्गौ त्रिशूलं डमरुं करैः ॥दधानमभयं चापि ध्यायेत्पञ्चाननं शिवम् ॥ ४६१ ॥ भताधिपतये स्वाहा पूजामन्त्रोयमीरितः॥ पञ्चाक्षरोदिते पीठे पूजयेत्खड्गरावणम् ॥ ४६२ ॥ मूलेन मूर्त्तिं संकल्प्य तच्छान्तं मन्त्रबिन्दुमत् ॥ अङ्गानि दलमूलेषु द्वितीयेष्टदले यजेत ॥४६३॥ श्यामां द्वितीयां बलिनीं तृतीयां कृष्णपिङ्गलाम् ॥ फाल्गुनीं झिण्टिरिल्लीं च मीं मन्त्रमालिकाम् ॥ ४६४ ॥ सप्तमा खड्गिनीं पश्चाचन्द्राङ्कितजटा-मिमाः ॥ पूर्वपत्रादिसव्येन खड्गरावणवल्लभाः ॥ ४६५ ॥ ऐन्द्रीं कौमा-रिकां ब्राह्मीं वाराहीं वैष्णवीं तथा ॥ वैनायकीं च चामुण्डां माहेशीं दिक्षु पूजयेत् ॥ ४६६ ॥ द्वारपालान्यजेद्दिक्षु द्वाद्वा प्रागादिदेशतः ॥ रौद्रपिङ्गल-नामानौ श्मशानानलभीषणौ ॥ ४६७ ॥ दृढकर्णं भृङ्गरीटिमुदगामर्दकं यजेत ॥ महाकालं च केशेषु कुम्भकर्णमशेषकम् ॥ ४६८ ॥ भल्लाटं जानुहारं च भूपुरद्वयवीथिषु ॥ इन्द्रादिकांस्तदस्त्राणि बाह्ये भूतबलिं हरेत् ॥४६९ अयुतद्वितयं मन्त्रं जपित्वा तद्दशांशतः ॥ पायसेन घृताक्तेन जुहुया-त्तस्य सिद्धये ॥ ४७० ॥ इत्थं सिद्धमनुर्मन्त्री कृत्याग्रहमपोहयेत ॥ आदेशं तस्य कुर्वन्ति भूता भीता महात्मनः ॥ मन्त्रेणानेन सदृशो नान्यो भूतप्रमर्दकः ॥४७१॥ अथ प्रवक्ष्ये रुद्रस्य मृतसञ्जीविनीमनुम् ॥ प्रणवं व्याहृतीस्तिस्रः प्रासादं मृत्युजिन्मनुम्॥त्रियम्बकं मृत्युजितं प्रासादं व्याहृतित्रयम् ॥४७२॥ प्रणवं चोच्चरेदेष मृतसञ्जीविनीमनुः ॥ वशिष्ठोस्य मुनिश्छन्दोनुष्टुब्रुद्रोस्य देवता मृत्युञ्जयाख्यः प्रणवो बीजं शक्तिस्तु हौं मतः ॥ तारव्याहृति-मन्त्रांघ्रिचतुष्कोणांगुलीमुखे ॥ ४७३ ॥ न्यासं कृत्वा षडङ्गानि तत्र कृत्ये समाचरेत् ॥ त्रियम्बकमनोर्न्यासान्पूर्वोक्तानपि संचरेत् ॥४७४॥ अवैदिकानां वक्ष्येहं न्यासं मन्त्रविनिर्णयम् ॥ तारो[2] नमो भगवते त्र्यम्बकाय ततो

---

१ ॐ भूर्भुवः स्वः हौं ॐ जूंसः त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् ॥ उर्वारुकमिव बन्ध-नान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् ॐजूंसः हौं भूर्भुवःस्वरोम् । २ ॐ नमो भगवते त्र्यम्बकाय शूलपाणये रुद्रायामृतमूर्तये मांजीवय चन्द्रजटिल त्रिपुरान्तकाय हंह्रीं रुद्राय ऋग्यजुःसामरूपाय रुद्रायाग्नित्रितयाय ज्वलज्वल प्रज्वलप्रज्वल मां रक्षरक्ष अघोरास्त्राय हुंफट्स्वाहा ।

वदेत् ॥४७५॥ शूलपाणिश्च रुद्रश्च ङेन्तश्चामृतमूर्त्तये ॥ मा जीवय पदस्यान्ते स्याच्चन्द्रजटिलं पदम् ॥ ४७६ ॥ त्रिपुरान्तकाय ह्रंह्रीं ङेन्तं रुद्रपदं वदेत् ॥ऋग्यजुस्सामरूपाय रुद्रायाग्नित्रयाय च ॥ ४७७ ॥ ज्वलद्वन्द्वं प्रज्वलद्दिर्मां रक्षयुगलं वदेत् ॥ आघोरास्त्राय हुंफट् च स्वाहान्तोऽष्टवर्णकः ॥ ४७८ ॥ तारो नमो भगवते ततो मन्त्राक्षराणि तु ॥ स्वाहान्तमङ्गत्रितये कवचानि च फ् त्रिषु ॥ ४७९ ॥ मन्त्राक्षराणि विन्यस्य तत्संङ्ख्येयं क्रमात्स्मृता ॥ नृपार्केषु गजस्थाणुदन्तसङ्ख्याक्रमेण च ॥ ४८० ॥ व्याहृतित्रयमुच्चार्य्य चास्त्राय फडिदं वदेत् ॥ अयं दिग्बन्धमन्त्रः स्याद्ध्यानमस्य निरूप्यते ॥ ४८१ ॥ ऊर्ध्वं विधोर्मण्डलस्य बद्धपद्मासनं विभुम् ॥ स्रवत्पीयूषबिन्दोश्च कलाध्रं चन्द्रसुप्रभम् ॥ ४८२ ॥ योगमुद्राधरं द्वाभ्यां घटं चामृतपूरितम् ॥ सोमसूर्य्याग्निनेत्रं च बद्धपिङ्गजटाधरम् ॥ ४८३ ॥ व्याघ्रचर्माम्बरधरं नानाभरणभूषितम् ॥ भस्मानुलेपनं भक्तकृपाकरमनुस्मरेत् ॥ ४८४ ॥ त्रियम्बकस्य वेदोक्तपीठे सम्पूजयेच्छिवम् ॥ चत्वारिंशत्सहस्राणि पौरश्चरणिको जपः ॥ ४८५ ॥ प्रोक्तद्रव्यैस्तद्दशांशो होमःशेषं तु पूर्ववत् ॥ विशेषेण तर्प्पणं तु शीघ्राभीष्टफलप्रदम् ॥ ४८६ ॥ रूपत्रयं यथेत्युक्तं जले ध्यात्वा महेश्वरम् ॥ सम्पूज्य जुहुयात्तत्र मृत्युरोगापनुत्तये ॥ प्रयोगाश्चापि सिद्ध्यन्ति पुरामृत्युञ्जयोदिताः ॥ ४८७ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि रुद्रमन्त्रं दशाक्षरम् ॥ तारो नमो भगवते रुद्रायेति प्रकीर्त्तितः ॥ ४८८॥ बौधायनो मुनिः पंक्तिश्छन्दो रुद्रोस्य देवता ॥ पृथक्पदैः समस्तेन पञ्चाङ्गविधिरीरितः ॥ ४८९ ॥ मस्तके चापि नासायां ललाटे च मुखे गले ॥ हृदये दक्षिणे हस्ते वामे नाभ्यां च पादयोः ॥ ४९० ॥ मन्त्रवर्णान्प्रविन्यस्य ध्यानपूजाजपादिकाः॥ प्रयोगाश्चात्र विज्ञेयाः पञ्चार्णोक्ता यथा पुरा॥४९१॥

इति श्रीमहामायामहाकालानुमते मेरुतन्त्रे शिवप्रणीते शिवमंत्रकथनं नामैकत्रिंशः प्रकाशः ॥ ३१ ॥

श्रीशिव उवाच ॥ मम भैरवरूपस्य मन्त्राञ्छृण्वन्तु देवताः ॥ तामसा-न्राजसांश्चापि सात्त्विकान्सिद्धिदायकान् ॥ १ ॥ सार्धवर्षाष्टके ब्रह्मण्यायाते त्वथ देवताः ॥ अहङ्कारो महानासीत्तत्राविद्याप्रभावतः ॥ २ ॥ तदा तस्मि-न्कलियुगे शिश्नोदरपरायणाः॥ न वेदः श्रूयते क्वापि स्मृतिज्ञानं न विद्यते॥ ३॥ भक्ष्यं पानं मैथुनं च देशेदेशे पुरेपुरे ॥ न कश्चिन्मन्यते विष्णुं गणेशं न रविं शिवम् ॥ ४ ॥ मत्वा सर्वे जगच्छाक्तं भगपूजां प्रकुर्वते ॥ ४ ॥ तदा ब-टुकरूपेण मया पृष्टः पितामहः ॥ ब्रह्मन्नादिश्यतां धर्मो वयं येन तरेमहि ॥५॥ तदा तु ब्रह्मणा प्रोक्तं ममोर्ध्वमुखनिर्गतः ॥ आगमः पञ्चमो वेदो भुक्तिमुक्ति-प्रदायकः ॥ ६ ॥ तदाद्ये कलिसंज्ञे तु मया प्रोक्तः पितामहः ॥ ब्रह्मन्निदं त्वया वाच्यं सृष्टिकर्त्ता सदाशिवः ॥ ७ ॥ तदा पितामहेनोक्तं कर्ताहं चापि रक्षकः ॥ ममोर्ध्वमुखतो जातो मन्यतां वेद आगमः ॥ ८ ॥ एतदाचारनिष्ठा ये यास्यन्ति परमां गतिम् ॥ बटुस्त्वं वेत्सि नो सौख्यं भक्ष्यपानाङ्गना-भवम् ॥ ९ ॥ इति श्रुत्वा ब्रह्मवचो धर्म्मसंस्थापनाय तु ॥ युगत्रये तदा-जातः क्रोधसंरक्तलोचनः ॥ १० ॥ अवज्ञां वीक्ष्य च मया प्रखरेण नखेन तु ॥ शिरो निपातितं धातुः करांगुल्या धरातले ॥ ११ ॥ तन्मुखात्पञ्चमो वेदो मम देहे लयं गतः ॥ तदा विप्रैर्धिक्कृतोहं ससुरासुरमानुषैः ॥ लग्ना च ब्रह्म-हत्या मे पृष्ठतश्चातिभीषणा ॥ १२ ॥ तदा तु विष्णुना प्रोक्तो भीषणत्वाच्च भैरवः ॥ भव त्वं बटुकाख्यश्च सेव्यश्चागममार्गतः ॥ १३ ॥ सात्त्विकस्त्वं काशिकायां मुक्तिमार्गप्रदो भव ॥ यज्ञादिकर्म्मरक्षाकृद्राजसस्त्वं दिव-प्रदः ॥ १४ ॥ मारणोच्चाटकर्ता त्वं तामसो बटुको भव ॥ तस्मात्समर्चयेदेनं पञ्चाम्नायोक्तवर्त्मना ॥ तन्मन्त्रान्सम्प्रवक्ष्यामि साधकाभीष्टदायकान् ॥ १५॥ मायां च वटुकं ङेन्तमापदोद्धारणाय च ॥ कुरुद्वयं च बटुकाय ह्रीं प्रकृतिवर्णकः ॥ बृहदारण्यकमुनिश्छन्दोनुष्टुप् च देवता ॥ १६ ॥ भैरवो ह्रींबीजशक्तिरांकीलकमुदाहृतम् ॥ १७ ॥ अथ न्यासान्प्रवक्ष्यामि भैरवस्य तु यैर्विना ॥ न जायते मनोः सिद्धिस्तत्रादौ वर्णमातृकः ॥ १८ ॥ विसर्गमातृकान्यासो द्वितीयः प्रागुदाहृतः ॥ जकारादिछकारान्तान्न्यस्ये-

द्वर्णास्तृतीयकः ॥ १९ ॥ कलामातृकान्यासश्च चतुर्थस्तदनन्तरम् ॥ पञ्चमो न्यास उदितः श्रीबीजादिकमातृकः ॥ २० ॥ केवलो मातृकान्यासः षष्ठः स्यात्तदनन्तरम् ॥ वामहस्तांगुलीमूलमारभ्यामणिबन्धकम् ॥ श्रीबीजाद्यान्न्यसेद्वर्णानादिक्षान्तांस्तु सप्तमः ॥ २१ ॥ श्रीबीजान्तान्क्षकाराद्यानकारान्तान्विलोमतः ॥ न्यसेद्वर्णान्मातृकायाः स्थानेयं त्वष्टमः स्मृतः ॥ कामबीजादिमातॄणां न्यासस्तु नवमः स्मृतः ॥२२॥ मुन्यादित्रितयन्यासे गुह्ये ह्रींबीजमादिशेत् ॥ ह्रींशक्तिं पादयोर्नाभौ आं कीलं दशमस्त्वयम् ॥ २३ ॥ ह्रां वामीशानाय नमो न्यसेदंगुष्ठयोस्तथा ॥ ह्रींवीं तत्पुरुषायेति नमस्तर्जनिकाद्वये ॥२४॥ ह्रूं वू मघोराय नमो विन्यसेन्मध्ययोरपि ॥ २५॥ ह्रैंवैं च वामदेवाय नमश्चानामयोर्न्यसेत् ॥ ह्रौंवौं च सद्योजाताय नमोन्यासः कनिष्ठयोः ॥ २६ ॥ अयमेकादशो न्यासस्त्वेवमेव प्रविन्यसेत् ॥ के मुखे हृदये गुह्ये पादयोर्द्वादशस्त्वयम् ॥ ॥ २७ ॥ एवमेव न्यसेत्पश्चादूर्ध्ववक्त्राय वै नमः ॥ इति प्रयोगाः प्रागादिवक्त्रेष्वेवं त्रयोदशः ॥ २८ ॥ षड् दीर्घस्य हृदि नाभ्यां ह्रीं वा तारपूर्वकम् ॥ जातियुक्तषडङ्गं च न्यसेन्न्यासश्चतुर्दशः ॥ २९ ॥ चतुर्दशस्वरोपेतैराद्यन्ताद्यैः सबिन्दुभिः ॥ प्रेतबीजमिदं तेन न्यासस्तिथिमितस्स्मृतः ॥ ३० ॥ आद्यन्तप्रणवानाद्यांश्चतुर्थस्वरसंयुतान् ॥ सबिन्दून्विन्यसेन्मूर्ध्नि बाह्वोश्चैव तु वक्षसि ॥ ॥ ३१ ॥ नाभौ हस्तांगुलीमध्ये तथा पादांगुलीषु च ॥ स्थानषट्के क्रमान्न्यस्य न्यासोयं स्यात्तु षोडशः ॥ ३२ ॥ एकादशचतुर्थौ तु शक्रस्वरसबिन्दुकौ ॥ ध्यानबीजमिदं प्रोक्तं ब्रह्मरन्ध्रे मुखे दृशोः ॥ ३३ ॥ श्रीवानासा कपोलेषु चिबुके ब्रह्मरन्ध्रके ॥ पुनर्न्यसेदयं न्यासः प्रोक्तः सप्तदशः सुराः ॥ ॥ ३४ ॥ मायाबीजं सप्तपञ्चप्रथमास्तारसंयुताः ॥ पादयोर्हस्तयोर्नेत्रश्रोत्रकुक्षीन्द्रियेषु च ॥ स्थानषट्के प्रविन्यस्य न्यासश्चाष्टादशः स्मृतः ॥ ३५ ॥ श्रीबीजं चिबुके पादे गले पादद्वये पुनः ॥ हृदये पादयोर्नाभौ पादयोश्च प्रविन्यसेत् ॥ पञ्चस्थानेष्वष्टधायं न्यास एकोनविंशकः ॥ ३६ ॥ त्रिंशत्तमचतुर्थौ च षष्ठस्वरसबिन्दुकौ ॥ घृणाबीजमिदं न्यस्य हृदये नाभिमण्डले ॥ ३७ ॥ हृदये पादयोर्न्यस्य हृदये दक्षकुक्षिके ॥ हृदये वामपादे च हृदये दक्ष-

नेत्रके ॥ ३८ ॥ हृदये वामनेत्रे च हृदये दक्षघोणके ॥ हृदये वामघोणे च हृदये दक्षकर्णके ॥ हृदये वामकर्णे च हृदये विंशकस्त्वयम् ॥ ३९ ॥ त्रयोदशचतुर्थौ तु षष्ठस्वरसबिन्दुकौ ॥ घण्टाबीजमिदं न्यस्य घण्टिकानाभिघण्टिषु ॥ ॥ ४० ॥ हृत्पादे हृत्कटौ शीर्षे मस्तके च कटौ स्तने ॥ गुल्फे स्तने तु स्यादेकविंशकोयं सुसम्मतः ॥ ४१ ॥ प्रकृत्याक्षिसमुद्रार्णाः षष्ठस्वरसबिन्दुकाः ॥ ख्यातिबीजमिदं मूर्ध्नि स्फिग्जिह्वानाभिकण्ठके ॥ ४२ ॥ हृज्जङ्घानेत्रकर्णेषु बाहुयुग्मे स्तनद्वये ॥ क्रमेण विन्यसेन्न्यासो द्वाविंशोयं प्रकीर्तितः ॥ ४३ ॥ प्रणवो मूलबीजं स्याद्धृदये पादयोर्न्यसेत् ॥ हस्तयोः कर्णयोर्नासाद्वयेऽयं तु त्रिविंशकः ॥ ४४ ॥ अर्कवेदेष्वन्त्यपूर्ववर्णास्तुर्य्यस्वरान्वितान् ॥ नादबिन्दुयुतान्बीजमासुर्य्याः परिकीर्त्तितम् ॥ ४५ ॥ मुखे नेत्रद्वये कर्णद्वये चैव कपोलयोः ॥ गण्डयोः कण्ठदेशे च स्तनयोर्हृदि पादयोः ॥ ४६ ॥ चिबुके मस्तके बाह्वोस्स्कन्धयोर्दन्तमूलयोः ॥ ब्रह्मरन्ध्रे तथाधारे भ्रूमध्येयं जिनोन्मितः ॥ ४७ ॥ मर्म्मन्यासानतो वक्ष्ये त्रिदेवस्यातिदुर्लभान् ॥ दिक्सतपञ्चपञ्चागवेदप्रलयसागराः ॥ ४८ ॥ एकत्रिंशत्कताद्यन्ताश्चतुर्थस्वरसंयुताः ॥ बिन्दुनादसमायुक्ताः कूटमाकूटनामकम् ॥ न्यसेच्छीर्षे गण्डयोश्च मुखेयं तत्त्वसम्मितः ॥ ॥ ४९ ॥ जिनत्रिंशाब्धिबाणाक्षिवेदशैलमितायुताः ॥ बिन्दुतुर्य्यस्वराभ्यां तु कालबीजमुदाहृतम् ॥ ५० ॥ नेत्रयोः कर्णयोर्नाभौ लिङ्गे चापि गुदे न्यसेत् ॥ षड्विंशोयं समाख्यातः सप्तविंशोथ कथ्यते ॥ ५१ ॥ संवर्तवेदवेदेन्द्राः प्रथमाभ्यां च संयुताः ॥ तुर्य्यस्वरेण बिन्द्वाढ्या विद्याबीजमुदाहृतम् ॥ ५२ ॥ कपोलयोर्ब्रह्मरन्ध्रे दंतपंक्त्योश्च विन्यसेत् ॥ अष्टाविंशमथो वक्ष्ये शृङ्खलान्यासमद्भुतम् ॥ ५३ ॥ अन्त्यान्ध्याद्यादिमेषूनात्रिंशद्बाणान्तकास्तथा ॥ तुर्य्यस्वरैस्तथैकत्रिंशन्मिताब्धित्रिसागरैः ॥ ५४ ॥ त्रिपञ्चरामषष्ठाढ्यं नादबिन्दुविभूषितम् ॥ महापरोक्षं तत्कूटमङ्गेष्वेषु प्रविन्यसेत् ॥ ५५ ॥ मस्तके नेत्रयोः श्रुत्योः कपोलद्वयगण्डयोः ॥ चिबुके च गले स्कन्धद्वये च स्तनयोर्हृदि ॥ ॥ ५६ ॥ कुक्षिद्वये तथा नाभौ जंघयोर्व्यञ्जने तथा ॥ अण्डद्वये न्यसेत्पश्चान्मूलाधारे च गुल्फयोः ॥ ५७ ॥ पादयोश्च पृथङ्न्यस्य पादयोरंगुलीषु

च ॥ ब्रह्मरन्ध्रे पुनश्चांङ्घ्र्योः पादयोरंगुलीषुच॥५८॥ ब्रह्मरन्ध्रे पुनर्मूलाधारे च ब्रह्मरन्ध्रके॥ॐकारमादौ संयोज्य मातृकान्यासमाचरेत् ॥ न्यासश्चूडामणिश्चायमूनत्रिंशः प्रकीर्तितः ॥५९॥ ऊनत्रिंशाष्टधृत्यक्षिवेदान्त्याङ्कुर साब्धयः॥ आद्येकत्रिंशवर्णास्तु सतुर्यस्वरबिन्दवः ॥ ६० ॥ एतत्सरस्वतीकूटमेतत्पूर्वास्तु मातृकाः ॥ वाक्सिद्ध्यर्थं न्यसेद्देहे त्रिंशोयं समुदीरितः ॥ ६१ ॥ एते तु वामिनो न्यासा न्यूना हानिविधायकाः॥अवामिनां त्रयो नित्याः शेषाः काम्यप्रयोगके ॥ ६२ ॥ एवं न्यस्ततनुर्ध्यायेच्छुद्धस्फटिकसंनिभम्॥दीप्तमुद्रावराभीतिकिंकिणीजालनूपुरैः ॥६३॥ युतं रत्नमयैः स्मेरवदनं कुटिलालकम् ॥ दक्षे शूलं च परशुं दधतं बटुरूपिणम् ॥ ६४ ॥ द्विभुजं संस्मरेद्देवकार्य्यार्थे सात्त्विकं द्विजः ॥ वैष्णवस्तु चतुर्बाहुं जटामुकुटधारिणम्॥६५॥त्रिशूलं पाशदण्डौ च दधतं च कमण्डलुम्॥ मूलाद्यसद्योजातेन स्थापयेत्तदनन्तरम्॥६६॥ समूलवामदेवेन सन्निधापनमुद्रया ॥ मूलेन सन्निधायाथ सन्निरोधनमाचरेत् ॥ ॥६७॥अघोरान्तेन मूलेन सन्निरोधनमुद्रया ॥ षडङ्गैः सकलीकुर्यादमृतीकृत्य मूलतः ॥ ६८॥ परमीकरणं मूलात्स्वस्वमुद्राभिरेव हि ॥ ध्यात्वा संस्थापनं कुर्य्यान्मुद्राः सन्दर्शयेत्ततः ॥ ६९ ॥ लिङ्गाद्या पूर्वमुद्दिष्टा योनिमुद्रा तु तत्र या ॥ तां दर्शयेत्तत्पुरुषमूलाभ्यां च ततो बलिम् ॥ ७० ॥ ईशानेन समूलेन कृत्वा देवं तथार्चयेत्॥ततो देवाज्ञया न्यासस्थानेष्वङ्गानि पूजयेत् ॥ ॥ ७१ ॥ सद्योजातादिकान्पञ्च चांगुष्ठादिषु संयजेत् ॥ देवस्य देहे वक्त्रेषु यजेच्चैव पुनश्च तान् ॥ ७२ ॥ व्योमाङ्कं कर्णिकाया तु पूर्वदक्षहरेषु च ॥ पश्चिमायां देवदेहे सद्योजतादिकान्यजेत् ॥ ७३ ॥ असिताङ्गं रुरुं चण्डं क्रोधमुन्मत्तभैरवम् ॥ कपालिनं भीषणं च संहारं च समर्चयेत् ॥ ७४ ॥ देवाग्रतोष्टपत्रेषु यजेत्कोणत्रये पुनः ॥ देशग्रामाधिपौ स्थानाधिपतिं संयजेत्पुनः ॥ ७५ ॥ त्रिकोणे तुर्य्यरेखासु मेघनादं प्रचण्डकम् ॥ कालदूतं च षट्कोणे षडङ्गानि समर्चयेत् ॥ ७६ ॥ षट्कोणस्य बहिश्चाष्टदिक्षु देवाग्रतो यजेत् ॥ डाकिनीपुत्रकान्सर्वाञ्छाकिनापुत्रकानपि ॥ ७७ ॥ लाकिनीपुत्रकानिष्ट्वा हाकिनीपुत्रकान्यजेत् ॥ मालिनीपुत्रकानिष्ट्वा देवीपुत्रांस्ततो

यजेत ॥७८॥ देवस्य वामभागे तु यजेदेता न्क्रमेण तु ॥ इन्द्रेशानदिशोर्मध्य ऊर्ध्वमुख्या न्यजेत्सुतान् ॥ ७९ ॥ रक्षोजलेशयोर्मध्ये त्वधोमुख्या न्यजेत्सुतान् ॥ एतेषामन्तरालेऽर्च्याः पुत्रवर्णास्त्रयोदश ॥ ८० ॥ ततश्चाष्टदले-पद्मे देवाग्रादिप्रदक्षिणम् ॥ ब्रह्माणीतनयं माहेशीपुत्रं वैष्णवीसुतम् ॥ ८१ ॥ कौमारीन्द्राणिकापुत्रौ महालक्ष्मीसुतं तथा ॥ वाराहीतनयं चामुण्डापुत्रं बटुकाभिधम् ॥८२ ॥ पूजयित्वा ततो बाह्ये पद्मस्येशाग्रतो यजेत् ॥ भूपुरार्वागष्टदिक्षु हेतुकं त्रिपुरान्तकम् ॥ ८३ ॥ वेतालमग्निजिह्वं च कालान्ते च करालकम् ॥ एकपादं भीमरूपं प्रागीशानान्तरे यजेत् ॥८४॥ अचलं हाटकेशं च पाशिरक्षोदिगन्तरे ॥ चतुरस्रादिरेखायां देवाग्रादिप्रदक्षिणम्॥ ८५ ॥ श्रीकण्ठममरेशश्चानन्तसर्वगसूक्ष्मकौ॥भारभूतं त्रिमूर्त्तिं च तिथीशं च तदग्रिमे॥ ॥८६॥चतुरस्रे च देवस्य दक्षिणादिप्रदक्षिणम्॥स्थाण्वीश्वरं च बिल्वीशं दिगीशं भौतिकेश्वरम् ॥८७॥ सद्योजातेश्वरं चैव ग्रहेशाक्रूरकेश्वरौ॥महासेनेश्वरं पश्चात्तृतीये चतुरस्रके ॥ ८८ ॥ देवस्योत्तरमारभ्य यजेदेतान्प्रदक्षिणम् ॥ क्रोधेश्वरं च चण्डीशं कूर्म्मेशं लाङ्गलीश्वरम् ॥ ८९ ॥ दारुकेशं च मीनेशमरोषं भृगुमेव च ॥ वामभागे तु देवस्य नकुलीशं शिवेश्वरम् ॥९०॥ संवर्तेशं समभ्यर्च्य तद्बाह्ये पूजयेदिमान् ॥ वामाग्रकोणमारभ्य प्रादक्षिण्येन कोणजान् ॥ ९१ ॥ सशक्तिकां दिव्यसिद्धां नतां दीक्षाख्ययोगिनीम् ॥ भयश्च योगिनीपश्चात्तदन्ते सर्वयोगिनीम् ॥ तदग्रे लोकपालांश्च पूजाविधिरितीरितः ॥९२॥वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं हविष्याशी जितेन्द्रियः॥हुनेत्तिलैस्त्रिमधुक्तैस्तर्पणादि ततश्चरेत् ॥९३॥ वाममार्गे द्रुतं सिद्धिः सपादं दशलक्षकम्॥ पुरश्चर्या तथा होमो घृतयुक्तपलाशजैः ॥ ९४ ॥ वामकौलिकमार्गेण साध्यो दुःखप्रदो मनुः ॥विघ्नं दुर्गां समाराध्य बलिं दत्त्वा विधानतः ॥९५॥ काम्यानि साधयेन्मन्त्री यथोक्तां सिद्धिमाप्नुयात् ॥ वश्याय जुहुयादिक्षुशकलैर्वशयेज्जगत्॥९६॥जुहुयात्सर्पिषा मन्त्री यथोक्तां सिद्धिमाप्नुयात् ॥ जुहुयात्पुत्रलाभाय प्रफुल्लैः कैरवैः सुधीः ॥९७॥ धनधान्यादिसम्पत्त्यै जुहुयात्तिलतण्डुलैः॥ बिल्वप्रसूनैर्जुहुयान्महतीं विन्दते श्रियम्॥९८॥लवणैर्मधुसम्मिश्रैर्वशयेद्वनिताज-

नान् ॥ वृष्टिकामेन होतव्यं वेतसानां समिद्वरैः ॥ ९९ ॥ अन्नेन जुहुयान्मन्त्री धनधान्यादिसम्पदे ॥ वश्याय जुहुयान्मन्त्री मधुना दिवसत्रयम् ॥ १०० ॥ रोगोक्तौषधिहोमेन रोगा नश्यन्ति तत्क्षणात् ॥ कृत्याद्रोहे ग्रहद्रोहे भूतापस्मारसम्भवे ॥ १०१ ॥ व्याघ्राजिने समासीनो जुहुयादयुतं तिलैः ॥ भूतादयः पलायन्ते द्रुतं नो यान्ति तद्दिशम् ॥ १०२ ॥ कृष्णाष्टमीं समारभ्य यावत्कृष्णा चतुर्दशी ॥ तिलैस्तण्डुलसम्मिश्रैर्मधुरत्रयलोलितैः ॥ १०३ ॥ त्रिसहस्रं प्रतिदिनं जुहुयादयुतं तिलैः ॥ भूतादयः पलायन्ते दर्शनात्तस्य पार्वति ॥ १०४ ॥ बटुकेश्वरमभ्यर्च्य भक्ष्यभोज्यफलान्वितम् ॥ नित्यं निवेद्य नैवेद्यं मध्यरात्रे बलिं हरेत् ॥ १०५ ॥ शाल्यन्नं सर्पिषा युक्तं लाजाश्चूर्णानि शर्कराः ॥ गुडमिक्षुरसापूपैर्मध्वक्तैः परिमिश्रितैः ॥ १०६ ॥ एवं बटुकमाराध्य देवं प्रागुक्तवर्त्मना ॥ रक्तचन्दनपुष्पाद्यैर्बलिरेष प्रकीर्तितः ॥ १०७ ॥ एवं जपित्वा प्रयतः सहस्राण्येकविंशतिम् ॥ समाप्तदिवसे रात्रौ पूजयित्वा हरेद्बलिम् ॥ ततः कारयिता राजा तोषयेत्साधकं धनैः ॥ ॥ १०८ ॥ विधिनानेन सन्तुष्टो बटुकेशः प्रयच्छति ॥ तेजो बलं यशः पुत्रान्कान्तिं लक्ष्मीमरोगताम् ॥ १०९ ॥ नश्यन्ति शत्रवः सर्वे वर्द्धन्ते बन्धुबान्धवाः ॥ भवन्ति ग्रहरोगा नो विषये तस्य भूपतेः ॥ ११० ॥ जुहुयाल्लवणैरेवायुतं च स्तम्भनेच्छया ॥ निगडादिविमोक्षाय प्रयोगोयमुदाहृतः ॥ १११ ॥ वचाचूर्णपलश्रेष्ठं गव्येनाज्येन लोडितम् ॥ विभज्य भक्षयेद्वन्ध्या मण्डलात्पुत्रकांक्षिणी ॥ ११२ ॥ विनीतम्पुत्रमाप्नोति मेधारोग्यबलान्वितम् ॥ आदावन्ते प्रयोगस्य बटुकाय बलिं हरेत् ॥ ॥ ११३ ॥ बलिस्तु त्रिविधः प्रोक्तः सात्त्विको राजसस्तथा ॥ तामसश्चेति पूर्वोक्तो मांसहीनो यदा बलिः ॥ ११४ ॥ मुद्गपायससंयुक्तो मधुरत्रयलोडितः ॥ खाद्यैः फलत्रयैर्युक्तः सात्त्विकः परिकीर्त्तितः ॥ ॥ ११५ ॥ अयं विप्रैः प्रदेयस्तु तेन तुष्यति भैरवः ॥ एवं समांसोभूपादियोग्य उक्तस्तु राजसः ॥ ११६ ॥ रक्तमांससुरायुक्तस्सर्वैर्मत्स्यैः समन्वितः बलिस्तामस आख्यातः शूद्रादीनां प्रशस्यते ॥ ११७ ॥ अथातः सम्प्रव-

क्ष्यामि भस्मसाधनमुत्तमम् ॥ उशीरं चन्दनं कुष्ठं घनसारं च कुंकुमम् ॥
॥ ११८ ॥ श्वेतार्कमूलं वाराहीं लक्ष्मीं क्षीरमहीरुहम् ॥ त्वचं बिल्वफलं मलं
शोषयित्वा तु चूर्णयेत् ॥ ११९ ॥ पूर्णव्योमगृहीतेन गोमयेन विमिश्रितम् ॥
कृत्वा पिण्डांश्च संशोष्य संस्कृते हव्यवाहने ॥ १२० ॥ मूलेन दग्ध्वा
तद्भस्म शुद्धपात्रे विनिक्षिपेत् ॥ केतकीमालतीपुष्पैर्वासयेद्भस्म शोभितम् ॥
॥ १२१ ॥ अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं स्पृष्ट्वा भस्म सुपूजितम् ॥ एतदादाय
दिवसे प्रातः पुण्ड्रं करोति यः ॥ १२२ ॥ तस्य रोगाः प्रणश्यन्ति ग्रहाः
सन्ति शुभप्रदाः ॥ रिपुचौरमृगादिभ्यो भयमस्य न जायते ॥ १२३ ॥
वर्द्धन्ते सम्पदः सर्वाः पूज्यते सकलैर्जनैः ॥ राजा वश्यो भवेत्तस्य सामात्यः
सपरिच्छदः ॥ १२४ ॥ अथाभिषेकं वक्ष्यामि भूतानां विजयप्रदम् ॥
पूर्वोक्ते मण्डले लिप्ते वितानध्वजशोभिते ॥ १२५ ॥ सर्वतोभद्रमालिख्य
कर्णिकां तस्य पूरयेत्॥अष्टद्रोणप्रमाणेन शालिभिः प्राचितैः शुभैः॥१२६॥
तदर्धांस्तण्डुलांस्तस्मिन्न्यस्य दूर्वाक्षतान्वितान् ॥ हेमादिविहितं कुम्भं नवर-
त्नसमन्वितम् ॥ १२७ ॥ संस्थाप्य विमलैस्तोयैरापूर्य्यास्मिन्विनिक्षिपेत् ॥
क्षीरद्रुमप्रवालानि लक्ष्मीं दूर्वां तथैव च ॥ १२८ ॥ कर्पूरं चन्दनं बिल्व
मुशीरं कुंकुमम्पुनः ॥ कंकोलमगुरुं जातीं मल्लिकां चम्पकोत्पले ॥ १२९ ॥
एवं न्यस्य त्विमं पश्चात्पट्टसूत्रेण वेष्टयेत् ॥ तस्मिन्नावाह्य बटुकं राजसं
संप्रपूजयेत् ॥ १३० ॥ बहिरष्टसु कुम्भेषु भैरवानष्ट पूजयेत् ॥ त्रयोदशसु
कुम्भेषु त्रयोदशगणान्यजेत् ॥ १३१ ॥ बाह्ये दशसु कुम्भेषु लोकेशानर्च-
येत्सुधीः ॥ तद्बहिर्व्यस्तकुम्भेषु ॥ श्रीकण्ठादीन्सुरान्यजेत् ॥ १३२ ॥
पञ्चत्रिंशघटेष्वर्च्याः कादिवर्णाः स्वराः क्रमात् ॥ इतिगन्धादिभिः सम्यक्पञ्चा
वरणमर्चयेत् ॥ अयुतं प्रजपेत्स्पृष्ट्वा तान्घटान्देशिकोत्तमः ॥ १३३ ॥
सुदिने शोभने लग्ने वाचयित्वा द्विजातिभिः ॥ स्वस्तिमङ्गलवाक्यानि
विशुद्धैर्वेदपारगैः ॥ १३४ ॥ ततस्तु मञ्चमारूढं प्रणम्य बटुकेश्वरम् ॥ जिते
न्द्रियं शुद्धकायं राजानं ब्राह्मणप्रियम् ॥ १३५॥ आस्तिकं सत्यवचनमभि-
षिञ्चेत्प्रसन्नधीः ॥तदा स्वयं च नृपतिः प्रणिपत्य गुरुं प्रियम् ॥ भूयसीं दक्षि-

णान्द्यात्प्रसीदति यथा गुरुः ॥ १३६ ॥ राजाभिषिक्तो भवति साक्षाद्भूमिपुरन्दरः ॥ परान्विजयते भूपान्स्तूयते सकलैर्जनैः ॥ १३७ ॥ कृताभिषेकः षण्मासं प्रतिमासम्महीपतिः ॥ चतुरम्भोधिवलयां शास्ति सर्वां वसुन्धराम् ॥ ॥ १३८ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि गजोष्ट्रवृषवाजिनाम् ॥ रोगादीनां यथा शान्तिस्तत्तच्छालासु कारयेत् ॥ १३९ ॥ कुण्डं कृत्वा विधानेन होमं कृत्वा यथाविधि ॥ पायसाज्यतिलैर्विद्वानयुतात्रितयावधि ॥ १४० ॥ ब्राह्मणान्भोजयेन्नित्यं भक्ष्यभोज्यफलादिभिः ॥ प्राक्प्रोक्तविधिना कुम्भान्स्थापयित्वात्र देशिकः ॥ १४१ ॥ अभ्यर्च्य गन्धपुष्पाद्यैस्तज्जलैः प्रोक्षयेद्गजान् ॥ अश्वशालामनेनैव वर्द्धन्ते ते दिनेदिने ॥ यद्धेषु महती शक्तिर्जायते पूर्वतोधिका ॥ १४२ ॥ सर्वे रोगाः प्रणश्यन्ति कृत्याद्रोहाः परैः कृताः ॥ अस्मात्परतरा रक्षा नास्ति तेषां महीतले ॥ १४३ ॥ अभिषिच्य महीपालं परेषां विजयोद्यतम् ॥ उक्तेन विधिना मन्त्री यामिन्यां बलिमाहरेत् ॥ ॥ १४४ ॥ अन्यूनाङ्गमजं हत्वा राजसं प्रागुदाहृतम् ॥ बलिप्रदानसमये रिपूणां सर्वसैन्यकम् ॥ १४५ ॥ निवेदयेद्बलिं तेन बटुकाय विशिष्टधीः ॥ विदर्भयेच्छत्रुनाम्ना बलिमन्त्रं तथा सुधीः ॥ १४६ ॥ शत्रुपक्षस्य रुधिरं पिशितं च दिनेदिने ॥ भक्षयेच्छ्वगणैः सार्द्धं सारमेयसमन्वितः ॥ बलिमन्त्रोयमाख्यातः सर्वेषां विजयप्रदः ॥ १४७॥ अनेन बलिना हृष्टो बटुकः परसैन्यकम् ॥ श्वगणेभ्यो विभजते सामिषं क्रुद्धमानसः ॥ १४८ ॥ एवं कृते परबलं क्षीयते नात्र संशयः ॥ विजयश्रियमेतेन राजा प्राप्नोत्ययत्नतः ॥ ॥ १४९ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि नानाभैरवसाधनम् ॥ श्मशाने ये तु तिष्ठन्ति कालेकाले पुरेपुरे ॥ १५० ॥ नियमं कञ्चिदेकं यो न त्यजेद्धर्मगर्भितम् ॥ वाममार्गादिनिरतोप्यद्वेषतरवर्त्मना ॥ १५१ ॥ हीने गुरावपूर्णे वा साधनो लोकभीतितः ॥ स भवेद्भैरवो देवस्तस्य देशस्य शासकः ॥ १५२॥ तत्रत्यभूतवेताला भैरवं सेवयन्ति तम् ॥ स्वर्गमोक्षच्युतानां स शासनं कुरुते सदा ॥ १५३ ॥ क्षीणे कर्म्मणि तस्मिंश्च गतो ग्रामे विलीयते ॥ अन्यस्मिन्नेव बीजेन ग्रामे वसति निश्चितम् ॥ १५४ ॥ यदाम्नाये भैरवोसौ तस्य

स्थानं तु तद्दिशि ॥ तेन मार्गेण वशयेत्कार्य्यार्थं भैरवञ्च तम् ॥ १५५ ॥ वाग्रमाकाममायाख्यास्मारो बीजं क्रमाद्भवेत् ॥ पूर्वाद्यूर्ध्वान्तकं त्वेतदाम्नायानां क्रमेण च ॥ १५६ ॥ आम्नायबीजं ग्रामस्य बीजं भं भैरवाय च ॥ ग्रामनाम ततः प्रोच्य पितृगेहनिवासिने ॥ १५७ ॥ नमस्तेभ्यो मनुमिमं जपेद्वर्णसहस्रकम् ॥ निशि श्मशाने च बलिं तदाम्नायोक्तवर्त्मना ॥ जपादौ च जपान्ते च नित्यं दद्यादनन्यधीः ॥ १५८ ॥ बटुकोक्तं हुनेद्द्रव्यं तर्प्पणादि ततश्चरेत् ॥ एवं सिद्धमनुर्मन्त्री भूतानां निग्रहक्षमः ॥ १५९ ॥ तस्मिन्देशे भवेत्तस्य प्रत्यक्षीकरणं शृणु ॥ कृतनित्यक्रियः प्रातः सोपवासो जितेन्द्रियः ॥ ॥ १६० ॥ सायं सन्ध्यादिकं कृत्वा शान्तिपाठौ विधाय च ॥ प्रगृह्य सर्वसामग्रीं सायमुत्तरसाधकः ॥ १६१ ॥ व्रजेच्छ्मशानसामग्रीं शृणु सुस्थिरचेतसा ॥ वटकाश्चणका भक्तं पायसापूपशष्कुलि ॥ १६२ ॥ कन्यकाकर्षितं सूत्रं कुंकुमेन सुरञ्जितम् ॥ अष्टौ वितस्तिदीर्घाश्च समिधः खादिरा मताः ॥ १६३ ॥ कीलालको हस्तमात्रो गन्धपुष्पादिकं तथा ॥ बलिद्रव्यं च पूर्वोक्तं पूर्वाम्नाये समत्स्यकम् ॥ १६४ ॥ समांसं पश्चिमाम्नाये समद्यं चोत्तरे भवेत् ॥ ग्राममध्ये श्मशाने तदूर्ध्वाम्नाये सरक्तकम् ॥ १६५ ॥ यथायोग्यं च नैवेद्यं दद्याच्च भयवर्ज्जितः ॥ पादप्रक्षालनं कृत्वा ततः स्मृत्वास्य देवताम् ॥ १६६ ॥ बद्धाञ्जलिरिदं वाक्यं प्रवदेत्साधकोत्तमः ॥ अत्र श्मशाने याः काश्चिद्देवता निवसन्ति हि ॥ ताः प्रयच्छन्तु मे सिद्धिं प्रसन्नाः सन्तु पान्तु माम् ॥ १६७ ॥ पूर्वे मां शङ्करः पातु तथाग्नेय्यां च शूलधृक्॥ कपाली दक्षिणे पातु नैर्ऋत्ये जटिलोवतु ॥ १६८ ॥ पश्चिमे पार्वतीशस्तु वायव्यां प्रमथाधिपः ॥ उत्तरे मुण्डमालाढ्य ईशाने वृषभध्वजः ॥ १६९ ॥ ऊर्ध्वं पातु तथा शम्भुरधस्ताद्धूलिधूसरः ॥ अग्रतो भैरवः पातु पृष्ठतः पातुखेचरः ॥ १७० ॥ दक्षिणे भूधरः पातु वामे च पिशिताशनः ॥ केशान्पातु विशालाक्षो मूर्द्धानञ्च मरुत्प्रियः ॥ १७१ ॥ मस्तकं पातु भृंगीशो नेत्रे पातु महामनाः ॥ कपोलौ पातु वीरेशो गण्डौ गण्डादिमर्दनः॥ १७२ ॥ उत्तरोष्ठं विरूपाक्षोऽप्यधरं यामिनीप्रियः ॥ दन्तेषु दन्तिविध्वंसी चिबुके नृक-

पालयुक् ॥ १७३ ॥ कण्ठे रक्षतु मां देवो नीलकण्ठो जगद्गुरुः ॥ दक्षस्कन्धे गिरीन्द्रेशो वामस्कन्धेऽरिसूदनः ॥ १७४ ॥ भुजे च दक्षिणे सर्वमन्त्रनाथः सदावतु ॥ वामे भुजे सार्वभौमो हृदयम्पातु पाण्डुरः ॥१७५॥ दक्षस्तनम्पशुपतिर्वामम्पातु महेश्वरः ॥ उत्तरे सर्वकल्याणकारकोवतु मां सदा॥ ॥ १७६ ॥ मनः कामप्रविध्वंसी जंघे पातु दयामयः ॥ जानुनी पात्वजामित्रो गुल्फौ गौरीपतिः सदा ॥ १७७ ॥ पादपृष्ठं ज्ञाननिधिस्तथा पादांगुलीर्हरः ॥ पादाधः पातु सततं व्योमकेशो जगत्प्रियः ॥ १७८ ॥ इति रक्षां समाधाय मन्त्ररक्षां समाचरेत् ॥ ॐह्रांह्रूंह्रूंहुं च पूर्वे ॐह्रींह्रंह्रीं हुताशने ॥ १७९ ॥ ॐह्रींश्रीं दक्षिणे न्यस्य ॐग्लूंग्लूंश्लूं च नैर्ऋते ॥ ॐभ्रुंम्रुंप्रूंसआप्यत्येरांप्रांयूंसः समीरणे ॥ १८० ॥ ॐत्रां भैरव सौम्यायां मोंव्रुंप्रुं चैव फट् शिवे ॥ ॐग्लौंब्लुमूर्ध्वदेशेथो स्त्रांस्त्रूंस्त्रूंसूस्त्वधः स्मृतम् ॥ ॥१८१॥ एवं रक्षां समाधायोत्कील्य कीलान्दिगष्टके ॥ मध्ये महाकीलमथो दिक्पालार्चनमाचरेत् ॥१८२॥ ततो मन्त्रजपं कुर्य्यात्प्रार्थयेच्च पुनःपुनः ॥ मां भैरव द्विरुच्चार्य्य भयङ्करहरेति च ॥ मां रक्षरक्ष हुं फट् च स्वाहा द्वाविंशदर्णकः ॥ १८३ ॥ पलाशभाजने माषान्कृत्वा प्राचीं व्रजेद्दिशम् ॥ कीलस्य निकटे चन्द्रमावाह्य पूजयेत्ततः ॥ १८४ ॥ ध्यानं प्रागुक्तवत्कृत्वा तत्पुरे चतुरस्रके ॥ मन्त्रेणानेन चन्द्राय मण्डले बलिमर्पयेत् ॥१८५ ॥ ॐह्रींह्रींह्रीं समुच्चार्य भो इन्द्र सुरनायक ॥ प्रसन्नो भव मे शीघ्रं देहि सिद्धिं सनातनीम् ॥ इमं बलिं गृह्णगृह्ण हुं फण्नागाग्निवर्णकः ॥ १८६ ॥ जलं दत्त्वा बलिं त्यक्त्वा न यावद्वह्निकीलकम् ॥ आग्निं तत्र समावाह्य प्राग्वद्ध्यात्वा प्रपूजयेत् ॥१८७॥ तदग्रे मण्डलं कृत्वा दद्यान्मन्त्रेण वै बलिम् ॥ ॐरंरांरिंरींरुंरूं तदा ग्रे ग्रे च पदं वदेत् ॥ १८८ ॥ तेजोनायक शीघ्रं मे सिद्धिं देहि इमं वदेत् ॥ मुद्गबलिं गृह्णगृह्ण हुं फड् देवार्णको मनुः ॥ १८९ ॥ ततो दक्षिणकीलस्य निकटे यममर्चयेत् ॥ दंबीजेन समावाह्य मनुना निर्वपेद्बलिम् ॥ १९० ॥ ॐप्रंप्रांप्रिं च प्रींप्रुंप्रूं भो यमेति पदं वदेत् ॥ प्रेताधिपतये शीघ्रं प्रसन्नो भव संवदेत् ॥१९१॥ इमां तु मे सुरां पात्रे बलिं

गृह्णयुगं वदेत् ॥ हुंफडन्तः समाख्यातो मन्त्रो गोरामवर्णकः ॥ १९२ ॥ ततो नैर्ऋत्यकोणस्य निकटे निर्ऋतिं यजेत् ॥ क्षंबीजेन समावाह्य बलिमन्त्रो थकथ्यते ॥ १९३ ॥ ॐ प्रेंप्रेंप्रें ततो हुं त्रिः श्रीं द्विर्ह्रीं च रमायुगम् ॥ रक्षोनाथपदं शीघ्रं प्रसन्नो भव संवदेत् ॥ १९४ ॥ इमं मे चणकबलिं गृह्ण-गृह्ण पुनर्मतः ॥ षट्त्रिंशदर्णो मन्त्रोयं ततः पश्चिमकीलके ॥ १९५ ॥ वंबीजेन समावाह्य वरुणं तत्र पूजयेत ॥ बलिमन्त्रो ध्रुवो व्रांव्रीं भोभो वरुण संवदेत ॥ १९६ ॥ जलनाथपदस्यान्ते प्रसन्नो भव संवदेत् ॥ इमं मे चौदनबलिं गृह्णगृह्ण च हुं च फट् ॥ १९७ ॥ त्रिंशदर्णो मनुः प्रोक्तो वरुणस्य बलेरयम् ॥ ततो व्रजेद्वायुकोणे कीलस्य निकटेर्चयेत् ॥ १९८ ॥ यंबीजेन समावाह्य वायुं शृणु बलेर्मनुम् ॥ ॐ वांवींवूं ततः क्रांक्रीं भोभो वायो भुवः पुनः ॥ १९९ ॥ क्षिप्रं प्रसन्नो भवेति ममेदं वायवेपि च ॥ बलिं गृह्णयुगं हुंफट्पञ्चात्रिंशाक्षरो मनुः ॥ २०० ॥ उदक्कीलं ततो गत्वा कुंबीजेन धनेश्वरम् ॥ आवाहयेत्पूजयित्वा मनुना निर्वपेद्बलिम् ॥ २०१ ॥ ॐ क्रींक्रूंक्रीं नमः क्रांक्रां भोभो यक्षपदं वदेत् ॥ नाथ शीघ्रं प्रसन्नो मे भवेति च पदं वदेत् ॥ ममापूपबलिं गृह्णयुगं हुं फड्वेदाग्निवर्णकः ॥ २०२ ॥ ईशानकीलनिकटे गत्वेशानं समर्चयेत् ॥ हुंबीजेन समभ्यर्च्य बलिं यच्छेत्तथा मुना ॥ २०३ ॥ ॐ श्रांश्रींश्रूं ततः श्रींश्रींश्रूंस्याद्वै शष्कुलीपदम् ॥ बलिं गृह्णयुगं हुंफड्चन्द्रनागमिताक्षरः ॥ २०४ ॥ पुष्पाक्षतान्समादाय मध्यस्तम्भं ततो व्रजेत् ॥ ओं स्तांस्तींह्रीं तथा स्तम्भाय नमोयं नवाक्षरः ॥ अनेन मनुना स्तम्भं निर्भयः परिपूजयेद् ॥ २०५ ॥ महाकवचमन्त्रेण कुर्य्याद्दे-हस्य रक्षणम् ॥ ओं ह्रांह्रींह्रूं नमो हुं च क्षांक्षींक्षूंक्षश्च प्रोच्चरेत् ॥ २०६ ॥ स्रांस्रींस्रूंस्रस्तथा घ्रांघ्रींघ्रूंघ्रोंस्रोंस्रीं ततो वदेत् ॥ स्रंस्रांस्रेंस्रं ततो भ्रांभ्रौं त्रिर्हों मुक्ता त्रिधात्रिधा ॥ २०७ ॥ हुंसतकं समुच्चार्य्य फडन्तं सर्वतो वदेत् ॥ रक्षरक्ष पदं प्रोच्य रक्षरक्षेति भैरव ॥ २०८ ॥ नाथनाथ फडन्तोयमेकप ञ्चाशदक्षरः ॥ जप्त्वात्मरक्षां कृत्वाथ स्तम्भस्य च समीपतः ॥ २०९ ॥ आसनं सम्यगास्तीर्य्य तत्र प्राङ्मुख आस्थितः ॥ स्वाग्रे समे तु भूम्यग्रे गोमयाद्युपले-

पिते ॥ २१० ॥ पद्ममष्टदलं कृत्वा तद्बहिः षोडशच्छदम् ॥ तद्बाह्येऽष्टदलं चापि ह्यसिताङ्गादिभैरवान् ॥ २११ ॥ पत्राष्टके पूजयित्वा पूजयेत्षोडशच्छदे ॥ कुलीशं सुकुलीशं च जामित्रं डामरं रिभम् ॥ २१२ ॥ प्रचण्डं चण्डकेशं च चण्डात्मानं च चामरम् ॥ चारित्रं च चमत्कारं चञ्चलं चारु भूषणम् ॥ २१३ ॥ चामीकरं चारुवहं चकितं चेति षोडश ॥ एते स्वनामभिः पूज्याः षोडशानन्दपूरिताः ॥ २१४ ॥ ब्राह्मयाद्याश्चाष्टपत्रेषु बहिर्वीथ्यां दिगीश्वरान् ॥ तद्बाह्ये च तदस्त्राणि तद्बाह्येपि त्विमान्यजेत् ॥ ॥ २१५ ॥ चण्डप्रचण्डोर्ध्वकेशभीषणोद्भीषणाभिधान् ॥ व्योमकेशं व्योम बाहुं व्योमव्यापकमेव च ॥ २१६ ॥ एतान्वीरान्समाहूय चायाहीति समुच्चरन् ॥ अभ्यर्चयेन्निर्भयः संस्ततो न्यासान्समाचरेत् ॥ २१७ ॥ पश्चिमाभिमुखो भूत्वा मालां सम्पूज्य सञ्जपेत् ॥ उच्चैः स्वरांस्तदायाति प्रत्यहं भैरवः स्वयम् ॥२१८॥ वामहस्तेन दद्याच्च यथाम्नायोचितं बलिम् ॥ सम्भोजयेज्जपं कुर्यान्निर्भयः प्रीतमानसः ॥ २१९ ॥ तृप्तो देवो यदा ब्रूयाद्वरं-वरय वाञ्छितम् ॥ दक्षिणे पयसा चैव तस्य तृप्तिः प्रजायते ॥ २२० ॥ वामादीनां मांसमद्यरक्ताद्यैः स्थिरतापि वा ॥ प्रणम्य दण्डवद्भूमौ वाञ्छितं वरमुच्चरेत् ॥ २२१ ॥ आगत्य च गृहं पश्चात्प्रत्यहं कर्यान्महोत्सवम् ॥ एवं कलियुगे सिद्धिः श्मशानस्य प्रकीर्तिता ॥ २२२ ॥ जपेदेवं समारूढो देवः प्रत्यक्षगो भवेत् ॥ समस्तभैरवाणां तु मन्त्राद्येवं मयोदितम् ॥ २२३ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि क्षेत्रपालमनुं परम् ॥ ङेन्तस्तु क्षेत्रपालः स्यात्क्षौंबीजाद्यो गजाक्षरः ॥ २२४ ॥ स एव प्रणवाद्यस्तु दक्षे वामे नवाक्षरः ॥ मुनिर्ब्रह्मा च गायत्रं छन्दः स्यात्क्षेत्रपालकः ॥ २२५ ॥ देवो बीजमिह क्षौं च नमः शक्तिः प्रकीर्त्यते ॥ षड्दीर्घभाजा बीजेन षडङ्गविधिरीरितः ॥ ॥ २२६ ॥ ततः सञ्चिन्तयेद्देवमञ्जनाद्रिसमप्रभम् ॥ वर्तुलास्यं त्रिनयनमूर्ध्वपिङ्गजटाधरम् ॥ २२७ ॥ दंष्ट्राकरालवदनं भीमरूपं दिगीश्वरम् ॥ दक्षे गदां कपालं च वामे सर्पविभूषणम् ॥ २२८ ॥ शैवपीठे यजेदष्टदिक्पदिक्सु रभूषिते ॥ मध्ये देवं षडङ्गानि कर्णिकायां दलेषु च ॥ २२९ ॥ अनलं

चाग्निकेशं च करालं कान्तिकारकम् ॥ महाकोपं पिशितास्यं पिङ्गाक्षं चोर्ध्व केशकम् ॥ २३० ॥ यजेद्भूपुरवीथ्यां च लोकेशानस्त्रसंयुतान् ॥ धूपदी पादिकं दत्वा नैवेद्यं मनुनामुना ॥ २३१ ॥ एह्येहीति समुच्चार्य्य विद्वि- षोन्तः पुरद्वयम् ॥ भञ्जय द्विर्नर्तय द्विर्विघ्नविघ्न महा वदेत् ॥ २३२ ॥ भैरव क्षेत्रपालेति बलिं देव ततो वदेत् ॥ गृह्णद्वयं वह्निजाया पञ्चत्रिंशाक्षरो मनुः ॥ २३३ ॥ एकलक्षं जपेन्मन्त्रं जुहुयात्तद्दशांशतः ॥ चरुणा घृत- सिक्तेन तर्प्पणादि ततश्चरेत् ॥ २३४ ॥ अथ प्रयोगं वक्ष्यामि सर्वोपद्रवनाश नम्॥रात्रौ गृहाङ्गणे रम्यं कृत्वा स्थण्डिलमुत्तमम्॥२३५॥आवाह्य तत्र सम्पू- ज्य क्षेत्रेशं प्रोक्तवर्त्मना ॥ दक्षमार्गी च दुग्धाद्यैः कृत्वा वै सिक्तकं महत् ॥ ॥ २३६ ॥ वामाचारी कुलद्रव्यैः स्वाम्नायोक्तैस्तथा परे ॥ वक्ष्यमाणेन मनुना तस्य हस्ते बलिं हरेत् ॥ २३७ ॥ एह्येहि तुरुयुग्मं च मुरुद्वन्द्वं तथा वदेत् ॥ भुंधिं द्विर्हन विघ्नं च विनाशयविनाशय ॥ २३८ ॥ महाबल क्षेत्र- पाल बलिं गृह्णद्वयं ततः ॥ अग्निजाया बलेर्मन्त्रो भवेत्पञ्चाब्धिवर्णकः ॥ ॥२३९॥दद्याच्च परिवारेभ्यस्तेषां तेषां तु नामभिः ॥ बलिनानेन सन्तुष्टःक्षेत्र- पालो मुदान्वितः ॥२४०॥ ऐश्वर्य्यविजयारोग्यसौभाग्यादिकसम्पदः॥ददाति रौद्रभूतादि कृत्याद्याशु निवारयेत् ॥ २४१ ॥ अथ वक्ष्ये गरहरं वह्निमन्त्रं चमत्कृतम् ॥ खःखं स्याद्द्व्यक्षरो मन्त्रो मुनिरग्निः प्रकीर्त्तितः ॥ २४२ ॥ पंक्तिश्छन्दो देवताग्निः खो बीजं शक्तिका तु खम् ॥ षड्दीर्घस्वरयुक्तेन खका रेणाङ्गकल्पनम् ॥ २४३ ॥ ध्यानार्चनादिकं सर्वं वैश्वानरसुमन्त्रवत् ॥ जपो द्वादशसाहस्रं तद्दशांशं घृतैर्हुनेत्॥तर्प्पणादि ततः कृत्वा प्रयोगं तु समाचरेत् ॥ ॥ २४४ ॥ स्वस्य वामे करे ध्यायेत्पद्मं पञ्चदलं स्थितम् ॥ तस्यापि कर्णिकायां तु सविसर्गं खकारकम् ॥ २४५ ॥ सानुस्वारं खकारं च ध्याये- त्पञ्चदले स्थितम् ॥ सुधामयं च तज्ज्वालां पश्चादस्त्रं विभावयेत् ॥२४६॥ सम्पूर्णं चामृतमयं विषयुक्तं स्पृशेद्वपेत् ॥ जपेदष्टोत्तरशतं मन्त्रं यस्य तनुं स्पृशेत् ॥ २४७ ॥ सर्वान्विषग्रहान्भूतान्सर्प्पवृश्चिकवेदनाः ॥ ज्वराजीर्ण- विसर्प्पादि शूलं दन्तादिसम्भवम् ॥ नेत्ररोगादिकं पीडां सर्वाङ्गस्थां हरे

दथ॥ २४८ ॥ अथ वक्ष्ये चण्डमन्त्रमों हुंफट् त्र्यक्षरो मनुः ॥ ऋषिस्त्रिकोनुष्टुबुक्तं छन्दश्चण्डोस्य देवता ॥ २४९ ॥ आद्यं बीजं शक्तिरन्त्यमिष्टार्थे विनियोजनम् ॥ दीप्तफट्हृदयं प्रोक्तं ज्वालाफट् शिर ईरितम् ॥ २५० ॥ शिखा ज्वालामालि फट् च तत्फट् कवचमीरितम् ॥ हन फणेत्रमुद्दिष्टं सर्वज्वालिनि फट् परम् ॥ २५१ ॥ एभिर्मन्त्रैः षडङ्गानि जातियुक्तानि कल्पयेत्॥ध्यायेच्चण्डेश्वरं रक्तं त्रिनेत्रं रक्तवाससम्॥२५२॥चन्द्रमौलिं च बिभ्राणं शूल टंकं कमण्डलुम् ॥ स्फटिकस्रजमाबद्धजटाजूटं सनागकम् ॥ २५३ ॥ शैवे पीठे यजेद्देवं गायत्र्यावाहनं मतम् ॥ षष्ठस्वरो बिन्दुयुक्तो ङेन्तश्चण्डेश्वरः सुहृत् ॥ २५४ ॥ पूजामन्त्रोस्याष्टवर्णो यजेदङ्गानि पूर्ववत् ॥ दलेषु मातरः पूज्या वीथ्यां लोकेशहेतयः॥यन्त्रपूजाविधिस्तस्य चैवमेव समीरितः॥२५५॥ चण्डेश्वराय विद्महे चण्डचण्डाय धीमहि॥तन्नश्चण्डः प्रचोदयात् ॥ २५६ ॥ इत्येवं चण्डगायत्रीमन्त्रं लक्षत्रयं जपेत्॥सतिलैस्तण्डुलैर्होमस्त्रिमध्वक्तैर्दशांशतः ॥ २५७ ॥ राजवृक्षसमिद्भिर्वा तर्पणादि ततश्चरेत् ॥ एवं सिद्धमनुर्मन्त्री प्रयोगानाचरेत्तदा ॥ २५८ ॥ शालिपिष्टमयीं कृत्वा पुत्तलीं प्राणसंयुताम् ॥ देवकाष्ठैरेधितेग्नौ सम्यक्त्रिमधुरप्लुताम्॥२५९॥दक्षिणांगुष्ठमारभ्य पुंसाश्छित्वा पृथक् पृथक् ॥ जुहुयाद्वामपादादि योषितश्चापि संहुनेत् ॥ २६० ॥ एवं होमो द्विजादीनां वशकृन्नात्र संशयः ॥ यो मर्त्योनुदिनं पुष्पैर्हुनेदष्टोत्तरं शतम् ॥ २६१ ॥ सप्ताहं तदवश्यं हि प्राप्नुयाद्यश्च तर्पयेत् ॥ मनुनानेन च शिवं चतुर्मासाल्लभेच्छ्रियम् ॥ २६२ ॥ साध्यनक्षत्र[illegible]ः [illegible]त्तलीं प्राणसंयुताम् ॥ स्पृशेत्तां च जपेत्पश्चात्पूजयित्वा हुनेन्निशि ॥ २६३ ॥ नारीं नरं वा वशयेद्यावज्जीवं न संशयः ॥ पञ्चाक्षरप्रयोगांश्च मनुनानेन साधयेत् ॥ ॥२६४॥ अथ वक्ष्ये भैरवस्य शक्तेर्बन्ध्याः परं मनुम् ॥ या बन्धयति पापिष्ठान्स्वभक्तान्मोचयेदघात् ॥ यस्याः प्रभावतः काश्यां भैरवोस्त्यधिकारवान् ॥ ॥ २६५ ॥ तारो हिलियुगं देवी बन्दी ङेतो नमोन्तकः ॥ एकादशाक्षरो मंत्रो भैरवोस्य मुनिर्मतः ॥ २६६ ॥ त्रिष्टुप्छन्दोस्य देवी स्याद्भूद्विद्विद्विद्विनेत्रकैः ॥ षडङ्गानि ततो ध्यायेद्रत्नसिंहासने स्थिताम् ॥२६७॥ मेघश्यामां

सुधाकुम्भमभयं दधतीं स्मरेत् ॥ एकवीरोदिते पीठे यजेद्बन्धनमुक्तये॥ २६८॥
अङ्गपूजां केशरेषु यजेत्पत्रेषु सत्तमः ॥ कालीं तारां भगवतीं ततः कुब्जां
च शीतलाम् ॥ २६९ ॥ त्रिपुरां मातृकां लक्ष्मीं भूपुरे तु दिगीश्वरान् ॥
अग्रवीथ्यामायुधानि बन्दीमेवं समर्चयेत् ॥ २७० ॥ लक्षद्वयं जपेन्मन्त्रं
पायसान्नैर्हुनेत्तथा ॥ विधाय तर्प्पणाद्यं च प्रयोगानाचरेत्ततः ॥ २७१ ॥
एकविंशतिघस्रान्तमयुतं प्रत्यहं जपेत्॥ ब्रह्मचर्य्यरतो मन्त्री गणेशार्चनपूर्वकम्॥
॥ २७२ ॥ कारागृहनिबद्धस्य मोक्ष एवं कृते भवेत् ॥ अपूपोपरि
संलेख्यं घृतेन चतुरस्रकम् ॥ २७३ ॥ तस्य मध्ये ठकारं तु लिखेत्तदुदरे
तथा॥ अमुकं मोचयेत्येवं दिक्षु ह्रींकारमालिखेत् ॥ २७४ ॥ चतुरस्रं पुनस्तच्च
मन्त्रेणानेन वेष्टयेत् ॥ वाङ्माया श्रीबन्दि अमुकेति बन्धपदं वदेत् ॥ मोक्षं
कुरुयुगं स्वाहा धृतिवर्णो मनुः स्मृतः ॥ २७५ ॥ तस्मिन्नपूपे सम्पूज्य
बन्दीमावरणान्विताम् ॥ कारानिकेतनस्थाय प्रदद्यात्सुहृदे च तम् ॥ २७६॥
स शुद्धो वाग्यतो भत्वा भक्षयेत्तमपूपकम् ॥ तस्मिन्संभक्षिते बद्धो मच्यते
बन्धनाद्द्रुतम्॥ २७७॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि कार्तिकेयमनुं परम् ॥ वं वह्नये
नमश्चेति तारादिः सप्तवर्णवान् ॥ २७८॥ ब्रह्मा मुनिश्च गायत्री छन्दो देवो
गुहः स्मृतः ॥ हृच्छक्तिस्तारको बीजं सताराणैः षडङ्गकम् ॥ २७९ ॥
ध्येयो देवो गुहः शक्तिं कुक्कुटाक्षवरान्दधत् ॥ रक्तो रक्तांशुको रक्तप्रवराकल्प-
भषितः ॥ २८० ॥ प्रथमावृत्तिरङ्गैः स्यात्षड्दलेष्टदले पुनः ॥ जयन्तश्चाग्निके-
शश्च कृत्तिकापुत्र एव च ॥ २८१ ॥ भूतः पतिश्च सेनानी गुहो हरण्य-
शूलकः ॥ चित्राक्षो भूपुरे शक्रादिकपूजा प्रकीर्त्तिता ॥ २८२॥ पुरश्चर्य्यायुतं
प्रोक्ता घृतहोमो दशांशतः ॥ तर्प्पणाद्यैर्मनुः सिद्धः श्रीरक्षाजयपुत्रदः ॥
॥ २८३ ॥ अथ वक्ष्ये महेशस्य वस्त्रप्रक्षालिका तु या ॥ शीतलेति च
विख्याता तस्या मन्त्रं सुसिद्धिदम् ॥ २८४ ॥ तारो माया रमा शीत-
लायै हृच्च नवाक्षरः ॥ उपमन्युर्मुनिश्छन्दो बृहती शीतला सुरी ॥ २८५ ॥
षड्दीर्घयुग्भिर्लक्ष्म्याश्च बीजाभ्यां स्यात्षडङ्गकम् ॥ ध्यायेच्च शीतलां देवीं
रासभस्थां दिगम्बराम् ॥ २८६ ॥ मार्जनीशूर्प्पहस्तां च रक्तपुष्पहिमार्चि-

ताम् ॥ तैलादिमलसंयुक्तवस्त्रपोटलिशीर्षिकाम् ॥ २८७ ॥ त्रिकोणान्तर्यजेद्देवीं कोद्रवां च मसूरिकाम् ॥ शराविकां च कोणेषु भूपुरे त्वष्टभैरवान् ॥ ॥ २८८ ॥ अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं पायसेन दशांशतः ॥ हुत्वा कृत्वा तर्प्पणादि मन्त्री सिद्धः प्रजायते ॥ २८९ ॥ नाभिमात्रे जले स्थित्वा यः सहस्रं जपेन्मनुम् ॥ तेन सम्मार्जिताश्चैव स्फोटा नश्यन्ति तत्क्षणात् ॥ २९० ॥ साधितो येन मन्त्रोयं तस्य वंशे न शीतला ॥ तेनाभिमन्त्रितं भस्म यद्गृहे तत्र सा न हि ॥ २९१ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि भर्त्तुरस्याः परं मनुम् ॥ तारः प्रासादबीजं यं वं व्योमव्यापिने द्विठः[1] ॥ २९२ ॥ एकादशार्णो मन्त्रोयं न्यासध्यानजपादिकम् ॥ प्रासादमन्त्रवज्ज्ञेयमर्घलक्षं पुरस्कृतिः ॥ दशांशं जुहुयादाज्यैस्तर्प्पणादि ततश्चरेत् ॥ २९३ ॥ सिद्धमन्त्रेणौषधं तु दशवाराभिमन्त्रितम् ॥ यथोक्तगुणतामेति निर्वीर्य्यमपि नान्यथा ॥ २९४ ॥ अथ वानेन जपितं यदेकादश वारकान् ॥ रोगिभ्यो भेषजं दत्तं तत्तत्पूर्णगुणं भवेत् ॥ ॥ २९५ ॥ प्रातःकाले समुत्थायोदकमेकादशावधि ॥ मन्त्रयित्वा पिबेन्मन्त्रैः प्रत्यहं द्वादशाब्दकम् ॥ वलीपलितनिर्मुक्तो जीवेद्वर्षशतं युवा ॥ ॥ २९६ ॥ त्रिवर्षाच्च महारोगाः कुष्ठाद्या यान्ति संक्षयम् ॥ जले चैकादशाहेन रोगहृज्जायते मनुः ॥ २९७ ॥ अथ वक्ष्ये लघुश्यामामन्त्रं तं भैरवप्रियम् ॥ [2]नेम उच्छिष्टचाण्डालि मातङ्गि प्रवदेत्ततः ॥ सर्ववशङ्करे स्वाहा वाग्बीजाद्यो नखार्णकः ॥ २९८ ॥ मदनोस्य मुनिश्छन्दो गायत्री निवृतादिका ॥ देवता तु लघुश्यामा वाग्बीजं बीजमुच्यते ॥ २९९ ॥ स्वाहा शक्तिर्नियोगस्तु निखिलाभीष्टसाधने ॥ वाक्पूर्विकां रतिं मूर्ध्नि प्रीतिं मायादिकां हृदि ॥ ॥ ३०० ॥ पादयोर्विन्यसेन्मन्त्री कामपूर्वां मनोभवाम् ॥ इच्छाशक्तिं ज्ञानशक्तिं क्रियाशक्तिं क्रमान्न्यसेत् ॥ ३०१ ॥ वाङ्मायाकामबीजाद्यां मुखे कण्ठां सदेशके ॥ द्रां द्रावणं न्यसेच्छीर्षे द्रां च शोषणमास्यके ॥ ३०२ ॥ क्लीं तापनं हृदि न्यस्य ब्लूं संमोहनमिन्द्रिये ॥ स उत्पादनकं पादे ततः कुर्य्यात्षडङ्गकम् ॥ ३०३ ॥ रामाग्निगुणरामाङ्गनेत्रवर्णैर्मनुस्थितैः ॥ आंक्षा

१ स्वाहाद्वयम् ॥ २ ऐंनमः उच्छिष्टचाण्डालिमातंगि सर्ववशंकरिस्वाहा ॥

ब्राह्मीकन्यकायै नमोमूर्ध्नि प्रविन्यसेत् ॥ ३०४ ॥ ईलां महेश्वरीकन्यकायै वामांसके नमः ॥ कूंहां कौमारीकन्यकायै नमो दक्षांसके न्यसेत् ॥३०५॥ ॐ वाराहीकन्यकायै वामे पार्श्वे च विन्यसेत् ॥ ॐ सां चेन्द्राणीकन्यायै नमो दक्षिणपार्श्वके ॥ ३०६ ॥ ॐ चां चामुण्डाकन्यायै नमश्च ककुदि न्यसेत् ॥ अः लामुक्ता महालक्ष्मीकन्यायै च नमो हृदि ॥ ३०७ ॥ तार-वागादिका अष्टौ सिद्धीश्च कन्यकान्तिमाः ॥ चतुर्थस्वरसंयुक्ता न्यसेच्छीर्षल-लाटयोः॥भ्रूमध्ये कण्ठहृन्नाभिमूलाधारांतरेषु च॥३०८॥अणिमा महिमा चैव गरिमा लघिमा तथा ॥ वशिता चाथ प्राकाम्यं प्राप्तिरित्यष्टसिद्धयः॥३०९॥ कामाद्या कन्यकाः प्रोक्ता अष्टावप्सरसो न्यसेत्॥के भाले नेत्रयोर्वक्त्रे कर्णयोः ककुदि ध्रुवम्॥३१०॥ उर्वशीं मेनकां रम्भां घृताचीं पुञ्जिकस्थलाम्॥सुकेशीं मञ्जुघोषां च महारङ्गवतीं तथा ॥ ३११ ॥ यक्षगन्धर्वसिद्धानां कन्य-का नरनागयोः ॥ विद्याधरकिम्पुरुषपिशाचानां क्रमेण च ॥ ३१२ ॥ अंसयोर्हृदये न्यस्य स्तनयोर्जठरे तथा ॥ गुह्ये चाधारदेशे च क्लीमाद्याश्च नमोन्तकाः ॥ ३१३ ॥ ताराद्यान्नमसा युक्तान्मूलवर्णान्सबिन्दुकान् ॥ न्यसेत्सन्धिषु साग्रेषु करयोः पादयोरपि ॥ ३१४ ॥ अंसश्च कूर्परश्चैव मणिबन्धोंगुलीतलम् ॥ करस्य सन्धयश्चैते स्फिग्जानु च ततो भवेत् ॥ ॥ ३१५ ॥ गुल्फमंगुलिमूलं च चत्वारः पादसन्धयः ॥ न्यासानेवं विधा-न्कृत्वा लघुश्यामां ततः स्मरेत् ॥ ३१६ ॥ सुधार्णवान्तर्द्वीपस्थरत्नम-न्दिरमध्यगाम् ॥ माणिक्याभरणां स्मेरां नीलोत्पलनिभाम्बराम् ॥ ३१७ ॥ अलक्तैर्लिप्तपादाब्जां वीणावादनतत्पराम् ॥ त्र्यक्षां ताम्बूलपूर्णास्यां स्मरेच्च शशिशेखराम् ॥ ३१८ ॥ मातङ्गीं प्रोदिते पीठे लघुश्यामां प्रपूजयेत् ॥ त्रिकोणे पञ्चकोणेषु दले षोडशपत्रके ॥ ३१९ ॥ वेदद्वारधरागेहावृतेऽग्न्या-दिककोणके ॥ इच्छाज्ञानक्रियाशक्तीस्तदग्रे बाणपञ्चकम् ॥ ३२० ॥ केशरेष्वङ्गदेवांश्च ब्राह्म्याद्याश्चाष्टपत्रके ॥ अणिमाद्याश्च यन्त्राग्रे यजे-त्षोडशपत्रके ॥ ३२१ ॥ उर्वश्याद्याश्च कन्याश्च चतुर्दिक्षु च भूगृहे ॥ गजाननां सिंहमुखीं गृध्रास्यां काकतुण्डिकाम् ॥ ३२२ ॥ उष्ट्रग्रीवां

हयग्रीवां वाराहीं शरभाननाम् ॥ उलकीं च शिवारावां मयूरीं विकटाननाम् ॥ ३२३ ॥ अष्टवक्त्रीं कोटराक्षीं वक्रां विकटलोचनाम् ॥ समर्चयेद्दिशि प्राच्यामेताः षोडश योगिनीः ॥ ३२४ ॥ शुष्कोदरी ललज्जिह्वा श्वदंष्ट्रा वानरानना ॥ त्र्यक्षा च केकराक्षी च बृहत्तुण्डा सुराप्रिया ॥ ॥ ३२५ ॥ कपालहस्ता रक्ताक्षी शुकी श्येनी कपोतिका ॥ पाशहस्ता दण्डहस्ता प्रचण्डेति च दक्षिणे ॥ ३२६ ॥ पूज्याश्चाथ प्रतीच्यां तु दश चण्डविधिक्रमैः ॥ शिशुघ्नी पापहन्त्री च काली रुधिरपायिनी ॥ ॥ ३२७ ॥ वसाधया गर्भभक्षा शवहस्तान्त्रमालिनी ॥ शूलकेशी बृहत्कुक्षी सर्प्पास्या प्रेतवाहिनी ॥ ३२८ ॥ दन्दशूककरा क्रौञ्ची भूतरम्या वृषानना ॥ व्याघ्रास्या भीमनिःश्वासा व्योमैकचरणार्धदृक् ॥ ३२९ ॥ लापिनी शेषिणी दृष्टिः कातरा स्थूलनासिका ॥ विद्युत्प्रभा बलाकास्या मार्ज्जारी कटिलानना ॥ ३३० ॥ अट्टाट्टहासा कामाक्षी श्वसमानश्रुतिस्तथा ॥ क्रमाड्डाकिन्य एताश्च पूज्या वह्न्यादिकोणके ॥ ३३१ ॥ स्वस्वमन्त्रेण बटुकं गणेशं क्षेत्रपालकम् ॥ दुर्गां तद्बहिरिन्द्रादीन्वज्रादीन्यपि पूजयेत् ॥ ३३२ ॥ चतुर्द्वारेषु वाद्यानि तन्वानानि धानिंधनम् ॥ सुचिरं चेति पूजोक्ता द्वादशावरणैरियम् ॥ ३३३ ॥ सर्वासांसम्पदां पाता चैतदाराधको भवेत् ॥ मातङ्गीमन्त्रसम्प्रोक्ताः प्रयोगाश्चात्र कीर्तिताः ॥ ॥ ३३४ ॥ अथ वक्ष्यामि गायत्रीं प्रोक्षयेदनयाखिलम् ॥ यागद्रव्यं च भूपालस्तद्वशे राजपुत्रकाः ॥ ३३५ ॥ भवन्ति वशगास्तस्य येन गायत्र्युपासिता ॥ देवीवन्माननीयाश्च स्त्रियो निन्द्या न जातुचित् ॥ ३३६ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि पञ्चकामेश्वरीमनुम् ॥ कामस्य बाणबीजानां मन्त्रोयं परिकीर्तितः ॥ ३३७ ॥ ऋषिः सम्मोहनश्छन्दो गायत्री देवता भवेत् ॥ बाणेशी सर्वव्यस्तेन मनुनोक्तं षडङ्गकम् ॥ ३३८ ॥ मूर्ध्नि पादे मुखे गुह्ये हृदये पञ्च देवताः ॥ न्यस्तव्याः पञ्चवज्राद्या द्रावणी क्षोभणी तथा ॥ ३३९ ॥ वशकारिण्याकार्षिण्यौ सम्मोहिन्यपि पञ्चमी ॥ अरुणा रक्तवसना नानारत्नैरलंकृता ॥ बाणान्धनुः सृणिं पाशं हस्तैस्सन्दधतीर्भजे ॥ ३४० ॥

मोहिनी क्षोभिणी श्यामा स्तम्भिन्याकर्षिणी तथा ॥ द्राविणी ह्लादिनी क्लिन्ना क्लेदिनी पीठशक्तयः ॥ बाणेशीयोगपीठाय नमो मूलादिको मनुः ॥ ३४१ ॥ दत्त्वानेनासनं मन्त्री तस्मिन्देवीं प्रपूजयेत् ॥ आदौ षडङ्गान्याराध्य दिक्ष्वग्रे द्राविणीमुखाः ॥ ३४२ ॥ दलेष्वनङ्गरूपा स्यादनङ्गमदना तथा ॥ अनङ्गमन्मथानङ्गकुसुमा मदनातुरा ॥ ३४३ ॥ अनङ्गाद्या तथानङ्गनिशितानङ्गमेखला ॥ अनङ्गभूमिका भूमिपुरे दिक्पाश्च सायुधाः ॥ ३४४ ॥ पञ्चलक्षं जपेन्मन्त्रं हुनेदाज्यं दशांशतः ॥ तर्प्पणादि ततः कृत्वा प्रयोगार्हो मनुर्भवेत् ॥ ३४५ ॥ दधियुक्तैरशोकस्य पुष्पैर्वा दिवसत्रयम् ॥ सहस्रं जुहुयात्तस्य वश्याः स्युः प्राणिनोखिलाः ॥ ॥ ३४६ ॥ लाजैर्दधियुतैर्मन्त्री होमात्कन्यामवाप्नुयात् ॥ कन्यापि वशमायाति मासद्वितयमध्यतः ॥ ३४७ ॥ गव्याज्येन ससम्पातं हुत्वा चाष्टशतं ततः ॥ आज्यं सम्पातितं दद्यात्स्त्रियै संपाद्य तत्त्विदम् ॥ ३४८ ॥ सा तदाज्यं कान्तभावं भावयित्वा वशं नयेत् ॥ सुगन्धकुसुमैर्हुत्वा धनमाप्नोति वाञ्छितम् ॥ ३४९ ॥ अथ वक्ष्ये रुद्रशीर्षनिवासिन्याः परं मनुम् ॥ तारो नमः शिवायै च नारायण्यै पदं वदेत् ॥ ४५० ॥ दशहरायै गङ्गायै स्वाहान्तो विंशदर्णकः ॥ व्यासो मुनिः कृतिश्छन्दो देवी गङ्गा प्रकीर्त्तिता ॥ ३५१ ॥ त्रिवह्निवेदबाणाग्निनेत्रवर्णैः षडङ्गकम् ॥ चतुर्भुजां त्रिनेत्रां च सर्वाभरण भूषिताम् ॥ ३५२ ॥ रत्नकुम्भसिताम्भोजवराभयलसत्कराम् ॥ चामरैर्वीज्यमानां च श्वेतच्छत्रोपशोभिताम् ॥ ३५३ ॥ लक्षं जपेद्दशांशेन जुहुयात्सघृतैस्तिलैः ॥ जयादिशक्तिभिर्युक्ते पीठे भागीरथीं यजेत् ॥ ३५४ ॥ पूजयेत्केशरेष्वङ्गं दले रुद्रं हरिं विधिम् ॥ सूर्य्यं हिमाचलं मेना भगीरथमपां पतिम् ॥ ३५५ ॥ दलाग्रतो मीनकूर्ममण्डूकमकरानपि ॥ हंसान्कारण्डवांश्चक्रवाकान्सारसकान्यजेत् ॥ ३५६ ॥ चतुरस्रे शक्रमुख्यानायुधैः संयुतान्यजेत् ॥ एवं संसाधितो मन्त्रोभीष्टं यच्छति मन्त्रिणे ॥ ३५७ ॥ ज्येष्ठशुक्लदशम्यां तु विशेषेण भजेद्बुधः ॥ दद्याद्दशभ्यो विप्रेभ्यो दशप्रस्थमितांस्तिलान् ॥ ३५८ ॥ जप्त्वा सहस्रं हुत्वा च तथोपोष्य विक-

ल्मषः ॥ सर्वभोगसमायुक्तो जायते मानवो भुवि ॥ ३५९ ॥ गङ्गातीरे वर्णलक्षं जपित्वाऽजानि होमयेत् ॥ श्रीबीजपूर्वमनुना तस्य श्रीः सर्वतोमुखी ॥ ३६० ॥ जपित्वैवं पक्वबिल्वैर्हुत्वा वश्यं जगद्भवेत् ॥ तिलैर्हुत्वा दहेत्पापं दूर्वाभिश्च महागदान् ॥ ३६१ ॥ ताम्बूलहोमादाप्नोति भोगान्नृपतिदुर्ल्लभान् ॥ अर्चयित्वा तु यो गङ्गां तुलसीमंजरीं क्षिपेत् ॥ ३६२ ॥ मन्त्रं पठित्वा लक्षैकमेकान्ते स्थिरमानसः ॥ गंगाप्रवाहवत्तस्य स्याद्वाग्भूतिविजृम्भिता ॥३६३॥ अथान्यं सम्प्रवक्ष्यामिवामाचाराघनाशनम् ॥ बहिर्यजनकर्त्तारः सिद्धाः स्युर्यत्प्रभावतः ॥ ३६४ ॥ तारो नमो भगवति वाग्भवं च लिहिद्वयम् ॥ हिलिद्वयं च गंगे मां पावयद्वितयं वदेत् ॥ ३६५ ॥ स्वाहान्तः सप्तविंशार्णो मनुः पापप्रणाशनः ॥ ईश्वरोस्य मुनिश्छन्दोमितं गंगा च देवता ॥ रामवेदेषुसप्तांगनेत्रार्णैरंगकल्पनम् ॥ ३६६ ॥ रक्ताम्बरां रक्तवर्णां शूलकुम्भवराभयान्॥ करैः सन्दधतीं स्मेरां कच्छपस्थां सुरादिभिः ॥ सदैव सर्वपापस्य नाशाय सुनिषेविताम् ॥ ३६७ ॥ कर्णिकायां यजेद्देवीं षडस्रेष्वङ्गपूजनम् ॥ ततोऽष्टास्रे तु कावेरीं यमुनां गण्डकीमपि ॥ ॥३६८॥ कौशिकीं च समभ्यर्च्य तद्वद्द्वात्यदलेषु च ॥ सुरासिन्धुमासवाब्धिं दुग्धसिन्धुं मधूद्भवम् ॥३६९॥दधिसिन्धुं चाज्यसिन्धुं मद्यसिन्धुमिराभवम् ॥ धातुसिन्धुं रत्नसिन्धुं सिन्धुमिक्षुरसोद्भवम् ॥ माध्वीसिन्धुं क्षारसिन्धुं सुधायाः सिन्धुमुद्भवम् ॥ ३७० ॥ दिगीश्वरान्भूपुरे च पूजितैवं सारिद्वरा ॥ अलोभाद्वाममार्गेपि कृतं पापं विनाशयेत् ॥ ३७१ ॥ वर्णलक्षं जपद्धोमः पद्मैः प्रोक्तो दशांशतः ॥ एवंसिद्धमनुर्मन्त्री मर्वादिनिर्जलस्थले ॥ ३७२ ॥ देशे गत्वा जलार्थं तु पुरश्चर्य्यां समाचरेत् ॥ होमादि सर्वं निर्वर्त्य गंगामावाहयेत्ततः ॥ ३७३ ॥ तत्र कूपादिकं कृत्वा भवेत्तदमृतोपमम् ॥ कल्पस्थापिततोयौघं समस्तगदनाशनम् ॥ ३७४ ॥ इयमादिमसप्तार्णहीना स्याच्च नखाक्षरी ॥ प्राग्वन्मुन्यादिकं बाणवेदत्रित्रित्रिबाहुभिः ॥ ३७५ ॥ मन्त्रार्णैः स्युः षडंगानि पुरश्चर्य्या तु लक्षकम् ॥ होमद्रव्यादिकं प्राग्वत्सिद्धमन्त्रः समाचरेत् ॥ ३७६ ॥ प्रयोगाञ्जलमध्ये

तु स्थित्वा जप्त्वायुतम्मनुम् ॥ ग्यहादवर्षाकालेपि वृष्टिर्भवति भूयसी ॥ ॥ ३७७ ॥ अयुतं च मनुं जप्त्वा सहस्रैर्जलजैर्हुनेत् ॥ सम्पाताज्यं पिबेद्या स्त्री गौर्वा क्षीरनिधिर्भवेत् ॥ ३७८ ॥ अनेन मन्त्रितं तोयं वर्षमेकं पिबेत्तु या ॥ तस्याः पुत्राः प्रजायन्ते भीष्मतुल्यपराक्रमाः ॥ ॥ ३७९ ॥ एतन्मन्त्रजपासक्तः पादतीर्थं क्षिपेद्धृदि ॥ भूताविष्टस्य तत्कालं मुक्तो भवति नान्यथा ॥ ३८० ॥ तारो हिलिमिलिद्वन्द्वं गङ्गे देवि नमो मनुः ॥ तिथिवर्णोस्य मुन्यादिपूजा पूर्ववदीरिता ॥ ३८१॥ त्रिद्विद्व्यक्षिकृतद्व्यर्णैः षडङ्गविधिरीरितः॥एतस्य भजनाज्जन्तोर्नातीर्थे मरणम्भवेत् ॥ ३८२ ॥ तारो लज्जा रमा हार्दं ततो भगवतीपदम् ॥ सम्बुद्धौ गङ्गदयिते नमो वर्म तथास्त्रकम् ॥ ३८३॥ अष्टादशार्णो मन्त्रोयम्मुन्याद्यम्पूर्ववन्मतम् ॥ जपादिना सिद्धमन्त्रः प्रयोगानाचरेदथ ॥ ३८४ ॥ पुत्रजीवफलैर्होमात्पुत्रः शीलयुतो भवेत् ॥ गुडूच्या रोगनाशः स्याद्रमा पद्मादिहोमतः ॥ ३८५ ॥ लक्ष्मीप्राप्तिः श्रीफलैश्च सर्षपैरभिचारकः ॥ जातीप्रसूनैर्वश्यं स्याज्जपापुष्पैर्जयो भवेत् ॥ ३८६ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि वाङ्मत्याश्च मनुद्वयम्॥वाग्बीजं प्रथमं ह्यत्र नारदोस्य मनोर्मुनिः॥ ३८७॥ छन्दोनुष्टुब्देवतात्र वाङ्मयी परिकीर्तिता॥बीजपूर्वैश्च षड्दीर्घैःषडङ्गविधि रीरितः॥ ३८८॥ श्वेताम्बरां श्वेतवर्णां श्वेतगन्धानुलेपनाम्॥ सुधाकुम्भं च पद्मं च वीणां पुस्तकमेवच ॥ करैर्दधानां मीनस्थां मुक्ताभरणभूषिताम् ॥ ३८९॥ एवं ध्यात्वा कर्णिकायां यजेद्देवीं षडस्रके॥ रुद्रधारां मतिमतीं फल्गुं विष्णुमतीं तथा ॥ प्रभावतीं भानुमतीं भूपुरे तु दिगीश्वरान् ॥ ३९० ॥ लक्षत्रयं जपेन्मन्त्रं पञ्चखाद्यैस्तथा हुनेत् ॥ तर्पणादि ततः कृत्वा सिद्धमन्त्रः प्रजायते॥ ३९१॥ सद्योजातस्यबालस्य जिह्वायां बीजमालिखेत् ॥ मधुना स्वर्णलेखन्या सोष्टवर्षः कविर्भवेत् ॥ ३९२॥ वाङ्मत्यां वाथ गङ्गायां पुरश्चर्यां करोति यः॥ द्वितीयादप्रतिग्राही भिक्षाशी वाथ मौनवान् ॥ ३९३ ॥ ब्रह्मचारी भूमिशायी श्वेताम्बरधरः शुचिः ॥ वाक्सिद्धिं लभतेवश्यं दाता भोक्ता त्वयाचकः ॥ ३९४॥

रमात्रपावाग्बीजानि वदेन्ङेन्तां च वाङ्मतीम् ॥ नमो ममेति च पदं धारणां च धियन्तथा ॥ ३९५ ॥ वाचं गुणान्प्रदेहीति स्वाहान्तस्तत्त्ववर्णकः ॥ मुन्यादिकन्तथा पूजा पुरश्चर्य्या च पूर्ववत् ॥ ३९६ ॥ स्खलज्जिह्वमनुष्यस्य जिह्वायां तुलसीदलैः ॥ वचाकल्केन मन्त्रं तु लिखित्वा भानुवासरे ॥ ३९७ ॥ हविष्यमन्नम्भुञ्जीत मौनी लवणवर्ज्जितम् ॥ सप्तभिर्भानुवारैश्च साक्षात्स्याद्धिषणोपमः ॥ ३९८ ॥ अश्रुतग्रन्थबोधाय ब्रह्मचारी जितेन्द्रियः॥रवौ तु पायसे मन्त्रं लिखेत्स्वर्णशलाकया ॥३९९॥तदेव पायसं भुक्त्वा ध्यात्वा देवीं स्वपेन्निशि॥स्वप्ने तमर्थं शृणुयात्प्रातर्बीजं स्वयं स्मरेत् ४००॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामिमाणिकर्णीमनुद्वयम् ॥तारो वाग्ह्रीं रमाकामस्तारो मं मणि कर्णिके ॥ ४०१ ॥ नमोन्तश्शक्रवर्णोयं मनुः परमदुर्लभः ॥मुनिर्व्यासोतिशक्करी छन्दः स्यान्मणिकर्णिका ॥ ४०२ ॥ देवता चन्द्रनेत्राक्षिद्वीषुद्व्यर्णैः षडङ्गकम् ॥ बीजपूरं दक्षहस्ते वामे चेन्दीवरस्रजम् ॥ ४०३ ॥ बद्धाञ्जलिः श्वेतवस्त्रा त्र्यक्षा चन्द्रनिभानना ॥ पश्चिमाभिमुखी स्मेरापद्मस्था पद्ममालिका॥ ॥४०४॥ नानाभरणभूषाढ्या ध्येया श्रीमाणिकर्णिका ॥ लक्षत्रयं जपेन्मन्त्रं जुहुयात्तद्दशांशतः ॥ ४०५ ॥ पुण्डरीकैरुक्तयंत्रे यजेत्तां गङ्गया समम् ॥ आवाह्य कलशे देवीं पूजयेदयुतं जपेत् ॥ ४०६ ॥ जपन्कारागृहस्थो वा स्यात्प्रसूतिविरोधिनी ॥ पायसं भक्षयेन्मुक्ती रोगपीडा च नश्यति ॥४०७॥ भूतप्रेतपिशाचानां मोक्षदं परमोमतः॥भुक्तिमुक्तिप्रदो मन्त्रो धनधान्यसमृद्धिदः॥ वंशवृद्धिकरः प्रोक्तः काशीवासप्रदायकः ॥ ४०८ ॥ तारो मं मणिशब्दान्ते कर्णिके प्रणवात्मिके ॥ नमश्चतुर्दशार्णोयं मुन्याद्यं पूर्ववन्मतम् ॥ ४०९ ॥ पदैः सम्पूर्णमन्त्रेण षडङ्गविधिरीरितः ॥ ऐंश्रीं मेकलकन्यायै नर्मदायै हृदादिकम् ॥४१०॥ सोमोद्भवायै देवापगायै हृदयपूर्वकम् ॥ हृदादिषु प्रकल्पायै हृदयं देववर्णकः ॥ ४११ ॥ भृग्वृर्षिरमितं छन्दो देवता नर्मदा मता ॥ ङेन्तैः पृथक् पञ्चपदैः समस्तैरङ्गकल्पनम् ॥ ४१२ ॥ कनकाभां कच्छपस्थां त्रिनेत्रां बहुभूषणाम् ॥ पद्माभयसुधाकुम्भवरायान्बिभ्रतीं

करैः ॥ ४१३ ॥ मध्ये देवीं षड्दलेषु षडङ्गानि प्रपूजयेत् ॥ घोणां ज्योतिष्मतीं चापि वामदक्षिणतो यजेत् ॥ ४१४ ॥ इन्द्रादयो दिगीशाश्च पूज्याभूपुरवीथिषु ॥ लक्षं जपेद्धुनेद्यो वै भुक्तिंमुक्ति ततो भजेत् ॥ ४१५ ॥

इति श्रीमहामायामहाकालानुमते मेरुतन्त्रे शिवप्रणीते भैरवादि-
मनुकथनं नाम द्वाविंशः प्रकाशः ॥ २२ ॥

---

श्रीदेव्युवाच ॥ राज्ञां भाग्यवतां देव यैश्च रक्षाभिजायते॥ दुर्ग्रहाश्च यथा दुःखं दातुं शक्तानाविद्विषः॥ १ ॥ कथंस्यात्स्थिरसम्पत्तिःसन्ततिश्च कथं क्रिया॥ साधकैस्तु प्रकर्तव्या कथं सिद्धिः प्रजायते ॥ २ ॥ ईश्वर उवाच ॥ अथ यन्त्रविधिं वक्ष्ये सर्वतन्त्रेषु गोपितम् ॥ सिद्धस्य लेखनादेव यन्त्रसिद्धिः प्रजायते ॥ ३ ॥ न भावि यत्र कार्य्यं तु सिद्धं चापि तदा भवेत् ॥ दुःस्वप्नदर्शनं पूर्वं तदा यन्त्रन्न कारयेत् ॥ ४ ॥ साधकस्य शुभे घस्रे समाराध्येष्टदेवताम् ॥ स्वप्यात्रिदिवसं भूमौ हविष्याशी जपेत्ततः ॥ ५ ॥ एतद्यन्त्रं करिष्यामि मम तत्कीदृशं प्रभो ॥ स्वप्ने वदेत्तु देवेशस्तदङ्गत्वेन पूजनम् ॥ कृत्वा प्रदोषसमये लिखेत्त्रिदिवसं भुवि ॥ ६ ॥ तृतीयदिवसे रात्रौ यथा स्वप्नः प्रजायते ॥ तथैवाज्ञां गृहीत्वा तु सत्स्वप्नो वा लिखेद्बुधः ॥ ७ ॥ अस्वप्ने वाथ सुस्वप्ने नैव कुर्य्याल्लिखेन्न तत् ॥ जीवसंस्थापनं यन्त्रे कुर्य्याद्येन फलं लभेत् ॥ ८ ॥ षष्ठ्यन्तं साधकपदं मध्ये बीजार्णयोर्लिखेत् ॥ द्वितीयान्तं साध्यमध्ये कुरुद्वन्द्वं च पार्श्वयोः ॥ ९ ॥ हंसो यन्त्रस्य बीजं स्यान्मध्यभागादधो लिखेत् ॥ हंसः सोहं मनोरस्य लिखेदेकैकमक्षरम् ॥ १० ॥ ईशानादिषु कोणेषु दक्षपार्श्वे च ईद्वयम् ॥ ठद्वयं वामपार्श्वे च लिखेत्पूर्वादितः क्रमात् ॥ ११ ॥ लंनंमंक्षं तथा वंयंसंहं पूर्वादिके लिखेत् ॥ ईशानसोमयोर्मध्ये आंह्रीं वायव्यसोमयोः ॥ एवं दिक्पालबीजानि विन्यसेद्दिक्षु च क्रमात् ॥ १२ ॥ यन्त्रराजाय विद्महे वरप्रदाय धीमहि ॥ तन्नो यन्त्रम्प्रचोदयात् ॥ १३ ॥ एतस्याः प्रतिकाष्ठायां लिखेद्वर्णत्रयंत्रयम् ॥ बहिः

प्राणप्रतिष्ठाया मन्त्रं सर्वत्र वेषयेत्॥एवन्तु लिखितं यन्त्रं सर्वसिद्धिप्रदायकम्॥ ॥ १४ ॥ स्थूलानुक्तौ भूर्जपत्रे क्षौमे वाम्भोजपत्रके॥यन्त्रं सुलिख्य गुटिकां बद्ध्वा सूत्रेण वेष्टयेत् ॥ १५ ॥ लाक्षयाच्छादितं स्वर्णे रौप्ये ताम्रेथ वा क्षिपेत् ॥ यद्देवताकं यन्त्रं स्यात्तद्बीजेन च पूजयेत् ॥ १६ ॥ तदभावे मातृकार्णैर्यन्त्रपूजां समाचरेत् ॥ अष्टोत्तरसहस्रं तु मूलं जप्त्वा हुनेद्घृतम् ॥ ॥ १७ ॥ तत्र पात्रे न संसिक्तं कृत्वा मन्त्रं नियोजयेत् ॥ मूर्ध्नि बाहौ गले वापि तत्तदिष्टार्थसिद्धये ॥ १८ ॥ उपास्या वा भूतलिपिर्यन्त्रसिद्धिविधायिनी॥अक्लेशेनैव सर्वेषां मन्त्राणां सिद्धिमाप्नुयात्॥ १९॥ मन्त्रोद्धारं प्रवक्ष्यामि यंत्रोद्धारं सबिन्दुकम्॥अक्प्रत्याहारमुच्चार्य्य रोंरौंडोंडौं ततो वदेत्॥ २०॥हंयंरंवं ततो लंटंकंखंगंघमिति क्रमात् ॥ वर्गान्त्यमाद्यद्वित्र्यब्धिवर्णान्वर्गचतुष्टये ॥ ॥ २१ ॥ वर्गेषु प्राक्पारं शंखं समेवं द्व्यब्धिवर्णकः ॥ ऋषिः स्याद्दक्षिणामूर्त्तिर्गायत्री छन्द ईरितम् ॥ २२ ॥ वर्णेश्वरी देवतास्य षडङ्गानि समाचरेत् ॥ स्वरहीनैर्हयाव्ध्यश्वैर्मन्त्राणैः पञ्चपञ्चभिः ॥ २३ ॥ गुदे लिङ्ग उरोनाभिकण्ठेषु मध्यकेशयोः ॥ शिरसि ब्रह्मरन्ध्रे च क्रमान्न्यस्या नव स्वराः ॥ २४ ॥ ऊर्ध्वप्राग्दक्षिणेशानपश्चिमेषु मुखेषु च ॥ हंयंटंरंवंलमिति न्यसेद्बीजानि वै क्रमात् ॥ २५ ॥ ततः कराग्रे मूले च कूर्प्परेंगुलिसन्धिषु ॥ दक्षवामक्रमेणैव टादिवर्गं तथादिमम् ॥ २६ ॥ वर्गं न्यसेत्तथा पादाग्रके मूले च जानुनोः॥ तथा सन्धावंगुलीनां गुल्फे सर्गादिनादिकान् ॥ २७ ॥ ठद्वयं पार्श्वयुग्मे च नाभौ पृष्ठे च मादिकान् ॥ गुह्ये हृत्ककुदोर्मध्ये शषसान्विन्यसेत्क्रमात् ॥ २८ ॥ ततो भूतलिपिं ध्यायेत्त्रिनेत्रां चन्द्रशेखराम् ॥ वराक्षमालापद्मानि कपालं बिभ्रतीं करैः ॥ २९ ॥ लक्षं प्रजप्याद्युतं घृतं हुत्वा च तर्प्पयेत् ॥ एवं भूतलिपिः सेव्या यन्त्रसिद्धिः प्रजायते ॥ श्रीविद्याराधने चापि समर्थो जायते नरः ॥ ३० ॥ अथाहं सम्प्रवक्ष्यामि हैरम्बं यन्त्रमुत्तमम् ॥ भूर्जपत्रे लिखेद्यन्त्रं कुंकुमेन मदेन च ॥ ३१ ॥ लिखेद्भूमिगतं मध्ये मुकस्येति तदुत्तरम् ॥ अमुकं चेत्यधः स्थाने वशं कुर्वीति पार्श्वयोः ॥ ३२॥ इत्यादिकं स्वेष्टकर्म्मपदं ज्ञात्वा लिखेद्बुधः ॥ षड्भागे केशराणां गांगींगूंगैं

च गौमिति ॥ ३३ ॥ गश्चेति विलिखेयन्त्रे पूर्वाशादिप्रदाक्षिणम् ॥ हेरम्ब-मालामन्त्रं च गं नमो वह्निगेहिनीम् ॥ ३४ ॥ अँ आं ह्रीं क्रीं नमो ङन्तं सर्वविद्याधिपं वदेत ॥ सर्वार्थसिद्धिदायेति सर्वदुःखपदं वदेत ॥ ३५ ॥ प्रशमनायेह्येहि भगवान्सर्वानुवादय ॥ संक्षोभयद्वयं ह्रींगां नमो ज्वलन-गेहिनी ॥ ३६ ॥ अमां ह्रीमिति मन्त्रोयं प्रोक्तः षट्पञ्चवर्णकः ॥ पद्माद्बहिः प्रकर्त्तव्यं वर्त्तुलद्वितयन्ततः ॥ ३७ ॥ ततः प्रथमवीथ्यां तु लिखेत्स्वा-ग्रात्प्रदक्षिणम् ॥ लक्ष्मीबीजानि परत ऐंबीजेन प्रवेष्टयेत् ॥ ३८ ॥ ततश्च गु-टिकां कृत्वा श्वेतसूत्रेण वेष्टयेत॥ अकृत्वा चाग्निसम्बन्धंतांत्रिलोहे निधापयेत॥ ॥ ३९ ॥ जपादिमालामन्त्रस्य कुर्य्याद्धेरम्बयन्त्रवत ॥ अमितं छन्द इत्युक्तं यन्त्रं दद्यादभीप्सितम् ॥ ४० ॥ षट्कोणमध्ये श्रीबीजपुटितं प्रणवं लिखेत् ॥ साध्यनाम च तन्मध्ये तद्बाह्येष्टदलं लिखेत ॥ ४१ ॥ कामबीजं प्रतिदलं बाह्ये स्वाङ्कुशपत्रकम् ॥ ग्लौंबीजं तद्दले लेख्यं तद्बाह्ये च लिखेत्पुनः ॥ ४२ ॥ चतुर्विंशद्दलं पद्मं तत्र चार्णाल्लिखेत्सुधीः ॥ चतुर्विंशत्यक्षरं च गणेशस्य मंतुं शृणु ॥ ४३ ॥ लक्ष्मीर्गं गणपतये वरं वरद सर्वज ॥ नं मे वशमेत्युक्त्वा नय स्वाहा मनुर्मतः ॥ ४४ ॥ द्वात्रिंशद्दलपद्मं तु तद्बाह्ये तत्र संलिखेत ॥ कादिक्षांस्तान्मातृवर्णान्सबिन्दूं-स्तस्य बाह्यतः ॥ ४५ ॥ चन्द्राष्टकयुतं कुर्य्याच्चतुरस्रं मनोहरम् ॥ तस्य कोणेषु लं बीजं लिखेत्तस्य बहिष्पुनः॥ ४६॥ वारुणं मण्डलं लेख्यमर्द्धचन्द्रस-मप्रभम् ॥ तद्वेष्टयेद्वंबीजेन तद्बहिर्वृत्तयुग्मकम् ॥ ४७ ॥ ह्रींबीजेनादि-वीथ्यां तु वेष्टयेत्परमंकुशैः ॥ बीजं चाद्यन्तयोर्लेख्यं महागणपतेरिदम् ॥ ४८॥ यन्त्रं भूर्ज्जे धरायां वा वसने वा समालिखेत् ॥ गोरोचना गोमयन्तु कस्तूरी केशरं तथा ॥ ४९ ॥ एतैश्च विलिखेयन्त्रं लेखनीस्वर्णरौप्यजा ॥ एतद्यन्त्रं धृतं येन सत्वजेयो नरो भवेत् ॥ ५० ॥ न दह्यते वह्निनासौ न भयं तस्क-रान्नृपात् ॥ रणे राजकुले द्यूते संग्रामे शत्रुसंकटे ॥ गृहे वने जलादौ वा सर्वदा स जयी भवेत् ॥ ५१ ॥ अनामिकारक्तयुक्तैः रक्तद्रव्यैर्लिखेच्च तत् ॥ रक्तपुष्पादिभिश्चैव नैवेद्यैः परिपूजयेत् ॥ ५२ ॥ मनोज्ञां च ततो मूर्त्तिं

कृत्वा तदुदरे क्षिपेत् ॥ प्रतापयेच्च दीपाग्नौ सप्ताहात्रियमाप्नुयात् ॥ ५३ ॥ जप्त्वा मनुं चाष्टशतं होमयेच्च घृतं तदा ॥ अवश्यं वशयेन्नारीं विद्वेषणमथोच्यते ॥ ५४ ॥ विद्वेषिरक्तसंघृष्टश्मशानाङ्गारकेण च ॥ लिखेद्यन्त्रं तु मृतकवस्त्रपुञ्जे बहिष्कृते ॥ ५५ ॥ सम्यक्संपूजयेद्द्वन्द्वं द्वेषयेत्तद्ध्वजाग्रके ॥ स्थापयेद्वैरिसङ्घस्य विद्वेषो जायते महान् ॥ ५६ ॥ स्तम्भनं वक्ष्यते चाथ लिखेद्यन्त्रं शिलातले ॥ पीतद्रव्यैः पीतपुष्पैरर्कपुष्पैः प्रपूजयेत् ॥ ५७ ॥ पतिसूत्रैर्वेष्टयित्वा साध्यस्य स्थापयेदसून् ॥ तद्देहल्यास्त्वधस्ताच्च निखनेत्स्तम्भकारकम् ॥ वाक्स्तम्भं वा गतिस्तम्भं सेनास्तम्भं करोति तत् ॥ ५८ ॥ श्मशानाङ्गारमष्या तु मृतवस्त्रे समालिखेत् ॥ नरास्थिन क्रोधसंयुक्तः पूजयेच्चन्दनादिभिः ॥ ५९ ॥ निखातं शवभूमौ तदवश्यं मारयेद्रिपून् ॥ उत्खातमेतत्पयसा धौतं यन्त्रं च शान्तिकृत् ॥ महागणपतेर्यन्त्रं प्रोक्तं षट्कर्मसिद्धिदम् ॥ ६० ॥ द्वितीयमथ वक्ष्यामि साधकाभीष्टदायकम् ॥ कृत्वा षट्कोणमादौ तु तस्य मध्ये त्रिकोणकम् ॥ ६१ ॥ ॐकारं तस्य मध्यस्थं मध्यगं बीजमालिखेत् ॥ त्रिकोणोर्ध्वे चतुर्दिक्षु श्रींह्रींक्लींग्लौं समालिखेत् ॥ ६२ ॥ षट्कोणस्य च कोणेषु पूर्वाशादिक्रमेण च ॥ ॐश्रींह्रींक्लींग्लौं च गं च लिखित्वा षड्दले क्रमात् ॥ ६३ ॥ तस्योपरि लिखेत्तत्र मनोर्वर्णांस्त्रिकांस्त्रिकान् ॥ गणपतय इत्यादि वर्णैकं चाष्टमे दले ॥ ६४ ॥ कार्ष्ण्यं तस्य बहिर्वृत्तपञ्चकं प्रथमे लिखेत् ॥ वीथ्यग्रे तु ह्यकारादीन्क्षकारान्तान्द्वितीयके ॥ ६५ ॥ अकारादिक्षकारान्तान्व्यत्यस्तांस्तु तृतीयके ॥ ऐंबीजैर्वेष्टयेत्तुर्य्यं ह्रींबीजेन ततो बहिः ॥ ६६ ॥ चतुरस्रद्वयं कुर्य्यात्स्त्रीणामर्थे यदा भवेत् ॥ पुरुषार्थकृतं यन्त्रं त्वष्टास्रेणैव वेष्टयेत् ॥ ६७ ॥ महागणपतेर्यन्त्रं लेख्यं हेमशलाकया ॥ अलक्तं चैव काश्मीरकस्तूरीरोचनान्वितम् ॥ ६८ ॥ मेलयित्वा विभागेन पिष्ट्वा चन्दनवारिणा ॥ स्वर्णपट्टेऽथ वा सूत्रे धृतं प्राणप्रतिष्ठया ॥ आयुरारोग्यसम्पत्तिकीर्तिकृच्छ्रीतिवर्धनम् ॥ ६९ ॥ अथ यन्त्रं प्रवक्ष्यामि हरिद्रागणपस्य च ॥ लिखेदष्टदलं पद्मं कर्णिकायां तु वर्तुलम् ॥ ७० ॥ तस्य मध्ये साध्यनामवेष्टितं प्रणवं लिखेत् ॥ प्रणवस्योत्तरे ग्लौं चाग्रे तस्य जठरे तु गम् ॥ ७१ ॥ गकारमध्ये ह्रींकारं ततःपद्मस्य

दिग्दले ॥ भूबीजोदरगं हं च पूर्वाशादिषु विन्यसेत् ॥ ७२ ॥ आग्नेयादि-कपत्रेषु केवलं गं समालिखेत् ॥ कमलं वा ततो लेख्यं चतुरस्रद्वयाकृति ॥ ॥ ७३ ॥ अष्टकोणं तस्य कोष्ठाष्टके भूपुरमालिखेत् ॥ तस्य गर्भे वकारं च सबिन्दुं कोणमस्तके ॥ ७४ ॥ कुर्य्याच्च हस्तिमुण्डानि तेषां मध्ये च हं लिखेत् ॥ तद्बहिश्चतुरस्रं च ग्लौं तत्कोणेषु संलिखेत् ॥ ७५ ॥ गंकारं दिक्षु विलिखेदास्ये कर्णे विलोचने ॥ आदित्यबुधशुक्राणां मध्ये कस्यापि वासरे ॥ ७६ ॥ निशीथे निर्जने देशे प्रलिप्ते गोमयाम्भसा ॥ प्रदीपदी-पिते तत्र तथैवार्द्रकसंयुताम् ॥ ७७ ॥ संस्थापयेद्धरिद्रां च सम्यक्प्रक्षालितां जलैः ॥ स्थानाष्टके गणेशस्य वरिष्ठां पादसम्मिताम् ॥ ७८ ॥ मृदमानीय संमील्य कन्यया पेषयेच्च ताम् ॥ पश्चात्संशोधयित्वा तां पञ्चविंशतिसंख्यया॥ ॥ ७९ ॥ तां हरिद्रागणेशस्य मूलमन्त्रेण मन्त्रयेत ॥ पश्चात्तां लेपयेन्मन्त्री शुभे सूक्ष्मे सितेम्बरे ॥ ८० ॥अस्मिन्पटे लिखेयन्त्रमेतत्पूर्वोक्तमेवहि ॥ अत्र प्राणान्प्रतिष्ठाप्य पूजितं गुटिकीकृतम् ॥ ८१ ॥ गणेशस्यापि प्रतिमां चाङ्ग-प्रत्यङ्गसंयुताम् ॥ विनिर्माय त्रिभिर्भागैर्निशायां तद्धृदि क्षिपेत् ॥ ८२ ॥ प्राणसंस्थापनं भूयः कुर्य्यान्मूर्त्तोर्विचक्षणः ॥ गन्धपुष्पादिनैवेद्यैरभ्यर्च्य गणना-यकम् ॥ ८३ ॥ सदा तन्निलये न्यस्य सहस्रं साष्टकं मनुम् ॥ संजप्य पूजयेद्भक्त्या पीतवर्णैश्च पुष्पकैः ॥ ८४ ॥ सिद्धौदनेन नैवेद्यं निवेद्याथ बलिं हरेत् ॥ तण्डुलाञ्च्छालिसम्भूतान्प्रस्थमानमिताञ्च्छुभान् ॥ ८५ ॥ विदलीकृतमुद्गांश्च तदर्धं तत्र मेलयेत ॥ गुडं चैव तथा भूयो नारिकेलं च तत्समम् ॥ ८६ ॥ मरिचं मुष्टिमानं च सैन्धवं च तदर्धकम् ॥ तदर्धं जीरकं चाज्यं कुडवार्धसमं भवेत् ॥ ८७ ॥ एतत्सर्वं चतुष्प्रस्थगो-दुग्धे मन्दवह्निना ॥ पचेत्सिद्धौदनश्चायं गणेशस्य महाप्रियः ॥ ८८ ॥ अमुना पायसेनाथ लड्डुकापूपकादिभिः ॥ कर्पूरवासितैः पूगैस्ताम्बूलैश्च-न्दनादिभिः ॥ ८९ ॥ तोषयित्वा विधानेन हरिद्रागणपं विभुम् ॥ प्रण-मेद्दण्डवद्भूमौ स्तुत्वा स्तुतिभिरादरात् ॥ ९० ॥ एवं यः कुरुते नित्यं पञ्चभिः सप्तभिर्दिनैः ॥ विघ्नेश्वरप्रसादेन त्रैलोक्यं सचराचरम् ॥ स्तम्भये-

त्साधकः सत्यं युद्धभूमौ महानिशि ॥ ९१ ॥ स्थापयेद्वैरिणः सेना व्याकुला स्तम्भिता भवेत् ॥ देशे ग्रामे पुरे गेहे सभायां स्थापयेद्भुवि ॥ तत्तत्स्थानगतान्सर्वाञ्जनान्सस्तंभयेन्नरः ॥ ९२ ॥ शाखिशाखागतं सम्यक्स्तम्भयेद्वर्षणं महत् ॥ अश्ववारणशालासु क्षणात्सर्वानुपद्रवान् ॥ ९३ ॥ सम्यग्निवेश्य चैतेषु स्थानेषु बलिमाहरेत् ॥ स्तम्भयेदखिलं विश्वं किम्पुनर्वाञ्छितं जनम् ॥ ९४ ॥ अथाकृष्टिकरं वक्ष्ये हरिद्रागणपस्य च ॥ हरिद्रां शोधयेद्वेश्ममृदा प्रोक्तेन वर्त्मना ॥ ९५ ॥ लिखेदष्टदलं पद्मं कर्णिकायां तु वर्त्तुलम् ॥ तस्य मध्ये साध्यनाम प्रणवावेष्टितं लिखेत् ॥ ॥ ९६ ॥ प्रणवस्योदरे ह्रीं च तस्याश्चजठरे तु गम् ॥ तद्वेष्टयेत्साध्यनाम ह्रींगंभ्यां हारिदक्षरैः ॥ ९७ ॥ हरिद्राविघ्नमन्त्रार्णैर्वृत्तं कुर्य्यात्तदूर्ध्वतः ॥ ह्रींकारैर्वेष्टनं कृत्वा लिखेदष्टदले पुनः ॥ ९८ ॥ ॐह्रींबीजं दलाग्रेषु वंबीजं दिक्षुचालिखेत् ॥ विदिक्पात्रं वेष्टयेच्च पूर्ववच्चाष्टकोष्ठकम् ॥ ॥ ९९ ॥ तस्य पूर्वादिकोष्ठेषु ड्रांड्रींक्लींग्लूं क्रमाल्लिखेत् ॥ विदिक्पत्रेषु संलिख्य शूलान्कोष्ठाग्रतो लिखेत् ॥ १०० ॥ शूलाग्रेष्वपि हंकारं तत्सन्धावर्धचन्द्रयोः ॥ सम्पुटीकृत्य संलिख्य मायया कोणयुग्मके ॥ ॥ १०१ ॥ पञ्चमावरणं ह्येतल्लिखितं पूर्ववर्त्मना ॥ कृतप्राणप्रतिष्ठं तद्धरिद्राविघ्नकुक्षिगम् ॥ १०२ ॥ ॐह्रं सम्पूज्य यत्नेन समीरं स्थापयेद्बुधः ॥ चक्रिहस्तमृदापोह्य गणेशागारमृत्तिकाम् ॥ १०३ ॥ शरावयुगलं रम्यं निर्मायान्यत्र चोभयोः ॥ विन्यस्य तं गणेशानं कुसुमैररुणैर्यजेत् ॥ १०४ ॥ बलिं दत्वाथ सम्पूज्य विघ्नेशं चन्दनादिकैः ॥ द्वितीयेन शरावेण विदधीत सुसाधकः ॥ १०५ ॥ प्रत्यहं कुर्वतस्त्वेवं सप्तभिर्दिवसैर्भुवि ॥ साधकस्य समायाति सन्निधौ वाञ्छितो जनः ॥ ॥ १०६ ॥ भूपालस्तत्सुतो वापि महिषी वा वराङ्गना ॥ अमात्यस्तस्य योषा वा तस्य कन्यापि वाञ्छता ॥ आगच्छन्ति न सन्देहो मन्त्रिणः क्लिन्नचेतसः ॥ १०७ ॥ यन्त्रमेतल्लिखित्वा तु तारपत्रे गुडाम्भसा ॥ पूजितं स्थापितप्राणं दुग्धेनैवाभिषेचयेत् ॥ १०८ ॥ साध्यस्याभिमुखे

भूत्वा कथयेत्प्रजपेन्मनुम् ॥ तदानीमानयेन्नूनं कामयानां तु सुन्दरीम् ॥ ॥ १०९ ॥ सामुद्रं रामठं न्यस्य तस्यागारे हरिद्रया ॥ स्विन्नेन मर्द-यित्वा तु कृत्वा साध्याकृतिं शुभाम् ॥ ११० ॥ श्वेतार्कच्छदयुग्मान्तः सप्राणां सन्निवेशयेत् ॥ दीपाग्नौ तापयेन्मन्त्रं जपेदष्टसहस्रकम् ॥ क्षणादायाति कामार्त्ता वाञ्छिता वरवर्णिनी ॥ १११ ॥ नागवल्लीदले क्षौद्रलिप्ते यन्त्रमिदं लिखेत् ॥ साध्यं संस्मृत्य सम्पूज्य स्वैरं जपं प्रभक्षयेत् ॥ सीमन्तिनी समायाति शीघ्रं यौवनगर्विता ॥ ११२ ॥ पत्रे पुष्पे तु वस्त्रादौ क्षौमे वापि लिखेत्क्रमात् ॥ यमुद्दिश्यात्र तस्यापि क्षणादाकृष्टिकारकम् ॥ ११३ ॥ प्रवाहाभिमुखो वापि सरित्सङ्गमनीरगः ॥ ॥ तर्प्पयेत्तज्जलैः शुद्धैरष्टोत्तरसहस्रकम् ॥ शतयोजनदूरात्तु साध्यमाकर्षये-द्ध्रुवम् ॥ ११४ ॥ बहुनोक्तेन किं चात्र स्मृत्वा यं प्राणिनं जपेत् ॥ मनुमेनं विधानेन स तदाकर्षयेद्धि तम् ॥ ११५ ॥ अथ वक्ष्यामि वश्यार्थं यन्त्रसाधनमुत्तमम् ॥ यन्त्रं सुलिख्य पूर्वोक्तं मायाबीजमुदस्य च ॥ तत्स्थाने कामबीजं च काममध्ये तु गं लिखेत् ॥ ११६ ॥ बहिः श्लिष्टै-र्मन्त्रवर्णैर्वेष्टयेद्यन्त्रबाह्यतः ॥ वेष्टयेत्कामबीजेन शेषं पूर्ववदेव हि ॥ ११७ ॥ पूर्ववत्कृतविघ्नेशकुक्षिमध्ये निवेशयेत्॥ विधिना स्थापितप्राणं शरे विन्यस्य तं जपे-त्॥११८॥ रक्तमाल्यानुलेपाद्यैर्नैवेद्यैः पूर्ववत्कृतैः ॥ मनौ साध्याभिधां दत्त्वा स्थानेपूर्वसमीरिते ॥११९॥ वशमानययुग्मं च जपेदष्टसहस्रकम् ॥ साध्यदि-क्सम्मुखो भूत्वा मन्त्रं मन्त्री समाहितः॥ १२०॥ विघ्नेशाय बलिं दत्त्वा छादयेत्तं च पूर्ववत् ॥ एवं दिनत्रयं कुर्वन्सप्तभिर्दिवसैर्बुधः ॥ १२१ ॥ रक्षोभूतपिशाचा-द्यान्देवदानवपन्नगान् ॥ राजानं मन्त्रिणं राज्ञीं स्त्रियं जप्त्वा तथेप्सिताम् ॥ वशयेत्साधकः शीघ्रं यावज्जीवं न संशयः ॥ १२२ ॥ निशांशेनावशिष्टेन निजदेहे सुलेपयेत् ॥ अचलां कमलां लब्ध्वा वशयेद्विश्वमञ्जसा ॥ १२३ ॥ हरिद्रया समं चूर्णं शालितण्डुलसम्भवम् ॥ तत्समेन गुडेनापि मधुना सैन्ध-वेन च ॥ १२४ ॥ सम्यग्विमर्दयित्वा च पिण्डाकारं पचेद्घृते ॥ निर्माय गणपं तेन यन्त्रं तदुदृदिनिःक्षिपेत् ॥१२५॥ समीरं च प्रतिष्ठाप्य गन्धाद्यैः

पूर्ववद्यजेत् ॥ त्रिदिनं पूजयित्वैवं यन्त्रमध्यात्पृथक्पृथक् ॥ प्रतिमां भक्षयेत्पश्चात्साध्या वश्या भवेद्ध्रुवम् ॥ १२६ ॥ शालिपिष्टादिपिण्डेन कृत्वा साध्याकृतिं शुभाम् ॥ अष्टाधिकशतं जप्त्वा पूजितां स्थापितानिलाम् ॥ ॥ १२७ ॥ निवेद्य विघ्नराजाय साध्यं संस्मृत्य भक्षयेत् ॥ वशयेद्वाञ्छितं साध्यं सदा सर्वस्वदायिनम् ॥ १२८ ॥ वश्यमन्त्रं लिखेन्मन्त्री खाद्यपानादिवस्तुषु ॥ एवं कृत्वा जपेन्ना त्रिसहस्रं साष्टकं बुधः ॥ लक्षेण वशयेत्साध्यं वसुमात्रस्य साधकम् ॥ १२९ ॥ चन्दनागुरुकर्पूरनिशाकुंकुमरोचनाः ॥ मृगेभमदसंयुक्ता ह्यष्टाङ्गं विघ्ननाशने ॥ १३० ॥ सम्पिष्य तद्वशीकारयन्त्रमालिख्य पूर्ववत् ॥ अर्चनादि तथा कृत्वा जपित्वाष्टोत्तरं शतम् ॥ ॥ १३१ ॥ लिम्पेदनेन गात्रं स्वं कुर्वन्वश्यविशेषकम् ॥ ईक्षणात्स्पर्शनात्सद्यस्त्रिलोकीं वशमानयेत् ॥ १३२ ॥ एवं कृत्वा विधिं सद्यो वशयेद्योषितः पुमान् ॥ चन्दनेनैव वा कुर्य्याद्विधिमेनं फलप्रदम् ॥ १३३ ॥ द्विरेफश्च सदाभद्रा मुसली चन्द्रिका जटी ॥ बन्धूकवालकोशीरविष्णुक्रान्ताबलास्तथा॥ ॥ १३४ ॥ वाराही शतवीर्य्या च मायूरी चण्डलोचना ॥ सर्वौषधिरसेनैव निशा भागार्धसम्मिता ॥ १३५ ॥ पिष्ट्वा वश्याभिधं यन्त्रं निर्माय प्रतिमामपि ॥ प्राणसंस्थापनं कृत्वा जपेदष्टसहस्रकम् ॥ १३६ ॥ शिष्टद्रव्येण तिलकं कुर्य्यात्प्रातस्तु यो नरः ॥ त्रैलोक्यसम्पदा सोपि तिरस्कुर्य्याद्धनाधिपम् ॥ १३७ ॥ कपिलागोमयं व्योम्नि नलिनीदलसम्पुटे ॥ आदाय ब्रह्मचर्य्येण भेषजैरुदितं समम् ॥ १३८ ॥ पञ्चगव्येन सम्मर्द्य पिण्डाकारं प्रकल्पयेत् ॥ घृतप्लुतं दहेन्मन्त्री शोषयित्वैधितेनले ॥ १३९ ॥ समुद्धृत्य च तद्भस्म तन्मध्ये यन्त्रमालिखेत् ॥ समीरणं प्रतिष्ठाप्य गणपं तत्र पूजयेत् ॥ ॥ १४० ॥ अष्टाधिकशतं मन्त्री जपित्वा मन्त्रमुत्तमम् ॥ काष्ठजे रूप्यरचितपात्रे कांस्यमये तथा ॥ निधाय लेपयेद्भस्म ललाटादिषु साधकः ॥ ॥ १४१ ॥ कान्तिपुष्टिधनारोग्यपुत्रपौत्रयशःपशून् ॥ लब्ध्वा लोकप्रियो भूत्वा दीर्घजीवी भवेद्ध्रुवम् ॥ १४२ ॥ पुरोधा नृपते रक्षां भस्मना सायमन्वहम् ॥ कुर्य्यादायुष्यवृद्ध्यर्थं यो वै विजयसम्पदे ॥ १४३ ॥ तस्मै निष्क-

त्रयं नित्यं मन्त्री दद्यात्पुरोधसे॥ रक्ताम्बरसुवर्णैस्तु प्रोक्तभेषजपूर्वकम्॥ १४४॥ निधाय कपिलाज्येन तद्वर्त्यां नृकपालके ॥ दीपं प्रज्वाल्य तेनैव जपेन्मन्त्रं पुनःपुनः ॥ १४५ ॥ अष्टोत्तरशतं जप्त्वा गृहीत्वा कज्जलं च तत् ॥ नेत्रे दत्त्वा च वशयेन्निखिलं विश्वमोजसा ॥ १४६ ॥ उमारसेन गुटिकां पिष्ट्वा चन्दनवारिणा ॥ अभिमन्त्र्य नरं यं वा तिलकं प्रकरोति या ॥ १४७ ॥ सर्वलोकप्रिया भूयादङ्गस्पर्शान्निजं पतिम् ॥ अङ्गानुवर्त्तिनं कुर्य्याद्यावज्जीवं न संशयः ॥ १४८ ॥ शुद्धया निशया कृत्वा विघ्नेशं प्रोक्तलक्षणम् ॥ प्रोक्तं गणपतेर्मन्त्रं नरो जप्त्वा सहस्रकम् ॥ १४९ ॥ अष्टाधिकं समभ्यर्च्य चन्दनादिभिरादरात् ॥ शिखायां बन्धयेन्नित्यं सर्वतो जयमाप्नुयात् ॥ १५० ॥ संग्रामे विपिने दुष्टश्वापदोत्थभये परे ॥ आपणव्यवहारेषु द्यूते वादे महार्णवे ॥ ॥ १५१ ॥ राजश्वरसमुहेषु सभायां शत्रुसङ्कटे ॥ विजयी जायते वीरो रोगकृत्याविवर्जितः ॥ पराङ्गनासमूहेषु शोभते मन्मथो यथा ॥ १५२ ॥ नागवल्लीदले यन्त्रं लिखित्वा नागवारिणा ॥ सप्राणमर्चितं जप्तमष्टोत्तरसहस्रतः ॥ अखिलं वाञ्छितं साध्यं वश्यं नयति तत्क्षणात् ॥ १५३ ॥ गोदुग्धे सलिले मन्त्री क्वथिते सुदृढीकृते ॥ यन्त्रं विलिख्य तेनैव निर्माय गणनायकम् ॥ अभिमन्त्र्य शतं साग्रं लक्षयेद्वशयेज्जगत ॥ १५४ ॥ नारिकेलं गुडोपेतं सघृतं त्रिशतं हुनेत् ॥ अन्वहं कृतसम्पातमष्टाधिकशतं बुधः ॥ सम्पातं लक्षयेद्यन्त्रं वशमायाति सोचिरात् ॥ १५५॥ अन्यात्किमु बहूक्तेन साध्यं सञ्चिन्तयन्मनुम् ॥ जपेत्स वशतां याति यावदायुर्न संशयः ॥ वशीकरणमन्त्रस्य प्रयोगोयमुदाहृतः ॥ १५६ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि यन्त्रमुच्चाटनम्परम् ॥ उक्तरीत्या लिखेद्यन्त्रं हुंकारं तस्य मध्यतः ॥ १५७ ॥ ह्रांकारमथ संलिख्य तस्य मध्ये यथा तथा ॥ तस्य मध्ये साध्यनाम यं लिखेत्पत्रमध्यतः ॥ ॥ १५८ ॥ गंबीजं च दलाग्रेषु तदग्रे चाष्टकोणकम् ॥ कोणेकोणे त्रिशूलञ्च शूलाग्रेषु निवेशितम् ॥ १५९ ॥ षड्बिन्दुलाञ्छितं कार्य्यं बहिर्वृत्तं सुशोभनम् ॥ षड्बीजस्थान आलिख्यं यंबीजेन च वेष्टितम् ॥ १६० ॥ प्रणवं च तदा लेख्यं निशालेपनपूर्वकम् ॥ श्मशानाङ्गारसारेण ध्वाङ्क्षपक्षशला-

कया ॥ यन्त्रमेतत्समालिख्य स्थापयेदीरणं ततः ॥ १६१ ॥ पिकमध्य स्थितध्वाङ्क्षगृहकाष्ठं प्रयत्नतः ॥ श्मशानवह्नौ संदह्य भस्मादाय तदुद्भवम् ॥ १६२ ॥ विघ्नाधीशगृहद्वाःस्थशर्करारजसान्वितम् ॥ यन्त्रमध्ये प्रविन्यस्य पुनस्तद्गुटिकीकृतम् ॥ १६३ ॥ शवालितनिशालेपचिताभस्मास्थिनी तथा ॥ पेषयेच्च चिताङ्गारं कपिकच्छुं च वानरीम् ॥ १६४ ॥ साधको मन्त्रसारेण निर्माय गणपाकृतिम् ॥ तत्तस्या मध्यगं कृत्वा पुनः प्राणान्प्रवेशयेत् ॥ १६५ ॥ चक्रिहस्तमृदा चैव साध्यपादोत्थपांशुना ॥ शरावयुगलं मन्त्री निर्मायान्यत्र चोभयोः ॥ १६६ ॥ अन्यत्र तत्प्रविन्यस्य कृष्णपुष्पैः प्रपूजयेत् ॥ मनावुच्चाटयद्वन्द्वं योजयित्वा जपेन्मनुम् ॥ १६७ ॥ अष्टोत्तरसहस्रं तु च्छादयित्वा परेण तम् ॥ निखनेद्यस्य च द्वारि मासेनोच्चाटयेच्च तम् ॥ १६८ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि यन्त्रं विद्वेषणाह्वयम् ॥ यन्त्रं पूर्वदिने लेख्यं मध्ये यं च सबीजकम् ॥ १६९ ॥ पद्ममष्टदलं पश्चात्त्रिशूलानि दलोर्ध्वतः ॥ त्रिशूलाग्रे तु हंकारं हंकारेण तु वेष्टयेत् ॥ ॥ १७० ॥ निशातुर्य्यांशमानेन मरिचं निम्बमेव च ॥ द्वित्रिद्विगुणं पिष्ट्वा हेमपत्राम्बुना ततः ॥ १७१ ॥ मृतकर्पटकं पिष्ट्वा शेषमन्त्रमिमं लिखेत् ॥ पञ्चाङ्गं पारिभद्रस्य काकिणीश्च तथा पुनः ॥ १७२ ॥ चिताग्नौ सन्दहेद्भस्म यन्त्रमध्ये निवेशयेत् ॥ संवृत्य विघ्नराजस्य कुक्षौ पूर्ववदर्चयेत् ॥ ॥ १७३ ॥ पिचुमन्दभवैः पत्रैः कृष्णपुष्पैर्विशेषतः ॥ विद्वेषयद्वयं मन्त्रे जपेत्संयोज्य साष्टकम् ॥ १७४ ॥ सहस्रं तु शरावं च निखनेच्छादितं ततः ॥ प्रीतयोर्विधिनानेन विद्वेषो भवति ध्रुवम् ॥ १७५ ॥ आदाय गणपं मन्त्री प्रीतयोरन्तराक्षिपेत् ॥ वैरम्प्रजायते शीघ्रं देशनाशो भवेद्वयोः ॥ ॥ १७६ ॥ स तद्यन्त्रगतं भस्म गृहीत्वा पथि विन्यसेत् ॥ गच्छतां पादसंस्पर्शाद्विवादस्तु महान्भवेत् ॥ १७७ ॥ देशे ग्रामे पुरे यत्र स्थापितो गणपो भवेत् ॥ वैरं च प्राणिवत्तत्र स्वैरं भवति सर्वदा ॥ १७८ ॥ पारिभद्रस्य पञ्चाङ्गमेकभागमितं भवेत् ॥ भागैकं मरिचस्यापि निशायाश्च तथैव च ॥ १७९ ॥ सन्दह्य भसितं पूर्ववर्त्मना संस्कृतं पुनः ॥ विकीर्णे वैरिणो

मूर्ध्नि कुर्यादुन्मादमूकताम् ॥ इति विद्वेषणं प्रोक्तं मारणं कथ्यतेधुना॥ ॥ १८० ॥ पूर्वोक्तमन्त्रमालिख्य ह्रांकारं तस्य मध्यतः ॥ मायाविघ्नेशबीजे द्वे ह्रांकारे तु समालिखेत् ॥ लेख्यं दलेष्वग्निबीजं तद्बाह्येष्टास्रकं भवेत् ॥ १८१ ॥ चतुरस्रद्वये चाथ रंतत्कोणाष्टके लिखेत् ॥ त्रिकोणं तद्बहिः कार्यं त्रिकोणे च वरे लिखेत् ॥ १८२ ॥ मन्त्रप्रोक्तानि बीजानि वह्निकोणे लिखेदथ ॥ तद्बहिर्वह्निकोणेषु वह्निबीजं समालिखेत् ॥ १८३॥ निशां शुद्धां समालिख्य मृतकर्पटके शुभे ॥ चिताङ्गारोत्थया मष्या काकपक्षशलाकया ॥ १८४ ॥ यथोक्तं सुलिखेद्यन्त्रमेतन्मारणनामकम् ॥ कणारामठचव्याख्यनिशामारिचसद्वचाः ॥ १८५ ॥ स्नुहीक्षीरेण संलिप्य पिष्ट्वा शवपटेथ वा ॥ कारस्करस्य पञ्चाङ्गैरण्डबीजान्वितामृताम् ॥ १८६ ॥ पिष्ट्वा कर्पटकेशौ च लिम्पेच्छेषं पुरोक्तवत् ॥ समीरं च प्रतिष्ठाप्य कृत्वा गणपतिं ततः ॥ १८७ ॥ यन्त्रस्य त्रिदले न्यस्य पुनः प्राणप्रतिष्ठितम् ॥ मातृसद्मसमुद्भूतां गणेशागारमृत्तिकाम् ॥ १८८ ॥ निम्बान्मृदं च कर्कन्धूवृक्षमूलसमुद्भवाम् ॥ श्मशानमृत्तिकां तद्वत्करवीरद्रुमूलजाम् ॥ १८९ ॥ कुम्भकारकरस्पृष्टामूषरस्थानजां मृदम् ॥ पिष्ट्वा शरावयुगलं कृत्वा चान्यत्र चोभयोः ॥ १९० ॥ यन्त्रं निवेशयेच्चापि कृष्णपुष्पैः प्रपूजयेत् ॥ कारस्करभवैः पत्रैर्नैवेद्यैश्च यथा पुरा ॥ १९१ ॥ उक्तमन्त्रपदस्थाने साध्यनाम निवेश्य हि ॥ मानयेत्पूजयेच्चैव सहस्रं साष्टकं जपेत् ॥ १९२ ॥ दक्षिणाशामुखो भूत्वा रजन्यां भूतवासरे ॥ चत्वरे प्रेतभूमौ च मातृविघ्नगृहेथ वा ॥ ॥ १९३ ॥ वल्मीके कोटरे वापि कारस्करतरूद्भवे ॥ विधायान्यशरावे च निखन्य बलिमाहरेत् ॥ साध्यो यमपुरं याति सप्ताहाज्ज्वरपीडितः ॥१९४॥ अमोघवीर्य्यमेतद्धि विधानं भुवि दुर्लभम् ॥ भूदेवव्यतिरिक्तेषु राजवैरिषु योजयेत् ॥ १९५ ॥ नृपोपि कारयेद्यस्तु कर्तारं तोषयेद्धनैः ॥ कर्त्तापि तद्दशांशेन प्रायश्चित्तं समाचरेत् ॥ १९६ ॥ एतान्युक्तानि यन्त्राणि हरिद्रागणपस्य च ॥ षट्षट्कर्मकराण्याशु गोपनीयानि यत्नतः ॥ १९७ ॥

---

१ द्रुशब्दो वृक्षपर्यायः ॥

अथ वक्ष्ये मातृकाया यन्त्रं साधकसिद्धिदम् ॥ अष्टपत्रं लिखेत्पूर्वं मातकूटं तु मध्यतः ॥ १९८॥ ह्स्रौमिति च पत्रेषु केशरेषु त्रिशः स्वरान् ॥ तस्योर्ध्वं भूपुरं कुर्याद्रचनेयं प्रदर्शिता ॥ १९९ ॥ एतद्यन्त्रस्य मध्यस्थं नाम कृत्वा प्रयोजयेत् ॥ प्रातर्मूर्ध्नि शिरोबिन्दुमध्यस्थं सर्वसम्पदे ॥ २०० ॥ अभिषेकाच्च धनकृत्पूजनाल्लोकवश्यकृत् ॥ २०१ ॥ स्थापनाद्गृह-देशादौ यन्त्रं सर्वार्थसिद्धिदम् ॥ सौवर्णे राजते ताम्रे पट्टे वा यन्त्रमुद्धरेत ॥ ॥ २०२ ॥ यस्य प्रतिष्ठा देवस्य लिखेत्तन्नामपूर्वकम् ॥ यन्त्र-मध्ये महादेवं सम्यग्ध्यात्वा तु तत्र च ॥ २०३ ॥ प्राणप्रतिष्ठां कुर्वीत देवीं तत्रार्चयेत्पुनः॥ स्पृष्ट्वा यन्त्रं जपेन्मन्त्रमष्टोत्तरसहस्रकम् ॥२०४॥ मातृकानामतो यन्त्रं निखनेच्च धरातले ॥ तत्र सम्यक्पूजयित्वा मृदा भूमिं च पूजयेत् ॥ २०५ ॥ मातरश्चोपरि स्थाप्याः स्वाभीष्टा देवता ततः ॥ सान्निध्यं देवतायाः स्यात्साधकः सुखमाप्नुयात् ॥ २०६ ॥ अथो लिपी-श्वरस्यान्यं वक्ष्ये यन्त्रं सुसिद्धिदम् ॥ लिखेदष्टदलं पद्मं तन्मध्ये ज्ञानिनो मनुम् ॥ २०७ ॥ हह ज्ञानिन इत्येष नमोन्तः सप्तवर्णकः ॥ ज्ञानिमन्त्रं वसुदले पूर्वादिषु लिखेत्क्रमात् ॥ २०८ ॥ ह्रंकारपुटितं यं च ह्येकारं हं ततः पुनः ॥ ईईउंऊं च एं लेख्यं चाष्टपत्रेषु मन्त्रिणा ॥ २०९ ॥ सिद्धादिचक्रे साध्यस्य नामाद्यर्णस्थितो भवेत् ॥ यन्त्रकोष्ठे तत्र संस्थैर्वर्णैः साध्यस्य नाम-कम् ॥ २१० ॥ पुटयित्वाष्टमं पत्रं लिखेदथ च वेष्टयेत् ॥ वृत्तेन यन्त्रमुक्तं तन्मातृकायास्तथैव च ॥ २११ ॥ चन्दनेन पटे लेख्यं चिरं जयति दुःख-दम् ॥ सर्वशान्तिकरं राहोरोहिण्यामुदिते सति ॥ २१२ ॥ साधकस्य करे बद्धं पूर्वोक्तं फलमादिशेत् ॥ एतस्या एव देव्यास्तु वक्ष्य उच्चाटमारणम् ॥ ॥ २१३ ॥ यन्त्रं प्राग्वच्चाष्टदले कर्णिकायां मनुं श्रियम् ॥ रंकापेश्वराय नमः प्रोक्तश्चाष्टाक्षरस्त्विह ॥ २१४ ॥ ततो मध्यादष्टदिक्षु वर्णान्सम्पुटिताँल्लि-खेत् ॥ ई मध्ये पूर्वतो यै च कं चं दं तंयमेव च ॥ यं शं वं हं च प्राच्यां हि प्राग्वद्वा सं समालिखेत् ॥२१५॥ सिद्धादिचक्रकोष्ठस्था वर्णाः संपुटिता-स्तु ये ॥ बहिस्तु ते वेष्टनीया वायुमण्डलचक्रतः ॥ २१६ ॥ षड्बिन्दुलां-

छितं वृत्तवेष्टितं रसकोणकम् ॥ वायुमण्डलमेतत्स्यात्स्नात्वा मन्दोदये सति ॥ २१७ ॥ तालपत्रे लिखित्वारेर्गृहमध्ये निधापयेत् ॥ अवश्यन्तस्य मृत्युस्स्याद्देहल्यधः प्रपूजितम् ॥ यदा तदा भवेच्छत्रोरुच्चाटो नात्र संशयः ॥ ॥ २१८ ॥ अष्टपत्रं लिखेत्पद्मं कर्णिकायां लिखेन्मनुम् ॥ करौ स्वठौ नैफड् नमो मनुरष्टाक्षरः स्मृतः ॥ २१९ ॥ अष्टपत्रेषु लेख्यानि रंकारपुटितानि तु ॥ उं ईं खं छं ठं च यं च हंसं चेति प्रवेष्टयेत् ॥ २२० ॥ त्रिकोणेनाष्टमे पत्रे शत्रोर्नाम लिखेदथ ॥ सिद्धादिचक्रे कथिता ये वर्णास्तैश्च संयुतम् ॥ २२१ ॥ भौमोदये कृत्तिकायां शववस्त्रे समालिखेत् ॥ श्मशानाङ्गारकेणापि स साध्यः स्याद्यमातिथिः ॥ २२२ ॥ एवमष्टदले च स्यान्नाममित्रार्णवेष्टितम् ॥ काश्मीरीयावकाभ्यान्तु भूर्ज्जपत्रे लिखेत्पुनः ॥ २२३ ॥ अर्चयित्वा करे चैव बध्नीयाद्वामके तु यः ॥ सर्वत्र कुरुते रक्षां यन्त्रमेतत्सुदुर्लभम् ॥ २२४ ॥ अथ यन्त्रान्तरं वक्ष्ये प्राग्वदष्टदलं कुरु ॥ तत्कर्णिकायां तु लिखेद्रौंवौंविंविं विधुन्तुदा ॥ २२५ ॥ य नमश्चेति रुद्रार्णान्दलेषु विलिखेत्क्रमात् ॥ प्रादक्षिण्येन पूर्वादौ वर्णान्वीजेन संयुतान् ॥ २२६ ॥ अं ॐ वंधकं च टं च धंभं चैवाष्टपत्रके ॥ प्राग्वत्साध्यं च मित्रार्णयुक्तं सम्यक् क्रमाल्लिखेत्॥२२७॥ततस्तु वेष्टयेत्सर्वमधचन्द्रैः सुशोभनैः ॥२२८॥ पूर्वाषाढाख्यनक्षत्रे लिखेच्छुक्रोदये सति॥कुचन्दनोदकेनैतद्भुक्तम्भक्षयेण भाग्यदम् ॥२२९॥ अष्टपत्रं लिखेत्पद्मं कर्णिकायां लिखेन्मनुम् ॥अंठं जगौच ठं प्रोच्य मूलमन्त्रो नवाक्षरः॥लिखेदष्टदले प्राग्वत्प्रादक्षिण्येन संपुटान् ॥२३०॥ ठंलंगं जं च टं दं लं प्राग्वच्चाष्टदले तथा॥साध्यनामार्णकान्मित्रवर्णाद्यानपि चाग्रतः ॥ २३१ ॥ भूपुरं चाष्टवज्राख्यं लिखेद्भूर्जे च गैरिकैः ॥ धृत्वा हस्ते प्रोक्ष्य करं श्मशानमृत्तिकास्थले ॥ लिखितं गैरिकैरेतत्सर्वोपद्रवनाशनम् ॥ ॥ २३२ ॥ वक्ष्ये त्रिपुरभैरव्या यन्त्रं सर्वार्थसाधकम् ॥ नवयोन्यात्मकं सम्यक्त्रिकोणन्तस्य मध्यतः ॥ २३३ ॥ या योनिस्ता समारभ्य प्राच्यां भागात्प्रदक्षिणम् ॥ ससार्वकूटमेकैकं लिखेत्तानि वदाम्यहम् ॥ २३४ ॥ हकारञ्च सकारं च तथौकारसमन्वितम् ॥ नादविन्दुसमायुक्तं मध्ययोनाविदं

लिखेत ॥ २३५ ॥ हकारञ्च सकारं च ककारञ्च तथा लरौ ॥ नादविन्दु-युतौ चैव तद्दले च समालिखेत् ॥ २३६ ॥ हकारञ्च सकारं च रेफमौका-रसंयुतम् ॥ विसर्गाद्यमिदं कूटं तृतीये सुलिखेत्ततः ॥ २३७ ॥ पुनरेतानि कूटानि चतुस्सप्तादियोनिषु ॥ वृत्तद्वयन्तु तद्बाह्ये वीथिकायाम्प्रवेष्टयेत् ॥ ॥ २३८ ॥ सविन्दुकैर्मातृकार्णैस्तद्बहिश्चाष्टकोणकम् ॥ चतुरस्रद्वयेनैव कर्त्तव्यन्तत्र संलिखेत ॥ २३९ ॥ कामबीजन्तु कोणेषु यन्त्रमेतत्प्रवेष्टयेत लाक्षया च त्रिलोहेन होमसम्पातसाधितम् ॥ २४० ॥ बाहुमूले धृतं यन्त्रम्पु-त्रायुस्सुखदम्भवेत॥नानाभोगाञ्जयं दद्यात्संग्रामे नात्र संशयः॥अथान्यत्त्रैपुरं वक्ष्ये भूर्ज्जे षट्कोणमालिखेत॥ २४१ ॥ ससाध्यं तस्य मध्ये तु कामबीजं समालिखेत॥ कोणेष्वपि लिखेत्कामं बहिः षोडशपत्रकम्॥कुर्य्यात्पत्रेषु सुलिखेत्कामबीजानि तद्बहिः ॥ २४२ ॥ कृत्वा वृत्तद्वयं वीथ्यां हंबीजेन प्रवेष्टयेत् ॥ तद्बहिश्च-तुरस्रन्तु कुर्य्याद्यन्त्रं सुलेखतः ॥ २४३ ॥ गोरोचनाकुंकुमाभ्यां सम्प-त्सौभाग्यकारकम् ॥ करोति कविताकीर्त्तिं साधकस्य न संशयः ॥२४४॥ अथान्यत्सम्प्रवक्ष्यामि त्रैपुरं स्त्रीवशङ्करम् ॥ आदौ लिखित्वा षट्कोणन्तन्मध्ये कामबीजकम् ॥ २४५ ॥ काममध्ये तु ह्रीङ्कारं दलेषु विलिखेच्च तत् ॥ षट्कोणसन्धौ हुंकारं सर्वं स्त्रींकारवेष्टितम् ॥ २४६ ॥ त्रिपुरदेवि विद्महे कामे-श्वरि धीमहि ॥ तन्नः क्लीं प्रचोदयात् ॥ २४७ ॥ त्रिपुरायास्तु गायत्रीं जप्त्वा यन्त्रे च संलिखेत ॥ तेन यन्त्रं भवेत्सिद्धमीरितं नात्र संशयः ॥ ॥ २४८ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि पञ्चबाणेश्वरीमनुम् ॥ यन्त्रं पञ्चदलं चादौ कृत्वा तत्र तु संलिखेत् ॥ २४९ ॥ ससाध्यं कामबीजं च दलेषु तु लिखेत्क्रमात ॥ अग्न्यादिप्रादक्षिण्येन द्रांद्रींक्लींक्लूंसइत्यपि ॥ २५० ॥ वृत्तद्वयञ्च तद्बाह्ये कृत्वा वीथीद्वयम्भजेत ॥ वेष्टयेत्प्रथमां वीथीं द्रांद्रींक्लींब्लूंस इत्यपि ॥२५१॥ द्वितीयां मातृकावर्णैस्तद्बहिश्चतुरस्रकम् ॥ चतुरस्रेशकोणा तु कामबीजं समालिखेत् ॥ २५२ ॥ सुवर्णनिर्मिते पट्टे कस्तूर्या यन्त्रमा-लिखेत् ॥ कण्ठे वा दक्षिणे बाहौ धृतं तत्स्त्रीवशङ्करम् ॥ दद्याद्यथेप्सितान्का-मान्साधकाय रणे द्रुतम् ॥ २५३ ॥ अथातो राजमातङ्ग्या यन्त्रं वक्ष्ये

सुसिद्धिदम् ॥ सुवर्णरचिते पट्टे लेखन्या स्वर्णरूप्यया ॥ २५४ ॥ राजते ताम्रके वापि भूर्जे वापि मनोहरे ॥ काश्मीरीरोचनैणेययुतचन्दनवारिभिः ॥ २५५ ॥ लिखेद्यन्त्रं तु तत्रादौ त्रिकोणं तु समालिखेत् ॥ साध्यनामान्वितं तत्र ह्रीं क्लींबीजद्वयं लिखेत् ॥ २५६ ॥ ह्रीं श्रीं तस्माद्बहिः कुर्यात्पञ्चपत्रसरोरुहे॥अं नमः प्रथमे पत्रेऽन्यस्मिन्भगवतीति च॥२५७॥मातङ्गेश्वरी तृतीये सर्वजनमनोहरी ॥ चतुर्थे पञ्चमे पत्रे स्यात्सर्वमुखरञ्जिनी ॥ २५८॥ बहिश्चाष्टदलं कृत्वा क्लीं ह्रींश्रीं प्रथमे लिखेत् ॥ एतामपि लिखेत्तत्र सर्वराज वशंकराम् ॥२५९॥ द्वितीये तु दले सर्वस्त्रीपुरुषवशङ्कराम् ॥ तृतीये सर्वदुष्टेति लिखेन्मृगवशङ्कराम् ॥ २६० ॥ चतुर्थे सर्वसर्वेति लिखेच्चापि वशङ्कराम् ॥ पञ्चमे सर्वलोकेति लिखेन्मन्त्रंवशंकराम् ॥ २६१ ॥ लिखेत्षष्ठे तथा यन्त्रे· मुकं मे वशमानय ॥ स्वाहा सप्तमपत्रेस्य श्रीं ह्रींऐंसौं च क्लीं च ऐं॥२६२॥ वृत्तद्वयन्तु तद्बाह्ये वीथ्यान्तत्र प्रवेष्टयेत् ॥ बीजषट्कोणके प्रोक्तमष्टपत्रं द्वितीयके ॥२६३॥ उक्त्वा श्रीं च तृतीयादिपत्रसंस्थैश्च वर्णकैः ॥ ततोष्टपत्र जैर्वर्णैर्लिखेच्चैवाग्रतस्तदा ॥ २६४ ॥ वृत्तद्वये तु तद्बाह्ये तत्र वीथ्यां तु संलिखेत् ॥ साध्यनामाक्षरयुतान्मातृकार्णान्क्रमात्क्रमात ॥२६५॥ तद्बहिश्चतुरस्रं च तत्कोणेषु समालिखेत् ॥ साध्यनामयुतं कामबीजमत्यन्तशुद्धिमत् ॥ २६६ ॥ तेन लेख्यमिदं यन्त्रं साधु सर्वेषु जन्तुषु ॥ एतद्यन्त्रं लिखेच्चैव जप्त्वा मन्त्रमनन्यधीः ॥२६७॥ हुत्वा घृतादिकं चैव गुटिकीकृत्य साधकः॥ साभिषेकः स्वयं बाहौ दक्षिणे तद्विधारयेत् ॥ पूज्यते त्रिदशाद्यैश्च किं पुनर्मानवोत्तमैः ॥२६८॥ आयुरारोग्यमैश्वर्य्यमिच्छेद्यद्यत्स वाञ्छितम् ॥ अवश्यमेव लभते पुरुषो नात्र संशयः ॥ २६९ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि भुवनेश्यास्तु यन्त्रकम् ॥ कुर्य्याच्च षड्दलं पद्मं कर्णिकायां च हल्लिखेत् ॥२७०॥ साध्ययुक्तं षड्दलेषु केवलं शक्तिबीजकम् ॥ बहिर्वृत्तद्वयं कृत्वा वीथिकाया प्रवेष्टयेत् ॥ २७१ ॥ स्वरैः षोडशभिर्बिन्दुयुक्तैस्तद्बाह्यमौं लिखेत ॥ भूपुरं यन्त्रमेतत्तु वन्ध्यानामपि पुत्रदम् ॥ २७२ ॥ अथातो भुवनेश्वर्य्या वश्य-

---

१ लिखेद्यन्त्रमितिच पूर्वान्वयि ॥

कृयन्त्रमुच्यते ॥ आदौ सुलिख्य षट्कोणं मायां साध्यसमन्विताम् ॥ २७३ ॥ कर्णिकायां षड्दलेषु तद्बहिर्भूपुरं लिखेत् ॥ एतद्यन्त्रं वश्यकरं पूजितं बाहुमध्यगम् ॥ २७४ ॥ अथान्यद्भुवनेश्वर्याः प्रोच्यते यन्त्रमुत्तमम् ॥ आदौ कुर्याच्च षट्कोणं कोणा वज्रसमन्विताः ॥ २७५ ॥ मध्ये ससाध्यां मायां च लिखेत्कोणेषु तां पुनः ॥ वृत्तत्रयं बहिष्कुर्यात्तत्र वीथीद्वयं भवेत् ॥ ॥ २७६ ॥ वेष्टयेन्मायया वीथीद्वयमेतच्चतुर्थकम् ॥ श्रीखण्डरोचनाभ्यां तु लेख्यं सर्वजयप्रदम् ॥ २७७ ॥ दद्याच्च मनसोद्दिष्टं बाहौ वा हृदये धृतम् ॥ मायास्थाने तु मन्त्रं वा भुवनेश्याः समालिखेत् ॥ २७८ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि भुवनेश्यास्तु यन्त्रकम् ॥ अष्टपत्रं लिखेत्पद्मं कर्णिकायां समालिखेत् ॥ २७९ ॥ आंह्रींक्रोमिति बीजानि त्रिस्त्रिधा केसरेषु च ॥ लिखेत्स्वरान्पत्रमध्ये कादिवर्गाष्टकं लिखेत् ॥२८०॥ भूपुरं च बहिष्कुर्याल्लिखेत्पाग्वच्च धारयेत् ॥ सर्ववाञ्छाप्रदं यन्त्रं सम्पत्सन्ततिदं परम् ॥ २८१ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि लक्ष्मीयन्त्रं रमाप्रदम् ॥ भूम्नंपत्रे लिखेत्पद्मं कर्णिकायां ध्रुवं न्यसेत् ॥२८२॥ तत्पत्रेषु लिखेत्क्रीं ह्रीं क्लींतथा साध्यनाम च ॥ तत्केसरेषु संलेख्यं श्रींह्रींक्लीं च दिगष्टके ॥ २८३ ॥ लिखेद्द्वादशपत्रेषु क्रमादेकैकमक्षरम् ॥ वाचं मायां रमां कामं हसनौ इति कूटकम् ॥२८४॥ जगत्प्रभूत्यै हृदयं द्वादशार्णो मनुस्त्वयम् ॥ तद्बाह्ये षोडशदले केसरेषु द्वयंद्वयम् ॥ २८५ ॥ ककारादिसकारान्तान्द्वात्रिंशद्वर्णकॉंल्लिखेत् ॥ तारो ह्रीं कवचं कैंकैंक्षेंक्षेंश्रींह्रीं ततः परम् ॥ २८६ ॥ क्षंह्रींफडिति सूर्यार्णो लक्ष्मीमन्त्रः समीरितः ॥यन्त्रमेतन्महालक्ष्म्याः प्रोक्तं सम्पत्करं परम् ॥ सर्वसौभाग्यदं चापि सर्वदुःखविमोचनम् ॥ २८७ ॥ अश्वारूढायन्त्रमथो प्रोच्यते साधकेष्टदम् ॥ षट्कोणमध्ये साध्याख्यां भुवनेशीं समालिखेत् ॥ २८८॥ आं ह्रीं क्रींमैं क्लीं च सौं च षड्दलेषु लिखेत्क्रमात् ॥ बाहिर्द्वादशपत्रे च वर्णानेतान्समालिखेत् ॥२८९॥अंआंक्रांहहि परमेश्वरि स्वाहा ततःपरम् ॥ बहिश्चत्वारि कार्य्याणि वृत्तान्येवं तु वीथिकाः॥द्रांद्रींक्लींब्लूंस इत्येतैर्बाणबीजैः प्रवेष्टयेत्॥२९०॥ द्वितीयवीथ्यां हृल्लेखा नित्यक्लिन्ने मदद्रवे॥स्वाहेत्येकादशार्णेन वेष्टयेन्मातृकार्णकैः

तृतीया तद्बहिः कुर्य्याद्भूपुरे चैव शङ्करम् ॥ २९१ ॥ अथान्यत्त्वरितायास्तु मनोज्ञं यन्त्रमुच्यते ॥ एकाशीतिपदं चक्रं लिखित्वा तस्य मध्यमे ॥ कोष्ठे लिखेच्चकारन्तु साध्यनामास्य चोदरे ॥ २९२ ॥ तत्कोष्ठकाच्चतुर्दिक्षु लिखेत्कोष्ठचतुष्टये ॥ ज्ञां सं चं वं तथैकैकमक्षरं चेशकोणतः ॥ २९३ ॥ आग्नेयान्तं लिखेच्छ्लोकं पूर्वोक्तं मध्यमां विना ॥ एवमेव च नैर्ऋत्याद्वायव्यान्तं पुनर्लिखेत् ॥ २०४ ॥ तद्बाह्ये तु चतुर्दिक्षु मनुमेनं समालिखेत् ॥ ॐह्रीं-ह्रखें च क्षें क्षः स्त्रींह्रक्षंह्रीं च वषण्मनुः ॥ २९५ ॥ वृत्तद्वयं तु तद्बाह्ये कृत्वा वीथ्यां समालिखेत् ॥ चं मालिकां तु तद्बाह्ये कुम्भं कुर्य्यात्सुशोभनम् ॥ २९६ ॥ तस्य मूलमुखे चापि लिखेत्पद्मं समाहितः ॥ कुंकुभे लक्षया चापि लिखितं स्वर्णपट्टके ॥ २९७ ॥ धवले वसने वापि लेखन्या स्वर्णजातया ॥ सम्पूज्य जपसांसिद्धिं प्राप्नुयाद्यत्र तत्र वै २९८ ॥ भवेल्लक्ष्मीरतिप्रीता नीरोगाश्च प्रजास्तथा॥गजाश्वपशवस्त्वन्ये सुखिनः प्राणिनो भृशम् ॥ २९९ ॥ भूतप्रेतपिशाचादिपीडासु बिभृयादिदम् ॥ अलक्ष्मी शान्तये चाशु सिद्धये सर्वसम्पदाम् ॥ ३०० ॥ कृत्यामृत्युग्रहे दुष्टे सर्वरोग-विमुक्तये ॥ पुत्रपौत्रैश्वर्य्यदीर्घायुष्यसंसिद्धयेपि च ॥ एतद्यन्त्रोत्तमं प्रोक्तं त्वरिताया घटार्गलम् ॥ ३०१ ॥ अथान्यत्सम्प्रवक्ष्यामि त्वरितायन्त्रमुत्तमम् ॥ कृत्वा तु दिग्दलं पद्मं कर्णिकायां समालिखेत् ॥ ह्रींकारं तस्य मध्ये तु साध्यनाम समालिखेत ॥ ३०२ ॥ क्रमाद्दलेषु सुलिखेद्ध्रींङ्कारसहितं मनुम् ॥ त्वरिताया बहिः कुर्यात्षट्कोणंच बहिश्चरेत ॥ ३०३ ॥ भूपुरं यन्त्रमेतत्तु कृत्याद्रोहग्रहान्हरेत्॥ चौरव्याघ्रादिकभयं जप्त्वा तद्धारयेद् ध्रुवम्॥ रक्षोजयः स्यात्संग्रामे विवादे विजयस्तथा ॥ ३०४ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि त्वरितायाश्च मत्कृतम् ॥ नवव्यूहाभिधं यन्त्रं नववर्गादिनामके ॥ ३०५ ॥ साधकप्रोक्तफलदं तत्प्रकारो निरूप्यते ॥ कृत्वा चाष्टदलं पद्मं कर्णिकायान्तु ह्रीं लिखेत ॥ ३०६ ॥ तस्य मध्ये लिखेत्तारं तन्मध्ये साध्यनामकम् ॥ ततश्चाष्टदले लेख्यमों ह्रीं फ-्कारवर्जितम् ॥ ३०७ ॥ शेषमन्त्राक्षरं कोष्ठे तत्पद्मं वेष्टयेत्पुनः ॥ ह्रींकारैस्तस्य बाह्ये तु लेख्या चौंकारशृङ्खला॥ ३०८॥

कुम्भं कुर्य्याच्च तद्बाह्ये प्रथमं यन्त्रमीरितम् ॥ एवमस्यैव मन्त्रस्य कर्णिकायां समालिखेत् ॥ ३०९ ॥ ह्रींकारस्योदरे विद्यातृतीयार्णं ससाध्यकम् ॥ तथा तारादिवर्णांश्च भार्गवत्पत्रेषु संलिखेत ॥ ३१० ॥ ह्रींकारमध्ये फट्कारं यदा स्याच्च तदा लिखेत् ॥ ह्रींकारपुटितान्वर्णानोंकारान्तान्दलेषु च ॥ ॥ ३११ ॥ नवभेदमिदं यन्त्रं नामवर्गादिभेदतः ॥ सर्वरक्षाकरं प्रोक्तं दुःखदारिद्र्यनाशनम् ॥ शुभलक्ष्मीयशोधान्यवाससां पुरुदायकम् ॥ ३१२ ॥ अथान्यत्सम्प्रवक्ष्यामि त्वरितायन्त्रमद्भुतम् ॥ तिर्य्यगूर्ध्वा द्वादशैव रेखास्तत्र तु कोष्ठगाः ॥ एकादशानां वर्गेण तुल्या लेख्यास्तथाग्रके ॥ ३१३ ॥ त्रिशूलानि लिखेन्मध्यकोष्ठके प्रणवं लिखेत् ॥ तस्य मध्ये साध्यनाम चतुर्दिक्कोष्ठकेषु च ॥ ३१४ ॥ प्रवेशगत्या च लिखेत्पञ्चपञ्चाक्षराणि च ॥ क्षम्रीं-ह्रक्षं तथा फट् च बाह्ये प्राकारके ततः ॥ ३१५ ॥ ईशानकोणात्सुलिखेत्क्रमात्कोष्ठेषु पञ्चसु ॥ आमध्यान्तं ध्रुवं वर्म कं खं चं छेति वर्णकान् ॥ ॥ ३१६ ॥ एवं चतुर्षु कोणेषु रान्तं दत्त्वा लिखेत्पुनः ॥ सव्यासव्ये तथा हंखंवंक्षं वर्णचतुष्टयम् ॥ ३१७ ॥ एवं द्वितीयप्राकारे तारकोणचतुष्टये ॥ ह्रक्षं चेति त्रयो वर्णा लेख्या वामे च दक्षिणे॥ ३१८ ॥ एवं तृतीयप्राकारकोणेषु प्रणवं लिखेत ॥ ह्रस्वैर्वर्णैः सव्यमपसव्यं चैव तथा लिखेत ॥ ॥ ३१९ ॥ पुनश्चतुर्थे प्राकारे लिखेत्तारं च साधकः ॥ ह्रंकारं पञ्चमे ध्यात्वा प्राकारे केवलं ध्रुवम् ॥ ३२० ॥ पूजनीयाः प्रयत्नेन केवलं भाग्यकाम्यया ॥ मायाहीनांश्च द्विद्व्यर्णांस्त्वरितताया मनोः क्रमात ॥ ३२१ ॥ ईशानकोणात्प्राकारप्रदक्षिणक्रमेण च॥ प्रवेशमार्गतस्तुर्य्यतुल्यसंख्यावृतिर्भवेत॥ ॥ ३२२ ॥ मूलमन्त्रेण तद्यन्त्रं सम्पाताज्यपरिप्लुतम् ॥ ग्रहभीतिहरं नित्यं जयलक्ष्मीयशःप्रदम् ॥ ३२३ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि त्वरिताया विनिग्रहे ॥ शत्रूणां यत्क्षमं यन्त्रं यन्न क्वापि च कुण्ठितम् ॥ ३२४ ॥ एकाशीतिपदं चक्रं लिखेत्तन्मध्यकोष्ठके॥ महोदरे साध्यनाम निर्गमे च दिशासु च ॥ चतसृषु लिखेद्बीजचतुष्कन्तान्निगद्यते ॥ ३२५ ॥ अंआंब्रूंहूं ततश्चेशकोणतः कालिकामनुम् ॥ समालिखेच्छलोकरूपं तथा नैर्ऋत्यकोणतः ॥ ३२६ ॥

एवं पुरोक्तवद्यन्त्रं लिखेत्तद्बाह्यतः पुरे ॥ वेष्टयेद्यममन्त्रेणाभिचार्य्यश्चेत्पुमान्भवेत् ॥३२७॥ अभिचार्य्या यदा स्त्री स्यात्तदा तुर्य्यममन्त्रकम् ॥ कालिकायाश्च मन्त्रेण बाह्यतो वेष्टयेत्ततः ॥ यंरंभ्यां वेष्टयेद्दुःखं कालीयममनू यथा॥३२८॥ कालीमाललमालीकालीनमोक्षक्षमोनली ॥ मोदोदेननदेदोमोरक्षमत्वत्वमक्षर ॥ ॥ ३२९ ॥ यमाधाररधामायमाटमोटटमोटमा ॥ वामोमूरिरिमूमोवाटीटली-ललीटटी ॥ ३३० ॥ सीसपट्टेथ वा श्याववस्त्रे वा प्रस्तरेपि वा ॥ विषमष्या समालेख्यं लेखिन्या काकपक्षया ॥ ३३१ ॥ काल्या-दिशक्तिदेहल्या वामभागे प्रपूरयेत् ॥ शत्रुर्दुःखमवाप्नोति सद्यो यन्त्रप्रभावतः ॥ ३३२ ॥ निखातं चत्वरे तच्चेच्छत्रोर्व्याधिकरं भवेत् ॥ पूरितं करिवृक्षाधः पुत्रस्त्रीणां वियोगकृत् ॥ ३३३ ॥ अथान्यत्संप्रवक्ष्यामि देशादीनां विनाशनम् ॥ त्वरितायन्त्रमपरं तूर्द्ध्वाधोष्टाष्टकोष्ठकम् ॥ ३३४ ॥ पुंसामर्थे लिखेत्पूर्वं साधकः कालिकामनुम् ॥ पश्चाच्च यममन्त्रार्णैर्वेष्टयेच्चैव तद्बुधम् ॥ ३३५ ॥ स्त्रीणामर्थे यदा यन्त्रं यमस्याभ्यन्तरार्णकम् ॥ काली-मन्त्रेणावगुंठ्य यन्त्रमावेष्टयेद्बहिः ॥३३६ ॥ लेपनीयं विषैस्तच्च हेममक्षिकया पुनः ॥ कपिकच्छ्वा पुनर्लिख्वा जपितव्यमधोमुखम् ॥ ३३७ ॥ लवणं त्र्यूषणं चव्यस्तथा वैकन्तपत्रकम् ॥ श्मशानाङ्गारनिम्बाद्यनिर्यासो गेहधूमकः ॥ ३३८ ॥ विश्वाख्यं सप्तमं चैतदनुक्तमपि योजयेत् ॥ कोष्ठमध्ये तु नामा-नि बहूनां यत्प्रयोजनम् ॥३३९ ॥ एतद्यन्त्रं स्थितं यत्र तत्रालक्ष्मीर्गदैः सह॥ उपद्रवा महामारी त्वसाध्या तत्र जायते ॥ ३४० ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि बगलायन्त्रमुत्तमम् ॥ भूर्ज्जपत्रे समालेख्यं हरितालनिशारसैः ॥ ३४१ ॥ षट्कोणन्तस्य मध्ये तु वलयाकारतो लिखेत्॥षट्त्रिंशदक्षरो मन्त्रो बगलायाः स उच्यते ॥ ३४२ ॥ तारं लज्जां च बगलामुखि सर्वपदं वदेत् ॥ दुष्टाना-मिति चोच्चार्य्य वाचम्मुखमथो पदम् ॥ ३४३॥ स्तम्भयेति समुच्चार्य्य जिह्वां कीलय चेत्यपि ॥ बुद्धिं विनाशयान्ते तु तारबीजाग्निसुन्दरीः ॥ ३४४ ॥ अयम्मन्त्रः समुद्दिष्टः साध्यनाम्ना तु वेष्टितः ॥ वेष्टयेत्पीतसूत्रेण कुलालस्य गृहं व्रजेत् ॥ ३४५ ॥ चक्रे मृदं समारोप्य भ्रामयेद्वृषभन्तया ॥ कारयेच्च मृदा

तत्र हरितालेन लेपयेत्॥ ३४६॥तन्मध्ये निक्षिपेद्यन्त्रं नासायामथ वा ततः॥ अर्चयेत्तच्चतुष्कालं साध्यनाम्नात्र साधकः ॥ दुष्टानां स्तम्भयेद्वाचं साक्षाद्वाचस्पतेरपि ॥ ३४७ ॥ अथान्यद्बगलायास्तु वक्ष्यते यन्त्रमुत्तमम् ॥ पट्टे वाप्यथ पाषाणे ह्लींकारपुटितं लिखेत् ॥ ३४८ ॥ साध्यनामोन्मत्तरसहरिद्रातालकैस्ततः॥ पूर्वमन्त्रेण संवेष्ट्य चोर्ध्वं त्रिवलयं लिखेत्॥ ३४९॥गर्भस्तम्भं गतिस्तम्भं कुर्य्यादेतन्न संशयः ॥ व्याघ्राद्युपद्रवं ग्रामे गतिं तस्यापि वारयेत्॥ अथान्यद्वक्ष्यते यन्त्रं श्मशानस्थमधोमुखम् ॥ ३५० ॥ घटखर्परमानीय गृहीत्वा वामहस्तके ॥ लिखेद्दक्षिणहस्तेन श्मशानाङ्गारकेण च ॥ मन्त्रितं निहितम्भूमौ रिपूणां स्तम्भयेद्गतिम् ॥ ३५१ ॥ प्रेतवस्त्रे लिखेद्यन्त्रमङ्गारेण च तत्पुनः॥मण्डूकवदने न्यस्येत्पीतवस्त्रेण वेष्टितम् ॥ पूजितम्पीतपुष्पैस्तद्वाचं संस्तम्भयेद्द्विषाम् ॥ ३५२ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि वाराहीयन्त्रमुत्तमम् ॥ विलिख्य तारं साध्याख्यां ग्लौंबीजेन प्रवेष्टयेत् ॥ ३५३ ॥ ठकारेण च संवेष्ट्य भूपुरे च ततो लिखेत्॥ वज्रादिकन्तथा तस्य प्रान्ते प्रणवमालिखेत॥ ३५४॥वज्रमध्ये साध्यनाम लिखेत्कर्मसमन्वितम् ॥ धराबीजेन संवेष्ट्य भूपुरं मूलविद्यया ॥ ३५५ ॥ ओमैं ग्लौंमैं नमः प्रोच्य ततो भगवतीति च ॥ वार्त्तालि वाराहियुगं वाराहमुखि वाग्भवम् ॥ ३५६ ॥ ग्लौंमैं मन्धे अन्धिनीति नमो रुन्धे च रुन्धिनि ॥ नमो जृम्भे जृम्भिणीति नमो मोहे च मोहिनि ॥ ३५७ ॥ नमः स्तम्भे स्तम्भिनीति नम ऐं ग्लौं च वाग्भवम्॥ सर्वदुष्टप्रदुष्टानां सर्वेषां सर्ववाग्वदेत् ॥ ३५८ ॥ चित्तचक्षुर्मुखगतिजिह्वास्तम्भं कुरुद्वयम् ॥ शीघ्रं वश्यं कुरुकुरु ऐंग्लौंमैं ठचतुष्टयम् ॥ हुंफट् स्वाहेति मूलाख्या विद्या वेदेशवर्णिका ॥ ३५९ ॥ बहिर्वृत्तत्रयं कृत्वा क्लींबीजेनाद्यवीथिकाम् ॥ हुंकारेण द्वितीयान्तु वीथिकाम्परिवेष्टयेत् ॥ ३६० ॥ एतद्यन्त्रं समालेख्यं बाह्यभूपुरसंयुतम्॥ कृष्णपुष्पैः समभ्यर्च्य निक्षिपेत्पथि विद्विषः ॥ रिपुमुच्चाटयेच्छीघ्रं स्थितं वर्षशतादपि ॥ ३६१ ॥ वादित्रे मन्त्रमालिख्य वादयेत्समरान्तरे ॥ सन्त्रस्तास्तद्रवं श्रुत्वा पलायन्ते विरोधिनः ॥ ३६२ ॥ अथ चैतत्पताकास्थं युध्यमानस्य वैरिभिः ॥ दृष्ट्वा च शत्रवः सर्वे पलायन्ते

न संशयः ॥ ३६३ ॥ अथातः स्वप्नवाराह्या यन्त्रं वक्ष्ये चमत्कृतम् ॥ कृत्वा त्रिकोणं षट्कोणं षोडशारं वसुच्छदम् ॥ दशारद्वितयम्पञ्चदशास्रभूगृहद्वयम् ॥ ३६४ ॥ त्रिकोणे कामबीजस्थं वाग्भवं सम्यगालिखेत् ॥ षट्कोणे पूर्वतो वाचं च ह्रींक्रींश्रीं च हुं तथा ॥ ३६५ ॥ लिखेत्षोडशपत्रेषु शक्तीरुच्चाटनीं तथा ॥ उच्चाटनीश्वरीं चापि शोषिणीं शोषिणीश्वरीम् ॥ ३६६ ॥ मारणीं मारणीशीं च भीषणीं भीषणीश्वरीम् ॥ त्रासिनीं त्रासिनीशीं च कम्पिनीं कम्पिनीश्वरीम् ॥ ३६७ ॥ आज्ञाविवर्तिनीं पश्चादाज्ञाविवर्तिनीश्वरीम् ॥ वस्तुजातेश्वरीं पश्चात्सर्वसम्पादिनीश्वरीम्॥ ३६८॥ यजेदष्टदले पद्मे मातृभैरवसंयुताः ॥ दशारे विन्यसेत्स्वरस्य बीजपूर्वान्दिगीश्वरान् ॥ ३६९ ॥ रंलंमंक्षं ततो वंयंसंहंश्रींह्रीमिति क्रमात्॥ द्वितीये दशपत्रे तु वज्रादीन्यायुधानि च ॥ ३७० ॥ तिथिपत्रे तु वाराह्या मूलमन्त्रं समालिखेत् ॥ ॐह्रीं नमश्च वाराहि घोरे स्वप्नं विसर्गयुक् ॥ ३७१ ॥ ठद्वयं वह्निजायान्तो मन्त्रः पञ्चदशाक्षरः ॥ एतद्यन्त्रं पुनः सम्यङ्मातृकार्णैः प्रवेष्टयेत् ॥ ३७२ ॥ भूपुरस्य च कोणेषु चतुर्ष्वपि वरं लिखेत् ॥ भूर्जादौ यन्त्रमालिख्य जपसम्पातसाधितम् ॥ ३७३ ॥ बाह्वादौ वि तं दद्यान्नृभ्यः कीर्तिं धनं सुखम् ॥ बहुना किमिहोक्तेन वाराहीष्टं प्रयच्छति ॥ ॥ ३७४ ॥ अथ वक्ष्ये मातृकाया यन्त्रं रक्षाकरं परम् ॥ हकारमध्ये विलिखेत्सकारं साध्यसंयुतम् ॥ ३७५ ॥ तद्बाह्येऽष्टदलं पद्मं केशरेषु स्वरांल्लिखेत ॥ षड्दीर्घयुक्क्षकारेण बहिस्तद्वेष्टयेत्पुरे ॥ ३७६ ॥ रोचनाकुंकुमाभ्यां च भूर्जपत्रे लिखेदिदम् ॥ रक्षा भवति यत्रैतद्बद्धं स्वर्णादिवेष्टितम् ॥ ३७७ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि तारायन्त्रन्तु सिद्धिदम् ॥ भूर्जपत्रे लिखेद्यन्त्रमलक्तकरसेन तु ॥ ३७८ ॥ षट्कोणमध्ये ॐह्रींस्त्रींहुंफट् च ससाध्यकम्॥ तद्बहिश्चाष्टपत्रस्य केशरेषु द्विषट्ः स्वरान्॥ ॥ ३७९ ॥ पत्रेषु काद्यष्टवर्गान्बहिर्भूपुरमालिखेत ॥ पीताम्बरेण संवेष्ट्य बध्नीयात्पट्टसूत्रतः ॥ ३८० ॥ शिशूनां कण्ठतो बद्धं रक्षाकृद्भूतभीतितः ॥ वामबाहौ तु नारीणां बद्धं पुत्रप्रदं मतम् ॥ ३८१ ॥ दक्ष-

बाहौ नृणां बद्धं निर्धनानां धनप्रदम् ॥ ज्ञानदं ज्ञानमिच्छूनां राज्ञां तु विजयप्रदम् ॥ ३८२ ॥ अथातो भुवनेश्वर्य्या वश्यकृद्यन्त्रमुच्यते ॥ चतुरस्रदलेनैव कुर्य्यादष्टदलं बुधः ॥ ३८३ ॥ साध्यनामयुतां मायां लिखेद्यन्त्रं पुनस्तु तत ॥ वेष्टयेच्चतुरस्रेण चतुष्कोणेषु वं लिखेत ॥ ३८४ ॥ चतुरस्रस्य भुर्जादौ रोचनाकेशरेण च ॥ जातीकाष्ठस्य लेखन्या वश्यकृत्परमं मतम् ॥ ३८५ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि सौरं यन्त्रोत्तमं पुनः ॥ चतुष्पत्रस्य पद्मस्य कर्णिकायां समालिखेत ॥ ३८६ ॥ससाध्यं प्रणवं चांहिंहंसः पत्रेषु संलिखेत ॥ एकैकमक्षरं तस्य बाह्येऽष्टदलमालिखेत् ॥ ३८७ ॥ ॐ घृणिः सूर्य्य आदित्यः क्रमादष्टदले लिखेत ॥ वृत्तद्वयं तु तद्बाह्ये मध्यवीथ्यां समालिखेत ॥ ३८८ ॥ भूपुरस्य चतुष्कोणे अंआंह्रींह्रीं समालिखेत ॥ सौरं यन्त्रमिदन्नृणां सर्वामयविनाशनम् ॥ ॥ ३८९ ॥ तेजःप्रतापसौभाग्यपुत्रायुष्कीर्त्तिवर्धनम् ॥ धनधान्यप्रदं वश्यं सर्वरक्षाकरं परम् ॥ ३९० ॥ अथातः कुरुकुल्याया यन्त्रं सर्प्पनिवारणम् ॥ षट्कोणं विलिखेत्तस्य मध्ये पूर्वादित क्रमात् ॥ ३९१ ॥ तारश्च कुरुकुल्यायै स्वाहा सप्ताक्षरो मनुः ॥ मध्यपूर्वक्रमेणैव लेख्यमेकैकमक्षरम् ॥ ३९२ ॥ प्रस्तरे लिखितं गेहे पूजितं यन्त्रकं गृहे ॥ अर्चितं वा धृतं देहे नाशयेद्विविधं विषम् ॥ ३९३ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि यन्त्रं शत्रुभयावहम् ॥ ॐह्रीं च मेखले स्वाहा सप्तार्णोयं मनुर्मतः ॥ ३९४ ॥ लिखेत्प्राग्वच्च षट्कोणे सर्वशत्रुनिवारणः ॥ सम्यक्सुनिष्ठितो गेहे कलहादि न जायते ॥ ३९५ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि गर्भस्तम्भकरं परम् ॥ समन्त्रं त्रिपुरायन्त्रं पञ्चपञ्चालयं लिखेत ॥ ३९६ ॥ तिर्य्यगूर्ध्वं कोष्ठकास्तु जायन्ते तत्र षोडश ॥ कुर्य्याद्दलानि चत्वारि कोष्ठार्ध्वं च तथा तले ॥ ३९७ ॥ ऊर्ध्वकोष्ठचतुष्के तु हंहंहंहं समालिखेत ॥ अधः कोष्ठचतुष्के तु हंकारं तु समालिखेत् ॥ ३९८ ॥ अन्योन्यसम्मुखे लेख्यो ह्रींकारो याम्यसौम्ययोः ॥ अष्टसप्तमयोर्लेख्यं साध्यनाम्नो द्वयं द्वयम् ॥ ३९९ ॥ रक्षेति दशमे लेख्यं पुनरेकादशे तथा ॥ कस्तूरीरोचनाच-

न्द्रकेशरैर्भूर्ज्जपत्रके ॥ लिखेद्रूपं ततो दत्वा कण्ठे यन्त्रं तु धारयेत् ॥ ॥ ४०० ॥ ऐंह्रींश्रीं च समुच्चार्य्य त्रिपुरायै नमो वदेत् ॥ गर्भस्तम्भयुग्मं च डाकिनीदोषमित्यपि द्विर्मुञ्चयाग्निगृहिणीकृत्रिवर्णो मनुर्मतः ॥ ॥ ४०१ ॥ एकविंशतितन्तूनां रक्तानां दोरकं चरेत् ॥ चतुर्दशासितांस्तन्तूंस्तन्तुना तेन बन्धयेत् ॥ ४०२ ॥ मन्त्रयेत्सप्त वारांश्च धूपो दीपो गुरोस्तथा ॥ त्रिः कट्यां वेष्टयेद्धार्य्या गर्भरक्षाकरं परम् ॥ ४०३ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि वाराहं यन्त्रमुत्तमम् ॥ आदौ षट्कोणमालिख्य तन्मध्ये प्रणवं लिखेत् ॥ ४०४ ॥ प्रणवाभ्यन्तरे हूं च हूं मध्ये साध्यनामकम् ॥ सहस्रारे हुंफडिति कोणेष्वेकैकमक्षरम् ॥ ४०५ ॥ तत्राविस्वपिसंज्वालापदानामुत्तरं वदेत् ॥ चक्राय स्वाहेति पदं तदा षण्मन्त्रसम्भवः ॥ ४०६ ॥ षट्कोणसन्धिषु च ते लेख्यास्तद्बहिरालिखेत् ॥ चतुर्दलन्तु क्रमतो द्विद्विवर्णान्दलेदले ॥ ४०७ ॥ नमो नारायणायेति ताराद्योष्टाक्षरो मनुः ॥ केशरेषु लिखित्वाथ पत्रमध्ये ततो लिखेत् ॥ ॥ ४०८ ॥ तारो नमो भगवते वेति बाह्यदले लिखेत् ॥ राहरूपाय भूर्भुवः संलिखेच्च द्वितीयके ॥ ४०९ ॥ स्वःपतये भूपतित्वं तृतीये विलिखेद्दले ॥ मे देहि दापय स्वाहा लिखेत्पत्रे चतुर्थके ॥ ४१० ॥ तद्बाह्येष्टदलं कृत्वा केशरे द्वन्द्वशः स्वरान् ॥ दलमध्येधुना प्रोक्तवारहार्णः कृताक्षरः ॥ ४११ ॥ प्रत्येकं विलिखेद्यन्त्रं लिखेच्चैव द्वितीयके ॥ तद्बहिः षोडशदले कादिसान्तान्द्विशो लिखेत् ॥ ४१२ ॥ केशरेषु दलस्यान्ते वाराहार्णद्वयं तथा ॥ अधुना चाष्टपत्रन्तु पद्मं तस्य बहिश्चरेत् ॥ ४१३ ॥ वृत्तानां पञ्चकं तत्र चतस्रो वीथयो मताः ॥ साध्याक्षरेण पुटितं ह्रींबीजेन ततीयकम् ॥ ४१४ ॥ अत्रोक्तकोलमन्त्रेण साध्यस्याख्या विदर्भिता ॥ तया संवेष्टयेत्पंक्तिं तदग्रे भूपुरं लिखेत् ॥ ४१५ ॥ लिखेत्तस्य चतुष्कोणे ग्लौं साध्याख्याविदर्भितम् ॥ चतुरस्राद्बहिष्कुर्य्याद्दशादिक्षु त्रिशूलकान् ॥ ह्रींग्लौं तेषु लिखेदेतद्यन्त्रं वाराहमद्भुतम् ॥ ४१६ ॥ लाक्षा कृष्णागुरुश्चन्द्रो रोचना कुंकुमं हिमम् ॥ गोमयस्याम्भसा पिष्टं लेखनद्रव्य-

मीरितम् ॥ ४१७ ॥ लेखनी करकोद्भूता यन्त्रस्यास्य तथोच्यते ॥ स्वर्ण-पत्रेखिलावाप्ती राजते चायुराप्यते ॥ ४१८ ॥ ग्रामप्राप्तिर्भवेत्ताम्रे पिचुमन्द-दले सुखम् ॥ भूफले क्षौमवस्त्रे स्याद्भूर्ज्जे संसारमान्यता ॥ ४१९ ॥ साधु जप्तमिदं यन्त्रं सम्पातेनाभिषेचितम् ॥ जन्मचन्द्रं विना धार्य्यं तद्भवेदखिले-ष्टदम् ॥ ४२० ॥ स्वस्य ध्यात्वा कोलरूपं साध्यदेशे प्रपूरयेत् ॥ यन्त्रं वराहमावाह्य तत्राङ्गानि प्रपूरयेत् ॥ दिक्षु मुक्ताशुद्धरागैर्भाजयेन्नात्र संशयः ॥ ४२१ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि पृथिवीयन्त्रमद्भुतम् ॥ अष्टकोणं चाष्टदलं कर्णिकायां समालिखेत ॥ ससाध्यं प्रणवं तस्य मध्यकोणाष्टके च ह्रम् ॥ ४२२ ॥ अंह्रींग्लौं पूर्वपत्रे च नमो भेति हुताशने ॥ गवत्यै दक्षिण-दले धरिण्यै दक्षपश्चिमे ॥४२३॥ धरणीं पाश्चिमे चैव धरे देहि समीरणे॥ स्वाहा वायुदले लेख्या ग्लौंह्रीमोमीशपत्रके ॥ ४२४ ॥ वृत्तत्रयन्तु तद्बाह्ये तत्र वीथीद्वयं भवेत् ॥ तत्राद्यवथ्यां प्रणवं नमो भगवते वरा ॥ ४२५ ॥ हरूपाय भूर्भुवःसुवःपतये च भूपति ॥ त्वं मे देहि दापय स्वाहेति देवमितार्ण वान् ॥ परवीथ्यां मातृकार्णास्ततो भूपुरमालिखेत ॥ ४२६ ॥ गृहान्तः स्थापितं हेमधान्यादेर्वृद्धिकारकम्॥बाहौ धृते जगद्वश्यं पूर्णायुः सुखमेधते४२७ अथ यन्त्रं नारसिंहं प्रवक्ष्ये सर्वकामदम् ॥ आदौ षट्कोणमालिख्य तन्मध्ये प्रणवं चरेत् ॥ ४२८ ॥ ससाध्यं क्ष्रौं समालिख्य कोणषट्केक्षरैककम् ॥ बाह्ये ध्रुवं जभधृती वहिर्वृत्तद्वयं चरेत ॥ ४२९ ॥ तदन्तरालवीथीं तु माया बीजेन वेष्टयेत ॥ तद्वहिर्द्वादशदलं तत्रैकैकाक्षरं न्यसेत ॥ ४३० ॥ तारो नमो भगवते वासुदेवाय तद्वहिः ॥ वृत्तद्वयान्तरालं च मायाबीजैः प्रवेष्ट-येत ॥ ४३१ ॥ तद्वहिष्षोडशदले संलिख्य षोडश स्वरान् ॥ मायां स-बिन्दुं च प्राग्वद्वेष्टयेदथ तद्वहिः ॥ द्वात्रिंशत्पत्रके लेख्यं शलामेकैकमक्षरम् ॥ ४३२ ॥ उग्रवीरं महाविष्णुं ज्वलंतं सर्वतोमुखम् ॥ नृसिंहं भीषणं भद्रं मृत्युमृत्युं नमाम्यहम् ॥ ४३३ ॥ बहिर्वृत्तत्रयं कृत्वा वेष्टयेद्हलमा-दिमम् ॥ एवमग्रे तु प्राग्भागे ककारादीन्सबिन्दुकान् ॥ ४३४ ॥ रका रादीन्दक्षभागे लिखेद्बिन्दुमितांस्ततः ॥ शकारादीन्वामभागे न्यस्य ह्रौं च

तथा लिखेत् ॥ ४३५ ॥ कर्णयुग्मं च तद्बाह्ये तयोर्लक्षं समालिखेत् ॥ एतत्संसाधितं यन्त्रं पूजाहोमजपादिभिः ॥ रोगाधिहृद्ध्वस्त्रवर्णचतुर्वर्गफलप्रदम् ॥ ४३६ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि सर्वबाधाविनाशनम् ॥ प्रागष्टपत्रं रेखाश्च पञ्च स्युर्दक्षिणेतराः ॥ ४३७ ॥ द्वात्रिंशत्प्रमितान्येवं जायन्ते कोष्ठकानि तु ॥ तस्याग्रिमगता रेखाः फणाकारा विवर्धयेत् ॥ ४३८ ॥ पश्चाकारास्तथा रेखाः कुर्यान्नव तु पञ्च च ॥ फणासु लेख्यं क्रौं बीजं कोष्ठे श्लोकमनुष्टुभम् ॥ ४३९ ॥ साध्यनाम लिखेत्पुच्छे सिद्धं स्याद्यवहोमतः ॥ समस्तरोगभूतादिकृत्यापीडापहारकम् ॥ ४४० ॥ अथान्यत्संप्रवक्ष्यामि क्षुद्ररोगविनाशनम् ॥ अष्टपत्रकर्णिकायां साध्याख्यां कर्मसंयुताम् ॥ ४४१ ॥ क्षौंबीजं च लिखेदष्टपत्रेषु विधिवत्पुनः ॥ चतुरश्चतुरो वर्णाननुपत्रं ततो लिखेत् ॥ ४४२ ॥ भूर्जपत्रेषु मन्त्रेण दीर्घान्तादिसुसाधितम् ॥ यन्त्रं क्षुद्रामयहरं सर्वरक्षाकरं परम् ॥ ४४३ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि महारोगहरं त्विदम् ॥ वेश्मभूपुरयुग्मेन कोणेषु क्षौं समालिखेत् ॥ ४४४ ॥ एतद्यन्त्रमुमे सम्यङ्मण्डलैर्लक्षणान्वितम् ॥ रम्यं नवपदं कृत्वा कलशं स्थापयेदिह ॥ ४४५ ॥ एतन्मन्त्रेण बध्नीयात्क्वाथेन परिपूरयेत् ॥ वस्त्रयुग्मसमायुक्तमावाह्य नृहरिं विभुम् ॥ ४४६ ॥ संपूजयेच्चन्दनाद्यैः शान्तिकार्य्ये मनोहरे ॥ पूर्वादिदिक्षु चेन्द्रादीन्यजेन्मन्त्री समाहितः ॥ अष्टाधिकं ततो मन्त्रं सहस्रं प्रजपेत्सुधीः ॥ ॥ ४४७ ॥ एवं जलैः शोधितं तु यन्त्रं मन्त्रविदुद्धरेत् ॥ अभिषिञ्चन्मृत्युमुखादवश्यं स निवर्त्तते ॥ ४४८ ॥ ग्रहाभिचारभूतादिभयं नश्यति तत्क्षणात् ॥ भोजयेद्देवताबुद्ध्या भूदेवांस्तोषयेत्तथा ॥ ४४९ ॥ प्राणान्प्रदद्याद्गुरवे वित्तशाठ्यविवर्जितः ॥ स्वकार्य्यस्यानुसारेण प्रदद्याद्दक्षिणां नरः ॥ लभेतैहिकसिद्धिं स परत्रापि च मोदते ॥ ४५० ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि नृहरेर्यन्त्रमद्भुतम् ॥ षट्कोणकर्णिकामध्ये हृल्लेखां साध्यसंयुताम् ॥ ४५१ ॥ आंह्रींक्षौंक्रोंहुंफडिति षट्कोणेषु षड्लिखेत् ॥ बहिरष्टदलं कृत्वा स्वरद्वन्द्वं लिखेत्ततः ॥ ४५२ ॥ केशरेष्वथ पत्रेषु

चतुर्णान्समालिखेत् ॥ नृसिंहानुष्टुम्मनोर्बहिर्वृत्तद्वयं लिखेत् ॥ ४५३ ॥
उग्रवीरं महाविष्णुं ज्वलन्तं सर्वतोमुखम् ॥ नृसिंहं भीषणं भद्रं मृत्युमृत्युं नमाम्यहम् ॥ ४५४ ॥ वीथ्यां तु मातृकावर्णान्बहिर्भूपुरमालिखेत् ॥ लिखेच्चिन्तामणेः कूटं कोणेषु प्रागुदीरितम् ॥ ४५५ ॥ भूर्ज्जपत्रे लिखित्वेदं धृतं च शिरसा हरेत् ॥ विषरोगारिपुक्लेशभूतग्रहभयादिकम् ॥ ४५६ ॥
सुदर्शननृसिंहस्य यन्त्रं संप्रोच्यतेधुना ॥ सर्वरोगप्रशमनं सर्वशत्रुविनाशनम् ॥ ४५७ ॥ त्रिकोणान्तेतु षट्कोणं तस्य मध्ये च दिग्दलम् ॥ तत्कर्णिकायां प्रणवं तन्मध्ये चामुकं जहि ॥ ४५८ ॥ ततो नवदले लेख्या मन्त्रवर्णा द्विकाद्विकाः ॥ एवं वर्णास्तु दशमे सहस्रारे च संलिखेत् ॥ लिखेज्ज्वालावर्त्तिने च क्रौं बीजं च जहिद्वयम् ॥ ४५९ ॥
हुंफट्स्वाहेति षट्कोणे क्रौंबीजेन समं लिखेत ॥ हुंफट्स्वाहा त्रिकोणेषु तथैव च पदद्वयम् ॥ जपसम्पातसंसिद्धं रक्षोहृद्रोगशत्रुहृत् ॥ ४६० ॥
अथान्यत्संप्रवक्ष्यामि यन्त्रं स्त्रीपुत्रमित्रदम् ॥ दधिवामनदेवस्य वैदिकानां विशेषतः ॥ ४६१ ॥ कुर्य्यात्सम्यक्सप्तदशदलं पद्मं मनोहरम् ॥ ससाध्यं प्रणवं मध्ये षोडशस्वरवेष्टितम् ॥ ४६२ ॥ द्विद्विवर्णान्केशरेषु कालकालीविहीनकान् ॥ दलेष्वेकैकशो वर्णान्क्रमेण च लिखेन्नमः ॥ ४६३ ॥ विष्णवे सुरपतये महाबलाय संलिखेत् ॥ स्वाहेति च नमोयुक्तं प्रणवाभ्यां च सम्पुटम् ॥ ४६४ ॥ श्रीबीजाभ्यां पुरस्कारकृताभ्यां मध्यगं तु तत्॥ भूर्जे गन्धाष्टकाद्येन लिखितं श्रीधराप्रदम्॥ ४६५॥
अथातो वक्ष्यते यन्त्रं वामनस्येष्टदायकम् ॥ कृत्वा चाष्टदलं पद्मं तन्मध्ये साध्यसंयुतम् ॥ ४६६ ॥ सुलिख्य प्रणवं[1] तस्य केशरेषु क्रमाद् ध्रुवम् ॥ नमो नारायणायेति लिखेदेकैकमक्षरम् ॥ ४६७ ॥ द्वये दलद्वयं लेख्यं चतुर्वर्णास्तथाष्टमे ॥ ॐ नमो विष्णवे ब्रूयात्सुरान्ते पतये महा ॥ ४६८ ॥
बलाय वह्निगृहिणी धृतिवर्णो मतो मनुः ॥ वृत्तत्रयं ततः कुर्य्यादन्तर्वीथ्यां सुवेष्टयेत् ॥ ४६९ ॥ तारो नमो भगवते वासुदेवाय वर्णकैः ॥ बाह्यवीथ्यां

---

१ ॐकारम् ॥

मातृकाभिरति यन्त्रं प्रकीर्त्तितम् ॥ ४७० ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि राम-
यन्त्रं महाद्भुतम् ॥ आदौ सुलिख्य षट्कोणं तन्मध्ये वृत्तमालिखेत् ॥ ४७१॥
रामेतदस्य जठरे साध्यनाम तले लिखेत् ॥ साधकाख्यां कर्मनाम मध्ये चैव
समालिखेत् ॥ ४७२ ॥ पार्श्वयोश्च क्रिया लेख्या रेफं वर्णान्तरे लिखेत् ॥
श्रीबीजं तच्च सकलं प्रणवाभ्यां च सम्पुटेत् ॥ ४७३ ॥ ऊर्ध्वाधःसम्मुखा-
भ्यन्तःष ट्कोणेङ्गमनूँल्लिखेत् ॥ षट्कोणपार्श्वयोर्मायाबीजं चाग्रे च मन्मथम्॥
॥ ४७४ ॥ षट्सन्धिषु च ह्रांबीजं तत्सर्वं वेष्टयेत्पुनः ॥ वाग्भवेन बहिष्पद्म-
मष्टपत्रं सकेशरम् ॥ ४७५ ॥ केशरेषु स्वरान्वर्णान्पत्रेषु विलिखेत्क्रमात् ॥
पत्राग्रेषु लिखेन्मालामन्त्रवर्णांस्तथैव च ॥ ४७६ ॥ तारो नमो भगवते
ङेन्तः स्याद्रघुनन्दनः ॥ रक्षोघ्नविशदायेति मधुरेति पदं ततः ॥ ४७७ ॥
प्रसन्नवदनायेति ततश्चामिततेजसे ॥ बलायेति च रामाय विष्णवे नम इत्य-
यम् ॥ ४७८ ॥ सप्तचत्वारिंशदर्णो मालामन्त्र उदीरितः ॥ तद्बाह्येष्टदलं
पद्मं श्रीबीजं केशराष्टके ॥४७९॥ पत्रमध्ये लिखेदष्टवर्णानादौ ध्रुवं लिखेत्॥
नमो नारायणायेति तद्बाह्येर्कदलं लिखेत् ॥ ४८० ॥ तत्केशरेषु मन्त्रा
र्णांश्चतुरश्चतुरो लिखेत् ॥ अकारादिक्षकारान्तानन्त्यपत्रे च सप्तकम् ॥
॥ ४८१ ॥ पत्रमध्ये वासुदेवद्वादशाक्षरवर्णकान् ॥ तारो नमो भगवते
वासुदेवाय स स्मृतः ॥ ४८२ ॥ तद्बहिः षोडशदलं मायां च
नृपकेशरै ॥ तारो नमो भगवते रामचन्द्राय हुं च फट् ॥ नमः
प्रत्येकवर्णं तु दलमध्ये समालिखेत् ॥ ४८३ ॥ हंसंभंविंनि अशज
धृंजंविंसुधरां तथा ॥ अंघं क्रमाच्च बीजानि बाह्ये षोडशपत्रके ॥
॥४८४॥ प्रत्येकं पत्रमूले तु ह्रीं श्रीं क्लीं विलिखेद्बुधः ॥ दलस्य पूर्वभागेषु
रामस्यानुष्टुबर्णकान् ॥४८५॥ रामभद्रमहेष्वास रघुवर नृपोत्तम ॥ दशास्या-
न्तक मां रक्ष देहि दापय मे श्रियम् ॥४८६॥ दलोत्तरार्धे संलेख्यो नृसिंहानु
ष्टुभो मनुः॥पुरा नृसिंहयन्त्रे च कथितोत्र निगद्यते॥४८७॥ उग्रं वीरं महाविष्णुं
ज्वलन्तं सर्वतोमुखम् ॥ नृसिंहं भीषणं भद्रं मृत्युमृत्युं नमाम्यहम् ॥ ४८८॥
बहिर्भूपुरमालिख्य वज्राष्टकविवर्जितम् ॥ क्ष्रौंबीजं च चतुर्दिक्षु हंबीजं च

विदिक्षु च ॥ ४८९ ॥ एवं लिखेद्रामयन्त्रं सर्वयन्त्रोत्तमोत्तमम् ॥ साधितं जपपूजाभ्यां होमसंपातकेन च ॥ ४९० ॥ धृतं शिरसि बाहौ वायुरारोग्य-प्रदं नृणाम् ॥ रक्षाकरं महेशानि महदैश्वर्यवर्धनम् ॥ ४९१ ॥ वन्ध्यानामपि नारीणां पुत्रदं सुखदं परम् ॥ भुक्तिमुक्तिप्रदं चैव गोपनीयं प्रयत्नतः ॥ ॥ ४९२ ॥ अथान्यत्सम्प्रवक्ष्यामि रामभद्रस्य मन्त्रकम् ॥ आदौ सुलिख्य षट्कोणं तन्मध्ये बीजमालिखेत् ॥ ४९३ ॥ रामित्येतस्य जठरे तले साध्यं समालिखेत् ॥ साधकाख्यां तदूर्ध्वे तु कर्म मध्ये समालिखेत् ॥ ॥ ४९४ ॥ पार्श्वयोश्च क्रिया लेख्या मनुं पर्णान्तरे लिखेत् ॥ श्रीबीजेन च रामाय नमो वर्णैः प्रवेष्टयेत् ॥ ४९५ ॥ तद्बाह्ये हुं जानकीति वल्लभाया-ग्निगेहिनी ॥ एतैर्वर्णैश्च दशभिर्वेष्टयेत्कोणषट्ककम् ॥ ४९६ ॥ षड्दीर्घानु स्वारयुतं रांबीजं तु समालिखेत् ॥ ह्रीं श्रीमिति च कोणाग्रे कोणपार्श्वेषु हं लिखेत् ॥ ४९७ ॥ बहिरष्टदलं कृत्वा केशरे द्वन्द्वशः स्वरान् ॥ दलेषु पूर्व-यन्त्रोक्तमालामन्त्रार्णकाँल्लिखेत् ॥ ४९८ ॥ बहिर्वृत्तद्वयान्तःस्थवीथ्यां कादैः प्रवेष्टयेत् ॥ सबिन्दुकैश्च तद्बाह्ये भूपुरे क्ष्रौं दिशासु च ॥४९९॥ हुं कोणेषु जपाद्धोमसाधितं यन्त्रमुत्तमम्॥सर्वेष्टफलदं मोक्षदायकं श्रीकरं परम्॥५००॥ षट्कोणमध्ये प्रणवं प्राग्वत्साध्यादिकं लिखेत् ॥ मूलार्णान्वसुकोणेषु षड्दीर्घैरी च सन्धिषु ॥ ५०१ ॥ स्ववामपार्श्वे कोणस्य शाक्तबीजं समालिखेत्॥ दक्षिणे कामबीजं च बहिरष्टदलं लिखेत् ॥ ५०२ ॥ द्विशः स्वरान्केशरेषु मालामन्त्रं च पूर्ववत् ॥ दलमध्ये लिखेत्तस्य बहिर्वृत्तत्रयं चरेत् ॥ ५०३ ॥ प्राग्यन्त्रोक्तदशार्णेन चान्तर्वीथ्यां प्रवेष्टयेत् ॥ कादिक्षान्तैर्बहिर्वीथ्यां तद्बहिर्भूपुरं चरेत् ॥ ५०४ ॥ दिशासु क्ष्रौं हुं विदिक्षु ह्येतत्स्याद्विभवप्रदम्॥कीर्त्तिलक्ष्मी-विजयदं रामयन्त्रं न संशयः ॥ ५०५ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि यन्त्रं गोपालदैवतम् ॥ षट्कोणान्तर्लिखेत्कामं साध्याख्यां कर्मसंयुताम् ॥५०६॥ तारो नमश्च कृष्णाय लिखेद्वर्णांश्च षड्दले ॥ बाह्ये दशदलं पद्मं तत्किञ्ज-ल्केषु संलिखेत् ॥ ५०७ ॥ द्विशो वर्णान् ङेन्तेदामोदरोस्यब्जगदा भृते ॥ वासुदेवाय कवचं फट्स्वाहान्तो नखाक्षरः ॥ ५०८ ॥ गोपीजनव-

ल्लभाय स्वाहैकैकं तु पत्रके ॥ कोणेषु मदनाक्रान्तं भूगृहं रचयेत्ततः ॥ ॥ ५०९ ॥ रोचनालिखितं यन्त्रं सम्यग्वर्णशलाकया ॥ हेमपट्टे विधानेन गुटिकीकृत्य पूजितम् ॥५१०॥ सम्यक्सम्पातसंसिक्तं दशार्णेनाभिमन्त्रितम् ॥ गोपालयन्त्रमेतद्धि पुण्यवद्भिः करे धृतम् ॥ ५११ ॥ शान्त्यादिवश्य-कर्मादौ समर्थं चापि गोपितम् ॥ कीर्त्यादिवर्धनं चैव पुत्रपौत्रविवर्धनम् ॥ ॥ ५१२ ॥ कान्तिरक्षाकरं नृणां सर्वसौभाग्यसौख्यदम् ॥ अपस्मारादि-करक्षोभूतकान्तादिमस्तके॥ एतद्यन्त्रं स्मरेत्तत्र जपेन्नश्यति तत्क्षणात्॥५१३॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि कृष्णयन्त्रं महाद्भुतम् ॥ आदौवृत्तं समालिख्य तन्मध्ये ग्लौं समालिखेत् ॥ ५१४ ॥ बीजमध्ये साध्यनाम बहिः षट्कोण-मालिखेत् ॥ तारो नमश्च कृष्णाय दलेष्वेकैकमक्षरम् ॥ ५१५ ॥ दलसन्धौ लिखेन्मन्त्रानाग्नेयीतः क्रमादिमान् ॥ आचक्राय ततः स्वाहा प्रथमोयं षडक्षरः ॥ ५१६ ॥ विचक्राय ततः स्वाहा द्वितीयोपि षडक्षरः ॥ सुचक्राय ततः स्वाहा तृतीयोपि षडक्षरः ॥ ५१७ ॥ शैलरक्षणचक्राय स्वाहान्तोयं दशाक्षरः ॥ असुरान्तकचक्राय स्वाहान्तोयं नवाक्षरः ॥५१८॥ कामबीजेन षष्ठं तु सन्धिमेवं प्रपूरयेत् ॥ तद्बाह्येष्टादशदलं तत्र वर्णानिमाँल्लिखेत् ॥५१९॥ क्लीं कृष्णायपदं चोक्त्वा गोविन्दाय पदं लिखेत् ॥ गोपीजनवल्लभेति य स्वाहा धृतिवर्णकः ॥ तद्बाह्येजिनपत्रेषु कृष्णगायत्रिवर्णकान् ॥ ५२० ॥ दामोदराय विद्महे वासुदेवाय धीमहि ॥ तन्नः कृष्णः प्रचोदयात् ॥ ५२१॥ तद्बाह्ये वृत्तयुग्मान्तर्वीथ्यां कामेन वेष्टयेत् ॥ तद्बाह्ये दन्तपत्रेषु गोपालानुष्टुभं लिखेत् ॥ ५२२ ॥ ग्लौंक्लीं नमो भगवते नन्दपुत्राय बालक ॥ वपुषे श्यामलायेति गोपीजनपदं वदेत् ॥ वल्लभायाग्निजायान्तो मन्त्रोयं रदवर्णकः ॥ ५२३ ॥ वेदवृत्तानि तद्बाह्ये तत्र वीथीत्रयं भवेत् ॥ यत्तु गोपालमन्त्रे तु ग्लौं तेनाद्यां प्रवेष्टयेत् ॥ द्वितीयां मातृकावर्णैरांक्रींभ्यां च तृतीयिकाम् ॥ ५२४ ॥ यन्त्रराजमिदं ख्यातं सर्वविश्वविमोहनम् ॥ धर्मकामा-र्थफलदं शत्रून्दस्यून्निवारयेत् ॥ ५२५ ॥ कीर्त्तिकान्तिधरारोग्यरक्षाश्रीवि-जयप्रदम् ॥ पुत्रपौत्रप्रदं लोके भूतवेतालनाशनम् ॥ ५२६ ॥ लिखितं भूर्ज-

पत्रादौ पूजितं चाभिमन्त्रितम् ॥ धारितं सर्वकामानां सिद्धिदं नात्र संशयः ॥ अभक्ताय न दातव्यं न देवब्राह्मणद्विषे ॥ ५२७ ॥ अथान्यत्कृष्णयन्त्रं तु सर्वोपद्रवनाशनम् ॥ लिखेत्ससाध्यं ग्लौंबीजं तच्च सम्यक्प्रवेष्टयेत् ॥ ५२८ ॥ अष्टादशार्णमन्त्रेण षट्कोणं च तदूर्ध्वतः ॥ कोणेषु संलिखेद्वर्णान्पत्राक्षरमनो-स्तथा ॥ ५२९ ॥ तद्बाह्ये दिग्दलं कृत्वा दशवर्णान्क्रमाल्लिखेत् ॥ गोपीज-नवल्लभाय स्वाहा मन्त्रो दशाक्षरः ॥ ५३० ॥ वृत्तद्वयान्तर्वीथ्यां तु कामबीजेन वेष्टयेत् ॥ तद्बहिष्षोडशदलं केशरेषु स्वराँल्लिखेत् ॥ ५३१ ॥ दलेषु षोडशा-र्णेषु वर्णान्प्राग्वत्तथा लिखेत् ॥ द्वात्रिंशत्कदलं बाह्ये कादिसान्तांश्च वर्णकान् ॥ तत्केशरेषु चालिख्यदलमध्ये च पूर्ववत् ॥ ५३२ ॥ द्वात्रिंशदर्णमन्त्रस्य लिखे-दर्णास्ततो बहिः ॥ वृत्तद्वयान्तर्वीथ्यामांक्रांबीजाभ्यां प्रवेष्टयेत् ॥ ५३३ ॥ चतुरस्रद्वयेनाथ तद्बाह्येष्टास्त्रमालिखेत् ॥ अष्टार्णकैकवर्णन्तु मनुमेतं सुदुर्लभम् ॥ ॥ ५३४ ॥ चौरमारीभयहरं चतुर्वर्गफलप्रदम् ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि हनु-मद्यन्त्रमद्भुतम् ॥ पद्ममष्टदलं कृत्वा कर्णिकायां समालिखेत् ॥ ५३५ ॥ ससाध्यं प्रणवं तत्र केशरेषु द्विशः स्वरान् ॥ दलेषु संलिखेद्वर्णाश्चतुरश्चतुरोमनोः ॥ ५३६ ॥ नमो भगवते तुभ्यमाञ्जनेय हनूमते ॥ खगपतङ्गाद्युपद्रवान्नाशयपदं वदेत् ॥ ५३७ ॥ हुं फट् स्वाहा रदार्णोयं बहिर्वृत्तद्वयं चरेत् ॥ तदन्तरालवीथ्यां तु कादिक्षान्ताँल्लिखेत्क्रमात् ॥ ५३८ ॥ वृत्तत्रयं बहिः कृत्वा तत्रमालामनुं लिखेत् ॥ नमो भगवते प्रोच्य वदेद्धनुमते ततः ॥ ५३९ ॥ पवनात्मजाय वदेद्राघवप्राण संवदेत् ॥ प्रदाय लक्ष्मणेत्युक्त्वा दात्रे सीतापदं वदेत् ॥ ५४० ॥ दुःखवि-नाशनायेति रावणेति पदं ततः ॥ दर्पहायेति सर्वेति ङेन्तो दुष्टविनाशनः ॥ ॥ ५४१ ॥ रिपुचौरव्याघ्रवराहक्रमि चोच्चरेत्तथा ॥ पतङ्गादिदुष्टसत्त्वविना-शनपदं वदेत् ॥ ५४२ ॥ ङेन्तं हुंफट् ततः स्वाहा द्व्यशीत्यर्णो मनुर्मतः ॥ तद्बहिश्चतुरस्रं च यन्त्रमेतत्सुलेखयेत् ॥ ५४३ ॥ भूर्ज्जे ताम्रेथ वा वस्त्रे भित्तौ पट्टे शिलातले ॥ गोगले वाथ संलेख्यं रोचनानाभिकेशरैः ॥ ५४४ ॥ रक्षःकृत्याग्रहादीनां पीडारोगादिभीतिहृत् ॥ बालग्रहामयव्याघ्रभयाद्यं क्रमशो हरेत् ॥ ५४५ ॥ अथातो दक्षिणामूर्त्तेर्यन्त्रं वक्ष्ये चमत्कृतम् ॥ कुर्य्या-

दष्टदलं पद्मं कार्णिकायां समालिखेत् ।। ५४६ ।। साध्यनामस्वरा लेख्या द्वन्द्वशः केशरेषु च ।। ततश्चाद्यदले लेख्या अउमास्तारवर्णकाः ।। ५४७ ।। पत्रे द्वितीये नमो भ तृतीये गवते लिखेत् ।। चतुर्थे दक्षिणा चेति मूर्त्तये पञ्चमे लिखेत ।। ५४८ ।। मह्यं मे विलिखेत्षष्ठे सप्तमे धां प्रयेति च ।। च्छ स्वाहेत्यष्टमे पत्रे वृत्तयोरन्तरे ततः ।। ५४९ ।। वीथ्यां कादिकवर्णांश्च तद्बाह्ये भूपुरं लिखेत ।। चतुष्कोणे चतुर्थस्य वर्गस्य प्रथमाक्षरम ।। ४५० ।। चतुर्थे च द्वितीयं च तृतीयं वह्निकोणतः ।। लिखेच्चैवाष्टगन्धेन भूर्ज्जे धार्य्यं सदागले ।। ५५१ ।। पुत्रपौत्रप्रदं नृणामायुः श्रीविजयप्रदम् ।। कृत्या-पस्मारभूतादिनाशनं सर्वकामदम् ।। ५५२ ।। अथातः सम्प्रवक्ष्यामि यन्त्रं मृत्युञ्जयाभिधम ।। लिखेदष्टदलं पद्मं कार्णिकायां लिखेद्ध्रुवम् ।। ५५३ ।। तस्य मध्ये साध्यनाम दिग्दलेषु च क्षं लिखेत् ।। विदिक्पत्रेषु सो लेख्यो बहिर्भूपुरमालिखेत् ।। ५५४ ।। वकारं तच्चतुर्दिक्षु उकारं विदिशासु च ।। यन्त्रं मृत्युञ्जयस्येदं जपहोमादिसाधितम् ।। ५५५ ।। धृतं भूर्ज्जेथ वा कण्ठे बाहौ कोष्ठे प्रकोष्ठके ।। ग्रहरोगविषादीनां नाशनं मृत्युभञ्जनम् ।। ।। ५५६ ।। कीर्त्तिध्यादीन्दिराकान्तिपुत्रदं नात्र संशयः ।। एतद्यः पूज-येन्नित्यमपमृत्युर्विनश्यति ।। ५५७ ।। अथातः सम्प्रवक्ष्यामि यन्त्रं बाटुकभै-रवम् ।। आलिख्याष्टदलं पद्मं कर्णिकायां समालिखेत् ।। ५५८ ।। श्रींह्रीं क्लींक्षौं चाष्टदले द्विरावृत्त्या समालिखेत ।। वटुकायेत्यक्षराणि बहिः षोडश-पत्रके ।। ५५९ ।। आपदुद्धारणायेति द्विर्वदेद्वटुकाय ह्रीम् ।। लेख्य एकैक-वर्णोयं बहिःषोडशपत्रके ।। ५६० ।। लिखेत्स्वरांश्च तद्बाह्ये द्वात्रिं-शद्दलकं लिखेत् ।। ककारादिसकारान्तान्बहिर्भूपूरमालिखेत ।। ५६१ ।। जयदं सुखदं वश्यं मृत्युदारिद्र्यनाशनम् ।। श्रीपदं दुरितव्याधिदुष्ट-ग्रहनिकर्त्तनम् ।। ५६२ ।।

इति श्रीमहामायामहाकालानुमते मेरुतन्त्रे शिवप्रणीते दैवतयन्त्रकथनं नाम त्रयस्त्रिंशः प्रकाशः ।। ३३ ।।

श्रीदेव्युवाच ॥ ब्रूह्येकादशरुद्रस्य मन्त्रान्हनुमतो मम ॥ राक्षसा निहता येन त्वत्तो लब्धवरा अपि॥ १ ॥ श्रीशिव उवाच ॥ वक्ष्यामि तव देवेशि मन्त्रान्हनूमतस्त्विह ॥ चातुर्युगांतानाकल्पसंस्थितान्सिद्धिदायकान् ॥ २ ॥ तत्रादौ कथयिष्यामि मालामन्त्रं महाफलम् ॥ तारं च वाग्भवं लक्ष्मीं ह्रीं ह्रीं हुं च समुच्चरेत् ॥ ३ ॥ आद्यन्ताकृतिवेदार्णं बिन्दुरुद्रस्वरान्वितैः ॥ हनुमतस्त्वाद्यकूटमेतत्साधक उच्चरेत् ॥ प्रकृत्याकृतिवेदार्णैर्बिन्दुरुद्रस्वरान्वितैः ॥ ४ ॥ द्वितीयकूटमेतत्स्यादाद्यन्तकृतवर्णकैः ॥ ५ ॥ विसर्गेन्द्रस्वरोपेतैस्तृतीयं कूटमुच्यते ॥ आद्यन्तसिद्धाकृत्यब्धिवर्णैरीशस्वरान्वितैः ॥ ६ ॥ सानुस्वारैस्तुर्य्यकूटं ससाध्यैः पञ्चमं मतम् ॥ तारो नमो हनुमते प्रकटेति पराक्रम ॥ ७ ॥ आक्रान्तदिङ्मण्डलयशोवितानधवेति च ॥ लीकृतजगत्त्रितय वज्रदेह ज्वलेति च ॥ ॥ ८ ॥ दग्निसूर्येति कोटीति समप्रभतनूरुह ॥ रुद्रावतार लंकेति पुरीदहन संवदेत् ॥ ९ ॥ उदधिलङ्घन दश प्रोच्य चाथ शिरः कृतान् ॥ तक सीताश्वासनेति वदेद्वायुसुतेति च ॥ १० ॥ अञ्जनीगर्भसम्भूत श्रीरामलक्ष्मणा वदेत्॥ नन्दकर कपिसैन्यप्राकति ततो वदेत् ॥ ११ ॥ सुग्रीवसख्यकारेति णेति वालिनिबर्हण ॥ कारणद्रोणपर्वेति तोत्पाटनपदं वदेत् ॥ १२ ॥ अशोकवनमित्युक्त्वा दारणेति पदं वदेत् ॥ अक्षकुमारकच्छेति दहनेति पदं ततः ॥ १३ ॥ रक्षोवरसमूहेति विभेदनपदं वदेत् ॥ ब्रह्मास्त्रेति ब्रह्मशक्तिग्रहमुक्त्वा च लक्ष्मण ॥ ॥ १४ ॥ शक्तिभेदविदारेति ण विशल्योषधीति च ॥ समानयन बालेति संवदेद्भानुमण्डल ॥ १५ ॥ ग्रसनोग्रमेघनादहोमविध्वंसनेति च ॥ इन्द्रजिद्वधकारेति णेति सीतेतिरक्षक ॥ १६ ॥ राक्षसीसङ्घवीथ्यन्ते दारणेति वदेत्पदम् ॥ कुम्भकर्णादिवधकृत्परायणपदं वदेत् ॥ १७ ॥ रामभक्तितदित्युक्त्वा वदेत्परपदं ततः ॥ समुद्रव्योमपदतः समुल्लङ्घन संवदेत् ॥ १८ ॥ महासामर्थ्येति महातेजःपुञ्जविराजमा ॥ न स्वामिवचनेत्युक्त्वा सम्पादितार्जनेति च ॥ ॥ १९ ॥ संयुगेति सहायेति कुमारेति ग्रहा वदेत् ॥ दीन्भीषय पदान्ते शब्दोदयपदं वदेत् ॥ २० ॥ दक्षिणाशेति मार्त्तण्डमेरुपर्वतवीथिका ॥ चलेति सकलेत्युक्त्वा मन्त्रागपदतो वदेत् ॥ २१ ॥ माचार्य्य मम सर्वग्रहविनाशन

सर्वं च ॥ ज्वरोच्चाटन सर्वेति वदेच्च विघ्ननाशन ॥ २२ ॥ सर्वापत्ति पदान्ते तु निवारणपदं वदेत् ॥ सर्वदुष्टपदान्ते च निबर्हणपदं तथा ॥ ॥ २३ ॥ सर्वव्याघ्रादिपदतो वदेद्द्वयनिवारण ॥ सर्वशत्रुच्छेदनेति वदेन्मम परस्य च ॥ २४ ॥ त्रियुगेतिपदान्ते तु नपुंस्त्रीतिपदं वदेत् ॥ नपुंसकात्मकं सर्वान्ते वदेज्जीवंपदं ततः ॥ २५ ॥ वशयद्वयमानय ममाज्ञाकारकं वदेत् ॥ सम्पादयद्वयम् नानामुनिध्येय ततो वदेत् ॥ २६ ॥ सर्वेति मम सम्प्रोच्य परिवारान्ममेति च ॥ सेवकान्कुरुयुग्मं च सर्वशस्त्रास्त्र संवदेत् ॥ २७ ॥ विषान्विध्वंसयेति द्विरुक्त्वा ह्रां त्रितयं वदेत् ॥ हाहाहा पाहि पाहीति प्रागुक्तं कूटपञ्चकम् ॥ २८ ॥ विलोमेन वदेत्सर्वं सर्वशत्रुहरं परम् ॥ वृत्तानि परसैन्यानि क्षोभयद्वितयं मम ॥ २९ ॥ सर्वकार्य्यजातमिति साधयद्वितयं ततः ॥ सर्वदुष्टदुर्जनेति मुख्यानि कीलयद्वयम् ॥ ३० ॥ यत्रय ह्रांत्रयं त्रीन्ह्रीं हुंफट्त्रयं चाग्निगेहिनी ॥ मालामन्त्रो हनुमतो नागनागशराक्षरः ॥ ३१ ॥ मुनिरस्येश्वरश्छन्दोऽनुष्टुब्देवोऽञ्जनीसुतः ॥ तारो नमो भगवते चाञ्जनेयाय हृन्मनुः ॥ ३२ ॥ तारो नमो भगवते शिरः स्याद्रुद्रमूर्त्तये ॥ तारो नमो भगवते शिखा वायुसुताय च ॥ ३३ ॥ अग्निगर्भाय भद्राय कवचस्य मनुः स्मृतः ॥ तारो नमो भगवते रामदूताय नेत्रके ॥ ब्रह्मास्त्रनिवारणाय नरवकास्त्रमन्त्रकः ॥ ३४ ॥ स्फटिकाभं स्वर्णकान्तिन्द्विभुजञ्च कृताञ्जलिम् ॥ कुण्डलद्वयसंशोभ मुखाम्भोजं स्मरेन्मुहुः ॥ ३५ ॥ पूजा तु वैष्णवे पीठे शैवे वा चाकृतिं विना ॥ अयुतञ्च पुरश्चर्य्या रामस्याग्रे शिवस्य च ॥ ३६ ॥ घृतहोमः सहस्रं स्यात्तर्प्पणादि ततश्चरेत् ॥ जितेन्द्रियश्चणकाशी हनुमद्ध्यानतत्परः ॥ ३७ ॥ क्षुद्ररोगनिवृत्त्यर्थमष्टोत्तरशतं जपेत् ॥ एकान्ते त्रिदिनैर्जापान्नाशो भूतादिकस्य च ॥ महारोगादिशान्त्यर्थमष्टोत्तरसहस्रकम् ॥ ३८ ॥ सप्ताहं नियताहारो जपेन्निशि च राक्षसाः ॥ ग्रहादयश्च नश्यन्ति तथा सर्वाभिचारकाः ॥ ३९ ॥ जयादिकाङ्क्षी त्वयुतं जपेन्निशि यतासनः ॥ ध्यायंस्तथाक्षहन्तारं संग्रामे विजयेत च ॥ ४० ॥ सम्यक्च

रामसुग्रीवसन्धिकारं जपेत्स्मरन् ॥ अयुतेनाप्यविच्छिन्नसन्धिमाप्नोत्यसंशयम् ॥ ॥४१॥ लङ्कया दाहकं ध्यायन्द्वादशार्णं महामनुम् ॥ हौंबीजं सम्यगुच्चार्य्य पूर्वोक्तं कूटपञ्चकम् ॥ ४२॥ हनूमते नमो मन्त्रो रामचन्द्रो मुनिः स्मृतः ॥ जगतीछन्द उद्दिष्टं हनुमान्देवता मतः ॥ ४३ ॥ बीजं तु पञ्चमं कूटं शक्तिराद्यं तु कूटकम् ॥ षड्बीजैः प्रथमैर्न्यासः षडङ्गोस्य प्रकीर्तितः ॥ ४४ ॥ मूर्ध्निभाले दृशोरास्ये कण्ठे बाह्वो तथा हृदि ॥ कुक्षौ नाभौ ध्वजे जान्वोः पादयोर्मनुवर्णकान् ॥ ४५ ॥ मूर्ध्नि भाले मुखे हृत्के नाभावूर्वोश्च जंघयोः ॥ पादयोर्विन्यसेन्मन्त्रं षड्बीजानि पदद्वयम् ॥ ४६ ॥ बालार्काभं त्रिभुवनक्षोभकं सर्वराक्षसान् ॥ नादेनैव त्रासयन्तं सुग्रीवादिकसेवितम् ॥ ४७ ॥ सुन्दरं रामचरणध्यानं ध्यायेत्समीरजम् ॥ यजेदष्टदले पद्मे केशरेष्वङ्गपूजनम् ॥ ४८ ॥ रामभक्तो महातेजाः कपिराजो महाबलः ॥ द्रोणाद्रिहारको मेरुपीठकार्चनकारकः ॥ ४९ ॥ दक्षिणाशाभास्करश्च सर्वविघ्ननिवारकः ॥ एवं पत्रेषु नामानि पूजयेच्च दलाग्रतः ॥ ५० ॥ सुग्रीवमङ्गदं नीलं जाम्बवन्तं तथा नलम् ॥ सुषेणं द्विविदं चैव भूपुरे दिक्पतीनपि ॥ ५१ ॥ तद्वाह्ये च तदस्त्राणि जपेदर्कसहस्रकम् ॥ दशांशं जुहुयाद्व्रीहीन्पयोदध्याज्यसंयुतान् ॥ एवं सिद्धमनुर्मंत्री प्रयोगानाचरेत्तथा ॥ ५२ ॥ कदलीबीजपूराम्रफलैर्हुत्वा सहस्रकम् ॥ द्वाविंशतिं ब्रह्मचारी विप्रान्सम्भोजयेत्ततः ॥ ५३ ॥ एवं कृते महाभूतविषचौराद्युपद्रवाः ॥ नश्यन्ति क्षणमात्रेण विद्विष्टग्रहदानवाः ॥ अष्टोत्तरशतेनाभिमन्त्रितं विषनाशनम् ॥ ५४ ॥ रात्रौ नवशतं मन्त्रं जपेद्दशदिनावधि ॥ यो नरस्तस्य नश्यन्ति राजशत्रुभ्रमीतयः ॥ ५५ ॥ अभिचारे तु भूतोत्थज्वरे तन्मन्त्रमन्त्रितैः ॥ भस्मभिः सलिलैर्वापि ताडयेज्ज्वरिणं क्रुधा ॥ ५६ ॥ दिनत्रयाज्ज्वरान्मुक्तः सुखं संलभते नरः ॥ तन्मन्त्रितौषधं जग्ध्वा नीरोगो जायते ध्रुवम् ॥ ५७ ॥ तन्मन्त्रितं पयः पीत्वा योद्धुं गच्छन्मनुं जपेत् ॥ तज्जप्तभस्मलिप्ताङ्गः शत्रुसंघैर्न बाध्यते ॥ ५८ ॥ शत्रुक्षतव्रणोद्भूतलूतास्फोटं च भस्मना ॥ त्रिर्मन्त्रितेन संस्पृष्टस्त्रिदिनाद्याति शुष्कताम् ॥ ५९ ॥ सूर्य्यास्तमयमारभ्य जपेत्सूर्य्योदयावधि ॥ कीलकं भस्म

चादाय सप्ताहावधि संयुतम् ॥ ६० ॥ ॥ निखनेद्भस्मकीलौ तु विद्विषां द्वार्य्यलक्षितः ॥ विद्वेषाद्भयमापन्नाः पलायन्तेऽरयोचिरात् ॥ ६१ ॥ अभिमन्त्रितभस्माम्बु देवचन्दनसंयुतम् ॥ दीयते तु यदा यस्मै स तदा तस्य दासवत् ॥ क्रूराः स्वयं तु चौराद्या भवन्ति विविधा वशाः ॥ ६२ ॥ ईशानदिशि मूलेन भूतांकुशतरोः शुभाम् ॥ अंगुष्ठमात्रां प्रतिमां संविधाय हनूमतः ॥ ६३ ॥ प्राणसंस्थापनं कृत्वा सिन्दूरैः परिपूज्य च ॥ गृहस्याभिमुखीं द्वारे निखनेन्मन्त्रमन्त्रिताम् ॥ ६४ ॥ संजायन्ते कदाचिन्न गेहे तस्मिन्नुपद्रवाः ॥ प्रत्यहं धनपुत्राद्यैरेधते तद्गृहं चिरम् ॥ ६५ ॥ निशि श्मशानभूमिस्थमृत्स्नया वापि भस्मना ॥ शत्रोः प्रतिकृतिं कृत्वा हृदि नाम समालिखेत् ॥६६॥ कृतप्राणप्रतिष्ठान्तां भिन्द्याच्छस्त्रैर्मनुं जपेत् ॥ मन्त्रान्ते प्रोच्चरेच्छत्रोर्नाम च्छिन्धि च भिन्धि च ॥ ६७ ॥ मारयेति च तस्यान्ते दन्तैरोष्ठं निपीड्य च ॥ एवं सप्तदिनं कुर्वन्हन्याच्छत्रून्न संशयः ॥ ६८ ॥ अर्द्ध[1]चन्द्राकृतौ कुण्डे स्थण्डिले वा हुतं चरेत् ॥ मुक्तकेशः श्मशानस्थो बलासौराष्ट्रिकायुतैः ॥ ६९ ॥ उन्मत्तफलपुष्पैश्च नखरोमविषैरपि ॥ काककौशिकगृध्राणां पक्षैः श्लेष्मान्तकाक्षजैः ॥ ७० ॥ समिद्वरैश्च त्रिशतैर्दक्षिणाशामुखो निशि ॥ होमं कुर्य्यात्स्मरन्मन्त्रं मारयेद्रिपुमुद्धतम् ॥७१॥ शतषट्कं जपेद्रात्रौ श्मशाने दिवसत्रयम् ॥ ततो वेताल उत्थाय वदेद्भावि शुभाशुभम् ॥ उदितं कुरुते सर्वं किंकरीभूय मन्त्रिणः ॥ ७२ ॥ हनुमत्प्रतिमां भूमौ संलिखेत्तत्पुरो मनुम् ॥ साध्यनामद्वितीयान्तं विमोचयविमोचय ॥ ॥ ७३ ॥ तत्सर्वं मार्जयेद्वामहस्तेनाथ पुनर्लिखेत् ॥ एवमष्टोत्तरशतं लिखित्वा मार्जयेत्पुनः ॥ ७४ ॥ एवं कृते पराधीनो निगडैर्मुच्यते क्षणात् ॥ एवं विद्वेषणादीनि कुर्य्यात्तत्पल्लवं लिखेत् ॥ ७५ ॥ वश्यार्थं सर्षपैर्होमो विद्वेषे करवीरजैः ॥ कुसुमैस्तस्य काष्ठैर्वा जीरकैर्मरिचैरपि ॥ ७६ ॥ ज्वरे दूर्वागुडूचीभिर्दध्ना क्षीरेण वा घृतैः ॥ तैलाक्ताभिश्च निर्गुण्डीसमिद्भिर्वा समाचरेत् ॥ ७७ ॥ सौभाग्यैश्चन्दनैः श्वेतै रोचनैलालवङ्गकैः ॥ सुगन्धिपुष्पैर्व-

[1] वेद्यामिति शेषः ॥

श्यार्थं सप्तधान्यैस्तदाप्तये ॥ ७८ ॥ किं बहूक्तैर्विषव्याधौ शान्तौ मोहे च मारणे ॥ विवादे स्तम्भने चैव भूतभीतौ च संकटे ॥७९॥ वश्ये युद्धे क्षते दिव्ये बन्धमोक्षे महाबले॥मन्त्रोयं साधितो दद्यादिष्टसिद्धिं नृणां ध्रुवम्॥८०॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि मालामन्त्रानुपासितान् ॥ नवग्रहैर्हनुमतो जपात्सिद्धिविधायकान् ॥ ८१ ॥ तेषां मुन्यादिकं न्यासः षडङ्गं पूजनन्तथा ॥ प्रयोगाश्च परिज्ञेयाः साधकैर्द्वादशार्णवत् ॥ ८२ ॥ तत्रादौ सम्प्रवक्ष्यामि भास्करोपासितम्मनुम् ॥ पूर्वोक्तमालामन्त्रस्य बीजमेकादशन्तु तत् ॥ ८३॥ नवानामपि मन्त्राणामादौ जानन्तु देवताः ॥ वदेन्नमो हनुमते वदेन्नमः परस्य च ॥ ८४ ॥ क्षयदुष्टगणान्प्रोच्य तथा चारिक्षतज्वर ॥ एकाहिकद्व्याहिकेति त्र्याहिकेति चतुर्थकः ॥ ८५ ॥ सन्ततज्वरसन्नीति पातिकज्वरभूवदेत् ॥ तज्ज्वरेति च मन्त्रेति ज्वरशूलभगन्दर ॥ ८६ ॥ मूत्रकृच्छ्रकपोलेति वृन्दस्थलपदन्ततः ॥ कर्णशूलेत्यक्षिशूलवदेच्चरदशूलक ॥ ८७ ॥ हस्तशूलेति पादेति शूलादीन्सर्वमुच्चरेत् ॥ व्याधीन्क्षणात्त्रासयेति भिन्धि छिन्धि विनाशय ॥ ८८ ॥ द्विधा निकर्त्तय त्रेधा छेदय द्विश्च भेदय ॥ महावीरपदन्तारं हनुमन् ह्रांद्वयं वदेत् ॥ ८९ ॥ ह्रंह्रं द्वे च वदेद्ध्रीं द्वे ह्रंह्रं फट् वह्निगेहिनी ॥ मालामन्त्रोयमुद्दिष्टः सर्वरोगविनाशकः ॥ ९० ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि चन्द्रेणोपासितम्मनुम् ॥ वदेन्नमो भगवते राक्षसेति कुलेति च ॥ ९१ ॥ दानवानलद्वादशार्ककोट्युज्ज्वलप्रभेति च ॥ रं तु रुंहं भीमनादं वदेन्मम परस्य च ॥ ९२ ॥ दुष्टदुर्जनमोहाय वदेत्कारक वादिवि ॥ वादिद्वेषकारकेति कार्य्यभञ्जक संवदेत् ॥ ९३ ॥ कुरु प्रकातिकेत्युक्त्वा प्रवृत्तपदमुच्चरेत् ॥ कोपावेशेन हत्वेति चामुकान्वै समुच्चरेत् ॥ ९४ ॥ दूरस्थेति समीपस्थांस्ततो भूतभवीति च॥ व्यद्वर्त्तमानान्पुंस्त्रीनपुंसकान्पदमुच्चरेत् ॥ चतुर्वर्णान्क्षणेनेति सत्वरं जाहियुग्मकम् ॥ दह संहारय द्विर्द्विर्द्विर्मोहयपदं वदेत् ॥ ९५ ॥ शमय द्विर्द्वेषय द्विर्वदेत्सर्पालिमूषक ॥ वत्सघः पदमुच्चार्य्य प्राणिनः पद-

१ शसन्तं सर्वशब्दपदमित्यर्थः ॥

मुच्चरेत् ॥ ९६ ॥ द्विर्विध्वंसय हिलिद्विर्द्विर्द्विर्मूकम्पराजय ॥ बन्धय द्विः पातय द्विर्ममेति च परस्य च ॥ ९७ ॥ दासीभूतं वदेद्द्वेधा सम्पादय-त्रिधात्रिधा ॥ ह्रांह्रं त्रिधा च फट्स्वाहा मन्त्रोयं समुदीरितः ॥ ९८ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि मङ्गलोपासितं मनुम् ॥ वदेन्नमो हनुमते महाबलप-राक्रम ॥ ९९ ॥ मम परस्य च भूत वदेत्प्रेतपिशाचशा ॥ किनी डापद-मुच्चार्य्य किनी यक्षिणिका च पू ॥ १०० ॥ तना मारी महामारी कृत्या यक्षेति राक्षस ॥ वदेद्भैरववेतालग्रहेति ब्रह्मराक्षसा ॥ १०१ ॥ दिकजा-तक्रूरबन्धान्क्षणेन जहियुग्मकम् ॥ भञ्जयद्वितयं प्रोच्य वदेद्द्वेधा निरासय ॥ ॥ १०२ ॥ द्वेधा वारय बन्ध द्विस्तुद सूद द्वयंद्वयम् ॥ बन्धंद्वेधा मो-चय द्विर्मामेनं च पदं वदेत् ॥ १०३ ॥ रक्तरक्तमहामोहेश्वररुद्रावतार हा ॥ हाहाह्रंह्रं त्रिधा हुंफट्स्वाहायमुदितो मनुः ॥ १०४ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि बुधेनोपासितं मनुम् ॥ नमो हनुमते प्रोच्य त्रैलोक्यक्रमणेति च ॥ १०५ ॥ सर्वशत्रूंश्चतुर्वर्णसम्भवानिति चोच्चरेत् ॥ पुंस्त्रीनपुंसकान्भू-तभविष्यद्वर्त्तमोच्चरेत् ॥ १०६ ॥ नान्दूरस्थसमीपस्थान्नानानामपदं लिखेत् ॥ तथा सङ्करजातिजातान्पदं चैव समुच्चरेत् ॥ १०७ ॥ कलत्रपुत्रमित्रेति भृत्यबन्धुसुहृत्पदम् ॥ समतापुरुशक्तीति समेतान्धनुरा वदेत् ॥ १०८ ॥ ज्या-दिसम्पत्तियुतान्नाराजराजेति पुत्रसे ॥ वकान्मन्त्रिसचिवसखीनुक्त्वात्यन्तिका-न्क्षणात् ॥ १०९ ॥ वदेदधिपतिं मां च कुरुद्वयपदं ततः ॥ नानोपायैर्मारयद्विः शत्रूंश्छेदयच्छेदय ॥ ११० ॥ भूतसङ्घैः सहेत्युक्त्वा वदेद्भक्षयभक्षय ॥ भिन्धि-भिन्धि च सम्प्रोच्य त्वग्निना ज्वालयद्वयम् ॥ १११ ॥ दाहयद्वितयं प्रोच्य वदेदक्षकुमारवत् ॥ पादतलाक्रमणेन तनुं चैव शिलातले ॥ ११२ ॥ व्यात्रोटय घातय द्विर्द्विर्बन्धयपदं वदेत् ॥ क्रुधा चेति पदं प्रोच्य नखैर्द्वेधा विदारय ॥ ११३ ॥ देशादस्मादिति प्रोच्य वदेदुच्चाटयद्वयम् ॥ द्विर्ध्वंसय त्रासयं द्विर्वदेत्पश्चाद्भयातुरान् ॥ ११४ ॥ विसंज्ञान्सय उच्चार्य्य द्वेधा कुरुपदं वदेत् ॥ भस्मीभूतांस्ततो द्वेधा वदेदुत्पाटयेति च ॥ ११५ ॥ भक्तजनवत्स-लेति सीताशोकापहारक ॥ सर्वत्र मां वदेदेनं रक्षरक्ष च हा पुनः ॥ ११६ ॥

हाहाहुंहुं त्रिधा द्विः फट्स्वाहान्तो मनुरीरितः ॥ वेदपञ्चत्रिवर्णोयं सर्वाभीष्ट-प्रदायकः ॥ ११७ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि गुरुणोपासितं मनुम् ॥ नमो हनुमते प्रोच्य वदेन्मम परस्य च ॥ ११८ ॥ महाभयानि सर्वेति व्याघ्रतस्कर संवदेत् ॥११९॥ ज्वालाग्निविषजङ्गेति मस्थावरमहेति च ॥ कृत्रिमोपविष-महासंग्रामे च पदं वदेत् ॥ १२० ॥ दुष्टवादे विवादे च शत्रोः कामान्ह-रक्षयम् ॥ द्विर्ग्रासय त्रोटय द्विर्भञ्जय स्तम्भय त्रिधा ॥ १२१ ॥ कण्डय त्रोटय द्विर्द्विर्वानर क्षम संवदेत् ॥ महावीरेति मामेनं रक्षरक्ष त्रिधात्रिधा ॥ ॥ १२२ ॥ हाहुं द्वे त्रिश्च फट्स्वाहा प्रोक्तोयं मनुसत्तमः ॥ सर्वपीडाहरो रामवशकृद्भाग्यदायकः ॥ १२३ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि शुक्रेणाराधितं मनुम् ॥ तारो नमो हनुमते वदेत्सर्वग्रहानिति ॥ १२४ ॥ भूतेति च भ-विष्यच्च वर्त्तमानान्पदं वदेत् ॥ १२५ ॥ दूरस्थांश्च समीपस्थान्सर्वकालं वदेत्पदम् ॥ उच्चाटयद्वयं प्रोच्य परेति च बलानि च ॥ १२६ ॥ क्षोभ-यद्वितयं सर्वकार्य्याणि साधय द्विधा ॥ ह्रांह्रींह्रूंद्वित्रयं फट् च स्वाहान्तोयं मनुर्मतः ॥ १२७ ॥ महाबलकरश्चायमपमृत्युविनाशकः ॥ अथातः सम्प्र-वक्ष्यामि शनिनाराधितं मनुम् ॥ परकृतयन्त्रमन्त्रपराहंकारसंवदेत् ॥ १२८ ॥ भूतप्रेतपिशाचेति सर्वज्वरपरेति च ॥ दृष्टिरोगादिकान्प्रोच्य द्विस्त्रासय निवारय ॥ १२९ ॥ बन्ध बन्धय च द्वेधा इलवुचिलवु वदेत् ॥ कुयन्त्राणि सर्व-दुष्टवाचं हुंफड् दहाङ्गना ॥ इत्येवायं मनुः प्रोक्तस्सर्वापत्तिनिवारकः॥१३०॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि राहुणोपासितं मनुम् ॥ नमो भगवते प्रोच्य वदे-द्धनुमते पदम् ॥ १३१ ॥ पवनात्मजायेति राघवप्राणसमाय तु ॥ लक्ष्म-णप्राणदात्रे च सीताशोकविनाशकः ॥ १३२ ॥ ङेन्तो रावणदर्प्पघ्नो ङेन्तः सर्वपदं वदेत ॥ दुष्टविनाशनायेति रिपुचौरपदं वदेत् ॥ १३३ ॥ व्याघ्र-वराहकृत्येति चान्तकाय पदं वदेत्॥दुष्टसत्त्वविनाशेति नाय हुंफड् हुताङ्गना ॥ ॥ १३४ ॥ उक्तोयं मनुराजस्तु लक्ष्मीविद्याजयप्रदः ॥ विशेषतोपमृत्योश्च नाशको रामवल्लभः ॥ १३५ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि केतुनो-

पासितं मनुम् ॥ नमो भगवते प्रोच्य वदेद्धनुमतेपदम् ॥१३६॥ चोरारिपुक्रमिखगपतङ्गादीन्समुच्चरेत् ॥उच्चाटय हुंफट् च स्वाहान्तो मनुरीरितः॥१३७॥ रामचन्द्रो मुनिश्चैषां गाथा छन्दः प्रकीर्तितम् ॥ महावीरोत्र हनुमान्देवता सम्प्रकीर्तितः ॥ १३८ ॥ नवमं कूटमुद्दिष्टं बीजं शक्तिस्तथाष्टमम् ॥ एकादशकूटपूर्वं नामन्यासं समाचरेत् ॥ १३९ ॥ ङेन्तं नाम तथांगुष्ठादिके चापि षडङ्गकम्॥हनुमान्रामदूतश्च लक्ष्मणप्राणदायकः ॥ १४० ॥ अञ्जनीसूनुरित्येवं सीताशोकविनाशनः॥नेत्रान्तमेवं कृत्वा तु लङ्काप्रासादभञ्जकः॥१४१॥ अर्कास्तमयमारभ्य यावत्सूर्य्योदयो भवेत् ॥ तावन्मन्त्रं जपेद्रात्रौ कार्य्यमुद्दिश्य मन्त्रवित् ॥ सप्ताहाज्जायते सिद्धिर्वायुपुत्रप्रसादतः ॥१४२॥रात्रौ रात्रौ जपेन्मंत्रं षष्ठ्यां चाष्टोत्तरंशतम् ॥ दश वासरपर्य्यन्तं राजशत्रुभयं हरेत् ॥१४३॥ औषधावसरे मन्त्रं दशवारं जपेद्बुधः ॥ तेनाभिमन्त्रितं दत्तं सर्वं सफलतां व्रजेत् ॥ १४४ ॥ भस्माभिमान्त्रितं यस्य देहे चन्दनमिश्रितम् ॥ चर्चितं परबाधादि तस्य नश्यत्यसंशयम् ॥ १४५ ॥ स वश्यो जायते नूनं प्राणैरपि धनैरपि ॥ दासतां याति देवोपि मनुष्येषु च का कथा ॥ १४६ ॥ क्रूरसत्त्वानि सर्वाणि वशयेदमुना खलु ॥ प्रकारेण महावीरज्वरितः शान्तितामियात् ॥ १४७ ॥ बन्धमुक्तौ जपेन्मन्त्रं रात्रौरात्रौ न संशयः ॥ द्वादशार्णप्रयोगांश्च निखिलांस्तत्र कारयेत् ॥ १४८ ॥ स्तम्भने तु यवो माषा न्यग्रोधस्य फलानि च ॥ शाल्मलीकुसुमं तालं हरिद्रामलकीफलम् ॥ १४९ ॥ मधुरत्रयसंयुक्तं यथालाभं तु होमयेत् ॥ उच्चाटार्थं निशि हुनेच्छ्लेष्मान्तकविभीतकान् ॥ १५० ॥ अष्टोत्तरशतं रात्रौ कार्य्यमिष्टं च सिद्ध्यति॥वश्यार्थे होमयेद्द्राक्षामपूपानथ गुग्गुलम् ॥ १५१ ॥ विद्वेषे कटुतैलेन संयुक्तं हिंगु होमयेत् ॥ पञ्चखाद्यैर्नालिकेरैरिक्षुभिः कदलीफलैः ॥ १५२ ॥ सर्वसन्तोषकृद्धोमो मधुरत्रितयान्वितैः॥ सौभाग्यार्थं तु काश्मीरकस्तूरीत्वक्समीरणैः ॥ १५३ ॥ पत्रागुरुनखैर्मांसीजातीपत्रफलैस्तथा ॥ धत्तूरफलपुष्पाणि समिधो मोहने स्मृताः ॥१५४॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि पञ्चकूटात्मकं मनुम्॥

द्धृतानि कूटानि पञ्च तान्येव मन्त्रतः ॥ १५५ ॥ हनुमान्रामदूतश्च

लक्ष्मणप्राणदायकः ॥ ततोऽञ्जनासुतः प्रोक्तः सीताशोकविनाशकः ॥ १५६ ॥ ततः षष्ठः परिज्ञेयो लंकाप्रासादभञ्जनः ॥ कपेरेतानि नामानि कूटपूर्वाणि सन्ति च ॥ १५७ ॥ पञ्चकूटानि चैकेन षडङ्गमनवः स्मृताः ॥ ध्यानपूजादिकं सर्वं विज्ञेयं द्वादशार्णवत् ॥ १५८ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि मन्त्रं रुद्रैरुपासितम् ॥ नवग्रहादिमन्त्राणां बीजान्येकादशैव तु ॥ १५९ ॥ स एव मन्त्रो रुद्रेण सहायार्थमुपासितः ॥ तद्ध्यानपूजान्यासादि ज्ञेयं च द्वादशार्णवत् ॥ १६० ॥ अथान्यं सम्प्रवक्ष्यामि मन्त्रमष्टादशाक्षरम् ॥ नमो भगवते प्रोच्य आञ्जनेयाय संवदेत् ॥ १६१ ॥ महाबलाय स्वाहेति मुनिरस्येश्वरः स्मृतः ॥ छन्दोनुष्टुब्देवता तु हनुमान्हं च बीजकम् ॥ स्वाहा शक्तिश्चाञ्जनेयो रुद्रमूर्त्तिः सुरो मतः ॥ १६२ ॥ अग्निगर्भो रामदूतो ब्रह्मास्त्रविनिवारकः ॥ द्विरावृत्त्या षडङ्गानि तथांगुष्ठादिषु न्यसेत् ॥ १६३ ॥ तप्तकाञ्चनसंकाशं हृदये विहिताञ्जलिम् ॥ किरीटिनं कुण्डलिनं ध्यायेद्वानरनायकम् ॥ १६४ ॥ वैष्णवे पूजयेत्पीठे द्वादशार्णोक्तवर्त्मना ॥ अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं दशांशं जुहुयात्तिलैः ॥ १६५ ॥ विप्रसन्तर्पणाद्यं तु प्राग्वत्सिद्धो भवेन्मनुः ॥ जितेन्द्रियो नक्तभोजी प्रत्यहं साष्टकं शतम् ॥ जपित्वा क्षुद्ररोगेभ्यो मुच्यते दिवसत्रयात् ॥ ॥ १६६ ॥ भूतप्रेतपिशाचादिनाशायैवं समाचरेत् ॥ महारोगानिवृत्त्यै तु सहस्रं त्रिदिनं जपेत् ॥ १६७ ॥ यताशनोयुतं नित्यं जपेद्ध्यायन्कपीश्वरम् ॥ राक्षसौघं विनिघ्नन्तमचिराज्जयति द्विषः ॥ १६८ ॥ सुग्रीवेण समं रामं मेलयन्तं स्मरन्कपिम् ॥ प्रजप्यायुतमात्रं तु सन्धिं कुर्याद्विरुद्धयोः ॥ १६९ ॥ लंकां दहन्तं तं ध्यायेदयुतं प्रजपेन्मनुम् ॥ शत्रूणां प्रदहेद्ग्रामानाचिरादेव साधकः ॥ १७० ॥ प्रयाणसमये ध्यायन्हनुमन्तं मनुं जपेत् ॥ यो याति सोचिरात्स्वेष्टं साधयित्वा गृहं व्रजेत् ॥ १७१ ॥ यः कपीशं सदा गेहे पूजयेज्जपतत्परः ॥ आयुर्लक्ष्म्यः प्रवर्धन्ते तस्य नश्यन्त्युपद्रवाः ॥ १७२ ॥ अथान्यं सम्प्रवक्ष्यामि मन्त्रमष्टाक्षरं परम् ॥ षड्दीर्घयुक्ता हृल्लेखा प्रणवेनैव सम्पुटा ॥ १७३ ॥ अष्टार्णोयं हनुमतो मन्त्रराजः प्रकीर्तितः ॥ षड्दीर्घयुक्तबीजेन षडङ्गविधिरीरितः ॥ १७४ ॥ ध्यानपूजाजपाद्यत्र सर्वं स्याद्द्वादशा-

र्णवत् ॥ एतत्प्रभावाज्झटिति चाधिव्याधिविवर्जितः ॥ १७५ ॥ शार्दूलतस्करादिभ्यो न भयं जपतो मनुम् ॥प्रस्थानकाले जपतां नश्येयुस्तस्करादयः ॥१७६॥ कोकिलच्छदलेखन्या त्वलक्तकरसेन च॥अष्टगन्धैर्लिखेद्रूपं कपिराजस्य सुन्दरम् ॥ १७७ ॥ तन्मध्ये चाष्टकोणेषु शत्रुनाम पुनर्लिखेत् ॥ तन्मन्त्रजपितं यन्त्रं दध्याच्छिरसि भूमिपः ॥ जयत्यरिगणान्सर्वान्दर्शनादेव निश्चितम् ॥ १७८ ॥ यद्वा जिगीषुर्नृपतिः पूर्वोक्तं लेखयेद्ध्वजे ॥ ध्वजमादायोपरागे संस्पर्शान्मोक्षणावधि ॥ १७९ ॥ मातृकाः प्रजपेत्पश्चाद्दशांशेन हुतं चरेत् ॥ सर्षपैस्तिलसंमिश्रैस्संस्कृते हव्यवाहने ॥ गच्छेद्रणे ध्वजं दृष्ट्वा पलायन्तेरयोचिरात्॥१८०॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि मन्त्रं प्लीहादिवारणम् ॥ ॥ ह्रांह्रुं हनुमते ह्च ङेन्तं कपिपतिं ततः ॥ १८१ ॥ वगवगि अंआंप्रोच्य प्लीहं हुं चापि दं वदेत्॥हान्तं जिनमितार्णोयं मुन्यादि द्वादशार्णवत् ॥१८२॥ प्लीहयुक्तोदरे स्थाप्यं नागवल्लीदलं शुभम् ॥ गदं दुष्टं नूतनेन पटेनाच्छादयेत्ततः ॥ १८३ ॥ वंशजं शकलं तस्य जठरे स्थापयेद्बुधः ॥ वदादाय ज्वलद्वह्नौ यश्चैवं त्रिः प्रतापयेत् ॥ १८४ ॥ बदरीतरुसम्भूतसमिधा मनुनामुना ॥ सप्तशो जपितेनैवं ताडयेज्जठरास्थितम् ॥ सप्तकृत्वस्ततो मन्त्री शकलद्वितयं खलु ॥ १८५ ॥ एवं कृते प्लीहरोगो नश्यत्येव न संशयः ॥ यकृद्वृद्धौ चैवमेव दक्षपार्श्वे समाचरेत् ॥ १८६ ॥ अथान्यं सम्प्रवक्ष्यामि मालामन्त्रं वदेद्ध्रुवम् ॥ वज्रकाय वज्रतुण्ड वदेत्कपिलपिङ्गल ॥ १८७ ॥ ऊर्ध्वकेश महावीर सुरक्तमुख कीर्त्तयेत्॥तडिज्जिह्व महारौद्र दंष्ट्रोत्कट कहद्वयम्॥१८८॥ करालिने महादृढप्रहारिन्निति कीर्त्तयेत् ॥ लंकेश्वरवधायान्ते महासेतुपदन्ततः ॥ १८९ ॥ बन्धान्ते च महाशैलप्रवाह गगनेचर ॥ एह्येहि भगवन्प्रोच्य महाबलपराक्रम ॥ १९० ॥ भैरवाज्ञापय प्रोच्य एह्येहीतिपदं वदेत् ॥ महारौद्रपदम्प्रोच्य दीर्घपुच्छेन वेष्टय॥१९१॥वैरिणम्भञ्जयद्वन्द्वं हुंफट् चायं ध्रुवादिकः ॥वाणनेत्रेन्दुवर्णोत्र मालामन्त्रोऽखिलेष्टदः ॥ १९२ ॥ एवमाराधयन्प्रोक्तं रुद्रस्यैकादशस्य तु॥अतःपरम्प्रवक्ष्यामि कार्तवीर्य्यार्जुनस्य च॥१९३॥

इति श्रीमहामायामहाकालानुमते मेरुतन्त्रे शिवप्रणीते हनुमन्मन्त्रकथनं नाम चतुस्त्रिंशः प्रकाशः ॥ ३४ ॥

श्रीदेव्युवाच ॥ सुदर्शनांशसम्भूतः कार्त्तवीर्य्यार्ज्जुनो नृपः ॥ एतत्त्वया पुरा प्रोक्तं तस्य मन्त्रान्प्रब्रूहि मे ॥ १ ॥ श्रीशिव उवाच ॥ शृणु देवि प्रवक्ष्यामि सर्वतन्त्रेषु गोपितान् ॥ पश्चाम्नायगतान्मन्त्रानर्जुनस्य ब्रवीमि ते ॥ २ ॥ धर्मपादाग्रभेदेन देव्याम्नायाः प्रकीर्त्तिताः ॥ धर्मादीनां पादभेदा-द्देवि तुल्यं ब्रवीमि ते ॥ ३ ॥ लोकानिन्द्यस्त्वेकपादः शास्त्रानिन्द्यो द्विपा-द्भवेत् ॥ त्रिपाद् द्वयोरनिन्द्यस्तु भक्तिश्रद्धासमन्वितः ॥ ४ ॥ सालोक्यमेक-पात्प्रोक्तं सामीप्यन्तु द्विपात्स्मृतम् ॥ सारूप्यम्पादहीनं स्यात्सायुज्यम्पू-र्णमुच्यते॥५॥ एषां कैवल्यरूपाणां लक्षणं शृणु पार्वति ॥ यमैश्च नियमैर्युक्तः पूर्णधर्मस्तु केवलः ॥ ६ ॥ सिद्धो भवत्ययत्नेन स्वयं चेह परत्र हि ॥ अकृत्वा परसंतापमगत्वा स्मरमन्दिरम्॥स्वधर्मेणार्ज्जितं द्रव्यं केवलं तत्र साधनम् ॥७॥ देहाभिमाननाशेन लिङ्गदेहविनाशनम् ॥ तेन कालस्वरूपत्वं तत्कैवल्यम्प्रकी-र्त्तितम् ॥ ८ ॥ उत्तरेण च पूर्वेण पश्चिमेन यथाक्रमम् ॥ ऊर्द्ध्वेन दक्षिणेनैक-दीपादिक्रमतोखिलाः ॥ ९ ॥ सिध्यन्ति केवलैश्चैवं पश्चाम्नायैर्वृषादयः ॥ तत्र संकरशूद्राद्या विप्रान्ताश्चाधिकारिणः ॥ १० ॥ यथोक्ताम्नायसेवाभि-र्लभन्ते तत्परम्पदम् ॥ हीनसेवा तूत्तमानां रासभारोहणं यथा ॥ ११ ॥ अथेष्टपान्मनून्वक्ष्ये कार्त्तवीर्य्यार्जुनस्य च ॥ यः सुदर्शनचक्रस्यावतारः क्षितिमण्डले ॥ १२ ॥ वह्नितारयुता रौद्री लक्ष्मीरग्नीन्दुशान्तियुक् ॥ वेधा धरेन्दुशान्त्याढ्यो निद्रार्घीशाग्निबिन्दुयुक् ॥ १३ ॥ पाशो मायांकु-शम्पद्मा वर्मास्त्रे कार्त्तवीपदम् ॥ रेफो बिन्द्वासनोनन्तो वह्निजौ कर्णसंस्थितौ ॥ १४ ॥ मेषः सदीर्घपवनो मनुरुक्तो हृदन्तकः ॥ ऊनविंशतिवर्णोयन्तारा-दिर्नखवर्णकः ॥ १५ ॥ दत्तात्रेयो मुनिश्चास्य च्छन्दोनुष्टुबुदाहृतम् ॥ कार्त्तवीर्य्यार्जुनो देवो बीजं शक्तिर्ध्रुवश्च हृत् ॥ १६ ॥ फ्रांत्रामिति स्या-द्धृदयं क्लींश्रीमिति शिरः स्मृतम् ॥ ऊंहं शिखा समाख्याता क्रोंश्रीं कवचमी-रितम् ॥ १७ ॥ हुंफडस्त्रं समाख्यातं शेषेण व्यापकञ्चरेत् ॥ हृदये जठरे नाभौ जघने गुह्यदेशके ॥ १८ ॥ दक्षपादे वामपादे सक्थ्नि जानुनि जंघयोः ॥ विन्यसेद्बीजदशकम्प्रणवद्वयमध्यगम् ॥ १९ ॥ ताराद्यान्नव शेषा-

र्णान्मस्तके च ललाटके॥भ्रुवोः श्रुत्योस्तथैवाक्ष्णोर्नसि वक्रे गलंसयोः॥२०॥ सर्वमन्त्रेण सर्वाङ्गे व्यापकञ्च ततश्चरेत् ॥ सर्वेष्टसिद्धये ध्यायेत्कार्त्तवीर्य्यार्जुनेश्वरम् ॥ २१ ॥ प्रभाकररुचिः कण्ठे स्वर्णमालाविराजितः ॥ ध्येयो रक्तांशुकोष्णीषी नानाकल्पविराजितः ॥ २२ ॥ सहस्रार्धभुजैर्बाणान्सहस्रार्धैर्धनूंषि च ॥ दधट्टंकारशब्दैश्च त्रासिताखिलदुर्जनः ॥ २३ ॥ स्यन्दने च समारूढः सप्तद्वीपधरापतिः ॥ भूपालमुकुटाघृष्टपादपद्मोब्जलोचनः ॥ २४ ॥ स्थूलकायोतिभीष्मश्च रथस्थो भक्तवत्सलः ॥ वैष्णवे तु यजेत्पीठे पद्मं दशदलं चरेत् ॥ २५ ॥ तस्याङ्गमूर्त्तिकाः पञ्च कर्णिकायाम्प्रपूजयेत् ॥ अग्नीशासुरवायव्यकोणेषु हृदयादिकाः ॥ २६ ॥ अस्त्राण्यपि चतुर्दिक्षु पञ्च ताः स्फटिकोज्ज्वलाः ॥ खड्गचर्म्मधरा ध्येयाश्चन्द्राभा अङ्गमूर्त्तयः ॥ २७ ॥ चापबाणधरा वीरास्सर्वाभरणभूषिताः ॥ रक्तांशुका रक्तमाल्या रक्तचन्दनचर्चिताः ॥ चतुर्भुजा रोचमानाः सर्वे रक्तविलोचनाः ॥ २८ ॥ षट्कोणेषु षडङ्गानि ततो दिक्षु विदिक्षु च ॥ चौरमदविभञ्जनो मारीमदविभञ्जनः॥२९॥आरिमदविभञ्जनो दैत्यमदविभञ्जनः ॥ दुःखनाशो दुष्टनाशो दुरितामयनाशकः॥३०॥दिक्ष्वष्टशक्तयः पूज्याः प्राच्यादिषु सितप्रभाः॥क्षेमङ्करा वश्यकरी श्रीकरी च यशस्करी ॥३१॥ तद्बहिर्भूपुरे पूज्या लोकपा अस्त्रसंयुताः ॥ ३२ ॥ चतुर्लक्षं जपेन्मन्त्रं होमः कार्य्यः पयोन्धसा॥तिलाज्यतण्डुलैर्वापि पुरश्चर्य्या सरिन्नदे॥३३॥तर्प्पणादि ततः कुर्य्यान्मन्त्रसिद्धिः प्रजायते ॥ प्रयोगानपि कुर्वीत शृणु तानधुनेश्वरि ॥ ३४ ॥ अथातो दक्षिणे मार्गे वक्ष्यते काम्यपूजनम् ॥ शुद्धभूमावष्टगन्धैर्लिखेद्यन्त्रं तदुच्यते ॥ ३५ ॥ लिखेद्दशदलम्पद्मं कर्णिकायां समालिखेत् ॥ फ्रोंक्लीं ॐ ऐं च पत्रेषु प्रणवाद्यानि संलिखेत ॥ ३६ ॥ मन्त्रस्य नवबीजानि ततः पत्रान्तरेषु च ॥ ॐमादिदशवर्णांश्च केशरेषु समालिखेत ॥ ॥ ३७ ॥ शषसहाक्ष्वरांश्चापि तदग्रे च लिखेत्पुनः ॥ वेष्टयेत्कादिकैर्वर्णैः शेषैः सहविवर्जितैः ॥३८॥ तद्बाह्ये चतुरस्रे तु वेष्टयेद्भूतवर्णकैः॥नानाकामप्रभेदेन भूवाय्वग्निनभोम्भसाम् ॥ ३९ ॥ पञ्च ह्रस्वाः पञ्च दीर्घा एकाराद्याश्च

पञ्चच ॥ आयुष्करी तथा प्रज्ञाकरी विद्याकरी पुनः॥धनकराष्टमी पश्चाल्लोभेशा पञ्च पङ्कजम् ॥ पञ्चवर्गाः पञ्च याद्याः षसहाश्च ळक्षौ क्रमात्॥ ४० ॥स्तम्भने पार्थिवै रौप्यैः शान्तौ वश्ये च तैजसैः ॥ उच्चाटने वायवीयैर्विद्वेषे चापि नाभसैः ॥ मारणे तैजसैः शान्तौ वातैः पुष्टौ च पार्थिवैः ॥ ४१ ॥ इदं यन्त्रं तोयपूर्णघटे क्षिप्त्वा प्रपूजयेत् ॥ कुम्भं स्पृष्ट्वा जपेन्मन्त्रं सहस्रं तेन सेचयेत् ॥ ४२ ॥ सम्यक् साध्यं बदा स स्यात्पुत्रवान्रोगवर्जितः ॥ यशस्वी दीर्घजीवी च सत्कलत्रानुरञ्जकः ॥ वाक्सिद्धश्चापि तेजस्वी प्रतापी विजितेन्द्रियः ॥ ४३ ॥ शत्रूपद्रवमापन्ने ग्रामे वा पुटभेदने ॥ संस्थापयेदिदं यन्त्रं वैरिभीतिनिवृत्तये ॥ ४४ ॥ अथ वक्ष्ये वामगानां यन्त्रभेदं शृणुष्व तम् ॥ लिखेदष्टदलं पद्मं ससाध्यं चान्द्रमप्युत ॥ ४५ ॥ योयमाद्यन्तयोस्तस्या लिखेत्पद्मेषु च क्रमात् ॥ मनुबीजाष्टकं चान्ते दले लेख्यं पुनश्च फट्॥ ४६ ॥ त्रिशोन्तरे शेषवर्णानन्ते वर्णद्वयं लिखेत् ॥ त्रिशः स्वरानन्तरेषु त्रिवोष्माणसमन्वितान् ॥ ४७॥ घणाद्वयं च तद्बाह्ये तयोर्वीथ्यां च कादिकान् ॥ ऊष्माणांश्चतुरस्रे तु वज्राष्टकसमन्वितान् ॥ ४८ ॥ तद्बाह्ये सुलिखेज्जादि पूर्वकाद्भूतवर्णकान्॥स्नानार्थं घटपानीयमन्यत्पूर्ववदीरितम् ॥ ४९॥ काम्यहोमं प्रवक्ष्यामि संख्याकार्यानुसारतः॥ सर्षपारिष्टलशुनकार्पासैर्म्रियते रिपुः॥५०॥कार्त्तवीर्य्यस्य यत्किञ्चिद्धोमद्रव्यं तु काम्यकम्॥कटुतैलमाहिष्याज्यैः प्लुतं कृत्वा तु होमयेत्॥ ॥ ५१ ॥ धत्तूरैस्तभ्यते निम्बैर्द्वेष्यते वश्यतेम्बुजैः ॥ ५२ ॥ उच्चाटयते विभीतस्य समिद्भिः खदिरस्य च ॥ यवैर्हुतैः श्रियः प्राप्तिस्तिलैराज्यैरघक्षयः ॥ ॥ ५३ ॥ तिलतण्डुलसिद्धार्थलाजैर्वश्यो नृपो भवेत् ॥ अपामार्गार्कदूर्वाणां होमो लक्ष्मीप्रदोऽघनुत् ॥ स्त्रीवश्यकृत्प्रियंगूनां गुग्गुलोर्भूतशान्तिदः॥ ५४ ॥ अश्वत्थोदुम्बरप्लक्षवटबिल्वसमुद्भवाः ॥ समिधो लभते हुत्वा पुत्रानायुर्धनं सुखम् ॥ ५५ ॥ सर्प्पकञ्चुकसिद्धार्थधत्तूरस्य फलानि च ॥ हुत्वा लवणमिश्राणि चोरनाशः प्रजायते ॥ रोचनागोमयैः स्तम्भो भूशान्तिः शालिभिर्हुतैः ॥ ५६ ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि कार्त्तवीर्य्यमनोर्भिदः ॥ एकोनविंशत्यर्णोयं तारादिर्नखवर्णकः ॥ ५७ ॥ कार्तवीर्य्यार्जुनं ङेन्तमन्ते च नमसा-

न्वितम् ॥ स्वबीजाद्यो दशार्णोसावन्ये नवशिवाक्षराः ॥ ५८ ॥ आद्यबीज-द्वयेनासौ द्वितीयो मन्त्र ईरितः ॥ स्वकामाभ्यां तृतीयोसौ स्वभूभ्यां तु चतु-र्थकः ॥ ५९ ॥ स्वपाशाभ्यां पञ्चमोसौ षष्ठः स्वेन च मायया॥ स्वांकुशाभ्यां सप्तमः स्यात्स्वरमाभ्यामथाष्टमः ॥ ६० ॥ स्ववाग्भवाभ्यां नवमो वर्मास्त्राभ्यां तथान्तिमः ॥ एतेषु मन्त्रवर्य्येषु स्वानुकूलं मनुं भजेत् ॥ ६१ ॥ एषामाद्ये विराट् छन्दोन्येषु त्रिष्टुबुदाहृतम् ॥ दशमन्त्रा इमे प्रोक्ता यदा स्युः प्रणवा-दिकाः ॥ ६२ ॥ तदादिमः शिवार्णः स्यादन्ये तु द्वादशाक्षराः ॥ एवं विंशतिमन्त्राणां यजनं पूर्ववन्मनोः ॥ ६३ ॥ त्रिष्टुप्छन्दस्तदाद्ये स्यादन्येषु जगती मता ॥ दीर्घाढ्यमूलबीजेन कुर्य्यादेषां षडङ्गकम् ॥६४॥ तारो हृत्कार्त्तवीर्य्यार्जुनाय वर्मास्त्रठद्वयम् ॥ चतुर्दशार्णो मन्त्रोयमस्येज्या पूर्ववन्मता ॥ ६५ ॥ भूनेत्रसप्तनेत्राक्षिवर्णैरस्याङ्गपञ्चकम् ॥ तारो हृद्भगवा-न्ङेन्तः कार्त्तवीर्य्यार्जुनस्तथा ॥ ६६ ॥ वर्मास्त्राग्निप्रिया मन्त्रः प्रोक्तोष्टाद-शवर्णवान् ॥ त्रिवेदसप्तयुग्माक्षिवर्णैः पञ्चाङ्गकं मनोः ॥ ६७ ॥ नमो भगवते श्रीति कार्तवीर्य्यार्जुनाय च ॥ सर्वदुष्टान्तकायेति तपोबलपराक्रमैः ॥ ॥ ६८ ॥ परिपालितसप्तान्ते द्वीपाय सर्वरापदम् ॥ जन्यचूडामणिर्ङेन्तः सर्वशक्तिमते ततः ॥ ६९ ॥ सहस्रबाहवे प्रान्ते वर्मास्त्रान्तो महामनुः ॥ त्रिषष्टिवर्णवान्प्रोक्तः स्मरणात्सर्वसिद्धिकृत ॥ ७० ॥ राजन्यचक्रवर्त्ती च वीरः शूरस्तृतीयकः ॥ माहिष्मतीपतिः पश्चाच्चतुर्थः समुदीरितः ॥ ७१ ॥ रेवाम्बुपरितृप्तश्च कारागेहप्रबाधित ॥ दशास्यश्चेति षड्भिः स्यात्पदैरेतैः षडङ्गकम् ॥ ७२ ॥ सिच्यमानं युवतिभिः क्रीडन्तं नर्मदाजले ॥ हस्तैर्जलौघं रुन्धन्तं ध्यात्वा मत्तं नृपोत्तमम् ॥ ७३ ॥ एवं ध्यात्वाथ तं मन्त्रं जपेदन्यत्तु पूर्ववत् ॥ पूर्ववत्सर्वमेतस्य समाराधनमीरितम् ॥ ७४ ॥ अथास्य वक्ष्यते ध्यानं सर्वैश्वर्य्यविधायकम् ॥ माहिष्मत्यां मन्त्रिमध्ये समा-सीनमलंकृतम् ॥ ७५॥ नानासुरस्त्रीसंवृतं सिंहासनगतं सदा ॥ बाहुभिः शर-चापासिगदामुद्गरशूलकान् ॥ ७६ ॥ भुशुण्डीपाशखेटादीन्दधतं सुप्रसन्नकम् ॥ परचक्रस्तेनराजभयं ध्यानमुदीरितम् ॥ ७७ ॥ अथान्यद्वक्ष्यते ध्यानं सर्व-

रक्षाकरं परम् ॥ त्रैलोक्यभीषणं ध्यायेदयुताश्वरथस्थितम् ॥ ७८ ॥ गर्जन्तं प्रति शत्रूंश्च सहस्रार्कसमद्युतिम् ॥ दोर्दण्डमण्डलैर्बाणान्क्षिपन्तं तीव्रधारकान् ॥ ७९ ॥ नानायुधधरैर्युक्तं रथिभिश्च पदातिभिः ॥ गजयूथैरश्ववाहैः कुण्डलद्योतितास्यकम् ॥ ८० ॥ ध्यात्वैवं प्राङ्मुखो भूत्वा सहस्रं नाशयेद्द्वयम् ॥ आहवे शत्रुसंघातं जित्वा स सुखमेधते ॥ ८१ ॥ अयमेव तु सर्वादिश्चतुष्षष्ठार्णको मनुः॥एकादशाविख्यातं ध्यानपूजादिकं मनोः ॥ ॥ ८२ ॥ यन्त्रमस्य प्रवक्ष्यामि सर्वकार्य्यार्थसिद्धये ॥ आदौ चतुर्दलं पद्मं चाष्टारं रदपत्रकम् ॥ ८३ ॥ तद्बाह्ये वेददलककर्णिकायां समालिखेत् ॥ ह्रौंबीजमथ पत्रेषु प्रणवं साध्यनाम च ॥ ८४ ॥ कार्य्ययुक्तं नमश्चान्ते तद्बाह्येष्टदलं लिखेत् ॥ एकोनविंशत्यर्णस्य द्वौ नमो हारितार्णकान् ॥ ८५ ॥ लिखेत्प्रतिदलं द्वौद्वौ वर्णौ बिन्दुसमन्वितौ ॥ तद्बहिः षोडशदले कामबीजं समालिखेत् ॥ ८६ ॥ वक्ष्यमाणमनोरस्य ततोऽनुष्टुभमालिखेत् ॥ बहिस्तस्य प्रकुर्व्वीत ततो वृतचतुष्टयम् ॥ ८७ ॥ तदाद्यवीथ्यां हि लिखेच्चतुष्षष्ठार्णकं मनुम् ॥ द्वितीयायां क्षकारादिककारान्तान्विलोमतः ॥ ८८ ॥ तृतीयायां ककारादिक्षकारान्तान्क्रमेण च ॥ ततो बीजानि च लिखेत्तत्परे च चतुर्दले ॥ ८९ ॥ कुं खुं श्रुं ध्रुं क्रमेणैव तद्बाह्येऽष्टदले पुनः ॥ चुं छुं जुं झुं तथाटुंठुंडुंढुं षोडशदले पुनः ॥ ९० ॥ एवं तुपुयशान्तानि चर्चाबीजानि षोडश ॥ पुनरुक्तदले कादिहान्तबीजानि संलिखेत् ॥ ९१ ॥ अष्टाविंशतिसङ्ख्यानि पुनः कादिचतुष्टयम् ॥ कार्य्यानुरूपं सुलिखेत्तद्बाह्ये भूतलं शुभम् ॥ ९२ ॥ द्विरावृत्त्या लिखेत्तस्य वीथ्या भूर्जेणकांस्तथा ॥ कार्त्तवीर्य्यार्जुनस्यैतद्यन्त्रं कोपि न वेत्त्यलम् ॥ अहं जानामि विष्णुश्च तत्रेषद्वेत्ति वद्रुहः ॥ ९३ ॥ स्वर्णपत्रे स्थितं यन्त्रं ह्येतत्सर्वार्थसिद्धिदम् ॥ राजते राज्यलाभाय ताम्रे रक्षाकरं भवेत् ॥ ९४ ॥ अट्टालके च लिखितं गृहरक्षाकरं भवेत् ॥ कण्ठे निबद्धमेतत्तु भृशं रक्षति बालकान् ॥ ९५ ॥ भित्तौ तु रामरक्षाकृत्सर्वरक्षाय भूर्जके ॥ कारस्करस्य फलके रोगनाशाय संलिखेत् ॥ ९६ ॥ चतुष्कोटयघनाशाय लिखेद्वैकङ्कतोद्भवे ॥ विशाले कलि-

नाशाय समक्षित्यां शिलातले ॥ ९७ ॥ शरावे लिखिते यन्त्रे लोकपूज्यो भवेद्ध्रुवम् ॥ पताकायां ध्वजे वापि जयदं नात्र संशयः ॥ ९८ ॥ चन्दनागरुकर्पूररोचनासृगुशीरकैः ॥ लाक्षामृगमदाद्यैश्च लिखेद्वश्यादिकर्मकृत् ॥ ॥ ९९ ॥ लिखेदष्टविषैश्चापि मारणादिककर्मसु ॥ तद्यन्त्रकलशासेकाद्वन्ध्या पुत्रं प्रसूयते ॥ १०० ॥ राजाभिषिक्तो भवति धैर्यशौर्यादिसंयुतः ॥ कार्त्तवीर्य्यार्ज्जुनो नाम राजा बाहुसहस्रवान् ॥ तस्य संस्मरणादेव हृतं नष्टं च लभ्यते ॥ १०१ ॥ द्वात्रिंशदर्णो मन्त्रोयं छन्दोनुष्टुप्च पूर्ववत् ॥ मुन्यादिकं च पञ्चाङ्गन्यासः सर्वेण कीर्तित ॥ १०२ ॥ गर्जस्यन्दनसप्तिगैश्च पत्तिसंघैस्समावृतम् ॥ महागजसमारूढं मदाघूर्णितलोचनम् ॥ १०३ ॥ पाशाङ्कुशधनुश्चापान्दधतं भीषणाकृतिम् ॥ धावमानमरातीनां वधार्थं संस्मरेन्नृपम् ॥ १०४ ॥ वने महाचौरभये गजयुद्धे द्विषां गृहे ॥ एवं ध्यात्वायुतं जप्त्वा भयान्यन्यानि संतरेत् ॥ १०५ ॥ सहस्रहस्तैर्नियमान्दधतं नियमस्थितम् ॥ सुप्रसन्नं मणिगणालङ्कृतं दीप्ततेजसम् ॥ १०६ ॥ योगनिष्ठं भजेद्रूपं स्वर्णाप्त्यै गोप्रवृद्धये ॥ आयुर्वृद्धये रोगशान्त्यै द्वादशार्णःप्रकीर्त्तितः ॥ १०७ ॥ पादैः सर्वेण पञ्चाङ्गं ध्यानयोगादि पूर्ववत् ॥ द्वात्रिंशदर्णमन्त्रस्य विधिरेवमुदाहृतः ॥ १०८ ॥ कार्त्तवीर्य्याय विद्महे महावीर्य्याय धीमहि ॥ तन्नोर्जुनः प्रचोदयात् ॥ ॥ १०९ ॥ गायत्र्येषार्जुनस्योक्ता प्रयोगादौ जपेत्तु ताम् ॥ आनुष्टुभं मनुं रात्रौ जपतां चौरसञ्चयाः ॥ पलायन्ते गृहाद्दूरं हवनात्तर्पणादपि ॥ ११० ॥ कार्त्तवीर्य्यस्य गायत्री प्रोक्ता चैषा त्रयोदशी ॥ प्राग्वन्मुन्यादिकं छन्दो गायत्रं पूर्ववद्धतिः ॥ १११ ॥ सर्वमन्त्रप्रयोगेषु जपितव्या हितैषिणा ॥ गायत्रीजपमात्रेण मन्त्रवीर्यप्रवर्द्धनम् ॥ ११२ ॥ मन्त्रस्यास्य जपाद्देवि नष्टं द्रव्यं च लभ्यते ॥ हृताश्चौरा भविष्यन्ति हतं द्रव्यं च सिध्यति ॥ ॥ ११३ ॥ तारो नमो भगवते कार्त्तवीर्य्यार्ज्जुनाय च ॥ महाबलाय धीमहि तन्नोर्ज्जुनः प्रचोदयात् ॥ ११४ ॥ यसवेतिषंता (?) दुष्टइवाशनः ॥ हुं फट् स्वाहा रदार्णोयं प्रोक्तो मन्त्रश्चतुर्दशः ॥ ११५ ॥ मुन्यादिकं

प्राग्वदेव च्छन्दोनुष्टुबुदाहृतम् ॥ सप्तसप्तेषुनवाभिश्चतुर्भिश्चाङ्गपञ्चकम् ॥
॥ ११६ ॥ अनुष्टुभं जपेद्रात्रौ जपस्वाध्यायतत्परः ॥ तिष्ठन्नुदङ्मुखो नित्यं शतमष्टोत्तरं तुराः ॥ मण्डलान्म्रियते शत्रुर्विकलाङ्गोथ वा भवेत् ॥
॥ ११७ ॥ यस्या दिशो भयं तस्याः संमुखो निशि संजपेत् ॥ अखर्व-भयनाशः स्यादेकविंशतिभिर्दिनैः ॥ ११८ ॥ होमार्द्धं तर्प्पणं कुर्य्या-दनेन सतिलाम्बुभिः ॥ हृतं च पूर्वसंप्रोक्तं द्रव्यं लभ्येत सत्वरम् ॥ ११९॥
तारो नमो भगवते नमः श्रीपदमुच्चरेत् ॥ कार्त्तवीर्य्यार्ज्जुनायेति हैहयेति पदं वदेत् ॥ १२० ॥ नाथाय कार्त्तवीर्य्यायाज्र्जुनायेति सहस्रतः ॥
करेति सर्वदुष्टान्तकायेति च पदं पठेत् ॥ १२१ ॥ सर्वेष्टदायेति सर्वान्द ण्डयद्वितयं तथा ॥ आगन्तुकांश्च प्रवदेद्दस्यून्वसुविलुम्पकान् ॥ १२२॥
वीरसमूहान्स्वखड्गसहस्रैश्छिन्धियुग्मकम् ॥ स्वहस्तोद्धूतमुसलसहस्रैर्मर्द्दयद्व-यम् ॥ १२३ ॥ स्वशंखोद्धूतनादानां सहस्रैर्भीषयद्वयम् ॥ स्वहस्तोद्धूतच-क्राणां सहस्रैर्विनिकर्तय॥ १२४॥परकृत्यां शमयेति भूपांश्चाकर्षयद्वयम्॥ त्रासय द्विर्मोहय द्विरुद्वासययुगं वदेत्॥ १२५॥ उन्मादयद्वयं त्रेधा तापय द्विर्विनाशय॥ द्विर्भेदय स्तम्भय द्विर्जृम्भयद्वयमावदेत्॥ १२६॥मारयद्वितयं प्रोच्य वशंकुरुवश कुरु॥ उच्चाटयोच्चाटयेति विनाशयाविनाशय॥ १२७॥ दत्तात्रेयश्रीपदान्ते पादप्रिय तमेति च॥ श्रीकार्तवीर्य्यार्जुनेति सर्वग स्वालये वदेत्॥ १२८॥ आगन्तुकामान्प्र-वदेदस्मद्द्रव्यविलुम्पकान्॥ चोरसमूहान्सम्यग्वदेदुन्मूलयद्वयम् ॥ १२९॥ हुंफट् स्वाहेति मन्त्रोयं युगाष्टनगवर्णवान् ॥ दत्तात्रेयो मुनिश्छन्दो गायत्र्यन्यच्च पूर्व-वत्॥ १३०॥ दत्तात्रेयप्रियतमं ङेन्तं हृदि विन्यसेत् ॥ माहिष्मतीनिवासोयं शिरोमन्त्रो नगाक्षरः ॥ १३१ ॥ नमः श्रीकार्त्तवीर्याय कीर्त्तितोयं शिखा-मनुः॥ हहैयाधिपतिर्ङेन्तः कवचस्य मनुर्मतः ॥ १३२॥ सहस्रबाहवे तु स्यादेवं पञ्चाङ्गमीरितम् ॥ उदग्रबाणांश्चापानि दधतं सूर्यसन्निभम् ॥ १३३ ॥प्रपूरयन्तं वसुधां धनुर्ज्यानिःस्वनैस्तथा ॥ कार्त्तवीर्यनृपं ध्यायेद्रत्नशोभितकुण्डलम् ॥
॥ १३४ ॥ एवं ध्यात्वा समभ्यर्च्य सर्वकर्माणि साधयेत् ॥ त्रिसहस्रो जपः प्रोक्तः शेषं पूर्ववदाचरेत् ॥ १३५ ॥ दधतं दक्षिणैर्वामैर्हस्तैरस्त्राणि

भूपतिम् ॥ चक्रेषून्मुसलं शूलकुठारौ पाशमेव च ॥ १३६ ॥ प्रासचर्मधनुः-शंखान्मध्यभास्करसन्निभम् ॥ बलाढ्यमरुणं घोरं तत्त्वमातङ्गसंस्थितम् ॥ ॥ १३७ ॥ रक्ताम्बरं रक्तनेत्रं ध्यात्वैवं प्रजपेन्मनुम् ॥ निशीथेष्टोत्तरशतं नष्टद्रव्यादिसिद्धये ॥ १३८ ॥ जपेच्चेदेकपादेन षाण्मासान्नष्टवित्तकः ॥ संप्रार्थ्य मन्त्रिणे चोराःप्रयच्छन्त्यखिलं धनम् ॥ १३९ ॥ चौरैर्हृतपशु-र्मन्त्री यदानेतुं समिच्छति ॥ जपेदष्टोत्तरशतं ध्यात्वा भूपं समाहितः॥ १४०॥ पश्येत्सम्यक्सर्वपशून्गृहाभिमुखमागतान् ॥ ध्यात्वैवं सर्वपशवो ध्रुवमायान्ति मोचिताः ॥ १४१ ॥ चौरैर्हृतस्वो ब्राह्मणीच्छदैर्होमं चरेन्निशि ॥ हृतं प्रकाशमायाति स्वं स्वस्थाने नचान्यथा ॥ १४२ ॥ बाणान्क्षिपन्तं तं रात्रौ धनुषो ध्यानतत्परम् ॥ दशदिक्षु जपेन्मंत्रं राष्ट्रादे रक्षणं भवेत् ॥ १४३ ॥ मन्त्रेण जपितानीत्थं पार्थिवानि रजांसि च ॥ क्षिप्तानि मन्त्रिणा यत्र तत्र रक्षा भवेन्निशि ॥ १४४ ॥ दौभित्येकाक्षरो मन्त्रः कार्त्तवीर्यस्य षोडशः॥ मुनिपूजादिकं प्राग्वल्लक्षमेकं पुरस्क्रिया ॥ १४५ ॥ षड्दीर्घयुक्तेनानेन षडङ्गविधिनिर्णयः ॥ प्राग्वत्प्रयोग इत्येवमूर्द्धाम्नायः प्रकीर्त्तितः ॥ १४६ ॥ पश्चिमाम्नायमन्त्रास्तु प्रोक्ताश्चारब्बभाषया ॥ अष्टौ शतान्यशीतिश्च येषां संसाधना कलौ ॥ १४७ ॥ पञ्च खानाः सप्त मीनाः नव शाहा महाबलाः॥ हिन्दुधर्मप्रलोप्तारो जायन्ते चक्रवर्त्तिनः ॥ १४८ ॥ पूर्वाम्नाये नवशतषड-शीतिप्रवर्त्तिनः ॥ फिरङ्गभाषया मन्त्रास्तेषां संसाधनाद्भुवि ॥ १४९ ॥ अधिपा मन्दराणां च संग्रामेष्वपराजिताः ॥ इंग्रेजा नव गयाश्च लण्डनेष्वपि भाविनः ॥ १५० ॥ बहुविद्यानिदश्वानः प्रवक्तारो मनोरथ ॥ तद्बीजपूर्वाः सर्वेपि मनवो वामसिद्धिदाः ॥ १५१ ॥ दक्षिणाचारफलदः कार्त्तवीर्य्या-र्जुनो मतः ॥ वामाचारेण शूद्राणामिह लोके फलप्रदः ॥१५२॥ न वा-नां हितार्थं तु मन्त्रवीर्य्यं प्रयोजयेत्॥सप्तजन्मसु दारिद्र्यं पैशाच्यं प्राप्नुयाद्द्विजः ओ दीपविधिं वक्ष्ये कार्त्तवीर्य्यप्रियङ्करम् ॥ १५३ ॥ वैशाखे श्रावणे मार्गे र्तिकाश्विनपौषतः॥माघे च फाल्गुने मासे दीपारम्भः प्रशस्यते ॥१५४॥ रिक्ताविहीनायां वारे शनिकुजौ विना ॥ हस्तोत्तराश्विरौद्रेषु पुष्यवै-

ष्णववायुभे ॥ द्विदैवते च रोहिण्यां दीपारम्भः प्रशस्यते ॥ १५५ ॥ चरमे च व्यतीपाते धृतौ वृद्धौ सुकर्मणि ॥ प्रीतौ हर्षे च सौभाग्ये शोभनायुष्मतोरपि ॥ १५६ ॥ करणे विष्टिरहिते ग्रहणेर्द्धोदयादिषु ॥ एषु योगेषु पूर्वाह्ने दीपारम्भः कृतः शुभः ॥ १५७ ॥ कार्त्तिके शुक्लसप्तम्यां निशीथेतीव शोभनः ॥ यदि तत्र रवेर्वारः श्रवणं भं तु दुर्लभम् ॥ १५८ ॥ श्रुत्वा व-श्यककार्य्येषु मासादीनां न शोधनम् ॥ आद्ये ह्युपोष्य नियतो ब्रह्मचारी शयीत कौ ॥ १५९ ॥ प्रातः स्नातः शुद्धभूमौ लिप्तायां गोमयोदकैः ॥ प्राणानायम्य संकल्पं न्यासान्पूर्वोदितांश्चरेत् ॥ १६० ॥ षट्कोणं रचये-द्भूमौ रक्तचन्दनतण्डुलैः ॥ मध्ये कामं समालिख्य षट्कोणेषु समालिखेत् ॥ ॥ १६१ ॥ मन्त्रराजस्य षड्वर्णान्कामबीजविवर्जितान् ॥ क्रों श्रीं हुंफट् च पूर्वादिदिशासु विलिखेत्क्रमात् ॥ १६२ ॥ नवार्णैर्वेष्टयेत्तच्च त्रिकोणं तद्बहिः पुनः ॥ एवं विलिखिते यन्त्रे निदध्याद्दीपभाजनम् ॥ १६३ ॥ स्वर्णजं रजतोत्थं वा ताम्रजं तदभावतः ॥ कांस्यपात्रं मृन्मयं च कनिष्ठं लोहजं मृतौ ॥ ॥ १६४ ॥ शान्तये मुद्गचूर्णोत्थं सन्धौ गोधूमचूर्णजम् ॥ १६५ ॥ ब्रध्ने-षूर्ध्वसमानन्तु पात्रं कुर्य्यात्प्रयत्नतः ॥ अर्कदिग्वसुषट्पञ्चचतूरामांगुलैर्मितम् ॥ ॥ १६६ ॥ आज्ये पलसहस्रं तु पात्रं शतपलैः कृतम् ॥ आज्येयुतपले पात्रं पलपञ्चशतीकृतम् ॥ १६७ ॥ पञ्चसप्ततिसंख्ये तु पात्रं षष्टिपलं मतम् ॥ त्रिसहस्रे घृतपले शरार्कपलभाजनम् ॥ १६८ ॥ द्विसहस्रे शरशिवं शतार्द्धे त्रिंशता मतम् ॥ शतेक्षिशरसंख्यातमेवमन्यत्र कल्पयेत् ॥ १६९ ॥ नित्य-मेवं तु यो दद्यात्कार्त्तवीर्य्याय दीपकम् ॥ शत्रवस्तस्य नश्यन्ति नात्र कार्य्या विचारणा॥ १७० ॥ व्याधयश्चाधयश्चैव विलीयन्तेचिरादपि ॥ जीवेद्वर्षशतं मन्त्री पापानि क्षयमाप्नुयुः॥ १७१ ॥ एका तिस्रोथ वा पञ्च सप्ताद्याविषमा अपि ॥ तिथि-मानाद्यासहस्रं तन्तुसंख्या विनिर्मिता॥ १७२ ॥ गोघृतं प्रक्षिपेत्तत्र शुद्धवस्त्रविशो-धितम् ॥ सहस्रपलसंख्यादिदशान्तं कार्य्यगौरवात् ॥ १७३ ॥ सुवर्णादि-कृतां रम्यां शलाकां षोडशांगुलाम् ॥ तदर्धां वा तदर्धां वा सूक्ष्माग्रां स्थूल-मूलिकाम् ॥ १७४ ॥ विमुश्चेद्दक्षिणे भागे पात्रमध्ये कृताग्रिकाम् ॥ पात्रा

दक्षिणदिग्देशे मुक्तागुलचतुष्टयम् ॥ १७५ ॥ अथोग्रां दक्षिणाधारां निखनेच्छुरिकां शुभाम् ॥ दीपं प्रज्वालयेत्तत्र गणेशस्मृतिपूर्वकम् ॥ १७६॥ दीपात्पूर्वत्र दिग्भागे सर्वतो भद्रमण्डले ॥ तण्डुलाष्टदले वापि विधिवत्स्थापयेद् घटम् ॥ १७७ ॥ तत्रावाह्य नृपाधीशं पूर्ववत्पूजयेन्निशि ॥ एतत्प्रोक्तं द्विजातीनां वामिभिर्वामभागके ॥ १७८ ॥ क्षेप्या शलाकाच्छुरिका पश्चात्पश्चिमभागके ॥ जलाक्षततिलान्हस्ते गृहीत्वा मन्त्रमुच्चरेत् ॥ १७९ ॥ अथ मन्त्रं प्रवक्ष्यामि तारं पाशं च ह्रीं वषट् ॥ कार्त्तवीर्य्यार्जुनायेति वदेन्माहिष्मतीपदम् ॥ १८० ॥ नाथायेति सहस्रेति बाहवे पदमुच्यते ॥ सहस्रक्रतुशब्दान्ते दीक्षिताय पदं वदेत ॥ १८१ ॥ दत्तात्रेयप्रियायेति आत्रेयाय वदेत्ततः ॥ अनुसूयागर्भरत्नाय हुंफट् च प्रवदेत्ततः॥ १८२॥ इमं दीपं गृहाणेति अमुकं रक्षरक्ष च॥दुष्टान्नाशययुग्मं स्यात्तथा पातय घातय ॥ १८३ ॥ शत्रूञ्जहिद्वयं मायां तारं फ्रोंक्लीं हुताङ्गनाम् ॥ अनेन दीपवर्य्येण पश्चिमाभिमुखेन च ॥१८४॥ अमुकं रक्ष चेत्युक्त्वा अमुकेति वरप्रदा ॥ नाय ह्रींह्रीं च ह्रीं तारं क्लीं च्रीं स्वाहा सबिन्दुकान्॥वदेद्वर्णास्तकारादीन्दश तारं हुताङ्गनाम् ॥ ॥ १८५ ॥ दीपदानस्य मन्त्रोयं नेत्रबाणधराक्षरः ॥ दत्तात्रेयो मुनिश्छन्दोमितं देवोर्जुनः स्मृतः ॥१८६॥ च्रींबीजेन षडङ्गानि दीर्घषड्कयुजा चरेत ॥ ध्यात्वा देवं मन्त्रमेतमष्टोत्तरसहस्रकम् ॥ १८७ ॥ जपेत्तारं तथा पाशं रमां फ्रींच्रीं दहाङ्गनाम्॥ अंकुशं च पुनस्तारं मनुः प्रोक्तो नवाक्षरः॥ १८८ ॥ प्राग्वच्चर्षिर्देवताङ्गे छन्दोनुष्टुप्समीरितम् ॥ एवं दीपप्रदानस्य कर्त्ताप्नोत्यखिलेप्सितम् ॥ १८९ ॥ दीपप्रबोधकाले तु वर्जयेदशुभाङ्गिरम् ॥ विप्रादीनां तु पञ्चाशत्पदार्थानां निरीक्षणम्॥तस्मिन्नवसरे कार्य्यं सिद्धम्भवति नान्यथा ॥ ॥१९०॥ शूद्रादीनां तु पञ्चाशत्पदार्थानां निरीक्षणम् ॥ अतियत्नात्कार्य्यसिद्धिं कुर्य्याच्चैव विलम्बतः ॥ १९१ ॥ भारद्वाजादिपञ्चाशत्पदार्थानां तु दर्शने ॥ व्यत्यये सति कार्य्यस्य नैव सिद्धिःप्रजायते ॥ १९२ ॥ कार्य्यनाशो बन्धवधौ म्लेच्छादीनां तु दर्शने ॥ आखोत्वोर्दर्शनं दुग्नं गवयस्य सुखावहम् ॥ १९३ ॥ दीपज्वाला समा सिद्धये वक्रा नाशविधायिनी ॥

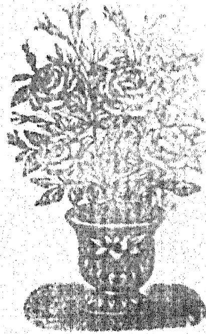
सशब्दा भयदा कर्तुरुज्ज्वला सुखदा मता ॥ १९४ ॥ कृष्णा शत्रुभयोत्पत्त्यै-वमन्ती पशुनाशिनी ॥ कृते दीपे यदा पात्रं भग्नं दृश्येत दैवतः ॥पक्षादर्वाक् तदा गच्छेद्यजमानोयमालयम्॥ १९५॥वर्त्यन्तरं यदा कुर्य्यात्कार्य्यं सिध्येद्वि-लम्बतः ॥ १९६॥ नेत्रहीनो भवेत्कर्त्ता तस्मिन्दीपान्तरे कृते ॥ अशुचिस्प-र्शने व्याधिर्दीपनाशे तु चौरभीः ॥१९७॥ श्वमार्जाराखुसंस्पर्शे भवेद्भूपतितो भयम् ॥ पात्रारम्भे वसुपलैः कृतो दीपोखिलेष्टदः ॥ १९८ ॥ पलानां पञ्च-विंशत्या दीपो देयोर्थसिद्धये ॥ पञ्चाशता कृतो दीपः शत्रुवश्याय चेष्यते ॥ ॥ १९९ ॥ पराजयश्च शत्रूणां पञ्चसप्ततिभिर्भवेत् ॥ शतेन शत्रुनाशः स्यात्सहस्रेणाखिलाः क्रियाः ॥ २०० ॥ तस्माद्दीपो रक्षणीयः प्रयत्नेनान्त-रायतः ॥ आसमाप्तेः प्रकुर्वीत ब्रह्मचर्य्यञ्च भूशयम् ॥ २०१ ॥ स्त्रीशूद्रप-तितादीनां सम्भाषामपि वर्जयेत् ॥ जपेत्सहस्रं प्रत्येकं मन्त्रराजं नवाक्षरम् ॥ ॥ २०२ ॥ स्तोत्रपाठं प्रतिदिनं निशीथिन्यां विशेषतः ॥ एकपादेन दीपाग्रे स्थित्वाथो मन्त्रनायकम् ॥ सहस्रं प्रजपेद्रात्रौ सोभीष्टं क्षिप्रमाप्नुयात्॥ २०३॥ समाप्य शोभने घस्रे संपूज्य द्विजनायकान् ॥ कुम्भोदकेन कर्त्तारमभिषिञ्चेन्मनुं स्मरन् ॥ २०४ ॥ कर्त्ता च दक्षिणां दद्यात्पुष्कलां तोषहेतवे ॥ पलानां तु दशांशेन मुख्यं प्राङ्मुख्यभाजने॥ २०५॥ विंशत्यंशेन मध्यं स्याच्छतांशेनापरं स्मृतम् ॥ गुरौ तुष्टे ददातीष्टं कृतवीर्य्यसुतो नृपः ॥ २०६ ॥ गुर्वाज्ञया स्वयं कुर्य्याद्यदि वा कारयेद्गुरुम् ॥ गुर्वाज्ञामन्तरा कुर्य्याद्यो दीपं स्वेष्टसिद्धये ॥ प्रत्युतानुभवत्येव हानिमेव पदेपदे ॥ २०७ ॥ दीपदानविधिं ब्रूयात्कृतघ्ना-दिषु नो गुरुः ॥ दुष्टेभ्यः कथितो मन्त्रो वक्तुर्दुःखावहो भवेत् ॥ २०८ ॥ उत्तमं गोघृतं प्रोक्तं मध्यमं माहिषीभवम् ॥ तिलतैलं तु तादृक् स्यात्कनीयो-जादिजं घृतम् ॥ २०९ ॥ आस्यरोगे सुगन्धेन दद्यात्तैलेन दीपकम् ॥ सिद्धार्थसम्भवेनाथ द्विषतां नाशहेतवे ॥ २१० ॥ सहस्रेण पलैर्दीपे विहिते चेन्न दृश्यते ॥ कार्य्यसिद्धिस्तदा कुर्य्यात्त्रिवारं दीपजं विधिम् ॥ २११ ॥ तदा तु दुर्लभं कार्य्यं सिध्यत्येव न संशयः ॥ यथाकथंचिद्यः कुर्य्याद्दीपदानं स्ववेश्मनि ॥ २१२ ॥ विघ्नाः सर्वेरिभिः साकं तस्य नश्यन्त्यदूरतः ॥

सर्वदा जयमाप्नोति पुत्रान्पौत्रान्धनं यशः ॥ २१३ ॥ दीपप्रियः कार्त्तवीर्य्यो मार्त्तण्डो नतिवल्लभः ॥ स्तुतिप्रियो महाविष्णुर्गणेशस्तर्प्पणप्रियः ॥ २१४ ॥ दुर्गार्च्चनप्रिया नूनमभिषेकप्रियः शिवः ॥ तस्मात्तेषां प्रतोपाय कुर्य्यात्तत्तु च तादृशम् ॥ २१५ ॥ इति भोः कथितं देवा दीपदानं महीक्षितुः ॥ अतः परं किं वक्तव्यं तत्पृच्छत सुरोत्तमाः ॥ २१६ ॥

इति श्रीमहामायामहाकालानुमते मेरुतन्त्रे शिवप्रणीते कार्त्तवीर्य्यार्जुन-
मन्त्रकथनं नाम पञ्चत्रिंशत्तमः प्रकाशः ॥ ३५ ॥

समाप्तश्चायं ग्रन्थः ॥

शुभमस्तु ॥



# मंत्रशास्त्रग्रंथाः ।

मंत्रमहोदधि–सटीक ( ९८ ) यंत्रोंसमेत इसमें गणेशमंत्र कालिकामंत्र तारामंत्र ब्रह्मोपासिततारा छिन्नमस्ता यक्षिणी वाराही धूमावती करणपिशाचिनी स्वप्नेश्वरी बाला त्रिपुरा अन्नपूर्णेश्वरी मंगलपूर्वके श्रीविद्या श्रीविद्यायाः परिवार हनुमन्मंत्र विष्णुमंत्र रोगदारिद्र्यना-शनारोविमंत्र महामृत्युंजय मंत्र अभीष्टसिद्धिदः कार्तवीर्यार्जुनमंत्र कालरात्रिमंत्रविधि कूटमंत्र सर्वदेवानां यंत्र नित्यपूजा नित्यार्चन विधि पवित्रपूजनार्चनमंत्रशुद्धिः शांत्यादिषट्कर्म इत्यादि मंत्रोंका उद्धारादि वर्णित उत्तम प्रकारसेहै ... ... ... ... ३)

शाक्तप्रमोद–दशमहाविद्याका पंचांग और पांच देवतोंका पंचांग राजादेवनंदन संगृहीत इसमें दशमहाविद्या, कुमारी, दुर्गा, शिव, गणेश, सूर्य, विष्णु इन देवोंकी पटलपद्धति कवच सहस्रनाम स्तवराज स्तोत्रादिपंचांग द्वादशांग उपासनोपयोगी १८४ विषयोंका एकत्र संग्रहहै यंत्रसहित शाक्तलोगोंको अवश्य लेने योग्यहै ... ५)

दुर्गोपासनाकल्पद्रुम–हरिकृष्णसंगृहीत जिसमें दुर्गाजीका ८० प्रकरण कईएक शास्त्रसे उद्धृतकर अंतमें दुर्गापाठभी रखागयाहै दुर्गाजीके उपासकोंको अवश्य संग्रहोपयोगी है ... ... ... ... ३॥)

श्रीतत्त्वनिधि–मैसूरराज्याधीश कृष्णराज संगृहीत इसमें उपासक देवीचरित्र श्रीचक्रदेवता विष्णु शिव ब्रह्मा ग्रह वैष्णवनिधि शैव-निधि आगम कौतुक इत्यादि अनेक वेद पुराण तंत्र ज्योतिष सर्व देवी देवता और ऋषियोंके ध्यानादि अपूर्व वर्णित हैं छोटे बडे समस्त सनातनधर्मावलंबियोंके संग्रहोपयोगी है ... २॥)

महानिर्वाणतंत्र–भाषाटीकासमेत–इसमें तांत्रिक उपासना मूल-मंत्र कर्मकांडादि आध्यात्मिकतत्वादि विषयहैं ... ... २)